

મળવાનું ઠેકાણું :

શ્રી અ. ભા. શ્રે. સ્થાનકવાસી  
જેન શાસ્ત્રોદ્ધાર સમિતિ  
ગ્રીન લોજ પાસે, રાજકોટ.

પ્રથમ આવૃત્તિ : પ્રત ૧૦૦૦

વીર સંવત : ૨૪૮૩

વિક્રમ સંવત : ૨૦૧૩

ઈસ્વી સ ન : ૧૯૫૭

: મુદ્રક :

મણિલાલ જગનલાલ શાહ  
ધી નવપ્રભાત પ્રિન્ટીંગ પ્રેસ  
લીકાંટા રોડ : : અમદાવાદ

---

---

શ્રી-વર્ધમાન-શ્રમણ-સંઘના આચાર્યશ્રી  
પૂજ્ય આત્મારામજી મહારાજશ્રીએ

આ પે લ

## સ મ મ તિ પ ત્ર

\*

ઉપરાંત

પૂજ્ય શ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજ-રચિત

બીજા સૂત્રોની ટીકા માટે તેઓશ્રીના મંતવ્યો

\*

તે મ જ

અન્ય મહાત્માઓ, મહાસતીજીઓ, અદ્યતન-પદ્ધતિવાળા કોલેજના પ્રોફેસરો

તે મ જ

શાસ્ત્રજ્ઞ શ્રાવકોના અભિપ્રાયો

કે. ગ્રીન લોજ પાસે  
ગરેડીયા કુવારોડ  
રાજકોટ : સૌરાષ્ટ્ર

}

શ્રી. અખિલ ભારત ઋવે. સ્થા. જૈન.  
શાસ્ત્રોદ્ધાર સમિતિ



जैनगमवेत्ता जैनधर्मदिवाकर उपाध्याय श्री १००८ श्री आत्मारामजी  
महाराज तथा न्याय व्याकरण के ज्ञाता परम पण्डित मुनिश्री १००८  
श्री हेमचन्द्रजी महाराज, इन दोनों महात्माओंका दिया हुआ  
श्री उपासकदशाङ्ग सूत्रका प्रमाणपत्र निम्न प्रकार है—

### सम्मइवत्तं

सिरि-वीरनिव्वाण-संवच्छर २४५८ आसोई  
पुण्णमासी १५ सुक्कारो ल्हियाणाओ ।

मए मुणिहेमचंदेण य पंडियरयणमुणिसिरि-घासीलालविणिम्मिया सिरिउवा-  
सगसुत्तस्स अगारधम्मसंजीवणीनामिया वित्ती पंडियमूलचंदवासाओ अज्जोवंतं  
सुया, समीईणं, इयं वित्ती जहाणामं तहा गुणेवि धारेइ, सच्चं, अगाराणं तु इमा  
जीवण ( संजमजीवण ) दाई एव अत्थि । वित्तिकत्तुणा मूलसुत्तस्स भावो उज्जु-  
सेलीओ फुडीकओ, अहय उवासयस्स सामण्णविसेसधम्मो, णयसियवायवाओ,  
कम्मपुरिसट्ठवाओ समणोवासयस्स धम्मदढत्ता य, इच्चाइविसया अस्सि फुडरीइओ  
वणिण्या, जेण कत्तुणो पडिहाए सुट्ठप्पयारेण परिचओ होइ, तह इइहासदिट्ठिओवि  
सिरिसमणस्स भगवओ महावीरस्स समए वट्ठमाण-भरहवासस्स य कत्तुणा विसय-  
प्पयारेण चित्तं चित्तितं, पुणो सक्कवपाढीणं, वट्ठमाणकाले हिन्दीणामियाए भासाए  
भासीणं य परमोवयारो कडो, इमेण कत्तुणो अरिहत्ता दीसइ, कत्तुणो एयं कज्जं  
परमप्पसंसणिज्जमत्थि । पत्तेयजणस्स मज्झत्थभावाओ अस्स सुत्तस्स अवलोयणमईव  
लाहप्पयं, अविउ सावयस्स तु (उ) इमं सत्थं सव्वस्समेव अत्थि, अओ कत्तुणो  
अणेगकोडीसो धन्नवाओ अत्थि, जेहिं अचंतपरिस्समेण जइजणतोवरि असीमो-  
वयारो कडो, अहय सावयस्स वारस्स नियमा उ पत्तेयजणस्स पढणिज्जा अत्थि,  
जेसिं पहावओ वा गहणाओ आया निव्वाणादिगारी भवइ, तहा भवियव्वयावाओ  
पुरिसकारपरकमवाओ य अवस्सामेव दंसणिज्जो, किंवहुणा इमीसे वित्तीए पत्तेय-  
विसयस्स फुडसदेहिं वण्णणं कयं, जइअन्नोवि एवंअम्हाणं पसुत्तप्पाए समाजे विज्जं  
भवेज्जा तया नाणस्स चरित्तस्स तहा संघस्स य खिप्पं उदयो भविस्सई, एवं हं मन्ने॥

भवईओ—

उवज्झाय—जइणमुणि—आयाराम, पंचनईओ,—

## सम्मतिपत्र

( भाषान्तर )

श्रीवीरनिर्वाण सं० २४५८ आसोज-

शुक्ला ( पूर्णिमा ) शुक्रवार लुधियाना

मैंने और पंडितमुनि हेमचन्द्रजीने पण्डितरत्न मुनि श्रीघासीलाल-  
जीकी रची हुई उपासकदशांग सूत्रकी गृहस्थधर्मसंजीवनी नामक टीका  
पंडित मूलचन्द्रजी व्याससे आद्योपान्त सुनी है। यह वृत्ति यथानाम-  
तथागुणवाली-अच्छी बनी है। सच यह गृहस्थोंके तो जीवनदात्री-  
संयमरूप जीवनको देनेवाली ही है। टीकाकारने मूलसूत्र के भावको  
सरल रीतिसे वर्णन किया है, तथा श्रावकका सामान्य धर्म क्या है ?  
और विशेष धर्म क्या है ? इसका खुलासा इस टीकामें अच्छे ढंगसे  
बतलाया है। स्याद्वादका स्वरूप कर्म-पुरुषार्थ-वाद और श्रावकको  
धर्मके अन्दर दृढ़ता किस प्रकार रखना, इत्यादि विषयोंका निरूपण  
इसमें भलीभांति किया है। इससे टीकाकारकी प्रतिभा खूब झलकती  
है। ऐतिहासिक दृष्टिसे श्रमण भगवान् महावीर के समय जैनधर्म  
किस जाहोजलाली पर था ? और वर्तमान समय जैनधर्म किस  
स्थितिमें पहुंचा है ? इस विषयका तो ठीक चित्र ही चित्रित कर दिया  
है। फिर संस्कृत जाननेवालों को तथा हिन्दीभाषाके जाननेवालों को  
भी पूरा लाभ होगा, क्यों कि टीका संस्कृत है उसकी सरल हिन्दी  
कर दी गई है। इसके पढ़नेसे कर्ताकी योग्यताका पता लगता है कि  
वृत्तिकारने समझानेका कैसा अच्छा प्रयत्न किया है। टीकाकार का  
यह कार्य परम प्रशंसनीय है। इस सूत्रको मध्यस्थ भावसे पढ़ने-  
वालोंको परम लाभकी प्राप्ति होगी। क्या कहें श्रावकों ( गृहस्थों ) का  
तो यह सूत्र सर्वस्व ही है, अतः टीकाकार को कोटिशः धन्यवाद दिया  
जाता है, जिन्होंने अत्यन्त परिश्रमसे जैन-जनताके ऊपर असीम  
उपकार किया है। इसमें श्रावकके बारह नियम प्रत्येक पुरुषके पढ़ने  
योग्य हैं, जिनके प्रभावसे अथवा यथायोग्य ग्रहण करनेसे आत्मा  
मोक्षका-अधिकारी होता है। तथा भवितव्यतावाद और पुरुषकार-

पराक्रमवाद हरएकको अवश्य देखना चाहिये । कहां तक कहें इस टीकामें प्रत्येक विषय सम्यक् प्रकारसे बताये गये हैं । हमारी सुसंप्राय ( सोई हुईसी ) समाजमें अगर आप जैसे योग्य विद्वान् फिर भी कोई होंगे तो ज्ञान चारित्र तथा श्रीसंघका शीघ्र उदय होगा, ऐसा मैं मानता हूं—

आपका

उपाध्याय जैनमुनि आत्माराम पंजाबी.



इसी प्रकार लाहोरमें विराजते हुए पण्डितवर्य विद्वान् मुनिश्री १००८  
श्री भागचन्दजी महाराज तथा पं. मुनिश्री त्रिलोकचन्दजी  
महाराजके दिये हुए, श्री उपासकदशाङ्ग सूत्रके  
प्रमाणपत्रका हिन्दी सारांश निम्न प्रकार है—

श्री श्री स्वामी घासीलालजी महाराज कृत श्री उपासकदशाङ्ग  
सूत्रकी संस्कृत टीका व भाषाका अवलोकन किया, यह टीका  
अतिरमणीय व मनोरञ्जक है, इसे आपने बड़े परिश्रम व पुरुषार्थसे  
तैयार किया है सो आप धन्यवादके पात्र हैं। आप जैसे व्यक्तियोंकी  
समाजमें पूर्ण आवश्यकता है। आपकी इस लेखिनीसे समाजके विद्वान्  
साधुवर्ग पढ़ कर पूर्ण लाभ उठावेंगे, टीकाके पढ़नेसे हमको अत्यानन्द  
हुवा, और मनमें ऐसे विचार उत्पन्न हुए कि हमारी समाजमें भी  
ऐसे २ सुयोग्य रत्न उत्पन्न होने लगे—यह एक हमारे लिये बड़े  
गौरवकी बात है।

वि. सं. १९८९ मा. आश्विन  
कृष्णा १३ वार भौम लाहोर.



श्री ज्ञाताधर्मकथाङ्ग सूत्रकी 'अनगारधर्माऽमृतवर्षिणी' टीका पर  
जैनदिवाकर साहित्यरत्न जैनागमरत्नाकर परमपूज्य श्रद्धेय  
जैनाचार्य श्री आत्मारामजी महाराजका

## सम्मतिपत्र

लुधियाना, ता. ४-८-५१

मैंने आचार्यश्री घासीलालजी म. द्वारा निर्मित 'अनगार-धर्माऽमृत-वर्षिणी' टीकावाले श्री ज्ञाताधर्मकथाङ्ग सूत्रका मुनि श्री रत्नचन्द्रजीसे आद्योपान्त श्रवण किया।

यह निःसन्देह कहना पड़ता है कि यह टीका आचार्यश्री घासीलालजी म. ने बड़े परिश्रम से लिखी है। इसमें प्रत्येक शब्दका प्रामाणिक अर्थ और कठिन स्थलों पर सार-पूर्ण विवेचन आदि कई एक विशेषतायें हैं। मूल स्थलों को सरल बनाने में काफी प्रयत्न किया गया है, इससे साधारण तथा असाधारण सभी संस्कृतज्ञ पाठकों को लाभ होगा ऐसा मेरा विचार है।

मैं स्वाध्यायप्रेमी सज्जनों से यह आशा करूंगा कि ये वृत्तिकारके परिश्रम को सफल बना कर शास्त्रमें दी गई अनमोल शिक्षायों से अपने जीवन को शिक्षित करते हुए परमसाध्य मोक्षको प्राप्त करेंगे।

श्रीमान्जी जयवीर

आपकी सेवामें पोष्ट द्वारा पुस्तक भेज रहे हैं और इस पर आचार्यश्रीजी की जो सम्मति है वह इस पत्रके साथ भेज रहे हैं पहुंचने पर समाचार दें।

श्री आचार्यश्री आत्मारामजी म. ठाने ६ सुखशान्तिसे विराजते हैं। पूज्य श्री घासीलालजी म. सा. ठाने ४ की हमारी ओरसे वन्दना अर्ज कर सुखशाता पूछें।

पूज्य श्री घासीलालजी म. जी का लिखा हुआ (विपाकसूत्र) महाराज-श्रीजी देखना चाहते हैं इसलिये १ कापी आप भेजने की कृपा करें, फिर आप को वापिस भेज देंगे। आपके पास नहीं हो तो जहां से मिले वहां से १ कापी जरूर भिजवाने का कष्ट करें, उत्तर जल्द देने की कृपा करें। योग्य सेवा लिखते रहें।

लुधियाना ता. ४-८-५१

निवेदक  
प्यारेलाल जैन

जैनागमवारिधि-जैनधर्मदिवाकर-उपाध्याय-पण्डित-मुनि  
श्री आत्मारामजी महाराज ( पंजाब ) का आचाराङ्गसूत्रकी  
आचारचिन्तामणि टीका पर

### सम्मति-पत्र ।

मैंने पूज्य आचार्यवर्य श्री वासीलालजी ( महाराज ) की बनाई हुई  
श्रीमद् आचाराङ्ग सूत्रके प्रथम अध्ययन की आचारचिन्तामणि टीका  
सम्पूर्ण उपयोगपूर्वक सुनी ।

यह टीका-व्याय सिद्धान्त से युक्त, व्याकरण के नियम से निबद्ध  
है । तथा इसमें प्रसङ्ग २ पर क्रम से अन्य सिद्धान्त का संग्रह भी उचित  
रूप से मालूम होता है ।

टीकाकारने अन्य सभी विषय सम्यक् प्रकार से स्पष्ट किये हैं, तथा  
प्रौढ विषयों का विशेषरूप से संस्कृत भाषा में स्पष्टतापूर्वक  
प्रतिपादन अधिक मनोरंजक है, एतदर्थ आचार्य महोदय धन्यवाद  
के पात्र हैं ।

मैं आशा करता हूँ कि-जिज्ञासु महोदय इसका भली-भाँति  
पठन द्वारा जैनागम - सिद्धान्तरूप अमृत पी-पी कर मन को  
हर्षित करेंगे, और इसके मनन से दक्ष जन चार अनुयोगों का  
स्वरूपज्ञान पावेंगे । तथा आचार्यवर्य इसीप्रकार दूसरे भी जैनागमों के  
विशद विवेचन द्वारा श्वेताम्बर-स्थानकवासी समाज पर महान उपकार  
कर यशस्वी बनेंगे ।

वि. सं. २००२

मृगसर सुदि १

जैनमुनि-उपाध्याय आत्माराम

लुधियाना पंजाब शुभमस्तु



बीकानेरवाला समाजभूषण शास्त्रज्ञ भेरूदानजी शेठिआनो अभिप्राय



आप शास्त्रका कार्य कर रहे हैं यह बड़ा उपकारका कार्य है ।  
इससे जैनजनता को काफी लाभ पहुंचेगा ।

( ता. २८-३-५६ना पत्रमांथी )

॥ श्रीः ॥

जैनागमवारिधि-जैनधर्मदिवाकर-जैनाचार्य-पूज्य-श्री आत्मारामजी-  
महाराजानां पञ्चनद-( पंजाब )स्थानामनुत्तरोपपातिकसूत्राणा-  
मर्थबोधिनीनामटीकायामिदम्-

## सम्मतिपत्रम् .

आचार्यवर्यैः श्री घासीलालमुनिभिः सङ्कलिता अनुत्तरोपपातिकसूत्राणामर्थ-  
बोधिनीनाम्नी संस्कृतवृत्तिरूपयोगपूर्वकं सकलाऽपि स्वशिष्यमुखेनाऽश्रावि मया, इयं  
हि वृत्तिर्मुनिवरस्य वैदुष्यं प्रकटयति । श्रीमद्भिर्मुनिभिः सूत्राणामर्थान् स्पष्टयितुं  
यः प्रयत्नो व्यधायि तदर्थमनेकशो धन्यवादानर्हन्ति ते । यथा चेयं वृत्तिः सरला  
सुबोधिनी च तथा सारवत्यपि । अस्याः स्वाध्यायेन निर्वाणपदमभीप्सुभिर्निर्वाण-  
पदमनुसरद्भिर्ज्ञान-दर्शन-चारित्र्येषु प्रयतमानैर्मुनिभिः श्रावकैश्च ज्ञानदर्शन-चारित्र्याणि  
सम्यक् सम्प्राप्याऽन्येऽप्यात्मानस्तत्र प्रवर्तयिष्यन्ते ।

आशासे श्रीमदाशुकविर्मुनिवरो गीर्वाणवाणीजुषां विदुषां मनस्तोषाय जैना-  
गमसूत्राणां सारावबोधाय च अन्येषामपि जैनागमानामित्थं सरलाः सुस्पष्टाश्च  
वृत्तीर्विधाय तांस्तान् सूत्रग्रन्थान् देवगिरा सुस्पष्टयिष्यति ।

अन्ते च “मुनिवरस्य परिश्रमं सफलयितुं सरलां सुबोधिनीं चेमां  
सूत्रवृत्तिं स्वाध्यायेन सनाथयिष्यन्त्यवश्यं सुयोग्या हंसनिभाः पाठकाः ।”  
इत्याशास्ते—

विक्रमाब्द २००२  
श्रावणकृष्णा प्रतिपदा  
लुधियाना.

उपाध्याय आत्मारामो जैनमुनिः ।



( श्री दशवैकालिकमूत्रका सम्मतिपत्र )

॥ श्री वीरगौतमाय नमः ॥

### सम्मतिपत्रम्.

मए पंडियमुणि-हेमचंदेण य पंडिय-मूलचन्दवासवारा पत्ता पंडिय-रयण-मुणि-घासीलालेण विरइया सकय-हिंदी-भाषाहिं जुत्ता सिरि-दसवेयालिय-नाम-सुत्तस्स आयारमणिमंजूसा वित्ती अवलो-इया, इमा मणोहरा अत्थि, एत्थ सदाणं अइसयजुत्तो अत्थो वण्णिओ विउजणाणं पाययजणाण य परमोवयारिया इमा वित्ती दीसइ ! आयारविसए वित्तीकत्तारेण अइसयपुव्वं उल्लेहो कडो, तहा अहिंसाए सख्वं जे जहा-तहा न जाणंनि तेसिं इमाए वित्तीए परमलाहो भविस्सइ, कत्तुणा पत्तेयविसयाणं फुडस्खेण वण्णणं कडं, तहा मुणिणो अरिहत्ता इमाए वित्तीए अवलोयणाओ अइसय-जुत्ता सिज्झइ ! सक्कयछाया सुत्तपयाणं पयच्छेओ य सुबोहदायगो अत्थि, पत्तेयजिण्णासुणो इमा वित्ती दट्ठव्वा । अम्हाणं समाजे एरिसविज्ज-मुणिरयणाणं सम्भावो समाजस्स अहोभग्गं अत्थि, किं ? उत्तविज्जमुणिरयणाणं कारणाओ जो अम्हाणं समाजो सुत्तप्पाओ, अम्हकेरं साहिच्चं च लुत्तप्पायं अत्थि तेसिं पुणोवि उदओ भविस्सइ जस्स कारणाओ भवियप्पा मोक्खस्स जोग्गो भवित्ता पुणो निव्वाणं पाविहिइ अओहं आयारमणि-मंजूसाए कत्तुणो पुणो पुणो धन्नवायं देमि— ॥

वि. सं. १९९० फाल्गुन-  
शुक्लत्रयोदशी-मङ्गले  
(अलवर स्टेट)

इइ-  
उवज्झाय-जइण-मुणी, आयारामो  
(पंचनईओ)

ऐसेही :—

मध्यभारत सैलाना-निवासी श्रीमान् रतनलालजी डोसी श्रम-  
णोपासक जैन लिखते हैं कि :—

श्रीमान् की की हुई टीकावाला उपासकदशांग सेवक के दृष्टि-  
गत हुवा, सेवक अभी उसका मनन कर रहा है यह ग्रन्थ सर्वाङ्ग-  
सुन्दर एवम् उच्चकोटि का उपकारक है ।

निरयावलिका का सम्मतिपत्र.

आगमवारिधि-सर्वतन्त्रस्वतन्त्र-जैनाचार्य-पूज्यश्री  
आत्मारामजी महाराजकी तरफ का आया हुवा

सम्मतिपत्र

लुधियाना. ता. ११ नवम्बर ४८

श्रीयुत गुलाबचन्द्रजी पानाचन्द्रजी । सादर जयजिनेन्द्र ॥

पत्र आपका मिला ! निरयावलिका विषय पूज्यश्रीजीका स्वास्थ्य ठीक न होने से उनके शिष्य पं. श्री हेमचन्द्रजी महाराजने सम्मतिपत्र लिख दिया है आपको भेज रहे हैं । कृपया एक कोपी निरयावलिकाकी और भेज दीजिये और कोई योग्य सेवा कार्य लिखते रहें !

भवदीय गुजरमल-बल्लवंतराय जैन

॥ सम्मतिः ॥

( लेखक : - जैनमुनि पं. श्री हेमचन्द्रजी महाराज )

सुन्दरबोधिनीटीकया समलंकृतं हिन्दी-गुर्जरभाषानुवादसहितं च श्रीनिरयावलिकासूत्रं मेधाविनामल्पमेधसां चोपकारकं भविष्यतीति सुदृढं मेऽभिमतम्, संस्कृतटीकेयं सरला सुबोधा सुललिता चात एव अन्वर्थनाम्नी चाप्यस्ति । सुविशदत्वात् सुगमत्वात् प्रत्येकदुर्बोधपद-व्याख्यायुतत्वाच्च टीकेषां संस्कृतसाधारणज्ञानवतामप्युपयोगिनी भाविनीत्यभिप्रेमि । हिन्दी-गुर्जरभाषानुवादावपि एतद्भाषाविज्ञानां महीयसे लाभाय भवेतामिति सस्यक् संभावयामि ।

जैनाचार्य - जैनधर्मदिवाकर - पूज्यश्री घासीलालजी महाराजानां परिश्रमोऽयं प्रशंसनीयो धन्यवादाहर्हश्च ते मुनिसत्तमाः । एवमेव श्री-समीरमल्लजी-श्री कन्हैयालालजी मुनिवरेण्ययोनियोजनकार्यमपि श्लाघ्यं, तावपि च मुनिवरौ धन्यवादाहर्हौ स्तः ।

सुन्दरप्रस्तावनाविषयानुक्रमादिना समलंकृते सूत्ररत्नेऽस्मिन् यदि शब्दकोषोऽपि दत्तः स्यात्तर्हि वरतरं स्यात् । यतोऽस्यावश्यकतां सर्वेऽप्यन्वेषकविद्वांसोऽनुभवन्ति ।

पाठकाः सूत्रस्यास्याध्ययनाध्यापनेन लेखकनियोजकमहोदयानां परिश्रमं सफलयिष्यन्तीत्याशास्महे । इति ।



श्री उपासकदशाङ्ग सूत्र परत्वे जैन समाजना अग्रगण्य जैनधर्मभूषण  
महान् विद्वान् संतोए तेमज विद्वान् श्रावकोए सम्मतिओ समर्पी  
छे तेमना नामो नीचे प्रमाणे छे.

- (१) लुधियाना-संवत् १९८९, आश्विन पूर्णिमा का पत्र, श्रुतज्ञान के  
भंडार आगमरत्नाकर जैनधर्मदिवाकर श्री १००७ श्री उपाध्याय श्री  
आत्मारामजी महाराज, तथा न्यायव्याकरणवेत्ता श्री १००७ तच्छिष्य  
श्री मुनि हेमचन्दजी महाराज.
- (२) लाहौर-वि० सं० १९८९ आश्विन वदि १३ का पत्र, पण्डितरत्न श्री  
१००८ श्री भागचंदजी महाराज तथा तच्छिष्य पण्डितरत्न श्री १००७  
श्री त्रिलोकचंदजी महाराज.
- (३) खिचन-से ता. ९-११-३६ का पत्र, क्रियापात्र स्थविर श्री १००८  
श्री भारतरत्न श्री समरथमलजी महाराज.
- (४) वालाचोर-ता. १४-११-३६ का पत्र, परम प्रसिद्ध भारतरत्न श्री  
१००८ श्री शतावधानी श्री रतनचंदजी महाराज.
- (५) बम्बई-ता. १६-११-३६ का पत्र, प्रसिद्ध कवीन्द्र श्री १००८ श्री  
कवि नानचंदजी महाराज.
- (६) आगरा-ता. १८-१२-३६, जगत् बल्लभ श्री १००८ जैनदिवाकर  
श्री चौथमलजी महाराज, गुणवन्त गणीजी श्री १००७ श्री साहित्यप्रेमी  
श्री प्यारचन्दजी महाराज.
- (७) हैद्राबाद-( दक्षिण ) ता. २५-११-३६ का पत्र, स्थिवरपदभूषित  
भाग्यवान् पुरुष श्री ताराचंदजी महाराज तथा प्रसिद्ध वक्ता श्री १००७  
श्री सोभागमलजी महाराज.
- (८) जयपुर-ता. २७-११-३६ का पत्र, संप्रदाय के गौरववर्धक शांत-  
स्वभावी श्री १००८ श्री पूज्य श्री खूबचन्दजी महाराज.
- (९) अम्बाला-ता. २९-११-३६ का पत्र, परमप्रतापी पंजाबकेशरी श्री  
१००८ श्री पूज्य श्री रामजी महाराज.



(१०) सेलाना-ता. २९-११-३६ का पत्र, शास्त्रों के ज्ञाता श्रीमान् रतनलालजी डोसी.

(११) खीचन-ता. ९-११-३६ का पत्र, पंडितरत्न न्यायतीर्थ सुश्रावक श्रीयुत् माधवलालजी.



ता० २५-११-३६

सादर जय जिनेन्द्र

आपका भेजा हुआ उपासकदशांग सूत्र तथा पत्र मिला यहां विराजित प्रवर्तक वयोवृद्ध श्री १००८ श्री ताराचंदजी महाराज पण्डित श्री किशनलालजी महाराज आदि ठाणा १४ सुख शांती में विराजमान हैं आपके वहां विराजित जैनशास्त्राचार्य पूज्यपाद श्री १००८ श्री घासीलालजी महाराज आदि ठाणा नव से हमारी बन्दना अर्ज कर सुख शांति पूछे आपने उपासकदशांग सूत्र के विषय में यहां विराजित मुनिवरों की सम्मती मंगाई उसके विषय में वक्ता श्री सोभागमलजी महाराजने फरमाया है कि वर्तमान में स्थानकवासी समाज में अनेकानेक विद्वान् मुनि महाराज मौजूद हैं मगर जैनशास्त्र की वृत्ति रचने का साहस जैसा घासीलालजी महाराज ने किया है वैसा अन्यने किया हो ऐसा नजर नहीं आता दूसरा यह शास्त्र अत्यन्त उपयोगी तो यों हैं संस्कृत प्राकृत हिन्दी और गुजराती भाषा होने से चारों भाषा वाले एक ही पुस्तक से लाभ उठा सकते हैं जैन समाज में ऐसे विद्वानोंका गौरव बढे यही शुभ कामना है आशा है कि स्थानकवासी संघ विद्वानों की कदर करना सीखेगा ।

योग्य लिखें शेष शुभ

भवदीय

जमनालाल रामलाल कीमती



आगरा से:—

श्री जैनदिवाकर प्रसिद्धवक्ता जगद्वल्लभ मुनि श्री चोथमलजी महाराज व पंडितरत्न सुव्याख्यानि गणीजी श्री प्यारचन्दजी महाराजने इस पुस्तकको अतीव पसन्द की है ।

श्रीमान् न्यायतीर्थ पण्डित

माधवलालजी खचिन से लिखते हैं कि—

उन पंडितरत्न महाभाग्यवंत पुरुषों के सामने उनकी अगाध-तत्त्वगवेषणा के विषय में मैं नगण्य क्या सम्मति दे सकता हूं।

परन्तु :—

मेरे दो मित्रों ने जिन्होंने इसको कुछ पढ़ा है बहुत सराहना की वास्तव में ऐसे उत्तम व सबके समझने योग्य ग्रन्थों की बहुत आवश्यकता है और इस समाज का तो ऐसे ग्रन्थ ही गौरव बढ़ा सकते हैं—ये दोनों ग्रन्थ वास्तव में अनुपम हैं ऐसे ग्रन्थरत्नों के सुप्रकाशसे यह समाज अमावास्या के घोर अन्धकार में दीपावली का अनुभव करती हुई महावीर के अमूल्य वचनों का पान करती हुई अपनी उन्नति में अग्रसर होती रहेगी।



ता. २९-११-३६

अम्बाला (पंजाब)

पत्र आपका मिला श्री श्री १००८ पंजाबकेसरी पूज्य श्री काशी-राधजी महाराज की सेवा में पढ़ कर सुना दिया। आपकी भेजी हुई उपासकदशास्त्र सूत्र तथा गृहिधर्मकल्पतरु की एक २ प्रति भी प्राप्त हुई। दोनों पुस्तकें अति उपयोगी तथा अत्यधिक परिश्रम से लिखी हुई हैं। ऐसे ग्रन्थरत्नों के प्रकाशित करवानेकी बड़ी आवश्यकता है। इन पुस्तकों से जैन तथा अजैन सबका उपकार हो सकता है। आपका यह पुरुषार्थ सराहनीय है।

आपका

शशिभूषण शास्त्री

अध्यापक जैन हाई स्कूल

अम्बाला शहर

शान्तस्वभावी वैराग्यमूर्ति तत्त्ववारिधि, धैर्यवान श्री जैनाचार्य पूज्यवर श्री श्री १००८ श्री खूबचन्दजी महाराज साहेबने सूत्र श्री उपासकदशाङ्गजी को देखा । आपने फरमाया कि पण्डित मुनि घासीलालजी महाराज ने उपासक-दशाङ्ग सूत्रकी टीका लिखने में बड़ा ही परिश्रम किया है । इस समय इस प्रकार प्रत्येक सूत्रों की संशोधनपूर्वक सरल टीका और शुद्धहिन्दी अनुवाद होने से भगवान निर्ग्रन्थों के प्रवचनों के अपूर्व रस का लाभ मिल सकता है ।



बालाचोर से भारतरत्न शतावधानी पंडित मुनि श्री १००८ श्री रतनचन्दजी महाराज फरमाते हैं कि :—

उत्तरोत्तर जोतां मूल सूत्रनी संस्कृत टीकाओ रचवामां टीकाकारे स्तुत्य प्रयास कर्यो छे, जे स्थानकवासी समाज माटे मगरूरो लेवा जेवुं छे, बली करांचीना श्री संवे सारा कागळमां अने सारा टाईपमां पुस्तक छपावी प्रगट कर्युं छे जे एक प्रकारनी साहित्य सेवा बजावी छे.



बम्बई शहेरमें विराजमान कवि मुनि श्री नानचन्दजी महाराजने फरमाया है कि पुस्तक सुन्दर है प्रयास अच्छा है ।



खीचन से स्थविर क्रियापात्र मुनि श्री रतनचन्दजी महाराज और पंडित रत्न मुनिश्री समर्थमलजी महाराज श्री फराते हैं कि—विद्वान महात्मा पुरुषोंका प्रयत्न सराहनीय है, जैनागम श्रीमद् उपासकदशाङ्गसूत्र की टीका, एवं उसकी सरल सुबोधनी शुद्ध हिन्दी भाषा बड़ी ही सुन्दरता से लिखी है ।



श्री वीतरागाय नमः ॥

श्री श्री श्री १००८ जैनधर्म दिवाकर जैनागमरत्नाकर श्रीमज्जै-  
नाचार्य श्री पूज्य घासीलालजी महाराज चरणवन्दन स्वीकार हो ।

अपरञ्च समाचार यह है कि आपके भेजे हुए ९ शास्त्र मास्टर  
शोभालालजी के द्वारा प्राप्त हुए, एतदर्थ धन्यवाद ! आपश्रीजीने तो ऐसा  
कार्य किया है जो कि हजारों वर्षों से किसी भी स्थानकवासी जैनाचार्य  
ने नहीं किया ।

आपने स्थानकवासीजैनसमाज के ऊपर जो उपकार किया है वह  
कदापि भुलाया नहीं जा सकता और नहीं भुलाया जा सकेगा ।

हम तीनों मुनि भगवान महावीर से अथवा शासनदेव से प्रार्थना  
करते हैं कि आपकी इस वज्रमयी लेखनी को उत्तरोत्तर शक्ति प्रदान  
करें ता कि आप जैन समाज के ऊपर और भी उपकार करते रहें और  
आप चिरञ्जीव हों ।

हम हैं आप के मुनि तीन

मुनि सत्येन्द्रदेव—मुनि लखपतराय—मुनि पद्मसेन

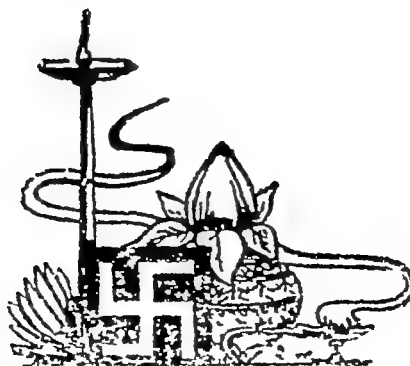


इतवारी बाजार  
नागपुर ता. १९-१२-५६

प्रखर विद्वान जैनाचार्य मुनिराज श्री घासीलालजी महाराजद्वारा जो आगमोद्धार हुआ और हो रहा है सचमुच महाराजश्री का यह स्तुत्य कार्य है। हमने प्रचारकजी के द्वारा नौ सूत्रों का सेट देखा और कई मार्मिक स्थलोंको पढ़ा, पढ़ कर विद्वान मुनिराजश्री की शुद्ध श्रद्धा तथा लेखनीके प्रति हार्दिक प्रसन्नता फूट पड़ी।

वास्तव में मुनिराज श्री जैन समाज पर ही नहीं इतर समाज पर भी महा उपकार कर रहे हैं। ज्ञान किसी एक समाज का नहीं होता वह सभी समाज की अनमोल निधि है जिसे कठिन परिश्रम से तैयार कर जनता के सम्मुख रक्खा जा रहा है जिसका एक एक सेट हर शहर गांव और घर घर में होना आवश्यक है।

साहित्यरत्न  
मोहनमुनि सोहनमुनि जैन



# શ્રી દશવૈકલિક સૂત્રનું સમ્મતિ પત્ર

શ્રમણ સંઘના મહાન આચાર્ય આગમવારિધિ સર્વતન્ત્ર સ્વતંત્ર જ્ઞેનાચાર્ય પૂજ્યશ્રી આત્મારામજી મહારાજે આપેલા સમ્મતિપત્રનો ગુજરાતી અનુવાદ.



મેં તથા પંડિત મુનિ હેમચંદ્રજીએ પંડિત મુલચંદ વ્યાસ ( નાગૌર મારવાડવાલા ) દ્વારા મળેલી પંડિત રત્ન શ્રી ઘાસીલાલજી મુનિ વિરચિત સંસ્કૃત અને હિન્દી ભાષા સહિત શ્રી દશવૈકલિક સૂત્રની આચારમણિમંજૂષા ટીકાનું અવલોકન કર્યું. આ ટીકા સુંદર બની છે. તેમાં પ્રત્યેક શબ્દનો અર્થ સારી રીતે વિશેષભાવ લઈને સમજાવવામાં આવેલ છે.

તેથી વિદ્વાનો અને સાધારણ બુદ્ધિવાળાઓ માટે પરમ ઉપકાર કરવાળી છે. ટીકાકારે મુનિના આચાર વિષયનો સારો ઉલ્લેખ કરેલ છે. જે આધુનિક-મતાવલંબી અહિંસાના સ્વરૂપને નથી જાણતા, હયામાં પાપ સમજે છે તેમને માટે ‘અહિંસા શું વસ્તુ છે’ તેનું સારી રીતે પ્રતિપાદન કરેલ છે. વૃત્તિકારે સૂત્રના પ્રત્યેક વિષયને સારી રીતે સમજાવેલ છે. આ વૃત્તિના અવલોકનથી વૃત્તિકારની અતિશય યોગ્યતા સિદ્ધ થાય છે.

આ વૃત્તિમાં એક બીજી વિશેષતા એ છે કે મૂલસૂત્રની સંસ્કૃત છાયા હોવાથી સૂત્ર, સૂત્રનાં પદ અને પદચ્છેદ સુબોધદાયક બનેલ છે.

પ્રત્યેક જ્ઞાસુએ આ ટીકાનું અવલોકન અવશ્ય કરવું જોઈએ. વધારે શું કહેવું. અમારી સમાજમાં આવા પ્રકારના વિદ્વાન મુનિ રત્નનું હોવું એ સમાજનું અહોભાગ્ય છે. આવા વિદ્વાન મુનિરત્નોના કારણે સુખપ્રાય—સુતેલો સમાજ અને લુપ્તપ્રાય એટલે લોપ પામેલું સાહિત્ય એ બન્નેનો ફરીથી ઉદય થશે. અમો વૃત્તિકારને વારંવાર ધન્યવાદ આપીએ છીએ.

વિક્રમ સંવત ૧૯૬૦ ફાલ્ગુન શુકલ  
તેરસ મંગળવાર  
( અલવર સ્ટેટ )

ધર્મ  
ઉવજાગાય જઈણ  
મુણી આચારામો  
પંચનર્થઓ

શ્રમણ સંઘના પ્રચારમંત્રી પંજળકેશરી મહારાજ શ્રી પ્રેમચંદણ મહારાજ જેઓશ્રી રાજકોટમાં પધારેલા હતા ત્યારે તેઓના તરફથી શાસ્ત્રોને માટે મળેલો અભિપ્રાય.

\*

શાસ્ત્રોદ્ધારસમિતિ તરફથી પૂજ્યપાદ શાસ્ત્રવારિધિ પંડિતરાજ સ્વામીશ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજદ્વારા શાસ્ત્રોદ્ધારનું જે કાર્ય થઈ રહ્યું તે કાર્ય જૈન સમાજ તેમાં ખાસ કરીને સ્થાનકવાસીજૈનસમાજને માટે મૂળભૂત મૌલિક સંસ્કૃતિની જડને મજબુત કરવાવાળું છે.

એટલા ખાતર આ કાર્ય અતિ પ્રશંસનીય છે માટે દરેક વ્યક્તિએ તેમાં યથાશક્તિ ભાગ લેવાની ખાસ આવશ્યકતા છે અને તેથી એ ભગીરથ કાર્ય જલ્દીથી જલ્દી સંપૂર્ણપણે પાર પાડી શકાય અને જનતા શ્રુતજ્ઞાનનો લાભ મેળવી શકે.

\*

દરીયાપુરી સંપ્રદાયના પૂજ્ય આચાર્યશ્રી ઇશ્વરલાલજી મહારાજ સાહેબના

## સૂત્રો સંબંધે વિચારો

નમામિ વીરં ગિરિસારધીરં

પૂજ્યપાદ જ્ઞાનિપ્રવરશ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજ તથા પંડિતશ્રી કનૈયાલાલજી મહારાજ આદિ થાણા છની સેવામાં—

અમદાવાદ શાહપુર ઉપાશ્રયથી મુનિ દયાનંદજીના ૧૦૮ પ્રણિપાત.

આપ સર્વે થાણાઓ સુખ સમાધિમાં હશે નિરંતર ધર્મધ્યાન ધર્મારાધનમાં લીન હશે.

સૂત્ર પ્રકાશન કાર્ય ત્વરિત થાય એવી ભાવના છે દશવૈકાલિક તથા આચારાંગ એક એક ભાગ અહીં છે ટીકા ખૂબ સુંદર, સરળ અને પંડિતજનોને સુપ્રિય થઈ પડે તેવી છે. સાથે સાથે ટીકા વિનાના મુળ અને અર્થ સાથે પ્રકાશન થાય તો શ્રાવકગણુ તેનો વિશેષ લાભ લઈ શકે અને પૂજ્ય આચાર્ય ગુરુદેવને આંખે મોતીયો ઉતરાવ્યો છે અને સાફ છે એજ.

આસો શુદ્ધ ૧૦, મંગળવાર તા. ૨૫-૧૦-૫૫

પુનઃ પુનઃ શાતા ઇચ્છતો,  
દયા મુનિના પ્રણિપાત.

\*



## દરીયાપુરી સંપ્રદાયના પંડિત રત્ન ભાઈચંદ્રજી મહારાજનો અભિપ્રાય શ્રી

રાણપુર તા. ૧૯-૧૨-૧૯૫૫

પૂજ્યપાદ જ્ઞાનિપ્રવર પંડિત રત્ન પૂજ્ય શ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજ આદિ મુનિવરોની સેવામાં, આપ સર્વ સુખમ્મમાધીમાં હશે.

સૂત્રપ્રકાશનનું કામ સુદર થઈ રહ્યું છે તે જાણી અત્યંત આનંદ. આપના પ્રકાશિત થયેલાં કેટલાંક સૂત્રો જોયાં. સુદર અને સરલ મિદ્ધાંતના ન્યાયને પુષ્ટિ કરતી ટીકા પંડિતરત્નોને સુપ્રિય થઈ પડે તેવી છે. સૂત્રપ્રકાશનનું કામ ત્વરિત પૂર્ણ થાય અને ભવિ આત્માઓને આત્મકલ્યાણ કરવામાં સાધનભૂત થાય એજ અભ્યર્થના.

લી. પંડિતરત્ન બાળપ્રદ્યારી  
પૂં શ્રી ભાઈચંદ્ર મહારાજની  
આજ્ઞાનુસાર શાન્તિમુનીના  
પાયવંદન સ્વીકારશે.

\*

તા. ૧૧-૫-૫૬

વીરમગામ

ગચ્છાધિપતિ પૂજ્ય મહારાજ શ્રી જ્ઞાનચંદ્રજી મહારાજના સંપ્રદાયના આત્માર્થી, ક્રિયાપાત્ર, પંડિતરત્ન, મુનિશ્રી સમરથમલજી મહારાજનો અભિપ્રાય.

ખીચનથી આવેલ તા ૧૨-૨-૫૬ના પત્રથી ઉદ્ધૃત.

પૂજ્ય આચાર્ય ઘાસીલાલજી મહારાજના હસ્તક જે સૂત્રોનું લખાણ સુંદર અને સરળ ભાષામાં થાય છે. તે સાહિત્ય; પંડિત મુનિશ્રી સમરથમલજી મહારાજ, સમય એછો મળવાને કારણે સંપૂર્ણ જોઈ શક્યા નથી. છતાં જેટલું સાહિત્ય જોયું છે, તે બહુ જ સારું અને મનન સાથે લખાયેલું છે, તે લખાણ શાસ્ત્ર-આજ્ઞાને અનુરૂપ લાગે છે. આ સાહિત્ય દરેક શ્રદ્ધાળુ જીવોને વાંચવા યોગ્ય છે. આમાં સ્થાનકવાસી સમાજની શ્રદ્ધા, પ્રરૂપણા અને ફરસણાની દૃઢતા શાસ્ત્રાનુકૂળ છે. આચાર્યશ્રી અપૂર્વ પરિશ્રમ લઈ સમાજ ઉપર મહાન ઉપકાર કરે છે.

લી. કીશનલાલ પૃથ્વીરાજ માલ  
મુ. ખીચન.

\*

## લીંબડી સંપ્રદાયના સદાનંદી મુનિશ્રી છોટાલાલજી મહારાજનો અભિપ્રાય

શ્રી વીતરાગદેવે જ્ઞાનપ્રચારને તીર્થંકર-નામ-ગોત્ર બાંધવાનું નિમિત્ત કહેલ છે. જ્ઞાનપ્રચાર કરનાર, કરવામાં સહાય કરનાર, અને તેને અનુમોદન આપનાર જ્ઞાનાવરણીય કર્મને ક્ષય કરી કેવળ જ્ઞાનને પ્રાપ્ત કરી પરમ પદનાં અધિકારી બને છે. શાસ્ત્રજ્ઞ, પરમ શાન્ત અને અપ્રમાદી પૂજ્યશ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજ પોતે અવિશ્રાન્તપણે જ્ઞાનની ઉપાસના અને તેની પ્રભાવના અનેક વિકટ પ્રસંગોમાં પણ કરી રહ્યા છે. તે માટે તેઓશ્રી અનેકશઃ ધન્યવાદના અધિકારી છે. વંદનીય છે, તેમની જ્ઞાનપ્રભાવનાની ધગશ ધણી પ્રમાદિઓને અનુકરણીય છે. જેમ પૂજ્યશ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજ પોતે જ્ઞાનપ્રચાર માટે અવિશ્રાન્ત પ્રયત્ન કરે છે. તેમજ-શાસ્ત્રોદ્ધારસમિતિના કાર્યવાહકો પણ એમાં સહાય કરીને જે પવિત્ર સેવા કરી રહેલ છે. તે પણ ખરેખર ધન્યવાદના પૂર્ણ અધિકારી છે.

એ સમિતિના કાર્યકરોને મારી એક સૂચના છે કે:—

શાસ્ત્રોદ્ધારક પ્રવર પંડિત અપ્રમાદી સંત ઘાસીલાલજી મહારાજ જે શાસ્ત્રોદ્ધારનું કામ કરી રહેલ છે. તેમાં સહાય કરવા માટે-પંડિતો વિગેરેના માટે જે ખર્ચો થઈ રહેલ છે. તેને પહોંચી વળવા માટે સાઈ સરખું ફંડ જોઈએ. એના માટે મારી એ સૂચના છે કે:—શાસ્ત્રોદ્ધારસમિતિના મુખ્ય કાર્યવાહકો-જો બની શકે તો પ્રમુખ પોતે અને બીજા બે ત્રણ જણાઓ ગુજરાત, સૌરાષ્ટ્ર, અને કચ્છમાં પ્રવાસ કરી મેળવેલ બનાવે અને આર્થિક સહાય મેળવે.

જો કે અત્યારની પરિસ્થિતિ વિષમ છે. વ્યાપારીઓ, ધંધાદારીઓને પોતાના વ્યવહાર સાચવવા પણ મુશ્કેલ બન્યા છે. છતાં જો સંભાવિત ગૃહસ્થો પ્રવાસે નીકળે તો જરૂર કાર્ય સફળ કરે એવી મને શ્રદ્ધા છે.

આર્થિક અનુકુળતા થવાથી શાસ્ત્રોદ્ધારનું કામ પણ વધુ સરલતાથી થઈ શકે. પૂજ્યશ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજ જ્યાં સુધી આ તરફ વિચરે છે ત્યાં સુધીમાં એમની જ્ઞાનશક્તિનો જેટલો લાભ લેવાય તેટલો લઈ લેવો, કદાચ સૌરાષ્ટ્રમાં વધુ વખત રહેવાથી તેમને હવે બહાર વિહરવાની ઈચ્છા થતી હોય તો શાન્તિભાઈ શેઠ જેવાઓ વિનંતી કરી અમદાવાદ પધારવા, અને ત્યાં અનુકુળતા મુજબ બે-ત્રણ વર્ષની સ્થિરતા કરાવીને તેમની પાસે શાસ્ત્રોદ્ધારનું કામ પૂર્ણ કરાવી લેવું જોઈએ.

થોડા વખતમાં જામનોધપુરમાં શાસ્ત્રોદ્ધારકમીટી મળવાની છે, તે વખતે ઉપરની સૂચના વિચારાય તો ઠીક.

ફરી શાસ્ત્રોદ્ધારક પૂજ્યશ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજને એમની આ સેવા અને પરમ કલ્યાણકારક પ્રવૃત્તિને માટે વારંવાર અભિનંદન છે. શાસનનાયક દેવ તેમના શરીરાદિને સશક્ત અને દીર્ઘાયુ રાખી સમાજ ધર્મની વધુ ને વધુ સેવા કરી શકે. ॐ અસ્તુ.

ચાતુર્માસ સ્થળ, લીંબડી	}	લી
સાં. ૨૦૧૦ શ્રાવણ વદ ૧૩ ગુરુ.		સદાનંદી જૈનમુનિ છોટાલાલજી

\*

### શ્રી વર્ધમાન સંપ્રદાયના પૂજ્ય શ્રી પુનમચંદ્રજી મહારાજનો અભિપ્રાય

શાસ્ત્રવિશારદ પૂજ્ય આચાર્ય મહારાજ શ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજશ્રીએ જૈન આગમો ઉપર જે સંસ્કૃત ટીકા વગેરે રચેલ છે તે માટે તેઓશ્રી ધન્યવાદને પાત્ર છે. તેમણે આગમો ઉપરની સ્વતંત્ર ટીકા રચીને સ્થાનકવાસી જૈન સમાજનું ગૌરવ વધાર્યું છે, આગમો ઉપરની તેમની સંસ્કૃત ટીકા ભાષા અને ભાવની દૃષ્ટિએ ઘણી જ સુંદર છે. સંસ્કૃતરચના માધુર્ય તેમજ અલંકાર વગેરે ગુણોથી સુકત છે. વિદ્વાનોએ તેમજ જૈન સમાજના આચાર્યો, ઉપાધ્યાયો વગેરે એ શાસ્ત્રો ઉપર રચેલી આ સંસ્કૃતરચનાની કદર કરવી જોઈએ અને દરેક પ્રકારનો સહકાર આપવો જોઈએ.

આવા મહાન કાર્યમાં પંડિતરત્ન પૂજ્ય શ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજ જે પ્રયત્ન કરી રહ્યા છે તે અલૌકિક છે. તેમનું આગમ ઉપરની સંસ્કૃત ટીકા વગેરે રચવાનું ભગીરથકાર્ય શીઘ્ર સફળ થાય એ જ શુભેચ્છા સાથે.

અમદાવાદ	}	મુનિ પૂર્ણચંદ્રજી
તા. ૨૨-૪-૫૬ રવિવાર		
મહાવીર જયંતિ		

\*

### ખંભાત સંપ્રદાયના મહાસતી શારદાબાઈ સ્વામીનો અભિપ્રાય

લખતર તા. ૨૫-૪-૫૬

શ્રીમાન શેઠ શાંતીલાલભાઈ મંગળદાસભાઈ

પ્રમુખ સાહેબ અગિલ ભારત શ્રવેન્ સ્થાન્ જૈન શાસ્ત્રોદ્ધાર સમિતિ

મુા. અમદાવાદ

અમો અત્રે દેવગુરૂની કૃપાએ સુખરૂપ છીએ. વિ. માં આપની સમિતિદ્વારા પૂજ્ય આચાર્ય મહારાજ શ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજ સાહેબ જે સૂત્રોનું કાર્ય કરે છે તે પૈકીનાં સૂત્રોમાંથી ઉપાસકદશાંગસૂત્ર, આચારાંગસૂત્ર, અનુત્તરોપપાતિકસૂત્ર

દશવૈકલિકસૂત્ર વિગેરે સૂત્રો જોયાં તે સૂત્રો સંસ્કૃત હિન્દી અને ગુજરાતી ભાષાઓમાં હોવાને કારણે વિદ્વાન અને સામાન્ય જનોને ઘણું જ લાભદાયિક છે. તે વાંચન ઘણું જ સુંદર અને મનોરંજન છે. આ કાર્યમાં પૂજ્ય આચાર્યશ્રી જે અઘાત પુરૂષાર્થે કાર્ય કરે છે તે માટે વારંવાર ધન્યવાદને પાત્ર છે. આ સૂત્રોથી સમાજને ઘણું લાભનું કારણ છે.

હંસ સમાન બુદ્ધિવાળા આત્માઓ સ્વપરના ભેદથી નિખાલસ ભાવનાઓ અવલોકન કરશે તો આ સાહિત્ય સ્થાનકવાસી સમાજ માટે અપૂર્વ અને ગૌરવ લેવા જેવું છે. માટે દરેક લબ્ય આત્માઓને સૂચન કરું છું કે આ સૂત્રો પોતા-પોતાના ઘરમાં વસાવાની સુંદર તકને ચુકશે નહિ. કારણ આવા શુદ્ધ પવિત્ર અને સ્વપરંપરાને પુષ્ટીરૂપ સૂત્રો મળવાં બહુ મુશ્કેલ છે. આ કાર્યને આપશ્રી તથા સમિતિના અન્ય કાર્યકરો જે શ્રમ લઈ રહ્યા છે તેમાં મહાન નિર્જરાનું કારણ જોવામાં આવે છે તે બદલ ધન્યવાદ. એ જ

લી. શારદાબાઈ સ્વામી  
ખંભાત સંપ્રદાય.

\*

## બરવાળા સંપ્રદાયના વિદુષી મહાસતીજી મોંઘીબાઈ સ્વામીનો અભિપ્રાય

ધંધુકા તા. ૨૭-૧-૫૬

શ્રીમાન શેઠ શાન્તીલાલ મંગળદાસભાઈ

પ્રમુખ અં ભં શ્વેં સ્થાં જૈનશાસ્ત્ર ઉદ્ધાર સમિતિ

મું રાજકોટ

અત્રે ખીરાજતા ગું ગુંના લંડાર મહાસતીજી વિદુષી મોંઘીબાઈ સ્વામી તથા હીરાબાઈ સ્વામી આદિઠાણું બન્ને સુખશાતામાં ખીરાજે છે, આપને સુચન છે કે અપ્રમત્ત અવસ્થામાં રહી નિવૃત્તિ ભાવને મેળવી ધર્મધ્યાન કરશો એજ આશા છે.

વિશેષમાં અમને પૂજ્ય આચાર્ય મહારાજ શ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજના રચેલાં સૂત્રો ભાઈ પોપટ ધનજીભાઈ તરફથી ભેટ તરીકે મળેલાં તે સૂત્રો તમામ આદ્યોપાન્ત વાંચ્યાં મનન કર્યાં અને વિચાર્યાં છે તે સૂત્રો સ્થાનકવાસી સમાજને અને વીતરાજમાર્ગને ખુબ જ ઉન્નત બનાવનાર છે. તેમાં આપણી શ્રદ્ધા એટલી ન્યાયરૂપથી ભરેલી છે તે આપણા સમાજ માટે ગૌરવ લેવા જેવું છે. હંસ સમાન

આત્માઓ જ્ઞાનઝરણાઓથી આત્મરૂપ વાડીને વિકસિત કરશે. ધન્ય છે આપને અને સમિતિના કાર્યકરોને જે સમાજ ઉત્થાન માટે કોઈની પણ પરવા કર્યા વગર જ્ઞાનનું દાન લબ્ય આત્માઓને આપવા નિમિત્તરૂપ થઈ રહ્યા છે. આવા સમર્થ વિદ્વાન પાસેથી સંપૂર્ણ કાર્ય પુરું કરાવશે તેવી આશા છે.

એજ લિ. ઝરવાળા સંપ્રદાયના વિદુષી  
મહાસતીજી મોંઘીબાઈ સ્વામી  
ના ફરમાનથી લી. જોડીદાસ ગણેશભાઈ—ધધુકા  
સ્થાનકવાસી જૈન સંઘના પ્રમુખ

\*

### અઘતન પદ્ધતિને અપનાવનાર વડોદરા કોલેજના એક વિદ્વાન પ્રોફેસરનો અભિપ્રાય

સ્થાનકવાસી સંપ્રદાયના મુનિશ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજ જૈનશાસ્ત્રોના સંસ્કૃત ટીકાબદ્ધ, ગુજરાતીમાં અને હિન્દીમાં લાખાંતરો કરવાના ઘણા વિકટ કાર્યમાં વ્યાસ થયેલા છે. શાસ્ત્રો પૈકી જે શાસ્ત્રો પ્રતિદ્ધ થયાં છે તે હું જોઈ શક્યો છું, મુનિશ્રી પોતે સંસ્કૃત, અર્ધમાગધી હિંદી લાખાઓના નિબળાત છે, એ એમનો દુક પરિચય કરતાં સહજ જણાઈ આવે છે. શાસ્ત્રોનું સંપાદન કરવામાં તેમને પોતાના, શિષ્ય વર્ગનો અને વિશેષમાં ત્રણ પંડિતોનો સહયાર મળ્યો છે, તે જોઈ મને આનંદ થયો. સ્થાનકવાસી સંપ્રદાયના અગ્રેમરોએ પંડિતોનો સહકાર મેળવી આપી, મુનિશ્રીના કાર્યને સરળ અને શિષ્ટ બનાવ્યું છે. સ્થાનકવાસી સમાજમાં વિક્ષત્તા ઘણી ઓછી છે, તે દિગંબર મૂર્તિપૂજક શ્વેતાંબર વગેરે જૈનદર્શનના પ્રતિનિધિઓના ઘણા સમયથી પરિચયમાં આવતાં હું વિરોધના ભય વગર, કહી શકું. પૂં મહારાજનો આ પ્રયાસ સ્થાનકવાસી સંપ્રદાયમાં પ્રથમ છે એવી મારી માન્યતા છે. સંસ્કૃત સ્પષ્ટીકરણો સારાં આપવામાં આવ્યાં છે, લાખા શુદ્ધ છે એમ ચોક્કસ કહી શકું છું, ગુજરાતી લાખાતરો પણ શુદ્ધ અને સરળ થયેલાં છે. મને વિશ્વાસ છે કે મહારાજશ્રીના આ સ્તુત્ય પ્રયાસને જૈનસમાજ ઉત્તેજન આપશે અને શાસ્ત્રોના લાખાંતરોને વાચનાલયમાં અને કુટુંબોમાં વસાવી શકાય તે પ્રમાણે વ્યવસ્થા કરશે.

પ્રતાપગજ, વડોદરા

કામદાર કેશવલાલ હિંમતરામ

તા. ૨૭-૨-૧૯૫૬

એમ. એ.

## મુંબઈની બે કોલેજોના પ્રોફેસરોનો અભિપ્રાય

મુંબઈ તા. ૩૧-૩-૫૬

શ્રીમાન શેઠ શાંતીલાલ મંગળદાસ

પ્રમુખ : શ્રી અખિલ ભારત શ્વે. સ્થા. જૈન શાસ્ત્રોદ્ધાર સમિતિ,

રાજકોટ.

પૂજ્યાચાર્ય શ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજે તૈયાર કરેલાં આચારાંગ દશવૈકાલિક, આવશ્યક, ઉપાસકદશાંગ વગેરે સૂત્રો અમે જોયાં. આ સૂત્રો ઉપર સંસ્કૃતમાં ટીકા આપવામાં આવી છે અને સાથે સાથે હિંદી અને ગુજરાતી ભાષાંતરો પણ આપવામાં આવ્યાં છે સંસ્કૃતટીકા અને ગુજરાતી તથા હિંદી ભાષાંતરો જોતાં આચાર્યશ્રીના આ ત્રણે ભાષા પરના એકસરળા અસાધારણ પ્રભુત્વની સચોટ અને સુરેખ છાપ પડે છે. આ સૂત્ર ગ્રંથોમાં પાનેપાને પ્રગટ થતી આચાર્યશ્રીની અપ્રતિમ વિદ્વત્તા મુગ્ધ કરી દે તેવી છે. ગુજરાતી તથા હિંદીમાં થયેલાં ભાષાંતરમાં ભાષાની શુદ્ધિ અને સરળતા નોંધપાત્ર છે. એથી વિદ્વદ્જન અને સાધારણ માણસ ઉભયને સંતોષ આપે એવી એમની લેખિનીની પ્રતીતિ થાય છે. ૩૨ સૂત્રોમાંથી હજુ ૧૩ સૂત્રો પ્રગટ થયાં છે. બીજાં ૭ સૂત્રો લખાઈને તૈયાર થઈ ગયાં છે. આ બધાંજ સૂત્રો જ્યારે એમને હાથે તૈયાર થઈને પ્રગટ થશે ત્યારે જૈન-સૂત્ર-સાહિત્યમાં અમૂલ્ય સંપત્તિરૂપ ગણાશે એમાં સંશય નથી. આચાર્યશ્રી આ મહાન કાર્યને જૈનસમાજનો વિશેષતઃ સ્થાનકવાસી સમાજનો સંપૂર્ણ સહકાર સાંપડી રહેશે એવી અમે આશા રાખીએ છીએ.

પ્રો. રમણલાલ ચીમનલાલ શાહ

સેન્ટ ઝેવિયર્સ કોલેજ, મુંબઈ.

પ્રો. તારા રમણલાલ શાહ

સોપ્રીયા કોલેજ, મુંબઈ

\*

રાજકોટની ધર્મેન્દ્રસિંહજી કોલેજના પ્રોફેસર સાહેબનો અભિપ્રાય

જયમહાલ

જગનાથ પ્લોટ

રાજકોટ, તા. ૧૮-૪-૫૬

પૂજ્યાચાર્ય પં. મુનિ શ્રી ઘાસીલાલ મહારાજ આજે જૈનસમાજ માટે એક એવા કાર્યમાં વ્યાપ્ત થયેલા છે કે જે સમાજ માટે બહુ ઉપયોગી થઈ પડશે. મુનિશ્રીએ તૈયાર કરેલાં આચારાંગ, દશવૈકાલિક, શ્રી વિપાકશ્રુત વિ મેં જોયાં.

આ સૂત્રો જોતાં પહેલી જ નજરે મહારાજશ્રીનો સંસ્કૃત, અર્ધભાગધી, હિન્દી તથા ગુજરાતી ભાષાઓ ઉપરનો અસાધારણ કાબુ જણાઈ આવે છે. એક પણ ભાષા મહારાજશ્રીથી અજાણી નથી. આપણે જાણીએ છીએ કે એ સૂત્રો ઉચ્ચ અને પ્રથમ કોટિના છે. તેની વસ્તુ ગંભીર, વ્યાપક અને જીવનને તલસ્પર્શી છે, આટલા ગહન અને સર્વઆદ્ય સૂત્રોનું ભાષાંતર પૂ. ઘાસીલાલજી મહારાજ જેવા ઉચ્ચ કોટિના મુનિરાજને હાથે થાય છે તે આપણાં અહોભાગ્ય છે. યંત્રવાદ અને ભૌતિકવાદના આ જમાનામાં જ્યારે ધર્મભાવના ઓસરતી જાય છે એવે વખતે આવા તત્ત્વજ્ઞાન આધ્યાત્મિકતાથી ભરેલાં સૂત્રોનું સરળ ભાષામાં ભાષાંતર દરેક જણાસુ, મુમુક્ષુ અને સાધકને માર્ગદર્શક થઈ પડે તેમ છે. જૈન અને જૈનેતર, વિદ્વાન અને સાધારણ માણસ સાધુ અને શ્રાવક દરેકને સમજણ પડે તેવી સ્પષ્ટ, સરળ અને શુદ્ધ ભાષામાં સૂત્રો લખવામાં આવ્યાં છે. મહારાજશ્રીને જ્યારે જોઈએ ત્યારે તેમના આ કાર્યમાં સંકળાયેલા જોઈએ છીએ. એ ઉપરથી મુનિશ્રીના પરિશ્રમ અને ધગશની કલ્પના કરી શકાય તેમ છે. તેમનું જીવન સૂત્રોમાં વણાઈ ગયું છે.

મુનિશ્રી આ અસાધારણ કાર્યમાં પોતાના શિષ્યોનો તથા પંડિતોનો સહકાર મળ્યો છે. મને આશા છે કે જો દરેક મુમુક્ષુ આ પુસ્તકોને પોતાના ઘરમાં વસાવશે અને પોતાના જીવનને સાચા સુખને માર્ગે વાળશે તો મહારાજશ્રીએ ઉઠાવેલો શ્રમ સંપૂર્ણપણે સફળ થશે.

પ્રો. રસિકલાલ કસ્તુરચંદ ગાંધી

એમ. એ. એલ. એલ. બી.

ધર્મેન્દ્રસિંહજી કેલેજ

રાજકોટ ( સૌરાષ્ટ્ર )

\*

મુંબઈ અને ઘાટકોપરમાં મળેલી સભાએ લિનાસર કોન્ફરન્સ તથા સાધુ સંમેલનમાં મોકલાવેલ ઠરાવ

હાલ જે વખતે શ્રી. શ્વેતાંબર સ્થાનકવાસી જૈન સંઘ માટે આગમ સંશોધન અને સ્વતંત્ર ટીકાવાળા શાસ્ત્રોદ્ધારની અતિ આવશ્યકતા છે અને જે મહાનુભાવોએ આ વાત દીર્ઘદૃષ્ટિથી પહેલી પોતાના મગજમાં લઈ તે પાર પાડવા મહેનત લઈ રહ્યા છે તેવા મુનિ મહારાજ પંડિતરત્ન શ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજ કે જેઓને સાદ્દી અધિવેશમાં સર્વાનુમતે સાહિત્ય મંત્રી નીમ્યા છે તેઓશ્રીની દેખરેખ નીચે અ. ભા. શ્વે. સ્થા. જૈન શાસ્ત્રોદ્ધાર સમિતિ જે એક મોટી વગવાળી કમિટી છે તેની મારફતે કામ થઈ રહ્યું છે. જેને પ્રધાનાચાર્યશ્રી તથા પ્રચાર મંત્રીશ્રી

તથા અનેક અનુભવી મહાનુભાવોએ પોતાની પસંદગીની મહોર છાપ આપી છે અને છેલ્લામાં છેલ્લા વડોદરા યુનિવર્સિટીના પ્રોફેસર કેશવલાલ કામદાર એમ. એ. પોતાનું સવિસ્તર પ્રમાણપત્ર આપ્યું છે તે શાસ્ત્રોદ્ધાર કમિટીના કામને આ સંમેલન તથા કોન્ફરન્સ હાર્દિક અભિનંદન આપે છે. અને તેમના કામને જ્યાં જ્યાં અને જે જે જરૂર પડે-પડિતની અને નાણાંની-પોતાની પાસેના ફંડમાંથી અને બહાર જનતા પાસેથી મદદ મળે તેવી ઇચ્છા ધરાવે છે.

આ શાસ્ત્રો અને ટીકાઓને જ્યારે આટલી બધી પ્રશંસાપૂર્વક પસંદગી મળી છે ત્યારે તે કામને મદદ કરવાની આ કોન્ફરન્સ પોતાની ફરજ માને છે અને જે કોઈ ત્રુટી હોય તે પં. ર. શ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજની સાનિધ્યમાં, જઈ, બતાવીને સુધારવા પ્રયત્ન કરવો. આ કામને ટલ્લે ચઢાવવા જેવું કોઈ પણ કામ સત્તા ઉપરના અધિકારીઓના વાણી કે વર્તનથી ન થાય તે જોવા પ્રમુખ સાહેબને ભલામણ કરે છે.

( સ્થા. જૈન પત્ર તા. ૪-૫-૫૬ )

\*

### સ્વતંત્ર વિચારક અને નિહર લેખક ‘ જૈન સિદ્ધાંત ’ના તંત્રીશ્રી શેઠ નગીનદાસ ગીરધરલાલનો અભિપ્રાય

શ્રી સ્થાનકવાસી શાસ્ત્રોદ્ધાર સમિતિ સ્થાપીને પૂ. ઘાસીલાલજી મહારાજને સૌરાષ્ટ્રમાં બોલાવી તેમની પાસે બત્રીસે સૂત્રો તૈયાર કરવાની હિલચાલ ચાલતી હતી ત્યારે તે હિલચાલ કરનાર શાસ્ત્રજ્ઞ શેઠ શ્રી દામોદરદાસભાઈ સાથે મારે પત્રવ્યવહાર ચાલેલો ત્યારે શેઠ શ્રી દામોદરદાસભાઈએ તેમના એક પત્રમાં મને લખેલું કે—

“ આપણા સૂત્રોના મૂળ પાઠ તપાસી શુદ્ધ કરી સંસ્કૃત સાથે તૈયાર કરી શકે તેવા સ્થાનકવાસી સંપ્રદાયમાં મુનિશ્રી ઘાસીલાલજી મ. સિવાય મને કોઈ વિશેષ વિદ્વાન મુનિ જોવામાં આવતા નથી. લાંબી તપાસને અંતે મેં મુનિશ્રી ઘાસીલાલજીને પસંદ કરેલા છે.”

શેઠ શ્રી દામોદરદાસભાઈ પોતે વિદ્વાન હતા. શાસ્ત્રજ્ઞ હતા તેમ વિચારક પણ હતા. શ્રાવકો તેમજ મુનિઓ પણ તેમની પાસેથી શિક્ષા વાંચના લેતા, તેમ જ્ઞાનચર્યા પણ કરતા. એવા વિદ્વાન શેઠશ્રીની પસંદગી યથાર્થ જ હોય એમાં



નવાઈ નથી. અને પૂ. શ્રી ઘાસીલાલજીના બનાવેલાં સૂત્રો જોતાં સૌ કોઈને ખાત્રી થાય તેમ છે કે દામોદરદાસભાઈએ તેમજ સ્થાનકવાસી સમાજે જેવી આશા શ્રી ઘાસીલાલજી મ. પાસેથી રાખેલી તે બરાબર ફળીભૂત થયેલ છે.

શ્રી વર્ધમાન શ્રમણસંઘના આચાર્ય શ્રી આત્મારામજી મહારાજે શ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજના સૂત્રો માટે ખાસ પ્રશંસા કરી અનુમતિ આપેલ છે તે ઉપરથી જ શ્રી ઘાસીલાલજી મ. ના સૂત્રોની ઉપયોગિતાની ખાત્રી થશે.

આ સૂત્રો વિદ્યાર્થીને, અભ્યાસીને તેમજ સામાન્ય વાંચકને સર્વને એક સરખી રીતે ઉપયોગી થઈ પડે છે. વિદ્યાર્થીને તેમજ અભ્યાસીને :મૂળ તથા સંસ્કૃત ટીકા વિશેષ કરીને ઉપયોગી થાય તેમ છે. ત્યારે સામાન્ય હિંદી વાંચકને હિંદી અનુવાદ અને ગુજરાતી વાંચકને ગુજરાતી અનુવાદથી આખું સૂત્ર સરળતાથી સમજાય જાય છે.

કેટલાકનો એવો ભ્રમ છે કે સૂત્રો વાંચવાનું કામ આપણું કામ થઈ, સૂત્રો આપણને સમજાય નહિ. આ ભ્રમ તદ્દન ખોટો છે. ખીન્ન કોઈપણ શાસ્ત્રીય પુસ્તક કરતાં આ સૂત્રો સામાન્ય વાંચકને પણ ઘણી સરળતાથી સમજાઈ જાય છે. સામાન્ય માણસ પણ સમજી શકે તેટલા માટે જ ભગવાન મહાવીરે તે વખતની લોક ભાષામાં (અર્થ માગધી ભાષામાં) સૂત્રો બનાવેલાં છે. એટલે સૂત્રો વાંચવાં તેમજ સમજવામાં ઘણાં સરળ છે.

માટે કોઈપણ વાંચકને એનો ભ્રમ હોય તો તે કાઢી નાંખવો. અને ધર્મનું તેમજ ધર્મના સિદ્ધાંતોનું સાચું જ્ઞાન મેળવવા માટે સૂત્રો વાંચવાને ચૂકવું નહિ. એટલું જ નહિ પણ જરૂરથી પહેલાં સૂત્રો જ વાંચવાં.

સ્થાનકવાસીઓમાં આ શ્રી સ્થા. જૈન શાસ્ત્રોદ્ધાર સમિતિએ જે કામ કર્યું છે અને કરી રહી છે તેવું કોઈ પણ સંસ્થાએ આજ સુધી કર્યું નથી. સ્થા. જૈન શાસ્ત્રોદ્ધાર સમિતિના છેલ્લા રિપોર્ટ પ્રમાણે ખીન્ન છ સૂત્રો લખાયેલ પડ્યાં છે, જે સૂત્રો-અનુયોગદ્વાર અને ઠાણાંગ સૂત્રો-લખાય છે તે પણ થોડા વખતમાં તૈયાર થઈ જશે. તે પછી બાકીના સૂત્રો હાથ ધરવામાં આવશે.

તૈયાર સૂત્રો જલ્દી છપાઈ જાય એમ ઇચ્છીએ છીએ અને સ્થા. બંધુઓ સમિતિને ઉત્તેજન અને સહાયતા આપીને તેમનાં સૂત્રો ઘરમાં વસાવે એમ ઇચ્છીએ છીએ.

‘જૈન સિદ્ધાન્ત’ પત્ર - મે ૧૯૫૫

## શ્રુત ભક્તિ

( પૂં આચાર્ય શ્રી ઇશ્વરલાલજી મં સાં ની આજ્ઞા અનુસાર લખનાર )

દ. સં. ના જૈન મુનિ શ્રી દયાનંદજી મહારાજ

તાં ૨૩-૬-૫૬ શાહપુર, અમદાવાદ

આજે લગભગ ૨૦ વર્ષથી શ્રદ્ધેય પરમપૂજ્ય, જ્ઞાનદિવાકર પં. મુનિશ્રી ઘાસીલાલજી મં ચરમ તીર્થંકર ભગવાન મહાવીરના અનુત્તર, અનુપમ ન્યાય યુક્ત, પૂર્વાપર અવિરોધ, સ્વપર કલ્યાણકારક, ચરમ શીતળ વાણીના ઘોતક એવા શ્રી જિનાગમ પર પ્રકાશ પાડે છે, તેઓશ્રી પ્રાચીન, પૌર્વાત્ય સંસ્કૃતાદિ અનેક ભાષાના પ્રખર પંડિત છે અને જિનવાણીનો પ્રકાશ સંસ્કૃત, ગુજરાતી અને હિંદીમાં મૂળ શબ્દાર્થ, ટીકા, વિસ્તૃત વિવરણ સાથે પ્રકાશમાં લાવે છે એ જૈન સમાજ માટે અતિ ગૌરવ અને આનંદનો વિષય છે.

ભં મહાવીર અત્યારે આપણી પાસે વિદ્યમાન નથી, પરંતુ તેમની વાણી રૂપે અક્ષરદેહ ગણધર મહારાજોએ શ્રુત પરંપરાએ સાચવી રાખ્યો. શ્રુતપરંપરાથી સચવાતું જ્ઞાન જ્યારે વિસ્મૃત થવાનો સમય ઉપસ્થિત થવા લાગ્યો ત્યારે શ્રી દેવદિગણિ ક્ષમાશ્રમણે વલ્લીપુર-વળામાં તે આગમોને પુસ્તકો રૂપે આરૂઢ કર્યો. આજે આ સિદ્ધાંતો આપણી પાસે છે. તે અર્ધ માગધી પાલી ભાષામાં છે. અત્યારે આ ભાષા ભગવાનની, દેવોની તથા જનગણની ધર્મભાષા છે. તેને આપણા શ્રમણો અને શ્રમણીઓ તથા મુમુક્ષુ શ્રાવક શ્રાવિકાઓ મુખપાઠ કરે છે; પરંતુ તેનો અર્થ અને ભાવ ઘણા થોડાઓ સમજે છે.

જિનાગમ એ આપણાં શ્રદ્ધેય પવિત્ર ધર્મસૂત્રો છે. એ આપણી આંખો છે. તેનો અભ્યાસ કરવો એ આપણી સૌની-જૈન માત્રની ફરજ છે. તેને સત્ય સ્વરૂપે સમજાવવા માટે આપણા સહભાગ્યે જ્ઞાનદિવાકર શ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજે સત્ સંકલ્પ કર્યો છે અને તે લિખિત સૂત્રોને પ્રગટાવી શાસ્ત્રોદ્ધાર સમિતિદ્વારા જ્ઞાન પરણ વહેતી કરી છે. આવા અનુપમ કાર્યમાં સકળ જૈનોનો સહકાર અવશ્ય હોવો ઘટે અને તેનો વધારેમાં વધારે પ્રચાર થાય તે માટે પ્રયત્નો કરવા ઘટે.

ભં મહાવીરને ગણધર ગૌતમ પૂછે છે કે હે ભગવાન, સૂત્રની આરાધના કરવાથી શું ફળ પ્રાપ્ત થાય છે? ભગવાન તેનો પ્રતિ ઉત્તર આપે છે કે શ્રુતની આરાધનાથી જીવોના અજ્ઞાનનો નાશ થાય છે. અને તેઓ સંસારના કલેશોથી નિવૃત્તિ મેળવે છે. અને સંસાર કલેશોથી નિવૃત્તિ અને અજ્ઞાનનો નાશ થતાં મોક્ષ ફળની પ્રાપ્તિ થાય છે.

આવા જ્ઞાન કાર્યમાં મૂર્તિપૂજક જૈનો, દિગંબરો અને અન્ય ધર્મીઓ હજારો અને લાખો રૂપીયા ખર્ચે છે. હિંદુ ધર્મમાં પવિત્ર મનાતા ગ્રંથ ગીતાના સેંકડો નહિ પણ હજારો ટીકા ગ્રંથો દુનિયાની લગભગ સર્વ ભાષાઓમાં પ્રગટ થયા છે. ઇસાઈ ધર્મના પ્રચારકો તેમના પવિત્ર ધર્મગ્રંથ બાઈબલના પ્રચારાર્થે તેનું જગતની સર્વ

ભાષાઓમાં ભાષાંતર કરી, તેને પડતર કરતાં પણ ઘણી ચોષ્ટી કિંમતે વેચી ધર્મ-સૂત્રોનો પ્રચાર કરે છે. મુસ્લિમ લોકો પણ તેમના પવિત્ર મનાતા ગ્રન્થ કુરાનનું અનેક ભાષાઓમાં ભાષાંતર કરી સમાજમાં પ્રચાર કરે છે. આપણે પૈસા પરનો મોહ ઉતારી ભગવાનના સિદ્ધાંતોનો પ્રચાર કરવા માટે તન, મન, ધન સમર્પણ કરવાં જોઈએ. અને સૂત્ર પ્રકાશનના કાર્યને વધુ ને વધુ વેગ મળે તે માટે સક્રિય પ્રયત્નો કરવા જોઈએ. આવા પવિત્ર કાર્યમાં સાંપ્રદાયિક મતભેદો સૌએ ભૂલી જવા જોઈએ અને શુદ્ધ આશયથી થતા શુદ્ધ કાર્યને અપનાવી લેવું જોઈએ. સમિતિના નિયમાનુસાર રૂ. ૨૫૧૭ ભરી સમીતીના સભ્ય બનવું જોઈએ. ધાર્મિક અનેક ખાતાઓના મુકાબલે સૂત્ર પ્રકાશનનું - જ્ઞાન પ્રચારનું આ ખાતું સર્વશ્રેષ્ઠ ગણાવું જોઈએ.

આ કાર્યને વેગ આપવાની સાથે સાથે એ આગમો-ભગવાનની એ મહાવાણીનું પાન કરવા પણ આપણે હરહંમેશ તત્પર રહેવું જોઈએ. જેથી પરમ શાંતિ અને જીવનસિદ્ધિ મેળવી શકાય. (સ્થા. જૈન તા. ૫-૭-૫૬)

\*

શ્રી. અ. ભા. જ્વે. સ્થા. જૈન શાસ્ત્રોદ્ધાર સમિતિનાં પ્રમુખશ્રી વગેરે. રાણપુર

પરમ પવિત્ર સૌરાષ્ટ્રની પુણ્ય ભૂમિ પર જ્યારથી શાંત-શાસ્ત્રવિશારદ અપ્રમાદિ પૂજ્ય આચાર્ય મહારાજ શ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજનાં પુનિત પગલાં થયાં છે ત્યારથી ઘણા લાંબા કાળથી લાગુ પડેલ જ્ઞાનાવરણીય કર્મનાં પડળ ઉતારવાનો શુભ પ્રયાસ થઈ રહ્યો છે. અને જે પ્રવચનની પ્રભાવના તેઓશ્રી કરી રહ્યા છે તે અનંત ઉપકારક કાર્યમાં તમે જે અપૂર્વ સહાય આપી રહ્યા છો તે માટે તમે સર્વને ધન્ય છે અને એ શુભ પ્રવૃત્તિના શુભ પરિણામોનો જનતા લાભ લે છે, મને તો સમજાય છે કે સાધુજી છઠે ગુણસ્થાનકે હોય છે. પણ પૂજ્ય શ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજ તો બહુધા સાતમે અપ્રમત્ત ગુણસ્થાનકે જ રહે છે એવા અપ્રમત્ત માત્ર પાંચ-સાત સાધુઓ જ સ્થાનકવાસી જૈનસમાજમાં હોય તો સમાજનું શ્રેય થતાં જરાએ વાર ન લાગે. સમાજ-કાશમાં સ્થા. જૈન સંપ્રદાયનો દિવ્ય પ્રભાકર જળાહળી નીકળે. ૫... જી વો દિન....

શ્રી શાસ્ત્રોદ્ધાર સમિતિને મારી એક નમ્ર સુચના છે કે-પૂજ્યશ્રીની વૃદ્ધાવસ્થા છે, અને કાર્યપ્રણાલિકા યુવાનોને શરમાવે તેવી છે. તેમને ગામોગામ વિહાર કરવા અને શાસ્ત્રોદ્ધારનું કાર્ય કરવું તેમાં ઘણી શારીરિક-માનસિક અને વ્યવહારિક મુશ્કેલી વેઠવી પડે છે, તો કોઈ યોગ્ય સ્થળ કે જ્યાંના શ્રાવકો ભક્તિ વાળા હોય. વાડાનાં રાગના વિષથી અલિપ્ત હોય. એવા કોઈ સ્થળે શાસ્ત્રોદ્ધારનું કાર્ય પૂર્ણ થાય ત્યાં સુધી સ્થિરતા કરી શકે એના માટે પ્રબંધ કરવો જોઈએ. બીજા કોઈ એવા સ્થળની અનુકુળતા ન મળે તો છેવટ અમદાવાદમાં યોગ્ય સ્થળે રહેવાની સગવડતા કરી અપાય તો વધુ સારું. મહારી આ સુચના પર ધ્યાન આપવા ફરી યાદ આપુ છું ફરીવાર પૂજ્ય આચાર્યશ્રીને અને તેમનાં સત્કાર્યના સહાયકોને મારા અભિનંદન પાઠવું છું તે સ્વીકારશોજી. લી. સદાનંદી જૈનમુનિ છોટાલાલજી



રૂ. ૧૦,૦૦૦] આપનાર આદ્ય મુરબ્બીશ્રી,  
સમિતિના પ્રમુખ; દાનવીર શેઠશ્રી,



શેઠ શાંતિલાલ મંગળદાસભાઈ  
અમદાવાદ

## સમિતિના પ્રમુખ અને આદ્ય મુરબીશ્રી શેઠ શાંતિલાલ મંગળદાસનો કુંક પરિચય

\*

શ્રી શાંતિલાલ મંગળદાસનો જન્મ ઈ. સ. ૧૯૦૧ નાં ઓગસ્ટની ત્રીજી તારીખે તેમનાં મોસાળ ચોરવડોદરામાં થયો હતો.

વિદ્યાર્થી અવસ્થામાંજ એમનામાં રહેલી તીવ્ર બુદ્ધિ જુદી તરી આવતી હતી. ઈ. સ. ૧૯૧૯ માં અમદાવાદ કેન્દ્રમાંથી મેટ્રીક પાસ થનાર પ્રથમ દસ વિદ્યાર્થીઓમાંના તેઓ એક હતાં. ત્યારબાદ ઈ. સ. ૧૯૨૩માં અર્થશાસ્ત્રનો વિષય લઈ તેઓ B. A. થયા. એ જમાનામાં બહુ-થોડાં ધનિક કુટુંબો ઉચ્ચ અભ્યાસમાં રસ લેતા હતા

ગ્રેજ્યુએટ થયા બાદ તુરતજ એમના ઉપર ધંધાની જવાબદારી આવી પડી. યુવાન વય, તિવ્ર બુદ્ધિ, વિશાળ વાંચન અને મનને તેમને નવીજ દૃષ્ટિ આપી હતી અને તેમની સમક્ષ આવતા ઉદ્યોગના અનેક વિકટ સવાલોને તેમણે બહુ કુશળતાથી ઉકેલવા માંડ્યા. ૧૯૪૫ માં એ અમદાવાદ મિલ માલિક મંડળના પ્રમુખ બન્યા. હિંદની તેમજ ખાસ કરીને ગુજરાત-સૌરાષ્ટ્રનાં વેપારનાં પ્રાણ પ્રશ્નોનાં તળપદા અભ્યાસે મિલમાલિક મંડળના પ્રમુખ તરીકેની કામગીરીને વધુ દીપાવી.

૧૯૪૮ થી હિંદી વેપારી મહામંડળના તેઓ સભ્ય છે અને ૧૯૫૪-૫૫ અને ૧૯૫૫-૫૬નાં વર્ષ માટેના દેશના આ સૌથી મોટા વેપારી મહામંડળના તેઓ અનુક્રમે ઉપપ્રમુખ અને પ્રમુખ હતા આજે તો ગુજરાત-સૌરાષ્ટ્રને ખૂબજ ઉપયોગી નિવડેલી તેમની અસાધારણ શક્તિઓને દેશવ્યાપી ક્ષેત્ર મળ્યું છે.

૧૯૩૮-૩૯માં ઇન્ટરનેશનલ લેબર ઓર્ગેનિઝેશન (I. L. O.)માં ભાગ લેવા ગયેલ ભારતીય પ્રતિનિધિ મંડળના તેઓ સરકાર તરફથી નિયુક્ત થયેલ સલાહકાર હતા. ૧૯૪૬ માં અને ૧૯૪૮માં બુરોદેસ અને જીનીવા મુકામે ભરાયેલ I. L. O. માં તેઓએ માલિકોના પ્રતિનિધિ તરીકે અગત્યનો ભાગ લીધો હતો.

સામાન્ય નિયમ છે કે શ્રી અને સરસ્વતીને બહુ સંબંધ હોતો નથી. શ્રી શાંતિલાલ અને તેમનું કુટુંબ આમાં અપવાદરૂપ છે. ધનપતિ હોવા છતાં એ સાહિત્ય અને સંસ્કારિતાના પૂજક છે. એમની વિનમ્રતા અને સાદાઈ હબુએ

એ જાળવી રહ્યા છે. અનેક શિક્ષણ સંસ્થાઓ માટે આજે પણ એ પોતાની અનેકવિધ પ્રવૃત્તિઓમાંથી સમય બચાવી લે છે, એજ તેમનાં વિદ્યાપ્રેમનો સચોટ પુરાવો છે. ઉદ્યોગ તો તેમને વારસામાં જ મળ્યો છે અને એ વારસાને તેમણે શોભાવ્યો છે.

એમની દૃષ્ટિ આજનાં પ્રશ્નોને વૈજ્ઞાનિક રીતે છણવાની તો છે જ પણ આવતી કાલને પણ તેઓ એ જ વૈજ્ઞાનિક અને વ્યવહારિક દૃષ્ટિથી નિહાળતાં હોય છે અને એટલે જ તો એમના સંચાલન તળે ચાલતી ચાર મિલો કાપડ ઉદ્યોગમાં સુદર પ્રતિષ્ઠા જમાવી શકેલ છે. આ ઉપરાંત જુદી જુદી વ્યાપારી પ્રવૃત્તિઓ કરતી ઘણી કંપનીઓમાં તેઓ ડીરેક્ટર તરીકે રહી યોગ્ય માર્ગદર્શન અને દોરવણી આપી રહ્યા છે. સૌરાષ્ટ્ર ક્ષાઇનેન્સીયલ કોર્પોરેશનનાં તેઓ ડીરેક્ટર છે. સૌરાષ્ટ્ર મિલ માલિક મંડળમાં તો તેઓ તેમની સ્થાપના થઈ ત્યારથી ઉંઠા રસ દાખવે છે. હજુ હમણાં સુધી સતત પાંચ પાંચ વર્ષ સુધી તેનાં પ્રમુખપદે રહી તેમણે સૌરાષ્ટ્રનાં આ ઉદ્યોગની કરેલી સેવાઓ ખરેખર અસિનંદનને યોગ્ય છે. જૈન શાસ્ત્રોદ્ધાર સમિતિનાં તેઓ પ્રમુખ છે અને તેની પ્રવૃત્તિમાં ઘણા ઉત્સાહથી હંમેશાં મદદ કરી રહ્યા છે. આ ઉપરાંત અનેક જૈન ને જૈનેતર સામાજિક સંસ્થાઓને તેઓ સેવાઓ આપી રહ્યા છે.



## આદ્ય મુરબીશ્રી ભાણુવડનિવાસી શેઠ હરખચંદ કાલીદાસ વારીયાનું જીવનચરિત્ર

આ સંસ્થાને રૂ. ૬૦૦૦) છ હજાર જેવી રકમનું વાતવાતમાં દાન આપનાર સ્વં શ્રીમાન્ હરખચંદ કાલીદાસ વારીયા ભાણુવડનિવાસીનું ટુંક જીવનચરિત્ર અત્રે આપવા પ્રયાસ કરીએ છીએ. સૂત્રમાં તેઓશ્રીનો ફેટો આપવા માટે તેઓશ્રીની હયાતીમાં વાત થયેલ, પરંતુ તેઓ આ જાતની જાહેરાતથી વિરુદ્ધ હતા. તેમના અવસાન બાદ તેમના સુપુત્રો આગળ પણ ફેટાની માગણી કરી પરંતુ તેઓએ પણ તેમના પૂં પિતાજીના પગલે ચાલી ફેટો આપવામાં નારાજ બતાવી. એટલે તેઓશ્રીનું ટુંક જીવન આપીએ છીએ. આશા છે કે આવા ઉદાર અને વિચારશીલ મહાનુભાવના જીવનમાંથી વાચકોને ઘણું મળી રહેશે.

જન્મસ્થાન—ઘડેચી ( જોખામંડળ ) તા. ૨૫-૧૧-૧૮૮૫

પિતાનું નામ—વારીયા કાલીદાસ મેઘજીભાઈ

માતાનું નામ—કેસરબાઈ

અભ્યાસ—ભાણુવડ અને પોરબંદરમાં રહી ફક્ત ગુજરાતી જરૂરત પૂરતું ભણ્યા

પરદેશગમન—માત્ર બાર વર્ષની વયે તેમના કાકા નથુભાઈ મેઘજીને ત્યાં જેલા ખાતે અનુભવ મેળવવા રહ્યા દરમિયાન જેલા ( શ્રી. સોમાલીલેન્ડ ) જીબુટી ( ફ્રેન્ચ સોમાલીલેન્ડ ) એડન અને ઇથીઓપીઆ તરફ પણ અનુભવ મેળવ્યો.

પ્રથમ ભાગીદારી—બુલહારમાં શ્રી. કાલીદાસ વેલજીના ભાગમાં ભળ્યા પરંતુ સંવત ૧૯૬૭માં તે દુકાન વીટી લીધી અને લગ્ન માટે સ્વદેશ આવ્યા.

લગ્ન—સંવત ૧૯૬૭ માં તેમનાં લગ્ન બાબુના ગામ ગુંદા મુકામે ખૂબ જ પ્રતિષ્ઠિત કુટુંબ મહેતા સુંદરજી પ્રેમજીના જ્યેષ્ઠ પુત્ર ભોવાન સુંદરજીનાં સુપુત્રી મણીબેન સાથે થયાં.

પરિવાર—અત્યારે તેમના પાંચે પુત્રો શ્રી લાલચંદભાઈ, જયચંદ્રભાઈ, નગિન-દાસભાઈ, વૃજલાલભાઈ અને વલ્લભદાસભાઈ એ પાંચે ભાઈઓ તેઓશ્રીનો બહોળો વ્યવહાર અને વ્યાપાર બરાબર સુયોગ્ય રીતે સંભાળી રહ્યા છે.



ભાગીદારી—લગ્ન પછી સં. ૧૯૬૮ માં પાછા પરદેશગમન થયું. શરૂમાં વસનજી નથુભાઈ કુ. ના નામથી પેઢી ચાલતી હતી તેમાં તેઓ ભાગમાં લગ્યા. તેમાં શ્રી વારીયા નથુભાઈ મેઘજી, શ્રી વારીયા નથુભાઈ મુળજી, શ્રી વારીયા હરખચંદ કાલીદાસ, દેશ્વરીયા દેવજી જીવાભાઈ તથા શા. વસનજી હીરજીભાઈ એમ પાંચ ભાગીદાર હતા. તે પેઢી સંવત ૧૯૭૨ માં જુદી થઈ અને શ્રી વસનજી હીરજી કે જે સ્વખર્ચે આગળ વધ્યા હતા તેમણે પોતાની પેઢી શા. વસનજી હીરજીના નામથી જુદી કરી અને શા. નથુભાઈ મુળજીના નામથી પેઢી ખોલવામાં વારીયા નથુભાઈ મુળજી જેટલો જ હિસ્સો હરખચંદભાઈનો હતો.

ઉપરની પેઢી—ઉપરોક્ત નામથી એટલે કે શા. નથુભાઈ મુળજીના નામથી જે પેઢી શરૂ થઈ તેના પ્રાણસમા શ્રીયુત હરખચંદભાઈ તેમના જીવનના અંત સુધી રહ્યા હતા. અત્યારે પણ તે નામને શ્રી નથુભાઈ મુળજી તેમજ શ્રી હરખચંદ કાલીદાસના વારસો ગળાહળાવી રહ્યા છે. દૂર દૂરના દેશાવરોમાં એકઠાઈ લગભગ ૪૫ વર્ષ થયાં કામકાજ ચાલે છે. તેના સંચાલનની દોર શ્રી હરખચંદભાઈના હાથમાં અંત સુધી રહી હતી અને તેઓશ્રીના અવસાન પછી પણ તેમના દોરેલા ચીલા ઉપર પેઢીનો વ્યવહાર સરળ રીતે અત્યારે પણ ચાલે છે. અત્યારના સુકાનીઓએ પોતાના પૂર્વજ શ્રી નથુભાઈ તથા શ્રી હરખચંદભાઈના અંકિત કરેલ માર્ગે પોતાની સફર ચાલુ રાખી છે અને તે સદાયે અવિચળ રહે તેવું આશિર્વાચન કોઈ પણ હિન્દી ઉચાર્યા વિના રહી શકે નહીં તેવી તેની ઉત્તમ છાપ ત્યાં પડી છે અને તે નરું સત્ય જ છે.

હિન્દની શાન—વર્ષો થયાં એકઠાઈ ‘ બીઝનેસ ’ ચાલતું હોવા છતાં એક શાહ સોદાગરની જેમ નથુભાઈ મુળજીની પેઢી ઉત્તરોત્તર કુલતી ફાલતી રહી છે વ્યાપારી આંટ અને ઇજ્જતનો એ નાદર નમુનો આજે પણ એ જ ધીર ગંભીરપણે પોતાનું કાર્ય ધપાવે જાય છે. એકધારી લગભગ અડધી સદી થયાં ચાલતી આ પેઢીને રજ માત્ર ડાઘ લાગ્યો નથી તે તો સૌ કોઈ જાણે છે અને શાહ નથુભાઈ મુળજીની પુરાણી પેઢી માટે આજે પ્રત્યેક હિન્દી અભિમાન લઈ શકે છે. તેમાં શ્રી નથુભાઈ વારીયાનું ધર્મપ્રધાનપણું અને શ્રી. હરખચંદભાઈનું દુરંદેશીપણું, કાર્યપ્રણાલીની ઉત્તમતા અને એક-નિષ્ઠા મુખ્ય ગણાય.

વાંચન અને મનન—ઉપરની વાતો તો તેમના વ્યાપારી જીવનની સંક-  
 જતા અને એક નાનામાં નાની વ્યક્તિ આગળ કઈ રીતે વધી શકે છે  
 તેનો આછો ખ્યાલ આપવા પૂરતી થઈ, ત્યારે તેની ખીજ એક ખાસ  
 બાબુ છે અતિ સામાન્ય અભ્યાસ પરંતુ સ્વાનુભવે મેળવેલ જ્ઞાનસિદ્ધિ. જે  
 કાળમાં અણખેડાયેલા દેશોમાં આવવા જવાનાં સાધનો પણ ન હતાં,  
 એકાદ સુધીની મુસાફરી પછી જેલા ખરખરા જવામાં નાના વહાણોથી  
 સફર થતી, જીપુટીથી ઇથોપિયા જવામાં દીરદવા પછી (બગલ) ખચ્ચરો  
 ઉપર અને પગપાળા મુસાફરી થતી. દેશો બધા ખુબ જ જંગલી  
 અવસ્થામાં હતા તેવા યુગમાં હિસ્મત હાર્યા વિના આંગળીને વેઢ  
 ગણાય તેટલા હિન્દીઓ વ્યાપારમાં આગળ વધ્યા હતા તે યુગમાં શ્રી  
 હરખચંદલાઈ હતા. ખુબ જ અંધકારમાંથી પ્રકાશ મેળવવાનો હતો.  
 અત્યારે ઇથોપિયાના પાટનગર આડીસ અબાબા જવા માટે Air રસ્તે  
 ૧૦ થી ૧૨ કલાકમાં પહોંચાય છે ત્યારે તે જમાનામાં આગબોટ,  
 વહાણ ખડખડપાંચમ જેવી રેલ્વે અને તે પછી ખચ્ચરો ઉપર અને  
 થોડુંક પગપાળા અગર તો ગધેડા ઉપર પણ સફર કરવી પડતી. જુનો  
 જમાનો હતો એટલે હિન્દુ તરિકેનો ધર્મ જાળવવામાં પણ લોકો  
 ચુસ્ત હતા, કોઈનું અડેલું ખવાય નહીં રસોઈ તૈયાર હોય પણ એક  
 સોમાલી કે આરબ અગર ઇથોપિયનનો હાથ અડકી જાય  
 એટલે ખાવાનું તેને આપી દઈ કડાકા કરવા પડે અગર તો પલાળેલા  
 ચણા કે મકાઈ ખાઈને ગુજરો કરવો પડે તેવા જમાનામાં શ્રી હર-  
 ખચંદલાઈએ ખુબ જ ધંધાકિય સફળતા મેળવી હતી તે સામાન્ય  
 વાત તો નથી જ, અને પોતે ખુબ જ ઓછું ભણ્યા હોવા છતાં ભણ-  
 તર કરતાં ગણતર તેઓમાં ઘણું હતું. સાહિત્ય અને તે પણ ધાર્મિક  
 અને ગુજરાતી શિષ્ટ સાહિત્યનું વાંચન મનન એટલું બધું તેઓએ  
 કરેલું કે પોતાનો અભ્યાસ બહુ જ ઓછો છે એમ તેઓ ખુલાસો કરે  
 ત્યારે જ ખમર પડે, અજાણ્યા માણસને તો તેમનું અંગ્રેજી જ્ઞાન પણ સાં-  
 હશે તેમ લાગતું. વ્યાપારી તાર લખવા ઓછા શબ્દોમાં ઘણું સમજાવી  
 દેવું ઉપરાંત અંગ્રેજી પત્ર વ્યવહારના બહારથી આવતા પત્રો આંટીધુટી  
 સહિત હોય તો પણ ચથેચ્છ રીતે સમજી લેવામાં તેઓ એટલા બધા  
 પારંગત થઈ ગયેલા કે જોનારને તેમની શક્તિ ઉપર માન થઈ જતું. અને  
 તેઓ નિખાલસ ભાવથી જ્યારે કહેતા કે હું તો માત્ર ગુજરાતી ચાર પાંચ  
 ચોપડી ભણ્યો છું એમ વાત થતી ત્યારે તે માન અનેકગણ વધી જતું.

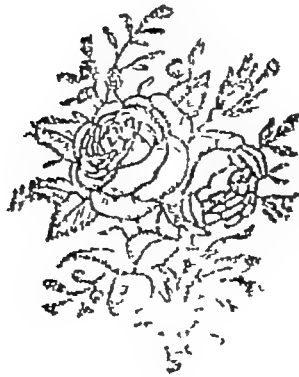
**અભ્યાસી**—ધાર્મિક ઉંડામાં ઉંડું જ્ઞાન તેમણે વાંચનથી મેળવેલું. દેશ પરદેશની વાતો થતી હોય ત્યારે તેમના આગળ પ્રખર અભ્યાસીઓ પણ ઝાંખા પડતા, વર્તમાન પત્રોનો શોખ તેમનો અજોડ હતો. દેશ પરદેશના નાણાક્રિય વહેવારો અને હુંડિયામણની વાતો સાંભળીએ ત્યારે તેમના જ્ઞાનના અગાધપણની સાંભળનારને અતિ ઉત્તમ છાપ પડતી.

**ધાર્મિક**—ધાર્મિક અભ્યાસ તેમનો એટલો બધો બહોળો હતો કે તેમના આગળથી રોજ અવનવું બાણવા મળતું દરેક ધર્મનો અભ્યાસ તેમણે જ્ઞાસાવૃત્તિથી કર્યો હતો. ધર્મે તેઓ ચુસ્ત સ્થાનકવાસી શ્વેતાંબરી જૈન હતા છતાં ધર્મોધતાનો તેમનામાં અંશ પણ ન હતો. માફ એટલું સાફ એમ નહીં પણ સાફ એટલું માફ એમ માનતા તેથી કદાબ્રહ્મ-પાણું તેમનામાં જનમ્યું જ ન હતું. જૈન ધર્મના દરેક પ્રીરકા ઉપર તેમને માન હતું. શ્વેતાંબર મંદિરમાર્ગે ભાઈઓના વરઘોડાઓમાં તેઓ આનંદ અને ઉત્સાહથી જતા, પ્રસંગ આવે ભાઈચારો નભાવવા વ્યવહારપણાનો ઉપયોગ કરી દેરાસરમાં ઘી બોલવાનો પ્રસંગ આવે ત્યારે પણ તેઓ ઉત્સાહથી બોલતા. વરઘોડામાં પોતાના ઘરની પુત્રવધુઓને કળશ લેવડાવતાં તેમને અનેરો આનંદ મળતો, જૈન ધર્મના દરેક પ્રીરકાઓની એકતાના તેઓ પ્રખર આહુક હતા છેલ્લે છેલ્લે સૌરાષ્ટ્રમાં જૈન શ્વેતાંબર તેરાપંથી સાધુઓ આવતા અને એમને સૌરાષ્ટ્રના જૈનો અને જૈન સાધુઓ તેરાપંથી સાધુને સ્થાન અને આહારપાણી ન આપવાં તેવો પ્રયાસ જોર શોરથી કરતા તે બાબતને પોતે ગાંડપણ માનતા અને પોતાના ઘેર તેરાપંથી સાધુઓને માનથી ગોચરી આપતા સમાજથી જરા પણ ડરતા નહીં. ‘વિચારભેદ તો દરેક જગ્યાએ બુદ્ધિવાદી લોકોમાં હોય મુખર્ષિને વિચારભેદ શાનો?’ આમ તેઓ કહેતા પરંતુ એવા વિચારભેદોને લઈને સાધુનું અને તે પણ પરદેશી સાધુઓનું અપમાન કરવું તેમાં માનવતા ક્યાં રહી? જૈનત્વ ક્યાં રહ્યું? તેમ તેઓએ જામનગરમાં એક વખત કહેલું તે મને બરાબર યાદ છે.

**પ્રેમાળ**—અસત્ય અગર તો જુઠું દગો આચરનાર તરફ તેમને ઘણો જ રોષ હતો એટલે ઉગ્રતાથી આવા લોકોની ખબર લઈ નાખતા છતાં તેનું દિલ દુભાવ્યું તે ઠીક ન કર્યું તેમ માની તે જ વ્યક્તિ સાથે પ્રેમ અને મમત્વથી વાતો કરતા બીજાનું સાફ જોઈ તેઓ ખરેખર રાચતા તેમની આંખમાં પ્રેમનું અમૃત ભારે.

ભારે ભર્યું હતું. પોતાને ત્યાં નોકરી કરી ગએલા મુનિમ કે કોઈ પણ વ્યક્તિ કમાણી કરીને ખુબ જ આગળ આવે, સારા અને સંસ્કારી થાય વ્યવહારમાં સવાયા થાય તેને ત્યાં લગ્ન પ્રસંગ હોય અગર તો સારામાં સારાં મકાનો તેણે કર્યાં હોય તેવા પ્રસંગે જવાનું થાય ત્યારે તેમના આનંદનો અવધી થઈ જતો. તે વખતે તેઓની આંખોનું અમૃત જેમણે નજરોનજર જોયું હશે તે તેમને જીવનભર નહીં ભૂલે. આવી એક મહાન્ વિભૂતિના જીવનનો ટુંક સાર જ આપી શકાય. સાંગોપાંગ જીવન તો ક્યાંથી લખાય ?

**કાળ—**જનમ્યું તે જવાનું જ તે કુદરતનો ક્રમ છે તેને આધીન તો સારા નરસા દરેકને થવું જ પડે. સંવત ૨૦૦૭માં તેઓશ્રી ૬૮ વર્ષનું આયુષ્ય ભોગવી ક્ષણભંગુર દેહને છોડી ગયેલા. પરંતુ તેમની સુવાસ સદાય પ્રસરતી જ રહેવાની. ભાણવડ જેવડા નાનકડા ગામમાં અને આસપાસના ગામોમાં જ્યાં જ્યાં તેઓ ગએલા અગર તો તેમનું કાર્યક્ષેત્ર હતું ત્યાં ત્યાં તેમના અવસાનથી સન્નાટો છાઈ ગયેલો. એમનું મૃત્યુ વીશ વર્ષના કંધોતરનો શોક હોય તેવો શોક સર્વત્ર આપતો ગયેલું. નામ ઠામના લોભ વિના કરેલાં તેમનાં ગુપ્ત દાનો એટલાં બધાં હતાં કે તેમના જવાથી નાના મોટા દરેકને એકસરખી ખોટ લાગતી હતી. છતાં તેઓ જીવતર જીવી ગયા, આવું ધન્ય જીવન અને ધન્ય મૃત્યુ જોઈને આર્તધ્યાન રૌદ્રધ્યાન ધરવું તે કરતાં તેમના જેવા થવાના પ્રયત્નો કરવા. અને તેમના અમર આત્માની શાન્તિ માટે પ્રાર્થના કર્યા સિવાય બીજો માર્ગ જ ક્યાં છે ? ૐ શાન્તિ ! શાન્તિ ! ! શાન્તિ ! ! !



## આચ સુરજીશ્રી કોઠારી હરગોવીંદલાઇ જેચંદનો કુંક પરિચય

\*

પુ૦ શ્રી ૧૦૦૮ ઘાસીલાલજી મહારાજ રાજકોટ પધારતાં પ્રાતઃસ્મરણીય સ્તવનાવલી રાજકોટના રહીશ શુદ્ધ શ્રાવક વૃત્તધારી જેચંદ અજરામર કોઠારીના સુપુત્ર હરગોવિંદ કાકા તરફથી ૨૦૦૩ માં છપાવવામાં આવી અને તે હિંદલરમાં જાહેર મૂકી તેનો ઉપયોગ હાલ સર્વ જૈન જૈનેતર કરી રહેલ છે. કાકા રાજકોટમાં જ નહિ પણ સૌરાષ્ટ્ર, કચ્છ, ગુજરાત, મુંબઈ, દિલ્હી સુધી એક અનોડ ઉત્સાહી પુરૂષ છે. એમનો પ્રજા અને રાજ ઉપર ઘણો જ સારો પ્રભાવ છે. વેસ્ટર્ન ઈન્ડીયા સ્ટેટ એજન્સી અને ગુજરાત સ્ટેટસ મહીકાંઠા, સાબરકાંઠા બનાસકાંઠામાં રેસીડેન્સીમાં પણ કાકા પ્રત્યે ઘણો જ સારો ભાવ છે. તેઓને ધર્મ પ્રત્યે ઘણી જ સારી ધગશ હોઈ અંગત ખર્ચ પોતાના ઘર આંગણે ધર્મ ધ્યાન માટે પોષધશાળા બંધાવી છે તેમજ આજી નદીને કિનારે વિશાળ વ્યાખ્યાન ભુવન હોલ બે માળનો પાંચ હજાર માણસો વ્યાખ્યાન સાંભળી શકે તેવો બંધાવેલ છે. ઉદાર દિલના સખી માણસ છે. કોઈ પણ ગરીબ ગુન્ડાહીત માણસ દાદ માગવા આવે તો તરત જ બનતા ઉપાયે તેમને મદદ આપવા ચોવીસ કલાક તૈયાર રહે છે. કાકાનું કુટુંબ પણ ઘણુંજ ધર્મીષ્ઠ છે. તેમનાં ધર્મપત્નિ શ્રીમતી અખંડ સૌભાગ્યવતી રૂક્મણીબેન વહેવારદક્ષ પ્રેમાળુ અને પૂર્ણ ધર્માત્મા છે સાધુ, સાધ્વી પ્રત્યે તથા દરેક કુટુંબ સજ્જન સ્નેહી અને સ્વધર્મીઓ મહેમાનો સાથે ઘણો જ સારો ઉચિત વહેવાર રાખવામાં પૂર્ણ નિષ્પન્ન છે. નિત્ય પોતાની ધર્મ પરાયણતા પ્રત્યે જ વફાદાર રહે છે.

પૂ૦ ઘાસીલાલજી મહારાજ આદી થાણા છ ( સમીરમુનિ, કનૈયાલાલ મુનિ દેવમુનિ, તપસ્વી માંગીલાલ, મદનલાલજી ) મેવાડથી દામનગરના રહીસ દામોદરભાઈના આગ્રહથી પાલનપુર નહીં રોકાતાં તેમણે વિહાર શરૂ કર્યો, અને મોરબી મુકામે તપસ્વી મદનલાલજી અને માંગીલાલજીની ૭૧ ઉપવાસની તપશ્ચર્યા આતુ-માસમાં થયેલી જે પ્રસંગે રાજકોટથી હરગોવિંદકાકા કુટુંબ સહિત ગોકળ અષ્ટમીને દીવસે દર્શનાર્થે આવ્યા અને રાજકોટ પધારવાની વિનંતી કરી. અને નવેમ્બર ૧૯૪૬ માં ઘાસીલાલજી મહારાજ રાજકોટ પધાર્યા. કાકાના વ્યાખ્યાન ભુવનમાં ખીરાળ્યા. બંને તપસ્વીજીએ માસખમણની તપશ્ચર્યા કરી. સ્થાનિક રાજકોટ સકલ સંઘે ઘણોજ ભક્તિભાવ બતાવ્યો. અને રતાગઢ ખેડાના રહીશ જવારલાલજી ઉર્ફે ચાંદમલજી ભંડારીની ૨૦૦૨ તા. ૨૭-૧-૪૭ના રોજ દીક્ષા વસંતપંચમીને

૩૧. પરપુ આપનાર આઘ સુરખીશ્રી,



કોઠારી હરગોવિંદભાઈ જેચંદ  
રાજકોટ.



દીવસે હોવાથી સંઘમાં વધારે ઉત્સાહ આનંદ આવ્યો. મહાસુદિ એકમથી પાંચમ સુધી ૬ વરઘોડાઓ જુદે જુદે ઠેકાણેથી ચડ્યા. મહા સુદી ૪ ના દિવસે કાકાને ઘેરથી દીક્ષા ઉત્સવનો વરઘોડો રાજકોટ ઠાકોર સાહેબ પ્રધુમનસિંહજી અને કુ. શ્રી બનેસિંહજીની સંપૂર્ણ મદદથી રાજેશ્રીના ઠાઠને પણ વટાવી જાય તે રીતે સરકારી અને સ્ટેટ બેન્ક પોલીસ ઘોડેસ્વાર ગાડીઘોડા મોટરો તથા હજારો જૈન જૈનેતર માનવમેદની સાથે આખા શહેર સદરના રસ્તા પર ફર્યો હતો. પાંચમના દિવસે તપગચ્છના ચાંદીના રથમાં દીક્ષાર્થીને બેસાડી ૪ ચાર બેલ જોડેલ રથને કાકા પોતે સારથી બની હાંકતા હતા. બંને દીવસે સોના રૂપાનાં કુલ તથા પૈસા દિક્ષીત ઉડાવી રહેલ હતા. ઠેકાણે ઠેકાણે પોલીસો ગોઠવવામાં આવી હતી. આ સરઘસ શહેર સદરમાં ફરી જુબીલી બાગમાં આવ્યું અને દસ હજાર માણુ-સોની હાજરીમાં પૂર્વ શ્રી ઘાસીલાલજીની જેનેશ્રાય નીચે દીક્ષા આપવામાં આવી તે પ્રસંગે શાંતિ જળવાયેલી. આ પ્રસંગે બંને દીવસોએ ફેટાઓ તથા જૈન શાસ્ત્રોદ્ધાર સમિતિની કમિટિના ફેટાઓ લેવામાં આવ્યા અને ૩૦-૧-૪૭ના દીવસે શાસ્ત્રોદ્ધારની મિટીંગ મળી જેમાં કાકા તરફથી સૂત્રને માટે રૂપીઆ પાંચ હજારની લેટ મળી તે ઉપરાંત પ્રસંગોપાત સૂત્ર માટે જુદી લેટ રોકડી રકમની આપવામાં આવી છે તેમજ જીવહયાના પ્રખર હિમાયતી પૂર્વ ૧૦૦૮ જેઠમલજી મં. ની નેશ્રાય નીચે તન મન ધનથી જીવહયાનું કાર્ય કરે છે અને જીવહયાનું પત્ર પોતાને ખર્ચે છપાવી પ્રસિદ્ધ કરી હિંદલરમાં તેમજ યુરોપ અમેરીકા આફ્રીકામાં મોકલે છે હાલ પોતે સેવાલાવી કાર્યની પ્રવૃત્તિ કાયમ કર્યા કરે છે.

રાજકોટની ફ્લોર મીલોના ઓનરરી પ્રમુખ : જૈન બોર્ડીંગના ઓનરરી કાર્યકર્તા તથા જીવહયા મંડળના મંત્રી અને S. P. C. A. ના મંત્રી, રાજકોટ શહેરી મંડળના સેક્રેટરી તરીકે ઓનરરી સેવા કરી દરેકને પોતાની સેવાનો સાથ આપવામાં તન મન ધનથી કોઈની પણ સેવા કરવામાં કાયમ તત્પર રહે છે.



## આધ મુરબીશ્રી મહુમ ધારશીલાઇ જીવનલાઇનો કુક પરિચય

મરહુમ ધારશીલાઇ જીવનલાઇ શાહ, જેનો ઓઇલ જીનપ્રેસ સાથે આ સૈકાની શરૂઆતથી સંબંધ, પુના સાતે ડીવીઝનના જુદા જુદા સ્થળોના જુનામાં જુના અને અગ્રગણ્ય એજન્ટ તરીકે જાણીતા છે. તેનો જન્મ કાઠીયાવાડમાં પીપળીયા ગામમાં થયેલ, માત્ર પ્રાથમિક કેળવણી લઈ, ૧૧ વર્ષની નાની ઉંમરે આગળ વધવાની ધગશ સાથે, માત્ર ખીસ્સામાં ૨ રૂ. જેટલી નજીવી રકમ સાથે વતન છોડ્યું મુંબઈ આવી મનજી નથુલાઈની પેઢીમાં ઓપ્રીસ જોય તરીકે નોકરી લીધી, ત્યાં ઉત્તરોત્તર દરેક કામમાં ખંત રાખી સંતોષ આપતાં તેમને પુના મોકલવામાં આવ્યા. પુનાથી કરમાલા આવી ખલા ઉપર તેલ ઉપાડી ફેરી પણ કરી અને ત્યાંના સળ એજન્ટોને એકદમ પ્રમાણીકપણે સખત કામ બતાવી, કરમાલા ગામમાં તેલની સળડીલર-શીપ પ્રાપ્ત કરી ધીરે ધીરે તે જ પ્રમાણે મહેનત ચાલુ રાખતાં ૧૯૩૧માં જ્યારે બર્મશિલ અને એસ. વી. ઓ. સી. વચ્ચે ભાવની હરીફાઈ ઉપડી ત્યારે પોતાની સતત સેવા બતાવી બર્મશિલ પાસેથી ઘડીયાલ બક્ષીસ મેળવી અને તે લાઇનના તમામ કાર્યવાહકોની ચાહના પ્રાપ્ત કરી.

ધીરે ધીરે પોતાની ખંતથી તેવી જ એજન્સીઓ લીમ્ટન કું., સીમેન્ટ કું., આઈ. સી. આઈ. વીગેરેની પણ મેળવી પોતાના વ્યાપારની સારી જમાવટ કરી.

સોલાપુર ડીસ્ટ્રીક્ટમાં સારા આબરૂદાર શહેરી તરીકે વગ તેમજ ચાહના મેળવી અને લોકસેવા પણ સાથોસાથ ચાલુ રાખી કરમાલા મ્યુઝના પ્રેસીડન્ટ થયા સોલાપુર ડીસ્ટ્રીક્ટમાં દેશહિતના અનેક કામોમાં તન, મન, ધનથી સારી સેવા બજાવી.

તેનું જ્ઞાનગી જીવન પણ બહુ સાદું હોવાથી બધા તેને ચાહતા અને ધંધામાં સારો લાભ મળ્યો અને તે જ પ્રમાણે સેવાના તથા ધર્મદાના અનેક કાર્યોમાં સારી રકમો વાપરી.

પોતાના કુટુંબના વડા તરીકે પણ કુટુંબીજનો, સગાં, સંબંધીઓને દરેક રીતે માર્ગદર્શન આપી જુદા જુદા ધંધા તેમજ એજન્સીઓ વિગેરે મેળવી સ્થિરતા પ્રાપ્ત કરવામાં ઘણો પરિશ્રમ લીધો.

યાંત્રિક ખેતીની પ્રગતીના કાર્યસર વિલાયત જઈ આવ્યા, અમેરીકા જવા પણ ધારણા હતી. ત્યાં લંડનમાં ૧૪-૭-૪૯ના રોજ હૃદયબંધ પડી જતાં સ્વર્ગવાસ કર્યો. તેમની પાછળ બહોળું કુટુંબ, ઘણાં સગાં તેમજ સ્નેહીઓ મૂકી ગયેલ છે. જેઓ સર્વને પોતાની મીઠી યાદગીરી મુકી જીવનનું સાર્થક કરી ગયેલ છે.

શ્રી. ૫૦૦૧૭ આપનાર આદિ સુરજીશ્રી,



(સ્વ.) શેઠ ધારસીભાઈ જીવણભાઈ  
સોલાપુર.



# ॥ आचाराङ्गसूत्रके २, ३, ४ अध्ययनों की विषयानुक्रमणिका ॥

( द्वितीय अध्ययन-प्रथम उद्देश )

विषय	पृष्ठाङ्क
१ प्रथमाध्ययन के साथ द्वितीय अध्ययनका सम्बन्धकथन, द्वितीय अध्ययन के छहों उद्देशों के विषयों का संक्षिप्त वर्णन ।	१-३
२ द्वितीय अध्ययन के प्रथम सूत्रका अवतरण और प्रथम सूत्र ।	४-५
३ शब्दादि कामगुण ही मूलस्थान अर्थात् मोहनीयादि के आश्रय हैं, उन शब्दादि-कामगुणों से युक्त प्राणी परितापयुक्त बना रहता है, और उसकी उस परिस्थितिमें जो भावना रहती है उसका वर्णन ।	६-२८
४ द्वितीय सूत्रका अवतरण और द्वितीय सूत्र ।	२९
५ शब्दादिकामगुणमोहित प्राणी वृद्धावस्थामें मूढताको प्राप्त करता है - इसका वर्णन ।	३०-५६
६ तृतीय सूत्रका अवतरण और तृतीय सूत्र ।	५७
७ वृद्धावस्था में उस मनुष्य की जो दशा होती है - उसका वर्णन ।	५८-७२
८ चतुर्थ सूत्रका अवतरण और चतुर्थ सूत्र ।	७२-७३
९ मनुष्य की वृद्धावस्थामें जो दुर्दशा होती है उसे विचार कर संयम-पालन में मुहूर्तमात्र भी प्रमाद न करे ।	७४-८६
१० पञ्चम सूत्रका अवतरण और पञ्चम सूत्र ।	८७
११ प्रमादी पुरुषों के कार्य का वर्णन ।	८८-९५
१२ छठे सूत्रका अवतरण और छठा सूत्र ।	९६
१३ माता पिता या पुत्र कोई भी इहलोक-सम्बन्धी और परलोक-सम्बन्धी दुःखों से बचाने में समर्थ नहीं हैं ।	९६-९७
१४ सप्तम सूत्रका अवतरण और सप्तम सूत्र ।	९८
१५ असंयत पुरुष उपभोगके लिये धनसंग्रह करता है और उपभोग के समय उसे कासश्वासादि रोग हो जाते हैं, उस समय उसके माता पिता और पुत्र कोई भी रक्षक नहीं होते हैं ।	९९-१००

## विषय

पृष्ठाङ्क

- १६ आठवें सूत्रका अवतरण और आठवां सूत्र। १००
- १७ वृद्धावस्थामें कोई रक्षक नहीं होता और बाल्यावस्था भी पराधीन होने के कारण दुःखमय ही है—ऐसा विचार कर युवावस्था को ही संयमपालन का योग्य अवसर समझना चाहिये। १०१-१२२
- १८ नवम सूत्रका अवतरण और नवम सूत्र। १२२
- १९ बार्द्धक्य और रोगों से जब तक श्रोत्रादि इन्द्रियों के परिज्ञान नष्ट नहीं हुए हैं, तभी तक चारित्र्यानुष्ठानमें प्रवृत्त हो जाना चाहिये। १२३-१२७

॥ इति प्रथमोद्देशः ॥

\*

॥ अथ द्वितीयोद्देशः ॥

- १ प्रथम उद्देश के साथ द्वितीय उद्देश का सम्बन्धप्रतिपादन। १२८
- २ प्रथम सूत्रका अवतरण और प्रथम सूत्र। १२९-१३०
- ३ संसारकी असारता को जाननेवाला मुनि संयमविषयक अरतिको दूर कर क्षणमात्रमें मुक्त हो जाता है। १३१-१३७
- ४ द्वितीय सूत्रका अवतरण और द्वितीय सूत्र। १३८
- ५ जिनाज्ञा से बहिर्भूत साधु मुक्तिभागी नहीं होता। १३९-१४४
- ६ तृतीय सूत्रका अवतरण और तृतीय सूत्र। १४५
- ७ 'अनगार' कौन कहलाते हैं। १४६-१४८
- ८ चतुर्थ सूत्रका अवतरण और चतुर्थ सूत्र। १४८
- ९ विषयासक्तिवश परितप्त होकर धन की स्पृहासे दण्डसमारम्भ करनेवाला मनुष्य का वर्णन। १४५-१४९
- १० पञ्चम सूत्रका अवतरण और पञ्चम सूत्र। १४९
- ११ संयमी को दण्ड समारम्भ नहीं करना चाहिये। उद्देश समाप्ति। १६०-१६२

॥ इति द्वितीयोद्देशः ॥

\*

## ॥ अथ तृतीयोद्देशः ॥

विषय	पृष्ठाङ्क
१ द्वितीय उद्देश के साथ तृतीय उद्देश का सम्बन्धप्रतिपादन ।	१६३
२ प्रथम सूत्रका अवतरण और प्रथम सूत्र ।	१६४
३ पण्डित को उच्च कुलकी प्राप्ति से हर्ष नहीं करना चाहिये; और न नीच कुलकी प्राप्तिसे क्रोध ही करना चाहिये ।	१६५-१७०
४ द्वितीय सूत्रका अवतरण और द्वितीय सूत्र ।	१७१
५ किसी भी प्राणीका अहित नहीं करना चाहिये । प्राणियों के अहित करनेवालों की दुरवस्था का वर्णन ।	१७२-१८६
६ तृतीय सूत्रका अवतरण और तृतीय सूत्र ।	१८६
७ उच्चकुलाभिमानी मनुष्य प्राणियों का अहित करके जन्मान्तर में कोई अन्धता आदि फल पाकर सकलजननिन्दित होता हुआ, और कोई खेत-घर-धनधान्य-स्त्री आदि परिग्रहमें आसक्त हो तप आदिकी निन्दा करता हुआ विपरीत बुद्धिवाला हो जाता है ।	१८७-१९४
८ चतुर्थ सूत्रका अवतरण और चतुर्थ सूत्र ।	१९४
९ संयमियों के कर्त्तव्य का निरूपण ।	१९५-२०६
१० पञ्चम सूत्रका अवतरण और पञ्चम सूत्र ।	२०७
११ असंयमियों के जीवन स्वरूपका वर्णन ।	२०७-२१४
१२ छठे सूत्रका अवतरण और छठा सूत्र ।	२१४-२१५
१३ असंयमीका अन्यायोपार्जित धन नष्ट हो जाता है, और कुटुम्ब की चिन्ता से व्याकुल वह असंयमी कार्याकार्य को नहीं जानता हुआ विपरीतबुद्धियुक्त हो जाता है ।	२१५-२२१
१४ सातवें सूत्रका अवतरण और सातवाँ सूत्र ।	२२१
१५ 'सुखको चाहनेवाला मूढमति असंयमी मनुष्य दुःखही भोगता है' इस बातको भगवान् महावीर स्वामीने स्वयं प्ररूपित किया है—इस प्रकार सुधर्मा स्वामी का कथन ।	२२२-२२६
१६ आठवें सूत्रका अवतरण और आठवाँ सूत्र ।	२२७

विषय

पृष्ठाङ्क

१७ पश्यक-तीर्थकर गणधर आदि नरकादि गतिके भागी नहीं होते हैं, बाल-अज्ञानी जीव तो नरक आदि गति के भागी ही निरन्तर होते रहते हैं—इसका प्रतिपादन और उद्देश-समाप्ति । २२७-२३५

॥ इति तृतीयोद्देशः ॥

\*

॥ अथ चतुर्थोद्देशः ॥

- १ तृतीय उद्देश के साथ चतुर्थ उद्देशका सम्बन्धप्रतिपादन । २३६
- २ प्रथम सूत्रका अवतरण और प्रथम सूत्र । २३७-२३८
- ३ वृद्धावस्था में ही श्वासकासादि रोग होते हैं, ऐसी बात नहीं ! ये तो युवावस्था में भी होते हैं । उस रोगावस्था में उस प्राणी का रक्षक कोई सगा-सम्बन्धी नहीं होता है, और न वही प्राणी उस रोगावस्था से आक्रान्त अपने सगे-सम्बन्धीका रक्षक हो सकता है । २३८-२४०
- ४ द्वितीय सूत्रका अवतरण और द्वितीय सूत्र । २४१
- ५ भोगसाधन धनकी विनाशशीलताका वर्णन । २४१-२४२
- ६ तृतीय सूत्रका अवतरण और तृतीय सूत्र । २४२-२४३
- ७ भोगसाधन धन विनश्वर है; अतः भोगकी स्पृहा और भोगके विचार का भी परित्याग कर देना चाहिये । २४३-२५५
- ८ चौथे सूत्रका अवतरण और चौथा सूत्र । २५६
- ९ 'कामभोग का आसेवन महा भयस्थान है' ऐसा जानकर अन-गार क्या करे ? इसका उपदेश तथा उद्देश-समाप्ति । २५६-२६१

॥ इति चतुर्थोद्देशः ॥

\*

## ॥ अथ पञ्चमोद्देशः ॥

## विषय

## पृष्ठाङ्क

- १ चतुर्थ उद्देशके साथ पञ्चम उद्देशका सम्बन्धप्रतिपादन । २६२-२६४
- २ प्रथम सूत्रका अवतरण और प्रथम सूत्र । २६४
- ३ गृहस्थ कर्मसमारम्भ जिन हेतुओं से करते हैं, उन हेतुओं का प्रतिपादन । २६५-२६८
- ४ द्वितीय सूत्रका अवतरण और द्वितीय सूत्र । २६९
- ५ भविष्य में उपभोग के लिये पदार्थों के संग्रहमें प्रवृत्त गृहस्थों के बीच संयमाराधनमें तत्पर अनगार को किस प्रकार रहना चाहिये । २६९-२७२
- ६ तृतीय सूत्र का अवतरण और तृतीय सूत्र । २७३
- ७ साधुको क्रयण, क्रापण और उसके अनुमोदन से रहित होना चाहिये । २७३-२७५
- ८ चतुर्थ सूत्रका अवतरण और चतुर्थ सूत्र । २७६
- ९ हननकोटित्रिक और क्रयणकोटित्रिकसे रहित साधुका वर्णन । २७६-२८३
- १० पञ्चम सूत्रका अवतरण और पञ्चम सूत्र । २८३
- ११ साधुको एषणीय आहारके सदृश एषणीय वस्त्रपात्रादि भी गृहस्थसे ही याचना चाहिये । २८४
- १२ षष्ठ सूत्रका अवतरण और षष्ठ सूत्र । २८५
- १३ 'मुनिको मात्राज्ञ होना चाहिये' इसका वर्णन । २८५-२९१
- १४ सप्तम सूत्रका अवतरण और सप्तम सूत्र । २९१
- १५ श्रुतचारित्र्यरूप इस मार्गको आर्योंने प्रवेदित किया है । इस मार्ग पर स्थित हो कर जिस प्रकार कर्मसे उपलब्ध न हो वैसा करना चाहिये । २९१-२९२
- १६ अष्टम सूत्रका अवतरण और अष्टम सूत्र । २९२
- १७ हिरण्य-सुवर्णादि तथा शब्दादि काम दुरुल्लब्ध हैं । इन कामों को चाहनेवाले पुरुषकी जो दशा होती है उसका वर्णन । २९३-२९९
- १८ नवम सूत्रका अवतरण और नवम सूत्र । २९९



## विषय

## पृष्ठाङ्क

- १९ ज्ञाननेत्रयुक्त मुनिका वर्णन । २९९-३०७
- २० दशम मूत्रका अवतरण और दशम मूत्र । ३०७
- २१ साधुको कामभोगाशासे युक्त नहीं होना चाहिये; क्यों कि कामभोगाशासे युक्त साधु बहुमायी हो कर लोभ और वैर बढ़ा-नेवाला होता है। वह अपनेको अमर समझता है, इष्ट-विनाश-आदि कारण से वह उच्च स्वर से रुदन करता है। ३०८-३१३
- २२ ग्यारहवां मूत्रका अवतरण और ग्यारहवां मूत्र । ३१३
- २३ बाल-अज्ञानी परतैर्थिक कामभोगस्पृहाकी चिकित्सा कामभोग-सेवनही कहते हैं; इसलिये वे हननादिक क्रियासे युक्त होते हैं। परन्तु अनगार ऐसे नहीं होते हैं। उद्देश-समाप्ति। ३१४-३१८

॥ इति पञ्चमोद्देशः ॥

\*

॥ अथ षष्ठोद्देशः ॥

- १ पञ्चम उद्देशके साथ षष्ठ उद्देशका सम्बन्धप्रतिपादन । ३१९
- २ प्रथम मूत्रका अवतरण और प्रथम मूत्र । ३१९
- ३ षड्जीवनिकाय के उपघातका उपदेश नहीं देनेवाले अनगार कभी भी पापाचरण नहीं करते । ३२०-३२१
- ४ द्वितीय मूत्र का अवतरण और द्वितीय मूत्र । ३२१
- ५ जो छ जीवनिकायों या छ व्रतों में से किसी एक की विराधना करता है वह छहों की विराधना करता है। सुखार्थी वह वाचाल होता है, और अपने दुःखसे मूढ हो वह सुख के बदले दुःख ही पाता है। वह अपने विप्रमादसे अपने व्रतों को विपरीत प्रकार से करता है, अथवा वह अपने संसारको बढ़ाता है, या एकेन्द्रियादिरूप अवस्था को प्राप्त करता है। इसलिये चाहिये कि प्राणियों को जिनसे दुःख हो ऐसे दुःखजनक कर्मों का आचरण नहीं करे। इस प्रकार के कर्मों के अनाचरण से कर्मोपशान्ति होती है। ३२२-३३१

## विषय

## पृष्ठाङ्क

- ६ तृतीय सूत्रका अवतरण और तृतीय सूत्र । ३३२
- ७ ममत्वबुद्धि से रहित हो मनुष्य रत्नत्रययुक्त अनगार होता है । ३३२-३३४
- ८ चतुर्थ सूत्रका अवतरण और चतुर्थ सूत्र । ३३४
- ९ मेधावी मुनि ममत्वबुद्धिको छोड़कर, लोकस्वरूप को जानकर आहारादिमूर्च्छारूप संज्ञा से रहित हो संयमानुष्ठान में पराक्रम करे । ३३४-३३६
- १० पञ्चम सूत्रका अवतरण और पञ्चम सूत्र । ३३६
- ११ कर्मविदारण करनेमें समर्थ, पुत्रकलत्रादिको त्यागनेवाले वीर चारित्र्यविषयक अरति और शब्दादिविषयक रतिको दूर कर देते हैं; क्योंकि वे अनासक्त होते हैं; अत एव वे शब्दादिविषयों में रागयुक्त नहीं होते । ३३७
- १२ छठे सूत्रका अवतरण और छठा सूत्र । ३३८
- १३ मुनि इष्टानिष्ट शब्दादि विषयों में रागद्वेष न करता हुआ असंयमजीवन सम्बन्धी प्रमोदको दूर करे, मौन ग्रहणकर कर्मक्षपण करे । सम्यक्तत्त्वदर्शी वीर मुनि प्रान्त और रूक्ष अन्न सेवन करते हैं । प्रान्त-रूक्ष अन्न सेवन करनेवाले मुनि कर्मका विनाश कर ओघन्तर, तीर्ण और मुक्त होते हैं । ऐसे ही मुनि विरत कहलाते हैं । ३३८-३४३
- १४ सातवें सूत्रका अवतरण और सातवां सूत्र । ३४३
- १५ दुर्वसु मुनि भगवान्की आज्ञाका विराधक हो कर तुच्छता एवं ग्लानिको प्राप्त करता है, और भगवान्की आज्ञाका आराधक सुवसु मुनि तुच्छता एवं ग्लानि को नहीं पाते हैं और तीर्थङ्कर गणधर आदि से प्रशंसित होते हैं । यह सुवसु मुनि लोकसंयोग से रहित हो मुक्तिगामी होते हैं । ३४३-३४७
- १६ आठवें सूत्रका अवतरण और आठवां सूत्र । ३४७
- १७ शारीरिक-मानसिक दुःखजनक कर्मों का जहां जिस प्रकार से बन्ध होता है, मोक्ष होता है, और विपाक होता है । उन सबों

## विषय

## पृष्ठाङ्क

का तीर्थङ्कर गणधर आदिने प्ररूपण किया है। कुशल मुनि बन्ध और मोक्षके उपायों को सर्वदा समझाते हैं। उन बन्ध और मोक्षके उपायों को जान कर भव्य आस्रवद्वारों से दूर रहे। जो मुनि अन्य दर्शनों में श्रद्धान नहीं रखते हैं—जो मुनि अनन्यदर्शी होते हैं—वे अनन्याराम होते हैं और जो अनन्याराम होते हैं वे अनन्यदर्शी होते हैं। कुशल मुनिका उपदेश पुण्यात्मा और तुच्छात्मा दोनों के लिये बराबर होता है। ऐसे मुनिका उपदेश द्रव्य, क्षेत्र, काल और भावके अनुसार ही होता है। ३४८-३५४

१८ नवम सूत्र का अवतरण और नवम सूत्र। ३५५

१९ धर्मोपदेशक श्रोताकी परीक्षा करके धर्मोपदेश करे। ऐसा धर्मोपदेशक ही प्रशंसित होता है। यह मुनि अष्टविधकर्मपाशसे बद्ध जीवों को छुड़ाता है, सभी दिशाओं में सर्वपरिज्ञाचारी होता है और हिंसादि स्थानों से लिप्त नहीं होता है। कर्मों के नाश करने में कुशल, बन्धप्रमोक्षान्वेपी—रत्नत्रय का अन्वेषणशील—वह मुनि न बद्ध है न मुक्त है। ३५६-३६३

२० दशम सूत्रका अवतरण और दशम सूत्र। ३६४

२१ तीर्थङ्कर, सामान्य केवली और रत्नत्रययुक्त साधुओं ने जैसा आचरण किया है वैसा ही आचरण दूसरे साधु करें, तीर्थङ्करादिकोंने जिस आचरणको प्रतिषिद्ध माना है उस आचरण से दूर रहें। ३६४-३६६

२२ ग्यारहवें सूत्र का अवतरण और ग्यारहवां सूत्र। ३६७

२३ पर्यक—तीर्थङ्कर गणधरादिक नरकादिगतिके भागी नहीं होते, बाल-अज्ञानी तो निरन्तर होते रहते हैं। उद्देशसमाप्ति। द्वितीयाध्ययनसमाप्ति। ३६७

२४ द्वितीय अध्ययन की टीकाका उपसंहार। ३६८

॥ इति द्वितीयाध्ययनम् ॥

## ॥ अथ तृतीयाध्ययनम् ॥

### ॥ अथ प्रथमोद्देशः ॥

#### विषय

#### पृष्ठाङ्कः

- १ द्वितीयाध्ययन के साथ तृतीय अध्ययनका सम्बन्धप्रतिपादन, चारों उद्देशों के विषयों का संक्षिप्त वर्णन । ३६९-३७०
- २ प्रथम सूत्रका अवतरण और प्रथम सूत्र । ३७१
- ३ अमुनि सर्वदा सोते रहते हैं, और मुनि सर्वदा जागते रहते हैं । ३७१-३८०
- ४ द्वितीय सूत्रका अवतरण और द्वितीय सूत्र । ३८०
- ५ दुःखजनक प्राणातिपातादि कर्म अहितके लिये होते हैं; इसलिये प्राणातिपातादि कर्मों से विरत रहना चाहिये । ३८०-३८४
- ६ तृतीय सूत्रका अवतरण और तृतीय सूत्र । ३८४
- ७ जो शब्दादि विषयों में रागद्वेषरहित है—ऐसा ही प्राणी आत्मवान्, ज्ञानवान्, व्रतवान्, धर्मवान् और ब्रह्मवान् होता है । ऐसा ही प्राणी षड्जीवनिकायस्वरूप लोकके परिज्ञानसे युक्त होता है । वही मुनि कहलाता है । वही धर्मवित् और ऋजु है, एवं वही आवर्त्त और स्रोतके संबन्धको जानता है । ३८५-३८८
- ८ चतुर्थ सूत्रका अवतरण और चतुर्थ सूत्र । ३८९
- ९ आवर्त्त और स्रोतके सम्बन्धके जाननेवाला मुनि बाह्य और आभ्यन्तर ग्रन्थिसे रहित, अनुकूल और प्रतिकूल परीषहों को सहन करनेवाले, संयम विषयक अरति और शब्दादि विषयक रति की उपेक्षा करनेवाले होते हैं, और वे परीषहों की परुषता को पीडाकारक नहीं समझते हैं । वे सर्वदा श्रुतचारित्र-रूप धर्म में जागरूक रहते हैं, दूसरों का अपकार नहीं करना चाहते हैं । वे वीर अर्थात् कर्मविदारण करने में समर्थ होते हैं । इस प्रकारके मुनि दुःख के कारणभूत कर्मोंसे मुक्त हो जाते हैं । ३८९-३९१
- १० पाँचवें सूत्रका अवतरण और पाँचवाँ सूत्र । ३९२
- ११ जरा और मृत्युके वशमें पडा हुआ मनुष्य सर्वदा मूढ बना रहता है, इसलिये वह श्रुतचारित्र धर्म को नहीं जानता है । ३९२

## विषय

## पृष्ठाङ्क

- १२ छठे सूत्रका अवतरण और छठा सूत्र । ३९२
- १३ आत्मकल्याणार्थी मनुष्य आतुर प्राणियों को देखकर, अप्रमत्त हो, संयमाराधनमें तत्पर रहे—इस प्रकार संयमाराधनमें तत्पर रहनेके लिये शिष्यको आज्ञा देना । ३९३
- १४ सप्तम सूत्र । ३९४
- १५ ' यह संसारपरिभ्रमणरूप दुःख सावधक्रियाके अनुष्ठानसे होता है, ऐसा जानकर आत्मकल्याणके लिये अभ्युद्यत रहो ' इस प्रकार शिष्यके प्रति कथन । मायी और प्रमादी वारंवार नरकादियातना को प्राप्त करता है । जो पुरुष शब्दादि-विषयोंमें रागद्वेषरहित होता है, माया एवं प्रमाद से दूर रहता है, वारंवार मरणजनित दुःखके आने की आशंकासे भयभीत रहता है; वह श्रुतचारित्र्य धर्ममें जागरूक हो मरणसे छूटा जाता है । ३९४-३९५
- १६ अष्टम सूत्र । ३९५
- १७ संसारी जीवोंके दुःखों के जाननेवाले, कामभोगजनित प्रमादोंसे रहित, पाप कर्मों से निवृत्त वीर पुरुष आत्माके उद्धार करनेमें समर्थ होते हैं । ३९६
- १८ नवम सूत्रका अवतरण और नवम सूत्र । ३९६
- १९ जो शब्दादि विषयों में होनेवाला सावध कर्म के ज्ञाता हैं वे निरवद्य क्रियारूप संयम में होनेवाले दुःखोंके सहन की उप-योगिता को भी जाननेवाले हैं, और जो निरवद्यक्रियारूप संयममें दुःखोंके सहन की उपयोगिता को जाननेवाले हैं वे शब्दादिविषयोंमें होनेवाले सावध कर्म के भी ज्ञाता हैं । ३९७-३९९
- २० दशम सूत्रका अवतरण और दशम सूत्र । ३९९
- २१ कर्मरहित मुनिको नारकादि व्यवहार नहीं होता है; क्यों कि उपाधिका जनक कर्म है । ४०१-४०१
- २२ ग्यारहवें सूत्रका अवतरण और ग्यारहवां सूत्र । ४०२
- २३ कर्मको संसारका कारण जानकर कर्मके कारण प्राणातिपातादि का त्याग करे । ४०२-४०३

## विषय

## पृष्ठाङ्क

- २४ बारहवाँ सूत्र । ४०३
- २५ मुनि कर्मस्वरूपका पर्यालोचन कर सर्वज्ञ-जिन सम्बन्धी उपदेश, या संयमको स्वीकार कर रागद्वेषसे रहित हो वीतराग हो जाते हैं । ४०३
- २६ तेरहवाँ सूत्र । ४०४
- २७ कर्मके कारण रागद्वेषका ज्ञानपूर्वक परित्याग कर, संसारी लोगों को विषयकषायों से व्यामोहित जान कर, तथा विषयाभिलाष-रूप लोकसंज्ञाका वमन कर मतिमान् मुनि संयमाराधनमें तत्पर रहे, संयम ग्रहण कर पश्चात्ताप न करे । उद्देशसमाप्ति । ४०४-४०५

॥ इति प्रथमोद्देशः ॥

\*

॥ अथ द्वितीयोद्देशः ॥

- १ प्रथम उद्देश के साथ द्वितीय उद्देश का सम्बन्धप्रतिपादन, और द्वितीय उद्देशका प्रथम सूत्र । ४०६
- २ प्राणियों के जन्मवृद्धिका विचार करो; सभी प्राणियों को सुखप्रिय होता है और दुःख अप्रिय होता है—इस वस्तु को समझो । इस प्रकार विचार करनेवाला प्राणी अतिविद्य हो कर—‘निर्वाणपद या वहां तक पहुंचानेवाले सम्यग्दर्शन आदि परम हैं’ ऐसा जान कर परमार्थदर्शी बनकर सावध कर्म नहीं करता । ४०६-४०९
- ३ द्वितीय सूत्र । ४१०
- ४ इस मनुष्यलोकमें बन्धन के कारणभूत मनुष्यों के साथ के सम्बन्धों को छोड़ो । आरम्भजीवी मनुष्य ऐहिक-पारलौकिक दुःखोंको भोगनेवाले होते हैं । कामभोगों में अभिलाषा रखने-वाले जीव अष्टविध कर्मों का संचय करते रहते हैं और काम-भोगादिजन्य कर्मरजसे संश्लिष्ट हो वारंवार गर्भगामी होते हैं । ४१०-४११
- ५ तृतीय सूत्र । ४११

- ६ अज्ञ मनुष्य मनोविनोद के निमित्त प्राणियोंका संहार कर आनंद मानता है। वालों—अज्ञों का संग व्यर्थ है। उनके संग से तो द्वेषकी ही वृद्धि होती है। ४११-४१२
- ७ चतुर्थ सूत्रका अवतरण और चतुर्थ सूत्र। ४१३
- ८ वालों के संग से द्वेष ही बढ़ता है; इस हेतु अतिविद्य—सम्यग्ज्ञानवान् प्राणी परम की, अर्थात्—सिद्धिगति नामक स्थान की अथवा सर्वविरतिरूप चारित्र्य की सत्ता को जान कर, नरक-निगोदादिके विविध दुःखोंके ज्ञानसे युक्त हो, पापानुबन्धी कर्म नहीं करता है, न दूसरों से कराता है, न करनेवाले का अनुमोदन ही करता है। वह धीरे मुनि, अग्र और मूल का विवेक कर के, कर्मों का छेदन कर निष्कर्मदर्शी हो जाता है। ४१३-४१५
- ९ पञ्चम सूत्रका अवतरण और पञ्चम सूत्र। ४१६
- १० यह निष्कर्मदर्शी मरणसे मुक्त हो जाता है, केवली होकर दूसरों को भी मुक्त करता है। इहलोकादि भय को देखनेवाला यही मुनि कहलाता है। मुनि परमदर्शी, विविक्तजीवी और उपशान्त आदि हो कर, पण्डितमरणकी आकाङ्क्षा करता हुआ संयमाराधनमें तत्पर रहे। ४१६-४१८
- ११ छठा सूत्र। ४१८
- १२ पापकर्म बहुत प्रकारके कहे गये हैं, उनको दूर करनेके लिये संयममें धृति धरो। संयमपरायण मेधावी मुनि समस्त पाप कर्मोंका क्षण करता है। ४१८-४१९
- १३ सातवाँ सूत्रका अवतरण और सातवाँ सूत्र। ४१९-४२०
- १४ अनेक विषयों में आसक्तचित्त संसारो पुरुषों की इच्छाकी पूर्ति नहीं होती। ऐसे पुरुष अन्यवधादिरूप पापकर्मों में ही निरत रहते हैं। ४२०-४२४

- १५ आठवाँ सूत्र । ४२४
- १६ इन अन्यवधादिकों का सेवन करके भरतादि—जैसे कोई २  
इन्हें निस्सार समझ कर संयमाराधन में तत्पर हुए हैं । इसलिये  
इनको निस्सार समझ कर ज्ञानी इनका सेवन नहीं करे । ४२४-४२५
- १७ नवम सूत्रका अवतरण और नवम सूत्र । ४२५
- १८ देव भी जन्ममरणशील होते हैं; इसलिये उनके सुख को भी  
नश्वर समझ कर श्रुतचारित्रधर्मका सेवन करो । ४२६
- १९ दशम सूत्र । ४२७
- २० श्रुतचारित्र धर्म के आराधनमें तत्पर मुनि किसी की हिंसा न करे,  
न दूसरों से हिंसा करावे और न हिंसा करनेवाले की अनु-  
मोदना ही करे । ४२७
- २१ ग्यारहवाँ सूत्र का अवतरण और ग्यारहवाँ सूत्र । ४२७
- २२ स्त्रियों में अनासक्त, सम्यग्ज्ञानदर्शन चारित्रिके आराधन में तत्पर  
तथा पाप के कारणभूत कर्मों से निवृत्त मुनि वैषयिक सुख की  
जुगुप्सा करे । ४२७-४२८
- २३ बारहवाँ सूत्र । ४२९
- २४ क्रोधादि का नाश करे, लोभ का फल नरक समझे, प्राणियों की  
हिंसा से निवृत्त रहे, मोक्ष की अभिलाषा से कर्मों के कारणों को  
दूर करे । ४२९-४३०
- २५ तेरहवाँ सूत्र । ४३१
- २६ इस संसारमें समय की प्रतीक्षा न करते हुए तत्काल ही  
बाह्याभ्यन्तर ग्रन्थिको जान कर परित्याग करे; स्रोत को जान  
कर संयमाचरण करे, इस दुर्लभ नरदेहको पाकर किसी की  
भी हिंसा न करे । उद्देशसमाप्ति । ४३१-४३३

॥ इति द्वितीयोद्देशः ॥



## ॥ अथ तृतीयोद्देशः ॥

## विषय

## पृष्ठाङ्क

- १ द्वितीयोद्देशके साथ तृतीयोद्देशका सम्बन्धप्रतिपादन, और प्रथम सूत्र । ४३४
- २ सन्धिको जान कर लोकके क्षायोपशमिक भावलोक के विषयमें प्रमाद करना उचित नहीं है । अथवा—सन्धि को जान कर लोक को—षड्जीवनिकायरूप लोक को—दुःख देना ठीक नहीं है । ४३५
- ३ द्वितीय सूत्रका अवतरण और द्वितीय सूत्र । ४३५
- ४ अपनेको जैसे सुख प्रिय है और दुःख अप्रिय, उसी प्रकार सभी प्राणियों को है । इसलिये किसी भी प्राणी की न स्वयं घात करे, न दूसरों से घात करावे, न घात करनेवाले की अनुमोदना ही करे । ४३५-४३६
- ५ तृतीय सूत्र का अवतरण और तृतीय सूत्र । ४३७
- ६ मुनित्व किसे प्राप्त होता है । ४३७-४४०
- ७ चतुर्थ सूत्रका अवतरण और चतुर्थ सूत्र । ४४०-४४१
- ८ ज्ञानी पुरुष चारित्र में कभी भी प्रमाद न करे, जिनप्रवचनोक्त आहारमात्रा से शरीर—यापन करे । ४४१-४४२
- ९ पञ्चम सूत्रका अवतरण और पञ्चम सूत्र । ४४३
- १० मुनि उत्तम, मध्यम एवं अधम इन सभी रूपों में वैराग्ययुक्त होवे । ४४४
- ११ छठे सूत्रका अवतरण और छठा सूत्र । ४४५
- १२ जो मुनि जीवोंकी गति और आगतिको जान कर रागद्वेषसे रहित हो जाता है, वह समस्त जीवलोकमें छेदन, भेदन, दहन और हनन—जन्य दुःखों से रहित हो जाता है । ४४५-४४७
- १३ सातवें सूत्रका अवतरण और सातवां सूत्र ४४८
- १४ मिथ्यादृष्टि जीव भूतकाल और भविष्यत्काल सम्बन्धी अवस्थाओं को नहीं जानते हैं । उन्हें यह नहीं ज्ञात होता कि इसका भूत-काल कैसा था और भविष्यत्काल कैसा होगा ?, कोई २ मिथ्यादृष्टि तो ऐसा कहते हैं कि जैसा इस जीव का अतीतकाल था वैसा ही भविष्यत्काल होगा । ४४८

- १५ आठवें सूत्रका अवतरण और आठवां सूत्र । ४४९
- १६ तत्त्वज्ञानी जीव अतीतकालिक और भविष्यत्कालिक पदार्थों का चिन्तन नहीं करते, वे तो वर्तमानकाल के ऊपर ही सावधानता से दृष्टि रखते हैं । इसलिये मुनि विशुद्धाचारी या अतीतानागत कालके संकल्प से रहित हो कर, निरतिचार संयमकी आराधना कर पूर्वोपार्जित सकल कर्मोंका क्षण करे । ४५०-४५१
- १७ नवम सूत्र का अवतरण और नवम सूत्र । ४५१-४५२
- १८ अरति और आनन्दकी असारता का विचार कर, उनके विषय में विचलित न होता हुआ ध्यान मार्ग में विचरण करे, तथा सभी प्रकार के हास्योंका परित्याग कर आलीनगुप्त होते हुए संयमानुष्ठान में तत्पर रहे । ४५२-४५५
- १९ दशम सूत्रका अवतरण और दशम सूत्र । ४५५
- २० पुरुष अपना मित्र अपने ही है। बाहरमें मित्र खोजना व्यर्थ है। ४५५-४५७
- २१ ग्यारहवें सूत्रका अवतरण और ग्यारहवां सूत्र । ४५७-४५८
- २२ जो पुरुष कर्मों के दूर करनेकी इच्छावाला है वह कर्मों को दूर करनेवाला है और जो कर्मों को दूर करनेवाला है वह कर्मों के दूर करने की इच्छावाला है । ४५८-४५९
- २३ बारहवें सूत्रका अवतरण और बारहवां सूत्र । ४५९-४६०
- २४ अपनी आत्माको बाह्य पदार्थों से निवृत्त कर, उसे ज्ञानदर्शन-चारित्र्य से युक्त कर पुरुष दुःखसे मुक्त हो जाता है । ४६०-४६१
- २५ तेरहवां सूत्र । ४६१
- २६ सत्यको-अर्थात्-गुरु की साक्षिता से गृहीत श्रुतचारित्र्य धर्म सम्बन्धी ग्रहणी और आसेवनी शिक्षा को, अथवा आगमको विस्मृत न करते हुए तदनुसार आचरण करो । सत्यका अनुसरण करनेवाला मेधावी संसार समुद्रका पारगामी होता है और ज्ञानादियुक्त होने से श्रुतचारित्र्य धर्मको ग्रहण कर वह मुनि मोक्षपददर्शी होता है । ४६२

- २७ चौदहवें सूत्रका अवतरण और चौदहवां सूत्र । ४६३
- २८ रागद्वेष का वंशवर्त्ती जीव क्षणभङ्गुर जीवनके परिवन्दन, मानन और पूजनके लिये प्राणातिपात आदि असत्कर्मों में प्रवृत्ति करते हैं। इस प्रकार वे परिवन्दन, मानन और पूजनके विषय में प्रमादशील हो जाते हैं, प्रमादी हो जन्म जरा मरणरूप दुःखार्णव में अपने को डुबो देते हैं, अथवा—इस प्रकार वे उन परिवन्दनादिकों में आनन्द मानते हैं; परंतु वे परिवन्दनादिक उनके हितके लिये नहीं होते । ४६३-४६४
- २९ पन्द्रहवें सूत्रका अवतरण और पन्द्रहवां सूत्र । ४६४-४६५
- ३० ज्ञानचारित्र्ययुक्त मुनि दुःखमात्रासे स्पृष्ट होकर भी व्याकुल नहीं होता । हे शिष्य ! तुम पूर्वोक्त अर्थ अथवा वक्ष्यमाण अर्थ को अच्छी तरह समझो । रागद्वेषरहित मुनि लोकालोक प्रपञ्च से मुक्त हो जाता है । उद्देशसमाप्ति । ४६५-४६६

॥ इति तृतीयोद्देशः ॥

\*

॥ अथ चतुर्थोद्देशः ॥

- १ तृतीय उद्देश के साथ चतुर्थ उद्देशका सम्बन्ध प्रतिपादन और प्रथम सूत्र । ४६७-४३८
- २ शुभाध्यवसायपूर्वक संयमके आराधनमें तत्पर मुनि क्रोध, मान माया और लोभको दूर करनेवाला होता है; यह बात तीर्थङ्करों ने कही है । तीर्थङ्करों के उपदेशका अनुसरण करनेवाला साधु आदान का—अष्टादश पापस्थानों का, अथवा कषायों का—वमन करनेवाला और स्वकृत कर्मों का नाश करनेवाला होता है । ४६८-४७२
- ३ द्वितीय सूत्रका अवतरण और द्वितीय सूत्र । ४७२-४७३
- ४ जो एक को जानता है वह सबको जानता है, जो सबको जानता है वह एकको जानता है । ४७४-४७५
- ५ तृतीय सूत्रका अवतरण और तृतीय सूत्र । ४७५

## विषय

## पृष्ठाङ्क

- ६ प्रमादीको सबसे भय रहता है और अप्रमादीको किसीसे भी नहीं ! ४७५-४७७
- ७ चतुर्थ सूत्रका अवतरण और चतुर्थ सूत्र । ४७७-४७८
- ८ जो एकका उपशम करता है वह बहुतका उपशम करता है,  
जो बहुतका उपशम करता है वह एकका उपशम करता है । ४७८-४७९
- ९ पांचवें सूत्रका अवतरण और पांचवां सूत्र । ४७९
- १० धीर मुनि-षड्जीवनिकायलोकके दुःखकारण कर्मोंको जानकर,  
पुत्रकलत्रादि तथा हिरण्यसुवर्णादिकी ममता छोड़कर चारित्रिको  
ग्रहण करते हैं और परसे पर जाते हैं, ऐसे मुनि अपने जीवन  
की अभिलाषा नहीं रखते हैं । ४८०-४८५
- ११ छठे सूत्रका अवतरण और छठा सूत्र । ४८५
- १२ एकका विवेचन करते हुए दूसरोंका भी विवेचन करता है,  
दूसरोंका विवेचन करते हुए एकका भी विवेचन करता है । ४८६-४८७
- १३ सातवें सूत्रका अवतरण और सातवां सूत्र । ४८७
- १४ मोक्षाभिलाषरूप श्रद्धावाला, जैनागमके अनुसार आचरण करता  
हुआ, मेधावी अप्रमत्त संयमी क्षपकश्रेणीको प्राप्त करता है । ४८७-४८८
- १५ आठवें सूत्रका अवतरण और आठवां सूत्र । ४८८
- १६ षड्जीवनिकायके स्वरूपको जिनोक्त प्रकारसे जानकर, जिससे  
षड्जीवनिकाय लोकको किसी प्रकारका भय न हो उस प्रकारसे  
संयमाराधन करे । ४८८-४८९
- १७ नवम सूत्रका अवतरण और नवम सूत्र । ४८९
- १८ शस्त्र परसे पर है और अशस्त्र परसे पर नहीं है । ४८९-४९१
- १९ दशम सूत्रका अवतरण और दशम सूत्र । ४९१
- २० भावशस्त्र परसे पर होता है, अर्थात्-जो क्रोधदर्शी होता है  
वह क्रमशः तिर्यग्दर्शी=निगोदभवसम्बन्धी दुःखोंको देखनेवाला  
होता है । ४९२-४९४
- २१ ग्यारहवें सूत्रका अवतरण और ग्यारहवां सूत्र । ४९४

- २२ पूर्वोक्त मेधावी मुनिको चाहिये कि क्रोधसे लेकर मोह तकके भावशस्त्रों का परित्याग कर क्रोधादिकके फलभूत गर्भदुःखादिसे लेकर निगोददुःखपर्यन्त सभी दुःखोंको दूर करे—यह बात भगवान् तीर्थङ्करने कही है । ४९४-४९५
- २३ बारहवें सूत्रका अवतरण और बारहवां सूत्र । ४९५
- २४ क्रोधादिको दूर करनेवाला अपने पूर्वोपार्जित कर्मोंका क्षण करनेवाला होता है । ४९६
- २५ तेरहवें सूत्रका अवतरण और तेरहवां सूत्र । ४९६
- २६ पश्यकको, अर्थात्—केवलोको उपाधि, अर्थात्—द्रव्योपाधि भावोपाधि, अथवा—कर्मजनित नरकादिभव होता है क्या?; पश्यकको उपाधि नहीं है । उद्देशसमाप्ति । ४९६-४९९

॥ इति तृतीयाध्ययनम् ॥

\*

॥ अथ चतुर्थाध्ययनम् ॥

॥ अथ प्रथमोद्देशः ॥

- १ तृतीय अध्ययनके साथ चतुर्थ अध्ययनका सम्बन्धप्रतिपादन । ५००
- २ प्रसङ्गतः सम्यक्तत्वा निरूपण । ५००
- ३ सम्यक्तत्वं शब्दकी सिद्धि, सम्यक्तत्वा लक्षण, सम्यक्तत्वे लक्षणके विषयमें वादियों की विप्रतिपत्तिका निरसन । ५००-५११
- ४ सम्यक्तत्वा द्वैविध्य और दशविधत्वका सविस्तर विवरण । ५१२-५२८
- ५ सम्यक्तत्वा की स्थिति । ५२९
- ६ सम्यक्तत्वे प्रादुर्भावकी व्यवस्था । ५२९-५३०
- ७ सम्यक्तत्वा अन्तरकाल । ५३०
- ८ सम्यक्तत्वा फल । ५३१-५५९
- ९ सम्यक्तत्वाप्राप्तिका क्रम । ५५९-५७२

## विषय

## पृष्ठाङ्क

- १० सम्यक्तत्वमोहनीयका स्वरूप । ५७३-५७५
- ११ मिश्रमोहनीय । ५७६
- १२ मिथ्यात्वमोहनीय । ५७६-५८४
- १३ प्रथम सूत्रका अवतरण और प्रथम सूत्र । ५८५
- १४ सभी तीर्थङ्करोंद्वारा प्रतिपादित सम्यक्तत्वका निरूपण । ५८५-५८८
- १५ द्वितीय सूत्रका अवतरण और द्वितीय सूत्र । ५८९
- १६ यह सर्वप्राणातिपातविरमणादिरूप धर्म-शुद्ध, नित्य और शाश्वत है । इस धर्मको भगवान् ने षड्जैवनिकायरूप लोकको दुःख-दावानलके अन्दर जलते हुए देखकर प्ररूपित किया है । भगवान् ने इस धर्मका प्ररूपण उत्थित अनुत्थित आदि सबोंके लिये किया है । ५८९-५९३
- १७ तृतीय सूत्रका अवतरण और तृतीय सूत्र । ५९३
- १८ भगवान् का वचन सत्य ही है, भगवान् ने वस्तुका स्वरूप जिस प्रकार प्रतिपादन किया है वह वस्तु वैसी ही है-इस प्रकारके श्रद्धानलक्षण सम्यक्तत्वका प्रतिपादन केवल आर्हतागममें ही कहा गया है; अन्यत्र नहीं ! ५९३-५९४
- १९ चतुर्थ सूत्रका अवतरण और चतुर्थ सूत्र । ५९५
- २० उस सम्यक्तत्वको प्राप्त कर, धर्मको उपदेश-आदि उपायद्वारा जान कर सम्यक्तत्वको प्रशम-संवेगादिद्वारा प्रकाशित करे, सम्यक्तत्वका परित्याग न करे । ५९५-५९६
- २१ पञ्चम सूत्रका अवतरण और पञ्चम सूत्र । ५९७
- २२ ऐहिक और पारलौकिक इष्ट-अनिष्ट शब्दादि विषयोंमें वैराग्य रखे । ५९७
- २३ छठा सूत्र । ५९८
- २४ लोकैषणा न करे । ५९८-५९९
- २५ सातवें सूत्रका अवतरण और सातवां सूत्र । ५९९
- २६ जिसको लोकैषणा नहीं है उसको सावध-व्यापारमें प्रवृत्ति कहाँसे

- हो ! अथवा—जिसको यह सम्यक्त्वपरिणति नहीं है उसको साव-  
धानुष्ठानसे रहित करनेवाली विवेकयुक्त परिणति कहांसे हो ! ५९९-६००
- २७ आठवें सूत्रका अवतरण और आठवां सूत्र । ६००
- २८ इस सम्यक्त्वको जो मैंने कहा है उसे तीर्थङ्करोंने देखा है,  
गणधरोंने सुना है, लघुकर्मा भव्यजीवोंने माना है; ज्ञानावरणीय  
के क्षयोपशमसे भव्यजीवोंने जाना है । ६००-६०१
- २९ नवम सूत्रका अवतरण और नवम सूत्र । ६०१
- ३० जिनवचनमें श्रद्धारूप सम्यक्त्वके अभावसे मातापिता आदिके  
साथ सांसारिक संबन्ध रखता हुआ, मृत्युद्वारा उनसे वियुक्त  
होता हुआ, या शब्दादि विषयोंमें आसक्ति करता हुआ मनुष्य  
एकेन्द्रियादिक भवों में भटकता रहता है । ६०१
- ३१ दशम सूत्रका अवतरण और दशम सूत्र । ६०२
- ३२ दिन—रात मोक्षप्राप्तिके लिये उद्योगयुक्त और सर्वदा उत्तरोत्तर  
प्रवर्द्धमान हेयोपादेयविवेकपरिणामसे युक्त होते हुए तुम प्रमत्तों  
को—असंयतोंको आर्हत धर्मसे बहिर्भूत समझो; और पञ्चविध  
प्रमादोंसे रहित हो मोक्षप्राप्तिके लिये अविच्छिन्न प्रयत्न करो,  
अथवा—अष्टविध कर्मशत्रुओंको जीतनेके लिये पराक्रम करो ।  
उद्देशसमाप्ति । ६०२-६०४

॥ इति प्रथमोद्देशः ॥

\*

॥ अथ द्वितीयोद्देशः ॥

- १ प्रथम उद्देशके साथ द्वितीय उद्देशका संबन्ध—प्रतिपादन; प्रथम  
सूत्रका अवतरण और प्रथम सूत्र । ६०५
- २ जो आस्रव—कर्मबन्धके कारण हैं वे परिस्रव—कर्मनिर्जराके कारण  
हो जाते हैं, और जो परिस्रव—कर्मनिर्जराके कारण हैं वे आस्रव—

कर्मबन्धके कारण हो जाते हैं। जो अनास्रव-कर्मनिर्जराकारक व्रतविशेष हैं वे अपरिस्रव-कर्मबन्धके कारण हो जाते हैं, जो अपरिस्रव-कर्मबन्धके कारण हैं वे अनास्रव-कर्मनिर्जराकारक व्रतविशेष हो जाते हैं।

६०६-६१५

३ द्वितीय सूत्र।

६१५

४ 'जो आस्रव हैं वे परिस्रव हैं जो परिस्रव हैं वे आस्रव हैं, जो अनास्रव हैं वे अपरिस्रव हैं जो अपरिस्रव हैं वे अनास्रव हैं'-इन पदोंको जानता हुआ ऐसा कौन मुनि है जो षड्जीवनिकायको बँधते हुए और मुक्त होते हुए जिनागमानुसार जान कर, तथा सभी तीर्थङ्करोद्द्वारा भिन्न-भिन्नरूपसे प्रतिबोधित बन्धकारण और निर्जराकारणको जानकर धर्माचरणमें प्रवृत्त न हो !

६१५-६१६

५ तृतीय सूत्रका अवतरण और तृतीय सूत्र।

६१६

६ प्रवचनज्ञानसे युक्त मुनि, हेयोपादेयको तथा यथोपदिष्ट धर्म को जाननेवाले संसारियोंके लिये उपदेश देते हैं। ज्ञानीका उपदेश सुनकर, आर्त्त अथवा प्रमत्त भी प्रबुद्ध हो जाते हैं। मैंने जो कुछ कहा है और मैं जो कुछ कहता हूँ वह सत्य ही हैं। मैंने यह सब भगवान्से सुनकर ही कहा है। मोक्षाभिलाषीको इसमें सम्यक्त्व-श्रद्धान रखना चाहिये।

६१६-६२०

७ चतुर्थ सूत्रका अवतरण और चतुर्थ सूत्र।

६२०-६२१

८ संसारी जीव मृत्युसे नहीं बच सकते। वे धर्मसे वहिर्भूत होनेके कारण इच्छाके अधीन रहते हैं, अति-असंयमी होते हैं, काल-मृत्युसे गृहीत होते हैं, अथवा-आगामी वर्षमें या उसके बाद के वर्षोंमें धर्माचरण करनेके संकल्प करते रहते हैं, और धान्यादि संग्रह करनेमें ही लगे रहते हैं; ऐसे संसारी जीव अनन्तवार एकेन्द्रियादिक भवोंमें जन्म लेते रहते हैं।

६२१-६२४

९ पञ्चम सूत्रका अवतरण और पञ्चम सूत्र।

६२४

१० इस लोकमें कितनेक जीवोंको वारंवार उत्पन्न होनेके कारण



उनसे परिचय हो जाता है, नरकादि स्थानोंमें उत्पन्न हुए वे जीव नरकादि सम्बन्धी दुःखों का अनुभव करते हैं।

६२४-६२५

११ छठे सूत्रका अवतरण और छठा सूत्र।

६२५

१२ क्रूरकर्म करनेवाला जीव बहुतकाल तक नरकमें रहता है और क्रूरकर्म नहीं करनेवाला जीव कभी भी नरकमें नहीं जाता है।

६२६

१३ सातवाँ सूत्रका अवतरण और सातवाँ सूत्र।

६२७

१४ चतुर्दशपूर्वधारी और केवलज्ञानीके कथनमें थोड़ासा भी अन्तर नहीं होता !

६२७-६२८

१५ अष्टम सूत्रका अवतरण और अष्टम सूत्र।

६२८

१६ इस मनुष्यलोकमें कितनेक श्रमण ब्राह्मण—‘सभी प्राणी, सभी भूत, सभी जीव और सभी सत्त्व हनन करनेयोग्य हैं, हनन करने के लिये आज्ञा देनेयोग्य हैं, हनन करनेके लिये ग्रहण करने योग्य हैं और विषशस्त्रादिद्वारा मारने योग्य हैं; इसमें कोई दोष नहीं है’ इस प्रकार कहते हैं। यह सब अनार्यवचन ही है।

६२८-६३१

१७ नवम सूत्रका अवतरण और नवम सूत्र।

६३२

१८ सभी प्राणी, सभी भूत—आदि हनन करनेके योग्य हैं, इत्यादि जो कोई श्रमण—ब्राह्मण कहते हैं, उनका यह कथन अनार्यवचन है’ इस प्रकार आर्योंका कथन है।

६३२-६३३

१९ दशम सूत्रका अवतरण और दशम सूत्र।

६३४

२० ‘सभी प्राणी, सभी भूत आदि हनन करनेयोग्य नहीं हैं—इत्यादि कथन आर्योंका है’—इस प्रकार स्वसिद्धान्तप्रतिपादन।

६३५-६३६

२१ ग्यारहवें सूत्रका अवतरण और ग्यारहवाँ सूत्र।

६३६

२२ दुःख जैसे अपने लिये अप्रिय है उसी प्रकार वह सभी प्राणी, भूत—आदिके लिये भी अप्रिय है। अतः किसीको दुःख नहीं देना चाहिये। उद्देशसमाप्ति।

६३६-६३८

॥ इति द्वितीयोद्देशः ॥

## ॥ अथ तृतीयोद्देशः ॥

- १ द्वितीय उद्देशके साथ तृतीय उद्देशका सम्बन्धप्रतिपादन, प्रथम सूत्रका अवतरण और प्रथम सूत्र । ६३९
- २ धर्मसे बहिर्भूत लोगोंकी उपेक्षा करो, ऐसे लोगोंकी उपेक्षा करनेवाला मनुष्य ही विद्वान् है । ६३९-६४०
- ३ द्वितीय सूत्रका अवतरण और द्वितीय सूत्र । ६४१
- ४ विद्वान् मनुष्य मनोवाक्कायके सावद्यव्यापाररूप दण्डके त्यागी होते हैं, अष्टविध कर्मोंके त्यागी होते हैं, उनके शरीर शोभा संस्कार आदिसे रहित होते हैं, अतएव वे सरल होते हैं एवं आरम्भजनित दुःखोंके अभिज्ञ होते हैं । विद्वान्के इस स्वरूपको सम्यक्त्वदर्शी-केवलीने कहा है । ६४१-६४६
- ५ तृतीय सूत्र का अवतरण और तृतीय सूत्र । ६४६-६४७
- ६ सम्यक्त्वदर्शी मुनि-सर्वज्ञ, यथावस्थित अर्थको प्रतिबोधित करने-वाले तथा अष्टविध कर्मोंको दूर करनेमें कुशल होते हुए सभी प्रकारसे कर्मोंको जानकर ज्ञ और प्रत्याख्यानरूप दो प्रकारकी परिज्ञाको कहते हैं । ६४७-६४८
- ७ चतुर्थ सूत्रका अवतरण और चतुर्थ सूत्र । ६४८
- ८ इस मनुष्यलोकमें आर्हत आगमका श्रवण, मनन और समाराधन करनेवाला, हेयोपादेयके विवेकमें निपुण, रागद्वेषरहित मनुष्य आत्माको स्वजन-धन-शरीरादिसे भिन्न समझकर शरीरमें आस्था न रखे । ६४९-६५४
- ९ पञ्चम सूत्र । ६५४
- १० तपस्या-आदिके द्वारा शरीरका शोषण करे, शरीरको जीर्ण बना दे । ६५४
- ११ छठे सूत्रका अवतरण और छठा सूत्र । ६५५
- १२ जैसे अग्नि जीर्णकाष्ठोंको भस्म कर डालती है उसी प्रकार आत्मा के शुभ परिणाम सम्यग्दर्शनादिमें सावधान और शब्दादि

## विषय

## पृष्ठाङ्क

- विषयोंमें रागरहित मनुष्य ज्ञानावरणीयादि अष्टविध कर्मोंको भस्म कर डालता है । ६५५
- १३ सातवें सूत्रका अवतरण और सातवां सूत्र । ६५६
- १४ मुनि इस मनुष्यलोकको परिमित आयुवाला जानकर प्रथम गुणकी वृद्धि करके क्रोधादि कपायोंका त्याग करे । ६५६
- १५ आठवां सूत्र । ६५७
- १६ हे मुनि ! क्रोधादिवश त्रिकरण-त्रियोगसे प्राणातिपात करनेसे जो प्राणियोंको दुःख होता है, या क्रोधादिसे प्रज्वलित मनवाले जीवको जो मानसिक दुःख होता है उसको समझो, और क्रोधजनित कर्मविपाकसे भविष्यत्कालमें जो दुःख होता है उसे भी समझो । ऐसे क्रोधी व्यक्ति भविष्यत्कालमें नरकनिगोदादि-भवंसंबन्धी दुःखोंको भोगते हैं । दुःखागमके भयसे कांपते हुए जीवोंको तुम दयादृष्टिसे देखो । ६५७-६६१
- १७ नवम सूत्रका अवतरण और नवम सूत्र । ६६१
- १८ जो भगवान् तीर्थङ्करके उपदेशमें श्रद्धायुक्त हैं, और उनके उपदेश को धारण करनेके कारण क्रोधादिकषायरूप अग्निके प्रशान्त हो जानेसे शीतीभूत हो गये हैं, अतएव जो पापकर्मोंके विषयमें निदानरहित हैं, वे ही मोक्षसुखके भागी कहे गये हैं । ६६१-६६४
- १९ दशम सूत्रका अवतरण और दशम सूत्र । ६६४
- २० हे शिष्य ! जिसलिये क्रोधादिकपायोंसे युक्त जीव अनन्त दुःख पाता है, इसलिये तुम आर्हतागम परिशीलन-जनित सम्यग्ज्ञानसे युक्त अतिविद्वान् होकर क्रोधादिकषायजनित सन्तापसे अपनेको बचाओ । उद्देशसमाप्ति । ६६४-६६५

॥ इति तृतीयोद्देशः ॥

## ॥ अथ चतुर्थोद्देशः ॥

विषय

पृष्ठाङ्क

- १ तृतीय उद्देशके साथ चतुर्थ उद्देशका सम्बन्धप्रतिपादन, प्रथम सूत्रका अवतरण और प्रथम सूत्र । ६६६
- २ मातापिता आदिके सम्बन्धको या असंयमको छोड़कर और संयमको प्राप्तकर, शरीरको प्रथम प्रव्रज्याकालमें साधारण तपसे, बादमें प्रकृष्ट तपसे, और अन्तमें पण्डित मरणद्वारा शरीरत्यागकी इच्छासे युक्त हो मासार्द्धमास क्षपणादि तपोंसे पीडित-कृश करे । ६६६-६६७
- ३ द्वितीय सूत्रका अवतरण और द्वितीय सूत्र । ६६८
- ४ उपशमका आश्रयण करके कर्मविदारणमें समर्थ, संयमाराधनमें खेदरहित, जीवनपर्यन्त संयमाराधनमें तत्पर और समिति एवं सम्यग्ज्ञानादि गुणोंसे युक्त हो कर मुनि सर्वदा संयमाराधनमें प्रयत्नयुक्त रहे । ६६८
- ५ तृतीय सूत्रका अवतरण और तृतीय सूत्र । ६६८-६६९
- ६ मोक्षगामी वीरोंका यह संयमरूप मार्ग कठिनतापूर्वक सेवनीय है । ६६९
- ७ चतुर्थ सूत्रका अवतरण और चतुर्थ सूत्र । ६६९
- ८ अन्तप्रान्त आहारादिसे और अनशनादिसे अपने शरीरके मांस शोणितको सुखाओ । इस स्वशरीरशोषक मोक्षार्थी पुरुषको तीर्थङ्करोंने कर्मविदारण करनेमें समर्थ और श्रद्धेयवचन कहा है । और जो ब्रह्मचर्य महाव्रतमें तत्पर होकर कर्मोपचयका क्षपण करता है वह भी श्रद्धेयवचन है । ६६९-६७०
- ९ पञ्चम सूत्रका अवतरण और पञ्चम सूत्र । ६७०
- १० साधु विषयोंसे अपनी इन्द्रियोंको हटा कर भी ब्रह्मचर्यमें स्थित हो कर भी और श्रद्धेयवचन हो कर भी यदि शब्दादि विषयभोगोंमें आसक्त होता है तो वह वाल अपने कर्मबन्धको काटनेमें समर्थ नहीं होता ! वह वाल मातापिता आदिके सम्बन्धको या असंयम सम्बन्धको नहीं छोड़ पाता ! आत्महितको

नहीं जाननेवाला उस बालको भगवान् तीर्थङ्करके उपदेशरूप प्रवचनका अथवा सम्यक्तत्वका लाभ नहीं होता !

६७०-६७५

११ छठे सूत्रका अवतरण और छठा सूत्र ।

६७५

१२ जिसको पूर्वकालमें सम्यक्तत्व नहीं मिला है और भविष्यत्कालमें भी जिसे सम्यक्तत्व नहीं मिलनेवाला है उसे वर्तमानमें सम्यक्तत्व कहाँसे मिले ?

६७५-६७७

१३ सातवें सूत्रका अवतरण और सातवां सूत्र ।

६७७

१४ जो भोगविलाससे रहित होता है वही जीवाजीवादि पदार्थोंका सम्यग्ज्ञाता तत्त्वज्ञ आरम्भसे उपरत होता है । यह आरम्भसे उपरमण होना ही सम्यक्तत्व है । इस आरम्भोपरमणसे जीव घोर दुःखजनक कर्मबन्धको, वधको और दुस्सह शारीरिक परितापको नहीं पाता है । अथवा जिस आरम्भसे जीव घोर दुःखजनक कर्मबन्ध और वधको तथा दुस्सह शारीरिक मानसिक परिताप को पाता है ।

६७७-६८०

१५ आठवें सूत्रका अवतरण आठवां सूत्र ।

६८०

१६ हिरण्यरजत मातापिता आदिका सम्बन्धरूप अथवा प्राणातिपात-रूप बाह्य आस्रवको और विषयाभिलाषरूप आन्तर स्रोतको रोक कर इस लोकमें मनुष्योंके बीच मोक्षाभिलाषी हो सावद्यव्यापारका परित्याग करे । अथवा इस लोकमें मनुष्योंके बीच बाह्य स्रोतको छिन्न कर निष्कर्मदर्शी हो जावे ।

६८०-६८२

१७ नवम सूत्रका अवतरण और नवम सूत्र ।

६८२

१८ ज्ञानावरणीयादिक कर्म अवश्यमेव स्व-स्वफलजनक होते हैं-ऐसा जानकर आर्हतागमजनित सम्यग्ज्ञानवान् मुनि कर्मबन्धके कारण सावद्य व्यापारको छोड़ता है ।

६८२-६८३

१९ दशम सूत्रका अवतरण और दशम सूत्र ।

६८३

२० हे शिष्य ! जो कोई कर्मविदारण करनेमें उत्साहयुक्त, समिति-युक्त, स्वहितमें उद्योगयुक्त अथवा-सम्यग्ज्ञानादियुक्त, सर्वदा

संयमाराधनमें सावधान, हेयोपादेयके ऊपर सर्वदा दृष्टि रखने-  
वाले, अव्याबाध आनन्दस्वरूप मोक्षके अभिलाषी और कषायों  
से निवृत्त होते हुए यथावस्थित लोककी-कर्मलोक अथवा विष-  
यलोककी उपेक्षा करते हुए थे, वे चाहे पूर्व-आदि कसी भी  
दिशामें रहे हुए हों; सत्य मार्गमें ही स्थित थे ।

६८४-६८७

२१ ग्यारहवें सूत्रका अवतरण और ग्यारहवां सूत्र ।

६८७

२२ वीर-समित-आदि विशेषणोंसे युक्त उन महापुरुषोंके ज्ञानका  
वर्णन हम आगे करेंगे । क्या उनको उपाधि है ? पश्यकको उपाधि  
नहीं होती है । उद्देशसमाप्ति ।

६८७-६८८

२३ चतुर्थ उद्देशकी टीकाका उपसंहार ।

६८९-६९०

॥ इति चतुर्थोद्देशः ॥



## ॥ अथ शुद्धिपत्रम् ॥

अशुद्धम्	शुद्धम्	पृष्ठम्	पंक्तिः
निखिलजीवभेदेन	निखिलजीवभेदज्ञेन	४	१
- द्यनुभवकर्तृत्वञ्च ।	- द्यनुभावनकर्तृत्वञ्च ।	१४	५
परिचितः पिता पितृव्यादिः ।	परिचितः । अथवा पूर्व-		
	संस्तुतः पितापितृव्यादिः ।	१६	१
मूर्च्छा	मूर्च्छां	१८	४
भे	मे	१९	२६
अहो-	अहः-	२०	३
रागाद्याविष्टचेता	रागाद्याविष्टचेताः	२८	९
-पुञ्जमित्यर्थः ।	-पुञ्ज इत्यर्थः ।	३०	८
पकरति	पकरंति	३७	२२
घटं टमिव	घटं पटमिव	४१	४
वार्द्धके	वार्द्धक्ये	४१	२९
फलंबुयारं	कलंबुयारं	४४	२४
-कारणेवयः	-कारणेव यः	४५	४
‘ पायलीकाठ ’ इति भाषा ।	( ‘ पायलीकाठ ’-इति भाषा-		
	प्रसिद्धवत् । )	४७	१
-दिन्द्रियस्वीकारे	-दिन्द्रियत्वस्वीकारे	५०	१
सर्द्धि	सर्द्धि	५७	४
दुखशत-	दुःखशत-	६४	७
भवति	भवति	७१	१०
उत्त्रासकोऽ-	उत्त्रासयिताऽ-	८७	८
-नर्थकरी	-नर्थकरीं	८८	३
उत्त्रासकः	उत्त्रासयिता	८८	८
सर्द्धि	सर्द्धि	९६	३
ते	तं	९६	४
एहिक-	ऐहिक-	१००	७
-दरति भवति	-दरतिर्भवति	१३०	२
नट्ट-	नट्ट-	१३२	५
प्रक्षतुकाम	प्रक्षतुकामः	१३५	१

अशुद्धम्	शुद्धम्	पृष्ठम्	पंक्तिः
शब्दादि-	शब्दादि-	१४३	४
सन्तोषादिना	सन्तोषादिना	१५२	१
-समुदाई	समुदाई	१५४	७
-गट्टी	-गट्टी	१५४	८
-विट्ट-	-विट्ट-	१५४	८
कायै-	कार्यै-	१४४	१६
विरूपरूपैः	विरूपरूपैः	१५७	४
पर्यालोच्य	पर्यालोच्य	१५७	७
-ईण्डं	-ईण्डं	१५९	१०
जम्बस्वामिनं-	जम्बूस्वामिनं-	१६०	७
बुद्धा	बुद्ध्वा	१६१	२
परिरक्षेदित्यर्थः ।	परिरक्षेरित्यर्थः ।	१६१	५
स्वसमानार्थमात्मबलादि-	स्वसम्मानार्थमात्म-		
दण्डसमारम्भो	बलादिद्वारा दण्डसमारम्भो	१६४	१
उच्चैर्गोत्रे	उच्चैर्गोत्रे	१६५	१
जानीहि सातम्	जानीहि प्रत्युपेक्ष्य सातम्	१७१	१
परिसंवेदयते	संपरिवेदयते	१७१	९
-श्चौभौ	श्चौभौ	१७८	२
परिसंवेदयते	सम्परिवेदयते	१८१	६
सूत्रे उपैतीत्यत्रैकवचन-	सूत्रे उपैतीत्यस्याऽऽवृत्त्या		
मार्षत्वात् ।	वचनविपरिणामेन		
	च यथायोग्यमन्वयः ।	१९४	२
येन यत्र	येन यत्र वा	२२३	२
तस्मिन्=	तस्मिन् स्थाने=	२२६	२
सर्द्धि	सर्द्धि	२३८	२
क्षीणमातया	क्षीयमाणतया	२४१	१६
छन्दश्च	छन्दं च	२४३	८
छन्दः	छन्दं	२४३	१७



अंशुद्धम्	शुद्धम्	पृष्ठम्	पंक्तिः
तात्पर्यम् । “ बहुं परधरे	तात्पर्यम् । तथा—‘ गृहस्था मे=मह्यम् अनशनादिकं न ददाति’ इति हेतोः वीरो न न कुप्येत्=न कोपं कुर्यात् । “ बहुं परधरे—	२६०	२
—आदानाकोपनम् ,	, आदानाकोपनम् ,	२६१	१
प्राथेयं	पाथेयं	२६८	२
सर्वामगन्धम्=अशु—	सर्वामगन्धम्=सर्वम् अशु—२७१		८
आदिस्समाणे	अदिस्समाणे	२७३	२
आदिस्समाणे	अदिस्समाणे	२७३	३
आदिश्यमानः	अदिश्यमानः	२७३	५
‘आदिश्यमान’ इति ।	‘अदिश्यमान इति	२७३	७
आदिश्यमानः	अदिश्यमानः	२७३	८
द्रव्यक्षेत्रकालभावपेक्षया	द्रव्यक्षेत्रकालभावापेक्षया	२७८	५
—रनेषणीयमयि	रनेषणीयमपि	२८३	४
लद्धुं	लद्धुं	२८५	५
माद्येत	माद्येत्	२८५	८
स्निह्यात्	स्निह्येत्	२८५	८
—मवष्वक्केत्	—मवष्वक्केत	२८५	९
माद्येत	माद्येत्	२८६	८
माद्येत	माद्येत्	२८७	१
स्निह्यात्	स्निह्येत्	२८८	१
अवष्वक्केत्=	अवष्वक्केत=	२८८	३
कुशलो	कुसलो	२९१	५
ना—	प्रा—	३२३	८
तं	तत्	३३४	८
‘त’—मित्यादि ।	‘त’—दित्यादि ।	३३४	१०

अशुद्धम्	शुद्धम्	पृष्ठम्	पंक्तिः
तं	तत्	३३४	१०
सहइ	सहई	३३६	७
सहइ	सहई	३३६	७
अचइ	अच्चेइ	३४३	६
पमुचइ	पमुचइ	३४३	६
वर्त्तयेत्	वर्त्तकः	३४३	७
यस्य दुर्वसुः	यस्य स दुर्वसुः	३४३	१०
वर्तमानः	वर्त्तकः	३४४	२
अणोद्धातन-	अणाद्धातन-	३५६	३
घटते=	घटते,	३६४	९
वयवं	वेयवं	३८४	७
दुःखा	दुःखा	३८९	४
विदित्वा	विदित्वा	४०५	१
मतिमान्=	मतिमान् मेधावी=	४०५	१
रागद्वेषरहित इत्यर्थः, न छिद्यते	रागद्वेषरहित इत्यर्थः, सर्वलोके=समस्तजीवलोके न छिद्यते	४४६	७
पुव्वे	पुव्वं	४४८	२
एतनुदर्शी	एतदनुदर्शी	४५०	६
स्पृष्टो सन्	स्पृष्टः सन्	४६५	६
सम्यक्त्वं	सम्यक्त्वं	५४४	५
ज्ञानावरणीया-	ज्ञानावरणीया-	५६१	१०
काष्ठहारादय-	काष्ठहारादय-	५९२	६
तिर्थकरै-	तीर्थकरै-	५९४	८
तत्परतो	तत्पुरतो	५९६	४
-कतव्य-	-कर्त्तव्य-	५९७	१
पुद्गल परिणा-	पुद्गलपरि-	५९७	८
वालग्नाना-	वालग्नाना-	६०९	४
भवे देवे दित्यर्थः	भवेदेवेत्यर्थः ।	६१६	४

અશુદ્ધમ્	શુદ્ધમ્	પૃષ્ઠમ્	પંક્તિઃ
રસાયનં ક્રિયાં,	રસાયનક્રિયાં,	૬૨૧	૮
કર્મણુ	કર્મણુ	૬૨૬	૩
દોષો	દોસો	૬૨૮	૯
સર્વે	સર્વે	૬૩૫	૨
સત્ત્વાનાં	સત્ત્વાનામ્	૬૩૬	૧૧
ધર્મવિદઃ	ધર્મવિદ્ इति	૬૪૧	૬
-કાલવસ્થા-	-કાલાવસ્થા-	૬૪૧	૧૦
અત એવ	इति=અત એવ	૬૪૫	૧
ભવેદિત્યર્થઃ ।	ભવેત્યર્થઃ ।	૬૫૪	૫
શ્રુત	શ્રુતમ્	૬૬૫	૨
દુઃખેન	દુઃખેન	૬૬૯	૫
નિકમ્મદંસી	નિક્કમ્મદંસી	૬૮૦	૨
નિષ્ક્રાન્તઃ	નિષ્ક્રાન્તઃ	૬૮૦	૮
કર્મવન્ધકરણાત્	કર્મવન્ધકારણાત્	૬૮૨	૮

॥ इति शुद्धिपत्रम् ॥

\*

પ્રકાશક : શ્રી અખિલ ભારત સ્વેતામ્બર સ્થાનકવાસી જૈન શાસ્ત્રોદ્ધાર સમિતિ  
તરફથી શેઠ મગનલાલ છગનલાલ માનદ્મંત્રી સુ. રાજકોટ (સૌરાષ્ટ્ર)  
મુદ્રક : મણીલાલ છગનલાલ શાહ, નવપ્રભાત પ્રી. પ્રેસ ઘીકાંટા-અમદાવાદ.

## । अथाचाराङ्गसूत्रस्य द्वितीयमध्ययनम् ।

गतं प्रथमाध्ययनं, सम्प्रति द्वितीयमारभ्यते । अस्यायमभिसम्बन्धः- पूर्वाध्ययने पृथिव्यादिषट्कायस्वरूपं ज्ञात्वा तदारम्भनिवृत्तो मुनिर्भवतीति दर्शितं, षट्कायां रम्भनिवृत्तिश्च शब्दादिविषयविजयमन्तरेण न भवतीति लोकविजयाध्ययनमारभ्यते । अस्मिन् षडुद्देशकाः सन्ति, तत्र-स्वजनेऽभिष्वङ्गो मुनिना न कार्य इति स्वजनाभिधः प्रथमः १ । “अदृढत्वं संयमिना संयमे न विधेयम्” इत्यदृढत्वाख्यो

## । श्रीआचारङ्ग सूत्रका द्वितीय अध्ययन ।

प्रथम अध्ययन समाप्त हो चुका, अब द्वितीय अध्ययन प्रारंभ होता है । अध्ययन का संबंध इस प्रकार से समझना चाहिये कि प्रथम अध्ययन में “पृथिव्यादि षट्काय के जीवों के आरंभ से रहित मुनि होता है ” जो यह बात कही गई है सो छकाय के आरंभ की निवृत्ति, जब तक शब्दादिविषयों पर विजय प्राप्त न की जावेगी तब तक नहीं हो सकती है । इसी अभिप्राय से यह लोकविजय नामका द्वितीय अध्ययन प्रारंभ किया गया है । इसमें छह उद्देश हैं-प्रथम उद्देश में गणधर भगवान इस बातका वर्णन करेंगे कि संयमी मुनिको माता पिता आदि जो अपने इष्टजन हैं उनमें आसक्ति-ममत्वभाव नहीं रखना चाहिये १ । द्वितीय उद्देशकमें-उसे संयम में अरतिपरिणाम को दूरकर दृढता धारण करनी चाहिये कभी भी अदृढता न आने पावे इसका ख्याल रखना

## श्री आचारांग सूत्रनुं णीनुं अध्ययन

पडेनुं अध्ययन पुई थयुं, डवे णीनुं अध्ययननो प्रारंभ थाय छे. अध्ययननो संबंध ओ प्रकारे समजवो जेईओ डे प्रथम अध्ययनमां “पृथिव्यादि षट्कायना जेवोना आरंभथी रहित मुनि डोय छे. आ वात जे डडेवामां आवी छे ते छ डायना आरंभनी निवृत्ति, न्यां सुधी शब्दादि विषयोथी विजय प्राप्त नहि थाय त्या सुधी थई शकती नथी. आअभिप्रायथी आ ‘लोकविजय’ नामना णीनुं अध्ययननो प्रारंभ थाय छे तेमां छ उद्देशो छे. प्रथम उद्देशमां गणधर भगवान ते वातनुं वर्णन करे छे डे संयमी मुनीओ माता पिता आदि जे पोताना इष्टजन छे तेमां आसक्ति-ममत्वभाव नहि राखवो जेईओ १. णीनुं उद्देशमां तेओ संयममां अरतिपरिणामने दूर करी दृढता धारण करवी जेईओ, डेई वज्रत पणु अदृढता आवी न जाय तेनो जयाल राखवो जेईओ २. त्रीनुं उद्देशकमां-

द्वितीयः २ । “मुनिना मानो न कार्यो, निःसारता चार्थसारस्य चिन्तनीये” ति माना-  
 र्थसाराख्यस्तृतीयः ३ । ‘भोगेषु विरतिः सदा सर्वथा विधेया मुनिने’—ति ‘भोगेषु’  
 नामकश्चतुर्थः ४ । सर्वसावधानुष्ठानत्यागिना मुनिना संयमयात्रानिर्वाहार्थं स्वार्थारम्भ-  
 प्रवृत्तलोकनिश्रया विहरणीयमिति ‘लोकनिश्रया’ नामधेयकः पञ्चमः ५ । एवं  
 विहरता मुनिना पूर्वापर-मातापितृश्वश्रूश्वशुरादिपरिचितापरिचितसंयोगे ममता न  
 विधेयेति ‘लोकममत्वा’—ख्यः षष्ठ उद्देशः ६ ।

चाहिये २ । तृतीय उद्देशक में—मुनिको मान न करना चाहिये; एवं धना-  
 दिक परपदार्थों में सदा असारता की भावना रखनी चाहिये ३ । चतुर्थ  
 उद्देशकमें विषयभोगों से सर्वथा (मन, वचन, कायसे) विरति  
 भाव रखना चाहिये ४ । पाँचवें उद्देशक में सर्वसावधकर्मों के अनुष्ठान  
 से रहित उस संयमी को अपने संयमयात्रा के निर्वाह के लिये अपने  
 आरम्भादिकार्य में प्रवृत्त-गृहस्थयोगों के सहारे ही विहार करना चाहिये  
 ५ । छठवें उद्देशक में—योगों के सहारे विहार करनेवाले उस संयमी को  
 अपने परिचित, अपरिचित तथा माता-पिता सास-ससुर आदि से  
 मिलने की उत्कंठा भी नहीं करनी चाहिये ६ ।

भावार्थः—इस द्वितीय अध्ययन के प्रारंभ करने का स्पष्टीकरण  
 करते हुए टीकाकार कहते हैं कि प्रथम अध्ययन में यह बात निर्दिष्ट  
 की गई है कि मुनियों को पृथिवीकायिक, अप्कायिक, तेजस्कायिक,  
 वायुकायिक एवं वनस्पतिकायिक जीवों का यथार्थ स्वरूप जानकर उनके  
 आरंभ का सदा परित्याग कर देना चाहिये, कारण कि जब तक वह

मुनिने मान न करुं जेधये, तेमज धनादिक परपदार्थोंमां सदा असारतानी लावना  
 राखवी जेधये ३. योथा उद्देशकमां—विषयलोगोथी सर्वथा (मन-वचन-कायाथी)  
 विरतिलाव राखवो जेधये ४. पांयमां उद्देशकमां—सर्वसावधकर्मोंना अनुष्ठा-  
 नथी रहित ते संयमीये पोताना संयमयात्राना निर्वाह भाटे पोताना आरंभ-  
 कार्यमां प्रवृत्त गृहस्थ ढोडोना सहाराथी विहार करवो जेधये ५. छट्ठा उद्देशकमां—  
 ढोडोना सहारे विहार करनार ते संयमीने पोताना परिचित अने अपरिचित  
 माता-पिता सासु-ससुरा आदिथी भणवानी उत्कंठा पाणु न राखवी जेधये ६.

भावार्थः—आ जीजा अध्ययननो प्रारंभ करीने स्पष्टीकरण करतां टीकाकार  
 कहे छे के प्रथम अध्ययनमां ये बात कहेवामां आवे छे के मुनियोये पृथिवी-  
 कायिक, अप्कायिक, तेजस्कायिक, वायुकायिक अने वनस्पतिकायिक जिवोनुं यथार्थ  
 स्वरूप जाणीने तेना आरंभनो सदा परित्याग करी देवो जेधये, कारण के

पृथिवीकायिकादिक एकेन्द्रिय जीवों के आरंभ से रहित नहीं होगा तब तक वह यथार्थ संयमी नहीं हो सकता, अतः इनके आरंभ का त्याग करना उसका आवश्यक कर्तव्य है। यह कर्तव्य उसका तभी निर्दोष रूपसे निभ सकता है जब कि वह इन्द्रियजयी होगा, अन्यथा इन्द्रियों के शब्दादिक विषय में लुब्ध होनेसे वह इस गुण से शून्य ही रहेगा, इसी विषय को विशेषरूपसे खुलासा करने के अभिप्राय से इस अध्ययन को छह उद्देशों में विभक्त किया है। प्रथम उद्देश में यह स्पष्ट किया गया है कि संयमी मुनि के लिये अपने मातापितादिक स्वजनो में आसक्ति भाव नहीं रखना चाहिये। द्वितीय उद्देशमें—गृहीत संयममें कभी भी अरुचिभाव नहीं करे प्रत्युत संयमभाव में दृढ़ता आती रहे ऐसा ही उसका प्रयत्न होना चाहिये। तृतीय उद्देशमें—मुनि को “मैं बड़ा तपस्वी हूँ—साधु हूँ—विद्वान् हूँ—मैं बड़े कुलका हूँ” इत्यादि बड़प्पन का अहंकार न करना चाहिये; तथा सांसारिक समस्त पदार्थों के—धनादिक के यथार्थ स्वरूप का चिन्तन करते रहना चाहिये, इस अभ्यास से उसके हृदयमें उनकी असारता का पूर्ण रूपसे भान होता रहेगा जिससे उसका मन उस तरफ कभी भी लोलुप नहीं हो सकेगा। चतुर्थ उद्देश में—विषयभोगों के वास्तविक स्वरूप का विचार करने से उसके हृदय में उनके प्रति सदा

न्यां सुधी ते पृथिवीकायिकादिक ऐकेन्द्रिय जिवोना आरंभथी रहित नहि थशे त्यां सुधी ते यथार्थ संयमी जनी शकतो नथी. माटे तेना आरंभनो त्याग करवो तेनुं आवश्यक कर्तव्य छे. आ कर्तव्य तेनुं त्यारे निर्दोष रूपथी मनाशे न्यारे ते ईन्द्रियजयी थशे. अन्यथा ईन्द्रियोना शब्दादिक विषयमां लुब्ध थवाथी ते आ गुणुथी शून्य न गणुशे. आ विषयनो विशेष खुलासो करवा आ अध्ययनने छ उद्देशोमा विलकत करेल छे. (१) प्रथम उद्देशमां ऐ स्पष्ट कर्तुं छे के संयमी मुनिऐ पोताना माता-पितादिक स्वजनोमां आसक्तिभाव राखवो न जेछ ऐ. (२) भीज उद्देशमा—दीधेला संयममां कहि पणु अइयिभाव न करे पणु संयमभावमां दृढता आवती रहे ऐवो प्रयत्न होवो जेछ ऐ. (३) त्रीज उद्देशमां—मुनिऐ “हुं मोटो तपस्वी छुं. साधु छुं, विद्वान् छुं, मोटा कुलनो छुं” इत्यादि मोटापणुनो अहंकार न करवो जेछ ऐ, तथा सांसारिक समस्त पदार्थोनुं तथा धनादिकना यथार्थ स्वरूपनुं चिन्तन करता रहेवुं जेछ ऐ, आ अभ्यासथी तेना हृदयमां तेनी असारतानुं पूर्ण रूपथी लान थतुं रहेशे जेथी तेनुं मन ते तरफ कही पणु दोलुप थशे नहि. (४) चोथा उद्देशमां—विषयभोगोना वास्तविक स्वरूप विचार करवाथी

તત્ર નિશ્ચિલજીવભેદેન સકલોપાધિરહિતેનોત્તમગુણરક્ષિતેન સ્વીકૃતપશ્ચમહા-  
વ્રતેન પટ્કાયસંયમોપસ્થિતમતિના મુનિના સ્વજનાદિષુ નાભિષ્વજ્ઞો વિગ્રેય ઇતિ  
પ્રદર્શયતિ સૂત્રકારઃ—“જે ગુણે” ઇત્યાદિ.

મન, વચન ઓર કાય સે વિરતિ પરિણામ હી જગતા રહેગા । પંચમ  
ઉદ્દેશમેં—સમસ્ત પ્રકાર કે સાવચ કાર્યોં સે પરે રહનેવાલે ઉસ સંયમી કો  
અપને સ્વીકૃત સંયમયાત્રાનિર્વાહ કે લિયે, જો અપને નિમિત્ત બનાયે હુણ  
આહારપાની આદિ મેં પ્રવૃત્ત હૈં ઉનકી નેશ્રાયમેં વિહાર કરના ચાહિયે ।  
છઠ્ઠે ઉદ્દેશ મેં—લોક કે નેશ્રાય સે વિહાર કરતે હુણ મી ઉસકે મનમેં  
અપને પરિચિત અપરિચિત પરિજનોં સે મિલને કે લિયે ઉત્સુક પરિણામ  
નહોં હોના ચાહિયે, ઇન્હોં સવ વાતોં કા ઇન છહ ઉદ્દેશોં મેં વિશેષરૂપ  
સે સ્ખુલાસા કિયા જાવેગા ।

ઇસમેં સર્વપ્રથમ પ્રથમ ઉદ્દેશકા પ્રારંભ કરને કે લિયે સૂત્રકાર—જીવોં  
કે ભેદજ્ઞાનસે સમન્વિત, સકલ ઉપાધિ સે રહિત, ઉત્તમોત્તમગુણવિશિષ્ટ,  
પંચમહાવ્રતારાધક, છહકાય કે જીવોં કી રક્ષા કરને મેં દત્તાવધાન, સંયમી  
મુનિકો અપને આસજન માતાપિતાદિક મેં મમતાભાવ નહોં રાખના ચાહિયે ।  
ઇસકા વિવેચન કરતે હૈં—“જે ગુણે સે મૂલદ્વાળે” ઇત્યાદિ ।

તેના હૃદયમાં તેના પ્રતિ સદા મન-વચન અને કાયથી વિરતિપરિણામ જ જાગતો  
રહેશે. (૫) પાંચમાં ઉદ્દેશમાં—સમસ્ત પ્રકારના સાવધ કાર્યોથી દૂર રહેનાર તે સંયમીએ  
પોતાના સ્વીકૃત સંયમયાત્રા-નિર્વાહ માટે જે પોતાના નિમિત્તે બનાવેલાં આહાર-  
પાણી આદિમાં પ્રવૃત્ત છે તેની નેશ્રાયમાં વિહાર કરવો જોઈએ. (૬) છઠ્ઠા ઉદ્દેશમાં  
લોકની નેશ્રાયે વિહાર કરવા છતાં મનમાં પોતાના પરિચિત અને અપરિચિત  
પરિજનોથી મળવાને ઉત્સુકતા રાખે નહિ. આ બધી વાતોનો આ છ ઉદ્દેશોમાં—  
વિશેષ રૂપથી ખુલાસા કરવામાં આવશે.

એમાં સર્વપ્રથમ-પ્રથમ ઉદ્દેશનો પ્રારંભ કરવાને માટે સૂત્રકાર—જીવોના  
ભેદજ્ઞાનથી સમન્વિત સકળ ઉપાધિથી રહિત, ઉત્તમોત્તમગુણવિશિષ્ટ, પંચ-  
મહાવ્રતારાધક, છ કાયના જીવોની રક્ષા કરવામાં દત્તાવધાન સંયમી મુનિને પોતાના  
આસજન-માતાપિતાદિકમાં મમતાભાવ નહિ રાખવો જોઈએ. તેનું વિવેચન કરે છે  
—“જે ગુણે સે મૂલદ્વાળે” ઇત્યાદિ ।

मूलम्—जे गुणे से मूलदूठाणे, जे मूलदूठाणे से गुणे इति से गुणदूठी महया परियावेणं पुणो पुणो वसे पमत्ते, तंजहा—माया मे पिया मे भइणी मे भज्जा मे पुत्ता मे धूआ मे णहुसा मे सहि-सयण-संगंथ-संथुआ मे विविक्तुवगरणपरिवट्टणभोयण-च्छायणं मे, इच्चत्थं गढिए लोए वसे पमत्ते अहो य राओ य परितप्पमाणे कालाकालसमुदूठाई संजोगदूठी अदूठालोभी आ-लुंप्पे सहसाकारे विणिविदूठचित्ते एत्थ सत्थे पुणो पुणो ।

छाया—यो गुणः समूलस्थानं, यन्मूलस्थानं तद्गुणः, इति स गुणार्थी महता परितापेन पुनः पुनः वसति प्रमत्तः, तद्यथा—माता मे पिता मे भगिनी मे भार्या मे पुत्रा मे दुहिता मे स्नुषा मे सखिस्वजनसंग्रन्थसंस्तुता मे, विविक्तोपकरणपरिवर्तनभोजनाच्छादनं मे, इत्यर्थं गृद्धो लोको वसति प्रमत्तः अहश्च रात्रिं च परितप्यमानः कालाकालसमुत्थायी संयोगार्थी अर्थालोभी आलुम्पः सहसाकारः विनिविष्टचित्तः अत्र शस्त्रे पुनः पुनः ॥१॥

शब्दार्थ—जो मुनि छहकाय के जीवों के स्वरूप को भली-भाँति जानकर कृत कारित अनुमोदित एवं मन, वचन, कायसे उनके आरंभ का त्याग कर देता है वह अपने कर्तव्यमार्ग का ज्ञाता कहा जाता है और वही गुणस्थान एवं मूलस्थान के ज्ञानपूर्वक कषायादिरूप लोक पर विजय प्राप्त करनेवाला होता है। अथवा—अपनी बुद्धि से या दूसरे किसी के कथन से अथवा तीर्थंकरों के उपदेश से या किसी आचार्य के समीप सुनकर यह जान लेता है कि जो गुण है वही मूलस्थान है। जो मूल है वही गुणस्थान है। इसलिये वह गुणार्थी अपरिमित दुःखसे

शब्दार्थ—जे मुनि छ कायना लुवोना स्वरूपने लदी लांती नाणीने कृत-कारित अनुमोदित अने मन, वचन कायाथी तेना आरंभने त्याग करे छे ते पोताना कर्तव्य मार्गने ज्ञाता डडेवाय छे, अने ते गुणस्थान तेमज भूण स्थानना ज्ञानपूर्वक कषायादिरूप लोकपर विजय प्राप्त करनार थाय छे. अथवा—पोतानी बुद्धिथी अगर भीन डेअना कथनथी अथवा तीर्थंकरेना उपदेशथी अथवा आचार्यने समीपे सांलणीने जे नाणी दे छे डे जे गुण छे ते भूणस्थान छे, जे भूण छे ते गुणस्थान छे. भाटे ते गुणार्थी—अपरिमित दुःखथी राग-



રાગદ્વેષરૂપપ્રમત્તદશાસંપન્ન હોતા હૈ। ઇસ પ્રકાર વહ ગુણાર્થી વારંવાર વિષયમેં આસક્ત હોતા હુઆ યહ માનતા હૈ કિ-યહ મેરી માતા હૈ, યહ મેરા પુત્ર હૈ, યહ મેરી પુત્રી હૈ, યહ મેરી વહૂ હૈ, યે મેરે મિત્ર હૈ। યે મેરે માતામહ આદિ હૈ, યે મેરે સંબંધી જનોં કે સંબંધીજન હૈ, યે મેરે પરિચિત બંધુ હૈ, યે મેરે સુન્દર ઉપકરણ હૈ, યહ મેરા વિનિમય-એક વસ્તુકો બેંચકર ઉસકે પ્રાપ્ત સૂલ્ય સે સ્વરીદા હુઆ પદાર્થ હૈ, યે મેરે સ્વાને કે પદાર્થ હૈ, યે મેરે પહિરને કે કપડે હૈ। ઇસ પ્રકાર યહ જીવ ઇન પૂર્વોક્ત પદાર્થોં મેં હી પ્રમાદી બના હુઆ હૈ। ઓર ઇનકે લિયે હી રાત-દિન શારીરિક, માનસિક એવં વાચનિક અનેક કષ્ટોં કો સ્હેલતા હુઆ કાલ-અકાલકે વિચાર સે રહિત હોકર મનમાના કાર્ય કરતા રહતા હૈ। કારણ કિ યહ સંયોગ કા અભિલાષી હૈ। ઇસલિયે સબ પ્રકારસે ધનકા અભિલાષી બના હુઆ હૈ। અનુચિત માર્ગ સે ઓ ધન કે સંગ્રહ કરને મેં જરા મી સંકોચ નહીં કરતા હૈ। લોભરૂપી મહાસર્પ સે ગ્રસિત હો કર્તવ્ય ઓર અકર્તવ્ય કે જ્ઞાન સે રહિત હો કર જિસ કિસી મી રીતિસે જો ધનકા સંગ્રહ કરતા હૈ ઉસકા નામ આલુમ્પ હૈ-યહ જીવ પ્રમાદી બનકર ઇસી પ્રકાર સે ધન કે સંગ્રહ કરને મેં લવલીન હોતા રહતા હૈ। ઇસ તરહ યહ

દ્વેષરૂપપ્રમત્તદશાસંપન્ન થાય છે. આ પ્રકારે તે ગુણાર્થી વારંવાર વિષયમાં આસક્ત થઈને માને છે કે-આ મારી માતા છે. આ મારો પુત્ર છે, આ મારી પુત્રી છે, આ મારી વહુ છે, આ મારો મિત્ર છે, આ મારા માતામહ આદિ છે. આ મારા સંબંધીજનોના સંબંધીજન છે, આ મારા પરિચિત બંધુ છે, આ મારા સુન્દર ઉપકરણ છે, આ મારો વિનિમય-એક વસ્તુને વેચીને તેની કિંમતથી ખરીદેલી વસ્તુ-છે, આ મારો ખાવાનો પદાર્થ છે, આ મારા પહેરવાના કપડા છે. આ પ્રકારે આ જીવ આવા પૂર્વોક્ત પદાર્થોમાં જ પ્રમાદી બનેલો છે, અને તેના માટે જ રાત્રિન, શારીરિક, માનસિક અને વાચનિક અનેક કષ્ટોને ઉઠાવતો કાળ અકાળના વિચારથી રહિત થઈને મનમાન્યુ કાર્ય કરવા લાગે છે, કારણ કે તે સંયોગનો અભિલાષી છે. તેથી બધા પ્રકારથી ધનનો અભિલાષી બની રહે છે. આ અનુચિત માર્ગથી પણ ધનનો સંગ્રહ કરવામાં જરા પણ સંકોચ કરતો નથી. લોભરૂપી મહાસર્પથી ગ્રસિત હોઈને કર્તવ્ય અકર્તવ્યના જ્ઞાનથી રહિત થઈને કોઈ પણ રીતે જે ધનનો સંગ્રહ કરે છે તેનું નામ આલુમ્પ છે. આ જીવ પ્રમાદી બનીને આ પ્રકારથી ધનનો સંગ્રહ કરવામાં રચ્યો પચ્યો રહે છે, આ

ટીકા—અસ્યાધ્યયનસ્ય અનન્તરપરમ્પરસૂત્રૈરિત્થં સમ્બન્ધઃ—અનન્તરસૂત્રસમ્બન્ધો યથા—ષટ્કાયસ્વરૂપં સમ્યગ્જ્ઞાત્વા ત્રિકરણત્રિયોગેન તદારમ્ભં પરિત્યજતિ સ મુનિઃ પરિજ્ઞાતકર્મા ભવતિ, સ એવ ચ ગુણમૂલસ્થાનજ્ઞાનપૂર્વકં કષાયાદિલોકવિજયી ભવતિ । પરમ્પરસૂત્રસમ્બન્ધો યથા—સ્વબુદ્ધ્યા પરવ્યાકરણેન તીર્થઙ્કરોપદેશાદન્યેષાં અપને હિત ઔર અહિત કા કુછ મી વિચાર ન કર સહસાકર્મકારી હો જાતા હૈ ઇસ પ્રકાર યહ શબ્દાદિવિષયોં મેં આસક્તચિત્ત હો ઉનકે રક્ષણકે સાધનોંકો સંગ્રહ કરનેકે લિયે અપને હિત ઔર અહિત કે વિવેક સે વિકલ બન રાત-દિન છહકાયકે જીવોંકે ઉપમર્દન કરનેમેં હી બારમ્બાર પ્રવૃત્તિ કરતા રહતા હૈ ।

ટીકાર્થઃ—ઇસ અધ્યયન કા અનન્તર ઔર પરમ્પર સૂત્રોંસે સંબંધ હૈ—ઉસમેં અનન્તર સૂત્રોંકા સંબંધ ઇસ પ્રકાર હૈ—જો મુનિ છહકાય કે જીવોં કા સ્વરૂપ અચ્છી તરહ જાનકર કૃત કારિન ઔર અનુમોદિત એવં મન, વચન ઔર કાયસે ઉનકે આરંભ કા ત્યાગ કર દેતા હૈ વહી અપને કર્તવ્ય કો નિર્દોષ રીતિસે પાલતા હૈ, ઔર વહી અપને તપસંયમ મેં પૂર્ણરૂપ સે નિષ્ણાત બન જાતા હૈ । એસા વહ સંયમી જન ગુણસ્થાન ઔર મૂલસ્થાન કો જાનતા હુઆ કષાયાદિકરૂપ લોક પર વિજય પ્રાપ્ત કરને વાલા હો જાતા હૈ । પરમ્પર સૂત્રોંસે ઇસ અધ્યયન કા સંબંધ ઇસ પ્રકાર હૈ—વહ સંયમી જન અપની બુદ્ધિ સે યા દૂસરોં કે કથન સે અથવા તીર્થકર

રીતે પોતાના હિત અને અહિતનો જરા પણ વિચાર ન કરતાં સહસા કર્મકારી થઈ જાય છે. તેવી જ રીતે તે શબ્દાદિ વિષયોમાં આસક્ત ચિત્ત કરીને તેના રક્ષણને માટે રક્ષણના સાધનોનો સંગ્રહ કરવામાં પોતાના હિતાહિતનો વિચાર કર્યા વગર વ્યાકુળ રાતદિવસ છકાયના જીવોનું ઉપમર્દન ( ઘાત ) કરવામાં જ વારંવાર પ્રવૃત્તિ કરે છે.

ટીકાર્થઃ—આ અધ્યયનનો અનન્તર અને પરમ્પર સૂત્રોથી સંબંધ છે. તેમાં અનન્તર સૂત્રોના સંબંધ આ પ્રકાર છે:—

જે મુનિ છકાયના જીવોનું સ્વરૂપ સારી રીતે જાણીને કૃત કારિત અને અનુમોદિત તેમજ મન, વચન, કાયથી તેના આરંભનો ત્યાગ કરે છે, તે પોતાના કર્તવ્યને નિર્દોષ રીતિથી પાળે છે, અને તે પોતાના તપસંયમમાં પૂર્ણરૂપથી નિષ્ણાત બને છે. એવો તે સંયમીજન ગુણસ્થાન અને મૂળસ્થાનનો જાણકાર કષાયાદિકરૂપ લોકપર વિજય પ્રાપ્ત કરવાવાળા હોય છે. પરમ્પર સૂત્રોમાં આ અધ્યયનનો સંબંધ આ પ્રકાર છે—તે સંયમીજન પોતાની બુદ્ધિથી અગર બીજાના કથનથી અથવા તીર્થકર પ્રભુના ઉપદેશથી અથવા બીજા કોઈ આચાર્યની પાસેથી

વા કેવાશ્ચિદાચાર્યાદીનાં સમીપે ગત્વા જાનીયાત્ । કિં તદિત્યાહ ‘જે ગુણે’  
 इत्यादि । यो गुणः । गुण्यते=आवर्त्यते-चतुर्गतिषु गमनागमनादिरूपेण परिणम्यते  
 આત્માઽનેનેતિ ગુણઃ ।

પ્રભુ કે ઉપદેશ સે યા અન્ય કિસી આચાર્ય કે સમીપ સુનકર યહ જાન  
 લેતા હૈ કિ જો ગુણ હૈ વહી સૂલસ્થાન હૈ इत्यादि । चार गतियों-नरकगति,  
 तिर्यञ्चगति, मनुष्यगति और देवगति-में गमन और आगमन रूप से  
 આત્મા જિસકે દ્વારા ઞ્રમણ કરતા હૈ ઉસકા નામ ગુણ હૈ । ઇસ ગુણ  
 શબ્દકા વાચ્યાર્થ-શબ્દાદિક વિષય હોતા હૈ । યહ પ્રત્યેક ઇન્દ્રિયકા  
 અપના-અપના સ્વતંત્ર ગુણ હૈ ।

જો મુનિ છહકાય કે જીવોં કે સ્વરૂપ કો અપને આપ યા કિસી  
 કે ઉપદેશ સે જાનકર છકાય કે આરંભ સે વિરત હોતા હૈ વહ  
 મુનિ અપને અંગીકૃત સંયમ કા નિર્દોષ રીતિ સે પાલન કરને વાલા હોનેસે  
 કુશલ માના જાતા હૈ । છકાય કે આરંભ સે નિવૃત્તિ તવ તક સંભવ  
 નહીં હો સકતી કિ જવ તક વહ પંચેન્દ્રિયોં કે વિષયોં મેં-ચાહે વે મનોજ્ઞ  
 હોં ચાહે અમનોજ્ઞ-રાગદ્વેષ કરને કા ત્યાગ નહીં કરે, અતઃ યહ નિશ્ચિત  
 હૈ કિ છહકાય કે આરંભ કા ત્યાગ, પંચેન્દ્રિયોં કે વિષયોં મેં રાગદ્વેષ કે  
 ત્યાગ કરને સે હી હોતા હૈ । ઇન્કે વિષયોં મેં લોલુપી ઉન્કે આરંભ કા

સાંભળી એવું જાણે છે કે ‘જે ગુણ છે તે મૂળસ્થાન છે’ इत्यादि. चार गतिओ  
 नरकगति, तिर्यञ्चगति, मनुष्यगति અને देवगतिमां गमन અને आगमनरूपથી  
 આત્મા જે દ્વારા ઞ્રમણ કરે છે તેનું નામ ગુણ છે. આ ગુણ-શબ્દનો વાચ્યાર્થ  
 (મુખ્ય અર્થ) શબ્દાદિક વિષય થાય છે. તે પ્રત્યેક ઇન્દ્રિયને પોતપોતાનો  
 સ્વતંત્ર ગુણ છે.

જે મુનિ છ કાયના જીવોના સ્વરૂપને પોતાની જાતે, અગર ખીજના  
 ઉપદેશથી જાણીને છ કાયના આરંભથી વિરત થાય છે, તે મુનિ પોતાના  
 અંગીકૃત સંયમનું નિર્દોષ રીતિથી પાલન કરનાર હોવાથી કુશળ માનવામાં આવે  
 છે. જ્યાં સુધી પાંચ ઇન્દ્રિયોના વિષયો જે મનોજ્ઞ કે અમનોજ્ઞ હોય તેમાં રાગ  
 દ્વેષ રાખે ત્યાં સુધી છ કાયના આરંભથી નિવૃત્તિ થતી નથી. તેથી તે નિશ્ચિત  
 છે કે-છકાયના આરંભનો ત્યાગ પાંચ ઇન્દ્રિયોના વિષયોમાં રાગ દ્વેષનો ત્યાગ  
 કરવાથી જ થાય છે. તેના વિષયોમાં મગ્ન રહેનાર તેના આરંભનો ત્યાગ કરી  
 શકતા નથી.

યદ્વા ગુણ્યતે=વિશિષ્યતે નિશ્ચયનયેન શુદ્ધસ્વરૂપોઽપ્યાત્મા નરામરતિર્યગાદિ-  
ભેદેન ભિદ્યતે યેનેતિ ગુણઃ-શબ્દાદિરૂપઃ કામગુણઃ । સ એવ મૂલસ્થાનમ્ ।

મૂલસ્થાનપદસ્ય વ્યુત્પત્તિભેદેન વહ્વોઽર્થા ભવન્તિ । યથા-મૂલં=મોહનીયં

ત્યાગ નહીં કર સકતા-“ ન યારંભો વિના વહા-ન ચારમ્ભો વિના વધાત્ ”  
ઇસ વાક્ય કે અનુસાર વિના હિંસા કે આરંભ નહીં હોતા-જહાં હિંસા હૈ  
વહાં સર્વ પ્રકારસે સંયમ કા આરાધન નહીં હૈ । અતઃ નિર્દોષ સંયમ કો  
પાલને કે લિયે છહકાય કે જીવોં કે આરંભ કરનેકા ત્યાગ અવશ્યર  
કરના પડતા હૈ ।

ગુણ શબ્દકા અર્થ-શબ્દાદિક વિષય હૈ, ક્યોંકિ इन्होंने सेवन  
સે યહ આત્મા ચતુર્ગતિરૂપ સંસાર મેં ભટકતા ફિરતા હૈ । આના-જાના  
યહી તો એક બડા ભારી ગમનાગમન કા ચક્કર ઇસ જીવ કે પીછે પડા  
હુઆ હૈ । કમી નરકમેં જાકર રોતા હૈ તો કમી માનવપર્યાય કી પ્રાપ્તિ  
સે વિષયભોગોમેં અપને જન્મ કો નિષ્ફલ કર દેતા હૈ, કમી સ્વર્ગમેં  
જાકર વહાં કી દિવ્ય ક્ષદ્ધિ આદિ પાકર ઇઠલાતા ગર્વિષ્ઠ હોતા હૈ, તો  
કમી પશુપર્યાય મેં જાકર બિલખતા હૈ ।

યહી વાત-“ યો ગુણઃ ” ઇન શબ્દોસે સૂત્રકારને પ્રકટ કી હૈ ।

મૂલસ્થાન શબ્દકા અર્થ પ્રકટ કરને કે લિયે ટીકાકાર કહતે હૈં કિ  
મૂલસ્થાન શબ્દ કે વ્યુત્પત્તિ કે ભેદ સે અનેક અર્થ હોતે હૈં, જૈસે-“ મૂલં

“ ન યારંભો વિના વહા ” ન ચારમ્ભો વિના વધાત્ ”

આ વાક્ય અનુસાર હિંસા વિના આરંભ થતો નથી. જ્યાં હિંસા છે ત્યાં  
સર્વ પ્રકારથી સંયમનું આરાધન નથી, માટે નિર્દોષ સંયમ પાળવામાં છકાય  
જીવોનો આરંભ કરવાનો ત્યાગ અવશ્યર કરવો પડે છે.

ગુણ શબ્દનો અર્થ-શબ્દાદિક વિષય છે, કારણ કે તેના સેવનથી આ  
આત્મા ચતુર્ગતિરૂપ સંસારમાં ભટકતો ફરે છે. જાવું-આવું એ તો એક ભારી  
ગમનાગમનનું ચક્કર આ જીવના પાછળ પડ્યું છે. કેઈ વખત નરકમાં જઈ  
રહે છે તો ક્યારેક માનવપર્યાયની પ્રાપ્તિથી વિષયભોગોમાં પોતાના જન્મને  
નિષ્ફળ કરે છે. ક્યારેક સ્વર્ગમાં જઈ ત્યાંની દિવ્યક્ષદ્ધિ આદિ જોઈને ગર્વિષ્ઠ  
થાય છે ક્યારેક પશુપર્યાયમાં જઈ રહે છે.

આ વાત-“ યો ગુણઃ ” આ શબ્દોથી સૂત્રકારે પ્રકટ કરી છે. મૂળસ્થાન  
શબ્દનો અર્થ પ્રકટ કરવાને ટીકાકાર કહે છે કે-મૂળસ્થાન શબ્દના વ્યુત્પત્તિના  
લેક્ષથી અનેક અર્થ થાય છે. જેમ-“ મૂલં સંસારસ્તસ્ય સ્થાનમાશ્રયઃ કારણમ્ ”

તસ્ય સ્થાનમાશ્રયઃ । અથવા સંસારસ્ય મૂલભૂતત્વાન્મૂલમિવ મૂલં કારણં જ્ઞાના-  
વરણાદિરૂપમષ્ટવિધં કર્મ, તસ્ય સ્થાનમાધારઃ । યદ્વા મૂલમિતિ નરામરનારકતિર્ય-  
ગ્લક્ષણસ્ય સંસારસ્ય કારણં કષાયાસ્તેષાં સ્થાનમાશ્રયો મૂલસ્થાનમ્, યતો મનો-  
જ્ઞામનોજ્ઞશબ્દાદિપ્રાપ્તૌ કષાયાણામુદયો ભવતિ તેન સંસાર ઇતિ ।

યદ્વા ‘મૂલ’-મિતિ પ્રધાનં, ‘સ્થાન’-મિતિ કારણં, મૂલં ચ તત્સ્થાનં ચેતિ,  
મૂલસ્થાનં, શબ્દાદિક એવ કામગુણઃ, કષાયા વા પ્રધાનં કારણં સંસારસ્ય ભવતી-  
ત્યાશયઃ ।

સંસારસ્તસ્ય સ્થાનમાશ્રયઃ કારણમ્” અર્થાત-મૂલ નામ સંસાર કા હૈ  
સ્થાન નામ કારણ કા હૈ-સંસાર કે જો કારણ હૈં उनका नाम मूलस्थान  
है । वे शब्दादिक विषय अथवा कषाय हॆं । अथवा-मूल-मोहनीय कા જો  
સ્થાન-આશ્રય હૈ उसका नाम मूलस्थान है । अथवा-संसारका मूल स्वरूप  
होनेसे मूलके जैसा जो है, वह मूल है-ज्ञानावरणादिक आठ प्रकार के  
पौद्गलिक कर्मोंका नाम मूल है और उसका जो आधार है उसका नाम  
मूलस्थान है । अथवा-मूल नाम-मनुष्यगति, देवगति, तिर्यग्गति और  
नरकगतिरूप संसारके कारणभूत कषायोंका भी है, उनके अधार क  
नाम मूलस्थान है, वे शब्दादिक विषय हॆं, क्योंकि मनोज्ञ और अमनोज्ञ  
शब्दादिक विषयोंकी प्राप्ति होने पर कषायोंका उदय होता है और इसीसे  
जीवको संसार की प्राप्ति होती है ।

પ્રધાન કારણકો મી મૂલસ્થાન કહતે હૈં, સંસાર કે પ્રધાન કારણ  
શબ્દાદિક વિષય અથવા કષાય હૈં ।

અર્થાત્ મૂળ નામ સંસારનું છે સ્થાન નામ કારણનું છે. સંસારનું જે કારણ છે  
તેનું નામ મૂળસ્થાન છે. તે શબ્દાદિક વિષય અથવા કષાય છે, અથવા મૂળ-  
મોહનીયનું જે સ્થાન-આશ્રય છે તેનું નામ મૂળસ્થાન છે, અથવા સંસારનું  
મૂળ સ્વરૂપ હોવાથી મૂળના જેવું છે, તે મૂળ છે. જ્ઞાનાવરણાદિક આઠ પ્રકારના  
પૌદ્ગલિક કર્મોનું નામ મૂળ છે, અને તેનો જે આધાર છે તેનું નામ મૂળસ્થાન  
છે. અથવા મૂળ નામ, મનુષ્યગતિ, દેવગતિ, તિર્યગ્ગતિ અને નારકગતિરૂપ  
સંસારના કારણભૂત કષાયો પણ છે, તેના આધારનું નામ મૂળસ્થાન છે, તે  
શબ્દાદિક વિષય છે કારણ કે મનોજ્ઞ અને અમનોજ્ઞ શબ્દાદિક વિષયોની પ્રાપ્તિ થવાથી  
કષાયોનો ઉદય થાય છે, અને તેથી જીવને સંસારની પ્રાપ્તિ થાય છે.

પ્રધાન કારણને પણ મૂળસ્થાન કહે છે. સંસારનું પ્રધાન કારણ શબ્દાદિક  
વિષય અથવા કષાય છે,

ગુણ-મૂલ-સ્થાનયોઃ પરસ્પરમપેક્ષા વર્તતે યથા-યો ગુણઃ સ મૂલસ્થાનં, યન્મૂલ-સ્થાનં તદ્ ગુણ ઇતિ તદુપાત્તાનાં વિષયકષાયાદીનામણ્ડપક્ષિવદ્ અનાદિઃ કાર્યકારણ-ભાવો યથા-પક્ષિતોઽણ્ડમ્, અણ્ડાચ્ચ પક્ષી સંજાયતે । એવમેવ મૂલસ્થાનાદુણો, ગુણાચ્ચ મૂલસ્થાનમિતિ ।

અત્ર ચ સપ્તમ્યન્તપાઠમાશ્રિત્યેવં યોજના—યો ગુણે ગુણેષુ વા વર્તતે સ મૂલ-સ્થાને મૂલસ્થાનેષુ વા વર્તતે, યથાત્મા શબ્દાદિકે કામગુણે વર્તતે સ એવ સંસાર-મૂલે કષાયાદિસ્થાને વર્તતે—ઇતિ, એવં દર્શિતરીત્યા ગુણમૂલસ્થાનાનાં કાર્યકારણ-

ગુણ ઓર મૂલસ્થાન, इनकी परस्पर में अपेक्षा है, इस बातको प्रकट करने के लिये “यो गुणः स मूलस्थानं, यन्मूलस्थानं तद् गुणः” यह वाक्य भगवान् ने कहा है । जिस प्रकार पक्षी से अण्डा पैदा होता है और अण्डासे पक्षी पैदा होता है उसी प्रकार मूलस्थान से गुण और गुणसे मूलस्थान होता है । इनका यह परस्पर कार्य-कारणभाव अनादि कालका है । पंचेन्द्रिय के विषयोंसे जीवको कषायभाव और कषायभावसे पंचेन्द्रियोंके विषयका ग्रहण होता है । “जे गुणे से मूलद्वारे ” इस वाक्यमें “ जे ” की छाया “ यः ” मानकर “ गुणे ” को सप्तमी विभक्तिका एक-वचन मानकर इस प्रकारसे भी अर्थ किया जा सकता है कि जो गुणमें स्थित है वह मूल स्थानमें स्थित है । अर्थात्—जो आत्मा शब्दादिक पांच इन्द्रियोंके विषय में लवलीन है वही आत्मा संसारके मूल कारण कषायादि स्थानमें लवलीन है । इस प्रकार इस पद्धति से गुण और मूल स्थानोंका परस्परमें सूत्रकारने कार्य-कारणभाव प्रकट किया है । “ इति ” शब्द

ગુણ અને મૂળસ્થાન, એની પરસ્પરમાં અપેક્ષા છે, આ વાતને પ્રગટ કરવાને માટે “યો ગુણઃ સ મૂલસ્થાનં યન્મૂલસ્થાનં તદ્ ગુણઃ ” આ વાક્ય લગવાને કહ્યું છે—જે પ્રકારે પક્ષીથી ઇંડુ પેદા થાય છે અને ઇંડીથી પક્ષી પેદા થાય છે તે પ્રકાર મૂળસ્થાનથી ગુણ અને ગુણથી મૂળસ્થાન થાય છે. તેનો પરસ્પર કાર્ય-કારણ ભાવ અનાદિ કાળનો છે. પાંચ ઇન્દ્રિયોના વિષયોથી જીવને કષાયભાવ અને કષાયભાવથી પાંચ ઇન્દ્રિયોનો વિષય ગ્રહણ થાય છે. “જે ગુણે સે મૂલદ્વારે ” આ વાક્યમાં “ જે ” ની છાયા “ યઃ ” માનીને “ ગુણે ” ને સપ્તમી વિભક્તિનું એકવચન માનીને આ પ્રકારે પણ અર્થ થાય છે કે જે ગુણમાં સ્થિત છે તે મૂળસ્થાનમાં સ્થિત છે. અર્થાત્ જે આત્મા શબ્દાદિક પાંચ ઇન્દ્રિયોના વિષયમાં રહેલો છે તે આત્મા સંસારનું મૂળ કારણ કષાયાદિ સ્થાનમાં રહેલો છે. આ પ્રકારે આવી પદ્ધતિથી ગુણ અને મૂળસ્થાનનો પરસ્પરમાં સૂત્રકારે કાર્યકારણ-



ભાવો વર્ણિતઃ । “યો ગુણઃ સ મૂલસ્થાનં, યન્મૂલસ્થાન તદ્ ગુણઃ” —ઇત્યનેન કિમા-  
યાતમિત્યાહ—“ઇતિ સ ગુણાર્થી” ઇતિ ।

ઇતિર્હેતૌ, યતો હિ સંસારસ્થાઃ સર્વેઽપિ પ્રાણિનો ગુણાર્થિનઃ સન્તિ, અનાદિકાલત  
આત્મનો મોહાવેશેનાવેષ્ટિતત્વાત્, અતઃ સ ગુણાર્થી કષાયાદિમૂલસ્થાને વર્તતે ।  
ગુણસ્ય=શબ્દાદિગુણસ્ય અર્થઃ=પ્રયોજનં યસ્ય સ ગુણાર્થી । યદ્વા-ગુણે=શબ્દાદૌ  
અર્થોઽનુરાગો યસ્ય સ ગુણાર્થી । સર્વો હિ પ્રાણિગણઃ પ્રાયશઃ કામગુણાર્થી ભવતિ ।  
શબ્દાદિગુણગણસ્યાલાભે તં મુહુરિચ્છતિ, સમ્પ્રાપ્તસ્ય નાશે ચ શોકાવિષ્ટો ભવતિ ।  
મહતા=અપરિમિતેન પરિતાપેન=માનસિકકાચિકવાચિકેન દુઃસ્વેન પ્રમત્તઃ, પ્રમાદોઽત્ર  
રાગદ્વેષરૂપસ્તદ્વાન્ પ્રાણી વિષયેષુ રાગાધિક્યેન પ્રવર્તતે, ઇષ્ટવિષયાપ્રાપ્તાવિષ્ટોપગમે

હેત્વર્થ મેં હૈ—ઉસકા અભિપ્રાય યહ હૈ—સંસાર કે સમસ્ત પ્રાણી ગુણાર્થી  
હૈ, ક્યોંકિ યે અનાદિકાલ સે હી મોહ કે આવેશ સે યુક્ત હૈ, ઇસલિયે  
ગુણાર્થી આત્મા-કષાયાદિ મૂલસ્થાન મેં સ્થિત હી હૈ, શબ્દાદિક પાંચઇન્દ્રિયોં  
કા વિષય જિસકા પ્રયોજન હૈ વહ, અથવા શબ્દાદિક વિષયોં મેં જિસે  
અનુરાગ હૈ વહ ગુણાર્થી હૈ । પ્રાયઃ સાંસારિક સમસ્ત પ્રાણી શબ્દાદિક  
વિષયોં કા પ્રાર્થી હોતા હૈ ઉનકે નહીં મિલને પર ઉન્હેં પ્રાપ્ત કરનેકી વહ  
વાર ૨ ચેષ્ટા કરતા રહતા હૈ । મિલને પર વે નષ્ટ ન હો જાવેં—ઇસ પ્રકાર  
કા વહ પ્રયત્ન મી કરતા રહતા હૈ । યદિ પ્રાપ્ત હુએ વે નષ્ટ હો જાતે હૈ—તો  
ઉનકે અભાવ મેં અત્યંત શોકાકુલ વહ માનસિક વાચિક ઔર કાચિક  
કષ્ટોં કો ફેલતા હૈ । સત્ય હૈ, પ્રમત્ત-રાગદ્વેષાવિષ્ટ આત્મા વિષયોં મેં  
રાગકી અધિકતા સે હી તો પ્રવૃત્તિ કરતા હૈ । તથા ઇષ્ટ વસ્તુકે નહીં પ્રાપ્ત  
હોને પર અથવા પ્રતિકૂલ વસ્તુ કે મિલને પર ઉસ વિષયસે દ્વેષ કરતા

ભાવ પ્રકટ કર્યો છે. “ઇતિ” શબ્દહેત્વર્થમાં છે. તેનો અભિપ્રાય એ છે—સંસારના  
સમસ્ત પ્રાણી ગુણાર્થી છે, કારણ કે તે અનાદિકાળથી મોહના આવેશથી યુક્ત છે  
માટે ગુણાર્થી આત્મા કષાયાદિ મૂલસ્થાનમાં સ્થિત જ છે, શબ્દાદિક પાંચ ઇન્દ્રિ-  
યોનો વિષય જેનું પ્રયોજન છે તે, અથવા શબ્દાદિક વિષયોમાં જેને અનુરાગ છે  
તે ગુણાર્થી છે. સાંસારિક સમસ્ત પ્રાણી શબ્દાદિક વિષયોના પ્રાર્થી થાય છે, તેના  
અભાવમાં તેની પ્રાપ્તિ માટે વારંવાર ચેષ્ટા કરતાં જ રહે છે. મળવાથી ફરી તેનો  
નાશ ન થાય તેનો પ્રયત્ન કરતા રહે છે. કદાચ પ્રાપ્ત થયેલાઓનો નાશ થાય  
તો તેના અભાવમાં તે અત્યંત શોકાકુળ બને છે, અને માનસિક વાચિક અને  
કાચિક કષ્ટોને ભોગવે છે. સત્ય છે, પ્રમત્ત રાગદ્વેષાવિષ્ટ આત્મા વિષયોમાં રાગની  
અધિકતાથી જ પ્રવૃત્તિ કરે છે, તથા ઇષ્ટ વસ્તુ પ્રાપ્ત નહિ થવાથી અથવા પ્રતિકૂળ

ચ તં વિષયં દ્વેષ્ટિ । એવંવિધઃ સંસ્ત્ર પુનઃ પુનઃ=વારં વારં વસતિ=વિપયાસત્ત્યા  
તિષ્ઠતિ, મૂર્ચ્છિતો ભવતીત્યર્થઃ । રાગદ્વેષો હિ યત્ર યત્ર પ્રાયશો ભવતસ્તત્તદર્શયતિ ।  
તદ્વથા—“માતા મે પિતા મે ” ઇત્યાદિ ।

‘ઇયં મે માતા, અયં મે પિતા’ એવંરૂપો માતરિ પિતરિ ચ રાગસ્તુ સંસારે-  
નાદિકાલતો મોહનીયસદ્ભાવાદ્ બાલ્યાવસ્થાયાં લાલનપાલનાદિકારકત્વાચ્ચોપ-  
જાયતે । રાગાવિષ્ટવેતા હિ ચિન્તયતિ—કથં મયિ જીવતિ સતિ મે માતા-પિતરૌ  
ક્ષુત્પિપાસાદિકં દુઃસ્વમનુભવતઃ—ઇતિ, ઇત્થં વિચિન્ત્ય બહુપ્રાણિસંહારજનિતપાપવાન્  
કૃષિવાણિજ્યસેવાદિરૂપાં વૃત્તિં સ્વીકરોતિ । સમુદ્રમપિ દુરુલ્લઙ્ગં ગોષ્પદં મન્વાનો દ્વીપા-  
દ્વીપાન્તરં પરિભ્રમતિ । અકાર્યશતમપિ કરોતિ । અહો કીદૃશં રાગસ્ય સામ્રાજ્યમ્ ? ।

હૈ । ઇસ પ્રકાર વહુ ડન વિષયોં મેં આસક્તિ-પરિણામ સે હી પ્રવૃત્તિ કરતા  
રહતા હૈ । સંસારી જીવોં કે રાગ ઓર દ્વેષ કે વિષયભૂત પદાર્થોં કો સૂત્રકાર  
સ્પષ્ટ કરતે હુએ કહતે હૈ—“માતા મે” ઇત્યાદિ । યહ મેરી માતા હૈ, યહ મેરા  
પિતા હૈ, ઇસ પ્રકાર કા ડનમેં ઇસ જીવ કો જો રાગ હોતા હૈ ડસકા પ્રધાન  
કારણ મોહ હૈ, વહુ મોહ ઇસ સંસારમેં અનાદિકાલ સે ઇસ જીવ કે સાથ  
લગા હુઆ હૈ । તથા દૂસરા કારણ બાલ્યાવસ્થા મેં ડન્હોંને ઇસકા પાલન  
પોષણ ક્રિયા હૈ । રાગાવિષ્ટ યહ જીવ સદા યહી વિચારતા રહતા હૈ કિ મેરે  
જીતે-જી મેરે માતા-પિતા કમી મી ખૂસ્વ પ્યાસ આદિ સે જનિત દુઃખોંકા  
અનુભવ ન કરેં । ઇસ ડ્યાલસે વહુ કૃષિ, વાણિજ્ય આદિ અનેક આરંમોં  
કો કરતા હૈ, જિસસે હિંસાદિજન્ય અનેક પાપોંકા સંચય કરતા  
રહતા હૈ, દુરુલ્લંઘ્ય સમુદ્રકો મી પારકર ઇક દ્વીપસે દૂસરે દ્વીપોંમેં જાકર

વસ્તુ મળવાથી તે વિષયમાં દ્વેષ કરે છે. આ પ્રકારે તે આવા વિષયોમાં આસક્તિ-  
પરિણામથી પ્રવૃત્તિ કરે છે. સંસારી જીવોના રાગ અને દ્વેષના વિષયભૂત પદાર્થોને  
સૂત્રકાર સ્પષ્ટ કરે છે અને કહે છે—“માતા મે” ઇત્યાદિ. આ મારી માતા છે,  
આ મારા પિતા છે. આ પ્રકારે જીવને જે રાગ થાય છે તેનું પ્રધાન કારણ મોહ  
છે. આ મોહ આ સંસારમાં અનાદિ કાળથી જીવની સાથે લાગેલો છે. તથા ખીનું  
કારણ બાલ્યાવસ્થામાં તેણે તેનું પાલન કર્યું છે. રાગાવિષ્ટ આ જીવ હમેશાં  
એ જ વિચારતો રહે છે કે મારા માતા પિતા મારા જીવતાં કેઈ વખત પણ  
ભૂખ તરસથી દુઃખી ન થાય. આવા ખ્યાલથી તે કૃષિ, વાણિજ્ય, આદિ અનેક  
આરંભ કરે છે જેનાથી હિંસાદિજન્ય અનેક પાપોનો સંચય કરે છે. દુરુલ્લંઘ્ય  
સમુદ્રને આળંગીને એક દ્વીપથી બીજા દ્વીપોમાં જઈ વ્યાપાર ધંધા નિમિત્તે



“મગિની મે માર્યા મે પુત્રા મે દુહિતા મે સ્તુષા મે” । ઇતિ ।

મગિની=સ્વસા, સા મે=મમ, અસ્યાં રાગકારણં તુ સમાનમાતાપિતૃજત્વમ્ । માર્યાયાં રાગસ્તુ યાવજ્જીવં સ્વાનુકૂલ્યેન વર્તનશીલત્વાત્ । પુત્રે ચ રાગકારણં સેવા-  
દિકાર્યપ્રવર્તકત્વમ્ । સ્તુષા=પુત્રવધૂઃ તસ્યાશ્ચ રાગકારણં સકલગૃહકાર્યસમ્પા-  
દકત્વમ્, પુત્રાદ્યુત્પાદનદ્વારા પૌત્રાદિસુખાદ્યનુભવકર્તૃત્વશ્ચ । ચેતસિ ચ મૂઠો  
વિચિન્તયતિ—કદા મે પુત્રો ભવિતા, કદા મદીયમઢ્ઢમલઢ્ઢરિણ્યતિ । જાતે પુત્રે ચ  
કથમયં વિદ્યાધનાદિકં પ્રાપ્સ્યતિ । પત્ની કદા માં સુખિતા આનન્દયિણ્યતિ । કદા  
મે દુહિતા દૌહિત્રં જનયિણ્યતિ, શ્વશુરકુલે ધનાદિકં પ્રાપ્સ્યતિ ન વેતિ । તદર્થં ચાનેક-  
વ્યાપાર ધંધા કે નિમિત્ત ભ્રમણ કરતા હૈ । પૈસા કમાને કે લિયે અનેક  
અકાર્ય ળી કર ઢાલતા હૈ । દેસ્વો રાગકા સામ્રાજ્ય કૈસા આશ્ચર્યકારી હૈ ।

યહ મેરી બહિન, ઇસ પ્રકાર ડસમેં રાગકા કારણ ઁક આતા-પિતાસે ઉત્પન્ન  
હોના હૈ । સ્ત્રીમેં રાગકા હેતુ યહ હૈ કિ—જીવન ભર તક વહ અપને અનુકૂલ  
પ્રવૃત્તિ કરતી હૈ । પુત્રમેં રાગ હોનેકા કારણ યહ હૈ કિ વહ રાતદિન સેવાદિ  
કાર્યમેં તલ્લીનતા રખતા હૈ । પુત્રીમેં ળી—યહ અપનેસે પૈદા હુઈ યહી રાગકા  
કારણ હૈ । સમ્પૂર્ણ ઘરકે આરકો સંમાલને તથા પુત્રાદિકોં કો ઉત્પન્ન કરને  
દ્વારા પૌત્રાદિસુખકા અનુભવ કરાનેસે પુત્રવધૂ મેં રાગ હોતા હૈ । પુત્ર-કલ-  
ત્રાદિ મેં મહામૂઢ બનકર યહ જીવ વિચારતા હૈ—મેરે પુત્ર કબ હોગા, કબ  
મેરી ગોદી કો વહ સુશોભિત કરેગા, કૈસે વહ વિદ્યાધ્યયન ઁવં ધનાદિક  
પ્રાપ્ત કરેગા, મેરી સ્ત્રી કબ સુઝે સ્વયં સુખ ચૈન ળોગતી હુઈ આનંદિત  
કરેગી । મેરી પુત્રી કબ દોહિતે કો જન્મ દેગી, વહ અપને શ્વશુરગૃહ મેં

ભ્રમણ કરે છે. પૈસા કમાવા માટે અનેક અકાર્ય પણ કરે છે. બુવો! રાગનું  
સામ્રાજ્ય કેવું આશ્ચર્યકારી છે ?

આ મારી બહેન છે, ઁ પ્રકારના રાગનું કારણ ઁક માતા-પિતાથી ઉત્પન્ન  
થવું તે. સ્ત્રીમાં રાગનું કારણ, જીવનભર તે પોતાના અનુકૂળ પ્રવૃત્તિ કરે છે.  
પુત્રમાં રાગનું કારણ તે રાતદિવસ સેવાદિ કાર્યમાં તલ્લીનતા રાખે છે. પુત્રીમાં  
પણ રાગનું કારણ પોતાથી પેદા થઈ છે માટે. સંપૂર્ણ ઘરનો ભાર સંભાળવામાં  
તથા પુત્રાદિકોની ઉત્પત્તિ દ્વારા પૌત્રાદિસુખનો અનુભવ કરાવવાથી પુત્રવધુમાં રાગ  
પેદા થાય છે. પુત્રકલત્રાદિમાં મહામૂઢ બનીને આ જીવ વિચારે છે કે—મારે પુત્ર  
ક્યારે થશે, ક્યારે મારી ગોદીમાં તે બેસીને મને સુશોભિત કરશે, કેવી રીતે તે  
વિદ્યાધ્યયન તેમજ ધનાદિક પ્રાપ્ત કરશે. મારી સ્ત્રી ક્યારે તેણી સુખચેન ભોગવતી  
મને આનંદિત કરશે. ક્યારે મારી પુત્રી દોહિતને જન્મ આપશે, તેણીના

સાવધાનુષ્ઠાનપરાયણો ભવતિ । असौ ममकारमहाग्रहगृहीतस्वान्तो नितान्तं परित-  
पति । रागान्धो हि रागग्राहग्रहिलः परमरमणीयमपि सम्यग्ज्ञानादिकं व्यर्थमेवेति  
निश्चिन्वानो मोहशय्याशयानो भार्यापुत्रभगिनीगृहक्षेत्रारायमरमणीयमपि रमणीयं  
मन्यते ।

તથા ‘સચ્ચિ-સ્વજન-સંગ્રન્થ-સંસ્તુતા મે’ ઇતિ । સચ્ચા ચ સ્વજનશ્ચ સંગ્રન્થશ્ચ  
સંસ્તુતશ્ચેતિ ઇતરેતરયોગદ્વન્દ્વસમાસઃ । સચ્ચા=મિત્ર, સ્વજનો=માતામહાદિઃ, સંગ્રન્થઃ=  
સ્વજનસ્યાપિ સમ્બન્ધી યથા-માતામહશ્યાલકાદિઃ । સંસ્તુતો મુહુર્મુહુર્દર્શનસમ્મેલના-  
ધનકી અધિકારિણી હોગી યા નહીં । ઇસ પ્રકાર યહ સમ્ભત્વરૂપી મહા-  
ગ્રહ-પિશાચાદિ દ્વારા યુક્ત હોકર રાતદિન ડનકી ચિન્તામેં હી અપને  
મીતર હી મીતર જલતા રહતા હૈ, ઠીક હૈ રાગસે અંધા હુઆ પ્રાણી અસુ-  
ન્દર મી પરપદાર્થોં કો સુન્દર માને તથા ઉપાદેય-સુન્દર પદાર્થોં કો હેય-  
અસુન્દર માને, ઇસમેં કૌનસી અચરજકી વાત હૈ । સંસારમેં સમ્યગ્જ્ઞા-  
નાદિક ઇસ જીવકે ઉપાદેય ધર્મ હૈ-ડનહેં યહ રાગરૂપી ગ્રહ સે ગ્રસ્ત  
હોકર અશોભનીય માનતા હૈ, તથા જો સ્ત્રી, પુત્ર, મગિની, ઘર-ક્ષેત્ર  
આદિ અશોભનીય પરપદાર્થ હેય હૈ, ડનહેં મોહરૂપી પ્રબલ મદિરાકે નરો  
સે આકુલિતબુદ્ધિ હોતા હુઆ રમણીય-ઉપાદેય માન રહા હૈ । તથા  
“સચ્ચિ-સ્વજન-સંગ્રન્થ-સંસ્તુતા મે”સચ્ચા-મિત્ર, સ્વજન-માતામહાદિ,  
સંગ્રન્થ-સ્વજન કે સંબંધીજન, સંસ્તુત-વારંવાર દેખને સે મેલ મિલાપ  
સે જિનકે સાથ પરિચય હુઆ હૈ વે, અથવા-પૂર્વ મેં પરિચિત પિતા  
કાકા વગૈરહ, પશ્ચાત્-પરિચિત સસુર સાલે વગૈરહ, વે મિત્ર સ્વજન

શ્વશુરગૃહમાં ધનની અધિકારિણી થશે કે નહિ ? આ પ્રકાર તે મમત્વરૂપી મહાગ્રહ  
-પિશાચાદિ દ્વારા યુક્ત બનીને રાતદિન તેની જ ચિંતામાં પોતાના ભીતરની  
અંદર જ જળતો રહે છે. ઠીક છે, રાગથી અંધ બનેલા પ્રાણી અસુંદર પણ પર-  
પદાર્થોને સુંદર માને તથા ઉપાદેય-સુંદર પદાર્થોને હેય - અસુંદર માને, આમાં  
કોઈ અચરજની વાત નથી. સંસારમાં સમ્યગ્જ્ઞાનાદિક આ જીવને ઉપાદેય ધર્મ  
છે. તેને રાગરૂપી ગ્રહથી અશોભનીય માને છે. તથા જે સ્ત્રી, પુત્ર, ભગિની, ઘર, ક્ષેત્ર  
આદિ અશોભનીય પરપદાર્થ હોય છે, તેને મોહરૂપી પ્રબળ મદિરાના નશાથી આકુળિત  
બુદ્ધિ થઈ રમણીય-ઉપાદેય માને છે તથા “સચ્ચિ-સ્વજન-સંગ્રન્થ-સંસ્તુતા મે”  
સખા-મિત્ર, સ્વજન-માતામહાદિ, સંગ્રન્થ-સ્વજનના સંબંધીજન, સંસ્તુત-  
વારંવાર દેખવાથી, મેળમેળાપથી જેની સાથે પરિચય થયો છે તે, અથવા  
પૂર્વમાં પરિચિત પિતા, કાકા વિગેરે, પાછળથી પરિચિત સસરા સાળા વિગેરે. આ

દિના પરિચિતઃ પિતા પિતૃવ્યાદિઃ । પશ્ચાત્સંસ્તુતઃ=શ્વશુરશ્યાલકાદિઃ । इति चेमे  
મે સર્વે સર્વદા સુખિનો ભવેયુરિતિ ચિન્તયન્ રાગગ્રસ્તો ભવતિ ।

‘વિવિક્તોપકરણપરિવર્તનભોજનાચ્છાદનં મે’ વિવિક્તં=સુન્દરં મનોહરં પ્રભૂતં  
વા ઉપકરણં=ગૃહારામાદિકં હસ્ત્યશ્વરથાસનપલ્લવઙ્કાદિકં ચ, પરિવર્તનં=વિનિમયઃ  
હસ્ત્યશ્વાદે-મહાર્ધસમયે વિક્રયણમ્, તન્મૂલ્યેનૈવ સુલભસમયે ચાનેકેષાં ક્રયણમ્ ।  
મયૈવૈકેન હસ્તિનાઽનેકે હસ્ત્યાદયઃ સમ્પાદિતાઃ-इत्यादिलक्षणं પરિવર્તનમ્ । કચિત્

સંગ્રન્થ સંસ્તુત મેરે હૈં ઔર इनके लिये भी यह “ ये सदा सुखी  
होवें ” इस प्रकार विचार करता हुआ राग से ग्रस्त होता है ।  
अपने संबंधीजन को तथा संबंधीजन के संबंधीजन को सुखी होने  
की कल्पना करना संयमी जन के लिये राग होनेसे बंध का ही कारण  
शास्त्रकारों ने प्रकट किया है । इस प्रकार का राग मोहकी पर्याय होने से  
संयमी जन के लिये स्वानुभूति में बाधक होता है, अतः इससे निवृत्ति  
ही सर्वश्रेष्ठ है ।

‘વિવિક્તુવગરણ’—इत्यादि—मनोहर अथवा प्रचुर उपकरणरूप  
घर, बगीचा, हस्ती, अश्व, रथ, आसन, पलंग वगैरह वस्तुएँ विविक्त  
उपकरण कहलाते हैं । परिवर्तन शब्द का अर्थ विनिमय है, तेजी के समय  
हस्ति वगैरह पदार्थों का बेचना तथा मंदी के समय उसी पैसे से अनेक  
हस्त्यादिक पदार्थों का खरीदना यह विनिमय है । कहीं “ विचित्र ” यह  
पाठान्तर भी है—जिसका अर्थ होता है कि घर में शोभा के लिये अनेक

મિત્ર, સ્વજન, સંગ્રન્થ, સંસ્તુત મારા છે. તેને માટે પણ તે “ તેઓ સદા સુખી  
રહે ” આ પ્રકારનો વિચાર કરીને રાગથી ગ્રસ્ત થાય છે. પોતાના સંબંધીજનના  
તથા સંબંધીના સંબંધી તેના સુખની કલ્પના કરવી સંયમીજનને માટે રાગરૂપ  
હોવાથી બંધનું જ કારણ શાસ્ત્રકારે પ્રકટ કર્યું છે. આ પ્રકારનો રાગ મોહની  
પર્યાય હોવાથી સંયમીજનને માટે સ્વાનુભૂતિમાં બાધક થાય છે માટે તેમાં નિવૃત્તિ  
જ સર્વશ્રેષ્ઠ છે.

વિવિક્તોપકરણ—इत्यादि—मनोहर अथवा प्रचुर उपकरणरूप घर, बगीचा  
हस्ती, अश्व, रथ, आसन, पलंग विगैरे वस्तुओंने विविक्त उपकरण कहे છે.

પરિવર્તન શબ્દનો અર્થ વિનિમય છે. તેજીના સમયમાં હસ્તિ વિગેરે  
પદાર્થોનું વેચવું અને મંદિના સમયમાં તે પૈસાથી હસ્તિ આદિ પદાર્થોનું ખરીદવું  
તે વિનિમય છે. કોઈ ઠેકાણે “ વિચિત્ર ” આવું પાઠાન્તર પણ છે જેનો અર્થ

‘विचित्रे’-ति पाठः । तत्र विचित्रमुपकरणं गृहादौ शोभार्थं बहुशिल्पिनिर्मितं नानाविधं नयनमनोहारि वस्तुजातं मयैव सम्पादितम् ।

भोजनं=मोदकादिकं, मयैवेदशं भोज्यं भुक्तम् । आच्छादनं=वस्त्रम्=एकेन्द्रिय-निष्पन्नं कार्पासादिकं, विकलेन्द्रियनिष्पन्नं चीनांशुकादिकं, पञ्चेन्द्रियनिष्पन्नं रत्न-कम्बलादिकम्, एतत्सर्वं कदाचिदपि मा विनाशमाप्नुयात् । यत्र यत्र विषये रागस्त-

कारीगरों द्वारा निर्मित नेत्र और मन को लुभानेवाली अनेक प्रकार की वस्तुओं का संग्रह करना । प्रमत्त-दशा-सम्पन्न प्राणी ऐसा गर्व करता है कि मैंने ही इस घर में एक हाथी की जगह अनेक हाथियों का संग्रह किया है, तथा पहिले इस घरमें शोभा के लिये कोई सुन्दर वस्तु नहीं थी वह मैंने ही अब इन तमाम नेत्र और मन को लुभानेवाली वस्तुओं को एकत्रित किया है ।

मोदकादिक भक्ष्य पदार्थ भोजन है । आच्छादन नाम वस्त्र का है । एकेन्द्रिय से निष्पन्न कार्पास ( सूती ) आदिक, विकलेन्द्रियों से पैदा हुआ चीनांशुक ( रेशमी ) वगैरह, तथा पञ्चेन्द्रियों से बनाया गया रत्न-कम्बलादिक पदार्थ मेरे कभी नष्ट न हो जावें । इस प्रकार के विचारों से वह मोही जीव सदा संतप्त रहा करता है । प्रतिकूल भोजन मिलने पर पहिले सुन्दर खाये गये भोजन की याद कर व्याकुल-चित्त हो जाता है, सोचता है-मैंने पहिले ऐसा भोजन कभी नहीं किया, सुन्दर २ मोदकादिक भक्ष्य पदार्थों का ही सेवन किया है । यह सब इस प्रकार की

એ થાય છે કે ઘરમાં શોભાને માટે કારીગરોદ્વારા આંખ અને મનને લોભાવવા-વાળી અનેક પ્રકારની વસ્તુઓનો સંગ્રહ કરવો

પ્રમત્તદશાસમ્પન્ન પ્રાણી એવો ગર્વ કરે છે કે-મેં આ ઘરમાં એક હાથીની જગ્યા અનેક હાથિઓનો સંગ્રહ કર્યો છે, તથા પહેલાં આ ઘરમાં શોભા માટે કોઈ સુંદર વસ્તુ ન હતી પણ મેં જ હમણાં આ તમામ નેત્ર તથા મનને લોભાવવાળી વસ્તુઓ ભેગી કરી છે.

મોદકાદિક ભક્ષ્ય પદાર્થ ભોજન છે. આચ્છાદન નામ વસ્ત્રનું છે. એકેન્દ્રિયથી નિષ્પન્ન સૂતરાઉ આદિક, વિકલેન્દ્રિયોથી પેદા થયેલાં રેશમી વિગેરે, તથા પંચેન્દ્રિયોથી બનાવેલા મારા રત્નકંબલાદિક પદાર્થોનો નાશ ન થઈ જાય, આવા પ્રકારના વિચારોથી તે મોહી જીવ સદા સંતપ્ત રહે છે. પ્રતિકૂળ ભોજનના મળવાથી પહેલાં સુંદર ખાધેલાં ભોજનની યાદ કરીને વ્યાકુળચિત્ત થાય છે. અને વિચારે છે કે-મેં પહેલાં આવું ભોજન કોઈ વખત ખાધું નથી. સુંદર મોદકાદિક ભક્ષ્ય પદાર્થો જ

સ્યૈવેષ્ટતાત્તસ્યાલાભે દ્વેષ ઉપજાયતે, અતો યસ્મિન્ રાગસ્તસ્મિન્નેવ દ્વેષો ભવતિ-ઇતિ સ્વભાવસિદ્ધમ્ । इत्यर्थं गृद्धो लोक इत्येवमर्थमेतेषामर्थं मातापितृ-पुत्रभार्यादिष्वेव रागादिकारणेषु यावज्जीवति तावत्प्रमत्तो 'ममेमे, एषां चाह'-मित्यनिशं रागादिमान् अज्ञानमोहितचित्तो वसति=तिष्ठति तत्र मूर्च्छा प्राप्नोती-

વિચારધારા કા પ્રધાન કારણ પદાર્થોં મેં અતિશય ડસકી ગૃહ્ણતા હી હૈ । ક્યોંકિ ડસસે હી ડસે જિસ ૨ વિષય મેં રાગ હોતા હૈ વહી ડસે ઇષ્ટ પ્રતીત હોતા હૈ । અનિષ્ટ પ્રાપ્ત હોને પર યા ઇચ્છિત પદાર્થ ન મિલને પર ડસકી આત્મા મેં ડસસે દ્વેષ કી ભાવના જાગૃત હોતી હૈ । ડસ પ્રકાર ડન રાગાદિકોં કે કારણભૂત ડન માતા પિતા સ્ત્રી આદિક પદાર્થોં મેં ગૃહ્ણ બના હુઆ યહ જીવલોક જવ તક જીતા હૈ તવ તક પ્રમત્ત-દશાયુક્ત હી બના રહતા હૈ । ‘યે પદાર્થ મેરે હૈ-મૈં ડનકા હૂં’ ડસ પ્રકાર કી કલ્પના સે રાતડિન રાગાદિક ભાવોં સે લિપ્ત બનકર અજ્ઞાન સે આચ્છાદિત હો ડન્હીં પદાર્થોં મેં આસક્ત હોતા રહતા હૈ । ‘મમકાર’ યહ જીવોં કા ઇક પ્રવલ શત્રુ હૈ । બકરે કી તરહ “ મૈ-મૈ ” ડસ પ્રકાર કે શબ્દ કો કરતા હુઆ યહ જીવ અન્ત મેં કસાઈ કે તુલ્ય ડસ મયંકર કાલ કે દ્વારા ગ્રસિત હો જાયા કરતા હૈ । મમકાર કો પ્રવલ શત્રુ ડસ લિયે બત-લાયા ગયા હૈ કિ જિસ પ્રકાર અપને બલિષ્ઠ શત્રુ કે સમક્ષ જીવ વિવેક-શૂન્ય બન બાવલા જૈસા હો જાતા હૈ, ઠીક ડસી પ્રકાર ડસ મમકાર કે સમક્ષ મી જીવ અપને હિત ઓર અહિત કે માન સે રહિત હો ડન્મત્ત

બાધેલાં છે. આ બધા પ્રકારની વિચારધારાનું મુખ્ય કારણ પદાર્થોમાં તેની અતિશય ગૃહ્ણતા જ છે. કારણ કે આથી તેને જે જે વિષયમાં રાગ થાય છે તેથી તે ઇષ્ટ પ્રતીત થાય છે. અનિષ્ટ પ્રાપ્ત થવાથી અથવા ઇચ્છિત પદાર્થ ન મળવાથી તેના આત્મામાં તેથી દ્વેષની ભાવના જાગૃત થાય છે. આ પ્રકાર આવા રાગાદિકના કારણભૂત માતા-પિતા સ્ત્રી આદિક પદાર્થોમાં ગૃહ્ણ બનીને ત્યાં સુધી આ જીવલોક જીવે છે ત્યાં સુધી પ્રમત્તદશાયુક્ત રહે છે. ‘આ પદાર્થ મારો છે, હું તેનો છું.’ આવા પ્રકારની કલ્પનાથી રાત દિવસ રાગાદિક ભાવોથી લિપ્ત બનીને અજ્ઞાનથી આચ્છાદિત જ્ઞાનવાળા હોઈ તેવા પદાર્થોમાં આસક્ત હોય છે મમકાર એ જીવોનો એક પ્રબળ શત્રુ છે. બકરાની માફક “મૈ-મૈ” આ પ્રકારના શબ્દ બોલતાં બોલતાં આ જીવ અંતમાં કસાઈ તુલ્ય ભયંકર કાળદ્વારા ગ્રસિત બને છે. મમકારને પ્રબળ શત્રુની ઉપમા તે માટે આપી છે કે જેમ પોતાના બલિષ્ઠ શત્રુ સમક્ષ જીવ વિવેકશૂન્ય બની બાવળો (ગાંડો) બને છે, ઠીક તે પ્રકાર આ મમકારની સમક્ષ પણ જીવ પોતાના હિતાહિતના ભાનથી રહિત થઈ ઉન્મત્ત જેવો બને છે. તે વખતે

ત્યર્થઃ । મમકારો હિ પ્રાણિનો મહાઞ્છત્રુઃ, મમશબ્દં કુર્વાણો હિ કરાલકાલવ્યાલ-  
કવલિતો ભવતિ પ્રાણિગણઃ । યથા ચોક્તમ્ ।

અશનં મે વસનં મે, જાયા મે વન્ધુવર્ગો મે ।

ઇતિ મે-મે-કુર્વાણં, કાલવૃકો હન્તિ પુરુષાજમ્ ॥

પુત્રા મે ભ્રાતા મે સ્વજના મે ગૃહકલત્રવર્ગો મે ।

ઇતિ કૃત-મે-મે-શબ્દં, પશુમિવ મૃત્યુર્જનં હરતિ ॥

પુત્રકલત્રપરિગ્રહમમત્વદોષૈર્નરો વ્રજતિ નાશમ્ ।

કૃમિક ઇવ કોશકારઃ, પરિગ્રહાદુઃસ્વમાપ્નોતિ ॥

જૈસા બન જાતા હૈ । ઉસે ઉસ સમય ઇસ વાત કા ભી ધ્યાન નહીં હોતા  
કિ મેરા સ્વરૂપ ક્યા હૈ ઓર ઇન પરપદાર્થોં કા સ્વરૂપ ક્યા હૈ ? કસાઈ  
કા બકરા જિસ પ્રકાર “મૈ-મૈ” કરતા હુઆ કસાઈ કે દ્વારા અંત મેં  
મૌત કે ઘાટ ઉતાર દિયા જાતા હૈ ઉસી પ્રકાર “મૈ-મૈ” કરનેવાલા  
યહ જીવ ભી અન્ન મેં એક ન એક દિન ઇસ દુષ્ટ ભયંકર કાલ કે દ્વારા  
મારા જાતા હૈ । કહા ભી હૈ—

“અશનં મે વસનં મે, જાયા મે વન્ધુવર્ગો મે ।

ઇતિ ‘મે-મે’-કુર્વાણં, કાલવૃકો હન્તિ પુરુષાજમ્ ॥ ૧ ॥

પુત્રા મે ભ્રાતા મે, સ્વજના મે ગૃહ-કલત્ર-વર્ગો મે

ઇતિ કૃત-‘મે-મે’-શબ્દં, પશુમિવ મૃત્યુર્જનં હરતિ ॥ ૨ ॥

પુત્ર-કલત્ર-પરિગ્રહ-મમત્વદોષૈર્નરો વ્રજતિ નાશમ્,

કૃમિક ઇવ કોશકારઃ, પરિગ્રહાદુઃસ્વમાપ્નોતિ ॥ ૩ ॥ ” ઇતિ ।

ઇનકા અર્થ ઉપર આ ચુકા હૈ ।

તેને એ પણ ધ્યાન નથી હોતું કે મારું સ્વરૂપ શું છે અને આ પરપદાર્થોનું સ્વરૂપ  
શું છે ? કસાઈનો બકરો જેમ “મૈ-મૈ” કરતો કસાઈદ્વારા અંતમાં મોતને તાબે થાય  
છે તે પ્રકારે “મૈ-મૈ” કરવાવાળા આ જીવ પણ અંતમાં એક દિવસ આ દુષ્ટ ભયંકર  
કાળદ્વારા મરે છે. કહ્યું પણ છે—

અશનં મે વસનં મે, જાયા મે વન્ધુવર્ગો મે ।

ઇતિ ‘મે-મે’-કુર્વાણં, કાલવૃકો હન્તિ પુરુષાજમ્ ॥ ૧ ॥

પુત્રા મે ભ્રાતા મે, સ્વજના મે ગૃહકલત્રવર્ગો મે ।

ઇતિ કૃત-‘મે-મે’-શબ્દં, પશુમિવ મૃત્યુર્જનં હરતિ ॥ ૨ ॥

પુત્રકલત્રપરિગ્રહમમત્વદોષૈર્નરો વ્રજતિ નાશમ્ ।

કૃમિક ઇવ કોશકારઃ, પરિગ્રહાદુઃસ્વમાપ્નોતિ ॥ ૩ ॥ ઇતિ ॥

આનો અર્થ ઉપર આવેલ છે,



इति ममकारग्राहयृहीतविग्रहेण पुरुषेण सततं चिन्त्यते । शब्दादिविषयासक्तो नरो मातापित्राद्यर्थं धननिवहोपार्जनपरो दुःखमेवानुभवति । सदैव परितप्यमानो भ्रमतीत्याह—“अहश्च रात्रिश्च परितप्यमानः” । अहो=दिनं रात्रिं, चशब्दात्पक्षमास-

इन्द्रियों के शब्दादिक विषयों में गृह्य पुरुष इन माता पिता आदि को सुखी करने के लिये धनादि कमाने के अभिप्राय से सदा दुःख का ही अनुभव करता है और रातदिन संक्लिष्टपरिणामी हो उसके संग्रह की चिन्ता में इतस्ततः घूमता है, एवं शारीरिक और कायिक अनेक कष्टों का सामना करता है ।

“अहश्च रात्रिं च ” यहाँ पर “ च ” शब्द से पक्ष-मास-ऋतु-वर्ष आदि का ग्रहण होता है । विचारता रहता है कि कब ऐसा अवसर मिले कि जब मैं बाहर जाऊँ और क्रय विक्रय की वस्तुओं को खरीद बेच कर उनसे खूब लाभ उठाऊँ । कौनसी ऐसी जगह है जहाँ इस वस्तु की अधिक खपत होनेसे चिकी तेजी से होती है । कौनसी चीज खरीदने में इस समय अधिक फायदा होगा?, तथा कौनसी वस्तुका संग्रह करने से भविष्य में अधिक लाभ होगा?, इत्यादि बातों की ही उसके हृदय में सदा उथल-पुथल मची रहती है । यहाँ तक कि सोते समय में अथवा सोते हुए उसे इसी बात के स्वप्न आते हैं और कभी २ वह इन्हीं विचारों को लेकर बड़बड़ाने भी लगता है । उसे निद्रा भी ठीक २ नहीं आती । विचारा

પાંચ ઇન્દ્રિયોના શબ્દાદિક વિષયોમાં ગુથાયેલો પુરુષ માતા-પિતા આદિને સુખી કરવાના હેતુથી ધન કમાવામાં જ હમેશા દુઃખનો અનુભવ કરે છે. અને રાત-દિવસ વ્યાકુળ બની તેના સંગ્રહની ચિંતામાં ગાડી-તારી ધૂમ્કા કરે છે, અને શારીરિક માનસિક અને કાયિક અનેક કષ્ટોનો સામનો કરે છે.

“અહશ્ચ રાત્રિં ચ ” આ ઠેકાણે “ ચ ” શબ્દથી પક્ષ, માસ, ઋતુ, વર્ષ આદિનું ગ્રહણ થાય છે. વિચારતો રહે છે કે કયારે એવો વખત મળે જ્યારે હું બહાર જાઉં અને ક્રયવિક્રયની વસ્તુઓને ખરીદી વેચી તેનાથી ખૂબ લાભ ઉઠાવું. એવી કયાં જગ્યા છે જ્યાં અમુક વસ્તુઓ સસ્તી મળતી હોય તથા એવી કયાં જગ્યા છે જ્યાં આ વસ્તુઓ અધિક ખપત હોવાથી તેજીથી વેચાઈ જાય. આ વખતે કઈ ચીજ ખરીદવાથી ફાયદો થશે, તથા કઈ વસ્તુનો સંગ્રહ કરવાથી ભવિષ્યમાં અધિક લાભ થશે, ઇત્યાદિ વાતોની તેના હૃદયમાં સદા ઉથલપાથલ મચી રહે છે. એટલે સુધી કે સુવા વખતે તથા સુતાં સુતાં તેને આ વિષયનાં સ્વપ્નનાં આવે છે અને કોઈ વખતે તે આવા વિચારોથી ખડખડવા પણ લાગે છે. તેને નિદ્રા પણ ઠીક

તુવર્ષાદિકં ગ્રાહ્યમ્ । પ્રવૃત્તસાવધાનુષ્ઠાનઃ પરિ=સર્વતઃ, તપ્યમાનઃ=શારીરિકમાનસિક-  
વાચિકદુઃખેન ક્ષિયમાનઃ અન્તર્દાહદગ્ધો ભવતીતિ યાવત્ ।

કદા મે વિદેશગમનં ? કદા કુત્ર માણ્ડનયને મે લાભો ભવિતા ? કીદૃશશ્ચ ક્રય-  
વિક્રયાવસરઃ ? इत्यनिशं तप्यमानः । पुनः कथम्भूतः ? कालाकालसमुत्थायी,  
कालः=कार्यकरणावसरः, अकालस्तद्विपरीतः, सम्=सर्वथा उत्थातुं शीलं यस्येति स  
समुत्थायी, कालाकालयोः समुत्थायी कालाकालसमुत्थायी । यथैवावसरे करोति  
तथैवानसरेऽपि करोतीत्यर्थः । यद्वा यथाऽनवसरे न करोति तथैवावसरेऽपि न  
करोति । मातापितृपुत्रभार्याद्यर्थनिखिलकार्यव्यासक्तान्यमनस्कतया ग्रहग्रहिल इव  
कालाकालज्ञानकलाविकलो भवति ।

રાત દિન इन्हीं विचारों में मग्न बनकर संतप्त होता रहता है । काल और  
अकाल का वह कुछ भी विचार नहीं करता, उसके जैसा ही अवसर वैसा  
ही अनवसर, उसके लिये अवसर और अनवसर में कोई भेद नहीं ।  
वह तो अपनी इच्छानुसार अनर्गल प्रवृत्ति किया करता है । अथवा जिस  
प्रकार भूताद्याविष्ट प्राणी भले बुरे की परीक्षा नहीं कर सकता है, वह तो  
मनमाना ही काम करता है, उसी प्रकार मातापिता आदि सांसारिक  
पदार्थों में ही आसक्त मन वाला प्राणी अन्य आत्महितकारी कार्यों से  
उपेक्षितवृत्तिवाला बन काल-अकाल कीं ज्ञानकलासे सदा विकल ही  
बना रहता है । अवसर न होने पर जिस प्रकार कार्य नहीं करता उसी  
प्रकार अवसर में भी कार्य नहीं करता, जभी कार्य करने की इच्छा जागृत  
हुई चाहे समय हो चाहे असमय हो कार्य करने लग जाता है । जैसे कोई  
अरिर्मर्दन नाम का राजा जो शत्रुओं को नष्ट करने में शक्तिशाली था

આવતી નથી. બિચારા રાતદિન આવા જ વિચારોમાં મગ્ન બની સંતપ્ત થાય છે.  
કાળ અકાળનો તે જરા પણ વિચાર કરતો નથી. તેને જેવો અવસર તેવો જ  
અનવસર, તેને માટે અવસર અને અનવસરમાં કોઈ ભેદ નથી, તે તો પોતાની  
ઇચ્છાનુસાર અનર્ગળ પ્રવૃત્તિ કરે છે. અથવા જેમ ભૂતાદ્યાવિષ્ટ-(ભૂતના વળગાડ-  
વાળાં) ભલા-બૂરાનો વિચાર નથી કરી શકતા તે તો મનમાન્યો કામ કરે છે. તે  
પ્રકારે માતા-પિતા આદિ સાંસારિક પદાર્થોમાં જ આસક્ત મનવાળાં પ્રાણી અન્ય  
આત્મહિતકારી કાર્યોથી ઉપેક્ષિત વૃત્તિવાળા બની કાળ-અકાળની જ્ઞાનકલાથી  
હિંમેશાં વિકળ જ બને છે. અવસર નહિ હોવાથી જેમ કાર્ય નથી કરતા તેમ  
અવસરમાં પણ કાર્ય નથી કરતા પણ જ્યાં ઇચ્છા થઈ કે સમય-અસમય બેમાં  
બિના કામ કરવા લાગે છે. જેમ અરિમર્દન નામનો રાજા સમયનો બાણકાર નહિ



યથા કશ્ચિદરિમર્દનનામા નરાધિપો વિપક્ષપક્ષદલનદક્ષોઽપ્યવસરાનભિજ્ઞો નગરીં સિંહાદિશ્વાપદાકુલિતામવલોક્યાપિ વહુષુ પ્રાણિગણેષુ નાશમુપગતેષુ પશ્ચાચ્ચ રક્ષાર્થં પ્રાકારં કારિતવાન્ તથૈવ કાલાકાલસમુત્થાયી ચાવસરાનવસરાનભિજ્ઞો ભવતીતિ ભાવઃ ।

યસ્તુ સમ્યક્ કાલોત્થાયી સ ચ કાલપરિજ્ઞાનાર્થં સતતં સાવધાનો યથાવસરં સકલાં ક્રિયાં વિદધાતિ । કિન્તુ યથા જન્માદેરકાલો નાસ્તિ તથા ધર્મેઽપિ નાઽકાલઃ, “ધમ્મો હિ બુદ્ધેહિં પરિસેવિયવ્વો ” ઇતિ વચનાત્ । યો હિ રાગવાન્ સ કાલાકાલસમુત્થાયી કિમર્થમિત્યાહ—“સંયોગાર્થી ” સંયુજ્યતે, સંયોજનં વા સંયોગઃ, સોઽર્થઃ—પ્રયોજનં યસ્યાસ્તીતિ સંયોગાર્થી । સંયોગઃ=શબ્દાદિવિષયઃ, માતાપિત્રાદિમિશ્ર સંયોગસ્તદર્થી=તત્પ્રયોજનવાન્ ।

પરન્તુ અનવસરજ્ઞ હોને સે ઉસને અપની પ્રજાકી રક્ષા ઉસ સમય—જવ કિ ઉસે સિંહાદિ નષ્ટ—મ્રષ્ટ કર રહે થે; નહીં કી, પશ્ચાત્ જવ લોગ હર તરહ સે વર્બાદ હો ચુકે તવ ઉસ સમય જોકિ ઉનકી રક્ષા કા અવસર નહીં થા ઉસને રક્ષા કે લિયે નગર કા કોટ બનવા દિયા । જિસ પ્રકાર વહ રાજા કાલાકાલસમુત્થાયી હોને સે વિવેકી નહીં માના જા સકતા, ઉસી પ્રકાર જો પ્રાણી કાલાકાલસમુત્થાયી હોતા હૈ વહ ભી અવસર ઔર અનવસર કા યથાર્થ જ્ઞાતા નહીં હોતા, જો કાર્ય કે ઉચિત કાલ મેં કાર્ય કરને કે સ્વભાવવાલા હોતા હૈ વહ નિરન્તર અવસર કે અનુસાર હી સાવધાન હોકર ઉસી સમય મેં સમસ્ત ક્રિયાઓં કો કરતા હૈ । રાગવાન પ્રાણી કાલાકાલસમુત્થાયી ક્યોં હોતા હૈ ? ઇસકે લિયે સૂત્રકાર કહતે હૈ—“સંયોગાર્થી ” ઇત્યાદિ । વહ સંયોગાર્થી હૈ । સંયોગ હી જિસકા પ્રયોજન હૈ વહ સંયોગાર્થી હૈ શબ્દાદિક વિષયોં કે સાથ,

હોવાથી જ્યારે સિંહાદિ હિંસક પ્રાણી પ્રજાનો નાશ કરી રહ્યાં હતાં ત્યારે પ્રજાની રક્ષા કરી નહિ પણ જ્યારે પ્રજાની ધરખાદી થઈ ગઈ ત્યારે જો કે અવસર નહિ હોવા છતાં પ્રજાની રક્ષા માટે કોટ બનાવ્યો. તો જે પ્રકારે તે રાજા કાળાકાલસમુત્થાયી હોવાથી વિવેકી મનાતો નથી તે પ્રકારે જે પ્રાણી કાળાકાલસમુત્થાયી છે તે પણ સમય અસમયનો જ્ઞાતા નથી, જે કાર્યના ઉચિત કાળમાં કાર્ય કરવાના સ્વભાવવાળા હોય છે તે નિરંતર અવસર અનુસાર જ સાવધાન થઈ તે સમયમાં સમસ્ત ક્રિયાઓ કરે છે. રાગવાળો પ્રાણી કાળાકાલસમુત્થાયી કેમ બને છે ? તેને માટે સૂત્રકાર કહે છે—“સંયોગાર્થી ” ઇત્યાદિ. તે સંયોગાર્થી છે. સંયોગ જ જેનું પ્રયોજન છે તે સંયોગાર્થી છે. શબ્દાદિક વિષયોમાં તેમ જ માતાપિતાદિકની

यद्वा हस्त्यश्वरथफलत्रभिर्द्विपदचतुष्पदादिरूपः संयोगस्तत्प्रयोजनवान् । यतः संयोगार्थी अतएव कालाकालसमुत्थायी, इति हेतुगर्भं विशेषणम् । संयोगव्यग्रतयैवानवगतकालाकालव्यवस्थ इति यावत् । अतएव अर्थालोभी-अर्थो धनं कुप्यमकुप्यं चेति, तत्र सुवर्णादिभिन्नं रत्नादि कुप्यम्, सुवर्णरजतादिरूपमकुप्यं चेति भेदः । आ=समन्तात् सर्वत इति यावत्, लोभो=लालसा विद्यते यस्य स आलोभी अर्थस्या-लोभी अर्थालोभी, अत्रापि कालाकालसमुत्थायीति विशेषणम् । यस्माद्धनाभिलाषी तस्मात्कालाकालसमुत्थायी, अनिर्ज्ञातकालाकालनियमः, यो हि धनं कामयते अथवा मातापितादिक के साथ जो संबंध है । उसी का नाम संयोग है । अथवा-हस्ति, अश्व, रथ, स्त्री, मित्र, द्विपद, चतुष्पदादि रूप परिग्रह के साथ संबंध भी संयोग है । तत्प्रयोजनवान् प्राणी संयोगार्थी कहलाता है । यह संयोगार्थी है इसीलिये कालाकालसमुत्थायी है । कालाकाल-समुत्थायी होने में संयोगार्थित्व यह हेतु है । संयोग में व्यग्रता ही कालाकाल की अव्यवस्था का कारण होती है । “अर्थालोभी”—सब प्रकार से अर्थ का अभिलाषी जो होता है—वह अर्थालोभी है । कुप्य और अकुप्य के भेद से धन दो प्रकार का बतलाया गया है । रत्नादिक कुप्य है । सुवर्ण-रजतरूप द्रव्य अकुप्य है । अर्थ-आ-लोभी-इस प्रकार इस वाक्य में पदच्छेद करने से यह अर्थ निष्पन्न होता है कि जो आ-सर्व प्रकार से अर्थालोभी है । यहाँ पर भी ‘कालाकालसमुत्थायी’ इस विशेषण की योजना कर लेनी चाहिये । इससे यह फलितार्थ होता है कि यह धनाभिलाषी है इसीलिये कालाकालसमुत्थायी है, काल और

साथे જે સંબંધ છે તેનું નામ સંયોગ છે, અથવા હસ્તિ, અશ્વ, રથ, સ્ત્રી, મિત્ર, દ્વિપદ, ચતુષ્પદાદિ રૂપ પરિગ્રહની સાથે સંબંધ પણ સંયોગ છે. એવા પ્રયોજનવાળો પ્રાણી સંયોગાર્થી કહેવાય છે. તે સંયોગાર્થી છે માટે કાળાકાળસમુત્થાયી છે. કાળાકાળસમુત્થાયી હોવામાં સંયોગાર્થીત્વ હેતુ છે, સંયોગમાં વ્યગ્રતા જ કાળાકાળની અવ્યવસ્થાનું કારણ થાય છે. “અર્થાલોભી” બધા પ્રકારે અર્થનો અભિલાષી થાય છે. તે અર્થ-લોભી છે. કુપ્ય અને અકુપ્યના ભેદથી ધન બે પ્રકારનું બતાવ્યું છે. રત્નાદિક કુપ્ય છે, સુવર્ણ-રજતરૂપ દ્રવ્ય અકુપ્ય છે. ‘અર્થ-આ-લોભી’ આ પ્રકારે આ વાક્યમાં પદચ્છેદ કરવાથી એવો અર્થ નિષ્પન્ન થાય છે કે જે આ સર્વ પ્રકારથી અર્થ-કુપ્ય અને અકુપ્યરૂપ દ્રવ્યનો લોભી-અભિલાષી-છે તે અર્થલોભી છે. આ ઠેકાણે પણ ‘કાળાકાળસમુત્થાયી’ આ વિશેષણની યોજના કરવી જોઈ એ તેથી એ ફલિતાર્થ થાય છે કે ધનાભિલાષી છે માટે કાળાકાળસમુત્થાયી છે. કાળ અને અકાળના

સોડવસરાદિકં ન કિમપિ જાનાતિ । અનવસરમપિ શોભમાનાવસરમેવ મન્યમાનો  
યસ્માત્કસ્માદ્ યેન કેન પ્રકારેણાર્થં વાઙ્છતિ । અર્થલુબ્ધો હિ સતતમર્થોપાર્જન-  
વ્યાસક્તમાનસઃ પ્રાવૃષિ મુશલધારાઙ્ગરિતે કાલે દુરધિગતજલસ્થલસુપથવિપથાયાં  
પદમપિ ગન્તુમક્ષમાયાં ક્ષમાયાં વાણિજ્યાર્થં નાવાઽપારપારાવારમપિ તિતીર્ણદ્વીપાદ્-  
દ્વીપાન્તરે ગમનાગમનાદિકં કરોતિ, સર્વત્ર ધનલોભ એવ કારણમ્ । ધનાર્થી પ્રાણમપિ

અકાલ કે નિયમ કા જ્ઞાતા નહીં હૈ । જો ધનકા અભિલાષી હોતા હૈ વહ  
સમય કી પ્રતીક્ષા નહીં કિયા કરતા હૈ । ધનાર્જન કરને કા અવસર નહીં  
હોને પર બી યહ “ ધન કમાને કા સુન્દર અવસર હી હૈ ” એસા માન  
કર જિસ કિસી બી રીતિ સે ધન કી અભિલાષા કિયા કરતા હૈ । જો  
દ્રવ્ય કા લુબ્ધક હોતા હૈ વહ નિરન્તર દ્રવ્ય કે ઉપાર્જન કરને મેં આસક્ત-  
ચિત્ત બન કર વર્ષાકાલ મેં મૂસલધાર પાની વરસને પર બી રાત્રિ કે  
સમય હી ઉસ ભૂમિ મેં કિ જિસમેં જલ સ્થલ સમમાર્ગ ઓર વિષમમાર્ગ  
કી કુછ બી સ્વર નહીં પડતી ઓર જહાં એક કદમ બી ચલના બડા  
મુશ્કિલ હોતા હૈ એસી ભૂમિ મેં બી વ્યાપાર કે લિયે ગાડી આદિ કિસી  
સાધન દ્વારા એક નગર સે દૂસરે નગર મેં, ઓર નૌકા સે અપાર સમુદ્ર કો  
બી પાર કર એક દ્વીપ સે દૂસરે દ્વીપ મેં આતા જાતા રહતા હૈ । પ્રાણોં કો  
બી સંકટ મેં ડાલ ધનાભિલાષી ધન કમાને કે લિયે દુર્ગમ પ્રદેશો મેં  
જાકર ધન કા ઉપાર્જન કરતા હૈ, ઉસમેં સિર્ફ ધન કા લોભ હી કારણ  
હૈ । દ્રવ્યલોલુપી અપને પ્રાણોં કી બાજી લગાકર બી ઇધર ઉધર દ્રવ્ય

નિયમનો જ્ઞાતા નથી, જે ધનનો અભિલાષી છે તે સમયની પ્રતીક્ષા કરતો નથી,  
ધન ઉપાર્જન કરવાનો અવસર નહિ હોવા છતાં “ ધન કમાવાનો સુંદર અવસર  
છે ” એમ માની કોઈ પણ પ્રકારે ધનની અભિલાષા કર્યા કરે છે. જે દ્રવ્યનો  
લુબ્ધક હોય છે તે નિરંતર દ્રવ્ય ઉપાર્જન કરવામાં આસક્ત બની વર્ષાકાળમાં  
મૂસલધાર પાણી વરસતો હોય છતાં રાત્રિ સમય તે ભૂમિમાં કે જ્યાં જળ સ્થળ  
સમમાર્ગ અને વિષમમાર્ગની કાંઈ પણ બંધર પડતી નથી અને જ્યાં એક ડગલું  
પણ ભરવું મુશ્કેલ થઈ પડે છે તેવી ભૂમિમાં પણ વ્યાપાર કરવા ગાડા આદિ  
કોઈ સાધનદ્વારા એક ગામથી બીજા ગામમાં અને નૌકાથી અપાર સમુદ્રનો પણ  
પાર કરી એક દ્વીપથી બીજા દ્વીપમાં આવે જાય છે, પ્રાણને પણ જોખમમાં મૂકીને  
ધનાભિલાષી ધન કમાવા દુર્ગમ પ્રદેશોમાં જઈ ધનનું ઉપાર્જન કરે છે તેમાં ફક્ત  
ધનનો લોભ જ કારણ છે. દ્રવ્યલોલુપી પોતાના પ્રાણના લોગે પણ અહીં-તહીં

તૃણવન્મન્યમાનો મુહુર્મમતિ । ઉપાર્જિતાર્થરક્ષણાય રાત્રાવપિ ચૌરાદિભયાન્ન નિદ્રા-  
મનુભવતિ । મમ્મણશ્ચેષ્ટિવદુઃખી ભવતિ । તથા ચોક્તમ્—

‘ ઉત્ત્વનતિ સ્વનતિ નિદધાતિ, રાત્રૌ ન સ્વપિતિ દિવાપિ ચ સશઙ્કઃ ।

લિમ્પતિ સ્થગયતિ સતતં, લાઙ્છિતપ્રતિલાઙ્છિતં કરોતિ ॥ ૧ ॥

કો કમાને કે હી ય્યાલ સે ઘૂમતા હૈ તથા ઉપાર્જિત દ્રવ્ય કે રક્ષણ કે  
લિયે રાત્રિમેં भी चौरादिक के भय से यथेच्छ निद्रा नहीं लेता । मम्मण  
सेठ की तरह दुःख का ही अनुभव करता है । कहा भी है:—

“ ઉત્ત્વનતિ સ્વનતિ નિદધાતિ, રાત્રૌ ન સ્વપિતિ દિવાપિ ચ સશઙ્કઃ ।

લિમ્પતિ સ્થગયતિ સતતં, લાઙ્છિતપ્રતિલાઙ્છિતં કરોતિ ॥૧॥

મુદ્ધક્ષ્વ ન તાવન્નિર્વ્યાપારો જિમિતું નાપિ ચાદ્ય મદ્ધક્ષ્યામિ ।

નાપિ ચ વત્સ્યામિ ગૃહે, કર્તવ્યમિદં વદ્ધ્ય ॥ ૨ ॥

જનયન્ત્યર્જને દુઃખં, તાપયન્તિ વિપત્તિષુ ।

મોહયન્તિ ચ સંપત્તૌ, કથમર્થાઃ સુખાવહાઃ ” ॥ ૩ ॥

અર્થ:—ધનલોભી પુરુષ જમીન મેં ગડે હુણે અપને ધનકો કમી  
બાહર નિકાલતા હૈ કમી ફિર જમીન મેં ગાડતા હૈ કમી પેટી આદિ મેં  
રખતા હૈ । વહ ચોર આદિ કે ભય સે રાતકો સોતા નહીં ઔર દિન મેં  
भी शंका करता रहता है कि ‘ मेरे धन को कोई चुरा न ले जाय । ’ वह  
धन को डाढ़ कर ऊपर से लीपता है, तथा उस लीपे हुए पर उस धन को

દ્રવ્ય કમાવાના ય્યાલથી રખડતો ફરે છે, તથા કમાયેલા દ્રવ્યનું રક્ષણ કરવા રાત્રિના  
સમયમાં ચૌરાદિકના ભયથી સુખથી નિદ્રા પણ લેતો નથી. મમ્મણ શેઠ માફક  
દુઃખનો જ અનુભવ કરે છે. કહ્યું છે કે:—

“ ઉત્ત્વનતિ સ્વનતિ નિદધાતિ, રાત્રૌ ન સ્વપિતિ દિવાપિ ચ સશઙ્કઃ ।

લિમ્પતિ સ્થગયતિ સતતં, લાઙ્છિત-પ્રતિલાઙ્છિતં કરોતિ ॥ ૧ ॥

મુદ્ધક્ષ્વ ન તાવન્નિર્વ્યાપારો જિમિતું નાપિ ચાદ્ય મદ્ધક્ષ્યામિ ।

નાપિ ચ વત્સ્યામિ ગૃહે, કર્તવ્યમિદં વદ્ધ્ય ॥ ૨ ॥

જનયન્ત્યર્જને દુઃખં, તાપયન્તિ વિપત્તિષુ ।

મોહયન્તિ ચ સંપત્તૌ, કથમર્થાઃ સુખાવહાઃ ” ॥ ૩ ॥

અર્થ:—ધનલોભી પુરુષ જમીનમાં દાટેલું પોતાનું ધન કોઈ વખત બહાર  
કાઢે છે, કોઈ વખત જમીનમાં દાટે છે, ક્યારેક પેટી આદિમાં રાખે છે, વળી  
રાત્રે ચોર આદિના ભયથી સુતો નથી અને દિવસે પણ શંકા કરે છે કે—“ માફક  
ધન કોઈ ચોરી ન જાય ” વળી ધનને દાટીને ઉપરથી લીંચે છે. તથા તે લીંચેલી

મુહુક્ષ્વ ન તાવન્નિર્વ્યાપારો, જિમિતું નાપિ ચાદ્ય મહુક્ષ્યામિ ।  
 નાપિ ચ વત્સ્યામિ ગૃહે, કર્તવ્યમિદં વદ્વદ્ય ॥ ૨ ॥ અપિ ચ-  
 જનયન્ત્યર્જને દુઃખં, તાપયન્તિ વિપત્તિષુ ।  
 મોહયન્તિ ચ સમ્પત્તૌ, કથમર્થાઃ સુસ્વાદ્વાઃ ? ॥ ૩ ॥

પુનરપ્યર્થાલોભિનોऽનુચિતકરણે પ્રવૃત્તિં દર્શયતિ-“આલુમ્પઃ” इति, आ=  
 समन्ताल्लुम्पतीत्यालुम्पो लुण्टाको हठाद्धनापहारकः, स च लोभमहाशीविषदष्टो  
 विस्मृतकर्तव्याकर्तव्यो धनमेवार्जनीय-मिति मन्यमानः कटुककटुकतरविपाकजनकं

પહિચાનને કે લિણ પુનઃ પુનઃ મુદ્રા-નિશાન કરતા રહતા હૈ ॥ ૧ ॥ વહ  
 ન પૂરા સ્વાતા હૈ ન અચ્છા સ્વાને કે લિયે પ્રવૃત્ત હોતા હૈ તથા બોલતા હૈ  
 કિ-મૈં આજ ન સ્નાન કરૂંગા ઓર ન ઘર પર હી રહ સકૂંગા, ક્યોંકિ આજ  
 મુઝે વહુત કામ કરના હૈ ॥ ૨ ॥ યહ ધન ઉપાર્જનકાલ મૈં દુઃખ ઉત્પન્ન  
 કરનેવાલા હૈ, ઉસકે નષ્ટ હોને પર વહ પરમદુઃખ કા કારણ હોતા હૈ,  
 વઢ જાને પર વહ મોહકષાય કો વઢાતા હૈ તો ફિર કહો કિ ધન સુખકા  
 કારણ કૈસે હો સકતા હૈ ? અર્થાત્ નહીં હો સકતા । અર્થ અનર્થ કા હી  
 મૂલ હૈ કિન્તુ સુખ કા નહીં ॥ ૩ ॥

અર્થલોભી ઓર મી અયોગ્યકાર્ય મૈં પ્રવૃત્તિ કરતા હૈ ઇસે પ્રકટ  
 કરતે હૈ-આલુમ્પઃ-‘આ-સમન્તાત્ લુમ્પતિ-इति आलुम्पः लुण्टाकः  
 हठाद्धनापहारकः’ જો જબર્દસ્તી સે દૂસરોં કા ધન લૂટે-ઉસે આલુમ્પ  
 કહતે હૈ । લૂટ યહ ઇસલિયે મચાતા હૈ કિ યહ લોભરૂપી મહાસર્પ સે  
 ડસા હુઆ રહતા હૈ । અતઃ ઇસે અપને કર્તવ્યાકર્તવ્ય કા કુછ મી માન

જાગ્યા ઉપર તે ધનની પિછાણ માટે નિશાની પણ કરે છે ॥ ૧ ॥ તે પુરૂં ખાતો  
 પણ નથી તેમજ સાડું ખાવાને પ્રવૃત્ત થતો નથી. અને બોલે છે કે-હું આજે  
 સ્નાન કરવાનો નથી તેમજ ઘેર પણ રહેવાનો નથી, કારણકે આજે મારે ઘણું  
 કામ છે (૨) આ ધન, ઉપાર્જનકાળમાં દુઃખ ઉત્પન્ન કરવાવાળું છે અને તેનો  
 નાશ થવાથી વધારે દુઃખનું કારણ થાય છે. વધી જતાં ઉપર તે મોહકષાયનો  
 વધારો કરે છે તો હવે કહો ! ધન સુખનું કારણ કેવી રીતે થાય ? અર્થાત્ થઈ  
 શકતું નથી. અર્થ અનર્થનું જ મૂળ છે પણ સુખનું નહિ ॥ ૩ ॥

અર્થલોભી વળી અયોગ્ય કાર્યમાં પણ પ્રવૃત્તિ કરે છે તે પ્રકટ કરે છે:-  
 આલુમ્પઃ ‘આ-સમન્તાત્ લુમ્પતિ-इति आलुम्पः लुण्टाकः हठाद्धनापहारकः’  
 જે જખરાઈથી બીજાનું ધન લુંટે-તેને આલુમ્પ કહે છે. લુંટ તે એવી મગ્યાવે  
 છે કે બાણે લોભરૂપી મહાસર્પથી ડસાયેલો હોય, અને તેવે વખતે કર્તવ્યા-

निर्लाञ्छन-गलकर्तन-गृहदाहादिकं क्रूरकर्म करोति 'धनमेव सारं' मन्यमानो हि सततं तल्लाभाय मोहाविष्टो भ्रमति । स चार्थलाभाय किं करोतीत्याह-“सहसाकार” इति

आर्षत्वात्कर्तरि घञ् । सहसा करोतीति सहसाकारः । स्वहिताहितमविचार्य कर्मकारी । यथा मृगादिः क्षेत्रे जालादिकं विलोक्यापि तमवज्ञाय धान्यादिभक्षण-लोभेन स्ववधमप्यविचार्य जाले बद्धो भवति म्रियते च पश्चात्तेनैव निमित्तेन । तथैव लोभाकुलितचेता धनलाभपरायणः स्वपरप्राणघातकमपि कर्म करोति । अर्थलाभाय

नहीं रहता, उस समय एक यही उसका लक्ष्य रहता है कि किसी भी तरह से द्रव्य एकत्रित करना चाहिये । इस ख्याल से वह भयंकर से भी भयंकर भविष्यत्कालीन कटुक विपाक की परवाह न करके लोक-निन्दित निर्लाञ्छन, दूसरों का गला घोटना, दूसरों का घर-बार फूंकना आदि क्रूर कर्म कर डालता है । 'संसार में सार वस्तु एक द्रव्य ही है' ऐसा मान कर निरंतर उसके लाभ के लिये मोहाधीन हो घूमता रहता है । और इसके लाभ के लिये वह “सहसाकारः” हिताहित के विवेक से विकल हो अयोग्य कर्म करने के लिये तत्पर हो जाता है । जैसे मृगादि पशु क्षेत्र में विस्तीर्ण जाल को देख कर भी उसकी कुछ भी परवाह न कर धान्यादिक खाने के लोभ से अपने वध (मृत्यु) की भी उपेक्षा कर जाल में फंस जाते हैं और उसी में फंसे २ मर जाते हैं । उसी प्रकार लोभ से आकुलितमति होकर धन के लाभ के लिये तत्पर हुआ जीव भी स्व और पर के प्राणों को घात करने वाले क्रूर कर्मों को किया करता है । द्रव्य के लाभ के लिये प्रयत्नशील बना हुआ यह प्राणी जिस प्रकार

કર્તવ્યનું કાંઈ પણ ભાન નહિ રાખતાં ફક્ત એક જ લક્ષ્ય રાખે છે કે કોઈ પણ પ્રકારે દ્રવ્ય એકત્રિત કરી લઉં. આવા ખ્યાલથી તે ભયંકરમાં ભયંકર ભવિષ્યત્કાલીન કટુક વિપાકની પરવાહ પણ ન કરતાં લોકનિંદિત-નિર્લાંછન, બીજાનું ગળું દબાવવું, બીજાનું ઘર બાળવું, આદિ ક્રૂર કર્મ કરે છે 'સંસારમાં સાર વસ્તુ એક દ્રવ્ય જ છે' એવું માનીને નિરંતર તેની પ્રાપ્તિ માટે મોહાધીન થઈ ફરતો રહે છે. દ્રવ્યપ્રાપ્તિ માટે તે “સહસાકારઃ” હિતાહિતાના વિવેકથી વિકળ થઈ અયોગ્ય કર્મ કરવા તત્પર થાય છે. જેમ મૃગાદિ પશુ ક્ષેત્રમાં વિસ્તીર્ણ બળને દેખીને પણ તેની પરવાહ નહિ કરતાં ધાન્યાદિક ખાવાના લોભથી પોતાના મૃત્યુની પણ ઉપેક્ષા કરી બળમાં ફસે છે અને તેની અંદર ફસીને તેમાં જ મરે છે. તે પ્રકારે લોભથી આકુલિતમતિનો બનીને ધનના લાભ માટે તત્પર થયેલ જીવ પણ પોતાના અને બીજાના પ્રાણોનો ઘાત કરવામાં ક્રૂર કર્મોને કરે છે; દ્રવ્યના લાભ માટે પ્રયત્નશીલ બની તે પ્રાણી જેમ ધન કમાવાના



પ્રયત્નમાનો હિ યથોપાયાન્ પશ્યતિ તથા નાપાયાન્ । અર્થાતુરો હિ ન સ્વજનાદિક-  
મપિ ગણયતિ તમપિ વશ્ચયતિ । પુનરર્થાલોભી કીદૃશો ભવતીત્યાહ—“ વિનિવિષ્ટચિત્તઃ ”  
ઇતિ, વિ=વિવિધં નિવિષ્ટમ્ અનેકધા સ્થિતં ધનાર્જને ચિત્તં યસ્ય સ વિનિવિષ્ટચિત્તઃ ।

યદ્વા—માતાપિત્રાદ્યભિસમ્બન્ધે વિનિવિષ્ટં ચિત્તમન્તઃકરણં યસ્ય સ વિનિ-  
વિષ્ટચિત્તઃ, સતતં તસ્ય ચિત્તે ધનલાભાભિનિવેશ ઉપજાયત ઇતિ ભાવઃ । એવંભૂતઃ  
કિં કરોતીત્યાહ—“ અત્ર શસ્ત્રે પુનઃ પુનઃ ” ઇતિ । અત્ર=અસ્મિન્ માતાપિતૃભ્રાતૃ-  
ભગિની-ભાર્યા-પુત્ર-દુહિતૃ-સ્ત્રુપા-મિત્ર-પિતૃવ્ય-શ્વશુર-હસ્ત્ય-શ્વાદિકે, શબ્દાદિ-  
કામગુણે વા વિનિવિષ્ટચિત્તઃ શસ્ત્રે=ષડ્જીવનિકાયોપમર્દનલક્ષણે પુનઃ પુનઃ પ્રવર્તતે ।  
રાગાદ્યાવિષ્ટચેતા સંયોગાર્થી અર્થાલોભી આલુમ્પઃ સહસાકારસ્તત્ર વિનિવિષ્ટચિત્તઃ ષડ્-  
જીવનિકાયસ્યારમ્ભે વારં વારં પ્રવર્તત ઇતિ સૂત્રાશયઃ ॥ ૧ ॥

ધન કમાને કે ઉપાયોં કી ઓર દેખતા હૈ ઉસ પ્રકાર સે કષ્ટોં કી તરફ  
નહીં દેખતા, અર્થાત્ પ્રાણી અપને નિજ જન કી ભી ઇજ્જત નહીં કરતા,  
પ્રત્યુત ઉન્હેં ભી ઠગને કી ફિરાક મેં રહતા હૈ । ક્યોંકિ વહ “ વિનિવિષ્ટ-  
ચિત્તઃ ” અનેક પ્રકાર સે ધન કે ઉપાર્જન કરને મેં આસક્તચિત્તવાલા  
હોતા હૈ । હસ પ્રકાર વહ “ અત્ર શસ્ત્રે પુનઃ પુનઃ ” માતા, પિતા, માઈ,  
બહિન, સ્ત્રી, પુત્ર, પુત્રી, વહૂ, મિત્ર, કાકા, સસુર ઓર હસ્તિ આદિ  
પદાર્થોં મેં અથવા શબ્દાદિકવિષયોં મેં વિનિવિષ્ટચિત્ત-તલ્લીન બનકર  
ષડ્જીવનિકાય કે ઉપમર્દનરૂપ શસ્ત્રમેં વારંવાર પ્રવૃત્તિ કરતા રહતા હૈ ।  
હસ સૂત્ર કા ફલિતાર્થ યહ હુઆ કિ રાગાદિકોં મેં તલ્લીનચિત્તવાલા  
સંયોગાર્થી, અર્થાલોભી, આલુમ્પ સહસાકારી પ્રાણી, ઉન ૨ પદાર્થોં મેં  
તત્પર હોકર ષડ્જીવનિકાય કે આરંભ મેં વારંવાર પ્રવૃત્તિ કરતા હૈ ॥૧॥

ઉપાયો તરફ જ દેખે છે તે પ્રમાણે કષ્ટો તરફ દેખતો નથી અર્થાત્ પ્રાણી પોતાના  
નિજ જનની પણ ઇજ્જત કરતો નથી, ઉલ્ટું તેને પણ લુંટવાની ફિકર કરે છે,  
કારણકે તે “ વિનિવિષ્ટચિત્તઃ ” અનેક પ્રકારથી ધન ઉપાર્જન કરવામાં આસક્ત-  
ચિત્તવાળો થાય છે. આ પ્રકારે તે “ અત્ર શસ્ત્રે પુનઃ પુનઃ ” માતા, પિતા,  
ભાઈ, બહિન, સ્ત્રી, પુત્ર, પુત્રી, વહુ, મિત્ર, કાકા, સસરા અને હસ્તિ આદિ  
પદાર્થોમાં અથવા શબ્દાદિકવિષયોમાં વિનિવિષ્ટચિત્ત-તલ્લીન બનીને ષડ્જીવ-  
નિકાયના ઉપમર્દનરૂપ શસ્ત્રમાં વારંવાર પ્રવૃત્તિ કરે છે. આ સૂત્રનો ફલિતાર્થ  
એ થાય છે કે રાગાદિકોમાં તલ્લીનચિત્તવાળા સંયોગાર્થી, અર્થાલોભી, આલુમ્પ  
સહસાકારી પ્રાણી તેવા પદાર્થોમાં તત્પર બનીને ષડ્જીવનિકાયના આરંભમાં  
વારંવાર પ્રવૃત્તિ કરે છે. ૧

યદિ મનુષ્યો દીર્ઘાયુરજરામરો વા ભવેત્તદા યુક્તો માતા-પિત્રાદિપ્ત્વભિષ્વજ્ઞ-સ્તસ્ય, કિન્તુ નૈવમસ્તિ। મનુષ્યશિરસિ ચ મૃત્યુરનિશં ભ્રમતિ। જરાજીર્ણસ્ય કર્તવ્યાકર્તવ્યશૂન્યસ્ય પ્રાણિનો વાર્ધકે માતાપિત્રાદિપ્ત્વભિષ્વજ્ઞેઽપિ તદર્થપ્રયાસાક્ષ-મત્વેન મૂઢતા જાયતેતિ દર્શયતિ-“અપ્પં ચ” ઇત્યાદિ।

મૂલમ્-અપ્પં ચ ચ્ચલુ આઝયં ઇહમેગેસિં માણવાણં, તં જહા સોયપરિણાણેહિં પરિહાયમાણેહિં, ચક્ષુપરિણાણેહિં પરિહાય-માણેહિં, ઘાણપરિણાણેહિં પરિહાયમાણેહિં, રસણપરિણાણેહિં પરિહાયમાણેહિં, ફાસપરિણાણેહિં પરિહાયમાણેહિં, અભિષ્વકંતં ચ ચ્ચલુ વયં સંપેહાય તઓ સે ઇગયા મૂઢભાવં જણયઈ (સૂ. ૨)

યદિ મનુષ્ય દીર્ઘાયુ હોતા અથવા અજર અમર હોતા તો માતા-પિતાદિક મેં ઇસકા મમત્વ કરના મી યુક્તિયુક્ત થા, કિન્તુ ઇસા તો હૈ નહીં ક્યોંકિ નિરન્તર હી ઇસકે મસ્તક પર મૃત્યુ ઘૂમતી રહતી હૈ। ઓર જરા સે સમયાનુસાર યહ જીર્ણકાય મી હોતા રહતા હૈ। ઇસ પરિ-સ્થિતિ મેં મૃત્યુ ઓર જરા કે વશ મેં પડે હુએ ઇસકે હૃદય મેં સદા આકુલ-વ્યાકુલ પરિણામોં કી પરિણતિ જાગૃત હોતી રહતી હૈ તબ ડસમેં હી રાતદિન મગ્ન હુઆ યહ જબ સ્વયં અપને કર્તવ્યાકર્તવ્ય કે બોધ સે હી વિકલ રહતા હૈ તબ યહ અપને સગે-સમ્બન્ધી માતાપિતાદિક કા અભિષ્વંગ-સંબંધ હોને પર મી અપની તરફ સે ડનકે લિયે થોડા સા મી પ્રયાસ-ડયમ નહીં કર સકતા હૈ, જબ પ્રયાસ નહીં કર સકતા હૈ તબ વહ કિંકર્તવ્યમૂઢ બન જાતા હૈ। ઇસી વાતકો સૂત્રકાર પ્રકટ કરતે હૈ:-‘અપ્પં ચ ચ્ચલુ આઝયં’ ઇત્યાદિ।

કહાય મનુષ્ય દીર્ઘાયુ હોત અથવા અજર અમર હોત તો માતાપિતાદિકમાં તેનું મમત્વ કરવું યુક્તિયુક્ત હતું પણ એવું તો છે નહિ, કારણકે નિરંતર તેના માથા ઉપર મોત લામે છે, અને ઘડપણથી સમયાનુસાર તે જીર્ણકાય પણ થાય છે. આવી પરિસ્થિતિમાં મૃત્યુ અને જરાની વશમાં પડેલો તેના હૃદયમાં હમેશાં આકુળ-વ્યાકુળ પરિણામોની પરિણતિ જાગૃત રહે છે તેમાં જ રાતદિવસ મગ્ન થએલો તે પોતે પોતાના કર્તવ્યા-કર્તવ્યના બોધથી જ વિકળ રહે છે ત્યારે તે પોતાના સગાં સંબંધી માતા પિતાદિકના અભિષ્વંગ-સંબંધ હોવા છતાં પણ પોતાની તરફથી તેમને માટે થોડો પણ પ્રયાસ કરી શકતો નથી-ન્યારે પ્રયાસ કરી શકતો નથી ત્યારે તે કિંકર્તવ્યમૂઢ બની જાય છે. પૂર્વોક્ત વાતને જ સૂત્રકાર પ્રકટ કરે છે-‘અપ્પં ચ ચ્ચલુ આઝયં’ ઇત્યાદિ



છાયા—અલ્પં ચ खलु आयुष्कमिहैकेषां मानवानाम् । तद्यथा—श्रोत्रपरिज्ञानैः परिहीयमानैः, चक्षुःपरिज्ञानैः परिहीयमानैः, घ्राणपरिज्ञानैः परिहीयमानैः, रसन-परिज्ञानैः परिहीयमानैः, स्पर्शपरिज्ञानैः परिहीयमानैः, अभिक्रान्तं च खलु वयः सम्प्रेक्ष्य ततः स एकदा मूढभावं जनयति ॥ २ ॥

ટીકા—અલ્પં=સ્તોકં, ‘ચ’ શબ્દેન દીર્ઘાયુષ્કપરિગ્રહઃ । खलु શબ્દોઽવધારણે, ‘આયુઃ’ પૂર્વકૃતકર્મભોગાર્થમૈતિ=સમાગચ્છતીત્યાયુઃ । यद्वैति=સમાગચ્છતિ સ્વકૃત-કર્મપ્રાપ્તનરકાદિગતિસ્થિતજન્તોઃ પ્રતિબન્ધકતામિત્યાયુઃ, भवस्थितिहेतुः कर्मपुद्गल-पुञ्जमित्यर्थः । आयुर्हि सुखदुःखाधारं देहस्थितं जीवं तत्तद्गतौ धरति । उक्तञ्च—

“ दुखं न देइ आऊ, न वि य मुहं देइ चउमुवि गईमु ।

दुखसुहाणाधारं, धरइ देहद्वियं जीवं ॥ १ ॥ ”

છાયા—दुःखं न ददात्यायुर्नापि च सुखं ददाति चतसृष्वपि गतिषु ।

दुःखसुखानामाधारं, धरति देहस्थितं जीवम् ॥ इति ।

इस संसार में कितनेक मनुष्यों की आयु अल्प है, पूर्ण आयु को भोगते हुए भी जब यह प्राणी वृद्धावस्थासंपन्न होता है तब इसकी श्रोत्र-इन्द्रिय अपने विषय के ग्रहण करने में असमर्थ हो जाती है, चक्षु-इन्द्रिय रूप के देखने में क्षीण शक्तिवाली हो जाती है, घ्राण-इन्द्रिय सुगंध-दुर्गन्ध के बोध करने से विमुख हो जाती है, रसना-इन्द्रिय ५ प्रकार के रसास्वादरूप अपने कार्य से शिथिल बन जाती है और स्पर्शन-इन्द्रिय भी ८ प्रकार के स्पर्श को बतलाने में अक्षम हो जाती है । इस प्रकार प्रत्येक इन्द्रियाँ जब इस अवस्था में अपने २ कर्तव्य से विमुख हो जाती हैं, तब यह प्राणी उस अवस्था में कर्तव्याकर्तव्य के ज्ञान से शून्य हो जाता है ।

આ સંસારમાં કેટલાક મનુષ્યોની આયુ ઓછી છે. પૂર્ણ આયુને ભોગવતો છતાં પણ જ્યારે તે પ્રાણી વૃદ્ધાવસ્થાસંપન્ન થાય છે ત્યારે તેની શ્રોત્ર ઇન્દ્રિય પોતાનો વિષય ગ્રહણ કરવામાં અસમર્થ બને છે. ચક્ષુઇન્દ્રિય, રૂપ દેખવામાં ક્ષીણશક્તિવાળી થાય છે. ઘ્રાણઇન્દ્રિય સુગંધ દુર્ગંધનો બોધ કરવામાં વિમુખ થઈ જાય છે. રસના-ઇન્દ્રિય પાંચ પ્રકારના રસાસ્વાદન રૂપ પોતાના કાર્યથી શિથિલ બની જાય છે અને સ્પર્શન-ઇન્દ્રિય પણ આઠ પ્રકારના સ્પર્શ બતાવવામાં અક્ષમ થાય છે. આ પ્રકારે પ્રત્યેક ઇન્દ્રિય જ્યારે આ અવસ્થામાં પોત-પોતાના કાર્યથી વિમુખ થાય છે ત્યારે આ પ્રાણી આ અવસ્થામાં, કર્તવ્યાકર્તવ્યના જ્ઞાનથી શૂન્ય થાય છે.

ટીકાર્થ:—સૂત્ર મેં “અપ્પં ચ ” યહાં પર જો “ચ” શબ્દ હૈં ઉસસે દીર્ઘ આયુ કા ભી ગ્રહણ હોતા હૈં । “સ્વલુ” શબ્દ અવધારણ-નિશ્ચય અર્થ મેં આયા હૈં । પૂર્વકૃત કર્મ કે ભોગને કે લિયે જો જીવોં કો પ્રાપ્ત હોતા હૈં વહ આયુ હૈં અથવા જિસકે દ્વારા જીવ ઇક ગતિ સે દૂસરી ગતિ કો પ્રાપ્ત કરતા હૈં વહ આયુ હૈં અથવા અપને દ્વારા કિયે ગયે કર્મ કે અનુસાર પ્રાપ્ત નરકાદિ ગતિ મેં રહનેવાલે જીવ કો જો અપની સ્થિતિ તક ઓર દૂસરી ગતિ મેં ન જાને દેવે વહ આયુ હૈં । અથવા-અજ્ઞાતિ મેં રહે હુએ જલ કી તરહ જો પ્રતિક્ષણ હાસ કો પ્રાપ્ત હો વહ આયુ હૈં । ઇન તમામ વ્યુત્પત્તિયોં દ્વારા યહી નિષ્કર્ષ નિકલતા હૈં કિ જો કર્મ-પુદ્ગલપુદ્ગલ ઇસ જીવ કો પ્રાપ્ત હુએ ભવ મેં રોક રહે વહ આયુ હૈં । ક્યોં કિ સુખ દુઃખ કા આધારભૂત ઓર દેહ મેં રહને વાલે જીવ કો આયુ હો ઉસ ૨ ગતિ મેં અપને ઉદયપર્યન્ત રોકે રહતા હૈં । આયુ કર્મજીવ કો ચારોં હી ગતિયોં મેં ન તો દુઃખ દેતા હૈં ઓર ન વૈષયિક સુખ હી દેતા હૈં । કિન્તુ જો જીવ જિસ ગતિ કે આયુ કો બાંધ કર ઉસ પર્યાય કા ભોગ કરતા હૈં સુખ દુઃખ કે આધારભૂત ઉસ જીવકો વહ ઉસ ગતિ મેં ઉસ વિવક્ષિત પર્યાય મેં રોકે રાખતા હૈં ।

ટીકાર્થ:—સૂત્રમાં “અપ્પં ચ ” આ ઠેકાણે જે “ચ” શબ્દ છે તેનાથી દીર્ઘ આયુતું શ્રદ્ધા થાય છે “સ્વલુ” શબ્દ અવધારણ-નિશ્ચય-અર્થમાં આવ્યો છે. પૂર્વકૃત કર્મ ભોગવવાને જે જીવને પ્રાપ્ત થાય છે તે આયુ છે, અથવા જે દ્વારા જીવ એક ગતિથી બીજી ગતિમાં જાય છે તે આયુ છે, અથવા પોતાના દ્વારા કરેલા કર્માનુસાર પ્રાપ્ત નરકાદિ ગતિમાં રહેવાવાળા જીવને જે પોતાની સ્થિતિ સુધી બીજી ગતિમાં ન જવાદે તે આયુ છે, અથવા અંજલિમાં રહેલાં પાણીની માફક જે પ્રતિક્ષણ ઘટતું જાય છે તે આયુ છે. આવી તમામ વ્યુત્પત્તિયો દ્વારા એ નિષ્કર્ષ નિકળે છે કે જે કર્મપુદ્ગલપુંજ આ જીવને પ્રાપ્ત થએલા ભવમાં રોકી રાખે તે આયુ છે, કારણકે સુખ-દુઃખના આધારભૂત અને દેહમાં રહેનાર જીવને આયુ જ તે તે ગતિમાં પોતાના ઉદયપર્યન્ત રોકી રાખે છે, આયુકર્મ જીવને ચારે ગતિમાં દુઃખ અને વૈષયિક સુખ નથી આપતું પણ જે જીવ જે ગતિની આયુને બાંધીને તે પર્યાયનો ભોગ કરે છે. સુખ દુઃખના આધારભૂત તે જીવને તે ગતિમાં વિવક્ષિત પર્યાયમાં રોકી રાખે છે.

પુરુષસ્યાયુર્વિદ્યુદિવ ક્ષણમહ્નુરં, તૈલરહિતો દીપો યથા સ્વલ્પેનૈવ કાલેન નાશ-  
મેતિ તથાઽઽયુરપિ તત્તદ્ભવસમ્બન્ધિશ્ચોગ્યકર્માભાવે સ્વલ્પેનૈવ કાલેન સમાપ્તિમુપ-  
ગચ્છતિ । આયુર્હિં જલતરંગમિવ, જલસ્થિતેન્દુપ્રતિવિમ્બમિવ, વિદ્યુદિવ ધર્તુમશક્યં  
ભવતીત્યાયુષોઽલ્પત્વં માનવાનામિત્યભિપ્રાયમેવ મનસિ નિધાય દર્શયતિ—“ઇહ એકેષાં  
માનવાનામલ્પમાયુષ્કમ્ ” । અત્રૈકેષામિતિ કથનેન સંયમરહિતાનાં સાવધાનુષ્ઠાનેન  
દીર્ઘમપ્યાયુરલ્પમિવ ભવતિ, તથૈવ સંયમિનાં ચ સ્વલ્પમપ્યાયુર્નિરવધાનુષ્ઠાનેન દીર્ઘા-

જિસ પ્રકાર તૈલસે રહિત દીપક થોડે હી સમય મેં વુઝ જાતા હૈ  
उसी प्रकार आयुर्कर्म भी तत्तद्भवसम्बन्धी कर्म पुद्गलों के अभावसे  
थोड़ेसे ही कालमें समाप्त हो जाता है । जिस प्रकार जलकी तरङ्ग और  
पानीमें प्रतिविम्बित चन्द्रमा का प्रतिविम्ब, अथवा विजली लाख प्रयत्न  
करने पर भी नहीं स्थिर किये या टहरायी जा सकती हैं उसी प्रकार  
तत्तद्भवसम्बन्धी आयुकी समाप्ति होने पर उसे एक क्षण भी फिर नहीं  
वढाया या टहराया जा सकता । इसी अभिप्राय को चित्तमें धारण कर  
सूत्रकारने—“इह एकेषां मानवानाम् अल्पम् आयुष्कम् ” यह कहा है ।  
अब इसी बातको स्पष्ट करते हैं—

यहां पर कितनेक मनुष्यों का जो आयु अल्प कहा गया है उससे  
यह समझना चाहिये कि जो मनुष्य रात-दिन सावधकार्यों के अनु-  
ष्ठानमें ही लवलीन हो रहे हैं—संयमभावसे रहित हैं उन मनुष्यों का  
दीर्घकालिक आयुर्कर्म भी उस अनुष्ठानसे अल्प जैसा हो जाता है, तथा  
संयमी जीवों का अल्प भी आयुर्कर्म निरवध अनुष्ठानसे दीर्घ जैसा हो

જેવી રીતે તેલ વગરનો દીપો થોડાજ સમયમાં ખુઝાઈ જાય છે તે પ્રકારે  
આયુકર્મ પણ તત્તદ્ભવસંબંધી કર્મપુદ્ગલોના અભાવથી થોડાજ કાળમાં  
સમાપ્ત થાય છે. જેમ પાણીનું મોબ્બું, અને ચન્દ્રમાનો પાણીમાં પડતો પ્રતિબિમ્બ,  
અથવા વિજળી લાખ પ્રયત્ન કરવા છતાં પણ સ્થિર કરાતી નથી તેવી રીતે  
તત્તદ્ભવસંબંધી આયુની સમાપ્તિ થવાથી તે એક પણ ક્ષણ રોકી અગર વધારી  
શકાતું નથી. આ અભિપ્રાય ચિત્તમાં ધારણ કરી સૂત્રકારે “ઇહ એકેષાં માન-  
વાનામ્ અલ્પમ્ આયુષ્કમ્ ” એમ કહ્યું છે. હવે આ વાતને સ્પષ્ટ કરે છે:—

આ જગ્યાએ કેટલાક મનુષ્યોની જે આયુ અલ્પ કહેવામાં આવી છે તેથી  
એમ સમજવાનું છે કે જે મનુષ્ય રાતદિન સાવધ કાર્યોના અનુષ્ઠાનમાં જ રચેલો  
રહે છે, સંયમભાવથી રહિત છે તેવા મનુષ્યોના દીર્ઘકાલિક આયુકર્મ પણ આવા  
અનુષ્ઠાનથી ટુંકા જેવા થઈ જાય છે, તથા સંયમી જીવોના ટુંકા પણ આયુકર્મ

યુરિવ વર્તતે, દીર્ઘકાલિકજન્મમરણોચ્છેદેનાયુષઃ સાફલ્યાત્ । इह=સંસારે એકેષાં  
=કતિપયાનાં માનવાનામાયુરલ્પં ભવતીત્યન્વયઃ । આયુષોડલ્પત્વઞ્ચ ક્ષુલ્લકભવાપેક્ષ-  
યાડન્તર્મુહૂર્તમાત્રં જઘન્યમ્ । ચ શબ્દાદધિકં ચોત્તરોત્તરસમયાદિવૃદ્ધ્યા યુગલિકમા-  
શ્રિત્ય પલ્યોપમત્રયપરિમિતં ભવતિ । પલ્યોપમત્રયાયુરપિ સંયમકાલાભાવાદધિકમ-  
પ્યલ્પમેવ ।

અન્તર્મુહૂર્તાદારમ્થ્ય દેશેનપૂર્વકોટિપરિમિતાયુષિ સંયમાયુષ્કસ્યાલ્પત્વાત્તદ-  
પ્યલ્પમેવ ભવતિ ।

જાતા હૈ । દીર્ઘકાલિક જન્મ-મરણ કે વિનાશ સે હી તો આયુ કી  
સફલતા હૈ ।

“અલ્પં ચ खलु आयुष्कम् इह एकेषां मानवानाम् ॥ यहां पर  
“इह एकेषां मानवानाम् आयुः अल्पं भवति” इस प्रकार अन्वय  
लगाना चाहिए । આયુકી અલ્પતા ક્ષુલ્લક-સવસે છોટ-ભવકી અપેક્ષાસે  
પ્રકટ કી ગઈ હૈ, ક્યોંકિ મનુષ્ય ઔર તિર્યંશોં કે આયુકર્મકી  
સ્થિતિ શાસ્ત્રમેં દો પ્રકારસે વર્ણિત હૈ-(૧) જઘન્ય ઔર (૨) ઉત્કૃષ્ટ ।  
જઘન્ય સ્થિતિ અન્તર્મુહૂર્તકી હૈ, ઔર ઉત્કૃષ્ટ ઉત્તરોત્તર એકસમયાદિ  
કી વૃદ્ધિસે લગા કર ત્રીન પલ્ય કી હૈ । यह युगलियों की अपेक्षासे है ।  
ભોગભૂમિ મેં જીવકો સંયમ કી પ્રાપ્તિ હોનેકા અવસર હી નહીં હૈ, ઇસ  
લિધે ત્રીન પલ્ય પરિમિત દીર્ઘ આયુ મી અલ્પ જૈસા હી હૈ, અર્થાત્  
ઉસસે જીવકા નિજ કોઈ મી પરમાર્થ નહીં સધતા, કેવલ ભોગાદિકોં કે  
ઉપભોગસે હી વહ નિષ્ફલ હો જાતા હૈ । સંયમારાધન સે હી કાલ કે

નિરવધ અનુષ્ઠાનથી દીર્ઘ જેવા થાય છે. દીર્ઘકાલિક જન્મ-મરણના વિનાશથી જ  
આયુની સફળતા છે.

“અલ્પં ચ खलु आयुष्कम् इह एकेषां मानवानाम्”

અહીં “इह एकेषां मानवानाम् आयुः अल्पं भवति”

આ પ્રકારે અન્વય લગાડવો જોઈએ આયુની અલ્પતા ક્ષુલ્લક-બધાથી  
નાના-ભવની અપેક્ષાથી પ્રકટ કરેલ છે કારણકે મનુષ્ય અને તિર્યંચોના આયુ-  
કર્મની સ્થિતિ શાસ્ત્રમાં બે પ્રકારે વર્ણિત છે. (૧) જઘન્ય અને (૨) ઉત્કૃષ્ટ.  
જઘન્ય સ્થિતિ અન્તર્મુહૂર્તની છે અને ઉત્કૃષ્ટ ઉત્તરોત્તર એકસમયાદિની વૃદ્ધિથી  
લગાવી ત્રણ પલ્યની છે, આ યુગલિયાની અપેક્ષાથી છે. ભોગભૂમિમાં જીવને  
સંયમની પ્રાપ્તિ થવાનો અવસર નથી, માટે ત્રણ પલ્યની પરિમિત દીર્ઘ આયુ  
પણ અલ્પ જેવી છે. અર્થાત્ તેથી જીવનો નિજ કોઈ પણ પરમાર્થ સધાતો  
નથી, કેવળ ભોગાદિકોના ઉપભોગથી જ તે નિષ્ફળ થાય છે. સંયમારાધનથી જ

યદ્વા ત્રિપલ્યોપમપરિમિતમપ્યાયુરલ્પમેવ, યતોઽન્તર્મુહૂર્તં વિહાય શેષસર્વસ્યાપ્યા-  
યુષોઽપવર્તનશીલત્વાત્, પ્રતિક્ષણમાયુષઃ ક્ષીયમાણત્વાચ્ચ । અપવર્તનં નામ દીર્ઘ-  
સ્થિતિકાલિકકર્મપરમાણૂનપગમય્ય તેષાં હ્રસ્વસ્થિતિકાલિકતાસમ્પાદનમ્ । આયુશ્ચ  
સોપક્રમ-નિરુપક્રમભેદેન દ્વિવિધમ્, ઉક્તશ્ચ ભગવતા ભગવત્યામ્—

“ જીવા ણં મંતે ! કિં સોવક્કમાડયા નિરુવક્કમાડયા ? ગોયમા ! જીવા સોવક્ક-  
માડયાવિ ણિરુવક્કમાડયાવિ ” ઇતિ ( ભગવતી. શ. ૨૦ ઉ. ૧૦ )

છાયા — જીવાઃ સ્વલુ મદન્ત ! કિં સોપક્રમાયુષ્કા નિરુપક્રમાયુષ્કાઃ ? ગૌતમ !  
જીવાઃ સોપક્રમાયુષ્કા અપિ નિરુપક્રમાયુષ્કા અપિ ॥ ઇતિ ॥

એક ક્ષણ તક કી સફલતા માની ગઈ છે । उसी प्रकार अन्तर्मुहूर्त्तसे  
लगा कर देशोनपूर्वकोटि-देश उन एक करोड पूर्व-परिमित आयु  
प्राप्त होने पर भी उसमें संयम कालका अभाव होने से वह भी अल्प ही है ।

अथवा—अन्तर्मुहूर्त्तकाल परिमित आयुको छोड कर शेष समस्त  
आयु अपवर्त्तनशील-होने से और क्षण २ में आयुका क्षय होने से त्रिप-  
ल्योपम परिमित-तीन पल्योपम का-आयु भी अल्प ही है ।

दीर्घकालिक आयुકર્મ के परमाणुओं को खींच कर थोड़ी स्थिति-  
वाले आयुकर्म के परमाणुओं में स्थापित करने का नाम अपवर्त्तन है ।

સોપક્રમ ઔર નિરુપક્રમ કે ભેદ સે આયુ દો પ્રકાર કા છે । ભગ-  
વતી સૂત્રમેં ભગવાને યહી વાત કહી છે—

“ જીવા ણં મંતે ! કિં સોવક્કમાડયા નિરુવક્કમાડયા ?, ગોયમા !  
જીવા સોવક્કમાડયા વિ ણિરુવક્કમાડયા વિ ” ઇતિ । ( મ. શ. ૨૦ ઉ. ૧૦ )

કાળની એક ક્ષણ સુધીની સફળતા મનાય છે, તે પ્રકાર અન્તર્મુહૂર્ત્તથી લગાવી  
દેશોનપૂર્વ કોટિ-દેશ ઉન એક કરોડ પૂર્વ-પરિમિત આયુ પ્રાપ્ત થવાથી પણ  
તેમાં સંયમકાળનો અભાવ હોવાથી તે પણ અલ્પજ છે, અથવા અન્તર્મુહૂર્ત્તકાળપરિ-  
મિત આયુને છોડીને શેષ સમસ્ત આયુ અપવર્તનશીલ હોવાથી અને ક્ષણક્ષણમાં  
આયુનો ક્ષય હોવાથી ત્રિપલ્યોપમપરિમિત ત્રણ પલ્યોપમ આયુ પણ અલ્પજ છે.

દીર્ઘકાલિક આયુકર્મના પરમાણુઓને ખેંચીને થોડી સ્થિતિવાળા આયુકર્મના  
પરમાણુઓમાં સ્થાપિત કરવાનું નામ અપવર્તન છે

સોપક્રમ અને નિરુપક્રમના ભેદથી આયુ બે પ્રકારની છે. ભગવતી સૂત્રમાં  
ભગવાને આ વાત કહી છે:—

“ જીવા ણં મંતે ! કિં સોવક્કમાડયા નિરુવક્કમાડયા ?,  
ગોયમા ! જીવા સોવક્કમાડયા વિ ણિરુવક્કમાડયા વિ ”

ઇતિ ( મ. શ. ૨૦ ઉ. ૧૦ ).

સોપક્રમાયુર્નામ અપ્રાપ્તકાલસ્યાયુષો નિર્જરણમ્ । તદ્વિન્નં નિરુપક્રમાયુઃ । યદા જીવઃ સ્વાયુષસ્તૃતીયભાગે તૃતીયભાગતૃતીયભાગે વા જઘન્યત એકેન દ્વાભ્યાં વોત્કૃષ્ટતઃ સપ્તભિરષ્ટભિર્વાઽઽકર્ષૈરથવાઽન્તર્મુહૂર્ત્તપ્રમાણસ્વરુપેઽન્તકાલે. સ્વાત્મપ્રદેશનાડિકાન્તર્વર્તિન આયુષ્કર્મવર્ગણાપુદ્ગલાન્પ્રયત્નવિશેષેનાયુષ્કતયા રચયતિ તદા નિરુપક્રમાયુર્ભવતિ, તદ્વિન્નં સોપક્રમાયુઃ । આકર્ષશ્ચ તથાવિધેન પ્રયત્નેન કર્મપુદ્ગલોપાદાનમ્ । નનુ કથમેકેન દ્વાભ્યાં ત્રિભિઃ સપ્તભિરષ્ટભિર્વાઽઽકર્ષૈરાયુર્વધ્નાતીતિ ચેદાહ—

હે ભદન્ત ! જીવ સોપક્રમ-આયુવાલે હોતે હૈં યા નિરુપક્રમ-આયુવાલે ? હે ગૌતમ ! જીવ દોનોં પ્રકાર કે આયુવાલે હોતે હૈં સોપક્રમઆયુવાલે મી હોતે હૈં ઓર નિરુપક્રમઆયુવાલે મી ।

જીવકો જિતના અપને ભવકે આયુકા બંધ હુઆ હૈં ઉતને કા ઉદયા-નુસાર ભોગ હુએ વિના હી કિસી નિમિત્ત કે વશ પહિલે હી ક્ષય હોનેકા નામ સોપક્રમ આયુ હૈં । ઇસસે વિપરીત નિરુપક્રમ આયુ હૈં ।

જિસ સમય જીવ અપની આયુ કે તૃતીય ભાગમેં અથવા તૃતીય ભાગ કે મી તૃતીય ભાગમેં કમસે કમ એક યા દો આકર્ષોં સે જ્યાદા સે જ્યાદા સાત યા આઠ આકર્ષોંસે અથવા અન્તસમય કે અન્તર્મુહૂર્ત્ત-પ્રમાણ-કાલમેં અપની આત્માકે પ્રદેશોં કી નાડિકા કે મીતર રહે હુએ આયુકર્મકી વર્ગણા કે પુદ્ગલસ્કન્ધોંકો પ્રયત્નવિશેષ સે આયુપને પરિણમાતા હૈં ઉસ સમય નિરુપક્રમ આયુ કા બન્ધ હોતા હૈં । ઇસસે વિપરીત સોપક્રમ આયુ કા બન્ધ હોતા હૈં । ઉસ પ્રકાર કે પ્રયત્ન સે કર્મપુદ્ગલોં કા ગ્રહણ કરના આકર્ષ હૈં ।

હે ભદન્ત ! જીવ સોપક્રમ આયુવાળાં હોય છે કે નિરુપક્રમ આયુવાળાં ? હે ગૌતમ ! જીવ બન્ને પ્રકારની આયુવાળા થાય છે. સોપક્રમ આયુવાળાં પણ થાય છે અને નિરુપક્રમ આયુવાળાં પણ થાય છે.

જીવને જેટલો પોતાના ભવની આયુનો બંધ થયો છે તેટલાનો ઉદયાનુસાર ભોગ થયા વગર કોઈ નિમિત્તથી પહેલા જ ક્ષય હોવાનું નામ સોપક્રમ આયુ છે, તેનાથી વિપરીત નિરુપક્રમ આયુ છે. જે વખતે જીવ પોતાની આયુના તૃતીય ભાગમાં અથવા તૃતીય ભાગના પણ તૃતીય ભાગમાં ઓછામાં ઓછાં એક અગર બે આકર્ષોંથી વધારેમાં વધારે સાત અગર આઠ આકર્ષોંથી અથવા અન્ત સમયના અન્તર્મુહૂર્ત્ત પ્રમાણ કાળમાં પોતાના આત્માના પ્રદેશોની નાડિની અંદર રહેલા આયુકર્મની વર્ગણના પુદ્ગલસ્કન્ધોને પ્રયત્નવિશેષથી આયુપણે પરિણામે છે, તે સમય નિરુપક્રમ આયુનો બંધ કરે છે. તેનાથી વિપરીત સોપક્રમ આયુ બાધે છે. આ પ્રકારના પ્રયત્નથી કર્મપુદ્ગલોનું ગ્રહણ કરવું આકર્ષ છે.



યદા જીવસ્તીત્રેણાયુર્વન્ધાધ્યવસાયેન જાતિનામનિધત્તાયુર્વન્ધનાતિ તદૈકેનૈવાકર્ષેણ વન્ધનાતિ । મન્દેન દ્વાભ્યામાકર્ષાભ્યાં, મન્દતરેણ ત્રિભિરાકર્ષૈઃ, મન્દતમેન ચાધ્યવસાયેન ચતુર્ભિઃ પશ્ચભિઃ પઙ્કભિઃ સપ્તભિસ્ત્કૃષ્ટેનાષ્ટાભિર્વાઽઽકર્ષૈર્જાતિનામનિધત્તાયુર્વન્ધનાતિ ।

এবং গতিস্থিত্যবগাহনাপ্রদেশানুভাবনামনিধত্ভাযুষ্কাণ্যপি জীবো বন্ধনাতি । নিধত্ভং হি আযুষা সহ জাতিগত্যাदीनां नियमत एकरूपेण बन्धनमिति । उक्तञ्च—

‘ जीवा णं भन्ते ! जाइनामनिधत्ताउयं कइहिं आगरिसेहिं पकरन्ति ? गोयमा ! जहन्नेणं एक्केण दोहिं वा तिहिं वा उक्कोसेणं अट्ठहिं ’ इति ॥

छाया—जीवाः खलु भदन्त ! जातिनामनिधत्तायुष्कं कतिभिराकर्षैः— प्रकुर्वन्ति ? गौतम ! जघन्येन एकेन द्वाभ्यां वा त्रिभिर्वा उत्कर्षेणाष्टभिः । इति ।

શહ્લા—યહ જીવ કૈસે એક આકર્ષસે અથવા દો આકર્ષોસે એવં ત્રીન અથવા સાત આઠ આકર્ષોસે આયુ બાંધતા હૈ ?

उत्तर—जिस समय जीव आयु बांधने के तीव्र अध्यवसाय से जातिनामनिधत्त आयु का बंध करता है उस समय एक आकर्ष से ही उसका बन्ध करता है, मन्द अध्यवसाय से दो आकर्षों से, मन्दतर अध्यवसाय से तीन आकर्षों से, मन्दतम अध्यवसाय से पांच छह और सात और ज्यादा से ज्यादा आठ आकर्षों से जातिनामनिधत्त आयुका बंध किया करता है । इसी तरह से गति-स्थिति-अवगाहना-प्रदेश-अनुभाव-नामनिधत्त आयुओं का भी यह जीव बन्ध करता है । आयुबंध के साथ अन्य जाति गति आनुपूर्वी आदि का नियम से जो बंध होता है उसका नाम निधत्त है, कहा भी है—

આ જીવ કેવી રીતે એક આકર્ષથી અથવા બે આકર્ષોથી તેમજ ત્રણ અથવા સાત આઠ આકર્ષોથી આયુ બાંધે છે ?

જે વખતે જીવ આયુ બાંધવાના તીવ્ર અધ્યવસાયથી જાતિનામનિધત્ત આયુનો બંધ કરે છે, તે વખતે એક આકર્ષથી જ તેનો બંધ કરે છે, મંદ અધ્યવસાયથી બે આકર્ષોથી, મન્દતર અધ્યવસાયથી ત્રણ આકર્ષોથી, મન્દતમ અધ્યવસાયથી પાંચ, છ, સાત અને વધારેમાં વધારે આઠ આકર્ષોથી જાતિનામનિધત્ત આયુનો બંધ કરે છે. આવી રીતે ગતિ-સ્થિતિ-અવગાહના-પ્રદેશ-અનુભાવ-નામનિધત્ત આયુઓનો પણ એ જીવ બંધ કરે છે. આયુબંધની સાથે અન્ય જાતિ ગતિ આનુપૂર્વી આદિનો નિયમથી જ બંધ થાય છે તેનું નામ નિધત્ત છે. કહ્યું છે કે:—

સોપક્રમાયુશ્વોપક્રમકારણેદંડકશાશસ્ત્રરજ્જુવદ્વિજલપતનવિષવ્યાલશીતોષ્ણારતિ-  
ભયક્ષુત્પિપાસાવ્યાધિમૂત્રપુરીષનિરોધાતિભોજનાજીર્ણભોજનઘર્ષણશ્વાસપ્રતિરોધનપીડ-  
નરૂપૈરકાલે યસ્યાયુષો નાશસ્તત્ ।

ઉક્તञ्च—દંડ—કસ—સત્થ—રજ્જૂ, અગ્ગી—ઉદગ—પડણં વિસં વાલા ।

સી—ઉણ્હં અરહ્ ભયં, खुहा पिवासा य वाही य ॥ ૧ ॥

મુત્તપુરીસનિરોહે, जिष्णाजिष्णे य भोयणं बहुसो ।

ઘંસણ—ઘોલણ—પીલણ, आउस्स उवक्कमा एए ॥ ૨ ॥

છાયા—દંડઃ કશા શસ્ત્રં રજ્જુરગ્નિરુદકં પતનં વિષં વ્યાલાઃ ।

શીતમુષ્ણમરતિર્ભયં ક્ષુત્પિપાસા ચ વ્યાધિશ્ચ ॥ ૧ ॥

મૂત્રપુરીષનિરોધો જીર્ણેઽજીર્ણે ચ ભોજનં बहुशः ।

ઘર્ષણં ઘોલનં પીડનમાયુષ ઉપક્રમા એતે ॥ ૨ ॥ इति ।

“જીવા ણં ભંતે ! જાહનામનિઘત્તાઉયં કતિહિં આગરિસેહિં પકરંતિ ? ગોયમા ! જહન્નેણં દોહિં વા તિહિં વા ઉક્કોસેણં અટ્ઠહિં ।” ઇતિ ।

इस सूत्र का अर्थ पूर्वोक्तरूप से ही है ।

સોપક્રમ આયુ વહુ હૈ જિસકા—ઉપક્રમ કે કારણભૂત દંડ, ચાવુક, શસ્ત્ર, રજ્જુ, અગ્નિ, જલ, વિષ, સર્પ, શીત, ઉષ્ણ, અરતિ, ભય, ક્ષુધા, તૃષ્ણા, વ્યાધિ, મૂત્ર-પુરીષ-લઘુનીત વડીનીત—કા નિરોધ, અતિભોજન, અજીર્ણ ભોજન, ડોરી આદિ બાંધકર ઘસીટના, શ્વાસ કા નિરોધ ઔર યંત્ર આદિ મેં પીડના આદિ સે અકાલ મેં હી અન્ત હો જાય, કહા બી હૈ—

“દંડ-કસ-સત્થ-રજ્જૂ-અગ્ગી-ઉદગ-પડણં-વિસં-વાલા ।

સી-ઉણ્હં-અરહ્-ભયં, खुहा पिवासा य वाही य ॥ ૧ ॥

“જીવા ણં ભંતે ! જાહનામનિઘત્તાઉયં કતિહિં આગરિસેહિં પકરંતિ ? ગોયમા ! જહન્નેણં દોહિં વા તિહિં વા ઉક્કોસેણં અટ્ઠહિં ।” ઇતિ ।

આ સૂત્રનો અર્થ પૂર્વોક્ત રૂપથી જ છે.

સોપક્રમ આયુ તે છે જેના ઉપક્રમના કારણભૂત દંડ, ચાવુક, શસ્ત્ર, રજ્જુ, અગ્નિ, જળ, વિષ, સર્પ, શીત, ઉષ્ણ, અરતિ, ભય, ક્ષુધા, તૃષ્ણા, વ્યાધિ, મૂત્ર-પુરીષ, —લઘુનીત—બડીનીત નો નિરોધ, અતિભોજન, અબુલ્લું ભોજન, ડોરી આદિ બાંધીને ઘસડવું, શ્વાસનો નિરોધ અને યંત્ર આદિથી પીડવું, આદિથી અકા-  
ળમાં જ અંત થાય. કહ્યું છે:—

“દંડ-કસ-સત્થ-રજ્જૂ, અગ્ગી ઉદગ પડણં વિસં વાલા ।

સી-ઉણ્હં અરહ્ ભયં, खुहा पिवासा य वाही य ॥ ૧ ॥



एतेन संयमरहितमानवानां स्वल्पमेवायुस्तत्र शतशो विघ्नसमूहाः । तथा हि मनुजानामायुः प्रायशः शतवर्षपरिमितं भवति । तदद्धं रात्रिषु गतम्, अवशिष्टार्द्धं च बालत्वे वृद्धत्वे च न श्रुतचारित्रधर्माचरणकर्तृत्वं जीवस्य भवति । कियदवशिष्टमायुर्नानाविधरोगशोकवियोगादिभिरेवाक्रान्तं भवति, कस्मात्तर्हि सौख्यं प्राणिनां भवेत् ।

मुत्त-पुरीसनिरोहे, जिण्णाजिण्णे य भोयणे बहुसो ।

घंसण घोलण पीलण, आउस्स उवक्कमा एए ॥ २ ॥

अर्थ पहले आचुका है ।

अतः संयमरहित जीवों का दीर्घकालिक आयु भी अल्प जैसा ही है, इसमें भी हजारों विघ्न आते रहते हैं । विचारिये तो—

इस पञ्चम काल में ज्यादा से ज्यादा सौ वर्ष का आयु है । इस सौ वर्ष के आयु का हिसाब लगाया जाय तो पता लगेगा कि आधा आयु तो सोते २ व्यतीत हो जाता है बाकी जो आधा बचता है उसमें बाल-अवस्था वृद्धावस्था आती है । इन अवस्थाओं में जीव किसी भी प्रकार से धर्मादिक शुभ कार्यों का आचरण नहीं कर सकता । अनेक प्रकार के रोग शोक और वियोगादिजन्य दुःख इसके अवशिष्ट जीवन को सदा त्रस्त किये रहते हैं । यौवन अवस्था में स्त्री का प्रेम इसे आराम नहीं लेने देता । इस पर यह छन्द है—

“ बालपने में ज्ञान न लह्यो, तरुण समय तरुणीरत रह्यो ।

अर्धमृतक सम बूढापनो, कैसे रूप लखे अपनो ॥ १ ॥

मुत्त-पुरीસ-નિરોહે, જિણ્ણાજિણ્ણે ય ભોયણે બહુસો ।

ઘંસણ ઘોલણ પીલણ આઉસ્સ ઉવક્કમા એએ ॥ ૨ ॥

અર્થ પહેલાં આવેલ છે.

માટે સંયમરહિત જીવોની દીર્ઘકાલિક આયુ પણ અલ્પ જેવી જ છે, તેમાં પણ હજારો વિઘ્નો આવે છે. વિચારીએ તો આ પાંચમાં કાળમાં વધારેમાં વધારે સો વર્ષની આયુ છે. આ સો વર્ષની આયુનો હિસાબ કરીએ તો માત્રમ પંડશે કે અડધી આયુ તો સુવામાં જ જાય છે બાકીની જો અડધી આયુ છે તેમાં બાલઅવસ્થા અને વૃદ્ધાવસ્થાનો સમાવેશ છે. આ અવસ્થાઓમાં જીવ કેઈ પણ પ્રકારે ધર્માદિક શુભ કાર્યોનું આચરણ કરી શકતો નથી. અનેક પ્રકારના રોગ-શોક અને વિયોગાદિજન્ય દુઃખ તેના અવશિષ્ટ જીવનને સદા ત્રસ્ત કરતા રહે છે. યૌવન અવસ્થામાં સ્ત્રીનો પ્રેમ તેને આરામ લેવા દેતો નથી, આ ઉપર છંદ છે:—

एतादृशस्वल्पायुषः कृते च शिरसि परिभ्राम्यदनेकमहाविपत्तिकलापः संयो-  
गाद्यर्थी विवेकविकलो मानवोऽनिश्चितस्ततः परिभ्रमति । स्वल्पेनैव कालेनायुषः  
क्षयोऽवश्यं भावीत्यहो मौढ्यं प्राणिनो यदर्थं सततं परितप्यमानो धावतीति भावः ।

यह हालत है इस जीव की; फिर कहो इसे सुख कैसे प्राप्त हो सकता है ? फिर भी इतनी छोटी सी आयु को लेकर यह अनेक प्रकार की शिर पर घूमनेवाली आपत्तिविपत्तियों का कुछ भी ख्याल न कर रात-दिन पर पदार्थों के अपनाने में ही मस्त हो रहा है, और अपने कर्तव्य का कुछ भी ख्याल कहीं कर रहा है । अन्त में आयु के समाप्ति होने पर मृत्युशय्या पर विलाप करते हुए इस जीव का कोई भी रक्षक नहीं होगा । वे सब कुटुम्बी-जिनके लिये यह रात-दिन परिश्रम करके अपने खून का पानी कर रहा था-इससे जुदे हो जावेंगे और इसे फाल्गुन मास की होली की तरह चिता में जला देंगे ।

इस प्रकार आयु की अल्पता को देखता हुआ यह जो नहीं चेत रहा है यही एक इसकी बड़ी भारी मूर्खता है । जो इससे जुदे हो जाने वाले हैं उन्हीं के लिये यह रात-दिन सहा परिश्रम करने में लगा हुआ है । इसकी इस महा अज्ञानता पर ज्ञानियों को बड़ा भारी आश्चर्य होता है । यहां तक-“अप्पं खलु आउयं इहमेगेसि माणवाणं” इस वाक्य का अर्थ हुआ है ।

“ बालपनमें જ્ઞાન ન લહ્યો, તરુણ સમય તરુણીરત રહ્યો ।

અર્ધમૃતકસમ વૃદ્ધાપનો, કૈસે રૂપ લખે અપનો ॥ ૧ ॥

આવી હાલત છે આ જીવની. હવે કહો તેને સુખ કેવી રીતે પ્રાપ્ત થાય ? આટલી થોડી આયુ હોવા છતાં તે અનેક પ્રકારની શિર પર ધૂમવાવાળી આપત્તિ વિપત્તિઓનો પણ જરા ખ્યાલ ન કરતાં રાત-દિન પર પદાર્થોને અપનાવવામાં જ મગ્ન રહે છે, અને પોતાના કર્તવ્યનો જરા પણ ખ્યાલ કરતો નથી. અંતમાં આયુની સમાપ્તિ થવાથી મૃત્યુશય્યા પર વિલાપ કરે છે. આ જીવનો કોઈ પણ રક્ષક થશે નહિ. આ બધા કુટુંબીજનો માટે પોતાના લોહીનું પાણી કરતો હતો તેનાથી જુદો થઈ જશે અને તેને કાગણ માસની હોળી માફક ચિતામાં સળગાવી દેશે.

આ પ્રકારે આયુની અલ્પતાને દેખીને પણ ચેતતો નથી, એજ એક, જીવની મૂર્ખતા છે. જેનાથી જુદું થવાનું છે તેવાઓના માટે રાત-દિન પરિશ્રમ ઉઠાવે છે. આ તેની અજ્ઞાનતા ઉપર જ્ઞાનીઓને મોટું આશ્ચર્ય થાય છે. અહીં સુધી-

“ અપ્પં સ્વલુ આઉયં ઇહમેગેસિ માણવાણં ” આ વાક્યનો અર્થ થયો છે.

દણ્ડકશાદિરૂપોપક્રમાભાવેऽપિ પુનસ્તે વાર્દ્ધકકાલવ્યાલકચલિતા માનવા મર-  
ણાદપિ ગુરુતરાં દુર્દશામનુભવન્તિ । સકલાનિ ચેન્દ્રિયાણિ જરાભિભૂતતયા શિથિ-  
લતાં ગતાનિ, તરુણાયમાનયા ચ તૃણયા વ્યાકુલા મૂઢા ભવન્તીતિ દર્શયતિ—“તથ-  
થે”-તિ । વાર્દ્ધક્યે સર્વેષામિન્દ્રિયાણાં સ્વકાર્યકરણાક્ષમતા જાયતે તદા “શ્રોત્રપરિ-  
જ્ઞાનૈઃ પરિહીયમાનૈઃ” શૃણોતિ ભાષાવર્ગણાપરિણતાન્ પુદ્ગલાનિતિ શ્રોત્રમ્ । તત્ત્વ  
દ્રવ્યભાવભેદેન દ્વિવિધમ્ । તત્ર કદમ્બપુષ્પસદૃશં દ્રવ્યાત્મકં, ભાવરૂપં હિ ભાષાદ્રવ્ય-  
ગ્રહણલબ્ધ્યુપયોગસ્વભાવાત્મકમ્ ।

દણ્ડ કશા આદિરૂપ ઉપક્રમ કે અભાવ સે યદિ આયુ કી  
પૂર્ણતા સ્ત્રી જીવ કો પ્રાપ્ત હુઈ તો યહ જીવ વૃદ્ધાવસ્થા મેં મરણાન્તિક  
કષ્ટોં કો ભોગતા હૈ, યહી બાત આગે કે વાક્યોં સે સ્પષ્ટ કી જાતી હૈ ।

જબ યહ વૃદ્ધાવસ્થાસંપન્ન હોતા હૈ ઉસ સમય ઇસકા શ્રોત્રેન્દ્રિય-  
જન્ય જ્ઞાન બિલકુલ અત્પ હો જાતા હૈ, અર્થાત્ જિસ પ્રકાર ઇસકી  
શ્રોત્રેન્દ્રિય તરુણાવસ્થા મેં કામ દેતી થી ઉસ પ્રકાર સે ઇસ અવસ્થા મેં  
નહીં દેતી । ઇસ સમય જબકિ પ્રત્યેક ઇન્દ્રિયાં શિથિલ હો જાતી હૈં તબ  
એક ચીજ ઇસકી તરુણ હોતી રહતી હૈ વહ હૈ ઇસકી તૃણા—“તૃણા  
ચ તરુણાયતે ” ।

“શૃણોતિ ભાષાવર્ગણાપરિણતપુદ્ગલાન્ ઇતિ શ્રોત્રમ્” ભાષાવર્ગણા  
કે રૂપ મેં પરિણત પુદ્ગલોં કો જો સુનતા હૈ ઉસકા નામ શ્રોત્ર હૈ । વહ  
શ્રોત્ર દ્રવ્ય ઓર ભાવ કે ભેદ સે દો પ્રકાર કા હૈ । જિસકા આકાર  
કદમ્બ પુષ્પ કે સમાન હૈ વહ દ્રવ્ય શ્રોત્ર હૈ, જિસકે દ્વારા ભાષાવર્ગણા

દંડ કશા આદિ રૂપ ઉપક્રમના અભાવથી કહાય આયુની પૂર્ણતા પણ  
જીવની પુરી થઈ તો આ જીવ વૃદ્ધાવસ્થામાં મરણાન્તિક કષ્ટોને ભોગવે છે આ  
વાત આગળના વાક્યોથી સ્પષ્ટ છે.

ન્યારે તે વૃદ્ધાવસ્થાસંપન્ન થાય છે ત્યારે તેનું શ્રોત્રેન્દ્રિયજ્ઞાન બિલકુલ  
અત્પ થઈ જાય છે અર્થાત્ જે પ્રકારે તેની શ્રોત્રેન્દ્રિય તરુણાવસ્થામાં કામ દેતી હતી  
તે પ્રકારે વૃદ્ધાવસ્થામાં દેતી નથી. આ સમયે દરેક ઇન્દ્રિય શિથિલ થઈ જાય  
છે ત્યારે એક જ ચીજ તેની તરુણા રહે છે, તે ફક્ત તૃણા. “તૃણા ચ તરુણાયતે ।”

“શૃણોતિ ભાષાવર્ગણાપરિણતપુદ્ગલાન્ ઇતિ શ્રોત્રમ્ ।”

ભાષાવર્ગણાના રૂપમાં પરિણત પુદ્ગલોને જે સુણે છે (સાંભળે છે)  
તેનું નામ શ્રોત્ર છે. તે શ્રોત્ર દ્રવ્ય અને ભાવથી જે પ્રકારે છે. જેનો આકાર  
કદમ્બપુષ્પ સમાન છે, તે દ્રવ્ય શ્રોત્ર છે. જે દ્વારા ભાષાવર્ગણાના રૂપમાં

પરિ=સર્વતો ઘટપટાદિશબ્દવિષયકાણિ જ્ઞાનાનિ=પરિજ્ઞાનાનિ શ્રોત્રેણ પરિ-જ્ઞાનાનિ શ્રોત્રપરિજ્ઞાનિ, તૈઃ શ્રોત્રપરિજ્ઞાનૈઃ, વાર્ધ્વક્યેન પરિહીયમાનૈઃ=ક્ષીયમાણૈ-રેકદાત્મનો મૂઢતાં જનયતિ, इत्युत्तरेण सम्बन्धः । वार्ध्वक्ये च श्रोत्रेन्द्रियस्य शिथिलतामुपगतस्य क्षीयमाणस्वशक्तिकस्य शब्दादिविषयग्रहणे चाक्षमता संजायते, येन च बधिरो भवति, घटं टमिव शृणोति न शृणोति वेति तात्पर्यम् । एवं रोगेणापि श्रोत्रपरिज्ञानानि क्षीयमाणानि भवन्तीति बोध्यम् । एवं सर्वत्र योज्यम् ।

કે રૂપ મેં પરિણત પુદ્ગલસ્કન્ધોં કા ગ્રહણ ક્રિયા જાતા હૈ વહ ભાવશ્રોત્ર હૈ । इसके भी दो भेद हैं—(१) लब्धि, और (२) उपयोग । भाषा के रूप में परिणत पुद्गलस्कन्धों को जाननेरूप जो क्षयोपशम है उसका नाम लब्धि है, अर्थात् शब्दों के जानने की शक्ति का नाम लब्धि है, और उन शब्दों के जाननेरूप आत्मा का जो व्यापार-प्रयत्नविशेष है उसका नाम उपयोग है । परिज्ञान शब्द का अर्थ है—सर्व प्रकार से अथवा सब तरफ से घट पट आदि शब्दों का विषय करने वाला ज्ञान । वृद्धावस्था में श्रोत्रजन्य ज्ञान क्षीणप्राय हो जाता है—कोई कहता कुछ है वृद्ध सुनता कुछ है, अतः इस अवस्था में इस प्रकार की हालत आत्मा में मूढता को उत्पन्न करती है । “ एकदा आत्मनो मूढतां जनयति ” इस उत्तर पदका सम्बन्ध प्रत्येक के साथ लगा लेना चाहिये, अर्थात्—“ वार्ध्वक्ये परिहीय-मानैः श्रोत्रपरिज्ञानैः अभिक्रान्तं वयः समीक्ष्य मूढभावं जनयति, परिहीय-मानैः चक्षुर्ज्ञानैः अभिक्रान्तं वयः समीक्ष्य मूढभावं जनयति, ” इत्यादि ।

પરિણત પુદ્ગલ સ્કન્ધોને ગ્રહણ કરે છે. તે ભાવશ્રોત્ર છે. તેના પણ બે ભેદ છે—(૧) લબ્ધિ, અને (૨) ઉપયોગ. ભાષાના રૂપમાં પરિણત પુદ્ગલસ્કન્ધોના જાણવારૂપ ક્ષયોપશમ છે તેનું નામ લબ્ધિ છે, અર્થાત્ શબ્દોની શક્તિનું જાણવું તેનું નામ લબ્ધિ, અને તે શબ્દોને જાણવારૂપ આત્માનો જે વ્યાપાર-યત્નવિશેષ છે તેનું નામ ઉપયોગ. પરિજ્ઞાન શબ્દનો અર્થ, સર્વ પ્રકારથી અથવા સર્વ તરફથી ઘટ પટ આદિ શબ્દોનો વિષય કરવાવાળું જ્ઞાન. વૃદ્ધાવસ્થામાં શ્રોત્રજન્ય જ્ઞાન ક્ષીણપ્રાય થાય છે. કોઈ કહે છે કંઈ અને વૃદ્ધ માણસ સાંભળે છે બીજું, તેથી આ અવસ્થામાં આ પ્રકારની હાલત આત્મામાં મૂઢતાને ઉત્પન્ન કરે છે.

“ एकदा आत्मनो मूढतां जनयति ” આ ઉત્તરપદનો સંબંધ પ્રત્યેકની સાથે લગાડવો જોઈએ, અર્થાત્ “ વાર્ધ્વકે પરિહીયમાનૈઃ શ્રોત્રપરિજ્ઞાનૈ અભિ-ક્રાન્તં વય. સમીક્ષ્ય મૂઢભાવં જનયતિ, પરિહીયમાનૈ ચક્ષુર્જ્ઞાનૈઃ અભિક્રાન્તં વયઃ સમીક્ષ્ય મૂઢભાવં જનયતિ ” इत्यादि,

ચક્ષુઃપરિજ્ઞાનૈઃ-ચક્ષુષા મમૂરસંસ્થાનેન પરિજ્ઞાનાનિ-શુક્લનીલાદિરૂપવિષયકાણિ ચક્ષુઃપરિજ્ઞાનાનિ, તૈઃ, પરિહીયમાનૈઃ=નશ્યમાનૈઃ । ગ્રાણપરિજ્ઞાનૈઃ-ગ્રાણેન

પ્રાણી વૃદ્ધાવસ્થા મેં બહિરા હો જાતા હૈ, ક્યોંકિ ઉસ સમય ઇસકી શ્રોત્રેન્દ્રિય શિથિલ હો જાતી હૈ જિસસે અપને વિષય કો સ્પષ્ટરૂપ સે નહીં જાનતી, અર્થાત્ ઇસ સમય પ્રત્યેક ઇન્દ્રિય શબ્દાદિકવિષયોં કો ગ્રહણ કરને મેં ક્ષીણશક્તિ-( નાકાબિલ ) હો જાતી હૈ, અતઃ વહ ઉન્હેં ગ્રહણ કરને મેં અસમર્થ હોતી હૈ, ઇસીકારણ સે બહિરા વ્યક્તિ ઘટ ( ઘડા ) શબ્દ કહે જાને પર ઉસે પટ ( વસ્ત્ર ) શબ્દ જૈસા સુનતા હૈ, અથવા ધીરે વોલને પર નહીં મી સુનતા હૈ । જિસ પ્રકાર વૃદ્ધાવસ્થા કે કારણ સબ ઇન્દ્રિયાં શિથિલ હો જાતી હૈં ઉસી પ્રકાર રોગાદિક કારણોં સે મી ઉનમેં શિથિલતા આજાતી હૈ, યહ સ્વયં સમજ લેના ચાહિયે, ઓર ઇસકા સમ્બન્ધ મી પ્રત્યેક ઇન્દ્રિય કી પરિહીનતા કે સાથ જોડ લેના ચાહિયે । અર્થાત્-જિસ પ્રકાર શ્રોત્રેન્દ્રિય મેં સ્વવિષયગ્રહણરૂપ વ્યાપાર કે પ્રતિ પરિહીનતા કા કારણ રોગાદિક સે ઉત્પન્ન શિથિલતા હૈ ઉસી પ્રકાર પ્રત્યેક ઇન્દ્રિય મેં મી અપને-અપને વિષય કો ગ્રહણ કરને રૂપ વ્યાપાર કી પરિહીનતા મેં રોગાદિક કારણ હૈ ।

ચક્ષુ-ઇન્દ્રિય કા આકાર મસૂર કી દાલ કે તુલ્ય હૈ, ઇસકા વિષય શુક્લ, નીલ આદિ વર્ણ હૈ, ઇસ અવસ્થા મેં અથવા રોગાદિક કારણોં સે

પ્રાણી વૃદ્ધાવસ્થામાં બહેરો થાય છે, કારણકે તે વખતે તેની શ્રોત્રેન્દ્રિય શિથિલ થાય છે, જે પોતાના વિષયને સ્પષ્ટ રૂપથી નથી બાણતી, અર્થાત્ આવખતે દરેક ઇન્દ્રિય શબ્દાદિક વિષયને ગ્રહણ કરવામાં શક્તિહીન થાય છે અને તેને ગ્રહણ કરવામાં અસમર્થ બને છે. આ કારણે બહેરો માણસ ધડાને વસ્ત્ર શબ્દના રૂપમાં સાંભળે છે અને હળવેથી બોલવા આવે તો સાંભળતો નથી. જેમ વૃદ્ધાવસ્થાના કારણે સઘળી ઇન્દ્રિયો શિથિલ બને છે તે પ્રકારે રોગાદિક કારણોથી પણ તેમાં શિથિલતા આવે છે તે પોતાની મેળે બાણવું બેઠાયે, અને તેનો સંબંધ પણ દરેક ઇન્દ્રિયની પરિહીનતા સાથે બેઠવો બેઠાયે, અર્થાત્ જેમ શ્રોત્રેન્દ્રિયમાં સ્વવિષય ગ્રહણ કરવા રૂપ વ્યાપાર પ્રતિ પરિહીનતાનું કારણ રોગાદિકથી ઉત્પન્ન થતી શિથિલતા છે તેમ પ્રત્યેક ઇન્દ્રિયને પોતપોતાનાં વિષયને ગ્રહણ કરવા રૂપ વ્યાપારની પરિહીનતામાં રોગાદિક કારણ છે.

ચક્ષુ ઇન્દ્રિયનો આકાર મસૂરની દાળ જેવો છે. તેનો વિષય શુક્લ, નીલ આદિ વર્ણ છે. આ અવસ્થામાં અથવા રોગાદિક કારણોથી ચક્ષુ ઇન્દ્રિય બ્યારે

અતિમુક્તકકુસુમાકારેણ પરિજ્ઞાનાનિ-ગન્ધવિષયકાણિ, તૈઃ, પરિહીયમાનૈઃ=પરિત્ય-  
જ્યમાનૈઃ । રસનપરિજ્ઞાનૈઃ-રસનેન હુરપ્રાકારેણ પરિજ્ઞાનાનિ-મધુરતિત્ત્વાદિરસવિષય-  
કાણિ જ્ઞાનાનિ, તૈઃ, પરિહીયમાનૈઃ=ક્ષીયમાણૈઃ । સ્પર્શપરિજ્ઞાનૈઃ-સ્પર્શન-સ્પર્શને-  
ન્દ્રિયેણ નાનાવિધાકારેણ પરિજ્ઞાનાનિ-શીતોષ્ણસ્પર્શાદિવિષયકાણિ જ્ઞાનાનિ, તૈઃ,  
પરિહીયમાનૈઃ=વિલીયમાનૈઃ । इति सकलानामपीन्द्रियाणां वार्द्धक्येन रोगोदयेन च  
स्वस्वविषयग्राहकशक्तयः परिक्षीणा भवन्तीति भावः । अभિક्रान्तं च खलु वयः  
सम्प्रेक्ष्य स एकदा मूढभावं जनयतीत्युत्तरेणान्वयः । श्रोत्रचक्षुर्घ्राणरसनस्पर्शनाना-

ચક્ષુઃ-ઇન્દ્રિય જવ શુક્લ-નીલાદિરૂપ અપને વિષયકો ગ્રહણ કરને વાલે જ્ઞાન  
સે રિત્ત હો જાતી હૈ; ઘ્રાણ-ઇન્દ્રિય-જિસકા આકાર અતિમુક્તક પુષ્પ  
કે સમાન હૈ, વહ જવ ઇસ અવસ્થા મેં અથવા રોગાદિક કારણોં સે  
અપને ગન્ધગ્રહણ કરને વાલે જ્ઞાન સે શૂન્ય હો જાતી હૈ, રસના-ઇન્દ્રિય-  
જિસકા આકાર સુરપા કે સદૃશ હૈ, ઓર જો મધુર, તિત્ત આદિ રસોં  
કો વિષય કરતી હૈ વહ ભી જવ ઇસ અવસ્થામેં અથવા રોગાદિ કારણોં  
સે અપને વિષયકો ગ્રહણ કરનેવાલે જ્ઞાનમેં અસમર્થ હો જાતી હૈ; સ્પર્શન-  
ઇન્દ્રિય-જિસકા આકાર નિયત નહીં હૈ કિન્તુ અનેક પ્રકારકે આકાર કો  
ધારણ કરનેવાલી હૈ, ઓર જિસકા વિષય આઠ પ્રકાર કા શીત-ઉષ્ણ  
આદિ સ્પર્શ હૈ વહ જવ ઇસ અવસ્થામેં અથવા રોગાદિક કારણોંસે શિથિલ  
હો જાતી હૈ તવ ઇસ આત્મામેં મૂઢતા ઉત્પન્ન હોતી હૈ યહ અનુભવસિદ્ધ  
વાત હૈ । મૂઢતા ઉત્પન્ન હોનેકા કારણ યહી હૈ કિ ઇસ હાલતમેં પ્રત્યેક  
ઇન્દ્રિય અપને ૨ વિષયકો ગ્રહણ કરને કે બોધસે વિકલ હો જાતી

શુક્લ-નીલાદિ રૂપ પોતાના વિષયને ગ્રહણના જ્ઞાનથી રિત્ત થાય છે, ઘ્રાણ-  
ઇન્દ્રિય જેનો આકાર અતિમુક્તક પુષ્પ સમાન છે. તે ત્યારે આ અવસ્થામાં  
અથવા રોગાદિક કારણોથી પોતાને ગન્ધ ગ્રહણ કરવાના જ્ઞાનથી શૂન્ય થાય છે,  
રસના-ઇન્દ્રિય જેનો આકાર તાવેથા જેવો છે અને જે મધુર, તિત્ત આદિ રસોનો  
વિષય કરે છે તે પણ આવી અવસ્થામાં અથવા રોગાદિક કારણોથી પોતાના વિષયને  
ગ્રહણ કરવાના જ્ઞાનમાં અસમર્થ થાય છે, સ્પર્શન-ઇન્દ્રિય જેનો આકાર નિયત  
નથી પરંતુ અનેક પ્રકારના આકારને ધારણ કરે છે અને જેના વિષય આઠ  
પ્રકારના શીત-ઉષ્ણ આદિ સ્પર્શ છે તે પણ આ અવસ્થામાં અથવા રોગાદિક  
કારણોથી શિથિલ થાય છે ત્યારે આત્મામાં મૂઢતા ઉત્પન્ન થાય છે તે અનુભવસિદ્ધ  
વાત છે. મૂઢતા ઉત્પન્ન થવાનું કારણ એ છે કે આવી હાલતમાં દરેક બધી



મિન્દ્રિયાણામાકારાઃ ક્રમેણ કદમ્બપુષ્પ-મમ્મરધાન્યાઽતિમુક્તકકુસુમ-ધુરપ્ર-નાના-  
વિધાકારા ભવન્તિ । ઉક્તશ્ચ—

પુષ્પં કલંબુયારં, ધન્નમસૂરાહમુત્તચન્દો ય ॥

હોઈં સ્વરુપ્પ, નાણા-કિઈં ય સોઈંદિયાઈં ॥ ૧ ॥

છાયા—પુષ્પં કદમ્બાકારં ધાન્યમસૂરાતિમુક્તચન્દ્રશ્ચ ।

ભવતિ ધુરપ્રા નાનાકૃતિશ્ચ શ્રોત્રેન્દ્રિયાદીનામ્ ॥ ઇતિ ।

ઇન્દ્રો જીવસ્તસ્ય ચિદ્દમિન્દ્રિયમ્, તેનૈવ જીવજ્ઞાનસમ્ભવાત્ । તચ્ચ દ્રવ્યભાવ-  
ભેદેન દ્વિવિધમ્ । દ્રવ્યેન્દ્રિયં દ્રવ્યમયમ્, તચ્ચ નિર્વૃત્ત્યુપકરણભેદાદ્વિવિધમ્ । નિર્માણ-  
નામકર્માઙ્ગોપાઙ્ગનામકર્મભ્યાં નિર્વર્તિતં નિર્વૃત્તીન્દ્રિયમ્, તચ્ચ આહ્યાભ્યન્તરભેદા-  
હૈ । ઇન્દ્રિયોં કા જો યહ આકાર પ્રકટ કિયા હૈ વહ શાસ્ત્રકારોંને હસ  
પ્રકાર બતલાયા હૈ—

“ પુષ્પં કલંબુયારં, ધન્નમસૂરાહમુત્તચન્દો ય ।

હોઈં સ્વરુપ્પ, નાણાકિઈં ય સોઈંદિયાઈં ॥ ૧ ॥ ”

ઇન્દ્રિય શબ્દ કા અર્થ યહ હૈ કિ—‘ ઇન્દ્ર ’ નામ જીવ કા હૈ, હસકા  
જો ચિદ્દ હૈ વહ ઇન્દ્રિય હૈ, અર્થાત્ જિસકે દ્વારા જીવ પહિચાના જાવે  
હસકા નામ ઇન્દ્રિય હૈ । યહ પાંચ પ્રકાર કી હૈ । હનમેં પ્રત્યેક ઇન્દ્રિય કે  
દો-દો ભેદ હૈ—(૧) દ્રવ્યેન્દ્રિય, (૨) ભાવેન્દ્રિય । પુદ્ગલદ્રવ્યોં કી જો  
ઇન્દ્રિયાકાર રચના હૈ હસકા નામ દ્રવ્યેન્દ્રિય હૈ । યહ દ્રવ્યેન્દ્રિય, નિર્વૃત્તિ  
ઔર ઉપકરણ કે ભેદસે દો પ્રકાર કી હૈ । હસ દ્રવ્યેન્દ્રિય કી રચના  
નિર્માણનામકર્મ ઔર અઙ્ગોપાઙ્ગ નામકર્મ કે દ્વારા હોતી હૈ । હસ નિર્વૃત્તી-  
ન્દ્રિય કે-આહ્યાનિર્વૃત્તિ ઔર આભ્યન્તર-નિર્વૃત્તિ, હસ પ્રકાર સે દો ભેદ

ઇન્દ્રિયો પોત-પોતાના વિષયને ગ્રહણ કરવાના બોધથી વિકલ થાય છે. ઇન્દ્રિયોના  
જે આકારો બતાવ્યા છે તે શાસ્ત્રકારોએ આ પ્રકારે બતાવ્યા છે:—

“ પુષ્પં ફલંબુયાર, ધન્નમસૂરાહમુત્તચન્દો ય ।

હોઈં સ્વરુપ્પ-નાણાકિઈં ય સોઈંદિયાઈં ॥ ૧ ॥ ”

ઇન્દ્રિય શબ્દનો અર્થ એ છે કે—‘ ઇન્દ્ર ’ નામ જીવનું છે, તેનું જે ચિદ્દ  
છે તે ઇન્દ્રિય છે, અર્થાત્ જે દ્વારા જીવની પિછાણ થાય તેનું નામ ઇન્દ્રિય છે.  
તે પાંચ પ્રકારની છે. તેમાં દરેક ઇન્દ્રિયના બે-બે ભેદ છે. (૧) દ્રવ્યેન્દ્રિય, (૨)  
ભાવેન્દ્રિય. પુદ્ગલ દ્રવ્યોની જે ઇન્દ્રિયાકાર રચના છે તેનું નામ દ્રવ્યેન્દ્રિય છે.  
તે દ્રવ્યેન્દ્રિય, નિર્વૃત્તિ અને ઉપકરણના ભેદથી બે પ્રકારે છે. દ્રવ્યેન્દ્રિયની રચના  
નિર્માણ-નામકર્મ અને અંગોપાંગ-નામકર્મ દ્વારા થાય છે. આ નિર્વૃત્તીન્દ્રિય,  
આહ્યાનિર્વૃત્તિ અને આભ્યન્તર નિર્વૃત્તિ, આ પ્રકારથી બે ભેદ રૂપ છે. ઉત્સેધાગુંદના

દ્વિવિધમ્ । ઉત્સેધાદ્ગુલાસંખ્યેયભાગપ્રમિતાનાં સ્વચ્છતરાણામાત્મપ્રદેશાનાં પ્રતિનિ-  
યતચક્ષુરાદીન્દ્રિયસંસ્થાનેનાવસ્થિતા યા વૃત્તિઃ સા આભ્યન્તરા નિર્વૃત્તિરુચ્યતે, સ્વદ્ગ-  
ધારાસ્થાનીયેતિ યાવત્ , આત્મપ્રદેશેષુ પુદ્ગલવિપાકિના નિર્માણાખ્યેન કર્મણા રથા-  
દિવસ્તુસમ્પાદકરથકારેણેવયઃ પ્રતિનિયતસંસ્થાનસ્તત્તદિન્દ્રિયાભિધેયઃ કર્ણશક્તુલ્યા-  
દિર્નિર્વર્ત્યતે સા બાહ્યા નિર્વૃત્તિઃ સ્વદ્ગસદૃશી । તત્ર બાહ્યા પર્યટિકાદિરૂપા, સા ચ  
વિચિત્રા પ્રતિનિયતરૂપતયોપદેષ્ટું ન શક્યતે, તથા હિ-કસ્યચિદક્ષિ સ્થૂલં, કસ્ય-

હૈં । ઉત્સેધાદ્ગુલકે અસંખ્યાતવેં ભાગ પ્રમાણ અત્યન્ત નિર્મલ આત્મ-  
પ્રદેશોં કી ચક્ષુરાદિ ઇન્દ્રિયોં કે પ્રતિનિયત આકાર સે અવસ્થિત જો વૃત્તિ  
હૈં ઉસકા નામ આભ્યન્તર નિર્વૃત્તિ હૈં । ઇસકી ઉપમા તલવાર કી ધારાસે  
દી ગઈ હૈં । ઉન આત્મપ્રદેશોંમેં પુદ્ગલવિપાકી નિર્માણનામકર્મ કે દ્વારા  
જો કર્ણશક્તુલી આદિ રૂપસે ઉસ-ઉસ ઇન્દ્રિયોં કે આકારોં કી રચના  
કી જાતી હૈં ઉસકા નામ બાહ્યનિર્વૃત્તિ હૈં । જૈસે બઢઈ રથાદિક વસ્તુઓં  
કે પ્રતિનિયત આકારોં કો બનાતા હૈં ઉસી પ્રકાર યહ નિર્માણ-નામકર્મ,  
જો પુદ્ગલવિપાકી પ્રકૃતિ હૈં, ઉન ઇન્દ્રિયાકારરૂપપરિણત આત્મપ્રદેશોં મેં  
પુદ્ગલદ્રવ્યોંકી પ્રતિનિયત ઇન્દ્રિયાકારરૂપ સે રચના કરતા હૈં । ઇસકી  
ઉપમા તલવારસે દી ગઈ હૈં । બાહ્ય નિર્વૃત્તિકા પ્રતિનિયત કોઈ આકાર  
નહીં હૈં, વહ અનેક પ્રકાર કી હૈં, જૈસે આંચોં મેં પર્યટિકાદિરૂપરચના ।  
યહ ચક્ષુ-ઇન્દ્રિય કી બાહ્ય નિર્વૃત્તિ હૈં, પરન્તુ યહ સર્વત્ર ઇસી પ્રકાર કી  
હોતી હૈં, યહ નિયમિત નહીં, ક્યોંકિ કિસી કી આંચ મોટી હોતી હૈં

અસંખ્યાતમાં ભાગ પ્રમાણ અત્યન્ત નિર્માણ આત્મપ્રદેશોની ચક્ષુરાદિ ઇન્દ્રિયોના  
પ્રતિનિયત આકારથી અવસ્થિત જે વૃત્તિ છે તેનું નામ આભ્યન્તર નિર્વૃત્તિ  
છે, તેની ઉપમા તલવારની ધાર જેમ છે. તે આત્મપ્રદેશોમાં પુદ્ગલવિપાકી  
નિર્માણ નામકર્મ દ્વારા જે કર્ણશક્તુલી આદિ રૂપે તે તે ઇન્દ્રિયોના આકારોની  
રચના કરી છે તેનું નામ બાહ્યનિર્વૃત્તિ છે. જેમ સુથાર રથાદિક વસ્તુઓના  
પ્રતિનિયત આકારોને બનાવે છે તે પ્રકારે આ નિર્માણ નામકર્મ જે પુદ્ગલવિપાકી  
પ્રકૃતિ છે, તે ઇન્દ્રિયાકાર રૂપ પરિણત આત્મપ્રદેશોમાં પુદ્ગલદ્રવ્યોની પ્રતિનિયત  
ઇન્દ્રિયાકાર રૂપ રચના કરે છે. તેની ઉપમા તલવારથી આપી છે. બાહ્ય નિર્વૃત્તિનો  
પ્રતિનિયત કોઈ આકાર નથી. તે અનેક પ્રકારના છે. જેમ આંખોમાં પર્યટિકાદિ  
રૂપ રચના, તે ચક્ષુઇન્દ્રિયની બાહ્ય નિર્વૃત્તિ છે, પરંતુ આમ સર્વત્ર છે,  
તેમ નિયમિત નહિ. કોઈની આંખ મોટી હોય છે, કોઈની નાની. આભ્યન્તર



ચિત્ત્વ હ્રસ્વમિત્યાદ્યનેકપ્રકારા । આભ્યન્તરા તુ નિર્વૃત્તિઃ સર્વેષાં સમાના ભવતિ । ચતુર્ણામેવેન્દ્રિયાણાં વાહ્યાભ્યન્તરભેદો ભવતિ, ન સ્પર્શનેન્દ્રિયસ્યેતિ વોદ્યમ્ । ઉપ-ક્રિયત इत्युपकरणम्, ઉપકરણેન્દ્રિયશ્ચ સ્વદ્ગથ્યાનીયવાહ્યનિર્વૃત્તેઃ સ્વદ્ગધારાસદૃશ-સ્વચ્છતરપુદ્ગલસમૂહરૂપાઽભ્યન્તરનિર્વૃત્તેશ્ચ શક્તિવિશેષઃ । અનુપઘાતાનુગ્રહાભ્યાં નિર્વૃત્તી-ન્દ્રિયસ્યોપકારિત્વેનોપકરણમ્ । તદપિ વાહ્યાભ્યન્તરનિર્વૃત્ત્યુપકારકત્વેન દ્વિવિધમ્ । નિર્વૃત્ત્યુપકરણરૂપમુભયમેતત્પુદ્ગલપરિણામાત્મકમપિ સદિન્દ્રિયશબ્દવ્યવહારં લભતે ।

और किसीकी छोटी । आभ्यन्तर निर्वृत्ति समस्त इन्द्रियों की एकसी होती है । निर्वृत्ति-इन्द्रिय के जो बाह्य और आभ्यन्तर भेद किये हैं वे स्पर्शन-इन्द्रिय को छोड़ कर शेष चार इन्द्रियों के ही हैं, ऐसा समझ लेना चाहिये ।

द्रव्येन्द्रिय का जो दूसरा भेद उपकरण है उसका अर्थ ‘निर्वृत्ति का जो उपकार करे’ यह है । यह स्वद्वग-तलवार-स्थानीय बाह्यनिर्वृत्ति तथा उसकी धारास्थानीय स्वच्छतरपुद्गलसमूहरूप आभ्यन्तर निर्वृत्ति की एक विशेष शक्ति है-जो अनुपघात और अनुग्रह से निर्वृत्ति-इन्द्रिय की उपकारिका मानी गई है ।

यह उपकरण द्रव्येन्द्रिय भी आभ्यन्तर और बाह्य निर्वृत्ति का उप-कारक होने की वजहसे दो प्रकार की है-(१) आभ्यन्तर-उपकरण और (२) बाह्य-उपकरण । आभ्यन्तर निर्वृत्ति का जो उपकार करे वह आभ्यन्तर-उपकरण और बाह्य निर्वृत्तिका जो उपकार करे वह बाह्य-उप-करण है । निर्वृत्तिरूप और उपकरणरूप द्रव्येन्द्रिय यद्यपि पुद्गलपरिणामा-

નિર્વૃત્તિ સમસ્ત ઇન્દ્રિયોની એક સરખી છે. નિર્વૃત્તિ ઇન્દ્રિયના જે બાહ્ય અને આભ્યન્તર ભેદ છે તે સ્પર્શન ઇન્દ્રિયને છોડીને શેષ ચાર ઇન્દ્રિયોના છે તેમ સમજવાનું છે.

દ્રવ્યેન્દ્રિયનો બીજો ભેદ ઉપકરણ છે, એનો અર્થ ‘નિર્વૃત્તિનો જે ઉપકાર કરે’ એ છે. આ તલવારસ્થાનીય બાહ્ય નિર્વૃત્તિનો તથા તેની ધારાસ્થાનીય સ્વચ્છતરપુદ્ગલસમૂહરૂપ આભ્યન્તર નિર્વૃત્તિની એક વિશેષ શક્તિ છે જે અનુપઘાત અને અનુગ્રહથી નિર્વૃત્તિ ઇન્દ્રિયની ઉપકારિકા મानी છે.

આ ઉપકરણ દ્રવ્યેન્દ્રિય પણ આભ્યન્તર અને બાહ્ય નિર્વૃત્તિનું ઉપકારક હોવાથી બે પ્રકારનું છે. (૧) આભ્યન્તર ઉપકરણ, અને બાહ્ય ઉપકરણ, આભ્યન્તર નિર્વૃત્તિનો જે ઉપકાર કરે તે આભ્યન્તર ઉપકરણ છે અને બાહ્યનિર્વૃત્તિનો જે ઉપકાર કરે તે બાહ્ય ઉપકરણ છે. નિર્વૃત્તિ રૂપ અને ઉપકરણ રૂપ દ્રવ્યેન્દ્રિય

તત્ત્વ ભાવેન્દ્રિયસહયોગં પ્રાપ્યૈવાત્મનઃ સાહાય્યં કરોતિ પ્રસ્થકાષ્ઠવત્ 'પાયલીકાઠ' इति भाषा । આત્મપરિણતિરૂપં ભાવેન્દ્રિયમપિ લબ્ધ્યુપયોગભેદાદ્વિવિધમ્, તત્ર તત્ત્વ-  
 દિન્દ્રિયાવારકર્મણાં ક્ષયોપશમો લબ્ધિઃ । ઇન્દ્રિયાણાં સ્વસ્વવિષયેષુ પરિચ્છેદ્યવ્યા-  
 પાર ઉપયોગઃ । અત્ર લબ્ધૌ વર્તમાનાયાં સત્યાં નિર્વૃત્ત્યુપકરણોપયોગાનાં ત્રયાણામપ્ય-  
 પેક્ષા । નિર્વૃત્તૌ વર્તમાનાયાં સત્યામુપકરણોપયોગયોરપેક્ષા । સત્યુપકરણે ચોષયો-  
 ત્મક હૈ તો મી ઉસકા જો ઇન્દ્રિય શબ્દસે વ્યવહાર કિયા ગયા હૈ ઉસકા  
 મતલબ યહી હૈ કિ યહ આત્માકો પદાર્થજ્ઞાનમેં સહાયક હૈ, ક્યોંકિ  
 વિના દ્રવ્યેન્દ્રિય કે આત્મા કો પદાર્થજ્ઞાન નહીં હો સકતા । યહી કારણ  
 હૈ કિ વિગ્રહગતિ મેં ભાવેન્દ્રિયકે હોને પર મી દ્રવ્યેન્દ્રિય કે અભાવમેં  
 જીવકો બાહ્ય પદાર્થજ્ઞાન નહીં હોતા । દ્રવ્યેન્દ્રિય યદ્યપિ આત્માકો પદા-  
 ર્થજ્ઞાન કરાનેમેં સહાયક હૈ તો મી વહ ભાવેન્દ્રિય કે સહયોગ કે વિના  
 આત્માકો પદાર્થબોધમેં સહાયક નહીં હો સકતા ।

આત્મપરિણતિરૂપ ભાવેન્દ્રિય મી લબ્ધિ ઔર ઉપયોગકે ભેદ સે  
 દો પ્રકાર કી હૈ । ઉન-ઉન ઇન્દ્રિયોં કો આવરણ કરનેવાલે કર્મોંકા  
 જો ક્ષયોપશમ હૈ ઉસકા નામ લબ્ધિ હૈ । ઁવં ઇન્દ્રિયોંકા અપને ૨ વિષયોં  
 કે જાનને રૂપ જો વ્યાપાર હૈ ઉસકા નામ ઉપયોગ હૈ । આત્મામેં લબ્ધિ-  
 જાનને કી યોગ્યતા-હોનેપર મી ઉસે નિર્વૃત્તિ, ઉપકરણ ઁવં ઉપયોગ કી  
 અપેક્ષા રહતી હૈ । લબ્ધિ કે હોતે હુઁ મી ઇનકે વિના આત્માકો પદાર્થ-

યદ્યપિ પુદ્ગલપરિણામાત્મક છે તો પણ તેનો જે ઇન્દ્રિય શબ્દથી વ્યવહાર કરેલ  
 છે તેનું કારણ એ છે કે તે આત્માને પદાર્થજ્ઞાનમાં સહાયક છે, કારણકે દ્રવ્ય  
 ઇન્દ્રિય વિના આત્માને પદાર્થજ્ઞાન થતું નથી, એજ કારણ છે કે વિગ્રહગતિમાં  
 ભાવેન્દ્રિય થવાથી પણ દ્રવ્યેન્દ્રિય ના અભાવમાં જીવને બાહ્ય પદાર્થજ્ઞાન થતું નથી.  
 દ્રવ્યેન્દ્રિય યદ્યપિ આત્માને પદાર્થજ્ઞાન કરાવવામાં સહાયક છે, તો પણ તે  
 ભાવેન્દ્રિયના સહયોગ વિના પદાર્થબોધમાં આત્માનો સહાયક થઈ શકતો નથી.

આત્મપરિણતિરૂપ ભાવેન્દ્રિય પણ લબ્ધિ અને ઉપયોગના ભેદથી બે  
 પ્રકારે છે. તે તે ઇન્દ્રિયોના આવરણ કરનાર કર્મોના જે ક્ષયોપશમ છે તેનું નામ  
 લબ્ધિ છે. ઇન્દ્રિયોના પોત-પોતાના વિષયોને જાણવા રૂપ જે વ્યાપાર છે તેનું  
 નામ ઉપયોગ છે.

આત્મામાં લબ્ધિ-જાણવાની યોગ્યતા-હોવા છતાં તેને નિર્વૃત્તિ, ઉપકરણ,  
 અને ઉપયોગની અપેક્ષા રહે છે. લબ્ધિના હોવા છતાં પણ તેના વિના આત્માને પદાર્થ-

ગસ્યાપેક્ષેતિ વિજ્ઞેયમ્ । અત્રાયં વિશેષઃ—શ્રોત્રં દ્વાદશયોજનાગતં શબ્દં ગૃહ્ણતિ, ચક્ષુરપિ સાતિરેકૈકવિંશતિલક્ષયોજનસ્થિતં રૂપં ગૃહ્ણતિ, અન્યાનિ ત્રીણીન્દ્રિયાણિ નવયોજનાગતસ્વસ્વવિષયગ્રાહકાણિ ભવન્તિ । જઘન્યતસ્તુ ચક્ષુરઙ્ગુલસંખ્યેયભાગ-મિતદેશવર્તિરૂપં ગૃહ્ણતિ । અન્યાનિ ચત્વારીન્દ્રિયાણિ ચાઙ્ગુલાસંખ્યેયભાગપ્રમિત-દેશસ્થિતં સ્વસ્વવિષયં ગૃહ્ણન્તીતિ ભાવઃ । તત્ર શ્રોત્રાદીનાં ચતુર્ણાં પ્રાપ્યકારિત્વં, શબ્દાદિપુદ્ગલાનાં કર્ણાદિસંયોગેનૈવ નિર્ણયાત્ । ચક્ષુષશ્ચાપ્રાપ્યકારિત્વં રૂપસ્ય સંયોગં વિના દૂરત એવ નિશ્ચયાદિતિ વિશેષઃ ।

બોધ નહીં હોતા હૈ । ઇસી પ્રકાર નિર્વૃત્તિ કે હોને પર મી ઉસે ઉપકરણ ઓર ઉપયોગકી અપેક્ષા રહા કરતી હૈ, ઓર ઉપકરણ કે સદ્ભાવમેં ઉપયોગ કી । શ્રોત્ર-ઇન્દ્રિય બારહ યોજન સે આયે હુએ શબ્દ કો ગ્રહણ કરતી હૈ । ચક્ષુ-ઇન્દ્રિય કુછ અધિક ૨૧ ઇક્કીસ લાખ યોજન સ્થિત રૂપ કો જાનતી હૈ । બાકી કી ત્રીન ઇન્દ્રિયાં નવ યોજન સે આયે હુએ અપને ૨ વિષય કો ગ્રહણ કરનેવાલી હોતી હૈ । યહ ઉત્કૃષ્ટ કી અપેક્ષા ઇન્દ્રિયોં કા વિષય બતલાયા હૈ । જઘન્ય કી અપેક્ષા ચક્ષુ-ઇન્દ્રિય અઙ્ગુલ કે સંખ્યાતવેં ભાગમેં સ્થિત રૂપકો ગ્રહણ કરતી હૈ । બાકી કી ચાર ઇન્દ્રિયાં અઙ્ગુલકે અસંખ્યાતવેં ભાગ પ્રમાણ દેશમેં રહે હુએ અપને ૨ વિષય કો જાનનેવાલી હૈ ।

સ્પર્શન, રસન, ઘ્રાણ ઓર શ્રોત્ર, યે ચાર ઇન્દ્રિયાં અપને ૨ પૌદ્ગલિક વિષયોં કો છૂ ( સ્પર્શ ) કર હી જાનતી હૈ ઇસ લિયે યે પ્રાપ્યકારી હૈ ।

બોધ થતો નથી, એ પ્રકારે નિર્વૃત્તિ થવા છતાં પણ તેને ઉપકરણ અને ઉપયોગની અપેક્ષા રહે છે, અને ઉપકરણના સદ્ભાવમાં ઉપયોગની રહે છે.

શ્રોત્ર ઇન્દ્રિય બાર યોજનથી આવેલા શબ્દને ગ્રહણ કરે છે. ચક્ષુઇન્દ્રિય કાંઈક અધિક એકવીસ લાખ યોજનથી રૂપ જાણે છે. બાકીની ત્રણ ઇન્દ્રિયો નવ યોજનથી આવેલાં પોત-પોતાનાં વિષયને ગ્રહણ કરી શકે છે. આ ઉત્કૃષ્ટની અપેક્ષા ઇન્દ્રિયોનો વિષય બતાવ્યો છે. જઘન્યની અપેક્ષા ચક્ષુઇન્દ્રિય અંગુળના સંખ્યાતમાં ભાગમાં સ્થિત રૂપને ગ્રહણ કરે છે. બાકીની ચાર ઇન્દ્રિયો અંગુળના અસંખ્યાતમાં ભાગ પ્રમાણ દેશમાં રહેલાં પોત-પોતાનાં વિષયને જાણે છે.

સ્પર્શન, રસન, ઘ્રાણ અને શ્રોત્ર, આ ચાર ઇન્દ્રિયો પોત-પોતાનાં પૌદ્ગલિક વિષયોનો સ્પર્શ કરી જાણે છે માટે એ પ્રાપ્યકારી છે. ચક્ષુઇન્દ્રિય પોતાના વિષયને સ્પર્શ કર્યા વિના જાણી લે છે માટે તે અપ્રાપ્યકારી છે, અર્થાત્ આ

નન્વિન્દ્રિયાણ્યેવ વસ્તુ નિર્ણેતું પ્રભવન્તુ કિમધિકેનાતિરિક્તાત્મસ્વીકારેणेતિ  
 ચેન્ન, તત્તદિન્દ્રિયનાશેઽપિ તત્તદિન્દ્રિયપૂર્વાનુભૂતાર્થસ્મરણસ્યાન્યથાનુપપન્ન્યાઽતિરિ-  
 ક્તસ્યાત્મનોઽવશ્યં સિદ્ધેઃ । આત્મનો વિજ્ઞાનોત્પત્તૌ શ્રોત્રાદીનિ પ્રકૃષ્ટોપકારકાણિ  
 ભવન્તિ, તેન કરણરૂપકારકતયા તૃતીયા વિભક્તિઃ સિદ્ધયતિ, તતોઽનેન શ્રોત્રેણ મયા  
 શબ્દઃ શ્રુતઃ, અનેન ચ મન્દતરઃ શબ્દઃ શ્રુતઃ, ઇત્યાદયઃ પ્રયોગાઃ સઙ્ગચ્છન્તે ।

ચક્ષુ-ઇન્દ્રિય અપને વિષય કો વિના છૂણ ( સ્પર્શ કિયે ) હી જાન લેતી હૈ  
 અતઃ વહ અપ્રાપ્યકારી હૈ, અર્થાત્ યહ ઇન્દ્રિય અપને સાથ અપને વિષય  
 કા સંયોગ હુણ વિના દૂરસે હી અપને રૂપ-વિષય કા પ્રકાશક હૈ ।

શંકા—ઇન્દ્રિયોં કો હી અપને ૨ વિષયરૂપ જ્ઞેય કા નિર્ણય કરનેવાલી  
 માનલેની ચાહિયે, ઉનસે અતિરિક્ત આત્માકે માનનેકી ક્રયા આવશ્યતા હૈ ? ।

ઉત્તર—યહ બાત કહના ઠીક નહીં હૈ, કારણ કિ-જબ ઇન્દ્રિયોં નષ્ટ  
 હો જાતી હૈં તબ ઉનકે દ્વારા પૂર્વાનુભૂત પદાર્થકા સ્મરણ હોતા હૈ । યદિ  
 ઇન્દ્રિયોં હી પદાર્થ કો જ્ઞાતા માની જાયેં તો ફિર જો ઉનકે વિનાશ હોને  
 પર અનુભૂત પદાર્થ કો સ્મૃતિ હોતી હૈ વહ નહીં હોની ચાહિયે અતઃ અન્ય-  
 થાનુપપત્તિ ( જિસકે નહીં હોને પર નહીં હોના ) રૂપ અનુમાન સે ઇન્દ્રિ-  
 યોંકે અતિરિક્ત આત્માકે અસ્તિત્વકી સિદ્ધિ હોતી હૈ ।

શંકા—યદિ ઇન્દ્રિયોં સે ભિન્ન આત્માકે અસ્તિત્વ કી સ્વીકૃતિ માની  
 જાવેગી તો ફિર “ ચક્ષુષા દૃશ્યતે, શ્રોત્રેણ શ્રૂયતે ” ઇત્યાદિ જો વ્યવહાર  
 હોતા હૈ વહ નહીં હોના ચાહિયે ।

ઇન્દ્રિય પોતાની સાથે પોતાના વિષયનો સંયોગ થયા વિના દૂરથી જ પોતાના  
 રૂપ વિષયનો પ્રકાશક છે.

શંકા—ઇન્દ્રિયોનેજ પોત-પોતાના વિષયરૂપ જ્ઞેયનો નિર્ણય કરનાર માનવી  
 જોઇએ એથી અતિરિક્ત આત્માને માનવાની શું આવશ્યકતા છે ?

ઉત્તર—આમ કહેવું બ્યાજળી નથી. કારણકે જ્યારે ઇન્દ્રિયો નષ્ટ થાય છે  
 ત્યારે તેના દ્વારા પૂર્વાનુભૂત પદાર્થનું સ્મરણ થાય છે. કદાચ ઇન્દ્રિયોનેજ પદાર્થની  
 જ્ઞાતા માનવામાં આવે તો પછી જે તેના વિનાશ પછી અનુભૂત પદાર્થની સ્મૃતિ  
 થાય છે તે થવી જોઇએ નહિ. માટે અન્યથાનુપપત્તિ ( જેના નહિ હોવાથી નથી થતું )  
 રૂપ અનુમાનથી ઇન્દ્રિયોથી અતિરિક્ત આત્માના અસ્તિત્વની સિદ્ધિ થાય છે.

શંકા—કદાચ ઇન્દ્રિયોથી ભિન્ન આત્માના અસ્તિત્વની સ્વીકૃતિ માનવામાં આવે  
 તો પછી “ ચક્ષુષા દૃશ્યતે, શ્રોત્રેણ શ્રૂયતે ” ઇત્યાદિ જે વ્યવહાર થાય  
 છે તે થવો જોઇએ નહિ.



ननु श्रोत्रेणैव रूपादीनामपि कथं न प्रत्यक्षमिति चेन्न, इन्द्रियाणां भिन्न-भिन्न-विषयकत्वेन तत्तदिन्द्रियेण स्वस्वविषयकातिरिक्तज्ञानासम्भवात् ।

उत्तर—यह कहना ठीक नहीं है, यहां पर तो आत्माके लिये जो विज्ञानकी उत्पत्तिमें अत्यन्त उपकारक हैं वे इन्द्रियाँ हैं और वे स्पर्शन आदि हैं, वाक् पाणि वगैरह सांख्यादि सिद्धान्तकी मानी हुई इन्द्रियाँ आत्माको विज्ञानकी उत्पत्तिमें श्रोत्र आदि की तरह प्रकृष्ट उपकारक नहीं हैं अतः उन वाक् आदि में इन्द्रियत्वका व्यपदेश ही सिद्ध नहीं होता। सामान्य रीतिसे जो यह बात मान ली जावे कि—जो करण होते हैं वे इन्द्रियाँ होती हैं अतःकरण होनेसे वाक् पाणि वगैरहमें भी इन्द्रियत्व स्वीकार करलेना चाहिये, तो फिर इस प्रकारसे आत्माके लिये अपने २ व्यापारमें निरत उदरादिक—पेट वगैरह—को भी करण होने से इन्द्रिय मानना पड़ेगा, तब इन्द्रियों की जो सांख्यादि सिद्धान्तकारोंने ११ ग्यारह संख्या नियत की है वह सिद्ध नहीं होगी, इससे भी अधिक इन्द्रियाँ इस प्रकार सिद्ध होती हैं ।

शङ्का—श्रोत्र इन्द्रियसे ही रूपादिक अन्य इन्द्रियों के विषयों का प्रत्यक्ष क्यों नहीं होता ?

उत्तर—यह कहना ठीक नहीं, कारण कि प्रत्येक इन्द्रिय का अपना २

उत्तर—आम કહેવું ઠીક નથી. અહીંતો આત્માને જે વિજ્ઞાનની ઉત્પત્તિમાં અત્યન્ત ઉપકારક છે તે ઇન્દ્રિયો છે અને તે સ્પર્શનઆદિ છે. વાક્ ( વાણી ) પાણિ ( હાથ ), વિગેરે સાંખ્યાદિ સિદ્ધાંતની માનેલી ઇન્દ્રિયો આત્માને વિજ્ઞાનની ઉત્પત્તિમાં શ્રોત્ર આદિની માફક પ્રકૃષ્ટ ઉપકારક નથી માટે તે વાક્ આદિમાં ઇન્દ્રિયત્વનો વ્યપદેશ જ સિદ્ધ થતો નથી. સામાન્ય રીતિથી જો આ વાત માની લેવા આવે કે જે કરણ થાય છે તે ઇન્દ્રિયો હોય છે માટે કરણ થવાથી વાક્, પાણિ વિગેરેમાં પણ ઇન્દ્રિયત્વનો સ્વીકાર કરવો જોઈએ તો પછી આ પ્રકારે આત્માને માટે પોત-પોતાના વ્યાપારમાં સામાન્ય રુપે કરણ થવાવાળાં ઉદરાદિક-પેટ વિગેરેનું પણ ઇન્દ્રિયપણુ માનવું પડે ત્યારે ઇન્દ્રિયોની જે સાંખ્ય સિદ્ધાન્તકારોએ અગીયાર સંખ્યા નક્કી કરેલ છે તે સિદ્ધ થતી નથી, તેથી પણ અધિક ઇન્દ્રિયો આવી રીતે સિદ્ધ થાય છે.

શંકા—શ્રોત્ર ઇન્દ્રિયથી જ રૂપાદિક અન્ય ઇન્દ્રિયોના વિષયોની પ્રત્યક્ષ કેમ થતાં નથી ?

ઉત્તર—આમ કહેવું ઠીક નથી. કારણકે પ્રત્યેક ઇન્દ્રિયને પોત-પોતાનો વિષય



નન્વેવં તર્હિ રસપ્રતીતિકાલે શીતોષ્ણકર્કશકઠોરાદિસ્પર્શજ્ઞાનમપિ કથં ભવ-  
તીતિ ચેદાહ—સ્પર્શનેન્દ્રિયસ્ય સર્વવ્યાપિત્વેન રસનેન્દ્રિયપ્રદેશેઽપિ તસ્ય સત્ત્વેન  
રસપ્રતીતિકાલેઽપિ સ્પર્શજ્ઞાનસ્ય સુલભત્વાત્ ।

નનુ શ્રોત્રાદિક્વન્મનસઃ કુતો નેન્દ્રિયત્વમિતિ ચેદાહ—

વિષય નિયત હૈ અતઃ વહ દૂસરે વિષયકી ગ્રાહક નહીં હો સકતી ।  
શાસ્ત્રકાર મી તો યહી કહતે હૈં કિ ઇન્દ્રિયાં ભિન્નર વિષયવાલી હૈં ઇસ  
લિયે વે અપનેર વિષયકે સિવાય અન્ય ઇન્દ્રિયોંકે વિષયકી બોધક  
નહીં હોતી હૈં ।

શઙ્કા—યદિ યહી વાત સ્વીકાર કી જાવે તો ફિર રસના ઇન્દ્રિય સે  
રસકે જ્ઞાનકે સમયમેં શીત, ઉષ્ણ, કર્કશ, કઠોરાદિક સ્પર્શકા જો જ્ઞાન  
હોતા હૈ વહ કૈસે હોગા ?

ઉત્તર—સ્પર્શન ઇન્દ્રિય સર્વ વ્યાપક હૈ ઇસલિયે રસના ઇન્દ્રિયકે  
પ્રદેશમેં મી ડસકી સત્તા હોને સે રસ પ્રતીતિકે સમયમેં મી સ્પર્શકે  
જ્ઞાનકી સુલભતા હોતી હૈ ।

શઙ્કા—જિસ પ્રકાર શ્રોત્રાદિકોં મેં ઇન્દ્રિયત્વકા વ્યપદેશ હોતા હૈ  
ડસી પ્રકાર મનમેં મી ઇન્દ્રિયત્વકા વ્યપદેશ ક્યોં નહીં હોતા હૈ ? ।

ઉત્તર—શ્રોત્રાદિક ઇન્દ્રિયાં અપનેર વિષયકો ગ્રહણ કરનેમેં જિસ  
પ્રકાર સ્વતન્ત્ર હૈં ડસ પ્રકાર મન નહીં હૈ, ક્યોંકિ વહ ડન ઇન્દ્રિયોંકા

નિયત છે તેથી તે ધીન વિષયની આહક બનતી નથી. શાસ્ત્રકાર

પણ એમ કહે છે કે ઇન્દ્રિયો ભિન્ન ભિન્ન વિષયવાળી છે માટે તેઓ

પોત-પોતાના વિષય સિવાય અન્ય ઇન્દ્રિયોના વિષયની બોધક થતી નથી.

શંકા—માનો, આ વાત સ્વીકારવામાં આવે તો પછી રસના ઇન્દ્રિયથી રસના  
જ્ઞાનનાં સમયમાં શીત, ઉષ્ણ, કર્કશ, કઠણાદિક સ્પર્શનું જે જ્ઞાન થાય  
છે તે કેમ થાય છે ?

ઉત્તર—સ્પર્શન ઇન્દ્રિય સર્વવ્યાપક છે, માટે રસના ઇન્દ્રિયના પ્રદેશમાં પણ  
તેની સત્તા હોવાથી રસપ્રતીતિના સમયમાં પણ સ્પર્શના જ્ઞાનની  
સુલભતા થાય છે.

શંકા—જે પ્રકારે શ્રોત્રાદિકોમાં ઇન્દ્રિયના વ્યપદેશ થાય છે તેમ મનમાં પણ  
ઇન્દ્રિયત્વનો વ્યપદેશ કેમ થતો નથી ?

ઉત્તર—શ્રોત્રાદિક ઇન્દ્રિયો પોત-પોતાના વિષયો ગ્રહણ કરવામાં જે પ્રકારે  
સ્વતંત્ર છે તે પ્રકારે મન નથી. કારણકે તે તે ઇન્દ્રિયોનું ઉપકારક માત્ર

શ્રોત્રાદીનિ ચ શબ્દાદિવિષયગ્રહણે સ્વતન્ત્રાણિ સન્તિ, મનસ્તુ તેષામુપકારિ-  
માત્રં, સ્વતન્ત્રતયા તસ્ય પદાર્થનિર્ણાયકત્વાભાવાત્ । યતસ્તત્તદિન્દ્રિયનિર્ણીતપદાર્થ  
એવ તસ્ય પ્રવૃત્તિર્ભવતિ નાતસ્તસ્યેન્દ્રિયત્વં ભવિતુમર્હતિ । એકસ્મિંશ્ચ સમય એકેને-  
ન્દ્રિયેનૈક એવોપયોગો ભવતિ, એકસમયે ઉપયોગદ્વયાસમ્ભવાત્ ।

નન્વેવં તર્હિ પર્પટ ( ‘પાપડ’ ઇતિ ભાષાપ્રસિદ્ધપદાર્થ ) મક્ષણકાલે પञ्ચભિ-  
રિન્દ્રિયૈઃ સર્વં જ્ઞાનં ભવતિ યથા—શ્રોત્રેણ શબ્દં શૃણોતિ, ચક્ષુષા રૂપં પશ્યતિ, ગ્રાણેન  
ઉપકારક માત્ર હૈ । યહ વિના ઇન્દ્રિયોંસે જાને પદાર્થ કા સ્વતન્ત્ર રૂપસે  
નિર્ણાયક નહીં હોતા હૈ, ક્યોંકિ ભિન્ન ભિન્ન ઇન્દ્રિયોં સે નિર્ણીત પદાર્થ  
મેં હી ડસકી પ્રવૃત્તિ હોતી હૈ ઇસલિયે ડસમેં સ્વતન્ત્ર રૂપસે ઇન્દ્રિયપના  
નહીં હૈ । એક સમય મેં એક ઇન્દ્રિયસે એક હી ઉપયોગ હોતા હૈ—એક  
સમયમેં ડો ઉપયોગ નહીં હોતે ।

શઙ્કા—યદિ એક સમયમેં ડો ઉપયોગ નહીં હોતે હૈં તો ફિર જિસ  
સમય પાપડ ખાયા જાતા હૈ ડસ સમય જો પञ્ચેન્દ્રિય—જન્ય ડસકા  
જ્ઞાન હોતા હૈ વહ નહીં હોના ચાહિયે ?, ડેલિયે—ખાતે સમય પાપડકી  
ચર—ચર આવાજ હોતી હૈ અતઃ ઇસ શબ્દ કા શ્રોત્રેન્દ્રિયસે પ્રત્યક્ષ હોતા  
હૈ, ડસ સમય ચક્ષુ—ઇન્દ્રિય ડસકે રૂપકી બોધિકા હોતી હૈ । ગ્રાણ—ઇન્દ્રિય  
ડસકે ગન્ધકી, રસના—ઇન્દ્રિય ડસકે રસકી ઓર સ્પર્શન—ઇન્દ્રિય ડસકે  
કર્કશ કઠોર આદિ સ્પર્શ કો બોધિકા હોતી હૈ । યે પ્રત્યેક ઇન્દ્રિયસે એક  
હી સમયમેં ડસર વિષયકે ભિન્નર બોધ હોતે હૈં, સો ક્યોં હોતે હૈં ? ।

છે, તે ઇન્દ્રિયોથી જાણ્યા વગર પદાર્થનો સ્વતંત્ર રૂપે નિર્ણાયક થતું  
નથી, કારણકે જુદી જુદી ઇન્દ્રિયોથી નિર્ણીત પદાર્થમાં જ તેની પ્રવૃત્તિ  
છે. માટે તેમાં સ્વતંત્ર રૂપે ઇન્દ્રિયપણુ નથી. એક સમયમાં એક ઇન્દ્રિયથી  
એક જ ઉપયોગ થાય છે. એક સમયમાં બે ઉપયોગ થતા નથી.

શંકા—કહાય એક સમયમાં બે ઉપયોગ થતા નથી તો પછી જે વખતે પાપડ  
ખાવામાં આવે છે તે સમયે જે પંચેન્દ્રિયજન્ય તેનું જ્ઞાન છે તે ન હોવું  
જોઈએ ? દેખો, ખાતી વખતે પાપડનો ચર—ચર અવાજ થાય છે અને  
તે શબ્દ શ્રોત્રેન્દ્રિયથી પ્રત્યક્ષ છે તે વખતે ચક્ષુઇન્દ્રિય તેના રૂપની બોધક  
થાય છે, ગ્રાણુઇન્દ્રિય તેના ગંધની, રસના ઇન્દ્રિય તેના રસની, અને સ્પર્શન  
ઇન્દ્રિય તેના કર્કશ કઠણુ આદિ સ્પર્શની બોધક થાય છે તે પ્રત્યેક  
ઇન્દ્રિયથી એક જ સમયમાં તે તે વિષયનો લિન્ન લિન્ન બોધ થાય છે તો  
શા માટે થાય છે ?



ગન્ધં જિઘ્રતિ, રસનેન રસમાસ્વાદયતિ, સ્પર્શનેન કર્કશકઠોરાદિકં સ્પૃશતિ, ઇતિ કથમેકસ્મિન્ સમયે શબ્દાદિવિષયકજ્ઞાનં સંજાયતે ? ઇતિ ચેન્ન, સમયભેદેऽપિ કમલપત્રશતવેધનવત્સૂક્ષ્મતયા તસ્ય જ્ઞાતુમશક્યત્વાત્ ।

एष चोपयोगक्रमः—आत्मा मनसा युज्यते, मनश्चेन्द्रियेण, इन्द्रियाणि च विषयसंयुक्तानि भूत्वा तत्तद्विषयग्राहकाणि भवन्ति, अतो मनसोऽन्तःकरणत्वं सर्वानुगामित्वञ्चोपपद्यते ॥

ઉત્તર—इन पांच इन्द्रियों से होने वाले ज्ञानोंमें भी समयका भेद अवश्य है परन्तु यह समयका भेद अति सूक्ष्म होनेसे जाना नहीं जाता है । जिस प्रकार कमलके सैकड़ों पत्ते तीर के ऊपर रखकर वेधने से वे ‘एक साथ ही विंध गये’ ऐसा बोध होता है परन्तु वे एक साथ नहीं विंधे, एक साथ विंधनेका उनमें भ्रम ही होता है, क्रम-क्रमसे ही वे विंधते हैं परन्तु उनके विंधनेका समय अति सूक्ष्म होनेसे उसमें क्रमिकताका बोध नहीं होता । उपयोगका क्रम इस प्रकार है—आत्मा मनसे संबंधित होता है, मन इन्द्रियों से, इन्द्रियाँ पदार्थोंसे संबंधित होकर अपने-विषयकी ग्राहक होती हैं; इसीलिये मनका, ‘अन्तःकरण’ यह संज्ञा सार्थक है, क्योंकि यह अन्तरङ्ग करण है और इन्द्रियाँ बहिरंग करण हैं । प्रत्येक इन्द्रियके साथ इसका क्रम से ही गमनरूप सम्बन्ध है इसलिये यह सर्वानुगामी है ।

ઉત્તર:—આ પાંચ ઇન્દ્રિયોથી થવાવાળાં જ્ઞાનમાં પણ સમયનો ભેદ અતિ સૂક્ષ્મ હોવાથી જાણી શકાતો નથી. જેમ કમલના સેકડો પત્તા વિંધવાથી તે ‘એક સાથ જ વિંધાઈ ગયા’ એવો બોધ થાય છે, પરંતુ તેઓ એકી સાથ વિંધાયેલ નથી, એકી સાથ વિંધાવાનો તેમાં ખાલી ભ્રમજ છે. ક્રમ ક્રમથી જ તે વિંધાય છે, પરંતુ તેના વિંધાવાનો સમય અતિ સૂક્ષ્મ હોવાથી તેમાં ક્રમિકતાનો બોધ થતો નથી. ઉપયોગનો ક્રમ આ પ્રકારે— છે. આત્મા મનથી સંબંધિત છે, મન ઇન્દ્રિયોથી ઇન્દ્રિયો પદાર્થોથી સંબંધિત થઈ પોત-પોતાના વિષયની ગ્રાહક થાય છે માટે મનની ‘અંતઃકરણ’ એ સંજ્ઞા સાર્થક છે, કારણકે તે અન્તરંગ કરણ છે અને ઇન્દ્રિયો બહિરંગ કરણ છે. પ્રત્યેક ઇન્દ્રિયની સાથ તેનો ક્રમ-ક્રમથી જ ગમન રૂપ સંબંધ છે માટે તે સર્વાનુગામી છે.

इन्द्रियविषयको विचारो गतः, साम्प्रतं प्रकृतार्थमनुसरामः । वृद्धावस्थायां रोगोदये च सर्वेषामिन्द्रियाणां स्वस्वसामर्थ्यहीनतामवलोक्य स प्राणी मौढ्यमापद्यते, इति दर्शयति—‘ अभिक्रान्तं च खलु वयः सम्प्रेक्ष्य स एकदा मूढभावं जनयति ’ इति । प्राणिनां कालकृता बाल्ययौवनादिरूपा शरीरावस्था वयस्तत् अभिक्रान्तम्—अतिक्रान्तम्, यद्वा अभि=जरामृत्यू अभिमुखीकृत्य क्रान्तं=प्राप्तं, तिस्रो हि मानवानामवस्था भवन्ति, तासु च बाल्य—यौवनद्वयमतीतं विलोक्य सकलेन्द्रियसामर्थ्यस्य क्षीणतां मृत्युकालसामीप्यञ्च समालोच्य ततः=तदनन्तरं स प्राणी, एकदा=वृद्धाव-

यहां तक इन्द्रिय सम्बन्धी विचार किया, अब प्रकृत अर्थका प्रतिपादन करते हैं—

वृद्धावस्था में अथवा किसी के रोगादि कारण जब यह प्राणी समस्त इन्द्रियोंको अपने२ विषयोंके ग्रहण करने में शक्तिविकल देखता है, तब यह कर्त्तव्यमूढ बन जाता है, इस बातका वर्णन करते हैं—“ अभिक्रान्तं च खलु वयं ” इत्यादि ।

प्राણियोंकी कालकृत जो बाल्य—यौवनादि रूप अवस्था होती है उसका नाम वय है, उसको अभિક્રान्त—अभि=जरा और मृत्युके संमुख क्रान्त=प्राप्त देखकर यह प्राणी एकदा=वृद्धાવસ્થા અથવા રોગોદયમેં મૂઢ-ભાવ=કર્તવ્યાકર્તવ્યકે વિવેકની શૂન્યતાકો પ્રાપ્ત હોતા હૈ ।

પ્રાણિયોંકી ત્રીજી પ્રકાર કી અવસ્થાઈ હૈ—એક બાલ્યાવસ્થા, દૂસરી યૌવનાવસ્થા, ઓર ત્રીસરી વૃદ્ધાવસ્થા । इनमें बाल्य और तरुण अव-

આટલે સુધી ઈન્દ્રિયસંબંધી વિચાર કર્યો, હવે પ્રકૃત અર્થનું પ્રતિપાદન કરે છે.

વૃદ્ધાવસ્થામાં અથવા કોઈ રોગાદિક કારણે ન્યારે પ્રાણી સમસ્ત ઈન્દ્રિયોને પોતપોતાના વિષયોને ગ્રહણ કરવામાં શક્તિવિકલ દેખે છે ત્યારે તે કર્તવ્યમૂઢ બને છે. આ વાતનું વર્ણન કરે છે. “ અભિક્રાન્તં ચ ખલુ વયં ” ઇત્યાદિ ।

પ્રાણિયોની કાલકૃત જે બાલ્ય—યૌવનાદિરૂપ અવસ્થા છે તેનું નામ વય છે. તેનું અભિક્રાન્ત—અભિ=જરા અને મૃત્યુના સંમુખ ક્રાન્ત=પ્રાપ્ત દેખીને પ્રાણી એકદા—વૃદ્ધાવસ્થા અથવા રોગોદયમાં કર્તવ્યા—કર્તવ્યના વિવેકની શૂન્યતાને પ્રાપ્ત થાય છે.

પ્રાણીઓની ત્રણ પ્રકારની અવસ્થા છે. એક બાલ્યાવસ્થા, બીજી યૌવનાવસ્થા અને ત્રીજી વૃદ્ધાવસ્થા, તેમાં બાલ્ય અને તરુણ અવસ્થાને વ્યતીત દેખીને

સ્થાયાં રોગોદયે ચાત્મનો મૂઢતાં=કર્તવ્યાકર્તવ્યવિચારશૂન્યતાં જનયતિ=અજ્ઞાનભાવં પ્રાપ્નોતીત્યર્થઃ । પ્રતિસમયં શ્રોત્ર-ચક્ષુ-ગ્રાણ-રસન-સ્પર્શન-વિજ્ઞાનૈઃ સકલૈરેકૈકશો વા, દેશતઃ સર્વતો વા નશ્યમાનૈઃ કરણરૂપૈઃ કર્તવ્યમૂઢો ભવતિ ।

યદ્વા-‘સોયપરિણાણેહિં, પરિહીયમાણેહિં’ ઇત્યાદૌ પ્રથમાર્થે તૃતીયાઽઽર્પ-ત્વાત્તદા તાનિ પરિજ્ઞાનાનિ ક્ષીયમાણાનિ કર્તૃરૂપાણિ મૂઢતાં જનયન્તીત્યર્થો ભવતિ ।

સ્થાકો વ્યતીત દેશકર વૃદ્ધાવસ્થા કો સકલ ઇન્દ્રિયોંકી શક્તિસે રિક્ત, એવં મૃત્યુકાલ કે સમીપ આઈ હુઈ દેશ કર ઉસ કાલમેં યહ પ્રાણી મૂઢ ભાવકો પ્રાપ્ત હોતા રહતા હૈ-‘મેરા કર્તવ્ય કયા હૈ ઓર અકર્તવ્ય કયા હૈ’ ઇસ વાતકા ઉસ સમય વિચાર હી જાતા રહતા હૈ । ઉસ સમય શ્રોત્ર, ચક્ષુ, ગ્રાણ, રસના ઓર સ્પર્શન, યે સમસ્ત ઇન્દ્રિયાં અપનેર વિષયકે જ્ઞાનસે ક્રમર કરકે અથવા ઁકહી સાથ, યા કુછ-કુછ અંશમેં રિક્ત હો જાતી હૈં ફિર ઇસે કર્તવ્ય ઓર અકર્તવ્યકા ભાન ભી કૈસે હો સકતા હૈ, ક્યોંકિ કર્તવ્ય ઓર અકર્તવ્ય કા ભાન ઇન્દ્રિયોં દ્વારા હી ગ્રહણ કિયે હુઁ વિષયોંમેં માનસિક વિચારધારા સે હોતા હૈ । જવ વે ઇન્દ્રિયાં અપનેર વિષયકે બોધસે વિકલ બનજાતી હૈં તવ ઉનકે વિષયોં મેં જો માનસિક વિચારધારા બંધતી થી વહ કૈસે બંધ સકેગી ? અતઃ યહ ઉસ સમય ઇસ પ્રકાર કે બોધસે રહિત હોકર ઁક તરહ કા ઉન્મત્ત જૈસા કર્તવ્યમૂઢ હો જાતા હૈ ।

અથવા-આર્ષવાક્ય હોને સે-“સોયપરિણાણેહિં પરિહીયમાણેહિં”

વૃદ્ધાવસ્થાને સકળ ઇન્દ્રિયની શક્તિથી રિક્ત અને મૃત્યુકાળ નજીક આવેલી દેખીને આ કાળમાં પ્રાણી મૂઢ ભાવને પ્રાપ્ત થાય છે. ‘મારું કર્તવ્ય શું છે અને અકર્તવ્ય શું છે’ એ વાતનો તે સમયે તેવો વિચાર જ વિસરાય જાય છે, તે વખતે શ્રોત્ર, ચક્ષુ, ગ્રાણ, રસના અને સ્પર્શન, આ બધી ઇન્દ્રિયો પોતપોતાના વિષયના જ્ઞાનથી કંમે કંમે અથવા એકી સાથે, અથવા થોડા થોડા અંશમાં રિક્ત થાય છે. પછી તેને કર્તવ્ય અને અકર્તવ્યનું ભાન કેવી રીતે રહે, કારણ કે કર્તવ્ય અકર્તવ્યનું ભાન ઇન્દ્રિયોદ્વારા જ ગ્રહણ કરેલાં વિષયોમાં માનસિક વિચારધારાથી થાય છે, જ્યારે આ ઇન્દ્રિયો પોતપોતાના વિષયના બોધથી વિકલ બને છે ત્યારે તેના વિષયોમાં જે માનસિક વિચારધારા બંધાતી હતી તે કેવી રીતે બંધાઈ શકે ? માટે તે વખતે તે આ પ્રકારના બોધથી રહિત થઈને એક પ્રકારનો ઉન્મત્ત અને કર્તવ્યમૂઢ થાય છે.

અથવા—આર્ષવાક્ય હોવાથી—સોયપરિણાણેહિં પરિહીયમાણેહિં” ઇત્યાદિ

વૃદ્ધો હિ સન્તતં ચિન્તાનુત્તમઃ પ્રણટેન્દ્રિયસામર્થ્યઃ ક્ષુત્પિપાસાતુરસ્તરૂણાયમાનતૃષ્ણા-  
ભિભૂતઃ કલ્યાણસરણિવિચ્ચુતો ભવતીતિ તાત્પર્યમ્ ॥ ૨ ॥

વૃદ્ધાવસ્થાયાં કીદૃશી દશા જાયતે ? इत्याह—‘ जेहिं वा सद्धिं ’ इत्यादि ।

મૂલમ્—જેહિં વા સદ્ધિં સંવસઈ તેઽવિ ણં ઇગયા નિયગા પુઠ્ઠિંવ  
પરિવયંતિ, સોઽવિ તે નિયણ પચ્છા પરિવણ્ણા, નાલં તે તવ  
તાણાણ વા સરણાણ વા, તુમંપિ તેસિં નાલં તાણાણ વા સરણાણ  
વા, સે ન હાસાણ, ન કિહ્હાણ, ન રઈણ, ન વિભૂસાણ ॥ ૩ ॥

છાયા—યૈર્વા સાદ્ધિં સંવસતિ તેઽપિ સ્વલ્પ એકદા નિજકાઃ પૂર્વં પરિવદન્તિ,  
સોઽપિ તાન્ નિજકાન્ પશ્ચાત્પરિવદતિ, નાલં તે તવ ત્રાણાય વા શરણાય વા,  
ત્વમપિ તેષાં નાલં ત્રાણાય વા શરણાય વા, સ ન હાસાય, ન ક્રીડાયૈ, ન રતયે, ન  
વિભૂષાયૈ ॥ ૩ ॥

इत्यादि वाक्यों में प्रथमा विभक्ति के स्थानमें तृतीया विभक्ति का  
प्रयोग किया है । अतः प्रथमा विभक्ति का आश्रय लेकर उसका  
अर्थ इस प्रकार होगा—नष्ट होनेवाले वे श्रोत्रादिक-परिज्ञान, उस  
समय—वृद्धावस्था या रोगोदयमें इस जीवको कर्त्तव्यमूढ बना देते हैं,  
क्योंकि वृद्ध उस समय निरन्तर चिन्तासे जलता रहता है, उसके  
प्रत्येक इन्द्रिय की शक्ति नष्ट हो जाती है, वह क्षुधा तृषासे पीड़ित  
रहता है, उसके तृष्णा की वृद्धि होती रहती है, ऐसी हालतमें उसे  
आत्मकल्याण की बात ही नहीं सुहाती, अतः वह कल्याणमार्गसे बहुत  
ही दूर रहता है, अर्थात् वह आत्मकल्याण नहीं कर सकता ॥ २ ॥

વાક્યોમાં પ્રથમા વિભક્તિના સ્થાનમાં ત્રીજી વિભક્તિનો પ્રયોગ કરેલ છે,  
માટે પ્રથમા વિભક્તિનો આશ્રય લઈ તેનો અર્થ આ પ્રકાર થશે—નષ્ટ  
થનારા તે શ્રોત્રાદિક-પરિજ્ઞાન તે વખત—વૃદ્ધાવસ્થા અગર રોગોદયમાં જીવને  
કર્ત્તવ્યમૂઢ બનાવે છે, કારણ કે વૃદ્ધ તે વખતે નિરંતર ચિન્તાથી બળતો રહે છે.  
તેની પ્રત્યેક ઈન્દ્રિયની શક્તિ નષ્ટ થાય છે, તે ક્ષુધા તૃષાથી પીડિત રહે છે.  
તેના તૃષ્ણાની વૃદ્ધિ થતી જ રહે છે. આવી હાલતમાં તેને આત્મકલ્યાણની  
વાત જ સારી લાગતી નથી માટે તે કલ્યાણ માર્ગથી ઘણો દૂર રહે છે. અર્થાત્  
તે આત્મકલ્યાણ કરી શકતો નથી. ૨

ટીકા—“યૈર્વા સાર્ધં સંવસતિ” ઇતિ, વા-શબ્દોઽર્થાન્તરમૂચકઃ તેન યૈઃ સહ ન સંવસતિ તે પરિવદન્તીતિ કિમાશ્ચર્ય, પરં યૈર્વા સાર્ધં સંવસતિ તેઽપિ નિન્દન્તીત્યર્થઃ । યૈર્વા પુત્રભાનૃભાર્યાદિભિઃ સાર્ધં=સહ સંવસતિ=સાનુરાગં નિવસતિ યાન્ યૌવનાવસ્થાયાં સર્વથા ધનોપાર્જનાદિના પરમાદરેણોપકૃત્ય પુપોષેત્યર્થઃ । તેઽપિ

વૃદ્ધાવસ્થામેં ઇસ જીવકી કેસી દશા હો જાતી હૈ ઇસકે લિયે કહતે હૈ—“જેહિં વા સદ્ધિ” ઇત્યાદિ ।

મૂલાર્થ—જિનકે સાથે યહ રહતા હૈ વે આત્મીય જન મી વૃદ્ધાવસ્થામેં અથવા રોગાદિકે સમયમેં ઇસકા તિરસ્કાર કરને લગ જાતે હૈ । યહ મી ઉન આત્મીય જનોંકી ઉસ હાલતમેં નિન્દા કરને લગ જાતા હૈ ઇસલિયે હે આત્મન્ ! વે પરિચિત વન્ધુ તેરી રક્ષા કરનેકે લિયે, તુઝે શરણ દેનેકે લિયે સમર્થ નહીં હૈ, ઓર ન તૂ મી ઉન અપને પરિચિત વન્ધુઓંકી રક્ષા કરનેકે લિયે, ઉન્હેં શરણ પ્રદાન કરનેકે લિયે સમર્થ હૈ । ઉસ અવસ્થામેં બ્રહ્મ વૃદ્ધ ન હાસ્યકે યોગ્ય હોતા હૈ ન ક્રીડાકે લાયક રહતા હૈ, ન રતિમેં સમર્થ હોતા હૈ ઓર ન વિભૂષાકે લાયક રહતા હૈ ॥ ૩ ॥

“યૈર્વા સાર્ધં સંવસતિ” યહાં જો વા શબ્દ હૈ વહ અર્થાન્તર કા સૂચક હૈ, ઇસસે યહ વાત પ્રકટ હોતી હૈ કિ યહ જિનકે સાથે નહીં રહતા હૈ વે યદિ ઇસકા તિરસ્કાર યા ઇસકી નિન્દા કરતે હૈ તો કોઈ અચરજ કી વાત નહીં હૈ, પરન્તુ આશ્ચર્ય તો ઇસ વાતકા હૈ કિ ચિરપાલિત જિન

વૃદ્ધાવસ્થામાં આ જીવની કેવી દશા થઈ જાય છે તેના માટે કહે છે—  
“જેહિં વા સદ્ધિ” ઇત્યાદિ.

મૂલાર્થ:—જેની સાથે તે રહે છે તે આત્મીયજન પણ વૃદ્ધાવસ્થામાં અથવા રોગાદિક સમયમાં તેનો તિરસ્કાર કરવા લાગી જાય છે. તે પણ તે આત્મીયજનોની તેવી હાલતમાં નિંદા કરવા લાગી જાય છે. માટે હે આત્મન્ ! તે પરિચિત બંધુ તારી રક્ષા કરવા માટે, તને શરણ દેવામાં સમર્થ નથી, અને તું પણ પોતાના પરિચિત બંધુઓની રક્ષા કરવામાં તેમજ શરણ દેવામાં સમર્થ નથી. તે અવસ્થામાં તે વૃદ્ધ હાસ્યને યોગ્ય હોતો નથી, તેમજ ક્રીડાને લાયક પણ રહેતો નથી, અને રતિમાં પણ સમર્થ થતો નથી, તેમજ વિભૂષાને લાયક પણ રહેતો નથી.

“યૈર્વા સાર્ધં સંવસતિ” આ ઠેકાણે જે વા શબ્દ છે તે અર્થાન્તરનું સૂચક છે તેથી એ વાત પ્રગટ થાય છે કે—એ જેની સાથે નહિ રહેતા તે કદાચ તેનો તિરસ્કાર અગર તેની નિંદા કરે તો કોઈ અચરજની વાત નથી, પરંતુ આશ્ચર્ય તો એ વાતનું છે કે ચિરપાલિત જે પુત્ર ભાઈ અને સ્ત્રી સાથે તે ઘણા અનુ-

खलु एकदा निजकाः पूर्वं परिवदन्तीति, ते चिरपरिपालिता अपि स्त्रीपुत्रभृत्यादयः  
खलु=निश्चयेन एकदा=वृद्धावस्थायां रोगोदये च निजकाः=आत्मीयाः परिवदन्ति=  
तिरस्कुर्वन्तीत्यर्थः । तं पूर्वोपकारिणं वृद्धं सम्प्रति शत्रुमिव मन्यन्त इति भावः ।

“अयं वाचालः परुषवागू न म्रियते, नापि मौनं तिष्ठति, नापि स्थानान्तरं गच्छति,

પુત્ર ભાઈ ઔર ભાર્યા કે સાથ યહ બડે અનુરાગસે રહતા હૈ, ઔર જિનકા  
હસને અપની જવાની અવસ્થાકે સમય સર્વ પ્રકારસે ધનાદિક કે અર્જન  
દ્વારા બડે આદરકે સાથ સંરક્ષણ કિયા હૈ, પાલન-પોષણ કિયા હૈ એસે  
વે આત્મીય જન ભી અપને ઇસ ઉપકારી જનકા ઇસ વૃદ્ધાવસ્થામેં, અથવા  
ઇસકે રોગાક્રાન્ત હો જાને પર તિરસ્કાર કરને લગતે હૈં, વે ઇસકે પ્રતિ  
ઇસ પ્રકારસે વ્યવહાર કરતે હૈં જૈસે કોઈ અપને શત્રુકે સાથ વ્યવહાર  
કરતા હૈ । નૌકર ચાકર ભી ઇસકી એક ભી બાત નહીં સુનના ચાહતે  
હૈં, અથવા સુનકર ભી વે ડસકી બાતકા કોઈ મહત્ત્વ હી નહીં સમજતે ।  
ઘરવાલે ડસ સમય યહી કહતે હૈં કિ-ઇસકી ઇસ અવસ્થામેં બુદ્ધિ મારી  
ગઈ હૈ, ‘સાઠ વર્ષમેં મનુષ્યકી બુદ્ધિ ષ્રષ્ટ હો જાતી હૈ’ યહ બાત સત્ય  
હૈ, ઇસે બોલને તકકા ભી અબ તમીજ નહીં હૈ-રાત દિન વડવડાતા  
હી રહતા હૈ, હર એકસે યદ્દા-તદ્દા કઠોર વચન બોલ દિયા કરતા હૈ,  
ક્યા કરેં, ઇસે મૌત ભી નહીં આતી હૈ, ઇસસે હજારોં વાર કહ દિયા હૈ  
કિ જ્યાદા મત બોલા કરો, ચુપ રહા કરો, પરન્તુ યહ નહીં માનતા, રાત-  
દિન યહીં પર અડા બૈઠા રહતા હૈ, ઇસસે ઇતના ભી નહીં બનતા કિ

રાગથી રહે છે અને જેનો તેણે પોતાની જુવાન અવસ્થાને સમયે સર્વ પ્રકારથી  
ધનાદિક કમાઈને આદરથી રક્ષણ કર્યું છે. એવા તે આત્મીય જન પણ પોતાના  
આવા ઉપકારી માણસનો આ વૃદ્ધાવસ્થામાં અથવા રોગા-ક્રાન્ત થવાથી તેનો  
તિરસ્કાર કરવા લાગી જાય છે. તે તેના પ્રતિ એવા પ્રકારથી વ્યવહાર કરે છે  
કે જાણે પોતાના શત્રુની સાથે વ્યવહાર કરતા હોય. નોકર-ચાકર પણ તેની  
કોઈ વાત સાંભળતા નથી, અથવા સાંભળે તો તેની વાતનો કોઈ મહત્ત્વ સમજતા  
નથી. ઘરવાળા આ સમયમાં એ કહે છે કે-એની આ અવસ્થાએ બુદ્ધિ મારી  
ગઈ છે. “સાઠ વર્ષે” મનુષ્યની બુદ્ધિ ષ્રષ્ટ થાય છે.” આ વાત સત્ય છે, જેને  
ખોલવાનો પણ ઢંગ નથી, રાત-દિવસ ખડ-ખડ કર્યા કરે છે. દરેકથી  
જેમ-તેમ ખરાબ ખરાબ શબ્દો બોલી નાંખે છે. શું કરવું એને મોત પણ આવતી  
નથી. એને હજાર વાર કહ્યું કે ઝાઝું બોલો નહિ, ચુપ રહ્યા કરો, પરંતુ એ  
માનતો જ નથી, રાત-દિન આ ઠેકાણે અફો લગાવી બેસી જ રહે છે, એનાથી



સ્વદ્વાદિકમપિ ન પરિત્યજતિ इत्येवं भानाविधकठोरवाक्यैस्तर्जन्यादिना तर्जयन्  
“किमनेन वराकेणे”—इत्येवं सततं तं धिक्कुर्वन्ति । अन्येषां का वार्ता किन्तु स्वय-  
मपि स्वात्मानं नाद्रियते, तथा हि—उत्थातुकामोऽपि नोत्थातुं शक्नोति, श्रोतुं द्रष्टुं  
घ्रातुमास्वादयितुं स्पर्ष्टुमिच्छति, परन्तु तत्तदिन्द्रियसामर्थ्यस्य परिक्षीणतया न  
शृणोति शब्दं, न पश्यति रूपं, न जिघ्रति गन्धं, नापि रसमास्वादयति, न चैव कर्कशक-  
यहांसे दूसरी जगह भी जाकर बैठ जावे, जब देखो तब खाट पर ही  
पड़ा रहता है, यों तो इसके कोई मतलब ही नहीं है, क्योंकि कमा कर  
तो हम ही लाते हैं । इस प्रकार के अनेक कठोर वचनोंसे अथवा तर्जनी  
ऊंगली दिखाए कर इसका अनादर करते हैं, उसे सदा धिक्कारा करते हैं ।

इस अवस्थामें दूसरोंकी क्या बात कहना, अर्थात् दूसरे व्यक्ति  
अथवा अपने सगे संबन्धी लोग इस वृद्ध की सेवा चाकरी आदर सत्कार  
न करे तो कोई अचरज की बात नहीं, परन्तु यह स्वयं अपने शरीर  
सम्बन्धी कार्य करनेमें भी असमर्थ हो जाता है—यह उठना चाहता है  
तो भी उठ नहीं सकता, सुननेकी, देखनेकी, सूंघनेकी और चखनेकी  
तथा छूनेकी इच्छा करता है तो भी अपनी उनर पदार्थोंको विषय कर-  
नेवाली इन्द्रियोंकी शक्ति क्षीण होनेसे न शब्द को सुन सकता है, न  
रूपको देख सकता है, न गन्धको सूंघ सकता है, न रसको चख सकता  
है और न कर्कश कठोर आदि स्पर्शको पहचान सकता है ।

એટલું પણ નથી બનતું કે અહીંયાથી ઉઠી બીજી જગ્યાએ જઈ બેસે. જ્યારે  
દેખો ત્યારે ખાટ પર જ પડી રહે છે. આમ તો એને કોઈ મતલબ જ નથી,  
કારણ કે કમાઈ કમાઈને તો અમે લાવીએ છીએ. આવા પ્રકારના અनेક  
કઠોર વચનોથી અથવા અંગુઠો બતાવી બતાવીને તેનો અનાદર કરતા જ રહે છે  
અને તેને ધિકાર્યા જ કરે છે.

આ અવસ્થામાં બીજાની શું વાત કહેવી — અર્થાત્ બીજી વ્યક્તિ અને  
પોતાનાં સગાં સંબંધી લોક આ વૃદ્ધની સેવા ચાકરી આદર સત્કાર ન કરે તો  
કોઈ અચરજની વાત નહિ. પરંતુ તે પોતે પોતાના શરીર સંબંધી કાર્ય કરવામાં  
પણ અસમર્થ બને છે. તે ઉઠવા ચાહે છે તો પણ ઉઠી શકતો નથી, સાંભળવાની  
દેખવાની સૂંઘવાની અને ચાખવાની તથા સ્પર્શની ઇચ્છા કરે છે તો પણ પોતાની  
તે તે પદાર્થોથી વિષય કરવાવાળી ઇન્દ્રિયોની શક્તિ ક્ષીણ હોવાથી ન તો શબ્દને  
સાંભળી શકતો, ન તો રૂપને દેખી શકતો, નથી ગંધને પારખી શકતો, નથી  
રસને ચાખી શકતો અને કઠોર તેમજ કર્કશ સ્પર્શને પીછાણી શકતો નથી.

ठोरादिकं स्पृशति । इति नानाविधां दुर्दशामनुभूय नवद्वारेभ्यो विनिःसृतं कर्णमलादिकं घृणास्पदं वस्तु दर्शं दर्शमत्यर्थं क्लान्तमना भवति ततः 'कथमेतादृशस्य मम मरणं नायाती—'त्यनिशं खट्वारूढः कासश्वासादिरोगाभिभूतः कफावृतशय्यावसनादिको मुहुरूपतप्तो भवतीति निजशरीरं स्वस्मै सर्वथा न रोचते । उक्तञ्च—

ऐसी अनेक प्रकारकी दुर्दशाको भोगता हुआ यह वृद्ध सदा चित्तमें सन्तप्त होता रहता है । तथा शरीर के नव द्वारोंसे सदा निकलनेवाले कानके मेल तथा खेंखार आदि अपवित्र वस्तुओंको देख-देख कर नित्य ग्लानि करता रहता है परन्तु कर कुछ नहीं सकता, यह तो यही विचारता है कि मेरी मृत्यु कब आवे, ताकि इस दुःखसे छुटकारा मिल जावे, परन्तु इसके इस विचारसे कुछ होना जाना नहीं है, यह तो विचारा अपनी खटिया पर पडा-पडा ही कफ खाँसी श्वास आदि रोगोंसे दुःखित होता रहता है, कफ आदि मलोंको यह बाहर फेंकनेकी इच्छा करना है तो भी शारीरिक अशक्ति की वजहसे वे कपडों पर ही गिर जाते हैं, बाहरमें मलत्यागकी भावना होनेपर भी उठनेकी अशक्ति की वजह से खटिया पर ही टट्टी पेशाब हो जाती है, यह उसमें ही लथ-पथ हो कर पडा रहता है और दुःखी भी होता है, परन्तु कर-धर कुछ नहीं सकता । ऐसी परिस्थितिमें इसे स्वयं भी अपना शरीर रुचिकर प्रतीत नहीं होता । कहा भी है—

એવી અનેક પ્રકારની દુર્દશાને ભોગવતાં તે વૃદ્ધ સદા ચિત્તમાં સંતપ્ત રહ્યા કરે છે, તથા શરીરના નવ દ્વારોથી સદા નીકળતાં કાનનો મેલ તથા ખેંખાર આદિ અપવિત્ર વસ્તુઓને દેખીને નિત્ય ગ્લાનિ ભોગવ્યાં કરે છે. પરંતુ કંઈ પણ કરી શકતો નથી. એ તો એ જ વિચારે છે કે મારી મૃત્યુ ક્યારે આવે જેથી આ દુઃખથી છુટકારો મળી જાય, પરંતુ તેના આ વિચારથી કંઈ બની શકતું નથી. એ તો બિચારો ખાટલા ઉપર પડ્યો પડ્યો કફ-ખાંસી શ્વાસ આદિ રોગોથી દુઃખી થતો રહે છે. કફ આદિ મળોને તે બાહર ફેંકવાની ઇચ્છા કરે છે તો પણ શારીરિક અશક્તિથી તે તેના કપડા ઉપર જ પડી જાય છે. બાહર મલ ત્યાગની ભાવના હોવા છતાં પણ ઉઠવાની અશક્તિથી ખાટલા ઉપર જ ઝાડો પેશાબ થઈ જાય છે તે તેમાં જ લથ-પથ પડ્યો રહે છે, અને દુઃખી પણ થાય છે. પરંતુ કંઈ પણ કરી શકતો નથી. આવી પરિસ્થિતિમાં તેને પોતાને પણ પોતાનું શરીર રુચિકર પ્રતીત થતું નથી. કહ્યું છે—



શિરઃ શ્વેતં દન્તાવલિરપિ ગતા સ્નાયુનિચયઃ,  
 પ્રયાતઃ શૈથિલ્યં પલલમપિ નૈરસ્યવલિતમ્ ॥  
 સ્વયં સ્વં સંનિન્દન્ લગુડશરણો મન્દકરણો,—  
 મનોભાવાભિજ્ઞા કિમુ જરસિ કાન્તા ન હસતિ? ॥ ૧ ॥  
 શરીરં સઙ્કોચં વ્રજતિ ચરણૌ મન્દગતિકૌ  
 મુખં લાલાપન્નં નયનમપિ નાલોકિતુમલમ્ ॥  
 ન વાક્યં મન્યન્તે પરિજનગણાઃ સ્ત્રી ન ભજતે  
 જરાયાં હા ! કષ્ટં તનુજનુરપિ દ્વેષ્ટિ જનકમ્ ॥ ૨ ॥  
 સકલપરિવારો વૃદ્ધાવસ્થાયાં જુગુપ્સતે તદ્વિપયે કથાનકમત્ર, તથા હિ—

“ શિરઃ શ્વેતં દન્તાવલિરપિ ગતાં સ્નાયુનિચયઃ,  
 પ્રયાતઃ શૈથિલ્યં પલલમપિ નૈરસ્યવલિતમ્ ।  
 સ્વયં સ્વં સંનિન્દન્ લગુડશરણો મન્દકરણો,—  
 મનોભાવાભિજ્ઞા કિમુ જરસિ કાન્તા ન હસતિ? ॥ ૧ ॥  
 શરીરં સઙ્કોચં વ્રજતિ ચરણૌ મન્દગતિકૌ,  
 મુખં લાલાપન્નં નયનમપિ નાલોકિતુમલમ્ ।  
 ન વાક્યં મન્યન્તે પરિજનગણાઃ સ્ત્રી ન ભજતે,  
 જરાયાં હા ! કષ્ટં, તનુજનુરપિ દ્વેષ્ટિ જનકમ્ ॥ ૨ ॥ ઇતિ ।  
 અર્થ સ્પષ્ટ હૈ ॥

વૃદ્ધાવસ્થામેં ઉસકે સમસ્ત અપને જન ઇસસે ઘૃણા કરને લગજાતે  
 હૈ, ઇસ વિષયમેં એક કથા લિખી જાતી હૈ—

“ શિરઃ શ્વેતં દન્તાવલિરપિ ગતા સ્નાયુનિચયઃ  
 પ્રયાતઃ શૈથિલ્યં પલલમપિ નૈરસ્યવલિતમ્ ।  
 સ્વયં સ્વં સંનિન્દન્ લગુડશરણો મન્દકરણો,  
 મનોભાવાભિજ્ઞા કિમુ જરસિ કાન્તા ન હસતિ ? ॥ ૧ ॥  
 શરીરં સઙ્કોચં વ્રજતિ ચરણૌ મન્દગતિકૌ,  
 મુખં લાલાપન્નં નયનમપિ નાલોકિતુમલમ્ ।  
 ન વાક્યં મન્યન્તે પરિજનગણાઃ સ્ત્રી ન ભજતે,  
 જરાયાં હા ! કષ્ટં તનુજનુરપિ દ્વેષ્ટિ જનકમ્ ’ ॥ ૨ ॥ ઇતિ ।  
 અર્થ ખુલ્લો છે.

વૃદ્ધાવસ્થામાં તેના સમસ્ત પોતાના જન જેનાથી ઘૃણા કરવા લાગી બાથ  
 છે. આ વિષયમાં એક કથા આપવામાં આવી છે:—

आसीद्राजगृहे नगरे गुणगणविभूषितः संसारसारसुचारुसौन्दर्यालङ्कृतो निखिल-  
गजवाजिरथवसनविभवोपार्जको 'देवदास'—नामा कश्चिच्छ्रेष्ठी । स च यौवने भा-  
ग्यातिरेकेण दशकोटिमितसुवर्णमुद्रां वाणिज्यकर्मणा समर्प्य सकलस्त्री-पुत्रादि-  
परिपोषकश्चन्द्र इवाह्लादकस्तेषां बभूव । तस्य चत्वारः पुत्रा आसन् । स एकदा  
वार्द्धके रत्नादिकं सकलधनं विभज्य पुत्रेभ्यः समर्प्य निश्चिन्तोऽभूत्स्वयम् । पुत्रा  
अपि निज-निजपत्नीः पितृशुश्रूषार्थं समादिश्य स्वस्वकार्यसमासक्ता अभूवन् । गतेषु

राजगृह नामके प्रसिद्ध नगरमें देवदास नामक एक सेठ रहता था  
जो अनेक गुणों से अलङ्कृत था । जिसका शरीर संसारमें सारबुद्धिको  
उत्पन्न करानेवाले सुन्दर सौन्दर्यसे सुशोभित था । जिसका घर हाथी  
घोड़ों और रथोंसे सदा भरा-हुवा था । सुन्दर २ कीमती वस्त्रोंकी जिसके  
यहां पर कमी नहीं थी । सम्पत्ति जिसकी दासी थी । किसी समय  
उसने यौवन अवस्थामें शुभ कर्मके उदयसे व्यापारके जरिये दस करोड़  
सुवर्ण मुद्राओंका उपार्जन किया । वह स्त्री-पुत्रादिक परिजनोंके लिये  
चन्द्रमाकी तरह आनन्द उत्पन्न करता था । उसके चार पुत्र थे । उसने  
एक समय अपनी वृद्धावस्थामें अपनी धनसम्पत्ति अपने समस्त पुत्रों  
को बाँट दी और उनकी तर्फसे स्वयं निश्चिन्त हो गया । वे पुत्र भी  
अपनी २ स्त्रियोंको “तुम हमारे पिताकी अच्छी तरहसे सेवा करना”  
ऐसा आदेश देकर अपने २ काममें लग गये । कुछ दिनोंके बाद बड़े  
पुत्र की स्त्री अपने ससुर की सेवा करने में आलस्य करने लगी । पुत्र

राजगृह नामका प्रसिद्ध नगरमें देवदास नामको एक सेठ रहता होता. वे  
अनेक गुणोधी अलङ्कृत होता. जेनुं शरीर संसारमें सार बुद्धिने उत्पन्न करवा-  
वाणा सुंदर सौन्दर्योधी सुशोभित हुतुं, जेना घरे सुंदर कीमती वस्त्रोनी कमीना  
न होती. जेनुं घर उभेशा छाथी-घोडा अने रथोधी लरेहुं रहितुं हुतुं. संपत्ति  
जेनी दासी होती. एक वमत तेणे यौवन अवस्थां शुभ कर्मना उदयधी  
व्यापारधी दस करोड सुवर्णमुद्रा कमाये. ते स्त्री पुत्रादिक परिजनो भाटे चंद्र-  
मानी भाइक आनंद उत्पन्न करतो हुतो. तेने चार पुत्रो हुता. तेणे एक वमत  
पोतानी वृद्धावस्थां पोतानी धनसंपत्ति पोताना समस्त पुत्रोभां वडेची आपी,  
अने तेमना तरधी गिलकुल निश्चित धर्ध गये. ते पुत्र पण पोतपोतानी  
स्त्रीओने “तमे अमारा पितानी सारी रीते सेवा करजे” जेवो आदेश आपीने  
पोतपोताना कामे लागी गया. थोडा समय पछी मोटा पुत्रनी स्त्री पोताना  
ससरानी सेवा करवां आणस करवा लागी. पुत्र जे वमत घरे आवे अने

ચ કતિપયેષુ દિવસેષુ સા જ્યેષ્ઠપુત્રવધૂતસ્ય શુશ્રૂષાયાં સાલસા વભૂવ । યદા પુત્રો ગૃહમાગત્ય પિતરં કુશલં શુશ્રૂષાદિ ચ પૃચ્છતિ તથા સ્થવિરઃ કથયતિ-નેયં સ્તુષા માં શુશ્રૂષતે । સા તુ પત્યા નિર્ભર્તિસતા સ્વામિનમાહ-ભવતાં ન મમોપરિ વિશ્વાસોઽસ્તિ તતશ્ચાન્યા એવ શુશ્રૂષન્તામ્ । તતશ્ચાન્યા સ્તુષા તદીયસેવાકર્મણિ નિયુજ્યમાનાઽપિ તથૈવ કૃતમન્દાદરા પુનઃ સ્વપતિર્ભર્તિસતા સેવાધર્માદિરતા વભૂવ । એવમન્યા સ્તુષા દુહિતા પૌત્રી પૌત્રો ભૃત્યવર્ગશ્ચ ક્રમેણ સેવાત ઉપરતા આસન્ । તતશ્ચ સતતમનુતત્તો ગુરુતરસ્વેદસ્વિન્નો ગ્રહગૃહીત ઇવ દુઃખશતમનુભવતિ । તતઃ સર્વૈઃ પરિત્યક્ત એકપદમપિ

જિસ સમય ઘર આકર અપને પિતાસે કુશલ સમાચાર તથા સેવા કરને કી બાત પૂછતા તો વહ વૃદ્ધ કહતા કિ ભાઈ ક્યા કહૂં યહ વહ તો મેરી જરા મી ટહલ નહીં કરતી હૈ । ઇસ બાતકો સુન કર જબ ઉસકા પતિ ઉસસે નારાજ હોતા તો વહ અપને પતિસે કહતી કિ યદિ આપકા મેરે ઝપર વિશ્વાસ નહીં હૈ તો આપ અપને પિતા કી સેવા દૂસરી વહૂસે કરા ક્યોં નહીં લેતે ? । ઇસ પ્રકાર ઉસકે કહને પર જબ ઉસને પિતા કી સેવા કે લિયે દૂસરી વહૂ કો નિયુક્ત કિયા તો વહ મી પહિલી વહૂ જૈસી હી ઉસકી સેવામેં મન્દ આદરવાલી હોને લગી તવ ઉસકે મી પતિને ઉસકો બુરા મલા કહા તો વહ મી ઉસકી સેવા કરને સે વિમુખ હો ગયી । ઇસી પ્રકાર અન્ય ઔર મી વહુઁ તથા પુત્રી, પૌત્રી એવં નૌકર ચાકર મી ઉસકી સેવા કરને સે ક્રમ ર સે વિમુખ બન ગયે । જબ યહ અપની હાલત ઉસ વૃદ્ધને દેખી તો ઉસકે ચિત્તમેં બહુત હી જ્યાદા સન્તાપ હુઆ ઔર વહ અત્યન્ત સ્વેદસ્વિન્ન હો પાગલ જૈસા બન કર અનેક પ્રકારકે કષ્ટોંકા

પિતાને કુશલ સમાચાર તથા સેવા કરવાની વાત પૂછે ત્યારે તે વૃદ્ધ કહેતો કે ભાઈ શું કહું ? આ વહુ તો મારી જરા પણ ખાતર બરદાસ કરતી નથી, આવી વાત સાંભળીને જ્યારે તેનો પતિ તેણીથી નારાજ થાય છે ત્યારે તેણી પોતાના પતિને કહે છે કે તમને મારા ઉપર વિશ્વાસ નથી તો પછી તમારા પિતાજીની સેવા બીજી વહુથી કેમ કરાવતાં નથી ? આવા પ્રકારના તેણીના કહેવા પરથી જ્યારે તેણે પિતાની સેવા માટે બીજી વહુને નિયુક્ત કરી તો તે પણ પહેલી વહુની માફક તેની સેવામાં મન્દ મન્દ આદરવાલી થવા લાગી. ત્યારે તેનો પતિ પણ જ્યારે તેને ભલું બુરું કહેતો તો તે પણ તેની સેવા કરવાથી વિમુખ બની જતી. આ પ્રકારે બીજી વહુઓ તથા પુત્ર, પૌત્રી અને નોકર ચાકર પણ તેની સેવા કરવામાં ક્રમે-ક્રમે વિમુખ બની ગયાં. જ્યારે આ પોતાની હાલત તે વૃદ્ધ દેખી તો તેના ચિત્તમાં ઘણોજ સન્તાપ પેદા થયો અને તે અત્યંત ખેદાગિન

गन्तुमक्षमस्त्वणकुब्जीकरणेऽप्यसमर्थः शय्यासविधे कृतमूत्रपुरीषोऽतिमलिनवसनो विगलितदशनः कुक्कुरपिण्डमिवाहर्निशं भोजनं लभमानो वृद्धश्चेतसि व्यचिन्तयत् —‘ अहं यौवने धनार्जनपरायणः कुटुम्बपोषणपरः कदापि कल्याणमार्गं नाराधितवान् किमधुना करोमि कोऽपि मां न गणयति, ते पूर्वमुपलालिताश्चिरपालिताः पुत्रादि-परिवारा आत्मसाधनविकलितं कृतकलकलं मामुपहसन्तीत्येवं भृशं विलपति, पश्चात्ता-

अनुभव करने लगा, सब घरवालों ने उसे छोड़ दिया। वह बिलकुल कमजोर हो गया। एक पैर भी चलनेकी उसमें शक्ति नहीं रही। वह अपनी खाटके पास ही मल-मूत्र का त्याग करने लगा। वस्त्र भी उसके अत्यन्त मलिन रहने लगे। उसके दाँत पहिलेसे ही गिर चुके थे। घर-वालों में से भी किसीका उसके प्रति जरा भी स्नेह नहीं रहा। भोजन भी उसे अनादरपूर्वक दिया जाने लगा। इस अपनी हालत को देख कर वह विचार करने लगा कि-हाय ! मैंने यौवन अवस्थामें धन कमाने में ही अपना समय व्यतीत किया, कुटुम्बके भरण-पोषण करने में ही चित्तको लगाया, कल्याण मार्गकी तर्फ सदा उदासीन रहा, उसकी थोड़ीसी भी आराधना नहीं की, अब इस अवस्थामें मैं क्या कर सकता हूँ। इतना सब कुछ करने पर भी तो ये लोग मेरी तर्फ जरा भी ध्यान नहीं देते। जिनका मैंने पहिले अच्छी तरह से लालन-पालन किया, और जिनके साथ मेरा घनिष्ठ प्रेम रहा है। संसारमें जिन्हें आत्मीय

બની ગાંડાની માફક બની અનેક પ્રકારના કષ્ટોનો અનુભવ કરવા લાગ્યો. બધા ઘરવાળાએ તેને છોડી દીધો. તે બીલકુલ કમજોર થઈ ગયો. એક ડગલું પણ ચાલવાની તેનામાં શક્તિ ન રહી. તે પોતાના ખાટલાની પાસે જ આડા પેશાબનો ત્યાગ કરવા લાગ્યો. તેના વસ્ત્રો પણ મેલા રહેવા લાગ્યા. તેના દાંતો પહેલાથી જ પડી ગયા હતા. ઘરવાળામાંથી કોઈનો પણ તેના પ્રતિ જરા જેટલો પણ પ્રેમ ના રહ્યો. ભોજન પણ તેને અનાદરપૂર્વક આપવામાં આવતું હતું. આ પોતાની હાલતને દેખીને તે વિચાર કરવા લાગ્યો કે—“ હાય ! મેં યૌવન અવસ્થામાં ધન કમાવામાં જ પોતાનો સમય વ્યતીત કર્યો. કુટુંબનું ભરણ પોષણ કરવામાં જ ચિત્તને લગાવ્યું. કલ્યાણમાર્ગની તરફ સદા ઉદાસી રહ્યો, તેનું થોડું પણ આરાધન ન કર્યું. હવે આવી અવસ્થામાં હું શું કરી શકું ? આટલું આટલું કરવા છતાં પણ આ લોકો મારા તરફ પણ જોતા નથી. જેનું મેં પહેલાં સારી રીતે લાલન-પાલન અને જેની સાથે મારો ઘનિષ્ટ પ્રેમ રહ્યો છે, સંસારમાં જેને

પાનુતસઃ ‘કથં શીઘ્રં ન મ્રિયે’ ઇતિ વારં-વારં વદન્ વિષીદતિ ચ । વૃદ્ધાવસ્થાયાં કૃષિવાણિજ્યગજવાજિરથાદિવિષયા જિજ્ઞાસા જાગર્તિ, પ્રત્યહં પૃચ્છતિ પુત્રાદિકં, પરં પુત્રેણ ‘તિષ્ઠ તિષ્ઠ જાલ્મ ! કાક ઇવાસ્તુદાં ગિરં કિં મુધા પ્રલપસિ ? કિં તે જ્ઞાતેન ? કિમત્ર તવ પ્રયોજનમ્ ? મૌનં કૃત્વા યન્મિલતિ ચાશનવસનાદિકં તદ્ ગૃહાણ ’ ઇત્યાદિનાનાવિધપરુપવાગ્મિર્મૂયોભૂયસ્તર્જિતો મર્તિસતશ્ચ ભવતિ ।

કહતે હૈં વે હી મેરી ઉપેક્ષા કર રહે હૈં તો અવ ઓર કૌન એસા હૈં જો આત્મસાધનાસે રહિત મુદ્ધ અભાગે કી ઓર ધ્યાન દેગા ? યે સવ લોગ મુદ્ધે દેખ ર કર હૈંસતે હૈં, હાય ! અવ મૈં કયા કરૂં ? ઇત્યાદિ રૂપ સે વહ વિલાપ કરને લગા, ઓર પશ્ચાત્તાપકી અગ્નિમેં જલતા હુવા “ મૈં શીઘ્ર ક્યોં નહીં મર જાતા હૂં ” ઇસ પ્રકાર વારંવાર વિચારને લગા ઓર દુઃખી હોને લગા ।

જવ જવ વહ ઇસ અવસ્થામેં કૃષિ, વાણિજ્ય, હાથી, ઘોડા ઓર રથ આદિ કે વિષયમેં અપને પુત્રોં સે પૂછતા તો વે ઇસસે કહતે કિ-અરે ! વડ-વડ ક્યોં કરતે હો ? ચુપ-ચાપ ક્યોં નહીં બૈઠે રહતે હો ? તુમકો ઇનસે અવ કયા મતલબ હૈં ? વ્યર્થ હી કૌણ કે સમાન હમકો નહીં સુદા-નેવાલી વાણી ક્યોં બોલતે હો ?, કયા હો રહા હૈં, કયા નહીં હો રહા હૈં ?; ઇસકે જાનનેકી તુમ્હેં કયા જરૂરત હૈં ?, ઇસ પ્રકાર કે જાનને સે ભી તુમ્હારા કૌનસા સ્વાર્થ સિદ્ધ હોતા હૈં ?, તુમ તો ચુપ હી રહા કરો, ઓર જો કુછ ભી खाने-पीने કો મિલ જાતા હૈં ડસીમેં સન્તોષ રખવો । ઇત્યાદિ

આત્મીય કહે છે તે જ મારી ઉપેક્ષા કરી રહ્યાં છે. તો હવે એવો કોણ છે જે આત્મસાધનાથી રહિત મારા જેવા અભાગીની તરફ ધ્યાન આપે ? આ બધા લોકો મને દેખીને હસે છે. હાય ! હવે હું શું કરું ? ” ઇત્યાદિ રૂપથી તે વિલાપ કરવા લાગ્યો અને પશ્ચાત્તાપની અગ્નિમાં જલીને “ હું જલદી કેમ મરતો નથી ? ” આ પ્રકારે વારંવાર વિચારવા લાગ્યો અને દુઃખી થવા લાગ્યો.

જ્યારે જ્યારે તે આ અવસ્થામાં ખેતી, વ્યાપાર, હાથી, ઘોડા અને રથ આદિ વિષયમાં પોતાના પુત્રોથી પૂછતો તો તેઓ કહેતા કે-“અરે ! બડબડ શું કર્યા કરો છો ? ચુપચાપ કેમ બેસતા નથી ? તમારે તેનાથી શું મતલબ છે ? ખાલી કાગડા સમાન અમારે નહિ સાંભળવા જેવી વાણીને સાંભળાવો છો. ‘શું થઈ રહ્યું છે ? શું નથી થઈ રહ્યું ?’ એ બધું બાણવાની તમારે શું જરૂર છે ? આ પ્રકારનું બાણવાથી પણ તમારો કયો સ્વાર્થ સિદ્ધ થવનો છે ? તમે તો ચુપ જ રહ્યાં કરો અને જે કંઈ પણ ખાવા પીવાનું મળે છે તેમાં સંતોષ રાખો ” ઇત્યાદિ

વૃદ્ધાવસ્થાયાં बहुप्रलपनशीलो निजपरिवारकृताननादरान् यस्मै कस्मैचिदपि प्रातिवेशिकाय कथयतीति दर्शयति—‘ सोऽपि तान् निजकान् पश्चात्परिवदति ’ इति, सः=वृद्धोऽपि तान्=पुत्र-कलत्र-भृत्यादीन् निजकान्=आत्मीयान्, पश्चात्=वृद्धाव-  
स्थायां, परिवदति=परिभवति, पूर्वं यान् पुत्रादीन् पोषयितुं धनोपार्जनासक्तः ‘ स्त्री  
पुत्रादिभरणमेव श्रेयः ’ इति मत्वा विहितनिखिलानर्थनिवहो व्यग्रविग्रहः कल्याणमार्ग-

अनेक प्रकार के कठोर वचनोंसे बारंबार वे उसका तिरस्कार करते हुए  
उस वृद्ध सेठको दुःखित करते थे ।

वृद्धावस्थामें एक तो मनुष्यको स्वभावतः पहिले की अपेक्षा अधिक  
वाचालता आजाती है अतः अपने सगे संबंधियों द्वारा जो कुछ भी  
अनादरसूचक व्यवहार उसके साथ होता है वह जब तक अपने पड़ो-  
सियोंसे न कह दे तब तक उसे शान्ति भी नहीं मिलती, अब इसी  
बातको सूत्रकार सूचित करते हैं—“ सोऽपि तान् निजकान् पश्चात् परि-  
वदति ” वह वृद्ध उन अपने पुत्र कलत्र और नौकर चाकर आदि अपने  
आत्मीय जनों की इस प्रकार से निन्दा करने लगता है कि जिनके पालन-  
पोषण करने में मैंने जरा भी कसर नहीं की, जिनकी सेवामें रात दिन  
एक कर दिया, यह समझ कर कि स्त्री पुत्रादिकों का पालन-पोषण करना  
ही सर्वोत्तम कार्य है । मैंने धन उपार्जन करनेमें भी कुछ कसर नहीं  
रखी, संसार भर के सब अनर्थ किये और आकुलव्याकुल चित्त बन  
असावधानीपूर्वक अपनी प्रवृत्ति चालू रखी, और अभी तक भी मैं

અનેક પ્રકારનાં કઠોર વચનોથી વારંવાર તેઓ તેનો તિરસ્કાર કરીને તે વૃદ્ધ  
શેઠને દુઃખી કરતા હતા.

વૃદ્ધાવસ્થામાં એક તો મનુષ્યને સ્વભાવતઃ પડેલાની અપેક્ષા અધિક વાચા-  
લતા આવે છે માટે પોતાના સગાં સંબંધીઓ દ્વારા જે કાંઈ પણ અનાદરસૂચક  
વ્યવહાર તેની સાથે થાય છે, તે જ્યાં સુધી પોતાના પાડોશીઓને તે ન કહે  
ત્યાં સુધી તેને શાંતિ થતી નથી. હવે આ વાતને સૂત્રકાર સૂચિત કરે છે—

“ સોઽપિ તાન્ નિજકાન્ પશ્ચાત્ પરિવદતિ ”

તે વૃદ્ધ તે પોતાના પુત્ર કલત્ર અને નોકર આદિ પોતાના આત્મીયજનોની  
આ પ્રકારે નિંદા કરવા લાગે છે કે—જેનું પાલન પોષણ કરવામાં મેં જરા પણ  
કસર નહિ રાખી, જેની સેવામાં રાત દિવસ એકજ માન્યો, એવું સમજીને કે  
સ્ત્રી પુત્રાદિકોનું પાલન પોષણ કરવું એ સર્વોત્તમ કાર્ય છે. મેં ધન ઉપાર્જન  
કરવામાં કાંઈ કસર રાખી નહિ. સંસારભરના સર્વ અનર્થ કર્યા, અને આકુળ-



અષ્ટો જાતોઽહં, ત એવ સામ્પ્રતં મમાશનવસનાદિકાર્યેઽપિ વિમનસો ભવન્તીતિ મહત્કષ્ટમ્, કિમધિકેન મદ્વચનમપિ તેષાં વિષાયતે, इत्येवंविधवाक्यैर्निजपरिवारान् वृद्धो धिक्करोतीति भावः । अतो हे आत्मन् ! ‘ नालं ते तव त्राणाय वा शरणाय वेति ’ ‘ त्राणाय वा ’ दौर्बल्यपीडादिरूपापदुद्धरणाय, शरणाय वा= निर्भयावस्थानाय वा न अलं=समर्थाः । अत्र वा-शब्दोऽर्थान्तरद्योतकस्तेन कदाचि-

જિનકે કારણ કલ્યાણમાર્ગસે દૂર રહ્યા વેહી અબ મેરે ગ્વાને-પીને પહિનને કે ઇન્તજામ કરનેમેં भी मन नहीं लगा रहे हैं, यह कितने कष्ट की बात है? अरे ! अधिक क्या कहा जाय उन लोगोंको तो अब मेरा बोलना भी विष जैसा मालूम पड़ता है । इस प्रकार के वचनोंसे वह वृद्ध उन आत्मीय जनों की निन्दा करता है और उन्हें धिक्कारता है, इसलिये सूत्रकार कहते हैं कि—

“ नालं ते तव त्राणाय वा शरणाय वा ” इति ।

हे आत्मन् ! जिन पर पदार्थोंका तूने अपनी रक्षाके खयाल से पालन पोषण किया है वे कोई तेरी इस वृद्धावस्थाजन्य दुर्बलतासे अथवा उस समयमें होनेवाले अनेक कष्टरूप आपत्तियों से तेरा उद्धार नहीं कर सकते हैं और न तुझे शरण देने के लिये ही समर्थ हो सकते हैं । इस वाक्यमें जो “ वा ” शब्द आया है वह इस बातका सूचक है कि यदि पूर्व पुण्यके उदयसे कोई ऐसे आत्मीय जन मिले हों जो मातापिताके

વ્યાકુળ ચિત્ત રાખી અસાવધાનીપૂર્વક પોતાની પ્રવૃત્તિ ચાલુ રાખી, અને હજી સુધી પણ મેં જેના કારણે કલ્યાણ માર્ગથી દૂર રહ્યો તે આજ મારા ખાવામાં-પીવામાં પહેરવામાં સગવડ કરી આપવાજરા પણ મન લગાડતા નથી, તે કેટલા દુઃખની વાત છે ? અરે ! અધિક શું કહેવું, તે લોકોને તો હવે માફ ખોલવું પણ ઝેર જેવું લાગે છે. આ પ્રકારના વચનોથી તે વૃદ્ધ તે આત્મીય જનોની નિંદા કરે છે અને તેને ધિક્કારે છે તેને માટે સૂત્રકાર કહે છે કે—

“ નાલં તે તવ ત્રાણાય વા શરણાય વા ” ઇતિ

હે આત્મન્ ! જે પરપદાર્થોનું તેં પોતાની રક્ષા માટે પાલન પોષણ કર્યું છે તે કોઈ તારી આ વૃદ્ધાવસ્થાજન્ય દુર્બલતાથી અથવા આ સમયમાં થનાર અनेक कष्टरूप आपत्तिઓથી તારો ઉદ્ધાર કરી શકતા નથી, અને તને શરણ દેવામાં પણ સમર્થ નથી. આ વાક્યમાં જે “વા” શબ્દ આવ્યો છે તે આ વાતનો સૂચક છે કે કદાચ પૂર્વ પુણ્યના ઉદયથી કોઈ આવા આત્મીય જન મળ્યા હોય જે માતા-પિતાની વૃદ્ધાસ્થામાં લક્ષિત કરતા હોય, તેમની દરેક પ્રકારની સેવા

તૂર્વપુણ્યોદયેન વૃદ્ધાવસ્થાયાં પુત્રાદયોઽતિભક્તાસ્તવાપમાનં નૈવ કુર્વન્તિ તથાપિ તે વૃદ્ધાવસ્થાજનિતદુઃસ્વપરિમોચકા ન ભવિતુમર્હન્તીતિ તાત્પર્યમવગમ્યતે ।

અથ યદિ પુત્રકલત્રાદયઃ સેવાપરા દુઃસ્વભારભરમગ્નાઃ સન્તીત્યાલોચ્ય તેષાં દુઃસ્વોદ્ધારાય તવ ચેતસિ ચિન્તા સ્યાદપિ તથાપિ તદુદ્ધારઃ કર્તુમશક્ય ઇતિ દર્શયતિ— ‘ત્વમપિ તેષાં નાલં ત્રાણાય વા શરણાય વે’—તિ, ત્વં વૃદ્ધો ન તેષાં દુર્દશાપદુદ્ધારકોનાપિ તદાશ્રયો ભવિતુમર્હસિ સામર્થ્યાભાવાદિતિ ભાવઃ ।

વૃદ્ધાવસ્થા મેં મી અતિભક્ત હોં, ઉનકી હર તરહસે સેવા ચાકરી કરનેમેં કોઈ કર-કસર ન રખતે હોં, ઉનકા જરા મી તિરસ્કાર નહીં કરતે હોં તો મી ઇસ વૃદ્ધાવસ્થામેં હોનેવાલે જો અનેક કષ્ટ હૈં ચાહેં વે શારીરિક હોં ચાહેં માનસિક હોં, ચાહેં વાચિક હોં ઉનસે વે ઉનકા ઉદ્ધાર નહીં કર સકતે ।

વૃદ્ધાવસ્થામેં યદિ વહ વૃદ્ધ ચાહે કિ-મેં-અપને સેવક પુત્ર કલત્રાદિકોં કા જો રાત દિન મેરી સેવા કરનેમેં હી લગે રહતે હૈં, ઓર જો વિચારે દુઃસ્વોં સે પીડિત હો રહે હૈં મૈં ઉન્હેં કષ્ટસે નિર્મુક્ત કરદૂં ’ તો ઇસ પ્રકારકા મી ઉસકા વિચાર કરના વ્યર્થ હી હૈ, ઇસી વાતકો પ્રકટ કરતે હુઅ સૂત્રકાર કહતે હૈં—“ત્વમપિ તેષાં નાલં ત્રાણાય વા શરણાય વા ” ઇતિ । માર્હ ! વૃદ્ધાવસ્થામેં તુજે ઇસ પ્રકારકી ચિન્તા કરના ઠીક નહીં હૈ, કારણ કિ તુમ સ્વયં અશક્ત હો તવ તુમ ઉન દુર્દશામેં ફસે હુઅ અપને પુત્ર કલત્રાદિકોં કે ઉદ્ધારક કૈસે હો સકતે હો ઓર કૈસે ઉનકે

આકરી કરવામાં કોઈપણ પ્રકારની કસર રાખતા ન હોય, તેનો જરા પણ તિરસ્કાર કરતા નથી તો પણ આ વૃદ્ધાવસ્થામાં થનાર જે કષ્ટો છે ભલે તે શારીરિક હોય કે માનસિક હોય, અગર વાચિક હોય, તેનાથી તેઓ તેમનો ઉદ્ધાર કરી શકતા નથી.

વૃદ્ધાવસ્થામાં કહાય તે વૃદ્ધ આહે કે—‘હું મારા સેવક પુત્ર કલત્રાદિકોં, જે રાત દિવસ મારી સેવા કરવામાં જ લાગ્યા રહે છે અને જે બિચારા દુઃખોથી પીડિત થઈ રહ્યાં છે, હું તેમને કષ્ટથી નિર્મુક્ત કરી દઉં ’ તો તેનો આ પ્રકારનો પણ વિચાર વ્યર્થ જ છે. આ વાતને પ્રગટ કરવા સૂત્રકાર કહે છે—

“ત્વમપિ તેષાં નાલં ત્રાણાય વા શરણાય વા ” ઇતિ

ભાઈ ! વૃદ્ધાવસ્થામા તારે આ પ્રકારની ચિન્તા કરવી ઠીક નથી, કારણ કે તું પોતે અશક્ત છે ત્યારે તું આવી દુર્દશામાં ફસેલા પોતાના પુત્ર કલત્રાદિકોંને



ત્રાણ-શરણપદયોરર્થસ્તૂત્ત એવ । અત્રાપિ વા-શબ્દેન તવ પુત્ર-કલત્રાદયો  
યદિ દુઃસ્વમગ્નાસ્વત્સેવાપરા અપિ સ્યુસ્તથાપિ ન તેષાં ત્વં રક્ષકો ભવિતું શક્નોષિ,  
इत्येवं गम्यते । स्वकार्यकार्यकरणेऽप्यसमर्थस्त्वं कथं महायाससाध्यं तेषां  
भरणपोषणादिकार्यं कर्तुमध्यवस्यसीति भावः ।

સ તસ્યામવસ્થાયાં સ્વયં હાસયોગ્યો નાન્યં જનમુપહસિતું પ્રભવતીતિ દર્શયતિ-  
'સ ન હાસાયે-' તિ, સઃ=વૃદ્ધો હાસાય નિન્દિતાચારમુપહસિતું ન યોગ્યો ભવતિ ।

આશ્રયપ્રદાતા હો સકતે હો, તુમ તો સ્વયં હસ સમય રક્ષા કરને યોગ્ય  
एवं आश्रय पाने योग्य हो रहे हो ।

હસ સૂત્રમેં મી જો 'વા' શબ્દ આયા હૈં ઉસસે યહ બોધ હોતા હૈં  
કિ-તેરે પુત્ર કલત્રાદિક યદિ દુઃસ્વમગ્ન હૈં ઓર તેરી સેવામેં મી તત્પર  
हैं तो भी तूं उनका रक्षक नहीं हो सकता, क्योंकि जब तूं स्वयं अपना  
शारीरिक कार्य करने तकमें भी असमर्थ हो रहा है तो फिर कैसे महाकष्ट-  
साध्य उनके भरण-पोषण आदि कार्य करनेके लिये विचार कर सकता है ।

વૃદ્ધ અપની અવસ્થામેં સ્વયં હસીકા પાત્ર હૈં વહ દૂસરોંકી હસી  
કૈસે કર સકતા હૈં ? હસકા વર્ણન કરતે હૈં-“સ ન હાસાય” જો સ્વયં  
ही हँसी-मजाक का पात्र होता है वह दूसरोंकी हँसी भी कैसे कर सकता  
है अतः कोई यदि निन्दित आचारवाला है तो वह उसकी हँसी करनेके  
योग्य ही नहीं है ।

ઉદ્ધારક કેવી રીતે બની શકે છે, અને કેવી રીતે તેને આશ્રય આપી શકાય. તમે  
પોતે આ સમયે રક્ષા કરાવવા યોગ્ય અને આશ્રય લેવા યોગ્ય છો.

આ સૂત્રમાં પણ જે 'વા' શબ્દ આવ્યો છે તેનાથી એ બોધ થાય છે કે  
તારા પુત્ર કલત્રાદિક કદાચ દુઃખમગ્ન છે અને તારી સેવામાં પણ તત્પર છે તો  
પણ તું તેમનો રક્ષક બની શકતો નથી. કારણ કે જ્યારે તું સ્વયં પોતાના  
શારીરિક કાર્ય કરવામાં અસમર્થ છે તો પછી કેવી રીતે મહાકષ્ટસાધ્ય તેનું  
ભરણ પોષણ આદિ કાર્ય કરવા વિચાર પણ કરી શકે.

વૃદ્ધ પોતાની અવસ્થામાં સ્વયં હાંસીને પાત્ર છે, તે બીજાની હાંસી કેવી  
રીતે કરી શકે ? તેનું વર્ણન કરે છે:-“સ ન હાસાય” જે સ્વયં હાંસી મળકને  
પાત્ર છે તે બીજાની હાંસી કેવી રીતે કરી શકે, માટે કોઈ કદાચ નિન્દિત  
આચારવાળા છે તો તેઓ તેની હાંસી કરવાને યોગ્ય જ નથી.

યઃ સ્વયમુપહાસપાત્રં સ કથમન્યમુપહસેદિતિ તાત્પર્યમ્ । વૃદ્ધાવસ્થાયાં પુરુષઃ ક્રીડા-  
કરણાક્ષમો ભવતિ, યદા કામવેષ્ટાભિભૂતો ભવતિ તદા સ પ્રાણપણેનાપિ યુવતિ  
કામયતે પરં સા નિજાનન્દાક્ષમં તં વિદિત્વાઽવહેલયતીતિ દર્શયતિ—‘ ન ક્રીડાયૈ ન  
રતયે ’ ઇતિ, ક્રીડા=અક્ષાદિનાં खेलनं, लङ्घनप्रधावनास्फोटनादिकं वा, तस्यै न स  
प्रभवति । रतिर्नाम वनिताविषयक आलिङ्गनादिनानारूपः क्षणिकमुखविशेषस्तस्यै  
न समर्थो भवतीत्यर्थः । वृद्धावस्थायां युवतिं वशीकर्तुं न पारयति प्रत्युत ‘न लज्जतेऽयं  
पलितकेशोऽचारुवेशो मम हृदयेशो बुभुषुर्दुहितृतुल्यामपि मामभिकामयते ’  
इत्यादिवाक्यैस्तं सा भर्त्सयति ।

યુવતિં લબ્ધુકામો ધૃતભૂષણોઽપિ ન શોભત ઇતિ દર્શયતિ—‘ ન વિભૂષાયૈ ’ ઇતિ,  
વિભૂષા=કટકકુણ્ડલકેયૂરાઘલક્ષ્મીરૂપા, તસ્યૈ સ ન યોગ્યો ભવતિ, વૃદ્ધસ્ય વિભૂષા  
ન શોભત ઇતિ ભાવઃ ।

“ ન ક્રીડાયૈ ન રતયે ” ઇસ સૂત્રમેં યહ પ્રકટ કિયા હૈ કિ વૃદ્ધા-  
વસ્થામેં પુરુષ ક્રીડા કરનેમેં અસમર્થ હો જાતા હૈ તથા વહ વિષયસેવનકે  
ભી યોગ્ય નહીં રહતા હૈ ।

યહાં ક્રીડા કા અર્થ અક્ષાદિકોં-પાસોં-સે લેખના, લાંઘના, દૌડના  
તથા વ્યાયામ કરના, ઇત્યાદિ હૈ । યહ ક્રીડા વૃદ્ધ કૈસે કર સકતા હૈ ?  
ક્યોં કિ વહ વૃદ્ધાવસ્થા મેં બિલકુલ અસક્ત હો જાતા હૈ । રતિ કા અર્થ હૈ  
આલિંગનાદિક । ઇસકા ભી ઉપભોક્તા વહ નહીં હો સકતા કારણ કિ  
વૃદ્ધાવસ્થામેં પ્રત્યેક ઇન્દ્રિય શિથિલ હો જાતી હૈ । અર્થાત્ શોભાકે લિયે  
ધારણ કિયે ગયે અલંકાર ભી ઇસે કમી શોભા પ્રદાન નહીં કર સકતે ।  
કહે, કુણ્ડલ, કેયૂર-ભુજબન્ધ આદિ અલંકાર ઉસકી શોભા કે અભિ-  
વર્દ્ધક ન હોકર પ્રત્યુત ઉસકે લિયે હાસ્ય કે કારણ હી બનતે હૈ । કહા ભી હૈ—

“ ન ક્રીડાયૈ ન રતયે ” આ સૂત્રમાં એ પ્રગટ કરેલ છે કે વૃદ્ધાવસ્થામાં પુરુષ  
ક્રીડા કરવાને અસમર્થ બની જાય છે તથા તે વિષયસેવન માટે પણ યોગ્ય રહેતો નથી.

આ ઠેકાણે ક્રીડાનો અર્થ અક્ષાદિકોં-પાસાઓથી ખેલવું, ઠેકવું, કુદવું, દોડવું  
તથા વ્યાયામ કરવો, ઇત્યાદિ છે. આ ક્રીડા વૃદ્ધ કેવી રીતે કરી શકે, કારણ કે  
તે વૃદ્ધાવસ્થામાં બિલકુલ અશક્ત થઈ જાય છે. રતિનો અર્થ છે આલિંગનાદિક  
તેના પણ ઉપભોક્તા તે બની શકતો નથી, કારણ કે વૃદ્ધાવસ્થામાં પ્રત્યેક ઇન્દ્રિય  
શિથિલ બને છે. અર્થાત્ શોભા માટે પણ ધારણ કરેલાં અલંકાર પણ તેને શોભા  
આપી શકતાં નથી. કહા, કુંડલ, કેયૂર-ભુજબન્ધ આદિ અલંકાર તેની શોભામાં  
વૃદ્ધ કરતા નથી પણ તેના માટે હાસ્યનું કારણ બને છે. કહ્યું છે કે:—

ઉક્તञ્ચ—“ ન ભૂષણં ભાતિ ન હાસ્યમસ્ય, ન વિભ્રમો નૈવ જના અધીનાઃ ।

પ્રવર્તતે તત્ર યદા તુ વૃદ્ધો, વિડમ્બનાં યાતિ પરાં તદા સઃ” ॥૧॥” ઇતિ  
 એવં ચ વૃદ્ધાવસ્થાયાં નિજતનયવનિતાદિતિરસ્કૃતસ્ય જરાજર્જરિતદેહસ્ય ક્રીડા-  
 રતિવિભૂષાદિકં ન કિમપિ શોભત ઇતિ સૂત્રાશયઃ ॥ ૩ ॥

ઉક્તમપ્રશસ્તમૂલસ્થાનં, સંપ્રતિ પ્રશસ્તમૂલસ્થાનમાહ—યદ્વા—યતસ્તે પુત્રકલત્રાદયો  
 નાલં મે ત્રાણાય વા શરણાય વા ભવિતુમર્હન્તીતિ વિચાર્ય ધીરઃ ક્ષણમપિ ન પ્રમાદં  
 કુર્યાદિતિ દર્શયતિ—‘ ઇચ્છેવં ’ ઇત્યાદિ ।

“ ન ભૂષણં ભાતિ ન હાસ્યમસ્ય, ન વિભ્રમો નૈવ જના અધીનાઃ ।

પ્રવર્તતે તત્ર યદા તુ વૃદ્ધો, વિડમ્બનાં યાતિ પરાં તદા સઃ ॥૧॥” ઇતિ ।

ઇસ પ્રકાર ઇસકો ન ભૂષણ શોભા દેતે હૈં—ન ઇસકી હાસી હી  
 ઇસકી સુન્દરતા વઢા સકતી હૈ, ન વિભ્રમ—વિલાસ હી યહ કર સકતા હૈ,  
 ઇસકે અપને પાસ મેં રહે હુએ જન ભી કહને મેં નહીં રહતે । અગર વહ  
 ઉપર કી વાતોં મેં પ્રવૃત્તિ કરે તો વહ ઇસ વૃદ્ધાવસ્થા મેં વિડમ્બના પાતા  
 હુવા અપને પુત્ર—સ્ત્રી આદિ સે તિરસ્કાર કો હી પાતા હૈ, તથા જરાસે  
 જર્જરિત કાય વને હુએ ઇસકે લિયે ક્રીડા—રતિ—વિભૂષાદિક કુછ ભી  
 શોભા નહીં દેતે ॥ ૩ ॥

અપ્રશસ્ત મૂલસ્થાનોં કા વર્ણન હો ચુકા, અંબ પ્રશસ્ત મૂલસ્થાનોં  
 કા વર્ણન કિયા જાતા હૈ, અથવા—વે પુત્ર કલત્રાદિક મેરી રક્ષા કે લિયે  
 યા મુઝે શરણ પ્રદાન કરને કે લિયે સમર્થ નહીં હો સકતે હૈં, એસા વિચાર

“ ન ભૂષણ ભાતિ ન હાસ્યમસ્ય, ન વિભ્રમો નૈવ જના અધીનાઃ ।

પ્રવર્તતે તત્ર યદા તુ વૃદ્ધો, વિડમ્બનાં યાતિ પરાં તદા સઃ” ॥ ૧ ॥” ઇતિ ।

આ પ્રકારે તેને ભૂષણ શોભા દેતા નથી. તેની હાંસી પણ તેની સુંદરતા  
 વધારી શકતી નથી. તે વિલાસ પણ કરી શકતો નથી. તેની પાસે રહેતા માણસો  
 પણ તેના કહેવામાં રહેતા નથી. અગર તે ઉપર કહેલી વાતોમાં પ્રવૃત્તિ કરે તો  
 તે આ વૃદ્ધાવસ્થામાં વિડમ્બના પામીને પોતાના પુત્ર સ્ત્રી આદિથી તિરસ્કાર જ  
 પામે છે. તથા ઘડપણથી જર્જરિત શરીર બનેલું હોઈ તેના માટે ક્રીડા, રતિ,  
 વિભૂષાદિક કોઈ પણ શોભા માટે યોગ્ય નથી.

અપ્રશસ્ત મૂલસ્થાનોનું વર્ણન થઈ ચુક્યું. હવે પ્રશસ્ત મૂલસ્થાનોનું  
 વર્ણન કરે છે:—અથવા તે પુત્ર કલત્રાદિક મારી રક્ષા માટે અગર મને શરણ  
 પ્રદાન કરવા માટે અમર્થ બની શકતા નથી, એવો વિચાર કરી ધીર વીર પુરુષનું

મૂલમ્—ઇચ્છેવં સમુદ્વિષ્ટિ અહોવિહારાણ, અંતરં ચ ચ્વલુ ઇમં સંપેહાણ ધીરે મુહુર્ત્તમવિ ણો પમાયણ વઓ અચ્છેતિ જોઽવ્વણં વા ॥ સૂ૦ ૪ ॥

છાયા—ઇત્યેવ સમુત્થિતઃ અહોવિહારાય અન્તરં ચ ચ્વલુ ઇમં સંપેક્ષ્ય ધીરો મુહુર્ત્તમપિ નો પ્રમાદયેત્, વયોજ્ત્યેતિ યૌવનં વા ॥ સૂ૦ ૪ ॥

કર ધીર વીર પુરુષ કા કર્તવ્ય હૈ કિ વહ એક ક્ષણ મી પ્રમાદ ન કરે—  
ઇસી વાતકી પુષ્ટિ કરતે હુણ સૂત્રકાર કહતે હૈ—

“ઇચ્છેવ સમુદ્વિષ્ટિ” ઇત્યાદિ—યૌવન અવસ્થા મેં પુત્ર-મિત્રાદિકોં મેં આસક્ત બના હુઆ યહ પ્રાણી સાવધ વ્યાપાર મેં લવલીન રહતા હૈ ઓર જવ વૃદ્ધાવસ્થા આતી હૈ તવ વહ ડન સકલ કાર્યોં કે વેદને મેં અસમર્થ હો જાતા હૈ, એસા વિચાર કર સંયમ પાલન કરને કે લિયે ઉદ્યુક્ત હુઆ સંયમી મુનિ સંયમ કો પાલન કરને કે ઇસ અવસર કા અચ્છી તરહ વિચાર કર એક મુહુર્ત્ત મી પ્રમાદ ન કરે, ક્યોં કિ આયુ ઓર યૌવન ડોનોં વીત રહે હૈ ।

સૂત્ર મેં “ઇત્યેવ” યહ શબ્દ પૂર્વોક્ત કથન કી પુષ્ટિ કરતા હૈ, અર્થાત્—જવ યહ વાત પ્રમાણિત હો ચુકી કિ યૌવન અવસ્થા મેં પુત્ર મિત્ર કલ-ત્રાદિકોં મેં આસક્ત બના હુઆ પ્રાણી સાવધકાર્યોં કે કરને મેં લવલીન હોતા હૈ પરન્તુ વહી પ્રાણી જવ વૃદ્ધાવસ્થા આતી હૈ તવ ડન સમસ્ત કાર્યોં કે કરને મેં અપને કો સર્વથા અસમર્થ પાતા હૈ, જવ યહ હાલત હૈ

કર્તવ્ય છે કે તે એક ક્ષણ પણ પ્રમાદ ન કરે. આ વાતની પુષ્ટિ કરવા સૂત્ર-કાર કહે છે કે—

“ઇચ્છેવ સમુદ્વિષ્ટિ” ઇત્યાદિ, યૌવન અવસ્થામાં પુત્ર-મિત્રાદિકમાં આસક્ત બનીને આ પ્રાણી સાવધ વ્યાપારમાં લવલીન રહે છે અને ન્યારે વૃદ્ધાવસ્થા આવે છે ત્યારે તે એ બધા કાર્યોંને કરવામાં અશક્ત બની જાય છે, એવો વિચાર કરી સંયમ પાલન કરવા માટે ઉદ્યુક્ત થઈને સંયમી મુનિ સંયમનું પાલન કરવાને આ અવસરનો સારી રીતે વિચાર કરી એક ક્ષણનો પણ પ્રમાદ ન કરે, કારણ કે આયુષ્ય અને યૌવન બંને વીતી જાય છે.

સૂત્રમાં “ઇત્યેવ” આ શબ્દ પૂર્વોક્ત કથનની પુષ્ટિ કરે છે. અર્થાત્ ન્યારે આ વાત પ્રમાણભૂત બની ચૂકી છે કે યૌવન અવસ્થામાં પુત્ર મિત્ર કલત્રાદિકોમાં આસક્ત બનેલ પ્રાણી સાવધ વ્યાપાર કરવામાં લવલીન થાય છે. પરંતુ તે પ્રાણી ન્યારે વૃદ્ધાવસ્થા આવે છે ત્યારે આ બધા કાર્યોં કરવામાં પોતાને સર્વથા અસ-

ટીકા—‘ઇત્યેવમ્’ इतिशब्दः पूर्वप्रदर्शितवस्तुसूचकस्तेन यौवने पुत्रकलत्रासक्तः सावधानुष्ठानरतः स एव वृद्धावस्थायां सकलकार्याक्षमो भवतीत्यर्थः । एवं=यथो-  
पदर्शितेन प्रकारेण ‘समुत्थितः अहोविहाराये’ति ।

अहो इत्याश्चर्यजनको विहारो=विहरणं यस्मिन् सः=अहोविहारः संयमानुपालनं, तस्मै=तदर्थं समुत्थितः=सम्यगुद्युक्तः सन् मुहूर्तमपि न प्रमादयेदित्यनेन सम्बन्धः ।

તો વહુ હસ પ્રકાર કી પરિસ્થિતિ કો દૂર કરને કે લિયે યહ સર્વોત્તમ પ્રયત્ન કરે કિ વહુ સંયમ મેં અપને કો લગા દે, કારણ કિ સંયમ કા અનુષ્ઠાન કરના હી હસ રોગકા ઇલાજ હૈ, હસકે પાલન-સેવન કિયે વિના યહ ભવર કા રોગ દૂર નહીં હો સકતા-સંયમારાધન મનુષ્ય-ગતિ કે સિવાય અન્ય ઓર કિસી ભી ગતિ મેં હો નહીં સકતા-હસલિયે સૂત્રકાર પ્રકટ કરતે હૈ કિ હસ સંયમરૂપી ઓષધિ કા પાન ભી વહી કર સકતા હૈ જો ધીર હો-પરીષદ્ ઓર ઉપસર્ગ કે આને પર ભી જો અપને કર્તવ્યપથ સે ચ્યુત નહીં હોતા હો, હસકા નામ સિદ્ધાન્ત કી પરિ-  
ભાષા મેં ધીર હૈ । હસી વાત કી પુષ્ટિ—“અહોવિહારાય” હસ પદસે તથા “ધીરે” હસ પદ સે સૂત્રકારને કી હૈ । અહોવિહાર શબ્દ કા અર્થ સંયમ હૈ, કારણ કિ હસમેં વિચરણ કરનેવાલા પ્રાણી દેહ મેં મમત્વબુદ્ધિ રાખનેવાલોં કે લિયે આશ્ચર્ય પૈદા કરનેવાલા હોતા હૈ, હસ કી અનેક પ્રકાર કી તપશ્ચર્યા એવં કાયક્લેશાદિક બાહ્ય તપકો દેખકર સંસારી બહિરાત્મા જીવ આશ્ચર્યચકિત હો જાતે હૈ, વે વિચારતે હૈ—ધન્ય હૈ હસ

મર્થ માને છે. જ્યારે આવી હાલત છે તો તે આ પ્રકારની પરિસ્થિતિને દૂર કરવા માટે સર્વોત્તમ પ્રયત્ન કરે કે સંયમમાં પોતાને લગાવી દે, કારણ કે સંયમનું અનુષ્ઠાન કરવું તે જ આ રોગનો ઉપાય છે. તેનું પાલન-સેવન કર્યા વગર આ લવોલવનો રોગ મટતો નથી. સંયમારાધન, મનુષ્યગતિ સિવાય અન્ય કોઈ ગતિમાં થઈ શકતું નથી. તેથી સૂત્રકાર પ્રગટ કરે છે કે આ સંયમરૂપી ઓષધિનું પાન તે કરી શકે છે જે ધીર છે અને પરીષદ ઉપસર્ગ આવવા છતાં પણ જે પોતાના કર્તવ્યથી દૂર થતાં નથી. તેનું નામ સિદ્ધાન્તની પરિભાષામાં ધીર છે. આ વાતની પુષ્ટિ—“અહોવિહારાય” આ પદથી તથા “ધીરે” આ પદથી સૂત્રકારે કરેલ છે. અહોવિહાર શબ્દનો અર્થ સંયમ છે, કારણ કે તેમાં વિચરણ કરવાવાળાં પ્રાણી દેહમાં મમત્વબુદ્ધિ રાખવાવાળાઓને માટે આશ્ચર્ય પૈદા કરવા-  
વાળા હોય છે. તેની અનેક પ્રકારની તપશ્ચર્યા અને કાયક્લેશાદિક બાહ્ય તપને દેખીને સંસારી બહિરાત્મા જીવ આશ્ચર્યચકિત થાય છે. તે વિચારે છે—ધન્ય છે

સંયમી જનને કો, હસ પ્રકાર કી તપશ્ચર્યા કો-જિસસેં શરીર પર મી મમતા નહીં રહતી હૈ, અતઃ હસ પ્રકાર કા સંયમારાધન “પુનરપિ જનનં પુનરપિ મરણં પુનરપિ જનનીજઠરે શયનં” હસ મહારોગ કા અચૂક મહૌષધ હૈ । ડસકી પ્રાપ્તિ કે લિયે હે પ્રાણી ! તૂં ઇક મુહૂર્ત કી મી દેરી મત કર, મત સોચ હસ વાતકો કિ-“અમી તો રવાને પીને કે દિન હૈ-એશ-આરામ મોગને કા યહ સમય હૈ, વાદ જવ વૃદ્ધાવસ્થા આવેગી । તથા સંયમારાધન કરલૂંગા ” કારણ કિ કૌન કહ સકતા હૈ કિ વૃદ્ધાવસ્થા આવેગી । વૃદ્ધાવસ્થા આને કે પહિલે હી યદિ તૂં હસ પર્યાય સે પર્યાયાન્તરિત હો ગયા તો ફિર તેરી યહ કલ્પના કોરી હી રહ જાવેગી । તથા વૃદ્ધાવસ્થા મેં જવ કિ પ્રત્યેક ઇન્દ્રિય શિથિલ હો જાતી હૈ, શરીર મી અશક્ત વન જાતા હૈ, કરને કી ભાવના હોને પર મી જિસમેં કુછ મી કરતે ધરતે નહીં વનતા તો હસ સંયમ કા આરાધન હો મી કૈસે સકતા હૈ । યદિ પહિલે સે સંયમારાધન કી શક્તિ આત્મામેં આઈ હુઈ હો તો વૃદ્ધાવસ્થા મેં સંયમારાધન પૂર્વસંસ્કાર કે વશ સે હો મી જાય, પરન્તુ હસ પ્રકાર કી યોગ્યતા તો તૂંને અમીતક પ્રાપ્ત હી નહીં કી, યહ યોગ્યતા જવ પ્રત્યેક ઇન્દ્રિય બલવાન થી, શરીર મી સશક્ત થા, દ્રવ્ય, ક્ષેત્ર, કાલ ઔર

તે સંયમીજનને, આ પ્રકારની તપશ્ચર્યાને, જેથી શરીરમાં પણ મમતા રહેતી નથી. માટે આ પ્રકારનું સંયમારાધન “ પુનરપિ જનનં પુનરપિ મરણં પુનરપિ જનની-જઠરે શયનં ” આ મહારોગનું જરૂર મહા ઔષધ છે, તેની પ્રાપ્તિ માટે હે પ્રાણી, તું એક ક્ષણ પણ ઢીલ ન કર. એ વાતનો વિચાર પણ ન કર કે-“હમણાં તો ખાવા પીવાના દિવસો છે-એશઆરામ ભોગવવાનો સમય છે, ન્યારે વળી વૃદ્ધાવસ્થા આવશે ત્યારે સંયમારાધન કરી લઈશ.” કારણ કે કોણ કહી શકે છે કે વૃદ્ધાવસ્થા આવશે. વૃદ્ધાવસ્થા આવ્યા પહેલાં જ કદાચ તું આ પર્યાયથી પર્યાયાન્તરિત થઈ ગયો તો પછી તારી આ કલ્પના નકામી જ રહી જવાની. અને વૃદ્ધાવસ્થામાં ન્યારે પ્રત્યેક ઇન્દ્રિય શિથિલ થાય છે, શરીર પણ અસક્ત બને છે, કરવાની ભાવના હોવા છતાં પણ કંઈ પણ કરી શકતો નથી તો પછી આ સંયમનું આરાધન કેવી રીતે બની શકે. કદાચ પહેલાથી સંયમારાધનની શક્તિ આત્મામાં આવી ગઈ હોત તો વૃદ્ધાવસ્થામાં સંયમારાધન પૂર્વ સંસ્કારને વશથી થઈ પણ જાય પરંતુ આ પ્રકારની યોગ્યતા તો તને હજી સુધી પ્રાપ્ત જ નથી થઈ. આ યોગ્યતા ન્યારે પ્રત્યેક ઇન્દ્રિય બળવાન હતી, શરીર પણ સશક્ત હતું, દ્રવ્ય-ક્ષેત્ર-કાળ-ભાવ રૂપ સામગ્રી અનુકૂળ હતી, તે અવસ્થામાં આવી શકત.



ભાવ રૂપ સામગ્રી અનુકૂલ થી उस अवस्था में आनी, परन्तु वह अवस्था तो तूने मित्र पुत्र कलत्रादिकों में आसक्ति के बशवर्त्ती होकर गमा दी और सावधानुष्ठानों के करने से अपनी आत्मपरिणति को कलुषित कर दिया, नव भला, कहो तो सही, सहसा यह कार्य तुझ से अब कैसे बन सकेगा ? । इस पर सूत्रकार कहते हैं कि—हे भव्य प्राणी ! तू “मुहुत्तमवि नो पमायए” एक मुहूर्त भी प्रमाद मत कर, और मन वचन एवं काय से, तथा कृत कारित और अनुमोदना से, अर्थात् नव कोटि से इस संयम का आराधन कर, कनक कामिनी आदि पदार्थ जिन्हें तू भ्रमके बश से अभी तक अपने मानता आया है, और जिनके पाने में तथा पालन पोषण करने में तूने अपने हित और अहित का भी विवेक लुप्त कर दिया है, भला ! उनके स्वरूप का विचार कर और देख कि इनके संयोग से तेरी आत्मा में कहां तक शान्ति जागृत होती है ? यदि ये वास्तविक शान्ति प्रदान करने में असमर्थ हैं तो तू इनका नवकोटि से परित्याग कर दे, इस परित्याग से तेरी आत्मा में वह अपूर्व संस्कार जागृत होगा जो तेरी इन दीनदशा का अन्त करनेवाला हो जायगा, इन पदार्थोंका भोग अथवा संग्रह खाज को खुजलाने के समान है—जिस प्रकार खाजको खुजलानेवाला व्यक्ति

‘परंतु ते अवस्था तो ते’ पुत्र मित्र કલત્રાદિકોમાં આસક્તિને વશવર્ત્તી બની શુભાવી અને સાવધાનુષ્ઠાનો કરવાથી પોતાની આત્મપરિણતિને કલુષિત કરી, ત્યારે ભલા કહો તો ખરા; સહસ્રા આ કાર્ય તારાથી હવે કેવી રીતે બની શકશે?, આ ઉપર સૂત્રકાર કહે છે કે:—હે ભવ્ય પ્રાણી ! તું “ મુહુત્તમવિ નો પમાયણ ” એક ક્ષણનો પણ પ્રમાદ ન કર અને મન વચન અને કાયાથી તથા કૃત, કારિત અને અનુમોદનાથી અર્થાત્ નવ કોટિથી આ સંયમનું આરાધન કર, કનક કામિની આદિ પદાર્થ જેને તું ભ્રમવશ હબ્બુ સુધી પોતાના માનતો આવ્યો છે અને જેને મેળવવામાં અને પાલન પોષણ કરવામાં તેં પોતાના હિત અહિતનો પણ વિવેક લુપ્ત કરી નાખેલ છે. ભલા ! તેના સ્વરૂપનો વિચાર કર અને દેખ કે તેના સંયોગથી તારા આત્મામાં કયાં સુધી શાંતિ જાગૃત થાય છે. કદાચ તે વાસ્તવિક શાંતિ પ્રદાન કરવામાં અસમર્થ છે તો તું તેનો નવકોટિથી પરિત્યાગ કરી દે. આ પરિત્યાગથી તારા આત્મામાં અપૂર્વ સંસ્કાર જાગૃત થશે તો આ તારી દીન-દશાનો અંત કરી દેશે, આ પદાર્થોનો ભોગ અથવા સંગ્રહ ખુજલીને ખણવા બરાબર છે. જે પ્રકારે ખુજલીને ખણવાવાળો વ્યક્તિ, તે વખતે ખણવાથી આનંદ આવે તેમ માને છે. અને કહ્યું પણ છે.—



ઘુજલાતે સમય આનંદ મેં ગોતે લગાને લગતા હૈં ઓર કહાં મીં હૈં—

“જો નહીં મજા દેખા હલવા પુરી યાને મેં, સો મજા દેખા એક યાજ કે ઘુજવાને મેં”

જ્યોં હીં ઉસ ઘુજલાને રૂપ કાર્ય કો બંદ કર દેતા હૈં તો ઉસકો જો જલનરૂપ વેદના હોતી હૈં વહ વહીં જાનતા હૈં, હસીં પ્રકાર હન વિષયોં કા સેવન મીં હૈં, એસા વિચાર કર મન, વચન આદિ રૂપ નવ કોટિ સે હનકા ત્યાગ કર। હસીં બાતકી પુષ્ટિ “અહો વિહારાણ” હસ પદ મેં લગા હુઆ “અહો” યહ પદ કરતા હૈં યહ તો નિશ્ચિત હૈં કિ આત્મા મેં પૂર્વ સંસ્કાર જિતના કાર્ય કરતે હૈં ઉતના વર્તમાન સંસ્કાર નહીં। વચા જવ માતા કે પેટ સે ઉત્પન્ન હોતા હૈં તો ઉસકી સ્તન્યપાનપ્રવૃત્તિ મેં પૂર્વ સંસ્કાર હીં સર્વ પ્રથમ કામ કરતા હૈં। હમ યહ મીં પ્રત્યક્ષ અનુભવ કરતે હૈં કિ કુંભકાર અપને ઘટરૂપ કાર્ય કો નિષ્પન્ન કરને કે લિયે ચાક મેં જબર્દસ્ત બ્રમી પેદા કરતા હૈં, યહ જબર્દસ્ત બ્રમી સિર્ફ વર્તમાન મેં હીં ઉસને ઉસમેં ઉત્પન્ન નહીં કીં હૈં, કિન્તુ એક કે બાદ એક જો વહ ઉસમેં બ્રમી કિયા કરતા હૈં—બારંબાર ઉસે દંડ સે ઘુમાતા હૈં ઉસસે હીં યહ ઉત્પન્ન હુઈ હૈં, હસીં બ્રમીરૂપ સંસ્કાર કે દ્વારા ઉસને ઘટરૂપ અપને કાર્ય કો નિષ્પન્ન કિયા હૈં, હસીં પ્રકાર આત્મા મીં પૂર્વ પૂર્વ પર-પદાર્થોં કે ભોગને આદિ રૂપ વાસના-સંસ્કાર સે સાંસારિક પરપદાર્થોં કો ભોગને

“જો નહીં મજા દેખા હલવા પુરી યાનેમેં, સો મજા દેખા એક યાજકે ઘુજવાનેમેં”

જ્યારે તે યાજવારૂપ કાર્યને બંધ કરવામાં આવે અને પછી તેની જે જલનરૂપ વેદના થાય છે તે તેજ જાણે છે. તે પ્રકારે આ વિષયોનું સેવન પણ છે. તેવો વિચાર કરી મન વચન આદિ રૂપ નવ કોટિથી તેનો ત્યાગ કરીદે. આ વાતની પુષ્ટિ “અહો વિહારાણ” આ પદમાં લાગેલાં “અહો” એ પદ કરે છે. એ તો નિશ્ચિત છે કે આત્મામાં પૂર્વસંસ્કાર જેટલું કાર્ય કરે છે તેટલું વર્તમાન સંસ્કાર નહિ. બચુનું જ્યારે માતાના પેટથી ઉત્પન્ન થાય છે તો તેની સ્તન્યપાન-પ્રવૃત્તિમાં પૂર્વસંસ્કાર જ સર્વ પ્રથમ કામ કરે છે. અમે એ પણ પ્રત્યક્ષ અનુભવ કરીએ છીએ કે કુંભાર પોતાના ઘટરૂપ કાર્યને નિષ્પન્ન કરવા માટે ચાકમાં જબર્દસ્ત બ્રમી પેદા કરે છે, આ જબર્દસ્ત બ્રમી ફક્ત વર્તમાનમાં જ તેને તેમાં ઉત્પન્ન કરેલ નથી પણ એકની પછી એક જે તે તેમાં બ્રમી કર્યા કરે છે—બારંબાર લાકડીથી ઘુમાવ્યા કરે છે તેથી જ તે ઉત્પન્ન થયેલ છે, આ બ્રમીરૂપ સંસ્કાર દ્વારા તેણે ઘટરૂપ પોતાના કાર્યને નિષ્પન્ન કર્યું છે, તે પ્રકારે આત્મા પણ પૂર્વ પૂર્વ પરપદાર્થોના ભોગવવા આદિરૂપ વાસના-સંસ્કારથી સાંસારિક

અથવા અપનાને કી ઓર શુકતા હૈ । इन संस्कारों को सर्वथा प्रक्षीण करने की शक्ति यदि कहीं है तो वह सिर्फ एक संयम में ही है, इस संयम का आराधन नव कोटि से ही होना चाहिये, ऊपर की दिखावटीसे नहीं । “अहो विहाराए ” इस पदमें जो “ अहो ” यह शब्द है वह आश्चर्य वाचक है, पूर्वोक्त प्रकारसे एक तो इस पदकी सार्थकता प्रकट की है, दूसरे इस प्रकार से भी इस पदकी सार्थकता टीकाकार प्रकट करते हुए कहते हैं कि-यह भी एक आश्चर्य की बात है कि जब यह आत्मा सांसारिक वासनाओं से वासित था । उस समय किसी को अपना मित्र, किसी को अपना शत्रु मानकर रातदिन राग और द्वेष के फंदे में आपाद-शिख-एडी से चोटी तक जकड़ा हुआ था, इष्टानिष्ट पदार्थों की कल्पना से रात-दिन आर्त रौद्र ध्यान करने में मस्त रहता था, परन्तु ज्यों ही संयम की बागडोर इसके हाथ में आती है यह उस प्रकार की कल्पना से सर्वथा रहित हो जाता है, कारण कि पदार्थों में इष्ट की कल्पना इन्द्रियों के अनुकूल पदार्थों में ही होती है, प्रतिकूल पदार्थों में अनिष्ट की कल्पना । पर जब संयम की बागडोर इसे प्राप्त हो जाती है तब क्या तो अनु-कूल क्या प्रतिकूल सब एक हो जाते हैं-एक जैसे ही मालूम पड़ते हैं ।

પરપદાર્થોને ભોગવવા તથા અપનાવવાની તરફ જ ઝુકે છે. આ સંસ્કારોને સર્વથા પ્રક્ષીણ કરવાની શક્તિ કદાચ કોઈ જગ્યાએ હોય તો તે ફક્ત સંયમમાં જ છે. આ સંયમનું આરાધન નવકોટિથી હોવું જોઈએ, ઉપર ઉપરના દેખાવ પુરતું ન હોવું જોઈએ.

“ અહો વિહારાણ ” આ પદમાં જે “ અહો ” એ શબ્દ છે તે આશ્ચર્ય-વાચક છે, પૂર્વોક્ત પ્રકારથી એક તો આ પદની સાર્થકતા પ્રગટ કરી છે. બીજી આ પ્રકારથી પણ આ પદની સાર્થકતા ટીકાકાર પ્રગટ કરીને કહે છે કે-એ પણ એક આશ્ચર્યની વાત છે કે જ્યારે આ આત્મા સાંસારિક વાસનાઓથી વાસિત હતો તે વખતે કોઈને પોતાને મિત્ર, કોઈને પોતાનો શત્રુ માનીને રાત દિવસ રાગ અને દ્વેષથી પુરેપુરો પગથી માથા સુધી ફસાએલો હતો, અર્થાત્ જકડાએલો હતો. ઇષ્ટ અનિષ્ટ પદાર્થોની કલ્પનાથી રાતદિવસ આર્ત રૌદ્ર ધ્યાન કરવામાં મસ્ત રહેતો હતો. પરંતુ જ્યાં સંયમની લગામ તેના હાથમાં આવે છે ત્યાં તે એવા પ્રકારની કલ્પનાથી સર્વથા રહિત થાય છે. કારણ કે પદાર્થોમાં ઇષ્ટની કલ્પના ઇન્દ્રિયોના અનુકૂળ પદાર્થોમાં જ થાય છે. પ્રતિકૂળ પદાર્થોમાં અનિષ્ટની કલ્પના. પરંતુ જ્યારે સંયમની દોરી તેને પ્રાપ્ત થાય છે ત્યારે અનુકૂળ અને પ્રતિકૂળ બધું એક

આશ્ચર્યકારિત્વશ્ચાત્ર ત્રિકરણત્રિયોગૈઃ કનકકામિન્યાદિસકલવસ્તુપરિત્યાગિત્વેન ।  
યદ્વા સકલપ્રાણિગણેષુ મિત્રભાવેન । અથવાઽન્તર્મુહૂર્તાન્તર્ગતાઽષ્ટસમયમાત્રસંસ્પૃષ્ટત્વેઽ-  
પ્યનન્તર્કર્મનિર્જરકત્વેન વોદ્યમ્ ।

લગામ હી તો ઘોડે કો બેઠને વાલે કે અધીનસ્થ કરતી હૈ, ઇન્દ્રિયાંરૂપી ઘોડે ખી હસી સંયમ કી વાગડોર-લગામ સે આત્મા કે અધીન બન જાતે હૈં, તબ “ સમો નિંદાપસંસાસુ તદ્વા માણાવમાણઓ ” અર્થાત્ વહ નિન્દા ઓર પ્રશંસાકો તથા માન ઓર અપમાનકો સમાન સમજતા હૈ । યહ કહને કી હી વાત નહીં હૈ-અનુભવ સિદ્ધ વિષય હૈ । કયા સંયમિયોં કે સમક્ષ પરસ્પર વિરોધી જીવ મૈત્રીભાવ ધારણ કર બેઠે હુએ નહીં સુને હૈં ?, સંયમ વહ અંજન હૈ કિ જિસકે લગતે હી આંતર ચક્ષુઓંકી યહ કલ્પના કિ “ યહ મિત્ર હૈ, યહ શત્રુ હૈ ” બિલકુલ નષ્ટ હો જાતી હૈ । યહ સંયમી જીવ યદ્યપિ વાહ્ય જગત મેં વિચરણ કરતા હૈ તો ખી વાહ્ય જગત મેં વહ જલ મેં કમલ કી તરહ અલિસ હી રહતા હૈ, અતઃ શત્રુ, મિત્ર, ઇષ્ટ, અનિષ્ટ આદિ સમસ્ત કલ્પનાઓં કો મમત્વજન્ય બુદ્ધિ કા વિકાર માનકર વહ ઉનસે ઇકદમ પરે હો જાતા હૈ । હસી અભિપ્રાય કો લેકર ટીકાકાર ને “ યદ્વા સકલપ્રાણિગણેષુ મૈત્રીભાવેન ” હસ પદ સે હસકા ખુલાસા કિયા હૈ । સમતાભાવ સંયમકા સર્વપ્રથમ ગુણ હૈ । જિસ

જ થઈ જાય છે-એક જ જેવું માલૂમ પડે છે. લગામ જ તો ઘોડાને બેસનારના અધીનમાં કરે છે. ઇન્દ્રિયો રૂપી ઘોડા પણ આ સંયમરૂપ લગામથી આત્માને આધીન થઈ રહે છે. ત્યારે “ સમો નિંદાપસંસાસુ તદ્વા માણાવમાણઓ ” અર્થાત્ તે નિંદા અને પ્રશંસાને તથા માન અને અપમાનને સમાન સમજે છે એ કહેવાની જરૂર રહેતી નથી, કારણ કે આ અનુભવસિદ્ધ વિષય છે. શું સંયમીઓના સમક્ષ પરસ્પર વિરોધી જીવ મૈત્રીભાવ ધારણ કરીને બેઠેલાં નથી સાંભળ્યાં ?, સંયમ તે અંજન છે કે જેનાથી આંતરચક્ષુઓની એ કલ્પના કે “ આ મિત્ર છે, આ શત્રુ છે ” બિલકુલ નષ્ટ થઈ જાય છે. તે સંયમી જીવ હજી સુધી બાહ્ય જગતમાં વિચરણ કરે છે તો પણ તે બાહ્ય જગતમાં તે જલમાં કમલની માફક અલિસ જ રહે છે, માટે શત્રુ, મિત્ર, ઇષ્ટ, અનિષ્ટ, એ બધી કલ્પનાઓ મમત્વજન્ય બુદ્ધિનો વિકાર માનીને તે તેનાથી એકદમ દૂર થઈ જાય છે. આ અભિપ્રાયને લઈને ટીકાકારે “ યદ્વા સકલપ્રાણિગણેષુ મૈત્રીભાવેન ” એ પદથી તેનો ખુલાસો કરેલ છે. સમતાભાવ સંયમનો સર્વપ્રથમ ગુણ છે, જેમ સૂર્યના ઉદયથી અધકારનો નાશ

પ્રકાર સૂર્ય કે ઉદિત હોને પર અંધકાર કા અભાવ હો જાતા હૈ ઉસી પ્રકાર સંયમરૂપી સૂર્ય કે ઉદિત હોતે હી આત્મા સે વિષમતા કી કલ્પના-રૂપ અંધકાર વિલીન હો જાતા હૈ ।

ઇસ પ્રકાર સે મી ‘અહો વિહારાણ્ણ’ ઇસ સૂત્રમેં ‘અહો’ પદ કી સાર્થકતા ટીકાકાર પ્રકટ કરતે હૈ—“અન્તર્મુહૂર્તાન્તર્ગતાષ્ટસમયમાત્ર-સંસ્પૃષ્ટત્વેઽપિ અનન્તકર્મનિર્જરકત્વેન” ૪૮ મિનટ કે સમયકો એક મુહૂર્ત કહતે હૈ, ઇસ મુહૂર્ત કે મીતર કે સમયકો અન્તર્મુહૂર્ત કહતે હૈ । યહ અસંખ્યાત સમયોં કા એક કાલ હૈ । સમય, વ્યવહારકાલ કા સબ સે સૂક્ષ્માતિસૂક્ષ્મ હિસ્સા હૈ । કાલ દો પ્રકાર કા હૈ ૧-નિશ્ચયકાલ, ૨-વ્યવહારકાલ । સમય, ઘડી, ઘંટા, પલ, મુહૂર્ત, વર્ષ આદિ સબ વ્યવહાર કાલ હૈ । વર્તના જિસકા લક્ષણ હૈ વહ નિશ્ચયકાલ હૈ, ક્યોં કિ શાસ્ત્રમેં ‘વટ્ટુણાલક્ષણો કાલો’ કહા હૈ ।

સદ્ભાવોં સે યદિ અષ્ટસમયમાત્ર મી સંયમ કા આરાધન કર લિયા જાવે તો વહ અનન્ત કર્મોં કી નિર્જરા કા કારણ માના ગયા હૈ । હમ દેખતે હૈ—અગ્નિ કી થોડી સી મી ચિનગારી જબ રૂઝ કે પુંજપર પડ જાતી હૈ તો વહ ઉસે ભસ્મ કર દેતી હૈ । ઇસી પ્રકાર અષ્ટસમયમાત્ર

થાય છે તે પ્રકારે સંયમરૂપી સૂર્યના ઉદયથી આત્માથી વિષમતાની કલ્પનારૂપ અંધકારનો નાશ થાય છે.

આ પ્રકારથી પણ “અહો વિહારાણ્ણ” આ સૂત્રમાં ‘અહો’ પદની સાર્થ-કતા ટીકાકાર પ્રગટ કરે છે—“અન્તર્મુહૂર્તાન્તર્ગતાષ્ટસમયમાત્રસંસ્પૃષ્ટત્વેઽપિ અનન્તકર્મનિર્જરકત્વેન” ૪૮ મીનીટના સમયને એક મુહૂર્ત કહે છે. આ મુહૂર્તના ભીતરના સમયને અન્તર્મુહૂર્ત કહે છે. તે અસંખ્યાત સમયોનો એક કાળ છે, સમય, વ્યવહાર કાળનો બધાથી સૂક્ષ્માતિસૂક્ષ્મ હિસ્સો છે. કાલ બે પ્રકારનો છે. ૧ નિશ્ચયકાલ, ૨ વ્યવહારકાલ, સમય, ઘડી, ઘંટા, પલ, મુહૂર્ત, વર્ષ આદિ બધો વ્યવહારકાલ છે, વર્તવું જેનું લક્ષણ છે તે નિશ્ચયકાળ છે, કારણ કે શાસ્ત્રમાં ‘વટ્ટુણાલક્ષણો કાલો’ કહેલ છે.

સદ્ભાવોથી કદાચ અષ્ટ સમય માત્ર પણ સંયમનું આરાધન કરી દેવામાં આવે તો તે અનંત કર્મોની નિર્જરાનું કારણ માનેલ છે. અમે દેખીએ છીએ અગ્નિની થોડી પણ ચિનગારી જ્યારે રૂના ઢગલા ઉપર પડી જાય છે તે બધું રૂ બાળી નાખે છે, તે પ્રકારે અષ્ટ સમય માત્ર પણ સંયમનું સેવન જીવોના અનન્ત કર્મોના નિર્જરાનું કારણ બને છે તેમાં કઈ અચરજની વાત છે ?

કિં કૃત્વા સંયમાનુપાલનતત્પરો ભવેદિત્યાહ—‘ અન્તરં ચ खलु इमं सम्प्रेक्ष्य’  
 इमं=तपःसंयमकरणरूपम् अन्तरम्=अवसरम्, च=समुच्चये, खलु=निश्चयेन सम्प्रेक्ष्य  
 =सम्यग्दृष्ट्वा अनन्तकालदुर्लभमानुषजन्मार्यक्षेत्रशोभनकुलोत्पत्तिबोधिर्लाभसर्वविरति-  
 प्राप्तिरूपावसरोऽनादौ संसारे जीवेन लब्ध इत्यनुभूय “ धीरो मुहूर्तमपि नो प्रमाद-  
 येत् ” धीरः=परीषहोपसर्गसहने दृढः संयमी नो प्रमादयेत्=प्रमादं न कुर्यात् ।

भी સંયમ કા સેવન જીવોં કે અનન્તકર્મોં કી નિર્જરા કા કારણ હો તો  
 इस में कौनसी अचरज की बात है ? ।

અજ્ઞાની જીવ કરોડો ભવોં સે મી જિતને કર્મોં કી નિર્જરા નહીં કર  
 सकता है उतने कर्मों की निर्जरा तीन गुप्ति के धारक-संयमी महात्मा  
 उच्छ्वास मात्र में कर देता है, यह सब महिमा संयम की ही है इसी  
 लिये संयम भाव अचरजकारी है । इसलिये मनुष्य-जन्म को सफल  
 बनाने के लिये यह आवश्यक कर्तव्य है कि संयम का आराधन किया  
 जावे । यह दृढ़ विश्वास रखना चाहिये कि-संयमप्राप्ति की योग्यता  
 मनुष्यजन्म में ही है, इसमें भी यदि अनार्यक्षेत्र में जन्म हुवा वहां अनार्यों  
 की संगति मिली तो जिस प्रकार कड़वी तुंबड़ी के संग से दूध की हालत  
 होती है ठीक यही हालत इस आत्मा की भी हो जाती है । रातदिन  
 दुर्विचारों का उनकी संगति में पड़ने से तांता लगा रहता है, धर्म कर्मका  
 उस अवस्था में भान नहीं रहता-बेहोशी का नशा ही सवार रहता है,  
 मेरा शुभ कर्तव्य क्या है? हेय क्या है? उपादेय क्या है? भक्ष्य क्या है?  
 अभक्ष्य क्या है? इत्यादि समस्त बातों का विचार उससे दूर रहता है ।

અજ્ઞાની જીવ કરોડો ભવોથી પણ જેટલા કર્મોની નિર્જરા નથી કરી શકતો  
 તેટલા કર્મોની નિર્જરા ત્રણ ગુપ્તિના ધારક સંયમી મહાત્મા ઉચ્છ્વાસમાત્રમાં  
 કરી લે છે, આ બધો મહિમા સંયમનો જ છે. માટે સંયમભાવ અચરજકારી  
 છે, માટે મનુષ્યજન્મને સફળ બનાવવા માટે એ આવશ્યક કર્તવ્ય છે કે સંય-  
 મનું આરાધન કરવામાં આવે. એ દૃઢ વિશ્વાસ રાખવો જોઈએ કે-સંયમ-  
 પ્રાપ્તિની યોગ્યતા મનુષ્યજન્મમાં જ છે. તેમાં પણ કદાચ અનાર્ય ક્ષેત્રમાં જન્મ  
 થયો ત્યાં અનાર્યોની સંગતિ મળી તો જે પ્રકારે કડવી તુંબડીના સંગથી દૂધની  
 હાલત થાય છે ઠીક તે જ હાલત આ આત્માની પણ થાય છે, રાતદિવસ દુર્વિ-  
 ચારોનું તેની સંગતિમાં પડવાથી તાંતો લાગ્યો રહે છે, ધર્મકર્મનું આ અવ-  
 સ્થામાં ભાન નહિ રહેતું હોવાથી બેહોશીનો નશો રહ્યા કરે છે. માટે શુભ કર્તવ્ય  
 શું છે? હેય શું છે? ઉપાદેય શું છે? ભક્ષ્ય શું છે? અભક્ષ્ય શું છે? ઇત્યાદિ સમસ્ત

જવ્હ ઇસ પ્રકાર કી પરિસ્થિતિ અનાયૌં કૈ સંગ સૈ ઉપસ્થિત હોતી હૈ તથ્હ વ્હાં પર સંયમ જૈસી શુદ્ધ પ્રવૃત્તિ કી પ્રાપ્તિ કૈસૈ હો સકતી હૈ ? કિન્તુ નહીં । યદિ આર્યક્ષેત્ર મૈં જન્મ હુવા તો મીં દુષ્કુલ મૈં જન્મ મિલા તો વ્હાં ઉસકી પ્રાપ્તિ નહીં હો સકતી; કારણ કિ વ્હાં પર ઇતની યોગ્યતા હી નહીં કિ જિસસૈ સંયમભાવકો ધારણ કરને કી ભાવના જાગૃત હો, હિંસા, છૂઠ, ચોરી, કુશીલ ઔર પરિગ્રહ જૈસૈ પાંચ આસ્રવૌં કા હી વિશેષતર વ્હાં સંગ્રહ હોતા રહતા હૈ જિસસૈ ઉસ મનુષ્યજન્મ કા પાના ન પાને કૈ હી તુલ્ય હો જાતા હૈ । મનુષ્ય પર્યાય મીં મિલી, આર્યક્ષેત્ર મિલા ઔર ઉત્તમ કુલમૈં જન્મ મિલા, પરન્તુ જો મૂલ મૈં હી કમી હુઈ તો ઉસ જન્મ સૈ મીં ક્યા લાભ હો સકતા હૈ ? અતઃ વ્હ જન્મ તમી સફલ હો સકતા હૈ જો બોધિ કી પ્રાપ્તિ હો । યદિ બોધિ કી પ્રાપ્તિ હી ન હુઈ તો સર્વવિરતિ ક્હાં સૈ હોગી । સર્વવિરતિ-સાધુકા ચારિત્ર હી શ્રેય કી પ્રાપ્તિકા પ્રધાન કારણ કહા ગયા હૈ ઇસલિયૈ ઇન તમામ વાતૌં કી પ્રાપ્તિ કી ઉત્તરોત્તર દુર્લભતા જાનકર ધીર પુરુષ કો ચાહિયૈ કિ વ્હ અપને જન્મ કો સફલ કરને કૈ લિયૈ સંયમારાધન કૈ પ્રતિ મુહૂર્ત માત્ર મીં પ્રમાદ નહીં કરૈ । ઇસી વાત કા ટીકાકારને-“ અનન્તકાલદુર્લભમાનુ-

વાતોનો વિચાર તેનાથી દૂર રહે છે. જ્યારે આ પ્રકારની પરિસ્થિતિ રહે છે ત્યારે આ ઠેકાણે સંયમ જેવી શુદ્ધ પ્રવૃત્તિની પ્રાપ્તિ કેવી રીતે થઈ શકે ? બદકે નહિ જ. કદાચ આર્ય ક્ષેત્રમાં જન્મ થયો તો પણ દુષ્કુલમાં જન્મ થયો તો ત્યાં પણ તેની પ્રાપ્તિ થઈ શકતી નથી, કારણ કે તે જગ્યાએ એટલી યોગ્યતા જ નથી કે જેનાથી સંયમભાવને ધારણ કરવાની ભાવના બાબત થાય. હિંસા, છૂઠ, ચોરી, કુશીલ અને પરિગ્રહ જેવા પાંચ આશ્રવોનું જ વિશેષતર ત્યાં સંગ્રહ થયા કરે છે તેથી તે મનુષ્યજન્મ મળ્યો ના મળ્યા બરાબર જ થઈ જાય છે. મનુષ્યપર્યાય પણ મળી આર્યક્ષેત્ર મળ્યું. ઉત્તમ કુળમાં જન્મ પણ મળ્યું. પરંતુ મૂળમાં જ કમીના બની તો તે જન્મથી જ કયો લાભ મળી શકે ? માટે તે જન્મ ત્યારે સફળ બની શકે છે જ્યારે તેનાથી બોધિની પ્રાપ્તિ થાય. કદાચ બોધિની પ્રાપ્તિ જ ન થઈ તો સર્વવિરતિ ક્યાંથી થશે. સર્વવિરતિ-સાધુનું ચારિત્ર જ શ્રેયની પ્રાપ્તિનું પ્રધાન કારણ કહેવામાં આવ્યું છે, માટે આ તમામ વાતોની પ્રાપ્તિની ઉત્તરોત્તર દુર્લભતા બાણીને ધીર પુરુષને બોધણે કે પોતાના જન્મને સફળ કરવા સંયમારાધન પ્રતિ મુહૂર્ત માત્ર પણ પ્રમાદ ન કરે. આ વાતનો ટીકાકારે-



વજન્મા-ઽઽર્યક્ષેત્ર-શોભનકુલોત્પત્તિ-બોધિલાભ-સર્વવિરતિપ્રાપ્તિરૂપા-વસરોઽનાદૌ સંસારે જીવેન લબ્ધઃ, इत्यनुभूय धीरो मुहूर्तमपि नो प्रमादयेत्” इन पङ्क्तियोंसे खुलाशा किया है । अर्थात् दुर्लभ मनुष्य-जन्म, आर्यक्षेत्र, उच्चकुल में जन्म, बोधिका लाभ, सर्वविरतिरूप चारित्र की प्राप्तिरूप अवसर जीवने अनन्तकालसे प्राप्त किया है, ऐसा विचार कर धीर वीर संयमीजन मुहूर्त मात्र भी संयमाराधन करने में प्रमाद-शील न बनें । मनुष्यजन्म का पाना बहुत ही दुर्लभ है । इसकी दुर्लभता शास्त्रकारोंने दश १० दृष्टान्तों से शास्त्रमें प्रकट की है । प्रथम तो मनुष्यजन्म की प्राप्ति होना दुर्लभ है, उसमें भी आर्यक्षेत्र में जन्म मिलना यह और भी महादुर्लभ है, आर्यक्षेत्र में भी उच्चकुल में जन्म पाना यह और भी दुर्लभ है, इस में भी बोधिका लाभ होना और कठिनतर है, इसमें भी सर्वविरतिरूप चारित्र का आराधन करना और भी दुर्लभतम है, अतः इस अनादि संसार में यदि इस पूर्ण साधनसामग्रीकी प्राप्ति तेरे हाथ आई है तो हे प्राणी ! तू संयमभाव से एक मुहूर्त भी प्रमादी मत बन, धीर वीर होकर इसका-कितने ही उपसर्ग आवें कितने ही चाहे परीषद्‌हों का ढेर तेरे मार्ग में आडा पड़ा हो तो भी आराधन

“अनन्तकालदुर्लभमानुषजन्माऽऽर्यक्षेत्रशोभनकुलोत्पत्तिबोधिलाभसर्वविरतिप्राप्ति-रूपावसरोऽनादौ संसारे जीवેન લબ્ધઃ, इत्यनुभूय धीरो मुहूर्तमपि नो प्रमादयेत्” આ પંક્તિઓથી ખુલાસો કરેલ છે, અર્થાત્ દુર્લભ મનુષ્યજન્મ, આર્યક્ષેત્ર, ઉચ્ચકુળમાં જન્મ, બોધિનો લાભ, સર્વવિરતિરૂપ ચારિત્રની પ્રાપ્તિરૂપ અવસર જીવે અનંતકાળથી પ્રાપ્ત કરેલ છે. એવો વિચાર કરી ધીર વીર સંયમી જન મુહૂર્ત માત્ર પણ સંયમારાધન કરવામાં પ્રમાદશીલ ન બને. મનુષ્યજન્મનું મળવું ઘણું જ દુર્લભ છે, તેની દુર્લભતા શાસ્ત્રકારોએ ૧૦ દૃષ્ટાન્તોથી શાસ્ત્રમાં પ્રગટ કરી છે. પ્રથમ તો મનુષ્યજન્મની પ્રાપ્તિ થવી દુર્લભ છે, તેમાં પણ આર્યક્ષેત્રમાં જન્મ મળવો એ મહાદુર્લભ છે, આર્યક્ષેત્રમાં પણ ઉચ્ચ કુળમાં જન્મ થવો એ પણ દુર્લભ છે, તેમાં પણ બોધિનો લાભ થવો ઘણું જ કઠિનતર છે. તેમાં પણ સર્વવિરતિરૂપ ચારિત્રનું આરાધન કરવું તે દુર્લભતમ છે. માટે આ અનાદિ સંસારમાં કદાચ આ પૂર્ણ સાધન સામગ્રીની પ્રાપ્તિ તારે હાથે આવી છે તો હે પ્રાણી ! તું સંયમભાવથી એક મુહૂર્ત પણ પ્રમાદી બનીશ નહિ. ધીર વીર થઈ તેમાં કેટલાંકે ઉપસર્ગ આવે અને ગમે તેટલા પરિષદોના ઢગલા તારા માર્ગમાં આડા આવે તો પણ સંયમનું આરાધન કર. જેથી પ્રાપ્ત થયેલો આવો અવસર તારા



છદ્મસ્થોપયોગો મુહૂર્તમાત્રમવતિષ્ઠતે, તેનાત્ર મુહૂર્તમિતિ કથિતમ્; શાસ્ત્રસમ્મતં તુ સમયમાત્રમપીત્યર્થઃ “સમયં ગોચમ મા પમાયણ” ઇતિ વચનાત્ ।

પૂર્વપુણ્યોદયેન માનવજન્મ લબ્ધવાન, તત્રાપિ સંસારાસારતાસમાલોચનેન વિરતો ભૂત્વા ક્ષણમપિ પ્રમાદી ન ભવેદિત્યત્ર હેતુમુપદર્શયતિ—“અત્યેતિ વયો યૌવન વા” ઇતિ, વયઃ=કૌમારયૌવનાદિ અત્યેતિ=અતિગચ્છતિ વ્યતીતં ભવતીત્યર્થઃ, યૌવનં વા વ્યતિગચ્છતિ, વયોમધ્યેऽપિ યૌવનસ્ય સત્ત્વાત્પુનરુપાદાનં તસ્યૈવ પ્રાધાન્યં નાન્યસ્યેતિ જ્ઞાપનાય, ધર્માર્થકામાદિસાધનાનાં તદધીનત્વાત્, મેઘચ્છાયાસન્ધ્યારાગવદ્ યૌવનં સ્પલ્પકાલસ્થાયીતિ મત્વા યથા વ્યર્થં તન્ન વ્યતીયાત્તથા સંયમિના ચાપ્રમાદિના કાર્યમિતિ ભાવઃ ॥ સૂ. ૪ ॥

કર, તાકિ પ્રાપ્ત હુઆ યહ અવસર તેરે હાથ સે ન નિકલને પાવે । પરીષહ ઔર ઉપસર્ગ કે આને પર મી જો સંયમ પથસે વિચલિત ન હો ઉસકા હી નામ ધીર હૈ । સચ્ચા ધીર વીર વહી હૈ—જો ઇસ પવિત્ર સંયમ કા આરાધન કર અપને જન્મકો સફલ બનાતા હૈ ।

યહાં પર જો ‘એક મુહૂર્ત મી પ્રમાદ ન કરે’ એસા કહા હૈ વહ છદ્મસ્થ જીવોં કે ઉપયોગ કી અપેક્ષા કથન સમજના ચાહિયે, ક્યોં કિ છદ્મસ્થોં કા ઉપયોગ એક મુહૂર્ત તક હી સ્થિર રહતા હૈ—ફિર ઉપયોગાન્તર હો જાતા હૈ ।

શાસ્ત્રીય સિદ્ધાન્ત તો ઇસ બાત કા પ્રતિપાદન કરતા હૈ કિ એક સમય મી પ્રમાદ મત કરો—“સમયં ગોચમ ! મા પમાયણ”—હે ગૌતમ એક સમય મી પ્રમાદી મત બન ।

ઇસલિયે સૂત્રકાર ઇસ બાત કા વિચાર કર સંબોધન કરતે હુણ કહેતે હૈ કિ—હે પ્રાણિ ! કિસી વિશિષ્ટ પૂર્વપુણ્યોદય સે હી તુઝે ઇસ દુર્લભતમ

હાથથી આલ્યો ન જાય. પરીષદ અને ઉપસર્ગ આવવા છતાં જે સંયમમાર્ગથી વિચલિત ન થાય તેનું નામ જ ધીર છે. આચો ધીર વીર તે છે જે આ પવિત્ર સંયમનું આરાધન કરી પોતાના જન્મને સફળ બનાવે છે.

આ ઠેકાણે જે ‘એક મુહૂર્ત પણ પ્રમાદ ન કરે.’ એવું કહ્યું છે તે છદ્મસ્થ જીવોના ઉપયોગની અપેક્ષા કથન સમજવું જોઈએ. કારણ કે છદ્મસ્થોનો ઉપયોગ એક મુહૂર્ત સુધી જ સ્થિર રહે છે પછી ઉપયોગાન્તર થઈ જાય છે. શાસ્ત્રીય સિદ્ધાન્ત તો આ વાતનું પ્રતિપાદન કરે છે કે એક સમય પણ પ્રમાદ ન કરે. “સમયં ગોચમ ! મા પમાયણ” હે ગૌતમ ! એક સમય પણ પ્રમાદી ન બન.

આના માટે સૂત્રકાર આ વાતનો વિચાર કરી સંબોધન કરી કહે છે કે—હે પ્રાણી ! કોઈ વિશિષ્ટ પૂર્વપુણ્યોદયથી જ તને આ દુર્લભતમ મનુષ્યભવની પ્રાપ્તિ થઈ

મનુષ્યભવની પ્રાપ્તિ હુઈ છે તો તેને સફળ બનાવવાના કામને લીધે તૂં સંસારની અસારતાના વિચાર કર, તાકિ તેના મન સાંસારિક પદાર્થોમાં લુબ્ધ ન બને । સંસારની અસારતાના વિચારની તો સાંસારિક પદાર્થોમાં તુચ્છતાની ભાવના જાગૃત કરતા છે । જિન પદાર્થોના કામને લીધે યહ રાત દિન એક કર ડાલતા છે, તે પદાર્થોના જબ સ્વરૂપ વિચાર કરતા છે તો નિયમતઃ ઇસકા ચિત્તમાં તેને વિરક્તિભાવ જાગૃત હોતા છે, દૃષ્ટિકા ભેદની તો વિરક્તિભાવ છે । જિન પદાર્થોના પરિણમનમાં યહ અપના પરિણમન માનતા થા, તથા પ્રાપ્તિ ન હોવાના પર આકુલિત હો ઉઠતા થા, તે પદાર્થોમાં અસારતા યા તુચ્છતાની ભાવના જાગૃત હોવાના પર તેને ઇસકી દૃષ્ટિ બદલ જાતી છે ઓર “ભોગોના નિમિત્ત સે આત્મામાં કર્મના બન્ધ હોતા છે” એસા સમજ કર તેને ઉદાસીન વૃત્તિ ધારણ કર લેતા છે, તબ જિસ પ્રકાર એક ઘાસના તિનખેમાં સાધારણ મનુષ્યનો ભી ન રાગ હોતા છે ઓર ન દ્વેષ હોતા છે, ઠીક ઇસી પ્રકારની પ્રવૃત્તિ, પરપદાર્થોમાં દૃષ્ટિભેદ હોવાના સે ઇસકી હો જાતી છે, તબ યહ પ્રત્યેક પદાર્થના પરિણમનમાં જ્ઞાતા-દ્રષ્ટા-સ્વરૂપની રહતા છે, આકુલિત યા મોહી નહીં બનતા । યહી પરિસ્થિતિ ઇસે સંયમભાવમાં દૃઢ રૂપસે સ્થિર રાખતી છે અતઃ યહ એક ક્ષણ ભી પ્રમાદી નહીં બનતા, ઇસી વાતના ખુલાશા-“અત્યેતિ વયો યૌવનં ચ” ઇસ વાક્ય સે સૂત્ર-

છે તો તેને સફળ બનાવવા માટે તુ સંસારની અસારતાનો વિચાર કર, જેથી તારું મન સાંસારિક પદાર્થોમાં લુબ્ધ ન બને. સંસારની અસારતાનો વિચાર જ તો સાંસારિક પદાર્થોમાં તુચ્છતાની ભાવના જાગૃત કરે છે, જે પદાર્થો માટે તે રાત દિવસ એક કરી નાખે છે, જ્યારે તે પદાર્થોના સ્વરૂપ વિચાર કરે છે તો નિયમતઃ તેના ચિત્તમાં તેનાથી વિરક્તિભાવ જાગૃત થાય છે. દૃષ્ટિનો ભેદ તે જ વિરક્તિભાવ છે. જે પદાર્થોના પરિણમનમાં તે પોતાના પરિણમન માનતો હતો તથા પ્રાપ્તિ ન થવાથી આકુલિત બનતો હતો, તે પદાર્થોમાં અસારતા અગર તુચ્છતાની ભાવના જાગૃત થવાથી તેનાથી તેની દૃષ્ટિ બદલી જાય છે, અને “ભોગોના નિમિત્તથી આત્મામાં કર્મના બંધ થાય છે” એવું સમજીને તેનાથી ઉદાસીનવૃત્તિ ધારણ કરી લે છે, ત્યારે જે પ્રકારે એક ઘાસના તણખા માટે સાધારણ મનુષ્યને પણ રાગ થતો નથી તેમ દ્વેષ થતો નથી, ઠીક તે પ્રકારની પ્રવૃત્તિ, પર પદાર્થોમાં દૃષ્ટિભેદ થવાથી તેની થઈ જાય છે. ત્યારે તે પ્રત્યેક પદાર્થના પરિણમનમાં જ્ઞાતા-દ્રષ્ટા-સ્વરૂપ જ રહે છે, આકુલિત અગર મોહી બનતો નથી. આ પરિસ્થિતિ આ સંયમભાવમાં દૃઢ રૂપથી સ્થિર રાખે છે, માટે તે એક ક્ષણ પણ પ્રમાદી બનતો નથી. આ વાતનો

કારને કિયા હૈ । પ્રમાદી નહીં બનને મેં યહ હેતુરૂપસે કથન કિયા હૈ । કૌમાર યૌવનાદિ અવસ્થાઓં કા નામ વય હૈ, સૂત્રકાર કહતે હૈં કિ-  
 દેશ્વો હે ભવ્ય જીવ ! પરપદાર્થોં મેં રાગી દ્રેષી યા મોહી હોતેર કૌમાર  
 યૌવનાદિ કઈ પૂર્વ ભવોંકી અવસ્થાઈ વ્યતીત હો ચુકી હૈં, પરન્તુ તૂને  
 અપના કુછ ભી સુધાર નહીં કિયા, અતઃ યહ વર્તમાન સમય જો તુझे મિલા  
 હૈં હસે સફલ કરને કી કોશિશ કર, હસ ભવકી ભી યે બાલયૌવનાદિ  
 અવસ્થાઈ વ્યતીત હો જાનેવાલી હૈં—સ્થિર રહનેવાલી નહીં હૈં, હસ લિખ અબ  
 તો હનસે અપના કુછ કલ્યાણ કરલે । માના કિ—બાલ અવસ્થા મેં અલ્પ-  
 જ્ઞાન હોને સે આત્મા કલ્યાણમાર્ગ કે પથ પર અગ્રસર ન હો સકે તો ભી  
 યૌવન અવસ્થા મેં તો હો સકતા હૈ, પરન્તુ તૂ તો હસે ભી વ્યર્થ સ્વો બેઠતા  
 હૈ, કયોં કિ સબ અવસ્થાઓં મેં યૌવન અવસ્થા કી હી મુખ્યતા હૈ, હસ  
 અવસ્થા મેં હી યહ પ્રાણી સબ કુછ કરતા રહતા હૈ, ધર્મ, અર્થ ઓર કામાદિ  
 સાધન સબ હસી અવસ્થા મેં પ્રાપ્ત કિયે જાતે હૈં, હસી રહ્યાલ સે ‘વય’  
 હસ મેં હસકા સમાવેશ હોનેપર ભી “યૌવન” હસ પદ કા પૃથક્  
 રૂપસે ગ્રહણ કિયા હૈ, અતઃ વહ યૌવન અવસ્થા વ્યર્થ વ્યતીત ન હો હસ  
 પ્રકાર સે સંયમી પુરુષ કો વહ અવસ્થા અપ્રમાદદશાસમન્વિત હોકર

ખુલાસો—“ અત્યેતિ વયો યૌવનં ચ ” આ વાક્યથી સૂત્રકારે કહેલ છે. પ્રમાદી  
 નહિ બનવામાં આ હેતુરૂપથી કથન કરેલ છે કૌમાર યૌવનાદિ અવસ્થાઓનું  
 નામ વય છે. સૂત્રકાર કહે છે કે—દેખો હે ભવ્ય જીવ ! પરપદાર્થોમાં રાગી દ્રેષી  
 અગર મોહી થતા કૌમાર—યૌવનાદિ અનેક પૂર્વભવોની અવસ્થાઓ વ્યતીત થયેલ  
 છે. પરંતુ તેં પોતાનો કાંઈ પણ સુધાર કર્યો નહિ, માટે આ વર્તમાન સમય જે  
 તને મળેલ છે તેને સફળ કરવાની કોશિશ કર. આ ભવની પણ એ બાલ યૌવનાદિ  
 અવસ્થાઓ વ્યતીત થઈ જવાની છે—સ્થિર રહેવાવાળી નથી, માટે હવે તો તેનાથી  
 પોતાનું કલ્યાણ કરી લ્યો. માનીલ્યો કે—બાલ અવસ્થામાં અલ્પજ્ઞાન હોવાથી આત્મા  
 કલ્યાણ માર્ગમાં અગ્રેસર ન બની શકે તો પણ યૌવન અવસ્થામાં તો બની  
 શકે છે, પરંતુ તું તો તેને પણ વ્યર્થ ખોઈ ખેસે છે, કારણ કે બધી અવસ્થા  
 ઓમાં યૌવન અવસ્થાની જ મુખ્યતા છે. આ અવસ્થામાં જ પ્રાણી કાંઈકે પણ  
 કરી શકે છે. ધર્મ, અર્થ અને કામાદિ સાધન બધું આ અવસ્થામાં પ્રાપ્ત થાય  
 છે, એ જાણથી ‘વય’ તેમાં તેનો સમાવેશ હોવા છતાં પણ “યૌવન” આ  
 પદનું પૃથક્ રૂપથી ગ્રહણ કરેલ છે. માટે તે યૌવન અવસ્થા વ્યર્થ વ્યતીત  
 ન થાય એ પ્રકારથી સંયમી પુરુષે તે અવસ્થા અપ્રમાદદશાસમન્વિત બની

‘સંયમાનુપાલનં શ્રેયઃ’ इति यो न जानाति पुत्रकलत्रासक्तः संसारासारसरणि-  
मनुवर्तमानोऽनाराधितकल्याणमार्गोऽसंयमजीविताभिनिवेशवान् प्राणी बहुशः सत्त्वो-  
पघातकारिणीं क्रियां करोतीति दर्शयति—“ जीविण ”—इत्यादि ॥

મૂલમ્—જીવિણ્ણ ઇહ જે પ્રમત્તા સે હંતા છેત્તા મેત્તા લુંપિતા  
વિલુંપિતા ઉદ્ધવિતા ઉત્તાસઙ્ગતા અકલં કરિસ્સામિત્તિ સ્પણ્ણમાણે  
॥ સૂ૦ ૫ ॥

છાયા—જીવિત ઇહ યે પ્રમત્તાઃ સ હન્તા છેત્તા મેત્તા લુમ્પયિતા વિલુમ્પયિતા  
અપદ્રાવયિતા ઉત્ત્રાસકોઽકૃતં કરિણ્યામીતિ મન્યમાનઃ ॥ સૂ૦ ૫ ॥

સફલ બના લેની चाहिये, क्योंकि यह अवस्था सदा स्थायी नहीं है, संध्या-  
राग और मेघछायाकी तरह स्वल्पकाल में ही देखते २ नष्ट होजानेवाली  
है, अतः इसकी सफलता करने में ही बुद्धिमानी है ॥ सू० ४ ॥

જો વ્યક્તિ ઇસ વાત કો નહીં સમજતા હૈ કિ—‘સંયમ કા પાલન  
કરના હિતાવહ હૈ’ વહ પુત્ર કલત્રાદિ પદાર્થોં મેં આસક્તચિત્ત હોકર ઇસ  
અસાર સંસાર મેં હી ભ્રમણ કરના રહતા હૈ, કલ્યાણમાર્ગ કા આરાધન  
નહીં કરને કે કારણ અસંયમ જીવન મેં હી વહ અપના સમય વ્યતીત  
કરતા હૈ, ઓર સંયમ જીવન ધારણ કરને કી વાત કહે જાને પર વહ  
અપને દુરભિનિવેશ કે વશવર્તી હો ઉસ તર્ફ જરા ભી ધ્યાન નહીં દેતા,  
તથા એસે ૨ કાર્ય કરતા રહતા હૈ કિ જિનકે કરને મેં અનેક ત્રસ જીવોં  
કા ઘાત હોતા હૈ ઇસી વાતકો સૂત્રકાર પ્રકટ કરતે હૈ—

સફળ બનાવી લેવી જોઈએ, કારણ કે આ અવસ્થા સદા સ્થાયી નથી, સંધ્યાના  
રાગ અને મેઘછાયા ની માફક સ્વલ્પકાળમાં જ દેખતાં—દેખતાં નષ્ટ થવાવાળી  
છે, માટે તેની સફળતા કરવામાં જ બુદ્ધિમાની છે. ॥ સૂ૦ ૪ ॥

જે વ્યક્તિ, ‘સંયમનું’ પાલન કરવું તે હિતાવહ છે’ તેમ સમજતો નથી તે  
પુત્રકલત્રાદિ પદાર્થોમાં આસક્તચિત્ત થઈ આ અસાર સંસારમાં જ ભ્રમણ  
કરતો રહે છે, કલ્યાણ માર્ગનું આરાધન નહિ કરવાના કારણે અસંયમ જીવનમાં  
તે પોતાનો સમય વ્યતીત કરે છે. અને સંયમ જીવન ધારણ કરવાની વાત કહેવા  
ઉપર તે દુરભિનિવેશવશવર્તી હોઈ તેના તરફ જરા પણ ધ્યાન આપતો નથી.  
તથા એવું કાર્ય કરતો રહે છે કે જે કરવામાં અનેક ત્રસ જીવોનો ઘાત થાય  
છે તે વાતને સૂત્રકાર પ્રગટ કરે છે—

ટીકા—“ જીવિત ઇહ યે પ્રમત્તાઃ ” ઇતિ, ઇહાસ્મિન્ જીવિતે પ્રત્યહં વયોઽતિ-  
ક્રમેઽપ્યસંયમજીવિતે, પ્રમત્તાઃ=વિષયકષાયે પ્રમાદવન્તો ભવન્તીતિ સમ્બન્ધઃ, પ્રમત્તો  
હિ ષડ્જીવનિકાયોપમર્દને પ્રવૃત્તોઽનેકાનર્થકરી વિવિધાં વિરુદ્ધાં સાવધાં ક્રિયાં  
વિદધાતીત્યાહ—“ સ હન્તા ” ઇતિ સઃ=શબ્દાદિવિષયગૃહ્ઃ પ્રમાદી હન્તા=પૃથિવ્ય-  
પ્તેજોવાયુવનસ્પતિત્રસાનાં પ્રાણિનાં નાશકઃ ‘ છેત્તા ’ વનસ્પતિપ્રમૃત્તીનાં, કર્ણનાસિ-  
કાદીનાં ચ, ‘ મેત્તા ’ પૃથિવ્યાદિનિકાયાનાં, ‘ લુમ્પયિતા ’ ગ્રન્થિભેદનાદિના,  
‘ વિલુમ્પયિતા ’ ગ્રામઘાતાદિકર્મણા, ‘ અપદ્રાવયિતા ’ વિષશસ્ત્રાદિપ્રયોગેણ મારકઃ,  
‘ ઉત્ત્રાસકઃ ’ લોષ્ટ્રપ્રક્ષેપાદિનોદ્વેજકો લોકાનાં ભવતીતિ સર્વત્ર યોજ્યમ્ ।

‘ જીવિં ઇહ જે ’ ઇત્યાદિ । ઇસ જીવન મેં જો પ્રમાદી બના હુઆ હૈ  
વહ ‘ યહ કાર્ય મેરે પૂર્વજોને નહીં કિયા હૈ, ઇસે મેં કરૂંગા ’ એસા સમજકર  
ત્રસ સ્થાવર જીવોં કા ઘાતક હોતા હૈ, ઉનકા છેદન કરનેવાલા હોતા હૈ,  
ઉનકા ભેદન કરનેવાલા હોતા હૈ, ઉનકા લુમ્પન કરનેવાલા હોતા હૈ,  
વિલુમ્પન કરનેવાલા હોતા હૈ, અપદ્રાવક હોતા હૈ, ઉત્ત્રાસક હોતા હૈ ।

જીવન ઉનકા હી સફલ હૈ જો ઇસ અલ્પજીવન મેં ભી સંયમ દ્વારા  
અપના આત્મહિત કર લેતે હૈં । ધન્ય હૈં ઉન મહાત્માઓં કો જો વિપુલ  
વિભૂતિ કે ભોક્તા હોકર ભી ઉસે જીર્ણ તૃણ કે સમાન છોડ દેતે હૈં,  
ઔર આત્મકલ્યાણ કે માર્ગ મેં અગ્રસર હો જાતે હૈં, ચક્રવર્તિયોં યા તીર્થ-  
કરોં કે પાસ કિસ વસ્તુકી કમી થી, જિનકા વૈભવ અતુલ્ય થા, છહ  
ચંડકી વિભૂતિકે જો ભોક્તા થે, દેવતા તથા ઇન્દ્ર જિનકી સેવા મેં સદા

‘ જીવિં ઇહ જે ’ ઇત્યાદિ. આ જીવનમાં જે પ્રમાદી બનેલ છે તે ‘ આ  
કાર્ય મારા પૂર્વજોએ કરેલ નથી એ હું કરીશ ’ એવું સમજીને ત્રસ સ્થાવર  
જીવોનો ઘાતક થાય છે, તેનું છેદન કરવાવાળો થાય છે, તેનું ભેદન કરવાવાળો  
થાય છે, તેનું લુમ્પન કરવાવાળો થાય છે, વિલુમ્પક થાય છે, અપદ્રાવક થાય છે,  
ઉત્ત્રાસક થાય છે.

જીવન તેનું જ સફળ છે જે આ અલ્પ જીવનમાં પણ સંયમદ્વારા પોતાનું  
આત્મહિત કરી લે છે. ધન્ય છે તે મહાત્માઓને જે વિપુલ વિભૂતિના ભોક્તા  
બનીને પણ તેને જીર્ણતૃણની સમાન છોડી દે છે, અને આત્મકલ્યાણના માર્ગમાં  
અગ્રસર થાય છે. ચક્રવર્તિઓ અગર તીર્થંકરોની પાસે કંઈ વસ્તુની ખોટ હતી,  
જેનો વૈભવ અતુલ્ય હતો. છ ખંડની વિભૂતિના જે ભોક્તા હતા. દેવતા અને  
ઇન્દ્ર જેની સેવામાં સદા ઉપસ્થિત રહેતા હતા, એક ક્ષણ માત્ર પણ જેણે આંસા-

અત્ર મૂલે પૂર્વે 'પ્રમત્તાઃ' ઇતિ વહુવચનપ્રસંગે હન્તેત્યાદૌ સર્વત્રૈકવચનં તુ જાત્યેકત્વવિવક્ષયા વિદ્વેયમ્ । અનેકાનર્થકરક્રિયાપ્રદર્શનં ચ સંસારાભિજ્ઞપરઃ કાલાકાલસમુત્થાયી સતતં પરહનનાદિરૂપાં નાનાવિધાં ક્રિયાં કરોતીત્યર્થબોધનાયેતિ તાત્પર્યમ્ ।

ઉપસ્થિત રહતે થે । એક ક્ષણ માત્ર મી જિન્હે સાંસારિક કષ્ટ કા અનુભવ નહીં હોતા થા, વે મી હસ સંયમ જીવન કી પ્રાપ્તિ કે લિયે ઉસે તૃણવત્ ત્યાગ કર આત્મકલ્યાણ કે માર્ગ મેં અગ્રગામી હુણ ।

યહ જાની હુઝ બાત હૈ કિ-સબ ભરત ચક્રવર્તી જૈસે નહીં હૈ । જહાં આરંભ ઓર પરિગ્રહ કા નિવાસ હૈ, વહાં શાન્તિમય જીવન નહીં, નિરાકુલતામય આત્મપરિણતિ નહીં, યત્નાચારપૂર્વક પ્રવૃત્તિ નહીં, ઇન્દ્રિયસંયમ અથવા પ્રાણિસંયમ જૈસી સુન્દર વસ્તુકે વહાં પર દર્શન નહીં । રાત્રિન આધિ-વ્યાધિ ઓર ઉપાધિ કે ભાર સે દબા હુઆ યહ પ્રાણી આત્મિક શાન્તિકે સચે નિર્મલ સ્રોત સે વ્યથિત હી રહા કરતા હૈ-સિર્ફ ઝૂઠી કલ્પના સે હી અપને કો સુખી ઓર શાન્તિ કા ઉપભોક્તા માનતા રહતા હૈ । જહાં જિતના અધિક આરંભ હોગા વહાં ઉતના હી અધિક જીવોં કા ઉપમર્દન હોગા । આરંભ પરિગ્રહ કે સદ્ભાવ મેં યતનાપૂર્વક પ્રવૃત્તિ હી નહીં હો સકતી । અયતનાપૂર્વક પ્રવૃત્તિકા નામ હી પ્રમત્તદશા હૈ । હસ પ્રમત્તદશાકી નિવૃત્તિ, સર્વવિરતિરૂપ સંયમ કે અનુષ્ઠાન વિના નહીં હો સકતી!, ક્યોં કિ સંયમકે અનુષ્ઠાન મેં ત્રસ ઓર સ્થાવર

રિક કષ્ટનો અનુભવ કરેલ નથી. તે પણ આ સંયમ જીવનની પ્રાપ્તિ માટે તેના તૃણવત્ ત્યાગ કરી આત્મકલ્યાણના માર્ગમાં અગ્રગામી થયા.

એ બાણેલી હકીકત છે બધા ભરત ચક્રવર્તી જેવા નથી. જ્યાં આરંભ અને પરિગ્રહનો નિવાસ છે કે ત્યાં શાન્તિમય જીવન નહિ. નિરાકુલતામય આત્મપરિણતિ નહિ. યત્નાચારપૂર્વક પ્રવૃત્તિ નહિ. ઇન્દ્રિયસંયમ અથવા પ્રાણિસંયમ જેવી સુંદર વસ્તુનું જ્યાં દર્શન નથી. રાત્રિ-દિવસ આધિ-વ્યાધિ અને ઉપાધિના ભારથી દબાએલો આ પ્રાણી આત્મિક શાન્તિના સાચા નિર્મળ સ્રોતથી દૂર જ રહ્યા કરે છે. ફક્ત બુઠી કલ્પનાથી જ પોતાને સુખી અને શાન્તિનો ઉપભોક્તા માનતો રહે છે. જ્યાં જેટલો અધિક આરંભ થશે ત્યાં તેટલું જ અધિક જીવોનું ઉપમર્દન થશે. આરંભ પરિગ્રહના સદ્ભાવમાં યતનાપૂર્વક પ્રવૃત્તિ જ બની શકતી નથી, અયતનાપૂર્વક પ્રવૃત્તિનું નામ જ પ્રમત્તદશા છે. આ પ્રમત્તદશાની નિવૃત્તિ-સર્વવિરતિરૂપ સંયમના અનુષ્ઠાન વિના બની શકતી નથી, કારણ કે સંયમના અનુ-



જીવોંકે ઉપમર્દન કા ત્યાગ નવકોટિસે હો જાતા હૈ ।

इस संयमाराधन के लिये यह नहीं कहा जा सकता है कि-अभी समय नहीं है, समय आने पर संयमका आराधन कर लेंगे। वे तो एक बहाना लेकर संयमाराधन से विमुख हो रहे हैं, उनकी यह आत्माकी कमजोरी है, जब तक यह कमजोरी नहीं हटाई जावेगी, तब तक असंयम जीवन से छुटकारा भी नहीं मिल सकता है। संयमाराधन के सम्मुख होने के लिये आत्मकमजोरी को जानने की और जान कर उसे दूर करने की सख्त आवश्यकता है। हम जानते हैं कि हमारे घरमें सांप घुसा बैठा है परन्तु जब तक उसे हम नहीं निकाल देते तब तक हमारा जानना हमारे लिये किस मतलब का ।

जीवन अल्प है । स्त्री पुत्रादिकों की प्राप्ति इस जीवको अनन्त बार हो चुकी है। संयोग और वियोग, ये दो ही नाटक संसार के पर्दे पर होते रहते हैं। हमारे साथ जो जन्मे थे वे चले गये, हम भी कभी न कभी चले जावेंगे, परन्तु सर्वविरति-संयमाराधन का अवसर इस जीव को हाथ नहीं आया। यदि आया होता तो-जो हमारा भव भवमें संसार में चक्कर लग रहा है-वह कभी का बंद हो जाता, अतः जब जीवन

જાનમાં ત્રસ અને સ્થાવર જીવોના ઉપમર્દનનો ત્યાગ નવ કોટિથી થઈ જાય છે.

આ સંયમારાધન માટે એમ કહેવામાં નથી આવતું કે હમણા સમય નથી પણ સમય આવશે ત્યારે સંયમનું આરાધન કરી લેશું. એ તો એક બહાનું માત્ર છે. જે સમયનું બહાનું લઈ સંયમારાધનથી વિમુખ થઈ જાય છે તે તેના આત્માની કમજોરી છે. જ્યાંસુધી એ કમજોરી દૂર કરવામાં નહિ આવે ત્યાંસુધી અસંયમ જીવનથી છુટકારો પણ મળી શકતો નથી.

સંયમારાધનસન્મુખ હોવા માટે આત્મકમજોરી જાણવાની અને જાણીને તેને દૂર કરવાની સખ્ત આવશ્યકતા છે અને જાણીએ છીએ કે અમારા ઘરમાં સાપ ઘુસેલો છે પરંતુ જ્યાં સુધી અમે તેને નહિ બહાર નિકાલીએ ત્યાં સુધી અમારું જાણપણું નકામું છે.

જીવન અલ્પ છે. સ્ત્રી પુત્રાદિકોની પ્રાપ્તિ આ જીવને અનંતવાર થયેલ છે. સંયોગ અને વિયોગ, એ બે સંસારના પર્દાપર નાટક થતાં જ રહે છે. અમારી સાથે જે જન્મ્યા હતાં તે ચાલી ગયાં, અમે પણ ક્યારેક ચાલ્યા જઈશું, પરંતુ સર્વવિરતિ-સંયમારાધનનો અવસર આ જીવને હાથ નહિ આવ્યો. કદાચ આવ્યો હોત તો જે અમારા લવોલવના સંસારમાં ચક્કર લાગી રહ્યા છે તે ક્યારના



ક્ષણભંગુર હૈ નો ઉસકે દ્વારા સંયમકી જિતની ખી આરાધના હો સકે શુદ્ધ મન, વચન ઓર કાય સે કર લેની ચાહિયે, હસી મેં બુદ્ધિમાની હૈ । શુદ્ધ આરાધિત થોડા ખી સંયમ અનન્ત કર્મોં કી નિર્જરા કા કારણ માના ગયા હૈ । જિસ પ્રકાર સંતસ લોહેકા ગોલા પાનીકો ચારોં ઓર સે ઝીંચતા હૈ, ઉસી તરહ અસંયમ જીવન ખી વિષયકષાયોં કે દ્વારા ચારોં ઓર સે કાર્મણવર્ગણાઓંકો ઝીંચકર ઉન્હેં કર્મરૂપ સે પરિણત કર ઉનસે લિસ હોતા રહતા હૈ । અસંયમી કાર્મણવર્ગણાઓંકો ઝેંચ ઉન્હેં કર્મરૂપ મેં કયોં પરિણમાતા હૈ ? હસકા ઉત્તર દેતે હુણ સૂત્રકાર કહતે હૈ—

‘ જીવિણ હહ જે પમત્તા સે હંતા ’ હત્યાદિ ।

નિરન્તર આયુષ વ્યતીત હો રહી હૈ—અંજલિ મેં રખે હુણ જલ કી તરહ ક્ષણ ૨ મેં આયુકર્મ કી સ્થિતિ ઘટ રહી હૈ—ફિર ખી પ્રાણી અસંયમ-જીવનવાલા હી બના હુઆ હૈ, વિષય ઓર કષાયોં મેં લવલીન હો રહા હૈ, રાતદિન વિકથા ઓર કષાય ંવં પાંચઇન્દ્રિયોં કે વિષય સેવન કરને મેં હી જુટા હુઆ હૈ । પ્રમાદી વ્યક્તિ સકષાય યોગવાલા હોતા હૈ—સકષાય યોગવાલા હોને સે હી ઉસકી પ્રવૃત્તિ ષડ્જીવનિકાય કે ઉપમર્દન કરને મેં હોતી રહતી હૈ । ઉસે હસ બાતકા જરા ખી વિચાર નહીં આતા કિ મેરી

પણુ અંધ થઇ જાત. માટે જ્યારે જીવન ક્ષણભંગુર છે તો તે દ્વારા સંયમની જેટલી પણ આરાધના થઇ શકે તેટલી શુદ્ધ મન-વચન-કાયાથી કરી લેવી જોઈએ. તેમાં જ બુદ્ધિમાની છે. શુદ્ધ આરાધિત થોડા પણ સંયમ અનંત કર્મોની નિર્જરાનું કારણ મનાય છે. જે પ્રકારે સંતસ લોહાનો ગોળો ચારે બાજુથી પાણીને ખેંચે છે, તે પ્રકારે અસંયમ જીવન પણ વિષય કષાયોદ્વારા ચારે તરફથી કામણુ વર્ગણાઓને ખેંચીને તેને કર્મરૂપ પરિણમન કરી તેનાથી લિસ થઇ જાય છે. અસંયમી કામણુ વર્ગણાઓને ખેંચી તેને કર્મરૂપ શા માટે પરિણમાવે છે ? તેનો ઉત્તર આપતા સૂત્રકાર કહે છે—‘ જીવિણ હહ જે પમત્તા સે હંતા ’ ઇત્યાદિ.

નિરંતર આયુષ વ્યતીત થઇ રહ્યું છે, અંજળીમાં રાખેલા પાણી માફક ક્ષણ ક્ષણમાં આયુકર્મની સ્થિતિ ઘટી રહી છે તો પણ આણી અસંયમ જીવનવાળા જ બની રહે છે. વિષય અને કષાયોમાં જ લવલીન થઇ રહે છે. રાતદિન વિકથા અને કષાય અને પાંચ ઇન્દ્રિયોના વિષય સેવન કરવામાં જ મગ્યા રહે છે. પ્રમાદી વ્યક્તિ સકષાય યોગવાલા થાય છે સકષાય યોગવાલા હોવાથી જ તેની પ્રવૃત્તિ ષડ્જીવનિકાયનું ઉપમર્દન કરવામાં જ બની રહે છે. તેને આ વાતનો જરા પણ વિચાર આવતો નથી કે—

હસ પ્રવૃત્તિ સે ત્રસ અથવા સ્થાવર જીવોંકા ઘાત હો રહા હૈ । અનેક અનર્થકારી સાવધ ક્રિયાઓં કો વહ કરતે હુએ નહીં હિચકતા હૈ । સિસ લિયે વહ પ્રમાદી વ્યક્તિ શબ્દાદિ વિષયોં મેં ગૃહ્થ બનકર ઉન-ત્રસ સ્થાવર જીવોંકા હનન કરનેવાલા હોતા હૈ । જહાં અયતનાપૂર્વક પ્રવૃત્તિ હૈ વહાં પ્રમત્તયોગ હોને સે હિંસા હોતી હી હૈ, સિસલિયે પ્રમાદી વ્યક્તિ ‘હંતા’ કહા જાતા હૈ । જો રાતદિન અપની પ્રવૃત્તિ કો કુત્સિત કરનેવાલી ક્રિયાઓં કે સેવન મેં લગાતા રહતા હૈ વહ એક પ્રકાર સે ઉસ તર્ફ સે સિતના વિવેક-શૂન્ય હો જાતા હૈ કિ ફિર ઉસે ઉસ કામ સે જરા ભી ઘૃણા યા સંકોચ નહીં હોતા, દયા જૈસી વસ્તુ ઉસકે હૃદય મેં દેખને કો હી નહીં મિલતી । જિસ પ્રકાર ઠક ૨ શબ્દ હોતે રહને પર ભી ઠઠેરે કા કવૃતર નિર્ભય હોકર અપને સ્થાન પર બેઠા રહતા હૈ અર્થાત્ ઉસ જગહ ઉસે બેઠને મેં જરા ભી સંકોચ નહીં હોતા હૈ, ઉસી પ્રકાર જો વાર વાર હિંસા-ઝૂઠ-આદિ પાંચ આશ્રવોં કે સેવન કરને મેં તત્પર રહતે હૈં વે સિતને દયારહિત ઓર ઉસ કાર્ય કે કરને મેં સિતને વિવેકશૂન્ય બન જાતે હૈં કિ ઉન કામોં કો કરતે હુએ જરા ભી નહીં લજાતે, યા ઉનકે કિયે બિના ઉન્હેં ચૈન નહીં પડતા । યદિ વે બાહર મેં ઉસ તરહ કી પ્રવૃત્તિ ન ભી કરેં તો ભી ઉનકી માનસિક પ્રવૃત્તિ

મારી આ પ્રવૃત્તિથી ત્રસ અને સ્થાવર જીવોનો ઘાત થઈ રહ્યો છે, અનેક અનર્થ-કારી પાપમય ક્રિયાઓને કરતાં જરા પણ થડકતો નથી. માટે તે પ્રમાદી વ્યક્તિ શબ્દાદિ વિષયોમાં ગૃહ્થ બનીને આ ત્રસ સ્થાવર જીવોનો ઘાત કરવાવાળો બને છે, જ્યાં અયતનાપૂર્વક પ્રવૃત્તિ છે ત્યાં પ્રમત્ત યોગ હોવાથી હિંસા થયા કરે છે, માટે પ્રમાદી વ્યક્તિ ‘હંતા’ કહેવાય છે. જે રાતદિવસ પોતાની પ્રવૃત્તિને કુત્સિત કરવાવાળી ક્રિયાઓના સેવનમાં લગાડતો રહે છે. તે એક પ્રકારે એક તરફથી એવો વિવેકશૂન્ય થઈ જાય છે કે તેને તે કામથી જરા પણ ઘૃણા અગર સંકોચ થતો નથી. દયા જેવી વસ્તુ તેના હૃદયમાં દેખવામાં આવતી નથી. જે પ્રકારે ઠક ઠક શબ્દ થવા છતાં પણ ‘કંસારાની જગ્યા પાસેનું’ કબુતર નિર્ભય બની પોતાના સ્થાન પર જ બેસી જ રહે છે. અર્થાત્ તે જગ્યા ઉપર બેસવામાં તેને જરા પણ સંકોચ થતો નથી, તે પ્રકારે જે વારંવાર હિંસા, ઝુઠ, આદિ પાંચ આશ્રવોનું સેવન કરવામાં તત્પર રહે છે તે એટલા દયારહિત અને તે કાર્ય કરવામાં વિવેકશૂન્ય બની જાય છે કે તેવા કામો કરવામાં તે જરા પણ લાજ મર્યાદા રાખતો નથી, અગર તેવા કામ કર્યા વિના તેને ચૈન પડતું નથી. કહાય તે બહારમાં તેવા પ્રકારની પ્રવૃત્તિ ન કરે તો પણ માનસિક પ્રવૃત્તિ તેની સુતાં ઉઠતાં બેસતાં

સોતે ઉઠતે બેઠતે उस तरफ सचेत बनी रहती है । शान्त्रकारों ने हिंसा के मुख्य दो भेद किये हैं—१ द्रव्यहिंसा और २ भावहिंसा । प्राणियों के अपने-२ योग्य प्राणों का वियोग करना द्रव्यहिंसा, तथा भाव-अन्तःकरणकी कलुषित वृत्ति करना भावहिंसा है । पर्याप्तवस्था में एकेन्द्रिय जीवों के ४ प्राण होते हैं, द्वीन्द्रिय जीवों के ६, त्रैन्द्रिय जीवों के ७, चतुरिन्द्रिय जीवों के ८, असंज्ञि पंचेन्द्रिय जीवों के ९, और संज्ञि पंचेन्द्रिय जीवों के १० । एकेन्द्रिय जीव सूक्ष्म और बादर के भेद से दो प्रकार के होते हैं । सूक्ष्म एकेन्द्रिय जीव जो इस लोक में सर्वत्र व्याप्त हैं उनका किसी भी निमित्त से घात नहीं होता है, बादर एकेन्द्रिय जीवोंका ही घात होता है । अतः प्रमादी व्यक्ति अपनी प्रवृत्ति से पृथिवी-कायिक, अप्कायिक, तेजस्कायिक, वायुकायिक एवं वनस्पतिकायिक एकेन्द्रिय जीवों का तथा द्वीन्द्रियादिक त्रस जीवों का घातक माना गया है । रागादिक भावों का उद्रेक प्रत्येक अवस्थामें रहता है, इनके बिना कोई भी प्राणी जीवों के घात करने में प्रवृत्त नहीं होता, अतः इनकी उद्रेकता ही भावहिंसा है । अथवा रागादिकों की उत्पत्ति स्वयं भावहिंसा है, अतः प्रमादी व्यक्ति बाहरमें हिंसादिक कार्यों में प्रवृत्त न भी हो तो भी वह

તે તરફ જ સચેત બની રહે છે. શાન્તકારોએ હિંસાના મુખ્ય બે ભેદ કહ્યાં છે. ૧ દ્રવ્યહિંસા, અને ૨ ભાવહિંસા. પ્રાણીઓના પોતપોતાના યોગ્ય પ્રાણોનો વિયોગ કરવું તે દ્રવ્યહિંસા, તથા ભાવ-અંતઃકરણની કલુષિત વૃત્તિ કરવી તે ભાવહિંસા છે. પર્યાપ્તવસ્થામાં એકેન્દ્રિય જીવોને ૪ પ્રાણ હોય છે, બેઠન્દ્રિય જીવોને ૬, ત્રેન્દ્રિય જીવોને ૭, ચોરેન્દ્રિય જીવોને ૮, અસંજ્ઞી પંચેન્દ્રિય જીવોને ૯ અને સંજ્ઞી પંચેન્દ્રિય જીવોને ૧૦.

એકેન્દ્રિય જીવ સૂક્ષ્મ અને બાહરના ભેદથી બે પ્રકારના હોય છે, સૂક્ષ્મ એકેન્દ્રિય જીવ જે આ લોકમાં સર્વત્ર વ્યાપ્ત છે, તેનો કોઈ પણ નિમિત્તથી ઘાત થતો નથી. બાહર એકેન્દ્રિય જીવોનો ઘાત થાય છે, માટે પ્રમાદી વ્યક્તિ પોતાની પ્રવૃત્તિથી પૃથિવીકાયિક, અપ્કાયિક, તેજસ્કાયિક, વાયુકાયિક અને વનસ્પતિકાયિક એકેન્દ્રિય જીવોનો તથા બેઠન્દ્રિય આદિ ત્રસ જીવોનો ઘાતક માનેલ છે. રાગાદિક ભાવોનો ઉદ્દેક પ્રત્યેક અવસ્થામાં રહે છે. તેના વિના કોઈ પણ પ્રાણી જીવોનો ઘાત કરવામાં પ્રવૃત્ત નથી થતો. માટે તેની ઉદ્દેકતા જ ભાવહિંસા છે. અને રાગાદિકોની ઉત્પત્તિ સ્વયં ભાવહિંસા છે માટે પ્રમાદી વ્યક્તિ બહારમાં હિંસાદિક કાર્યોમાં પ્રવૃત્ત ન હોય તો પણ તે પ્રમત્ત હોવાથી હિંસક માનવામાં

કિમર્થ ચૈતાન્ વ્યાપારાન્ વિદધાતીત્યાહ—‘અકૃતં કરિષ્યામીતિ મન્યમાનઃ’  
 इति, यदन्यैः पूर्वैः सद्भिर्न कृतं=नानुष्ठितं तत्सर्वं करिष्यामि=विधास्यामि, इति मन्य-  
 मानः=स्वीकुर्वाणः सन् हननादिकर्मकर्ता भवति । पुत्रकलत्रासक्तोऽप्राप्तविविध-  
 विभवोऽनर्थकरं कर्म करिष्यामીति निश्चित्य हननादौ प्रवर्तते ।

પ્રમત્ત હોને સે હિંસક માના જાતા હૈ। इसीलिये प्रमादी को शास्त्रकारों ने  
 हिंसक कहा है। प्रमादी जिस प्रकार पांचइन्द्रियों के विषय में लोलुपी बन  
 कर त्रस स्थावरों का घात करता है उसी प्रकार वह उनका छेदन भेदन  
 भी करता है। फिर वह लुम्पयिता—किसी की गांठ काटना, खिसा कत-  
 रना आदि कार्य करता है, विलुम्पयिता—ग्रामघातादि कार्य करता है,  
 अपद्रावयिता—विष शस्त्रादि के प्रयोग से किसीको मारता है, उत्त्रास-  
 यिता—कंकर पत्थर फेंकर किसीको डराता है। अनेक अनर्थों को करनेवाली  
 हनन-छेदन-भेदन आदि क्रियाओं का जो यहां पर प्रदर्शन किया है  
 उसका अभिप्राय सिर्फ इतना ही है कि जो संसार में ही फँसा है वह  
 कालाकाल के ज्ञान से रहित होकर पर जीवों के विषय में अनेक अनर्थों को  
 पैदाकरनेवाली अनेकप्रकार की घालादिक क्रियाओं को निरन्तर करता  
 रहता है। शंका—अनर्थकारी क्रियाओं को यह प्राणी क्यों करता है ?

उत्तर—“ अकृतं करिष्यामીति मन्यमानः ” अर्थात्—‘जो पहिले  
 अन्य पूर्वजों ने कार्य नहीं किये हैं वे सब मैं करूँगा’ इस अभिप्राय के  
 वशवर्ती होकर ही यह प्राणी उन अनर्थोत्पादक क्रियाओं के करने में

આવે છે. માટે પ્રમાદીને શાસ્ત્રકારોએ હિંસક કહ્યો છે, પ્રમાદી જે પ્રકારે પાંચ  
 ઇન્દ્રિયોના વિષયમાં લોલુપી બનીને ત્રસ સ્થાવરોનો ઘાત કરે છે તે પ્રકારે તે  
 તેનું છેદન ભેદન પણ કરે છે, પછી તે લુમ્પયિતા—કોઈની ગાંઠ કાપવી, ખિસ્સુ  
 કાતરવું, આદિ કાર્ય કરે છે. વિલુમ્પયિતા—ગ્રામઘાતાદિ કાર્ય કરે છે. અપદ્રાવયિતા  
 —વિષ શસ્ત્રાદિકોના પ્રયોગથી કોઈને મારે છે. ઉત્ત્રાસયિતા—કંકર પથ્થર ફેંકીને  
 કોઈને ડરાવે છે, અનેક અનર્થોને કરવાવાળી, હુણવું, છેદવું, ભેદવું, આદિ ક્રિયા-  
 ઓનું જે આ ઠેકાણે પ્રદર્શન કર્યું છે, તેનો અભિપ્રાય ફક્ત એટલો જ છે કે  
 જે સંસારમાં જ ફસેલા છે તે કાલાકાલના જ્ઞાનથી રહિત બની પર જીવો  
 વિષે અનેક અનર્થોને પેદા કરવાવાળી અનેક પ્રકારની ઘાતાદિક ક્રિયાઓને નિર-  
 તર કરતા રહે છે. શંકા:—અનર્થકારી ક્રિયાઓને આ પ્રાણી કેમ કરે છે ?  
 ઉત્તર—“ અકૃતં કરિષ્યામીતિ મન્યમાનઃ ”

અર્થાત્ ‘જે પહેલાનાં અન્ય પૂર્વજોએ કાર્ય નથી કર્યું’ તે બધું હું કરીશ.’  
 આવા અભિપ્રાયને વશવર્તી બનીને તે પ્રાણી તેવા અનર્થોત્પાદક ક્રિયાઓને કર-

યદ્વા-યદન્યૈઃ કૈરપ્યાશ્ચર્યગૃહોદ્યાનાદિકં પૂર્વં ન કૃતં તત્સર્વં કરિષ્યામીતિ મન્ય-  
માનઃ પ્રયતત્ત્વં ઇતિ તાત્પર્યમ્ । સતતં વ્યગ્રો ભૂત્વા નાનાવિધશસ્ત્રોપઘાતપ્રવૃત્તો  
ભવતીતિ ભાવઃ ॥ સૂ૦ ૫ ॥

પ્રવૃત્ત હોતા હૈ । યહ સંસારમેં ફંસા હૈ-સ્ત્રીપુત્રાદિકોં મેં ગૃહ્ બના હુઆ  
હૈ । ઉનકે નિર્વાહ કે લિયે સર્વપ્રથમ દ્રવ્યકી ઇસે જરૂરત્ હોતી હૈ પરન્તુ  
નિર્વાહ લાયક સાધનોંકો કરતે હુઅે ભી મનમાના દ્રવ્ય ઇસે પ્રાપ્ત નહીં  
હોતા હૈ, ઇસલિયે ઉસકી પ્રાપ્તિ કે લિયે યહ ન્યાય અન્યાય માર્ગકા  
વિચાર ન કર યેન કેન પ્રકારેણ દ્રવ્ય કે સંગ્રહકે લિયે હનનાદિ ક્રિયાઓં  
મેં પ્રવૃત્તિ કરતા હૈ ।

અથવા—“ અકૃતં કરિષ્યામિ ” ઇસકા યહ ભી અર્થ હોતા હૈ કિ  
'જો મકાન વગેરહ, અથવા વગીચા વગેરહ હમારે પૂર્વજોંને નહીં કરવાયે  
ઉન્હેં અવ મેં કરવાઝંગા' એસા સોચ કર જબ વહ ઉનકી તૈયારી કરાને  
મેં પ્રયત્નશીલ હોતા હૈ ઉસ સમય જિસ સ્થાન પર ઇસે વગીચા વગેરહ  
કી તૈયારી કરાની હૈ ઉસ સ્થાન કી વહ સફાઈ કરાને મેં પ્રવૃત્તિ હોતા હૈ ।  
યદિ ઉસ સ્થાન પર કોઈ ઝાડી વગેરહ ટૂટી હોતી હૈ તો યહ ઉસે કટ-  
વાતા હૈ, અથવા જો શક્ય હોતા હૈ તો ઉસે સ્વયં ભી કાટતા હૈ । ઇસ  
પ્રકાર યહ પ્રમાદી વ્યક્તિ સ્ત્રીપુત્રાદિકોં મેં ગૃહ્ બનકર અકૃત કે કરને  
મેં લગ જાતા હૈ, અતઃ ઇસ સ્થિતિ મેં વહ ષડ્જીવનિકાય કા ઘાતક  
હોતા હૈ ॥ સૂ૦ ૬ ॥

વામાં પ્રવૃત્ત થાય છે. તે સંસારમાં ફસેલા છે. સ્ત્રી-પુત્રાદિકોમાં ગૃહ્ બનેલા છે.  
તેના નિર્વાહ માટે સર્વ પ્રથમ દ્રવ્યની તેને જરૂરત પડે છે, પરંતુ નિર્વાહલાયક  
સાધનોને કરતાં છતાં પણ મનમાન્યું દ્રવ્ય તેને પ્રાપ્ત થતું નથી માટે તેની  
પ્રાપ્તિ માટે તે ન્યાય અન્યાય માર્ગનો પણ વિચાર ન કરીને યેન કેન પ્રકારેણ  
દ્રવ્યના સંગ્રહ માટે હણવાદિ ક્રિયાઓમાં પ્રવૃત્તિ કરે છે.

અથવા—“ અકૃતં કરિષ્યામિ ” એનો એ પણ અર્થ થાય છે કે—‘જે મકાન  
વિગેરે અથવા બગીચા વિગેરે અમારા પૂર્વજોએ નહિ બનાવ્યા તે હું બનાવીશ’  
એવો વિચાર કરીને ન્યાયે તે તેની તૈયારી કરાવવામાં પ્રયત્નશીલ થાય છે તે  
વખતે જે સ્થાન પર તેને બગીચા વિગેરેની તૈયારી કરાવવાની છે તે સ્થાનની  
તે સફાઈ કરાવવામાં પ્રવૃત્ત થાય છે. કદાચ તેવા સ્થાનપર કોઈ ઝાડી વિગેરે આડું  
બડું હોય તો તેને તે કપાવી નાંખે છે, અથવા જે શક્ય હોય છે તેને પોતે  
કાપે છે. આ પ્રકાર આ પ્રમાદી વ્યક્તિ સ્ત્રી પુત્રાદિકોમાં ગૃહ્ બની અકૃત કરવામાં  
લાગી જાય છે માટે આ સ્થિતિમાં તે ષડ્જીવનિકાયનો ઘાતક થાય છે ॥ સૂ૦ ૫ ॥

एवं हननादि प्रकारानुचितव्यापारकरणोद्यतो द्वीपान्तरगमनेऽपि समग्रकार्य-  
साधनभूतप्रभूतधनालाभाद्विषणवेताः किं करोतीति दर्शयति—“जेहिं वे”—इत्यादि॥

मूलम्—जेहिं वा सद्धिं संवसइ ते वा णं एगया नियगा  
ते पुंविं पोसेंति, सो वा ते नियगे पच्छा पोसिज्जा, नालं ते  
तव ताणाए वा सरणाए वा, तुमं पि तेसिं नालं ताणाए वा  
सरणाए वा ॥ सू० ६ ॥

छाया—यैर्वा सार्द्धं संवसति, ते वा खलु एकदा निजकास्तं पूर्वं पोषयन्ति,  
स वा तान् निजकान् पश्चात्पोषयति नालं ते तव त्राणाय वा शरणाय वा, त्वमपि  
तेषां नालं त्राणाय वा शरणाय वा ॥ सू० ६ ॥

टीका—‘यैर्वेति’ यैः=मातापित्रादिभिः सार्द्धं संवसति=प्रेम्णा निवसति ते खलु=  
निश्चयेन, एकदा=बाल्ये वयसि निजकाः=स्वकीयाः मातापित्रादयः, तं=पुत्रादिकं  
पूर्वं=बाल्यावस्थायां पोषयन्ति, वा=शब्दोऽप्यर्थे स वा=सोऽपि तान्=मातापित्रादीन्,  
निजकान्=आत्मीयान्, पश्चात्=वृद्धावस्थायां धनादिना पोषयति किन्तु ते=माता-  
पित्रादयः तव नालं त्राणाय वा शरणाय वा, त्वमपि तेषां नालं त्राणाय वा शरणाय  
वा, ऐहिक-पारत्रिक-दुःखोदयेषु न कोऽपि पोष्यः पोषको वा कस्यापि त्राण  
शरणभूतो भवतीति भावः ॥ सू० ६ ॥

इस तरह हननादि प्रकारवाले अनुचित व्यापारों के करने में उद्यत  
यह प्राणी धन कमाने की इच्छा से अन्य दूसरे द्वीपों में भी जाता है, परन्तु  
यदि वहां पर भी समग्र कार्यका साधनभूत प्रभूत धन अर्थात् यथेच्छ  
धनका लाभ जब इसे नहीं होता है तब यह अतिशय खेदखिन्न होता है  
और इस परिस्थिति में यह क्या करता है सो प्रकट करते हैं—

‘जेहिं वा सद्धिं संवसइ’ इत्यादि । अर्थ स्पष्ट है ।

આવી રીતે હણવાના પ્રકારવાળા અનુચિત વ્યાપારો કરવામાં પ્રયત્નશીલ  
તે પ્રાણી ધન કમાવાની ઇચ્છાથી બીજા અન્ય દ્વીપોમાં પણ જાય છે, પરંતુ કદાચ  
ત્યાં પણ સમગ્ર કાર્યનું સાધનભૂત પ્રભૂત ધન અર્થાત્ યથેચ્છ ધનનો લાભ ન્યારે  
ત્યાં પણ મળતો નથી તો તે ઘણો ખિન્ન થઈ જાય છે, અને આ પરિસ્થિતિમાં  
તે શું કરે છે તે પ્રકટ કરવામાં આવે છે:—‘ જેહિં વા સદ્ધિ સંવસઈ ’ ઇત્યાદિ  
અર્થ ખુલ્લો છે.



વિશેષાર્થ—જિન માતાપિતા આદિકોં કે સાથ ચહ રહતા હૈં વે इसकी वाल्य अवस्था में सर्वप्रथम सेवा-चाकरी करते हैं, इसकी सहायता करते हैं, इसका पालन पोषण करते हैं। वह भी जब युवावस्था आदि से समृद्ध हो जाता है तब इन अपने मातापिता आदिकी वृद्धावस्था में धन आदि से सहायता, सेवा, या इनका पालन पोषण करता है। इस प्रकार पारस्परिक पोष्यपोषक भाव होने पर भी यह उनकी रक्षा के लिये, अथवा उनको शरण देने के लिये समर्थ नहीं होता है, वे भी इसकी रक्षा के लिये, अथवा इसके शरण देने के लिये समर्थ नहीं होते हैं।

संसार की यह रीति है—प्रत्येक प्राणी अपने २ कुटुम्बियों की—स्त्री पुत्रादिकों की मोहाधीन हो हरतरह से सेवा शुश्रूषा संरक्षण पालन पोषण किया करता है। यह वृत्ति सिर्फ मनुष्यों में ही नहीं है, पशु-पक्षियों तक में भी इसी प्रकार की पाई जाती है। वे भी इष्ट के संयोग में हर्षाते हैं और उनके वियोग में दुःखी होते हैं। जैसे चिड़िया घोसले में रहती है और बच्चाबच्ची देती है, जब बाहर से खाना लेकर आती है तब उसके छोटे २ बच्चे उसे देखते ही चै—चै कर बाहर निकलते हैं और उसके आस पास फुदक २ कर उसकी ओर अपनी २ चंचु खोलकर

विशेषार्थ—જે માતાપિતા આદિની સાથે તે રહે છે તે તેની બાલ્ય અવસ્થામાં સર્વ પ્રથમ સેવા ચાકરી કરે છે તેની સહાયતા કરે છે, તેનું પાલન-પોષણ કરે છે, તે પણ જ્યારે યુવાવસ્થા આદિથી સમૃદ્ધ થઈ જાય છે ત્યારે તે પોતાના માતાપિતા આદિની વૃદ્ધાવસ્થામાં ધન આદિથી સહાયતા, સેવા, અને તેમનું પાલન-પોષણ કરે છે. આ પ્રકારે પારસ્પરિક પોષ્ય-પોષક ભાવ હોવા છતાં પણ તે તેમની રક્ષા માટે કે શરણ દેવામાં સમર્થ થતો નથી, તેમજ તેઓ પણ તેની રક્ષા અને શરણ દેવામાં અસમર્થ બને છે.

સંસારની એ રીતિ છે કે પ્રત્યેક પ્રાણી પોતપોતાના કુટુંબીઓની સ્ત્રી-પુત્રાદિકોની મોહાધીન થઈ દરેક પ્રકારથી સેવા, સુશ્રૂષા, સંરક્ષણ પાલન પોષણ કર્યા કરે છે. આવી વૃત્તિ ફક્ત મનુષ્યોમાં જ છે તેમ નહિ પણ પશુપક્ષીઓમાં પણ છે તેમ દેખવામાં આવે છે. તેઓ પણ ઈષ્ટ સંયોગમાં હર્ષ પામે છે અને તેના વિયોગમાં દુઃખી થાય છે. જેમ ચકલીઓ માળામાં રહે છે અને બચ્ચાં બચ્ચી દે છે, અને જ્યારે બહારથી ખાવાનું લઈ આવે છે ત્યારે તેના નાનાં નાનાં બચ્ચાં તેને દેખતાં જ ચૈ—ચૈ કરી બહાર નીકળે છે અને તેની આસપાસ ફરવા માંડે છે અને તેની તરફ પોતપોતાની ગ્રાંચ ખોલીને બેસી જાય છે. તે પોતાની ગ્રાંચથી



યથા સ્વજનાદિર્ન તવ ત્રાણાય પ્રભવતિ તથૈવ કષ્ટસમ્પાદિતં સુરક્ષિતં ધનમપિ ન ત્રાણાયેતિ દર્શયતિ—“ઉવાઙ્યે”—ત્યાદિ ।

**મૂલમ્**—ઉવાઙ્યસેસેણ વા સંનિહિસંનિચઓ કિજ્જઇ ઇહ-મેગેસિં અસંજયાણ ભોયણાણ, તઓ સે ઇગયા રોગસમુપ્પાયા સમુપ્પજ્જંતિ, જેહિં વા સઙ્ગિં સંવસઇ તે વા ણં ઇગયા નિયગા તં પુવિં પરિહરંતિ, સો વા તે નિયગે પચ્છા પરિહરિજ્ઞા, નાલં તે તવ તાણાણ વા સરણાણ વા, તુમંપિ તેસિં નાલં તાણાણ વા સરણાણ વા ॥ સૂ૦ ૭ ॥

હાયા—ઉપાદિતશેષેણ વા સન્નિધિસંનિચયઃ ક્રિયતે, ઇહૈકેષામસંયતાનાં ભોજનાય, તતસ્તસ્યૈકદા રોગસમુત્પાદાઃ સમુત્પદ્યન્તે, યૈર્વા સાઙ્ગે સંવસતિ તે વા સ્વહુ એકદા નિજકાસ્તં પૂર્વ પરિહરન્તિ, સ વા તાન્ નિજકાન્ પશ્ચાત્પરિહરતિ, નાલં તે તવ ત્રાણાય વા શરણાય વા, ત્વમપિ તેષાં નાલં ત્રાણાય વા શરણાય વા ॥ સૂ૦ ૭ ॥

બેઠ જાતે હૈં । વહ અપની ચંચુ સે ઇનકી ચંચુ મેં કુછ સ્વાના ધર દેતી હૈ, વે સ્વા જાતે હૈં, બડે સુશ હોતે હૈં ।

જવ પશુપક્ષિયોં કી યહ પરિસ્થિતિ હૈ તો ફિર મનુષ્ય જો સમ-હદાર પ્રાણી માના ગયા હૈ ડસકી અપને ઇષ્ટ બંધુ જનોં કે—પુત્રાદિકોં કે પાલન પોષણ કરને કી વૃત્તિ સવસે બઢ કર હો ઇસમેં કોઈ આશ્ચર્ય જૈસી વાત નહીં, કિન્તુ ઇહલોક પરલોક સમ્બન્ધી દુઃખોં કા ઉદય હોને પર નવે તેરે ત્રાણ ઔર શરણ હોતે હૈં ઔર ન તૂં ડનકેલિયે ત્રાણ ઔર શરણ હો સકતા હૈ ॥ સૂ૦ ૬ ॥

તેની આંચમાં કાંઈક આવાનું ધરે છે તે તેઓ ખાઈ જાય છે, અને ઘણું ખુશ થાય છે.

જ્યારે પશુ પક્ષિઓની આ પરિસ્થિતિ છે તો પછી મનુષ્ય તો સમજદાર વ્યક્તિ માનવામાં આવે છે તેને પોતાના ઇષ્ટ બંધુ જનોને, પુત્રાદિકોને પાળવામાં વૃત્તિ બધાથી વધારે હોઈ શકે તેમાં કોઈ આશ્ચર્યની વાત નથી. પરંતુ આલોક પરલોક સંબંધી દુઃખોનો ઉદય થવાથી નથી તું તેમનો ત્રાણ અને શરણ દેવામાં સમર્થ થતો, અને નથી તેઓ તને ત્રાણ અને શરણ દેવામાં સમર્થ થતાં ॥ સૂ૦ ૬ ॥

ટીકા—‘ઉપાદિતે’—ત્યાદિ ઇહ=સંસારે એકેષાં=કતિપયાનામ્, અસંયતાનાં=ગૃહસ્થાનાં સન્નિધિસંનિચયઃ=સન્નિધેર્વિધમાનધનસ્ય સંનિચયઃ=અકત્રીકરણં, યદ્વા-સંનિચયો=બાહુલ્યમ્, ઉપભોગ્યધનસમૂહ इति યાવત્, ઉપાદિતશેષેણ=ઉપાદિતસ્ય=ઉપભુક્તસ્ય શેષેણ=અવશિષ્ટભાગેન ભોજનાય=ભોજનમુપભોગસ્તસ્મે=તદર્થં ક્રિયતે । યદ્વા-અસંયતાના-મિત્યત્રાર્પત્વાત્તૃતીયાર્થે ષષ્ઠી, તેન ચોપાદિતશેષેણ સદ્ગ્રહલિપ્સુભિઃ કૈરપ્યસંયતૈર્નાનાવિધસાવદ્યક્રિયોપાર્જિતમનર્થજનકં ધનં સમ્પાદ્ય ભવિષ્યત્કાલે કુટુમ્બપોષણાય સ્વોપભોગાય વા ક્રિયત इत्यર્થઃ । સંસારમૂર્ચ્છિતો ગૃહસ્થો ભવિષ્યત્કાલે ઉપભોગાર્થં ધનસંચયં કરોતીતિ ભાવઃ । કિન્તુ સોઽપિ ધનસંચયો ન તસ્યોપભોગાયેત્યાહ—‘તતઃ’ इत्यादिना, તતો=ધનસંચયાનન્તરમુપભોગકાલ इति યાવત્, તસ્યોપભોક્તુરેકદા દ્રવ્યક્ષેત્રકાલભાવનિમિત્તપ્રકટવેદનીયકર્મોદયે ‘રોગ-સમુત્પાદાઃ’ રોગાણાં=કાસશ્વાસરાજયક્ષ્મકુષ્ઠાર્શાદીનાં સમુત્પાદાઃ=પ્રાદુર્ભાવાઃ

૧ ઉપપૂર્વકાત્ ‘અદ્’-ઘાતોઃ સ્વાર્થેણિચિત્તઃ ।

જિસ પ્રકાર સ્વજન વગેરહ ઇસ જીવકે રક્ષક નહીં હો સકતે હૈં  
ઉસી પ્રકાર કષ્ટસંપાદિત સુરક્ષિત ધન ભી ઇસકા રક્ષક નહીં હોતા હૈ  
ઇસી વાતં કો સૂત્રકાર કહતે હૈં—

‘ઉવાઙ્મયસેસેણ વા’ इत्यादि । ઇસ સંસાર મેં કિતનેક અસંયત સંસારી જીવ અપને ઉપભોગ કે લિયે નાના પ્રકાર કી સાવદ્ય ક્રિયાઓં દ્વારા અનર્થકારી ધનકા ઉપાર્જન કર રાખને પીને સે અવશિષ્ટ ધનકા સંચય કરતે હૈં ઓર ઉસકા ઉપભોગ કરતે સમય ઇચ્છાનુકૂલ આહાર વિહાર કરતે હૈં, પરન્તુ જબ અસાતા કા ઉદય આતા હૈ તબ ઉનકે શરીર મેં કાસ-શ્વાસ આદિ અનેક પ્રકારકે રોગ ઉત્પન્ન હો જાતે હૈં । ઇસ અવસ્થા મેં ઇસકે નેત્ર ઓર નાસિકા સે પાની ગિરને લગતા હૈ, કુષ્ઠ

જે પ્રકારે સ્વજન વિગેરે આ જીવના રક્ષક નથી બની શકતા તે પ્રકારે કષ્ટસંપાદિત સુરક્ષિત ધન પણ તેનું રક્ષક બનતું નથી. આ વાતને સૂત્રકાર કહે છે—

‘ઉવાઙ્મયસેસેણ વા’ इत्यादि—આ સંસારમાં કેટલાક અસંયત સંસારી જીવ પોતાના ઉપભોગ માટે નાના પ્રકારની સાવદ્ય ક્રિયાઓ દ્વારા અનર્થકારી ધનનું ઉપાર્જન કરી ખાવા-પીવાથી અવશિષ્ટ ધનનો સંચય કરે છે, અને તેનો ઉપભોગ કરી તે સમય ઇચ્છાનુકૂળ આહાર વિહાર કરે છે, પરંતુ બીજા અસાતાનો ઉદય આવે છે ત્યારે તેના શરીરમાં કાસ શ્વાસ આદિ અનેક પ્રકારના રોગ ઉત્પન્ન થાય છે. આ અવસ્થામાં તેના નેત્ર અને નાસિકાથી પાણી નીકળવા લાગે છે.

સમુત્પદ્યન્તે=જાયન્તે, ધનોપભોગે માનવાનાં સ્વેચ્છાહારક્રીડાદિના ઇટિતિ ધાતુ-  
વૈષમ્યોદયાન્નાનાવિધરોગા ભવન્તીતિ ભાવઃ ।

તતઃ કિં ભવતીત્યાહ-‘યૈર્વા સાદ્ધ’-મિત્યાદિ । યૈઃ=પુત્રકલત્રાદિભિઃ સાદ્ધ  
સંવસતિ ત એવ નિજકાઃ=આત્મીયા એકદા=રોગાભિભવે પૂર્વે=પ્રથમં પરસ્પરરોગ-  
સંસર્ગમયાત્ તં ગલન્નેત્રનાસિકં વિશીર્ણપાર્ણિપાદં રોગિણં પરિહરન્તિ । કદાચિત્  
સ વા=સોઽપિ પશ્ચાત્ તાન્ નિજકાન્=આત્મીયાન્ પુત્રકલત્રાદીન્ પરિહરતિ, કિન્તુ યદિ  
કથશ્ચિત્તે શુશ્રૂષણપરા અપિ ન તવ રક્ષકાઃ, નાપિ તેપાં ત્વં રક્ષકઃ, એહિક-પારત્રિક-  
દુઃસ્વવિમોચનાય પરસ્પરં સમર્થા ન ભવન્તીતિ ભાવઃ ॥ સૂ૦ ૭ ॥

યાવદ્વાર્ધક્યાદિકં નાયાતં તાવદેવ શ્રુતચારિત્રાદિલક્ષણે ધર્મે યત્નઃ કર્તવ્ય  
ઇતિ દર્શયતિ-‘ એવં જાણિત્તુ ’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્—એવં જાણિત્તુ દુઃસ્વં પત્તેયં સાયં, અણભિક્રાન્તં ચ સ્વલુ  
વયં સંપેહાણ, સ્વણં જાણાહિ પંડિયા ! ॥ સૂ૦ ૮ ॥

છાયા—એવં જ્ઞાત્વા દુઃસ્વં પ્રત્યેકં સાતમ્, અણભિક્રાન્તં ચ સ્વલુ વયઃ સમ્પ્રેક્ષ્ય  
ક્ષણં જાનીહિ પંડિત ! ॥ સૂ૦ ૮ ॥

આદિ રોગ કે કારણ હાથ પૈર ગલને લગતે હૈં, ઉસ સમય ઇસકે અપને  
કુટુંબી-પુત્ર કલત્રાદિક-ભી ‘ હમકો ભી રોગ ન લગ જાય ’ ઇસ ભય સે  
હસે છોડ દેતે હૈં । અથવા કિસી સમય યહ ભી કિસી કારણવશ ઉન્હૈં  
છોડ દેતા હૈ । યદિ પરસ્પર કોઈ કિસીકો ન ભી છોડે તો ભી એહિક  
ઔર પારત્રિક દુઃસ્વોં સે કોઈ કિસી કી રક્ષા નહીં કર સકતા હૈ ॥ સૂ૦ ૭ ॥

જવ તક વૃદ્ધાવસ્થા વગૈરહ નહીં આઈ હૈ તવ તક શ્રુતચારિત્રરૂપ  
ધર્મ સેવન કરને મેં પ્રયત્ન કરતે રહના ચાહિયે । ઇસી વાતકો સૂત્રકાર  
પ્રદર્શિત કરતે હૈ—

કુળ્લ આદિ રોગના કારણે હાથ પગ ગળવા લાગે છે, તે વખત તેના પોતાના  
કુટુંબી-પુત્રકલત્રાદિક પણ ‘ અમને પણ રોગ ન લાગી નય ’ આ ભયથી તેને  
છોડી દે છે. અથવા કોઈ વખત તે પણ કોઈ કારણવશ તેઓને છોડી દે છે.  
કદાચ પરસ્પર કોઈ કોઈને ન પણ છોડે તો પણ એહિક અને પારત્રિક દુઃખોથી  
કોઈ કોઈની રક્ષા કરી શકતા નથી. ॥ સૂ૦ ૭ ॥

ન્યાં સુધી વૃદ્ધાવસ્થા વિગેરે નથી આવી ત્યાં સુધી શ્રુતચારિત્રરૂપ ધર્મ  
સેવન કરવામાં પ્રયત્ન કરતો રહેવો ભોઈએ, આ વાતને સૂત્રકાર પ્રદર્શિત કરે છે:-

ट्टीका—हे पण्डित !—हे परमार्थज्ञ—मेधाविन् ! एवं=“ केऽपि स्वजनादयस्त्राणाय वा शरणाय वा न भवन्ति ” इति पूर्वोक्तप्रकारेण प्रत्येकं=प्रत्येकप्राणिनः सर्वेषां प्राणिनामित्यर्थः, दुःखं, तथा सातं=सुखं च ज्ञात्वा=‘ स्वकृतशुभाशुभकर्मविपाकानुभवोऽवश्यं भवती ’—तिबुद्ध्वा अनभिक्रान्तम्=अव्यतीतं वयः=शरीरस्य कालकृतावस्थां संप्रेक्ष्य=परिवाददोषवतो वार्द्धक्यस्य, पोषणदोषवतो बाल्यस्य, परिहारदोषवतो रोगस्य च दूरवर्तित्वं यत्रास्ति तादृशं वयः समालोच्य, क्षणम्=अवसरं जानीहि=बुध्यस्व हे पण्डित ! इति सम्बन्धः ।

‘ एवं जाणिन्तु ’ इत्यादि । हे मेधावी !—हे सर्वविरतिसम्पन्न ! हे परमार्थ के जाननेवाले मुनि ! कोई भी स्वजनादिक एक दूसरे को त्राण और शरण के लिए समर्थ नहीं हो सकता है । इसप्रकार पूर्वोक्त रीति से प्रत्येक प्राणी के सुख दुःख को जानकर—अर्थात् अपने किये हुए पुण्य-पाप का फल अवश्य भोगना पड़ता है, ऐसा समझकर तथा अवस्था को भी अनभिक्रान्त देख कर, तथा जब तक रोगादि का उदय नहीं हुआ है—सब इन्द्रियां अपनी २ शक्ति में समर्थ हैं और स्वजनादिकों ने नहीं छोड़ा है अर्थात् जबतक स्वजनादि आदर करते हैं तबतक ही आत्मा का श्रेय साध लेना चाहिये, ऐसी अवस्था को अर्थात् परिवाद-दोषयुक्त वृद्धावस्था, पोषण-दोषवाली बाल्यावस्था और परिहार-दोषवाली रोगावस्था को सोचकर तूं संयमाराधन के अवसरको भली-भाँति जान ।

‘ एवं जाणिन्तु ’ इत्यादि—हे मेधावी !—हे सर्वविरतिसम्पन्न ! हे परमार्थना ज्ञाणुकार मुनि ! कोई પણ स्वजनादिक એક બીજાને ત્રાણ અને શરણ માટે સમર્થ બનતા નથી. આ પ્રકારે પૂર્વોક્ત રીતિથી પ્રત્યેક પ્રાણીના સુખ દુઃખને જાણીને અર્થાત્ ‘ પોતાના કરેલા પાપ પુન્યના ફળ અવશ્ય ભોગવવા પડે છે ’ એવું સમજીને તથા અવસ્થાને પણ અનભિક્રાન્ત દેખીને, તથા જ્યાં સુધી રોગાદિકને ઉદય થયો નથી, બધી ઈન્દ્રિયો પોતપોતાની શક્તિમા સમર્થ છે, અને સ્વજનાદિકે છોડેલ નથી, અર્થાત્ જ્યાંસુધી સ્વજનાદિ આદર કરે છે ત્યાંસુધી આત્માનું શ્રેય સાધી લેવું જોઈએ. એવી અવસ્થાને અર્થાત્ પરિવાદદોષયુક્ત વૃદ્ધાવસ્થા, પોષણ-દોષવાળી બાલ્યાવસ્થા અને પરિહારદોષવાળી રોગાવસ્થાને જાણીને તું સંયમારાધનના અવસરને ભલિભાતિ જાણ

ચાહે સુખી હો ચાહે દુઃખી હો-પ્રત્યેક મનુષ્ય કો અપને કૃત-કિયે હુએ શુભાશુભ કર્મ કે ફલ કા ભોગ અવશ્ય ભોગના પડતા હૈ। યહ નિશ્ચિત સિદ્ધાન્ત હૈ કિ વિના ફલ દિયે કર્મ કમી મી નષ્ટ નહીં હોતે। આત્મા કો જો પૌદ્ગલિક વર્ગણાઈ પરતન્ત્ર કરતી હૈં, ઉનકા નામ હી કર્મ હૈ। ઇસ લોક મેં કજ્જલ કી કુપ્પી કી તરહ સર્વત્ર કાર્મણવર્ગણાઈ મરી હુઈ હૈં-યે પૌદ્ગલિક હૈં। આત્મા કે ક્રોધાદિ કષાયોં કે નિમિત્ત સે ઉનમેં સ્થિતિબન્ધ ઓર અનુભાગબન્ધ રૂપ ફલ દેને કી શક્તિ આતી હૈ। કર્મબન્ધ કી શાસ્ત્રકારોંને ૪ પ્રકાર કી અવસ્થાઈ બતલાઈ હૈં। ૧ પ્રકૃતિ-બન્ધ, ૨ સ્થિતિબન્ધ, ૩ અનુભાગબન્ધ ઓર ૪ પ્રદેશબન્ધ। જ્ઞાનાવરણીયા-દિક અષ્ટવિધ કર્મોં મેં આત્મા કે ઉન ૨ ગુણોં કે ઘાત કરને કી જો શક્તિ હૈ ઉસ કા નામ પ્રકૃતિબન્ધ હૈ। પ્રકૃતિ નામ સ્વભાવ કા હૈ। જિસ પ્રકાર નીમકા સ્વભાવ કડુવા હોતા હૈ ઉસી પ્રકાર જ્ઞાનાવરણીય કર્મ કા સ્વભાવ આત્મા કે જ્ઞાન ગુણ કો ઘાત કરને કા હોતા હૈ, દર્શના-વરણીય કર્મ કા સ્વભાવ આત્મા કે દર્શનગુણ કો ઘાત કરને કા હૈ, વેદ-નીય કર્મકા સ્વભાવ આત્મા કો સુખ ઓર દુઃખ દેનેકા હૈ, મોહનીય કર્મકા સ્વભાવ, આત્માકે સ્વભાવ કો પરપદાર્થોં મેં ગૃહ્થ બનાને કા હૈ,

ભલે સુખી હોય યા દુઃખી પ્રત્યેક મનુષ્યને પોતાના કૃત-કરેલા શુભાશુભ કર્મના ફળને ભોગવવું પડે છે. એ નિશ્ચિત સિદ્ધાન્ત છે કે ફળ આપ્યા વિના કર્મ કોઈ વખત નાશ થતાં નથી.

આત્માને પૌદ્ગલિક વર્ગણા પરતન્ત્ર કરે છે તેનું નામ જ કર્મ છે. આ લોકમાં કાળજની શીશી માફક સર્વત્ર કાર્મણ વર્ગણાઓ ભરેલી છે. એ પૌદ્ગલિક છે. આત્માના ક્રોધાદિ કષાયોના નિમિત્તથી તેમાં સ્થિતિબંધ અને અનુભાગ બંધરૂપ ફળ દેવાની શક્તિ આવે છે. કર્મબંધની શાસ્ત્રકારોએ ૪ પ્રકારની અવસ્થાઓ બતાવેલી છે. ૧ પ્રકૃતિબંધ, ૨ સ્થિતિબંધ, ૩ અનુભાગબંધ, અને ૪ પ્રદેશબંધ. જ્ઞાનાવરણીયાદિક અષ્ટવિધ કર્મોમાં આત્માના તે તે ગુણની ઘાત કરવાની જે શક્તિ છે તેનું નામ પ્રકૃતિબંધ છે. પ્રકૃતિ નામ સ્વભાવનું છે. જેમ લીંબડાનો સ્વભાવ કડવો હોય છે તે પ્રકાર જ્ઞાનાવરણીય કર્મનો સ્વભાવ આત્માના જ્ઞાનગુણનો ઘાત કરવાનું હોય છે. દર્શનાવરણીય કર્મનો સ્વભાવ આત્માના દર્શનગુણનો ઘાત કરવાનો છે. વેદનીય કર્મનો સ્વભાવ આત્માને સુખ અને દુઃખ આપવાનો છે. મોહનીય કર્મનો સ્વભાવ આત્માના સ્વભાવને પરપદાર્થોમાં

આયુ કર્મકા સ્વભાવ નિયત સમય તક જીવકો उस २ પર્યાયમે રોક રાવને કા હૈ, નામ કર્મકા સ્વભાવ ચિત્રકાર કી તરહ શરીરાદિકોં કો અનેક રૂપમે પરિણમાને કા હૈ, ગોત્રકા સ્વભાવ ઝૂંચ નીચ કુલમે પૈદા કરાને કા તથા અન્તરાય કર્મ કા સ્વભાવ આત્મા કે વીર્ય કે ઘાત કરાને કા હૈ । પ્રદેશબંધ વહ હૈ—જિસકી વજહ સે દૂધ ઓર પાની કી તરહ આત્મા ઓર કર્મ કે અનન્તાનન્ત પ્રદેશોં કા ઈકીભાવ જૈસા સંબંધ હો જાતા હૈ । યહ દોનોં પ્રકાર કા બંધ, મન વચન કાય કે યોગોં સે હોતા હૈ । સ્થિતિબંધ—કર્મોં મેં આત્મા કે સાથ રહને કી મર્યાદા કો કહતે હૈં । ફલ દેને કી શક્તિ કી હીનાધિકતા કો અનુભાગબંધ કહતે હૈં । યે સ્થિતિબંધ ઓર અનુભાગબંધ કષાયોં સે હોતે હૈં । કર્મોંકા આત્માકે સાથ બંધ હોતા હૈ, ઈસકા યહ મતલબ નહીં હૈ કિ આત્મા કર્મ હો જાતા હૈ, અથવા કર્મ આત્મા રૂપ હો જાતે હૈં । પ્રત્યેક દ્રવ્યમેં ઈક અગુરુ—લઘુ નામકી શક્તિ રહા કરતી હૈ, જિસકી વજહ સે ઈક દ્રવ્ય દૂસરે દ્રવ્યરૂપ નહીં હો સકતા । ઈસ શક્તિ કે સદ્ભાવ સે પ્રત્યેક દ્રવ્ય અપનેસ્વરૂપ મેં સદા કાયમ વના રહતા હૈ । હર ઈક દ્રવ્ય મેં ઈન છહ ગુણોં કા કિ જિનકો સામાન્ય ગુણ કહતે હૈં સદા નિવાસ રહતા હૈ । (૧) અસ્તિત્વ—ઈસ ગુણ કે નિમિત્ત સે દ્રવ્ય

ગૃહ્ બનાવવાનો છે. આયુકર્મનો સ્વભાવ નિયત સમય સુધી જીવને તે તે પર્યાયમાં રોકી રાખવાનો છે. નામકર્મનો સ્વભાવ ચિત્રકારની માફક શરીરાદિકોને અનેક રૂપમાં પરિણમાવવાનો છે. ગોત્રનો સ્વભાવ ઊંચ નીચ કુળમાં પેદા કરાવવાનો અને અન્તરાય કર્મનો સ્વભાવ આત્માના વીર્યનો ઘાત કરવાનો છે. પ્રદેશબંધ તે જ છે, જેની મારફત દૂધ અને પાણી માફક આત્મા અને કર્મને અનન્તાનન્ત પ્રદેશોનો એકીભાવ જેવો સંબંધ થઈ જાય છે. એ બંને પ્રકારના બંધ મન વચન કાયાના યોગોથી થાય છે. સ્થિતિબંધ—કર્મોમાં આત્માની સાથે રહેવાની મર્યાદાને કહે છે, ક્ષણ દેવાની શક્તિની હીનાધિકતાને અનુભાગબંધ કહે છે. એ સ્થિતિબંધ અને અનુભાગબંધ કષાયોથી થાય છે. કર્મોનો આત્મા સાથે બંધ થાય છે, તેનો એ મતલબ નથી કે આત્મા કર્મ બની જાય છે, અથવા કર્મ આત્મારૂપ બની જાય છે. પ્રત્યેક દ્રવ્યમાં એક અગુરુલઘુ નામની શક્તિ રહ્યા કરે છે, જેની મારફત એક દ્રવ્ય બીજા દ્રવ્યરૂપ બની શકતું નથી. આ શક્તિના સદ્ભાવથી પ્રત્યેક દ્રવ્ય પોતાના સ્વરૂપમાં સદા કાયમ બની રહે છે. દરેક દ્રવ્યમાં આ છ ગુણો કે જેને સામાન્ય ગુણ કહે છે તે સદા નિવાસ કરી રહેલા છે.

૧ અસ્તિત્વ—આ ગુણના નિમિત્તથી દ્રવ્યનો કોઈ વખત નાશ નથી થતો.



કા કમી નાશ નહીં હોતા, (૨) વસ્તુત્વ-ઇસ ગુણ કે નિમિત્ત સે દ્રવ્ય ક્ષણ ૨ મેં કુછ ન કુછ કામ કિયા હી કરતા હૈ । (૩) દ્રવ્યત્વ-ઇસ ગુણ કે નિમિત્ત સે દ્રવ્ય મેં એકસી વ ભિન્ન પ્રકાર કી અવસ્થાએ વદલા કરતી હૈ, (૪) અગુરુલઘુત્વ-ઇસકે નિમિત્ત સે દ્રવ્ય સદા અપની મર્યાદા મેં હી રહતા હૈ-કોઈ મી ઇસકા ગુણ દૂસરે ગુણરૂપ નહીં હો સકતા, કોઈ દૂસરા ગુણ મી ઇસમેં બાહર સે આકર નહીં મિલ સકતા, (૫) પ્રદેશવત્ત્વ-ઇસ ગુણ કે નિમિત્ત સે દ્રવ્યકા કોઈ ન કોઈ આકાર અવશ્ય હોતા હૈ, (૬) પ્રમેયત્વ-ઇસ ગુણ કે નિમિત્ત સે દ્રવ્ય કિસી ન કિસી જ્ઞાનકા વિષય હોતા રહતા હૈ ।

આત્મા ઓર પુદ્ગલ મેં એક એસી વૈભાવિક શક્તિ હૈ કિ જિસસે યે દોનોં અનાદિકાલ સે અન્યોન્યસંપૃક્ત હોને કે કારણ સ્વભાવ સે અન્યથા હોને રૂપ વિભાવ અવસ્થા મેં પડે હુએ હૈ । ઇનકી યહ વિભાવ અવસ્થા અનાદિકાલ કી હૈ-આજ નઈ પૈદા નહીં હુઈ હૈ, ઇસી સે જીવ મેં પુદ્ગલ કે નિમિત્ત સે વિભાવ-અન્યથાભાવ રૂપ પરિણમન ઓર વિભાવ-દશાસંપન્ન જીવ કે નિમિત્ત સે પુદ્ગલ મેં વિભાવ-(કર્મ)-રૂપ પરિણમન હુઆ કરતા હૈ । ઇનકા યહ પરિણમન અનાદિકાલકા હૈ-આજકા નહીં ।

૨ વસ્તુત્વ-આ ગુણના નિમિત્તથી દ્રવ્ય ક્ષણ-ક્ષણમાં કોઈને કોઈ કામ કર્યા જ કરે છે. ૩ દ્રવ્યત્વ-આ ગુણના નિમિત્તથી દ્રવ્યમાં એક અને ભિન્ન પ્રકારની અવસ્થાઓ બદલ્યાં કરે છે. ૪ અગુરુલઘુત્વ-એના નિમિત્તથી દ્રવ્ય સદા પોતાની મર્યાદામાં જ રહે છે, કોઈ પણ તેના ગુણ બીજા ગુણરૂપ બની શકતો નથી, અને બીજા ગુણ પણ તેમાં બહારથી આવી મળી શકતો નથી. ૫ પ્રદેશવત્ત્વ-આ ગુણના નિમિત્તથી દ્રવ્યનો કોઈ ને કોઈ આકાર અવશ્ય થાય છે. ૬ પ્રમેયત્વ-આ ગુણના નિમિત્તથી દ્રવ્ય કોઈ ને કોઈ જ્ઞાનનો વિષય થઈ રહે છે.

આત્મા અને પુદ્ગલમાં એક એવી વૈભાવિક શક્તિ છે કે જેનાથી એ બન્ને અનાદિ કાળથી અન્યોન્ય સંયુક્ત હોવાને કારણે સ્વભાવથી અન્યથા હોવારૂપ વિભાવ અવસ્થામાં પડેલ છે, તેની આ વિભાવ અવસ્થા અનાદિ કાળની છે. આજ નવી પેદા થયેલ નથી.

એનાથી જીવમાં પુદ્ગલના નિમિત્તથી વિભાવ-અન્યથા ભાવરૂપ પરિણમન અને વિભાવદશાસંપન્ન જીવના નિમિત્તથી પુદ્ગલમાં વિભાવ-(કર્મ)-રૂપ પરિણમન થયા કરે છે. તેનું આ પરિણમન અનાદિ કાળનું છે. આજનું નહિ.



પ્રશ્ન—યદિ આત્મા પહેલે શુદ્ધ થા એસા માન લિયા જાવે તો કયા હાનિ હૈ ?

ઉત્તર—બડી ભારી હાનિ હૈ । ઇસ પ્રકાર કી માન્યતા મેં કર્મ કે સંબંધ કે પહેલે આત્મા શુદ્ધ ઠહરેગા, ઓર ફિર ઉસકો કર્મકા સંબંધ માનને સે સિદ્ધાત્માઓં કો ભી કર્મ કા સંબંધ માનના પડેગા । એસા તો હૈ નહીં—શુદ્ધ મેં અશુદ્ધતા આ સકતી નહીં । સિદ્ધ અવસ્થા શુદ્ધ અવસ્થા હૈ । અશુદ્ધ સે શુદ્ધ હોતા હૈ, ઇસીલિયે બન્ધ સે હી મોક્ષ કહા ગયા હૈ ।

પ્રશ્ન—કર્મ કે ફલ દેને કી કોઈ વિશેષ વિધિ હૈ ?

ઉત્તર—હાં, હૈ । જબ કર્મ બંધતે હૈં તબ ઉનકે પકને કે લિયે કુછ કાલ ચાહિયે, બાંધે હુએ કર્મ ઉસી સમય ઉદયમેં નહીં આને લગતે । ઇનકા હિસાબ તો खेतમેં પડે હુએ बीज की तरह હૈ । જિસ પ્રકાર खेत में बोया गया बीज कुछ काल के बाद ही पकता है ठीक इसी प्रकार बांधे हुए कर्म को पकने में भी समय लगता है । ઇસ સમયકા નામ અવાધાકાલ હૈ । ઇસ અવાધાકાલ કા યહ હિસાબ હૈ કિ—એક કોડા-કોડી સાગર કી સ્થિતિવાલે કર્મ મેં ઉસકા અવાધાકાલ ૧૦૦ વર્ષ કા પડતા હૈ, સત્તર ૭૦ કોડાકોડી સાગર કી સ્થિતિવાલે મોહકર્મ મેં ૭૦૦૦ વર્ષકા

પ્રશ્ન—કદાચ આત્મા પહેલાં શુદ્ધ હતો તેમ માની લેવામાં આવે તો શું હરકત છે ?

ઉત્તર—ઘણી ભારી હાનિ છે. આ પ્રકારની માન્યતામાં કર્મના સંબંધના પહેલા આત્માને શુદ્ધ માનવું પડશે. અને પછી તેને કર્મનો સંબંધ માનવાથી સિદ્ધાત્માઓને પણ કર્મનો સંબંધ માનવો પડશે. એવું તો છે નહિ. શુદ્ધમાં અશુદ્ધતા આવી શકતી નથી. સિદ્ધ અવસ્થા શુદ્ધ અવસ્થા છે. અશુદ્ધથી શુદ્ધ છે. માટે બંધથી જ મોક્ષ કહેવાય છે.

પ્રશ્ન—કર્મના ફળ દેવાની બીજી કોઈ વિશેષ વિધિ છે ?

ઉત્તર—હા. છે. જ્યારે કર્મ બંધાય છે ત્યારે તેને પાકવા માટે થોડો વખત જોઈએ, બાંધેલા કર્મ તે વખત ઉદયમાં આવવા લાગતા નથી તેનો હિસાબ તો ખેતરમાં પડેલા બી માફક છે. જે પ્રકારે ખેતરમાં વાવેલા બી થોડા વખત પછી પાકે છે તે પ્રકારે બાંધેલા કર્મને પાકવામાં પણ થોડો વખત લાગે છે. તે સમયનું નામ અબાધાકાલ છે. આ અબાધાકાલનો એ હિસાબ છે કે એક કોડાકોડી સાગરની સ્થિતિવાળા કર્મમાં તેની અબાધા ૧૦૦ વર્ષની પડે છે ૭૦ કોડાકોડી સાગરની સ્થિતિવાળા મોહકર્મમાં ૭૦૦૦ વર્ષનો અબાધાકાળ

અવાધાકાલ પડતા હૈ। ઇસ હિસાબસે કરોડ સાગર કી સ્થિતિવાલે કર્મકા અવાધાકાલ અન્તર્મુહૂર્ત માત્ર હી પડેગા, ઇસસે યહ બાત જાની જાતી હૈ કિ-જિતને કમ સ્થિતિ કે કર્મ બંધેંગે, વે જલ્દી ફલ દેને કો તૈયાર હો જાવેંગે, ઓર યહી વજહ હૈ કિ ઇસી ભવમેં બાંધે હુએ કર્મ જીવ કો ઇસી ભવમેં ઉદય આ જાતે હૈ।

પ્રશ્ન—બાંધે હુએ કર્મકા વૈસા હી ફલ મિલતા હૈ? યા ઉસ મેં કુછ પરિવર્તન બી હો સકતા હૈ?।

ઉત્તર—જીવોં કે પરિણામોં કે નિમિત્ત સે ફલોપભોગ મેં પરિવર્તન બી હો જાતા હૈ। ઉસ પરિવર્તન કો-ઉત્કર્ષણ, અપકર્ષણ, સંક્રમણ, ઓર ઉદીરણા કહતે હૈ। બાંધે હુએ કર્મોં કી સ્થિતિ યા ઉનકે અનુભાગ મેં જીવોં કે ભાવોં કે નિમિત્ત સે જો વૃદ્ધિ હો જાતી હૈ ઉસે ઉત્કર્ષણ કહતે હૈ। પહિલે બાંધે હુએ કર્મોં કી સ્થિતિ વ અનુભાગ મેં જીવોં કે ભાવોં કે નિમિત્ત સે જો ઘટતી હોતી હૈ ઉસે અપકર્ષણ કહતે હૈ। જીવોં કે ભાવોં કે નિમિત્ત સે પાપ કા પુણ્ય મેં યા પુણ્ય કા પાપ મેં જો પરિવર્તન-બદલના હોતા હૈ ઉસકા નામ સંક્રમણ હૈ। કિન્હીં કર્મોં કો કિસી નિમિત્ત કે વશ અપની ટીક સ્થિતિ કે પહિલે ઉદયમેં લાકર રખા દેનેકા નામ ઉદીરણા હૈ।

પડે છે આ હિસાબથી કરોડ સાગરની સ્થિતિવાળા કર્મનો અવાધાકાળ અન્તર્મુહૂર્ત માત્ર જ પડે છે. આથી તે વાત જણાય છે કે જેટલો થોડો સ્થિતિનો કર્મ બંધાશે તેટલો જલ્દી ફળ દેવાને તૈયાર થઈ જશે, અને એજ કારણથી આ ભવમાં બાંધેલા કર્મ જીવને આ ભવમાં ઉદય આવે છે.

પ્રશ્ન—બાંધેલા કર્મનું તેવું જ ફળ મળે છે અગર તેમાં કાંઈ પરિવર્તન પણ થાય છે?।

ઉત્તર—જીવોના પરિણામોના નિમિત્તથી ફલોપભોગમાં પરિવર્તન પણ થઈ જાય છે, આ પરિવર્તનને-ઉત્કર્ષણ, અપકર્ષણ, સંક્રમણ, અને ઉદીરણા કહે છે. બાંધેલા કર્મોની સ્થિતિ અગર તેના અનુભાગમાં જીવોના ભાવોના નિમિત્તથી જે વૃદ્ધિ થાય છે તેને ઉત્કર્ષણ કહે છે. પહેલાં બાંધેલા કર્મોની સ્થિતિ અને અનુભાગમાં જીવોના ભાવોના નિમિત્તથી જે ઘટતી થાય તેને અપકર્ષણ કહે છે. જીવોના ભાવોના નિમિત્તથી પાપનો પુણ્યમાં, અને પુણ્યનો પાપમાં જે પરિવર્તન થાય છે, તેનું નામ સંક્રમણ છે. કોઈ કર્મને કોઈ નિમિત્તના કારણથી ચોતાની ઠીક સ્થિતિના પહેલાં ઉદયમાં લાવીને જે ખપાવી નાંખે છે તેનું નામ ઉદીરણા છે.

इन कर्मों की उत्तर प्रकृतियां कितनी हैं ? और उनका क्या स्वरूप है ? तथा देशघाति और सर्वघाति, पुण्यरूप और पापरूप प्रकृतियां कितनी और कौन २ हैं ? तथा देशघाति प्रकृतियों में सर्वघाति स्पर्द्धक कितने हैं ? इत्यादि समस्त बातोंका विचार शास्त्रों में अच्छी तरह किया गया है । इस प्रकार कर्मों का संक्षेप में स्वरूप समझ कर यह प्रकट किया है कि इसी कर्म के निमित्त से आत्मा इस संसार में भटकता और अनेक दुःखों को सहन करता रहता है । कर्म आत्मा को संसार में भ्रमता है । आत्मा भी स्वयं इनका निमित्त पाकर संसार में भ्रमता रहता है । कर्मों से दुःखी होनेवाले जीव ही संसारी हैं । वे सदा इस संसार में इसी की वजह से भ्रमण किया करते हैं । इस के इस परिभ्रमण को देख कर ज्ञानीजन इसे संबोधन करते हुए कहते हैं कि—

“ आघ्रातं मरणेन जन्म जरया विद्युच्चलं यौवनं,  
सन्तोषो धनलिप्सया शमसुखं भोगाशया देहिनाम् ।  
लोकैर्मत्सरिभिर्गुणा वनभुवो व्यालैर्नृपा दुर्जनै,—  
रस्थैर्येण विभूतिरप्यपहृता ग्रस्तं न किं केन वा ?” ॥१॥

આ કર્મોની ઉત્તર પ્રકૃતિઓ કેટલી છે ? અને તેનું શું સ્વરૂપ છે ? તથા દેશ-  
ઘાતિ અને સર્વઘાતિ પુણ્યરૂપ અને પાપરૂપ પ્રકૃતિઓ કેટલી અને કઈ કઈ છે ?  
તથા દેશઘાતિ પ્રકૃતિઓમાં સર્વઘાતિસ્પર્દ્ધક કેટલાં છે ? ઇત્યાદિ સમસ્ત વાતોનો  
વિચાર શાસ્ત્રોમાં સારી રીતે કરવામાં આવેલ છે. આ પ્રકાર કર્મોનો સંક્ષેપમાં  
સ્વરૂપ સમજીને એવું પ્રગટ કરેલ છે કે આ કર્મના નિમિત્તથી આત્મા આ  
સંસારમાં ભટકતો અને અનેક દુઃખોને સહન કરતો રહે છે. કર્મ આત્માને  
સંસારમાં ભ્રમાવે છે. આત્મા પણ સ્વયં તેનો નિમિત્ત બનીને સંસારમાં ભ્રમતો  
રહે છે. કર્મથી દુઃખી થવાવાળા જીવ સંસારી છે. તે સદા આ સંસારમાં એજ  
કારણથી ભ્રમણ કર્યા કરે છે. તેના આ પરિભ્રમણને દેખીને જ્ઞાની જન તેને  
સંબોધન કરીને કહે છે કે:—

“ આઘ્રાતં મરણેન જન્મ જરયા વિદ્યુચ્ચલં યૌવન,  
સન્તોષો ધનલિપ્સયા શમસુખં ભોગાશયા દેહિનામ્ ।  
લોકૈર્મત્સરિભિર્ગુણા વનભુવો વ્યાલૈર્નૃપા દુર્જનૈ,—  
રસ્થૈર્યેણ વિભૂતિરપ્યપહૃતા ગ્રસ્તં ન કિં કેન વા ?” ॥૧॥

હે સંસાર કે જીવોં ! કહો દુનિયામેં એસી કૌનસી વસ્તુ હૈ જો નિર્ભય હો । દેખો-મૃત્યુને જન્મકો, વૃદ્ધાપે ને વિજલી કે સમાન ચંચલ યુવાવસ્થા કો, ધન કી તૃષ્ણા ને સંતોષ કો, ભોગોં કી આશા ને માનસિક શાંતિ કો, મત્સર-ભાવવાલે દુર્જનોં ને ગુણોં કો, સર્પ ઓર હિંસકોં ને જંગલી જાનવરોં કો, દુષ્ટોં ને રાજાઓં કો ઓર અસ્થિરતા ને ऐश्वर्य કો અચ્છીત કર રખા હૈ । એક કો એકા અચ લગા હુઆ હૈ । એકસે એક પ્રસિત હૈ, ફિર હસમેં શાંતિ કી ભાવના રખના માનોં કૂપ કે કિનારે પર બેઠ કર નિર્ભયતાકે સાથ ઝંઘના જૈસા હૈ । હસી લિયે તો જ્ઞાની પદ પદ પર સંબોધિત કર કહતે રહતે હૈં કિ-અરે ભવ્ય !

“ तत्त्वं चिन्तय सततं चित्ते, परिहर चिन्तां नश्वरचित्ते ”

સદા તું સારાસાર કા વિચાર કરતા રહ । ક્યોં નાશવાન ધનાદિક કી ચિન્તા સે વ્યર્થ હી અપને કો વ્યાકુલ કિયા કરતા હૈ ? , ક્યા તુજે પતા નહીં કિ જિસ પ્રકાર માંસકે ઉપર ગીધ મંડરાયા-ઘૂમા-કરતે હૈં ઉસી પ્રકાર તુજે खाने કે લિયે यह काल तेरे शिर पर मंडरा-घूम-रहा हॆ । લોગોં કો તૂ મરતે હુए नित्य देखता है, प्रत्येक दिवस वृद्धों को असह्य कष्ट की यातनाओं से पीडित निहारता है और संसार को भी

હે સંસારી જીવો ! કહો દુનિયામાં એવી કઈ વસ્તુ છે કે જે નિર્ભય છે. દેખો મૃત્યુનો જન્મને, ઘડપણનો વિજળી સમાન ચંચળ યુવાવસ્થાને, ધનની તૃષ્ણાને સંતોષને, ભોગની આશાનો માનસિક શાંતિને, મત્સરભાવવાળા દુર્જનોનો ગુણોને, સર્પો અને હિંસકોનો જંગલી જનાવરોને, દુષ્ટોનો રાજાઓને, અને અસ્થિરતાનો ऐश्वर्यને મહાભય છે. એકને એકનો ભય લાગેલો છે. એકથી એક પ્રસિત છે, પછી તેમાં શાંતિની ભાવના રાખવી કુવાના કિનારા ઉપર એસીને નિર્ભયતાની સાથે ઉંઘ લેવા બરાબર છે. માટે તો જ્ઞાની પદે પદે સંબોધિત કરી કરીને કહેતાં રહે છે કે અરે ભવ્ય !

“ तत्त्वं चिन्तय सततं चित्ते, परिहर चिन्तां नश्वरचित्ते ”

સદા તું સારાસારનો વિચાર કરતો રહે, કારણ કે નાશ થનારા ધનાદિકની ચિન્તાથી વ્યર્થ પોતાની જાતને વ્યાકુલ બનાવીશ નહિ. શું તને બબર નથી કે જેવી રીતે માંસ ઉપર ગીધ અવારનવાર ઘૂમ્યા કરે છે તે પ્રકારે તને ખાવા માટે કાલ તારા શિર ઉપર ઘૂમી રહ્યો છે. લોકોને મરતા તું નિત્ય જુવે છે. પ્રત્યેક દિવસ વૃદ્ધોને અસહ્ય કષ્ટની યાતનાઓથી પીડિત લાગે છે, અને સંસારીજીવોને પણ તરેહ તરેહના ભયોથી ઘેરાયેલાં અને નાના પ્રકારના સંકટોને સહન કરતાં

तरह २ के भयों से घिरा हुआ एवं नाना प्रकार के संकटों को झेलता हुआ तू स्वयं अपनी आंखों से देखता है, फिर भी तू विषय रूप चारे के लोभ से ममता के कांटे में फँस कर अपना नाश कर रहा है। मछली और बन्दर की तरह बन्धन में फँसता हुआ भी वहाँ से नहीं निकलना चाहता। क्या तुझे नहीं मालूम कि तेरी भी एक दिन यही दशा होने-वाली है, अतः यही अवसर कल्याण करने का है। कहा भी है—

“यावत्स्वस्थमिदं कलेवरगृहं यावच्च दूरे जरा,  
यावच्चेन्द्रियशक्तिरप्रतिहता यावत्क्षयो नायुषः ।  
आत्मश्रेयसि तावदेव विदुषा कार्यः प्रयत्नो महान्,  
प्रोदीप्ते भवने तु कूपखननं प्रत्युद्यमः कीदृशः ?” ॥ १ ॥

हे भव्य ! जब तक तेरा यह शरीर ठीक हालत में है, इसमें कोई भी रोग ने निवास नहीं किया है, जब तक बुढ़ापा दूर है, जब तक इन्द्रियों की शक्ति बनी हुई है, जब तक आयु के दिन बाँकी हैं, तब तक तू आत्म-कल्याण करने की चेष्टा अच्छी तरह करता रह। घर जलने पर कूप खोदने से क्या लाभ ? ॥१॥

इन पूर्वोक्त बातों को ध्यानमें रखते हुए सूत्रकार कहते हैं—‘एवं जाणित्तु’ इत्यादि। ‘हे पण्डित !’ इस शब्द के अर्थ का टीकाकार—

तुं स्वयं पोतानी आंખોથી દેખે છે, છતાં તું વિષયના લોભથી મમતાના કાંટામાં ફસી પોતાનો નાશ કરી રહ્યો છે. માછલી અને વાંદરાની માફક તું બંધનમાં ફસેલો પણ ત્યાંથી બહાર નીકળવા ચાહતો નથી. શું તને ખબર નથી કે તારી પણ એક દિવસ આ દશા થવાની છે. માટે એજ અવસર કલ્યાણ કરવાનો છે. કહ્યું પણ છે—

“यावत्स्वस्थमिदं कलेवरगृहं यावच्च दूरे जरा,  
यावच्चेन्द्रियशक्तिरप्रतिहता यावत्क्षयो नायुषः ।  
आत्मश्रेयसि तावदेव विदुषा कार्यः प्रयत्नो महान्,  
प्रोदीप्ते भवने च कूपखननं प्रत्युद्यमः कीदृशः ?” ॥ १ ॥

હે ભવ્ય ! ન્યાં સુધી આ તારું સરીર સારી હાલતમાં છે, તેમાં કોઈ પણ રોગે નિવાસ નથી કર્યો, ન્યાં સુધી ઘડયણ દૂર છે, ન્યાં સુધી ઈન્દ્રિયોની શક્તિ બની રહી છે, ન્યાં સુધી આયુના દિવસો બાકી છે, ત્યાં સુધી તું આત્મ-કલ્યાણ કરવાની ચેષ્ટા સારી રીતે કરતો રહે. ઘર બળવા લાગે ત્યારે કુવો ખોદવાનો શું અર્થ ? ॥ ૧ ॥

આ પૂર્વોક્ત વાતોને ધ્યાનમાં રાખીને સૂત્રકાર કહે છે—“एवं जाणित्तु” इत्यादि. ‘हे पंडित !’ આ શબ્દના અર્થનું ટીકાકાર—હે મેધાવી !, હે સર્વવિરતિસંપન્ન !,

હે મેધાવી ! હે સર્વવિરતિસંપન્ન ! હે પરમાર્થજ્ઞ ! इन तीन पदों से विवेचन करते हैं। सार और असारतत्त्व का विवेचन करनेवाली बुद्धि का नाम मेधा-प्रज्ञा है। इसके बलपर ही प्राणी 'उपादेय क्या वस्तु है? हेय क्या है?' इस बात का विचार कर सकता है। इस पवित्र विचारधारा से उसकी आत्मामें भेदविज्ञान जागृत होता है। इससे वह यह भली भांति जान लेता है कि "एगो हं नत्थि मे कोई" "मैं स्वतंत्र एक हूं, मेरा इस संसार में कोई नहीं है। इन पर-पदार्थों का केवल मेरे साथ संयोग संबंध है, तादात्म्य संबंधवाले ज्ञानादिगुण मेरी आत्मा के साथ सदा रहनेवाले हैं। इन संयोगी पदार्थों का नियम से वियोग होगा, जिनका तादात्म्य संबंध है, वे तो इस आत्मा से त्रिकाल में भी दूर नहीं हो सकते। जो अपना निज गुण है वही हमें उपादेय है, बाकी हेय हैं" इस प्रकार की विशुद्ध भावना से उसकी आत्मा में उन पदार्थों से वैराग्यवृत्ति उत्पन्न होती है, इस वैराग्यवृत्ति से आत्मा में कोई अपूर्व वीर्योल्लास पैदा होता है, इसकी वजह से आत्मा से अनंतानुबंधी चोकड़ी का और दर्शनमोहनीय की प्रकृतियों का क्षय, क्षयोपशम या उपशम होता है। इसी परिस्थिति में इसे उपशम क्षयोपशम या क्षायिक समकित पैदा हो जाता है। अभी आत्मा में चारित्रमोहनीय कर्म की सत्ता मौजूद है,

હે પરમાર્થજ્ઞ !, આ ત્રણ પદોથી વિવેચન કરે છે—સાર અને અસાર તત્ત્વનું વિવેચન કરવાવાળી બુદ્ધિનું નામ મેધા-પ્રજ્ઞા છે. તેના બળ ઉપર હે પ્રાણી 'ઉપાદેય શું વસ્તુ છે. હેય શું છે' આ વાતનો વિચાર કરી શકે છે. આવી પવિત્ર વિચારધારાથી તેના આત્મામાં ભેદવિજ્ઞાન જાગૃત થાય છે, તેથી તે આ સારી રીતે જાણી લે છે કે—“એગો હ નત્થિ મે કોઈ” “હું એકલો છું. માફ આ સંસારમાં કોઈ નથી. આ પર પદાર્થોનો કેવલ મારા આત્માની સાથે સંયોગ સંબંધ છે. તાદાત્મ્ય સંબંધવાળા જ્ઞાનાદિગુણ મારી આત્માની સાથે સદા રહેવાવાળા છે. આ સંયોગી પદાર્થોનું નિયમથી વિયોગ થશે, જેનો તાદાત્મ્ય સંબંધ છે તેઓ તો આ આત્માથી ત્રિકાળમાં પણ દૂર થઈ શકતા નથી. જે પોતાનો નિજગુણ છે તે અમને ઉપાદેય છે, બાકી હેય છે” આવા પ્રકારની વિશુદ્ધ ભાવનાથી તેના આત્મામાં તે પદાર્થોથી વૈરાગ્યવૃત્તિ ઉત્પન્ન થાય છે. તે વૈરાગ્ય વૃત્તિથી આત્મામાં કોઈ અપૂર્વ વીર્યોલ્લાસ પેદા થાય છે. તેની મારફતે આત્માથી અનંતાનુબંધી ચોકડીનો અને દર્શનમોહનીયની પ્રકૃતિઓનો ક્ષય, ક્ષયોપશમ, અગર ઉપશમ થાય છે. આવી પરિસ્થિતિમાં તેને ઉપશમ, ક્ષયોપશમ, અને ક્ષાયિક સમકિત પેદા થાય છે. હવે આત્મામાં ચારિત્રમોહનીય કર્મની સત્તા મોટુંદ છે,



इससे इसे देशविरति या सर्वविरति की प्राप्ति नहीं हुई है, परन्तु समकित की प्राप्ति होने के बाद ज्यों ही यह आगे बढ़नेका प्रयास करता है त्यों ही इसको या तो देशविरति होती है या सर्वविरति। देशविरति से मुक्ति नहीं, अतः जब यह अपने पुरुषार्थ की दिशाको आगे बढ़ाता है तब सर्वविरति के लाभ से यह अपने को पवित्र करता है और वास्तविक तप संयम का आराधक बन जाता है, अतएव परमार्थज्ञ-परम=उत्कृष्ट जो अर्थ=आत्मा का स्वरूप, उसका ज्ञ=ज्ञाता हो जाता है। देशविरति में आत्मा प्राणातिपातादिक पांच आस्रवोंका एक देशसे त्यागी होता है और सर्व विरतिमें उनका सर्व प्रकार से त्याग हो जाता है। वहां समस्त जीवों पर समताभाव रहता है। आत्माका निजस्वरूप जो ज्ञाता-द्रष्टापना है वह इस तपसंयमकी अवस्था में प्रकट हो जाता है।

सूत्रमें—“दुःखं पक्षेयं सायं” जो पद है वह इस बातकी पुष्टि करता है—यह दुःख और सुख, पाप और पुण्य से होते हैं, अतः “संसार के समस्त प्राणियों को रोगादिक वेदना आदि के समय अपने द्वारा किये गये कर्मका विपाक अवश्य भोगना पड़ता है” ऐसा समझकर हे भव्य ! जब तक अपने शरीरमें रोगादिकों का उदय नहीं होता, और जब तक सचेष्टता बनी हुई है, तथा जब तक स्वजन संबंधी अपने से

તેનાથી તેને દેશવિરતિ અને સર્વવિરતિ પણ પ્રાપ્ત થયેલ નથી. પરંતુ સમકિતની પ્રાપ્તિ થયા બાદ જ્યારે તે આગળ વધવાનો પ્રયાસ કરે છે ત્યારે તેને દેશવિરતિ થાય છે, અથવા સર્વવિરતિ. દેશવિરતિથી મુક્તિ નહિ માટે જ્યારે એ પોતાના પુરુષાર્થની દિશાને આગળ વધારે છે, ત્યારે સર્વવિરતિના લાભથી તે પોતાને પવિત્ર કરે છે, અને વાસ્તવિક તપ સંયમનો આરાધક બની જાય છે, એટલે પરમર્થજ્ઞ-પરમ=ઉત્કૃષ્ટ જે અર્થ=આત્માનું સ્વરૂપ તેનો જ્ઞ=જ્ઞાતા થાય છે. દેશવિરતિમાં આત્મા પ્રાણાતિપાતાદિક પાંચ આશ્રવોનો એક દેશથી ત્યાગી થાય છે અને સર્વવિરતિમાં તેનો સર્વ પ્રકારથી ત્યાગ થઈ જાય છે. ત્યાં સમસ્ત જીવો ઉપર સમતાભાવ રહે છે. આત્માનું નિજ સ્વરૂપ જે જ્ઞાતા-દ્રષ્ટાપન છે તે આ તપ સંયમની અવસ્થામાં પ્રગટ થઈ જાય છે.

સૂત્રમાં “દુઃખં પક્ષેયં સાયં” જે પદ છે તે આ વાતની પુષ્ટિ કરે છે—તે દુઃખ અને સુખ પાપ અને પુણ્યથી થાય છે, માટે “સંસારના સમસ્ત પ્રાણીઓને રોગાદિક વેદના આદિના સમયે પોતાનાથી કરેલા કર્મનો વિપાક અવશ્ય ભોગવવો પડે છે.” એવું સમજીને હે ભવ્ય ! જ્યાં સુધી પોતાના શરીરમાં રોગાદિકનો ઉદય નથી થતો, અને જ્યાં સુધી સચેષ્ટતા બનેલ છે, અને જ્યાં સુધી



વિરક્ત નહીં હોતે તબ તક આત્મકલ્યાણ કરને મેં અગ્રસર હો જા, ઔર  
 હસ સંયમારાધનરૂપ પવિત્ર કાર્યકો ન છોડ । ક્યોં કિ-

“હાથ પાંવમેં જબ તક બલ હૈ, આંચોં મેં હૈ તેજ પ્રકાશ,  
 શ્રવણશક્તિ હૈ, બુદ્ધિ ઉપસ્થિત, રોગાદિક કા હુઆ ન ત્રાસ ।  
 ધર્મ આચરણ કરલે પ્રાણી, ધરકર મન મેં ઉત્તમ સાજ,  
 કો જાને કલ રહા ન કલ તો, ક્યોં જાને દેતે હો આજ ॥ ૧ ॥ ”

“અનભિક્રાન્તં ચ વયઃ સમ્પ્રેક્ષ્ય ”

સમય સમય આયુ ઘટતી હૈ, ક્ષણ ક્ષણ કાયાક્ષીણ હોતી હૈ । જિસ  
 પ્રકાર મિટ્ટીકા ઢેલા મીજતે હી ગલ જાતા હૈ, ઉસી તરહ દેખતે ૨ યહ  
 શરીર ગલ જાતા હૈ, હસલિયે તું અપને આત્મ-કલ્યાણ કી તરફ પ્રવૃત્તિ  
 કર । ક્યોં કિ વય કે વ્યતીત હોને પર પરિવાદ, પોષણ ઔર પરિહાર  
 આદિક દોષ ઉત્પન્ન હો જાતે હૈ । હસ લિયે ઉસ હાલત મેં સંયમકા પાલન  
 અશક્ય હોતા હૈ । હસ લિયે સૂત્રકાર કહતે હૈ કિ-જબ તક સંયમ ધારણ  
 કરને યોગ્ય અવસ્થા વ્યતીત નહીં હુઈ હૈ તબ તક ધર્માચરણ રૂપ અવસર  
 કો હાથસે મત જાને દો, અર્થાત્ યહી અવસ્થા હૈ જિસમેં પ્રાણી ધર્માચરણ  
 કર સકતા હૈ । સૂત્ર મેં ‘ચ’ શબ્દ અર્થાન્તર કા બોધક હૈ હસ સે યહ

સ્વજન સંબંધી પોતાનાથી વિરક્ત નથી થતાં ત્યાં સુધી આત્મકલ્યાણ કરવામાં  
 અગ્રસર બની બા, અને આ સંયમારાધન રૂપ પવિત્ર કાર્યને ન છોડ, કારણ કે-

“હાથ પાંવમેં જબ તક બલ હૈ, આંચોમેં હૈ તેજપ્રકાશ,  
 શ્રવણશક્તિ હૈ, બુદ્ધિ ઉપસ્થિત, રોગાદિકકા હુઆ ન ત્રાસ ।  
 ધર્મ આચરણ કર લે પ્રાણી, ધરકર મનમેં ઉત્તમ સાજ,  
 કો જાને કલ રહા ન કલ તો, ક્યોં જાને દેતે હો આજ ॥ ૧ ॥ ”

“અનભિક્રાન્તં ચ વયઃ સમ્પ્રેક્ષ્ય ”

સમય સમય આયુ ઘટે છે, ક્ષણે ક્ષણે કાયા ક્ષીણ થાય છે. જેમ માટીનું  
 ઢેકું પાણી લાગતાં જ ગળી બાય છે તેમ દેખતાં દેખતાંમાં આ શરીર ગળી  
 બાય છે, માટે તું પોતાના આત્મકલ્યાણ તરફ પ્રવૃત્તિ કર. કારણ કે વયના  
 વ્યતીત થવાથી પરિવાદ, પોષણ અને પરિહાર આદિક દોષ ઉત્પન્ન થાય છે,  
 તેથી તેવી હાલતમાં સંયમનું પાલન થવું અશક્ય છે, માટે સૂત્રકાર કહે છે કે-  
 જ્યાં સુધી સંયમ ધારણ કરવાની યોગ્ય અવસ્થા વ્યતીત થઈ નથી ત્યાં સુધી  
 ધર્માચરણરૂપ અવસરને હાથથી જવા દો નહિ. અર્થાત્ આજ અવસ્થા છે  
 જેમાં ધર્માચરણ પ્રાણી કરી શકે છે. સૂત્રમાં ‘ચ’ શબ્દ અર્થાન્તરનો બોધક છે

યદ્વા-અવસીદતો વિનેયસ્યોત્સાહવર્ધનપરમિદં વાક્યમ્-હે પण्डित ! सम्प्रति त्वमनतिक्रान्तवया असि, अथ च परिवादादिदोषत्रयरहितोऽसि तावदेव संयमाय यतस्वेत्यर्थः, अत्रेदशक्षणाभिज्ञत्वेन पण्डित ! इति सम्बोधनं सङ्गच्छते ।

પ્રતીત હોતા હૈ કિ પૂર્વોક્ત પરિવાદાદિ ૩ દોષોં મેં સે કિસી ઇક મી દોષ સે જો અસ્પૃષ્ટ-રહિત હૈ ઓર અવસ્થા મી ધર્માચરણ કરને કી જિસકી નિકલ ગઈ હૈ, પરન્તુ યદિ વહ દૃઢસંહનન વાલા હૈ તો મી પ્રવ્રજ્યા-ભાગવતી દીક્ષા કે યોગ્ય હૈ । જિસ પ્રકાર ભગવાન્ કે માતા પિતાને-દેવા-નન્દા ઓર ઋષભદત્તને અપની વૃદ્ધાવસ્થામેં દીક્ષા ધારણ કી થી ।

અથવા-“અનભિક્રાન્તં ચ खलु वयः संप्रेक्ष्य क्षणं जानीहि पण्डित !”  
 यह वाक्य संयम में सीदाते हुए शिष्यजनों में जो निरुत्साहित हो रहे हैं उनका उत्साह बढ़ाने के लिये कहा गया है । उनका उत्साह बढ़ाते हुए वे कह रहे हैं कि-हे पण्डित ! इस समय तुम प्रव्रज्या ग्रहण करने की अवस्था वाले हो, तथा परिवादादिक दोषत्रय रहित भी हो, सो तुम जब तक इस अवस्था में हो तब तक संयम ग्रहण के लिये प्रयत्नशील रहो । इसी अभिप्राय से सूत्रकार ने ‘पण्डित !’ इस संबोधन से उन्हें संबोधित किया है, कारण कि शिष्यजन स्वयं इस प्रकार की अपनी अवस्था को समझ रहे हैं, अतः यह संबोधन उनके लिये संगत बैठता है ।

તેથી એ પ્રતીત થાય છે કે-પૂર્વોક્ત પરિવાદાદિ ત્રણ દોષોમાંથી કોઈ એક પણ દોષથી જે અસ્પૃષ્ટ-રહિત છે અને અવસ્થા પણ ધર્માચરણ કરવાની જેની વીતી ગઈ છે. પરંતુ કદાચ તે દૃઢ સંહનનવાલા છે તો પણ પ્રવ્રજ્યા-ભાગવતી દીક્ષાને યોગ્ય છે. જેમ ભગવાનના માતાપિતાએ દેવાનન્દા અને ઋષભદત્તે પોતાની વૃદ્ધાવસ્થામાં દીક્ષા ધારણ કરી હતી.

અથવા-“અનભિક્રાન્તં ચ खलु वयः संप्रेक्ष्य क्षणं जानीहि पण्डित !”  
 આ વાક્ય, સંયમમાં કષ્ટ પામતાં શિષ્યજનોમાં જે નિરુત્સાહિત અનેલ છે, તેનો ઉત્સાહ વધારવા માટે કહેવામાં આવેલ છે. તેનો ઉત્સાહ વધારીને તેઓ કહે છે કે-હે પંડિત ! આ વખત તમે પ્રવ્રજ્યા ગ્રહણ કરવાની અવસ્થાવાળા છો, તથા પરિવાદાદિક દોષત્રય વગર પણ છો જેથી તમે ન્યા સુધી આ અવસ્થામાં છો ત્યાં સુધી સંયમ ગ્રહણ કરવા માટે પ્રયત્નશીલ રહો, આ અભિપ્રાયથી સૂત્રકારે ‘પંડિત’ આ સંબોધનથી તેને સંબોધિત કરેલ છે, કારણ કે-શિષ્યજન સ્વયં આ પ્રકારની પોતાની અવસ્થાને સમજી શકે છે માટે આ સંબોધન તેને માટે સંગત ખેસે છે.

અથવા—હે અનભિક્રાન્તયૌવન ! શિષ્ય ! ક્ષણં દ્રવ્ય-ક્ષેત્ર-કાલ-ભાવભેદેન ચતુર્વિધં જાનીહિ । તત્ર દ્રવ્યક્ષણશ્ચ સ્થાવરજઙ્ગમયોર્જઙ્ગમત્વં, તત્રાપિ દ્વીન્દ્રિયાદિપરિહારેણ પચ્ચેન્દ્રિયત્વં, તત્રાપિ સઙ્ગિજ્ઞત્વં, તત્રાપિ મનુષ્યત્વં, તેષ્વપિ વિશિષ્ટજાતિ-શોભનકુલોત્પત્તિદીર્ઘાયુષ્ટ્વનૈરુજ્યાદિકમુપલભ્ય ચારિત્રપ્રાપ્તિરૂપોઽવસરો લભ્યઃ । યતો દેવનારકભવે સમ્યક્ત્વં જ્ઞાનાવબોધરૂપશ્રુતસામાયિકોપલબ્ધિશ્ચ ભવતિ, તિર્યક્ષુ કસ્યચિદ્દેશવિરતિરુપજાયતે, સર્વવિરતિરૂપં ચારિત્રં મનુષ્યજન્મન્યેવ લભતે, સ એવ દ્રવ્યક્ષણઃ । સામાયિકશ્ચતુર્વિધઃ—સમ્યક્ત્વ-શ્રુત-દેશવિરતિ-સર્વવિરતિ-રૂપો બોધ્યઃ ।

અથવા—શિષ્ય કે લિયે સૂત્રકાર ફિર કહતે હૈં કિ—હે અનભિક્રાન્ત-યૌવન શિષ્ય ! દ્રવ્ય, ક્ષેત્ર, કાલ ઓર ભાવ કે ભેદસે ક્ષણ ( અવસર ) ચાર પ્રકાર કા હૈં ।

(૧) સર્વવિરતિરૂપ અવસ્થા જીવ કો જિસ ક્ષણ મેં પ્રાપ્ત હોતી હૈં ઉસકા નામ દ્રવ્યક્ષણ હૈં, ક્યોં કિ યહ જીવ અવ્યવહાર રાશિસે વ્યવહાર રાશિ મેં આતા હૈં વહાં પર પૃથિવીકાયિક આદિ એકેન્દ્રિય જીવોં મેં જન્મ ગ્રહણ કરતા હૈં । ફિર વહ કર્મ સ્થિતિકો ભોગતા હુઆ ક્રમ સે દ્વીન્દ્રિયાદિક જીવોં મેં ઉત્પન્ન હોતા હૈં । ઇસ પ્રકાર સ્થાવર ઓર ત્રસપર્યાય મેં । ત્રસપર્યાય કી પ્રાપ્તિ દ્રવ્યક્ષણ હૈં । ઇસમેં ભી દ્વીન્દ્રિયાદિક પર્યાયોં કે સિવાય પંચેન્દ્રિયપર્યાય કી પ્રાપ્તિ; ઇસમેં ભી સંજ્ઞિપન કી પ્રાપ્તિ; ઉસમેં ભી મનુષ્યપર્યાય કી પ્રાપ્તિ; વહાં ભી વિશિષ્ટ જાતિ—ઉચ્ચકુલ મેં જન્મ, દીર્ઘાયુ કા પાના, નિરોગ શરીર કી પ્રાપ્તિ હોના, ઇસ મેં ભી ચારિત્ર કી પ્રાપ્તિ

અથવા શિષ્ય માટે સૂત્રકાર ફરીવાર કહે છે કે—હે અનભિક્રાન્તયૌવન શિષ્ય ! દ્રવ્ય, ક્ષેત્ર, કાળ અને ભાવ ના ભેદથી ક્ષણ ( અવસર ) ચાર પ્રકાર છે.

(૧) સર્વવિરતિરૂપ અવસ્થા જીવને જે ક્ષણે પ્રાપ્ત થાય છે તેનું નામ દ્રવ્ય ક્ષણ છે કારણ કે—આ જીવ અવ્યવહાર રાશિથી વ્યવહાર રાશિમાં આવે છે ત્યાં પૃથિવીકાયિક આદિ એકેન્દ્રિય જીવોમાં જન્મ ગ્રહણ કરે છે, પછી તે કર્મસ્થિતિને ભોગવતાં ક્રમથી બેઠેન્દ્રિય જીવોમાં ઉત્પન્ન થાય છે, આ પ્રકાર સ્થાવર અને ત્રસ પર્યાયની પ્રાપ્તિ દ્રવ્યક્ષણ છે. તેમાં પણ બેઠેન્દ્રિયાદિક પર્યાયો સિવાય પંચેન્દ્રિય પર્યાયની પ્રાપ્તિ, તેમાં પણ સંજ્ઞિપણની પ્રાપ્તિ, તેમાં પણ મનુષ્યપર્યાયની પ્રાપ્તિ, ત્યાં પણ વિશિષ્ટ જાતિ—ઉચ્ચ કુળ—માં જન્મ, દીર્ઘાયુ મેળવવું, નિરોગ શરીર પ્રાપ્ત થવું, તેમાં પણ ચારિત્રની પ્રાપ્તિ થવી, ઇત્યાદિ. એ બધું દ્રવ્ય

હોના; इत्यादि, ये सब द्रव्यक्षण हैं। ये सब बातें तुझे प्राप्त हुई हैं, क्योंकि—देवगति और नरकगति में तत्त्वश्रद्धानरूप सम्यक्त्वसामायिक, और तत्त्वावबोधरूप श्रुतसामायिक की उपलब्धि जीवको प्राप्त होती है, तिर्यञ्चगति में किसी २ जीव को देशविरति का लाभ होता है, सर्वविरतिरूप चारित्र की प्राप्ति तो इस जीवको मनुष्यजन्म में ही होती है। इसी लिये यहां पर वही द्रव्यक्षण है। सामायिक ४ प्रकार का है—१ सम्यक्त्व,— २ श्रुत, ३ देशविरति और ४ सर्वविरति।

यहां पर द्रव्यक्षण का विचार किया है, सर्वविरतिरूप चारित्र की उत्पत्ति अथवा प्राप्ति की मुख्यता से मनुष्य पर्याय को ही प्रधानतया द्रव्यक्षण कहा है, क्योंकि सर्वविरतिरूप चारित्र के सिवाय आत्मा दूसरी किसी अवस्था से कर्मोंका क्षय कर मोक्ष प्राप्त नहीं करता। मोक्षप्राप्त करना यह इस की स्वाभाविक अवस्था है। जिस प्रकार तुंबड़ी के ऊपर मिट्टीका लेप लगाने से वह पानी के नीचे बैठ जाती है, ठीक उसी प्रकार यह जीव भी कर्ममल से लिस होने के कारण संसाररूप समुद्र के अन्दर बैठ जाता है। जैसे उस तुंबड़ीका लेप ज्यों २ पानी से गल कर हटता जाता है त्यों २ वह तुंबड़ी पानी के ऊपर आती जाती है, बिलकुल निर्लेप होने

ક્ષણ છે. આ બધી વાતો તને પ્રાપ્ત થયેલ છે, કારણ કે દેવગતિ અને નરકગતિમાં તત્ત્વશ્રદ્ધાનરૂપ સમ્યક્ત્વસામાયિક અને તત્ત્વાવબોધરૂપ શ્રુતસામાયિકની ઉપલબ્ધિ જીવને પ્રાપ્ત થાય છે. તિર્યંચગતિમાં કોઈ કોઈ જીવને દેશવિરતિનો લાભ થાય છે. સર્વવિરતિરૂપ ચારિત્રની પ્રાપ્તિ તો આ જીવને મનુષ્ય જન્મમાં જ થાય છે માટે આ ઠેકાણે તેજ દ્રવ્યક્ષણ છે. સામાયિક ચાર પ્રકારનું છે. ૧ સમ્યક્ત્વ, ૨ શ્રુત, ૩ દેશવિરતિ અને ૪ સર્વવિરતિ.

અહીં દ્રવ્યક્ષણનો વિચાર કર્યો છે. સર્વવિરતિરૂપ ચારિત્રની ઉત્પત્તિ અથવા પ્રાપ્તિની મુખ્યતાથી-મનુષ્યપર્યાયને જ પ્રધાનતયા દ્રવ્યક્ષણ કહ્યું છે, કારણ કે સર્વ વિરતિરૂપ ચારિત્ર સિવાય આત્મા બીજી કોઈ અવસ્થાથી કર્મોનો ક્ષય કરી મોક્ષ પ્રાપ્ત કરતા નથી. મોક્ષપ્રાપ્ત કરવો તે તેની સ્વાભાવિક અવસ્થા છે. જેમ તુંબડી ઉપર માટીનો લેપ લગાડવાથી તે પાણીની નીચે ખેસી જાય છે, ઠીક તે પ્રકારે આ જીવ પણ કર્મમલથી લિસ હોવાના કારણે સંસારરૂપ સમુદ્રની અંદર ખેસી જાય છે. જેમ જેમ જેવો તે તુંબડી ઉપરનો માટીનો લેપ પાણીથી ગળીને હટી જાય છે તેમ તેમ તે તુંબડી પાણી ઉપર આવે જાય છે. બિલકુલ નિર્લેપ થવાથી તે

પર વહ પાની કે ઝપર તૈરને લગતી હૈ, ઠીક ઇસી પ્રકાર ડ્યોં ૨ કર્મમલકા લેપ ઇસ જીવાત્મા સે છૂટતા જાતા હૈ ત્યોં ૨ યહ ખી અપની શુદ્ધ અવસ્થા કો પ્રાપ્ત કરતા જાતા હૈ, ઇક દિન યહ ખી આતા હૈ જબ યહ કર્મમલ કે લેપ સે સર્વથા નિર્લેપ હો જાતા હૈ । સર્વથા નિર્લેપ હોના હી ઇસકી શુદ્ધ અવસ્થા કી પ્રાપ્તિ હૈ । યહ કર્મોં કો નાશ કરને કી દશા, સર્વવિરતિરૂપ ચારિત્ર કી પ્રાપ્તિ સે હી જીવ કો પ્રાપ્ત હોતી હૈ, ઇકેન્દ્રિયાદિક પર્યાયોં મેં ઇસકી પ્રાપ્તિ જીવ કો નહીં હોતી, ક્યોં કિ સર્વવિરતિરૂપ ચારિત્ર કી પ્રાપ્તિ વિના જ્ઞાન કે વિકાશ કે નહીં હો સકતી, જ્ઞાન કા વિકાશ મનુષ્ય પર્યાય કે સિવાય અન્યત્ર નહીં હોતા । ઇસીલિયે પ્રધાનતયા ઇસીકો હી દ્રવ્યક્ષણ કહા હૈ । જ્ઞાનકે વિકાશ કા અભિપ્રાય પાંચ આસ્રવોં કી નિવૃત્તિ સે હૈ । જ્ઞાનસે પાંચ આસ્રવોં કી સર્વથા નિવૃત્તિ હો વહી જ્ઞાન કા વિકાશ હૈ । યદ્યપિ દેવપર્યાય મેં ભવપ્રત્યય અવધિ હોતા હૈ તથાપિ વહાં પર જો સર્વવિરતિરૂપ ચારિત્ર કી યોગ્યતા નહીં હૈ ડસકા ઝાસ કારણ યહી હૈ । ડસ જ્ઞાન સે વહાં પર પાંચ આસ્રવોં કી નિવૃત્તિ નહીં હો સકતી । ઇસી પ્રકાર નરક મેં ખી પાંચ આસ્રવોં કી નિવૃત્તિ કે અભાવ સે દેશવિરતિ ઓર સર્વવિરતિ કી પ્રાપ્તિ નહીં હો સકતી ।

પાણી ઉપર તરવા લાગે છે. તે પ્રકારે જેમ જેમ કર્મમલનો લેપ આ જીવાત્માથી છુટી જાય છે તેમ તેમ તે પણ પોતાની શુદ્ધ અવસ્થાને પ્રાપ્ત કરતો રહે છે. એક દિવસ એવો પણ આવે છે કે તે કર્મમલના લેપથી સર્વથા નિર્લેપ થઈ જાય છે. સર્વથા નિર્લેપ થવું તે તેની શુદ્ધ અવસ્થાની પ્રાપ્તિ છે. આ કર્મોનો નાશ કરવાની દશા, સર્વવિરતિરૂપ ચારિત્રની પ્રાપ્તિથી જ જીવને પ્રાપ્ત થાય છે. એકેન્દ્રિયાદિક પર્યાયોમાં તેની પ્રાપ્તિ જીવને થતી નથી, કારણ કે સર્વવિરતિરૂપ ચારિત્રની પ્રાપ્તિ જ્ઞાનના વિકાસ સિવાય થતી નથી. જ્ઞાનનો વિકાસ મનુષ્ય પર્યાય સિવાય અન્યત્ર નથી થતો, માટે પ્રધાનતયા તેને જ દ્રવ્યક્ષણ કહેલ છે. જ્ઞાનના વિકાસનો અભિપ્રાય પાંચ આસ્રવોની નિવૃત્તિથી છે. જ્ઞાનથી પાંચ આસ્રવોની સર્વથા નિવૃત્તિ થાય તે જ્ઞાનનો વિકાસ છે. હજી દેવપર્યાયમાં ભવપ્રત્યય અવધિ હોય છે તથાપિ તે જગ્યાએ જે સર્વવિરતિરૂપ ચારિત્રની યોગ્યતા નથી તેનું ખાસ કારણ એ છે કે તે જ્ઞાનથી ત્યાં પાંચ આસ્રવોની નિવૃત્તિ થતી નથી. એ પ્રકારે નરકમાં પણ પાંચ આસ્રવોની નિવૃત્તિના અભાવથી દેશવિરતિ અને સર્વવિરતિની પ્રાપ્તિ થઈ શકતી નથી.

ક્ષેત્રક્ષણસ્તુ યસ્મિન્ ક્ષેત્રે સર્વવિરતિસ્વરૂપચારિત્રોપલબ્ધિર્જાયતે, તથા હિ-  
અધોલોકગ્રામસંવલિતતિર્યગ્લોક એવ, તત્રાપિ સમયક્ષેત્ર એવ, તત્રાપિ પશ્ચદશકર્મ-  
ભૂમિષ્વેવ, તાસ્વપિ ભરતક્ષેત્રાપેક્ષયા સાર્દ્ધપશ્ચવિંશતિદેશેષ્વેવ ચારિત્રાવાપ્તિર્ભવતિ । સ  
ચાયં ક્ષેત્રરૂપોઽવસરો દુર્લભઃ । યતોઽન્યક્ષેત્રેષુ સમ્યક્ત્વશ્રુતસામાયિકયોરેવોપલબ્ધિઃ,  
કસ્યચિદ્દેશવિરતિસમ્ભવઃ, કિન્તુ ન સર્વવિરતિપ્રાપ્તિર્ભવતિ ।

इदमुक्तं भवति-क्षेत्रम् ऊर्ध्वाधस्तिर्यग्लोकरूपम् । तत्रोर्ध्वलोके देशविरति-  
सर्वविरतिरूपसामायिकयोः क्षणो नास्ति, अवशिष्टयोः क्षणोऽस्ति । अधोलोके-

जिस क्षेत्र में सर्वविरतिरूप चारित्र की प्राप्ति इस जीव को होती है उसका नाम क्षेत्रक्षण है । अधोलोक-ग्राम-संवलित अर्थात् सलि-  
लावतीविजययुक्त तिर्यग्लोक में ही, वहां पर भी समयक्षेत्र में ही, वहां भी पन्द्रह कर्मभूमियों में ही, वहां पर भी भरतक्षेत्र की अपेक्षा से २५॥ देशों में ही इस जीव को चारित्र की प्राप्ति होती है । यह क्षेत्र रूप अवसर भी दुर्लभ है, क्यों कि अन्यक्षेत्रों में सम्यक्त्वसामायिक और श्रुतसा-  
मायिक, इन दो की उपलब्धि, तथा किन्हीं २ को देशविरति रूप चारित्र की उपलब्धि की संभावना है, परन्तु वहां पर जीवों को सर्वविरति का लाभ नहीं होता है ।

ऊर्ध्वलोक, अधोलोक, और तिर्यग्लोक, इस प्रकार क्षेत्र ૩ प्रकार का है । इनमें ऊर्ध्वलोक में देशविरति और सर्वविरति रूप सामાયિક ધારણ કરને का अवसर ही नहीं है । સમ્યક્ત્વસામાયિક और શ્રુતસામાયિક इन दो की जीव को वहां प्राप्ति हो सकती है । अधोलोक में भी अधो-

જે ક્ષેત્રમાં સર્વવિરતિરૂપ ચારિત્રની પ્રાપ્તિ આ જીવને થાય છે તેનું નામ ક્ષેત્રક્ષણ છે. અધોલોકગ્રામસંવલિત અર્થાત્ સલિલાવતીવિજયયુક્ત તિર્યગ્લોકમાં, ત્યાં પણ સમયક્ષેત્રમાં જ, ત્યાં પણ પંદર કર્મભૂમિઓમાં જ, ત્યાં પણ ભરતક્ષેત્રની અપેક્ષાથી સાઠપચીસ ( ૨૫૦ ) દેશોમાં આ જીવને ચારિત્રની પ્રાપ્તિ થાય છે. તે ક્ષેત્રરૂપ અવસર પણ દુર્લભ છે. કારણ કે અન્ય ક્ષેત્રોમાં સમ્યક્ત્વસામાયિક અને શ્રુતસામાયિક, આ બંનેની ઉપલબ્ધિ, તથા કોઈ કોઈને દેશવિરતિરૂપ ચારિત્રની ઉપલબ્ધિની સંભાવના છે, પરંતુ તે જગ્યાએ જીવોને સર્વવિરતિનો લાભ થતો નથી.

ઉર્ધ્વલોક, અધોલોક અને તિર્યાગ્લોક, આ પ્રકારે ક્ષેત્ર ત્રણ પ્રકારના છે. તેમાં ઉર્ધ્વલોકમાં દેશવિરતિ અને સર્વવિરતિરૂપ સામાયિક ધારણ કરવાનો અવસર જ નથી. સમ્યક્ત્વસામાયિક અને શ્રુતસામાયિક, આ બેની જીવને ત્યાં પ્રાપ્તિ થઈ



અધોલોકગ્રામં (સલિલાવતીવિજયં) વર્જયિત્વોર્ધ્વલોકવદ્વિજ્ઞેયમ્, અધોલોક-ગ્રામેષુ ચ ચતુર્ણાં સામાયિકાનાં ક્ષણોઽસ્તિ । તિર્યગ્લોકે મનુષ્યક્ષેત્રાદ્વહિઃ સર્વ-વિરતિં વિહાય ત્રયાણાં સામાયિકાનાં ક્ષણોઽસ્તિ, તેન મનુષ્યક્ષેત્ર એવ ચતુર્વિધ-સામાયિકપ્રાપ્તિરિતિ બોધ્યમ્ ।

કાલક્ષણઃ—કાલરૂપોઽવસરઃ, સ હિ અવસર્પિण्याં સુષમદુષ્ણમા-દુષ્ણમસુષમા-દુષ્ણમા-રૂપેષુ તૃતીય-ચતુર્થ-પञ्ચમાત્મકેષુ ત્રિષ્વરકેષુ, ઉત્સર્પિण्याં દુષ્ણમસુષમા-સુષમદુષ્ણમારૂપયોસ્તૃતીય-ચતુર્થારકયોશ્ચ સર્વવિરતિરૂપસામાયિકોપલબ્ધિરૂપ-જાયતે । એતચ્ચ નૂતનધર્મપ્રાપ્તિમપેક્ષ્ય કથિતમ્ । પૂર્વપ્રતિપન્નાપેક્ષ્યા સંહરણાવ-સ્થાયાં લોકત્રયે સર્વારકેષુ સર્વવિરતિસામાયિકોપલબ્ધિર્જાયતે ।

લોકગ્રામ (સલિલાવતીવિજય) કો છોડકર ઝર્ધ્વલોક કી તરહ હી સમજના ચાહિયે । અર્થાત્ અધોલોક મેં-અધોલોકગ્રામ-સલિલાવતી વિજય મેં ચારોં હી સામાયિક કો પ્રાપ્ત કરને કા અવસર હૈ, પરન્તુ બાકી જગહ સમ્યક્ત્વ ઓર શ્રુત, ઇન દો સામાયિકોં કી પ્રાપ્તિ કા હી અવસર હૈ । તિર્યગ્લોક મેં મનુષ્યક્ષેત્ર સે બાહિર સર્વવિરતિરૂપ સામાયિક કે અતિ-રિક્ત બાકી તોન સામાયિકોં કી ઉપલબ્ધિ કા અવસર જીવ કો પ્રાપ્ત હોતા હૈ, પરન્તુ ચારોં પ્રકાર કે સામાયિક કી પ્રાપ્તિ તો જીવ કો મનુષ્ય-ક્ષેત્ર-ઢાઈદ્રીપ મેં હી હોતી હૈ ।

જિસકાલ મેં સર્વવિરતિરૂપ ચારિત્ર કી પ્રાપ્તિ ઇસ જીવ કો હોતી હૈ, ડસકા નામ કાલક્ષણ હૈ । કાલ દો પ્રકારકા હૈ—ઉત્સર્પિણીકાલ ઓર અવસર્પિણીકાલ । ઇસમેં ઉત્સર્પિણીકાલ ૬ પ્રકાર કા, ઓર અવસર્પિણી-કાલ મી ૬ પ્રકારકા હૈ । ઉત્સર્પિણી કે ૬ ભેદ—૧ દુષ્ણમદુષ્ણમા,

શકે છે. અધોલોકમાં પણ અધોલોકગ્રામ (સલિલાવતીવિજય) ને છોડીને ઊર્ધ્વ-લોકની માફક જ સમજવું જોઈએ, અર્થાત્ અધોલોકમાં-અધોલોકગ્રામ-સલિલાવતી વિજયમાં ચારે સામાયિકને પ્રાપ્ત કરી લેવાનો અવસર છે, પરંતુ બીજા જગ્યાએ સમ્યક્ત્વ અને શ્રુત એ-બે સામાયિકોને-પ્રાપ્ત કરવાનો જ અવસર છે, તિર્યગ્લોકમાં મનુષ્યક્ષેત્રથી બહાર સર્વવિરતિરૂપ સામાયિકના અતિરિક્ત બાકીના ત્રણ સામા-યિકોની ઉપલબ્ધિનો અવસર જીવને પ્રાપ્ત થાય છે, પરંતુ ચારે પ્રકારની સામા-યિકની પ્રાપ્તિ તો જીવને મનુષ્યક્ષેત્ર-અઢીદ્રીપમાં જ થાય છે.

જે કાળમાં સર્વવિરતિરૂપ ચારિત્રની પ્રાપ્તિ આ જીવને થાય છે તેનું નામ કાલક્ષણ છે. કાલ બે પ્રકારે છે—ઉત્સર્પિણીકાલ અને અવસર્પિણીકાલ, આમાં ઉત્સર્પિણીકાલ છ પ્રકારે, અને અવસર્પિણીકાલ પણ છ પ્રકારે છે, ઉત્સર્પિણીના



ભાવક્ષણસ્તુ દ્વિવિધઃ—કર્મભાવક્ષણો, નોકર્મભાવક્ષણથ્વ । કર્મભાવક્ષણથ્વ કર્મ-  
ણામુપશમ—ક્ષયોપશમ—ક્ષયા—ન્યતમપ્રાપ્તિરૂપઃ । તત્રોપશમચારિત્રક્ષણ ઉપશમશ્રેણ્યાં

૨ દુષ્ણમા, ૩ દુષ્ણમ—સુષમા, ૪ સુષમદુષ્ણમા, ૫ સુષમા, ૬ સુષમ-  
સુષમા, ये हैं । इसी प्रकार अवसर्पिणी के भी—(१) सुषमसुषमा, (२)  
सुषमा, (३) सुषमदुष्षमा, (४) दुष्षमसुषमा, (५) दुष्षमा, (६) दुष्षम-  
दुष्षमा, ये ६ भेद हैं । जिसकाल में जीवों के ज्ञानादि शुभभावों की  
वृद्धि तथा आयुष्य अवगाहना आदि की और वर्ण गन्ध रस स्पर्श के  
पर्यायों की वृद्धि होती है वह उत्सर्पिणी है, और जिस काल में जीवों के  
ज्ञानादि शुभभावों का हास, तथा आयुष्य अवगाहना आदि का और  
वर्ण गन्ध रस स्पर्श की पर्यायों का हास होता है वह अवसर्पिणी है । इनमें  
अवसर्पिणी के सुषमदुष्षमा—तीसरे काल में, दुष्षमसुषमा—चतुर्थकाल  
में और दुष्षमा—पंचमकाल में, तथा उत्सर्पिणी के दुष्षमसुषमा—तीसरे  
काल में और सुषमदुष्षमानामक चतुर्थकाल में सर्वविरतिरूप सामा-  
यिक की प्राप्ति जीव को होती है । यह कथन नवीन धर्मप्राप्ति की अपेक्षा  
से कहा है । पूर्वप्रतिपन्न की अपेक्षासे संहरणावस्था में लोकत्रय में सम-  
स्तकालों में सर्वविरतिरूप सामायिक की उपलब्धि जीव को हो सकती है ।

ભાવક્ષણ દો પ્રકાર કા હૈ ૧ કર્મભાવક્ષણ ઓર ૨ નોકર્મભાવક્ષણ ।

૬ ભેદ—૧ દુષ્ણમદુષ્ણમા, ૨ દુષ્ણમા, ૩ દુષ્ણમસુષમા, ૪ સુષમદુષ્ણમા, ૫  
સુષમા, ૬ સુષમસુષમા, એ છે. આ પ્રકારે અવસર્પિણીના પણ (૧) સુષમસુષમા,  
(૨) સુષમા (૩) સુષમદુષ્ણમા, (૪) દુષ્ણમસુષમા, ૫ દુષ્ણમા, ૬ દુષ્ણમદુષ્ણમા,  
આ છ ભેદ છે. જે કાળમાં જીવોને જ્ઞાનાદિ શુભ ભાવોની વૃદ્ધિ તથા આયુષ્ય  
અવગાહના આદિની અને વર્ણ ગંધ રસ સ્પર્શના પર્યાયોની વૃદ્ધિ થાય છે તે  
ઉત્સર્પિણી છે, અને જે કાળમાં જીવોને જ્ઞાનાદિ શુભ ભાવોનો હાસ તથા આયુષ્ય  
અવગાહના આદિનો અને વર્ણ ગંધ રસ સ્પર્શની પર્યાયોનો હાસ થાય છે તે  
અવસર્પિણી છે. તેમાં અવસર્પિણીના સુષમદુષ્ણમા—ત્રીજા કાળમાં દુષ્ણમસુષમા—ચોથા  
કાળમાં અને દુષ્ણમા—પંચમ કાળમાં, તથા ઉત્સર્પિણીના દુષ્ણમસુષમા—ત્રીજા કાળમાં  
અને સુષમદુષ્ણમા નામક ચોથા કાળમાં સર્વવિરતિરૂપ સામાયિકની પ્રાપ્તિ જીવને  
થાય છે. આ કથન નવીન ધર્મપ્રાપ્તિની અપેક્ષાથી કહ્યું છે. પૂર્વપ્રતિપન્નની  
અપેક્ષાથી સંહરણાવસ્થામાં લોકત્રયમાં સમસ્ત કાળોમાં સર્વવિરતિરૂપસામાયિકની  
ઉપલબ્ધિ જીવને થાય છે.

ભાવક્ષણ બે પ્રકારના છે. ૧ કર્મભાવક્ષણ અને ૨ નોકર્મભાવક્ષણ. ચારિત્ર-

ચારિત્રમોહનીય કર્મકા-ક્ષય, ક્ષયોપશમ ઓર ઉપશમ-રૂપ અવસ્થાઓ મેં સે કિસી મી અવસ્થારૂપ હોના-સો કર્મભાવક્ષણ હૈ। ઉસમેં ઉપશમ-શ્રેણી મેં ચારિત્રમોહનીય કર્મકી ૨૧ પ્રકૃતિયોં કે ઉપશમ હોને પર અન્ત-મુહૂર્તપરિમિત જો ઉપશમચારિત્ર હોતા હૈ વહ ઉપશમચારિત્ર કા ક્ષણ હૈ। ચારિત્રમોહનીય કર્મકી ૨૧ પ્રકૃતિયોં કે સર્વથા ક્ષય હોને પર અન્ત-મુહૂર્તપરિમિત જો છદ્મસ્થ ઓર યથાખ્યાત ચારિત્રકી પ્રાપ્તિ હોતી હૈ તત્સ્વરૂપ ક્ષાયિકચારિત્ર કા ક્ષણ હૈ। ક્ષયોપશમચારિત્રક્ષણ ચારિત્ર મોહનીય કર્મ કે ક્ષયોપશમ સે હોતા હૈ। ઉસકા કાલ ઉત્કૃષ્ટ દેશ ઝન ઇક કરોડ પૂર્વકા હૈ।

કર્મભાવક્ષણ કા મતલબ હૈ-ચારિત્ર કે આવારક-(રોકનેવાલા) ચારિત્રમોહનીય કર્મકે ક્ષય, ક્ષયોપશમ, ઓર ઉપશમ કી પ્રાપ્તિકા અવસર। ઉસમેં ચારિત્રમોહનીય કર્મ કી અપ્રત્યાખ્યાનાવરણાદિ ૨૧ પ્રકૃતિયોં કે ઉપશમસે જો ચારિત્ર પ્રાપ્ત હોતા હૈ ઉસકા નામ ઉપશમ-ચારિત્ર હૈ। યહ ઉપશમશ્રેણિ મેં હોતા હૈ, ઇસકા કાલ અન્તમુહૂર્ત હૈ। અપ્રત્યાખ્યાનાવરણાદિ ૨૧ પ્રકૃતિયોં કે સર્વથા ક્ષય સે જીવ કો જો ચારિત્ર પ્રાપ્ત હોતા હૈ ઉસકા નામ ક્ષાયિકચારિત્ર હૈ। ઉપશમશ્રેણી મેં ઉપશમચારિત્ર ઓર ક્ષયકશ્રેણી મેં ક્ષાયિકચારિત્ર હોતા હૈ। ઉપશમ-

મોહનીય કર્મનો-ક્ષય, ક્ષયોપશમ અને ઉપશમ-રૂપ અવસ્થાઓમાં કોઈ પણ અવસ્થારૂપ થવું, તે કર્મભાવક્ષણ છે, તેમાં ઉપશમશ્રેણીમાં ચારિત્રમોહનીય કર્મની ૨૧ પ્રકૃતિઓનો ઉપશમ થવાથી અન્તમુહૂર્ત પરિમિત જે ઉપશમચારિત્ર થાય છે તે ઉપશમચારિત્રનો ક્ષણ છે. ચારિત્રમોહનીય કર્મની ૨૧ પ્રકૃતિઓનો સર્વથા ક્ષય થવાથી અન્તમુહૂર્તપરિમિત જે છદ્મસ્થ અને યથાખ્યાત ચારિત્રની પ્રાપ્તિ થાય છે તત્સ્વરૂપ ક્ષાયિકચારિત્રનું ક્ષણ છે, ક્ષયોપશમચારિત્ર ક્ષણનું ચારિત્રમોહનીય કર્મના ક્ષયોપશમથી થાય છે, તેનો કાળ ઉત્કૃષ્ટ દેશઊન એક કરોડ પૂર્વનો છે.

કર્મભાવક્ષણનો મતલબ છે ચારિત્રનો આવારક (રોકવાવાળા) ચારિત્રમોહનીય કર્મનો ક્ષય, ક્ષયોપશમ અને ઉપશમની પ્રાપ્તિનો અવસર, તેમાં ચારિત્રમોહનીય કર્મની અપ્રત્યાખ્યાનાદિ ૨૧ પ્રકૃતિઓનું ઉપશમ જે ચારિત્રથી પ્રાપ્ત થાય છે તેનું નામ ઉપશમચારિત્ર છે. આ ઉપશમશ્રેણીમાં થાય છે. તેનો કાળ અન્તમુહૂર્ત છે. અપ્રત્યાખ્યાનાદિ ૨૧ પ્રકૃતિઓના સર્વથા ક્ષયથી જીવને જે ચારિત્ર પ્રાપ્ત થાય છે તેનું નામ ક્ષાયિકચારિત્ર છે. ઉપશમશ્રેણીમાં ઉપશમચારિત્ર અને ક્ષયકશ્રેણીમાં ક્ષાયિકચારિત્ર થાય છે. ઉપશમશ્રેણીના સ્થાન ૮-૯-૧૦ અને ૧૧માં

ચારિત્રમોહનીયોપશમે સત્યન્તર્મુહૂર્તપરિમિતઃ, ચારિત્રમોહનીયક્ષયે ચાન્તર્મુહૂર્ત-  
પરિમિતઃ છદ્મસ્થયથાખ્યાતચારિત્રપ્રાપ્તિરૂપઃ । ક્ષયોપશમચારિત્રક્ષણઃ કર્મણઃ ક્ષયો-  
પશમેન ભવતિ, સ ચોત્કૃષ્ટતો દેશોનપૂર્વકોટિવર્ષપરિમિતો વિજ્ઞેયઃ ।

નોકર્મભાવક્ષણ—આલસ્યમોહાવર્ણવાદસ્તમ્ભાદેરભાવે સતિ સમ્યક્ત્વાદિ-  
સામાયિકોપલબ્ધિરૂપઃ । આલસ્યમોહાદ્યુપહતઃ સંસારોચ્છેદનસમર્થ મનુષ્યભવં  
પ્રાપ્યાપિ ન બોધ્યાદિકં લભત इति तात्पर्यम् । કેવિત્તુ—નોકર્મભાવક્ષણં ‘રિક્તક્ષણ’  
इत्यभिदधति ।

શ્રેણી કે સ્થાન ૮ વાં ૯ વાં ૧૦ વાં ઓર ૧૧ વાં ગુણસ્થાન હૈં । ૧૨ વૈં  
ગુણસ્થાન તક જીવ કો છદ્મસ્થાવસ્થા રહતી હૈ । યથાખ્યાતચારિત્ર ૧૧  
વૈં ૧૨ વૈં ૧૩ વૈં ઓર ૧૪ વૈં ગુણસ્થાન મૈં હોતા હૈ । છદ્મસ્થાવસ્થા કે ચારિત્ર  
કો છદ્મસ્થચારિત્ર ઓર સંપૂર્ણ મોહનીય કર્મ કે ક્ષય અથવા ઉપશમ સે  
આત્મા કે શુદ્ધ સ્વરૂપ મૈં સ્થિર હોને કો યથાખ્યાત ચારિત્ર કહતે હૈં । અનં-  
તાનુબંધી આદિ ૧૨ કષાયોં કા ઉદયભાવી ક્ષય તથા ડન્હીંકે નિષેકોં  
કા સદવસ્થારૂપ ઉપશમ ઓર સંજ્વલન તથા નોકષાય કા યથાસંભવ  
ઉદય હોને પર જો ચારિત્ર હોતા હૈ ડસે ક્ષાયોપશમિક ચારિત્ર કહતે હૈં ।  
इसका दूसरा नाम सरागसंयम भी है ।

નોકર્મભાવક્ષણ—આલસ્ય, મોહ, અવર્ણવાદાદિક કે અભાવ હોને  
પર જો સમ્યક્ત્વાદિરૂપ સામાયિક કી પ્રાપ્તિ હુઆ કરતી હૈ વહ નોકર્મ-  
ભાવક્ષણ હૈ, ક્યોં કિ આલસ્ય ઓર મોહાદિક સે ઉપહત હુઆ પ્રાણી  
સંસાર કા નિર્મૂલ ડચ્છેદન કરને મૈં સમર્થ મનુષ્ય ભવકો પ્રાપ્ત કરકે

ગુણસ્થાન છે. ક્ષપકશ્રેણિનું સ્થાન ૮-૯-૧૦ અને ૧૨મું ગુણસ્થાન છે. ૧૨  
મા ગુણસ્થાન સુધી જીવને છદ્મસ્થાવસ્થા રહે છે. યથાખ્યાતચારિત્ર ૧૧  
-૧૨-૧૩ અને ૧૪ માં ગુણસ્થાનમાં થાય છે. છદ્મસ્થાવસ્થાના ચારિત્રનું છદ્મસ્થ  
ચારિત્ર અને સંપૂર્ણ મોહનીય કર્મના ક્ષય અથવા ઉપશમથી આત્માના શુદ્ધ  
સ્વરૂપમાં સ્થિર હોવું તેને યથાખ્યાતચારિત્ર કહે છે. અનંતાનુબંધી આદિ ૧૨  
કષાયોનો ઉદયભાવી ક્ષય તથા તેના નિષેકોનો સદવસ્થાસ્વરૂપ ઉપશમ. અને સંજ્વલન  
તથા નોકષાયનું યથાસંભવ ઉદય હોવા પર જે ચારિત્ર થાય છે તેને ક્ષાયોપ-  
શમિકચારિત્ર કહે છે. તેનું બીજું નામ સરાગસંયમ પણ છે.

નોકર્મભાવક્ષણ—આળસ, મોહ, અવર્ણવાદાદિકનો અભાવ થવાપર  
જે સમ્યક્ત્વાદિરૂપ સામાયિકની પ્રાપ્તિ થયા કરે છે તે નોકર્મભાવક્ષણ છે, કારણ  
કે આળસ અને મોહાદિકથી ઉપહત થયેલ પ્રાણી સંસારનો નિર્મૂળ ડચ્છેદન

અત્રાયં પ્રકરણાર્થઃ સંક્ષિપ્તઃ—દ્રવ્યક્ષણો જઙ્ગમત્વાદિવિશિષ્ટમાનવભવસ્વરૂપઃ ।  
ક્ષેત્રક્ષણ આર્યક્ષેત્રરૂપઃ । કાલક્ષણો ધર્માનુષ્ઠાનસમયઃ । ભાવક્ષણઃ ક્ષયોપશમાદિ-  
રૂપો વિજ્ઞેયઃ । અતો હે પણ્ડિત ! એતાદૃશં ચતુર્વિધં ધર્માચરણાયાતિદુર્લભં ક્ષણમવ-  
ગમ્ય સંયમાનુપાલનતત્પરોઽવશ્યં ભવેતિ ભાવઃ ॥ સૂ. ૮ ॥

ઇત્યમતિદુરાપક્ષણમવાપ્ય યાવચ્ચ શ્રોત્રાદીનાં શક્તયો ન પરિહીનાસ્તાવદાત્માર્થ  
પ્રયાસો વિધેય इति दर्शयति—‘જાવે-’ત્યાદિ ।

મૂલમ્—જાવ સોયપરિણાણા અપરિહીણા, નેત્તપરિણાણા  
અપરિહીણા, ફરિસપરિણાણા અપરિહીણા, ઇચ્છેણહિં વિરૂવરૂવેહિં  
પણ્ણાણેહિં અપરિહીણેહિં આયટ્ઠં સમ્મં સમણુવાસિજ્ઞાસિ-ત્તિ  
વેમિ ॥ સૂ. ૯ ॥

भी बोधि आदि को प्राप्त नहीं कर सकता है। नोकर्मभावक्षण को कोई  
२ आचार्य रिक्तक्षण भी कहते हैं ।

इस प्रकरण को संक्षिप्त करते हुए टीकाकार कहते हैं—त्रसपर्याय-  
विशिष्ट मानवभवस्वरूप (१) द्रव्यक्षण है, आर्यक्षेत्ररूप (२) क्षेत्रक्षण,  
धर्मानुष्ठान का समय—(३) कालक्षण और क्षयोपशमादिरूप (४) भाव-  
क्षण है, इसलिये हे परमार्थज्ञ ! मेधावी ! इस प्रकार के इस चतुर्विध क्षण  
को धर्माचरण करने के लिये अत्यन्त दुर्लभ मान कर संयम के पालन करने  
में अवश्य २ मन को लगाओ, नहीं तो समय के हाथसे निकल जाने  
पर अन्त में पश्चात्ताप के सिवाय और कुछ हाथ न आयेगा, इस लिये  
प्राप्त हुए इस चतुर्विध क्षण को संयमाराधन से सफलित करो ॥सू. ८॥

કરવામાં સમર્થ મનુષ્યભવને પ્રાપ્ત કરીને પણ બોધિ આદિને પ્રાપ્ત કરી શકતા  
નથી. નોકર્મભાવક્ષણને કોઈ કોઈ આચાર્ય રિક્તક્ષણ પણ કહે છે.

આ પ્રકરણને સંક્ષિપ્ત કરતાં ટીકાકાર કહે છે:— ત્રસપર્યાયવિશિષ્ટ માનવ-  
ભવસ્વરૂપ (૧) દ્રવ્યક્ષણ છે, આર્યક્ષેત્રરૂપ (૨) ક્ષેત્રક્ષણ, ધર્માનુષ્ઠાનનો સમય  
(૩) કાલક્ષણ અને ક્ષયોપશમાદિરૂપ (૪) ભાવક્ષણ છે, માટે હે પરમર્થજ્ઞ !  
મેધાવી ! આ પ્રકારના ચતુર્વિધ ક્ષણને ધર્માચરણ કરવા માટે અત્યંત દુર્લભ  
માનીને સંયમપાલન કરવામાં લગાવો. નહિ તો સમય નીકળી જવા પછી અંતમાં  
પશ્ચાત્તાપ સિવાય કંઈ પણ હાથ આવશે નહિ, માટે આ પ્રાપ્ત થયેલ ચતુર્વિધ  
ક્ષણને સંયમારાધનથી સફલિત કરો ॥ સૂ. ૮ ॥

छाया—यावच्छ्रोत्रपरिज्ञानानि अपरिहीनानि, नेत्रपरिज्ञानानि अपरिहीनानि, घ्राणपरिज्ञानानि अपरिहीनानि, जिह्वापरिज्ञानानि अपरिहीनानि, स्पर्शपरिज्ञानानि अपरिहीनानि, इत्येतैर्विरूपरूपैः प्रज्ञानैरपरिहीनैरात्मार्थं समनुवासयेत्, इति ब्रवीमि ॥ सू० ९ ॥

टीका—‘याव-’दित्यादि । यावज्जरया रोगेण च श्रोत्रस्य परिज्ञानानि अपरिहीनानि=न नश्यमानानि तावदात्मार्थं समनुवासयेदिति सम्बन्धः । एवं यावच्छब्दः सर्वत्र योज्यः । एवमन्येषामपि नेत्रादीनां परिज्ञानानि यावन्न क्षीयमाणानि सन्ति तावच्छ्रेयो विचिन्तनीयमिति तात्पर्यम् ।

इस प्रकार अत्यंत कठिनता से प्राप्त करने योग्य इस क्षण को पाकर के जब तक श्रोत्रादिक प्रत्येक इन्द्रिय की अपने २ विषय को जानने की शक्ति कमजोर नहीं पड़ती है तब तक आत्मकल्याण के लिये प्रयास करते रहना चाहिये, यह बात सूत्रकार कहते हैं—‘जाव सोयपरिणाणा’ इत्यादि ।

जब तक वृद्धावस्था या किसी रोग से तेरा कर्ण-इन्द्रियजन्य ज्ञान अपने विषय को ग्रहण करने की शक्ति से विकल नहीं हुआ है, नेत्र-इन्द्रियजन्य ज्ञान जब तक अपने विषय ग्रहण करने की सामर्थ्य से रहित नहीं हुआ है, घ्राण-इन्द्रियजन्य ज्ञान जब तक अपने ज्ञेय को जानने की शक्ति से क्षीण नहीं हुआ है, जिह्वा-इन्द्रियजन्य ज्ञान जब तक अपने पदार्थ को ग्रहण करने की सामर्थ्य से रहित नहीं हुआ है, स्पर्शन-इन्द्रियजन्य ज्ञान जब तक कर्कश-कठोरादि अपने विषय को ग्रहण करने की शक्ति से हीन नहीं हुआ

आ प्रकार अत्यंत कठिनताથી प्राप्त करवायेज्य आ क्षणने भेगवीने न्यां सुधी श्रोत्रादिक प्रत्येक इन्द्रियनी पोतपोताना विषयने नानुवानी शक्ति कमजोर थती नथी त्या सुधी आत्मकल्याण भाटे प्रयास करता रहेवो नेमये, ये बात सूत्रकार कहे छेः—

‘जाव सोयपरिणाणा’ इत्यादि. न्यां सुधी वृद्धावस्था अगर कोछ रोगथी ताई कर्ण-इन्द्रियजन्य ज्ञान पोताना विषयने अहुणु करवानी शक्तिथी विकल नथी थयु, नेत्र-इन्द्रियजन्य ज्ञान न्यासुधी पोतानो विषय अहुणु करवाना सामर्थ्यथी रहित नथी थयु, घ्राण-इन्द्रियजन्य ज्ञान न्यांसुधी पोताना ज्ञेयने नानुवानी शक्तिथी क्षीण नथी थयु, जिह्वा-इन्द्रियजन्य ज्ञान न्यां सुधी पोताना पदार्थने अहुणु करवाना सामर्थ्यथी रहित नथी थयु, स्पर्शन-इन्द्रियजन्य ज्ञान न्यां सुधी कर्कश कठोरादि पोताना विषयने अहुणु करवानी शक्तिथी हीन

હૈ તવ તક અર્થાત્ ઇન્દ્રિયોં કે જ્ઞાન કી વિદ્યમાનતા મેં હી હે ભવ્ય પ્રાણી ! તૂ અપના કલ્યાણ-અર્થાત્ જ્ઞાનદર્શનચારિત્ર-આરાધન રૂપ નિજ પ્રયોજન કો સિદ્ધ કરલે । યહ નિશ્ચિત હૈ-વૃદ્ધાવસ્થા આને પર, યા કિસી ભયંકર રોગ કે હોને પર-ઇન્દ્રિયોં કી શક્તિયાં યા સ્વયં ઇન્દ્રિયાં હી ક્ષીણ હો જાતી હૈં । જિસ સમય ચેચક નિકલા કરતી હૈ કઈ વ્યક્તિયોં કી આંખે ફૂટ જાતી હૈં, કાન ભી બહિરે હો જાતે હૈં । લકવા કી બીમારી મેં સ્પર્શન ઇન્દ્રિય શૂન્ય હો જાતી હૈ, વચન વર્ગણા ઠીક નહીં નિકલતી, ચલતે સમય પૈર કહીં રખતે હૈં પડતે હૈં કહીં । કહા ભી હૈ—

“ ગાત્રં સંકુચિતં ગતિર્વિગલિતા અષ્ટા ચ દન્તાવલિઃ,

દૃષ્ટિર્નશ્યતિ વર્ધતે વધિરતા વક્ત્રં ચ લાલાયતે ।

વાક્યં નાદ્રિયતે ચ બાન્ધવજનો ભાર્યા ન શુશ્રૂષતે,

હા ! કષ્ટં પુરુષસ્ય જીર્ણવયસઃ પુત્રોઽપ્યમિત્રાયતે ” ॥૧॥

“ દૃષ્ટિ ઘટી પલટી તનકી છવિ, વંક ભઈ ગતિ લંક નઈ હૈ,

રૂષ રહી પરની ઘરની, અતિરંક ભયો પરયંક લઈ હૈ ।

કાંપત નાર (નાડ) વહૈ મુખ લાર, મહામતિ સંગતિ છાર ગઈ હૈ,

અંગ ઉપંગ પુરાને પરે, તિસના ઊર ઓર નવીન ભઈ હૈ ” ॥૧॥

નથી થયું ત્યાં સુધી અર્થાત્ ઇન્દ્રિયોના જ્ઞાનની વિદ્યમાનતામાં જ હે ભવ્ય પ્રાણી ! તું પોતાનું કલ્યાણ અર્થાત્ જ્ઞાનદર્શન ચારિત્ર આરાધનરૂપ નિજ પ્રયોજનને સિદ્ધ કરી દે. એ નિશ્ચિત છે વૃદ્ધાવસ્થા આવવાથી અગર કોઈ ભયંકર રોગ થવાથી ઇન્દ્રિયોની શક્તિઓ અગર સ્વયં ઇન્દ્રિયો જ ક્ષીણ થાય છે. જે વખતે શીતલા નીકળે છે તે વખતે કઈ વ્યક્તિઓની આંખો ફૂટી જાય છે, કાન પણ બહાર થઈ જાય છે, લકવાની બીમારીમાં સ્પર્શન ઇન્દ્રિય શૂન્ય બની જાય છે, વચન-વાણી પણ ઠીક નીકળતી નથી, ચાલતી વખતે પગ કયાંય રાખે છે અને પગ પડે છે કયાંય. કહ્યું પણ છે:—

“ ગાત્રં સંકુચિતં ગતિર્વિગલિતા અષ્ટા ચ દન્તાવલિઃ,

દૃષ્ટિર્નશ્યતિ વર્ધતે વધિરતા વક્ત્રં ચ લાલાયતે ।

વાક્યં નાદ્રિયતે ચ બાન્ધવજનો ભાર્યા ન શુશ્રૂષતે,

હા ! કષ્ટં પુરુષસ્ય જીર્ણવયસઃ પુત્રોઽપ્યમિત્રાયતે ” ॥૧॥

“ દૃષ્ટિ ઘટી પલટી તનકી છવિ વંક ભઈ ગતિ લંક નઈ હૈ,

રૂષ રહી પરની ઘરની અતિ રંક ભયો પરયંક લઈ હૈ ।

કાંપત નાર (નાડ) વહૈ મુખ લાર મહામતિ સંગતિ છાર ગઈ હૈ,

અંગ ઉપંગ પુરાને પરે તિસના ઊર ઓર નવીન ભઈ હૈ ” ॥૧॥



“વ્યાધીવ તિષ્ઠતિ જરા પરિતર્જયન્તી,  
રોગાશ્ચ શત્રવ ઇવ પ્રહરન્તિ દેહમ્ ।  
આયુઃ પરિસ્રવતિ ભિન્નઘટાદિવામ્ભો,  
લોકસ્તથાપ્યહિતમાચરતીતિ ચિત્રમ્” ॥૧॥

યહં વૃદ્ધાવસ્થા અર્ધમૃતક જેવી છે । ઇસ અવસ્થામેં વુદ્ધિ પ્રાયઃ નષ્ટ હો જાતી છે, કૂબડ નિકલ આતી છે, દાંત ગિર પડતે હૈં, બાલ સફેદ હો જાતે હૈં, બલ મી કમ હો જાતા હૈં, આંખોં સે કમ સૂઝને લગતા હૈં, કાનોં સે શબ્દ સુનાઈ નહીં પડતે, હાથ પૈર ઠીલે ઔર ચલતે ફિરને સે લાચાર હો જાતે હૈં, કફ ઔર શ્વાસકા જોર બઢતા હૈં, વૈરિયોં કી તરહ સમસ્ત રોગ ઇસ અવસ્થા મેં અપના બદલા લેનેકે લિયે હી માનોં ઇકદમ ટૂટ પડતે હૈં, તૃષ્ણાં કી પ્રબલતા ઇસ અવસ્થામેં હો જાતી હૈં, પ્રત્યેક ઇન્દ્રિય વિષય ગ્રહણ કરને કી શક્તિ સે શૂન્ય હો જાતી હૈં । જિસ તરહ કબૂતર પર બાજ ઝપડને કી તાકમેં રહતા હૈં, અથવા બિલ્લી ચૂહે પકડને કી તાક લગાવે બેઠી રહતી હૈં, ઠીક ઇસી તરહ મૌત મી ઇસ અવસ્થા મેં પ્રાણ પચેરુ કો પકડને કે લિયે તૈયાર રહતી હૈં । ઁસી પ્રકાર ઇસ અવસ્થા મેં જવાની કા બલ છિપ જાયા કરતા હૈં । મયૂરોં કી ધ્વનિ સુનને સે જેસે

“વ્યાધીવ તિષ્ઠતિ જરા પરિતર્જયન્તી,  
રોગાશ્ચ શત્રવ ઇવ પ્રહરન્તિ દેહમ્ ।  
આયુઃ પરિસ્રવતિ ભિન્નઘટાદિવામ્ભો,  
લોકસ્તથાપ્યહિતમાચરતીતિ ચિત્રમ્” ॥૧॥

આ વૃદ્ધાવસ્થા અર્ધમૃતક જેવી છે, આ અવસ્થામા બુદ્ધિ નષ્ટપ્રાય થાય છે, બલ પણ ઓછું થાય છે, વાંકાપણું આવે છે, દાંત પડી જાય છે, બાલ સફેદ થાય છે, આંખોથી ઓછું દેખાય છે, કાનોથી શબ્દ સંભળાતો નથી, હાથ પગ ઠીલા અને ચાલવા કરવાથી લાચાર બને છે, કફ અને શ્વાસનું જોર વધે છે, વૈરીઓની માફક સમસ્ત રોગ આ અવસ્થામાં બહાર લેવા માટે જાણે એકદમ તુટી પડે છે, તૃષ્ણાની પ્રબલતા આ અવસ્થામા થાય છે, પ્રત્યેક ઇન્દ્રિય વિષય ગ્રહણ કરવાની શક્તિથી શૂન્ય થાય છે. જેવી રીતે કબૂતર પર બાજ ઝડપ મારવાની તક શોધે છે, અથવા બિલાડી ઉંદર પકડવાની તાક લગાવી બેસે છે, તેવી રીતે મૌત પણ આ અવસ્થામાં પ્રાણપંખેડને પકડવા તૈયાર રહે છે. જે પ્રકારે વાદળોની અંદર સૂર્યનો પ્રકાશ ઢંકાઈ જાય છે તે પ્રકારે આ અવસ્થામાં જીવાનીતું બળ છુપાઈ જાય છે. મોરની ધ્વનિ સાંભળવાથી જેમ અંદનવૃક્ષોમાં



इत्येतैः=पूर्वोक्तैर्विरूपरूपैः-इष्टानिष्टस्वभावतया नानाप्रकारैः प्रज्ञानैः=प्रकृष्ट-  
ज्ञानैरपरिहीनैः=अपरिक्षीणैः सद्भिः आत्मार्थम्=आत्मनोऽर्थ आत्मार्थः, स च ज्ञान-  
दर्शन-चारित्ररूपस्तम् ।

यद्वा-आत्मनेऽर्थो हितं प्रयोजनमिति यावत्, तच्चारित्रानुष्ठानम्, तम्,  
समनुवासयेत्=भावयेत्, रञ्जयेदिति वा, यथोक्तानुष्ठानेनात्मानं समनुपाल-  
येदिति भावः ।

इति=पूर्वोक्तं ब्रवीमि=सुधર્मा स्वामी जम्बूस्वामिनमाह-यद्भगवतः सकाशात्  
श्रुतं तदेवाहं सूत्रात्मना कथयामि ॥ सू० ९ ॥ इति ॥

इति द्वितीयाध्ययनस्य प्रथमोद्देशः सव्याख्य समाप्तः ॥ १ ॥

ચન્દનવૃક્ષોં મેં લપટે હુણ મુજંગોં કે બન્ધન ઢીલે પડ જાતે હૈં વૈસે હી ઝાંસી  
કે છુલ્લ, છુલ્લ શબ્દ સે ઇસ અવસ્થા મેં અસ્થિયોં કી સંધિયાં શિથિલ હો  
જાયા કરતી હૈં । યહ જરા એક ભયંકર વ્યાધી કી તરહ સામને આકર  
નિર્ભય રૂપ સે યહી હો જાતી હૈ, ઉસ સમય શત્રુઓં કી તરહ રોગ ઇસ  
પર પ્રહાર કરને સે નહીં ચૂકતે, ફૂટે ઘડે મેં સે પાની કી તરહ આયુ નિક-  
લતી ચલી જાતી હૈ તો ખી આશ્ચર્ય કી વાત હૈ કિ-પ્રાણી અપને આત્મ  
કલ્યાણ કી તરફ ધ્યાન નહીં દેતા ? ।

इसलिए जब तक वृद्धावस्था या किसी रोगसे तेरी शारीरिक शक्ति  
क्षीण नहीं हुई है और प्रत्येक इन्द्रिया जब तक सशक्त बनी हुई है तब  
तक सूत्रकार कहते हैं कि-“आत्मार्थ समनुवासयेत्” आत्माके लिये  
हितकारी सम्यग्दर्शन सम्यग्ज्ञान और सम्यग्चारित्र की प्राप्ति से अपने  
आपको भावित करो ।

લટકેલા સાપોના બંધન ઢીલા પડે છે તેમ ખાંસીના ખુલ્લ-ખુલ્લ શબ્દથી આ  
અવસ્થામા હાડકાઓની સંધિયો શિથિલ બની જાય છે.

આ વૃદ્ધાવસ્થા એક ભયંકર વ્યાધિની માફક સામે આવીને નિર્ભય રૂપથી  
ખડી થઈ જાય છે, તે વખતે શત્રુઓની માફક રોગ પણ પ્રહાર કરવામાં ચુકતા  
નથી, ફુટેલા ઘડામાંથી પાણીની માફક આયુ નિકળવા માંડે છે, તો પણ આશ્ચ-  
ર્યની વાત છે કે પ્રાણી પોતાના આત્મકલ્યાણની તરફ ધ્યાન દેતા નથી. માટે  
જ્યાં સુધી વૃદ્ધાવસ્થા અગર કોઈ રોગથી તારી શારીરિક શક્તિ ક્ષીણ નથી  
થઈ, અને પ્રત્યેક ઇન્દ્રિય જ્યાં સુધી સશક્ત બનેલી છે ત્યાં સુધી સૂત્રકાર  
કહે છે કે-“ આત્માર્થ સમનુવાસયેત્ ” આત્મા માટે હિતકારી સમ્યગ્દર્શન  
સમ્યગ્જ્ઞાન અને સમ્યક્ચારિત્રની પ્રાપ્તિથી પોતાને ભાવિત કરે.

યહાં આત્મા કે લિયે હિતકારી સમ્યક્ચારિત્ર કા પ્રધાનતયા ગ્રહણ હોતા હૈ । ક્યોં કિ યથાખ્યાતચારિત્રકે વિના કેવલજ્ઞાન તથા કેવલ-દર્શન નહીં હો સકતે । ચૌદહવેં ગુણસ્થાનમેં યથાખ્યાત ચારિત્ર કી પૂર્ણતા હોતે હી યહ આત્મા “ અ ઇ ઉ ક્લૃ ” ઇન પાંચ હસ્વ અક્ષરોં કે ઉચ્ચારણ કાલ તક વહાં રહકર મુક્તિમેં જા વિરાજતા હૈ । ઇસ અપેક્ષા સે ચારિત્ર કી યહાં પર પ્રધાનતા કહી હૈ । સમ્યગ્દર્શન કી પૂર્ણતા ચતુર્થ ગુણસ્થાનમેં, સમ્યગ્જ્ઞાનકી પૂર્ણતા તેરહવેં ગુણસ્થાન મેં ઔર સમ્યક્ ચારિત્ર કી પૂર્ણતા ચૌદ હવેં ગુણસ્થાન મેં શાસ્ત્રકારોં ને બતલાઈ હૈ ।

ઇસં પૂર્વોક્ત અર્થ કો સુધર્મા સ્વામી જમ્બૂસ્વામી સે કહતે હૈં કિ-હે જમ્બૂ ! મૈને જૈસા ભગવાન સે સુના હૈ વૈસા હી તુજે કહતા હૂં ॥ સૂ૦ ૧ ॥

॥ યહ દ્વિતીય અધ્યયન કા પ્રથમ ઉદ્દેશ સમાપ્ત હુઆ ॥ ૨-૧ ॥



અહીં આત્મા માટે હિતકારી સમ્યક્ચારિત્રનું પ્રધાનતયા ગ્રહણ થાય છે, કારણ કે યથાખ્યાતચારિત્ર વિના કેવળજ્ઞાન તથા કેવળદર્શન નથી થતું. ચૌદમા ગુણસ્થાનમાં યથાખ્યાતચારિત્રની પૂર્ણતા થતાં જ આ આત્મા “ અ ઇ ઉ ક્લૃ ” આ પાંચ હસ્વ અક્ષરોનું ઉચ્ચારણ કાલ તક ત્યાં રહીને મુક્તિમાં ખિરાળે છે. આ અપેક્ષાથી ચારિત્રની આ ઠેકાણે પ્રધાનતા કહી છે. સમ્યગ્દર્શનની પૂર્ણતા થોડા ગુણસ્થાનમાં, સમ્યગ્જ્ઞાનની પૂર્ણતા તેરમા ગુણસ્થાનમાં, અને ચારિત્રની પૂર્ણતા ચૌદમા ગુણસ્થાનમાં શાસ્ત્રકારોએ બતાવી છે.

આ પૂર્વોક્ત અર્થને સુધર્માસ્વામી જમ્બૂસ્વામીથી કહે છે કે-હે જમ્બૂ ! મેં જેવી રીતે ભગવાન પાસેથી સાંભળ્યું છે તેવું જ તમને કહું છું. ॥ સૂ૦ ૬ ॥

॥ બીજા અધ્યયનનો પહેલો ઉદ્દેશ સમાપ્ત ॥ ૨-૧ ॥



## ॥ આચારાંગ સૂત્રે દ્વિતીયાધ્યયનસ્ય દ્વિતીયોદ્દેશઃ ॥

ઉક્તઃ પ્રથમોદ્દેશઃ, સામ્પ્રતં દ્વિતીયો વ્યાખ્યાયતે, તત્રાયં સમ્બન્ધઃ-પ્રથમે વિષયકષાય માતા પિત્રાદિ લોકવિજયેન સંયમિનો મોક્ષકારણચારિત્રસ્ય પ્રાપ્તિઃ, કિંચ્ચ લોકવિજયેન યાવદ્રોગજરાદયો નાયાતાસ્તાવદાત્માર્થં સંયમો વિધેય इत्यपि प्रतिपादितम् ।

## ॥ આચારાંગ સૂત્રકે દૂસરે અધ્યયનકા દૂસરા ઉદ્દેશ ॥

પ્રથમ ઉદ્દેશ કા વર્ણન હો ચુકા, અબ દ્વિતીય ઉદ્દેશ કા વર્ણન કરતે હૈં-ઇસ કે વર્ણન કરને કા અભિપ્રાય યહ હૈ કિ-પ્રથમ ઉદ્દેશ મેં જો યહ વાત બતલાઈ ગઈ હૈ કિ-“વિષય કષાય ઓર માતા પિતા આદિ જો લોક હૈં ઊન પર વિજય પ્રાપ્ત કરને સે, અર્થાત્ કષાયોં કો જીતને ઓર માતા પિતા આદિ કે સ્નેહ નિવારણ સે સંયમી કો મોક્ષ કે કારણભૂત ચારિત્રકી પ્રાપ્તિ હોતી હૈ। તથા લોક પર વિજય કરલેને સે જબ તક રોગાદિક અથવા જરાવસ્થા વગેરહ જો સંયમ કો ધારણ કરને મેં પ્રતિબંધક હૈં, વે ઇસ શરીર કો આકર નહીં ઘેરતે હૈં ઇસકે પહિલે આત્મકલ્યાણ કે લિયે સંયમ કા આરાધન કરલેના ચાહિયે ” ॥

## આચારાંગ સૂત્રના બીજા અધ્યયનનો બીજો ઉદ્દેશ

પહેલાં ઉદ્દેશનું વર્ણન સમાપ્ત થયું. હવે બીજા ઉદ્દેશનું વર્ણન કરે છે. તેનું વર્ણન કરવાનો અભિપ્રાય એ છે કે મહેલા ઉદ્દેશમાં જે વાત બતાવવામાં આવી છે કે “વિષયકષાય અને માતાપિતા આદિ જે લોક છે તે ઉપર વિજય પ્રાપ્ત કરવાથી અર્થાત્ કષાયોને જીતવાથી અને માતાપિતા આદિનો સ્નેહ નિવારણથી સંયમીને મોક્ષના કારણભૂત ચારિત્રની પ્રાપ્તિ થાય છે. અને લોક ઉપર વિજય કરવાથી જ્યાં સુધી રોગાદિક અને જરાવસ્થા વિગેરે જે સંયમને ધારણ કરવામાં પ્રતિબંધક છે. તે આ શરીરને આવીને ઘેરતા નથી. તેનાં પહેલાં આત્મકલ્યાણ માટે સંયમનું આરાધન કરી લેવું જોઈએ.

અત્ર ચ સંયમિનઃ કદાચિન્મોહનીયોદયાદજ્ઞાનલોભાદિસમુદયાદાત્મદોષાદ્વા સંયમે ચારતિરાવિર્ભૂતા તસ્યા નિરસનં, તથા યેઽપિ વિષયિણોઽલ્પમધિકં વા કાલં સંયમમનુપાલ્યાપિ પૂર્વોક્તદોષેણ મોહોદયાત્સંયમે શૈથિલ્યં પ્રાપ્નુવન્તિ તેષાં સંયમે દૃઢતા, વિષયેષુ ચાદૃઢતા યથા ભવેત્તથાઽઽહ ‘અરહં’ ઇત્યાદિ।

સંયમી કો કદાચિત્ મોહ કે ઉદય સે યા અજ્ઞાન એવં લોભાદિ કિસી કષાય કે ઉદયસે અથવા અપને હી કિસી દોષ કે વશ સે સંયમ મેં જો અરતિભાવ ઉત્પન્ન હો જાતા હૈં ઉસકો જૈસે મીં દૂર કિયા જા સકે; તથા જો શબ્દાદિ વિષયોં મેં લોલુપી બને હુએ હૈં ઓર સંયમ કા પાલન મીં કર રહે હૈં વે ઉસ સંયમ કો અલ્પકાલ તક યા અધિક સમય તક પાલન કરકે મીં પૂર્વોક્ત દોષ સે અથવા મોહકે ઉદય સે સંયમ મેં શિથિલ બન જાતે હૈં વે સંયમ મેં શિથિલ ન બનને પાવેં અર્થાત્ સંયમ મેં ઉનકી દૃઢતા હી બની રહે તથા વિષયોં કી ઓર સે ઉનકી આસક્તિ ઘટે—ઈસી બાતકા વર્ણન ઈસ દ્વિતીય ઉદ્દેશ મેં સૂત્રકાર કરતે હૈં— ‘અરહં ઇત્યાદિ’ ।

અથવા—ચારિત્ર કો અંગીકાર કરને કે લિયે જિનકી ઇચ્છા જાગૃત તો હો ચુકી હૈં પરન્તુ મોહ કે ઉદય સે ઉનકે મન મેં અમીં તક અરતિ-ભાવ વિદ્યમાન હૈં, એવં જિન્હોંને ચારિત્ર કો ધારણ તો કર લિયા હૈં પરન્તુ ઉસકે ધારણકે બાદ લોભાદિ સે કિસી ૨ સમય ઉન્હેં ઉસસે અરતિભાવ મીં પૈદા હો જાતા હૈં, ઉસ સમય ઉન્હેં ક્યા કરના ચાહિયે? ઈસીકા નિરૂ-

સંયમીને કદાચિત્ મોહના ઉદયથી અજ્ઞાન અને લોભાદિ કોઈ કષાયના ઉદયથી અથવા પોતાના કોઈ દોષના વશથી સંયમમાં જે અરતિભાવ ઉત્પન્ન થાય છે, તેને જેમ તેમ પણ દૂર કરવામાં આવે, અને જે શબ્દાદિ વિષયોમાં લોલુપી બનેલાં છે અને સંયમનું પાલન કરે છે તેઓ સંયમનું અલ્પ કાળ સુધી અગર અધિક સમય સુધી પાલન કરીને પણ પૂર્વોક્ત દોષથી અથવા મોહના ઉદયથી સંયમમાં જેઓ શિથિલ બની જાય છે તેઓ સંયમમાં શિથિલ બની ન જાય અર્થાત્ સંયમમાં તેઓની દૃઢતા બની રહે અને વિષયોની તરફથી તેઓની આસક્તિ ઘટે આ વાતનું વર્ણન આ બીજા ઉદ્દેશમાં સૂત્રકાર કરે છે:—‘અરહં’ ઇત્યાદિ.

અને ચારિત્રને અંગીકાર કરવા માટે જેની ઇચ્છા જાગૃત બનેલી છે પરંતુ મોહના ઉદયથી તેના મનમાં હજી સુધી અરતિભાવ મોજુદ છે અને જેઓએ ચારિત્રને ધારણ કરી લીધું છે પરંતુ લીધા પછી લોભાદિથી કોઈ કોઈ સમય તેને તેમાં અરતિભાવ પેદા થાય છે. તે વખતે તેણે શું કરવું જોઈએ તેનું નિરૂપણ

યદા સમુત્પદ્યમાનરુચેરપિ મોહોદયાદરતિર્જાયતે, કસ્યચિંચ ચારિત્રગ્રહણાનન્તરં  
લોભાદિના કદાચિદરતિર્ભવતિ તદા કિં કર્તવ્યમિત્યાહ—‘અરહં’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ—અરહં આઉદે સે મેહાવી સ્વર્ણસિ મુક્તે ॥ સૂ૦ ૧ ॥

છાયા—અરતિમ્ આવર્તેત સ મેધાવી ક્ષણે મુક્તઃ ॥ મૂ૦ ૧-॥

ટીકા—‘અરતિ’—મિત્યાદિ, સઃ=કૃતચારિત્રગ્રહણો મેધાવી પરિજ્ઞાતનિઃસાર-  
સંસારઃ સન્ ‘અરતિમ્’ રમણં=રતિઃ સંયમે ધૃતિસ્તસ્યાભાવોડરતિસ્તાં પશ્ચાચાર-  
પણ કરતે હૈ—‘અરહં’ ઇત્યાદિ ।

જિસને સંસાર કી અસારતા જાન લી હૈં ઓર ચારિત્ર કો બી અંગી-  
કાર કર લિયા હૈં વહ અરતિભાવ કો દૂર કરે તો ક્ષણ ભર મેં મુક્ત હો  
જાવે । ચારિત્ર કો જિસને અંગીકાર કર લિયા હૈં ઉસકા યહ ધર્મ હૈકિ  
વહ કિતને બી પરીપહોં ઓર ઉપસર્ગોં કે ઉત્પન્ન હોને પર બી અપને  
ચારિત્ર ધર્મકા નિર્દોષ રીતિ સે પાલન કરે । પરન્તુ જંવ તંક કષાયોં કા  
પૂર્ણતયા વિનાશ નહોં હો જાતા, તવ તંક જીવ સે ઇસ પ્રકાર કો પ્રવૃત્તિ  
નહોં હોતી હૈં । ક્યોં કિ જિસ ચારિત્રકા યહાં પર વર્ણન કિયા જા રહા  
હૈં વહ ક્ષાયોપશમિક હૈં, ક્ષાયોપશમિક ચારિત્ર તમી હોતા હૈં જવ ચારિત્ર  
મોહનીય કર્મ કે ૨૧ પ્રકૃતિયોં સે સે સર્વઘાતિ પ્રકૃતિયોં કે કુછ સ્પર્દકોં  
કા-અનન્તાનન્ત કર્મ વર્ગણાઓં કે સમુદાયકા એક સ્પર્દક હોતા હૈં ઉનકા-  
ઉદયભાવી ક્ષય હો તથા કુછ સર્વઘાતિસ્પર્દકોં કા સદવસ્થારૂપ ઉપશમ હો  
એવં દેશઘાતિપ્રકૃતિકા ઉદય હો । ઇસ અવસ્થા કા નામ ક્ષાયોપશમ હૈં ।

આ બીજા ઉદ્દેશમાં સૂત્રકાર કહે છે—“અરહં” ઇત્યાદિ.

જેણે સંસારની અસારતા જાણી છે, અને ચારિત્રને પણ અંગીકાર કરેલ  
છે તે અરતિભાવને દૂર કરે તો ક્ષણ ભરમાં મુક્ત થઈ જાય. ચારિત્રને જેણે  
અંગીકાર કરેલ છે તેનો એ ધર્મ છે કે કેટલા પણ પરિપક્વ અને ઉપસર્ગોં  
ઉત્પન્ન થાય તો પણ પોતાના ચારિત્રધર્મનું નિર્દોષ રીતિથી પાલન કરે, પરંતુ  
ત્યાં સુધી ક્ષાયોનો પૂર્ણ વિનાશ નથી થતો ત્યાં સુધી જીવતી તેવા પ્રકારની  
પ્રવૃત્તિ થતી નથી, કારણ કે જે ચારિત્રનું આ ઠેકાણું વર્ણન આપવામાં આવ્યું છે તે  
ક્ષાયોપશમિક છે. ક્ષાયોપશમિક ચારિત્ર ત્યારે જ થાય છે—ત્યારે ચારિત્ર મોહનીય  
કર્મની ૨૧ પ્રકૃતિઓથી સર્વઘાતિ પ્રકૃતિઓના ચોરાં સ્પર્દકોના-અનન્તાનન્ત કર્મ  
વર્ગણાઓના સમુદાયનો એક સ્પર્દક થાય છે. તેના ઉદયભાવી ક્ષય થાય તથા ચોરા  
સર્વઘાતિ સ્પર્દકોના સદવસ્થારૂપ ઉપશમ થાય અને દેશઘાતિ પ્રકૃતિનો ઉદય  
થાય. આ અવસ્થાનું નામ ક્ષાયોપશમ છે.

विषयारुचिं कषायसंसर्गोत्पन्नां-माता-पितृ-कलत्र-मित्राद्युत्पादिताम् आवर्तेत=निवर्तयेत्, विषयाभिष्वङ्गे-रतिसत्त्वे संयमे चारतिर्भवति, तथा च कण्डरीकसदृशस्य संयमिनो नरकादिगतिर्जायते, विषये रत्यभावे संयमे रतिरुत्पद्यते, तथा च पुण्डरीक-सदृशस्य सद्गतिर्भवति । संयमे रतिं विदधानस्य न किमपि दुःखं पराभवति, उक्तञ्च—

इस दशामें देशघाति-प्रकृति का तो उदय रहता है। यह चारित्र का बिगाड़ नहीं करती। किन्तु जिनका उपशम हुआ है—वे यदि निमित्त पाकर उदय में आजाती हैं तो वे अवश्य २ चारित्र में जीव को अरति-भाव या उससे भ्रष्ट कर देती हैं। इसी बात को लक्ष्य में रखकर सूत्रकार संयमी जन को कहते हैं कि—‘अरतिं आवर्तेत’ इति संयमधारी मेधावी संयम में अरति को दूर करे। संयम में धृति धारण करना—इस का नाम रति है, रति का अभाव अरति है, पाँच आचारका पालन करना संयम है। इस विषय में संयमी जनको कषायों के संसर्ग से अथवा माता-पिता-मित्र-स्त्री आदि के संसर्ग से अरतिभाव पैदा हो सकता है। टीकाकार इस पर अपना अभिप्राय प्रकट करते हुए कहते हैं कि—बात भी ठीक है, क्योंकि विषयों में अभिष्वंग (आसक्ति) रूप-रति के सद्भाव होने पर संयममें अरतिभाव जीवों को उत्पन्न हो जाता है, परन्तु मेधावी मुनि संसार की असारता को भली भाँति जानता है तो उसका कर्तव्य है कि वह अरतिभाव को दूर करे, नहीं तो कण्डरीक की तरह उसे नरक गामी होना पड़ेगा, और संयम में रति करने से पुण्डरीक की तरह उसे

આ દશામાં દેશઘાતિ પ્રકૃતિનો તો ઉદય રહે છે, તે ચારિત્રનો બિગાડ કરતી નથી, પરંતુ જેનો ઉપશમ થયેલ છે તે ક્ષાય નિમિત્ત બનીને ઉદયમાં આવી જાય છે તો તે અવશ્ય જ ચારિત્રમાં જીવને અરતિભાવ અગર તેનાથી ભ્રષ્ટ કરે છે. આ વાતને લક્ષમાં રાખીને સૂત્રકાર સંયમી જનને કહે છે કે—‘અરતિં આવર્તેત’ સંયમધારી મેધાવી સંયમમાં અરતિને દૂર કરે. સંયમમાં ધૃતિ ધારણ કરવી, તેનું નામ રતિ છે. રતિનો અભાવ અરતિ છે. પાંચ આચારનું પાલન કરવું સંયમ છે. આ વિષયમાં સંયમી જનને કષાયોના સંસર્ગથી અથવા માતા-પિતા-મિત્ર-સ્ત્રી આદિના સંસર્ગથી અરતિભાવ પેદા થઈ જાય છે ત્યારે ટીકાકાર આ વાત પર પોતાનો અભિપ્રાય પ્રગટ કરતા કહે છે કે—વાત પણ ઠીક છે. કારણ કે વિષયોમાં આસક્તિરૂપ રતિનો સદ્ભાવ થવાથી સંયમમાં અરતિભાવ જીવને ઉત્પન્ન થાય છે. પરંતુ મેધાવી મુનિ સંસારની અસારતાને ભલીભાંતિ જાણે છે. તેથી તેનું કર્તવ્ય છે કે તે અરતિભાવને દૂર કરે, નહીં તો કંડરીકની માફક તેને નરકગામી થવું પડશે, અને સંયમમાં રતિ કરવાથી પુંડરીકની માફક તેને

“ क्षितितलशयनं वा, प्रान्तभैक्षाशनं वा,  
 सहजपरिभवो वा, दुष्टदुर्भाषितं वा ।  
 महति फलविशेषे, नित्यमभ्युद्यतानां,  
 न मनसि न शरीरे, दुःखमुत्पादयन्ति ” ॥ १ ॥

“ तणसंथारनिसण्णोऽपि मुणिवरो नट्टरागमयमोहो ॥  
 जं पावइ मुत्तिसुहं, तं कत्तो चक्कवट्ठी वि ” ॥ १ ॥

छाया—तृणसंस्तारनिषण्णोऽपि मुनिवरो नष्टरागमदमोहः ॥  
 यत्प्राप्नोति मुक्तिसुखं तत्कुतश्चक्रवर्त्यपि ॥ १ ॥ इति, किमधिकेन ।

सद्गतिका लाभ होगा । जीवों को अरति का कारण दुःख होता है । परन्तु संयम को निर्दोष रीति से पालन करनेवाले को कोई भी दुःख नहीं होता है । यदि किसी प्रकार के कर्मोदय से उसे दुःख भी आ पड़े तो वह दुःख उस जीव को संयम में अरतिभाव का कारण नहीं होता है । यही बात नीचे लिखे श्लोकसे प्रकट की है, जैसे—

क्षितितलशयनं वा प्रान्तभैक्षाशनं वा,  
 सहजपरिभवो वा दुष्टदुर्भाषितं वा ।  
 महति फलविशेषे नित्यमभ्युद्यतानां,  
 न मनसि न शरीरे दुःखमुत्पादयन्ति ॥ १ ॥

फिर भी—“ तणसंथारनिसण्णो वि मुणिवरो नट्टरागमयमोहो ।  
 जं पावइ मुत्तिसुहं, तं कत्तो चक्कवट्ठी वि ॥ १ ॥ ”

सद्गतिकेन लाभ यथे. जिवेने अरतिना कारणे दुःख थाय छे, परंतु संयमने निर्दोष रीतिथी पालन करवाथी केअ पणु दुःख थतुं नथी. कदाच केअ प्रकारना कर्मोदयथी तेने दुःख पणु आवी पडे तो ते दुःख ते जिवने संयमभां अरति लावनुं कारण थतुं नथी, जे बात नीचे लखेला श्लोकथी प्रकट करी छे—

“ क्षितितलशयनं वा, प्रान्तभैक्षाशनं वा,  
 सहजपरिभवो वा, दुष्टदुर्भाषितं वा ।  
 महति फलविशेषे, नित्यमभ्युद्यतानां,  
 न मनसि न शरीरे, दुःखमुत्पादयन्ति ” ॥ १ ॥

फिरभी—“ तणसंथारनिसण्णो वि मुणिवरो नट्टरागमयमोहो ।  
 जं पावइ मुत्तिसुहं, तं कत्तो चक्कवट्ठी वि ” ॥ १ ॥



મોહનીયક્ષયોપશમેનાધિગતચારિત્રસ્ય કદાચિત્પુનર્મોહનીયોદયાદર્શિત્વપન્ના,  
તસ્યાઃ ક્ષયાર્થમુપદિશ્યત-इति तात्पर्यम् ।

નન્વનેનારતિમતે મેધાવિન ઉપદેશો, યશ્ચ મેધાવી સ પરિજ્ઞાતભવસ્વરૂપ એવ  
ભવતિ, તસ્મિંશ્ચારતિમત્ત્વસ્યાસન્મવાચ્છાયાતપયોરિવ સહાનવસ્થાનરૂપવિરોધ-  
સત્ત્વાન્મેધાવિત્ત્વારતિમત્ત્વયોઃ કથમેકત્ર સ્થિતિઃ ? । ઉક્તશ્ચ—

इसका भाव यही है—कि भूमि पर सोना, अन्तप्रान्त भिक्षा का सेवन  
करना चाहे, कोई तिरस्कार करे, चाहे दुष्ट खोटे २ वचन भी कहें, तो भी  
जिन साधु पुरुषों की प्रवृत्ति उत्तम फल के लाभ करने में सावधान है उनके  
लिये इन बातों से मन में और शरीर में कोई भी कष्ट नहीं होता है।  
“ तणसंथारनिसण्णो ” घासकी शय्या पर बैठे हुए रागमदमोह रहित मुनि  
निवृत्तिभावसे जिस सुखका अनुभव करता है उस प्रकार के सुख का  
अनुभव रत्नसिंहासन पर बैठा हुवा चक्रवर्ती भी नहीं कर सकता ॥१॥

शंका—चारित्र मोहनीय कर्मके क्षयोपशम से चारित्र की जिसे  
प्राप्ति हो चुकी है और फिर बाद में चारित्रमोहनीय की किसी एक  
प्रकृति के उदय से उसमें जिसे अरतिभाव हो गया है ऐसे अरतिभावयुक्त  
મેધાવી के लिये आपका यह उपदेश कि—“ गृहीत—चारित्र में अरतिभाव  
को दूर करे ” लागू होता है । परन्तु जो मेधावी है वह तो संसार के स्वरूप  
का जानकार ही होता है, उसमें अरतिपने का सद्भाव तो असंभव ही  
है । क्यों कि जिस प्रकार छाया और आतप-धूप का एक जगह एक साथ

એનો ભાવ એ છે કે—ભૂમિ ઉપર સુવું, અન્ત પ્રાન્ત-ભિક્ષા સેવન કરવી,  
ભલે કોઈ તિરસ્કાર કરે અને દુષ્ટ ખોટા ખોટા વચન પણ બોલે તો પણ જે  
સાધુપુરુષ ઉત્તમ ફળનો લાભ કરવામાં સાવધાન છે તેને આવી વાતોથી મનમાં  
અને શરીરમાં કોઈ પણ કષ્ટ થતું નથી. “ તણસંથારનિસણ્ણો ” ઘાસની શય્યા  
પર બેઠેલા, રાગ મદ મોહ રહિત મુનિ નિવૃત્તિ ભાવથી જે નિર્દોષિતારૂપ સુખનો  
અનુભવ કરે છે તે સુખનો અનુભવ રત્નસિંહાસન ઉપર બેઠેલો ચક્રવર્તી પણ  
કરી શકતો નથી. ॥ ૧ ॥

शङ्का-चारित्रमोहनीय कर्मना क्षयोपशमधी चारित्रिनी नेने प्राप्ति થયેલી  
છે, અને પછી ચારિત્ર મોહનીયની કોઈ એક પ્રકૃતિના ઉદયથી તેમાં જેને અરતિ  
ભાવ થયો છે એવા અરતિભાવયુક્ત મેધાવી માટે આપનો એ ઉપદેશ—“ ગૃહીત-  
ચારિત્રમાં અરતિભાવને દૂર કરે ” લાગુ થાય છે. પરંતુ જે મેધાવી છે તે તો  
સંસારના સ્વરૂપનો બાણકાર હોય છે, તેમાં અરતિપણના સદ્ભાવનો તો અસંભવ  
જ છે, કારણ કે જે પ્રકારે છાયા અને તડકાનો એક જગ્યાએ એકી સાથ રહેવું

“તજ્ઞાનમેવ ન ભવતિ, યસ્મિન્નુદિતે વિભાતિ રાગગણઃ ।

તમસઃ કુતોઽસ્તિ શક્તિર્દિનકરકિરણાગ્રતઃ સ્થાતુમ્ ॥ ૧ ॥” ઇતિ ।

મોહગ્રહગ્રહિલોઽજ્ઞાની સંયમેઽરતિં, વિપયાભિષ્વજ્ઞે કામિન્યાદૌ રતિં ચ કરોતિ, મેધાવી તુ યથા હસ્તી લઘુવૃક્ષે ઘર્ષણં ન કરોતિ તથૈવ તુચ્છે કામિન્યાદૌ રતિં ન વિદધાતિ, કથં તર્હિ પ્રકૃતે મેધાવિનોઽરતિસમ્ભવો વિરોધસત્ત્વાદિતિ ચેન્ન ।

રહનાં વિરુદ્ધ હૈ, ઉસી પ્રકાર મેધાવિત્ત્વ કા ઓર અરતિમત્ત્વ કા બી એક જગહ એક સાથ રહના વિરુદ્ધ હી હૈ । ફિર ઇન દોનોં કા એક જગહ યુગપત્ત્ કહના કૈસે સંભવ હો સકતા હૈં ? યહી બાત અન્યત્ર બી કહી હૈ—

“તજ્ઞાનમેવ ન ભવતિ, યસ્મિન્નુદિતે વિભાતિ રાગગણઃ ।

તમસઃ કુતોઽસ્તિ શક્તિ, —દિનકરકિરણાગ્રતઃ સ્થાતુમ્ ॥ ૧ ॥” ઇતિ ॥

બહ જ્ઞાન જ્ઞાન હી નહીં હૈ કિ જિસં કે ઉદિત હોને પર રાગાદિ ગણકા સદ્ભાવ રહે । ક્યા સૂર્ય કે ઉદય હોને પર બી અંધકાર રહ સકતા હૈ ? કબી નહીં ॥ ૧ ॥ જો મોહ રૂપી ગ્રહસે ઉન્મત્ત હો રહે હૈ—એસે અજ્ઞાની જીવ હી સંયમ મેં અરતિ ઓર શબ્દાદિ વિષયોં મેં રતિ કિયા કરતે હૈં । પરન્તુ જો મેધાવી હોતે હૈં—વે જિસ પ્રકાર હાથી એક છોટે વૃક્ષ સે ઘર્ષણ નહીં કરતા-ઉસી પ્રકાર સંસાર કે તુચ્છ પદાર્થોં મેં બી રતિ નહીં કરતે । કિન્તુ ડનકી ડનમેં અરતિ ઓર સંયમ મેં રતિ રહતી હૈ । ફિર યહાં પર મેધાવી કો અરતિ હોને કા સંભવ કૈસે કહા ?

અશક્ય છે તે પ્રકારે મેધાવિત્ત્વને અરતિલાવને પણ એક જગ્યાએ સાથ રહેવું વિરુદ્ધ જ છે, પછી એ બન્નેનું એક જગ્યાએ જોડાણ કહેવું કેવી રીતે સંભવ થઈ શકે, આ બાત બીજી જગ્યાએ પણ બતાવી છે કે:—

“તજ્ઞાનમેવ ન ભવતિ, યસ્મિન્નુદિતે વિભાતિ રાગગણ ।

તમસઃ કુતોઽસ્તિ શક્તિ-દિનકરકિરણાગ્રતઃ સ્થાતુમ્” ॥ ૧ ॥

તે જ્ઞાન જ્ઞાન જ નથી કે જેના ઉદય થવાથી રાગાદિગણનો સદ્ભાવ રહે, સૂર્યનો ઉદય થવાથી શું અંધકાર રહી શકે છે ? કદિ નહિ ॥ ૧ ॥

જે મોહરૂપી ગ્રહથી ઉન્મત્ત થઈ રહેલ છે એવા અજ્ઞાની જીવ જ સયમમાં અરતિ અને શબ્દાદિ વિષયોમાં રતિ કરે છે પરંતુ જે મેધાવી હોય છે તે જેમ હાથી નાના વૃક્ષથી ઘર્ષણ કરતો નથી તે પ્રકાર સંસારના તુચ્છ પદાર્થોમાં રતિ નથી કરતા પણ તેની તેમાં અરતિ અને સયમમાં રતિ જ રહે છે. વળી આ ઠેકાણે મેધાવીને અરતિ હોવાનો સંભવ પણ કેમ હોય

અનેન ચ સમધિગતચારિત્રસ્યોપદેશં પ્રદાતુકામ સૂત્રકારઃ । ચારિત્રં પ્રતિ જ્ઞાનસ્ય-  
 હેતુતયા જ્ઞાનરૂપકારણાભાવાચ્ચારિત્રકાર્યાસત્ત્વં સર્વસમ્મતં, ન પુનરત્ર જ્ઞાનારત્યો-  
 વિરોધઃ સમ્ભવતિ, કિન્તુ રત્યરત્યોવિરોધાચ્ચારિત્રમોહનીયોદયાત્સંયમે ભવત્યેવારતિઃ-  
 જ્ઞાનાજ્ઞાનયોરેવ વિરોધાત્, ન સંયમારતિજ્ઞાનયોવિરોધ ઇતિ પ્રકૃતેઽપિ મેધાવિનોઽ-  
 રતિસત્ત્વે વિરોધાભાવાત્ । સંયમારતિનિવૃત્તસ્ય કિં ભવતીત્યાહ ‘ક્ષણે’ ઇતિ, પરમ-  
 સ્તોકઃ કાલઃ ક્ષણસ્ત્ર સુક્તો ભવતિ ।

ઉત્તર—ચારિત્ર કે પ્રતિ જ્ઞાન હેતુ હોતા હૈ, જ્ઞાન રૂપ કારણ કે અભાવ  
 મેં ચારિત્ર રૂપ કાર્યકા અભાવ રહતા હૈ; યહ સબ માનતે હૈં । યહાં પર  
 જ્ઞાન મેં ઓર અરતિ મેં વિરોધ કા કથન નહીં કિયા હૈ કિન્તુ રતિ ઓર  
 અરતિ કા વિરોધ હોને સે ચારિત્ર મોહનીય કે ઉદય સે સંયમ મેં અરતિ  
 હોતી હૈ । જ્ઞાન ઓર અજ્ઞાન મેં હી વિરોધ હૈ સંયમ મેં અરતિ કા ઓર  
 જ્ઞાન કા કોઈ વિરોધ નહીં હૈ । ઇસલિયે મેધાવી હોને પર ભી સંયમ મેં  
 અરતિ કા સદ્ભાવ હોતા હૈ । ઇસ મેં કિસી પ્રકારકા વિરોધ નહીં હૈ ।

ટીકાકાર કા યહ અભિપ્રાય હૈ કિ જિસને ચારિત્ર-સંયમ અંગીકાર  
 કર લિયા હૈ વહ યદિ જ્ઞાની હૈ તો ભી ઉસે ચારિત્ર મોહકે ઉદય સે ઉસમેં  
 અરતિભાવ ઉત્પન્ન હો સકતા હૈ । ક્યોંકિ ચારિત્ર કે પ્રતિ જ્ઞાન હેતુ-કારણ હૈ,  
 જહાં કારણ કા અભાવ હૈ વહાં કાર્યકા ભી અભાવ હોતા હૈ જબ જ્ઞાન રૂપ  
 કારણ કા સદ્ભાવ હી નહીં હૈ તબ ઉસકે કાર્ય રૂપ ચારિત્ર કા સદ્ભાવ કૈસે  
 હો સકતા હૈ ? નહીં હો સકતા । ઇસલિયે ઉસે જ્ઞાનસંપન્ન હોના હી ચાહિયે ।

ઉત્તર—ચારિત્રને પ્રતિ જ્ઞાન હેતુ હોય છે. જ્ઞાનરૂપ કારણના અભાવમાં  
 ચારિત્રરૂપ કાર્યનો અભાવ રહે છે, એ બધા માને છે. આ ઠેકાણે જ્ઞાનમાં અને  
 અરતિમાં વિરોધનું કથન નથી કર્યું. પણ રતિ અરતિનો વિરોધ હોવાથી ચારિત્ર-  
 મોહનીયના ઉદયથી સંયમમાં અરતિ થાય છે. જ્ઞાન અને અજ્ઞાનમાં જ વિરોધ છે.  
 સંયમમાં અરતિનો અને જ્ઞાનનો કોઈ વિરોધ નથી માટે મેધાવી હોવા છતાં પણ  
 સંયમમાં અરતિનો સદ્ભાવ થાય છે તેથી કોઈ પ્રકારનો આમાં વિરોધ નથી.

ટીકાકારનો એ અભિપ્રાય છે કે જેણે ચારિત્ર-સંયમ અંગીકાર કરેલ છે તે  
 જ્ઞાની છે તો પણ તેને ચારિત્રમોહના ઉદયથી તેમાં અરતિભાવ ઉત્પન્ન થઈ શકે  
 છે. કેમકે ચારિત્રના પ્રતિ જ્ઞાન હેતુ-કારણ છે, જ્યાં કારણનો અભાવ છે ત્યાં  
 કાર્યનો પણ અભાવ થાય છે. જ્યાં જ્ઞાનરૂપ કારણનો સદ્ભાવ જ નથી ત્યાં  
 તેના કાર્યરૂપ ચારિત્રનો સદ્ભાવ કેવી રીતે હોઈ શકે ? બદકે નથી થતો  
 માટે તેને જ્ઞાનસંપન્ન થવું જ જોઈએ. તેને અરતિભાવ ઉત્પન્ન

उसके अरति भाव उत्पन्न होने में कौन विरोध आता है? सहानवस्थालक्षण-साथमें नहीं रहने रूप विरोध वहीं पर होता है जो परस्पर में विरोधी होते हैं, जैसे शीत और उष्ण। ये परस्पर में विरोधी हैं इनका एक-साथ एक जगह रहना नहीं हो सकता। प्रकृत में ज्ञान और अज्ञान, रति और अरति ये परस्पर विरोधी दो धर्म हैं इनका भी एक जगह अवस्थान (रहना) नहीं हो सकता। गृहीत-चारित्र में रति ज्ञानपूर्वक होगी अतः वह ज्ञानावरणीय के क्षयोपशम के साथ चारित्र मोहनीय के क्षयोपशम का कार्य है और अरति ज्ञानावरणीय के क्षयोपशम के साथ चारित्र मोहनीय के उदय का कार्य है। उदय में और क्षयोपशम में बड़ा भारी अन्तर है, एक क्षयोपशम का कार्य है—एक उदय का कार्य है। अतः ये दोनों—रति और अरति—परस्पर विरोधी बातें युगपत् एकत्र नहीं रह सकतीं।

शंका—रति और अरति ये चारित्र मोहनीय के भेद स्वरूप नोकषाय के कार्य हैं इन्हें क्षयोपशम और उदय जन्य कैसे कहते हैं?

उत्तर—शंका ठीक है। वहां पर रति और अरति जो नोकषाय के उदय से मानी गई हैं उनसे इनमें भेद है। यहां पर रति शब्द का वाच्यार्थ चारित्र को निर्दोष रूप से पालन करने की भावना और तद-

થવામાં કયો વિરોધ આવે છે? સહાનવસ્થાનરૂપ સાથે નહિ રહેવા રૂપ વિરોધ ત્યાં જ થાય છે જે પરસ્પરમાં વિરોધી હોય છે. જેમ ઠંડી અને ગરમી એ પરસ્પરમાં વિરોધી છે તેનું એકી સાથે એક જગ્યાએ રહેવું બની શકતું નથી. પ્રકૃતમાં જ્ઞાન અને અજ્ઞાન, રતિ અને અરતિ, એ પરસ્પર વિરોધી બે ધર્મ છે તેઓનું પણ એક જગ્યાએ અવસ્થાન (રહેવું) બની શકતું નથી, લીધેલાં ચારિત્રમાં રતિ જ્ઞાનપૂર્વક જ થશે. માટે તે જ્ઞાનાવરણીયના ક્ષયોપશમ સાથે ચારિત્ર મોહનીયના ક્ષયોપશમનું કાર્ય છે અને અરતિ જ્ઞાનાવરણીયના ક્ષયોપશમ સાથે ચારિત્ર મોહનીયના ઉદયનું કાર્ય છે, ઉદયમાં અને ક્ષયોપશમમાં ઘણો જ અંતર છે, એક ક્ષયોપશમનું કાર્ય છે. એક ઉદયનું કાર્ય છે માટે એ બન્ને—રતિ અને અરતિ પરસ્પર વિરોધી વાતો યુગપત્ એકત્ર રહી શકતી નથી.

શંકા—રતિ અને અરતિ એ ચારિત્રમોહનીયના ભેદસ્વરૂપ નોકષાયનું કાર્ય છે તેને ક્ષયોપશમ અને ઉદયજન્ય કેમ કહે છે?

ઉત્તર—શંકા ઠીક છે. ત્યાં જે રતિ અને અરતિ જે નોકષાયના ઉદયથી માનેલ છે તેનાથી એમાં ભેદ છે. આ ઠેકાણે રતિ શબ્દનો વાચ્યાર્થ ચારિત્રના નિર્દોષ રૂપથી પાલન કરવાની ભાવના અને તદનુકૂલ પ્રવૃત્તિ છે, અને અરતિનો

યદ્વા-આર્પણાત્તૃતીયાર્થે સપ્તમી, ક્ષણેન=સ્તોકકાલેન અ-ઇ-ઉ-ઋ-લૃ-ઇત્યેવં-  
રૂપપશ્ચહ્સ્વાક્ષરોચારણસમકાલેનેતિ યાવત્ ; યથાખ્યાતચારિત્રે સમ્યગ્રતૌ મુક્તો  
ભવતિ, સંયમસ્ય સમ્યક્પરિપાલનાત્સ્વલ્પકાલેનૈવ મોક્ષભાગી ભવતીતિ ભાવઃ ॥મૂ૦ ૧॥

નુકૂલ પ્રવૃત્તિ હૈ, ઓર અરતિકા અર્થ યહ હૈ કિ-લિયે હુઅ સંયમ કે  
પાલન કરને મેં પ્રમાદ કો નહીં હટાના-યદ્વા તદ્વા પ્રવૃત્તિ કરના ।  
નોકષાય કે ઉદય સે જો રતિ ઓર અરતિ હોતી હૈ વે રાગ ઓર દ્વેષ કે  
વાચક હૈં । અતઃ પૂર્વોક્ત કથન નિર્દોષ હૈ ।

જિસકો સંયમ મેં અરતિ નહીં હૈ ઉસકો ક્યા હોતા હૈ ? વહ કહતે  
હૈ-‘ ક્ષણે ’ હતિ ।

જિસે સંયમ મેં અરતિ નહીં હૈ વહ ક્ષણ મેં મુક્ત હો જાતા હૈ । અત્યન્ત  
સૂક્ષ્મકાલ કો ક્ષણ કહતે હૈં । ક્ષણ, કાલ કા સબસે છોટા હિસ્સા હૈ  
હસસે સૂક્ષ્મ કાલ કા ઓર કોઈ અંશ નહીં હૈ । સંયમ મેં વહ શક્તિ હૈ  
કિ જીવ કો એક ક્ષણ મેં મુક્તિ પ્રાપ્ત કરા દેતા હૈ । ઈંધન કો જિસ પ્રકાર  
અગ્નિ જલાતી હૈ ઉસી પ્રકાર સંયમ ભી કર્મરૂપી ઈંધન કો ભસ્મ કર  
હસ જીવ કો એક ક્ષણ મેં શુદ્ધ કર દેતા હૈ ।

અથવા—‘ ક્ષણે મુક્તઃ ’ યહાં પર આર્ષવાક્ય હોને સે તૃતીયા કે  
અર્થ મેં સપ્તમી વિભક્તિ સમજાની ચાહિયે । તથા ચ-‘ ક્ષણેન મુક્તઃ ’  
હસ પ્રકાર પરિવર્તન હોને સે એક ક્ષણ કે દ્વારા મુક્ત હો જાતા હૈ, યહ

અર્થ એ છે કે-ત્રીધેલા સંયમનું પાલન કરવામાં પ્રમાદને નહિ છોડતા તે.  
આડી અવળી પ્રવૃત્તિ કરવી. નોકષાયના ઉદયથી જે રતિ અને અરતિ થાય છે  
તે રાગ અને દ્વેષનું વાચક છે માટે પૂર્વોક્ત કથન નિર્દોષ છે.

જેને સંયમમાં અરતિ નથી તેને શું થાય છે ? તે કહે છે—

જેને સંયમમાં અરતિ નથી તે ક્ષણમાં મુક્ત થાય છે. અત્યન્ત સૂક્ષ્મ  
કાળને ક્ષણ કહે છે ક્ષણ કાળનો બધાથી નાનો હિસ્સો છે માટે સૂક્ષ્મ કાળનો  
બીજો કોઈ અંશ નથી. સંયમમાં તે શક્તિ છે કે જીવને એક ક્ષણમાં મુક્તિ  
પ્રાપ્ત કરાવી આપે છે. અગ્નિ લાકડાને જે પ્રકારે બાળે છે તે પ્રકારે સંયમ પણ  
કર્મરૂપી ઈંધનને ભસ્મ કરી આ જીવને એક ક્ષણમાં શુદ્ધ કરી નાંખે છે.

અથવા ‘ ક્ષણે મુક્તઃ ’ આ ઠેકાણે આર્ષ વાક્ય હોવાથી ત્રીજી વિભક્તિના  
અર્થમાં સાતમી વિભક્તિ સમજાવી જોઈએ, અને ‘ ક્ષણેન મુક્તઃ ’ આ પ્રકારે  
પરિવર્તન હોવાથી એક ક્ષણથી મુક્ત થઈ જાય છે. એ અર્થ થાય છે, તેનો

યે ચારિત્રવિપયારતિમન્તસ્તે ચતુર્ગતિકસંસારે દુઃખસાગરમગ્રાશ્વેતસ્તતઃ પરિ-  
ભ્રમન્તીતિ દર્શયતિ—‘અણાણા’—ઇત્યાદિ ।

મૂલમ—અણાણા પુઢાવિ ઇમે નિયદ્દંતિ, મંદા મોહેણ  
પાડહા, અપરિગ્ગહા ભવિસ્સામો સમુદ્ધાયલદ્ધેકામે અભિગાહદ્ધ,  
અણાણા મુણિણો પહિલેહંતિ, એત્થ મોહે પુણો પુણો સન્ના નો  
હવ્વાય નો પારાણ ॥ સૂ. ૨ ॥

છાયા—અનાજ્ઞયા સ્પૃષ્ટા અપ્યેકે નિવર્તન્તે, મન્દા મોહેન પ્રાવૃતાઃ, અપરિગ્રહા  
ભવિષ્યામઃ, સમુત્થાય લબ્ધાન્ કામાનભિગાદ્ધતે, અનાજ્ઞયા મુનયઃ પ્રત્યુપેક્ષન્તે,  
અત્ર મોહે પુનઃ પુનઃ સન્ના નો હવ્યાય નો પારાય ॥ મૂ. ૨ ॥

ટીકા—‘અનાજ્ઞયે’—ત્યાદિ, આજ્ઞા=જ્ઞાનાચારાદિપ્રવૃત્તિરૂપો જિનાદેશઃ, ત-  
દ્વિપરીતા અનાજ્ઞા, તયા સ્પૃષ્ટાઃ=પરીપહોપસર્ગેશ્ચલિતચેતસઃ, એકે=કણ્ડરીકપ્રમૃતયો  
અર્થ હોતા હૈ । ઇસ કા ભાવ યહ હૈ કિ યથાખ્યાત ચારિત્ર મેં જબ ઇસ  
જીવ કી રતિ-રમણ-હો જાતી હૈ તબ યહ ‘અ ઇ ઉ ઋ લૃ’ ઇન પાંચ  
હ્રસ્વ અક્ષરોં કૈ ઉચ્ચારણ કરને મેં જિતના સમય લગતા હૈ ઉતને સમય  
માત્ર મેં સિદ્ધ ગતિ કો પ્રાપ્ત કર લેતા હૈ અર્થાત્-સંયમ કો નિર્દોષ રીતિ  
સે પાલને સે થોડે હી કાલ મેં યહ જીવ મુક્તિકા લાભ કર લેતા હૈ ॥ સૂ. ૧ ॥

જિનકી ચારિત્ર મેં રતિ નહીં હૈ વે ઇસ ચતુર્ગતિરૂપસંસાર સાગર  
મેં દુઃખોં કી અનન્ત બોડો કો ઢોલતે હુએ ઇતસ્તનઃ ભ્રમણ કરતે રહતે હૈ ।  
ઇસ વાત કો સૂત્રકાર પ્રકટ કરતે હૈ—

‘અણાણા’ ઇત્યાદિ । જ્ઞાનાચારાદિકોં મેં પ્રવૃત્તિ કરને રૂપ જો  
જિનેન્દ્ર ભગવાન્ કા આદેશ હૈ ડસકા નામ આજ્ઞા હૈ ઇસસે વિપરીત

ભાવ એ છે કે યથાખ્યાત ચારિત્રમાં બ્યારે આ જીવની રતિ-રમણ થાય છે,  
ત્યારે તે ‘અ ઇ ઉ ઋ લૃ’ આ પાંચ હ્રસ્વ અક્ષરોના ઉચ્ચારણ કરવામાં બેટલો  
સમય લાગે છે તેટલા સમય માત્રમાં સિદ્ધગતિને પ્રાપ્ત કરી લે છે. અર્થાત્  
સંયમને નિર્દોષ રીતિથી પાળવાથી થોડાજ કાળમાં તે જીવ મુક્તિનો લાભ  
કરી લે છે. ॥ સૂ. ૧ ॥

બેની ચારિત્રમાં રતિ નથી તે આ ચતુર્ગતિરૂપ સંસારસાગરમાં દુઃખોના  
અનંત ઘોળને ઉઠાવતાં આંહીતહીં ભ્રમણ કરે છે, એ વાતને સૂત્રકાર પ્રગટ કરે છે—

‘અણાણા’ ઇત્યાદિ. જ્ઞાનાચારાદિકમાં પ્રવૃત્તિ કરવા રૂપ જે જિનેન્દ્ર  
ભગવાનનો આદેશ છે તેનું નામ આજ્ઞા છે, તેનાથી વિપરીત પ્રવૃત્તિ અનાજ્ઞા છે.



મન્દાઃ=જડા અનવગતકર્તવ્યવિવેકા इति यावत्, મોહેન=અજ્ઞાનેન મિથ્યાત્વ-મોહનીયેન વા, પ્રાવૃતાઃ=સર્વતોઽવગુણિતા મોહાશ્લિષ્ટાત્માન इति यावत्, ‘અપિ’-શબ્દસ્ય નિવર્તન્ત इत्यनेन सम्बन्धः, સકલસાવધવિરતિ રૂપાત્સંયમાન્નિવર્તન્તે, અપિ-નિશ્ચયેન, પ્રાપ્તચારિત્રોઽપિ મોહનીયોદયેન પરીષહોપસર્ગાવિર્ભાવાત્પરિધૃતસાધુવેષો-ઽપિ ભ્રષ્ટચારિત્રો ભવતીત્યર્થઃ ।

પ્રવૃત્તિ અનાજ્ઞા હૈ । इस अनाज्ञा से जो स्पृष्ट हैं अर्थात् जो परीषह और उपसर्गों के आने पर चञ्चलचित्त हो जाते हैं—गृहीत चारित्र में अरतिभाव रखनेवाले बन जाते हैं वे कंडरीक आदि कर्त्तव्याकर्त्तव्य-विवेकशून्य मनुष्य अज्ञान अथवा मिथ्यात्व मोहनीय से सर्वथा युक्त होते हुए उस चारित्र से अवश्य भ्रष्ट हो जाते हैं । सूत्र में ‘अपि’ शब्द निश्चय अर्थ में प्रयुक्त हुआ है । इसका संबंध ‘निवर्तन्ते’ इस क्रिया के साथ होता है । जिसने सर्वसावधनिवृत्तिरूप चारित्रधर्म को प्राप्त कर लिया है—ऐसा व्यक्ति यदि मोह के उदयसे परीषह और उपसर्ग के आने पर अपने चारित्र से विचलित हो जाता है तो उसे चारित्रभ्रष्ट ही समझना चाहिये अर्थात् वह भ्रष्टचारित्री है । ऐसे व्यक्ति अपने को साधु के वेष से सुसज्जित कर लोगों की दृष्टि में साधुपने का ढोंग रचते हैं । यद्यपि इनके अन्तरंग में उस वेष से जरा भी प्रेम नहीं होता है तो भी बाह्य में वे अपनी प्रवृत्ति इस प्रकार से प्रदर्शित करते हैं—कि जैसे ये सच्चे

આ અનાજ્ઞાથી જે સ્પૃષ્ટ છે અર્થાત્ જે પરિષદ અને ઉપસર્ગોના આવવા પર ચંચલ થઈ જાય છે. લીધેલા ચારિત્રમાં અરતિભાવ રાખવાવાળાં બની જાય છે તે કંડરીક આદિ કર્તવ્યા-કર્તવ્ય વિવેકશૂન્ય મનુષ્ય અજ્ઞાન અથવા મિથ્યાત્વ મોહનીયથી સર્વથા યુક્ત હોવાથી તે ચારિત્રથી અવશ્ય ભ્રષ્ટ થઈ જાય છે.

સૂત્રમાં ‘અપિ’ શબ્દ નિશ્ચય અર્થમાં પ્રયુક્ત થયો છે તેનો સંબંધ ‘નિવર્તન્તે’ આ ક્રિયા સાથે થાય છે, જેણે સર્વસાવધનિવૃત્તિરૂપ ચારિત્ર ધર્મને પ્રાપ્ત કરી લીધો છે તેવો માણસ કદાચ મોહના ઉદયથી પરિષદ અને ઉપસર્ગ આવવાથી પોતાના ચારિત્રથી વિચલિત થાય છે તો તેને ચારિત્ર ભ્રષ્ટ જ સમજવો જોઈએ. અર્થાત્ તે ભ્રષ્ટચારિત્રી છે. એવી વ્યક્તિ પોતાને સાધુના વેષથી સુસજ્જિત કરી લોકોની દૃષ્ટિમાં સાધુપણનો ઢોંગ રચે છે, જે કે તેના અંતરંગમાં તે વેષથી જરા પણ પ્રેમ હોતો નથી તો પણ બાહ્યમાં તે પોતાની પ્રવૃત્તિ આ પ્રકારથી પ્રદર્શિત કરે છે કે—જેણે તે સાચો નિર્ઝન્ય છે. આ વાતનો



અસાધવોઽપિ સ્વાત્માનં સાધું મન્યમાનાઃ કિં કુર્વન્તીત્યાહ—‘ અપરિગ્રહા ’—ઇતિ અપરિગ્રહાઃ=પરિ-સર્વતો મૂર્છાભાવેન ગૃહ્યત ઇતિ પરિગ્રહઃ, અવિદ્યમાનઃ પરિગ્રહો યેષામિત્યપરિગ્રહાઃ=નિર્ગ્રન્થા વયં ભવિષ્યામ ઇતિ દણ્ડિશાક્યાદયોઽવસન્નપાર્શ્વ-સ્થાદયો વા સમુત્થાય=સાધુવેષં ચારિત્રં ચ ગૃહીત્વા તતો લબ્ધાન્=પ્રાપ્તાન્ કામાન્=શબ્દાદિવિષયાન્ અભિગાહન્તે=સંશ્રયન્તે । અત્ર મૂળે આર્પણાદેકવચનમ્ । અત્ર ‘ અપરિગ્રહા ’ ઇતિ પञ્ચમમહાવ્રતોપાદાનાદવશિષ્ટાનિ ચત્વારિ મહાવ્રતાન્યપિ વિજ્ઞે-યાનિ, અપરિગ્રહે સર્વેષામન્તર્ભાવાત્ ।

નિર્ગ્રન્થ હૈં । इसी बात का खुलासा ‘ अपरिग्रहाः ’ इस पद से सूत्रकारने किया है । जो मूर्छाभाव से ग्रहण किया जाता है उसका नाम परिग्रह है । यह परिग्रह जिनके विद्यमान नहीं है—वे अपरिग्रह हैं । दण्डी शाक्यादिक अथवा अवसन्न पासत्थादिक ‘ हम निर्गन्थ हैं अथवा आगे चलकर निर्गन्थ हो जावेंगे ’ इस अभिप्रायसे साधुवेष को और चारित्र को ग्रहण कर उसकी आड से अपनी वैषयिक वासना की तृप्ति करते हैं । इनकी इस प्रकार की बाह्य प्रवृत्ति देखकर लोग धार्मिक भावना से उनकी हर एक प्रकार से सेवा करते हैं, जिस वस्तु की उन्हें आवश्यकता होती है उसकी पूर्ति करते रहते हैं । इस साधुपने के बहाने से उन्हें जो कुछ भी मिलता है सिर्फ वे उससे अपनी वैषयिक वासना की ही पूर्ति करते रहते हैं वास्तविक सर्वसावद्य विरति रूप चारित्र का आचरण उनसे दूर ही रहता है । इसी बात की पुष्टि ‘ समुत्थाय लब्धात् कामान् अभिगाहन्ते ’ इस पङ्क्ति से सूत्रकार ने की है । सर्वसावद्य-विरतिरूप चारित्र को प्राप्त

ખુલાસો ‘ અપરિગ્રહા ’ આ પદથી સૂત્રકારે કહ્યો છે. જે મૂર્છાભાવથી ગ્રહણ કરે છે તેનું નામ પરિગ્રહ છે આ પરિગ્રહ જેને વિદ્યમાન નથી તે અપરિગ્રહ છે. દંડી શાક્યાદિક અને અવસન્ન પાસત્થાદિક ‘ અમે નિર્ગન્થ છીએ ’ ‘ અથવા આગળ આવીને નિર્ગન્થ થઈ જશું ’ આ અભિપ્રાયથી સાધુવેષ અને ચારિત્રને ગ્રહણ કરી તેની આડથી પોતાની વૈષયિક વાસનાની તૃપ્તિ કરી લે છે. તેની આ પ્રકારે બાહ્ય પ્રવૃત્તિ દેખીને લોક ધાર્મિક ભાવનાથી તેની દરેક પ્રકારથી સેવા કરે છે. જે વસ્તુની તેને આવશ્યકતા હોય તેની પૂર્તિ કરતા રહે છે, આ સાધુપણના ગ્રહણથી જે કંઈ પણ મળે છે ફક્ત તેનાથી પોતાની વૈષયિક વાસનાની જ પૂર્તિ કરે છે. વાસ્તવિક સર્વસાવધવિરતિરૂપ ચારિત્રનું આચરણ તેનાથી દૂર જ રહે છે. આ વાતની પુષ્ટિ ‘ સમુત્થાય લબ્ધાન્ કામાન્ અભિગાહન્તે ’ આ પંક્તિથી સૂત્રકારે કહ્યું છે. સર્વસાવધવિરતિરૂપ ચારિત્રને પ્રાપ્ત કરવાને માટે બાહ્ય અને

કરને કે લિયે બાહ્ય ઔર આભ્યન્તર કારણોં કી જરૂરત હોતી હૈ । બાહ્ય કારણ સે इतना काम नहीं बनता जितना अन्तरंग से । चारित्र को अंगी-  
कार करने में यद्यपि उपादान कारण आत्मा है परन्तु इन दो बाह्य  
आभ्यन्तर कारणों से उपादान में वह शक्ति आजाती है कि जिससे उसे  
अपने लिये हुए संयम में रति एवं संसार-शरीर और भोगों में अरति  
स्वतः आजाती है । प्रकृत में यहाँ चारित्रमोहनीय का उपशमादिक  
अन्तरंग कारण है और पंचेन्द्रियों के विषयों से सर्वथा विरतिभाव की  
जागृति बाह्य कारण है । जैसे अग्नि और धूम की ( परस्पर अनियति )  
विषम व्याप्ति है उस प्रकार सम्यक् चारित्र के साथ अन्तरंग कारण  
चारित्र मोहनीय के उपशम की विषम व्याप्ति नहीं है—अर्थात् परस्पर  
समनियत हैं, जहां पर चारित्रमोहनीय का उपशमादि है वहां पर नियम  
से सम्यक् चारित्र है और जहां पर सम्यक् चारित्र है वहां पर नियम  
से चारित्र मोहनीय का उपशमादि है । इस प्रकार सम्यक् चारित्र और  
चारित्र मोहनीय के उपशमादिकों की समव्याप्ति ( परस्पर नियति ) है ।  
परन्तु अन्तरंग में चारित्र मोहनीय के उपशमादिक के अभाव में जो  
बाह्य में सर्व-सावद्यविरति रूप चारित्र की सत्ता मालूम पड़ती है—वह

આભ્યન્તર કારણોની જરૂરત હોય છે. બાહ્ય કારણોથી આટલું કામ નથી બનતું  
જેટલું અન્તરંગથી. ચારિત્રના અંગીકાર કરવામાં યદ્યપિ ઉપાદાન કારણ આત્મા  
છે પરંતુ આ બે—બાહ્ય, આભ્યન્તર-કારણોથી ઉપાદાનમાં તે શક્તિ આવી જાય  
છે કે જેનાથી તેને પોતાને માટે સંયમમાં રતિ અને સંસાર શરીર અને ભોગોમાં  
અરતિ આપમેળે આવે છે. પ્રકૃતમાં અહીં આ ચારિત્રમોહનીયનો ઉપશમાદિક  
અંતરંગ કારણ છે, અને પાંચે ઇન્દ્રિયોના વિષયોથી સર્વથા વિરતિભાવની જાગૃતિ  
બાહ્ય કારણ છે, જેમ અગ્નિ અને ધૂમની ( પરસ્પર અનિયતિ ) વિષમ વ્યાપ્તિ  
છે તે પ્રકારે સમ્યક્ચારિત્રની સાથે અંતરંગ કારણ ચારિત્રમોહનીયના ઉપશ-  
મની વિષમ વ્યાપ્તિ નથી. અર્થાત્ પરસ્પર સમનિયત છે. જ્યાં ચારિત્રમોહનીયનો  
ઉપશમાદિ છે ત્યાં નિયમથી સમ્યક્ચારિત્ર છે. અને જ્યાં સમ્યક્ચારિત્ર  
છે ત્યાં નિયમથી ચારિત્રમોહનીયનો ઉપશમાદિ છે. આ પ્રકારે સમ્યક્ચારિત્ર  
અને ચારિત્રમોહનીયના ઉપશમાદિકોની સમ વ્યાપ્તિ ( પરસ્પર નિયતિ છે ) પરંતુ  
અન્તરંગમાં ચારિત્ર મોહનીયના ઉપશમાદિકના અભાવમાં જે બાહ્યમાં સર્વસાવધ  
વિરતિરૂપ ચારિત્રની સત્તા માલુમ પડે છે તે કેવળ એક ઢાંગ છે. તે ઢાંગ ઉલ્ટો

કેવલ એક ઢોંગ હૈ । વહ ઢોંગ ઉલ્ટા જીવ કો કર્મબન્ધ કા કારણ હોતા હૈ । એસે વ્યક્તિ ચારિત્ર કા ઢોંગ રચકર ઉસકી આડ મેં અપને વિષય-કષાયોં કી હી પુષ્ટિ કિયા કરતે હૈં । યદ્યપિ સૂત્રમેં ‘અપરિગ્રહ’ હિસ શબ્દ સે કેવલ પાંચવેં મહાવ્રત કા હી ગ્રહણ બતલાયા હૈ પરન્તુ અવશિષ્ટ ચાર મહાવ્રતોંકા ભી હસી એક પદ સે ગ્રહણ હો જાતા હૈ ।

હસી પ્રકાર જો વાસ્તવિક રૂપ સે અપરિગ્રહી નહીં હૈં કિન્તુ પરિગ્રહ-ત્યાગ કા ઢોંગ રચતે હૈં, ઉસીસે યહ ભી સમજ લેના ચાહિયે કિ જો વાસ્તવિક રૂપસે અહિંસાદિમહાવ્રતધારી નહીં હૈં, કિન્તુ અહિંસામહા-વ્રતી આદિ હોને કા ઢોંગ કરતે હૈં, વે કેવલ લોકોં કી પ્રતારણા કરને કે લિએ હી અપની એસી પ્રવૃત્તિ કરતે હૈં । દ્રવ્યલિંગી સાધુઓં કી પ્રવૃત્તિ હસી ઢંગ કી હી હોતી હૈ । इनके आत्मा में उस समकितज्योति का बिलकुल ही प्रकाश नहीं होता है कि जिसके सद्भाव से महाव्रतों में सम्यक्पना आता है । इनके उपर के महाव्रत हॆ । जिस प्रकार नट अनेक वेषों को धारण करता हुआ भी अन्तरङ्ग में उन २ वेषोंके परिणामों से सर्वथा शून्य रहता है उसी प्रकार ये द्रव्यलिङ्गी भी बाह्य में महा-व्रती होनेका केवल एक ढोंग ही किया करते हैं उससे उनकी आत्मा

જીવને કર્મબંધનું કારણ થાય છે, એવી વ્યક્તિ ચારિત્રને ઢોંગ રચીને તેની આડમાં પોતાના વિષય કષાયોની જ પુષ્ટિ કરે છે, યદ્યપિ સૂત્રમાં ‘અપરિગ્રહ’ આ શબ્દથી કેવળ પાંચમાં મહાવ્રતનું જ ગ્રહણ બતાવ્યું છે પરંતુ અવશિષ્ટ ચાર મહાવ્રતોનું પણ એમ એક પદથી ગ્રહણ થાય છે.

આ પ્રકારે જે વાસ્તવિક રૂપથી અપરિગ્રહી નથી પણ પરિગ્રહત્યાગનો ઢોંગ રચે છે તેનાથી એ પણ સમજ લેવું જોઈએ કે જે વાસ્તવિક રૂપથી અ-હિંસાદિ મહાવ્રતધારી નથી પણ અહિંસા-મહાવ્રતી આદિ હોવાનો ઢોંગ કરે છે તેઓ કેવળ લોકોની પ્રતારણા કરવા માટે જ પોતાની એવી પ્રવૃત્તિ કરે છે. દ્રવ્યલિંગી સાધુઓની પ્રવૃત્તિ આ ઢંગની હોય છે. તેના આત્મામાં સમકિત જ્યોતિનો બિલકુલ જ પ્રકાશ નથી હોતો કે જેના સદ્ભાવથી મહાવ્રતોમાં સમ્ય-કરૂણ આવે તેના ઉપરના મહાવ્રતો છે. જે પ્રકારે નટ અनेક વેષોને ધારણ કરે છે પણ અંતરંગમાં તે તે વેષોના પરિણામોથી સર્વથા શૂન્ય રહે છે, તે પ્રકારે એ દ્રવ્યલિંગી પણ બાહ્યથી મહાવ્રતી હોવાનો કેવળ એક ઢોંગ જ કરે છે, જેનાથી તેનો આત્મા બિલકુલ રંજિત થતો નથી, ભલે તેની પ્રવૃત્તિથી બાહ્યજન રંજિત થાય, પરંતુ તેનો આત્મા સ્વતઃ તદનુકૂળ પ્રવૃત્તિથી શૂન્ય હોવાથી બિલકુલ

તદિત્યં દ્રવ્યલિङ્ગિનો નટા ઇવ તે હિંસામૃષાઽદત્તાદાનાદિના લોકાન્ વશ્ચયન્તિ ।  
તે પુનસ્તલ્લાભાય પ્રવૃત્તા ભવન્તીત્યાહ—‘અનાજ્ઞયે’—તિ ।

અનાજ્ઞયા=ભગવદાજ્ઞાવહિર્ભૂતયા સ્વચ્છન્દમત્યા મુનયઃ=મુનિવેષધારિણઃ,  
શબ્દાદિકામોપાયે પ્રત્યુપેક્ષન્તે=પ્રવર્તન્તે કામભોગવિનિવિષ્ટચિત્તા ભવન્તીત્યર્થઃ ।  
અત્ર=અસ્મિન્ કામભોગાસક્તિરૂપે મોહે, દ્રવ્યમોહે=મદ્યાદૌ, ભાવમોહે=સંસારેઽજ્ઞાને

વિલકુલ હી રંજિત નહીં होती है । भले ही—इनकी प्रवृत्ति से बाह्य जन रंजित नहीं होती है, भले ही—इनकी प्रवृत्ति से बाह्यजन रंजित हो जावें, परन्तु इनका आत्मा स्वतः मदलुकूल—प्रवृत्ति से शून्य होने से विलकुल भी रंजित नहीं हो पाता है; हिंसा, झूठ, चोरी आदि आस्रवों में ही इनका अन्तरङ्ग लालसायुक्त बना रहता है । इसीसे ये लोकों को ठगते रहते हैं । ऐसी प्रवृत्ति इनकी क्यों होती है? इस का कारण बताते हुए सूत्रकार कहते हैं कि—‘अनाज्ञया मुनयः प्रत्युपेक्षन्ते’ महाव्रतों को धारण करने का ढोंग ये लोग इसी लिये करते हैं कि ये भगवदाज्ञा से बहिर्भूत हैं । भगवान की आज्ञा—ग्रहण किये हुए महाव्रतों को अन्तरङ्ग की सच्ची लगन के साथ पालने की है । पांच आस्रवों का नवकोटि से त्याग किये बिना उनका शुद्ध पालन नहीं हो सकता है । जो इस प्रकार की आज्ञा से बहिर्भूत हैं और “जो हम कहते हैं वह सत्य एवं शुद्ध है” इस प्रकार की स्वच्छन्द्र प्रवृत्तिशाली हैं वे मुनि वेषधारी साधु शब्दादिक पांच इन्द्रियों के विषयों में प्रवृत्त रहते हैं । “अत्र मोहे पुनः पुनः संज्ञा नो हव्याय नो पाराय” मोह दो प्रकार का है—एक द्रव्यमोह

પણ રંજિત થતો નથી, હિંસા, જુઠ, ચોરી, આદિ આશ્રવોમાં જ તેની અંતરંગ લાલસા બની રહે છે જેથી તે લોકોને ઠગતા રહે છે. એવી પ્રવૃત્તિ તેની કેમ થાય છે તેનું કારણ બતાવતાં સૂત્રકાર કહે છે કે—

‘અનાજ્ઞયા મુનયઃ પ્રત્યુપેક્ષન્તે’ મહાવ્રતોને ધારણ કરવાનો ઢોંગ તે લોક એ માટે કરે છે કે—તેઓ ભગવદ્-આજ્ઞાથી બહિર્ભૂત છે. ભગવાનની આજ્ઞા પ્રહણ કરેલા મહાવ્રતોને અંતરંગની સાચી લાગણીથી પાળવાની છે. પાંચ આશ્રવોના નવ કોટિથી ત્યાગ કર્યા વિના તેનું પાલન થતું નથી. જે આ પ્રકારની આજ્ઞાથી બહિર્ભૂત છે અને “જે અમે કહીએ છીએ તે સત્ય અને શુદ્ધ છે” આ પ્રકારની સ્વચ્છન્દ પ્રવૃત્તિશાલી છે તે મુનિવેષધારી સાધુ શબ્દાદિક પાંચ ઇન્દ્રિયોના વિષયોમાં પ્રવૃત્ત રહે છે. ‘અત્ર મોહે પુન પુન સંજ્ઞા નો હવ્યાય નો પારાય’ મોહ બે પ્રકારનો છે—એક દ્રવ્યમોહ અને બીજો ભાવમોહ. મદ્યાદિક દ્રવ્યમોહ

ચ પુનઃ પુનઃ=અત્યન્તં મુહુર્વા સન્નાઃ=વિષયાભિલાષિણો મૂઢા નિમગ્નાઃ સન્તો નો  
 હવ્યાય, હવ્યં=ગાર્હસ્થ્યં પ્રકામકામભોગિત્વં તસ્મૈ, પારઃ સંયમસ્તસ્મૈ=તદર્થં ન ભવતિ,  
 નૈતલ્લોકાય ન પરલોકાય ચ, ન તે ગૃહસ્થા નાપિ મુનયો, યથા મધ્યેનદિનિમગ્નાસ્તે  
 ન કથમપિ પારં ગન્તું શક્નુવન્તિ, અપિ તુ નિમજ્જન્ત્યેવ, તથૈવ તે ભવન્તીત્યર્થઃ, યે  
 પરિઘૃતસાધુવેવાઃ કામોપાયેષુ સજ્જન્તે તે ન ગૃહસ્થા નાપિ મુનયો વા ભવિતુમર્હન્તીતિ  
 તાત્પર્યમ્ । અદૃઢચિત્તાનાં મુનિવેષધારિણાં પૂર્વં હિરણ્ય-સુવર્ણ-ધન-ધાન્ય-ગૃહ-ગૃહિણી  
 -પુત્ર-મિત્રાદેઃ પરિત્યક્તતયા ન ગૃહસ્થત્વં, ચારિત્રસ્ય સમ્યગપરિપાલનેન વાન્તા-  
 મિલાપિતયા નાપ્યનગારત્વમુપપદ્યત इति भावः ॥ सू० २ ॥

और दूसरा भावमोह । मद्यादिक द्रव्यमोह है, संसार एवं अज्ञान भाव-  
 मोह है । कामभोगों में आसक्तिका नाम मोह है । इन भोगों की आस-  
 क्तिमें जीव की प्रवृत्ति अज्ञान से होती है । कामभोगों की प्रवृत्ति को  
 उत्तेजना मद्यादिक के सेवन से जीवों को मिलती है । इसलिये उन्हें  
 द्रव्यमोह कहा है । विषयाभिलाषी मूढ जीव इस मोह में अत्यन्त अथवा  
 बारंवार प्रवृत्ति करते हुए न तो यथेच्छ कामभोगादि भोग सकते हैं  
 और न संयम ही पाल सकते हैं । जैसे नदी की मझधार में निमग्न  
 हुआ प्राणी न इस पारका रहता है और न उस पार का रहता है, उसी  
 प्रकार ऐसे प्राणी न इस लोक के रहते हैं और न उस लोक के ही रहते हैं-  
 न वे सच्चे गृहस्थ ही बन पाते हैं और न सच्चे मुनि ही । नदी की  
 मझधार में निमग्न प्राणी जिस प्रकार मझधार में ही डूब जाता है, उसी  
 तरह से ये प्राणी भी साधुवेष छोड़कर विषयों में लवलीन बन बीच

છે, સંસાર અને અજ્ઞાન ભાવમોહ છે. કામભોગોમાં આસક્તિ તેનું નામ મોહ  
 છે, તે ભોગોની આસક્તિમાં જીવની પ્રવૃત્તિ અજ્ઞાનથી થાય છે. કામભોગોની  
 પ્રવૃત્તિને ઉત્તેજના મદ્યાદિકના સેવનથી જીવોને મળે છે, માટે તેને દ્રવ્યમોહ  
 કહ્યો છે, વિષયાભિલાષી મૂઢ જીવ આ મોહમાં અત્યંત અને વારંવાર પ્રવૃત્તિ  
 કરવા છતાં પણ નથી યથેચ્છ કામભોગાદિ ભોગવી શકતા, અને નથી સંયમનું  
 પાલન કરી શકતા જેમ નદીની મઝધારમાં નિમગ્ન થયેલ પ્રાણી નથી આ પાર  
 જઈ શકતું કે નથી તે પાર જઈ શકતું. એ પ્રકારે આવા પ્રાણી, નથી આ લોકના  
 રહેતા અગર નથી પરલોકના રહેતા. નથી તેઓ સાચા ગૃહસ્થી બની શકતા,  
 અને નહિ સાચા મુનિ. નદીની મઝધારમાં નિમગ્ન પ્રાણી જેમ મઝધારમાં જ  
 ડુબી જાય છે તે પ્રકારે આ પ્રાણી પણ સાધુવેષ છોડીને વિષયોમાં લવલીન

‘યે સંયમે રતિં, શબ્દાદિવિષયે ચારતિં વિદધાનાસ્તે કીદૃશા ભવન્તીતિ દર્શયતિ-  
, વિમુક્તા ’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ—વિમુક્તા હુ તે જણા જે જણા પારગામિણો, લોભમ-  
લોભેન દુગુંછમાણે લદ્દે કામે નાભિગાહઈ, વિનાવિ લોભં નિવ્રમ્મ  
એસ અકમ્મે જાણઈ પાસઈ, પડિલેહાએ નાવકંચઈ, એસ અણ-  
ગારિ-ત્તિ પવુચ્ચઈ ॥ સૂ૦ ૩ ॥

છાયા—વિમુક્તા હુ તે જના યે જના: પારગામિન:, લોભમલોભેન જુગુપ્સમાનો  
લબ્ધાન્ કામાનાભિગાહતે, વિનાપિ લોભં નિષ્ક્રમ્ય એષ: અર્કમા જાનાતિ પશ્યતિ  
પ્રત્યુપેક્ષ્ય નાવકાઙ્ક્ષતિ એષ: અનગાર ઇતિ પ્રોચ્યતે ॥ મૂ૦ ૩ ॥

ટીકા—‘વિમુક્તા’ ઇત્યાદિ, ‘પારગામિન:’ પારો મુક્તિસ્તદ્વેતુર્જ્ઞાનદર્શનચા-  
રિત્રાણ્યપિ પાર: કાર્યકારણયોરભેદાત્, તેન પારં મોક્ષં તદ્વેતુશ્ચ જ્ઞાનાદિકં ગત્તું=પ્રાપ્તું  
હી મેં લટકતે રહતે હૈં, ન વે સાધુ હી હૈં ઓર ન ગૃહસ્થ હી । સંયમ પાલન  
કરને મેં જિનકે ચિત્ત મેં દૃઢતા તો હૈં નહીં, પરન્તુ મુનિ કા વેષ ધારણ  
કર લિયા હૈ, હિરણ્ય-સુવર્ણ, ધન-ધાન્ય, ગૃહ-ગૃહિણી પુત્ર-મિત્રાદિક કા  
મુનિવ્રત ધારણ કરને કે પહિલે ત્યાગ મી કર દિયા હૈ અતઃ ગાર્હસ્થિક  
જીવન કે લિયે ઉપયોગી વસ્તુ કા ઉનકે પાસ સદ્ભાવ ન હોને સે ન ઉનમેં  
ગૃહસ્થતા હૈ, ઓર ચારિત્ર કા સમ્યક્ રીતિ સે પાલન નહીં કરને કી વજહ  
સે મુનિપના હી હૈ ॥ સૂ૦ ॥ ૨ ॥

જો સંયમ મેં રતિ એવં શબ્દાદિ વિષયોં મેં અરતિ કરતે હૈં, વે કૈસે  
હોતે હૈં? ઇસ બાત કા ખુલાશા કરતે હૈં—

‘વિમુક્તા હુ તે જણા’ ઇત્યાદિ । કાર્યકારણ મેં અભેદ-વિવક્ષા હોને સે

ખની વચમાં જ લટકતા રહે છે. નથી તેઓ સાધુ છે અગર નથી તેઓ ગૃહસ્થી.  
સંયમ પાળવામાં જેના ચિત્તમાં દૃઢતા છે જ નહિ, પરંતુ મુનિનો વેષ ધારણ  
કરી લીધો છે. હિરણ્ય-સુવર્ણ ધન-ધાન્ય, ગૃહ-ગૃહિણી પુત્ર-મિત્રાદિકનો મુનિવ્રત  
ધારણ કરવા પહેલાં જ ત્યાગ કરેલ છે માટે ગૃહસ્થી જીવન માટે ઉપયોગી  
વસ્તુનો સદ્ભાવ ન હોવાથી નથી તેનામાં ગૃહસ્થીપણું અને આ ચારિત્રને સમ્યક્  
રીતિથી પાલન નહિ કરવાથી મુનિપણું પણ નથી ॥ સૂ૦ ૨ ॥

જે સંયમમાં રતિ અને શબ્દાદિ વિષયોમાં અરતિ કરે છે તે કેવા હોય  
છે? તેનો ખુલાસો કરે છે.—

‘વિમુક્તા હુ તે જણા’ ઇત્યાદિ—કાર્યકારણમાં અભેદવિવક્ષા હોવાથી પાર



શીલં યેષાં તે પારગામિનો યે જના મુમુક્ષવસ્તે વિમુક્તા વિવિધભાવનયા દ્રવ્યતો વૃત્તિપરિવારસંસર્ગેણ, ભાવતો વિષયકષાયાદિતઃ પ્રતિસમયં મુચ્યમાના મોક્ષ્ય-માણા વા વિમુક્તાઃ હુ=નિશ્ચયેન ભવન્તીતિ સમ્બન્ધઃ। વિમુક્તાઃ કુતસ્તે ભવન્તીત્યાહ-‘લોભ’-મિતિ ‘લોભઃ’=લોભમોહનીયોદયેન પરવસ્તુગ્રહણેચ્છા, તમ્ અલોભેન=

પાર શબ્દ કા અર્થ મુક્તિ તથા-મુક્તિ કે કારણભૂત સમ્યગ્દર્શન, સમ્ય-ગ્જ્ઞાન ઓર સમ્યક્ચારિત્ર હૈ । ઇસ પાર કો પ્રાપ્ત કરને કા જિનકા સ્વભાવ હૈ વે પારગામી કહે જાતે હૈ । જો મુમુક્ષુ હૈ વે અનેક પ્રકાર કી સાંસારિક ભાવનાઓં સે રહિત હોતે હૈ । ‘વિમુક્ત’ ઇસ પદ મેં ‘વિ’ ઉપસર્ગ ઓર ‘મુક્ત’ ઇસે દો શબ્દ હૈ । ‘વિ’ કા અર્થ અનેક પ્રકાર કી ભાવના હૈ । ‘મુક્ત’ શબ્દ કા અર્થ દ્રવ્ય ઓર ભાવ સે રહિત હોના હૈ ‘હુ’ શબ્દ કા અર્થ નિશ્ચય હૈ । અર્થાત્ જિનકો મુક્તિ પ્રાપ્ત કરને કી ઇચ્છા હોતી હૈ ઇસે પ્રાણી નિયમતઃ દ્રવ્ય સે-ધનાદિક એવં પરિવાર કે સંસર્ગ સે તથા ભાવસે-વિષયકષાયાદિકોં સે પ્રતિસમય રહિત હોતે હૈ ।

લોભમોહનીય કે ઉદય સે પરવસ્તુ કે ગ્રહણ કરને કી ઇચ્છા કા નામ લોભ હૈ । ઇસસે વિપરીત અલોભ હૈ । ‘જુગુપ્સમાન’ શબ્દ કા અર્થ જીતને વાલા, યા નિગ્રહ કરને વાલા હૈ । વિમુક્ત હોને મેં યહ હેતુ-ગર્ભિત વિશેષણ હૈ । ઇસસે યહ નિષ્કર્ષ નિકલતા હૈ કિ વે વિમુક્ત ઇસલિયે હૈ કિ ઊન્હોંને લોભ કો સંતોષ સે નિગૃહીત કર દિયા હૈ ।

શબ્દનો અર્થ મુક્તિ અને મુક્તિના કારણભૂત સમ્યગ્દર્શન, સમ્યગ્જ્ઞાન અને સમ્યક્ ચારિત્ર છે. આ પારને પ્રાપ્ત કરવાનો જેનો સ્વભાવ છે તે પારગામી કહેવાય છે.

જે મુમુક્ષુ છે તે અનેક પ્રકારની સાંસારિક ભાવનાઓથી રહિત હોય છે. ‘વિમુક્ત’ આ પદમાં ‘વિ’નો અર્થ અનેક પ્રકારની ભાવના છે. ‘મુક્ત’ શબ્દનો અર્થ દ્રવ્ય અને ભાવથી રહિત થવું ‘હુ’ શબ્દનો અર્થ નિશ્ચય છે. અર્થાત્ જેને મુક્તિ પ્રાપ્ત કરવાની ઇચ્છા થાય છે એવો પ્રાણી નિયમતઃ દ્રવ્યથી-ધનાદિક અને પરિવારના સંસર્ગથી, તથા ભાવથી-વિષયકષાયાદિકોથી પ્રતિસમય રહિત થાય છે.

લોભમોહનીયના ઉદયથી પરવસ્તુને ગ્રહણ કરવાની ઇચ્છા તેનું નામ લોભ છે. તેથી વિપરીત અલોભ છે. ‘જુગુપ્સમાન’ શબ્દનો અર્થ હતવાવાલા અને નિગ્રહ કરવાવાળા છે. વિમુક્ત હોવામાં તે હેતુગર્ભિત વિશેષણ છે તેથી એ નિષ્કર્ષ નીકળે છે કે તે વિમુક્ત એટલા માટે છે કે તેઓએ લોભને સંતોષથી નિગૃહીત કરેલ છે.



તદ્વિરુદ્ધેન સન્તોષેણ જુગુપ્સમાનઃ=નિન્દન્, સૂત્રેઽસ્મિન્ પૂર્વં बहुवचनप्रसङ्गेऽत्रा-  
ગ્રેઽપિ સર્વત્રૈકવચનં તુ જાત્યેકત્વવિવક્ષયા સમર્થનીયમ્ । લોભો હિ સંસારગર્ત-  
પાતને પ્રથમો ગણ્યતે । લોભસ્તુ જીવસ્ય વિમોહનમાકુલીકરણમિતિ યાવત્, લુબ્ધો

સૂત્ર મેં પહિલે बहुवचन का प्रयोग किया है, बाद में जो सर्वत्र एक  
वचन का प्रयोग हुआ है वह जाति की अपेक्षा से समझना चाहिये ।

परवस्तु को अपनाने की इच्छा लोभमोहनीय के उदय से जीवों  
को होती है । लोभ दो प्रकार का है—एक बादरलोभ, दूसरा सूक्ष्मलोभ ।  
बादरलोभ का सद्भाव आगम में ९वें गुणस्थान तक, तथा सूक्ष्मलोभ  
का सद्भाव १०वें गुणस्थान तक प्रकट किया है । इसलिये जबतक आगे २  
के गुणस्थानों की प्राप्ति नहीं हुई है तब तक ऐसे जीवों को लोभ का  
उदय रहता ही है, अतः जब लोभ का उदय है तो उसका कार्य भी वहां  
होना चाहिये ? इस शंका का निराकरण करते हुए सूत्रकार कहते हैं  
कि—‘लोभम् अलोभेन जुगुप्समानः’ वे जीव लोभकषाय को संतोष से  
जीतते हैं । मुमुक्षु जीव परवस्तु के लाभ से आकृष्ट एवं अलाभ से  
असंतुष्ट नहीं होते ।

लोभ का निराकरण करते हुए टीकाकार कहते हैं कि—जीवों को  
संसाररूपी गड्ढे में गिराने का सर्वप्रथम कारण लोभ माना गया है जो  
जीवों को आकुलितपरिणामी बना देता है । लुब्धक रात-दिन व्याकुल ही

સૂત્રમાં પહેલાં બહુવચનનો પ્રયોગ કરેલ છે બાદમાં જે સર્વત્ર એક વચ-  
નનો પ્રયોગ થયેલ છે તે જાતિની અપેક્ષાથી સમજવું જોઈએ.

પરવસ્તુને અપનાવવાની ઇચ્છા લોભમોહનીયના ઉદયથી થાય છે. લોભ  
જે પ્રકારના છે. એક બાદરલોભ, બીજો સૂક્ષ્મલોભ.

બાદરલોભનો સદ્ભાવ આગમમાં ૯મા ગુણસ્થાન સુધી, તથા સૂક્ષ્મલોભનો  
સદ્ભાવ ૧૦માં ગુણસ્થાન સુધી પ્રગટ કરેલ છે, માટે ત્યાંસુધી આગળ આગ-  
ળના ગુણસ્થાનોની પ્રાપ્તિ નથી થઈ ત્યાં સુધી એવા જીવોને લોભનો ઉદય રહે જ  
છે, માટે ત્યારે લોભનો ઉદય છે તો તેનું કાર્ય પણ ત્યાં હોવું જોઈએ ? આ  
શંકાનું નિરાકરણ કરતા સૂત્રકાર કહે છે કે—‘લોભમ્ અલોભેન જુગુપ્સમાનઃ’  
તે જીવ લોભકષાયને સંતોષથી જીતે છે. મુમુક્ષુ જીવ પરવસ્તુના લાભથી આકૃષ્ટ  
અને અલાભથી અસંતુષ્ટ થતાં નથી.

લોભનું નિરાકરણ કરતાયકા ટીકાકાર કહે છે કે—જીવોને સંસારરૂપી ખાડામાં  
પડવાનું સર્વ પ્રથમ કારણ લોભ જ છે. લોભ જીવોને આકુલિતપરિણામી બનાવી

હિ રાત્રિન્દિવં સમાકુલ એવાવતિષ્ઠતે, 'કદા કુતઃ કથં કુત્ર ધનાદિકં લપ્સ્યે' इत्याशा-  
 ग्रस्तो दुर्लङ्घ्यपर्वतमपि लिलङ्घयिषति, अपारपारावारमपि तितीर्षति, दुर्गमगिरिकुब्जेषु  
 वंभ्रमीति, निजवान्धवनिकरमपि मिमारयिषति, दुर्गममपि जिगमिषति, बहु भारं  
 वावहीति, दुःसहां क्षुधमपि सोढुमिच्छति, पापं चिकीर्षति, कुलशीलजातिधैर्याणि  
 च परिजिहासति, किमधिकेन ? अज्ञानान्धकारावृतायां लोभरात्रौ प्राणातिपातादि-  
 दोषतस्करैરાत्मધનं लुण्ठयति, चित्तमहारण्ये मोहान्ધकारે લોભપિશાચં નર્તયતિ ।  
 લોભાકુલિતચેતા હિ જલે જીર્ણપત્રમિવ, વાયૌ લઘુતૃણમિવ, ગગને શરન્મેઘ ઇવેતસ્તતઃ  
 સંસારે પરિભ્રમતિ । લોભિનો જનસ્ય સકલોઽપિ ગુણો દોષાયતે । લુબ્ધો હિ  
 સર્વાપદાસ્પદં ભવતિ, ઉક્તञ्च—

વના રહતા હૈ । વહ 'કિસ સમય કહાં સે કૈસે ધનાદિક કા અર્જન કરૂંગા'   
 इस आशा से प्रेरित हो दुर्लघ्य पर्वतादिकों को भी पार करने की इच्छा   
 रखता है, अपार समुद्र को भी तैरने की भावना रखता है, दुर्गम-पहाड़ी   
 झाड़ियों में भी भ्रमण करने की कामना करता है, अपने बांधवों को भी   
 मारने का मनोरथ करता रहता है, जहां कोई नहीं जा सकता ऐसे   
 भयंकर स्थान में भी जाने की चाहना करता है, बहुत भारी बोझ को   
 भी ढोता है, दुःसह क्षुधा को भी सहन कर लेता है, पाप करने के लिये   
 भी उतारु हो जाता है, अपने कुल, शील, जाति और धैर्य को मौका पड़ने   
 पर छोड़ने के लिये कटिबद्ध हो जाता है । अधिक क्या कहा जाय ? अज्ञान   
 रूपी अन्धकार से अच्छादित इस लोभरूपी महारात्रि में यह जीव   
 आत्मधन को प्राणातिपातादिकपापरूपी चोरों से सदा चुराता रहता है ।

દે છે. લુબ્ધક રાત દિવસ વ્યાકુળ જ બની રહે છે, 'કયા વખતે કયારે કેવી રીતે   
 ધનાદિકનું અર્જન કરું' આવી આશાથી પ્રેરિત થઈ ઓળંગી ન શકાય તેવા   
 પર્વતોને પણ પાર કરવાની ઇચ્છા કરે છે, અપાર સમુદ્રને તરવાની પણ ભાવના   
 રાખે છે, દુર્ગમ-પહાડી ઝાડીઓમાં પણ ભ્રમણ કરવાની ઇચ્છા રાખે છે, પોતાના   
 ભાઈઓને પણ મારવાના મનોરથો સેવે છે, જ્યાં કોઈ જઈ શકતું નથી તેવા   
 ભયંકર સ્થાનમાં જવાની પણ હિંમત કરે છે, ઘણા ભારે ઓળ પણ ઉઠાવે છે,   
 દુઃસહ ભૂખને પણ સહન કરી લે છે, પાપ કરવાને માટે પણ તૈયાર થઈ જાય   
 છે, પોતાનું કુળ, શીલ, જાતિ અને ધૈર્યને પણ વખત મળતાં છોડવાને તૈયાર   
 થઈ જાય છે. અધિક કેટલું કહેવું - અજ્ઞાનરૂપી અંધકારથી આચ્છાદિત આ   
 લોભરૂપી મહારાત્રિમાં આ જીવ આત્મધનને પ્રાણાતિપાતાદિકપાપરૂપી ચોરાથી

“ લોભેન બુદ્ધિશ્ચલતિ, લોભો જનયતે તૃષામ્ ।

તૃષાર્તો દુઃસ્વમાપ્નોતિ, પરત્રેહ ચ માનવઃ ॥ ૧ ॥” ઇતિ ।

અત્ર લોભમલોભેન જુગુપ્સમાનઃ, ઇતિ કથનાત્ પ્રધાનાન્ત્યપરિત્યાગપ્રદર્શનેન ‘પ્રાધાન્યેન વ્યપદેશાઃ’ ઇતિ નિયમાત્ ક્રોધાદીનામપિ હેયતા પ્રદર્શિતા । અન્ય-ત્રાપિ પ્રોક્તમ્—

મોહરૂપી અંધકાર સે યુક્ત લોભી જીવ ચિત્તરૂપી ગહન જંગલ મેં લોભરૂપી પિશાચ કો સદા નચાતા રહતા હૈ । જિસ તરહ જલ મેં જીર્ણપત્ર ઇતસ્તતઃ ચક્કર કાઢા કરતા હૈ, વાયુ કે શ્લોકોં મેં લઘુતૃણ જિસ પ્રકાર ઉડતા રહતા હૈ, આકાશ મેં શરત્કાલીન મેઘમાલા જૈસે યહાં સે વહાં. વહાંસે યહાં ઘૂમા કરતી હૈ, ડસી પ્રકાર લોભાકુલિતચિત્તવાલા પ્રાણી ભી સંસાર મેં યહાં વહાં ભમતા રહતા હૈ । લોભી જન કે સમસ્ત ગુણ દોષ રૂપ મેં હી પરિણત હો જાતે હૈં । જૈસે કહા હૈ—

“ લોભેન બુદ્ધિશ્ચલતિ, લોભો જનયતે તૃષામ્ ।

તૃષાર્તો દુઃસ્વમાપ્નોતિ, પરત્રેહ ચ માનવઃ ” ॥૧॥

લોભ સે બુદ્ધિ ચલિત હો જાતી હૈ, લોભ તૃષ્ણા કો પૈદા કરતા હૈ, તૃષ્ણા સે પીડિત પ્રાણી ઇસ લોક મેં ઓર પરલોક મેં દુઃસ્વોં કો પાતા હૈ ॥૧॥ સૂત્ર મેં લોભકષાય કો સંતોષ સે નિગ્રહ કરને કા જો કથન કિયા ગયા હૈ વહ એક ઉપલક્ષણ હૈ, ઇસસે ક્રોધ, માન, માયા કા ભી

હમેશા હુડાવતો રહે છે. મોહરૂપી અંધકારથી યુક્ત લોભી જીવ ચિત્તરૂપી ગહન જંગલમાં લોભરૂપી પિશાચને હમેશાં નચાવતો રહે છે. જેવી રીતે પાણીમાં જીર્ણપાનકા અહીંતહીં ચક્કર કર્યા કરે છે, વાયુની લહરોમાં લઘુ તૃણ જેમ ઉડતા રહે છે, આકાશમાં શરતકાલીન મેઘમાલા અહીંથી તહીં અને તહીંથી અહીં જેમ ઘૂમ્યા કરે છે તે પ્રકારે લોભાકુલિત ચિત્તવાળા પ્રાણી પણ સંસારમાં આહી તહીં ભમ્યા કરે છે, લોભી જનના સમસ્ત ગુણો દોષરૂપમાં જ પરિણત થાય છે. જેમ કહ્યું છે—

“ લોમેન બુદ્ધિશ્ચલતિ, લોભો જનયતે તૃષામ્

તૃષાર્તો દુઃસ્વમાપ્નોતિ, પરત્રેહ ચ માનવઃ ” ॥ ૧ ॥

લોભથી બુદ્ધિ ચલિત થાય છે. લોભ તૃષ્ણાને પૈદા કરે છે. તૃષ્ણાથી પીડિત પ્રાણી આ લોકમાં અને પરલોકમાં દુઃખોને પામે છે ॥ ૧ ॥

સૂત્રમાં લોભકષાયને સંતોષથી નિગ્રહ કરવાનું જે કથન કરવામાં આવ્યું છે તે એક ઉપલક્ષણ છે. તેથી ક્રોધ, માન, માયાનો પણ પોતપોતાનાં પ્રતિપક્ષી

“ ત્રિવિધં નરકસ્યેદં, દ્વારં નાશનમાત્મનઃ ।

કામઃ ક્રોધસ્તથા લોભસ્તસ્માદેતત્રયં ત્યજેત્ ” ॥ ૧ ॥

‘ લોભં સન્તોષેણ જયે ’—દિત્યાશયેન લોભમલોભેનેત્યુક્તમ્,  
લોભાદીન્ કેન કેન જયેદિત્યાહ દશવૈકાલિકે—

“ ઉવસમેણ હણે કોહં, માણં મદ્વયા જિણે ।

માયમજ્જવભાવેણ, લોહં સંતોસઓ જિણે ” ॥ ગાથા ૩૮ ॥

અપને ૨ પ્રતિપક્ષી भावों से निग्रह करना समझ लेना चाहिये । क्योंकि  
લોભની તરહ મુમુક્ષુઓં કે લિયે વે ક્રોધ આદિ મી હેય હૈં । ચાર કષાયોં મેં  
અન્તિમ કષાય લોભ હૈ । ઉસકે ત્યાગ કે ઉપદેશ સે ક્રોધાદિ કા ત્યાગ  
કરના સ્વતઃ સિદ્ધ હો જાતા હૈ । કહા મી હૈ—

ત્રિવિધં નરકસ્યેદં દ્વારં નાશનમાત્મનઃ ।

કામઃ ક્રોધસ્તથા લોભસ્તસ્માદેતત્રયં ત્યજેત્ ॥

હસ શ્લોક સે અન્યત્ર મી કામ, ક્રોધ એવં લોભ કો નરક કા  
દ્વાર એવં અપને નાશ કા કારણ બતલાયા હૈ ।

શંકા—લોભ કો જિસ તરહ સે સંતોષ સે જીતા જાતા હૈ ઉસી  
પ્રકાર ક્રોધાદિકષાયોં કો જીતને કે લિયે કિન ૨ ભાવોં કી જરૂરત  
હોની હૈ ?

ઉત્તર—દશવૈકાલિક સૂત્ર મેં હન કષાયોં કો જીતને કે લિયે હન  
ભાવોં કો પ્રકટ કિયા હૈ—

ભાવેથી નિગ્રહ કરવાનું સમજ લેવું જોઈએ. કારણ કે લોભની માફક મુમુક્ષુ-  
ઓને માટે ક્રોધ માન આદિ પણ હોય છે. ચાર કષાયોમાં અંતિમ કષાય લોભ છે.  
તેના ત્યાગના ઉપદેશથી ક્રોધાદિકનો ત્યાગ કરવો સ્વતઃ સિદ્ધ થઈ જાય છે.  
કહ્યું પણ છે—

“ ત્રિવિધં નરકસ્યેદં, દ્વારં નાશનમાત્મનઃ ।

કામઃ ક્રોધસ્તથા લોભસ્તસ્માદેતત્રયં ત્યજેત્ ” ॥ ૧ ॥

આ શ્લોકથી અન્યત્ર પણ કામ ક્રોધ અને લોભને નરકનું દ્વાર અને  
પોતાના નાશનું કારણ બતાવ્યું છે.

શંકા—લોભને જેમ સંતોષથી છૂટાય છે તેમ ક્રોધાદિ કષાયોને છૂટવા  
ક્યા ક્યા ભાવેની જરૂરત હોય છે ?

ઉત્તર—દશવૈકાલિક સૂત્રમાં આ કષાયોને છૂટવા માટે એ ભાવોને  
પ્રગટ કર્યા છે—

છાયા-ઉપશમેન હન્યાત્ક્રોધં, માનં માર્દવેન જયેત્ ।

માયામાર્જવભાવેન, લોભં સન્તોષતો જયેત્ ॥

इति क्रोधादीनां चतुर्णां त्यागोपायः प्रदर्शितः, असन्तोषरोगस्य लोभपरित्याग एवौषधमिति, उक्तञ्च—

“ यथाऽऽहारपरित्यागो, ज्वरितस्यौषधं मतम् ।

लोभस्यैवं परित्याग, -स्त्वसन्तोषस्य भेषजम् ” ॥ ૧ ॥

“ ઉવસમેણ હજે કોહં, માણં મદવયા જિણે ।

માયમઝ્જવભાવેણ, લોભં સંતોસઓ જિણે ॥”

ઉપશમ સે ક્રોધ કો, માર્દવ-નમ્રભાવ સે માનકો, આર્જવ ભાવ સે માયા કો ઓર સંતોષ સે લોભ કો જીતના ચાહિયે । અસન્તોષરૂપી રોગ કા ઔષધ લોભપરિત્યાગ હૈ । કહા મી હૈ—

“ यथाऽऽहारपरित्यागो, -ज्वरितस्यौषधं मतम् ।

लोभस्यैवं परित्याग, -स्त्वसन्तोषस्य भेषजम् ॥ ૧ ॥ ”

જૈસે રોગી કે જ્વર કો નષ્ટ કરને કે લિએ આહાર કા પરિત્યાગ દવા કા કામ કરતા હૈ ઉસી તરહ સે અસન્તોષ કો નષ્ટ કરને કે લિએ લોભ કા પરિહાર મી ઉત્તમ ઔષધી કા કામ દેતા હૈ । ઇસ કથન સે યહ સિદ્ધાન્ત મલીભાંતિ પુષ્ટ હો જાતા હૈ કિ જો લોભાદિકોં કો ઉનકે પ્રતિપક્ષી સંતોષાદિકોં કે દ્વારા નષ્ટ કર દેતે હૈં વે હી વાસ્તવ મેં પારગામી હૈં । એસે વ્યક્તિ પ્રાપ્ત હુએ કામભોગોં મેં નહીં ફસતે । ઇસી વાત કી પુષ્ટિ “લબ્ધાન્ કામાન્

“ ઉવસમેણ હજે કોહં, માણં મદવયા જિણે ।

માયમઝ્જવભાવેણ, લોભં સંતોષઓ જિણે ” ॥

ઉપશમથી ક્રોધને, માર્દવ-નમ્ર લાવથી માનને, આર્જવલાવથી માયાને અને સંતોષથી લોભને જીતાય છે. અસંતોષરૂપી રોગનું ઔષધ લોભપરિત્યાગ છે. કહું પણ છે—

“ यथाऽऽहारपरित्यागो, -ज्वरितस्यौषधं मतम् ।

लोभस्यैवं परित्याग, -स्त्वसन्तोषस्य भेषजम् ” ॥ ૧ ॥

જોમ રોગીના જ્વરને નષ્ટ કરવા માટે આહારનો પરિત્યાગ દવાનું કામ કરે છે તે પ્રકારે અસંતોષને નષ્ટ કરવા માટે લોભનો પરિહાર પણ ઉત્તમ ઔષધીનું કામ આપે છે. આ કથનથી એ સિદ્ધાન્ત ભલીભાંતિ પુષ્ટ થાય છે કે—જે લોભાદિકોને તેના પ્રતિપક્ષી સંતોષાદિકોના મારફત નષ્ટ કરે છે તે જ વાસ્તવમાં પારગામી છે. એવી વ્યક્તિ પ્રાપ્ત થયેલ કામભોગોમાં ફસતી નથી, એ વાતની પુષ્ટિ ‘લબ્ધાન્ કામાન્ નામિગાહતે’ એ ઉપદેશથી સૂચકારે

સર્વથા યે લોભાદીન્ સંન્તોષાદિના જયન્તિ ત એવ પારગામિનો ભવન્તીતિ તાત્પર્યમ્ । તતઃ કિમિત્યાહ-લઙ્ઘાન્=સમધિગતાન્, કામાન્=કામભોગાન્ નાભિ-ગાહતે=ન શ્રયતે, યો હિ પરિત્યક્તલોભાદિસ્તં કામાદયઃ કદાચિદપિ ન પરાજયન્ત ઇતિ ભાવઃ ।

કોઽપિ કેનાપિ હેતુના પરિહીનલોભાદિઃ કૃતચારિત્રગ્રહણો ભવતિ, કદા-ચિત્પુનર્લોભોદયસ્તસ્ય ચેતસિ સ્યાત્તસ્ય હેયતાપ્રદર્શનાય, યશ્ચ સર્વદૈવ લોભાદિરહિતઃ સંયમં શૃઙ્ઘાતિ સ એવાનગાર ઇતિ પ્રતિપાદનાય ચાહ-‘વિનાપી’-ત્યાદિ, એષઃ=લોભ-મલોભેન નિન્દન્ લોભં=પૂર્વોક્તં વિનાઽપિ=લોભરાહિત્યેનાઽપિ નિષ્ક્રમ્ય=ચારિત્રં શૃદ્ધીત્વા અકર્મા=ઘાતિકર્મચતુષ્ટયાપનયનેન પ્રાપ્તકેવલજ્ઞાનકેવલદર્શનો ભરતાદિકલ્પો ભૂત્વા જાનાતિ=વિશેષેણાનુભવતિ, પશ્યતિ=સર્વં વસ્તુજાતં યથાર્થરૂપેણાવલોકતે ।

નાભિગાહતે’ इस उपदेश से सूत्रकार ने की है । क्योंकि जिसने लोभा-दिक का परिहार कर दिया है उसे कामभोगादिक कभी भी परास्त नहीं कर सकते ।

કોઈ વ્યક્તિ લોભાદિકષાયોં સે હીન હૈ, પરન્તુ કિસી વજહ સે યદિ ઉસને ચારિત્ર ગ્રહણ કર લિયા હૈ તો ઉક્ત વ્યક્તિ કે ચિત્ત મેં કદાચિત્ ફિર સે મીલોભ કા ઉદય હો જાતા હૈ, ઉસકી ઉસ પ્રકાર કી પ્રવૃત્તિ છોડને યોગ્ય હૈ, યહ દિશ્વાને કે લિયે, તથા જો સર્વદા લોભરહિત હોકર સંયમ કો ધારણ કરતા હૈ વહી અનગાર-સાધુ હૈ, ઇસ વાત કા પ્રતિપાદન કરને કે લિયે આગે સૂત્રાંશ કા અવતરણ કરતે હુએ સૂત્રકાર કહતે હૈં કિ-જો વ્યક્તિ ઇસ પૂર્વોક્ત લોભ કે વિના-અર્થાત્ લોભ સે રહિત હોકર ચરિત્ર કો ગ્રહણ કરતે હૈં વે ચાર ઘાતિયા કર્મોં કો નષ્ટ કર ભરતાદિ જૈસે હો-

કરી છે, કારણ કે જેણે લોભાદિકનો પરિહાર કરેલ છે તેને કામભોગાદિક કદી પણ પરાસ્ત કરી શકતા નથી.

કોઈ વ્યક્તિ લોભાદિક્ષાયોથી હીન છે, પરંતુ કોઈ કારણથી કદાચ તેણે ચારિત્ર ગ્રહણ કરેલ છે તો તે વ્યક્તિના ચિત્તમાં કદાચ ફરીથી પણ લોભનો ઉદય થાય છે તેની તે પ્રકારની પ્રવૃત્તિ છોડવાયોગ્ય છે. આ દેખાવા માટે, અને જે સર્વદા લોભરહિત થઈ સંયમને ધારણ કરે છે તે આણુગાર-સાધુ છે, આ વાતનું પ્રતિપાદન કરવા માટે આગળના સૂત્રનું અવતરણ કરીને સૂત્રકાર કહે છે કે-જે વ્યક્તિ આ પૂર્વોક્ત લોભ વિના અર્થાત્ લોભથી રહિત થઈને ચારિત્રને ગ્રહણ કરે છે તે ચાર ઘાતિયા કર્મોને નષ્ટ કરી ભરતાદિક જેવા બીજાને કેવળજ્ઞાન



નનુ લોભનાશે કુતઃ કર્માભાવો ભવિતુમર્હતીતિ વેન્ન । લોભનાશાન્મોહનીયનાશઃ,  
તસ્મિન્ન ઘાતિકર્મક્ષયઃ, તસ્મિન્ન કેવલજ્ઞાનાધિગમઃ, તેન ચ ભવોપગ્રાહિકર્મક્ષયઃ,  
इत्येवंरूपपरम्परया लोभापगमेन अकर्मेतिविशेषणसार्थक्यात् ।

કર કેવલ જ્ઞાન ઓર કેવલ દર્શન કો પાકર દુનિયાં કે ચર અચર સમસ્ત પદાર્થોં કો સ્પષ્ટરૂપ સે સમસ્ત ગુણ ઓર સમસ્ત પર્યાયોં સે યુક્ત જાનતે હેં ઓર દેખતે હેં ।

શંકા—લોભ કે નાશ સે કર્મોં કા અભાવ કેસે હો સકતા હૈ ?

ઉત્તર—એસા નહીં કહના ચાહિયે; ક્યોંકિ લોભ કે ક્ષય સે મોહનીય કા ક્ષય હોતા હૈ, ઉસકે ક્ષય હોને પર શેષ ઘાતિયા કર્મોં કા ક્ષય હોતા હૈ, ઘાતિયા કર્મોં કે અભાવ હોતે હી કેવલ જ્ઞાન કી પ્રાપ્તિ હો જાતી હૈ, કેવલ જ્ઞાન કી પ્રાપ્તિ હોને સે ભવોપગ્રાહી અઘાતિયા કર્મોં કા ક્ષય હો જાતા હૈ । ઇસ પ્રકાર પરમ્પરા કા સમ્બન્ધ કો લેકર લોભ કે વિનાશ સે આત્મા અકર્મા હો જાતા હૈ, ઇસ વિશેષણ કી સાર્થકતા સિદ્ધ હો જાતી હૈ । સર્વ પ્રથમ મોહનીય કર્મ કા ક્ષય હોતા હૈ । સમસ્ત કર્મોં મેં મોહનીય કર્મ સેનાપતિ હૈ, જિસ પ્રકાર સેનાપતિ કે પરાસ્ત હોને પર સેના અશક્ત હો જાતી હૈ ઉસી પ્રકાર મોહનીય કર્મ કે ક્ષય હોતે હી કર્મોં કી સેના ભી ક્ષીણ હો જાતી હૈ । મોહનીય કે ક્ષય સે જ્ઞાનાવરણીય દર્શનાવરણીય ઓર અંતરાય કા ક્ષય હોતા હૈ, ઉસ સે કેવલ જ્ઞાન કી પ્રાપ્તિ હોતી હૈ ।

અને કેવળદર્શન પામીને દુનિયાના ચર-અચર સમસ્ત પદાર્થોંને સ્પષ્ટ રૂપથી સમસ્ત ગુણ અને સમસ્ત પર્યાયોથી યુક્ત જાણે છે અને દેખે છે.

શંકા—લોભના નાશથી કર્મોંનો અભાવ કેવી રીતે થઈ શકે ?

ઉત્તર—એમ કહેવું ન જોઈએ, કારણ કે લોભના ક્ષયથી મોહનીયનો ક્ષય થાય છે. તેનો ક્ષય થવા પછી શેષ ઘાતિયા કર્મોંનો ક્ષય થાય છે, ઘાતિયા કર્મોંનો અભાવ થતાં જ કેવળજ્ઞાનની પ્રાપ્તિ થાય છે, કેવળજ્ઞાનની પ્રાપ્તિ થવાથી ભવોપગ્રાહી અઘાતિયા કર્મોંનો ક્ષય થાય છે. આ પ્રકાર પરંપરા સંબંધને લઈને લોભના વિનાશથી આત્મા અકર્મા બને છે. આ વિશેષણની સાર્થકતા સિદ્ધ થઈ જાય છે. સર્વ પ્રથમ મોહનીય કર્મનો ક્ષય થાય છે, સમસ્ત કર્મોંમાં મોહનીય કર્મ સેનાપતિ છે. જેમ સેનાપતિ પરાસ્ત થવાથી સેના અશક્ત બને છે તે પ્રકારે મોહનીય કર્મનો ક્ષય થતાં જ કર્મોંની સેના પણ ક્ષીણ થઈ જાય છે. મોહનીયના ક્ષયથી જ્ઞાનાવરણીય દર્શનાવરણીય અને અંતરાયનો ક્ષય થાય છે, તેનાથી કેવળજ્ઞાનની પ્રાપ્તિ થાય છે.



કર્મનાશાનન્તરં કિં કુરુતે ? इति दर्शयति—‘प्रत्युपेक्ष्ये’—ति, प्रत्युपेक्ष्य लोभो निखिलानर्थकरो भवति, ‘लोहो सव्वविणासणो’ इतिवचनात्, तं पर्यालोच्य नावकाङ्क्षति=किमपि नेच्छति, यथैवंभूतः स एषोऽनगारः=यथाख्यातचारित्रवान् मुनिः प्रोच्यते तत्त्वदर्शिभिरिति शेषः ॥ सू० ३ ॥

यस्तु सत्त्वोपघातिनीं क्रियां विदधानः सकर्मा पापमोक्षकामनयाऽऽशंसया वा यद्यत्કरोતિ તત્તદર્શયતિ—‘અહો ય’ इत्यादि ।

सूलम्—अहो य राओ परितप्पमाणे कालाकालसमुद्वाइ संजो-  
गट्ठी अट्ठालोभी आलुंप्पे सहसक्कारे विणिविट्ठचित्ते एत्थ सत्थे  
पुणो पुणो, से आयबले, से नाइबले, से मित्तबले, से पिच्चबले,  
से देवबले, से रायबले, से चोरबले, से अतिहिबले, से किविणबले, से  
समणबले, इच्चेएहिं विरूवरूवेहिं कज्जेहिं दंडसमायाणं संपेहाए  
भया कज्जइ, पावमुक्खुत्ति मन्नमाणे, अदुवा आसंसाए ॥सू० ४॥

छाया—अहश्च रात्रिश्च परितप्यमानः कालाकालसमुत्थायी संयोगार्थी अर्था-  
लोभी आलुम्पः सहसाकारः विनिविष्टचित्तः, अत्र शस्त्रे पुनः पुनः, तदात्मबलं,  
तज्ज्ञातिबलम्, तन्मित्रबलम्, तत्प्रेत्यबलम्, तद्देवबलम्, तद्राजबलम्, तच्चोरबलम्,  
तदतिथिबलम्, तत्कृपणबलम् तत् श्रमणबलम्, इत्येतैर्विरूपरूपैः कायैर्दण्डसमादानं  
सम्प्रेक्ष्य भयात् क्रियते पापमोक्ष इति मन्यमानः अथवा आशंसायै ॥ सू० ४ ॥

‘लोहो सव्वविणासणो’ लોભ સમસ્ત અનર્થોં કી જડ હૈ, इस प्रकार पर्यालोचन करके वह संयमी किसी भी सांसारिक पदार्थों की इच्छा नहीं करता है । इस प्रकार जिसकी प्रवृत्ति है वही सच्चा अनगार है—अर्थात् वही तत्त्वदर्शियों द्वारा यथाख्यात-चारित्र-समन्वित मुनि कहा जाता है ॥ सू० ३ ॥

जो प्राणियों को कष्ट देने वाली या उनके प्राणों को नाश करने वाली क्रियाओं को करता है वह सकर्मा है । वह पापों को दूर करने की

‘लोहो સવ્વવિણાસણો’ લોભ સમસ્ત અનર્થોની જડ છે. એ પ્રકારે પર્યાયલોચન કરીને તે સંયમી કોઈ પણ સાંસારિક પદાર્થોની ઇચ્છા કરતા નથી. એ પ્રકારે જેની પ્રવૃત્તિ છે તે જ સાચો અણગાર છે. અર્થાત્ તે જ તત્ત્વદર્શિયોદ્વારા યથાખ્યાતચારિત્રસમન્વિત મુનિ કહેવામાં આવે છે. ॥ સૂ. ૩ ॥

જે પ્રાણીઓને કષ્ટ દેવાવાળી અને તેના પ્રાણોનો નાશ કરવાવાળી ક્રિયાઓ કરે છે તે સકર્મા છે. તે પાપોને દૂર કરવાની ભાવનાથી અને આશંસા-અલભ્ય

ટીકા—‘અહશ્ચે’—ત્યાદિ, ‘અહો ય રાઓ’ ઇત્યારમ્ય ‘एत्थ सत्थे पुणो पुणो’ इत्यन्तस्य व्याख्या प्रथमोद्देशे प्रोक्तेति तत एव विज्ञेया । विषयासक्तो रात्रिन्दिवं परितप्तो धनार्थी सत्त्वोपमर्दने प्रवृत्तो भवतीत्यर्थः, अपि च पुनः किं करोतीत्याह—  
‘तत् आत्मबल’—मित्यादि, आत्मनो=जीवस्य बलं=सामर्थ्यम् आत्मबलं मेऽवश्यं स्यादिति च्छया बहूपायैः स्वतुष्ट्यर्थं सत्त्वोपघातं करोति, किञ्च—स्वमांसपरिवर्धनाय मांसादिकमप्यश्नाति, तदर्थं पञ्चेन्द्रियादीनपि हन्ति । तत्स्वजनबलं तन्मित्रबलं च मे भविष्यति, येन समापतन्तीमपि विपदं सुखेन तरिष्यामि । प्रेत्यबलं=परलोकबलं

કામના સે, અથવા આશંસા-અલભ્ય વસ્તુ કી લાભ કી ઇચ્છા સે જો જો ક્રિયાયેં કરતા હૈં ઉન્હેંં ઇસ સૂત્ર મેં પ્રકટ કરતે હુએ સૂત્રકાર કહતે હૈં—

‘અહો ય રાઓ’ ઇત્યાદિ । ‘અહો ય રાઓ’ યહાં સે લેકર ‘एत्थ सत्थे पुणो पुणो’ યહાં તક કે પદોં કા વ્યાખ્યાન પ્રથમ ઉદ્દેશ મેં લિખા જા ચુકા હૈં વહીં સે જાન લેના ચાહિયે । વિષયોં મેં આસક્ત ધન કા ઇચ્છુક પ્રાણી રાત-દિન સંતપ્તચિત્ત હો જીવોં કે ઉપમર્દન કરને મેં પ્રવૃત્તિ કરતા રહતા હૈં । તથા મુઝે આત્મબલ પ્રાપ્ત હો ઇસ ય્યાલ સે વહ અપને સન્તોષ કે લિયે પ્રાણિયોં કે પ્રાણોં કા ઉપઘાત કરતા હૈં । અપના માંસ બઢાને કે લિયે માંસ ખાતા હૈં ઓર ઉસકે લિયે વહ પંચેન્દ્રિયાદિક પ્રાણિયોં કી હિંસા કરતા હૈં—‘જો માંસ મુઝે પ્રાપ્ત હુઆ, જિસે મૈં શિકાર કરકે લાયા હૂં ઉસે મૈં હી અકેલા યાઝૂં, અપને સગે સમ્બન્ધિયોં મેં તથા મિત્રોં મેં ભી ઉસકા વિતરણ કરૂં, ક્યોંકિ પરસ્પર કે ઇસ પ્રકાર કે આદાન

વસ્તુના લાભની ઇચ્છાથી જે જે ક્રિયાઓ કરે છે તેને આ સૂત્રમાં પ્રગટ કરતાં સૂત્રકાર કહે છે—

‘અહો ય રાઓ’ ઇત્યાદિ. ‘અહો ય રાઓ’ અહીંયાથી લઈને ‘एत्थ सत्थे पुणो पुणो’ અહીં સુધીના પદોનુ વ્યાખ્યાન પ્રથમ ઉદ્દેશમાં આપવામાં આવેલ છે ત્યાંથી બાણી લેવું બેઠયો. વિષયોમાં આસક્ત ધનનો ઇચ્છુક પ્રાણી રાત દિવસ સંતપ્તચિત્ત બની જીવોના ઉપમર્દન કરવામાં પ્રવૃત્તિ કરતો રહે છે. અને ‘મને આત્મબળ પ્રાપ્ત થાય’ એવા ખ્યાલથી તે પોતાના સંતોષ માટે પ્રાણિયોના પ્રાણોના ઉપઘાત કરે છે. પોતાનું માંસ વધારવા માટે માંસ ખાય છે અને તેને માટે તે પંચેન્દ્રિયાદિક પ્રાણિયોની હિંસા કરે છે—‘જે માંસ મને પ્રાપ્ત થયું છે, જેને હું શિકાર કરીને લાવ્યો છું તેને હું એકલો જ ખાઉં પોતાના સગાસંબંધિયોમાં તથા મિત્રોમાં પણ તેનું વિતરણ કરું, કારણ કે પરસ્પરના આવા પ્રકારના આદાન

મે, इत्याशया मेपादिकं द्विन्स्ति । देवबलं मे स्यादित्याशया पचनपाचनादौ प्रवर्तते । राजबलं स्यादितिच्छया राजसेवा क्रियते । चौरबलं=चौरभागो भविष्यतीति चौरसमीपे तिष्ठति । अतिथिवलम्, “अतिथिः” न विद्यते तिथिरागमनस्य यस्य सोऽतिथिः, अतिथिसेवया मे बलमिति स्पृहया तं सेवते, तदर्थं सत्त्वो-

પ્રદાન સે મુझे उनका बल प्राप्त होगा, जिससे कभी मेरे ऊपर यदि कोई आपत्ति आ जायगी तो वे उसमें मुझे मददगार बनेंगे, उनकी प्राप्त सहायता से अथवा सहानुभूति से मैं उस आपत्ति से विना किसी कष्ट के सुरक्षित हो जाऊँगा । ‘देवों का बल मुझे प्राप्त होगा’ इस विचार से वह नैवेद्य आदि के लिये पचन-पाचनादिक आरंभ करता है । ‘राजा की कृपा मुझ पर बनी रहे’ इस भावना से वह उनकी झूठी खुशामद करता है, सेवा करता है, उसकी प्रत्येक भली बुरी बातों में हाँ में हाँ मिलाता है, ‘खुशामद में ही आमद है’ इस तुच्छ कामना से वह हर एक प्रकार से अपने को कष्ट में डालकर भी उनकी प्रत्येक बात को शिर-मांथे-का मुकुट बनाने में भी संकोच नहीं करता । ‘मैं यदि चोरों की मदद करूँगा, या उन्हें मदद पहुँचाऊँगा या उनका सहवास करूँगा तो मुझे उनसे लूट के द्रव्य में से हिस्सा भी मिलता रहेगा’ इस चाहना से वह चोरों का भी बल प्राप्त करता है । जिसके आने की कोई निश्चित तिथि नहीं है उसका नाम अतिथि है, ऐसे अतिथियों की वह सिर्फ ‘इनका आशी-

પ્રદાનથી મને તેઓનું બળ પ્રાપ્ત થશે, કદાચ મારા ઉપર કોઈ આપત્તિ આવે તો તેઓ મને મદદગાર બનશે, તેમની સહાયતાથી અને સહાનુભૂતિથી હું આવેલી આપત્તિથી કોઈ પણ બીજાના કષ્ટ વગર સુરક્ષિત થઈ જઈશ’ ‘દેવોનું બળ મને પ્રાપ્ત થશે’ તેથી તે નૈવેદ્ય આદિ માટે પચન-પાચનાદિક આરંભ કરે છે. ‘રાજાની કૃપા મારા ઉપર બની રહે’ તે ભાવનાથી તે તેની જુઠી ખુશામત કરે છે, સેવા કરે છે, તેની પ્રત્યેક સારી નકારી વાતોમાં હા માં હા મિલાવે છે. ‘ખુશામતમાં જ આમદ છે’ આવી તુચ્છ કામનાથી તે દરેક પ્રકારથી પોતાને કષ્ટમાં નાખીને પણ તેની પ્રત્યેક વાતને શિરનો મુગટ બનાવવામાં મંડોચ કરતો નથી. ‘હું જો ચોરને મદદ કરીશ અને તેમને મદદ પહોંચાડીશ તો મને તેમનો સહવાસ કરીશ તો મને તેમની હુંટના દ્રવ્યમાંથી હિસ્સો-(ભાગ) મળતો રહેશે’ આ ભાવનાથી તે ચોરોનું પણ બળ પ્રાપ્ત કરે છે. જેની આવવાની કોઈ નિશ્ચિત તિથિ નથી તેનું નામ અતિથિ છે. એવા અતિથિઓની તે ક્ષત્ર ‘તેમના

પર્મદનં કરોતિ । કૃપણવલં સ્યાદિત્યભિલાષેણ તં પરિચરતિ । ‘શ્રમણવલં’ શ્રમણઃ શાક્યાદિસ્તસ્ય વલં સ્યાદિતિ વાઙ્મય્યા તદર્થં પચનાદિસાવધક્રિયામાચરતિ । અત્રાનેકેષાં બલપ્રદર્શનં યં યં ચેતસિ સ્વાભિમતસાધકતયા પશ્યતિ તં તં સમ્યગુપ-  
ચરતીતિ દ્યોતનાય બોધ્યમ્ । इत्येतैः=पूर्वोक्तैः, विरूपरूपैः=बहुविधैः कार्यैः दण्ड-  
समादानं, दण्ड्यन्ते=हन्यन्ते सत्त्वानि येन स दण्डस्तस्य सर्वत आदानं ग्रहणं दण्ड-  
समादानम् ‘अहमिदं नाकरिष्यं तदात्मवलादिकं मे नाभविष्य’—दिति सम्प्रेक्ष्य=  
पर्यालोच्य भयात्=आत्मवलाद्यलाभभयात् सत्त्वोपघातः क्रियते, अनेकानर्थकरं  
वादरूप बल मुझे मिले’ इस विचार से सेवा करता है, उनके निमित्त  
प्राणियों की हिंसा भी करता है । कृपण की सेवा भी उनके बल को प्राप्त  
करने की इच्छा से वह करता है । ‘शाक्यादि श्रमणों का सहारा मुझे  
मिले’ इस अभिप्राय से वह उनके लिये पचन-पाचनादि करता है । सूत्र में  
जो इस प्रकार से अनेकों के बल का कथन किया गया है उसका भाव  
यही है कि वह जिसे अपने इष्ट अर्थ का साधक समझता है उनका बल  
प्राप्त करने के लिये उनकी भले प्रकार परिचर्या करता है । जिससे प्राणी  
की हिंसा होती है उसका नाम दण्ड है, इसका वह अनेक प्रकार के कार्यों  
से सर्वतः आदान-ग्रहण करता है । व्यर्थ के पापारंभ कार्यों में प्रवृत्त हो-  
कर वह प्राणियों के प्राणों का अपहरण कर पाप का भारी बोझ अपने  
माथे रखता है । ‘यदि मैं इस काम को नहीं करूँगा तो मुझे पूर्वोक्त  
आत्मबलादिकों का लाभ नहीं होगा’ इस बात का विचार कर उनके

આશિર્વાદરૂપ બળ મને મળે’ એ વિચારથી સેવા કરે છે. તેમના નિમિત્તે  
પ્રાણિઓની હિંસા પણ કરે છે. કૃપણની સેવા પણ તેનું બળ પ્રાપ્ત કરવાની  
ઇચ્છાથી કરે છે. ‘શાક્યાદિ શ્રમણોનો સાથ મને મળે’ તે માટે તે તેમને માટે  
પચન-પાચનાદિ કરે છે. સૂત્રમાં જે આ પ્રકારથી અनेક બળોનું કથન કરેલ છે  
તેના ભાવ એ છે કે-તે જેને પોતાના ઇષ્ટ અર્થનો સાધક સમજે છે તેનું બળ  
પ્રાપ્ત કરવા માટે તેની ભલી પ્રકાર પરિચર્યા કરે છે. જેનાથી પ્રાણીની હિંસા  
થાય છે તેનું નામ દંડ છે. તેના તે અनेક પ્રકારના કાર્યોથી સર્વતઃ આદાન-ગ્રહણ  
કરે છે. વ્યર્થના પાપારંભ કાર્યોમાં પ્રવૃત્ત થઈને તે પ્રાણીઓના પ્રાણોનું અપ-  
હરણ કરી પાપનો ભારી બોજ પોતાના માથે રાખે છે. ‘કદાચ હું આ કામને  
નહિ કરું’ તો મને પૂર્વોક્ત આત્મબલાદિનો લાભ થશે નહિ.’ આ વાતનો વિચાર  
કરી તેના અલાભના ભયથી પ્રાણિઓની હિંસાદિક ક્રિયાઓને-અનેક અનર્થકારી  
સાવધ વ્યાપારોને તે કરે છે. એ આત્મબલાદિક જે આ જીવને આ લોકમાં દંડ

સાવચ્ચવ્યાપારં કરોતીતિ તાત્પર્યમ્ । एतान्यात्मबलादीनि चैहिकदण्डग्रहणकारणानि । न केवलं तदर्थमेवानर्थं करोति किन्तु पारलौकिकार्थमपि परमार्थानभिज्ञो दण्ड-ग्रहणं करोतीत्याह-‘ पापमोक्ष ’ इति, पापमोक्षः-पातयति नरकनिगोदादाविति पापं, तस्मान्मोक्षो मे भविष्यतीति मन्यमानः=चेतसि चिन्तयन्,

अत्र ‘इति’-शब्दो हेतौ, यस्मान्मे पापमोक्षो भवितेति मन्यमानः, इति सम्बन्धः । असौ नानाविधहवनीयद्रव्यैर्जुहोति । तथा पितृतर्पणार्थं दर्भ-तिल-जलादिना समा-रम्भं करोति च । एवंविधसावच्यव्यापारैर्नानाविधदुर्गतिदायकमनेकजन्मदुर्मोचमधि-कमघमेवार्जयति ।

अलભ કે ભય સે પ્રાણિયોં કી હિંસાદિક ક્રિયાઓં કો-અનેક અનર્થ-કારી સાવચ વ્યાપારોં કો વહ કરતા હૈ । યે આત્મબલાદિક જો હસ જીવ કો હસ લોક મેં દણ્ડ ગ્રહણ કે કારણ હૈં, કેવલ ડનકે નિમિત્ત હી અનર્થોં કો યહ નહીં કરતા હૈ, કિન્તુ પારલૌકિક કાર્યોં કે લિયે મી પર-માર્થ સે અનભિજ્ઞ વના હુઆ યહ દણ્ડ કા પાત્ર વનતા હૈ । હસી અભિ-પ્રાય કો ‘ પાપમોક્ષઃ ’ હસ પદ સે સૂત્રકાર પ્રકટ કરતે હૈં-નરક નિ-ગોદાદિ ગતિયોં કો જીવ જિસકે દ્વારા પ્રાપ્ત કરતે હૈં ડસકા નામ પાપ હૈ । ‘ પાપ સે મેરી મુક્તિ હો જાયગી, અર્થાત્ મૈં પાપરહિત હો જાઝંગા ’ હસ ધારણા સે ઓતપ્રોત હોકર વહ નાનાવિધ હવનીય દ્રવ્ય સે હવન કરતા હૈ, અનેક અનર્થવિધાયક સાવચ કાર્યોં કે કરને સે દણ્ડ-પ્રાણા-નિપાતાદિ-કા અધિકારી હોતા હૈ, હન કાર્યોં સે પાપમુક્ત ન હોકર ડલ્દે નરક નિગોદાદિ ગતિયોં મેં ડસ જીવ કા પતન હોતા હૈ । સૂત્ર મેં ‘ હિતિ ’ યહ શબ્દ હેતુ-અર્થ કા બોધક હૈ, જિસકા ભાવ યહ હૈ-વહ યહ સમ-

અહણુનું કારણ છે, કેવળ તેના નિમિત્ત જ અનર્થોને તે નથી કરતો પણ પાર-લૌકિક કાર્યોં માટે પણ પરમાર્થથી અનભિજ્ઞ બનીને આ દંડનું પાત્ર બને છે. આ અભિપ્રાયને ‘ પાપમોક્ષઃ ’ આ પદથી સૂત્રકાર પ્રકટ કરે છે-નરક નિગોદાદિ ગતિઓને છુવ જેના દ્વારા પ્રાપ્ત કરે છે તેનું નામ પાપ છે. ‘ પાપથી મારી મુક્તિ થઈ જશે, અર્થાત્ હું પાપરહિત થઈ જઈશ ’ એ ધારણાથી ઓતપ્રોત થઈને તે નાનાવિધ હવનીય દ્રવ્યોથી હવન કરે છે. અનેક અનર્થવિધાયક સાવચ કાર્યોને કરવાથી દંડ-પ્રાણાનિપાતાદિ-નો અધિકારી થાય છે. આવા કાર્યોથી પાપમુક્ત બનતો નથી પણ નરક નિગોદાદિ ગતિઓમા તે છુવનું પતન થાય છે. સૂત્રમાં ‘ હિતિ ’ એ શબ્દ હેતુ અર્થનો બોધક છે, જેનો ભાવ એ છે કે તે એમ સમજે છે કે

અથવા ‘આશંસાયૈ’ આશંસા ચાલમ્બ્યાભસ્પૃહા તસ્યૈ=તદર્થે દણ્ડં સમારભતે । મમૈતત્ પરુપરારિ પરલોકે વા મવિષ્યતીત્યાશયા દણ્ડં સમાદદાતીતિ તાત્પર્યમ્ ॥મૂ. ૪॥

এবং কটুকবিপাকং দণ্ডসমাদানং সম্যগববুধ্য যত্কর্তব্যং তদাহ—‘তং পরিণায়’ ইত্যাদি ।

મૂલમ્—તં પરિણાય મેહાવી નેવ સયં એહિં કજ્જેહિં દંડં સમા-  
રંભિજ્જા, નેવ અન્નં એહિં કજ્જેહિં દંડં સમારંભિજ્જાવિજ્જા, એહિં  
કજ્જેહિં દંડં સમારંભંતે વિ અન્ને ન સમણુજાણિજ્જા, એસ મગ્ગે  
આરિએહિં પવેઙ્ગ, જહેત્થ કુસલે નોવલિંપિજ્જાસિત્તિવેમિ ॥ સૂ. ૫ ॥

छाया—तत्परिज्ञाय मेधावी नैव स्वयमेतैः कार्यैर्दण्डं समारभेत, नैवान्यम् एतैः  
कार्यैर्दण्डं समारम्भयेत्, एतैः कार्यैर्दण्डं समारम्भमाणानप्यन्यान् समनुजानीयात्,  
एष मार्ग आर्यैः प्रवेदितः, यथाऽत्र कुशलो नोपलिम्पेः, इति ब्रवीमि ॥ मू० ५ ॥

જ્ઞાતા હૈ કિ—‘પાપોં સે મેરી મુક્તિ હો જાયગી—મૈં નિષ્કલંક બન સ્વર્ગાદિ  
લાભ કર લૂંગા’-એસા માનકર વહ પારલૌકિક કાર્ય કરને કે લિયે મી  
છહકાય કા આરંભ કરતા હૈ । ઇસ પ્રકાર કે સાવધ વ્યાપારોં સે નાના-  
વિધ દુર્ગતિયોં કો દેને વાલે તથા અનેક જન્મ જન્માન્તરોં મેં મી જો ન  
નષ્ટ હોં સકે એસે પાપ કા હી વહ અર્જન કરતા હૈ । ‘આશંસાયૈ’ ઇસ  
પદ સે યહ વાત સૂત્રકાર સૂચિત કરતે હૈં કિ—વહ અલમ્બ્યવસ્તુ કો પાને  
કી ઇચ્છા સે મી દણ્ડ કા સમારંભ કરતા હૈ “યહ વસ્તુ મેરે પાસ નહીં  
હૈ, આત્મબલાદિ કાર્યોં કે કરને સે વહ મુઝે આજ નહીં તો કલ, કલ  
નહીં તો પરસોં મિલ જાવેગી, યદિ યહાં ન મી મિલેગી તો પારલોક મેં  
મિલ જાલેગી” ઇસ ભાવ સે દણ્ડ કા સમાદાન (છહકાય કા આરંભ)  
કરતા હૈ ॥ સૂ. ૪ ॥

‘पापोथी भारी मुक्ति थछ जशे, हुं निष्कलंक बनी स्वर्गादि लाभ करी लछशि’  
એવું માનીને તે પારલોકિક કાર્યો કરવા માટે છ કાયનો આરંભ કરે છે. આ  
પ્રકારના સાવધ વ્યાપારોથી નાનાવિધ દુર્ગતિઓને દેવાવાળા અને અનેક જન્મ  
જન્માન્તરોમાં પણ જેનો નાશ ન થાય તેવો પાપનો ભાર જ તે વહે છે.  
‘આશંસાયૈ’ આ પદથી આ જ્ઞાત સૂત્રકાર સૂચિત કરે છે કે—તે અલમ્બ્ય વસ્તુને  
પામવાની ઇચ્છાથી પણ દંડનો સમારંભ કરે છે, ‘આ વસ્તુ મારી પાસે નથી  
પણ આત્મબલાદિ કાર્યો કરવાથી તે મને આજ નહિ તો કલ, કલ નહિ તો  
પરમ દિવસ મળી જશે, કદાચ અહીં નહિ મળે તો પરલોકમાં મળશે’ આ  
ભાવથી દંડનું સમાદાન (છ કાયનો આરંભ) કરે છે. ॥ સૂ. ૪ ॥



‘ત’-દિત્યાદિ, મેધાવી=સંયમરતિમાન્ વિદિતસંસારસ્વભાવઃ, તત્=પૂર્વોક્ત-સદ્ગ્રાહકં શસ્ત્રપરિજ્ઞાકથિતમ્ અપ્રશસ્તગુણમૂલસ્થાનં વિષયકષાયાદિકં ચાત્મવલા-દ્યર્થં દળ્ડસમાદાનાદિકં ચ પરિજ્ઞાય=જ્ઞપરિજ્ઞયા જ્ઞાત્વા મેધાવી સ્વયમ્=આત્મના એતૈઃ=આત્મવલાદાનાદિકૈઃ કાર્યૈઃ દળ્ડં=પ્રાણિહિંસાં નૈવ સમારમ્ભેત=દળ્ડગ્રહણારમ્ભં ન કુર્યાત્, પ્રત્યાખ્યાનપરિજ્ઞયા પરિહરેદિત્યર્થઃ, અન્યમપિ એતૈઃ કાર્યૈર્દળ્ડં ન સમાર-મ્ભયેદિત્યન્વયઃ, તથા સમારમ્ભમાણાનપ્યન્યાન્ ન સમનુજાનીયાત્=નાનુમોદયેત્, સુ-ધર્મા સ્વામી જન્મસ્વામિનં પ્રાહ-એષ માર્ગઃ મૃગ્યતેઽન્વિષ્યતે મોક્ષપદમનેનેતિ માર્ગઃ=રત્નત્રયસ્વરૂપઃ,

इस प्रकार कटुक विपाक वाले दण्ड के आदान को अच्छी तरह जानकर क्या करना चाहिये? सो कहते हैं—

‘तं परिणाय’ इत्यादि । संयम में जिसे प्रेम है, संसार का स्वभाव भी जिसने भली प्रकार जान लिया है ऐसा मेधावी मुनि शस्त्रपरिज्ञा में प्रतिपादित अप्रशस्त गुण एवं मूलस्थानस्वरूप विषयकषायादिकों को तथा आत्मबलादिलाभ के लिये दण्डसमादान (आरम्भ समारम्भ) को ज्ञपरिज्ञा से जानकर स्वयं आत्मबल को प्राप्त करने के खोटे अभि-प्राय से आचरित इन पूर्वोक्त कार्यों से प्राणातिपात आदि दण्ड का समारम्भ नहीं करे । क्योंकि इन कार्यों के करने वाले प्राणी को पापा-रंभ के सिवाय अन्य किसी भी प्रशस्त फल का लाभ नहीं होता है । इस बात को जानकर प्रत्याख्यानपरिज्ञा से उनका त्याग कर देवे । इतना ही नहीं किन्तु दूसरे से भी इन पूर्वोक्त कार्यों से वह दण्ड का

આવા પ્રકાર કડવા વિપાકવાળા દંડના આદાનને સારી રીતે જાણીને શું કરવું જોઈએ તે કહે છે—

‘તં પરિણાય’ ઇત્યાદિ. સંયમમાં જેને પ્રેમ છે, સંસારનો સ્વભાવ જેણે ભલી પ્રકારે જાણી લીધો છે એવા મેધાવી મુનિ શસ્ત્રપરિજ્ઞામાં પ્રતિપાદિત અપ્રશસ્ત ગુણ અને મૂળસ્થાનસ્વરૂપ વિષયકષાયાદિકને તથા આત્મબલાદિ લાભ માટે દંડસમાદાન (આરંભ-સમારંભ) ને જ્ઞપરિજ્ઞાથી જાણીને સ્વયં આત્મબળ પ્રાપ્ત કરવાના ખોટા અભિપ્રાયથી આચરિત એ પૂર્વોક્ત કાર્યોથી પ્રા-ણાતિપાત આદિ દંડનો સમારંભ કરવો નહિ, કારણ કે આ કાર્યોના કરનાર પ્રાણીને પાપારંભ સિવાય બીજો કોઈ પ્રશસ્ત ફળનો લાભ થતો નથી. એ વાતને જાણીને પ્રત્યાખ્યાનપરિજ્ઞાથી તેનો ત્યાગ કરે, એટલું જ નહિ પણ બીજાથી પણ તે પૂર્વોક્ત કાર્યોથી તે દંડનો સમારંભ ન કરાવે, અને આ પ્રકારથી દંડનો સમારંભ



“આર્યૈઃ” આરાદ્વર્હિગતા હેયધર્મેભ્યો યે તે આર્યાઃ તીર્થઙ્કર-ગણધરાદયઃ, તૈઃ પ્રવેદિતઃ=દ્વાદશવિધપરિષદિ પ્રકર્ષેનોક્તઃ । તદ્ બુદ્ધા કિં કાર્યમિત્યાહ—

“યથાઽત્ર કુશલો નોપલિમ્પે”-રિતિ, હે શિષ્ય! યથા=યેન પ્રકારેનાત્મા કર્મ-નોપલિમ્પો ન ભવેત્તથા કુશલઃ=ચતુર આત્માર્થી ત્વમત્ર=દણ્ડસમારંભે નોપલિમ્પેઃ= નં સંશ્લિષ્યેઃ, સર્વથા સર્વસમારંભાદાત્માનં પરિરક્ષેદિત્યર્થઃ । કમલપત્રં યથા જલેન સ્પૃષ્ટં ન ભવતિ તથૈવ દણ્ડસમાદાનેનાત્મા યથા સ્પૃષ્ટો ન ભવેત્તથા કુરુષ્વેતિ તાત્પર્યમ્ । ઇતિ બ્રવીમીત્યસ્યાર્થસ્તૂત્ત એવ ॥ સૂ૦ ૫ ॥

॥ ઇતિ દ્વિતીયાધ્યયનસ્ય દ્વિતીય ઉદ્દેશઃ સમાપ્તઃ ॥ ૨-૨ ॥

સમારંભ ન કરાવે, તથા હસ પ્રકાર સે દણ્ડ કા સમારંભ કરને વાલોં કી અનુમોદના ખી ન કરે, અર્થાત્ દણ્ડ સમારંભ કા સર્વથા ત્યાગ કરે ।

હસ પ્રકાર શ્રીસુધર્મા સ્વમી જમ્બૂ સ્વામી કો કહતે હૈં કિ-યહી રત્નત્રયરૂપ મોક્ષ કા માર્ગ હૈ, મોક્ષ કા અન્વેષણ જિસસે કિયા જાતા હૈ યહી માર્ગ શબ્દ કા વ્યુત્પત્ત્યર્થ હૈ । હસ માર્ગ કા નિરૂપણ આર્ય-તીર્થકર એવં ગણધરાદિકોં ને વારહ પ્રકાર કી પરિષદ મેં કિયા હૈ । વિષય-કષા-યાદિક જો આત્મા કા પતન કરને વાલે હૈં-અનસે જો શીઘ્રાતિશીઘ્ર વિરક્ત હોતે હૈં વે આર્ય હૈં, ઓર વે તીર્થકર ગણધરાદિ દેવ હૈં, ક્યોંકિ યે સ્વયં અનસે વિરક્ત હોકર દૂસરોં કો ખી અનસે વિરક્ત હોને કા ઉપ-દેશ દેતે હૈં । યે આત્મકલ્યાણકારી મોક્ષ માર્ગ કે અનુપમ પથિક હોતે હૈં, ઓર દૂસરોં કો ખી હસ માર્ગ કે પથિક બનને કે લિયે ઉપાયોં કા પ્રતિપાદન કરતે હૈં । હસ પંચમ કાલ મેં જો મોક્ષમાર્ગ કી પ્રરૂપણા મુનિ

કરવાવાળાની અનુમોદના પણ ન કરે, અર્થાત્ કરવા, કરાવવા, અને અનુમોદવારૂપ, એ દંડસમારંભનો સર્વથા ત્યાગ કરે.

આ પ્રકાર શ્રીસુધર્માસ્વામી જંબૂસ્વામીને કહે છે કે—તે રત્નત્રયરૂપ મોક્ષનો માર્ગ છે, મોક્ષનું અન્વેષણ તેનાથી થાય છે તે માર્ગ શબ્દનો વ્યુત્પત્ત્યર્થ છે. આ માર્ગનું નિરૂપણ આર્ય-તીર્થકર અને ગણધરાદિકોએ બાર પ્રકારની પરિષદમાં કર્યું છે. વિષયકષાયાદિક જે આત્માનું પતન કરવાવાળા છે તેનાથી જે જલદી વિરક્ત થાય છે તે આર્ય છે, અને તે તીર્થકર ગણધરાદિ દેવ છે. કારણ કે તેઓ સ્વયં તેનાથી વિરક્ત બની બીજાઓને તેનાથી વિરક્ત થવાનો ઉપદેશ આપે છે. તેઓ આત્મકલ્યાણકારી મોક્ષમાર્ગના અનુપમ પથિક હોય છે, અને બીજાઓને પણ તે માર્ગના પથિક બનવા માટે ઉપાયોનું પ્રતિપાદન કરે છે. આ પાંચમા કાળમાં જે મોક્ષમાર્ગની પ્રરૂપણા મુનિ અને આચાર્યોદ્વારા થાય છે તેનું

एवं आचार्यो द्वारा होती है उसका मूलस्रोत तीर्थकरादि ही है । ऐसा समझकर कुशल आत्मार्यो का कर्तव्य है कि वह अपनी आत्मा को इस दण्डसमारंभ द्वारा आने वाले कर्मों से लिप्त न बनावे । ऐसा उपदेश करते हुए सूत्रकार कहते हैं—“यथाऽत्र कुशलो नोपलिम्पेः” हे भव्य जीव ! तूं पूर्वोक्त कथन से यह भली प्रकार जान चुका है कि इन आत्मबलादिक कार्यों से दण्डसमादान होता है, और इससे कर्मबन्ध के सिवाय आत्मा को कोई लाभ नहीं होता है, अतः तूं इस बात का विचार कर, आत्मर्यो बन, और जिस प्रकार से तेरी आत्मा कर्मों से लिप्त न बने इस तरह की प्रवृत्ति से इन समारंभों से सर्वथा अपनी रक्षा कर । जैसे जल में रहता हुआ कमल जल से लिप्त नहीं होता है उसी प्रकार दण्डसमादान से आत्मा लिप्त न बने ऐसा कर । ‘इति ब्रवीमि’ इसका अर्थ पहिले किया जा चुका है ॥ सू० ५ ॥

॥ द्वितीय अध्ययन का द्वितीय उद्देश समाप्त ॥ २-२ ॥

મૂળસ્રોત તીર્થકરાદિ જ છે. એવું સમજીને કુશળ આત્માર્યોનું કર્તવ્ય છે. કે-તે પોતાના આત્માને આ દંડસમારંભદ્વારા આવવાવાળા કર્મોથી લિપ્ત ન બનાવે, એવો ઉપદેશ કરતાં સૂત્રકાર કહે છે—

“યથાઽત્ર કુશલો નોપલિમ્પેઃ” હે ભવ્ય જીવ ! તું પૂર્વોક્ત કથનથી એ ભલી પ્રકારે જાણી ચુક્યો છે કે આ આત્મબલાદિક કાર્યોથી દંડસમાદાન થાય છે, અને તેનાથી કર્મબંધ સિવાય આત્માને કોઈ લાભ થતો નથી, માટે તું એ આત્મનો વિચાર કરી આત્માર્યો બન, અને જે પ્રકારથી તારો આત્મા કર્મોથી લિપ્ત ન બને એવા પ્રકારની પ્રવૃત્તિથી તેવા સમારંભોથી સર્વથા પોતાની રક્ષા કર. જેમ પાણીમાં રહેલાં કમળ પાણીથી લિપ્ત નથી થતાં તે પ્રકારે દંડસમાદાનથી આત્મા લિપ્ત ન બને તેવું કર. ‘ઇતિ બ્રવીમિ’ આનો અર્થ પહેલાં કરવામાં આવેલ છે. ॥ સૂ૦ ૫ ॥

બીજા અધ્યયનનો બીજો ઉદ્દેશ સમાપ્ત. ૨-૨.



## ॥ आचाराङ्गसूत्रे द्वितीयाध्ययनस्य तृतीयोद्देशः ॥

कथितो द्वितीयोद्देशोऽधुना तृतीयस्य व्याख्या प्रारम्भ्यते । द्वितीये संयमे रतिर्विषये चारतिः कर्तव्येति प्रोक्तम् । अत्र च तत्सर्वं कषायनिरसनेनैव स्यात्, तन्निरसनं च मानपरित्यागं धनासारतापरिचिन्तनं विना नैव सम्पद्यते, अत उच्चैर्गोत्रोत्पत्त्यभिमानादिकं मुनिना परित्याज्यमिति प्रतिपादयति ।

अत्रानन्तरसूत्रसम्बन्धः—‘जहेत्थ कुसले नोवलिपेज्जासि’ इति, हे शिष्य ! उच्चैर्गोत्राभिमानादौ त्वं यथा नोपलिप्तो भवेरिति ।

## ॥ आचाराङ्गसूत्र के दूसरे अध्ययन का तृतीय उद्देश ॥

द्वितीय उद्देश का कथन हो चुका, अब तृतीय उद्देश का कथन प्रारंभ होता है । द्वितीय उद्देश में “संयमी को संयम में रति और विषयादिकों में अरति करना चाहिये” यह बात कही गई है । इस उद्देश में यह प्रतिपादन किया जायगा कि गृहीत (ग्रहण किये हुए) संयम में रति और विषयादिकों में अरति संयमी जनको तब ही हो सकती है कि जब वह कषायों को दूर करे । कषायों का परित्याग—जब तक मान का त्याग न कर दिया जावेगा, तथा जब तक धन की असारता का विचार न होगा, तब तक नहीं हो सकता । इसलिये संयमी मुनि को उच्चगोत्र में उत्पन्न होने के अभिमान आदि का सर्वथा परित्याग कर देना चाहिये ।

यहां पर “जहेत्थ कुसले नोवलिपेज्जासि” इस अनन्तर सूत्र के साथ सम्बन्ध है । जिसका भाव यह है कि हे शिष्य ! तू उच्च-गोत्र में

## श्री आचारांगसूत्रना भील अध्ययनो त्रीणे उद्देश

भील उद्देशनुं कथन समाप्त थयु, હવે ત્રીજા ઉદ્દેશનો પ્રારંભ થાય છે. બીજા ઉદ્દેશમાં સંયમીએ સંયમમાં રતિ અને વિષયાદિકમાં અરતિ કરવી જોઈએ. એ વાત કહેવામાં આવી છે. આ ઉદ્દેશમાં એનું પ્રતિપાદન કરવામાં આવશે કે ગૃહીત ( ગ્રહણ કરેલાં ) સંયમમાં રતિ અને વિષયાદિકમાં અરતિ સંયમીજનને ત્યારે જ થાય છે કે જ્યારે કષાયો દૂર કરવામાં આવે. કષાયોનો પરિત્યાગ, જ્યાં સુધી માનનો ત્યાગ અને ધનની અસારતાનો વિચાર નહિ કરવામાં આવે ત્યાં સુધી તે બની શકતું નથી. માટે સંયમી મુનિએ ‘ મારી ઉત્પત્તિ ઉચ્ચ ગોત્રમાં થયેલી છે ’ તેવાં અભિમાનો સર્વથા ત્યાગ કરવો જોઈએ.

આ ઠેકાણે “ જહેત્થ કુસલે નોવલિપેજ્જાસિ ” આ અનન્તર સૂત્રની સાથે સંબંધ છે, એનો ભાવ એ છે કે—હે શિષ્ય ! તું ઉચ્ચ ગોત્રમાં ઉત્પત્તિના

પરમ્પરસૂત્રસમ્બન્ધસ્તુ-‘ સે આયવલે ’ ઇત્યાદિના, સ્વસમાનાર્થમાત્મવલાદિ-  
દળસમારમ્ભો ન ત્વયા કર્તવ્ય ઇતિ ।

ઉચ્ચગોત્રોત્પત્ત્યા માનં, નીચગોત્રોત્પત્ત્યા ચાપમાનં જ્ઞાત્વા હર્ષ-ક્રોધો ત્વયા ન  
વિધેયો, યતસ્તૌ માનાપમાનો વહુષુ જન્મસુ પ્રાપ્તપૂર્વાધિતિ દર્શયતિ-“ સે અસદં ”  
ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્-સે અસદં ઉચ્ચાગોણ, અસદં નીઆગોણ, નો હીણે, નો  
અઈરિત્તે, નોડપીહણ, ઇયપરિસંખાય કો ગોયાવાઈ, કો માણાવાઈ,  
કાંસિ વા ણગે ગિજ્ઞે, તમ્હા પંડિણ નો હરિસે નો કુજ્ઞે ॥ સૂ૦ ૧ ॥

છાયા-સોડસકૃદુચ્ચૈર્ગોત્રેડસકૃત્ત્રીચૈર્ગોત્રે ન હીનો નાતિરિક્તઃ, નો ર્હેતાપિ,  
ઈતિ પરિસંખ્યાય કો ગોત્રવાદી કો માનવાદી, કસ્મિન્ વૈકસ્મિન્ ગૃધ્યેત્, તસ્માત્પ-  
ણ્ડિતો ન હણ્યેત્ ન ક્રુધ્યેત્ ॥ મૂ૦ ૧ ॥

ઉત્પત્તિ કે અભિમાનાદિકોં મેં જિસ તરહ સે ન ફેસે ઇસ પ્રકાર સે  
અપની પ્રવૃત્તિ કર ।

‘ સે આયવલે ’ ઇત્યાદિ પરમ્પરાસૂત્ર કે સાથ મી સંબંધ હૈ, જિસસે  
શિષ્ય કો સંવોધન કરતે હુણ આચાર્ય ઇસ વાત કા ઉપદેશ દેતે હૈં કિ  
અપને માન કે લિયે આત્મવલ આદિ દ્વારા તુજે દળસમારંભ નહીં  
કરના ચાહિયે ।

નીચે કે સૂત્ર કા અવતરણ કરને કે લિયે સૂત્રકાર શિષ્ય સે કહતે  
હૈં કિ-હે શિષ્ય ! ઉચ્ચગોત્ર મેં ઉત્પત્તિ સે માન ઔર નીચ ગોત્ર મેં જન્મ  
લેને સે અપમાન કા વિચાર કર હર્ષ ઔર ક્રોધ કરના તુજે યોગ્ય નહીં  
હૈ, ક્યોંકિ કર્મ કે પ્રભાવ સે તૂને પૂર્વ કે અનેક ભવોં મેં ઇન્હેં પ્રાપ્ત કિયા  
હૈ । યહી વાત પ્રકટ કી જાતી હૈ-“ સે અસદં ” ઇત્યાદિ ।

અભિમાનાદિમાં જેવી રીતે ન ફેસે તેવી પ્રવૃત્તિ પોતાની કર.

‘ સે આયવલે ’ ઇત્યાદિ પરંપરાસૂત્ર સાથે પણ સંબંધ છે જેથી શિષ્યને  
સંબોધન કરતાં આચાર્ય એ વાતનો ઉપદેશ આપે છે કે પોતાના માન માટે  
આત્મબલ આદિ દ્વારા તારે ઢંડસમારંભ ન કરવો જોઈએ.

નીચેના સૂત્રનું અવતરણ કરવા માટે સૂત્રકાર શિષ્યને કહે છે કે-હે  
શિષ્ય ! ઉચ્ચ ગોત્રમાં ઉત્પત્તિથી માન, અને નીચ ગોત્રમાં જન્મ લેવાથી અપ-  
માનનો વિચાર કરી હર્ષ અને ક્રોધ કરવો તને યોગ્ય નથી. કારણ કે કર્મના  
પ્રભાવથી તે પૂર્વના અનેક ભવોમાં તે પ્રાપ્ત કર્યા છે એ વાત પ્રગટ  
કરવામાં આવે છે-‘ સે અસદં ’ ઇત્યાદિ.

टीका—‘स’ इत्यादि। सः=प्राणी, असकृत्=बहुवारम् उच्चैर्गोत्रे=लोकमान्य उग्रकुलादौ समुत्पन्न इति शेषः, तथा असकृत् नीचैर्गोत्रे काष्ठहारादिकुले चोत्पन्नः, अत्र गोत्रपदस्य कुलपरत्वं विज्ञेयम्। तयोरुभयैर्गोत्रयोरनुभावबन्धाध्यवसाय-स्थानकण्डकानि समानान्येव सन्तीत्याह—‘न हीन’ इति, हीनो=न्यूनो न भवति, एवमतिरिक्तः=अधिकोऽपि न भवति। उच्चनीचगोत्रयोः समसंख्यकान्येवानु-बन्धाध्यवसायस्थानकण्डकानि वर्तन्त इत्याशयः।

जीवात्मा का जन्म-मरण जब तक उसे मुक्ति की प्राप्ति नहीं हुई है तब तक होता रहता है। कभी यह नीच गोत्र के उदय से लोकनिन्दित कुल में जन्म लेता है तो कभी उच्च गोत्र के उदय से लोकपूजित कुल में। यह उच्च-नीच गोत्र में जन्म की प्राप्ति होना कर्म का कार्य है। इसमें किसी की इच्छा काम नहीं करती। अतः उच्च गोत्र में जन्म लेने से हर्षित होना और नीच गोत्र में जन्म लेने से दुःखित होना आत्मा के लिये योग्य नहीं। कारण कि पर्यायों में उलट-फेर होता ही रहता है; क्योंकि संसारी जीव कर्मों से युक्त हैं। अतः जो नीच गोत्र में उत्पन्न होने से अपना अपमान समझता है उसके लिये सूत्रकार कहते हैं कि—वह तू अनेक बार लोकमान्य उग्रकुल भोगकुल आदि में उत्पन्न हो चुका है। तथा जो उच्चकुल में जन्म लेने से अपना मान-बड़प्पन समझता है उसके प्रति सूत्रकार कहते हैं कि—भाई तू भी नीचकुल जो काष्ठहार आदि का वंश है, उसमें अनेक बार जन्म ले चुका है। गोत्र

जीवात्माना जन्म मरण ज्यां सुधी तेने मुक्तिनी प्राप्ति नथी थर्छ त्या सुधी यतां रहे छे, कोर्छ वञ्चत ते नीच गोत्रना उदयथी लोकनिन्दित कुलमां जन्म ले छे तो कोर्छ वञ्चत उच्च गोत्रना उदयथी लोकपूजित कुलमां। आ उच्च नीच गोत्रमां जन्मनी प्राप्ति थवी ते कर्मनुं कार्य छे। तेमां कोर्छनी इच्छा काम करती नथी। भाटे उच्च गोत्रमां जन्म लेवाथी हर्षित थवुं, अने नीच गोत्रमां जन्म लेवाथी दुःखी थवुं आत्माने भाटे ते योग्य नथी, कारण के पर्यायिमां उलट डेर थया न करे छे। संसारी जीव कर्मोथी युक्त छे, भाटे ने नीच गोत्रमां उत्पन्न होवाथी पोतानुं अपमान समने छे तेने भाटे सूत्रकार कहे छे के—तू अनेकवार लोकमान्य उग्रकुल भोगकुल आदिमां उत्पन्न थर्छ चुकेल छे, तथा ने उच्च कुलमां जन्म लेवाथी पोतानुं मान-मोटापाणुं समने छे तेना प्रत्ये सूत्र-कार कहे छे के—भाई तू पण नीच कुल ने कडीआरा आदिना वंश छे तेमां अनेकवार जन्म लर्छ चुकेल छे। गोत्र शब्दनो अर्थ कुल छे। उच्च गोत्रमां

(કણ્ઠકમિતિ કર્મોશ ઉચ્યતે) તસ્માત્ ન ર્દેતાપિ=જાતિ-કુલ-બલ-રૂપાદિમદ-સ્થાનેષ્વન્યતમં નો ર્ચ્છેદપિ, મનસાઽપ્યુચ્ચકુલાદ્યભિમાનં ન ચેષ્ટેતેતિ તાત્પર્યમ્ । તતઃ કિમાયાતમિત્યાહ-‘ ર્તી ’તિ, ર્તિ=પૂર્વોક્તપ્રકારમનન્તવારં પ્રાપ્તપૂર્વોચ્ચનીચ-કુલાદિકં સમાનકર્મોશત્વં ચ પરિસંખ્યાય=બુદ્ધ્વા, ‘ગોત્રવાદી’ ગોત્રં વદિતું શીલં યસ્યેતિ સ ગોત્રવાદી=ગોત્રાભિમાની ‘મમૈવૈતાદૃશં પરમસમ્માનનીયં સુન્દરં ગોત્રં, કસ્યાપ્યન્યસ્ય તાદૃશં નાસ્તિ’ ર્તિ કો ભવેત્, કિંચ “માનવાદી” માનં=સ્વગુણો-ત્કીર્તનમભિમાનં વદિતું શીલં યસ્યેતિ સ માનવાદી=સ્વોત્કર્ષવાદી કો ભવેત્ ? ન કોઽપિ ભવેદિત્યર્થઃ । અપિ ચ-કસ્મિન્ વા એકસ્મિન્ પ્રકૃષ્ટગોત્રા-

શબ્દ કા અર્થ કુલ હૈ । ઉચ્ચ ગોત્ર મેં ઉત્પન્ન હોને સે ન તો આત્મા અધિક બઢા હો જાતા હૈ ઓર ન નીચ ગોત્ર મેં જન્મ લેને સે હીન હી । ક્યોંકિ દોનોં ગોત્રોં કે બન્ધાધ્યવસાયસ્થાન કે કણ્ઠક એક સરીખે હૈં । ઁનકી સંખ્યા સમાન હૈ । (કર્મ કે અંશ કા નામ કણ્ઠક હૈ) । ર્સલિયે “નો ર્દેત ” જીવ કા કર્તવ્ય હૈ કિ વહ જાતિમદ, કુલમદ, બલમદ ઓર રૂપ વગેરહ કે મદ કરને કી કભી મનસે ખી ચેષ્ટા તક ન કરે । ર્સ પ્રકાર જબ યહ જીવ ઉચ્ચ-નીચ ગોત્ર કો અનેક વાર પૂર્વ જન્મોં મેં પ્રાપ્ત કર ડુકા હૈ, ઓર ર્નકે બંધ કે ખી જબ સમાન કર્મ કે અંશ હૈં તો ઁસા કોન પ્રાણી હોગા જો ર્સ પરિસ્થિતિ કો જાન વૂઝ્ઝકર ખી ગોત્રવાદી-ગોત્રાભિમાની હોગા કિ-“મેરા હી ઁસા પરમમાનનીય સુન્દર ગોત્ર હૈ કિસી અન્ય કા ઁસા નહીં હૈ” ર્સ પ્રકાર કહને કા સ્વભાવવાલા-સાહસ કરને વાલા હોગા, તથા અપને ઉત્કર્ષ કો દૂસરોં કે પ્રતિ પ્રકટ કરને કી

ઉત્પન્ન હોવાથી નથી આત્મા અધિક મોટો થઈ જતો અને નથી નીચ ગોત્રમાં ઉત્પન્ન થવાથી નીચો થઈ જતો. કારણ કે બંને ગોત્રોના બન્ધાધ્યવસાય સ્થાનના કંડકો એકસરખા છે. તેઓની સંખ્યા સમાન છે. (કર્મના અંશનું નામ કંડક છે.) માટે “નો ર્દેત ” એવું કર્તવ્ય છે કે-તે જાતિમદ, કુળમદ, બળમદ અને રૂપ વિગેરેનો મદ કરવાની કદિ પણ મનથી ચેષ્ટા પણ ન કરે. આ પ્રકારે જ્યારે આ એવ ઉચ્ચનીચ ગોત્રને અનેક વાર પૂર્વ જન્મોમાં પ્રાપ્ત કરી ચુકેલ છે, અને તેના બંધનો પણ જ્યારે સમાન કર્મનો અંશ છે તો એવો ક્યો પ્રાણી હશે જે આ પરિસ્થિતિને જાણી જોઈને પણ ગોત્રવાદી-ગોત્રાભિમાની થશે કે-“મારું જ એવું પરમ માનનીય સુંદર ગોત્ર છે જીજ્ઞાસો તેવું ગોત્ર નથી” આ પ્રકારે કહેવાના સ્વભાવ વાળા-સાહસ કરવાવાળા હશે, અને ઉત્કર્ષને જીજ્ઞાસોના પ્રતિ પ્રગટ કરવાના ભાવનાવાળા હશે ? માટે જ્યારે એ નિશ્ચિત છે



ભાવનાશાલી હોગા? । इसलिये जब यह निश्चित है कि उच्च गोत्र में अथवा नीच गोत्र में अनेक बार जन्म-मरण यह जीव कर चुका है तो फिर “मेरा जन्म उच्चकुल में हो” इस प्रकार वहां पर उत्पन्न होने के लिये अभिलाषी भी कौन होगा? । अतः जो हेयोपादेय के विवेक से युक्त हैं, ऐसे पण्डित-भग्यात्मा जीव उच्चकुल में उत्पन्न होने से न तो हर्ष करें और न नीचकुल में जन्म लेने से विषाद ही करें । इस बात का विद्वान् को कभी अहंकार नहीं करना चाहिये—कि मैं उच्चकुलका हूँ, तथा इसका कभी विषाद भी नहीं करना चाहिये कि मैं नीचकुल का हूँ । क्योंकि इस संसार का प्रवाह अनादिकाल से इसी प्रकार से चल रहा है, आगे भी ऐसा ही चलता रहेगा कि—जो आज उच्चकुल का है कल वही नीचकुल का बन जाता है, तथा दूसरे स्वर्ग के देव जिनके उच्चगोत्र का उदय है वे च्यवकर एकेन्द्रिय पृथिवी पानी वनस्पति जीवों में जन्म लेकर नीच गोत्र के उदय वाले बन जाते हैं । तब उच्च गोत्र और नीच गोत्र ये सदा एक जीव में स्थिर रहने वाले धर्म तो हैं नहीं; फिर इस विषय में हर्ष विषाद करना निष्कारण है । जब अनेक जन्मों में इस जीव को प्रकृष्ट कुलों की एवं अपकृष्टकुलों की अनेक बार प्राप्ति हो चुकी है तब हर्ष और विषाद करने से आत्मा को कौन सा लाभ हो सकता है? । यदि ये

કે ઉંચ ગોત્રમાં અને નીચ ગોત્રમાં અનેકવાર જન્મ મરણ આ જીવે કરેલ છે તો પછી “મારો જન્મ ઉંચ કુળમાં જ હોય” આ પ્રકાર ત્યાં ઉત્પન્ન થવા માટે કોણ અભિલાષી હશે? માટે જે હેયોપાદેયના વિવેકથી યુક્ત છે એવો પંડિત—ભગ્યાત્મા જીવ ઉંચ કુળમાં ઉત્પન્ન થવાથી ન તો હર્ષ કરે, અને નીચ કુળમાં જન્મ લેવાથી ન વિષાદ કરે. આ વાતનો વિદ્વાને કોઈ વખત અહંકાર કરવો ન જોઈએ કે—હું ઉંચ કુળનો છું. અને તેનો પણ વિષાદ નહિ કરવો જોઈએ કે—હું નીચ કુળનો છું. કારણ કે આ સંસારનો આ પ્રવાહ અનાદિ કાળથી આ પ્રકારે ચાલી રહ્યો છે. આગળ પણ એવો જ ચાલશે. જે આજ ઉંચ કુળના છે કાલ તેજ નીચ કુળના બની જાય છે. ખીન્ન સ્વર્ગના દેવ જેનો ઉંચ ગોત્રનો ઉદય છે તે વ્યવીને એકેન્દ્રિય—પૃથિવી—પાણી—વનસ્પતિ જીવોમાં જન્મ લઈ નીચ ગોત્રના ઉદયવાળા બની જાય છે, તો પછી ઉંચ ગોત્ર અને નીચ ગોત્ર એ સદા એક જીવમાં સ્થિર રહેવાવાળો ધર્મ તો છે જ નહિ, પછી આ વિષયમાં હર્ષવિષાદ કરવો નિષ્કારણ છે. અનેક જન્મોમાં આ જીવને પ્રકૃષ્ટ કુલોની અને અપ્રકૃષ્ટ કુલોની અનેકવાર પ્રાપ્તિ થયેલી છે પછી હર્ષ અને શોક કરવાથી આત્માને કયો લાભ મળી શકે



દિકેડનેકથા પ્રાપ્તપૂર્વે ન ગૃધ્યેત્=નામિલખ્યેત્=ઉચ્ચકુલોત્પન્નોઽહમિત્યુત્કર્ષ નેચ્છે-  
 દિત્યર્થઃ । તતઃ કિમિત્યાહ—‘તસ્મા’—દિતિ, યસ્માદનાદિભવે પરિભ્રમતા વહૂનિ  
 પ્રકૃષ્ટાનિ કુલાનિ પ્રાપ્તાનિ, તથાઽપકૃષ્ટાનિ ચ લબ્ધાનિ, તસ્માદ્દેતોઃ પણ્ડિતઃ=  
 પરમાર્થજ્ઞો જ્ઞાતહેયોપાદેયો ન હૃષ્યેત્, ‘મમૈવેદશંકુલ’—મિતિ ન મોદેત, ન ક્રુધ્યેત્=  
 ‘મમ કથમધમતરે કુલે જન્માભૂ’—દિતિ સ્વાત્મને ન કુપ્યેત્, ન વિષાદમપિ કુર્યાત્ ।  
 અનેકજનિષ્ઠ પ્રકૃષ્ટાનિ કુલાનિ પ્રાપ્તાનીતિ કથં હર્ષસમ્ભવઃ?, નીચકુલાનિ વહુશઃ સમ-  
 ધિગતાનીતિ વૃથૈવ ક્રોધઃ । અભૂતપૂર્વયોઃ સુખદુઃસ્વયોરેવ સતોર્હર્ષ-ક્રોધસમ્ભવાદિતિ  
 તાત્પર્યમ્ ।

ઉક્તञ્ચ—

અભૂતપૂર્વ કુલ જીવોં કે પ્રાપ્ત હુએ હોતે તો ડનકી પ્રાપ્તિ મેં હર્ષ વિષાદ  
 કરના ઉચિત માના જાતા, પરન્તુ ઁસા તો હૈ નહીં । અતઃ ઁસા વિચાર  
 કર જ્ઞાની કો ઁસ વિષય મેં હર્ષ વિષાદ નહીં કરના ચાહિયે; કિન્તુ સદા  
 ઁસા ઁયાલ કરતે રહતા ચાહિયે કિ—

ઁસ સંસાર મેં અનાદિકાલ સે નાના યોનિયોં મેં ભ્રમણ કરને વાલે  
 ઁસ આત્મા ને અનેક વાર સર્વ સુખ દુઃસ્વ કે સ્થાનભૂત ઉચ્ચ નીચ ગોત્રોં  
 કો પ્રાપ્ત કિયા હૈ, ફિર ઁનકી પ્રાપ્તિ મેં તુઁઁ આશ્ચર્ય હી કૌન સા હૈ ।  
 અનન્ત જન્મજન્માન્તરોં મેં ઁસ જીવને અનેક સુખોં કો પ્રાપ્ત કિયા હૈ,  
 તથા—અપમાન સે, સ્થાન આદિકે ચ્યુત હોને સે વધવંધન ઁવં ધનકે  
 નાશ સે અનેક રોગોં કો તથા અનેક પ્રકાર કે દુઃસ્વોં કો ઁલા હૈ ।

કહા મી હૈ—

ઁ. કદાચ તે અભૂતપૂર્વ કુળ જીવને પ્રાપ્ત થયેલ હોય તો તેની પ્રાપ્તિમાં હર્ષ  
 વિષાદ કરવો ઉચિત મનાત, પરંતુ તેણું તો ઁ નહિ, માટે ઁવો વિચાર કરી  
 જ્ઞાનીઁ આ વિષયમાં હર્ષ વિષાદ નહિ કરવો જોઈઁ. પણ સદા હમેશાં ઁવો  
 ખ્યાલ રાખવો જોઈઁ કે—

આ સંસારમાં અનાદિ કાળથી અનેકયોનિયોમાં ભ્રમણ કરવાવાળા આ આત્માને  
 અનેકવાર સર્વ સુખદુઃખના સ્થાનભૂત ઉચ્ચ નીચ ગોત્રોને પ્રાપ્ત કરેલ ઁ. પછી  
 તેની પ્રાપ્તિમાં તને આશ્ચર્ય શું ઁ. અનન્ત જન્મ જન્માન્તરોમાં આ જીવે  
 અનેક પ્રકારના સુખોને પ્રાપ્ત કર્યા ઁ. અને અપમાનથી, સ્થાન આદિના ચ્યુત  
 હોવાથી, વધ બંધન અને ધનના નાશથી અનેક રોગોને તથા અનેક પ્રકારના  
 દુઃખોને સહન કર્યા ઁ.

કહું પણ ઁ—

“સર્વસુખાન્યપિ बहुशः, प्राप्तान्यटता मयाऽत्र संसारे ।  
उच्चैःस्थानानि तथा, तेन न मे विस्मयस्तेषु ” ॥ ૧ ॥

તથા—“અવમાનાત્પરિભ્રંશાદ્વધવન્ધધનક્ષયાત્ ।

પ્રાપ્તા રોગાશ્ચ શોકાશ્ચ જાત્યન્તરશતેષ્વપિ ” ॥ ૧ ॥ ઇતિ ।

કિમધિકેન વર્તમાનેઽપિ જન્મનિ નાનાવિધા અવસ્થા અનુભૂયન્તે, અત-  
આત્માર્થિભિર્હર્ષક્રોધૌ ન કાર્યાવિત્યાશયઃ । અત્ર ગોત્રપદમુપલક્ષણં, તેન જાત્યા-  
દીનાં સર્વેષાં મદો ન વિધેય ઇતિ પ્રકરણાર્થઃ ।

“સર્વસુખાન્યપિ बहुशः, प्राप्तान्यटता मयाऽत्र संसारे ।

उच्चैः स्थानानि तथा, तेन न मे विस्मयस्तेषु ” ॥ ૧ ॥

તથા—“અવમાનાત્પરિભ્રંશાદ્વધવન્ધધનક્ષયાત્ ।

પ્રાપ્તા રોગાશ્ચ શોકાશ્ચ, જાત્યન્તરશતેષ્વપિ ” ॥ ૧ ॥ ઇતિ ।

અધિક કયા કહા જાય ? જવ વર્તમાન પર્યાય મેં હી ઇસ જીવ કી  
અનેક અવસ્થાઈં હોતી દેખી જાતી હૈં તો જન્મ-જન્માન્તરોં મેં ઇસકી  
અનેક અવસ્થાઈં હુઈ હોં, અનેક વાર ઉચ્ચ નીચ કુલોં મેં જન્મ હુઆ હો  
તો ઇસમેં આશ્ચર્ય કી બાત હી કૌનસી હૈ । એસા દૃઢ વિશ્વાસ કર આ-  
ત્માર્થીં કે લિયે ઇન અવસ્થાઓં મેં કમીં મીં હર્ષ ઔર વિષાદ કે લિયે  
સ્થાન નહીં હોના ચાહિયે ।

સૂત્ર મેં ગોત્ર પદ ઉપલક્ષણ હૈ ઇસસે આઠ મદોં કા—(૧) જાતિમદ  
(૨) કુલમદ, (૩) બલમદ, (૪) રૂપમદ, (૫) લાભમદ, (૬) તપમદ,

“સર્વસુખાન્યપિ बहुशः, प्राप्तान्यटता मयाऽत्र संसारे ।

उच्चैः स्थानानि तथा, तेन न मे विस्मयस्तेषु ” ॥ ૧ ॥

તથા—“અવમાનાત્પરિભ્રંશાદ્વધવન્ધધનક્ષયાત્ ।

પ્રાપ્તા રોગાશ્ચ શોકાશ્ચ, જાત્યન્તરશતેષ્વપિ ” ॥ ૨ ॥ ઇતિ

અધિક શું કહેવામાં આવે. જ્યારે વર્તમાન પર્યાયમાં જ આ જીવની અનેક  
અવસ્થાઓ થાય છે તે નજરે દેખાય છે તો જન્મ જન્માંતરોમાં તેની અનેક  
અવસ્થાઓ થાય, અનેક વાર ઉચ્ચ નીચ ગોત્રમાં જન્મો થાય છે એમાં  
આશ્ચર્યની વાત કંઈ છે. એવો દૃઢ વિશ્વાસ કરી આત્માર્થીને માટે આ અવસ્થા  
ઓમાં કોઈ વખત પણ હર્ષ અને શોકનું સ્થાન હોવું ન જોઈએ.

સૂત્રમાં ગોત્રપદ ઉપલક્ષણ છે માટે આઠ મદોનું—(૧) જાતિમદ, (૨) કુળ  
મદ, (૩) બળમદ, (૪) રૂપમદ, (૫) લાભમદ, (૬) તપમદ, (૭) સૂત્રમદ,

માનાદિનિરસનેન કષાયવ્યુદાસસ્તેન ચ સંયમે દૃઢતા વિષયે ચાદૃઢતા, તથા ચ સમ્યગ્જ્ઞાનાદધિગમસ્તેન ચ મોક્ષ ઇતિ ક્રમેણ સર્વથા માનાપમાનાદૌ હર્ષક્રોધૌ ત્યાજ્યાવિતિ ભાવઃ ।

યથા દેશદેશાન્તરં ભ્રમન્ પથિકઃ કચિત્ સુખં કચિદ્ દુઃખં લભતે, કચિદ્ ગ્રામે કચિદરણ્યે વસતિ, કચિત્સમભૂમિષુ કચિચ્ચ વિષમભૂમિષુ શેતે, કચિત્સ્વચ્છજલં કચિદ્ દૂષિતજલં ચ પિવતિ, ન ચ સુખદુઃખે ગણયતિ લક્ષ્યગમ્યદેશપ્રાપ્તિકામઃ, તથૈવ પ્રકૃતેઽપિ ઉચ્ચગોત્રાદિપ્રાપ્તૌ ન હર્ષ-શોકૌ મુક્તિપ્રાપ્તુકામેન સંયમિના કાર્યાવિતિ વર્તુલકાર્થઃ ॥ મૂ૦ ૧ ॥

(૭) સૂત્રમદ, (૮) ऐश्वर्यમદ્ का ग्रहण हो जाता है । मद् भी अहंकार ही है, अतः इनका परित्याग कर देना चाहिये; क्योंकि जाति वगैरह से हीन होने पर भी आत्मा काल लब्धि आदि के प्राप्त होने पर धर्म का अधिकारी बन जाता है । धर्मप्राप्ति में जाति वगैरह बाधक नहीं होते हैं ।

जिस प्रकार देश-देशान्तर में भ्रमण करने वाले प्राणी को कभी किसी स्थान पर सुख, कभी किसी जगह दुःख मिलता है । कभी वह ग्राम में वस जाता है कभी उसे वन में भी वसने का अवसर आता है, कभी प्रशस्त भूमि पर वह सो जाता है कभी कंटकाकीर्ण भूमि में ही पड़ रहता है, कभी मीठा स्वच्छ जल उसे पीने को मिलता है कभी खारा मलिन जल भी वह पी लेता है, तो भी इस विषय में वह सुख और दुःख नहीं मानता । उसे अपने लक्ष्य स्थान पर पहुंचने के लिये यह सब करना पड़ता है । उसी प्रकार प्रकृत में भी मुक्ति को चाहने वाले संयमी मुनि के

(૮) ऐશ્વર્યમદનું ગ્રહણ થાય છે. મદ પણ અહંકાર જ છે માટે તેનો પણ પરિત્યાગ કરી દેવો જોઈએ, કારણ કે જાતિ વિગેરેનું હીનપણું હોવા છતાં પણ આત્મા કાલ લબ્ધિ આદિના પ્રાપ્ત થવાથી ધર્મનો અધિકારી બની જાય છે, ધર્મપ્રાપ્તિમાં જાતિ વિગેરે બાધક થતા નથી.

જેવી રીતે દેશદેશાન્તરમાં ભ્રમણ કરવાવાળા પ્રાણીને કોઈ વખત કોઈ સ્થાનપર સુખ, કોઈ વખત કોઈ જગ્યાએ દુઃખ મળે છે. કોઈ વખત ગામમાં વસે છે કોઈ વખત વગડામાં પણ રહેવાનો પ્રસંગ આવે છે કોઈ વખત પ્રશસ્ત ભૂમિ પર તે સુધ જાય છે કોઈ વખત કાંટાવાળી ભૂમિમાં પણ પડ્યું રહેવું પડે છે. કોઈ વખત મીઠું સ્વચ્છ પાણી પીવા મળે છે કોઈ વખત ખારું મલિન પાણી પણ પીવા મળે છે તો પણ આ બધા વિષયોમાં તે સુખ અગર દુઃખ માનતો નથી. તેને પોતાના લક્ષ્ય સ્થાને પહોંચવા માટે આ બધું કરવું પડે છે તે પ્રકારે પ્રકૃતમાં પણ મુક્તિને આહવાવાળા સંયમીમુનિ માટે ઉંચ નીચ ગોત્રની

પ્રાણિનાં સાતં પ્રિયં ભવતીતિ વિચાર્ય્ય કેષાઞ્ચિદપિ પ્રાણિનામહિતં ન કર્ત-  
વ્યમ્ । તદહિતાચરણસ્ય ચત્ફલં ભવતિ તદર્શયતિ—‘ ભૂર્ણિ ’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્—ભૂર્ણિ જાણ પડિલેહ સાયં, સમિષ્ણ ણ્યાણુપસી, તં  
જહા—અંધત્તં બહિરત્તં મૂયત્તં કાણત્તં કુંટત્તં ક્ષુજ્જત્તં વડભત્તં  
સામત્તં સબલત્તં, સહ પમાણ્ણં અણેગરૂવાઓજોણીઓ સંધાયઈ,  
વિરૂવરૂવે ફાસે સંપરિવેયઈ ॥ સૂ૦ ૨ ॥

ઢાયા—ભૂતેષુ જાનીહિ સાતમ્ સમિત એતદનુદર્શી, તદ્વથા—અન્ધત્વં બધિરત્વં  
મૂકત્વં કાણત્વં ક્ષુજ્જત્વં વડભત્વં શ્યામત્વં શબલત્વં સહ પ્રમાદેન અનેકરૂપા યોનીઃ  
સન્દધાતિ વિરૂપરૂપાન્ સ્પર્શાન્ પરિસંવેદયતે ॥ સૂ૦ ૨ ॥

લિયે ઉચ્ચ નીચ ગોત્ર કી પ્રાપ્તિ મેં ભી હર્ષ વિષાદ કરના ઉચિત નહીં  
હૈ । ઇસ પ્રકાર કે વિચાર સે માન આદિ કા જબ આત્મા સે અભાવ હો  
જાતા હૈ તબ કષાય કા અભાવ સ્વતઃ સિદ્ધ હોને સે સંયમી કો સંયમ-  
ભાવ મેં દૃઢતા, ઓર વિષયાદિકોં મેં અદૃઢતા આ જાતી હૈ, ઇસસે સમ્ય-  
ગ્જ્ઞાનાદિક સદ્ગુણોં કી પ્રાપ્તિ હોને સે સંયમી મુનિ કો મુક્તિ કા લાભ  
કાલાન્તર મેં યા ઉસી ભવ મેં હોજાતા હૈ । ઇસ પૂર્વોક્ત કથન સે સંયમી  
મુનિ કો ઇસ બાત કા ભી સદા વિચાર કરતે રહના ચાહિયે કિ માન  
ઓર અપમાન કે કારણ-કલાપોં કી ઉપસ્થિતિ હોને પર મુક્તે હર્ષ ઓર  
વિષાદ નહીં કરના ચાહિયે ॥ સૂ૦ ૧ ॥

સાંસારિક પ્રાણિયોં કો સાતાવેદનીય કે ઉદય સે સુખ એવં સુખ-  
કારક સામગ્રી, તથા અસાતાવેદનીય કે ઉદય સે દુઃખ એવં દુઃખકારક

પ્રાપ્તિમાં પણ હર્ષ શોક કરવો ઉચિત નથી. આ પ્રકારના વિચારથી માન આદિનો  
જ્યારે આત્માથી અભાવ થઈ જાય છે ત્યારે કષાયનો અભાવ સ્વતઃ સિદ્ધ હોવાથી  
સંયમીને સંયમ લાભમાં દૃઢતા અને વિષયાદિકોમાં અદૃઢતા આવી જાય છે. માટે  
સમ્યગ્જ્ઞાનાદિક સદ્ગુણોની પ્રાપ્તિ હોવાથી સંયમી મુનિને મુક્તિનો લાભ કાલા-  
ન્તરમાં અગર આ લાભમાં થાય છે.

આ પૂર્વોક્ત કથનથી સંયમી મુનિએ આ વાતનો પણ સદા વિચાર રાખવો  
જોઈએ કે—માન અને અપમાનના કારણકલાપોની ઉપસ્થિતિ હોવાથી હર્ષ  
અને વિષાદ કરવું મારું કર્તવ્ય નથી. ॥ સૂ૦ ૧ ॥

સાંસારિક પ્રાણિયોને સાતાવેદનીયના ઉદયથી સુખ અને સુખકારક સામગ્રી,  
અને અસાતાવેદનીયના ઉદયથી દુઃખ અને દુઃખકારક સામગ્રી પ્રાપ્ત થાય છે,

ટીકા—‘ભૂતેષુ’ ઇતિ । અત્ર મૂળે ‘ભૂઈ’ ઇતિ તૃતીયાન્તપાઠઃ સપ્તમ્યર્થે, ભૂતેષુ=ભવન્તિ, ભવિષ્યન્તિ, અભૂવન્ ચ સત્તારૂપેણેતિ ભૂતાનિ=પ્રાણિનસ્તેષુ સાતં=સુખં તદ્વિરુદ્ધં ચાસાતં=દુઃખં પ્રત્યુપેક્ષ્ય=મૂક્ષમધિયા વિચાર્ય જાનીહિ=બુદ્ધ્યસ્વ । ઉપયોગલક્ષણો જીવઃ કાલત્રયેઽપિ સત્તાં દધાતિ, અતઃ પ્રાણિનસ્ત્રૈકાલિકસત્તાપ્રતિપાદનાયાત્ર ભૂતશબ્દોપાદાનં કૃતમિતિ વોદ્યમ્ ।

સામગ્રી પ્રાપ્ત હોતી હૈ, એસા વિચાર કર કિસી મી પ્રાણી કા જરા મી અહિત નહીં કરના ચાહિયે । અહિત આચરણ કા જો ફલ હોતા હૈ સો કહતે હૈ—

‘ભૂઈ જાણ’ ઇત્યાદિ । પ્રત્યેક જીવાત્મા—ચાહે વહ દરિદ્રી હો; ચાહે ભિક્ષુક હો; ચાહે ધની હો; ચાહે ગુણી હો; કોઈ મી ક્યોં ન હો; યહી ચાહતા હૈ કિ હમકો શાંતિલાભ હો, સુખ પ્રાપ્ત હો । ચાહે આસ્તિક હો યા નાસ્તિક; સબકા એક યહી લક્ષ્ય હૈ । ઇસસે પ્રતિકૂલ કોઈ મી નહીં મિલેગા । એક ભિક્ષુક જો દર દર કા ભિખારી બનકર અપને ઉદર કા નિર્વાહ કરતા હૈ ઇસસે મી યદિ પ્રશ્ન કિયા જાય તો વહ મી યહી કહેગા કિ, ક્યા કરૂં; મુઝે શાતા—સુખ નહીં હૈ । અતઃ ઇસ પ્રકાર કે ઇસકે કથન સે યહ વાત સત્ય સાબિત હોતી હૈ કિ વહ મી શાતા—સુખ પાને કા અભિલાષી હૈ । કિડી કો મી કોઈ છૂતા હૈ તો વહ ભય કે મારે ભાગતી હૈ । વૃક્ષ કે નીચે કિસીને અગ્નિ જલાઈ હો તો, વહ ઇસકે આતાપ સે મુરઝા જાતા હૈ । લજવંતી એક જાત કી વનસ્પતિ હોતી હૈ જો છૂતે હી સંકુચિત

એવો વિચાર કરી કોઈ પણ પ્રણિનું જરા પણ અહિત નહિ કરવું જોઈએ. અહિત આચરણનું જે ફળ હોય છે તે કહે છે—

‘ભૂઈ જાણ’ ઇત્યાદિ. પ્રત્યેક જીવાત્મા ભલે તે દરિદ્રી હોય અગર ભિક્ષુક હોય, ભલે ધની હોય આહે ગુણી હોય. ભલે કોઈ પણ પ્રકારના હોય પણ ‘અમોને શાંતિનો લાભ થાઓ, સુખ થાઓ’ ભલે નાસ્તિક હોય કે આસ્તિક પણ બધાનું આ એક જ લક્ષ્ય છે. એનાથી પ્રતિકૂળ કોઈ પણ કારણ મેળશે નહિ. એક ભિક્ષુક જે ઘરઘરનો ભિખારી બનીને પોતાના પેટનો નિર્વાહ કરે છે તેનાથી પણ એ પ્રશ્ન કરવામા આવે તો તે પણ એ જ કહેશે કે શું કરું મને શાતા—સુખ નથી, માટે આ પ્રકારના તેના કથનથી એ વાત સત્ય સાબિત થાય છે કે તે પણ શાતા—સુખ મેળવવાનો અભિલાષી છે. કિડીને પણ કોઈ અડે છે તો તે પણ ભયથી દૂર ભાગે છે. વૃક્ષની નીચે કોઈએ અગ્નિ સળગાવી હોય તો તે તેના આ તાપથી સુકાઈ જાય છે. લજવંતી એક જાતની વનસ્પતિ હોય છે જે અડકવાથી

હો જાતી હૈ । ઇન સવકી ઇન બાહ્ય ચેષ્ટાઓં સે યહી માલૂમ કિયા જા સકતા હૈ કિ-ઇનકે અન્દર રહને વાલી આત્મા ભી જ્ઞાતા અર્થાત્ સુખ કા અભિલાષી હૈ । મતલબ યહી હૈ કિ-ચાહે કોઈ ભી જ્ઞાત કા જીવ કયોં ન હો; સમી ઇસ જ્ઞાતા-સુખ કે અભિલાષી હૈ । યહાં પર યહ પ્રશ્ન હો સકતા હૈ કિ વહ જ્ઞાતા-સુખ કૈસે ઓર કહાં પ્રાપ્ત હો સકતા હૈ ? । ભવા-ભિનંદી જીવ ઇસ બાત કા સહસા ઉત્તર દેંગે કિ-વહ જ્ઞાતા-સુખ સાંસારિક પદાર્થોં કે સેવન સે હી મિલ સકતા હૈ । પરન્તુ યહ ધારણા ડનકી ગલત્ત હૈ । યદિ ઇસા હી હોતા તો ફિર ચક્રવર્તી જૈસે વિશાલ વૈભવ કે ભોક્તા ઇનકા પરિત્યાગ કયોં કરતે ? । કોઈ આર્થિક શાસ્ત્રવેત્તા કહેગા કિ-ધન કી પ્રાપ્તિ મેં હી જ્ઞાન્તિ-સુખ સમાયા હુઆ હૈ । પરન્તુ યહ વિચાર ભી ઠીક નહીં । કયોંકિ યદિ યહી સિદ્ધાન્ત સ્વીકૃત કિયા જાય, તો ફિર આજ જો ભીખ માંગકર અપના ગુજારા કરને વાલે દરિદ્રી જીવ હૈ ડનસે જાકર યદિ યહ કહા જાવે કિ હમ તુમ કો દો લાખ રૂપયા દેતે હૈ, તુમ અપને શરીર કા પાવ ભર ભી માંસ નિકાલકર હમકો દે દો, તો વહ કમી ભી આપકી માંગ કી પૂર્તિ નહીં કરેગા । અતઃ અધિક ક્યા કહા જાય, યહ વાત નિશ્ચિત્ત હૈ કિ-ઇન ક્ષણિક વિનશ્વર પદાર્થોં મેં સચ્ચી સુખ-

સંકુચિત થઇ જાય છે. આ બધાની આ બાહ્ય ચેષ્ટાઓથી એ માલમ થાય છે કે-તેની અંદર રહેવાવાળો આત્મા પણ જ્ઞાતા અર્થાત્ સુખનો અભિલાષી છે. મતલબ એ છે કે ભલે કેઈ પણ જાતનો જીવ હોય પણ તે જ્ઞાતા-સુખનો અભિલાષી છે. આ ઠેકાણે એ પ્રશ્ન થાય છે કે તે જ્ઞાતા-સુખ કેવી રીતે અને કઈ જગ્યાએ પ્રાપ્ત થઈ શકે ? ભવાભિનંદી જીવ આ વાતનો સહસા ઉત્તર આપશે કે-તે જ્ઞાતા-સુખ સાંસારિક પદાર્થોના સેવનથી જ મળી શકે છે. પરંતુ એવું ધારવું તે ગલત છે. જો એ જ પ્રમાણે હોય તો પછી ચક્રવર્તી જેવા વિશાળ વૈભવના ભોક્તા તેનો પરિત્યાગ કેમ કરત ? કેઈ આર્થિકશાસ્ત્રવેત્તા કહેશે કે ધનની પ્રાપ્તિમાં જ જ્ઞાતા-સુખ સમાયા છે. પરંતુ તે વિચાર પણ ઠીક નથી, કારણ કે કદાચ તે સિદ્ધાન્ત સ્વીકૃત કરવામાં આવે તો પછી આજ જે ભીખ માંગી પોતાનો ગુનરો કરવા-વાળા દરિદ્રી જીવ છે તેની પાસે જઈને તેને કહેવામાં આવે કે-‘અમે તને બે લાખ રૂપિયા આપીશું તું પોતાના શરીરનું પાથેર માંસ અમને દાખીને આપી દે’ તો તે પણ તમારી આ માંગણી પુરી કરશે નહિ. માટે શું વધારે કહેવું ? એ વાત નિશ્ચિત છે કે આવા ક્ષણિક વિનશ્વર પદાર્થોમાં સાચી સુખશાંતિ પ્રદાન કરવાની



શાન્તિ પ્રદાન કરને કી યોગ્યતા નહીં હૈ । યહ તો હમારી કલ્પના હૈ, જો હમને ઇનમેં સુખશાન્તિ માન રહી હૈ । જિન જડ સ્થૂલ વસ્તુઓં મેં સુખ કી કલ્પના કરકે સાધારણ મનુષ્ય મી જી-તોડ પરિશ્રમ કર રહે હૈ, ડનકી પ્રાપ્તિ હોને પર મી ડન્હેં સુખ નહીં મિલતા, ક્યોંકિ ડનમેં સુખ પ્રદાન કરને કી શક્તિ હૈ નહીં । ઇસી સે આજ સારા સંસાર, ઑહે વૈભવસમ્પન્ન હો; ઑહે દરિદ્રાવસ્થાપન્ન હો; દુઃખી હી હૈ । યહ દુઃખ તબતક નહીં મિટ સકતા જબ તક સુખ કે વાસ્તવિક સ્વરૂપ કા પતા ન લગા લિયા જાયગા, અથવા ડસકે સ્થાન કા પૂર્ણ જ્ઞાન ન હો જાવેગા ।

વાસ્તવિક સુખ ક્યા હૈ ? ઇસકા ઇક માત્ર ડત્તર હૈ—નિરાકુલતા । ક્યોંકિ સંસાર મેં જબ કમી ઇચ્છાઓં કે શાંત હોને પર યત્-કિશ્ચિત્ સુખ કી અનુભૂતિ હોતી હૈ તબ ઇસસે ઇસ વાત કા અનુમાન મી લગાયા જા સકતા હૈ કિ કોઈ ઇસી મી અવસ્થા હૈ કિ જહાં પર ઇસકા પૂર્ણરૂપ સે વિકાશ હૈ । વહ નિરાકુલતા કે સિવાય ઔર કોઈ દૂસરી અવસ્થા નહીં હૈ । ઇસ નિરાકુલતા કા પૂર્ણભોક્તા પરમાત્મા હૈ । ઇસી કા અભિલાષી પ્રત્યેક સંસારી જીવ હૈ । ઇસી અભિપ્રાય કો હૃદય મેં રાખકર સૂત્રકાર કહતે હૈ કિ “ભૂતેષુ જાનીહિ પ્રત્યુપેક્ષ્ય સાતમ્”—હે મન્ય ! પ્રત્યેક જીવોં મેં વ્યક્ત ઔર અવ્યક્તરૂપ સે શાંતારૂપ જો સુખ હૈ ડસકી અભિલાષા

યોગ્યતા નથી, એ તો અમારી કલ્પના છે, જે અમે તેમાં સુખ શાન્તિ માની રાખેલ છે. જે જડ અને સ્થૂળ વસ્તુઓમાં સુખની કલ્પના કરીને સાધારણ મનુષ્ય પણ જી-તોડ પરિશ્રમ કરે છે. તેના પ્રાપ્તિ થવા છતાં પણ તેને સુખ મળતું નથી. કારણ કે તેમાં સુખ પ્રદાન કરવાની શક્તિ છે જ નહિ. એટલા માટે આજ સારો સંસાર ભલે વૈભવસંપન્ન હોય અગર દરિદ્રાવસ્થાપન્ન હોય, દુઃખી જ છે. એ દુઃખ ત્યાં સુધી મટી શકતું નથી જ્યાં સુધી સુખનું વાસ્તવિક સ્વરૂપ હોય ન લાગે, અગર તેના સ્થાનનું પૂર્ણ જ્ઞાન ન થાય.

વાસ્તવિક સુખ શું છે ? તેનો એક માત્ર ડત્તર છે—નિરાકુળતા. કારણ કે સંસારમાં જ્યારે કોઈ વખત ઇચ્છાઓના શાંત થવાથી જરાક સુખની અનુભૂતિ થાય છે ત્યારે તેથી એ વાતનો અનુમાન કરવામાં આવે છે કે—કોઈ એવી પણ અવસ્થા છે કે જે ઠેકાણે તેનો પૂર્ણ રૂપથી વિકાશ છે, તે નિરાકુળતા સિવાય બીજી કોઈ અવસ્થા નથી. આ નિરાકુળતાનો પૂર્ણ ભોક્તા પરમાત્મા છે. તેનો અભિલાષી પ્રત્યેક સંસારી જીવ છે. આ અભિપ્રાયને હૃદયમાં રાખીને સૂત્રકાર કહે છે કે—“ભૂતેષુ જાનીહિ પ્રત્યુપેક્ષ્ય સાતમ્” હે મન્ય ! પ્રત્યેક જીવમાં વ્યક્ત અને અવ્યક્ત રૂપથી શાંતારૂપ જે સુખ છે, તેની અભિલાષા છુપાયેલી છે, તે



છુપી હુઈ હૈ, ઇસ વાત કા તું અપની સૂક્ષ્મ બુદ્ધિ સે વિચાર કર। ઇસ સૂત્ર કૈ અવતરણ મૈં જો સાતાવેદનીયજન્ય સુખ કૈ અભિલાષી પ્રત્યેક જીવ કો બતલાયા ગયા હૈ વહ ઇસી નિરાકુલતારૂપ સુખ કા પરમ્પરાકારણ હોને સે હી પ્રકટ કિયા ગયા હૈ। ક્યોંકિ યહ નિશ્ચિત સિદ્ધાન્ત હૈ જો સાતાવેદનીય કર્મ કૈ ઉદય સે સાંસારિક વૈભવજન્ય સુખ પ્રાપ્ત હોગા વહ ક્ષણિક-વિનશ્વર હોગા, તથા ઉસકા ઉદય દુઃખોં સે અન્તરિમ-છુપા હુવા હોગા। ઇસલિયે ઇસે સુખ સે આત્મા સાક્ષાત્ નિરાકુલતારૂપ પરિણતિ કા સદા ભોક્તા નહીં બન સકતા। હાં! સાંસારિક સુખ કી સામગ્રી યદિ જીવોં કૈ પાસ હૈ, ઓર યદિ ઉનકૈ ચિત્ત મૈં હેયોપાદેય કા વિવેક જાગૃત હૈ તો વે ઉસકૈ દ્વારા કુછ અંશોં મૈં સાંસારિક કાર્યોં સે નિરાકુલ બનકર શુભ ધાર્મિક ક્રિયાઓં કા આરાધન ભલીભાંતિ કર સકતે હૈં। ઇસ અવસ્થા મૈં ઉનકૈ શુભભાવોં કી ક્રમશઃ જાગૃતિ હોતી હૈ, ઓર વહ ઉન્હેં પરમ્પરારૂપ સે આત્મકલ્યાણકારી માર્ગ કા અધિકારી બના દેતી હૈ। જો ભવાભિનંદી હૈ અથવા જિસ કિસી પ્રકાર સે અપના સ્વાર્થ સાધન કરને મૈં હી મસ્ત હૈ, ‘અપને સુખ મૈં હી સવકા સુખ સમાયા હુઆ હૈ’—જો ઇસ દુર્ભાવના કા વશવર્તી હૈ, “સાતાવેદનીય કૈ ઉદય સે જિસ પ્રકાર

વાતનો તું તારી પોતાની સૂક્ષ્મ બુદ્ધિથી વિચાર કર. આ સૂત્રના અવતરણમાં જે સાતાવેદનીયજન્ય સુખના અભિલાષી પ્રત્યેક જીવને બતાવવામાં આવ્યા છે, તે આ નિરાકુલતારૂપ સુખના પરંપરાકારણ હોવાથી પ્રકટ કર્યા છે, કારણ કે એ નિશ્ચિત સિદ્ધાન્ત છે—જે સાતાવેદનીય કર્મના ઉદયથી સાંસારિક વૈભવજન્ય સુખ પ્રાપ્ત થશે તે ક્ષણિક વિનશ્વર હશે, અને તેનો ઉદય દુઃખોથી અન્તરિમ-છુપાયેલો હશે માટે એવા સુખથી આત્મા સાક્ષાત્ નિરાકુલતારૂપ પરિણતિનો સદા ભોક્તા બની શકતો નથી. હાં, સાંસારિક સુખની સામગ્રી કદાચ જીવોની પાસે છે, અને કદાચ તેના ચિત્તમાં હેયોપાદેયનો વિવેક જાગૃત છે તો તે તેના દ્વારા થોડા અંશોમાં સાંસારિક કાર્યોથી નિરાકુળ બનીને શુભ ધાર્મિક ક્રિયાઓનું આરાધન ભલીભાંતિ કરી શકે છે. આ અવસ્થામાં તેના શુભ ભાવોની ક્રમશઃ જાગૃતિ થાય છે, અને તે તેને પરંપરાથી આત્મકલ્યાણકારી માર્ગનો અધિકારી બનાવી દે છે. જે ભવાભિનંદી છે અથવા જેકોઈ પ્રકારથી પોતાનો સ્વાર્થ સાધવામાં જ મસ્ત છે ‘પોતાના સુખમાં જ બધાના સુખ સમાયેલા છે’ જે આવી દુર્ભાવનાને વશવર્તી છે, “સાતાવેદનીયના ઉદયથી જેવા પ્રકારે

સમિતઃ=પઞ્ચસમિતિભિઃ સમિતઃ સન્ એતદનુદર્શી=એતત્સુખં દુઃખં વા વક્ષ્ય-  
માણં વાઽન્યત્વાદિકં દ્રષ્ટું=વિલોકિતું શીલં યસ્ય સ એતદનુદર્શી=પ્રાણિશુભાશુભાવ-  
લોકી ત્વં જાતિકુલાદિમદજનિતકટુકર્મવિપાકમન્યત્વાદિકં જ્ઞાત્વા ભૂતેષુ સાતં  
જાનીહિ, ઇતિ સમ્બન્ધઃ । તદેવ દર્શયતિ—‘તદ્યથે’—ત્યાદિના ।

હમ સાંસારિક વૈભવ કે ભોક્તા બનેં હૈં, વૈસે હી દીન દુઃખી જીવ અ-  
સાતાવેદનીય કે ઉદય સે દુઃખ દરિદ્રાવસ્થા કે ભોક્તા બને હૈં, ફિર હમેં  
इनके दुःख को दूर करने की और इन्हें सुख पहुंचाने की क्या आवश्य-  
कता है? क्योंकि हम किसी के कर्मोदय को तो मेट सकते नहीं हैं।” इत्यादि  
दुर्भावनाओं से जिनका अन्तःकरण दूषित है—वे ‘प्रत्येक संसारी जीव  
सुखाभिलाषी है’ इस बात को नहीं समझ सकते । इसे समझने के  
लिये सूक्ष्म-सद्ज्ञानरूपी बुद्धि, एवं संयम जीवन की आवश्यकता है ।  
इसीका खुलाशा करते हुए सूत्रकार कहते हैं कि—‘समिप एयाणुपस्सी  
समिपः एतदनुदर्शी’ । जो समितियों के पालन करने में सावधान है,  
जिसकी चित्तवृत्ति जीवों को दुःखित देखकर द्रवित हो जाती है, जो  
जीवों की रक्षा करने में सदा सावधान रहते हैं, जिनकी प्रत्येक क्रिया  
यतनापूर्वक होती है, ऐसे समितिपालक संयमी मुनि ही ‘एतदनुदर्शी’  
इस बात का अनुभव कर सकते हैं । पांच समितियों के आराधन करने  
का उद्देश्य जीवों की एकमात्र रक्षा करना है, इसमें स्व और पर दोनों  
की रक्षा आजाती है । ईर्यासमिति में लवलीन साधु—झूसराप्रमाण दृष्टि से

અમો સાંસારિક વૈભવનાં ભોક્તા બન્યા છીએ તેવી જ રીતે એ દીન દુઃખી જીવ અસા-  
તાવેદનીયના ઉદયથી દુઃખ દરિદ્રાવસ્થાના ભોક્તા બન્યા છે. પછી અમને તેના દુઃખોને  
દૂર કરવાની અને તેમને સુખ પહોંચાડવાની શું આવશ્યકતા છે? કારણ કે અમો  
કોઈના કર્મોદયને મિટાવી શકતા નથી ” ઇત્યાદિ દુર્ભાવનાઓથી જેનું અંતઃકરણ  
દૂષિત છે તે “ પ્રત્યેક સંસારી જીવ સુખાભિલાષી છે ” એ વાતને સમજી શકતા  
નથી. તેને સમજવાને માટે સૂક્ષ્મ સદ્જ્ઞાનરૂપી બુદ્ધિ અને સંયમ જીવનની આવ-  
શ્યકતા છે, તેનો ખુલાસો કરતાં સૂત્રકાર કહે છે કે—‘ સમિપ યયાણુપસ્સી ’ સમિતઃ  
એતદનુદર્શી, જે સમિતિઓના પાલન કરવામાં સાવધાન છે, જેની ચિત્તવૃત્તિ જીવોની  
રક્ષા કરવામાં સદા સાવધાન રહે છે, જેની પ્રત્યેક ક્રિયા યતનાપૂર્વક થાય છે, એવા  
સમિતિપાળક સંયમી મુનિ જ ‘ એતદનુદર્શી ’ એ વાતનો અનુભવ કરી શકે છે.  
પાંચ સમિતિઓનું આરાધન કરવાનો ઉદ્દેશ્ય જીવોની એક માત્ર રક્ષા કરવાની છે.  
તેમાં સ્વ અને પર બંનેની રક્ષા આવી જાય છે. ઈર્યાસમિતિમાં લવલીન સાધુ

માર્ગ કો દેવકર ચલતા હુવા મુનિ સદા ઇસ વાત કા પક્કા ધ્યાન રખતા હૈ કિ કહીં કોઈ છોટા મોટા જીવ મેરે પૈર કે નીચે આકર પ્રાણોં સે વ્યુક્ત ન હો જાય । ઇસમેં પર કે પ્રાણોં કા રક્ષણ કે સાથ ૨ અપને અહિંસારૂપ મહાવ્રત કા સંરક્ષણ અચ્છી તરહ સે હોતા રહતા હૈ । ૧ । ભાષાસમિતિ મેં પ્રવૃત્ત સાધુ સદા હિત-મિત-વચન બોલેગા, દૂસરે જીવોં કો જિસ વચન સે કષ્ટ પૈદા હો, ઇસ પ્રકાર કે સાવચ વ કઠોર વચન નહીં બોલતા હૈ । ઇસ સમિતિ સે સત્ય મહાવ્રત કી રક્ષા હોતી હૈ । ૨ । ઇષણાસમિતિ મેં પ્રવૃત્ત સંયમી મુનિ સિર્ફ સંયમ યાત્રા કા નિર્વાહ કે લિયે ભ્રમરભિક્ષા દ્વારા શુદ્ધ-નિર્દોષ પ્રાસુક આહાર ગ્રહણ કરતા હૈ । ૩ । આદાનનિક્ષેપણ-સમિતિ મેં મુનિ અપને સંયમ કે ઉપકરણોં કી ઉભય-દોનોં કાલ પ્રતિલેખના કર ઉનકે લેને ઔર રખને મેં યતના કરતા હૈ । ૪ । પ્રતિષ્ઠાપના-સમિતિ મેં મુનિ જીવરહિત સ્થાન મેં મલ-મૂત્રાદિક પરિઠવતા હૈ । ૫ । ઇન સમિતિયોં મેં પ્રવૃત્તિ કરને વાલે સંયમી મુનિ ‘ સવ હી જીવ સુખ ચાહતે હૈં ’ એસા અનુભવ કરતે હૈં । જો વર્તમાન મેં સત્તારૂપ સે રહતે હૈં, ભવિષ્યત્ કાલ મેં ખી જો સત્તારૂપ સે રહેંગે, એવં ભૂતકાલ મેં જો સત્તારૂપ સે રહે હૈં વે ભૂત હૈં । સૂત્રકાર ને જીવ પ્રાણી આદિ શબ્દોં કા પ્રયોગ ન કર ઉસકી ત્રૈકાલિક સત્તા પ્રતિપાદન કરને કે લિયે “ ભૂત ”

ઝુસરાપ્રમાણ દૃષ્ટિથી માર્ગને દેખીને ચાલતાં સદા આ વાતનો ખ્યાલ રાખે છે કે-કેઈ નાના મોટા જીવ મારા પગ નીચે આવી પ્રાણોથી વિમુક્ત ન થઈ જાય. તેમાં ખીબના પ્રાણોના રક્ષણની સાથે સાથે પોતાના અહિંસારૂપ મહાવ્રતનું સંરક્ષણ સારી રીતે થાય છે (૧). ભાષાસમિતિમાં પ્રવૃત્ત સાધુ સદા હિત-મિત વચન બોલશે, ખીબ જીવોને જે વચનથી કષ્ટ પેદા થાય તે પ્રકારના સાવચ કઠોર વચન બોલતા નથી, આ સમિતિથી સત્યમહાવ્રતની રક્ષા થાય છે (૨). ઇષણાસમિતિમાં પ્રવૃત્ત સંયમી મુનિ ફક્ત સંયમયાત્રાના નિર્વાહ માટે ભ્રમર-ભિક્ષા દ્વારા શુદ્ધ નિર્દોષ પ્રાસુક આહાર ગ્રહણ કરે છે (૩). આદાનનિક્ષેપણ સમિતિમાં મુનિ પોતાના સંયમના ઉપકરણોની ઉભય-બંને કાળ પ્રતિલેખના કરી તેના લેવામાં અને રાખવામાં યતના કરે (૪). પ્રતિષ્ઠાપનાસમિતિમાં મુનિ જીવરહિત સ્થાનમાં મળ મૂત્રાદિક પરિઠવે (૫). આ સમિતિઓમાં પ્રવૃત્તિ કરવાવાળા સંયમી મુનિ ‘ બધા જીવો મુખ ચાહે છે ’ એવો અનુભવ કરે છે. જે વર્તમાનમાં સત્તા રૂપથી રહે છે, ભવિષ્ય કાળમાં પણ જે સત્તારૂપથી રહેશે અને ભૂતકાળમાં જે સત્તા રૂપથી રહેલા છે તે ભૂત છે. સૂત્રકારે જીવ પ્રાણી આદિ શબ્દોના પ્રયોગ ન કરી તેની ત્રૈકાલિક સત્તા પ્રતિપાદન કરવા માટે “ ભૂત ” એ શબ્દનો સૂત્રમાં પ્રયોગ

અન્ધત્વમ્=ઉપહતનેત્રત્વં દ્રવ્યતો ભાવતોऽપિ ભવતિ, તથૈકેન્દ્રિય-દ્વીન્દ્રિય-ત્રીન્દ્રિયા દ્રવ્યભાવાન્ધાઃ। ચતુરિન્દ્રિયો મિથ્યાદષ્ટિપઞ્ચેન્દ્રિયશ્ચૌભૌ ભાવાન્ધૌ, દ્રવ્યભાવભેદ-ભિન્નમન્ધત્વં નિયમતો દુઃસ્વજનકં ભવતિ। એવં વધિરત્વં=કર્ણપાટવં, દ્રવ્યતો વધિરઃ શ્રવણશક્તિરહિતઃ, ભાવવધિરો જિનવચનશ્રવણવિકલઃ। મૂકત્વં=વચનવિકલત્વં દ્રવ્યતઃ, ભાવતો મૂકો મિથ્યાત્વાદ્યભિનિવેશેન સ્વદોષાપહ્વાય જિનવચનાપ્રતિપાદકઃ।

इस शब्द का सूत्र में प्रयोग किया है। उपयोगलक्षणवाला जीव तीनों काल में भी सत्ता से रहित नहीं होता है, इसलिये प्राणी की त्रैकालिक सत्ता प्रतिपादन करने के लिये सूत्रकारने इस सूत्र में “भूत” शब्द का प्रयोग किया है। अतः जब संसार का प्रत्येक प्राणी सुखाभिलाषी है, तब उसके साथ अत्याचार-अनर्थ कर उन्हें दुःखित करनेवाला प्राणी स्वयं अपने को दुःखित करने की चेष्टा करता है। जाति और कुलादिक के अभिमान से उन्मत्त बनकर जो दूसरों को हीन समझता है, तथा ‘तू अंधा है, तू बहिरा है, तू मूगा है’ इत्यादि प्रकार के कर्कश शब्दों द्वारा जो दूसरों का तिरस्कार करता है वह अपनी कषायपरिणति से आत्मा को मलिन करता हुआ तदुपार्जित कर्म के कटुक विपाक को अवश्य भोगता है। इसी बात का दिग्दर्शन कराते हुए सूत्रकार कहते हैं कि—“अन्धत्वं-मूकत्वं” इत्यादि। देखने की शक्ति की अभिव्यक्ति से रहित होना इसका नाम अन्धत्व है, यह अंधापना द्रव्य और भाव के भेद से २ प्रकारका है। एकेन्द्रिय, जीव दोइन्द्रिय जीव और तीनइन्द्रिय जीवों में दोनों प्रकार से अंधता है। पौद्गलिक द्रव्यइन्द्रियरूप चक्षु-इन्द्रिय की विकलता द्रव्य-अन्धता है,

કરેલ છે. ઉપયોગ લક્ષણવાળા જીવ ત્રણે કાળમાં પણ સત્તાથી રહિત થતા નથી, માટે પ્રાણીની ત્રૈકાલિક સત્તા પ્રતિપાદન કરવા માટે સૂત્રકારે આ સૂત્રમાં ભૂત શબ્દનો પ્રયોગ કર્યો છે. માટે જ્યારે સંસારના દરેક પ્રાણી સુખાભિલાષી છે ત્યારે તેની સાથે અત્યાચાર-અનર્થ કરી તેને દુઃખ દેવાવાળા પ્રાણી સ્વયં પોતાની જાતને જ દુઃખિત કરવાની ચેષ્ટા કરે છે. જાતિ અને કુળાદિકના અભિમાનથી ઉન્મત્ત બનીને જે બીજાને હીન સમજે છે, અને ‘તું આંધળો છે, તું બહેરો છે, તું મુંગો છે’ ઇત્યાદિ પ્રકારનાં કર્કશ શબ્દો દ્વારા જે બીજાનો તિરસ્કાર કરે છે તે પોતાની કષાય પરિણતિથી આત્માને મલિન કરે છે. તદુપાર્જિત કર્મના કટુક વિપાકને અવશ્ય ભોગવે છે. આ વાતનો દિગ્દર્શન કરાવતાં સૂત્રકાર કહે છે કે—“અન્ધત્વ મૂકત્વં” ઇત્યાદિ. દેખવાની શક્તિની અભિવ્યક્તિથી રહિત થવું તેનું નામ અંધત્વ છે. તે અંધાપણું દ્રવ્ય અને ભાવના ભેદથી બે પ્રકાર છે. એકેન્દ્રિય જીવ, બેન્દ્રિય જીવ અને ત્રણે ઇન્દ્રિય જીવોમાં બે પ્રકારથી અંધતા છે. પોદ્ગલિક દ્રવ્ય-ઇન્દ્રિયરૂપ ચક્ષુ-ઇન્દ્રિયની વિકલતા

किञ्च-काणत्वम्=एकाक्षत्वं द्रव्यतः, भावतः काणत्वं-निश्चयव्यवहारयोर्ज्ञान-  
क्रिययोर्वैकपक्षग्राहित्वम् । कुण्टत्वं=कुटिलहस्तत्वादिकं द्रव्यतः, भावतः कुण्टत्वं  
प्रतिलेखनादिक्रियाराधने वक्रत्वम् । कुब्जत्वं=वक्रशरीरत्वं द्रव्यतः, भावतः कुटिल-  
क्रियत्वम् । वडभत्वं=वक्रपृष्ठत्वादिकं द्रव्यतः, भावतः परमर्मप्रकाशकत्वम् । श्याम-  
त्वं=कालिमा द्रव्यतः, भावतो मलिनाचारत्वम्, श्वलत्वम्=श्वेतकुण्ठत्वादिकं द्रव्यतः,  
भावतः श्वलदोषवच्चम् । अत्रान्धत्वादिकमुपलक्षणं पङ्गुत्वादेर्वोध्यम् ।

और भावइन्द्रिय की विकलता भाव-अन्धता है। चतुरिन्द्रिय और मिथ्या-  
दृष्टि पंचेन्द्रिय जीव भावान्ध हैं, क्योंकि बाह्य में द्रव्येन्द्रियरूप चक्षुरिन्द्रिय  
होने पर भी ये पदार्थ के यथार्थ स्वरूपावलोकन से रहित होते हैं। दोनों  
प्रकार से अन्धता होनी, यह प्राणी के लिये नियम से दुःखोत्पादक होती  
है। इसी प्रकार बधिरत्व, मूकत्व, काणत्व आदि भी द्रव्य और भाव के  
भेद से दो दो प्रकार के होते हैं। उनमें अपने विषय को ग्रहण करने की  
शक्ति से श्रवणेन्द्रिय की विकलता का नाम बधिरता है। सुनने की  
शक्ति से रहित होना यह द्रव्य-बधिरता, और जिनेन्द्र वचनों को सुनने  
में अप्रेम तथा अनादर भाव का होना, या उनके वचनों को श्रवण करने  
की विकलता होनी यह भाव-बधिरता है। वचन बोलने की शक्ति की  
अभिव्यक्ति से रहित होना इसका नाम मूकत्व है। प्राकृत-संस्कृतादिरूप  
अपनी २ मातृभाषा में बोलने की हीनता का नाम द्रव्य-मूकता, एवं  
मिथ्यात्वादिक के अभिनिवेश के वश से अपने दोषों को छुपाने के लिये

द्रव्यअंधता छे. अने भाव-इन्द्रियनी विकलता भावअंधता छे. आर इन्द्रिय-  
वाणा अने मिथ्यादृष्टि पंचेन्द्रिय एव भावान्ध छे, कारण के बाह्यमां द्रव्येन्द्रिय  
इप चक्षुरिन्द्रिय थाधी पणु ते पदार्थनुं यथार्थ स्वरूपावलोकनथी रहित होय छे.  
अन्ने प्रकारथी अंधता थी ते प्राणी माटे नियमथी दुःखोत्पादक थाय छे. आ  
प्रकार अडेरपणुं, मुंगापणुं, आंधलापणुं आदि पणु द्रव्य अने भावना लेदथी जे  
प्रकारे होय छे. तेमां पोताना विषयने अडणु करवानी शक्तिथी श्रवणेन्द्रियनी  
विकलतानुं नाम बधिरता छे. सांलणवानी शक्तिथी रहित थवुं ते द्रव्य-अडेर-  
पणुं, अने जनेन्द्रवचनो सांलणवामां अप्रेम अने अनादर भाव होवो, अगर  
तेमना वचनो सांलणवानी विकलता थी ते भाव-बधिरता छे. वचन जोलवानी  
शक्तिनी अभिव्यक्तिथी रहित थवुं तेनुं नाम मूकत्व छे. प्राकृतसंस्कृतादिइप  
पोतपोतानी मातृभाषामां जोलवानी हीनतानुं नाम द्रव्यमूकता, अने मिथ्यात्वादिकना  
अभिनिवेशनावशथी पोताना दोषोने छुपावा माटे निनवचनोनुं प्रतिपादन नहि

જિનવચનોં કા પ્રતિપાદન નહીં કરના ઇસકા નામ ભાવ-મૂકત્વ હૈ ।  
 એક આંચ કા હોના યહ દ્રવ્ય સે કાળત્વ હૈ, ઓર નિશ્ચય એવં વ્યવહાર  
 નય મેં સે, અથવા જ્ઞાન ઓર ચારિત્ર મેં સે કિસી એક કા એકાન્તરૂપ સે  
 પક્ષ ગ્રહણ કરના ભાવ સે કાળત્વ હૈ । હાથ પાંચ આદિ અંગ ઉપાંગોં કી  
 વક્તતા દ્રવ્ય-કુંડત્વ, ઓર પ્રતિલેખનાદિ ક્રિયાઓં કે કરને મેં અનાદર યા  
 છલ-કપટ કરના યહ ભાવ-કુંડત્વ હૈ । સામાન્યતયા શરીર કા ટેઢાપન  
 અથવા શરીર મેં કૂબડ વગૈરહ કા નિકલના યહ દ્રવ્ય સે કુબ્જત્વ હૈ ।  
 કુટિલક્રિયાપને કા નામ ભાવ સે કુબ્જત્વ હૈ । પૃષ્ઠ ભાગ વગૈરહ કા વક્ત  
 હોના યહ દ્રવ્ય સે વડભત્વ હૈ, દૂસરોં કે ગુપ્ત કાર્યોં એવં અનેક રહસ્યોં કા  
 પ્રકાશન કરના યહ ભાવ સે વડભત્વ હૈ । શરીર મેં કૃષ્ણતા કા હોના યહ  
 દ્રવ્ય સે શ્યામતા-મલિનતા, તથા હીન આચરણી હોના યહ ભાવ સે શ્યા-  
 મતા હૈ । શરીર મેં સપેદ કુષ્ઠ વગૈરહ કા હોના દ્રવ્ય સે શબલતા, તથા  
 દોષવિશિષ્ટતા ભાવ સે શબલત્વ હૈ । સૂત્ર મેં અન્ધત્વાદિ પદ ઉપલક્ષણ  
 રૂપ હૈ, ઇસસે પડ્ગુપને આદિ કા મી ગ્રહણ કર લેના ચાહિયે । ઇન સબ  
 વાતોં કો દિશાને કા અભિપ્રાય યહી હૈ કિ પ્રાણી કિસી મી મદ કે  
 આવેશ મેં આકર દૂસરોં કે પ્રતિ એસે કષાયવિશિષ્ટ બનકર અપશબ્દોં  
 યા દૂસરોં કે મર્મસ્થલ કો મેદને વાલે કઠોર શબ્દોં કા પ્રયોગ ન કરે ।

કરવું તેનું નામ ભાવમૂકત્વ છે. એક આંખનું હોવું તે દ્રવ્યથી કાણત્વ છે, અને  
 નિશ્ચય અને વ્યવહાર નયમાંથી અથવા જ્ઞાન અને ચારિત્રમાંથી કોઈ એકનું એકા-  
 ન્તરૂપે પક્ષ ગ્રહણ કરવો તે ભાવથી કાણત્વ છે. હાથ-પગ આદિ અંગ ઉપાંગોની  
 વક્તતા દ્રવ્યકુંડત્વ અને પ્રતિલેખનાદિ ક્રિયાઓ કરવામાં અનાદર અગર છલકપટ  
 કરવું એ ભાવકુંડત્વ છે. સામાન્ય રીતે શરીરનું વાંકાપણું અને શરીરમાં કોઠ  
 વિગેરેનું નિકળવું તે દ્રવ્યથી કુબ્જત્વ છે. કુટિલક્રિયાપણાનું નામ ભાવથી  
 કુબ્જત્વ છે. પૃષ્ઠભાગ વિગેરેનું વક્ર થવું તે દ્રવ્યથી વડભત્વ છે. બીજાના ગુપ્ત  
 કાર્યો અને અનેક રહસ્યોનું પ્રકાશન કરવું તે ભાવથી વડભત્વ છે. શરીરમાં  
 કાળાશ થવી તે દ્રવ્યથી શ્યામતા-મલિનતા, અને હીન આચરણી થવું તે ભાવથી  
 શ્યામતા છે. શરીરમાં મદ્દેહ કોઠ નીકળવો તે દ્રવ્યથી શબલતા અને શબલ  
 દોષવિશિષ્ટતા ભાવથી શબલતા છે. સૂત્રમાં અન્ધત્વાદિ પદ ઉપલક્ષણરૂપ છે.  
 તેથી લંગડાપણું આદિનું પણ ગ્રહણ કરી લેવું જોઈએ. આ બધી વાતને ટેળા-  
 ઉવાનો અભિપ્રાય એ છે કે-પ્રાણી કોઈ પણ મદના આવેશમાં આવીને બીજાઓના  
 પ્રતિ એવા કષાયવિશિષ્ટ બની અપશબ્દોનો અગર બીજાના મર્મસ્થળને લેદવા-



दुःखं च कोऽपि नेच्छति परन्तु कर्मवशात्प्रायशः सर्वेऽपि सावद्यक्रियावन्तो नितान्तदुःखिता भवन्तीति भावः ।

अपिच—‘सहे’ति, प्रमादेन=अनवधानेन सह=सार्द्धं समितिविकलोऽनवधानवान् अनेकरूपाः=संवृत-विवृत-रूपा योनीः सन्दधाति=सन्धत्ते, चतुरशीतिलक्षयोनि-सम्बन्धाविच्छेदेनात्मना सह संघट्टनं करोति । तासु च योनिषु विरूपरूपान्=बहु-विधान् स्पर्शान्=दुःखानि परिसंवेदयते=जानाति, नानाविधयोनिपूतपन्नो जीवो बहुविधां नरकनिगोदादियातनां समनुभूय नितान्तं खिन्नो भवतीति तात्पर्यम् ।

क्यों कि इस प्रकार के वचनों से एक तो बोलनेवालों के लिए भाव-हिंसा का दोष लगता है और दूसरों के चित्त में शोक आदिका उत्पादक होने से द्रव्यहिंसा का भी दोष आता है । इस हिंसा से अनेक अशुभ कर्मों का बंध होता है । आत्मप्रशंसा एवं परकी निंदा करना, तथा अपने दुर्गुणों को सद्गुण का रूप देकर गर्वोन्मत्त बन उन्हें प्रकाशित करना, और दूसरों के सद्गुणों में भी दूषण लगाना या उन्हें दुर्गुणरूप में प्रकट करना इससे नीच गोत्र का बन्ध होता है, इससे जीव अनेक कुयोनियों में जन्म धारण कर हीनआचरणी आदि होता है । किसी धर्मात्मा के ज्ञान एवं दर्शन के विषय में प्रशंसा का नहीं सुहाना, किसी कारण से अपने ज्ञान का छुपाना, मात्सर्य भाव का रखना, किसी के ज्ञान अथवा दर्शन में विघ्न करना, इनसे ज्ञानावरण, तथा दर्शनावरण कर्म का जीव बंध करता है । इसका फल जीवों के ज्ञान एवं दर्शन गुणों का घात होना है ।

वाणा डोहर शब्दोने प्रयोग न करे, कारण डे आ प्रकारे वचनोधी ओक तो ओलवावाणाने लावडिसाने होप लागे छे, अने जीवना चित्तमां शोक आदिना उत्पादक थवाधी द्रव्यडिसाने पणु होप लागे छे. आ डिसाधी अनेक अशुभ कर्मोना बंध थाय छे. आत्मप्रशंसा अने पारडानी निंदा करवी अने पोताना दुर्गुणोने सद्गुणुनुं रुप आपीने गर्वोन्मत्त जनी तेने प्रकाशित करवुं, अने जीवना सद्गुणोमां पणु दूषण लगाडवुं अगर तेने दुर्गुण रुपमां प्रकट करवुं तेनाधी नीच गोत्रनो बंध थाय छे, तेनाधी एव अनेक कुयोनियोमां जन्म धारण करी हीनाचरणी आदि थाय छे. डोछ धर्मात्माना ज्ञान अने दर्शन विषयमां धती प्रशंसाने सडन नडि करवी, डोछ कारणधी पोताना ज्ञानने छुपाववुं, मात्सर्य लाव राखवो, डोछना ज्ञान अने दर्शनमा विघ्न करवुं, तेनाधी एव ज्ञानावरण, अने दर्शनावरण कर्मोना बंध करे छे. तेनुक्षण एवोने ज्ञान अने दर्शन गुणोनां



નિજ ઔર પર કે વિષય મેં દુઃખ, શોક આદિ કરને કરાને સે અસાત-વેદનીય કર્મ કા બંધ હોતા હૈ, જિસકા ફલ જીવ કો કમી મી સાતા નહીં મિલના હૈ । સંસાર કે સમસ્ત પ્રાણી ઔર વ્રતી-અણુવ્રતી યા મહા-વ્રતી જીવોં કી સેવા કરના, નિજ ઔર પર કે ઉપકાર કે લિયે યોગ્ય વસ્તુ કા દાન દેના, સરાગસંયમ કા પાલન કરના, ક્રોધાદિકષાયોં કી શાન્તિ હોની ઔર લોભ કા ત્યાગ કરના આદિ કાર્યોં સે જીવ કે સાત વેદનીય કર્મ કા બંધ હોતા હૈ । સ્કી વજહ સે જીવોં કો સદા સુખકારી વસ્તુઓં કા સમાગમરૂપ સાંસારિક સુખોં કી પ્રાપ્તિ હોતી હૈ । કેવલી કા અવર્ણવાદ, શ્રુતકા અવર્ણવાદ, તથા સંઘ આદિ કા અવર્ણવાદ કરના, સ્કસે દર્શનમોહનીય કર્મ કા બંધ હોતા હૈ, જિસકા ફલ સમકિત ગુણ કી પ્રાપ્તિ જીવ કો નહીં હોતી । કષાય કે ઉદય સે પરિણામોં મેં તીવ્રતા રહના, સ્કસે ચારિત્ર મોહનીય કા બંધ હોતા હૈ, જિસકા ફલ જીવ કમી મી ચારિત્ર ધર્મ કો અંગીકાર નહીં કર સકતા । યોગોં કી કુટિલતા કા હોના તથા શાસ્ત્રપ્રતિપાદિત માર્ગ સે અન્યથા પ્રવૃત્તિ કરના, સ્કસે અશુભ નામ કર્મ કા બંધ હોતા હૈ । સ્કસે જીવ ઈન્દ્રિયાદિ અનેક કુચોનિયોં મેં જન્મ ધારણ કરતા હૈ । કમી ચક્ષુવિકલ હોતા હૈ, કમી

આઘાતરૂપ થાય છે. ખીજના અને પોતાના વિષયમાં દુઃખ શોકાદિ કરવા-કરાવવાથી અસાતવેદનીય કર્મનો બંધ થાય છે. જેનાથી જીવને કોઈ વખત પણ સાતા મળતી નથી. સંસારના સમસ્ત પ્રાણી અને વ્રતી-અણુવ્રતી કે મહાવ્રતી જીવોની સેવા કરવી, પોતાના અને પારકાના ઉપકાર માટે યોગ્ય વસ્તુનું દાન દેવું, સરાગસંયમનું પાલન કરવું, ક્રોધાદિ કષાયોની શાંતિ થવી, અને લોભનો ત્યાગ કરવો આદિ કાર્યોથી જીવને સાતાવેદનીય કર્મનો બંધ થાય છે, તેનાથી જીવને સદા સુખકારી વસ્તુઓના સમાગમરૂપ સાંસારિક સુખોની પ્રાપ્તિ થાય છે. કેવળીનો અવર્ણવાદ, શ્રુતનો અવર્ણવાદ, અને સંઘ આદિનો અવર્ણવાદ કરવો, જેનાથી દર્શનમોહનીય કર્મનો બંધ થાય છે. જેનાથી સમકિત ગુણની પ્રાપ્તિ જીવને થતી નથી. કષાયના ઉદયથી પરિણામોમાં તીવ્રતા રહેવી, તેનાથી ચારિત્ર-મોહનીયનો બંધ થાય છે. જેનું ક્ષણ જીવ કોઈ વખત પણ ચારિત્રધર્મને અંગીકાર કરી શકતો નથી.

યોગોમાં કુટિલતા હોવી, અને શાસ્ત્રપ્રતિપાદિત માર્ગથી અન્યથા પ્રવૃત્તિ કરવી તેનાથી અશુભ નામકર્મનો બંધ થાય છે, તેનાથી જીવ એક ઈન્દ્રિય આદિ અનેક કુચોનિયોમાં જન્મ ધારણ કરે છે. કોઈ વખત ચક્ષુવિકલ થાય છે,

મુંગા બનતા હૈ, કમી કુબ્જક ઓર કમી બહિરા હોતા હૈ । સૂત્ર મેં જો અન્ધત્વ, બધિરત્વ, મૂકત્વ, કાળત્વ આદિ અનેક શારીરિક દોષ પ્રકટ કિયે ગયે હૈં વે સબ ઇસી અશુભનામકર્મ કે ઉપાર્જન સે જીવોં કો પ્રાપ્ત હોતે હૈં । જિસ પ્રકાર ચિત્રકાર કિસી ચિત્ર કા કમી હાથ ટેકા બના દેતા હૈ, કમી એક આંખ બના દેતા હૈ, કમી ઉસે છોટા યા કમી બડા અપની ઇચ્છાનુસાર જિસે જૈસા બનાના યાહે બના દેતા હૈ, ઇસી પ્રકાર યહ નામકર્મ મી ઇસ જીવ કો કમી અન્ધા, કમી બહિરા આદિ બના દિયા કરતા હૈ । યોગોં કી વ્રક્તા નહીં હોની, એવં વિસંવાદ-અન્યથા પ્રવૃત્તિકા અભાવ હોના, ઇસસે શુભનામકર્મ કા ઉપાર્જન હોતા હૈ, જિસ કા ફલ પ્રત્યેક અંગ કી પૂર્ણતા એવં સૌષ્ઠ્ય-સુન્દરતા આદિ કી પ્રાપ્તિ હોના હૈ । ઉત્તમ યોનિયોં મેં જન્મ તથા મુક્તિપ્રાપ્તિ લાયક વજ્રરૂપમ-નારાચ સંહનનાદિ શુભસંહનનોં કી એવમ્ સમચતુરસાદિ શુભ સંસ્થાનોં કી પ્રાપ્તિ જીવ કો ઇસી કે ઉદય સે હોતી હૈ । તીર્થંકર જૈસી પ્રકૃતિ ઇસી શુભનામકર્મ કા ભેદ હૈ ।

યદ્યપિ પ્રતિ સમય આયુકર્મ કો છોડ શેષ સાત કર્મોં કા બન્ધ હુઆ કરતા હૈ તથાપિ પૂર્વોક્ત ઇન ભાવોં દ્વારા જો જ્ઞાનાવરણાદિ વિશેષ ૨ કર્મોં કા બન્ધ હોના પ્રકટ કિયા હૈ સો સ્થિતિબન્ધ ઓર અનુભાગ-

વખતે મુંગા થાય છે, વળી કુબ્જ અને બહિરા પણ થાય છે. સૂત્રમાં જે અન્ધત્વ, બધિરત્વ, મૂકત્વ, કાળત્વ આદિ અનેક શારીરિક દોષ પ્રગટ કરેલાં છે તે બધા આ અશુભનામકર્મના ઉપાર્જનથી જીવને પ્રાપ્ત થાય છે. જેમ ચિત્રકાર કોઈ ચિત્રમાં હાથ આડો બતાવે છે, એક આંખ બતાવે છે, કોઈછોટું કોઈ મોટું પોતાની ઇચ્છા-નુસાર જેને જેમ બનાવવા માગે તેમ બનાવે છે. તે પ્રકારે આ નામકર્મ પણ આ જીવને કોઈ વખત આંધળો, બહિરા આદિ બનાવે છે. યોગોની વક્રતા ન થવી અને વિસંવાદ - અન્યથા પ્રવૃત્તિ-નો અભાવ થયો એથી શુભનામકર્મનું ઉપાર્જન થાય છે. જેનું કુળ પ્રત્યેક અંગની પૂર્ણતા અને સૌષ્ઠ્ય - સુંદરતા આદિની પ્રાપ્તિ થાય છે. ઉત્તમ યોનિયોમાં જન્મ અને મુક્તિપ્રાપ્તિલાયક વજ્રરૂપનારાચ સંહનનાદિ શુભ સંહનનોની અને સમચતુરસાદિ શુભ સંસ્થાનોની પ્રાપ્તિ જીવને આના ઉદયથી થાય છે. તીર્થંકર જેવી પ્રકૃતિ તે શુભનામકર્મનો ભેદ છે.

હવે પ્રતિસમય આયુકર્મને છોડી સાત શેષ કર્મના બંધ થયા કરે છે. તથાપિ પૂર્વોક્ત આ ભાવોદ્વારા જે જ્ઞાનાવરણાદિ વિશેષ વિશેષ કર્મોના બંધ થવા પ્રકટ કરેલ છે તે સ્થિતિબંધ અને અનુભાગબંધની અપેક્ષા સમજવી નોંધવું.

વન્ધ કી અપેક્ષા સમજના ચાહિયે । અર્થાત્તુ ઉસ સમય પ્રકૃતિ ઔર પ્રદેશવન્ધ તો સબ કર્મોં કા હુઆ કરતા હૈ, કિન્તુ સ્થિતિ ઔર અનુભાગવન્ધ જ્ઞાનાવરણાદિ વિશેષ ૨ કર્મોં કા અધિક હોગા । અન્ધા હોના, બહિરા હોના, કાળા ઇત્યાદિ હોના, તથા ઇન્દ્રિયાદિકોં કી પૂર્ણતા હોને પર ખી શારીરિક શાંતિ કે લાભ સે વચ્ચિત રહના, દુઃખોત્પાદક સામગ્રી કી પ્રાપ્તિ હોના, ઇષ્ટાનિષ્ટ સંયોગવિયોગજન્ય કષ્ટોં કો જ્ઞેલના આદિ કષ્ટોં કો કોઈ ખી સાંસારિક પ્રાણી નહીં ચાહતા હૈ, પરન્તુ કર્મોં કે દ્વારા પરતન્ત્ર હુએ પ્રત્યેક સાંસારિક જીવોં કો અપને ૨ યોગ એવમ્ કષાયોં દ્વારા ઉપાર્જિત કિયે કર્મોં કા ફલ અવશ્ય ૨ ભોગના પડતા હૈ, ઇસ મેં જીવ કી ઇચ્છા કામ નહીં કરતી । કર્માધીન બન યહ પ્રાણી પ્રાયઃ સાવધ ક્રિયાઓં કે કરને મેં હી દત્તાવધાન રહા કરતા હૈ, જિસકે કારણ રાત દિન દુઃખી કા દુઃખી હી રહા કરતા હૈ ।

પ્રશ્ન—કર્મોં કે ફલોં કો ભોગતે હુએ ખી આગે કે લિયે કર્મોં કા વન્ધ નહીં હો એસા ખી કોઈ ઉપાય હૈ ? ઉત્તર—હૈ ।

પ્રશ્ન—કયા હૈ ? ઉત્તર—સમતાભાવ । કર્મોં કે ફલોં કા અનુભવ ન કરને વાલા પ્રાણી યદિ ઉનકે ફલોં કો ભોગતે સમય હર્ષ વિષાદ એવમ્ આર્ત-

અર્થાત્તુ તે વખત પ્રકૃતિ અને પ્રદેશબંધ તો બંધા કર્મોના થયા કરે છે પણ સ્થિતિ અને અનુભાગબંધ જ્ઞાનાવરણાદિ વિશેષ વિશેષ કર્મોના અધિક થશે. અંધ થવું, બહેરા થવું, કાળા થવું ઇત્યાદિ. તથા ઇન્દ્રિયાદિકોની પૂર્ણતા હોવાથી પણ શારીરિક શાંતિના લાભથી વંચિત રહેવું, દુઃખોત્પાદક સામગ્રીની પ્રાપ્તિ થવી, ઇષ્ટાનિષ્ટ સંયોગવિયોગજન્ય કષ્ટોને સહન કરવા કોઈ પણ સાંસારિક પ્રાણી આહતો નથી, પરંતુ કર્મોદ્વારા પરતંત્ર થયેલ દરેક સાંસારિક જીવને પોતપોતાના યોગ અને કષાયોદ્વારા ઉપાર્જિત કરેલા કર્મોના ફળ અવશ્ય અવશ્ય ભોગવવા પડે છે, તેમાં જીવની ઇચ્છા કામ કરતી નથી. કર્માધીન બની તે પ્રાણી પ્રાયઃ સાવધ ક્રિયાઓ કરવામાં જ દત્તાવધાન રહ્યા કરે છે, જેના કારણે રાત દિન દુઃખીના દુઃખી જ રહ્યા કરે છે.

પ્રશ્ન—કર્મોના ફળને ભોગવતાં છતાં પણ આગળ માટે કર્મોના બંધ ન થાય એવો કોઈ ઉપાય છે ? ઉત્તર—છે.

પ્રશ્ન—શું છે ? ઉત્તર—સમતાભાવ. કર્મોના ફળોને અનુભવ ન કરવાવાળા પ્રાણી કદાચ તેના ફળોને ભોગવતી વખત હર્ષ વિષાદ આદિ અને આર્ત રોદ્ધિ પરિણામોથી

રૌદ્રરૂપ પરિણમોં સે યુક્ત નહીં હોના હૈ, ઓર અપને ઉપાર્જિત કર્મોં કા ફલ ભોગે વિના છુટકારા નહીં હૈ અતઃ ઇનકા ફલ અવશ્ય ભોગના હી પડેગા—ચાહે કિસી ભી પરિસ્થિતિ મેં જીવ ક્યોં ન હો । જિસ પ્રકાર અપને ઉપાર્જિત પુણ્ય કા ફલ ભોગતે હુએ વિષાદપરિણતિ આત્મા મેં નહીં હોતી ડસી પ્રકાર અપને ઉપાર્જિત પાપ કર્મ કે ફલ કો ભોગતે હુએ ભી મુઝે વિષાદપરિણતિ નહીં હોની ચાહિયે, ઇત્યાદિ શુભાધ્યવસાય સે પ્રેરિત હોકર સમતાભાવ સે શુભાશુભ કર્મોં કે ફલ કો જો પ્રાણી ભોગતા હૈ ડસકે લિયે નવીન કર્મોં કા બન્ધ નહીં હોતા । નવીન કર્મોં કા બન્ધ કરાને વાલી કષાયપરિણતિ હી હૈ । હર્ષ ઓર વિષાદ યે કષાયપરિણતિ-રૂપ હી હૈ । સમતાભાવ ઇસ કષાયપરિણતિ સે રહિત અવસ્થા હૈ ।

પ્રશ્ન—ઇસ સમતાભાવ કી પ્રાપ્તિ જીવ કો કૈસે હોતી હૈ ?

ઉત્તર—સમકિત કી પ્રાપ્તિ સે ।

સમકિતશાલી જીવ ઘર મેં-સંસાર મેં રહતા હુઆ ભી અપની વૃત્તિ કમલપત્ર કે, અથવા તસલોહપાદન્યાસ (તપે હુએ લોહે પર પૈર રચને) કે સમાન રચતા હૈ ઇસસે વહ સમભાવી હોતા હૈ ।

યુક્ત ળનતા નથી અને પોતાના ઉપાર્જિત કર્મોના ફળ ભોગવ્યા વિના છુટકો નથી માટે તેનું ફળ અવશ્ય ભોગવવું જ પડશે ભલે કોઈ પણ પરિસ્થિતિમાં જીવ કેમ ન હોય, જેવી રીતે પોતાના ઉપાર્જિત પુણ્યનું ફળ ભોગવતી વખતે વિષાદ પરિણતિ આત્મામાં થતી નથી તે પ્રકારે પોતાના ઉપાર્જિત પાપ કર્મના ફળને ભોગવતાં પણ મને વિષાદ પરિણતિ થવી ન જોઈએ. ઇત્યાદિ શુભાધ્યવસાયથી પ્રેરિત થઈ સમતાભાવથી શુભાશુભ કર્મના ફળને જે પ્રાણી ભોગવે છે તેને માટે નવીન કર્મોનો બંધ થતો નથી નવીન કર્મોના બંધ કરાવવાવાળી કષાયપરિણતિ જ છે, હર્ષ અને વિષાદ એ કષાયપરિણતિરૂપ જ છે. સમતાભાવ આ કષાય-પરિણતિથી રહિત અવસ્થા છે.

પ્રશ્ન—આ સમતાભાવની પ્રાપ્તિ જીવને કેવી રીતે થાય છે ?

ઉત્તર—સમકિતની પ્રાપ્તિથી

સમકિતશાળી જીવ ઘરમાં-સંસારમાં રહેવા છતાં પણ પોતાની વૃત્તિ કમલપત્ર અથવા તસલોહપાદન્યાસ (તપેલા લોહા ઉપર પગ રાખવા) સમાન રાખે છે માટે તે સમભાવી છે.

इदमत्र हृदयम्—यः स्वोत्कर्षं समासाद्य जात्यादिमदसम्पन्नोऽन्यं प्रति ‘अन्ध-  
स्त्व’—मित्यादिकं परुषं ब्रवीति, मनसा तस्याप्रियमाचरति च, स जन्मान्तरे स्वय-  
मेव नीचगोत्रत्वादिकमन्धत्वादिकं फलं लभत इति भयान्मनोवाकाययोगैः कस्या-  
प्यप्रियमात्महितार्थी नाचरेदिति बोध्यम् ॥ सू० २ ॥

उत्कृष्टकुलोत्पत्तिगर्वोन्मत्तचित्तोऽधमकुलतया दीनोऽन्धत्वादिकमुपलभमानो वा  
कर्तव्याकर्तव्यानभिज्ञः कर्मविपाकमविज्ञाय तत्रैवोच्चकुलादिके विपर्यासं गच्छतीति  
दर्शयति—‘से अबुज्झमाणे’ इत्यादि ।

मूलम्—સે અબુજ્ઝમાણે હાઓવહાણ જાઈમરણ અણુપરિયટ્ટમાણે,  
જીવિયં પુઠો પિયં ઇહમેગેસિં માણવાણં ચિત્તવત્થુમમાયમાણાણં,  
આરત્તં વિરત્તં મણિ કુંડલં સહ હિરણ્ણેણ ઇત્થિયાઓ પરિગિજ્ઞ  
તત્થેવ રત્તા, નહિતથ તવો વા દમો વા નિયમો વા દિસ્સઈ, સંપુણ્ણં  
વાલે જીવિડકામે લાલપ્પમાણે મૂઠે વિપ્પરિઆસમુવેઈ ॥સૂ૦ ૩॥

છાયા—સઃ, અબુદ્યમાનો હતોપહતો જાતિમરણમનુપરિવર્તમાનઃ, જીવિતં  
પૃથક્ પ્રિયમ્ ઇહૈકેપાં માનવાનાં ક્ષેત્રવાસ્તુમમાયમાનાનામ્, આરત્તં વિરત્તં મણિ  
કુંડલં સહ હિરણ્યેન સ્ત્રીઃ પરિગૃહ્ય તત્રૈવ રક્તાઃ, નાત્ર તપો વા દમો વા નિયમો વા  
દૃશ્યતે, સમ્પૂર્ણં વાલો જીવિતુકામો લાલપ્યમાનો મૂઠો વિપર્યાસમુપૈતિ ॥ સૂ૦ ૩ ॥

इस सूत्र का सारांश यही है कि “जो मनुष्य अपने उत्कर्ष को  
प्राप्त कर जात्यादिमदावेश में आकर दूसरों के प्रति “तूं अन्धा है” इत्यादि  
कठोर भाषा का प्रयोग करता है, मनसे भी उसका अप्रिय करने का  
विचार करता है वह दूसरे जन्म में स्वयं ही नीच गोत्रादिक अथवा  
अन्धत्वादिक फल का भोक्ता बनता है, अतः ऐसा विचार कर आत्मारथी  
जन कभी भी मन वचन और कायरूप योगों से किसी का भी अप्रिय-  
—अनिष्ट न करे ॥ सू० २ ॥

આ સૂત્રનો સારાંશ એ છે કે ‘જે મનુષ્ય પોતાના ઉત્કર્ષને પ્રાપ્ત કરી  
જાત્યાદિમદાવેશમાં આવીને બીજા પ્રતિ “તું આંધળો છે” ઇત્યાદિ કઠોર ભાષાનો  
પ્રયોગ કરે છે, મનથી પણ તેનું અપ્રિય કરવાનો વિચાર કરે છે તે બીજા જન્મમાં  
સ્વયં જ નીચ ગોત્રાદિક અથવા અન્ધત્વાદિક ફળનો ભોક્તા બને છે, માટે એવો  
વિચાર કરી આત્માર્થી જન કોઈ વખત પણ મન વચન અને કાયાથી કોઈનું  
પણ અપ્રિય—અનિષ્ટ નહિ કરે. ॥ સૂ૦ ૨ ॥

ટોકા—‘સ’ इत्यादि । सः=उच्चकुलोत्पन्नः, अन्धत्वादिकमनुभवन्, अवु-  
ध्यमानः=पूर्वकृतकर्मफलमजानानः, हतोपहतः=अन्धत्वादिनानारोगग्रस्तत्वेन क्षत-  
कायत्वाद् हतः, सकलजननिन्द्यत्वेनोपहतः;

उच्चकुल में जन्म लेने के गर्व से संयमी मुनि अधमकुल में उत्पन्न होकर दीन अथवा अन्धत्वादिक फल का भोक्ता बन कर्त्तव्य और अ-  
कर्त्तव्य से विकल होता हुआ कर्म के फल को नहीं जानकर उसी उच्च  
गोत्रादिक में विपर्यास-विपरीत भाव को प्राप्त करता है, इसी का वर्णन  
करते हैं—“ से अवुज्झमाणे ” इत्यादि ।

सूत्रकार ने इस सूत्र के पहिले यह बात अच्छी तरह से खुलाशा  
कर प्रकट कर दी है कि—“ जो संयमी मुनि उच्चगोत्र में जन्म लेने के  
अभिमान से उन्मत्त बन दूसरों का तिरस्कार करता है, अथवा मन से  
भी उनका अहित विचारता है वह इस कर्म के कटुक फल का जन्मान्तर  
में या इसी भव में भोक्ता बनता है ” इसी बात को फिर से दृढ़ करने  
के अभिप्राय से दोहराते हुए सूत्रकार कहते हैं कि—वह संयमी मुनि जो  
उच्चकुल में उत्पन्न हुआ है और अपने अहंकारजन्य अन्धत्वादिक  
फलविशेष का भोक्ता बना हुआ है, तथा “ जो अन्धत्वादिक फल मुझे  
मिला है वह मेरे ही द्वारा उपार्जित कर्म का कटुक फल है ” इस बोध से  
जो अनभिज्ञ है, तथा जो हतोपहत बना हुआ है—अर्थात् अन्धत्वादिक

ઉંચ કુળમાં જન્મ લેવાના ગર્વથી સંયમી મુનિ અધમ કુળમાં ઉત્પન્ન  
થઈને દીન અન્ધત્વાદિક ફળનો ભોક્તા બની કર્તવ્ય અને અકર્તવ્યના ભાનથી  
વિકલ થઈને તેમજ કર્મના ફળને નહિ જાણીને તે જ ઉંચ ગોત્રાદિકમાં વિપર્યાસ-  
વિપરીત ભાવને પ્રાપ્ત કરે છે. તેનું વર્ણન કરે છે—“ સે અવુજ્જમાણે ” ઇત્યાદિ.

સૂત્રકારે આ સૂત્રના પહેલાં આ વાત સારી રીતે ખુલાસો કરીને પ્રગટ  
કરી છે, કે “ જે સંયમી મુનિ ઉંચ ગોત્રમાં જન્મ લેવાના અભિમાનથી ઉન્મત્ત  
બની ધીજાઓને તિરસ્કાર કરે છે અથવા મનથી પણ તેનું અહિત કરવા વિચારે  
છે તે આ કર્મના કટુક ફળનો જન્માન્તરમાં અગર આ ભવમાં ભોક્તા બને છે.  
આ વાતને ફરીથી દઢ કરવાના અભિપ્રાયથી સૂત્રકાર કહે છે કે—તે સંયમી મુનિ  
જે ઉંચ કુળમાં ઉત્પન્ન થયેલ છે, અને પોતાના અહંકારજન્ય અન્ધત્વાદિક ફળ  
વિશેષનો ભોક્તા થયેલ છે, તથા “ જે અન્ધત્વાદિક ફળ મને મળ્યું છે તે મારા  
જ દ્વારા ઉપાર્જિત કર્મનું કટુક ફળ છે ” એ બોધથી જે અનભિજ છે, તથા જે  
હતોપહત બનેલ છે, અર્થાત્ અન્ધત્વાદિક અને નાના રોગોથી જેનું શરીર દૃત



યદ્વા-ઉચ્ચગોત્રાદિસમુદ્ભવગર્વાત્કર્તવ્યચ્યુતત્વેનાપવાદવાન્ જગજ્જનનાનાદરવચ-  
નદણ્ડેન પટહ્ इव हतः, श्रुतचारित्रलक्षणधर्मरहितत्वेनोपहतः, एवं 'जातिमरणं'  
जातिश्च मरणं च जातिमरणम् अनुपरिवर्तमानः=पारावारतरलतरतरङ्गवत् पुन-  
र्जन्म पुनर्मरणं चेति संसारसागरे परिभ्रमन् भूयो भूयो जन्ममरणमुपलभमानोऽ-  
नित्यत्वेऽपि नित्यत्वमनुभवन् विपर्यासमुपैतीति सम्बन्धः ।

एवम् नाना रोगों से जिसका शरीर क्षत जीर्ण शीर्ण हो रहा है, तथा  
सकलजन जिसकी निंदा करते हैं, अथवा उच्चगोत्रादिक में जन्म प्राप्त  
करने के गर्व से जो कर्तव्यच्युत हो रहा है, “मेरा क्या कर्तव्य है” इस  
बात को ही जो नहीं समझता है, यद्वातद्वा प्रवृत्ति करने से लोगों के  
अनेक अपवादों का जो पात्र बना हुआ है, तथा जिस प्रकार दण्डे से  
ढोल पीटा जाता है उसी प्रकार जगत के जीवों के अनादरकारी वचन-  
रूपी दण्डों की चोट से जो आहत-ताड़ित है, एवम् जो वास्तविक अपने  
श्रुतचारित्ररूप धर्म की आराधना से वंचित है, जिस प्रकार समुद्र की  
तरल तरंगें समुद्र से उठती हैं और समुद्र में ही विलीन होती रहती  
हैं, उसी प्रकार जो इस संसाररूपी अथाह सागर में बारंबार जन्म मरण  
के गोते खाता रहता है, अहितकारी पदार्थों को हितकारी एवम् अनित्य  
परपदार्थों को नित्य मानकर जो उनके ही अपनाने में लगा हुआ है,  
ऐसा प्राणी विपरीतकल्पनावाला ही माना गया है, और वह अपनी इस  
कल्पना की वजह से ही रातदिन दुःखी होता रहता है ।

જીર્ણ શીર્ણ થઈ રહ્યું છે, તથા સકલજન જેની નિંદા કરે છે, અને ઉચ્ચ  
ગોત્રાદિકમાં જન્મ પ્રાપ્ત કરવાના ગર્વથી જે કર્તવ્યચ્યુત થઈ રહેલ છે, “મારું  
શું કર્તવ્ય છે” એ વાતને પણ પોતે સમજતો નથી, આડી અવળી પ્રવૃત્તિ કર-  
વાથી લોકોના અનેક અપવાદોનો જે પાત્ર બનેલ છે, તથા જે પ્રકાર ઢંડાથી ઢોલ  
પીટવામાં આવે છે તે પ્રકાર જગતના જીવોના અનાદરકારી વચનરૂપી ઢંડોની  
ચોટથી જે આહત-તાડિત છે, અને વાસ્તવિક પોતાના શ્રુતચારિત્રરૂપ ધર્મની  
આરાધનાથી વંચિત છે. જે પ્રકારે સમુદ્રની તરલ તરંગો સમુદ્રથી ઉઠે છે અને  
સમુદ્રમાં જ વિલીન થાય છે તે પ્રકાર જે આ સંસારરૂપી અથાગ સાગરમાં વારં-  
વાર જન્મ મરણના ગોથા ખાતા રહે છે. અહિતકારી પદાર્થોને હિતકારી અને  
અને અનિત્ય પદાર્થોને નિત્ય માનીને જે તેને અપનાવવામાં લાગેલ છે. એવા  
પ્રાણી વિપરીત કલ્પનાવાળા જ માનેલ છે, અને તે પોતાની આવી કલ્પનાના બેરે  
જ રાતદિવસ દુઃખી થાય છે



કિન્ન-इह संसारे 'क्षेत्रवास्तु' क्षेत्रं=धान्याद्युत्पत्तिस्थलं, वास्तु=प्रासादादिकं सर्वं ममेत्येवमाचरन्तो ममायमानास्तेषां क्षेत्रवास्तुप्रभृतिषु ममत्वं कुर्वताम् एकेषाम्=केषाञ्चिद्विपर्यस्तमतीनां मानवानाम्, उपलक्षणात् प्राणिनां जीवितम्=असंयमजीवितम् पृथक्=विभिन्नरूपेण स्वस्वापेक्षया प्रियम्=इष्टम्, भवतीति शेषः ।

જો સંયમી ક્ષેત્ર-ધાન્યાદિકા ઉત્પત્તિ સ્થાન; વાસ્તુ-મહલ મકાન આદિ બાહ્ય પદાર્થોં મેં મમત્વશાલી બને હુણ હૈં, વે વાસ્તવિક સંયમી નહીં હૈં, ક્યોંકિ જીવોં મેં બાહ્યપદાર્થોં સે મમત્વ હટે વિના સંયમભાવ હી નહીં ઉત્પન્ન હો સકતા હૈ। જિસ પ્રકાર ઝંડ પર નોંદ લેને વાલે વ્યક્તિ કા પ્રાયઃ અધઃપતન હોતા હૈ ઉસી પ્રકાર જો સંયમ કા ઢોંગ રચકર બાહ્યપદાર્થોં મેં હી મૂર્ચ્છિત હો રહે હૈં ઉનકા ભી અધઃપતન ઉસસે અવરૂપ હોતા હૈ। સંયમ શબ્દ કા અર્થ તો યહી હૈ કિ-ઇન્દ્રિયોં એવમ્ ચિત્ત કી વૃત્તિ જો બાહ્યપદાર્થોં મેં આસક્ત બની હુઈ હૈ ઉસકા નિરોધ હો જાના, પરન્તુ જિનકી મમતા બાહ્ય-પર-વસ્તુઓં મેં જાગૃત હૈ કૈસે માના જા સકતા હૈ કિ ઉનકે સત્ય સંયમભાવ હૈ, અતઃ એસે પ્રાણી સંયમભાવ સે વહુત દૂર હી રહા કરતે હૈં, ઇન્હેં અપના અસંયમ જીવન યાહે યે જિસ કિસી ભી અવસ્થા મેં રહેં પ્રિય હોતા હૈ, ક્યોંકિ શુરુ સે ઇનકા અભ્યાસ હી એસા પડા હુઆ હૈ, અર્થાત્ સંયમ જીવન વ્યતીત કરને લિયે ચિત્તવૃત્તિ એવમ્ ઇન્દ્રિયોં પર વિજય પ્રાપ્ત કરને કી વડી ભારી જરૂરત હોતી હૈ, ઇસ પ્રકાર કા ઉપદેશ ઇન્હેં નહીં મિલા હૈ, ક્યોંકિ ઇનકા જીવન તો વકરે

જે સંયમી ક્ષેત્ર-ધાન્યાદિકનુ ઉત્પત્તિ સ્થાન, વાસ્તુ-મહેલ, મકાન, આદિ બાહ્ય પદાર્થોમાં મમત્વશાળી બનેલાં તેઓ વાસ્તવિક સંયમી નથી, કારણ કે જીવોમાં બાહ્ય પદાર્થોથી મમત્વ દૂર થયા વિના સંયમભાવ જ ઉત્પન્ન થતો નથી. જે પ્રકારે ઝંડ ઉપર ઝંઘ લેવાવાળી વ્યક્તિનો પ્રાયઃ અધઃપતન થાય છે તે પ્રકારે જે સંયમનો ઢોંગ રચીને બાહ્ય પદાર્થોમાં જ મૂર્ચ્છિત થાય છે તેનું પણ અધઃપતન તેનાથી અવશ્ય થાય છે. સંયમ શબ્દનો અર્થ તો એ છે કે-ઇન્દ્રિયો અને ચિત્તની વૃત્તિ જે બાહ્ય પદાર્થોમાં આસક્ત બની છે તેનો નિરોધ થઈ જવો. પરંતુ જેની મમતા બાહ્ય પરવસ્તુઓમાં જાગૃત છે, કેવી રીતે માનવામાં આવે કે તેનો સત્ય સંયમભાવ છે, માટે એવો પ્રાણી સંયમભાવથી જીવન ગમે તે સ્થિતિમાં રહે તેને તે પ્રિય લાગે છે, કારણ કે શરૂઆતથી તેનો અભ્યાસ તેવો થયેલ છે, અર્થાત્ સંયમ જીવન વ્યતીત કરવા માટે ચિત્તવૃત્તિ અને ઇન્દ્રિયો ઉપર વિજય પ્રાપ્ત કરવાની મોટી જરૂરત હોય છે, આ પ્રકારનો ઉપદેશ તેને મળેલ નથી, કારણ કે તેનું જીવન તો બકરાની માફક “મૈ મૈ” કરતાં કરતાં

અન્યચ્ચ-આરક્તમ્=રુચિરરાગરક્તિતમ્, વિરક્તમ્=વિવિધરાગરક્તિતં પટાદિકમ્  
 ‘મણિમ્’ મણિઃ=પદ્મરાગાદિસ્તં, કુણ્ડલમ્=પ્રસિદ્ધમ્, ઉપલક્ષણમેતત્કટકકેયૂરાદી-  
 નામ્, હિરણ્યેન=સુવર્ણેન સહ સ્ત્રીઃ પરિગ્રહ=સ્વાયત્તીકૃત્ય તત્રૈવ ક્ષેત્રવાસ્તુવિવિધવસ્ત્ર-  
 મણિકુણ્ડલકામિન્યાદૌ રક્તાઃ=ગૃધ્રનો મૂઢમતયો વિપર્યાસમુપયન્તિ, વદન્તિ ચ-  
 અત્ર સંસારે તપો વા=અનશનાદિસ્વરૂપમ્, દમો વા=ઇન્દ્રિયનોઇન્દ્રિયોપશમરૂપઃ,  
 નિયમો વા=અહિંસાવ્રતં ન દૃશ્યતે=ન ફલવદનુભૂયતે, તપોદમનિયમવતાં જનનાં  
 કાયક્લેશ એવાન્યન્ન કિમપિ ફલમ્, અપિ ચ દૃષ્ટસ્ય સુખાદેર્હાનિઃ, અદૃષ્ટસુખસ્ય  
 કલ્પનં મહદનુચિતં, ભવાન્તરે ચૈતત્ફલં ભાવીતિ ગ્રહગ્રહિલસ્ય પ્રલાપ એવેતિ વદન્

કી તરહ “મૈં મૈં” કરતા હુઆ પરપદાર્થોં મૈં આસક્તિસંપન્ન હો રહા  
 હૈ । અચિત્તપરિગ્રહરૂપ ખડકીલે રંગ વિરંગે કપડોં કે, પદ્મરાગાદિક  
 મણિયોં કે, કટક કેયૂર કુણ્ડલ આદિકે, સુવર્ણ આદિ ધાતુઓં કે, એવં  
 સ્ત્રી આદિ સચિત્ત પરિગ્રહ કે અપનાને, એવમ્ ઉનકે રક્ષણાદિ કરને મૈં  
 હી इनकी जीवनयात्रा समाप्त हो जाती है, अर्थात् सचिત્त और अचिત્त  
 પરિગ્રહ કે संग्रह एवम् रक्षण करने में ही ऐसे जीव गृद्ध बने रहते हैं,  
 और संयमजीवन को दोष देते हुए कहते हैं कि-“इस संसार में  
 अनशनादिक तप, इन्द्रिय और मन को वश में करने रूप दम, अहिंसा-  
 व्रतादिरूप नियम कुछ भी कार्यकारी नहीं है । क्योंकि इनका आचरण  
 करने वाले व्यक्तियों को कायक्लेश के सिवाय और किसी भी फल  
 की प्राप्ति नहीं होती है, ऐसा भला संसार में कौन समझदार होगा जो  
 प्रत्यक्ष अनुभूत सुखादिकों की कामना से प्रेरित होकर इनका परित्याग

પદાર્થોમાં આસક્તિસંપન્ન હોય છે. અચિત્ત પરિગ્રહરૂપ જાતજાતના રંગબેરંગી  
 કપડાના, પદ્મરાગાદિક મણિઓના, કટક, કેયૂર, કુંડલ આદિના, સુવર્ણ આદિ ધાતુ-  
 ઓના, અને સ્ત્રી આદિ સચિત્ત પરિગ્રહના અપનાવવામાં અને તેના રક્ષણાદિ કરવામાં  
 જ તેની જીવનયાત્રા સમાપ્ત થઈ જાય છે, અર્થાત્ સચિત્ત અને અચિત્ત પરિ-  
 ગ્રહનો સંગ્રહ અને રક્ષણ કરવામાં જ એવા ગૃહ્થ બની રહે છે, અને સંયમ જીવનને  
 દોષ દેતાં દેતાં કહે છે કે “આ સંસારમાં અનશનાદિક તપ, ઇન્દ્રિય અને મનને  
 વશ કરવારૂપ દમ, અહિંસાવ્રતાદિરૂપ નિયમ કોઈપણ કાર્યકારી નથી, કારણ કે તેનું  
 આચરણ કરવાવાળા વ્યક્તિઓને કાયકલેશ સિવાય બીજા કોઈ પ્રકારનું ફળ મળતું  
 નથી. એવો ભલો ! સંસારમાં કોણ સમજદાર હશે જે પ્રત્યક્ષ અનુભૂત સુખા-  
 દિકોને છોડીને અદૃષ્ટ સુખાદિકોની કામનાથી પ્રેરિત બનીને તેનો પરિત્યાગ કરશે ?

વાલઃ=પરિગ્રહકટુકફલાનભિજ્ઞઃ, સમ્પૂર્ણ યથાસમયપ્રાપ્તકામિન્યાદ્યાસક્તિપૂર્વકં  
 યથા સ્યાત્તથા જીવિતુકામઃ અસંયમેન દીર્ઘકાલજીવનાર્થી લાલપ્યમાનઃ=કામ-  
 ભોગતીવ્રાભિલાષેણ વ્યર્થં પ્રલપન્ મૂઢઃ=વિવેકવિકલઃ પૂર્વોક્તવિશેષણવિશિષ્ટઃ, વિપ-  
 ર્યાસમ્=વૈપરીત્યમ્ મિથ્યાત્વમિત્યર્થસ્તદ્યથા-તત્ત્વેડતત્ત્વબુદ્ધિમ્, અતત્ત્વે તત્ત્વબુદ્ધિમ્,  
 કુદેવ-કુગુરુ-કુધર્મેષુ સુદેવ-સુગુરુ-સુધર્મબુદ્ધિમ્, ઇષ્ટેષ્વનિષ્ટબુદ્ધિમ્, અનિષ્ટેષ્વ-  
 નિષ્ટબુદ્ધિમ્, इत्थम् विपर्ययम् उपैति=પ્રાપ્નોતિ । ઉક્તञ्च-

કરેગા?, यह तो एक इस प्रकार की कल्पना है कि-जिस प्रकार कोई व्यक्ति  
 अपने घर में झरते हुए अमृत को छोड़कर किसी के बहकावे में आकर  
 “पर्वत में अमृत झरता है” इस ख्याल से उसकी चाहना में उसे छोड़ वहां  
 दौड़ा जाता है । जो हमारी इन्द्रियों के गोचर है वही वास्तविक है, इसके परे  
 स्वर्ग नरकादि कुछ भी नहीं है, प्रत्यक्ष इन्द्रियों के सुख सिवाय परोक्ष  
 स्वर्गादिक सुख है, यह सिर्फ एक श्रद्धा की ही वस्तु है वास्तविक कुछ नहीं  
 है । तथा “तपश्चर्या का फल इस भव में न मिले तो न सही परभव में तो  
 मिलेगा ही” इस प्रकार की कल्पना भी ग्रहगृहीत पुरुष के प्रलाप जैसी ही  
 है । जैसे भूतादि के आवेश से युक्त प्राणी का प्रलाप निरर्थक होता है उसी  
 प्रकार “इस भव में तप संयमरूप कष्ट को झेलकर प्राणी परलोकसं-  
 बंधी सुख समृद्धि को प्राप्त करता है” यह कहना भी निरर्थक है । इस  
 प्रकार की विपरीत मान्यता उन अज्ञानी पुरुषों की है जो परिग्रह के  
 फल से अनभिज्ञ हैं । रातदिन परिग्रह के बटोरने एवम् उसकी वृद्धि  
 करने में दत्तावधान प्राणी की दृष्टि में संयम जीवन जैसे सुन्दर सिद्धांत

એ તો એક આ પ્રકારની કલ્પના છે કે-જે પ્રકારે કોઈ વ્યક્તિ પોતાના ઘરમાં ઝરતાં  
 અમૃતને છોડીને કોઈના ભરમાવવાથી “પર્વતમાં અમૃત ઝરે છે” તેવા ખ્યાલથી  
 તેની આહવામાં તેને છોડીને ત્યાં દોડી જાય છે. જે અમારી ઇન્દ્રિયોને ગોચર  
 છે તે વાસ્તવિક છે. તેના સિવાય સ્વર્ગ નરકાદિ કંઈ પણ નથી, પ્રત્યક્ષ ઇન્દ્રિ-  
 યોના સુખ સિવાય પરોક્ષ સ્વર્ગાદિક સુખ છે તે ફક્ત એક શ્રદ્ધાની વસ્તુ છે-  
 વાસ્તવિક કંઈ પણ નથી. અને “તપશ્ચર્યાનું ફળ આ ભવમાં નહિ મળે તો  
 નહિ પરભવમાં તો મળશે જ.” આવા પ્રકારની કલ્પના પણ ગ્રહગૃહીત પુરુષના  
 પ્રલાપ જેવી જ છે જેમ ભૂતાદિકના આવેશથી યુક્ત પ્રાણીનો પ્રલાપ નિરર્થક  
 બને છે તે પ્રકારે “આ ભવમાં તપસંયમરૂપ કષ્ટને ભોગવી પ્રાણી પરલોક  
 સંબંધી સુખ સમૃદ્ધિને પ્રાપ્ત કરે છે” એમ કહેવું પણ નિરર્થક છે. આવી  
 વિપરીત માન્યતા તેવા અજ્ઞાની પુરુષોની છે જે પરિગ્રહના કટુક ફળથી અન-  
 ભિજ્ઞ છે. રાત દિન પરિગ્રહના વધારવામાં દત્તાવધાન પ્રાણીની દૃષ્ટિમાં સંયમ

કા કોઈ મહત્વ ન હો તો इसमें आश्चर्य करने की कोई बात नहीं है, कारण कि कहावत है—जो नृत्य करने में सिद्धहस्त नहीं है, वह आंगन को देड़ा कहता है। परिग्रहादि के बोज़ से प्राणी की तमाम शक्तियाँ इतस्तनः बिखर जाती हैं अतः वे बिखरी हुई शक्तियाँ “संयमित जीवन बिखरी हुई शक्तियाँ को केन्द्रित करने वाला है” इस प्रकार कैसे महत्त्व दे सकती हैं. परन्तु यह मानना अवश्य पड़ेगा कि—जिस प्रकार सूर्य की किरणें जब किसी विशेष काच में केन्द्रित करली जाती हैं तो उनसे सहसा अग्नि प्रज्वलित हो उठती है, उसी प्रकार असंयम अवस्था में जो आत्मिक शक्तियाँ इधर उधर विषय कषायों में फँसकर अस्तव्यस्त हो रही थीं—जब वे संयमित जीवन से केन्द्रित करली जाती हैं तो इनसे भी एक ऐसा प्रवाह निकलता है जो प्राणी के जीवन में अपूर्व परिवर्तन कर देता है। लगाम जिस प्रकार स्वच्छंद घोड़े को, अंकुश मदोन्मत्त गज-राज को बश में कर देता है, उसी प्रकार संयम भी जीवन को योग्य मार्ग पर पहुँचा देता है। यही एक ऐसा मार्ग है जो असंयम जीवन से प्राणी की रक्षा करता है। अतः ऐसे सुन्दर और हितावह मार्ग का सच्चे भावों से जो आराधन नहीं करते हैं वे प्राणी कैसे इससे उत्पन्न होने वाले लाभ को पा सकते हैं?। माना जा सकता है कि—संयम जीवन को

જીવન જેવા સુદર સિદ્ધાંતનો કોઈ મહત્વ ન હોય તો તેમાં આશ્ચર્ય થાય તેવી કોઈ વાત નથી, કારણ કે કહેવત છે—જે નૃત્ય કરવામાં સિદ્ધહસ્ત નથી તે આંગણુને વાંકું કહે છે. પરિગ્રહાદિના બોજથી પ્રાણીની તમામ શક્તિઓ આડી અવળી વિખરાઈ જાય છે માટે તે વિખરાયેલી શક્તિઓ “સંયમિત જીવન જે વિખરાઈ ગયેલી શક્તિઓને કેન્દ્રિત કરવાવાળું છે” આ પ્રકારે તે કેવી રીતે મહત્વ ધરી શકે. પરંતુ તે અવશ્ય માનવું પડશે કે જે પ્રકાર સૂર્યની કિરણો ન્યારે કોઈ વિશેષ કાચમાં કેન્દ્રિત કરવામાં આવે છે તો તેનાથી સહેજે અગ્નિ પ્રજ્વલિત થાય છે, તેવા પ્રકારે અસંયમ અવસ્થામાં જે આત્મિક શક્તિઓ આડી અવળી વિષય કષાયોમાં ફસાને અસ્તવ્યસ્ત થઈ રહી હોતી, ન્યારે તે સંયમિત જીવનથી કેન્દ્રિત કરવામાં આવે છે તો તેનાથી પણ એક એવો પ્રવાહ નીકળે છે જે પ્રાણીના જીવનમાં અપૂર્વ પરિવર્તન કરે છે. લગામ જેવી રીતે સ્વચ્છંદ ઘોડાને, અંકુશ મદોન્મત્ત ગજરાજને વશમાં કરે છે તે પ્રકારે સંયમ પણ જીવનને યોગ્યમાર્ગ ઉપર પહોંચાડે છે. તે એક જ માર્ગ છે જે અસંયમ જીવનથી પ્રાણીની રક્ષા કરે છે, માટે આવા સુંદર અને હિતાવહ માર્ગને સાચા ભાવોથી જે આરાધન કરતા નથી તે પ્રાણી કેવી રીતે તેનાથી ઉત્પન્ન થતાં લાભને નેળવી શકે?

“દારાઃ પરિભવકારા, વન્ધુજનો વન્ધનં ત્રિપં વિપયાઃ ।

કોડ્યં જનસ્ય મોહો, યે રિપવસ્તેષુ સુહૃદાશા ” ॥ ૧ ॥ ઇતિ ।

પૂર્ણરૂપ સે વ્યતીત કરને કે લિયે, તથા ઉસકે રક્ષણ કે લિયે કષાયોં પર વિજય પ્રાપ્ત કરને કી સર્વ પ્રથમ ઘડી ભારી જરૂરત હૈ । પરિગ્રહ કો અપનાના યહ લોભકષાય કે ઉદય મેં હી હોતા હૈ । અસંયમી જીવ અસંયમ અવસ્થા મેં રહતે હુએ હી અપના જીવન વ્યતીત કરતે હૈ, તથા યહ ઇચ્છતે હૈ કિ “મૈને જો યહ પરિગ્રહાદિક સંગૃહીત કિયા હૈ ઉસકે ભોગને કે લિયે મૈ અધિક સે અધિક જીઝં ” । અસંયમી જીવ પરપદાર્થોં કે ઉપભોગ કરને મેં હી અધિક આસક્તિસંપન્ન હોતે હૈ—ઇન્હેં જિતની ઇન પરપદાર્થોં કો ભોગને કી તીવ્ર અભિલાષા રહતી હૈ ઉસસે શતાંશ ભી આત્મકલ્યાણમય સંયમિજીવન કી તર્ફ ઇનકી રુચિ નહીં હોતી । જન્માન્તર સે મિથ્યાત્વ કા સંસર્ગ ચલા આતા હૈ । જૈનકુલ મેં ઉત્પન્ન હોને પર ભી ઉનકે ઇસ મિથ્યાત્વ કા નાશ નહીં હોતા । એસે હી જીવ અનાદિમિથ્યાદૃષ્ટિ કહલાતે હૈ । જો વર્તમાન ભવ મેં કુગુરુ કુદેવ ઓર કુધર્મ કી સંગતિ મેં પડકર અપને મેં અતત્ત્વરુચિ કો સ્થાન દેતે હૈ વે મિથ્યાદૃષ્ટિ જીવ હૈ । યે જીવ ઇષ્ટ પદાર્થોં કો અનિષ્ટકારી, તથા અનિષ્ટ પદાર્થોં કો ઇષ્ટકારી માના કરતે હૈ । વે યહ નહીં વિચારતે હૈ કિ—

માનવામાં આવે છે કે—સંયમ જીવને પૂર્ણ રૂપથી વ્યતીત કરવા માટે તથા તેના રક્ષણ માટે કષાયો પર વિજય પ્રાપ્ત કરવાની સર્વ પ્રથમ જરૂરત છે. પરિગ્રહને અપનાવવો તે લાભકષાયના ઉદયમાં જ થાય છે. અસંયમી જીવ અસંયમ અવસ્થામાં રહીને પોતાનું જીવન વ્યતીત કરે છે. તથા એ ગ્રાહે છે કે “ મેં જે આ પરિગ્રહાદિક સંગ્રહ કર્યો છે તેને ભોગવવાને માટે હું વધારેમાં વધારે જીવું ” અસંયમી જીવ પરપદાર્થોના ઉપયોગ કરવામાં જ અધિક આસક્તિસંપન્ન હોય છે. તેને જેટલી પરપદાર્થો ભોગવવાની તીવ્ર અભિલાષા રહે છે તેનાથી સોમા ભાગની આત્મકલ્યાણમય સંયમ જીવનની તરફ તેની રૂચિ ઘટી નથી. જન્માન્તરથી મિથ્યાત્વનો સંસર્ગ ગ્રાહ્યો આવે છે. જૈન કુળમાં ઉત્પન્ન થવા છતાં પણ તેના આ મિથ્યાત્વનો નાશ થતો નથી. એવા જીવ અનાદિમિથ્યાદૃષ્ટિ કહેવાય છે. જે વર્તમાન ભવમાં કુગુરુ કુદેવ અને કુધર્મની સંગતિમાં પડીને પોતાનામાં અતત્ત્વરુચિને સ્થાન આપે છે તે મિથ્યાત્વદૃષ્ટિ જીવ છે તે જીવ ઇષ્ટ પદાર્થોને અનિષ્ટકારી તથા અનિષ્ટ પદાર્થોને ઇષ્ટકારી માને છે. તે એવું વિચારતા નથી કે—

સર્વથા વિપર્યસ્તોઽનેકભવેષુ પરિભ્રમન્ ભ્રાન્તઃ સંયમાત્મઘાતમેવ કરોતીતિ તાત્પર્યમ્ । સૂત્રે ઉપૈતીત્યત્રૈકવચનમાર્પત્વાત્ ॥ સૂ૦ ૩ ॥

યે પુનરવિપર્યસ્તાઃ સંયમિનસ્તેષાં કર્તવ્યમુપદિશતિ—‘ઇળમેવ’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્—ઇળમેવ નાવકંઘંતિ, જે જના ધ્રુવચારિણો । જાહમરણ પરિજ્ઞાય, ચરેઽસંકમણે દઢે ॥ નત્થિકાલસ્સઽણાગમો ॥ સૂ૦ ૪ ॥

છાયા—ઇદમેવ નાવકાહ્નન્તિ, યે જના ધ્રુવચારિણઃ । જાતિમરણ પરિજ્ઞાય, ચરેદશઙ્કમના દઢઃ ॥ નાસ્તિ કાલસ્યાઽનાગમઃ ॥ સૂ૦ ૪ ॥

“દારાઃ પરિભવકારા, -વન્ધુજનો વન્ધનં વિપં વિષયાઃ ।

કોઽયં જનસ્ય મોહો, યે રિપવસ્તેષુ સુહૃદાશા” ॥ ૧ ॥

યે જો સ્ત્રી આદિક પદાર્થ હૈં વે મેરા નિરસ્કાર કરને વાલે હૈં । વન્ધુ જન એક વન્ધન હૈં । વિષયાદિક વિષ હૈં । એસા કયા ઇસ પ્રાણી કા મોહ હૈં જો અપને શત્રુઓં કો ભી મિત્ર સમજ રહા હૈં । ઇસ પ્રકાર યહ પ્રાણી વિપરીનબુદ્ધિવાલા વનકર અનેક ભવોં મેં પરિભ્રમણ કર હેયોપાદેય કે વિવેક સે રહિત હોકર સંયમસ્વ અપની આત્મા કા ઘાત કરતા રહતા હૈં । આત્મા કા સ્વભાવ સંયમસ્વરૂપ હૈં, ઇસકો પાલન નહીં કરના, અથવા આત્મા કો સંયમી નહીં બનાના આત્મા કી ઘાત કરના હૈં ॥ સૂ૦ ૩ ॥

જો સત્ત્વે ચારિત્ર સે યુક્ત હૈં વે ઇસ અસંયમિજીવન કો પસન્દ નહીં કરતે હૈં, યહ વાત ઇસ સૂત્ર મેં પ્રદર્શિત કરતે હૈં—“ઇળમેવ નાવ-કંઘંતિ’ ઇત્યાદિ ।

“દારાઃ પરિભવકારા, વન્ધુજનો વન્ધનં વિપં વિષયાઃ ।

કોઽયં જનસ્ય મોહો, યે રિપવસ્તેષુ સુહૃદાશા” ॥ ૧ ॥

આ જે સ્ત્રી આદિક પદાર્થ છે તે મારે નિરસ્કાર કરવાવાળા છે. બંધુજન એક બંધન છે. વિષયાદિક વિષ છે. એવો કયો આ પ્રાણીનો મોહ છે જે પોતાના શત્રુઓને પણ મિત્ર સમજે છે. આ પ્રકારે આ પ્રાણી વિપરીત બુદ્ધિવાલો બનીને અનેક લવોમાં પરિભ્રમણ કરી હેયોપાદેયના વિવેકથી રહિત થઈને સંયમરૂપ પોતાના આત્માનો ઘાત કરતા રહે છે. આત્માનો સ્વભાવ સંયમસ્વરૂપ છે તેનું પાલન નહિ કરવું અથવા આત્માને સંયમી નહિ બનાવવો તે આત્માની ઘાત કરવા બરાબર છે. ॥ સૂ૦ ૩ ॥

જે સાચા ચારિત્રથી યુક્ત છે તે આવા અસંયમિજીવનને પસંદ કરતા નથી. આ વાત આ સૂત્રમાં પ્રદર્શિત કરે છે—“ઇળમેવ નાવકંઘંતિ’ ઇત્યાદિ.



‘ઇદ’-મિત્યાદિ । “ ધ્રુવચારિણઃ ” ધ્રુવતિ=વ્રજતિ આત્મતઃ પૃથગ્ભવતિ કર્મ-  
ચયો યેન તદ્ ધ્રુવં=ચારિત્રં, તત્ત્વચરિતું શીલં યેષાં તે ધ્રુવચારિણઃ ।

યદ્વા-ધ્રુવો મોક્ષસ્તદ્દેતુત્વાત્તપોજ્ઞાનક્રિયાદિકં કાર્યકારણયોરભેદાત્, તત્ત્વચરણ-  
શીલા ધ્રુવચારિણઃ । યે જના ધ્રુવચારિણઃ, તે ઇદમેવ અસંયમજીવિતં પૂર્વશુક્તભોગાદિકં  
વા નાવકાઙ્ક્ષન્તિ=નેચ્છન્તિ । ‘ જાતિમરણં ’ જાતિશ્ચ મરણં ચ જાતિમરણં, જાતિ-  
મરણં યત્ર સં જાતિમરણઃ=સંસારસ્તં વા જ્ઞ-પરિજ્ઞયા જ્ઞાત્વા ‘ અશઙ્કિતમનાઃ ’ અશઙ્કિ-  
તં મનો યસ્ય સોઽશઙ્કિતમનાઃ=તપોદમનિયમવૈફલ્યાશઙ્કાશૂન્યો જિનવચનશ્રદ્ધાવાન્,  
અત એવ દૃઢઃ=વિશ્રોતસિકારહિતઃ, પરીપહોપસર્ગૈર્નિષ્પકમ્પો વા ચરેત્=વિહરેત્ ।

ધ્રુવ શબ્દ કા અર્થ ચારિત્ર હૈ, ક્યોંકિ-“ ધ્રુવતિ-વ્રજતિ આત્મનઃ  
પૃથગ્ભવતિ કર્મચયો યેન તત્ ધ્રુવમ્ ” કર્મસમૂહ જિસકે દ્વારા આત્મા સે  
પૃથક્ હોતા હૈ વહ ધ્રુવ હૈ, વહ ચારિત્રસ્વરૂપ આત્મા કા નિજધર્મ હૈ ।

ભાવાર્થ—ચારિત્ર આરાધન કે દ્વારા આત્મા જ્યોં જ્યોં અવિરતિ,  
પ્રમાદ, કષાય ઓર અશુભ યોગોં કા નિગ્રહ કરતા જાતા હૈ, ત્યોં ત્યોં ઇસ  
આત્મા મેં અપૂર્વ અપૂર્વ ઉજ્જ્વલતા કી જાગૃતિ હોતી જાતી હૈ । ઇસ ઉજ્જ્વ-  
લતા કી જાગૃતિ મેં આત્મા સંવર ઓર નિર્જરા કે દ્વારા સમસ્ત કર્મોં કા  
નાશ કર દેતા હૈ, અર્થાત્ સમસ્ત કર્મ આત્મા સે પૃથક્ હો જાતે હૈ । તપ  
શ્રુત ઓર વ્રતોં કા પાલન કરને વાલા આત્મા હી ધ્યાનરૂપ રથ પર આરૂઢ  
હોકર સંવર ઓર નિર્જરા કે સુન્દર મૈદાન મેં આકર અપને અન્તિમ મોક્ષ  
પુરુષાર્થ કો પ્રાપ્ત કર લેના હૈ । સુવર્ણ જૈસે જૈસે અગ્નિ મેં તપાયા જાતા હૈ  
વૈસે વૈસે વહ બિલકુલ નિર્મલ હોતા જાતા હૈ, ડસી પ્રકાર કર્મોં કે અનાદિ  
સંબંધ સે આવૃત યહ આત્મા ભી મલિનદશાસંપન્ન હૈ, ડસકી ઇસ

ધ્રુવ શબ્દનો અર્થ ચારિત્ર છે, કારણ કે “ ધ્રુવતિ વ્રજતિ આત્મનઃ પૃથગ્ભવતિ  
કર્મચયો યેન તત્ ધ્રુવમ્ ” કર્મસમૂહ જે દ્વારા આત્માથી પૃથક્ થાય છે તે  
ધ્રુવ છે, તે ચારિત્રસ્વરૂપ આત્માનો નિજધર્મ છે.

ભાવાર્થ—ચારિત્ર આરાધનદ્વારા આત્મા જેમ જેમ અવિરતિ, પ્રમાદ, કષાય  
અને અશુભ યોગોનો નિગ્રહ કરતા રહે છે તેમ તેમ આ આત્મામાં અપૂર્વ અપૂર્વ  
ઉજ્જ્વલતાની ભવતિ થાય છે. આ ઉજ્જ્વલતાની ભવતિમાં આત્મા સંવર અને  
નિર્જરાદ્વારા સમસ્ત કર્મોનો નાશ કરે છે, અને સમસ્ત કર્મ આત્માથી પૃથક્ થઈ  
જાય છે. તપ શ્રુત અને વ્રતોના પાલન કરવાવાળા આત્મા જ ધ્યાનરૂપ રથ પર  
આરૂઢ થઈ સંવર અને નિર્જરાના સુંદર મેદાનમાં આવીને પોતાના અન્તિમ મોક્ષ  
પુરુષાર્થને પ્રાપ્ત કરી લે છે. સુવર્ણને અગ્નિમાં જેમ જેમ વધારે તપાવવામાં  
આવે તેમ તેમ તે વધારે નિર્મળ બને છે. તે પ્રકારે કર્મોના અનાદિ સંબંધથી



મલિનતા કો દૂર કરને મેં ચારિત્ર કી અરાધના અગ્નિ કા કામ દેતી હૈ । કર્મોં કા સંબંધ આત્મા કે સાથ આજ કા નહીં હૈ કિન્તુ યહ તો અનાદિકાલ કા હૈ, યહ વાત કઈ વાર લિખી જા ચુકી હૈ । યે કર્મપુદ્ગલ અચેતન હોને સે સ્વયં આત્મા કે પાસ નહીં જાતે કિન્તુ અનાદિકાલ સે વદ્ધરૂપ ઇસ આત્મા કે યોગરૂપ પરિણામ મેં એસી આકર્ષક શક્તિ હૈ કિ જિસકે દ્વારા વે કર્મરૂપ પુદ્ગલ ખીંચે જાતે હૈ—અર્થાત્ આત્મા જવ કષાયોં કે દ્વારા અત્યન્ત સંતપ્ત હો જાતા હૈ તવ યોગ દ્વારા કર્મપુદ્ગલોં કો—તપા હુઆ લોહા જિસ તરહ પાની કો ચારોં ઓર સે ખીંચતા હૈ ઠીક ડસી તરહ ખીંચતા હૈ, ઓર વે ખાયે હુઅ ભોજન કે ઇસ રુધિરાદિરૂપ કી તરહ અપને હી આપ ભિન્ન-ભિન્ન રૂપ સે પરિણત હો જાતે હૈ । કર્મપુદ્ગલ નવીન-નવીન તયાર નહીં હોતે, કારણ કિ “સતો ન વિનાશઃ અસતશ્ચ ઉત્પત્તિર્ન” સત્ કા વિનાશ ઓર અસત્ કી ઉત્પત્તિ નહીં હોતી । આત્મા કષાયોં સે જવ સંતપ્ત હો જાતા હૈ તવ મન, વચન ઓર કાયરૂપ યોગોં કે દ્વારા જિન કાર્મણ વર્ગણાઓં કો ખીંચતા હૈ ડન્હીં કી કર્મસંજ્ઞા હો જાતી હૈ ।

પ્રશ્ન—આપને અમી તો યહ કહા હૈ કિ—આત્મા કર્મોં કે સાથ અનાદિકાલ સે વંધ રહા હૈ, ઓર અવ આપ કહતે હૈ કિ—જિન કાર્મણ

આવૃત આ આત્મા પણ મલિનદશાસંપન્ન છે, તેની આ મલિનતાને દૂર કરવામાં ચારિત્રની આરાધના અગ્નિનું કામ આપે છે. કર્મોના સંબંધ આત્માની સાથે આજનો નથી પણ અનાદિ કાળનો છે, એ વાત ઘણી વખત લખાઈ ચુકી છે. આ કર્મ પુદ્ગલ અચેતન હોવાથી પોતે આત્માની પાસે નથી જતાં પણ અનાદિ કાળથી બદ્ધરૂપ આ આત્માને યોગરૂપ પરિણામમાં એવી આકર્ષક શક્તિ છે કે જેના દ્વારા તે કર્મરૂપ પુદ્ગલ ખેંચાઈ જાય છે. અર્થાત્ આત્મા ન્યારે કપાયોદ્વારા અત્યન્ત સંતપ્ત થાય છે ત્યારે યોગદ્વારા કર્મ પુદ્ગલોને—તપેલું લોહું જેવી રીતે પાણીને ત્યારે બાબુથી ખેંચે છે, ઠીક તે પ્રમાણે ખેંચે છે. અને તે ખવાયેલાં ભોજનનું આ રુધિરાદિ રૂપની માફક પોતાની મેળે જ ભિન્ન ભિન્ન રૂપથી પરિણત થાય છે. કર્મપુદ્ગલ નવીન નવીન તૈયાર થતાં નથી. કારણ કે “સતો ન વિનાશઃ અસતશ્ચ ઉત્પત્તિર્ન” સત્નો વિનાશ અને અસત્ની ઉત્પત્તિ થતી નથી. આત્મા કપાયોથી ન્યારે સંતપ્ત થાય છે ત્યારે મન, વચન અને કાયા રૂપ યોગોદ્વારા જે કાર્મણ વર્ગણાઓને ખેંચે છે તેની કર્મસંજ્ઞા થઈ જાય છે.

પ્રશ્ન—આપે કહ્યું તો એ કહ્યું કે આત્મા કર્મોની સાથે અનાદિ કાળથી બંધી રહ્યા છે, અને કહે આપ કહે છે કે જે કાર્મણ વર્ગણાઓને ખેંચે છે

વર્ગનાઓં કો સ્ત્રીંચતા હૈ ઉન્હોં કી કર્મસંજ્ઞા હો જાતી હૈ । ઇસસે તો આત્મા ઓર કર્મ કા સંબંધ સાદિ સિદ્ધ હોતા હૈ ।

ઉત્તર—અભિપ્રાય કો સમજે વિના હી યહ પ્રશ્ન કિયા ગયા હૈ । કહને કા તાત્પર્ય યહી હૈ કિ—યહ જીવાત્મા અનાદિ સે હી કર્મબંધ સહિત હૈ । ઇસકે સાથ કોઈ નિયમિત સમય સે કર્મબંધ નહીં હુઆ । એસા નહીં થા કિ જીવ અલગ-ન્યારા થા ઓર કર્મ ન્યારે થે, પીછે સે ઇન દોનોં કા સંયોગ હુઆ હો । કિન્તુ જિસ પ્રકાર મેરુગિરિ આદિ અકૃત્રિમ સ્કન્ધોં મેં અનંત પુદ્ગલપરમાણુ અનાદિ સે હી બંધરૂપ હો રહે હૈં, ઓર ઉનમેં પુરાને પુદ્ગલપરમાણુ ભિન્ન હોતે રહતે હૈં, ઓર નવીન આકર મિલતે હૈં । ઇસી પ્રકાર ઇસ સંસાર મેં એક જીવદ્રવ્ય ઓર અનન્ત કર્મરૂપ પુદ્ગલપરમાણુઓં કા પરસ્પર મેં અનાદિકાલ સે સંબંધ હૈ । ઇનમેં સે કઈ કર્મપરમાણુ ભિન્ન હોતે રહતે હૈં ઓર કઈ કર્મપરમાણુ મિલતે રહતે હૈં । ઇસ પ્રકાર ઇન કર્મપરમાણુઓં મેં પરસ્પર મિલના વિછુડના હોતા રહના હૈ ।

પ્રશ્ન—પુદ્ગલપરમાણુ તો રાગાદિક કે નિમિત્ત કો પાકર કર્મરૂપ હુઆ કરતે હૈં, ફિર વે અનાદિ સે કર્મરૂપ અવસ્થા વાલે કૈસે માને જા સકતે, કારણ કિ કાર્મણ વર્ગના, જિસસે કર્મપર્યાય ઉત્પન્ન હોતી હૈ વહ સ્વયં પુદ્ગલ દ્રવ્ય હૈ ? ।

તેની કર્મસંજ્ઞા થાય છે તેથી તો આત્મા અને કર્મનો સંબંધ સાદિ સિદ્ધ થાય છે.

ઉત્તર—અભિપ્રાયને સમજ્યા વિના જ પ્રશ્ન કર્યો છે. કહેવાનો તાત્પર્ય એ છે કે—આ જીવાત્મા અનાદિથી જ કર્મબંધસહિત છે. તેની સાથે કોઈ નિયમિત સમયથી કર્મબંધ થયેલ નથી. એવું ન હતું કે જીવ અલગ-જુદો હતો અને કર્મ પણ જુદા હતાં, પાછળથી એ બન્નેનો સંયોગ થયો હોય, પણ જેવી રીતે મેરુગિરિ આદિ અકૃત્રિમ સ્કન્ધોમાં અનંત પુદ્ગલપરમાણુ અનાદિથી જ બંધરૂપ થઈ રહેલ છે, અને તેમાં પુરાણા પુદ્ગલપરમાણુ ભિન્ન થતાં રહે છે અને નવા આવીને મળે છે. આ પ્રકાર આ સંસારમાં એક જીવદ્રવ્ય અને અનંત કર્મરૂપ પુદ્ગલપરમાણુઓના પરસ્પરમાં અનાદિ કાળથી સંબંધ છે, તેમાંથી કોઈ કર્મપરમાણુ ભિન્ન થતાં રહે છે અને કોઈ પુદ્ગલપરમાણુ મળતાં રહે છે. આ પ્રકાર આ કર્મપરમાણુઓમાં પરસ્પર મળવું, છુટા થવું વિગેરે થતું જ રહે છે.

પ્રશ્ન—પુદ્ગલપરમાણુ તો રાગાદિકના નિમિત્તને લઈને કર્મરૂપ થયા કરે છે, પછી તે અનાદિથી કર્મરૂપ અવસ્થાવાળા કેવી રીતે માનવામાં આવે. કારણ કે કાર્મણવર્ગના જેનાથી કર્મપર્યાય ઉત્પન્ન થાય છે તે સ્વયં પુદ્ગલદ્રવ્ય છે ?

ઉત્તર—નિમિત્ત કી સંભાવના તો નવીન કાર્ય કી ઉત્પત્તિ મેં હી કાર્યકારી માની જાતી હૈ । અનાદિ અવસ્થા મેં નિમિત્ત કી કલ્પના કરના ઉસકી અનાદિતા પર બટ્ટા લગાના હૈ । જહાં પર નિમિત્ત હૈ વહાં અનાદિતા નહીં, ઔર જહાં અનાદિતા હૈ વહાં પર નિમિત્ત નહીં । નિમિત્ત કા સમ્બન્ધ સાદિતા કે સાથ હુઆ કરતા હૈ । જૈસે નવીન પુદ્ગલપરમાણુ કા દો ગુણ અધિક બંધ સ્નિગ્ધ ઔર રૂક્ષ કે દ્વારા હોતા હૈ । યહાં પર નવીન પુદ્ગલ પરમાણુઓં કે બંધ કે સમ્બન્ધ મેં સ્નિગ્ધ ઔર રૂક્ષરૂપ નિમિત્ત કી કલ્પના કરની પડતી હૈ, પરન્તુ મેરુગિરિઆદિ અકૃત્રિમ સ્કન્ધોં મેં અનાદિ પુદ્ગલપરમાણુ કે બંધ કે સમ્બન્ધ મેં નિમિત્ત કી કલ્પના કરના કોઈ મહત્ત્વ નહીં રખતા । ઠીક ઈસી પ્રકાર નવીન પુદ્ગલપરમાણુઓં કા કર્મરૂપ હોના રાગાદિકનિમિત્તાધીન હૈ, પરન્તુ જિન પુદ્ગલપરમાણુઓં કી અનાદિકાલ સે હી કર્મરૂપ અવસ્થા હો રહી હૈ, ઉસમેં નિમિત્ત કી કલ્પના કરના કોઈ બી પ્રયોજન કી પુષ્ટિ નહીં કરતા । શાસ્ત્ર મેં ઈસી વાત કા સમાધાન યોં લિખા હૈ—

“ નૈવમ્, અનાદિપ્રસિદ્ધદ્રવ્યકર્મસમ્બન્ધસ્ય તત્ર હેતુત્વેનોપાદાનાત્ ”  
કોઈ વાદી પ્રશ્ન કરતા હૈ કિ જવ રાગાદિક ભાવકર્મ કા કારણ દ્રવ્યકર્મ

ઉત્તર—નિમિત્તની સંભાવના તો નવીન કાર્યની ઉત્પત્તિમાં જ કાર્યકારી માનવામાં આવે છે, અનાદિ અવસ્થામાં નિમિત્તની કલ્પના કરવી તે તેની અનાદિતા ઉપર બટ્ટો લગાડવા બરાબર છે. જે ઠેકાણે નિમિત્ત છે ત્યાં અનાદિતા નહીં. અને જ્યાં અનાદિતા છે ત્યાં નિમિત્ત નહિ. નિમિત્તનો સંબંધ સાદિતાની સાથે થયા કરે છે. જેમ નવીન પુદ્ગલપરમાણુના બે ગુણ અધિક બંધ સ્નિગ્ધ અને રૂક્ષ દ્વારા થાય છે. આ ઠેકાણે નવીન પુદ્ગલ પરમાણુઓના બંધના સંબંધમાં સ્નિગ્ધ અને રૂક્ષરૂપ નિમિત્તની કલ્પના કરવી પડે છે, પરંતુ મેરુગિરિ આદિ અકૃત્રિમ સ્કન્ધોમાં અનાદિ પુદ્ગલપરમાણુના બંધના સંબંધમાં નિમિત્તની કલ્પના કરવી તે કોઈ મહત્ત્વ રાખતું નથી. ઠીક તે પ્રકાર નવીન પુદ્ગલપરમાણુઓનું કર્મરૂપ હોવું રાગાદિક નિમિત્તાધીન છે, પરંતુ જે પુદ્ગલપરમાણુઓની અનાદિ કાળથી જ કર્મરૂપ અવસ્થા થઈ રહેલ છે, તેમાં નિમિત્તની કલ્પના કરવી કોઈપણ પ્રયોજનની પુષ્ટિ નથી કરતી. શાસ્ત્રમાં આ વાતનું સમાધાન આમ લખેલ છે—

“ નૈવમ્, અનાદિપ્રસિદ્ધદ્રવ્યકર્મસમ્બન્ધસ્ય તત્ર હેતુત્વે નોપાદાનાત્ ”  
કોઈ વાદી પ્રશ્ન કરે છે કે—જ્યારે રાગાદિક ભાવકર્મનું કારણ દ્રવ્યકર્મ છે,

હૈ, ઓર દ્રવ્યકર્મ કા કારણ રાગાદિક ભાવકર્મ હૈ તો ંસી પરિસ્થિતિ મેં ઇતરેતરાશ્રય દોષ આકર ઉપસ્થિત હોતા હૈ । ઇસ દોષ મેં કિસીકી ભી સ્વતન્ત્ર સત્તા કી સિદ્ધિ નહીં હોતી હૈ । તવ આચાર્ય કહતે હૈ—એમા મત કહો, કારણ કિ અનાદિ સે હી દ્રવ્યકર્મ કા સમ્બન્ધ સ્વયં સિદ્ધ હૈ, ંર ઇસી કી વજહ સે જીવ મેં રાગાદિક ભાવોં કી ઉત્પત્તિ હોતી હૈ । અનુભવ સે ભી યહી વાત પ્રતીતકોટિ મેં આતી હૈ કિ—યદિ રાગાદિક ભાવ જીવ કે વિના કિસી નિમિત્ત કે સ્વીકાર કિયે જાવેં તો વે જીવ કે નિજસ્વભાવ હો જાને સે વિભાવ ભાવ કૈસે માને જા સકેંગે ? । ંસી પરિસ્થિતિ મેં જીવ કા નિજભાવ રાગાદિક ભી માનના હોગા । પરન્તુ ંસી માન્યતા શાસ્ત્ર સે વહિર્ભૂત હૈ ।

પ્રશ્ન—કર્મ ંર આત્મા કા આપ અનાદિ સમ્બન્ધ કહતે હૈ પરન્તુ યહ વાત ઠીક નહીં વૈઠતી, કારણ કિ ઇન દોનોં કા જો સમ્બન્ધ હૈ વહ સંયોગસમ્બન્ધ હી હૈ, તાદાત્મ્યસમ્બન્ધ નહીં । પહિલે દૂધ ંર પાની કી તરહ યે દોનોં સ્વતન્ત્ર હોં ંર ફિર પરસ્પર મિલેં તવ ઇનકા સમ્બન્ધ માનના ઠીક હો સકતા હૈ ।

ઉત્તર—જૈસે જલ ંર દૂધ કા સુવર્ણ ંર કિટ્લિક કા તુપ ંર કણ કા, તિલ ંર તૈલ કા સમ્બન્ધ જનાદિ કા માના જાતા હૈ, ંસી

દ્રવ્યકર્મનું કારણ રાગાદિક ભાવકર્મ છે તો આવી પરિસ્થિતિમાં ઇતરેતરાશ્રય દોષ આવીને ઉપસ્થિત થાય છે. આ દોષમાં કોઈની પણ સ્વતંત્ર સત્તાની સિદ્ધિ થતી નથી. ત્યારે આચાર્ય કહે છે—એવું ન કહો, કારણ કે અનાદિથી દ્રવ્ય-કર્મનો સંબંધ સ્વયંસિદ્ધ છે. અને એજ કારણથી જીવમાં રાગાદિક ભાવોની ઉત્પત્તિ થાય છે. અનુભવથી પણ એ વાત પ્રતિતીકોટિમાં આવે છે, કે—કદાચ રાગાદિક ભાવ જીવને વિના કોઈ નિમિત્તે સ્વીકાર કરવામાં આવે. તો તે જીવના નિજ ભાવ થઈ જવાથી વિભાવ ભાવ કેવી રીતે માની શકાશે ? આવી પરિસ્થિતિમાં જીવનો નિજભાવ રાગાદિક પણ માનવો પડશે, પરંતુ એવી માન્યતા શાસ્ત્રથી બહિર્ભૂત છે.

પ્રશ્ન—કર્મ અને આત્માનો આપ અનાદિ સંબંધ કહો છે પરંતુ એ વાત ઠીક બેસતી નથી, કારણ કે બન્નેનો જે સંબંધ છે તે સંયોગસંબંધ જ છે. તાદાત્મ્યસંબંધ નહિ, પહેલાં દૂધ અને પાણીની માફક બન્ને સ્વતંત્ર હોય અને પછી પરસ્પર મળે ત્યારે સંબંધ માનવો તે ઠીક લાગે છે.

ઉત્તર—જેવી રીતે પાણી અને દૂધ, સુવર્ણ અને કિટ્લિક, ચોખા અને ફાતરી, તલ અને તેલનો સંબંધ અનાદિનો માનવામાં આવે છે, તે પ્રકારે તેનો

પ્રકાર इनका भी सम्बन्ध अनादि का ही है । नवीन इनका सम्बन्ध नहीं हुआ है । इनका परस्पर में संयोगसम्बन्ध ही है, ऐसा जो कहा जाता है वह आगामी काल में इनकी भिन्नता को देखकर ही । अनादि से मिले हुए होने पर भी ये जुदे-जुदे हो जाते हैं, इससे अनुमान होता है कि ये पहिले से भी जुदे हैं । परस्पर संयोगसंबंधविशिष्ट होने पर भी ये दोनों पदार्थ स्वस्वरूपापेक्षया भिन्न भिन्न ही है । यदि भिन्न न हों तो फिर मुक्ति इन के पृथक् होने से जो जीवात्मा को प्राप्त होती है, वह कैसे हो सकेगी । अतः जीव और कर्म का संबंध अनादि का ही है सादि नहीं ।

प्रश्न—कर्म जब पुद्गलपिंडरूप हैं, तब वे घटपटादिक की तरह इन्द्रियगम्य क्यों नहीं होते ।

उत्तर—स्थूल-स्थूल १, स्थूल २, स्थूल-सूक्ष्म ३, सूक्ष्म-स्थूल ४, सूक्ष्म ५, और सूक्ष्म-सूक्ष्म ६, इस प्रकार सिद्धान्तकारों ने पुद्गल को इन छह विभागों में विभक्त किया है । इनमें कागज, लकड़ी, कलम, दावात आदि स्थूल-स्थूल पुद्गल हैं, इनमें कठोर वस्तुओं का समावेश है । स्थूल-स्थूल वस्तुएँ आपस में छिन्न भिन्न होने पर अपने आप फिर मिल नहीं सकती १ ।

પણ સંબંધ અનાદિ કાળનો છે. નવીન તેનો સંબંધ થયો નથી. તેનો પરસ્પરમાં સંયોગસંબંધ જ છે એવું જે કહેવામાં આવે છે તે આગામી કાળમાં તેની ભિન્નતાને દેખીને જ કહેવામાં આવે છે. અનાદિથી તેઓ મળેલ છે છતાં તે જુદા જુદા થઈ જાય છે, તેથી અનુમાન થાય છે કે પહેલાંથી જ જુદા છે. પરસ્પર સંયોગસંબંધવિશિષ્ટ હોવા છતાં પણ એ બંને પદાર્થો સ્વસ્વરૂપાપેક્ષયા ભિન્ન જ રહેલ છે. જે જુદા નહિ હોત તો પછી મુક્તિ તેના પૃથક્ થવાથી જે જીવાત્માને પ્રાપ્ત થાય છે તે કેવી રીતે થઈ શકે, માટે જીવ અને કર્મનો સંબંધ અનાદિ છે સાદિ નહિ.

પ્રશ્ન—કર્મ જ્યારે પુદ્ગલપિંડરૂપ છે, ત્યારે તે ઘટપટાદિકની માફક ઇન્દ્રિયગમ્ય કેમ નથી થતાં.

ઉત્તર—સ્થૂલ-સ્થૂલ ૧, સ્થૂલ ૨, સ્થૂલ-સૂક્ષ્મ ૩, સૂક્ષ્મ-સ્થૂલ ૪, સૂક્ષ્મ ૫, અને સૂક્ષ્મ-સૂક્ષ્મ ૬, આ પ્રકારે સિદ્ધાંતકારોએ પુદ્ગલોને છ વિભાગોમાં વિભક્ત કરેલ છે. તેમાં કાગળ, લાકડી, કલમ, ખડીઓ આદિ સ્થૂલ-સ્થૂલ પુદ્ગલ છે, તેમાં કઠોર વસ્તુઓનો સમાવેશ છે, સ્થૂલ-સ્થૂલ વસ્તુઓ અંદરોઅંદર છિન્નભિન્ન થવાથી પોતાની મેળે ફરી મળી શકતી નથી ૧, સ્થૂલ-વહેવાવાળી ચીજો, જેમ

સ્થૂલ-વહને વાલી चीजें, जैसे पानी दूध घृत वगैरह २। स्थूल-सूक्ष्म-जो देखने में मोटी हों, परन्तु हाथों से पकड़ी न जा सकें, जैसे प्रकाश धूप और छाया आदि ३। सूक्ष्म-स्थूल-जो देखने में न आवें ऐसी सूक्ष्म हों, परन्तु भारी कार्य कर सकें, जैसे हवा शब्द इत्यादि ४। सूक्ष्म-जो पुद्गल-पिंड इतने सूक्ष्म हैं कि वे किसी भी इन्द्रिय से ग्रहण न हो सकें, जैसे कर्मणवर्गणाएँ ५। सूक्ष्म-सूक्ष्म-दो परमाणुओं का स्कंध या एक परमाणु ६। इन छह भेदों में कर्मपुद्गलपिंड सूक्ष्म है, अतः वह इन्द्रिय-गम्य नहीं हो सकता।

प्रश्न—कर्म की सत्ता तब कैसे जानी जाती है ?

उत्तर—उसके कार्य से।

प्रश्न—इन कर्मों का कार्य क्या है ?

उत्तर—आत्मा के ज्ञानादિક गुणों का घात करना, केवलज्ञान की ज्ञानावरण, अनन्त दर्शन की दर्शनावरण, अव्यावाध की वेदनीय, क्षાયિક सम्यक्त्व की मोहनीय, अवगाहनत्व का आयु, सूक्ष्मत्व गुण का नाम, अगुरुलघु गुण का गोत्र और अनन्तवीर्य का अन्तराय घात करता है। तथा एक जीव सुखी है और एक जीव दुःखी है, एक विद्वान् है एक

પાણી, દૂધ, ઘી વિગેરે ૨, સ્થૂલ-સૂક્ષ્મ-જે દેખવામાં મોટી હોય છે પરંતુ હાથોથી પકડી શકાતી નથી, જેમ પ્રકાશ, ધૂપ, છાયા આદિ ૩, સૂક્ષ્મ-સ્થૂલ-જે દેખવામાં ન આવે એવી સૂક્ષ્મ હોય પણ ભારી કામ કરી શકે, જેમ હવા, શબ્દ ઇત્યાદિ ૪, સૂક્ષ્મ-જે પુદ્ગલપિંડ એટલા સૂક્ષ્મ છે કે તે કોઈપણ ઇન્દ્રિયથી ઝડપી થઈ ન શકે, જેમ કાર્મણવર્ગણાઓ ૫, સૂક્ષ્મ-સૂક્ષ્મ-જે પરમાણુઓના સ્કંધ અને એક પરમાણુ ૬, આ છ ભેદોમાં કર્મપુદ્ગલપિંડ સૂક્ષ્મ છે, માટે તે ઇન્દ્રિયગમ્ય થઈ શકતા નથી.

પ્રશ્ન—કર્મની સત્તા ત્યારે કેવી રીતે જાણી શકાય ?

ઉત્તર—તેના કાર્યથી.

પ્રશ્ન—તે કર્મોનું કાર્ય શું છે ?

ઉત્તર—આત્માના જ્ઞાનાદિક ગુણોનો ઘાત કરવો, કેવળજ્ઞાનનો જ્ઞાનાવરણ, અનન્તદર્શનનો દર્શનાવરણ, અવ્યાપાધનો વેદનીય, ક્ષાયિક સમ્યક્ત્વનો મોહનીય, અવગાહ તત્ત્વનો આયુ, સૂક્ષ્મત્વ ગુણનો નામ, અગુરુલઘુગુણનો ગોત્ર અને અનન્ત વીર્યનો અન્તરાય ઘાત કરે છે. તેથી એક જીવ સુખી છે અને એક જીવ દુઃખી છે, એક વિદ્વાન છે એક મૂર્ખ છે, એક નબલ છે એક કમન્તેર છે, એક રાત



મૂર્ખ હૈ, એક સવલ હૈ એક કમજોર હૈ, એક રાતદિન સુખ ચૈન મૈં મસ્ત વના રહતા હૈ એક દર દર કા ભિચારી વના હુઆ હૈ, યહ સવ કિસ કા કાર્ય હૈ ? કહના પડેગા કર્મ કા । યહ જ્ઞાનાવરણાદિકર્મરૂપ પર્યાય કાર્મણવર્ગણાઓં કી હુઈ હૈ । કાર્મણવર્ગણા પુદ્ગલ દ્રવ્ય હૈ, જો જીવ કે રાગાદિક ભાવોં કે નિમિત્તવશ જ્ઞાનાવરણાદિ પર્યાયરૂપ પરિણત હો જાતા હૈ, જિસ પ્રકાર મૃતિકા મૈં નિમિત્તાધાન ઘટપર્યાય હુઆ કરતી હૈ । ઇસ પ્રકાર કી પર્યાય ડન કાર્મણવર્ગણાઓં મૈં અનાદિકાલીન હૈ- નવીન નહીં હૈ, ઓર યહ જીવાત્મા મી ડન કર્મપર્યાયોં સે અનાદિકાલ સે હી પરતન્ત્ર હો રહા હૈ । ઇસકી ઇસ પરતન્ત્રનારૂપ બંધદશાકા કોઈ નિશ્ચિત સમય નહીં હૈ, અતઃ અનાદિકાલ સે યહ કર્મોં કે જાલ મૈં ફાંસા હૈ, એસા કહા જાતા હૈ । અનાદિતા ઓર અનંતતા એવં સાદિતા કા સંબંધ હૈ સિર્ફ અનંતતા કા હી નહીં ।

ચારિત્રારાધન કરને સે આત્મા કે કર્મોં કા નાશ હોતા હૈ, ઇસકા અભિ- પ્રાય યહી હૈ કિ-આત્મા કે કર્મપર્યાયોં કા નાશ હો જાતા હૈ, ક્યોં કિ કર્મદ્રવ્ય કા કમી મી નાશ નહીં હોતા । કર્મપર્યાય કા હી નાશ હોતા હૈ । જિસ કાર્મણ દ્રવ્ય મૈં પહિલે કષાયાદિક કે નિમિત્ત સે કર્મરૂપ પર્યાય

દિવસ સુખચૈનમાં મસ્ત બન્યો રહે છે, એક ઘરઘરનો ભિખારી બનેલ છે. આ બધા કેના કાર્યો છે ? કહેવું પડશે કે કર્મના. આ જ્ઞાનાવરણાદિકર્મરૂપ પર્યાય કાર્મણ વર્ગણાઓની થયેલી છે. કાર્મણવર્ગણા તે પુદ્ગલદ્રવ્ય છે જે જીવના રાગાદિક ભાવોના નિમિત્તવશ જ્ઞાનાવરણાદિપર્યાયરૂપ પરિણત થાય છે. જે પ્રકારે મૃત્તિકામાં નિમિત્તાધાન ઘટપર્યાય થાય છે તે પ્રકારની પર્યાય તે કાર્મણ વર્ગણાઓમાં અનાદિ કાલીન છે, નવીન છે નહિ. અને આ જીવાત્મા પણ તે કર્મપર્યાયોથી અનાદિ કાળથી જ પરતંત્ર થઈ રહેલ છે. તેની આ પરતંત્રતારૂપ બંધદશાનો કોઈ નિશ્ચિત સમય નથી, માટે અનાદિ કાળથી આ કર્મોની બળમા ફસેલ છે એવું કહેવામાં આવે છે. અનાદિતા અને અનંતતા એવ સાદિતાનો સંબંધ છે ફક્ત અનંતતાનો જ નહિ

ચારિત્રારાધન કરવાથી આત્માના કર્મોનો નાશ થાય છે. તેનો અભિપ્રાય એ છે કે આત્માના કર્મપર્યાયોનો નાશ થાય છે, કારણ કે કર્મદ્રવ્યનો કોઈ વખત નાશ થતો નથી, કર્મપર્યાયોનો જ નાશ થાય છે. કાર્મણ દ્રવ્યમાં પહેલાં કષાયાદિકના નિમિત્તથી કર્મરૂપ પર્યાયો બની હતી, તે નિમિત્ત દૂર થવાથી તે દ્રવ્ય અકર્મરૂપ પર્યાયથી સ્થિત થાય છે, કાર્મણવર્ગણારૂપ દ્રવ્ય સામાન્ય છે. તેમાં



હોતી થીં, ઉસ નિમિત્તકે હટ જાને પર વહી દ્રવ્ય અકર્મરૂપ પર્યાય સે સ્થિત હો જાતા હૈ । કાર્મણવર્ગણારૂપ દ્રવ્ય સામાન્ય હૈ, ઉસ મેં જ્ઞાનાવરણાદિરૂપ કર્મપ્રકાર નહીં હૈ । જબ વહ કર્મરૂપ બનતા હૈ, તબ ઉસમેં જ્ઞાનાવરણાદિ પ્રકાર હોતે હૈં । જ્ઞાનાવરણાદિ કર્મપ્રકાર કી સ્થિતિ જબ પૂર્ણ હો જાતી હૈ, અથવા તપ સંયમ કે દ્વારા જબ ઉસકા વિનાશ કિયા જાતા હૈ તબ વહ આત્મા સે પૃથક્ હો જાતા હૈ, ઇસ કા ભાવ યહી હૈ કિ વહ કાર્મણ દ્રવ્ય ઉનરે પર્યાયોં સે રહિત હોકર અપને મૂલ સ્વભાવ સે વહાં સ્થિત રહતા હૈ, દ્રવ્ય કા કમી મી વિનાશ નહીં હોતા । સુવર્ણ અથવા મણિ સે જિસ પ્રકાર ઉનકે મલ કી નિવૃત્તિ હોતી હૈ, ઉસી પ્રકાર આત્મા સે મી કર્મપર્યાય કી નિવૃત્તિ હોતી હૈ । ઁસા હોને પર જીવ કી આત્યન્તિક શુદ્ધિ હો જાતી હૈ । સકલકર્મપર્યાય કે વિનાશ હોને પર મૂલ દ્રવ્ય કા વિનાશ નહીં હોતા હૈ । જિસ પ્રકાર ઘટપર્યાય કે વિનાશ હોને પર મૃત્તિકા અઘટ પર્યાય સે સ્થિત રહતી હૈ, ઇસી પ્રકાર સકલપર્યાય કે વિનાશ હોને પર મી કર્મદ્રવ્ય અકર્મપર્યાય સે આક્રાન્ત હો જાતા હૈ, દ્રવ્ય અનન્ત પર્યાયવાલા હૈ । જિસ પ્રકાર કાર્મણ દ્રવ્ય કી પર્યાય કર્મ હૈ ઉસી પ્રકાર અકર્મ મી ઉસકી ઁક પર્યાય હૈ । વિવક્ષિત જીવ કી અપેક્ષા સે હી ઉસમેં કર્મ ઔર અકર્મ પર્યાય રહતી હૈ । સંસારી

જ્ઞાનાવરણાદિરૂપ કર્મપ્રકાર નથી. જ્યારે તે કર્મરૂપ બને છે ત્યારે તેમાં જ્ઞાનાવરણાદિ પ્રકાર થાય છે જ્ઞાનાવરણાદિ કર્મપ્રકારની સ્થિતિ જ્યારે પૂર્ણ થાય છે, અથવા તપ સંયમ દ્વારા જ્યારે તેનો વિનાશ કરવામાં આવે છે ત્યારે તે આત્માથી પૃથક્ થાય છે. તેનો ભાવ એ છે કે તે કાર્મણ દ્રવ્ય તે તે પર્યાયથી રહિત થઈને પોતાના મૂલ સ્વભાવમાં ત્યાં સ્થિત રહે છે દ્રવ્યનો કોઈ વળત પણ વિનાશ થતો નથી સુવર્ણ અથવા મણિથી જે પ્રકારે તેના મલની નિવૃત્તિ થાય છે તે પ્રકારે આત્માથી પણ કર્મપર્યાયની નિવૃત્તિ થાય છે. એવું બનવાથી જીવની આત્યન્તિક શુદ્ધિ થાય છે. મકલ કર્મપર્યાયનો વિનાશ થવાથી મૂલ દ્રવ્યનો વિનાશ થતો નથી. જે પ્રકારે ઘટપર્યાયનો વિનાશ થવાથી મૃત્તિકા અઘટપર્યાયથી સ્થિત રહે છે તે પ્રકારે મકલ પર્યાયનો વિનાશ થવાથી કર્મ દ્રવ્ય અકર્મપર્યાયથી આક્રાન્ત થાય છે. દ્રવ્ય અનન્ત પર્યાયવાલો છે.

જે પ્રકારે કાર્મણ દ્રવ્યની પર્યાય કર્મ છે તે પ્રકારે અકર્મપર્યાય પણ તેની એક પર્યાય છે. વિવક્ષિત જીવની અપેક્ષાથી જ તેમાં કર્મ અને અકર્મપર્યાય

જીવોં મેં હસ વર્ગણા કા કર્મરૂપ પર્યાય સે પરિણમન હૈ, ઓર શુદ્ધ આત્મદ્રવ્ય કી અપેક્ષા અકર્મપર્યાયરૂપસે ।

જિસ પ્રકાર સુવર્ણ સે ડસકે કિટકાદિરૂપ મૈલ કા સંબંધ પુટપાકાદિ દ્વારા દૂર હોતા હુઆ દેખા જાતા હૈ ડસી પ્રકાર આત્મા મેં અનાદિકાલ સે સંબંધિત હન કર્મોંકા વિયોગ મી તપ સંયમ રૂપ સાધન દ્વારા દૂર હો જાતા હૈ । હસ મૈલ કે પૃથક્ હોને પર શુદ્ધ સુવર્ણ કી તરહ યહ આત્મા મી શુદ્ધ હોકર અપની અસલી સ્વરૂપ કો પાતા હૈ ।

સંયમી મુનિ કે લિયે ઉપદેશ દેતે હૈ—‘ઈણમેવ’ ઇત્યાદિ । કર્મોં કો આત્મા સે પૃથક્ કરનેવાલે ચારિત્ર કી જો આરાધના કરતે હૈ વે ધ્રુવચારી કહલાતે હૈ । અથવા ધ્રુવ નામ મોક્ષ કા હૈ । કાર્ય ઓર કારણ મેં અભેદ સંબંધ હોને સે મોક્ષ કે કારણભૂત સમ્યગ્દર્શન, તપ, જ્ઞાન ઓર ક્રિયા આદિ મી ધ્રુવ હૈ । હનકો મી પાલન કરને કે સ્વભાવવાલે ધ્રુવચારી હૈ । જો મુનિ ધ્રુવચારી હૈ વે અસંયમ જીવન કી, અથવા પૂર્વ મેં ભોગે હુણ વિષયાદિક ભોગોં કી કમી મી ઇચ્છા નહીં કરતે હૈ । જ્ઞ-પરિજ્ઞા સે સંસારકા સ્વરૂપ અથવા હસ વાત કો જાન કર કિ—‘અસંયમ જીવન વ્યતીત કરને સે જીવકો હસ સંસાર મેં વારંવાર જન્મ ઓર મરણ કે ચક્રર મેં

રહે છે. સંસારી જીવોમાં આ વર્ગણના કર્મરૂપ પર્યાયથી પરિણમન છે, અને શુદ્ધ આત્મદ્રવ્યની અપેક્ષા અકર્મપર્યાય રૂપથી.

જેવી રીતે સુવર્ણથી તેના કિટકાદિરૂપ મેલનો સંબંધ પુટપાકાદિદ્વારા દૂર થતો દેખવામાં આવે છે તેવી રીતે આત્મામાં અનાદિ કાળથી સંબંધિત આ કર્મોનો વિયોગ પણ તપસંયમરૂપ સાધનદ્વારા દૂર થાય છે. આ મેલના પૃથક્ થવાથી શુદ્ધ સુવર્ણની માફક આ આત્મા પણ શુદ્ધ બની પોતાના અસલ સ્વરૂપને મેળવે છે.

અંયમી મુનિ માટે ઉપદેશ આપે છે—‘ઈણમેવ’ ઇત્યાદિ. કર્મોને આત્માથી પૃથક્ભૂત કરવાવાળા ચારિત્રની જે આરાધના કરે છે તે ધ્રુવચારી કહેવાય છે. અને ધ્રુવ નામ મોક્ષનું છે. કાર્ય અને કારણમાં અભેદસંબંધ હોવાથી મોક્ષના કારણભૂત સમ્યગ્દર્શન તપ જ્ઞાન અને ક્રિયા આદિ પણ ધ્રુવ છે. તેનું પણ પાલન કરવાવાળા સ્વભાવી ધ્રુવચારી છે. જે મુનિ ધ્રુવચારી છે તે અસંયમ જીવનની અથવા પૂર્વમાં ભોગવેલા વિષયાદિક ભોગોની કદી પણ ઇચ્છા કરતા નથી. જ્ઞ પરિજ્ઞાથી સંસારનું સ્વરૂપ અથવા તે વાતને બાણીને પણ અસંયમ જીવન વ્યતીત કરવાથી જીવને આ સંસારમાં વારંવાર જન્મ અને મરણના ચક્રરમાં પડવું પડે છે.

યદ્વા—‘સદ્ક્રમણે’ ઇતિચ્છાયા, તત્ર સદ્ક્રમ્યતે=પ્રાપ્યતે મોક્ષોડનેનેતિ સદ્ક્રમણં=જ્ઞાનાદિત્રિકં, તત્રૈવ ચરેત્=તત્પરો ભવેત્, આત્મહિતાર્થિભિઃ સંયમે દૃઢ-પઢના પઢતા હૈ, ઇસ લિયે તપ, સંયમ ઓર નિયમોં કા પાલન સર્વ શ્રેયસ્કર હૈ, ઇનકા પાલન કમીં મીં વિફલ નહીં હો સકના’ ઇસ પ્રકાર જિસકા મન ડનકે પાલન કરને મેં અડોલ ઓર અંકપ હૈ, મનકી લગન સે જો તપ સંયમ આદિ કે પાલન કરને મેં દત્તાવધાન હૈ, તથા જિસ કે હૃદયમેં જિનેન્દ્રવચનોં કે પ્રતિ દઢ આસ્થા હૈ, જો યે અચ્છી તરહ સે સમદ્વતા હૈ કિ—‘ભગવાન્ વીતરાગ પ્રભુ કા બનાયા હુઆ યહ માર્ગ હૈ કિસી છદ્મસ્થ કા નહીં, સંયમ કી આરાધના સે કર્મોંકી નિર્જરા હોતી હૈ, અતઃ મુજે ઇસકા પરિપાલન સમ્યક્ રીતિ સે હી કરના ચાહિયે અન્યથા અનન્ત સંસાર કા પથિક બનના પડેગા, યદિ મુજે અપને ગૃહીત માર્ગ સે ચ્યુત કરને કે લિયે પરીષદ્ ઓર ઉપસર્ગ મીં આડે આવેં તો મુજે ડનકી મીં કુછ પર્વાહ નહીં હૈ, મેં અંકપ બન ડનકા મીં સામના કરને કે લિયે તૈયાર હૂં’ ઇસ પ્રકાર અશંકિતમન ઓર દઢપ્રતિજ્ઞ હોકર અપને ગૃહીત માર્ગકો સંયમી આરાધના કરે ।

સૂત્ર મેં “સંક્રમણે” ઇસ શબ્દ કી છાયા ટીકાકાર ને ઁક તો “અશંકમનાઃ” યહ કી હૈ જિસકા અર્થ ‘નિઃશંકિતમન હો કર તપ સંયમ કા પાલન કરે’ યહ હોતા હૈ । ઢૂસરી “સંક્રમણે” કી છાયા

માટે તપ-સંયમ અને નિયમોનુ પાલન સર્વ શ્રેયસ્કર છે. તેનું પાલન કોઈ વખત પણ વિક્ષણ થતું નથી. આ પ્રકારથી જેનું મન તેના પાળવામાં મક્કમ અને અકંપ છે, મનની લગનથી જે તપ સંયમ આદિના પાલન કરવામાં દત્તાવધાન છે, તથા જેના હૃદયમાં જિનેન્દ્રવચનો પ્રતિ દઢ આસ્થા છે, જે ચારી રીતે બાળે છે કે ભગવાન વીતરાગ પ્રભુનો બનાવેલો આ માર્ગ છે. કોઈ છદ્મસ્થનો નથી સંયમની આરાધનાથી કર્મોની નિર્જરા થાય છે, માટે મારે તેનું પરિપાલન સમ્યક્ રીતિથી જ કરવું જોઈએ, અન્યથા અનત સંસારનો પથિક બનવો પડશે. જે મારે પોતાના ગૃહીત માર્ગથી ચ્યુત કરવા માટે પરીપાડ અને ઉપસર્ગ પણ આડા આવે તો મને તેની પણ કોઈ પરવાહ નથી. હું અકંપ બની તેનો પણ સામનો કરવા તૈયાર છું, તેવા પ્રકારે અશંકિતમન અને દઢપ્રતિજ્ઞ બનીને પોતાના ગૃહીત માર્ગની સંયમી આરાધના કરે.

મુત્રમાં “સંક્રમણે” આ શબ્દની ટીકાકારે એક તો “અશંકમના” છાયા કરી છે જેનો અર્થ ‘નિઃશંકિતમન થઈ, તપ સંયમનું પાલન કરે’ તેમ થાય છે.

ભાવ્યમ્ । વાર્ધક્યે પરત્પરારિ વા ધર્મ કરિણ્યામીતિ ચેતસિ ન ચિન્તયેદિત્યર્થઃ, યતઃ ‘કાલસ્ય’ કાલઃ=મૃત્યુસ્તસ્ય, અનાગમઃ=અપ્રાપ્તિર્નાસ્તિ=ન વર્તતે, યતઃ કોઽપિ ક્ષણો ન તાદૃગ્ યસ્મિન્મૃત્યોરાગમનસમ્ભવો નાસ્તિ, તસ્માદર્હિસાદિષુ સાવધાનેન ક્ષણલવમુદ્ઘૂર્તાદિસમયેષ્વપ્રતિવન્ધવિહારિણાઽઽત્મૌપમ્યેન ભવિતવ્યમિતિ તાત્પર્યમ્ ॥મૂ० ૪॥

“સંક્રમણે” એવી મી હોતી હૈ । જિસકે દ્વારા મુક્તિ કી પ્રાપ્તિ જીવ કો હોતી હૈ ઉસકા નામ સંક્રમણ હૈ । વહ સમ્યગ્દર્શનાદિક રત્નત્રય હૈ । હનકે દ્વારા હી જીવ મુક્તિ કા લાભ કરતા હૈ, અતઃ સાવધાન મન હો કર હનકે પરિપાલન કરને મેં સંયમી મુનિ કો તત્પર રહના ચાહિયે, યહ સૂત્રકાર કા આદેશ વચન હૈ । ‘પર પરાર જવ સમય આવેગા નવ ધર્માચરણ કરુંગા, અમી સમય નહીં હૈ’ ઇસ પ્રકાર કા ધર્માચરણ કે લિયે વહાના નહીં કરના ચાહિયે । એસા વહાના આત્મહિતાર્થી કે લિયે ઉચિત નહીં હૈ । પહેલે કહા ગયા હૈ કિ-“નાસ્તિ કાલસ્યાનાગમઃ” એસા કોઈ મી સમય નહીં હૈ કિ જિસમેં મૃત્યુકે આને કી સંભાવના ન હો, અતઃ યહ સમજ કર કિ-“કાલ પીછે લગા હુવા હૈ, કવ યહાં સે જાના પડેગા” ધર્માચરણ કે લિયે પ્રમાદી ન વને । જો મી જિતના મી સમય મિલે-ધર્મ કી આરાધના કરતા રહે । સંયમી મુનિ અપને ગૃહીત અર્હિસાદિવ્રતોં મેં સાવધાન હોકર એક ક્ષણ એક લવ એક મુદ્ઘૂર્ત મી પ્રતિવન્ધવિહારી ન વને, અર્થાત્ અપ્રતિવન્ધવિહારી હોકર વિચરે ॥ સૂ० ૪ ॥

જેના દ્વારા જીવને મુક્તિની પ્રાપ્તિ થાય છે. તેનું નામ સંક્રમણ છે. તે સમ્યગ્દર્શનાદિક રત્નત્રય છે. તેના દ્વારા જ જીવ મુક્તિનો લાભ કરે છે માટે સાવધાન મન રાખીને તેનું પરિપાલન કરવામાં સંયમી મુનિએ તત્પર રહેવું જોઈએ, એ સૂત્રકારનું આદેશ વચન છે. ‘આવતી કે તેની આગલની શાલ જ્યારે સમય આવશે ત્યારે ધર્મ કરીશ, હંમણુ સમય નથી’ આવા પ્રકારનું ધર્માચરણ માટે બહાનું કરવું જોઈએ નહિ. એવું બહાનું આત્મહિતાર્થી માટે ઉચિત નથી. પહેલાં કહેવામાં આવેલ છે કે-“નાસ્તિ કાલસ્યાનાગમઃ” એવો કોઈ પણ સમય નથી જેમા મૃત્યુને આવવાની સંભાવના ન હોય, માટે એવું સમજીને કે “કાળ પછવાડે જ લાગેલો છે, ક્યારે અહીંથી જીવુ પડશે” ધર્માચરણ માટે પ્રમાદી ન બને. જેટલો પણ વખત મળે તેટલો વખત ધર્મની આરાધના કરતો જ રહે.

સંયમી મુનિ પોતાના ગૃહીત અર્હિસાદિ વ્રતોમા સાવધાન બનીને એક ક્ષણ એક લવ એક મુદ્ઘૂર્ત પણ પ્રતિબન્ધવિહારી ન બને, અર્થાત્ અપ્રતિબન્ધવિહારી બનીને વિચરે ॥ સૂ० ૪ ॥

ઉક્તં સંયમિજીવનસ્વરૂપમ્, અથાસંયમિજીવનસ્વરૂપમાહ—‘સર્વે પાણા’ इत्यादि ।

મૂલમ્—સર્વે પાણા પિયાડયા સુહસાયા દુઃખપડિકૂલા અપ્પિ-  
યવહા પિયજીવના જીવિતકામા સર્વેસિં જીવિયં પિયં, તં પરિ-  
ગિજ્ઞ દુપયં ચતુપ્પયં અભિજુંજિયાણં સંસિંચિયાણં તિવિહેણ  
જાડવિ સે તત્થ મત્તા ભવઈ અપ્પા વા વહુયા વા સે તત્થ ગઢિણ  
ચિટ્ઠઈ ભોયનાણ ॥ સૂ૦ ૫ ॥

છાયા—સર્વે પ્રાણાઃ પ્રિયાયુપઃ સુખાસ્વાદાઃ દુઃખપ્રતિકૂલા અપ્રિયવધાઃ  
પ્રિયજીવના જીવિતકામાઃ સર્વેપાં જીવિતં પ્રિયમ્, તત્પરિગૃહ્ય ટિપદં ચતુપ્પદમભિ-  
યુજ્ય સ્વલુ સંસિચ્ય સ્વલુ ત્રિવિધેન યાડપિ તસ્ય તત્ર માત્રા ભવત્યલ્પા વા વહુકા  
વા સ તત્ર ગૃહ્યસ્તિષ્ઠતિ ભોજનાય ॥ સૂ૦ ૫ ॥

ટીકા—‘સર્વે’ इत्यादि, सर्वे=निखिलाः, प्राणाः=प्राणिनः संसारिणः, प्रिया-  
युपः=प्रियजीविता भवन्ति, यो जीवो यत्रोच्चनीचयोर्नौ जन्म गृह्णाति तत्रैव रमते  
जीवितुमिच्छति च विषकृमिन्यायेन; उक्तञ्च—

“ अमेज्झमज्झे कीडस्स, सुरिंदस्स सुरालए ।

समाणा जीवियाकंखा, तेसिं मच्चुभयं समं ॥ ” इति ।

છાયા—“ અમેઘ્યમઘ્યે કીટસ્ય, સુરેન્દ્રસ્ય સુરાલયે ।

समाना जीविताकाङ्क्षा, तयोर्मृत्युभयं समम् ॥ ”

સંયમજીવન કા સ્વરૂપ પ્રકટ કિયા, અવ અસંયમજીવન કા સ્વરૂપ  
પ્રકટ કરતે હૈં—‘સર્વે પાણા પિયાડયા’ इत्यादि ।

સમસ્ત સંસારી જીવોં કો જીવન પ્રિય હૈ, કોઈં મી જીવ ંસા નહીં  
હૈ, જિસે અપને જીવન સે મમતા ન હો, વિષ્ટા કા કીડા મી અધિક સે  
અધિક જીને કી ઇચ્છા રખતા હૈ । જો જીવ જિસ પર્યાય મેં વર્તમાન હૈ  
ઁસે વહી પર્યાય પ્રિય હૈ । વિષ્ટા કે કીડે કી મમતા કો દેરિયે—વહ  
યદિ ઁસ સ્થાન સે અલગ કિયા જાતા હૈ તો વહ વહાં સે અલગ હોકર

સંયમ જીવનનું સ્વરૂપ પ્રકટ કર્યું, હવે અસંયમ જીવનનું સ્વરૂપ પ્રકટ કરે  
છે—‘સર્વે પાણા પિયાડયા’ इत्यादि.

સમસ્ત સંસારી જીવને જીવન પ્રિય છે, કોઈં પણ જીવ એવો નથી જેને  
પોતાના જીવનથી મમતા ન હોય વિષ્ટાનો કીડો પણ વધારેમાં વધારે જીવવાની  
ઇચ્છા રાખે છે. જે જીવ જે પર્યાયમાં વર્તમાન છે તેને તે જ પર્યાય પ્રિય છે  
વિષ્ટાના કીડાની મમતાને જીવે—તે કદાચ તે સ્થાનથી અલગ કરવામાં આવે તો

भी वहीं पर फिर से प्रविष्ट हो जाता है । वह अपने स्थान को जरा भी नहीं छोड़ना चाहता । इसका कारण सिर्फ एक यही है कि—उसे उसी अवस्था में रह कर अपना जीवन व्यतीत करना इष्ट है । विशाल वैभव के भोक्ता को जिस प्रकार जीने की इच्छा रहा करनी है, तथा जिस प्रकार उसे अपना जीवन सबसे अधिक प्रिय है उसी प्रकार समस्त संसारी जीवों की यही हालत है—चाहे वे संजी हों चाहे असंजी । कोई भी प्राणी ऐसा नहीं मिलेगा—जिसे अपने जीवन में अधिकसे अधिक ममता न हो । एक भिखारी को जितना अपने जीवन से मोह है उतना ही मोह चक्रवर्ती को भी अपने जीवन से है । कोई अपना अनिष्ट नहीं चाहता । इस बात की पुष्टि करते हुए टीकाकार कहते हैं—“यो जीवो यत्रोच्चनीचयोर्नौ जन्म गृह्णाति तत्रैव रमते—जीवितुमिच्छति च विष कृमिन्यायेन ” जो जीव जिस ऊँच नीच योनिमें जन्म धारण करता है उसे वही योनि प्रिय बन जाती है—वहीं पर वह आनंद मानता है । जैसे विषके कीड़े को विषमें ही मजा आता है बात भी सत्य है कहा भी है—

“ अमेज्झमज्झे कीडस्स, सुरिंदस्स सुरालए ।

समाणा जीवियाकंखा, तेसिं मच्चुभयं समं ” ॥ १ ॥

પણ તે ત્યાંથી અલગ થઈને પણ ત્યાં જ ફરીથી પ્રવિષ્ટ થાય છે, તે પોતાના સ્થાનને જરા પણ છોડવા યાહતો નથી. તેનું કારણ ફક્ત એક એ જ છે કે તેની તે અવસ્થામાં રહીને પોતાનું જીવન વ્યતીત કરવું ઇષ્ટ છે વિશાળ વૈભવના ભોક્તાને જે પ્રકારે જીવવાની ઇચ્છા રહ્યા કરે છે તથા જે પ્રકારે તેને પોતાનું જીવન બધાથી અધિક પ્રિય છે, તે પ્રકારે સમસ્ત સંસારી જીવોની તે જ હાલત છે, ભલે તે સંજી હોય કે અસંજી. કોઈ પણ પ્રાણી એવો નહિ મળે જેને પોતાના જીવનમાં અધિકથી અધિક મમતા ન હોય. એક ભિખારીને જેટલો પોતાનો જીવ વહાલો છે તેટલો જીવનનો મોહ ચક્રવર્તીને પણ હોય છે. કોઈ પોતાનું અનિષ્ટ યાહતું નથી. આ વાતની પુષ્ટિ કરતાં ટીકાકાર કહે છે કે—“યો જીવો યત્રોચ્ચનીચયોર્નૌ જન્મ ગૃહ્ણાતિ તત્રૈવ રમતે જીવિતુમિચ્છતિ ચ વિષકૃમિ-ન્યાયેન ” જે જીવ જે ઉંચ નીચ યોનિમાં જન્મ ધારણ કરે છે તેની તે જ યોનિ પ્રિય બની બીજી છે, ત્યાં જ તે આનંદ માને છે, જેમ વિષના કીડાને વિષમાં જ મજા આવે છે, વાત પણ સત્ય છે. કહ્યું પણ છે.

“ અમેજ્ઝમજ્ઝે કીડસ્સ, સુરિંદસ્સ સુરાલેપ ।

સમાણા જીવિયાકંસા, તેસિં મચ્છુભયં સમં ” ॥૧॥



ભુવનત્રયાધિપત્યપ્રાપ્ત્યપેક્ષયાપિ સ્વાયુષ્કસ્યેષ્ટતરત્વાત્, અપિ ચ મૃગ્વા-  
સ્વાદાઃ=સુખાભિલાષિણઃ, અમૃતપાનાદપિ સ્વસુખાનુભવસ્ય શ્રેષ્ઠત્વાત્, દુઃસ્વપ્રતિ-  
કૂલાઃ=દુઃસ્વાનભિલાષુકાઃ, વિષભક્ષણાદપિ દુઃસ્વં પ્રત્યધિકદ્વેષવત્ત્વાત્, કિન્ચ-અપ્રિ-  
યવધાઃ-અપ્રિયઃ=અનિષ્ટઃ-વધો=મરણં યેષાં તે તથા । પ્રિયજીવનાઃ=પ્રિયં જીવનં  
યેષાં તે તથા, અનિશં તદર્થં પ્રવૃત્તત્વાત્, અત એવ જીવિતુકામાઃ જીવિતું કામઃ=  
સ્પૃહા યેષાં તે જીવિતુકામાઃ, વર્ષશતાયુષ્કસ્યાન્તિમાવસ્થાયામપિ જીવિતેચ્છયા  
નાનાવિધમણિમન્વયન્વૌપધાદ્યર્થં પ્રવૃત્તિદર્શનાત્ ।

વિષ્ટા કે કીડેકી ઔર સ્વર્ગ કે અપાર વૈભવ કે ભોક્તા ઇન્દ્રકી ભી  
જીને કી ઇચ્છા ઔર મરણકા ભય સમાન હૈ, કોઈ નહીં चाहता कि हमें  
करालकाल के गालका कवल ( ग्रास ) बनना पड़े । क्यों कि तीन लोक  
के अधिपति बनने की अपेक्षा अपना जीवन अधिक प्रिय है ।

લોક મેં અમૃત કા પાન કરના સવસે અધિક સુખકારી સમજા  
જાતા હૈ, પરન્તુ લોક ઇસસે ભી અધિક સુખ અપને સુખી હોને મેં માનતે  
હૈં । અપને કો સુખી બનાને કે લિયે લોગ હર એક પ્રકાર કે સાધનોં કો  
જુટાને મેં કસર નહીં કરતે । કિસી સે ભી યદિ યહ પ્રશ્ન કિયા જાય  
કિ-તુમ અપને જીવન મેં ક્યા चाहते हो ? તો શીઘ્ર હી વહાં સે યહી ઉત્તર  
મિલેગા કિ-હમ અપને જીવન મેં શાંતિ ઔર સુખ કો चाहते હૈં । “ દુઃસ્વ-  
પ્રતિકૂલાઃ ” જગત મેં કોઈ ભી પ્રાણી દુઃસ્વકો નહીં चाहता હૈ, પ્રત્યેક  
પ્રાણી દુઃસ્વકો પ્રતિકૂલ માનતા હૈ, વિષ ભક્ષણ કર લેગા કિન્તુ દુઃસ્વ

વિષ્ટાના કીડાની અને સ્વર્ગના અપાર વૈભવના ભોક્તા ઇન્દ્રની બન્નેની હવવાની  
ઇચ્છા અને મરણનું ભય બન્ને સમાન છે, કોઈ ચાહતું નથી કે હું કરાલકાલના  
ગાલનો ગ્રાસ બનું, કારણ કે ત્રણ લોકના અધિપતિ બનવાની અપેક્ષા પોતાનું  
હવન અધિક પ્રિય છે.

લોકમાં અમૃતનું પાન કરવું તેને બધાથી અધિક સુખકારી માનવામાં  
આવે છે, પરંતુ લોક તેનાથી પણ અધિક સુખ પોતાને સુખી હોવામાં માને છે.  
પોતાને સુખી બનાવવા માટે લોક દરેક પ્રકારનાં સાધનોને અજમાવવામાં કસર  
કરતાં નથી. કોઈથી એ પ્રશ્ન કરવામાં આવે કે-તમે તમારા હવનમાં શું ચાહો  
છો. તો ત્યાંથી તરત જ એવો ઉત્તર મળશે કે-અમે અમારા હવનમાં શાંતિ  
અને સુખને ચાહીએ છીએ. “ દુસ્વપ્રતિકૂલા ” પ્રત્યેક પ્રાણી હવને ચાહતું  
નથી, પ્રત્યેક પ્રાણી હવને પ્રતિકૂલ માને છે. એરનું પાન કરી લેશે પણ દુઃખ



ભોગના નહીં ચાહતા। “અપ્રિયવધાઃ પ્રિયજીવનાઃ” સંસાર મેં જીવોં કો મરણ અપ્રિય હોતા હૈં ઓર જીવન પ્રિય હોતા હૈં। જીવોં કો અપના જીવન સર્વ પ્રકાર સે પ્રિય હૈં। ચાહે જિસ કિસી મી ઉપાય સે યે અપને જીવનકે સંરક્ષણ કરનેમેં હી ભાવનાશીલ રહતે હૈં। ઉસ સમય ન્યાય યા અન્યાય, ધર્મ યા અધર્મ આદિ કો ઇન્હેં થોડી સી મી ચિન્તા નહીં હોતી। ઇસકા મી કારણ યહ હૈં કિ યે “જીવિતુકામાઃ” હૈં। શત વર્ષ કી આયુવાલે કો મી અન્તિમ ક્ષણતક જીવન કી ઇચ્છા વની હી રહતી હૈં। ચાહે ધની હો યા નિર્ધન હો, રાજા હો યા રંક હો, વિદ્વાન હો યા સૂર્વ હો, દીર્ઘાયુષ્ક હો યા અલ્પાયુષ્ક હો કોઈ મી ક્યોં ન હો કોઈ યહ નહીં ચાહતા કિ મેરી મૃત્યુ હો જાય, અર્થાત્ મેં મરજાઝું। સવ હી અધિક સે અધિક જીને કે અભિલાષી રહા કરતે હૈં। થોડા સા મી શારીરિક કષ્ટ આને પર “કહીં મેં મર ન જાઝું” ઇસ ય્યાલ સે અનેક પ્રકાર કે મણિ મન્ત્ર યન્ત્ર ઓર ઔષધિ વગેરહ કે ઉપચાર મેં યથાશક્તિ પ્રયત્ન કરને મેં લગ જાતે હૈં।

યહ પૂર્વોક્ત કથન અસંયમી જીવોં કી અપેક્ષા સે હી કિયા ગયા સમજના ચાહિયે, ક્યોં કિ ઉન્હેં હી અપને પ્રાણ વગેરહ પ્રિય હોતે હૈં। વેહી અપની જીવનયાત્રા કે નિર્વાહ કે લિયે યદ્વા તદ્વા પ્રવૃત્તિ કિયા

‘લોગવધુ’ ચાહતા નથી. “અપ્રિયવધા પ્રિયજીવનાઃ” સંસારમાં જીવોને મરણ અપ્રિય લાગે છે. જીવોને પોતાનું જીવન બધા પ્રકારે પ્રિય છે, ભલે કોઈ પણ કોઈ ઉપાયથી પોતાના જીવનનું સંરક્ષણ કરવામાં જ ભાવનાશીલ રહે છે. તે સમય ન્યાય અન્યાય ધર્મ અધર્મ આદિની તેને જરા પણ ચિંતા થતી નથી, તેનું પણ કારણ એ છે કે તે “જીવિતુકામા” છે, સો વર્ષની આયુષ્યવાળાને પણ અન્તિમ ક્ષણ સુધી જીવનની ઇચ્છા બની રહે છે, ભલે તવંગર હોય અગર નિર્ધન હોય, રાજા હોય કે રંક હોય, વિદ્વાન હોય, કે સૂર્વ હોય, દીર્ઘાયુષ્ક હોય કે અલ્પાયુષ્ક હોય કોઈ પણ કેમ ન હોય પણ કોઈ એ નથી ચાહતા કે માંડું મોત થાય, અર્થાત્ હું મરી જાઉં, બધા જ અધિકથી અધિક જીવવાના અભિલાષી રહ્યા કરે છે. થોડુંક શારીરિક કષ્ટ આવવાથી “કદાચ હું મરી ન જાઉં” એવાં ખ્યાલથી અનેક પ્રકારના મણિ મન્ત્ર યન્ત્ર અને ઔષધિ વિગેરેના ઉપચારમાં યથાશક્તિ પ્રયત્ન કરવામાં લાગી જાય છે.

આ પૂર્વોક્ત કથન અસંયમી જીવોની અપેક્ષાથી જ કરેલ સમજવાનું છે, કારણ કે તેને જ પોતાનો પ્રાણ વિગેરે પ્રિય હોય છે, તે જ પોતાના જીવન-યાત્રાના નિર્વાહ માટે યદ્વા તદ્વા પ્રવૃત્તિ કરે છે, હઃખોથી ગભરાય છે, અને સદા

यतः सर्वेषां प्राणिनां गुरुकर्मणां जीवितम्=असंयमजीवितं प्रियम्=इष्टं भवति, न तु लघुकर्मणाम्, ततः किमित्याह—‘त’—दित्यादि, तत्तस्मात्कारणाद् द्विपदं=दासी-दासकर्मकरादि, चतुष्पदं=हस्तिहयगोमहिष्यादि परिग्रह=स्वायत्तीकृत्य ततस्तदेव द्विपदं चतुष्पदम् उपलक्षणादन्यदपि हिरण्य-सुवर्ण-धन-धान्यादिकं त्रिविधेन करणभूतेन योगत्रिक-करणत्रिकेण, अथवाऽऽत्मना परेणोभयेन, चेतनाचेतनमिश्ररूपेण वा अभियुज्य, अभि=आभिमुख्येन युक्त्वा=बन्धरोधादिना तत्तत्कल्पित-संज्ञया कशादिप्रहारेण वाहयित्वा=तेषु तेषु कर्मसु नियुज्य शिक्षयित्वेत्यर्थः। अपि च-तदेव संसिच्य क्रयविक्रयादिव्यवहारेणाभिवर्द्धय, अत्रापि ‘त्रिविधेने’-त्यस्य

करते हैं। दुःखों से वे घबडाते हैं। और सदा सांसारिक सुखोंके अभिलाषी रहते हैं। संयमी जीवों में ये सब प्रवृत्तियां घटित नहीं होतीं। यद्यपि उन्हें भी अपने प्राण प्रिय होते हैं परन्तु जब संयम में कोई घोर परीषद् उपसर्ग आकर उपस्थित हो जाते हैं तब वे अपने संयम की रक्षा के लिये अपने प्राणों की भी परवाह नहीं करते हैं। असंयमी जीवों को ही अपना असंयम जीवन प्रिय होता है, कारण कि ये गुरुकर्मी हैं। लघुकर्मी संयमी जीवों को ऐसा जीवन प्रिय नहीं होता। इनकी विचार-धारा सदा आत्मकल्याणकारी मार्ग की ओर ही झुकती रहती है। असंयमजीवी रात दिन परिग्रह-दासीदास, नौकरचाकर, हाथीघोड़ा, गायभैस, हिरण्यसुवर्ण, आदि के बढ़ाने की ओर ही अधिकाधिक लालायित होते रहते हैं। वे चेतन अचेतन तथा मिश्र रूप परिग्रह की जितनी भी मात्रा प्राप्त करते हैं—चाहे वह थोड़ी हो या अधिक हो उसी

सांसारिक सुभना अलिहापी रहे छे. संयमी लुवोमां आ गधी प्रवृत्तिओ घटित थती नथी. जे के तेने पणु पोतानो प्राणु प्रिय होय छे परंतु त्यारे संयममा ठोछ घोर परिषद उपसर्ग आवीने उपस्थित थाय छे त्यारे ते पोताना संयमनी रक्षा भाटे पोताना प्राणुनी पणु परवाड करता नथी।

असंयमी लुवोने पोतानु असंयम लुवन प्रिय होय छे, कारण के ते गुरुकर्मी छे. लघुकर्मी संयमी लुवोने ओषु लुवन प्रिय नथी होतुं. तेनी विचार-धारा सदा आत्मकल्याणकारी मार्गनी तरङ्ग लागेड रहे छे. असंयमलुवी रातदिन परिग्रह-दासीदास नौकरचाकर हाथीघोड़ा गायभैस हिरण्यसुवर्ण आदिने बढावामा अधिकमा अधिक भञ्ज रहे छे ते चेतन, अचेतन तथा मिश्र रूप परिग्रहनी जेतसी पणु मात्रा प्राप्त करे छे—चाहे बडे थोड़ी होय छे

સમ્બન્ધઃ, તસ્ય=અર્થારમ્ભિણઃ, તત્ર દાસીદાસહસ્તિહયાદિપરિગ્રહે, યા=યાવત્પરિ-  
માણા માત્રા=પરિગ્રહાંશઃ, સા અલ્પા વા=સ્તોકા અચિરકાલભોગક્ષમા વા, વહુકાવા=  
દીર્ઘકાલભોગક્ષમા વા, યદ્વા પ્રમાણતો મૂલ્યતો વાડલ્પા વહુકા, અલ્પત્વ-વહુત્વે  
ચાપેક્ષિકે, અતઃ સર્વસ્યાડપ્યલ્પત્વ-વહુત્વયોઃ સમ્ભવાત્, અલ્પા વહુકા વાડર્થાદિમાત્રા  
યસ્ય, તત્ર=અર્થાદો અમંયમજીવી ગૃહઃ=મૂર્ચ્છિતઃ, કૃતાકૃતલઘ્યાલઘ્યાદ્યાશાપાશૈ-  
ર્ગ્રથિતઃ સન્ ભોજનાય=ભવિષ્યદુપભોગાય તદ્દનં મ્વાયત્તીકૃત્ય નિષ્ઠતિ=તત્રૈવાસક્તો  
ભવતિ, ન તતો મનસાડપ્યુપરમત ઇત્યર્થઃ, આરમ્ભપરિગ્રહાસક્તઃ કેવલિપ્રજ્ઞપ્ત  
ધર્મં ન જૃણોતિ, ધર્મશ્રવણમન્તરેણ ન સમ્યગ્દર્શનમ્, તદભાવે સમ્યગ્જ્ઞાનાભાવઃ,  
તદભાવે મિથ્યાત્વાભિવૃદ્ધિસ્તથા ચ સંસારપરિભ્રમણં પ્રાણિનાં ભવતીતિ પરિગ્રહ-  
ગૃહ્હો નાત્મહિતૈષી ભવતીતિ વર્તુલકાર્યઃ ॥ મૃ૦ ૫ ॥

મેં अपनी आवश्यकता की पूर्ति न समझ कर उसके बढ़ाने में ही मग्न बने  
रहते हैं । परिग्रह में अल्पता और बहुता यहां पर दो तरह से प्रकट की  
गई है—एक काल की अपेक्षासे और दूसरी मूल्य या प्रमाण की अपेक्षा  
से । थोड़ेसमय तक, अथवा अधिक समय तक परिग्रह का जीवों के भोग  
और उपभोग करने के काम में जो आना वह काल की अपेक्षा से परिग्रह  
में अल्पता या बहुता है, या जिनका मूल्य कम ज्यादा हो अथवा प्रमाण  
से जिनमें कमती बढ़तीपना हो यह मूल्य या प्रमाण की अपेक्षा से उन  
में अल्पता तथा बहुता है, क्योंकि अल्पत्व, बहुत्व, ये दोनों सापेक्ष हैं ।

चार नौकर चाकरो एवं चार चतुष्पदादि कों की अपेक्षा दो नौकर  
चाकरो एवं दो चतुष्पदादिकों में प्रमाण की अपेक्षा से, उनके अधिक समय  
तक रहने की अपेक्षा से थोड़े समय तक रहनेवालों में काल की अपेक्षा से,

વધારે હોય તેમા તે પોતાની આવશ્યકતાની પૂર્તિ ન સમજીને તેના વધારવામાં જ  
મગ્ન બની રહે છે. પરિગ્રહમાં અલ્પતા અને બહુતા આ ઠેકાણે બે પ્રકારે પ્રગટ કરેલ  
છે, એક કાળની અપેક્ષાથી અને બીજી મૂલ્ય અને પ્રમાણની અપેક્ષાથી. થોડા  
સમય સુધી અથવા અધિક સમય સુધી પરિગ્રહનું જીવોને ભોગ અને ઉપભોગ  
કરવાના કામમાં જે આવડું તે કાળની અપેક્ષાથી પરિગ્રહમાં અલ્પતા અને  
બહુતા છે, અને જેનું મૂલ્ય ઓછું અધિકું હોય, અથવા પ્રમાણથી જેમાં  
વધઘટ પાણું હોય એ મૂલ્ય અગર પ્રમાણની અપેક્ષાથી તેમા અલ્પતા અને બહુતા  
છે, કારણ કે અલ્પત્વ, બહુત્વ, એ બંને સાપેક્ષ છે.

ચાર નોકર ચાકરો અને ચાર ચતુષ્પદાદિકોની અપેક્ષા બે નોકર ચાકરો અને  
બે ચતુષ્પદાદિકોમાં પ્રમાણની અપેક્ષાથી, તેના અધિક સમય સુધી રહેવાની અપેક્ષાથી

તથા અનેક અધિક મૂલ્યની અપેક્ષા કરનાર મૂલ્યવાળાંમાં મૂલ્યની અપેક્ષાથી અલ્પતા છે. તેનાથી વિપરીત બહુતા સમજી લેવા જોઈએ.

અસંયમી જીવ જોઈએ પરિગ્રહની માત્રા તેના પાસે અલ્પ હોય અથવા અધિક હોય તો તેને તેનાથી સંતોષ નથી થતો, તે તેના પાસે પરિગ્રહને ક્રય વિક્રય આદિ ઉપાયો દ્વારા વધારવાની ચેષ્ટામાં જ રહે છે. ચતુષ્પદાદિ જે સમય ઠીક ૨ રાસ્તે પર નથી ચલે તે કોઈના નુકસાન કરે છે, તે જોઈએ મારતા જોઈએ, ખાંડ પીવાનો જોઈએ ૨ સમય પર નથી દેતા, તેને પ્રતિ અશિષ્ટ શબ્દોનો પ્રયોગ કરતા જોઈએ, અને રસ્સી આદિથી બાંધીને તેને છોડીને એક સ્થાન પર રાખતા જોઈએ, તેની ગર્મી શર્દીની બાધાનો જોઈએ ધ્યાન નથી રાખતા, તે જોઈએ બોલે લે જોઈએ શકે છે અથવા નથી? તેની જોઈએ ચિંતા નથી થતી. તે ભવિષ્યકાળમાં ઉપયોગ કરવાના બાંધથી દ્રવ્યની સદા રક્ષા કરતા જોઈએ, અને તેમાં જોઈએ જોઈએ આસક્તિશાળી બને જોઈએ તે જોઈએ મનથી તે જોઈએ તેને જોઈએ છોડવા જોઈએ. સત્ય વાત જોઈએ-જો આરંભ અને પરિગ્રહને પુષ્ટ કરવામાં જોઈએ આસક્તિથી જોઈએ તે જોઈએ સદા વિમુક્ત રહે છે. આરંભ અને પરિગ્રહને સદાવમાં જોઈએ પ્રવૃત્તિ સર્વથા જોઈએ રહે છે.

જોઈએ સમયના રહેવાવાળામાં જોઈએ અપેક્ષાથી, તથા તેના અધિક મૂલ્યની અપેક્ષાથી અલ્પતા છે. તેનાથી વિપરીત બહુતા સમજી લેવા જોઈએ.

અસંયમી જીવ જોઈએ પરિગ્રહની માત્રા તેની પાસે અલ્પ હોય અથવા અધિક હોય તો તેને તેનાથી સંતોષ નથી થતો. તે તેના પાસે પરિગ્રહને ક્રય વિક્રય આદિ ઉપાયો દ્વારા વધારવાની ચેષ્ટામાં જ રહે છે. ચતુષ્પદાદિ જે વખતે ઠીક ઠીક રસ્તા ઉપર નથી ચાલતાં અને કોઈનું નુકસાન કરે છે ત્યારે તે તેને મારે છે, ખાંડ પીવાનું પણ ઠીક ઠીક સમય ઉપર દેતા નથી, તેના પ્રતિ અશિષ્ટ શબ્દોનો પ્રયોગ કરે છે, અને રસ્સી આદિથી બાંધીને પણ તેને છોડીને એક સ્થાન પર રાખે છે, તેની ગર્મી શર્દીની બાધાનું પણ ધ્યાન નથી રાખતા, એ આટલો બોલે જોઈએ શકે છે નહિ તેની પણ તેને ચિંતા થતી નથી તે ભવિષ્યકાળમાં ઉપયોગ કરવાના બાંધથી દ્રવ્યની સદા રક્ષા કરે છે, અને તેમાં તે જોઈએ આસક્તિશાળી બને છે કે મનથી પણ તે તેને છોડવા જોઈએ નથી. સાચી વાત જોઈએ-જો આરંભ અને પરિગ્રહ પુષ્ટ કરવામાં જોઈએ આસક્તિથી તે જોઈએ સદા વિમુક્ત રહે છે. આરંભ અને પરિગ્રહના સદાવમાં જોઈએ પ્રવૃત્તિ સર્વથા જોઈએ રહે છે.

યોઽસંયમજીવી ગૃહોઽનર્થકર્મર્થમુપાર્જયન્નર્થપરિરક્ષણં કરોતિ કિન્તુ તસ્ય તદ્વનમનેકપ્રકારેણ નશ્યતીતિ દર્શયતિ-‘ તઓ સે ’ ઇત્યાદિ ।

વીતરાગપ્રણીત ધર્મ મેં સર્વથા સાવધ પ્રવૃત્તિ કરને કા નિષેધ હૈ ।  
 હસ વાત કો તવ હી સમજા જા સકતા હૈ કિ જબ વીતરાગપ્રણીત ધર્મ  
 કો સુનને જાનને ઓર ઉસકે મનન કરને કા અવસર મિલે, પરન્તુ જબ  
 વે સિદ્ધાન્ત કો સુનતે હી નહીં હૈ તવ હસ સિદ્ધાન્ત કો જાન ભી કૈસે  
 સકતે હૈ । અતઃ જહાં પર હસ પ્રકાર કી પ્રવૃત્તિ ચાલૂ હૈ, જિન્હેં અપને  
 કર્તવ્ય કા ખાન હી નહીં હૈ, ઓર જો જાન વૂઝ કર ભી સ્વડ્ડે મેં પડ  
 રહે હૈ, વે કેવલિપ્રણીત ધર્મ કે સિદ્ધાન્ત કો અભી તક સમજે હી નહીં  
 હૈ । જિન સિદ્ધાન્ત કે સમજે વિના સમકિત જૈસી સુન્દર વસ્તુ કમી  
 ભી ઉનકે હાથમેં નહીં આસકતી । હસકે અભાવ મેં સમ્યગ્જ્ઞાન કા  
 અભાવ ઓર ઉસકે અભાવ સે મિથ્યાત્વ કી વૃદ્ધિ, ઉસકી વૃદ્ધિ સે સંસાર  
 મેં પરિભ્રમણ એસે જીવોં કા અનિવાર્ય હૈ, અતઃ જો આત્મહિત કી કામના  
 કરનેવાલે હૈ ઉનકા યહ ધર્મ હૈ કિ-વે પરિગ્રહ મેં ગૃહ ન બનેં । તમી  
 સંસારસાગર સે ઉનકા આત્મોદ્ધાર હો સકતા હૈ ॥ સૂ. ૫ ॥

જો અસંયમજીવી હૈ ઓર પરિગ્રહ મેં હી આસક્તપરિણતિવાલા  
 બના હુઆ હૈ વહ અનેક અનર્થોંકા ઉત્પાદક દ્રવ્ય કે સંગ્રહ કરને મેં હી  
 લવલીન રહતા હૈ । વહ યદ્યપિ કસાયે હુઅ અપને હસ દ્રવ્ય કી હર એક

વીતરાગપ્રણીત ધર્મમા સર્વથા સાવધ પ્રવૃત્તિ કરવાનો નિષેધ છે એ  
 વાતને ત્યારે જ સમજી શકાય છે કે ત્યારે વીતરાગપ્રણીત ધર્મને સાંભળવા  
 જાણવા અને તેનું મનન કરવામાં અવસર મળે પરંતુ ત્યારે તે સિદ્ધાંતને  
 સાંભળતો જ નથી ત્યારે તે સિદ્ધાંતને જાણી પણ કેવી રીતે શકે, માટે જે  
 ઠેકાણે આ પ્રકારની પ્રવૃત્તિ ચાલુ છે, જેને પોતાના કર્તવ્યનું પણ ભાન નથી  
 અને જે જાણી જોધને પણ ખાડામાં પડે છે તે કેવલિપ્રણીત ધર્મના સિદ્ધાંતને  
 હંબુ સુધી સમજ્યા જ નથી. જે સિદ્ધાંતને સમજ્યા વિના સમકિત જેવી સુદર  
 વસ્તુ કોઈ વખત પણ તેના હાથમાં આવી શકતી નથી. તેના અભાવમાં  
 સમ્યગ્જ્ઞાનનો અભાવ, અને તેના અભાવથી મિથ્યાત્વની વૃદ્ધિ, તેની વૃદ્ધિથી  
 સંસારમાં પરિભ્રમણ એવા જીવોને અનિવાર્ય છે અતઃ જે આત્મહિતની  
 કામના કરવાવાળા છે, તેનો એ ધર્મ છે કે તે પરિગ્રહમાં ગૃહ ન અને ત્યારે જ  
 સંસારસાગરથી તેનો આત્મોદ્ધાર થાય છે ॥ સૂ. ૫ ॥

જે અસંયમજીવી છે અને પરિગ્રહમાં જ આસક્તપરિણતિવાળા બનેલ છે તે  
 અનેક અનર્થોના ઉત્પાદક દ્રવ્યનો સંગ્રહ કરવામાં જ તદ્દલીન રહે છે. તે જો કે પોતાના

મૂલમ—તઓ સે ઇગયા વિવિહં પરિસિટ્ટં સંભૂયં મહોવગરણં  
ભવઈ, તંપિ સે ઇગયા દાયાયા વા વિભયંતિ, અદત્તહારો વા સે  
અવહરઈ, રાયાણો વા સે વિલુપંતિ, નસ્સઈ વાસે, વિનસ્સઈ વા  
સે, અગારદાહેણ વા સે ડજ્ઝઈ, ઇય સે પરસ્સઽટ્ટાણ કૂરાઈં કમ્માઈં  
વાલે પકુવ્વમાણે તેણ દુક્ખેણ સંમૂઢે વિપ્પરિઆસમુવેઈ ॥ સૂ૦ ૬ ॥

છાયા—તતસ્તસ્યૈકદા વિવિધં પરિશિષ્ટં સંભૂતં મહોપકરણં ભવતિ, તદપિ  
તસ્યૈકદા દાયાદા વા વિભજન્તે, અદત્તહારો વા તસ્યાપહરતિ, રાજાનો વા તસ્ય  
વિલુપ્પન્તિ, નશ્યતિ વા તસ્ય, વિનશ્યતિ વા તસ્ય, અગારદાહેન વા તદ્દહ્યતે, ઇતિ  
સ પરસ્યાર્થાય ક્રૂરાણિ કર્માણિ વાલઃ પ્રકુર્વાણસ્તેન દુઃખેન સંમૂઢો વિપર્યાસ-  
મુપૈતિ ॥ મૂ૦ ૬ ॥

ટીકા—‘તત’ ઇત્યાદિ, તતઃ સંગૃહીતથનાત્, સદ્ગ્રહકાલાઢા, એકદા =  
એકસ્મિન્ કાલે ન સર્વદા કદાચિદિવા વા રાત્રૌ વા । યદ્વા લાભાન્તરાયકર્મક્ષયો-  
પશમે ચેત્યર્થઃ, તસ્ય=અર્થસદ્ગ્રહશીલસ્ય વિવિધમ્=અનેકપ્રકારમ્ પરિશિષ્ટમ્ ઉપ-  
ભોગોર્વરિતમ્ સંભૂતં સમ્=સમ્યગ્રક્ષણાય ભૂતં સશ્ચિતં, સંગૃતં વા ભૂમ્યાદિનિસ્વા-  
પ્રકાર સે રક્ષા કરતા હૈ તો ખી ઉસકા વહ દ્રવ્ય અનેક પ્રકારસે નષ્ટ  
હો હી જાતા હૈ, ઇસ વાત કો પ્રકટ કરતે હુણ સૂત્રકાર કહતે હૈ—‘તઓ  
સે ઇગયા’ ઇત્યાદિ ।

લાભાન્તરાય કર્મ કે ક્ષયોપશમ સે હી જીવોં કો દ્રવ્યાદિકકા લાભ  
હોતા હૈ, યહ શાસ્ત્રસંમત સિદ્ધાન્ત હૈ । ઇસકે અભાવ યેં અનેક પ્રકાર કે  
કિયે ગયે પ્રયત્ન ખી દ્રવ્યલાભ કરાને યેં કારણ નહીં હોતે હૈ । ઇમ  
લાભાન્તરાય કર્મ કે ઉદય યેં સંગૃહીત દ્રવ્ય ખી નષ્ટ હો જાતા હૈ । ઇમ  
કી સ્થિતિ રહના ખી ઇસી કર્મ કે ક્ષયોપશમાધીન હૈ । જવ ઇસકા ઉદય

કમાણેલાં દ્રવ્યની દરેક પ્રકારે રક્ષા કરે છે, તો પણ તેનું દ્રવ્ય અનેક પ્રકારથી  
નષ્ટ થઈ જાય છે, આ વાતને પ્રગટ કરતાં સૂત્રકાર કહે છે—‘તઓ સે’ ઇત્યાદિ.

લાભાન્તરાય કર્મના ક્ષયોપશમથી જ જીવોને દ્રવ્યાદિક લાભ થાય છે, તે  
શાસ્ત્રસંમત સિદ્ધાન્ત છે. તેના અભાવમાં અનેક પ્રકારના કરેલા પ્રયત્ન પણ દ્રવ્ય  
લાભ કરાવવામાં કારણ નથી થતાં. આ લાભાન્તરાય કર્મના ઉદયમાં સંગૃહીત  
દ્રવ્ય પણ નષ્ટ થાય છે, તેની સ્થિતિ રહેવી પણ તે કર્મને ક્ષયોપશમાધીન છે.



તમિત્યર્થઃ, મહોપકરણં=દ્વિપદચતુષ્પદાદિસમૂહો ભવતિ । તસ્ય સ ધનસમૂહોઽ-  
પ્યુપભોગાય ન ભવતીત્યાહ-‘તદપી’-તિ, એકદા=દુર્ભાગ્યોદયે, યદ્વા કદાચિત્  
‘દાયાદાઃ’ દાયં=વિભાજ્યદ્રવ્યમાદદતિ=ગૃહ્ણન્તીતિ દાયાદાઃ=સગોત્રાઃ, તસ્ય  
ધનાર્જનકષ્ટમનુભવતો જનસ્ય તદપિ દ્વીપાન્તરગમન-દુરારોહપર્વતારોહણ-સ્વન્યા-  
દિશ્વનન-રાજસેવા-કૃષિવાણિજ્યાદિરૂપસાવધવ્યાપારૈઃ સ્વપરસન્તાપકૈરૂપભોગાય  
સમુપાર્જિતસશ્ચિતવિવર્દિતં ધનમ્ વિભજન્તે=સ્વસ્વભાગગ્રહણાય વિભાગં કુર્વન્તિ,  
પૃથક્કુર્વન્તીત્યર્થઃ, અથવા અદત્તહારઃ, અદત્તમેવ હરતીત્યદત્તહારશ્ચૌરો વા તસ્ય  
ધનમપહરતિ=ચોરયતિ ।

રહતા હૈ તવ અનેક પ્રકારકે દ્રવ્યનાશ હોને કે ઉપાય મી જીવોં કો  
સ્વયમેવ પ્રાપ્ત હોતે રહતે હૈં । ઉસ સમય બુદ્ધિ મેં મી કુછ એસી વિપરી-  
તતા આજાતી હૈ જિસસે દ્રવ્ય કે વ્યય હોને કે ઉપાય મી અચ્છે ઔર  
ઉપાદેય પ્રતીત હોને લગતે હૈં । સંસાર મેં કૌન યહ ચાહતા હૈ કિ મેરા  
યહ દ્રવ્યાદિક નષ્ટ વિનષ્ટ હો જાય ? પરન્તુ સબ કુછ વિચારતે હુએ મી  
યા ઉસકી રક્ષા કે ઉપાય કરતે હુએ મી જો જીવ રાજા સે રંક હોં જાતે  
હૈં વે ઇસી વાત કે પ્રબલ પ્રમાણ હૈં ।

ઇસ કર્મ કે ક્ષયોપશમ હોને પર જિસ પ્રકાર જીવોંકો દ્રવ્ય કે  
આને કે અનેક ઉપાય એવં દ્વાર પ્રાપ્ત હોતે હૈં ઉસી પ્રકાર ઇસકે ઉદય મેં  
ઉસકે વિનાશ કે અનેક દ્વાર મી ઉન્હેં મિલ જાતે હૈં, યહી વાત સૂત્રકાર  
ઇસ સૂત્ર મેં પ્રકટ કર રહે હૈં—

ઉસ અર્થસંગ્રહશીલ વ્યક્તિ કે પાસ લાભાન્તરાય કર્મ કે ક્ષયોપશમ

જ્યારે તેનો ઉદય રહે છે ત્યારે અનેક પ્રકારના દ્રવ્યનાશ હોવાના ઉપાયો પણ  
જીવોને સ્વયમેવ પ્રાપ્ત થાય છે. તે સમય બુદ્ધિમાં પણ કોઈ એવી વિપરીતતા  
આવી જાય છે જેનાથી દ્રવ્યનો વ્યય હોવાના ઉપાયો પણ સારા અને ઉપાદેય  
પ્રતીત થવા લાગે છે. સંસારમાં કોણ એ ગ્રાહે છે કે માફ આ દ્રવ્યાદિક નષ્ટ  
વિનષ્ટ થાય, પરન્તુ ત્યારે બાજુથી વિચારતાં પણ તેની રક્ષાના ઉપાયો કરવા છતાં  
પણ જે જીવ રાજાથી રંક થાય છે તે આ વાતનું પ્રબલ પ્રમાણ છે.

આ કર્મના ક્ષયોપશમ થવાથી જે પ્રકારે જીવોને દ્રવ્ય આવવાના અનેક  
ઉપાય અને દ્વાર પ્રાપ્ત થાય છે તે પ્રકારે તેના ઉદયમાં તેના વિનાશના અનેક  
દ્વાર પણ તેને મળી રહે છે, એ વાત સૂત્રકાર આ સૂત્રમાં પ્રગટ કરે છે—

તે અર્થસંગ્રહશીલ વ્યક્તિની પાસે લાભાન્તરાય કર્મનો ક્ષયોપશમ થવાથી



હોને પર અનેક પ્રકાર કા ભોગ ઉપભોગ સે વાકી વચા હોનેકે કારણ ધનાદિ કા સંગ્રહ હો જાતા હૈ “ધનકો ધન કમાતા હૈ” હમ લોકોક્તિ કે અનુસાર ઉસકે સંગૃહીત દ્રવ્ય સે ફિર અનેક ઉપાયોં દ્વારા ઉસે દ્રવ્યાદિકી પ્રાપ્તિ હોને લગતી હૈ । ભોગ ઓર ઉપભોગ કી આવશ્યકતાઈં ભી જૈસા જૈસા લાભ હોતા હૈ વૈસે ર વઢતી જાતી હૈ, ઓર ઉનકી પૂર્તિ કરનેમ્ં ભી દ્રવ્યાદિક કા વ્યય હોને લગતા હૈ । ભોગવિલાસ કી સામગ્રી જુટાને મ્ં તથા મૌજ મજા કરને મ્ં લાભાનુસાર દ્રવ્ય કા વ્યય હોતા હૈ । આવશ્યકતા કી પૂર્તિ સે અથવા લેન-દેન કે વ્યવહાર સે અવગિષ્ટ દ્રવ્ય કો લોગ, યા તો કિસી બેંક મ્ં જમા કરા દેતે હૈં, યા જમીન મ્ં ઉસે ગાડ કર રાખ દેતે હૈં । જમીન મ્ં ન ગાડે તો ઉસે તિજોરિયોં મ્ં ભર કર ભી એક જગહ રાખદેતે હૈં । ઉન્હેં એસે અપને સગોત્રિયોં કા સમાગમ મિલતા હૈ જો ઇન્હેં રાત દિન દુઃખી કિયા કરતે હૈં । અવિભક્ત કુટુંબ હોનેસે કિસી વાતકો લેકર પરસ્પર મ્ં જવ કુછ અનવનસી હો જાતી હૈ તવ આપસ મ્ં અલગર હોને કી પરિસ્થિતિ આની હૈ । જવ વિભક્ત હોતે હૈં તવ વે સમસ્ત ધનકો વટવા લેતે હૈં । સગોત્રિયોં કા સમાગમ ધની વ્યક્તિયોં કો કદાચિત્ અનુકૂલ પ્રવૃત્તિ કરનેવાલા ભી મિલ જાવે ઓર વે ધન કો અર્જન કરને મ્ં કષ્ટ કા અનુભવ કરનેવાલે ઉસ વ્યક્તિ કે ઉસ દ્રવ્ય કો

અનેક પ્રકારના ભોગ અને ઉપભોગથી બાકી બચવાને કારણે ધનાદિનો સંગ્રહ થાય છે “ધનથી ધન પ્રાપ્ત થાય છે” આ લોકોક્તિને અનુસાર તેના સંગૃહીત દ્રવ્યથી પછી અનેક ઉપાયો દ્વારા તેને દ્રવ્યાદિકની પ્રાપ્તિ થવા લાગે છે. ભોગ અને ઉપભોગની આવશ્યકતાઓ પણ જેમ જેમ લાભ થાય છે તેમ તેમ વધતી જાય છે. અને તેની પૂર્તિ કરવામાં પણ દ્રવ્યાદિકનો વ્યય થવા લાગે છે. ભોગ-વિલાસની સામગ્રી મેળવવામાં તથા મોજમજા કરવામાં લાભાનુસાર દ્રવ્યનો વ્યય થાય છે. આવશ્યકતાની પૂર્તિથી અથવા લેખદેખના વ્યવહારથી અવગિષ્ટ દ્રવ્યને લોક અગર કોઈ બેંકમાં જમા કરાવે છે અગર જમીનમાં તેને દાટીને રાખે છે. જમીનમાં ન દાટે તો તેને તિજોરીઓમાં ભરીને પણ એક જગ્યાએ રાખે છે. તેને એવા પોતાના સગોત્રિઓનો સમાગમ મળે છે જે તેને રાત્રિદિવસ દુઃખી કરે છે. અવિભક્ત કુટુંબ હોવાથી કોઈ વાતને લઈને પરસ્પરમાં ત્યારે કાંઈક આનું બનાવ થાય છે ત્યારે આપસ આપસમાં અલગ અલગ થવાની તૈયારી બને છે. ત્યારે વિભક્ત થાય છે ત્યારે તે સમસ્ત ધનને વહેંચી લે છે. સગોત્રિઓનો સમાગમ ધની વ્યક્તિઓને કદાચિત્ અનુકૂળ પ્રવૃત્તિ કરવાવાળા પણ મળી આવે,

જો ઘડી કઠિનતા સે ઉસને ઢીપાન્નરગમન સે, દુરારોહ પર્વતોં કે ઉલ્લં-  
ઘનસે, શ્વાનિ મેં પહે હુણ ઉમ્કે શ્વોદને સે, રાજા કી સેવાસે, ઓર  
અપને ંવં પર કો સન્નાપ કરનેવાલે કૃષિ-વાણિજ્યાદિ રૂપ સાવધ  
વ્યાપારોં સે પૈદા કિયા હૈ સન્નિત કિયા હૈ ઓર વ્યાજ આદિ ઢારા જિસ  
કો વૃદ્ધિ કી હૈ ખલે હી વિભાજિત ન કરેં; પરન્તુ ચોરોં સે દ્રવ્ય કી  
રક્ષા કરના ંક મુશ્કિલ કાર્ય હૈ । ધની વ્યક્તિયોં કે અનેક મિત્ર ઓર  
શત્રુ હો જાતે હૈ । જિનકા ઉસસે કામ નિકલતા રહતા હૈ વે ઉસકે  
મિત્ર, ઓર જિનકા ઉસસે કામ નહીં નિકલતા વે ઉસકે શત્રુ હો જાતે  
હૈ । જો મિત્ર હોતે હૈ વે ખી કાલાન્તર મેં શત્રુ, ઓર જો શત્રુ હોતે હૈ વે  
ખી કાલાન્તર મેં મિત્ર બનતે હુણ દેખે જાતે હૈ । અતઃ જો પહિલે મિત્ર  
બન કર શત્રુ બન જાતે હૈ વે સઘ હસકા ભેદ ભાવ જાન કર ચોરોં કો શુભ  
રીતિ સે સઘ પ્રકાર કી હસકી પ્રવૃત્તિ સે પરિચિત કરા દેતે હૈ ઓર અન્ન  
મેં હસે ભુટવા દેતે હૈ । ક્ષણ ભર મેં યહ અમીર સે ગરીબ બન જાના હૈ ।  
યદિ પુણ્યોદય સે ચોરોંકો ખી હસકે દ્રવ્યકો ચુરાને કા માહસ ન જાગ્રત  
હો ઓર વે હસકે ડપર ધાડ ન ખી પાડે તો ખી અધર્મી રાજા કી  
નજર સે દ્રવ્યકી રક્ષા કરના મુશ્કિલ હી હૈ ।

અને તે ધનને ઉપાર્જન કરવામાં કષ્ટનો અનુભવ કરવાવાળા તે વ્યક્તિએ તે  
દ્રવ્યને જે ઘણી મુશ્કેલીથી દરિયાપારથી, મહાન પર્વતોના ઉલ્લંઘનથી, ખાણમાં  
પહેલાંને તેના ખોદવાથી, રાત્રની સેવાથી અને પોતાને તેમજ ખીલને સંતાપ  
કરવાવાળી ખેતી-વાણિજ્યાદિ રૂપ સાવધ વ્યાપારથી પેદા કરેલ છે, સંચિત  
કરેલ છે, અને વ્યાજ આદિ ઢારા જેની વૃદ્ધિ કરેલ છે, ભલે તે વિલાણત ન  
કરે, પરંતુ ચોરોથી દ્રવ્યની રક્ષા કરવી એક મુશ્કેલ કાર્ય છે. પૈસાદાર વ્યક્તિ-  
ઓના અનેક મિત્રો અને શત્રુઓ થાય છે. જેનાથી જેનું કામ થાય છે તે મિત્ર,  
અને જેનાથી જે કામ બનતું નથી તે શત્રુ બની જાય છે. જે મિત્ર હોય છે  
તે પણ કાલાન્તરમાં શત્રુ, અને જે શત્રુ હોય છે તે પણ કાલાન્તરમાં મિત્ર બને  
છે તેમ દેખવામાં આવે છે. માટે જે પહેલાં મિત્ર બનીને શત્રુ બને છે તે બધા  
તેના ભેદભાવ જણાવે ચોરોને શુભ રીતિથી સર્વ પ્રકારની તેની પ્રવૃત્તિથી પરિ-  
ચિત કરી આપે છે, અને અન્તમાં તેને ધુટાવે છે. ક્ષણભરમાં તે અમીરથી ગરીબ  
બની જાય છે. કદાચ પુણ્યોદયથી ચોરો તરફથી તેનું દ્રવ્ય ચોરાવાનું કદાચ  
સાહસ ન બને, અને તેઓ તેની તરફ ધાડ પણ ન પાડે તો પણ અધર્મી રાત્રની  
નજરથી દ્રવ્યની રક્ષા થવી મુશ્કેલ છે.

અથવા રાજાનઃ=નૃપાસ્તસ્ય ધનં વિલુમ્પન્તિ=વિલુપ્તન્તિ અભિયોગદ્વારેણ વસ્ત્ર-  
લાત્તદ્ધનં ગૃહ્ણન્તીત્યર્થઃ । અથવા તસ્યાર્થગૃહ્ણસ્ય ધનં સ્વયમેવ નશ્યતિ, વાણિજ્યાદૌ  
વહુમૂલ્યેન ક્રયણાદરૂપેન વિક્રયણાદિત્યર્થઃ । ‘વિનશ્યતિ’ રાજકોશે ‘વૈદ્ઙ’  
પદવાચ્યે સંસ્થાપિતં, ભૂમ્યાદૌ વા નિશ્ચાતં તસ્ય રાત્રઃ પરિવર્તનેનાપગતાત્, ભૂમૌ યત્ર  
નિશ્ચાતં દીર્ઘકાલેન તતોઽપગમાદ્વા વિનશ્યતિ=સ્વયમેવ નષ્ટં ભવતીત્યર્થઃ ।

રાજા કી જવ લોલુપ દ્રષ્ટિ હસકે ધન પર પડતી હૈ તવ વહ જવર્દસ્તી  
કોઈ એસા અભિયોગ લગા દેતા હૈ કિ જિમસે ઉમ વિચારે કા વહ ધન  
દેગ્વતેર લુટવા લિયા જાતા હૈ ।

યદિ ધાર્મિક રાજાકે રાજ્ય મેં વસને કા ધનીકો સૌભાગ્ય મિલતા  
હૈ ઔર ઉસકી વજહ સે ઉસકે ધનકી હર ંક પ્રકાર સે રક્ષા ખી હોતી  
રહતી હૈ તો ખી અધિક સંગ્રહ કી લાલસા સે યા ઉસકી વૃદ્ધિ કી તીવ્ર  
ભાવનાસે જવ ધની ઉસે કિસી વ્યાપાર મેં લગા દેતા હૈ તો તેજી મંદી કે  
સમય ક્રય વિક્રય કરને સે અચાનક જવ વ્યાપાર મેં ઘાટા આ જાતા હૈ  
તવ વહ કમાયા હુઆ દ્રવ્ય સહસા હાથ સે નિકલ જાતા હૈ, ઔર વહ  
ધની વ્યક્તિ ફિર હાથ મલતે હી રહ જાતા હૈ । વ્યાપાર મેં યદિ પુણ્ય  
કર્મ કે ઉદય સે અચ્છા લાભ ખી હો જાતા હૈ, તો લોગ ઉસે બૈંકો મેં  
જમા કર દેતે હૈ યા ઉસે જમીન વગેરહ મેં ગાડ દેતે હૈ । વહાં ઉસકી  
સુરક્ષા હોતી હો તો ખી જવ રાજ્ય કા પરિવર્તન હોતા હૈ તવ બૈંકે ખી  
પ્રાયઃ લુટ જાતી હૈ, અથવા જવ વહ ઉસ ભૂમિ સે વહુત સમય કે વાદ ગાડે

રાજાની ન્યારે લોલુપ દ્રષ્ટિ તેના ધન ઉપર પડે છે ત્યારે તે જળશય્થી  
કોઈ એવો અભિયોગ લગાવે છે કે જેનાથી તે ગિચારાનું તે ધન દેખતા  
દેખતામાં હુંટાવી લઈ જાય છે

કદાચ ધાર્મિક રાજાના રાજ્યમાં વસવાનો ધનીને સૌભાગ્ય મળે છે, અને  
તેના તરફથી તેના ધનની દરેક પ્રકારે રક્ષા પણ થાય છે તો પણ અધિક સંગ્ર-  
હની લાલસાથી અગર તેની વૃદ્ધિની તીવ્ર ભાવનાથી ન્યારે પૈસાદાર તે ધનને  
કોઈ વ્યાપારમાં લગાવી દે છે તો તેજી મંદીના સમયમાં ક્રય વિક્રય કરવાથી  
અચાનક ન્યારે વ્યાપારમાં નુકસાન આવે છે ત્યારે તે કમાણેનું ધન નાશના પ્રાયથી  
શુભાવી દે છે, અને પછી તે પૈસાદાર વ્યક્તિ હાથ ધરતો થઈ જાય છે, વ્યાપારમાં  
કદાચ પુણ્ય કર્મના ઉદયથી સારા લાભ પણ મળે છે તો લોક તેને બેંકોમાં જમા  
કરાવી દે છે, અગર તેને જમીન વિગેરેમાં નાટી દે છે. તે જગોંગે તેની સુરક્ષા  
પાને તો પણ ન્યારે રાજ્યનું પરિવર્તન થાય છે ત્યારે બેંકોને પણ હુંટવામાં  
આવે છે, અથવા ન્યારે તે ભૂમિથી ઘણું સમય ગાઢ દોડેલા સંધાનથી સંધાનાન્તરિન

કથંચિત્સુરક્ષિતમપિ તદ્ધનં કાંસ્યદ્રવ્યમુવર્ણરજતાદિકમ્ અગારદાહેન=  
ગેહદાહેન દહ્યતે, इत्यादिकारणैरुपार्जितस्याप्यर्थस्य बहुविधो नाशो भवति, अन्तराय-  
कर्मप्रावल्यानोपार्जयितुरूपभोगाय नैव भवतीत्यर्थः। उक्तञ्च—

“ चत्वारो धनदायादा, धर्माग्निनृपतસ્कराः ॥

तत्र ज्येष्ठापमानेन, त्रयः कुप्यन्ति सोदराः ” ॥ ૧ ॥ इति ।

હુણ સ્થાન સે સ્થાનાન્તરિત હો જાતા હૈ તવ ઉસ્કા મિલના ખી મુશ્કિલ  
હો જાતા હૈ । ઇસ તરહ સે ખી ઉસ્કા વિનાશ હોતે દેર નહીં લગતી ।

કથંચિત્ કાંસા; દ્રવ્ય, સુવર્ણ, રજતાદિ રૂપ વહ ધન ઘર મેં સુરક્ષિત  
ખી રહે તો ખી અચાનક ઘરમેં આગ લગજાને સે ઉસ્કા ખી વિનાશ  
હો જાતા હૈ । ઉસ સમય વહુમૂલ્ય વસ્તુઁ ગ્લાકમેં મિલ જાતી હૈં ।  
આગ કો બુઝાને કે લિયે આયે હુણ લોગોં કે હાથ ખી ઉસ સમય જો  
ખી વસ્તુ લગતી હૈ વે ઉસે ઉઠાકર લે જાતે હૈં । ઇસ પ્રકાર ઇન પૂર્વોક્ત  
કારણોં સે ઉપાર્જિત દ્રવ્ય કા અન્તરાય કર્મ કે પ્રવલ ઉદયમેં અનેક રીતિ  
સે વિનાશ હોતે દેર નહીં લગતી । નીતિકાર ખી યહી વાત કહતે હૈ—

“ ચત્વારો ધનદાયદાઃ, ધર્માગ્નિનૃપતસ્કરાઃ ।

તત્ર જ્યેષ્ઠાપમાનેન, ત્રયઃ કુપ્યન્તિ સોદરાઃ ॥ ૧ ॥ ”

ધન કે હિસ્સેદાર ચાર હૈં । ૧ ધર્મ, ૨ અગ્નિ, ૩ રાજા, ઓર ૪ ચોર ।  
જિસ ધનકા સદુપયોગ ધર્મ મેં નહીં હોતા હૈ ઉસ ધનકા અગ્નિ, રાજા  
ઓર ચોરોં કે દ્વારા વિનાશ ઓર અપહરણ હોતા હૈ ॥ ૧ ॥

થાય છે ત્યારે તેનું મળવું પણ મુશ્કેલ બની જાય છે. આવી રીતે પણ તેનો  
વિનાશ હોવામાં વાર લાગતી નથી.

કોઈ પણ પ્રકારે કાંસા, દ્રવ્ય, સુવર્ણ, રજતાદિ રૂપ તે ધન ઘરમાં સુર-  
ક્ષિત રહે તો પણ અચાનક ઘરમાં આગ લાગવાથી તેનો પણ વિનાશ થઈ જાય  
છે. તેવા વખતે બહુમૂલ્ય વસ્તુઓ ખાક થાય છે. આગને ઓલવવા આવેલા  
લોકોના હાથમાં પણ તે વખતે જે વસ્તુ પડે છે તે પણ ઉઠાવી લઈ જાય છે. આ  
પ્રકારે આ પૂર્વોક્ત કારણોથી ઉપાર્જિત દ્રવ્યનો અન્તરાય કર્મના પ્રબલ ઉદયમાં  
અનેક રીતિથી વિનાશ થવામાં વાર લાગતી નથી. નીતિકાર પણ એ વાત કહે છે—

“ ચત્વારો ધનદાયદાઃ, ધર્માગ્નિનૃપતસ્કરાઃ ।

તત્ર જ્યેષ્ઠાપમાનેન, ત્રયઃ કુપ્યન્તિ સોદરાઃ ॥ ૧ ॥ ”

ધનના હિસ્સેદાર ચાર છે ૧ ધર્મ, ૨ અગ્નિ, ૩ રાજા અને ૪ ચોર. જે  
ધનનો સદુપયોગ ધર્મમાં નથી થતો તે ધનનો અગ્નિ, રાજા અને ચોરો દ્વારા  
વિનાશ અને અપહરણ થાય છે. ॥ ૧ ॥

વહુપ્રકારૈઃ સ ધનસચ્ચયકારી પરસ્યાર્થાય=અન્યાર્થમ્, દાયાદાદ્યર્થમેવ, ક્રૂરાણિ=શિરશ્છેદ-ગલ્લકર્તનાદીનિ કર્માણિ=દુરાચરણાનિ વાલઃ=કર્તવ્યઘ્ન્યચંતાઃ પ્રકુર્વાણઃ=પ્રકર્ષેણ વિદધાનઃ સન્, તેન કટુકર્મવિપાકોદયેન દુઃસ્વેન સંમૂઢઃ=પરિ-હતમતિઃ રાગદ્વેષાભિભૂતતયા કાર્યાકાર્યમજાનન્ વિપર્યાસમ્=વૈપરીત્યં મિથ્યાત્વમ્ ઉપૈતિ=પ્રાપ્નોતિ, અર્થાર્થમનર્થકારી ભવતીતિ તાત્પર્યમ્ ॥ સૂ૦ ૬ ॥

મૂઢાઃ સુસ્વેપ્સવો દુઃસ્વમવાપ્નુવન્તીતિ ન મયા સ્વબુદ્ધ્યોચ્યતે, ઇતિ સુધર્મા સ્વામી કથયતિ-‘મુણિના’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્-મુણિના હુ એયં પવેદ્યં, અણોહંતરા એ, નો ય ઓહં તરિત્તે, અતીરંગમા એ નો ય તીરં ગમિત્તે, અપારં-ગમા એ, નો ય પારં ગમિત્તે, આયાણિજ્જં ચ આયાય તંમિ ઠાણે ન ચિદ્દિ વિતહં પપ્પડ્ધેયન્ને તંમિ ઠાણંમિ ચિદ્દિ ॥ સૂ૦ ૭ ॥

છાયા—મુનિના હુ એતત્પવેદિતમ્, અનોઘન્તરા એતે ન ચૌયં તર્તુમ્, અતીરંગમા એતે, ન ચ તીરં ગન્તુમ્, અપારંગમા એતે, ન ચ પારં ગન્તુમ્, આદાનીયં ચાદાય તસ્મિન્ સ્થાને ન તિષ્ઠતિ, વિતથં પ્રાપ્યાસ્વેદજ્ઞસ્તસ્મિન્ સ્થાને તિષ્ઠતિ ॥ સૂ૦ ૭ ॥

જિસ ધનકા અન્તિમ ગ્રહ પરિણામ હોતા હૈં ઉસ ધનકો સંચિત કરનેવાલે અજ્ઞાન મેં પડે હુએ હૈં “પરસ્યાર્થાય” સિર્ફ દાયાદ વગૈરહ દૂસરોં કે ઉપભોગ કે લિયે હી ઉસકે સંગ્રહાર્થ ભયંકર સે ભયંકર ગલ્લ-કર્તન, શિરશ્છેદન જૈસે નિંદિત દુરાચારોં કો કરતા હુઆ તજ્જન્ય કટુક કર્મકે વિપાકજનિત દુઃસ્વ સે સંતસચિત્ત વન કર્તવ્યાકર્તવ્ય કે વિવેક સે રહિત હોકર મિથ્યાત્વભાવરૂપ વિપર્યાસપને કો પ્રાપ્ત હોતા હૈં અર્થાત્ વહ ધનકે લિયે અનેક અનર્થ કરતા હૈ ॥ સૂ૦ ૬ ॥

વાલ અજ્ઞાની સુસ્વ કી ચાહના કરતે હૈં પરન્તુ ડુઃસ્વ કી હી પ્રાપ્તિ હોતી હૈ, ઇસ વિષય મેં શ્રીસુધર્મા સ્વામી અપની નિજી કલ્પના કા નિપેધ

જે ધનનો અન્તિમ આ પરિણામ થાય છે તે ધનનો સંચિત કરવાવાળા અજ્ઞાનમાં પડેલા છે. “પરસ્યાર્થાય” ફક્ત દાયાદ વિગેરે બીજાના ઉપભોગ માટે જ તેના સંગ્રહાર્થ ભયંકરથી ભયંકર ગલ્લકર્તન, શિરશ્છેદન જેવા નિંદિત દુરા-ચારોને કરીને તજ્જન્ય કટુક કર્મના વિપાકજનિત દુઃખથી સંતસચિત્ત બની કર્તવ્યાકર્તવ્યના વિવેકથી રહિત બની મિથ્યાત્વભાવરૂપ વિપર્યાસપાનને પ્રાપ્ત થાય છે, અર્થાત્ તે ધન માટે અનેક અધર્મ કરે છે ॥ સૂ૦ ૬ ॥

બાક અજ્ઞાની સુખની ચાહના કરે છે પરન્તુ તેને દુઃખની જ પ્રાપ્તિ થાય છે. આ વિષયમાં શ્રી સુધર્માસ્વામી પોતાની નિજ કલ્પનાનો નિપેધ કરીને કહે છે—

ટીકા—‘મુનિને’-ત્યાદિ । ‘મુનિના’ સંસારસ્ય ત્રિકાલાવસ્થાં મનુતે યઃ સ મુનિઃ=વાતિકર્મચતુષ્ઠયસમુદ્ભૂતાત્મસ્વરૂપસ્તીર્થઙ્કરગણધરાદિઃ, તેન, હુ=નિશ્ચયેન एतत्=પૂર્વોક્તં વક્ષ્યમાણં વા, તત્ર પૂર્વોક્તં પરિગ્રહાસક્તિજનિતસંસારપરિભ્રમણ-સ્વરૂપમ્, અસકૃદુચ્ચૈર્ગોત્રોત્પત્ત્યાદિકં ચ પ્ર=પ્રકર્ષેણ વેદિતં=દ્વાદશપર્ષદિ પ્રરૂપિતમ્ ભિન્નભિન્નસ્વરૂપેણ કથિતમિત્યર્થઃ । વક્ષ્યમાણં પ્રવેદિતમાદૃ-‘અનોઘન્તરા’ ઇત્યાદિ, કરતે હુમ્ કહતે હૈં—‘મુણિણા’ ઇત્યાદિ ।

“મુનિ” યહ શબ્દ ‘મન્’ ધાતુ સે નિષ્પન્ન હુઆ હૈ । ‘મન્’ ધાતુ કા અર્થ જાનના હૈ । જો સંસારી કી ત્રિકાલસંવંધી સમસ્ત ગુણ-પર્યાયરૂપ અવસ્થાઓ કો જાનના હૈ ડસકા નામ મુનિ હૈ, ઘાતિયા કર્મો કૈ ક્ષય હોને સે જિન્હો કો કેવલજ્ઞાન સ્વરૂપ આત્મા કૈ નિજરૂપ કી પ્રાપ્તિ હો ચુકી હૈ ંસે તીર્થકર, ગણધરાદિ દેવ યહાં ‘મુનિ’ શબ્દ સે લિયે ગયે હૈ । અપની નિજી કલ્પના કા પરિહાર કરતે હુમ્ સૂત્રકાર કહતે હૈં કિ-પૂર્વોક્ત પરિગ્રહમેં અત્યાસક્તિવશ જીવ સંસાર મેં હી પરિભ્રમણ કરતા હૈ, તથા “અસકૃદુચ્ચૈર્ગોત્રે અસકૃન્નીચૈર્ગોત્રે” ઇત્યાદિ સૂત્રોં (ઈસી ઉદ્દેશ કૈ પ્રથમાદિ સૂત્રોં) મેં જો કહા ગયા હૈ યહ સમસ્ત વિષય, અથવા જો મીં કુછ આગે કહા જાવેગા વહ સવ મૈને અપની નિજબુદ્ધિ સે કલ્પિત કર નહીં કહા હૈ, કિન્તુ તીર્થકરાદિક દેવોં ને અપની ર પરિષદ્ મેં પૃથક્ પૃથક્ રૂપ સે ંસાહી કહા હૈ । ડનકી પરંપરા સે જિસ પ્રકાર યહ વિષય ચલા

‘મુણિણા’ ઇત્યાદિ.

“મુનિ” આ શબ્દ ‘મન્’ ધાતુથી નિષ્પન્ન થયો છે. ‘મન્’ ધાતુનો અર્થ જાણવું થાય છે. જે સંસારીની ત્રિકાલસંબંધી સમસ્ત ગુણપર્યાયરૂપ અવસ્થાઓને જાણે છે તેનું નામ મુનિ છે. ઘાતિયા કર્મનો ક્ષય હોવાથી જેને કેવળ જ્ઞાનસ્વરૂપ આત્માના નિજરૂપની પ્રાપ્તિ થયેલ છે એવા તીર્થંકર ગણધરાદિ દેવ આ ઠેકાણે મુનિ-શબ્દથી લેવામાં આવેલ છે. પોતાની નિજ કલ્પનાનો પરિહાર કરીને સૂત્રકાર કહે છે કે-પૂર્વોક્ત પરિગ્રહમાં અત્યાસક્તિવશ જીવ સંસારમાં જ પરિભ્રમણ કરે છે. તથા “અસકૃદુચ્ચૈર્ગોત્રે અસકૃન્નીચૈર્ગોત્રે” ઇત્યાદિ સૂત્રો (આ ઉદ્દેશના પ્રથમાદિ સૂત્રો)માં જે કહેવામાં આવેલ છે તે સમસ્ત વિષય, અને જે આગળ કહેવામાં આવશે તે બધા મેં પોતાની નિજ બુદ્ધિથી કલ્પના કરી કહેલ નથી, પણ તીર્થંકરાદિક દેવોએ પોતપોતાની પરિષદમાં પૃથક્ પૃથક્ રૂપથી એમ જ કહેલ છે, તેની પરંપરાથી જે પ્રકારે આ વિષય આપ્યો



અનોઘન્તરાઃ=ઓઘો દ્રવ્યભાવભેદેન દ્વિવિધઃ-દ્રવ્યૌઘો નદીપૂરાદિકઃ. ભાવૌઘોઽષ્ટવિધં કર્મસંસારો વાયેન યત્ર દુઃસ્થિતો ભવતિ પ્રાણી, તમોઘં તરન્તીત્યોઘન્તરાઃ, ન ઓઘન્તરા અનોઘન્તરાઃ=મિથ્યાદર્શિનઃ કુતીર્થિકાદયઃ પાર્શ્વસ્થાદયો વા, જ્ઞાનક્રિયાપ્રવહનવિકલાઃ, ઓઘતરણવ્યગ્રમનસોઽપિ તરણોપાયવિવેકાભાવાન્ન તર્તુ પ્રभवन्ति तदेवाह-  
आ रहा है उसी के अनुसार मैंने भी यह प्रतिपादित किया है अतः मूल में यह सर्वज्ञोक्त होने से अप्रमाणभूत नहीं माना जा सकता ।

વધ્યમાણ વિષયમાં સૂત્રકાર કહેતે हैं-‘અનોઘન્તરા’ इत्यादि, ‘અનોઘન્તર’ શબ્દકા અર્થ મિથ્યાદૃષ્ટિ જીવ હૈ । જો ઓઘન્તર નહીં હૈ, વે અનોઘન્તર હૈ । દ્રવ્ય ઓર ભાવ કે ભેદ સે ઓઘ દો પ્રકાર કા હૈ, નદી કા પૂર વગેરહ દ્રવ્ય-ઓઘ હૈ, અષ્ટપ્રકાર કર્મ અથવા સંસાર, ભાવ-ઓઘ હૈ । જિસકે દ્વારા પ્રાણી જહાં પર દુઃસ્થિત હોના હૈ ઉસ કા નામ ઓઘ હૈ, ઉસ ઓઘ કો જો તર જાતે હૈ-પાર કર જાતે હૈ, વે ઓઘન્તર કહે જાતે હૈ । ઇનસે જો વિપરીત હૈ, વે અનોઘન્તર-મિથ્યાદૃષ્ટિ કુતીર્થિક યા પાસ-ત્યાદિક જીવ હૈ, ક્યોં કિ મિથ્યાદૃષ્ટિ જીવ ભાવ-ઓઘ કો પાર નહીં કરતે હૈ । ભાવ-ઓઘ કો પાર કરને કે લિયે જ્ઞાન ઓર ક્રિયારૂપી પ્રવહન ( નૌકા ) કી જરૂરત હોતી હૈ । જિસ પ્રકાર મનુષ્ય વિના નૌકા કે સમુદ્ર કે પાર નહીં જા સકતા ઉસી પ્રકાર ઇસ સંસાર યા અષ્ટવિધ કર્મ રૂપી સમુદ્રકા પાર કરના ભી વિના જ્ઞાન ઓર ક્રિયા કે સર્વથા અસંભવ

આવે છે તે અનુસાર મેં પણ આ પ્રતિપાદન કર્યું છે માટે મૂળમાં આ સર્વ-જોક્ત હોવાથી અપ્રમાણભૂત માની શકાતું નથી.

વધ્યમાણ વિષયમાં સૂત્રકાર કહે છે-‘અનોઘન્તરા’ इत्यादि. અનોઘન્તર શબ્દનો અર્થ મિથ્યાદૃષ્ટિ હવ છે. જે ઓઘન્તર નથી તે અનોઘન્તર છે. દ્રવ્ય અને ભાવના ભેદથી ઓઘ બે પ્રકારે છે. નદીનું પૂર વિગેરે દ્રવ્ય ઓઘ છે. અષ્ટપ્રકાર કર્મ અથવા સંસાર ભાવઓઘ છે જેના દ્વારા પ્રાણી જે જગ્યેજો હુળી થાય છે તેનું નામ ઓઘ છે તે ઓઘ જે તરી બાય છે-પાર કરે છે તે ઓઘન્તર કહેવાય છે તેનાથી જે વિપરીત છે તે અનોઘન્તર-મિથ્યાદૃષ્ટિ કુતીર્થિક અગર પામત્યાદિક હવ છે, કારણ કે મિથ્યાદૃષ્ટિ હવ ભાવ ઓઘને પાર કરતા નથી ભાવ ઓઘને પાર કરવા માટે જ્ઞાન અને ક્રિયારૂપી પ્રવહન ( નૌકા ) ની જરૂરત પડે છે જેવી રીતે મનુષ્ય જગ્યા વિના સમુદ્ર પાર કરી શકતા નથી તે પ્રકારે આ સંસાર અને અષ્ટવિધકર્મરૂપી સમુદ્રને પાર કરવો તે જ્ઞાન અને ક્રિયા વગર અર્થથા અસંભવ છે. સમ્યગ્જ્ઞાન અને



ન ચૌઘમિતિ, ઓઘં તર્તુ ન ચ સમર્થા ભવન્તીત્યર્થઃ સ્પષ્ટઃ । કિં ચ-એતે ‘અતીરંગમાઃ’ તીરં ન ગચ્છન્તીત્યતીરંગમાઃ, એતે વીતરાગપ્રણીતરત્નત્રયસમારબ્ધનાભાવાત્ તીરં ગન્તું સમર્થા ન ભવન્તીત્યર્થઃ, અપિ ચ-‘અપારંગમાઃ’ પારસ્તદસ્તં ગચ્છન્તીતિ પારંગમાઃ, ન પારંગમા અપારંગમાઃ, સમ્યગુપદેશાભાવાત્પારગમનમનસોઽપિ ઉત્પન્નપ્રરૂપણાત્, હૈ । સમ્યગ્જ્ઞાન ઔર સમ્યક્ચારિત્ર વિકલ જીવોં કો હી મિથ્યાદૃષ્ટિ કહા ગયા હૈ । સમ્યક્જ્ઞાન કે અભાવ સે સમ્યગ્દર્શન કો અભાવ મી સ્વનઃ સિદ્ધ હૈ, અતઃ ઉસે યહાં પ્રથક્ રૂપસે નહીં કહા ।

મિથ્યાદૃષ્ટિ જીવ યદ્યપિ ઓઘ કો પાર કરને કે લિયે લાલાયિતમન રહતે હૈં પરન્તુ ઉનકે પામ પાર કરનેકા ઉપાયસ્વરૂપ વિવેકકા અભાવ હોને સે વે ઉસે પાર નહીં કર સકતે । યહી વાત “ન ચૌઘં તર્તુ” હસ પદ સે સૂત્રકાર પ્રકટ કરતે હૈં । સંસારરૂપ સમુદ્ર સે પાર હોને કે લિયે સર્વ પ્રથમ સમકિત કી જરૂરત પડતી હૈ । શાસ્ત્ર મેં સમકિત કો જેવટિયા કી ઉપમા દી ગઈ હૈ । જિસ પ્રકાર જિના જેવટિયા કે નૌકા જીવોં કો જલાશય સે પાર નહીં ઉતાર સકતી, ઉસી પ્રકાર હસ સંસારરૂપ સમુદ્ર સે જીવ જિના સમકિત કો પાયે કમી મી પાર નહીં ઉતર સકતા । સમકિત કે વિષય મેં પીછે વિવેચન કિયા જા ચુકા હૈ ।

મિથ્યાદૃષ્ટિ જીવ સંસારરૂપી સમુદ્ર કે તીર કો ઔર પાર કો પાનેકે લિયે અસમર્થ હસલિયે હૈં કિ-યે “અતીરંગમ” ઔર “અપારંગમ” હૈં ।

અમ્યક્ચારિત્ર વિકલ જીવો ને મિથ્યાદૃષ્ટિ જીવ કહેલ છે. અમ્યક્જ્ઞાનના અભાવથી સમ્યગ્દર્શનનો અભાવ પણ સ્વતઃ સિદ્ધ છે માટે તેને આ ઠેકાણે પૃથક્ રૂપથી કહેલ નથી.

મિથ્યાદૃષ્ટિ જીવ યદ્યપિ ઓઘનો પાર કરવા માટે લાલાયિત મન રાખે છે પરંતુ તેની પાસે પાર કરવાના ઉપાયસ્વરૂપ વિવેકનો અભાવ હોવાથી પાર કરી શકતા નથી. તે વાત “ન ચૌઘં તર્તુ” એ પદથી સૂત્રકાર પ્રગટ કરે છે. સંસાર રૂપ સમુદ્રનો પાર કરવા માટે સર્વ પ્રથમ સમકિતની જરૂર પડે છે. શાસ્ત્રમાં સમકિતને જેવટિયાની ઉપમા આપેલ છે. જે પ્રકારે જેવટિયા વગર નૌકા જીવોને જલાશયથી પાર નહિ ઉતારી શકે, તે પ્રકારે આ સંસારરૂપ સમુદ્રથી જીવ વિના સમકિત મેળવ્યે કોઈ વખત પાર ઉતરી શકતા નથી સમકિતના વિષયમાં પાછળ વિવેચન કરવામાં આવેલ છે.

મિથ્યાદૃષ્ટિ જીવ સંસારરૂપી સમુદ્રના તીરનો પાર કરવાને માટે અસમર્થ એ માટે છે કે તે “અતીરંગમ” અને “અપારંગમ” છે. વીતરાગપ્રણીત રત્ન-

તત્રૈવ પ્રવૃત્તત્વાત્, ઉન્માર્ગપ્રચારકત્વાચ્ચ પારં ગન્તું પ્રભવો ન ભવન્તીત્યર્થઃ । ‘અતીરંગમાઃ’ ‘અપારંગમાઃ’ ઇત્યુભયત્રાપિ નજો ‘ભવન્તી’—ત્યત્ર ભવનક્રિયાયામન્વયે આર્પિત્વાદસમર્થસમાસો વોદ્યઃ । તે તીરં તિતીર્પવોઽપિ પારં પિપારયિપવોઽપિ સ્વાભિમતશાસ્ત્રપ્રવૃત્તયો નૈવ તીરં ગચ્છન્તિ, નાપિ પારં પ્રાપ્નુવન્તિ । લોકે તીરપારયોરેકાર્થત્વેઽપિ અત્ર તીરપદેન મોહનીયક્ષયઃ, પારપદેન ઘાતિકર્મક્ષયો ગૃહ્યત ઇતિ વિશેષાન્ન પોનસ્ત્તચમ્ । ઓઘં તિતીર્પવોઽપિ કુતો ન તીરપારગામિનો ભવન્તીત્યાહ—‘આદાનીય’—

વીતરાગપ્રણીત રત્નત્રય કી આરાધના કા ઇનમેં અભાવ હોને સે યે ‘અતીરંગમ’ ઓર સમ્યક્ ઉપદેશ કી પ્રાપ્તિ કા અભાવ હોને સે પાર પ્રાપ્ત કરને કે લિયે અભિલાષી હોતે હુઁ ખી યે ઉત્સૂત્ર કે પ્રરૂપક ઓર ઉન્માર્ગ કે પ્રચારક હોને કી વજહ સે ‘અપારંગમ’ હેં । લોક મેં તીર ઓર પાર શબ્દ કા ઁક હી વાચ્યાર્થ હોતા હે ફિર ખી સૂત્ર મેં જો ઇન દો શબ્દોંકા પ્રયોગ કિયા હે, ઉસસે યહ વાત જ્ઞાત હોની હે કિ—તીર શબ્દ સે વાતી કર્મોં કા ક્ષય ઓર પાર શબ્દ સે અઘાતિયા કર્મોંકા અભાવ અર્થ હોતા હે ।

“આદાનીયં ચાદાય તસ્મિન્ સ્થાને ન તિષ્ઠતિ” આદાનીય શબ્દ કા અર્થ મુક્તિ જિસસે પ્રાપ્ત કી જાતી હે ઁસા ચારિત્ર હે । મિથ્યાદષ્ટિ જીવ પરિગ્રહ મેં મૂર્ચ્છિત હોને સે અપની કલ્પનાનુમાર ચારિત્ર કા આરાધન કરતે હેં । મુક્તિ તો સમ્યક્ચારિત્ર કે આરાધન સે પ્રાપ્ત હોતી હે । જિસમેં સાવધ પ્રવૃત્તિકા લેશ નહીં હે ઉસકા નામ સમ્યક્ચારિત્ર હે । જૈસેર જીવ ગુણસ્થાનોં કી પ્રાપ્તિ કરના જાના હે વૈસેર ગૃહીતચારિત્રમેં ડઝઝલના

ત્રયની આરાધનાનું તેમાં અભાવ હોવાથી તે ‘અતીરંગમ’ અને સમ્યક્ ઉપદેશની પ્રાપ્તિનો અભાવ હોવાથી પાર પ્રાપ્ત કરવા માટે અભિલાષી હોવા છતાં તે ઉત્સૂત્રના પ્રરૂપક અને ઉન્માર્ગના પ્રચારક હોવાથી ‘અપારંગમ’ છે. લોકમાં તીર અને પાર શબ્દનો એક જ વાચ્યાર્થ થાય છે તો પણ સૂત્રમાં જે એ શબ્દોનો પ્રયોગ કર્યો છે. તેનાથી એ વાત જ્ઞાત થાય છે કે—તીર શબ્દથી ઘાતિયા કર્મોનો ક્ષય અને પાર શબ્દથી અઘાતિયા કર્મોનો અભાવ અર્થ થાય છે.

“આદાનીયં ચાદાય તસ્મિન્ સ્થાને ન તિષ્ઠતિ”

આદાનીય શબ્દનો અર્થ મુક્તિ જેનાથી પ્રાપ્ત થાય છે એવું ચારિત્ર છે મિથ્યાદષ્ટિ હવ પરિગ્રહમાં મૂર્ચ્છિત હોવાથી જોનાની કલ્પનાનુસાર ચારિત્રનું આરાધન કરે છે, મુક્તિ તો સમ્યક્ચારિત્રના આરાધનથી પ્રાપ્ત થાય છે. જેમાં સાવધ પ્રવૃત્તિનો લેશ પણ નથી તેનું નામ સમ્યક્ચારિત્ર છે જેમ જેમ હવ ગુણસ્થાનોની પ્રાપ્તિ કરતો જાય છે તેમ તેમ ગૃહીત ચારિત્રમાં ઉન્નત્વલના આવતી જાય છે.

મિથ્યાદિ, સ તીરપારજિગમિષુઃ આદાનીયમ્=આદીયતે=પ્રાપ્યતે મોક્ષોડનેનેત્યા-  
દાનીયં=ચારિત્રં, તદાદાય=સમારાધનજ્ઞાનવિપયીકૃત્ય તસ્મિન્=ચારિત્રસ્થાને ન  
તિષ્ઠતિ પરિગ્રહમૃચ્છિતત્વાત્,

યદ્વા—આદાનીયં=દાસીદાસહસ્ત્યશ્વરથધનધાન્યસુવર્ણાદિકં, તદ્ આદાય=  
ગૃહીત્વા તત્ર વિમુહ્ય, અથવા મિથ્યાત્વાવિરતિપ્રમાદકષાયયોગૈરાદાનીયં=કર્મ ગૃહી-  
ત્વા રત્નત્રયાત્મકે મોક્ષમાર્ગે ન તિષ્ઠતિ=આત્માનં ન સ્થાપયતિ। ન સ કેવલં સર્વજ્ઞો-  
પદેશસ્થાને તિષ્ઠતિ, પ્રત્યુત વિપરીતાચારમાચરતીત્યાહ—‘વિતથ’—મિતિ, અસ્વેદજ્ઞઃ  
=પરપીડાનભિજ્ઞઃ, વિતથં=મિથ્યાત્વમોહનીયં પ્રાપ્ય=લબ્ધ્વા તત્રૈવ સ્થાને=પરિગ્રહા-  
દિમૃચ્છ્યાં તિષ્ઠતિ, તત્રૈવ જીવનં યાપયતીત્યર્થઃ। શબ્દાદિકામગુણાસન્નસન્ની  
પદ્મજીવનિકાયસમારમ્ભવાન્ પરિગ્રહમૃચ્છિતો જ્ઞાનાવરણીયાદિચિક્ષણકર્માણિ સ-  
મુપાર્જયન્નજસ્રં નરકનિગોદાદિવ્યપદેશં લભત ઇત્યાશયઃ ॥ સૂ૦ ૭ ॥

આતી જાતી હૈ। મિથ્યાદૃષ્ટિ જીવ સમકિત કે અભાવ સે પ્રથમ ગુણસ્થાન-  
વર્તી હોના હૈ અનઃ વહ સમકિતસહિત ચારિત્ર કા આરાધન નહીં કર  
સકતા, ઇસલિયે તીર ઔર પારકે લાભ સે સદા વંચિત રહા કરતા હૈ।

અથવા—આદાનીય શબ્દ કા અર્થ—દાસી, દાસ, હસ્તિ, અશ્વ, રથ, ધન,  
ધાન્ય ઔર સુવર્ણાદિક પરિગ્રહ મી હૈ। મિથ્યાદૃષ્ટિ જીવ ઇસી પરિગ્રહ  
મેં અત્યન્ત આસક્ત રહતા હૈ ઇસ લિયે વહ રત્નત્રયાત્મક મોક્ષમાર્ગ મેં  
કમી મી સ્થિતિ કા લાભ નહીં કર સકતા। આદાનીય શબ્દ કા અર્થ કર્મ  
મી હૈ, ઇસ કર્મ કો વહ મિથ્યાત્વ, અવિરતિ, કષાય, પ્રમાદ ઔર યોગોં  
દ્વારા ગ્રહણ કરતા હૈ। કર્મકે સદ્ભાવ મેં જીવ શુદ્ધ આત્મસ્વરૂપરૂપ મુક્તિ  
કી પ્રાપ્તિ સે દૂર હી રહતા હૈ। ઇસ વિષય મેં પહિલે લિખા જા ચુકા હૈ। જવ

મિથ્યાદૃષ્ટિ જીવ સમકિતના અભાવમાં પ્રથમગુણસ્થાનવર્તી થાય છે, માટે તે  
સમકિતસહિત ચારિત્રનુ આરાધન કરી શકતા નથી, માટે તીર અને પારના  
લાભથી વંચિત રહે છે.

અથવા—આદાનીય શબ્દનો અર્થ — દાસી, દાસ, હસ્તિ, અશ્વ, રથ, ધન,  
ધાન્ય અને સુવર્ણાદિક પરિગ્રહ પણ છે, મિથ્યાદૃષ્ટિ જીવ આ પરિગ્રહમાં  
અત્યન્ત આસક્ત રહે છે, જેથી તે રત્નત્રયાત્મક મોક્ષમાર્ગમાં કોઈ વખત  
પણ સ્થિતિનો લાભ કરી શકતો નથી. આદાનીય શબ્દનો અર્થ કર્મ પણ  
છે. આ કર્મને તે મિથ્યાત્વ, અવિરતિ, કષાય, પ્રમાદ અને યોગોદ્વારા ગ્રહણ  
કરે છે, કર્મના સદ્ભાવમાં જીવ શુદ્ધ આત્મસ્વરૂપરૂપ મુક્તિની પ્રાપ્તિથી  
દૂર જ રહે છે. આ વિષયમાં પહેલાં લખવામાં આવેલું છે. ન્યા મુધી મુક્તિના

यो नरकादिव्यपदेशभाग्न भवति, यश्च भवति तं दर्शयति—‘ उद्देशो ’ इत्यादि ।

मूलम्—उद्देशो पासगस्स नत्थि, वाले पुण निहे कामसम-  
णुत्ते असमियदुक्खे दुक्खी दुक्खाणमेव आवट्ठं अणुपरियट्ठइत्ति  
वेमि ॥ सू० ८ ॥

छाया—उद्देशः पश्यकरय नास्ति, वालः पुनः स्निहः कामसमनुजोऽगमित-  
दुःखो दुःखी दुःखानामेवाऽऽवर्तमनुपरिवर्तते । इति ब्रवीमि ॥ सू० ८ ॥

टीका—‘ उद्देश ’ इत्यादि, पश्यतीति पश्यः, पश्य एव पश्यकः=परिज्ञात-  
सकलहेयोपादेयस्तीर्थङ्करगणधरादिस्तस्य विदितवेदितव्यस्य, उद्दिश्यते इत्यु-  
द्देशः=नरकादिव्यपदेशो नारकादिपर्यायव्यवहार इति यावत्, अत्र व्यपदेशार्थको-  
द्देशशब्दकथनेन नामकर्मणः सकलाप्युत्तरप्रकृतिर्ग्राह्या । नास्ति=नैव वर्तते तस्य  
सर्वज्ञत्वात्, न तस्य व्यपदेशापेक्षा, तस्मिन्नेव भवे तस्य मोक्षप्राप्तेः ।

तक मुक्ति के कारणों की प्राप्ति नहीं होती तब तक मुक्ति नहीं मिल  
सकती है । मुक्तिका कारण रत्नत्रय है । जब तक जीव को इन तीनों की  
पूर्णता प्राप्त नहीं होती तब तक मुक्ति का मार्ग उसके हाथमें नहीं आता ।  
मिथ्यादृष्टि जीव जब इस मार्ग की प्राप्ति से ही रहित है तब वह मुक्ति  
का लाभ भी कैसे कर सकता है ? यही सर्वज्ञ का उपदेश है । इस सर्वज्ञ  
के उपदेश की ओर उस की जरा भी रुचि जाग्रत नहीं होती है, यही  
मिथ्यात्व का जोर है । इस जोर से वह अपनी मनमानी प्रवृत्ति करने में  
लगा रहता है, और इसी की वजह से वह परिग्रह में मूर्च्छित होना  
रहता है । परिग्रह के संग्रह करने में ‘ जीवों का विघात मेरे द्वारा होना है ’  
इसकी ओर उसका लक्ष्य ही नहीं जाता, और अपना ममस्त जीवन  
अविरत अवस्था में ही व्यतीत कर देता है ।

કારણોની પ્રાપ્તિ થતી નથી ત્યાં સુધી મુક્તિ મળી શકતી નથી. મુક્તિનું કારણ  
રત્નત્રય છે. ત્યાં સુધી હોવને આ કારણોની પૂર્ણતા પ્રાપ્ત થતી નથી ત્યાં સુધી  
મુક્તિનો માર્ગ તેના હાથમાં આવતો નથી. મિથ્યાદૃષ્ટિ હોય ત્યારે આ માર્ગની  
પ્રવૃત્તિથી જ રહિત છે તો યદી તે મુક્તિનો લાભ પામુ કેવી રીતે મેળવી શકે  
એ જ સર્વજ્ઞનો ઉપદેશ છે. આ સર્વજ્ઞના ઉપદેશ તરફ તેની જગ પામુ રૂચિ  
જાગ્રત નથી થતી તે જ મિથ્યાત્વનું જોર છે તે જોરથી તે પોતાની મનમાની  
પ્રવૃત્તિ કરવામાં લાગ્યો રહે છે, અને તેના પ્રભાવે તે પરિગ્રહમાં પામુ મૂર્છિત  
થતો રહે છે. પરિગ્રહનો સંગ્રહ કરવામાં ‘ હવેના વિઘાત મારા દ્વારા થાય છે ’  
તે તરફ તેનું લક્ષ્ય પામુ જતું નથી, અને પોતાનું મમસ્ત હોવ અવિરત અવ-  
સ્થામાં જ વ્યતીત કરે છે

इस सूत्र का सारांश यही है कि मिथ्यादृष्टि जीव सांसारिक विषय भोगों में आसक्त बन कर परिग्रह का संग्रह करता रहता है। इस प्रवृत्ति में उसके द्वारा षट्काय के जीवों का विधान भी होता है परन्तु उसकी वह प्रवृत्ति संयमयुक्त न होनेसे ज्ञानावरण आदि चिक्कण कर्मों के तीव्र अनुभागबंध में और तीव्र स्थितिवंध में प्रधान कारण बनती है, अतः वह मुक्तिसुख के लाभ से वंचित रहता है, इतना ही नहीं प्रत्युन चतुर्गति रूप संसार में नरकनिगोदादि के कष्टों का ही भोक्ता बनता है ॥ सू० ७ ॥

नरकनिगोदादि कष्टोंका भोक्ता कौन होता है और कौन नहीं होता है? इसी विषय को फिर से इस सूत्र में अन्वयव्यतिरेकमुग्र से प्रतिपादन करते हैं—“उद्देशो पासगस्स नत्थि” इत्यादि।

देखनेवाले का नाम पश्य है, स्वार्थ में ‘क’ प्रत्यय होने से पश्यक शब्द बन जाता है। पश्य शब्द का जो अर्थ है वही पश्यक का है।

प्रश्न—संसार के संज्ञी और असंज्ञी चतुरिन्द्रियादि जितने भी जीव हैं वे सब देखनेवाले हैं अतः ये भी पश्यक हो जायेंगे, परन्तु इस सूत्र में इन पश्यकों का तो ग्रहण किया ही नहीं गया है, क्यों कि “उद्देशः पश्यकस्य नास्ति” इस कथन से उनमें उद्देश का अभाव नहीं है, वहाँ पर तो यह मनुष्यजातीय है, यह चतुरिन्द्रिय जातीय है, इत्यादि व्यवहार

આ સૂત્રનો સારાંશ એ છે કે—મિથ્યાદૃષ્ટિ જીવ સાંસારિક વિષયભોગોમાં આસક્ત બની પરિગ્રહનો સંગ્રહ કરતો રહે છે. આ પ્રવૃત્તિમાં તે દ્વારા ષટ્કાય જીવોનો ઘાત પણ થાય છે, પરંતુ તેની તે પ્રવૃત્તિ સંયમયુક્ત ન હોવાથી જ્ઞાનાવરણ આદિ ચિક્કણા કર્મોના તીવ્ર અનુભાગબંધમાં પ્રધાન કારણ બને છે, માટે તે મુક્તિસુખના લાભથી વંચિત રહે છે, આટલું જ નહિ પ્રત્યુત ચતુર્ગતિરૂપ સંસારમાં નરકનિગોદાદિના કષ્ટોનો પણ ભોક્તા બને છે. ॥ સૂ. ૭ ॥

નરકનિગોદાદિ કષ્ટોનો ભોક્તા કોણ બને છે? અને કોણ બનતો નથી? તે વિષયને ફરીથી આ સૂત્રમાં અન્વયવ્યતિરેકમુખથી પ્રતિપાદન કરે છે—“ઉદ્દેશો પાસગસ્સ નત્થિ” ઇત્યાદિ.

દેખવાવાળાનું નામ પશ્ય છે. સ્વાર્થમાં ‘ક’ પ્રત્યય હોવાથી પશ્યક શબ્દ બને છે, પશ્ય શબ્દનો જે અર્થ છે તેજ પશ્યકનો છે.

પ્રશ્ન—સંસારના સંજ્ઞી અને અસંજ્ઞી ચતુરિન્દ્રિયાદિ જેટલા પણ જીવ છે તે બધા દેખવાવાળા છે માટે તે પણ પશ્યક થઈ જશે પરંતુ આ સૂત્રમાં આ પશ્યકોનો તો ગ્રહણ કરવામાં આવેલ નથી, કારણ કે “ઉદ્દેશ પશ્યકસ્ય નાસ્તિ” આ કથનથી તેમાં ઉદ્દેશનો અભાવ નથી, તે જગ્યાએ તો એ મનુષ્યજાતીય છે,

હોતા હી હૈ । ઉદ્દેશ શબ્દ કા વ્યુત્પત્ત્યર્થ—“ઉદ્દિશ્યતે ઇતિ ઉદ્દેશઃ, નર-કાદિવ્યપદેશો, નરકાદિવ્યવહાર ઇતિ યાવત્” યહ નારકી હૈ, અર્થાત્ યહ નરકપર્યાયવિશિષ્ટ જીવ હૈ, ઇત્યાદિ વ્યવહાર કો હી ઉદ્દેશ કહા હૈ । ઇસ ઉદ્દેશ કા અભાવ પૂર્વોક્ત સંસારી જીવોં મેં નહીં આના હૈ, અતઃ “ઉદ્દેશઃ પશ્યકસ્ય નાસ્તિ” યહ કૈસે કહા ગયા હૈ ? ।

ઉત્તર—યહાં પર પહિલે યહ જો કહા ગયા હૈ કિ-મિથ્યાદૃષ્ટિ જીવ પરિગ્રહ મેં આસક્ત બન કર પટ્કાય કે જીવોં કે ઉપમર્દન કરનેવાલા હોને સે જ્ઞાનાવરણાદિક કર્મોંકા બંધ કર નરકનિગોદાદિ ગતિયોં કે અનન્ત દુઃખોં કા ભોક્તા બનતા હૈ, પરન્તુ જો પરિગ્રહ મેં આસક્ત નહીં હૈં વે પટ્કાય કે જીવોં કે રક્ષક હોને સે કર્મોં કે બંધ કરનેવાલે નહીં હોતે, ઓર ક્રમશઃ કેવલજ્ઞાન કો પાકર મુક્તિ કો પ્રાપ્ત કર લેતે હૈં, એસે જીવ હી યહાં પશ્યક શબ્દ સે ગ્રહણ કિયે હૈં । વે સાક્ષાત્ તીર્થંકર ગણધરાદિ દેવ હૈં । જય તક વે મુક્તિ નહીં પ્રાપ્ત કર લેતે તય તક નામ કર્મ કી કુછ પ્રકૃતિયોં કા સદ્ભાવ હોને સે उनमें भी मनुष्यपर्याय विशिष्ट आदि का व्यवहार होता ही है, परन्तु भविष्य में उस प्रकार का व्यवहार उनमें सर्वथा नहीं होनेवाला है, इस भविष्यत्प्रज्ञापननय की

એ અતુરિન્દ્રિયજ્ઞાતીય છે, ઇત્યાદિ વ્યવહાર થાય જ છે. ઉદ્દેશ શબ્દનો વ્યુત્પત્ત્યર્થ “ઉદ્દિશ્યતે ઇતિ ઉદ્દેશ-નરકાદિવ્યપદેશો, નરકાદિવ્યવહાર ઇતિ યાવત્” આ નારકી છે અર્થાત્ એ નરકપર્યાયવિશિષ્ટ હોવ છે. ઇત્યાદિ વ્યવહારને જ ઉદ્દેશ કહ્યો છે આ ઉદ્દેશનો અભાવ પૂર્વોક્ત સંસારી હોવામા આવતા નથી, માટે “ઉદ્દેશઃ પશ્યકસ્ય નાસ્તિ” એ કેમ કહેવામા આવેલ છે ?

ઉત્તર—આ જગ્યાએ પહેલાં એ કહેવામા આવેલ છે કે મિથ્યાદૃષ્ટિ હોવ પરિગ્રહમાં આસક્ત બની પટ્કાય હોવાના ઉપમર્દન કરવાવાળા હોવાથી જ્ઞાનાવરણાદિક કર્મોંનો બંધ કરી નરકનિગોદાદિ ગતિયોના અનન્ત દુઃખોના ભોક્તા બને છે. પરન્તુ જે પરિગ્રહમા આસક્ત નથી તે પટ્કાય હોવાના સ્વરૂપ હોવાથી કર્મોના બંધ કરવાવાળા નથી બનતા. અને ક્રમશઃ કેવળજ્ઞાનને મેળવી મુક્તિને પ્રાપ્ત કરી લે છે. એવા હોવ જ આહીં પશ્યક શબ્દથી ગ્રહણ કરેલ છે. તે સાક્ષાત્ તીર્થંકર ગણધરાદિ દેવ છે જ્યાં સુધી તે મુક્તિ પ્રાપ્ત નથી કરી લેતા ત્યાં સુધી નામકર્મની થોડી પ્રકૃતિયોના સદ્ભાવ હોવાથી તેમા પણ મનુષ્યપર્યાયવિશિષ્ટ આદિનો વ્યવહાર થાય છે. પરન્તુ ભવિષ્યમા તે પ્રદારનો વ્યવહાર તેમાં સર્વથા નહિ બનવાવાળો છે. આ ભવિષ્યત્પ્રજ્ઞાપનનયની અપેક્ષાથી



અપેક્ષા સે યદ્વાં પર ઓ “પદ્યકસ્ય ઉદ્દેશો નાસ્તિ” પદ્યક કો ઉદ્દેશ નહીં હૈ, યદ્ કથન સુસંગત સમજના ચાહિયે ।

પ્રશ્ન—કૈસે જાના જાના હૈ કિ—ઝનમેં આગે ચલકર સમસ્ત અવ-શિષ્ટ નામકર્મ કી પ્રકૃતિયાં સર્વથા ક્ષય હો જાનેવાલી હૈ? પ્રત્યક્ષ સે તો યદ્ વાત જ્ઞાત હો નહીં સકતી, ક્યોં કિ પ્રત્યક્ષ તો વર્તમાનસંબંધી પદાર્થ કો હી ગ્રહણ કરના હૈ । ઝસ પ્રકાર કી પર્યાયસંબંધી વર્તમાન તો હૈ નહીં । અનુમાન ઓ ઇસ વિષય કો નહીં જાન સકતા, ક્યોં કિ તદ્વિના-ભાવી કોઈ ઓ ઁસા હેતુ નહીં હૈ જો ઇસ વાત કા અનુમાપક હો, જિસકે વિના જો ન હો ઝસકો અવિનાભાવી કહતે હૈં ।

ઉત્તર—યદ્ તો હમ ઓ માનતે હૈં કિ—ચક્ષુરાદિદિન્દ્રિયજન્ય જ્ઞાન રૂપ પ્રત્યક્ષ (સાંવ્યવહારિક પ્રત્યક્ષ) ઇસ પ્રકાર કી અવસ્થાકો નહીં જાન સકતા, પરંતુ અનુમાનપ્રમાણ સે ઇસ વાત કી સિદ્ધિ હોતી હૈ કિ—અવ-શિષ્ટ નામકર્મ કી પ્રકૃતિયોં કા વદ્વાં પર સર્વથા ક્ષય હોગા । યદ્ કૈસે કહા કિ તદ્વિનાભાવી હેતુ વદ્વાં પર નહીં હૈં । “તસ્ય સર્વજ્ઞત્વાત્” અર્થાત્ “વે સર્વજ્ઞ હૈં” યહી તદ્વિનાભાવી હેતુ હૈ । જિસ પ્રકાર ધૂમ વહ્નિ કા અવિનાભાવી હેતુ હૈ ઝસી પ્રકાર ઘાતિયા કર્મોં કે અભાવ સે ઉત્પન્ન

તે જગ્યોએ પણ “પદ્યકસ્ય ઉદ્દેશો નાસ્તિ” પદ્યકને ઉદ્દેશ નથી, એ કથન સુસંગત સમજવું જોઈએ.

પ્રશ્ન—કેવી રીતે જાણવામાં આવે કે તેમાં આગળ સમસ્ત અવશિષ્ટ નામકર્મની પ્રકૃતિયો સર્વથા ક્ષય થઈ જવાવાળી છે? પ્રત્યક્ષથી તો એ વાત જ્ઞાત થઈ શકતી નથી, કારણ કે પ્રત્યક્ષ તો વર્તમાનસંબંધી પદાર્થને જ ગ્રહણ કરે છે. તેવા પ્રકારની પર્યાયસંબંધી વર્તમાન તો છે નહિ. અનુમાનથી પણ આ વિષયને જાણી શકાતો નથી, કારણ કે તદ્વિનાભાવી કોઈ પણ એવો હેતુ નથી જે આ વાતનો અનુમાપક હોય. જેના વિના જે ન હોય તેને અવિનાભાવી કહે છે.

ઉત્તર—એ તો અમે પણ માનીએ છીએ કે—ચક્ષુરાદિદિન્દ્રિયજન્ય જ્ઞાનરૂપ પ્રત્યક્ષ (સાંવ્યવહારિક પ્રત્યક્ષ) આ પ્રકારની અવસ્થાને જાણી શકતા નથી, પરંતુ અનુમાનપ્રમાણથી આ વાતની સિદ્ધિ થાય છે કે—અવશિષ્ટ નામકર્મની પ્રકૃતિયોનો ત્યાં સર્વથા ક્ષય થશે એમ કેમ કહેવાય કે તદ્વિનાભાવી હેતુ ત્યાં નથી. “તસ્ય સર્વજ્ઞત્વાત્” અર્થાત્ “તે સર્વજ્ઞ છે” એજ તદ્વિનાભાવી હેતુ છે, જેવી રીતે ધુમાડો આગનો અવિનાભાવી હેતુ છે, તેવી રીતે



સર્વજ્ઞ અવસ્થા મી શેષ નામકર્મ કી પ્રકૃતિયોં કા ભવિષ્ય મેં વહાં વિલય-  
હોનેરૂપ સાધ્ય કી સિદ્ધિ કરાને મેં અવિનાભાવી હેતુ હૈ અતઃ ઇસ અવિના-  
ભાવી હેતુ સે વહાં પર સાધ્ય કી સિદ્ધિ હોને મેં કોઈ મી વાધા નહીં આતી ।

પ્રશ્ન—અપને સાધ્ય કો સિદ્ધ કરને મેં હેતુ કી સિદ્ધિ પ્રધાન માની  
જાતી હૈ । જિસ સાધ્ય કા હેતુ સિદ્ધ નહી હોતા વહ અપને સાધ્ય કી સિદ્ધિ  
નહીં કર સકતા । સાધ્ય અસિદ્ધ હોતા હૈ, હેતુ તો સિદ્ધ હોના ચાહિયે ।

ઉત્તર—હેતુ સિદ્ધ હી હૈ—અસિદ્ધ નહીં, ભૂત ભવિષ્યત્ ઓર વર્તમાન  
કાલીન સમસ્ત દ્રવ્ય ઓર ઉનકી અનન્તાનન્તપર્યાયોં કો હસ્તામલકવત્  
ઁકકાલાવચ્છેદેન ( ઁક કાલમેં ) જાનનેવાલા હોને સે તીર્થકરાદિ પ્રભુ  
સર્વજ્ઞ હૈ । જ્ઞાનાવરણ આદિ ચાર ઘાતિયાકર્મોં કે સર્વથા વિનષ્ટ હોને સે  
ઉન્હોંને અપની જીવન્મુક્ત અવસ્થા મેં કેવલજ્ઞાનરૂપી મૂર્ચ કો પ્રાપ્ત કરલિયા  
હૈ । ઇસ પ્રશસ્તતમ ઓર અસાધારણ જ્ઞાન કે દ્વારા હી યે વિશ્વ કે સમસ્ત  
પદાર્થસાર્થકો જાનતે રહતે હૈ । ઇનકા જ્ઞાન સમસ્ત પદાર્થોં કા જ્ઞાન હૈ,  
યહ વાત અનુમાન પ્રમાણ સે સિદ્ધ હોતી હૈ, ક્યોં કિ જવ જીવસ્થ જીવોં  
કે જ્ઞાનગુણ મેં જાનને કી હીનાધિકતા પાઈ જાતી હૈ તો ઉમસે યહ વાત

ઘાતિયા કર્મોંના અભાવથી ઉત્પન્ન સર્વજ્ઞ અવસ્થા પણ શેષ નામકર્મની પ્રકૃતિ-  
યોના ભવિષ્યમાં ત્યાં વિલયહોવારૂપ સાધ્યની સિદ્ધિ કરાવવામા અવિનાભાવી  
હેતુ છે માટે આ અવિનાભાવી હેતુથી ત્યાં સાધ્યની સિદ્ધિ થવામાં કોઈ અડ-  
ચણ આવતી નથી.

પ્રશ્ન—પોતાના સાધ્યને સિદ્ધ કરવામાં હેતુની સિદ્ધિ પ્રધાન માનવામાં  
આવે છે. જે સાધ્યનો હેતુ સિદ્ધ થતાં નથી ને પોતાના સાધ્યની સિદ્ધિ કરી  
શકતો નથી. સાધ્ય અસિદ્ધ થાય છે, હેતુ તો સિદ્ધ થવો જોઈએ.

ઉત્તર—હેતુ સિદ્ધ જ છે. અસિદ્ધ નહિ. ભૂત ભવિષ્યત્ અને વર્તમાન  
કાલીન સમસ્ત દ્રવ્ય અને તેની અનન્તાનન્ત પર્યાયોંને હસ્તામલકવત્  
ઁકકાલાવચ્છેદેન ( એક કાળમાં ) જાણવાવાળા હોવાથી તીર્થકરાદિ પ્રભુ સર્વજ્ઞ  
છે જાનાવરણ આદિ ચાર ઘાતિયા કર્મોંનો સર્વથા વિનષ્ટ થવાથી તેને પોતાની  
જીવન્મુક્ત અવસ્થામાં કેવળજ્ઞાનરૂપી મૂર્ચને પ્રાપ્ત કરેલ છે. આ પ્રશસ્તતમ અને  
અસાધારણ જ્ઞાનદ્વારા વિશ્વના સમસ્ત પદાર્થોંને જાણતા રહે છે તેનું જ્ઞાન સમસ્ત  
પદાર્થોંનું જાના છે એ વાત અનુમાન પ્રમાણથી સિદ્ધ થાય છે. કારણ કે જીવસ્થ  
જીવોંને જ્ઞાનગુણમાં જાણવાની હીનાધિકતા મેળવી શકાય છે તેનેતર્યા

યદ્વા—પઞ્ચકસ્ય=સર્વજ્ઞસ્ય ઉદ્દેશઃ=ઉપદેશઃ ‘મુયં મે આઉસં તેણ’—મિત્યાદિઃ ‘તંમિ ઠાણંમિ ચિદ્ધુ’ इत्यन्तः पूर्वोक्तस्वरूपः, ‘વાલે પુણ નિદ્દે’ इत्यारभ्य ‘आणाए आराहिया वि भवइ’ इतिपर्यन्तवक्ष्यमाणस्वरूपो वा नास्ति=न तस्य प्रयोजनं वर्तत इत्यर्थः, सकललोकालोकपदार्थसार्थस्य हस्तामलकवत्केवलालोकविषयीभूत-त्वात् । कं प्रत्युपदेशः ? इत्याह—‘वालः’ इत्यादि । यः पुनः वालः=परिग्रह-गृहो ज्ञानक्रियाविकलः, स्निद्यते इति स्निहः=विषयानुरागी, कामसमनुजः—कामान् भी सिद्ध होनी है कि एक ज्ञान ऐसा भी है कि जहां पर त्रिकालवर्ती समस्त पदार्थों का अवलोकन-ज्ञान युगपत् होता है । जिस प्रकार परिमाण की तरतमता आकाश में अनन्त हो कर ठहर जाती है इसी प्रकार ज्ञान की अनन्तता भी इनमें स्थित होकर अपना स्थान प्राप्त करती है । संसार में अनन्त पदार्थ हैं, उनमें कई सूक्ष्म हैं, कई वादर हैं, कई अन्तरित हैं, कई अनन्तरित हैं, कई निकट हैं, कई दूर हैं । इन सब का यथार्थ रूप से प्रतिपादन करना बिना सर्वज्ञता के नहीं हो सकता, और इन अनन्त पदार्थों को जाननेवाला ज्ञान भी अनन्त ही होता है । जैनशास्त्र में ऐसे ज्ञान को ही केवलज्ञान कहा है, और इस ज्ञानसंपन्न आत्मा को सर्वज्ञ कहा है ।

यह व्याख्या “नरक निगोदादि पर्यायों के दुःख सर्वज्ञ नहीं प्राप्त करते ? तथा वे इस प्रकार के व्यपदेश से रहित होते हैं ?” इस प्रकार के व्यतिरेकमुखसे की गई है । अब उद्देश की समाप्ति करते हुए सूत्रकार अन्वयमुख से व्याख्या करते हैं—

તે તાત સિદ્ધ થાય છે કે એક જ્ઞાન એવું પણ છે કે જ્યાં ત્રિકાલવર્તી સમસ્ત પદાર્થોનું અવલોકન-જ્ઞાન યુગપત્ થાય છે. જે પ્રકારે પરિણામની તરતમતા આ-કાશમાં અનન્ત બનીને અટકી જાય છે તે પ્રકારે જ્ઞાનની અનન્તતા પણ તેમાં સ્થિત બનીને પોતાનું ધ્યાન પ્રાપ્ત કરે છે. સંસારમાં અનંત પદાર્થ છે, તેમાં કેઈ સૂક્ષ્મ છે, કેઈ બાદર છે, કેઈ અન્તરિત છે, કેઈ અનન્તરિત છે, કેઈ નિકટ છે, કેઈ દૂર છે. આ બધાનું યથાર્થરૂપથી પ્રતિપાદન કરવું સર્વજ્ઞતા વિના બની શકતું નથી, અને આ અનન્ત પદાર્થોને જાણવાવાળું જ્ઞાન પણ અનન્ત જ થાય છે. જૈનશાસ્ત્રમાં તેવા જ્ઞાનને જ કેવળજ્ઞાન કહે છે, અને આ જ્ઞાનસંપન્ન આત્માને સર્વજ્ઞ કહે છે.

આ વ્યાખ્યા “નરકનિગોદાદિ પર્યાયોના દુઃખ સર્વજ્ઞ નથી પ્રાપ્ત કરતાં ? તથા તે આ પ્રકારના વ્યપદેશથી રહિત હોય છે?” આ પ્રકારે વ્યતિરેકમુખથી કહેવામાં આવેલ છે. હવે ઉદ્દેશની સમાપ્તિ કરતાં સૂત્રકાર અન્વયમુખથી વ્યાખ્યા કરે છે—

=स्पृहा-मदनरूपान् सम्=सम्यक्, अनु=अनुकूलं जानातीति कामसमनुजः=काम-  
गुणानुमोदकः, अत एव अशमितदुःखः-अशमितम्=अक्षीणं दुःखम्=अलब्धलाभाय  
लब्धपरिरक्षणाय च व्यग्रतया निरन्तरचिन्तनरूपं यस्य सोऽशमितदुःखः=विषय-  
कपायासक्तत्वेन नितान्तह्रान्तस्वान्तः, अत एव दुःखी=शारीरिक-मानसिक-पीडा-  
पीडितः, दुःखानाम्=ऐहिक-पारत्रिक-नानाविधानामेव, आवर्त=संसारचक्रम्-

“बाले पुण णिहे” इत्यादि। “सुयं मे आउसं तेणं” यहाँ से लेकर  
“तंमि ठाणंमि चिद्धइ” यहाँ तक का पूर्वोक्तस्वरूपवाला उपदेश तथा  
“बाले पुण णिहे” यहाँ से लेकर “आणाए आराहिया वि भवइ” यहाँ  
तक वक्ष्यमाण-आगे कहा जानेवाला-उपदेश सर्वज्ञ की अपेक्षा से  
नहीं कहा गया है। क्यों कि वे कृतकृत्य हैं, उन्हें किसी भी वस्तु से  
प्रयोजन नहीं रहा है, केवलज्ञान की प्राप्ति होनेसे वे समस्त पदार्थों को  
हस्तामलकवत् साक्षात् जानते हैं, अतः यह उपदेश बालजीवों की  
अपेक्षा से है। बाल जीव वे हैं जो परिग्रह में आसक्त हैं, ज्ञानक्रिया से  
विकल हैं, विषयानुरागी हैं, कामगुणोंके अनुमोदक हैं, अलब्ध को प्राप्त  
करने के लिये तथा लब्ध की रक्षा करने के लिये जो व्यग्रचित्त होने से सदा  
चिंताशील बने रहते हैं, विषयकषायों में आसक्त होने की वजह से  
जिनका अन्तःकरण अत्यन्त दुःखित होता रहता है। इस लिये जो रात-  
दिन शारीरिक एवं मानसिक कष्टोंका अनुभव किया करते हैं तथा

‘बाले पुण णिहे’ इत्यादि. ‘सुयं मे आउसं तेणं’ आदींथी लक्ष ‘तंमिठाणं-  
मिचिद्धइ’ सुधीने पूर्वोक्तस्वरूपवाणे उपदेश, तथा “बाले पुण णिहे” आदींथी  
लक्षने “आणाए आराहिया वि भवइ” आदी सुधी वक्ष्यमाण-आगेण डहेवाभां  
आवनार-उपदेश आ सर्वज्ञनी अपेक्षाथी डहेवाभां आवेल नथी, डारणु डे ते  
कृतकृत्य छे, तेने डेअ पणु वस्तुथी प्रयोजन रहं नथी. डेवणजाननी प्राप्ति डोवाथी  
ते समस्त पदार्थोंने हस्तामलकवत् साक्षात् ज्ञाणु छे भाटे आ उपदेश ज्ञात  
लवोनी अपेक्षाथी छे. ज्ञात लव ते छे ने परिग्रहभां आसक्त छे, ज्ञानक्रियाथी  
विकल छे, विषयानुरागी छे, कामगुणोना अनुमोदक छे, अलब्धने प्राप्त डरवा,  
लब्धनी रक्षा डरवा भाटे ने व्यग्रचित्त डोवाथी सदा चिंताशील बनी जे छे,  
विषयकषायोभां आसक्त डोवाथी जेनुं अंतःडरणु अत्यन्त दुःखित वतुं रहे छे  
भाटे ने रात दिन शारीरिक बने मानसिक कष्टोना अनुभव डरवा डरे छे, तथा

અનુપરિવર્તે=ઘટીયન્નન્યાયેન મુહુર્મુહુઃ પર્યટતિ, યથા જલાવર્તે પતિતસ્તૃણાદિસ્ત-  
દાવર્તમેવાનુધાવતિ પરાધીનતયા નોન્મજ્જતિ ચ, તથૈવ વિષયૈકતાનચિત્તો વીતરાગો-  
પદેશપરાઙ્મુખો ગુરુકર્મા જીવઃ સંસારસાગરસ્ય દુઃસ્વાવર્તનિમગ્નઃ સન્ ન કદાપ્યુ-  
દ્ધૃતો ભવતીતિ વાલસ્ય સંસારપરિભ્રમણં વિજ્ઞાય તત્કારણપરિગ્રહવિષયાદિષુ ગૃદ્ધો મા  
ભૂદિતિ શિષ્યં પ્રત્યુપદેશ ઇતિ તાત્પર્યમ્ । ઇતિ વ્રવીમીત્યસ્યાર્થસ્તૂક્ત એવ ॥ સૂ. ૮ ॥

॥ ઇતિ દ્વિતીયાધ્યયનસ્ય તૃતીયોદ્દેશઃ સમાપ્તઃ ॥ ૨-૩ ॥

જિસ પ્રકાર રહટ ઘૂમતા રહતા હૈ ઉસી પ્રકાર જો નાના પ્રકાર કે એહ-  
લૌકિક એવં પારલૌકિક દુઃખોંકો ભોગતે હુએ ઇસ સંસારચક્રમેં પરિ-  
ભ્રમણ કર રહે હૈં ।

એસે વાલજીવ કિ જિનકા મન વિષયોં મેં લવલીન હોરહા હૈ, વીત-  
રાગ પ્રમુ કે ઉપદેશ સે જો સર્વથા પરાઙ્મુખ હો રહેહૈં, ગુરુકર્મી હૈં, પાની  
કે આવર્ત મેં પડે હુએ તૃણકી તરહ ઇસ સંસારસાગર કે દુઃખરૂપી  
આવર્ત મેં નિમગ્ન બન કમી મી વહાંસે છુટકારા નહીં પા સકતેહૈં । જિસ  
તરહ પાની કે આવર્ત મેં પડે હુએ તૃણકી દશા હોતી હૈ ઉસી પ્રકાર કી  
ઇનકી મી દશા હોતી હૈ । જૈસે વહ તૃણ ઉસસે વાહર નહીં નિકલને પાતા  
પ્રત્યુત ઉસમેં ઇધર-ઉધર ચક્કર કાટા કરતા હૈ-કમી ઉસમેં હૂવતા હૈ  
ઔર કમી ઉસી મેં ડપર તૈર આતા હૈ, ઠીક ઇસી પ્રકાર સે ઇન વાલ-  
જીવોંકા મી ઇસ ચતુર્ગતિરૂપ સંસારચક્રમેં પરિભ્રમણ હોતા રહતા હૈ ।  
એસા સમજ કર સંયમી મુનિકા કર્તવ્ય હૈ કિ વહ સંસારપરિભ્રમણકા

જે પ્રકાર રેંટ ધુમતો રહે છે તે પ્રકારે જે નાના પ્રકારનાં ઐહલૌકિક અને  
પારલૌકિક દુઃખોને ભોગવતાં આ સંસારચક્રમાં પરિભ્રમણ કરે છે.

આવા બાલ જીવો કે જેના મન વિષયોમાં લવલીન રહે છે, વીતરાગ પ્રભુના  
ઉપદેશથી જે સર્વથા પરાઙ્મુખ રહે છે, ગુરુકર્મી છે. પાણીમાં પડેલા તૃણ માફક  
આ સંસારસાગરના દુઃખરૂપી આવર્તમાં નિમગ્ન બની કોઈ વખત પણ ત્યાંથી  
છુટકારો મેળવી શકતા નથી. જેવી રીતે પાણીના આવર્તમાં પડેલા તૃણની દશા  
થાય છે તે પ્રકારે તેની પણ દશા થાય છે. જેવી રીતે તે તણખલુ તેનાથી બહાર  
નીકળી શકતું નથી પણ તેમાં ચક્કર લગાવ્યા કરે છે-કોઈ વખત તેમાં ડુબે  
છે તો કોઈ વખત ઉપર તરી આવે છે, ઠીક તે પ્રકારે આ બાલ જીવોના પણ  
ચાર ગતિરૂપ સંસાર ચક્રમાં પરિભ્રમણ થયા કરે છે. એવું સમજીને સંયમી  
મુનિનું કર્તવ્ય છે કે તે સંસારપરિભ્રમણનું કારણ જે વિષય અને પરિગ્રહાદિક

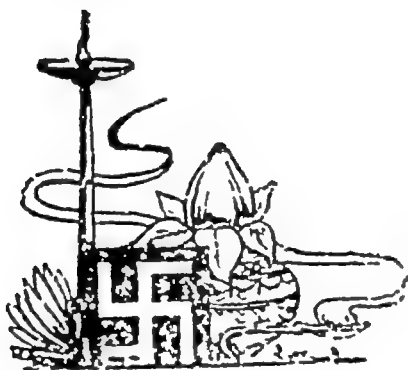
कारण जो विषय और परिग्रहादिक हैं उनमें गृह न बने । इस प्रकार से सूत्रकार का शिष्य के प्रति यह उपदेश है । 'ब्रवीमि' इस पद का पहिले के प्रकरणों में अर्थ कहा जा चुका है ॥ सू० ८ ॥

॥ दूसरे अध्ययनका तृतीय उद्देश संपूर्ण ॥



छे तेमां गृह न बने, आ प्रकारे सूत्रकारनो शिष्य प्रति आ उपदेश छे, इति ब्रवीमि आ पहनो पड़ेला प्रकरणेमां अर्थ करवामां आवेल छे.

॥ भीन्त अध्ययननो त्रीन्ते उद्देश संपूर्ण २-३ ॥



॥ आचाराङ्गसूत्रे द्वितीयाध्ययनस्य चतुर्थोद्देशः ॥

तत्र पूर्वस्मिन्नुद्देशे 'उच्चैर्गोत्रोत्पत्त्यभिमानादिर्न कार्यः' इति प्रतिपादितम्, अत्र च 'भोगेष्वभिष्वङ्गो न कार्यः, तत्र रोगस्यावश्यं सद्भावा'—इति दर्शयिष्यते ।  
अत्रानन्तरसूत्रसम्बन्धः—'दुःखी दुःखाण्येव आवट्टं अणुपरिवट्टइ' इति, तानि च दुःखानि रोगकारणानि भवन्त्यतो रोगानेव दर्शयति ।

॥ आचाराङ्गसूत्र के दूसरे अध्ययन का चौथा उद्देश ॥

तृतीय उद्देश का कथन हो चुका; अब चतुर्थ उद्देश का कथन प्रारंभ होता है । तृतीय उद्देश में संयमी मुनि को अपने संयम की रक्षा के लिए उच्च गोत्रमें उत्पत्ति होने का अभिमान आदि नहीं करना चाहिये यह भली भाँति समझा दिया गया है । इस चतुर्थ उद्देश में यह समझाया जायगा कि भोगों में संयमी मुनि के लिये अपने संयम की रक्षा करने के लिये अभिष्वङ्ग-रागपरिणति—नहीं करना चाहिये । क्यों कि "भोग बुरे भवरोग बढ़ावें वैरी हैं जग जी के" इस वाक्यके अनुसार एक तो वे भवरोग बढ़ाते हैं, दूसरे उनके सेवन से अनेक शारीरिक रोग भी उत्पन्न हो जाते हैं ।

इस प्रकरण का "दुःखी दुःखाण्येव आवट्टं अणुपरिवट्टइ" इस तृतीय उद्देश के अन्तिम सूत्र से संबंध है, इसलिये सूत्रकार उन्हीं रोगों का यहां पर वर्णन करेंगे, क्यों कि दुःख रोग के कारण हुआ करते हैं ।

आचाराङ्गसूत्रना णीळ अध्ययननो योथो उद्देश.

त्रीळ उद्देशनुं कथन समाप्त थयुं. उवे योथा उद्देशनो प्रारंभ थाय छे, त्रीळ उद्देशमां संयमी मुनिओ पोताना संयमनी रक्षा भाटे उंच गोत्रमां उत्पत्ति थवाने कारणे अभिमान आदि नहि करवुं जेधओ, ओ सारी रीते समजवी देवामां आवेल छे. आ चतुर्थ उद्देशमां ओ समजववामां आवशे छे—लोगोमां संयमी मुनिओ पोताना संयमनी रक्षा भाटे अभिष्वङ्ग-रागपरिणति नहि करवी जेधओ, कारणे छे "भोग बुरे भवरोग बढ़ावे वैरी हैं जगजी के" आ वाक्य अनुसार ओक तो ते भवरोग बढ़ावे छे, णीळुं तेना सेवनथी अनेक शारीरिक रोग पण उत्पन्न थाय छे.

आ प्रकरणना "दुःखी दुःखाण्येव आवट्टं अणुपरिवट्टइ" आ त्रीळ उद्देशना अन्तिम सूत्रथी संबंध छे भाटे सूत्रकार ते रोगोना आ ठेकाणे वर्णन करशे, कारणे छे रोगोना कारणथी दुःख थया करे छे.

કામભોગસેવનાદાસક્તિઃ, તથા ચાર્તૃરૌદ્રધ્યાનં, તત્તથ્ચ કર્મરજઃસમુપાર્જનમ્, તેન ચાત્મમાલિન્યં ભવતિ, તતો જ્ઞાનાદિગુણપ્રણાશઃ, તેનોન્માર્ગપ્રવૃત્તિઃ, તથા ચૈદ્ધિક-પારત્રિકદુઃસ્વાનિ જાયન્તે, દુઃસ્વાનિ ચ રોગાદિના ભવન્તિ, તત્ર દુઃસ્વહેતૂન્ રોગાનુપદર્શયતિ—‘ તઓ સે ’ ઇત્યાદિ ।

કામભોગોં કે સેવન સે જીવકી ઉસમેં આસક્તિ વઢતી હૈ । આસક્તિ સે આર્ત્ત ઔર રૌદ્રધ્યાન ઉત્પન્ન હોતે રહતે હૈં । ઉન ધ્યાનોં સે જીવ અશુ-ભકર્મપરમાણુઓં કા બંધ કરતા હૈ । ઉસસે આત્મા મેં મલિનતા આની હૈ । મલિનતા કે સંબંધ સે જ્ઞાનાદિક ગુણોંકા આવરણ હોને સે જીવોં કી ઉન્માર્ગ મેં પ્રવૃત્તિ હોતી હૈ । ઉસ પ્રકાર કી પ્રવૃત્તિ સે જીવ ઇહલોક ઔર પરલોક-સંબંધી અનંત યાતનાઓં કો ભોગતા હૈ । ઇસ પ્રકાર પરંપરા-સંબંધ સે કામભોગસેવન તથા ઉસ વિષય કી આસક્તિ જીવકો અનેક અનન્ત કષ્ટોં કો દેનેવાલી હોતી હૈ । પરલોકસંબંધી દુઃસ્વ જીવોં કો અશુભ કર્મોદય સે પ્રાપ્ત હોતા હૈ । વહાં પર ભી અનેક પ્રકાર કે શારીરિક તથા માનસિક દુઃસ્વ ઇસ જીવ કો ફેલને પડતે હૈં ।

ઇસલોકસંબંધી દુઃસ્વોં કી ભી યહી પરિસ્થિતિ હૈ, ફિર ભી વ્યવહારી જીવોં કી દૃષ્ટિમેં દુઃસ્વાદિક રોગાધીન હોતે હૈં; ઇસ અભિપ્રાય સે સૂત્રકાર ઉન દુઃસ્વોં કે કારણભૂત રોગોં કા વર્ણન કરતે હુએ કહતે હૈં—“ તઓ સે ” ઇત્યાદિ ।

કામભોગોના સેવનથી જીવની તેમાં આસક્તિ વધે છે. આસક્તિથી આર્ત્ત અને રૌદ્ર ધ્યાન ઉત્પન્ન થાય છે. તે ધ્યાનોથી જીવ અશુભ કર્મ પરમાણુઓનો બંધ કરે છે, તેથી આત્મામાં મલિનતા આવે છે. મલિનતાના સંબંધથી જ્ઞાનાદિક ગુણોનું આવરણ ઢોવાથી જીવોની ઉન્માર્ગમાં પ્રવૃત્તિ થાય છે. આ પ્રકારની પ્રવૃત્તિથી જીવ આલોક અને પરલોક સંબંધી યાતનાઓને ભોગવે છે. આ પ્રકાર પરંપરાસંબંધથી કામભોગસેવન, તથા તે વિષયની આસક્તિ જીવને અનેક અનંત કષ્ટોને દેવાવાળી હોય છે. પરલોકસંબંધી દુઃખ જીવોને અશુભ કર્મોદયથી પ્રાપ્ત થાય છે. ત્યાં પણ અનેક પ્રકારના શારીરિક તથા માનસિક દુઃખ આ જીવને ભોગવવા પડે છે.

આલોકસંબંધી દુઃખોની પણ એ જ પરિસ્થિતિ છે નો પણ વ્યવહારી જીવોની દૃષ્ટિમાં દુઃખાદિક રોગાધીન થાય છે. આ અભિપ્રાયથી સૂત્રકાર આ દુઃખોના કારણભૂત રોગોના વર્ણન કરતાં કહે છે—“ તઓ સે ” ઇત્યાદિ.



મૂલમ્—‘તથો સે ઇગયા રોગસમુપ્પાયા સમુપ્પજાંતિ જેહિં સદ્ધિં સંવસદ્ધિં તે વા પં ઇગયા નિયયા પુવ્વિં પરિવયંતિ, સો વા તે નિયગે પચ્છા પરિવહજ્ઞા, નાલં તે તવ તાણાણ વા સરણાણ વા, તુમંપિ તેસિં નાલં તાણાણ વા સરણાણ વા, જાણિત્તુ દુક્કલં પત્તેયં સાયં, ભોગામેવ અનુસોયંતિ, ઇહમેગેસિં માણવાણં ॥ સૂ. ૧ ॥

છાયા—તતસ્તસ્મ્યેકદા રોગસમુત્પાદાઃ સમુત્પદ્યન્તે યૈર્વા સાર્દ્ધં સંવસતિ તે વા સ્વલ્લુ એકદા નિજકાઃ પૂર્વં પરિવદન્તિ, સ વા તાન્ નિજકાન્ પશ્ચાત્પરિવદતિ, નાલં તે તવ ત્રાણાય વા શરણાય વા, ત્વમપિ તેપાં નાલં ત્રાણાય વા શરણાય વા, જાત્વા દુઃખં પ્રત્યેકં સાતં ભોગાનેવાનુગોચતિ, ઇદંકેપાં માનવાનામ્ ॥ શ્લોક ૧ ॥

ટીકા—‘તત’ इत्यादि । इदं सूत्रं प्रथमोद्देशे वृद्धावस्थाप्रसङ्गे प्रोक्तम्, इह च यौवनेऽपि भोगासक्त्या नानारोगाः समुत्पद्यन्त इति दर्शयति नातः पुनरुक्तिः ।

રોગા યથા—(૧)શ્વાસ(૨)કાસ(૩)જ્વર(૪)દાહ(૫)કુક્ષિશૂલ(૬)ભગન્દરા-(૭)અર્શ(૮)-અજીરક(૯)દષ્ટિશૂલ(૧૦)મૂર્ધશૂલ(૧૧)-અરુચિ(૧૨)નેત્રવેદના(૧૩)-કર્ણવેદના(૧૪)કણ્ઠવેદનો(૧૫)દરવેદના(૧૬)કુપ્ઠાશ્યાઃ પોદશ વિજ્ઞેયાઃ ।

સર્વેઽપિ જીવાઃ સ્વકૃતકર્મફલભોગિન इति विभाव्य विवेकी भुक्तपूर्वान् भोगान्नानुस्मरेत्, प्राप्तान्न सेवेत, अलब्धान्नाभिवाञ्छेदिति भावः ।

યૌવન અવસ્થામાં જીવોં કી ભોગાદિકોં મેં અધિક આસક્તિ વઢતી હૈ, ડસસે ઇસ અવસ્થા મેં મી અનેક પ્રકાર કે રોગ ઉત્પન્ન હોતે હૈં । ઇસ લિયે રોગોં કે નામ કહતે હૈં—૧ શ્વાસ—૨ કાસ શ્વાંસી ૩ જ્વર ૪ દાહ ૫ કુક્ષિ-શૂલ ૬ ભગન્દર ૭ અર્શ—ચવાસીર ૮ અજીરક ૯ દષ્ટિશૂલ ૧૦ મૂર્ધશૂલ ૧૧ અરુચિ ૧૨ નેત્રવેદના ૧૩ કર્ણવેદના ૧૪ કણ્ઠપીડા ૧૫ ઉદરપીડા ઓર ૧૬ કુપ્ઠ । યે ૧૬ રોગોં કે નામ હૈં ।

યૌવન અવસ્થામાં જીવોની ભોગાદિકોમાં અધિક આસક્તિ વધે છે, તેથી તે અવસ્થામાં પણ અનેક પ્રકારના રોગ ઉત્પન્ન થાય છે, માટે રોગોના નામ કહે છે.—૧ શ્વાસ, ૨ કાસ—ખાંસી, ૩ તાવ, ૪ દાહ, ૫ કુક્ષિશૂલ, ૬ ભગન્દર, ૭ અર્શ—હરસ, ૮ અજીરક, ૯ દષ્ટિશૂલ, ૧૦ મૂર્ધશૂલ, ૧૧ અરુચિ, ૧૨ નેત્રવેદના, ૧૩ કાનની વેદના, ૧૪ કંઠપીડા, ૧૫ ઉદરપીડા, અને ૧૬ કુપ્ઠ, એ રોગના સોલ નામ છે.

ગૃહસ્થુ ભોગસ્યૈવાનુચિન્તનં કરોતીત્યાહ-‘ભોગાનેવે’-તિ, ભોગાનેવ=શબ્દાદિ-વિષયાનેવ અનુશોચતિ=સતતં પરિચિન્તયતિ । મૂત્રે વહુવચનમાર્પત્વાત્ । યદ્યહં સર્વસ્વવ્યયસાધ્યમૈષજ્યાદિના નીરોગઃ સ્યાં તદાઽવશ્યમજસ્યં ભોગાન્ ભુક્ષીય, નાના-વિધાનિ સુखान्यનુભવેયમિત્યાદિનાનાવિધપરિચિન્તનાદશાન્તસ્વાન્તઃ સન્તતમનુ-તપ્તો ભવતીતિ તાત્પર્યમ્ । એવંવિધભોગાનુચિન્તનં કિં સર્વેષાં ભવતિ ? નેત્યાહ-‘ઈહૈકેષા’-મિત્યાદિ, ઇહ=સંસારે એકેષામ્=અપરિજ્ઞાતવિષયકદુષ્પાકાનાં કતિ-પયાનાં માનવાનામ્, બ્રહ્મદત્તસદૃશાનાં ભવતિ । ઇદમુત્ર દુઃસ્વકારણત્વાદ્ ભોગાસક્તિઃ પરિહરણીયેતિ મૂત્રાશયઃ ॥ સૂ૦ ૧ ॥

इस अवस्थामें जिनके साथ यह रहता है वे पुत्रकलत्रादिक पहले इसका अनादर करते हैं और तिरस्कारजनक वचन बोलते हैं, फिर यह भी उनका अनादर करता हुआ अपशब्द बोलता है, परन्तु हे जीव ! नहीं तो वे तेरे त्राण और शरण के लिये समर्थ हो सकते हैं और न तू भी उनको त्राण और शरण देनेके लिए समर्थ हो सकता है । समस्त संसारी जीव अपने२ किये हुए कर्म के अनुसार सुखदुःखादिक फल के भोगने-वाले होते हैं । ऐसा विचार कर विवेकी संयमी मुनि पूर्वमें भोगे हुए उन भोगों की स्मृति न करे, तथा प्राप्त हुए उन भोगों का सेवन न करे और अलब्ध भोगों को भोगने की इच्छा तक भी न करे ।

જો વિષયાદિકોં મેં ગૃહ્થ હોતા હૈ વહ્ ઉનકા હી નિરન્તર ચારંચાર ચિન્તવન-સ્મરણ કરતા રહતા હૈ; એસા જીવ જવ વિષયાદિકોં કે સેવન કરને મેં કિસી રોગાદિક કે પરાધીન બન અપને કો અસમર્થ પાતા

આ અવસ્થામાં જેની સાથે તે રહે છે તે પુત્ર કલત્રિક પહેલાં તેનો અનાદર કરે છે અને તિરસ્કારજનક વચન બોલે છે, પછી તે પણ તેનો અનાદર કરીને અપશબ્દ બોલે છે, પરંતુ હે જીવ ! તે તારા તારણહાર નથી અને શરણ દેવામાં પણ સમર્થ નથી, અને તું પણ તેનો તારણહાર નથી અને શરણ દેવામાં પણ સમર્થ નથી. સમસ્ત સંસારી જીવ પોતપોતાના કરેલા કર્મ અનુસાર સુખદુઃખાદિક ફળના ભોગવવાવાળા હોય છે એવો વિચાર કરી વિવેકી સંયમી મુનિ પૂર્વમાં ભોગવેલાં તે ભોગોની સ્મૃતિ પણ ન કરે, તથા પ્રાપ્ત થયેલાં ભોગોનું પણ સેવન ન કરે અને અલબ્ધ ભોગોને ભોગવવાની ઇચ્છા મુદ્દાં પણ ન કરે.

જે વિષયાદિકોમાં ગૃહ્થ થાય છે તે તેનું જ નિરંતર ચિન્તવન સ્મરણ કરતા રહે છે. એવા જીવ ત્યારે વિષયાદિકોનું સેવન કરવામાં કેટલું ભોગાદિકથી પરાધીન બને અને અસમર્થ બની જાય ત્યારે તે વિચારે છે કે-“ત્યારે હું નિરોગી બની

હૈ તવ ગૃહ વિચારતા હૈ કિ—જવ મૈં નિરોગ હો જાઝંગા તવ નિયમ સે નિરન્તર ઇન વિષયાદિકોં કા મનમાફિક સેવન કરૂંગા। યદિ મુઝે નીરોગતા પ્રાપ્ત કરને મૈં અપના સર્વસ્વ ભી અર્પણ કર દેના પડે તો ભી કોઈ ચિન્તા કી વાત નહીં। જીવન રહેગા તો ફિર ધન હો જાયગા। ધન હૈ ભી કિસ લિયે? યદિ સાંસારિક મૌજ મજા ન દેઝી તો ઇસ દ્રવ્ય કી પ્રાપ્તિ સે લાભ હી ક્યા હુઆ? ઇત્યાદિ અનેક પ્રકાર કે સંકલ્પ-વિકલ્પોં સે અશાન્ત-ચિત્ત બન નિરન્તર સંતપ્ત હોતા રહતા હૈ। ઇસ પ્રકાર કી સંતપ્તતા કા કારણ સિર્ફ ઇસ જીવ કી વિષયસંબંધી આસક્તિ હી હૈ। વે સંયમી મુનિ ધન્ય હૈં જો વિષયાદિક સેવન કે કટુકવિપાક કો જાનકર ઇસસે સર્વદા અપની રક્ષા કરતે રહતે હૈં। પરન્તુ જો ઇસકે કટુક વિપાક સે અનભિજ્ઞ બને હુણ હૈં ણેસે કિતનેક બ્રહ્મદત્ત ચક્રવર્તીં જૈસે મનુષ્ય હી ઇસ વિષયજાલ મૈં ફાંસ કર અપના ઇહલોક ઓર પરલોક દોનોં કા વિગાડ કર નાના પ્રકાર કે કષ્ટોં કા અનુભવ કરનેવાલે હોતે હૈં। ઇસ લિયે વિષયોં કો દોનોં ભવોં મૈં કષ્ટકારક જાન કર સંયમી મુનિ કો ભોગાસક્તિ સે સર્વદા અપની રક્ષા કરને મૈં સાવધાન રહના ચાહિયે। યહી ઇસ સૂત્ર કા આશય હૈ ॥ સૂ. ૧॥

બાઈશ ત્યારે નિયમથી નિરંતર આ વિષયાદિકોનું મનમાફક સેવન કરીશ. કદાચ મને નિરોગતા પ્રાપ્ત કરવામાં પોતાનું સર્વસ્વ પણ અર્પણ કરી દેવું પડે તો કંઈ ચિન્તા નહિ, જીવન રહેશે તો પછી ફરીથી ધન થાશે. ધન કેના માટે છે? જો સાંસારિક મોજમજા ન કરી તો આ દ્રવ્યની પ્રાપ્તિથી લાભ પણ શો?" ઇત્યાદિ અનેક પ્રકારના સંકલ્પ વિકલ્પોથી અશાન્તચિત્ત બની નિરંતર સંતપ્ત રહ્યા કરે છે, આ પ્રકારની સંતપ્તતાનું કારણ ફક્ત આ જીવની વિષયસંબંધી આસક્તિ જ છે.

તે સંયમી મુનિ ધન્ય છે જે વિષયાદિકસેવનના કટુક વિપાકને બાણીને તેનાથી સર્વદા પોતાની રક્ષા કરે છે, પરંતુ જે તેના કટુક વિપાકથી અનભિજ્ઞ બનેલા છે એવા કેટલાક બ્રહ્મદત્ત ચક્રવર્તી જેવા મનુષ્ય જ આ વિષયબળમાં ફસીને પોતાનો આલોક અને પરલોક બન્નેને બગાડીને નાના પ્રકારના કષ્ટોને અનુભવ કરવાવાળાં થાય છે. વિષયોને બન્ને ભવોમાં કષ્ટકારક બાણીને સંયમી મુનિએ ભોગાસક્તિથી સર્વદા પોતાની રક્ષા કરવામાં સાવધાન રહેવું જોઈએ, એ જ આ સૂત્રનો આશય છે. ॥ સૂ. ૧ ॥

ભોગસાધનસ્ય ધનસ્ય વિનશનશીલતાં દર્શયતિ—‘તિવિહેણ’ इत्यादि ।

મૂલમ્—તિવિહેણ જાડિવિ સે તત્થ મત્તા ભવઙ્ અપ્પા વા  
વહુયા વા, સે તત્થ ગઢિઢાણ ચિઢ્ઢિ મોયણાણ, તઓ સે ઇગયા  
વિપરિસિઢિં સંભૂયં મહોવગરણં ભવઙ્, તં પિ સે ઇગયા દાયાયા  
વિભયંતિ, અદત્તહારો વા સે અવહરઙ્, રાયાણો વા સે વિલુપંતિ,  
ણસ્સઙ્ વા સે, વિણસ્સઙ્ વા સે અગારદાહેણ વા સે ડઙ્ઙઙ્,  
ઇય સે પરસ્સ અઢ્ઢાણ કૂરાણિ કમ્માણિ વાલે પકુવ્વમાણે તેણ  
દુક્ખેણ વિપ્પરિયાસમુવેઙ્ ॥ સૂ૦ ૨ ॥

છાયા—ત્રિવિધેન યાડિવિ તસ્ય તત્ર માત્રા ભવતિ—અલ્પા વા વહુકા વા, સ  
તત્ર ગૃહસ્થિષ્ઠતિ ભોજનાય, તતસ્તસ્યૈકદા વિપરિશિષ્ટં સમ્ભૂતં મહોપકરણં ભવતિ  
તદપિ તસ્યૈકદા દાયાદા વિભજન્તે, અદત્તહારો વા તસ્ય હરતિ, રાજાનો વા તસ્ય  
વિલુપન્તિ, નશ્યતિ વા તસ્ય, વિનશ્યતિ વા તસ્ય, અગારદાહેન વા દહ્યતે તદ્,  
ઇતિ સ પરસ્યાર્થાય કૂરાણિ કર્માણિ વાલઃ પ્રકુર્વાણસ્તેન દુઃખેન મૂઢો વિપર્યા-  
સમુપૈતિ ॥ સૂ૦ ૨ ॥

ટીકા—‘ત્રિવિધેને’—ત્યાદિ, એતસ્ય વ્યાખ્યા તુ તૃતીયોદેશે પ્રોક્તા । પ્રાગ્  
ધનસ્ય નિસ્સારતા પ્રદર્શિતા, અત્ર તુ ભોગસાધનસ્ય ધનસ્ય ક્ષીણમાણતયા તદ-  
ભાવાદપિ ન ભોગો ભવિતુમર્હતીતિ દર્શિતમ્ ॥ સૂ૦ ૨ ॥

ભોગ કે સાધનભૂત ધનની વિનશ્વરતા દિશ્વલાતે હુણ સૂત્રકાર કહતે  
હૈ—“તિવિહેણ જાવિ” इत्यादि ।

ઇસ સૂત્રની વ્યાખ્યા તૃતીય ઉદ્દેશ મેં અચ્છી તરહ સે કી જા ચુકી  
હૈ । વહાં પર સામાન્યતયા ધનની અસારતા પ્રકટ કી હૈ, યહાં પર ભોગ ઓર  
ઉપભોગ મેં કામ આલેચાલે સાધનભૂત ધનની અસારતા બનલાઈ ગઈ હૈ;  
કારણ કિ સાંસારિક ભોગ ઓર ઉપભોગ કા કારણ ધન હોતા હૈ । ઇસકે

ભોગોના સાધનભૂત ધનની વિનશ્વરતા દેખાડતા સૂત્રકાર કહે છે—  
“તિવિહેણ જાવિ” इत्यादि.

આ સૂત્રની વ્યાખ્યા ત્રીજા ઉદ્દેશમાં સારી રીતે આપવામાં આવેલ છે. તે  
જગ્યાએ સામાન્યતયા ધનની અસારતા પ્રકટ કરેલ છે આ ઉદ્દેશને ભોગ અને  
ઉપભોગમાં કામ આવવાવાળા સાધનભૂત ધનની અસારતા બતાવવામાં આવેલ છે.  
કારણ કે સાંસારિક ભોગ અને ઉપભોગનું કારણ ધન જ છે. તેના અભાવમાં

एवं 'भोगे रोगः' इति प्रोक्तम् । अथ च भोगसाधनं धनमपि नश्वरं ततः किं विधेयमिति दर्शयति—'आसं च' इत्यादि ।

સદ્ગ્રાવ એ જીવ સાંસારિક સૌજ-મજા ભોગને મેં અપની શક્તિઅનુસાર કસર નહીં રાખતે; કિન્તુ ભોગ સદા દુઃખદાયી હોતે હેં । કહ્યા મી હૈ—

ભોગ વુરે ભવ રોગ વઢાવેં, વૈરી હેં જગ જી કે ।  
 વેરસ હોય વિપાક સમય અતિ, સેવત લાગેં નીકે ॥  
 વજ્ર અગનિ વિષ સે વિપધર સે, યે અધિકે દુઃખદાઈ ।  
 ધર્મરતન કે ચોર ચપલ અતિ, દુર્ગતિપંથસહાઈ ॥  
 મોહ-ઉદય યહ જીવ અજ્ઞાની, ભોગ ભલે કર જાનૈ ।  
 જ્યોં કોઈ જન સ્વાય ધતૂરા, સો સવ કંચન માનૈ ॥  
 જ્યોં જ્યોં ભોગ સંજોગ મનોહર, મનવાંછિત જન પાવૈ ।  
 તૃષ્ણા નાગિન ત્યોં ત્યોં ડંકૈ, લહર જહર કી આવૈ ॥

उन भोगों की आशा से वाल अज्ञानी जीव प्राणातिपातादिक अनेक प्रकार के क्रूर कर्मों को करता हुआ विपरीतपने को प्राप्त होता है, अर्थात् मोक्षमार्ग से विमुख हो जाता है ॥ सू० २ ॥

इस प्रकार जब भोग में रोग है और भोग का साधनभूत धन विनश्वर है तब क्या करना चाहिये? इसका प्रत्युत्तर देते हुए सूत्रकार कहते हैं—“आसं च” इत्यादि ।

જીવ સાંસારિક ભોજ-મજા ભોગવવામાં પોતાની શક્તિઅનુસાર કસર રાખતા નથી પણ ભોગ સદા દુઃખદાયી થાય છે. કહ્યું પણ છે—

“ભોગ વુરે ભવ રોગ વઢાવેં, વૈરી હેં જગજીકે ।  
 વેરસ હોય વિપાક સમય અતિ, સેવત લાગેં નીકે ॥  
 વજ્ર અગનિ વિપસે વિપધર સે, યે અધિકે દુઃખદાઈ ।  
 ધર્મરતનકે ચોર ચપલ અતિ, દુર્ગતિપંથસહાઈ ॥  
 મોહ ઉદય યહ જીવ અજ્ઞાની, ભોગ ભલે કર જાનૈ ।  
 જ્યોં કોઈ જન સ્વાય ધતૂરા, સો સવ કંચન માનૈ ॥  
 જ્યોં જ્યોં ભોગ સંજોગ મનોહર, મનવાંછિત જન પાવૈ ।  
 તૃષ્ણા નાગિન ત્યોં ત્યોં ડંકૈ, લહર જહર કી આવૈ ॥”

આવા ભોગોની આશાથી ખાલ અજ્ઞાની જીવ પ્રાણાતિપાતાદિક અनेक प्रकारનાં ક્રૂર કર્મો કરીને વિપરીતપણાને પ્રાપ્ત થાય છે, અર્થાત્ મોક્ષમાર્ગથી વિમુખ થાય છે. ॥ સૂ० ૨ ॥

આ પ્રકારે બીજા ભોગમાં રોગ છે. અને ભોગના સાધનભૂત ધન વિનશ્વર છે. ત્યારે શું કરવું જોઈએ? તેનો પ્રત્યુત્તર આપતાં સૂત્રકાર કહે છે—“આસં ચ” ઇત્યાદિ.

મૂલમ્—આસંચ છંદં ચ વિગિંચધીરે, તુમં ચેવ તં સહ-  
માહદુ, જેણ સિયાતેણ નો સિયા, ઇણમેવ નાવબુજ્ઞંતિ જે જણા  
મોહપાઝડા, થીલોમપદ્ધિહિં તે મો વયંતિ ઇયાઈં આયત-  
ણાઈં, સો દુઃખાણ મોહાણ મારાણ નરગાણ નરગતિરિખાણ  
સયયં મૂઢે ધમ્મં નામિજાણઈં ઉદાહુ વીરે, અપ્પમાઓ મહામોહે,  
અલં કુસલસ્સ પમાણં સંતિ મરણં સંપેહાણ મિદુરધમ્મં  
સંપેહાણ નાલં પાસ અલં તે ઇણહિં ॥ સૂ. ૩ ॥

છાયા—આશાં ચ છન્દશ્ચ વેવિક્ષ્ય ધીર ! ત્વમેવ તત્ શલ્યમાહત્ય યેન સ્યાત્  
તેન નો સ્યાત્, इदमेव नावबुध्यन्ते ये जना मोहप्राज्ञताः, स्त्रीलोकप्रव्यथितः,  
ते भो वदन्ति, एतान्यायतनानि, तत् (तेषां) दुःखाय मोनाय माराय नरकाय  
नरकात्, तिरश्चे, सततं मूढो धर्मं नाभिजानाति, उदाह वीरः, अप्रमादो महामोहे अलं  
कुशलस्य प्रसादेन शान्तिमरणं संप्रेक्ष्य मિदुरधर्मं संप्रेक्ष्य नालं पश्यालं ते एतैः ॥મૂ. ૩॥

ટીકા—‘આશાં ચે’ત્યાદિ । હે ધીર ! ધિયા=ચારિત્રારાધનરૂપયા મત્યા  
રાજત ઇતિ ધીરસ્તત્સંવોધને હે ધીર ! =હે સંયમિન્ ! યદ્વા-ધિયં=બુદ્ધિમ્  
ઈરયતિ=પ્રેરયતિ પરીપહોપસર્ગવિજયાર્થં યઃ સ ધીરસ્તત્સંવોધને હે ધીર ! હે  
સંયમિન્ ! અથવા હે પરીપહોપસર્ગૈરશ્નોમ્ય ! આશાં=શબ્દાદિવિષયરૂપાં,  
છન્દઃ=ભોગસ્યાભિગ્રાણં ચ વેવિક્ષ્ય=પૃથક્કુરુ-પરિચ્છેદ્યત્યર્થઃ । હે શિષ્ય ! ત્વમેવ

ચારિત્ર કો આશાધન કરનેવાળી બુદ્ધિ સે જો ગોખિત હોતા હૈ  
અથવા પરીપહ્ અને ઉપસર્ગ કો જીતને કે લિયે જો બુદ્ધિ કો પ્રેરિત  
કરતા હૈ યહાં ઉસકા નામ ધીર હૈ । સંવોધન કરતે હુણ સૂત્રકાર કહતે  
હૈ કિ-હે ધીર ! હે સંયમી ! અથવા પરીપહ્ અને ઉપસર્ગ કો જીતને-  
વાલે શિષ્ય ! તુમ શબ્દાદિ વિષય કી ઇચ્છા અને ભોગ કી ચાહના કો  
અપને સે પૃથક્ કાગે-છોડો; કારણ કિ વ્રતી કા લક્ષણ “નિઃશલ્યો વ્રતી”  
શલ્યરહિત હોના વતલાયા હૈ । સંયમ કો લેકર સી જો શબ્દાદિવિષયો

ચારિત્રનું આશાધન કરવાવાળી બુદ્ધિથી જે ગોખિત થાય છે, અથવા પરિ-  
પહ અને ઉપસર્ગને છતવા માટે જે બુદ્ધિને પ્રેરિત કરે છે. આ દેશને તેનું નામ  
ધીર છે. સંવોધન કરીને સૂત્રકાર કહે છે કે-હે ધીર ! હે સંયમી ! અથવા શિષ્ય  
અને ઉપસર્ગને છતવાવાળા શિષ્ય ! તમે શબ્દાદિ વિષયની ઇચ્છા અને ભોગની  
ચાહનાઓને તમારાથી દૂર કરો-છોડો, કારણ કે-વ્રતીના લક્ષણ “નિશલ્યો વ્રતી”  
શલ્યરહિત થવું જતાવેલ છે. સંયમને લઈને પણ જે શબ્દાદિ વિષયને ભોગ-



કે ભોગને કીં ચાહના કે વશવર્તી બના રહતા હૈં વહ દંભકા સેવન કરનેવાલા હૈં । વે શબ્દાદિવિષયોંકો ન ભી ભોગતે હોં તો ભી ઉનકી પરિણતિ તન્દુલમત્સ્ય કે સમાન ઉસ ઓર લાલસાવાલી હોને સે સંયમ કા નાશ કરનેવાલી માની ગઈ હૈં । સંયમ કો મૂલ સે નાશ કરનેવાલા શલ્ય હૈં । માયાશલ્ય કે સદ્ભાવ સે હી અવ્રત ભી વ્રત જૈસે માલૂમ પડતે હૈં । અતઃ સૂત્રકાર કહતે હૈં કિ-હે શિષ્ય ! તું ઇસ શલ્ય કો દૂર કર, વ્યર્થ ક્યોં ઇસકે ફંદે મેં પડકર અપને કો દુઃખી બના રહા હૈં । દૂસરે ચાહે કુછ ભી કરતે હોં યહ તુજે નહીં દેખના હૈં, તું અપની હી ઓર દેખ “તું તારું રે સંભાલ તને બીજાની શી પડી” તું કયા કર રહા હૈં ? ઇસી લિયે સૂત્રકાર “ત્વમેવ” ઇસ પદ પર જોર દેકર શિષ્ય સે કહ રહે હૈં ।

અથવા-શલ્ય શબ્દકા અર્થ-અષ્ટવિધ કર્મ ભી હૈં, યહ પહિલે વત્તાયા જા ચુકા હૈં કિ-“તપસા નિર્જરા ચ” તપ, સંયમ પાલન કરને સે સંવર તો હોતા હી હૈં પરન્તુ સંચિત કર્મોં કી નિર્જરા ભી હોતી હૈં । ચારિત્રારાધન કે દ્વારા આત્મા જ્યોં ૨ અવિરતિ, પ્રમાદ, કપાય, ઓર અશુભ યોગોં કા નિગ્રહ કરતા જાતા હૈં ત્યોં ૨ ઇસ આત્મા મેં અપૂર્વ ઉજ્જ્વલતા કી જાગૃતિ હોતી જાતી હૈં । ઇસ ઉજ્જ્વલતા કી જાગૃતિ મેં આત્મા સંવર ઓર નિર્જરા કે દ્વારા કર્મોં કા ક્રમશઃ નાશ કરતા હુઆ આગેર કે ગુણ-

વવાની આહવાને વશવર્તી બની રહે છે, તે શબ્દાદિ વિષયોને ભલે નહિ ભોગવતા હોય તો પણ તેની પરિણતિ તંદુલમત્સ્યસમાન તે તરફ લાલસાવાળી હોવાથી સંયમનો નાશ કરવાવાળી માનવામાં આવે છે સંયમને મૂળથી નાશ કરવાવાળા શલ્ય છે. માયાશલ્યના સદ્ભાવથી અવ્રત પણ વ્રત જેવા માલુમ પડે છે. માટે સૂત્રકાર કહે છે કે-હે શિષ્ય ! તું આ શલ્યને દૂર કર, વ્યર્થ શા માટે તેના ફંદામાં પડીને પોતાને દુઃખી બનાવે છે ? બીજા ભલે કોઈ પણ કાર્ય કરતા હોય એ તારે જોવાનું નથી, તું ફક્ત તારી જ તરફ દેખ, “તું તારું રે સંભાળ, તને બીજાની શી પડી ?” તું શું કરી રહ્યો છે ? તે માટે સૂત્રકાર “ત્વમેવ” આ પદ ઉપર જોર દઈને શિષ્યને કહે છે.

અથવા શલ્ય શબ્દનો અર્થ અષ્ટવિધ કર્મ પણ છે, એ પહેલાં બતાવવામાં આવેલ છે કે-“તપસા નિર્જરા ચ” તપ, સંયમ પાલન કરવાથી સંવર તો થાય જ છે, પરંતુ સંચિત કર્મોની નિર્જરા પણ થાય છે. ચારિત્રારાધનદ્વારા આત્મા જેમ જેમ અવિરતિ, પ્રમાદ, કપાય, અને અશુભ યોગોનો નિગ્રહ કરતો જાય છે તેમ તેમ આ આત્મામાં અપૂર્વ ઉજ્જ્વલતાની જાગૃતિ થતી જાય છે. આ ઉજ્જ્વલતાની જાગૃતિમાં આત્મા સંવર અને નિર્જરાદ્વારા કર્મોનો ક્રમશઃ નાશ કરીને આગળ આગળના ગુણસ્થાનોમાં ચઢતો જાય છે. એક સમય એવો



स्थानों में चढ़ता चला जाता है। एक समय ऐसा भी आता है कि जिसमें इस की आत्यंतिक शुद्धि हो जाती है। इस प्रकार कर्मोच्छेद में चारित्र को सर्वप्रथम स्थान प्राप्त हुआ है। अतः हे शिष्य ! निर्दोष चारित्राराधन कर और इन कर्मों पर क्रमशः अथवा युगपत् विजय प्राप्त कर। विषय भोगों की चाह से ऐसे सुन्दरतम चारित्र को बिगाड़ने के लिये क्यों व्यर्थ में चेष्टा करता है ? क्यों इसे नष्ट भ्रष्ट करता है ? ऐसा करने से उल्टे अनन्त संसार वर्धन करनेवाले इन कर्मोंका बंधन दृढ़ ही होगा, जो तुझे भवर में दुःखदाता होगा। अपने को दुःखी करने में तेरा ही अपराध है, इसमें और कोई निमित्त नहीं। इसी बात की पुष्टि “अष्टविधं कर्म वा आहृत्य-परिगृह्य स्वात्मनि दुःखमुत्पादयसि” टीकाकारने इस पंक्तिसे की है। यह दृढ़ विश्वास रख-जिस भोगादिक की चाहना में पड़कर तू संयम जैसे अमूल्य रत्न को कलंकित करने में संकोच नहीं करता है। क्या उन भोगादिकों को भोगने की तेरी यह भावना सफल हो जायगी ?। ज्ञान लिया संयमरत्न को बेंच कर तूने भोगादिक वस्तुओंको खरीद भी लिया, परन्तु यदि तेरे प्रबल अन्तराय-भोगान्तराय का उदय है तो प्राप्त हुए उन भोगादिकों को तू नहीं भोग सकता। अथवा संयम

પણ આવે છે કે જેમાં તેની આત્મતિક શુદ્ધિ થઈ જાય છે. આ પ્રકારે કર્મો-  
ચ્છેદમાં ચારિત્રને સર્વપ્રથમ સ્થાન પ્રાપ્ત થયેલ છે. માટે હે શિષ્ય ! નિર્દોષ  
ચારિત્રારાધન કર, અને એ કર્મો ઉપર ક્રમશઃ અથવા યુગપત્ વિજય પ્રાપ્ત કર.  
વિષય ભોગોની આહનાથી એવા સુંદરતમ ચારિત્રને બગાડવા શા માટે વ્યર્થ  
ચેષ્ટા કરે છે ? શા માટે તેને નષ્ટ ભ્રષ્ટ કરે છે ? આવું કરવાથી ઉલ્ટા અનંત  
સંસારને વધારવાવાળા તે કર્મોના બંધન દૃઢ જ થશે, જે તને ભવભવમાં દુઃખ  
દાતા થશે, પોતાને દુઃખી કરવામાં તારોજ અપરાધ છે, તેમાં કોઈ બીજું નિમિત્ત  
નથી. આ વાતની પુષ્ટિ “ અષ્ટવિધં કર્મ વા આહૃત્ય પરિગૃહ્ય સ્વાત્મનિ દુઃખ-  
મુત્પાદયસિ ” ટીકાકારે આ પંક્તિથી કહ્યું છે. એ દૃઢ વિશ્વાસ રાખ, જે ભોગા-  
દિકની આહનામાં પડીને તું સંયમ જેવા અમુલ્ય રત્નને કલંકિત કરવામાં સંકોચ  
કરતો નથી. શું તે ભોગાદિકોને ભોગવવાની તારી એ ભાવના સફળ થશે ? માની  
લ્યે કે-આ સંયમરત્નને વેચીને તે ભોગાદિક વસ્તુઓને ખરીદી લીધી. પરંતુ  
કદાચ તારા પ્રબળ અંતરાય-ભોગાન્તરાયના ઉદય હાંચ તો પ્રાપ્ત થયેલ તે ભોગા-  
દિકોને તું ભોગવી શકતો નથી, અથવા સંયમની ઓટમાં બેસીને ભોગાદિકની

નાન્યઃ, શલ્યં=માયાદિરૂપમ્ અઘ્નિયં કર્મ વા આહૃત્ય=પરિગૃહ્ય સ્વાત્મનિ દુઃસ્વમુત્પા-  
દયસિ । યતો યેનાર્થાદિના ભોગપ્રાપ્તિઃ સ્યાત્ તેનૈવ કદાચિન્નો સ્યાત્, અન્તરાય-  
કર્મપરિણામસ્યાઘટિતઘટનાઘટકત્વાત્ । અન્તરાયકર્મવૈચિત્ર્યમિદં મોહપ્રાવૃતા ન  
જાનન્તીત્યાહ-‘ઇદમેવે’-તિ, ‘મોહપ્રાવૃતાઃ’ મોહેન=અજ્ઞાનેન પ્રાવૃતાઃ=સમ્યગ્વ-  
ગુણિતાઃ, અજ્ઞાનતમસાઽઽચ્છાદિતા इत्यर्थः, ये जनाः तीर्थङ्करगणधराज्ञाविराधकाः  
इदमेव=ભોગસાધનમપ્યભોગસાધનં ભવતીતિ કારણવૈચિત્ર્યમેવ નાવબુધ્યન્તે=ન  
જાનન્તિ । ભોગાન્તરાયોદયાદજ્ઞાનાન્થા વિપરીતમતયો હેતુવૈચિત્ર્યં ન મન્યન્તે ।  
દૃશ્યતે हि लोके भोगाय समवहितोऽपि कारणकलापोऽन्तरायोदयादनर्थाय भवति ।

કી ઓટ મેં બેઠ કર ભોગાદિક કી ચાહના સે તૂને અન્ય પ્રાણિયોં કો  
રિજ્ઞાકર કિસી દૂસરે વહાને સે ભોગાદિક સામગ્રી કો જુટાને મેં સાધન-  
ભૂત દ્રવ્યાદિક કા સંગ્રહ ભી કરલિયા તો તુજે યહ કૈસે વિશ્વાસ હૈ કિ  
ઇસ દ્રવ્યાદિક સે મુજે ઉસ મનોનુકૂલ સામગ્રી કા લાભ અવશ્યર હો  
હી જાયગા । વિપરીત ભી હો સકતા હૈ, કારણ કિ અઘટિત ઘટના કો  
ઘટાને મેં પટુ અન્તરાય કર્મ કા ઉદય અભી તેરે બના હુઆ હૈ, ઉસકા  
જય તક નાશ નહીં હોતા તવ તક પ્રાણી મનોઽનુકૂલ ભોગાદિકોં કો  
ભોગને મેં સર્વથા અસમર્થ રહતા હૈ, યહી બાત “જેણ સિયા તેણ જો  
સિયા” ઇન પદોં સે વ્યક્ત કી હૈ । જિસ દ્રવ્યાદિક સાધન સે ભોગપ્રાપ્તિ  
હોતી હૈ અન્તરાય કે ઉદય હોને પર ઉસી સે ભી સંભવ હૈ કિ ન ભી હો ।  
યહ સવ અન્તરાય કર્મ કી હી વિચિત્રતા હૈ, પરન્તુ જિન કી આત્મા મોહ  
કે ઉદય સે આચ્છાદિત હો રહી હૈ, તથા તીર્થંકર એં ગણધરાદિકોં કી  
આજ્ઞા કે વિરાધક હૈં વે અન્તરાય કી ઇસ વિચિત્રતા કો નહીં જાનતે ।

આહનાથી તું અન્ય પ્રાણીઓને રીઝવી કોઈ બીજા બહાનાથી ભોગાદિક સામગ્રી  
મેળવવામાં સાધનભૂત દ્રવ્યાદિકનો સંગ્રહ પણ કરી લે તો પણ તને એવો  
વિશ્વાસ કેમ છે કે-આ દ્રવ્યાદિકથી મને તે મનોનુકૂળ સામગ્રીનો લાભ અવશ્ય  
થઈ જ નશે? વિપરીત પણ બની શકે છે, કારણ કે અઘટિત ઘટનાને ઘટાડવામાં  
પટુ અન્તરાય કર્મનો ઉદય હવે પણ તારે વિદ્યમાન છે. તેનો જ્યાં સુધી નાશ  
થશે નહિ ત્યાં સુધી પ્રાણી મનોઽનુકૂળ ભોગાદિકોને ભોગવવામાં સર્વથા અસમર્થ  
રહે છે. આ વાત “જેણ સિયા તેણ જો સિયા” આ પદોથી વ્યક્ત કરી છે.  
જે દ્રવ્યાદિકસાધનથી ભોગપ્રાપ્તિ થાય છે, અંતરાયનો ઉદય થતાં તેનાથી પણ સંભવ  
જુ છે કે કદાચ ન પણ બને, આ બધી અન્તરાય કર્મની જ વિચિત્રતા છે, પરંતુ  
જેની આત્મા મોહના ઉદયથી આચ્છાદિત થઈ રહી છે, તથા જે તીર્થંકર અને  
ગણધરાદિકોની આજ્ઞાના વિરાધક છે તે અન્તરાયની આ વિચિત્રતાને જાણતા નથી.

યથા સ્વભોગાર્થં વિપુલવિભવસમ્પાદિતં સકલજનાશ્ચર્યકારિકારુકલાકલાપનિર્મા-  
યિતં સકલેન્દ્રિયસુખાવલમ્બિ-ગગનચુમ્બિ-પ્રાસાદમવલોકિતુમુપરિતનભાગમુપગતો  
ભવનશોભાવલોકનનિમગ્નો ભવનાધિપતિરારોહમાર્ગેણાવતરન્ કર્મવૈચિત્ર્યાત્પાદસ્વ-  
લનેન તતો નિપત્ય મૃતિમવાપ । અહો ! પશ્યન્તુ મહામોહમહિમાનમ્ ।

સચ વાત હૈ ભોગાન્તરાય કે ઉદય સે જો અજ્ઞાન સે અન્ધ હો રહે હૈં, એવં  
જિનકી મતિ વિપરીત બની હુઈ હૈ વે इस अन्तराय की विचित्रता को  
कि-जो पदार्थ भोगसामग्री का साधन है वही कालान्तर में अन्तरायादि  
निमित्त को पाकर उसका साधन नहीं होता है-नहीं माना करते हैं, परन्तु  
उनकी मान्यता या अमान्यता से कुछ भी नहीं हो सकता है। हम  
व्यवहार में यह बात प्रत्यक्ष देखते हैं कि-भोग के लिये एकत्रित किये  
गये कारणकलाप-साधन अन्तराय के उदय से अनर्थकारी हो जाते हैं।

જैसे કિસી ધનિક વ્યક્તિને અપને ઉપભોગ કરને કે લિયે પૂર્ણ ઉપભોગ  
કી સામગ્રીસમન્વિત એક સર્વસુંદર ગગનતલચુમ્બી પ્રાસાદ વહુત  
ચતુર કારીગરોં દ્વારા બનવાના પ્રારંભ કિયા । ધીરે ૨ વહ બનકર પૂર્ણ  
તૈયાર હો ગયા । મકાનમાલિક ઉસકી શોભા કા નિરીક્ષણ કરને લિયે  
વહાં ગયા । સબ સે ઝંચે સ્વપ્ન પર ચઢ કર ઉસને ઉસકી શોભા કા  
સર્વાંગનિરીક્ષણ કિયા । પૂર્ણ શોભા સે યુક્ત ઉસે દેસકર વહ આનન્દ  
મગ્ન બી હુઆ । કુછ દેર બાદ વહ વહાંસે વાપિસ લોટકાર નીચે આને લગા,

સાચી વાત છે કે ભોગાન્તરાયના ઉદયથી જે અજ્ઞાનથી અંધ થઈ રહેલ છે, અને  
જેની મતિ વિપરીત બનેલ છે તે આ અંતરાયની વિચિત્રતાને કે-જે પદાર્થ ભોગ  
સામગ્રીનું સાધન છે તે કાલાન્તરમાં અંતરાયાદિક નિમિત્તને મેળવી તેનું સાધન  
બનતું નથી-માનતા પણ નથી, પરંતુ તેની માન્યતા અગર અમાન્યતાથી  
કાંઈ પણ બની શકતું નથી. અમે વ્યવહારમાં આ વાત પ્રત્યક્ષ દેખીએ છીએ  
કે-ભોગ માટે એકત્રિત કરવામાં આવેલ કારણકલાપ-સાધન અંતરાયના ઉદયથી  
અનર્થકારી બની જાય છે.

જેવી રીતે કાંઈ ધનિક વ્યક્તિએ પોતાના ઉપભોગને માટે પૂર્ણ  
ઉપભોગની સામગ્રીસમન્વિત એક સર્વસુંદર ગગનચુંબી મહેલ ઘણા ચતુર  
કારીગરો દ્વારા બનાવવાનો પ્રારંભ કર્યો. ધીરે ધીરે તે બનીને પૂર્ણ તૈયાર  
બની ગયો. મકાનમાલિક તેની શોભાનું નિરીક્ષણ કરવા ત્યાં ગયો. સીધી  
ઉંચા ખંડ ઉપર ચડીને તેણે તેની શોભાનું સર્વાંગ નિરીક્ષણ કર્યું. પૂર્ણ શોભાથી  
યુક્ત તેને દેખીને તે આનંદમગ્ન પણ થયો, થોડા વખત પછી તે ત્યાંથી પાછો  
ફરીને નીચે આવવા લાગ્યો. પરંતુ વચમાં જ અશુભ ઉદયથી કાંઈ એક બીડીના

મોહનીયે કામપ્રાધાન્યેન સ્ત્રિયાઃ પ્રાધાન્યમિતિ દર્શયતિ-‘સ્ત્રી’-તિ, સ્ત્રીલોકૈઃ= કામિનીजनैः, प्रव्यथितः=प्रकर्षेण व्यथितः=अधीनीकृतः भोगाशापाशबद्धः साव-  
धानुष्ठायी जनः । ते त्वन्यानपि मुद्गरुपदेशादिना संसाराधोगर्ते पातयन्तीत्याह  
-‘ते भो’ इत्यादि । ते वनितावशवर्तिनो वदन्ति=कथयन्ति ‘भो’ इति संबोधने  
हे जनाः ! एतानि=कामिन्यादीन्येव आयतनानि=भोगाधिष्ठानानि सुखकारणानी-  
त्यर्थः । कामिन्यो हि कमनीयमुग्वकारणीभूताः सकलजगतो ललामरूपा निखिल-  
लोकामन्दानन्दसन्दोहदायिन्यो भवन्ति, किं भोगस्ताभिर्विना?, इत्यादि ब्रुवन्ति ।

परन्तु बीच ही में अशुभोदय से किसी एक सीढ़ी पर से उसका पैर  
फिसल गया और वह वहां से नीचे गिर कर सर गया । इस दृष्टान्त से  
यही फलितार्थ निकलता है कि-जो सामग्री भोग के निमित्त होती है  
वही भोगान्तराय के उदय से कालान्तर में अनर्थ के लिये जीवों को हो  
जानी है । परन्तु कर्म की बलवत्ता ही कुछ ऐसी है, जो इस जीव को  
बाहिरी वस्तुओं में उन्मत्त बना रही है ।

इसी मोહનીય કે ઉદયમેં ભોગોં કી આશારૂપપાશ સે બંધે  
હુણ જીવોં મેં કામ કી પ્રધાનતા હોને સે વે સ્ત્રિયોં કે દ્વારા વ્યથિત  
કિયે જાતે હેં, અધીન કિયે જાતે હેં । શાસ્ત્રકાર કહતે હેં કિ-એસે  
જીવ “ઇતો અપ્પસ્તતો અપ્પઃ” હો તો કોઈ અચરજ કી વાત નહીં  
હે, પરન્તુ યે સ્વયં વિગડુકર દૂસરોં કો ખી વિગાડને કી વાતેં કરતે  
હેં, યહી એક બડા આશ્ચર્ય હે । યે દૂસરોં સે યહી કહતે હેં કિ-“અરે  
ભાઈ ! ઇન સ્ત્રી આદિ પદાર્થોં કે સેવન કરને મેં હી સંસાર કા સર્વ સુખ

પગથીયા ઉપરથી તેનો પગ લપસી ગયો; અને તે ત્યાંથી નીચે પડીને મરી ગયો.  
આ દાખલાથી એવું તાત્પર્ય નીકળે છે કે-જે સામગ્રી ભોગને નિમિત્ત હોય છે  
તે ભોગાન્તરાયના ઉદયથી કાલાન્તરમાં જીવોને અનર્થરૂપ પણ બની જાય છે.  
પરંતુ કર્મની બલવત્તા જ કંઈ એવી છે કે, જે આ જીવને બહારની વસ્તુઓમાં  
ઉન્મત્ત બનાવે છે.

આ મોહનીયના ઉદયમાં ભોગોની આશારૂપ પાશથી બંધાયેલા જીવોમાં  
કામની પ્રધાનતા હોવાથી તે સ્ત્રિઓદ્વારા વ્યથિત કર્યેં જાય છે. અધીન કર્યેં જાય  
છે. શાસ્ત્રકાર કહે છે કે-એવો જીવ ઇતો અપ્પસ્તતો અપ્પઃ થાય તો કંઈ અચ-  
રજની વાત નથી. પરંતુ તે પોતે બગડીને બીજાને પણ બગાડવાની વાતો કરે  
છે. એ પણ એક મોહું આશ્ચર્ય છે. તે બીજાઓને એમ કહે છે કે-“અરે ભાઈ  
આ સ્ત્રી આદિ પદાર્થોનું સેવન કરવામાં જ સંસારનું સર્વ સુખ સમાજેલું છે

કિન્તુ નૈવં, પ્રત્યુત દુઃસ્વાયર્થમેવેત્યાહ—‘તદિ’—ત્યાદિ, તેષાં તત્=કામિની-વશવર્તનં તાસાં સુસ્વાયતનકથનં ચોભયમેવ દુઃસ્વાય=એહિકપારત્રિકાઽકલ્યાણાય ભવતિ । એવં સર્વત્ર ચતુર્થ્યન્તે યોજ્યમ્ । અપિ ચ મોહાય=અજ્ઞાનાય । કિં ચ—મારાય=મરણં મારસ્તસ્મૈ ચરમકામદશર્થમ્, કામસ્ય દશવિધા અવસ્થાઃ સમુત્પદ્યન્તે, તાસુ દશમાવસ્થા મરણારૂપા ભવતિ । ઉક્તઞ્ચ—

સમાયા હૈ, યે હી સુખ કે કારણ હૈ ” । મોહાભિભૂત જીવોં કી દૃષ્ટિ મેં સ્ત્રી હી ઉત્તમ સે ઉત્તમ આનંદ પ્રદાન કરનેવાલી વસ્તુ પ્રતિભાસિત હોતી હૈ । જગત કે અનેક સુન્દર પદાર્થોં સે મી વહ અધિક સુન્દર ઉન્હેં માલૂમ દેતી હૈ । ઇસકે વિના સંસાર કા મજા મી ઉનકી દૃષ્ટિ મેં ફીકા રહતા હૈ, પરન્તુ ઇસ પ્રકાર કી ઉનકી માન્યતા કેવલ એક મોહ કા હી વિલાસ હૈ । જિસ પ્રકાર અશુચિ પદાર્થ કા સેવન કરનેવાલા વરાહ અપને કો સુખી માનતા હૈ ઉસી પ્રકાર “નારીજઘનરન્ધ્રસ્થવિષ્મૂત્રમયચર્મણા” નારીકે જઘન કે છિદ્રસ્થ ચમડે કે સેવન સે અજ્ઞાની મનુષ્ય મી અપને કો સુખી માનતા રહતા હૈ, પરન્તુ જ્ઞાનિયોં કી દૃષ્ટિ મેં ઇસ પ્રકાર કે જીવોં કા વ્યવહાર ગર્હિત એવં નિન્દિત હૈ । ઇસી વાત કો ખુલાશા કરતે હુએ કહતે હૈં કિ—“તત્ તેષાં દુઃસ્વાય મોહાય” ઇત્યાદિ । સ્ત્રિયોં કે અધીન રહના ઔર ઉન્હેં સુખ કા સ્થાન સમજના યે દોનોં વાતેં માનવ જગત કો ઇસ લોક ઔર પરલોક મેં અકલ્યાણપ્રદ હૈં, અજ્ઞાન કો દેનેવાલી હૈં ઔર કામ કી

તે જ સુખનું કારણ છે ” મોહવશ જીવોની દૃષ્ટિમાં સ્ત્રી જ ઉત્તમમાં ઉત્તમ આનંદ આપવાવાળી વસ્તુ પ્રતિભાસિત થાય છે. જગતના અનેક સુંદર પદાર્થોથી પણ તે અધિક સુંદર તેને માલૂમ પડે છે. તેના વિના સંસારની મજા પણ તેની દૃષ્ટિમાં ફીકી રહે છે, પરંતુ આ પ્રકારનો તેનો કેવળ એક મોહનો જ વિલાસ છે. જે પ્રકારે અશુચિ પદાર્થનું સેવન કરવાવાળા ભૂંડ પ્રાણી પોતાને સુખી માને છે તેજ પ્રકારે “નારીજઘનરન્ધ્રસ્થવિષ્મૂત્રમય-ચર્મણા” નારીના જઘના છિદ્રસ્થ ચામડાનું સેવન કરવાથી અજ્ઞાની મનુષ્ય પણ પોતાને સુખી માનતો રહે છે, પરંતુ જ્ઞાનીયોની દૃષ્ટિમાં આ પ્રકારના જીવોનો વ્યવહાર ગર્હિત અને નિન્દિત છે. આ વાતનો ખુલાસો કરીને કહે છે કે— તત્ તેષાં દુઃસ્વાય મોહાય ઇત્યાદિ. સ્ત્રિયોના આધીન રહેવું, અને તેને સુખનું સ્થાન સમજવું, એ બંને વાતો માનવજગતને આલોક અને પરલોકમાં અકલ્યાણપ્રદ છે. અજ્ઞાનને દેવાવાળી છે. અને કામની અન્તિમ દશાને પહોંચાડવાવાળી છે.

“ પ્રથમે જાયતે ચિન્તા, દ્વિતીયે દ્રષ્ટુમિચ્છતિ ।

તૃતીયે દીર્ઘનિઃશ્વાસશ્ચતુર્થે જ્વરમાદિશેત્ ॥ ૧ ॥

પશ્ચમે દહ્યતે ગાત્રં, ષષ્ઠે ભક્તં ન રોચતે ।

સપ્તમે ચ ભવેત્કમ્પ, ઉન્માદશ્ચાષ્ટમે તથા ॥ ૨ ॥

નવમે પ્રાણસન્દેહો, દશમે જીવિતં ત્યજેત્ ।

કામિનાં મદનોદ્વેગા, જાયન્તે દશ તે હ્યમી ” ॥ ૩ ॥ ઇતિ ॥

અતઃ એવોક્તં ‘મારાયે’-તિ । કિંચ-મૃત્વા નરકાય=દશવિધક્ષેત્રયાતનાસ્થાનાય, તથા ચ-‘નરકતિરશ્ચે’ અત્ર ‘નરક’ ઇતિ લુપ્તપશ્ચમી, તેન નરકાન્નિર્ગત્ય યદિ સ જન્મ લભતે તર્હિ પ્રાયસ્તિર્યગ્યોનિષ્વેવેત્યર્થઃ ।

અન્તિમ દશા મેં પહુંચાનેવાલી હૈં । કામ કી દશ અવસ્થાઈ બતલાઈ હૈં, ડનમેં મરણ યે કામ કી અન્તિમ અવસ્થા હૈ । કહા ખી હૈ—

“ પ્રથમે જાયતે ચિન્તા દ્વિતીયે દ્રષ્ટુમિચ્છતિ ।

તૃતીયે દીર્ઘનિઃશ્વાસશ્ચતુર્થે જ્વરમાદિશેત્ ॥ ૧ ॥

પશ્ચમે દહ્યતે ગાત્રં, ષષ્ઠે ભક્તં ન રોચતે ।

સપ્તમે ચ ભવેત્કમ્પઃ, ઉન્માદશ્ચાષ્ટમે તથા ॥ ૨ ॥

નવમે પ્રાણસન્દેહો, દશમે જીવિતં ત્યજેત્ ।

કામિનાં મદનોદ્વેગા જાયન્તે દશ તે હ્યમી” ॥ ૩ ॥

અર્થ સ્પષ્ટ હૈ । સ્ત્રિયોં કે સંગમ સે જીવ અનેક અસાધ્ય રોગોંકા ઘર વન કર આર્ત રૌદ્ર ધ્યાન કી વજહ સે મર કર નરક મેં જા પડતા હૈ । વહાં પર દશ પ્રકાર કી ક્ષેત્રીય યાતના કો ભોગતા હૈ । નરક ઇન યાતનાઓં કે

કામની દશ અવસ્થાઓ બતાવેલ છે. તેમાં મરણ એ કામની અન્તિમ અવસ્થા છે. ડહુ પણ છે—

“ પ્રથમે જાયતે ચિન્તા દ્વિતીયે દ્રષ્ટુમિચ્છતિ ।

તૃતીયે દીર્ઘનિઃશ્વાસશ્ચતુર્થે જ્વરમાદિશેત્ ॥ ૧ ॥

પશ્ચમે દહ્યતે ગાત્રં, ષષ્ઠે ભક્તં ન રોચતે ।

સપ્તમે ચ ભવેત્કમ્પ, ઉન્માદશ્ચાષ્ટમે તથા ॥ ૨ ॥

નવમે પ્રાણસન્દેહો, દશમે જીવિતં ત્યજેત્ ।

કામિનાં મદનોદ્વેગા, જાયન્તે દશ તે હ્યમી ” ॥ ૩ ॥

અર્થ સ્પષ્ટ છે સ્ત્રિયોનો અંગમ જીવોને નરકનુ દુઃખ આપે છે, અને અંતમાં તેનાથી જીવ અનેક અસાધ્ય રોગોનું ઘર બનીને આર્તરૌદ્ર ધ્યાનથી મરીને નરકમાં જાય છે. તે ડેકાણે દશ પ્રકારની ક્ષેત્રીય યાતનાઓ ભોગવે છે. નરક આ યાતનાઓના



एवम्भूतः स्वात्महितं न जानातीत्याह—‘सतत’—मित्यादि । सततं=नित्यं, मूढः=दर्शनमोहचारित्रमोहकर्मणा युक्तः धर्म=जिनोक्तं श्रुतचारित्रलक्षणं न जानाति । एतत्सर्वं न मया स्वमत्या प्रोक्तं किन्तु—‘उदाहे’—ति, वीरः=परिज्ञातसकलहेयो पादेयस्तीर्थङ्करादिः, उत्=प्राबल्येन आह=कथितवान् । अत्रार्पत्वाद् भूते लट् । कि-मित्याह—‘अप्रमाद’ इति, महामोहे=स्त्रीपुंनपुंसकवेदरूपे अप्रमादः=प्रमाद आसक्तिः प्रधान स्थान हैं। वहां से निकल कर जीव प्रायः तिर्यंच योनि में ही जन्म धारण करता है। “नरक-तिरिक्खाण” अर्थात् नरक से निकल कर जीव जब जन्म धारण करता है तो वह प्रायः तिर्यंच योनि में ही उत्पन्न होता है, यह अर्थ इस पद से प्रतीत होता है।

जिनकी आत्मा नित्य चारित्रमोहनीय के उदय से मलिन बनी है वे जिनेन्द्र भगवान् द्वारा प्रतिपादित इस श्रुतचारित्र रूप धर्म को नहीं जानते हैं। इस प्रकार का कथन श्री अन्तिम तीर्थंकर महावीर स्वामीका है, जिन्होंने जगत के समस्त हेयोपादेय तत्त्वों को अच्छी तरह जान लिया है। इस कथन में सूत्रकार महावीर स्वामी की प्ररूपणा प्रकट करने से तथा अपनी कल्पना का निषेध करने से उसमें प्रमाणता प्रकट करते हुए कहते हैं—“एतत्सर्वं न मया स्वमत्या प्रोक्तं किन्तु उदाह वीरः”। यह समस्त पूर्वोक्त कथन तथा जो कुछ आगे कहा जाता है वह सब मैंने नहीं किया है, किन्तु वीर भगवान् ने कहा है। भगवान् का उपदेश है कि जीवों को “अप्पमाओ महामोहे” स्त्रीवेद, पुरुषवेद और नपुंसक वेद

પ્રધાન સ્થાન છે. ત્યાંથી નીકળીને જીવ પ્રાય તિર્યંચ યોનિમાં જ જન્મ ધારણ કરે છે. “નરકતિરિક્ખાણ” નરકમાંથી નીકળી જીવ ત્યારે જન્મ ધારણ કરે છે ત્યારે તે તિર્યંચ યોનિયોમાં જ ઉત્પન્ન થાય છે. એ પૂર્વોક્ત અર્થ આ પદ્યથી પ્રતીત થાય છે.

જેનો આત્મા કાયમ ચારિત્ર મોહનીયના ઉદયથી મલિન બનેલ છે તે જીનેન્દ્ર ભગવાન દ્વારા પ્રતિપાદિત આ શ્રુતચારિત્રરૂપ ધર્મને જાણતો નથી. આ પ્રકારનું કથન શ્રી અંતિમ તીર્થંકર મહાવીર સ્વામીનું છે જેણે જગતના સમસ્ત હેયોપાદેય તત્વોને સારી રીતે જાણી લીધા છે. આ કથનમાં સૂત્રકાર મહાવીર સ્વામીની પ્રરૂપણા પ્રગટ કરવાથી, તથા ખોતાની કલ્પનાનો નિષેધ કરવાથી તેમાં પ્રમાણતા પ્રગટ કરતાં કહે છે. “એતત્સર્વં ન મયા સ્વમત્યા પ્રોક્તં કિન્તુ ઉદાહવીર.” આ સમસ્ત પૂર્વોક્ત કથન અને જે આગળ કહેવામાં આવશે તે બધા મેં કરેલ નથી પણ વીર ભગવાને કરેલ છે. ભગવાનનો ઉપદેશ છે કે જીવોને “અપ્પમાઓ મહામોહે” સ્ત્રીવેદ, પુરુષવેદ



ન પ્રમાદોઽપ્રમાદઃ, સ વિધેયઃ, ન તત્ર પ્રમાદપ્રમત્તેન ભાવ્યમ્ । અન્યદપ્યાહ—‘અલ’-મિત્યાદિ, ‘કુશલસ્ય’ કુશાન્=ભાવકુશાન્ અષ્ટવિધકર્માણિ લુનાતિ=છિન્નતીતિ કુશલઃ=કર્મવિદારણપરસ્તસ્ય પ્રમાદેન=મદ્ય-વિપય-કષાય-નિદ્રા-વિકથારૂપેણ અલં=વ્યર્થ, તત્ર કુશલે પ્રમાદસ્યાસમ્ભવાત્ । કિં કૃત્વા પ્રમાદં ન કરોતીત્યાહ—‘શાન્તી’-ત્યાદિ, શાન્તિમરણં, ગમનં શાન્તિઃ=સકલકર્મનાશઃ, અત એવ શાન્તિઃ=

રૂપ મહામોહ મેં આસક્તિ નહીં કરની चाहिये । પ્રમાદ સે સંસાર ઔર અપ્રમાદ સે મુક્તિ કા લાભ હોતા હૈ । સૂત્ર મેં શાન્તિ ઔર મરણ इन शब्दों का वाच्य अर्थ क्रमशः अव्यावाधसुखलक्षण मोक्ष और चतुर्गतिरूप संसार है, क्योंकि “गमनं शान्तिः” गमन का नाम शान्ति है, वह समस्त कर्मों का अभावस्वरूप अवस्था है । इसका दूसरा नाम अव्यावाधसुखलक्षण मोक्ष भी है । बारंवार चतुर्गतियों में प्राणी जहां पर मरते रहते हैं उस का नाम मरण-संसार है । भावकुशरूप अष्टविध कर्मों का जो छेदन करना है वह कुशल है, क्योंकि—“कुशान् लुनातीति कुशलः” । अष्ट प्रकार के कर्मों को विदारण करनेवाले का नाम कुशल है । “अलं कुशलस्य प्रमादेन” अर्थात् कुशल के लिये प्रमाद होता ही नहीं है । मद्य विषय कषाय निद्रा और विकथा के भेदसे प्रमाद पांच प्रकारका होता है । जो कर्मों को नाश करने में प्रयत्नशाली हो रहे हैं, वे कभी प्रमत्तदशासंपन्न नहीं होते हैं । कारण कि वे जानते हैं कि—प्रमाद से संसार में परिभ्रमण तथा अप्रमाद से शान्ति-अव्यावाधसुख-

અને નપુસકવેદ ૩૫ મહામોહમાં આસક્તિ કરવી જોઈએ નહિ. પ્રમાદથી સંસાર અને અપ્રમાદથી મુક્તિનો લાભ થાય છે. સૂત્રમાં શાન્તિ અને મરણ આ શબ્દોનો વાચ્ય અર્થ ક્રમશઃ અવ્યાવાધસુખલક્ષણ મોક્ષ અને ચતુર્ગતિરૂપ સંસાર છે કારણ કે “ગમનં શાન્તિઃ” ગમનનું નામ શાન્તિ છે. તે સમસ્ત કર્મોની અભાવ સ્વરૂપ અવસ્થા છે. તેનું ખીનું નામ અવ્યાવાધસુખલક્ષણ મોક્ષ પણ છે. વારંવાર ચતુર્ગતિમાં પ્રાણી જ્યાં મરતા રહે છે તેનું નામ મરણ-સંસાર છે. ભાવકુશ ૩૫ અષ્ટવિધ કર્મોનું જે છેદન કરે છે. તે કુશલ છે કારણ કે “કુશાન્ લુનાતીતિ કુશલઃ” આઠ પ્રકારના કર્મોનું વિદારણ કરવાવાળાનું નામ કુશળ છે. “અલં કુશલસ્ય પ્રમાદેન” અર્થાત્ કુશળને માટે પ્રમાદ થતો જ નથી. મદ્યવિષય કષાય નિદ્રા અને વિકથાના લેદથી પ્રમાદ પાંચ પ્રકારનો હોય છે, જે કર્મોનો નાશ કરવામાં પ્રયત્નશાળી હોય છે તે કોઈ વખત પ્રમત્તદશાસંપન્ન બનતાં નથી. કારણ કે તેઓ જાણે છે કે—પ્રમાદથી સંસારમાં પરિભ્રમણ અને અપ્રમાદથી શાન્તિ

અવ્યાવાધસુખલક્ષણો મોક્ષઃ, ‘મરણં’ મ્રિયન્તે મુહુર્મુહુશ્ચતુર્ગતિષુ પ્રાણિનો યત્રેતિ તન્મરણં=સંસારઃ, શાન્તિશ્ચ મરણં ચ શાન્તિમરણં, તત્ સંપ્રેક્ષ્ય=‘અપ્રમાદેન સંસારો-પરમઃ, પ્રમાદેન સંસારપરિભ્રમણં ભવતીતિ સમ્યગાલોચ્ય । અપિ ચ-‘ભિદુરધર્મ’-મિતિ, પ્રમાદો વિષયાભિષ્વજ્ઞઃ, સ ચ શરીરે ભવતિ તતો ભિદુરો=મજ્જશીલો ધર્મઃ=સ્વભાવો યસ્ય તદ્ ભિદુરધર્મં શરીરં, સ્વતઃ એવ વિનશનશીલત્વાત્, સમ્પ્રેક્ષ્ય=વિચાર્ય

સ્વરૂપ મુક્તિ કા લાભ હોતા હૈ । ઇસ લિયે ઇસ અવ્યાવાધ-સુખ-સ્વરૂપ શાંતિ કે લાભ સે જો વંચિત કરાનેવાલા હૈ ડસ પ્રમાદ સે લાભ હી ક્યા હો સકતા હૈ, ઇસા વિચાર કર સંયમી કો પ્રમાદ કમી નહીં કરના ચાહિયે । “ ભિદુરધર્મં સંપ્રેક્ષ્ય નાલં પદ્યાલં તે પતૈઃ ” મંગ હોના જિસકા સ્વભાવ હો ડસકા નામ ભિદુરધર્મ હૈ, ઇસા યહ શરીર હૈ; ક્યોં કિ યહ સ્વતઃ હી વિનાશશીલ હૈ । સંયમી મુનિકો ઇસ વાત કા દૃઢ વિશ્વાસ કરના ચાહિયે કિ યહ મેરા શરીર અવશ્ય હી વિનશ્વર હૈ, ક્યોં કિ યહ પૌદ્ગલિક પર્યાય હૈ, જો પર્યાય હોતી હૈ વહ ઉત્પાદ-વ્યય-ધર્મ-વિશિષ્ટ હોતી હૈ । પુદ્ગલ કા સ્વભાવ હી પૂરન-ગલન-સ્વરૂપ હૈ । અતઃ ઇસ વિનશ્વર વસ્તુ કે મોહ મેં ફંસ કર જો સંયમી અપને સંયમરૂપી ધન કો પ્રમાદ-રૂપી ચોરોં કે જરિયે લુટવા દેતે હૈં વે મહાપ્રમાદી હૈં । સંયમ કી આરાધના કરતે હુઅ યદિ ઇસ શરીર કા પતન હોગા, તો ડસ દશા મેં કમી ન કમી અવશ્ય અવ્યાવાધ-સુખ-રૂપ મોક્ષ કી પ્રાપ્તિ હોગી; અન્યથા-ઇસ સંસાર

અવ્યાવાધસુખસ્વરૂપ મુક્તિનો લાભ થાય છે માટે આ અવ્યાવાધસુખસ્વરૂપ શાંતિના લાભથી જે દૂર રખાવે છે તે પ્રમાદથી લાભ પણ કંઈ થતો નથી. એવો વિચાર કરી સંયમીએ પ્રમાદ કદી પણ કરવો જોઈએ નહિ. “ ભિદુરધર્મં સંપ્રેક્ષ્ય નાલં પદ્યાલં તે પતૈઃ ” ભંગ થવું જેનો સ્વાભાવ છે તેનું નામ ભિદુરધર્મ છે, એવું આ શરીર છે, કારણ કે તે સ્વતઃ વિનાશશીલ છે. સંયમી મુનિએ આ વાતનો દૃઢ વિશ્વાસ કરવો જોઈએ કે આ માટે શરીર અવશ્ય જ વિનશ્વર છે. કારણ કે આ પૌદ્ગલિક પર્યાય છે, જે પર્યાય હોય છે તે ઉત્પાદ વ્યય ધર્મ વિશિષ્ટ હોય છે. પુદ્ગલનો સ્વભાવ જ પૂરન-ગલન-સ્વરૂપ છે, માટે આ વિનશ્વર વસ્તુના મોહમાં ફસીને જે સંયમી પોતાના સંયમરૂપી ધનને પ્રમાદરૂપી ચોરા મારફત લુંટાવી દે છે તે મહાપ્રમાદી છે. સંયમની આરાધના કરતાં કરતાં કદાચ આ શરીરનું પતન થશે તો તેવી દશામાં કોઈને કોઈ વખત અવશ્ય અવ્યાવાધ સુખરૂપ મોક્ષની પ્રાપ્તિ થશે અન્યથા આ સંસારમાં પરિભ્રમણ કરતાં અનન્ત

પ્રમાદો ન વિધેય इति सम्बन्धः । भोगास्तु सुक्तपूर्वा अपि न वृत्तिजनकाः, इत्याह—  
'नाल'-मिति भोगाः परिसुक्ता अपि स्पृहानिवृत्तये नालं=न समर्था भवन्ति । उक्तञ्च—

“ नग्गी तिप्पइ कट्ठेहिं, नावगाहिं महोदही ।

न जमो सव्वभूएहिं, इत्थीहिं पुरिसो तद्वा ” ॥ १ ॥

मैं परिभ्रमण करते हुए अनन्त कष्टों को भोगना पड़ेगा । शरीर का नाश अवश्यंभावी है, तो मैं संयम की विराधना करके इसे अविनश्वर अमर तो कर नहीं सकता ! अतः इस विनश्वर वस्तु से जो मुझे परंपरारूप से अविनश्वर वस्तु की प्राप्ति हो जाती है तो यह सब से बड़ा भारी लाभ मुझे मिलता है; फिर क्यों प्रमादी बन कर इस शरीर के मोह में पड़ अपने संयम की विराधना करूँ ? । दोनों हालत में शरीर का नाश स्वयं सिद्ध है; फिर भी एक हालत अनंत आनंदप्रद और दूसरी हालत अनंत कष्टप्रद है, ऐसा विचार कर संयमी को कभी भी प्रमाद नहीं करना चाहिये । इसी लिये सूत्रकार ने “ भिदुरधर्मं संप्रेक्ष्य ” इस वाक्य के द्वारा संयमी जनको शिक्षा दी है । तथा आगे भी शिक्षा देते हुए वे प्रकट कर रहे हैं कि जिन पंचेन्द्रियों के भोग तुमने पहिले भोग लिये हैं वे भी तुम्हारी इच्छा की शांति करने के लिये समर्थशाली नहीं हैं, कहा भी है—

“ नग्गी तिप्पइ कट्ठेहिं, नावगाहिं महोदही ।

न जमो सव्वभूएहिं, इत्थीहिं पुरिसो तद्वा ” ॥ १ ॥

કપ્ટોને ભોગવવા પડશે, શરીરનો નાશ અવશ્યભાવી છે, તો હું સંયમની વિરાધના કરીને તેને અવિનશ્વર અમર તો કરી શકતો નથી, માટે આ વિનશ્વર વસ્તુથી જે મને પરપરાશ્પર્થી અવિનશ્વર વસ્તુની પ્રાપ્તિ થાય છે તો આ બધાથી મોટો લાભ મને મળે છે તો પછી શા માટે પ્રમાદી બનીને આ શરીરના મોહમાં પડી પોતાના સંયમની વિરાધના કરું, બંને હાલતમાં શરીરનો નાશ સ્વયં સિદ્ધ છે તો પણ એક હાલત અનંત આનંદપ્રદ અને બીજી હાલત અનંત કષ્ટપદ છે. એવો વિચાર કરી સંયમીએ કોઈ વખત પણ પ્રમાદ નહિ કરવો જોઈએ, માટે સૂત્રકારે “ ભિદુરધર્મ સંપ્રેક્ષ્ય ” આ વાક્યદ્વારા સંયમી જનને શિક્ષા આપી છે. તથા આગળ પણ શિક્ષા આપતાં તે પ્રગટ કરે છે કે—જે પાંચ ઇન્દ્રિયોના ભોગ તમે પહેલાં ભોગવી લીધા છે તે પણ તમારી ઇચ્છાની શાંતિ કરવા માટે સમર્થશાળી નથી, કહ્યું પણ છે—

‘ નગ્ગી તિપ્પઈ કટ્ઠેહિં, નાવગાહિં મહોદહી ।

ન જમો સવ્વભૂપ્પહિં, इत्थीहिं पुरिसो तद्वा ” ॥ १ ॥

છાયા—નાગ્નિસ્તૃપ્યતિ કાષ્ઠૈ = નાપગાભિર્મહોદધિઃ ।

ન યમઃ સર્વભૂતૈશ્ચ, સ્ત્રીભિઃ પુરુષસ્તથા ॥ ૧ ॥ ઇતિ

તત્સર્વં પઞ્ચ=બુદ્ધ્યસ્વ, દશેર્જ્ઞાનસામાન્યાર્થકત્વાત્, અતો હે મૈધાવિન્ ! તે= તવ સદુપદેશજિઘ્ક્ષોઃ એભિઃ=પ્રમાદમયૈર્દુઃસ્વજનકૈર્વિષયોપભોગૈઃ અલં=વ્યર્થમ્, એભિરાત્મકલ્યાણં સાધ્યં નાસ્તીત્યર્થઃ ।

યદ્વા—એતૈર્વિષયોપભોગૈરવ્યાવાધસુખમ્, અલમ્=પર્યાપ્તં વિશિષ્ટતરમિત્યર્થઃ, અતર્કિતોપનતમરણે સંસારે મુખલવસ્યાઽસમ્ભવાદવ્યાવાધસુખમેવ મુખમિતિ તાત્પર્યમ્ ॥ સૂ૦ ૩ ॥

જિસ પ્રકાર અગ્નિ કાષ્ઠોં સે, સમુદ્ર નદિયોં સે, કાલ પ્રાણિયોંની મૃત્યુ સે તૃપ્ત નહીં હોતા હૈ, ડસી પ્રકાર મનુષ્ય ધી સ્ત્રીસંભોગ સે કમી ધી તૃપ્ત નહીં હોતા હૈ ॥ ઇસલિયે હે મૈધાવી શિષ્ય ! તુમ ધી યહ અપને મન મેં દૃઢ ધારણા કર લો કિ પ્રમાદ-ભય-દુઃસ્વજનક ઇન વિષયભોગોં સે કમી ધી આત્મકલ્યાણ સાધ્ય નહીં હો સકતા, અતઃ ઇનકી ચાહકી દાહ મેં કયોં અપને સંયમરૂપી પવિત્ર ધર્મકી આહુતિ કરને કે લિયે સંકલ્પ વિકલ્પ કરતે હો । યહ તુમસે ઇસલિયે કહા જાતા હૈ કિ તુમ સદુપદેશ કો ગ્રહણ કરને કી ઇચ્છા રખતે હો ।

અથવા—યહ સમજો કિ ઇસ વૈષયિક સુખ કી અપેક્ષા અવ્યાવાધ-સુખ વિશિષ્ટતર હૈ । કારણ કિ સંસારદશા ભયવાલી હૈ, ઇસમેં નિર્ભય અવસ્થા તો હો હી નહીં સકતી । યદિ થોડી દેર કે લિયે યહ અસંભવ ધી સંભવિત કલ્પિત કર લિયા જાય કિ—“યહાં પ્રાણી ભયરહિત હૈ” તો ધી

હે પ્રકારે અગ્નિ કાષ્ઠોથી, સમુદ્ર નદિઓથી, કાળ પ્રાણિઓની મૃત્યુથી તૃપ્ત થતો નથી, તે પ્રકારે મનુષ્ય પણ સ્ત્રી સંભોગથી કોઈ વખત પણ તૃપ્ત થતો નથી. માટે હે મૈધાવી શિષ્ય ! તમે પણ એ, પોતાના મનમાં દૃઢ કરી દેવો કે પ્રમાદ-ભય-દુઃખજનક આ વિષયભોગોથી કોઈ વખત પણ આત્મ-કલ્યાણ સાધ્ય થઈ શકતું નથી, માટે તેની આહવાની દાહમાં શા માટે પોતાના સંયમરૂપી પવિત્ર ધર્મની આહુતિ કરવા સંકલ્પ વિકલ્પ કરો છો આ તમને એટલા માટે કહેવામાં આવે છે કે તમે સદુપદેશને ગ્રહણ કરવાની ઇચ્છા રાખનાર છો.

અથવા એ સમજો કે આ વૈષયિક સુખની અપેક્ષા અવ્યાવાધ સુખ વિશિષ્ટતર છે, કારણ કે સંસારદશા ભયવાળી છે. તેમાં નિર્ભય અવસ્થા તો થઈ શકતી નથી. કહાય થોડા વખત માટે આ અસંભવ પણ સંભવિત માની લઈએ કે “આહી પ્રાણી ભયરહિત છે” તો પણ ઠીક નહિ, કારણ કે—એ

ભોગામિષ્ઠદ્વાનાં ભોગસ્યાધિગમેऽનધિગમેऽપિ મહાદુઃખમેવેત્યુપદિશતિ—  
'અયં પસસ' ઇત્યાદિ ।

મૂલમ—અયં પસસ મુણી, મહઽભયં નાઙ્વાઙ્ગ કંચણં, એસ  
વીરે પસંસિએ, જે ન નિવિજ્ઞઙ આયાણાએ ન મે દેઙ ન કુપ્પિજ્ઞા,  
થોવં લહ્ણં ન ચિંસએ, પહિસેહિઓ પરિણમિજ્ઞા, અયં મોણં  
સમણુવાસિજ્ઞાસિ-ત્તિવેમિ ॥ સૂ૦ ૪ ॥

છાયા—અતત્પણ્ય મુને ! મહદ્ભયં નાતિપાતયેત્ કચ્ચન એપ વીરઃ પ્રશંસિતઃ  
યો ન નિર્વિદ્યેત આદાનાય ન મે દદાતિ ન કુપ્પ્યેત્, સ્તોકં લઘ્વા ન નિન્દેત્,  
પ્રતિપિદ્ધઃ પરિણમેત્, એતન્મૌનં સમનુવાસયેઃ, ॥ ઇતિ વ્રવીતિ ॥ સૂ૦ ૪ ॥

ટીકા—'એત'—દિત્યાદિ । હે મુને ! =હે અનગાર ! એતત્=કામભોગાસેવનં,  
મહદ્ભયં=ભયજનકતયા મહાદુઃખરૂપમ્, મરણકારણત્વેન દુઃખે મહત્ત્વમ્, પશ્ય=  
સર્વથા દુઃખજનક જાનીહિ । ઉક્તશ્ચ—

ઠીક નહીં; કારણ કિ-ન માલૂમ કાલકા ગ્રાસ હો કવ જાના પડે ।  
મૃત્યુ કા જવર્દસ્ત ભય પ્રમાદી પ્રત્યેક પ્રાણી કો લગા હી રહતા હૈ ।  
કાલ વાજે વજાતા તો આતા નહીં હૈ કિ જિસસે ડસસે સચેત હો  
જાય । યહ તો વિના વિચાર કરનેવાલે પ્રત્યેક જીવાત્મા કો અપને પંજે મેં  
ફંસા લેના હૈ । અતઃ સંસારદશા ભયવાલી હૈ ઓર યહાં પર નિર્ભયદશા  
રૂપ સુખ કા અંશ માત્ર ભી પ્રાપ્ત હોના સર્વથા અસંભવ હૈ; અતઃ અવ્યા-  
વાધ સુખ હી વાસ્તવિક સુખ હૈ । ઇસકી પ્રાપ્તિ સંયમારાધન સે હી જીવોં  
કો હોતી હૈ । એસા વિચાર કર સંયમી મુનિ કો સંયમભાવ મેં કમી  
ભી પ્રમત્તદશાયુક્ત નહીં હોના ચાહિયે ॥ સૂ૦ ૩ ॥

ખબર નથી કે કાળનો ગ્રાસ ખની ક્યારે લાવું પડે. આ પ્રકારે મૃત્યુનો  
ભય પ્રમાદી પ્રત્યેક પ્રાણીને લાગેલો જ રહે છે. કાળ વાળુ વગાડતો તો આવતો  
જ નથી કે જેનાથી પ્રાણી ચેતી બચ, એ તો વિચાર નહિ કરવાવાળા પ્રત્યેક  
જીવાત્માને પોતાના પંજામાં ફસાવે છે. માટે સંસારદશા ભયવાળી છે, અને આ  
ઠેકાણે નિર્ભયદશાએ મુખનો અશમાત્ર પણ પ્રાપ્ત થવો સર્વથા અસંભવ છે.  
માટે અવ્યાવાધમુખ જ વાસ્તવિક મુખ છે. તેની પ્રાપ્તિ સંયમારાધનથીજ  
જીવોને થાય છે. એવો વિચાર કરી સંયમી મુનીએ સંયમભાવમાં કોઈ વખત  
પણ પ્રમત્તદશાયુક્ત થવું જોઈએ નહિ. ॥ સૂ૦ ૩ ॥

“ एत्तो व उण्हतरिया, अण्णा का वेयणा गणिज्जंति ।

जं कामवाहिगहिओ, डज्झइ किर चंदकिरणेहिं ” ॥ १ ॥ इति ।

छाया—एतस्मादुष्णतरा अन्याः का वेदना गण्यन्ते ।

यत्कामव्याधिगृहीतो, दह्यते किल चन्द्रकिरणैः ॥ १ ॥

भोग રૂપી માંસ મેં ગૃહ્થ બને પ્રાણિયોં કો ભોગોં કી પ્રાપ્તિ હોને પર અથવા નહીં હોને પર બड़ा भारी दुःख ही होता है । इस बात का सूत्रकार उपदेश देते हुए कहते हैं—“ एयं पस्स मुणी ” इत्यादि ।

हे मुने ! कामभोग-विषयसेवन को तुम बहुत भारी भय-स्वरूप-अर्थात् मरणरूप भय का कारण होने से महादुःखरूप ही मानो । भावार्थ-कामभोग का सेवन सदा भय एवं दुःखदायी माना गया है । विषयसेवन से जीवों को अनेक दुःख होने का सदा भय बना रहता है । तथा अनेक प्रकार के दुःख उन्हें भोगने भी पड़ते हैं । महाकष्टों को भोगते २ जीव जब अत्यन्त दुःखी हो जाते हैं, तब वे आत्मघात तक कर लिया करते हैं । इसलिये विषयसेवन सदा महादुःखदायी ही है, ऐसा समझ कर कभी भी अनगर को उस तरफ लालसापरिणति नहीं करनी चाहिये । कहा भी है—

“ एत्तो व उण्हतरिया, अण्णा का वेयणा गणिज्जंति ।

जं कामवाहिगहिओ, डज्झइ किर चंदकिरणेहिं ॥ ” इति ॥

ભોગરૂપી માંસમાં ગૃહ્થ બનેલ પ્રાણિઓને ભોગોની પ્રાપ્તિ થવાથી અથવા નહિ મળવાથી ઘણું ભારી દુઃખ જ થાય છે. આ વાતનો સૂત્રકાર ઉપદેશ આપી કહે છે—“ એયં પસ્સ મુણી ” ઇત્યાદિ.

હે મુનિ ! કામભોગ-વિષયસેવનને તમે ઘણો ભયસ્વરૂપ અર્થાત્ મરણરૂપ ભયનું કારણ હોવાથી મહાદુઃખરૂપ જ માનો.

ભાવાર્થ—કામભોગનું સેવન સદા ભય અને દુઃખદાયી જ માનવામાં આવે છે. વિષયસેવનથી જીવોને અनेक दुःખ થવાનો સદા ભય રહ્યા કરે છે, તથા अनेक प्रकारના दुःખ તેને ભોગવવા પણ પડે છે, મહાકષ્ટો ભોગવી ભોગવી જીવ જ્યારે અત્યંત દુઃખી થાય છે ત્યારે તે આત્મઘાત પણ કરે છે માટે વિષયસેવન સદા મહાદુઃખદાયી જ છે, એવું સમજીને કોઈ વખત પણ આણુગારે તે તરફ લાલસાપરિણતિ નહિ રાખવી જોઈએ. કહ્યું છે—

“ एत्तो व उण्हतरिया, अण्णा का वेयणा गणिज्जंति ।

जं कामवाहिगहिओ, डज्झइ किर चंदकिरणेहिं ॥ इति ॥



યદ્વા યત્કામભોગાસક્ત આસ્રવદ્વારૈર્હિંસાદિષુ પ્રવર્તતે તસ્યેહ પરત્ર ચ મહદ્ભયં ભવતીતિ પશ્ય । इह लोके पुरुषबन्धकाऽलीकवादिचोरपारदारिकाणां मारदण्डन-जिह्वाच्छेदनबन्धघातादिकं च पश्य, परलोके नरकादिषूपपातं पश्येति तात्पर्यम् । एवं तर्हि किं विधेयम् ? इत्याह—‘नातिपातये’—दित्यादि । मुनिः कश्चन=कमपि प्राणिनं नातिपातयेत्=न प्राणैर्व्यपरोपयेत्; उपलक्षणं मृषावादाद्यास्रवाणामेतत् ।

કામભોગ સે અધિક સંસાર મેં ઔર કોઈ વેદના ઉષ્ણતર નહીં હૈ, ક્યોં કિ હસ વ્યાધિ કા રોગી શીતલચંદ્રકિરણોં સે મી અત્યંત સંતપ્ત હો જાતા હૈ ।

અથવા—કામભોગસેવન હસ જીવ કો હસ લોક મેં ઔર પરલોક મેં મહાભયકારી હોતા હૈ । ક્યોં કિ કામભોગ મેં આસક્ત પ્રાણી હિંસા-દિક પાપોં મેં પ્રવૃત્તિ કરતા રહતા હૈ । હિંસાદિકોં મેં પ્રવૃત્તિ હોને સે જીવ અશુભ કર્મોં કો બાંધતા હૈ, ઔર હસકે ફલ કો વહ નરકાદિ યોનિયોં મેં ભોગતા હૈ । જો પ્રાણી હિંસક, झूठा, चौर ઔર પરદારલંપટ હોતે હૈં ઉન્હેં હસી લોક મેં ફાંસી, राजदण्ड, जिह्वाच्छेदन, बन्ध और घातादिक अनेक कष्ट भोगने पड़ते हैं, तथा परलोक મેં નરકાદિ ગતિયોં મેં ઉનકો જન્મ ધારણ કરના પડતા હૈ । એસા સમજ્ઞ કર હે મુને ! તુમ હસ ઓર અપની માનસિક પરિણતિ કો લાલસાવાલી મત કરો, કિન્તુ સદા હસ પ્રકાર કી પ્રવૃત્તિ કરો કિ જિસસે કિસી મી જીવ કી વિરાધના ન હો । સૂત્ર મેં “નાતિપાતયેત્” યહ પદ झूठ, चोरी आदि आस्रवों का उपलक्षक है,

કામભોગથી અધિક આ સંસારમાં બીજી કોઈ વેદના ઉષ્ણતર નથી, કારણકે, આ વ્યાધિના રોગી શીતલ ચંદ્રકિરણોથી પણ અત્યંત સંતપ્ત થાય છે.

અથવા કામભોગસેવન આ જીવને આલોકમાં અને પરલોકમાં મહા ભય-કારી થાય છે. કારણ કે કામભોગમાં આસક્ત પ્રાણી હિંસાદિક પાપોમાં પ્રવૃત્તિ કરતા રહે છે. હિંસાદિકોમાં પ્રવૃત્તિ હોવાથી જીવ અશુભ કર્મો બાંધે છે, અને તેના ફળને તે નરકાદિ યોનિઓમાં ભોગવે છે. જે પ્રાણી, હિંસક, झूठा, चौर અને પરસ્ત્રીલંપટ હોય છે તેને આ લોકમાં ફાંસી, राजदंड, जलछेदन, બંધ અને ઘાતાદિક અનેક કષ્ટો ભોગવવા પડે છે, તથા પરલોકમાં નરકાદિ ગતિયોમાં તેને જન્મ ધારણ કરવો પડે છે. એવું સમજીને હે મુનિ ! તમે આ તરફ યોતાની માનસિક પરિણતિને લાલસાવાળી બનાવો નહિ, પણ સદા એવી પ્રવૃત્તિ કરો કે જેનાથી કોઈ પણ જીવની વિરાધના ન થાય. સૂત્રમાં “નાતિપાતયેત્” આ પદ झूठ, चोरी आदि आस्रवों का उपलक्षक છે, અર્થાત્ સંયમી જીવોને યોતાની પ્રવૃત્તિ



પરિત્યક્તભોગાભિલાષસ્ય षટ્કાયપરિપાલકસ્ય ગુણાધિગમો ભવતીત્યાહ—‘एष’  
 इत्यादि । एषः=कामभोगस्पृहाभिप्रायविवेचनचतुर एक एव प्रमादपञ्चकरहितः,  
 वीरः=कर्मरिपोर्नाशनाद्वीर इव वीरः, प्रशंसितः=तीर्थङ्करगणधरादिभिरभिनन्दितः ।  
 वीरस्वभावमाह—‘यो ने ’—त्यादि । यो वीरः, ‘आदानाय’ आदीयते=अधिगम्यते  
 निखिलकर्मक्षयसञ्जातसर्वविषयज्ञानं येन तदादानं=चारित्रानुष्ठानं, तस्मै न  
 निर्विद्येत=न खिद्येत—‘अन्ये लभन्तेऽशनवसनादिकं वराकोऽहं न लभे किमेतया

अर्थात्—સંયમી જીવોં કો અપની પ્રવૃત્તિ इस प्रकार की करनी चाहिये कि  
 जिससे उन्हें हिंसा, झूठ, चोरी आदि आस्रवों का बंध नहीं हो । जो  
 संयमी मुनि इस प्रकार की शुभप्रवृत्तिवाला तथा कामभोग की इच्छा से  
 रहित होता है, तथा पांच प्रमाद के वशवर्ती नहीं होता है वह वीर है  
 और प्रशंसा का पात्र है । ऐसे मुनि की प्रशंसा तीर्थंकर गणधरादि देव  
 भी किया करते हैं । प्रशंसा पाने का कारण यह है कि वह सदा अपनी  
 इस प्रकार की प्रवृत्ति से क्रमशः भविष्य में कर्मशत्रुओं पर विजय प्राप्त  
 करनेवाला हो जावेगा । धन्य हैं वे जो चारित्र अंगीकार करके किसी भी  
 निमित्त के उपस्थित होने पर उस चारित्र से विरक्तिभाव पैदा नहीं  
 करते । यहां “आदान” शब्द का अर्थ चारित्र का अनुष्ठान है, क्योंकि  
 इस से ही सकल कर्मों के क्षय से उद्भूत सर्वपदार्थविषयक बोध—केवल-  
 ज्ञान जीवों को प्राप्त होता है । “अशनवसनादिक दूसरों को तो प्राप्त हो  
 रहे हैं मैं ऐसा अभागा हूं जो मुझे कोई पूछता भी नहीं है, इस चारित्र

એવા પ્રકારની કરવી જોઈએ કે જેનાથી તેને હિંસા જુઠ ચોરી આદિ આસ્રવોના  
 બંધ ન થાય.

જે સંયમી મુનિ આ પ્રકારની શુભ પ્રવૃત્તિવાળા તથા કામભોગની ઇચ્છાથી  
 રહિત હોય છે. તથા પાંચ પ્રમાદને તાળે થતા નથી તે વીર છે. અને પ્રશંસા-  
 પાત્ર છે. એવા મુનિની પ્રશંસા તીર્થંકરગણધરાદિ દેવ પણ કરે છે. પ્રશંસા  
 મળવાનું કારણ એ છે કે—તે સદા પોતાની આ પ્રકારની પ્રવૃત્તિથી ક્રમશઃ ભવિ-  
 ષ્યમાં કર્મશત્રુઓ પર વિજય પ્રાપ્ત કરવાવાળા થઈ જશે. ધન્ય છે તેઓને જે  
 ચારિત્ર અંગીકાર કરીને પછી કોઈ પણ કારણ ઉપસ્થિત થવા છતાં પણ તે ચારિ-  
 ત્રથી વિરક્તિભાવ પેદા કરતા નથી. આહીં “આદાન” શબ્દનો અર્થ ચારિત્રનું  
 અનુષ્ઠાન છે, કારણ કે તેનાથી જ સકલ કર્મોના ક્ષયથી ઉદ્ભૂત સર્વપદાર્થ-  
 વિષયક બોધ—કેવળજ્ઞાન હોવાને પ્રાપ્ત થાય છે. “અશનવસનાદિક બીજાને તો  
 પ્રાપ્ત થતાં જ રહે છે અભાગી હું છું જે મને કોઈ પૂછતું પણ નથી. આ ચારિત્રને

परिगृहीतया दुर्लभलाभया प्रव्रज्यया' इत्येवं 'ढंढणाऽनगारवन्न स्वयमवमन्येते-  
ति तात्पर्यम् । “ वहुं परधरे अत्थि, विविहं खाइमसाइमं, ण तत्थ पंडिओ कुप्पे,  
इच्छा दिज्ज परो ण वा ” ॥ इत्यादि भगवद्वचनात् ।

अपि च—लाभालाभसमभावः सन् स्तोकम्=अल्पं भैक्षं लब्ध्वा=प्राप्य दातारम्  
अन्नादिकञ्च न निन्देत्=न जुगुप्सेत्, किन्त्वेवं चिन्तयेत्, ममैवान्तरायोदयप्राव-  
ल्यमेतत् । किञ्च—प्रतिषिद्धः=निषिद्धः सन् परिणयेत्=निवर्तेत किञ्चिदपि दौर्मनस्यं  
न कुर्यात्, तं गृहस्थं परुषवाग्भिर्न तिरस्कुर्यात्, तंतनाटादिशब्दं न कुर्यादित्यर्थः ।

કે કિ જિસમેં લાભ દુર્લભ હૈ અંગીકાર કરને સે મુઝે લાભ હી ક્યા હુઆ ”  
इस प्रकार ढंढण अनगार की तरह स्वयं अपने ग्रहण किये हुए चारित्र की  
उपेक्षा न करे । यह भी स्वप्न में विचार न करे कि—“ देखो तो सही, इन  
गृहस्थों के यहां अशन पान खाद्य स्वाद्य आदि विविध वस्तुएँ मौजूद हैं  
परन्तु ये कितने अविनयी, अश्रद्धालु एवं लोभी हैं जो इनमेंसे मुझे कुछ  
भी नहीं देते हैं ” । चाहे कुछ मिले या न मिले, अथवा थोड़ा मिले, साधु  
का यही परम कर्तव्य है कि वह इन अवस्थाओं में समभावशाली  
रहे । दाता की अथवा उसके दिये हुए अन्नादि की कभी भी निंदा न करे ।  
अल्पलाभ होने पर यही एक मात्र विचार करे कि मेरा ही यह अन्तराय  
का प्रबल उदय है, जो यथेच्छ लाभ नहीं हो रहा है, अथवा नहीं हुआ है ।  
आहारादिक के निमित्त परधरप्रवेश करते समय यदि वहां पर आहा-  
रादिक की याचना करने पर उस के लिये कोई निषेध भी करे तो उस  
समय मन में कोई जात का दुर्भाव न आने देवे, और न उस गृहस्थ का  
“ तूं अधर्मात्मा है ” इत्यादि कठोर शब्दों से तिरस्कार ही करे ।

જેમાં લાભ દુર્લભ છે, અંગીકાર કરવાથી મને લાભ શું થયો.” આ પ્રકારે ઢંढણ  
અણુગાર માફક સ્વયં પોતાના ગ્રહણ કરેલાં ચારિત્રની ઉપેક્ષા કરે નહિ. એવું  
પણુ સ્વપ્નથી વિચાર ન કરે કે—“બુઓ ! તે ગૃહસ્થોને ત્યાં અશન પાન ખાદ્ય  
સ્વાદ્ય આદિ વિવિધ વસ્તુઓ મૌજુદ છે. પરંતુ એ બધા કેટલા અવિનયી અશ્ર-  
દ્ધાણુ અને લોભી છે જે તેમાંથી મને કંઈ પણ દેતા નથી.” ભલે મળે, ભલે ન  
મળે, ભલે જરાક મળે, સાધુનું એ પરમ કર્તવ્ય છે કે તે બંને અવસ્થામાં સમભાવી  
રહે. દાતાની અથવા તેનાથી અપાયેલા અન્નાદિની કોઈ વખત પણ નિંદા ન કરે.  
અલ્પલાભ થવાથી એ એક જ માત્ર વિચાર કરે કે—મારો આ અંતરાયનો પ્રબલ ઉદય  
છે કે જેથી મને યથેચ્છ લાભ થતો નથી, અથવા થયો નથી, આહારાદિક નિમિત્તે  
પરધર પ્રવેશ કરતી વખતે કદાચ આહારિકની યાચના કરવાથી કોઈ તેને માટે નિષેધ

ઉપસંહરનાહ—‘એત’-દિત્યાદિ । એતત્=પ્રવ્રજ્યાનિર્વેદરૂપમ્—આદાનાકોપનમ્, અલ્પા-  
નિન્દનમ્, પ્રતિષિદ્ધનિવર્તનં મૌનં—મુનેરિદં મૌનમ્—અનગારાચરણં જ્ઞાનાચારાદિક-  
મિત્યર્થઃ, હે શિષ્ય ! ‘સમનુવાસયેઃ’ સમ્—સમ્યક્પ્રકારેણ પૂજા—સત્કાર—ગૌરવ-  
નિદાનરાહિત્યેન અનુવાસયેઃ—અનુપાલયેરિત્યર્થઃ, ગણધરાદિસેવિતં નિરતિચારં ચારિત્રં  
પરિપાલયેરિતિ તાત્પર્યમ્ ॥ ઇતિ વ્રવીમીત્યસ્યાર્થસ્તૂક્ત એવ ॥ સૂ. ૪ ॥

॥ ઇતિ દ્વિતીયાધ્યયનસ્ય ચતુર્થોદ્દેશઃ સમાપ્તઃ ॥ ૨-૪ ॥



અન્ત મેં ઉપસંહાર કરતે હુએ સૂત્રકાર કહતે હૈં—યે જો પૂર્વોક્ત સાધુ  
કા આચાર પ્રકટ ક્રિયા હૈ કિ—વહ અપને ગ્રહણ ક્રિયે હુએ ચારિત્ર કે પ્રતિ  
ઉપેક્ષાભાવ ન રખે, અલ્પલાભ મેં ભી સંતુષ્ટ રહે, નિષેધ કરને પર પરઘર  
સે શાંતિપૂર્વક વાપિસ હો જાવે । અતઃ હે શિષ્ય ! તુમ અચ્છી તરહ સે અર્થાત્  
પૂજા, સત્કાર, ગૌરવ ઔર નિદાન કી ભાવના સે રહિત હોકર ગણધરાદિ-  
સેવિત ઇસ નિરતિચાર ચારિત્ર કા પાલન કરો । “ ઇતિ વ્રવીમિ ” ઇન  
પદોં કા અર્થ પહિલે સ્પષ્ટ કર દિયા ગયા હૈ ॥ સૂ. ૪ ॥

॥ ઇતિ દ્વિતીય અધ્યયન કા ચૌથા ઉદ્દેશ સમાપ્ત ॥ ૨-૪ ॥



પણ કહે તો તે વખતે મનમાં કોઈ પણ જાતનો ડુંભાવ લાવે નહિ, તેમજ તે  
ગૃહસ્થનો “ તું અધર્માત્મા છે ” ઇત્યાદિ ખરાબ શબ્દોથી તિરસ્કાર પણ ન કરે.

અંતમાં ઉપસંહાર કરતાં સૂત્રકાર કહે છે—આ જે પૂર્વોક્ત સાધુનો આચાર  
પ્રગટ કરેલ છે કે—તે પોતાનાં ગ્રહણ કરેલ ચારિત્ર પ્રતિ ઉપેક્ષાભાવ રાખે નહિ.  
અલ્પ લાભમાં પણ સંતુષ્ટ રહે. નિષેધ કરવાથી ધરથી શાંતિપૂર્વક પાછા ફરી  
જાય. માટે હે શિષ્ય ! તમે સારી રીતે અર્થાત્ પૂજા, સત્કાર, ગૌરવ અને  
નિદાનની લાવનાથી રહિત થઈને તીર્થકર ગણધરાદિકથી સેવિત નિરતિચાર ચારિત્રનું  
પાલન કરો. “ ઇતિ વ્રવીમિ ” આ પદોનો અર્થ પહેલાં સ્પષ્ટ કરેલ છે ॥ સૂ. ૪ ॥

ઇતિ બીજા અધ્યયનનો ચોથો ઉદ્દેશ સમાપ્ત ॥ ૨-૪ ॥



## ॥ આચારાંગસૂત્રે દ્વિતીયાધ્યયનસ્ય પञ्चમોદેશઃ ॥

અભિહિતચતુર્થોદેશોઽધુના પञ્ચમસ્ય વ્યાખ્યા પ્રારમ્ભ્યતે । પૂર્વે ભોગાભિષ્વજ્ઞં વિદાય લોકનિશ્રયા શરીરરક્ષણાર્થં વિચરણીયમિત્યુક્તમ્ । અત્રાપિ તદેવ પ્રતિપાદયિષ્યતે । તથા ચ વિષયકપાયકરાલજ્વાલાજટિલસંમારદાવાનલવસ્તો વાલકુરજ્ઞ ઇવ પલાયમાનો નિર્વાધશાન્તિપ્રાપ્તયે પરિહૃતભોગસ્પૃહો ગૃહીતપञ્ચમહાવ્રતો નિરવધાનુષ્ઠાનપરઃ કાયનિર્વહણાર્થં લોકનિશ્રયા વિહરતિ, આશ્રયરહિતસ્ય દેહસાધનાઽસમ્ભવાન્, દેહસ્યાસદ્ભાવે ધર્મોઽપિ ભવિતું નાર્હતિ । દેહસદ્ભાવશ્ચ નિશ્રયા ભવતિ । નિશ્રા દિ પञ્ચથા, ઉક્તञ્ચ—

## ॥ આચારાંગસૂત્રકે દૂસરે અધ્યયનકા પાંચવાં ઉદેશ ॥

ચતુર્થ ઉદેશ કી વ્યાખ્યા સમાપ્ત હો ચુકી, અવ યહાં પંચમ ઉદેશ કી વ્યાખ્યા પ્રારમ્ભ હોની હૈ । પહિલે જો યહ કહા ગયા હૈ કિ—ભોગોં સે ચિત્ત-વૃત્તિ કો દટાકર શરીરરક્ષા કે લિયે સંયમી કો લોક કી નેસરાય સે વિચરના ચાહિયે; યહી વિષય યહાં પર સ્પષ્ટ કિયા જાયગા । મૃગ કે વચ્ચે કી તરહ જો સંયમીજન ઇસ સંસારરૂપી દાવાનલ સે—કિ જો વિષય—કષાય-રૂપી ભયંકર જ્વાલા સે વ્યાપ્ત હૈ—વ્રસ્ત હોકર નિરાવાધ શાંતિ લાભ કે લિયે ઇતસ્તનઃ દાંડા ફિરના હૈ, જિસને ભોગોં કી ઇચ્છા કા પરિત્યાગ કર દિયા હૈ, પञ્ચમહાવ્રતોં કા જો આરાધક હૈ, ઓર નિર્દોષ અનુષ્ઠાન કે આચરણ કરને મેં જો સર્વથા સાવધાન હૈ વહ અપને શરીરનિર્વાહ કે લિયે લોક-નિશ્રા (નેસરાય) સે વિચરના હૈ; ક્યોંકિ વિના આશ્રય કે દેહ

## આચારાંગ સૂત્રના બીજા અધ્યયનનો પાંચમો ઉદેશ.

ચોથા ઉદેશની વ્યાખ્યા સમાપ્ત થઈ. હવે પાંચમા ઉદેશની વ્યાખ્યા શરૂ થાય છે, પહેલાં જે એમ કહેવામાં આવેલ છે કે—લોગોથી ચિત્તવૃત્તિને હટાવી શરીરરક્ષા માટે સંયમીએ લોકની નેસરાયથી વિચરવું જોઈએ આ જ વિષય આ ઠેકાણે સ્પષ્ટ કરવામાં આવશે.

મૃગના બચ્ચા માફક જે સંયમી જન આ સંસારરૂપી દાવાનલથી કે જે વિષયકપાયરૂપી ભયંકર જ્વાલાથી વ્યાપ્ત છે, ત્રાસીને નિરાવાધ શાંતિ લાભ માટે અહીં તહીં કર્યા કરે છે. જેણે લોગોની ઇચ્છાનો પરિત્યાગ કર્યો છે. પંચમહાવ્રતોના જે આરાધક છે, અને નિર્દોષ અનુષ્ઠાનનું આચરણ કરવામાં જે સર્વથા સાવધાન છે તે પોતાના શરીરના નિર્વાહ માટે લોક—નિશ્રા (નેસરાય) થી વિચરે છે. કારણ કે આશ્રય વિના દેહની સાધના બની શકતી નથી. દેહની સાધના વિના ધર્મનું

“ ધમ્મં ણં ચરમાણસ્સ પંચ નિસ્સાઠાણા પણ્ણત્તા;  
તં જહા-છક્કાયા, ગણો, રાયા, ગાહાવર્ઘ, સરીરં ॥

( સ્થાનાઙ્ગ ૦ સ્થાન ૫ । ૩૦ ૩ । )

છાયા—ધર્મ સ્વલુ ચરતઃ પશ્ચ નિશ્રાસ્થાનાનિ પ્રજ્ઞાનિ, તથા—પટ્કાયાઃ, ગણો, રાજા, ગાથાપતિઃ, શરીરમ્, इति ।

यद्यपि देहस्य साधनानि—वसतिवस्त्रपात्राशनशयनासनादीनि सन्ति, तथापि तेषु प्रत्यहमाहारस्याऽऽवश्यकतया तस्य प्राधान्यं, स च गृहपतेः सकाशाद्वेपयितव्यो भवति । स हि गृहस्थो निजपरिवारपोषणार्थमन्नादिकं समुत्पादयत्येव, ततः संयमजीवनरक्षणाय वृत्तिरेष्टव्या भवतीति ।

કી સાધના નહીં હો સકતી, દેહ કી સાધના કે વિના ધર્મ કા આરાધન નહીં હો સકતા; અતઃ ધર્મ કી આરાધના કરને કે લિયે દેહ કી સાધના, ઔર દેહ કી સાધના કે લિયે લોક કી નેસરાય સંયમી કો આવશ્યકીય હૈ । નેસરાય પાંચ પ્રકાર કી હૈ ? કહા ખી હૈ—

“ ધમ્મં ણં ચરમાણસ્સ પંચ નિસ્સાઠાણા પણ્ણત્તા;  
તંજહા-છક્કાયા, ગણો, રાયા, ગાહાવર્ઘ, સરીરં ”

અર્થાત્ ધર્મારાધન કરનેવાલે સંયમીજન કે પાંચ નિશ્રા-સ્થાન હૈ—પટ્કાય, ગણ, રાજા, ગાથાપતિ ઔર શરીર । યદ્યપિ દેહ કી સાધના કે સાધન—વસતિ, વસ્ત્ર, પાત્ર, ભોજન, શયન ઔર આસનાદિક હૈ તો ખી ઊન સર્વમેં આહાર કી હી મુખ્યતા હૈ । સંયમીજન ત્રીન કરણ ત્રીનયોગ પૂર્વક સાવધ વ્યાપાર સે રહિત હોતે હૈ, અતઃ ઊસ આહાર કી ગવેષણા ગૃહસ્થોં કે યહાં કરની ચાહિયે, ક્યોંકિ વે ગૃહસ્થ અપને પરિવાર કે પોષણ કે લિયે

આરાધન ખની શકતું નથી. અને ધર્મની આરાધના કરવા માટે દેહની સાધના, અને દેહની સાધના માટે લોકની નેસરાય સંયમીને આવશ્યક જ છે. નેસરાય પાંચ પ્રકારની છે. કહ્યું પણ છે—

“ ધમ્મં ણ ચરમાણસ્સ પંચ નિસ્સાઠાણા પણ્ણત્તા. તં જહા-છક્કાયા, ગણો, રાયા, ગાહાવર્ઘ, સરીરં ”

અર્થાત્ ધર્મારાધન કરવાવાળા સંયમી જનો માટે પાંચ નિશ્રા-સ્થાન છે. પટ્કાય, ગણ, રાજા, ગાથાપતિ અને શરીર. કહાય દેહની સાધનાના સાધન—વસતિ, વસ્ત્ર, પાત્ર, ભોજન, શયન અને આસનાદિક છે તો પણ એ સમગ્રમાં આહારની મુખ્યતા છે. સંયમીજન સાવધ વ્યાપારથી ત્રણ કરણ અને ત્રણ યોગથી રહિત હોય છે. માટે તેવા આહારની ગવેષણા ગૃહસ્થોને ત્યાં કરવી જોઈએ, કારણ કે

અત્રાનન્તરમૂત્રસમ્બન્ધો યથા—‘અયં મોણં સમણુવાસિજ્ઞાસિ’ ઇતિ । તત્ર નિરતિચારચારિત્રપાલનં તુ લોકનિશ્રયા ભવતીતિ કથિતમ્, અત્રાપિ મુનિના સમ્યગાહારશુદ્ધિર્વિચિન્તનીયેતિ દર્શયિષ્યતે ।

ગૃહપતયો હિ સ્ત્રીયપુત્રદુહિત્રાદ્યર્થે શસ્ત્રસમારમ્ભં કુર્વન્તીતિ દર્શયતિ—‘જમિણં’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્—‘જમિણં વિરૂવરૂવેહિં સત્થેહિં લોગસ્સ કમ્મસમા-  
રમ્ભા કજ્ઞંતિ તં જહા—અપ્પણો સે પુત્તાણં ધૂયાણં સુણ્હાણં નાઈણં  
ધાઈણં રાઈણં દાસાણં દાસીણં કમ્મકરાણં કમ્મકરીણં આ-  
સાણ પુઠોપહેણાણ સામાસાણ પાયરાસાણ સંનિહિસંનિચઓ  
કજ્ઞઈ, ઇહમેગોસિં માણવાણં ભોયણાણ ॥ સૂ૦ ૧ ॥

અશનાદિક પ્રતિદિન નૈયાર કરતે હૈં । સંયમી મુનિ સંયમજીવન કી રક્ષા કે લિયે અપની આવશ્યકતાનુસાર ગૃહસ્થ કે યહાં સે આહાર આદિ લેકર સંયમયાત્રા કા નિર્વાહ કરતે હૈં ।

યહાં પર “અયં મોણં સમણુવાસિજ્ઞાસિ” ઇસ અનન્તર સૂત્ર કે સાથ સંબંધ હૈ—વહાં ‘નિરચિનાર ચારિત્ર કા પાલન લોક-નિશ્રા સે હોતા હૈ’ યહ કહા હૈ । ઇસમેં મી ‘સંયમી મુનિ કો આહાર કી શુદ્ધિ કા અચ્છી તર સે ધ્યાન રક્ષના ચાહિયે’ યહ વાત આગે ચલકર પ્રકટ કી જાયગી ।

ગૃહસ્થ અપને પુત્ર-પુત્રી આદિ કે નિમિત્ત શસ્ત્ર-ષટ્કાયસમારંભરૂપ સાવધ વ્યાપારોં એવં ભોજનાદિ સાધનોં કે આરમ્ભોં કો કિયા કરતે હૈં, યહી વાત સૂત્રકાર કહતે હૈં—“જમિણં” ઇત્યાદિ ।

ગૃહસ્થ પોતાના પરિવારના પોષણ માટે અશનાદિક પ્રતિદિન તૈયાર કરે છે. સંયમી મુનિ સંયમજીવનની રક્ષા માટે પોતાની આવશ્યકતાનુસાર ગૃહસ્થને ત્યાંથી આહાર આદિ લાવીને સંયમયાત્રાનો નિવાહ કરે છે.

આ ઠેકાણે “અયં મોણં સમણુવાસિજ્ઞાસિ” એ અનન્તરસૂત્ર સાથે સંબંધ છે. ત્યાં ‘નિરચિનાર ચારિત્રનું પાલન લોકનિશ્રાથી થાય છે’ એમ કહેલ છે. તેમાં પણ સંયમી મુનિએ આહારની શુદ્ધિનો સારી રીતે ધ્યાન રાખવો જોઈએ એ વાત આગળ ઉપર પ્રગટ કરવામાં આવશે.

ગૃહસ્થ પોતાના પુત્ર પુત્રી આદિ નિમિત્તે શસ્ત્ર-ષટ્કાય સમારંભરૂપ સાવ-ધવ્યાપારો અને ભોજનાદિ સાધનોનો આરભ કર્યા કરે છે તેજ વાત સૂત્રકાર કહે છે:—“જમિણં” ઇત્યાદિ.



छाया—यदिदं विरूपरूपैः शस्त्रैर्लोकाय कर्मसमारम्भाः क्रियन्ते, तद्यथा—  
आत्मने तस्य पुत्रेभ्यो दुहितृभ्यः स्नुषाभ्यो ज्ञातिभ्यो धात्रीभ्यो राजभ्यो दासेभ्यो  
दासीभ्यः कर्मकरेभ्यः कर्मकरीभ्य आदेशाय पृथक्प्रहेणकाय श्यामाशाय प्रातराशाय  
सन्निधिसंनिचयं क्रियते, इहैकेषां मानवानां भोजनाय ॥ सू० १ ॥

टीका—‘यदिदं’—मित्यादि । यद् इदम्=सुखदुःखप्राप्तिपरिहाररूपं प्रयोजन-  
मुद्दिश्य विरूपरूपैः=बहुप्रकारैः शस्त्रैः=षट्कायसमारम्भरूपैः लोकाय=असंयतलोकाय-  
स्वशरीरपुत्रकलत्रादिरूपाय कर्मसमारम्भाः=षट्कायोपमर्दनरूपाः पचनपाचनादिसाव-  
द्यव्यापाराः क्रियन्ते, यद्वा कर्मणोऽष्टप्रकारकस्य समारम्भाः=उपार्जनोपायाः क्रियन्ते ।

सुखप्राप्ति और दुःखपरिहार के प्रयोजन से गृहस्थीजन जपने शरीर  
पुत्रकलत्रारूप लोक के लिये अनेक प्रकार के षट्कायसमारंभरूप पचन-  
पाचनादि सावध्य व्यापार करते हैं, उनका दिग्दर्शन कराते हुए सूत्र-  
कार कहते हैं—

गृहस्थ जीवन भोजन-कृषि-वाणिज्य आदि सावध्य व्यापार के बिना  
चलता नहीं है । इसमें इस तरह के अनेक प्रकार का आरम्भ जीवों को  
करना ही पड़ता है । जहां आरंभ-समारंभ है वहां जीवों की हिंसा  
अवश्यंभावी है । हिंसा से आस्रव होता है, और इससे जीवों का संसार  
बंधन से छुटकारा होना बड़ा कठिन होता है । इसीलिये आत्मा को  
सावध्यनिवृत्तिरूप चारित्र आराधन करने की आवश्यकता है ।

गृहस्थ लोक अपने लिये तथा पुत्रों के लिये पुत्रियों के लिये पुत्र-  
वधुओं के लिये, ज्ञातिभाईयों, सगे संबंधियों एवं कुटुम्बियों के लिये,

सुखप्राप्ति अने दुःखपरिहारना प्रयोजनकी गृहस्थी जन पोतानुं शरीर  
पुत्र कलत्रादिइय लोक भाटे अनेक प्रकारना षट्कायसमारंभइय पचनपाचनादि  
सावध्य व्यापार करे छे तेनुं दिग्दर्शन करावीने सूत्रकार कहे छे—

गृहस्थ जीवन भोजन-कृषि-वाणिज्य आदि सावध्य व्यापार बिना चलतुं  
न नथी. तेमां आवा प्रकारनां अनेक प्रकारे आरंभ जेवोने करवां न पडे छे.  
ज्यां आरंभ-समारंभ छे त्यां जेवोनी हिंसा अवश्यंभावी छे. हिंसाथी आस्रव  
थाय छे, अने तेनाथी जेवोना संसारबंधनथी छुटकारे धवो धलुं कठिन धम्र पडे  
छे, भाटे आत्माने सावध्यनिवृत्तिइय चारित्र आराधन करवानी आवश्यकता छे.

गृहस्थलोक पोताना भाटे तथा पुत्रो भाटे, पुत्रियो भाटे, पुत्रवधु भाटे,  
ज्ञातिभाईयो, सगां-संजघियो अने कुटुम्बियो भाटे, माता-पिता, आशु-समरा



અથવા 'લોગસે'—તિ તૃતીયાર્થે પઠ્ઠી, લોકેન કર્મસમારમ્ભાઃ ક્રિયન્તિ इति ।  
 અત્રેદં તત્ત્વમ્, 'તં જહા' इति મૂળપાઠેન લોકાયેતિ ચતુર્થ્યેવં સાધીયસી-  
 યદયં સમારમ્ભસ્તં પૂર્વં સામાન્યતો લોકપદેનોપદગ્યં વિશેષતો દર્શયિતું 'તં જહા'  
 इत्यस्य प्रतिपादनम् ।

यदि च तृतीयार्येऽपि पठ्ठी, साऽपि सामान्यतः समारम्भा लोकेन क्रियन्त  
 इत्युपदग्यं किसर्थमिति जिज्ञासायां 'तंजहा' इत्यपि कथञ्चित्समाधानं भवितुमर्हति ।

यदयं पाककृषિवाणिज्यादिसાવધવ્યાપારમારમ્ભન્તે તાન્ દર્શયતિ—'તદ્યથેતિ'  
 તસ્ય સમારમ્ભશીલસ્ય આત્મને=સ્વશરીરાર્થમ્, આત્મશબ્દોઽત્ર ગરીરવાચકઃ, સ્વાયં  
 સ્વયમેવ સમારમ્ભત इत्यर्थः ।

માના-પિતા સાસુ-સસુર આદિ કે લિયે, સ્વજનોં કે લિયે, ઘાયમાતા કે  
 લિયે, રાજા કે લિયે દાસી દાસ નૌકર ચાકર ઔર પાહુનોં કે લિયે, પૃથક્-  
 પ્રહેણક કે લિયે, અર્થાત્ કન્યાવિવાહ કે ઉત્સવ કા ભોજન, પ્રસ્થાન કે  
 સમય ગસ્તે સેં સુવહ-શામ ચાને કે લિયે સાથ સેં દિયે જાને વાલા ભોજન,  
 તથા કાંસા પોસા આદિ પૃથક્પ્રહેણક કહલાતા હૈ, ઉસકે લિયે પચન-  
 પાચનાદિરૂપ અનેક સાવધ વ્યાપાર કરતે હૈં ।

ભાવાર્થ—સૂત્રકાર યહાં પર યહ વાત સ્પષ્ટ કર રહે હૈં કિ—ગૃહસ્થ લોગ  
 અપને તથા અપને સગે સંબંધિયોં ઁવં બાલ-બચોં વગૈરહ કે લિયે ભોજન  
 વગૈરહ આરમ્ભોં કો નિતપ્રતિ કરતે રહતે હૈં । સર્વવિરતિ મુનિ કે શરીર  
 કી યાત્રા કા નિર્વાહ ઉનકે યહાં સે માત્રાનુસાર પ્રાપ્ત ભોજન સે અચ્છી  
 તરહ હો સકતા હૈ, હસલિયે મુનિ કો સાવધ વ્યાપાર કરને કી આવશ્ય-

આદિ માટે, સ્વજનો માટે, ધાયમાતા માટે, રાજા માટે, દાસી-દાસ નૌકર-ચાકર  
 માટે, મહેમાનો માટે, પૃથક્પ્રહેણકને માટે, અર્થાત્ કન્યાવિવાહના ઉત્સવનું  
 ભોજન, સુસાફરી અમય રસ્તામાં સવારસાંજ ખાવા માટે આથે આપવામાં આવતું  
 ભોજન, અને કાંચા પિરસણું આદિ પૃથક્પ્રહેણક કહેવાય છે, તેને માટે પચન-  
 પાચનાદિરૂપ અનેક સાવધ વ્યાપાર કરે છે.

ભાવાર્થ—સૂત્રકાર આ ઠેકાણે એ વાત સ્પષ્ટ કરે છે કે—ગૃહસ્થ લોક પોતાના  
 તથા પોતાના સગાસંબંધિઓ અને છોકરાં-છંયાં વિગેરે માટે ભોજન વિગેરે  
 આરંભો હરહમેશ કરતા જ રહે છે. સર્વવિરતિ મુનિના શરીરની યાત્રાનો નિર્વાહ  
 તેને ત્યાંથી માત્રાનુસાર પ્રાપ્ત ભોજનથી સારી રીતે થઈ શકે છે, માટે મુનિને  
 સાવધ વ્યાપાર કરવાની આવશ્યકતા જ નથી, સાવધ વ્યાપારથી હિંસા થવાના

કિશ્વ-પુત્રેભ્યઃ, દુહિતૃભ્યઃ=પુત્રીભ્યઃ, સ્ત્રુપાભ્યઃ=પુત્રવધૂભ્યઃ, જ્ઞાતિભ્યઃ=પૂર્વપશ્ચાત્સન્ધ્વિભ્યઃ, માતા-પિતૃ-શ્વશ્રૂ-શ્વશુરાદિભ્ય इत्यर्थः, સ્વજનેભ્યઃ, ધાત્રી-ભ્યઃ=ઉપમાતૃભ્યઃ, રાજભ્યઃ, દાસેભ્યઃ=મૃત્યેભ્યઃ, દાસીભ્યઃ, કર્મકરેભ્યઃ=પરિચારકેભ્યઃ, કર્મકરીભ્યઃ=પરિચારિકાભ્યઃ, આદિશ્યતે=આજ્ઞાપ્યતે પરિજનઃ સત્કારાર્થં યસ્મિન્નાગતે સ આદેશઃ=પ્રાઘૂર્ણકાદિસ્તસ્મૈ, પૃથક્પ્રહેણકાય ' પૃથક્=ત્રિમિત્તરૂપેણ પ્રહેણકઃ=કસ્મિંશ્ચિદુત્સવે ભોજનોપાયનં લોકેભ્યો દીયમાનં પૃથક્પ્રહેણક इत्युच्यते ।

કતા હી નહીં હૈ । સાવધ વ્યાપારોં સે હિંસા હોનેકે કારણ ઉસ અવસ્થા મેં સર્વચિરતિ સંયમ કી આરાધના હો હી નહીં સકતી, ઇસલિયે મુનિ કા સંયમ નિર્દોષ રીતિ સે પલ સકે ઇસ આશય સે યહ અવસ્થા પરમ્પરા સે કી ગઈ હૈ ।

મૂલ સૂત્ર મેં—“લોગસ્સ કમ્મસમારંભા કજ્જંતિ” યહ પાઠ હૈ, ઇસકી સંસ્કૃત છાયા—“લોકાય કર્મસમારંભાઃ ક્રિયન્તે” હોતી હૈ । જિસકા અર્થ લોકોં-અસંયતોં કે લિયે ષટ્કાય કે ઉપમર્દનરૂપ સાવધ વ્યાપારોં કા આરમ્ભ કિયા જાતા હૈ । અથવા લોક કે દ્વારા કર્મસમારમ્ભ કિયે જાતે હૈ, યહ અર્થ ભી હોતા હૈ । પહિલે સૂત્રકાર સાવધવ્યાપારરૂપ કર્મસમારમ્ભ કા નિમિત્ત કારણ સામાન્યતયા અસંયત લોકોં કો વતલાતે હુણ ઇસી બાત કો વિશેષ રીતિ સે સ્ખુલાગા કરને કે અભિપ્રાય સે “તં જહા” ઇસ પદ સે વ્યક્ત કરતે હૈ । તથા “લોકોંકે દ્વારા જો સાવધ-વ્યાપારરૂપ કર્મસમારમ્ભ કિયા જાતા હૈ વહ કિસ લિયે કિયા જાતા હૈ”

કારણે આ અવસ્થામાં સર્વચિરતિ સંયમની આરાધના બની જ શકતી નથી. માટે મુનિ સંયમને નિર્દોષ રીતિથી પાળી શકે એ આશયથી આ અવસ્થા પરંપરાથી કરવામાં આવેલ છે.

મૂળસૂત્રમાં—“લોગસ્સ કમ્મસમારંભા કજ્જંતિ” એ પાઠ છે. તેની સંસ્કૃત છાયા—“લોકાય કર્મસમારંભાઃ ક્રિયન્તે” છે જેનો અર્થ લોકો-અસંયતોને માટે ષટ્કાયના ઉપમર્દનરૂપ સાવધ વ્યાપારોનો આરંભ કર્યો જાય છે, અથવા લોકોદ્વારા કર્મસમારંભ કરાય છે. એ પણ અર્થ થાય છે. પહેલા સૂત્રકાર સાવધવ્યાપારરૂપ કર્મસમારંભના નિમિત્ત કારણ સામાન્યતયા અસંયત લોકોને બતાવીને તે વાતનો વિશેષ રીતિથી ખુલાસો કરવાના અભિપ્રાયથી “તંજહા” આ પદથી સ્પષ્ટ કરે છે. તથા “લોકો દ્વારા જે સાવધવ્યાપારરૂપ કર્મ સમારંભ

યદ્વા કન્યાપરિણયોત્સવે કન્યાપિતૃગૃહે વિભિન્નરૂપેણ યદ્દોઞ્યં સ પૃથક્પ્રહેણકઃ ।  
અથવા પ્રસ્થાનસમયે જામાતૃભ્યો વિભિન્નરૂપેણ દીયમાનં પ્રાથેયં પૃથક્પ્રહેણકપદેન  
કથ્યતે, તસ્મૈ । ‘ઙ્યામાશાય’ ઙ્યામાયાં રાત્ર્યામ્, અશનમાશઃ=ઙ્યામાશસ્તસ્મૈ ।  
‘પ્રાતરાશાય’ પ્રાતઃ=પ્રાતઃકાલે આશો=ભોજનં પ્રાતરાશસ્તસ્મૈ કર્મસમારમ્ભાઃ  
ક્રિયન્તે । તમેવ વિશિનષ્ટિ-‘સન્નિધિસન્નિચયમ્’ ઇત્યાદિ, સન્નિધાનં સન્નિધિઃ=અલ્પ-  
કાલસ્થાયિદ્રવ્યાણાં સંગ્રહકરણમ્, દધિ-મક્ત-કૃશર-વ્યઙ્ગનાદીનાં સ્થાપનમ્ ।

અપિ ચ-‘સંનિચયઃ’ સમ્યગ્ નિચયનં=સંગ્રહણં સન્નિચયઃ=ચિરસ્થાયિનાં ઘૃત-  
તૈલ-ગુડાદિદ્રવ્યાણાં સંગ્રહઃ, સન્નિધિશ્ચ સંનિચયશ્ચ સન્નિધિ-સન્નિચયમ્, તત્  
ક્રિયતે । સૂત્રે પુંસ્ત્વમાર્પત્વાત્ । યદ્વા-સન્નિધેઃ=અશનવશનાદેઃ સન્નિચયઃ=સંગ્રહઃ  
ક્રિયતે । કિમર્થં સંગ્રહઃ ક્રિયતે? ઇત્યાહ-‘ઇહે’-તિ । ઇહ=સંસારે એકેપાં  
=કૃતિપયાનાં માનવાનાં=સમ્બન્ધિજનાનાં ભોજનાય=ભવિષ્યદુપભોગાય, વિરૂપરૂપૈઃ  
શત્રૈઃ કર્મસમારમ્ભાઃ ક્રિયન્તે ઇતિ ।

લોકાઃ પુત્રાદ્યર્થે કર્માણિ સમારમન્તે એવ, તેભ્યઃ સંયમયાત્રાં નિર્વોદું માત્ર-  
યાઽન્નાદિક્રમાદાય મુનિના વર્તિતવ્યમિતિ સૂત્રતાત્પર્યમ્ ॥ મુ. ૧ ॥

इस प्रकार की जिज्ञासा होने पर उसका समाधान सूत्रकार ने “तं जहा”  
पद से किया है ।

“सन्निधिसंनિचय” यहां दो पद हैं-१ ‘सन्निधि’ और दूसरा ‘२  
संनिचय । दही, भात, कृशर-ग्रीचडी, व्यङ्गन-शाक आदि ‘सन्निधि’  
पदसे ग्रहण किये गये हैं । घृत, तैल, गुड आदि पदार्थ ‘संनिचय’  
पद से गृहीत हुए हैं । अथवा सन्निधि-अशन वशन आदि का संनिचय-  
संग्रह करना वह सन्निधिसंनिचय है । कितनेक गृहस्थ अपने व  
संबन्धिजनों के निमित्त भविष्यत्काल में उपभोग के अभिप्राय से  
धान्यादि अनेक पदार्थों का संग्रह कर लिया करते हैं । इस संग्रह में

થાય છે” તે શા માટે કરવામાં આવે છે, આ પ્રકારની જિજ્ઞાસા થવાથી તેનું  
સમાધાન સૂત્રકારે “તંજહા” પદથી કર્યું છે.

“સન્નિધિસંનિચય” આંહી બે પદ છે. ૧ ‘સન્નિધિ’ અને બીજું  
૨ ‘સંનિચય’ દહીં, ભાત, બીચડી, શાક આદિ ‘સન્નિધિ’ પદથી લેવામાં આવેલ  
છે. ઘી, તેલ, ગોળ આદિ પદાર્થ ‘સંનિચય’ પદથી લેવામાં આવેલ છે. અથવા  
‘સન્નિધિ’ અશન વસન આદિનો ‘સંનિચય’ સંગ્રહ કરવો તે સન્નિધિસંનિચય  
છે. કેટલાક ગૃહસ્થ પોતાને અને સબંધીજનોને નિમિત્તે ભવિષ્ય કાળમાં ઉપભો-  
ગના અભિપ્રાયથી ધાન્યાદિ અनेક પદાર્થોનો સંગ્રહ કરે છે. આ સંગ્રહમાં

મવિખ્યદુપભોગાય સન્નિધિ-સન્નિચયપ્રવૃત્તે લોકે સંયમિના કિં વિધેયમિત્યાહ-  
'સમુદ્વિષ્ટ' ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્—સમુદ્વિષ્ટ અણગારે આરિષ આરિયપન્ને આરિયદંસી  
અયં સંધિ-ત્તિ અદક્ષૂ , સે નાઈઁ નાઈયાવઁ ન સમણુજાણઁ  
સઠ્ઠામગંધં પરિજ્ઞાય નિરામગંધો પરિવ્વઁ ॥ સૂ૦ ૨ ॥

છાયા—સમુત્થિતોડનગાર આર્ય આર્યપ્રજ્ઞ આર્યદર્શી અયં સન્ધિરિતિ અદ્રાક્ષીત્,  
સ નાદદીત નાદાપયેત્ ન સમણુજાનીયાત્, સર્વામગન્ધં પરિજ્ઞાય નિરામગન્ધઃ  
પરિવ્રજેત્ ॥ સૂ૦ ૨ ॥

ટીકા—'સમુત્થિત' ઇત્યાદિ । સમુત્થિતઃ=સમ્=સમીચીનં ચારિત્રાચરણે  
ઉત્થિતઃ=સમુત્થિતઃ-સંયમારાધનસમુદયત્ ઇત્યર્થઃ, અનગારઃ=અવિદ્યમાનમગારં  
ગૃહં यस્ય સોડનગારો દ્રવ્યભાવગૃહરહિતઃ, આર્યઃ=આરાદ્ દૂરં ગતો હેયધર્મેભ્યો યઃ  
અનેક પ્રકાર સે સાવધ વ્યાપાર મેં પ્રવૃત્તિ હોને કી વજહ સે ત્રસ ઇવં  
સ્થાવર જીવોં કી હિંસા હોતી હી હૈ ॥ સૂ૦ ૧ ॥

આગામી સમય કે લિયે અપને-અપને યોગ્ય ઉપભોગાદિ સાધન-  
સમૂહ કે સંગ્રહ કરને મેં તત્પર રહે હુઁ જનસમુદાય કે વીચ મેં સંયમી  
મુનિ કો કયા કરના ચાહિયે? ઇસકે પ્રત્યુત્તર મેં સૂત્રકાર કહતે હૈ—  
'સમુદ્વિષ્ટ' ઇત્યાદિ ।

જો નિર્મલ ચારિત્ર કે આચરણ મેં ઉત્થિત હૈ, અર્થાત્ નિર્દોષ ચારિત્ર  
કે આરાધન કરને મેં જો અચ્છી તરહ સે પ્રયત્નશીલ હૈ ઉસકા નામ  
સમુત્થિત હૈ । જિસકે ઘર નહીં હૈ ઉસકા નામ અનગાર હૈ । અગાર કે દો

અનેક પ્રકારથી સાવધ વ્યાપારમાં પ્રવૃત્તિ થાય છે જેથી તેમાં ત્રસ અને સ્થાવર  
જીવોની હિંસા થાય છે. ॥ સૂ૦ ૧ ॥

આગામી સમય માટે પોતપોતાના યોગ્ય ઉપભોગાદિ સાધન સમૂહનો સંગ્રહ  
કરવામાં તત્પર રહેલા જનસમુદાયની વચમાં સંયમી મુનિએ શું કરવું જોઈએ,  
તેના પ્રત્યુત્તરમાં સૂત્રકાર કહે છે—'સમુદ્વિષ્ટ' ઇત્યાદિ.

જે નિર્મળ ચારિત્રના આચરણમાં ઉત્થિત છે અર્થાત્ નિર્દોષ ચારિત્રના  
આરાધન કરવામાં જે સારી રીતે પ્રયત્નશીલ છે તેનું નામ સમુત્થિત છે જેને અગાર-  
ઘર નથી તેનું નામ અનગાર છે. અગારના બે પ્રકાર છે. એક દ્રવ્ય-અગાર અને બીજો

સ આર્યઃ=શ્રુતચારિત્રરૂપધર્મારાધનયોગ્યઃ । યદ્વા-વિષય-કષાય-કાષ્ટચ્છેદ-  
કત્વેનાઽઽરાસાદૃશ્યાદારા=રત્નત્રયં, તાં યાતિ=પ્રાપ્નોતિ યઃ સ આર્યઃ=સર્વથા સકલ-  
કલ્મષપરાશિકલુપિતવૃત્તિરહિત इत्यर्थः । ‘આર્યપ્રજઃ’ આર્યા=શ્રેષ્ઠા પ્રજા=મતિ-  
ર્યસ્ય સ આર્યપ્રજઃ હેયોપાદેયવિવેકવાન્ । એવમાર્યદર્શી=આર્ય-યુક્તિયુક્તં દ્રષ્ટું શીલં  
યસ્યેત્યાર્યદર્શી=આરમ્ભજન્યકટુવિપાકદર્શી । ય એવમ્ભૂતઃ પુનઃ ‘અયં સન્ધિ’-રિતિ  
અયં=પ્રત્યક્ષોપલબ્યમાનઃ સન્ધિઃ-પારગમનાધઃપતનયોર્મધ્યે સન્ધિરિવ સન્ધિઃ-  
આર્યક્ષેત્ર-સુકુલોત્પત્તી-ન્દ્રિયનિર્વૃત્તિ-શ્રદ્ધા-સંવેગ-રત્નત્રયપ્રાપ્તિલક્ષણં સન્ધિસ્થાનમ્,  
इति=इत्येवम् अद्राक्षीत्=अज्ञासीत् । યદ્વા-અયં પ્રત્યક્ષનિર્દિષ્ટઃ સન્ધિઃ-પ્રતિલેખન-

પ્રકાર હૈં । એક દ્રવ્ય-અગાર ઓર દૂસરા ભાવ-અગાર । અનગાર ઇન દોનોં  
પ્રકાર કે અગારોં સે રહિત હોના હૈ । જો હેય ધર્મોં સે સદા દૂર રહતા  
હૈ ઉસકા નામ આર્ય હૈ । આર્ય-શ્રુતચારિત્રરૂપ ધર્મ કે આરાધન કરને  
યોગ્ય હોતા હૈ, અથવા વિષયકષાયરૂપ કાષ્ટ કા છેદક હોને સે આરા-  
કરોંત કે સદૃશ રત્નત્રયરૂપ ધર્મ કો જો પ્રાપ્ત કરતા હૈ વહ આર્ય હૈ, અર્થાત્  
જિસકી સકલ કલ્મષ-પાપરાશિ સે કલુપિત પરિણતિ નહીં હૈ ઉસકા  
નામ આર્ય હૈ । ઉત્તમ જિસકી મતિ હૈ, હેય ઓર ઉપાદેય કે વિવેક સે  
જિસકા અન્તઃકરણ યુક્ત હૈ ઉસકા નામ આર્યપ્રજા હૈ । યુક્તિયુક્ત દેખને  
કા જિસકા સ્વભાવ હૈ ‘આરમ્ભજન્ય પાપોં કા વિપાક ભયંકર કષ્ટપદ  
હોતા હૈ’ ઇસ વાત કો ભલીભાંતિ સે જાનતા સમજતા હૈ વહ આર્યદર્શી  
હૈ । મંસાર સે પાર હોના એવં ઉસમેં અધઃપતન હોના, ઇન દોનોં કે બીચ  
મેં સન્ધિ કે સમાન આર્યક્ષેત્ર, સુકુલ મેં જન્મ, ઇન્દ્રિયાદિકોં કી પૂર્ણતા  
શ્રદ્ધા, સંવેગ ઓર રત્નત્રય કી પ્રાપ્તિરૂપ સંધિસ્થાન હૈ । જો પ્રત્યક્ષ

ભાવ-અગાર. અનગાર આ બન્ને પ્રકારના અગારોથી રહિત હોય છે. જે હેય  
ધર્મોથી સદા દૂર રહે છે તેનું નામ આર્ય છે. આર્ય-શ્રુતચારિત્રરૂપ ધર્મનું  
આરાધન કરવા યોગ્ય હોય છે. અથવા વિષયકષાયરૂપ કાષ્ટના છેદક હોવાથી આરા-  
કરવતના સદૃશ રત્નત્રયરૂપ ધર્મને જે પ્રાપ્ત કરે છે તે આર્ય છે. અર્થાત્ જેની  
સકલકલ્મષ-પાપરાશિ થી કલુપિત પરિણતિ નથી તેનું નામ આર્ય છે. ઉત્તમ  
જેની મતિ છે હેય અને ઉપાદેયના વિવેકથી જેનું અંતઃકરણ યુક્ત છે તેનું નામ  
આર્યપ્રજ છે. યુક્તિયુક્ત દેખવું એવો જેનો સ્વભાવ છે ‘આરમ્ભજન્ય પાપોના  
વિપાક ભયંકર કષ્ટપદ થાય છે.’ આ વાતને જે ભલીભાંતિથી જાણે છે, તેમજ  
મનને છે તે આર્યદર્શી છે, મંસારથી પાર થવું અને તેમાં અધઃપતન થવું, એ  
બન્નેની વચ્ચેમાં સન્ધિસમાન આર્યક્ષેત્ર, સારા કુળમાં જન્મ, ઇન્દ્રિયોની પૂર્ણતા,  
શ્રદ્ધા, સંવેગ અને રત્નત્રયની પ્રાપ્તિરૂપ સંધિસ્થાન છે. જે આ પ્રત્યક્ષ

પ્રતિક્રમણાદિક્રિયાયા યઃ સમુચિતઃ કાલ ઇતિ યોઽજ્ઞાસીદિત્યર્થઃ । એવંભૂતઃ સઃ  
અનગારો નાદદીત=અકલ્પનીયમાહારાદિકં ન ગૃહીયાત્, શાસ્ત્રે તસ્ય પ્રતિપિદ્ધત્વાત્,  
ષટ્જીવનિકાયારમ્મદોષસ્ય મુનિના પૂર્વે પરિત્યક્તત્વાચ્ચ, નાઽઽદાપયેત્=નાન્યં  
ગ્રાહયેત્, ન સમનુજાનીયાત્=નાપીતરં સાધું ગૃહ્ણન્તમનુમોદયેત્ । યદ્વા-નાઽધ્યાન્નાઽઽ-  
દયેદિતિચ્છાયા, સ મુનિરિજ્જાલધૂમાદિપશ્ચવિધદોષદૂષિતમાહારં નાઘાત્=નાશ્ત્રી-  
યાત્, નાદયેત્=નાન્યં ભોજયેત્ અદન્તમન્યં ન સમનુજાનીયાત્ ।

અપિ ચ કિ કુર્યાદિત્યાહ-‘સર્વામગન્ધ’-મિત્યાદિ । સર્વામગન્ધમ્, આમં ચ  
ગન્ધશ્ચાનયોઃ સમાહારદ્વન્દ્વે આમગન્ધં, સર્વં ચ તદામગન્ધમિતિ સર્વામગન્ધમ્=અશુ-

પ્રતિભાસિત વાત કો અચ્છી તરહ સે જાનતા હૈ, અથવા પ્રતિલેખન, પ્રતિ-  
ક્રમણાદિ ક્રિયાઓં કે ઉચિત અવસર કા જો જ્ઞાતા હૈ, યદ્ વાત “અયં  
સન્ધિરિતિ અદ્રાક્ષીત્” ઇસ પદ સે પ્રદર્શિત કી ગઈ હૈ । ઇસ પ્રકાર કા  
જો અનગાર હૈ વહ અકલ્પનીય આહારાદિક કો ન સ્વયં ગ્રહણ કરતા  
હૈ, ક્યોંકિ સદોષ આહાર કા ગ્રહણ કરના અનગાર કે લિયે શાસ્ત્ર મેં  
નિષિદ્ધ બતલાયા ગયા હૈ, ઇસકા કારણ-ષટ્કાય કે જીવોં કા આરમ્મ  
અનગાર ને પહિલે સે હી છોડ દિયા હૈ, વહ સદોષ આહાર સ્વયં ન  
ગ્રહણ કરતા હૈ, ન દૂસરોં સે ગ્રહણ કરવાતા હૈ, ઓર ન ઇસ પ્રકાર કે  
આહાર કો ગ્રહણ કરને વાલે અન્ય કિસી કી અનુમોદના ભી કરતા હૈ ।

અથવા “સે નાઈંય નાઈંયાવળ” ઇન પદોં કી સંસ્કૃત છાયા “સ ન  
અઘાત્ ન આદયેત્” યદ્ ભી હૈ, ઇસકા અર્થ ઇસ પ્રકાર હૈ-જ્જાલ ધૂમ  
આદિ પાંચ પ્રકાર કે દોષોં સે દૂષિત આહાર કો ન સ્વયં કરે ઓર ન

પ્રતિભાસિત વાતને સારી રીતે બાણે છે, અથવા પ્રતિલેખન, પ્રતિક્રમણાદિ ક્રિયા-  
ઓના ઉચિત અવસરનો જે જ્ઞાતા છે, એ વાત “અયં સન્ધિરિતિ અદ્રાક્ષીત્”  
આ પદથી પ્રદર્શિત કરવામાં આવેલ છે. આ પ્રકારના જે અણુગાર છે તે અક-  
લ્પનીય આહારાદિકને સ્વયં ગ્રહણ કરતા નથી, કારણ કે સદોષ આહારનું ગ્રહણ  
કરવું અણુગાર માટે શાસ્ત્રમાં નિષિદ્ધ થતાવેલ છે તેનું કારણ ષટ્કાયના જીવોના  
આરંભ અણુગારે પહેલાંથી જ છોડી આવેલ છે. તે સદોષ આહાર પોતે ગ્રહણ નથી  
કરતા. બીજાથી ગ્રહણ નથી કરાવતા, અને આ પ્રકારના આહાર ગ્રહણ કરવાવાળા  
અન્ય કોઈની અનુમોદના પણ નથી કરતા.

અથવા “સે નાઈંય નાઈંયાવળ” આ પદોની સંસ્કૃત છાયા “ન અઘાત્ ન  
આદયેત્” એ પણ છે. એનો અર્થ આ પ્રકારે છે. જ્જાલ, ધૂમ આદિ પાંચ  
પ્રકારના દોષોથી દૂષિત આહારને ન સ્વયં કરે અને બીજાથી કરાવે નહિ, તથા



હાત્વારં પરિજ્ઞાય=જ-પરિજ્ઞયા જ્ઞાત્વા નિરામગન્ધઃ, આમગન્ધાદશુદ્ધાહારાન્નિર્ગતો  
 યઃ સ નિરામગન્ધઃ=ઉદ્ગમોત્પાદનૈષણાગતદ્વિચત્વારિંશદ્દોષદૂષિતાહારાગ્રાહકઃ સન્  
 ‘પરિવ્રજેત્’-પરિ=સમન્તાદ્ વ્રજેત્=વિહરેત્ રત્નત્રયસમારાધનતત્પરો ભવેદિતિ  
 ભાવઃ । તીર્થકરનિર્દિષ્ટે સમુચિતાવસરે પ્રતિલેખન-પ્રતિક્રમણાદિક્રિયાં કુર્વન્ન-  
 નગાર આર્યદેશેત્તમકુલાદિકં મોક્ષકારણં પ્રાપ્ય સંસારપારાવારમુત્તીર્ય ચ સન્ધિ-  
 સ્થાનીયે તત્તીરે વર્તમાનો નિશ્ચલકર્મક્ષયં કૃત્વા તતો નિષ્ક્રમિતુકામોઽસ્મીત્યેવં  
 પરિજ્ઞાવાન્ ‘અથઃકર્માદિદોષદૂષિતાહારો વિપ્રમક્ષણમિવાત્મગુણઘાતકઃ’ इति  
 સમ્યગ્લોચ્ય તાદૃશમાહારં ત્રિકરણત્રિયોગૈઃ પરિત્યજ્ય પરિશુદ્ધમાહારાદિકં  
 મિશ્રમાણો વિહરેદિતિ સમુદિતાર્થઃ ॥ ૪૦ ૨ ॥

દૂસરોં કો કરાવે, તથા કરને વાલે કિસી અન્ય કી અલુમોદના મી ન  
 કરે । “સર્વામગન્ધં પરિજ્ઞાય નિરામગન્ધઃ પરિવ્રજેત્” ઇસકા અર્થ હૈ  
 અશુદ્ધઆહાર, અર્થાત્ જ-પરિજ્ઞાદ્વારા ઇસ પ્રકાર કે આહાર કો અશુદ્ધ  
 જાનકર ‘નિરામગન્ધઃ’-અશુદ્ધ આહાર સે મિત્ર શુદ્ધ આહાર કો કિ જો  
 ઉદ્ગમ (૧૬) ઉત્પાદન (૧૬) એષણા (૧૦) સંબંધી ઘયાલીસ (૪૨) દોષોં  
 સે રહિત હોતા હૈ ગ્રહણ કરે । યદિ ઇસ પ્રકાર કે આહાર કા લાભ સંયમી  
 કો નહીં હોતા હૈ તો વહ ઇસ દૂષિત આહાર કો છોડકર અપને રત્નત્રય  
 કી આરાધના મેં તત્પર રહે । તીર્થકર પ્રમુને પ્રતિલેખનાદિ ક્રિયાઓં કા  
 જો સમય નિશ્ચિત કર દિયા હૈ ઉસ સમય મેં ઉનર ક્રિયાઓં કો કરને  
 વાલા, તથા આર્ય ક્ષેત્ર કા લાભ, ઉત્તમ કુલ મેં જન્મ, રત્નત્રય કી પ્રાપ્તિ  
 આદિ મોક્ષ કે કારણભૂત સંધિસ્થાનોં કો જિસને પાયા હૈ એસા અનગાર

કરવાવાળા ખીજા કોઈની અનુમોદના પણ ન કરે. “સર્વામગન્ધં પરિજ્ઞાય નિરા-  
 મગન્ધઃ પરિવ્રજેત્” આનો અર્થ છે અશુદ્ધ આહાર અર્થાત્ જ-પરિજ્ઞાદ્વારા  
 આ પ્રકારના આહારને અશુદ્ધ જાણીને નિરામગન્ધઃ અશુદ્ધ આહારથી ભિન્ન  
 શુદ્ધ આહારને કે જે ઉદ્ગમ (૧૬) ઉત્પાદન (૧૬) એષણા (૧૦) સંબંધી ૪૨  
 ખેતાલીસ દોષોથી રહિત હોય છે તેને ગ્રહણ કરે છે. કદાચ આ પ્રકારના આહારનો  
 લાભ સંયમીને ન થાય તો તે આવા દૂષિત આહારને છોડીને પોતાના  
 રત્નત્રયની આરાધનામાં તત્પર રહે.

તીર્થકર પ્રમુએ પ્રતિલેખનાદિ ક્રિયાઓનો જે સમય નિશ્ચિત કરી આપ્યો  
 છે તે સમયમાં તે તે ક્રિયાઓને કરવાવાળા, તથા આર્યક્ષેત્રનો લાભ, ઉત્તમ  
 કુળમાં જન્મ રત્નત્રયની પ્રાપ્તિ આદિ મોક્ષના કારણભૂત સંધિસ્થાનોને જેણે



निरामगन्ध इति निषेधे आमपदेन हननकोटित्रिकं, गन्धपदेन पचनकोटित्रिकं च प्रतिषिध्य क्रयणकोटित्रिकं निषेधयितुमुपदर्शयति—‘आदिस्समाणे’ इत्यादि।

मूलम्—आदिस्समाणे कयविक्रयसे न किणे न किणावए  
किणंतं न समणुजाणए ॥ सू० ३ ॥

छाया—आदिश्यमानः क्रयविक्रययोः स न क्रीणीयात्, न क्रापयेत्, क्रीणन्तं न समनुजानीयात् ॥ सू० ३ ॥

टीका—‘आदिश्यमान’ इति। क्रयविक्रययोः, क्रयश्च विक्रयश्चानयोरितरेतर-योगद्वन्द्वे क्रयविक्रयौ, तयोः—आदिश्यमानः=व्यपदेशमलभमानः—‘अयं क्रयविक्रय-कर्ते’—ति व्यपदेशभाग्न न भवतीत्यर्थः ॥

‘सकल कर्म को नाश कर मैं इस संसारसमुद्र से पार होने की दृढ़ भावना वाला हूँ’ इस प्रकार के संसारसमुद्र के पार जाने के अभि-प्राय से जो समन्वित हो रहा है वह अनगार आधाकर्मादि दोष से दूषित आहार को विषभक्षण की तरह आत्मगुण का घातक जानकर तीन करण और तीन योग से उसका परित्याग ही कर देवे, और शुद्ध निर्दोष आहार की प्राप्ति से अपने शरीर की यात्रा का निर्वाह करता हुआ संयममार्ग में विचरे ॥ सू० २ ॥

‘निरामगन्ध’ इस निषेध में ‘आम’ पद से हननकोटित्रिक तथा ‘गन्ध’ पद से पचनकोटित्रिक का प्रतिषेध करके क्रयणकोटित्रिक का निषेध करने के लिये सूत्रकार कहते हैं—‘आदिस्समाणे’ इत्यादि।

क्रय शब्द का अर्थ खरीदना और विक्रय शब्द का अर्थ बेचना

भेणव्या छे એવા અણુગાર “ સકલ કર્મનો નાશ કરી હું ” આ સંસારસમુદ્રથી પાર થવાની દૃઢ લાવનાવાળો છું ” આ પ્રકારે જે સંસાર સમુદ્રથી પાર જવાના અભિપ્રાયથી જે સમન્વિત થયેલ છે તે અણુગાર આધાકર્માદિ દોષથી દૂષિત આહારને વિષભક્ષણની માફક આત્મગુણના ઘાતક બાણીને ત્રણ કરણ અને ત્રણ યોગથી તેનો પરિત્યાગ કરે, અને શુદ્ધ નિર્દોષ આહારની પ્રાપ્તિથી પોતાના શરીરની યાત્રાનો નિર્વાહ કરીને સંયમ માર્ગમાં વિચરે ॥ સૂ० ૨ ॥

નિરામગન્ધ આ નિષેધમાં આમ-પદથી હનનકોટિત્રિક તથા ગન્ધ-પદથી પચનકોટિ ત્રિકનો પ્રતિષેધ કરીને ક્રયણકોટિત્રિકનો નિષેધ કરવાને માટે સૂત્રકાર કહે છે—‘અદિસ્સમાણે’ ઇત્યાદિ

ક્રય શબ્દનો અર્થ ખરીદવું, અને વિક્રય શબ્દનો અર્થ વેચવું, જે ક્રય-

યદ્વા-‘અદૃશ્યમાનઃ’ ઇતિચ્છાયા, ક્રય-વિક્રયયોઃ અદૃશ્યમાનઃ=દ્રવ્યાદ્યભાવા-  
ત્ક્રયવિક્રયવ્યવહારેઽદૃશ્યમાનોઽકિશ્ચનઃ સઃ=અનગારઃ આહારાદિકં ન ક્રીणीયાત્  
નાન્યં ક્રાપયેત્, ક્રીણન્તમન્યં ન સમનુજાનીયાત્=નાનુમોદયેત્ । एतेन इननादि-  
नवकोटिपरिगृह्यमाहारादિકं परिगृह्याद्धारधूमादिदोषरहितं मुनिर्मुञ्जीतेति निगूढार्थः ।  
अत्र क्रयपदेनोद्गमदोषाणां ग्रहणं, तेन चात्पादनैषणादोषाः संगृहीता इति सूत्र-  
तात्पर्यम् ॥ सू० ३ ॥

है । जो क्रय-विक्रयरूप व्यापार को करना है वह व्यवहार में बेचने-  
खरीदने वाला कहा जाता है । मुनि, जो सर्वसावद्य क्रियाओं के त्यागी हो  
चुके हैं वे, क्रय-विक्रय रूप सावद्य व्यापार को नहीं कर सकते हैं । इस  
लिये सूत्रकार यहां इस बात का प्रदर्शन करते हुए कहते हैं कि-अनगार  
शुद्ध आहार के न मिलने पर आहारादिक अन्य से न खरीदे, और मिले  
हुए को अन्य किसी को न बेचे । क्योंकि इस प्रकार के व्यवहार करने  
से उसमें क्रय विक्रय का दोष लागू होता है, जो सिद्धान्तदृष्टि से मुनि  
के आचार से सर्वथा निषिद्ध है । अथवा “अदिस्समाणे” इस पद की  
संस्कृत छाया “अदृश्यमानः” यह भी होती है । इसका भाव यह है  
कि-अनगार अपने पास किसी भी प्रकार का द्रव्यादिक तो रखते ही  
नहीं हैं, क्योंकि वे सकल परिग्रह के त्यागी होते हैं, सचित्त अचित्त  
आदि समस्त परिग्रह के छोड़ने से ही उनमें अपरिग्रहता आती है ।  
इसीको सूत्रकार यहां पर प्रकट करते हुए कहते हैं कि-जब मुनिके पास

વિક્રય રૂપ વ્યાપાર કરે છે તે વ્યવહારમાં વેચવાખરીદવાવાળા કહેવાય છે. મુનિ  
જે સર્વ સાવધ ક્રિયાઓના ત્યાગી બનેલ છે તે ક્રય-વિક્રયરૂપ સાવધ વ્યાપારને  
કરી શકતા નથી, માટે સૂત્રકાર આ ઠેકાણે આ વાતનું પ્રદર્શન કરીને કહે છે કે-  
અણુગાર શુદ્ધ આહાર ન મળવાને કારણે આહારાદિક બીજાથી ખરીદાવી શકે  
નહિ, અને મળેલ હોય તે એનાથી બીજાને વેચી શકાય નહિ. કારણ કે આ  
પ્રકારનો વ્યવહાર કરવાથી તેમાં ક્રય-વિક્રયનો દોષ લાગુ પડે છે, જે સિદ્ધાન્ત-  
દૃષ્ટિથી મુનિના આચારથી સર્વથા નિષિદ્ધ છે. અથવા “અદિસ્સમાણે” આ  
પદની સંસ્કૃત છાયા “અદૃશ્યમાન.” એ પણ થાય છે. તેનો ભાવ એ છે  
કે-અણુગાર પોતાની પાસે કોઈપણ પ્રકારનું દ્રવ્યાદિક તો રાખતા જ નથી, કારણ  
કે તે સકળ પરિગ્રહના ત્યાગી હોય છે. સચિત્ત અચિત્ત આદિ સમસ્ત પરિગ્રહના  
છોડવાથી જ તેનામાં અપરિગ્રહતા આવે છે માટે સૂત્રકાર આ ઠેકાણે પ્રગટ  
કરતાં કહે છે કે-ન્યારે તની પાસે લેણદેણનો વ્યવહાર કરવામાં સહાયક બાહ્ય

लेन-देन के व्यवहार करने में सहायक बाह्य द्रव्यादिक सामग्री नहीं है तो वह उस प्रकार के व्यवहार करने में सर्वथा अकिञ्चित्कर है। तब शुद्ध निर्दोष आहार के न मिलने पर वह उस प्रकार की आहारादिक सामग्री को न तो स्वयं खरीदता है, और न दूसरों से खरीद करवाता है, और खरीद करते हुए अन्य को न भला जानता है, अतः नवकोटि-विशुद्ध आहार की ही उसे गवेषणा करनी चाहिये, और उसके प्राप्त होने पर मात्रानुसार उसे ग्रहण कर अपने संयम की रक्षा करने में ही सावधान रहना चाहिये। इसी को प्रकट करते हुए सूत्रकार कहते हैं कि—

वह अनगार द्रव्यादिक के अभाव से क्रय विक्रय के व्यवहार में अकिञ्चन है, इसलिये आहारादिक को न स्वयं खरीदे और न दूसरों से उसे खरीदवावे, तथा इसे खरीदने वाले अन्य किसी की अनुमोदना भी न करे। इससे इस बात की पुष्टि की है कि—अनगार मन वचन काया से कृत, कारित एवं अनुमोदना द्वारा हननादि तीन, पचनादि तीन क्रयणादि तीन, एवं नवकोटि से विशुद्ध आहारादिक प्राप्त कर शरीर की पुष्टि के अभिप्राय से नहीं, किन्तु संयम की रक्षा के अभिप्राय से ही अंगारधूमादिदोषरहित हो उसका सेवन करे। सूत्र में कहे हुए क्रय विक्रय

द्रव्यादिक सामग्री नहीं तो ते ओ प्रकारने व्यवहार करवाभां सर्वथा अकिञ्चित्कर छे, भाटे शुद्ध निर्दोष आहारना न भणवाथी ते ओवा प्रकारनी आहारादिक सामग्रीने पोते नहीं भरीही शकता, अने भीज्जथी भरीहावी पणु शकता नहीं, अने भरीह करवावाणा भीज्जने लोको पणु जाणुता नहीं, भाटे नवकोटिविशुद्ध आहारनी ज तेणे गवेषणा करवी जेधं ओ, अने तेना प्राप्त थवाथी मात्रानुसार तेने ग्रहण करीने पोतानी संयमनी रक्षा करवाभां ज सावधान रहवुं जेधं ओ. तेने प्रकट करीने सूत्रकार कहे छे के—

ते अणुगार द्रव्यादिना अभावथी क्रय-विक्रयना व्यवहारभां अकिञ्चन छे, भाटे आहारादिकने पोते न भरीहे अने भीज्जथी भरीहावे नहि, तथा ते भरीहवावाणा भीज्ज कोधनी अनुमोदना पणु न करे. आथी आ वातनी पुष्टि करी छे के—अणुगार मन, वचन कायाथी कृत कारित अगर अनुमोदना द्वारा हननादि त्रणु, पचनादि त्रणु, क्रयणादि त्रणु. ओम नव कोटिथी विशुद्ध आहारादिक प्राप्त करी शरीरनी पुष्टिना अभिप्रायथी नहि पणु संयमनी रक्षाना अभिप्रायथी अंगारधूमादिदोषरहित थधंने तेनुं सेवन करे. सूत्रभां कहेला क्रय विक्रय पदथी उद्गम

પૂર્વોક્તવિશેષણવિશિષ્ટોઽનગારઃ કીદૃશો ભવતીત્યાહ—‘સે મિક્ષૂ’ ઇત્યાદિ।

મૂલમ—સે મિક્ષૂ કાલજ્ઞે વલજ્ઞે માયજ્ઞે રેયજ્ઞે રવણયજ્ઞે વિણયજ્ઞે સસમયજ્ઞે પરસમયજ્ઞે ભાવજ્ઞે પરિગ્ગ્રહં અમમાયમાણે કાલાણુટ્ટાઈ અપડિણ્ણે દુહઓ છેત્તા નિયાઈ ॥ સૂ. ૪ ॥

છાયા—સ મિક્ષુઃ કાલજ્ઞો વલજ્ઞો માયાજ્ઞઃ રેદજ્ઞઃ ધણકજ્ઞો વિનયજ્ઞઃ સ્વસમયજ્ઞઃ પરસમયજ્ઞો ભાવજ્ઞઃ પરિગ્રહમમમાયમાનઃ કાલાણુષ્ઠાયી, અપતિજ્ઞઃ, દ્વિધાતશ્ચિત્વા નિયાતિ ॥ સૂ. ૪ ॥

ટીકા—‘સ મિક્ષુ’-રિત્યાદિ। સઃ-પૂર્વોક્તઃ સમુત્થિતેત્યાદિમુનિગુણગણયુક્તો મિક્ષુઃ=ચારિત્રવાન્ કાલજ્ઞઃ-કાલં=પ્રતિલેખનાદિસમયં જાનાતીતિ કાલજ્ઞઃ।

અથવા કાલં=મિત્રાકાલં જાનાતીતિ કાલજ્ઞઃ, અકાલે મૈત્રાચરણેનાત્મનઃ ક્લેશાધિગમો ગ્રામનિન્દા ચ જાયતે, તતશ્ચ ભગવદાજ્ઞાવિરાધકત્વેન રેદપ્રકટનેન ચ ચારિત્રમાલિન્યં ભવત્યતોઽનુચિતકાલે મૈત્રાદિકં નાચરણીયમિત્યાદ્યભિજ્ઞ ઇત્યર્થઃ। યદ્વા કાલં=મુમિક્ષં દુર્મિક્ષં દિનપ્રમાણં રાત્રિપ્રમાણં વા જાનાતીતિ કાલજ્ઞઃ।

પદ સે ઉદ્ગમ દોષોં કા ગ્રહણ હોતા હૈ, ઉસસે ઉત્પાદન ઔર ઇષ્ણા દોષોં કા મી ગ્રહણ હો જાતા હૈ ॥ સૂ. ૩ ॥

इन पूर्वोक्त विशेषणों से युक्त अनगार कैसा होता है? इसका खुलासा करते हुए सूत्रकार कहते हैं—‘से मिक्षू’ इत्यादि।

वह चारित्रवान् अनगार कि जिसका वर्णन ‘समुद्रिण’ इस द्वितीय सूत्र में किया जा चुका है वह; कालज्ञ-प्रतिलेखनादि क्रियाओं के अवसर का ज्ञाना होता है। अथवा ‘कालज्ञ’-शब्द का अर्थ-काल का जानने वाला-ऐसा है। इससे यह बात सूत्रकार प्रकट करते हैं कि-साधु को भिक्षाचरण के काल में ही भिक्षा के लिये गमन करना चाहिये; क्योंकि अकाल में उसके निमित्त

દોષોનું ગ્રહણ થાય છે તેનાથી ઉત્પાદન અને ઔષણાદિ દોષોનો પણ ગ્રહણ થઈ જાય છે. (સૂ. ૩)

એવા પૂર્વોક્ત વિશેષણોથી યુક્ત અણગાર કેવા હોય છે? તેનો ખુલાસો કરતાં સૂત્રકાર કહે છે—‘સે મિક્ષૂ’ ઇત્યાદિ.

તે ચારિત્રવાન અણગાર કે જેનું વર્ણન ‘સમુદ્રિણ’ આ બીજા સૂત્રમાં કરવામાં આવેલ છે તે ‘કાલજ્ઞ’-‘પ્રતિલેખનાદિ ક્રિયાઓના અવસરના જ્ઞાતા’ હોય છે, અથવા ‘કાલજ્ઞ’ શબ્દનો અર્થ ‘કાળના જાણવાવાળા’ હોય છે. એથી આ વાત સૂત્રકાર પ્રગટ કરે છે કે-સાધુઓ ભિક્ષાચરણના કાલમાં જ ભિક્ષા માટે જવું જોઈએ,

‘વલજ્ઞઃ’ વલં=સ્વશક્તિં પરશક્તિં વા યો જાનાતિ સ વલજ્ઞઃ=સ્વ-પરવલ્યાભિજ્ઞઃ,  
 ‘માત્રાજ્ઞઃ’ માત્રાં જાનાતિ યઃ સ માત્રાજ્ઞઃ, યાવત્પ્રમાણાહારાદિગ્રહણેન ગૃહસ્થો ન  
 પુનરારમ્ભે પ્રવર્તતે । યદ્વા—સ્વસંયમયાત્રાનિર્વાહો યાવતાઽઽહારેણ ભવતિ, તાવન્મા-  
 ત્રાજ્ઞાનકુશલઙ્ગત્યર્થઃ । ‘સ્વેદજ્ઞઃ’ સ્વેદમ્=અભ્યાસં, સંસારપરિભ્રમણજન્યં શ્રમં વા

ક્રિયા ગયા ગમન એક તો અપને લિયે કલેશકારક હોતા હૈ, દૂસરે ઇસ  
 પ્રકાર કી પ્રવૃત્તિ સે ગામ મેં ઉસ સાધુ કી નિંદા બી હોતી હૈ । ઇસલિયે  
 આહાર લેને કે લિયે જો માર્ગ શાસ્ત્રાનુસાર વિહિત હૈ ઉસસે વિપરીત  
 પ્રવૃત્તિ કરને વાલે સંયમી-સાધુ કે ચારિત્ર મેં ભગવાન્ કી આજ્ઞા કા  
 વિરાધક હોને કી વજહ સે, ઓર અપને મેં સ્વેદ ઉત્પન્ન કરને કે નિમિત્ત  
 સે મલિનતા આતી હૈ, ઇસલિયે અકાલ મેં ભિક્ષાવૃત્તિ નહીં કરની ચાહિયે ।  
 ‘કાલજ્ઞ’ શબ્દ કા અર્થ યહ બી હોતા હૈ—જો સુભિક્ષ-દુર્ભિક્ષ, દિનપ્રમાણ  
 એવં રાત્રિ કે પ્રમાણ કો જાનતા હૈ ।

અપની શક્તિ એવં પરકી શક્તિ કો જો જાનતા હૈ વહ વલજ્ઞ હૈ ।  
 જિતને પ્રમાણ કા આહાર લેને સે ગૃહસ્થ ફિર દુવારા આરમ્ભ ન કરે,  
 અથવા જિતને આહાર કે ગ્રહણ સે અપની સંયમયાત્રા કા નિર્વાહ હો  
 સકતા હૈ, ઉતની હી માત્રા મેં આહાર લેના ચાહિયે । ઇસ પ્રકાર કી વિધિ  
 મેં જો કુશલ હોતા હૈ ઉસકા નામ માત્રાજ્ઞ હૈ ।

અભ્યાસ, અથવા સંસાર મેં પરિભ્રમણ સે ઉત્પન્ન હુએ કલેશ યા પટ્-

કારણ કે અકાળે તે નિમિત્તે થએલું ગમન એક તો પોતાને માટે કલેશકારક થાય  
 છે, બીજું આવા પ્રકારની પ્રવૃત્તિથી ગામમાં તે સાધુની નિંદા પણ થાય છે. માટે  
 આહાર લેવા માટે જે માર્ગ શાસ્ત્રાનુસાર વિહિત છે તેનાથી વિપરીત પ્રવૃત્તિ  
 કરવાવાળા સંયમી સાધુના ચારિત્રમાં ભગવાનની આજ્ઞાના વિરાધક હોવાના મતલબથી,  
 અને પોતાનામાં જેદ ઉત્પન્ન કરવાના નિમિત્તથી મલિનતા આવે છે માટે અકા-  
 લમાં ભિક્ષાવૃત્તિ કરવી જોઈએ નહિ.

કાળજ્ઞ શબ્દનો અર્થ એ પણ થાય છે—જે સુભિક્ષ-દુર્ભિક્ષ દિનપ્રમાણ  
 અને રાત્રિના પ્રમાણને જાણે છે.

પોતાની તેમજ બીજાની શક્તિને જે જાણે છે તે બલજ્ઞ છે, જેટલા પ્રમા-  
 ãણમાં આહાર લેવાથી ગૃહસ્થ ફરીથી બીજી વાર આરંભ ન કરે, અથવા જેટલા  
 આહારના ગ્રહણથી પોતાની સંયમયાત્રાનો નિર્વાહ થાય છે એટલી જ માત્રામાં  
 આહાર લેવો જોઈએ. આ પ્રકારની વિધિમાં જે કુશળ છે તેનું નામ માત્રાજ્ઞ છે.

અભ્યાસ અથવા સંસારમાં પરિભ્રમણથી ઉત્પન્ન થતાં કલેશ, અગર પટ્કાયિક

યો જાનાતિ સ ચેદજ્ઞઃ, યદ્વા-ચેદં=પણ્જીવનિકાયદુઃખં જાનાતીતિ ચેદજ્ઞઃ । યદ્વા-‘ ક્ષેત્રજ્ઞ ’ ઇતિ-ચ્છાયા, ક્ષેત્રમુત્તમકુલાદિરૂપં જાનાતિ યઃ સ ક્ષેત્રજ્ઞઃ । યદ્વા-ભૈક્ષાદિલાભક્ષેત્રપરિજ્ઞાતેત્યર્થઃ । ‘ ક્ષણકજ્ઞઃ ’ ક્ષણ એવ ક્ષણકઃ પ્રતિલેખન-ભૈક્ષાદિકર્તવ્યકાલસ્તં જાનાતીતિ ક્ષણકજ્ઞઃ=નમસ્કારપૌરુષ્યાદિદશવિધપ્રત્યાખ્યાના-વસરજ્ઞઃ । ‘ વિનયજ્ઞઃ ’ વિનયં દ્રવ્યક્ષેત્રકાલભાવપેક્ષયા ગુરુસમીપે યથોક્તપ્રતિ-પત્તિલક્ષણં જાનાતિ યઃ સ વિનયજ્ઞઃ । યદ્વા-વિનયજ્ઞઃ=અભ્યુત્થાનાદ્યભિવન્દ-નાઞ્જલિકરણાદિવિજ્ઞાતા । યદ્વા-ગુરુસમીપે ગર્વં ન કુર્યાન્ન દીનો ભવેત્, ન મિથો-કાયિક જીવોં કે દુઃખોં કા જો જ્ઞાતા હૈ ઉસકા નામ ચેદજ્ઞ હૈ । અથવા-“ ચેયન્ને ” ઇસકી સંસ્કૃત છાયા “ ક્ષેત્રજ્ઞઃ ” યહ ભી હોતી હૈ, જો ઉત્તમ કુલાદિકરૂપ ક્ષેત્ર કા જ્ઞાતા, અથવા ભિક્ષાદિક લાભ કે ક્ષેત્ર કો જો જાનતા હૈ વહ ક્ષેત્રજ્ઞ હૈ ।

પ્રતિલેખન એવં ભિક્ષા કરને યોગ્ય કાલ કા નામ ક્ષણ હૈ, ઇસકો જો જાનને વાલા હૈ ઉસકા નામ ક્ષણજ્ઞ હૈ । નમસ્કાર, પૌરુષ્યાદિ દશ પ્રકાર કે પ્રત્યાખ્યાન કે અવસર કો જાનના યહ ઇસકા ફલિતાર્થ હૈ । દ્રવ્ય, ક્ષેત્ર, કાલ ઓર ભાવ કો અપેક્ષા સે ગુરુ કા આદર સત્કાર કરના જો જાનતા હૈ ઉસકા નામ વિનયજ્ઞ હૈ । ગુરુ જિસ સમય અપની તરફ આવેં યા ગ્વહે હોં ઉસ સમય ચડે હો જાના, નમસ્કાર કરના, હાથ જોડના આદિ ભી વિનય હૈ, ઇસ પ્રકાર કે વ્યવહાર કો જાનને વાલા ભી વિનયજ્ઞ કહલાતા હૈ । અથવા-ગુરુ મહારાજ કે સમીપ અહંકાર ન કરના, દીનતા જાહિર નહીં કરની, ન ઉનકી ગુપ્ત વાત કિસી કો કહની, ઇત્યાદિરૂપ ભી

જીવેના હુઃખોનો જે જ્ઞાતા છે તેનું નામ ચેદજ્ઞ છે. અથવા “ ચેયન્ને ” તેની સંસ્કૃત છાયા ‘ ક્ષેત્રજ્ઞઃ ’ એ પણ થાય છે. જે ઉત્તમકુલાદિરૂપ ક્ષેત્રનો જ્ઞાતા, અથવા ભિક્ષાદિક લાભના ક્ષેત્રનો જે જાણકાર છે તે ક્ષેત્રજ્ઞ છે.

પ્રતિલેખન અને ભિક્ષા કરવાયોગ્ય કાલનું નામ ક્ષણ છે, તેના જે જાણકાર છે તેનું નામ ક્ષણજ્ઞ છે. નમસ્કાર પૌરુષ્યાદિ દશ પ્રકારના પ્રત્યાખ્યાનના અવસરને જાણવો તે તેનું ફલિતાર્થ છે. દ્રવ્ય, ક્ષેત્ર, કાળ અને ભાવની અપેક્ષાથી ગુરુનો આદર સત્કાર કરવો જે જાણે છે તેનું નામ વિનયજ્ઞ છે, ગુરુ જે વખતે પોતાની તરફ આવે અગર ઉભા હોય તે વખતે ઉભા થવું, નમસ્કાર કરવો, હાથ જોડવા આદિ પણ વિનય છે. આ પ્રકારના વ્યવહારને જાણવાવાળા પણ વિનયજ્ઞ કહેવાય છે. અથવા ગુરુ મહારાજની સમીપ અહંકાર ન કરવો, દીનતા જાહેર ન કરવી, તેની કોઈ ગુપ્ત વાત ખીજાને ન કહેવી, ઇત્યાદિરૂપ પણ વિનય છે. જે આ પ્રકારના



રહસ્યાદિ બ્રુવીતેત્યાદિરૂપો વિનયસ્તદભિજ્ઞ इत्यर्थः । ‘स्वसमयज्ञः’ स्वं=निजं समयं=सिद्धान्तं जानाति यः स स्वसमयज्ञः, एवं परसमयज्ञः-अन्यदीयसिद्धान्तज्ञाननिपुणः, ‘स्वसिद्धान्ते तत्परता परसिद्धान्ते चोपेक्षा कार्या’ इत्याद्यभिज्ञः, यथा परसमये स्नानादेस्वश्यकर्तव्यत्वेन प्रतिपादितेऽपि स्वसमये तस्य मददर्पकरत्वेन मुनिना तत्परित्याज्यमेवेति यो वेत्तीत्यर्थः । उक्तञ्च—

स्नानं मददर्पकरं, कामाङ्गं प्रथमं स्मृतम् ।

तस्मात्કામં પરિત્યજ્ય, નૈવ સ્નાન્તિ દમે રતાઃ । ૧ । इति

વિનય હૈ । જો હસ પ્રકાર કે વિનય કા જ્ઞાતા હોતા હૈ ઉસકા નામ ધી વિનયજ્ઞ હૈ । અપને સિદ્ધાન્ત ઓર પર કે સિદ્ધાન્ત કે જ્ઞાતા કો સ્વસમયજ્ઞ ંવં પરસમયજ્ઞ કહતે હૈ । જો સ્વસિદ્ધાન્ત કા જ્ઞાતા હોગા ઉસકે હૃદય મેં પરસિદ્ધાન્ત કે પ્રતિ ઉપેક્ષાભાવ રહેગા-દ્વેષ ઉત્પન્ન નહીં હોગા । સ્વસિદ્ધાન્ત કે બોધ સે યુક્ત સાધુ કે હૃદય મેં પરસિદ્ધાન્તપ્રતિપાદિત તત્ત્વોં કે પ્રતિ ન રાગ હોગા ઓર ન દ્વેષ હી-ઉનકે પ્રતિ ઉસકી સદા માધ્યસ્થ્ય ભાવના હી રહેગી । સમકિતી કે લિયે પરસિદ્ધાન્ત કે તત્ત્વોં કા બોધ હી અપને સિદ્ધાન્ત મેં પ્રતિપ્રાદિત તત્ત્વોં કે સ્વરૂપ કે પ્રતિ અધિક શ્રદ્ધા કા કારણ વનતા હૈ । અન્ય સિદ્ધાન્તકારોં ને સાધુ અવસ્થા મેં ધી સ્નાન વગેરહ કરના કર્તવ્ય બતલાયા હૈ, તવ જૈનસિદ્ધાન્ત મેં હસે ઉસ અવસ્થા મેં મદ ઓર દર્પકારી માના ગયા હૈ, હસલિયે હી સાધુ હસ પ્રવૃત્તિ સે સદા દૂર રહતે હૈ । કહા ધી હૈ—

“સ્નાનં મદર્પકરં, કામાઙ્ગં પ્રથમં સ્મૃતમ્ ।

તસ્માત્કામં પરિત્યજ્ય, નૈવ સ્નાન્તિ દમે રતાઃ ॥ ૧ ॥”

વિનયના જ્ઞાતા હોય છે તેનું નામ પણ વિનયજ્ઞ છે. પોતાના સિદ્ધાન્તનો અને ધીજ્ઞના સિદ્ધાન્તનો જે જ્ઞાતા છે તેને સ્વસમયજ્ઞ અને પરસમયજ્ઞ કહે છે. જે સ્વસિદ્ધાન્તના જ્ઞાતા હશે તેના હૃદયમાં પરસિદ્ધાન્ત પ્રતિ ઉપેક્ષાભાવ રહેશે-દ્વેષ ઉત્પન્ન થશે નહિ. સ્વસિદ્ધાન્તના બોધથી યુક્ત સાધુના હૃદયમાં પરસિદ્ધાન્તપ્રતિપાદિત તત્ત્વો પ્રતિ રાગ અને દ્વેષ થતો નથી. તેના પ્રતિ તેની સદા મધ્યસ્થ ભાવનાજ રહેશે, સમકિતી માટે પરસિદ્ધાન્તના તત્ત્વોનો બોધ પોતાના સિદ્ધાન્તમાં પ્રતિપ્રદિત તત્ત્વોના સ્વરૂપ પ્રતિ અધિક શ્રદ્ધાનું કારણ બને છે. અન્ય સિદ્ધાન્તકારોએ સાધુ અવસ્થામાં પણ સ્નાન વિગેરે કરવું, કર્તવ્ય બતાવ્યું છે, ત્યારે જૈનસિદ્ધાન્તમાં તેને તે અવસ્થામાં મદ અને દર્પકારી માનેલ છે. માટે સાધુ આવી પ્રવૃત્તિથી સદા દૂર રહે છે. કહ્યું પણ છે—



પરસમયનિરસનત્રીતરાગસમયસ્થાપનચતુર ઇતિ યાવત્ । ‘ભાવજ્ઞઃ’ ભાવમન્તઃ-  
કરણાશયં સ્ત્રીયં પરકીયં વા યો જાનાતિ સ ભાવજ્ઞઃ=સ્વપરાશયવેત્તા, એવં ‘પરિગ્રહં’  
પરિગ્રહ્યતે યઃ સ પરિગ્રહઃ, યાવદાહારવસ્ત્રપાત્રાદિગ્રહણેન સંયમમાત્રા નિર્વહતિ,  
તતોઽધિકસ્યૈષણીયસ્યાપિ મૂર્છાભાવેન ગ્રહણં પરિગ્રહસ્તમ્ અમમાયમાનઃ=અમમી-  
કુર્વન્, તં મનસાઽપ્યનાદદાન ઇત્યર્થઃ ।

કિન્ચ-કાલાનુષ્ઠાયી=શાસ્ત્રવિહિતકાલે કર્તવ્યકરણશીલઃ । પૂર્વે ‘કાલજ્ઞઃ’ ઇતિ  
કાલં જાનાતીતિ જ્ઞપરિજ્ઞયા પ્રોક્તમ્, અત્ર ચાવસરેઽનુષ્ઠાનવિધાયીતિ આસેવન

અર્થ સ્પષ્ટ છે । ઇસ પ્રકાર કા સાધુ પરસિદ્ધાન્ત કા નિરસન ઔર  
સ્વસિદ્ધાન્ત કા સંસ્થાપન કરને મેં વડા ચતુર રહતા છે । અપને ઔર પર  
કે માનસિક અભિપ્રાય કે જ્ઞાતા કા નામ ભાવજ્ઞ છે । જિતને આહાર,  
વસ્ત્ર, ઔર પાત્રાદિકોં સે સંયમયાત્રા નિભ સકતી છે ઉસસે અધિક કા  
મૂર્છાભાવ સે ગ્રહણ કરના પરિગ્રહ છે । ઇસ પરિગ્રહ કા જો સર્વથા  
ત્યાગી હોતા છે-મન સે ભી ઉસે ગ્રહણ કરને કી યાહના નહીં કરતા છે  
વહ પરિગ્રહ કી મમતા નહીં કરને વાલા કહલાતા છે । જિસ પ્રતિલેખનાદિ  
ક્રિયા કે કરને કા જો સમય શાસ્ત્ર મેં નિયત ક્રિયા ગયા છે ઉસી કે  
અનુસાર અપને આવશ્યક કાર્યોં કા કરને વાલા સાધુ કાલાનુષ્ઠાયી કહલાતા  
છે । કાલજ્ઞ મેં ઔર કાલાનુષ્ઠાયી મેં યહી ભેદ છે કિ-કાલજ્ઞ તો ભિક્ષાદિ  
આચરણ કે સમય કા જ્ઞાતા હોતા છે, ઔર કાલાનુષ્ઠાયી ઉસ ૨ કાલ મેં  
અપને કર્તવ્ય કર્મોં કા કરને વાલા હોતા છે । જ્ઞ-પરિજ્ઞા કી અપેક્ષા કાલજ્ઞ

“સ્નાનં મદદર્પકરં, કામાઙ્ગં પ્રથમં સ્મૃતમ્ ।

તસ્માત્કામં પરિત્યજ્ય, નૈવ સ્નાન્તિ દમે રતાઃ” ॥ ૧ ॥

અર્થ સ્પષ્ટ છે આ પ્રકારનો સાધુ પરસિદ્ધાન્તનું નિરસન અને સ્વસિદ્ધાન્તનું  
સંસ્થાપન કરવામાં ઘણા ચતુર રહે છે. પોતાના અને બીજાના માનસિક અભિ-  
પ્રાયના જ્ઞાતાનું નામ ભાવજ્ઞ છે. જેટલો આહાર, વસ્ત્ર અને પાત્રાદિકોથી સંયમ-  
યાત્રા નહીં શકે છે તેનાથી અધિક મૂર્છાભાવથી ગ્રહણ કરવું તે પરિગ્રહ છે.  
આ પરિગ્રહના જે સર્વથા ત્યાગી હોય છે, મનથી પણ તે ગ્રહણ કરવાની યાહના  
નથી કરતા તે પરિગ્રહની મમતા નહિ કરવાવાળા કહેવાય છે. જે પ્રતિલેખનાદિ  
ક્રિયા કરવાનો સમય શાસ્ત્રમાં નિયત કરેલ છે તે અનુસાર પોતાના આવશ્યક કાર્યોને  
કરવાવાળા સાધુ કાલાનુષ્ઠાયી કહેવાય છે. કાલજ્ઞમાં અને કાલાનુષ્ઠાયીમાં એ ભેદ  
છે કે-કાલજ્ઞ તો ભિક્ષાદિ આચરણના સમયના જ્ઞાતા હોય છે, અને કાલાનુષ્ઠાયી  
તે તે કાલમાં પોતાના કર્તવ્ય કર્મોના કરવાવાળા હોય છે. જ્ઞ-પરિજ્ઞાની અપેક્ષા

परिज्ञया प्रतिपादितम् । ‘अपि चाप्रतिज्ञः’ अविद्यमाना प्रतिज्ञा यस्य सोऽप्रतिज्ञः प्रतिज्ञा च कषायप्राबल्येन भवति । यथा क्रोधाविर्भावान्नास्तिकमतानुयायिना पालकब्राह्मणेन स्कन्दकाचार्यस्य पञ्चशतशिष्यान् तैलयन्त्रे निष्पीड्यमानानवलोक्य स्कन्दकऋषिणा सकलराजधान्या विनाशप्रतिज्ञा कृता । मानोदयाद्बाहुवलिना ‘यज्ज्येष्ठोऽहं पूर्वं प्रव्रजितानष्टनवतिसंख्यकान् कनीयसः स्वभ्रातृन् न वन्दे’ इति प्रतिज्ञा व्यधायि । मायोदयान्मल्लीस्वामिजीवेन पूर्वभवेऽन्यमुनीन् प्रतार्य प्रत्याख्यानप्रतिज्ञाऽकारि । लोभोदयात्सुभूमचक्रवर्तिना सप्तमखण्डसाधनप्रतिज्ञा विहिता । एवमादि-

और आसेवन-परिज्ञा की अपेक्षा कालानुष्ठायी समझना चाहिये । “अप्रतिज्ञः” जिसके प्रतिज्ञा विद्यमान नहीं है उसका नाम अप्रतिज्ञ है । प्रतिज्ञा, कषाय की प्रबलता से होती है, जैसे क्रोध के आवेश से नास्तिकमतानुयायी पालक ब्राह्मण ने स्कन्दकाचार्य के पांच सौ शिष्यों को तैल के यन्त्र में पेल दिया था । इस बात को देखकर स्कन्दकऋषि ने समस्त राजधानी को नष्ट करने की प्रतिज्ञा की थी । मानकषाय के उदय से बाहुवली महाराज ने दीक्षित अपने से छोटे (९९) निन्यानवे भाइयों को इस ख्याल से वन्दन नहीं किया था कि ‘मैं इनसे बड़ा हूँ-और ये मुझ से छोटे हैं’ । मायाकषाय के उदय से मल्ली स्वामी के जीवने पूर्वभव में अन्य मुनियों के साथ माया करके प्रत्याख्यान की प्रतिज्ञा की थी । लोभ-कषाय के उदय से सुभूमचक्रवर्ती ने सप्तम खंड को साधने की प्रतिज्ञा की, इत्यादि । इस प्रकार की कषायोदयजनित प्रतिज्ञा मुनियों को नहीं करनी चाहिये, इसीलिये यहां ‘अप्रतिज्ञः’ यह विशेषण दिया है । अथवा

કાલજ્ઞ અને આસેવન-પરિજ્ઞાની અપેક્ષા કાલાનુષ્ઠાયી સમજવું જોઈએ. “અપ્રતિજ્ઞ” જેની પ્રતિજ્ઞા વિદ્યમાન નથી તેનું નામ અપ્રતિજ્ઞ છે. પ્રતિજ્ઞા, કષાયની પ્રબલતાથી થાય છે. જેમ ક્રોધના આવેશથી નાસ્તિકમતાનુયાયી પાલક બ્રાહ્મણ સ્કંદકાચાર્યના પાંચસો શિષ્યોને તેલના યત્રમાં પિડ્યા હતા, તે વાતને દેખીને સ્કંદકઋષિએ સમસ્ત રાજધાનીને નષ્ટ કરવાની પ્રતિજ્ઞા કરી હતી. માન-કષાયના ઉદયથી બાહુબલિ મહારાજે દીક્ષિત પોતાનાથી નાના (૯૯) નવાળું ભાઈઓને તેવા ખ્યાલથી વંદન ન કર્યું કે “હું તેમનાથી મોટો છું” અને એ મારાથી નાના છે.” માયાકષાયના ઉદયથી મલ્લી સ્વામીના જીવે પૂર્વ ભવમાં અન્ય મુનિઓ સાથે માયા કરીને પ્રત્યાખ્યાન પ્રતિજ્ઞા કરી હતી. લોભકષાયના ઉદયથી સુભૂમચક્રવર્તીએ સાત ખંડ સાધવાની પ્રતિજ્ઞા કરી. ઇત્યાદિ. આવા પ્રકારની કષાયોદયજનિત પ્રતિજ્ઞા મુનિઓએ કરવી જોઈએ નહિ, માટે અહીં આ

પ્રતિજ્ઞા મુનિના ન કાર્યેતિ તાત્પર્યમ્ । યદ્વા-ભૈક્ષાચરણાદૌ ‘મમૈવાહારાદિકં સ્યા’-  
 દિત્યાદિપ્રતિજ્ઞા ન સાધીયસી । અથવા-યથા સ્યાદ્વાદસિદ્ધાન્તે ‘જ્ઞાનક્રિયાભ્યાં  
 મોક્ષઃ’ ઇત્યસ્તિ તત્ર એકતરેણૈવ તદધિગમ ઇત્યાદિપ્રતિજ્ઞા ન વિધેયેત્યર્થઃ, પશ્ચ-  
 મહાવ્રતાતિરિક્તે કસ્મિંશ્ચિદપિ વિષયે પ્રતિજ્ઞા ન કર્તવ્યા મુનિના । યદિવા અપ્ર-  
 તિજ્ઞઃ=અનિદાનઃ માયાશલ્યાદિરહિત ઇત્યર્થઃ । ઈદ્દશોઽનગારઃ કિં કૃત્વા વિહરતી-  
 ત્યાહ—‘દ્વિધાતઃ’ ઇત્યાદિ, દ્વિધાતઃ=ઉભૌ રાગદ્વેષાવિત્યર્થઃ છિત્ત્વા=વ્યપનીય  
 નિયાતિ=નિ=નિશ્ચયેન યાતિ=મોક્ષમાર્ગં પ્રાપ્નોતિ, પૂર્વગુણસમ્પન્નોઽપિ રાગવાન્  
 દ્વેષવાંશ્ચ ન મોક્ષં લભત ઇતિ ભાવઃ ।

ભિક્ષા કે સમય મેં ‘મુઝે હી આહારાદિક મિલે’ એસી પ્રતિજ્ઞા નહીં  
 કરની चाहिये, क्यों कि मुनि के लिये इस प्रकार की प्रतिज्ञा करना उचित  
 नहीं है । ज्ञान और क्रिया इन दोनों से मुक्ति का लाभ स्याद्वादसिद्धान्त  
 में प्रतिपादित किया गया है, परन्तु इस प्रकार की प्रतिज्ञा करना कि-  
 ‘सिर्फ ज्ञानमात्र से या क्रियामात्र से ही मुक्ति होती है’ उचित नहीं है ।  
 मुनियों को पंचमहाव्रतों के आराधन करने के सिवाय अन्य किसी भी  
 विषय में प्रतिज्ञा नहीं करनी चाहिये ।

अथवा “अप्रतिज्ञः” इस शब्द का अर्थ—‘मायादि तीन शक्तियों रहित’  
 होता है । अनगारों का सर्व संयम शल्यत्रय से रहित होकर ही निर्मल हो  
 सकता है । इन पूर्वोक्तविशेषणविशिष्ट अनगार ही राग और द्वेषों का  
 उन्मूलन कर “नियाति” निश्चय से मोक्ष के मार्ग को प्राप्त करता है ।  
 रागद्वेष के उन्मूलन के अभाव में इन पूर्वोक्तगुणसम्पन्न भी अनगार

“अप्रतिज्ञ.” એ વિશેષણ આપેલ છે. અથવા—ભિક્ષાસમયમાં ‘મનેજ  
 આહારાદિક મળે’ એવી પ્રતિજ્ઞા કરવી ભેદ એ નહિ, કારણ કે મુનિ માટે આવા  
 પ્રકારની પ્રતિજ્ઞા કરવી ઉચિત નથી. જ્ઞાન અને ક્રિયા આ બન્નેથી મુક્તિનો  
 લાભ સ્યાદ્વાદસિદ્ધાન્તમાં પ્રતિપાદિત કરેલ છે, પરંતુ એવા પ્રકારની પ્રતિજ્ઞા  
 કરવી કે ‘ફક્ત જ્ઞાનમાત્રથી અગર ક્રિયામાત્રથી જ મુક્તિ થાય છે’ તે ઉચિત  
 નથી. મુનિઓએ પંચ મહાવ્રતોનું આરાધન કરવા સિવાય બીજા કોઈ પણ વિષયમાં  
 પ્રતિજ્ઞા નહિ કરવી ભેદ એ.

अथवा “अप्रतिज्ञः” आ शब्दનો અર્થ ‘માયાદિ ત્રણ શક્તિઓથી રહિત’  
 થાય છે. અણુગારોનો સર્વ સંયમ શલ્યત્રયથી રહિત બનીને જ નિર્મળ  
 થઈ શકે છે. આ પૂર્વોક્તવિશેષણવિશિષ્ટ અણુગાર જ રાગ અને દ્વેષનું ઉન્મૂલન કરી  
 “નિયાતિ” નિશ્ચયથી મોક્ષના માર્ગને પ્રાપ્ત કરે છે. રાગ દ્વેષના ઉન્મૂલનના

નનુ શાસ્ત્રે નાનાવિધાભિગ્રહરૂપા પ્રતિજ્ઞાઽભિહિતાઽત્ર તુ ‘ મુનિરપ્રતિજ્ઞો ભવે ’-  
દિતિ કથિતં તત્કથમ્ ? इत्यत्राह—द्विधेति, अत्र पक्षे द्विधेतिच्छाया, द्विधा=  
द्विप्रकारेण रागेण द्वेषेण च प्रतिज्ञां छित्त्वा=अकृत्वा नियाति=नियतं याति=संयमे  
विहरति, रागद्वेषवशेन मुनिरनेषणीयमपि गृह्णाति भुङ्क्ते चेति रागद्वेषवती प्रतिज्ञा  
मुनिना न विधेयेति भावः ॥ सू० ४ ॥

આચારવિશેષં પુનરપિ દર્શયતિ—‘ વત્થં ’ इत्यादि ।

मूलम्—वत्थं पङ्क्तिगहं कंबलं पायपुच्छणं उग्गहं च कडासनं  
एएसु चेव जाएज्जा ॥ सू० ५ ॥

छाया—वस्त्रं पतद्ग्रहं कम्बलं पादप्रोच्छनमवग्रहं च कटासनमेतेषु चैव  
याचयेत् ॥ सू० ५ ॥

मुक्ति के लाभ से वंचित माना गया है ।

પ્રશ્ન—શાસ્ત્ર મેં અનેક પ્રકાર કી અભિગ્રહરૂપ પ્રતિજ્ઞાઓં કા કથન  
કિયા ગયા હૈ, ફિર યહાં પર “ મુનિરપ્રતિજ્ઞો ભવેત્ ” મુનિ કો પ્રતિજ્ઞા-  
સંપન્ન નહીં હોના ચાહિયે, યહ કૈસે કહા ગયા હૈ ? ।

ઉત્તર—રાગ ઓર દ્વેષ સે જો પ્રતિજ્ઞા કી જાતી હૈ વહ સંયમી મુનિ  
કે લિયે ઉચિત નહીં હૈ । તમી વહ અપને સંયમ માર્ગ મેં વિચર સકતા  
હૈ । રાગ ઓર દ્વેષ કે વશ હોકર કી ગઈ પ્રતિજ્ઞા સે મુનિ અનેષણીય  
મી આહારાદિક કો ગ્રહણ કર લેતા હૈ, ઇસલિયે રાગદ્વેષવાલી પ્રતિ-  
જ્ઞાઓં કે કરને કા નિષેધ કિયા ગયા હૈ । યહ ભાવ “ દુહઓ હેત્તા નિયાઈ ”  
ઇન પદોં સે પ્રકટ હોતા હૈ અતઃ ઇસ પ્રકાર કી પ્રતિજ્ઞા મુનિજનોં કો  
નહીં કરની ચાહિયે ॥ સૂ० ૪ ॥

અભાવમાં આ પૂર્વોક્તગુણસંપન્ન પણ અણુગાર મુક્તિના લાભથી વંચિત માનેલ છે.

પ્રશ્ન—શાસ્ત્રમાં અનેક પ્રકારની અભિગ્રહરૂપ પ્રતિજ્ઞાનું કથન કરેલ છે,  
વળી આ ઠેકાણે “ મુનિરપ્રતિજ્ઞો ભવેત્ ” મુનિએ પ્રતિજ્ઞાસંપન્ન નહિ બનવું  
જોઈએ, એ કેમ કહેવામાં આવેલ છે ?

ઉત્તર—રાગ અને દ્વેષથી જે પ્રતિજ્ઞા કરવામાં આવે છે, સંયમી મુનિએ  
તેવી પ્રતિજ્ઞા નહિ કરવી જોઈએ. તે જ તે પોતાના સંયમ માર્ગમાં વિચરી શકે  
છે. રાગ અને દ્વેષથી કરેલી પ્રતિજ્ઞાથી મુનિ અનેષણીય પણ આહારાદિક ગ્રહણ  
કરી લે છે. માટે રાગ દ્વેષવાળી પ્રતિજ્ઞાઓ કરવાનો નિષેધ કરેલ છે આ ભાવ  
“ દુહઓ હેત્તા નિયાઈ ” એ પદોથી પ્રગટ થાય છે. માટે આવા પ્રકારની પ્રતિજ્ઞા  
મુનિજનોએ નહિ કરવી જોઈએ. ॥ સૂ० ૪ ॥

ટીકા—‘વસ્ત્ર’-મિત્યાદિ । મુનિર્યથાઽઽહારં યાચયેત્ ગૃહસ્થેભ્યસ્તથૈવ એતેષુ ચૈવ =ગૃહપતિષ્વેવ વસ્ત્રં=વસનં પતદ્ગ્રહં=પાત્રં વસ્ત્રગ્રહણેન વસ્ત્રૌષણા પતદ્ગ્રહગ્રહણેન ચ પાત્રૌષણા ચ સઙ્ગૃહીતા, કમ્બલં=રજ્જીકાદિકમ્, એતેનોર્ણાવસ્ત્રગ્રહણમ્, પાદપ્રોઞ્છનં=રજોપહરણમ્, અવગ્રહમ્=અવગૃહ્યતે યઃ સોઽવગ્રહો વસતેરાજ્ઞા, શક્રેન્દ્રરાજગૃહસ્થ-શય્યાતરસાધર્મિકભેદેનાવગ્રહઃ પશ્ચથા, એતેનાવગ્રહપ્રતિજ્ઞાઃ સર્વાઃ સઙ્ગૃહીતાઃ, તમ-વગ્રહમ્, અપિ ચ કટાસનં કટશ્ચ=સંસ્તારશ્ચ આસનં ચ=પીઠફલકાદિકં ચાનયોઃ સમાહારદ્વન્દ્વસ્તત્કટાસનમ્, આસ્યતેઽત્રેત્યાસનં શય્યા વા, સંસ્તારઃ સાર્દ્ધહસ્તદ્વય-પ્રમાણઃ, શય્યા ચ શરીરપ્રમાણા, એતત્સર્વં યાચયેત્=ગવેપયેત્, એપણીયં વસ્ત્રાદિકં યાચયેત્ નાનેપણીયમ્, ઇતિ ॥ સૂ. ૫ ॥

સંયમી મુનિ કે વિશેષ આચાર કો પુનરપિ પ્રદર્શિત કરતે હુણ સૂત્ર-કાર કહતે હૈ—‘વત્થં’ ઇત્યાદિ ।

અનગાર જિસ પ્રકાર ગૃહસ્થોં સે આહાર કી યાચના કરતા હૈ ઉસી પ્રકાર ઉનસે વસ્ત્ર, પાત્ર, કંબલ, રજોહરણ, રહને કે લિયે વસતિ-સ્થાન કી ઔર કટાસન કી મી યાચના કરે । સૂત્ર મેં વસ્ત્ર કે ગ્રહણ સે વસ્ત્રૌષણા ઔર પાત્ર કે ગ્રહણ સે પાત્રૌષણા કા ગ્રહણ કિયા ગયા હૈ । કંબલ સે ઝની કંબલ જાનના ચાહિયે, રેશમી આદિ કમ્બલ નહીં । અવગ્રહ શબ્દ કા અર્થ-વસતિ-સ્થાન મેં ઠહરને કી આજ્ઞા । અવગ્રહ, શક્રેન્દ્ર, રાજા, ગૃહસ્થ, શય્યાતર, ઔર સાધર્મિક કે ભેદ સે ૫ પ્રકાર કા હૈ । અવગ્રહ (આજ્ઞા) શબ્દ સે અવગ્રહસમ્બન્ધી સમસ્ત પ્રતિજ્ઞાઓં કા ગ્રહણ હુઆ હૈ । કટ સે સંસ્તારક એવં આસન સે પીઠફલકાદિ જાનના ચાહિયે । આસન સે અપને શરીરપ્રમાણ શય્યા, તથા સંસ્તાર સે (૨૧) ઢાઈ હાથકા

સંયમી મુનિના વિશેષ આચારને પુનરપિ પ્રદર્શિત કરતાં સૂત્રકાર કહે છે—‘વત્થં’ ઇત્યાદિ.

અહુગાર જેવી રીતે ગૃહસ્થોથી આહારની યાચના કરે છે તે પ્રકારે તેનાથી વસ્ત્ર, પાત્ર, કંબલ, રજોહરણ, રહેવાને મકાનની અને કટાસનની પણ યાચના કરે. સૂત્રમાં વસ્ત્રના અહુણથી વસ્ત્રૌષણા અને પાત્રના અહુણથી પાત્રૌષણાનું અહુણ કહેવાય છે. કંબલથી ઉનની કંબલ બાણવી બેઠએ, રેશમી આદિ કંબલ નહિ અવગ્રહ શબ્દનો અર્થ-વસતિ-સ્થાનમાં રહેવાની આજ્ઞા. અવગ્રહ-શક્રેન્દ્ર, રાજા, ગૃહસ્થ, શય્યાતર, અને સાધર્મિઓના બેઠથી ૫ પ્રકારના છે. અવગ્રહ (આજ્ઞા) શબ્દથી અવગ્રહસંબંધી સમસ્ત પ્રતિજ્ઞાઓનું અહુણ છે. કટથી સંસ્તારક અને આસનથી પીઠ-ફલકાદિ બાણવું બેઠએ. આસનથી પોતાના શરીર પ્રમાણ શય્યા, તથા સંસ્તારથી અઢી હાથનું બિંધાનું-બિસ્તર સમજવો

મુનિર્માત્રયૈવાહારાદિકં ગૃહીયાત્, લાભાભાદૌ ચ મધ્યસ્થતામવલમ્બેતેતિ દર્શયતિ—‘લઘ્વે’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્—લઘ્વે આહારે અણગારો માયં જાણિજ્ઞા સે જહેયં ભગવયા પવેદ્યં લાભુત્તિ ન મજ્જિજ્ઞા, અલાભુત્તિ ન સોદ્ધિજ્ઞા વહુંપિ લઘું ન નિહે પરિગ્ગહાઓ અપ્પાણં અવસક્કિજ્ઞા અન્નહા ણ પાસણ પરિહરિજ્ઞા ॥ સૂ૦ ૬ ॥

છાયા—લઘ્વે આહારે અણગારો માત્રાં જાનીયાત્, તદ્યથેદં ભગવતા પ્રવેદિતમ્, લાભ ઇતિ ન માઘેત, અલાભ ઇતિ ન શોચેત, વહ્વપિ લઘ્વ્યા ન સ્નિહ્યાત્, પરિગ્રહા-દાત્માનમવષ્ણકેત્, અન્યથાનપશ્યકઃ પરિહરેત્ ॥ સૂ૦ ૬ ॥

ટીકા—‘લઘ્વે’ ઇત્યાદિ । અણગારઃ=મુનિઃ, લઘ્વે=સમ્પ્રાપ્તે આહારે ઉપલક્ષ-ણાદન્યસ્મિન્નપિ વસ્ત્રપાત્રશય્યાસંસ્તારકાદાવધિગતે સતિ ‘માત્રા’ યાવદ્ગ્રહણેન વિછૌના-વિસ્તર સમજ્ઞનાં ચાહિયે । અણગાર ઇન સમસ્ત એષણીય વસ્તુઓં કી હી ગૃહસ્થોં સે યાચના કરે, અણેષણીયોં કી નહીં ॥ સૂ૦ ૫ ॥

અણગાર માત્રાપ્રમાણ હી આહારાદિકોં કો લેવે । ઉંકે લાભ ઓર અલાભ મેં મધ્યસ્થ ભાવ રહે, ઇસ વાત કો સૂત્રકાર કહેતે હૈં—‘લઘ્વે આહારે’ ઇત્યાદિ ।

ઇસ સૂત્ર મેં ‘આહાર’ યહ શબ્દ ઉપલક્ષણ હૈ, ઇસસે વસ્ત્ર, પાત્ર, શય્યા, સંસ્તારક આદિ કા ભી ગ્રહણ હો જાતા હૈ । આહાર એવં વસ્ત્રા-દિક વસ્તુઓં કો ગૃહસ્થ કે પાસ ઉતની હી માત્રા મેં વોરના ચાહિયે કિ જિસસે વોરાને વાલે ગૃહસ્થ કો દુવારા આરંભ નહીં કરના પડે । તથા ઇતની હી લેની ચાહિયે કિ જિનકે લેને સે અપની સંયમયાત્રા કા

જોઈ એ. અણગાર આ સમસ્ત એષણીય વસ્તુઓની ગૃહસ્થોથી યાચના કરે, અણેષણીયોની નહિ. ॥ સૂ૦ ૫ ॥

અણગાર માત્રાપ્રમાણથી આહારાદિ લે, તેના લાભ-અલાભમાં મધ્યસ્થ ભાવ રાખે, આ વાતને સૂત્રકાર કહે છે—લઘ્વે આહારે ઇત્યાદિ.

આ સૂત્રમાં ‘આહાર’ આ શબ્દ ઉપલક્ષણ છે. તેનાથી વસ્ત્ર, પાત્ર, શય્યા, સંસ્તારક આદિનું ગ્રહણ થાય છે. આહાર અને વસ્ત્રાદિક વસ્તુઓને ગૃહસ્થોને પાસેથી એટલી માત્રામાં લેવી જોઈએ કે જેનાથી દેવાવાળા ગૃહસ્થને ફરીથી ખીજ વાર આરંભ કરવો ન પડે, તથા એટલી જ માત્રા લેવી જોઈએ કે જે લેવાથી પોતાની સંયમયાત્રાનું પાલન થઈ શકે, અર્થાત્ જે સંયમયાત્રાને નિર્વાહ



ગૃહપતિર્ન પુનરાસ્મ્યે પ્રવર્તેત, યાવતા ચાત્મનઃ સંયમયાત્રાનિર્વાહો ભવતિ, યથા ચ પરિષ્ઠાપનીયં ન ભવેત્ તાવતી માત્રા, તાં જાનીયાત્=વુદ્ધ્યેત માત્રાતોઽધિકગ્રહણે સંયતમર્યાદાસ્વલ્લનાત્ । એતત્સર્વં 'જમિણં વિરૂવરૂવેદિં' ઇત્યુદ્દેશસ્યાદિસમૂત્રમારમ્બ્યૈ-તાવત્પર્યન્તં ન મયા સ્વવુદ્ધ્યા પ્રોક્તમિતિ દર્શયતિ—'તદ્યથેત્યાદિ । તદ્યથા—ઇદમ્-ઉદ્દેશારમ્ભતોઽવ્યવહિતસૂત્રપર્યન્તમભિવ્યાપ્ય યદભિહિતં તત્સર્વં ભગવતા પ્રવેદિતમ્=ઉક્તમ્ । એતેન પૂર્વોક્તસૂત્રાદભિહિતાર્થેઽવગ્યકર્તવ્યતા પ્રદર્શિતા, અન્યથા ભગવદાજ્ઞા વિરાધકત્વમાપદ્યેતેતિ સંમુચિતમ્ । અપિ ચાનગારઃ કિં કુર્યાદિતિ દર્શયતિ—'લાભ ઇતી'-તિ, લાભઃ=અશનવસનાદર્મમૈવાધિગમ ઇતિ ચેતસિ પરિચિન્ત્ય ન માદ્યેત=ન મોદેત નાભિમાનં કુર્યાદિત્યર્થઃ ।

નિર્વાહ હો સકે, અર્થાત્ જો સંયમયાત્રા કે નિર્વાહ કરને મેં કિસી તરહ સે વાધક ન બન સકે । લેતે સમય યહ ધ્યાન અવશ્ય રચના ચાહિયે, એસા ન હો કિ-અધિક લેને પર પરિષ્ઠાપન કરના પડે । ઇતના ધ્યાન રચના હી માત્રા હૈ । ઇસ માત્રા કી મર્યાદા કા ઉલ્લંઘન કરને સે યથાવત્સંયમ કા નિર્વાહ નહીં હો સકના ।

શ્રીસુધર્મા સ્વામી જમ્બૂસ્વામી સે કહતે હૈં કિ-યહ સવ કુછ જો ઇસ ઉદ્દેશ કે પ્રથમ સૂત્ર સે લગા કર યહાં તક કહા ગયા હૈં વહ મૈને અપની નિજ કલ્પના સે નહીં કહા હૈ, કિન્તુ વીતરાગ પ્રભુ ને યહ સવ પ્રકટ ક્રિયા હૈ । ઇસલિયે જો કુછ યહાં તક કહા ગયા હૈં સંયમી મુનિ કા કર્તવ્ય હૈ કિ ઉસ પર પૂર્ણ ધ્યાન રચે, ઓર ઉસકા અપને સંયમ કો નિર્મલ બનાને કે લિયે અવશ્ય પાલન કરે, નહીં તો ભગવાન કી આજ્ઞા કા વિરાધક બનના પડેગા ।

કરવામાં કોઈ પણ પ્રકારે બાધક ન બની શકે. લેતી વખત એ ધ્યાન અવશ્ય રાખવું જોઈએ, એવું ન બને કે અધિક લેવાથી પરિષ્ઠાપન કરવું પડે આટલું ધ્યાન રાખવું તે માત્રા છે. આ માત્રાની મર્યાદાનું ઉલ્લંઘન કરવાથી બરોબર અંયમનો નિર્વાહ બની શકતો નથી.

શ્રી સુધર્માસ્વામી જમ્બૂસ્વામીને કહે છે કે:—આ બધું જે એ ઉદ્દેશના પ્રથમ સૂત્રથી લઈને અહીંઆ સુધી કહ્યું છે તે મેં મારી પોતાની કલ્પનાથી કહેલ નથી. પણ વીતરાગ પ્રભુએ જ આ બધું પ્રગટ કરેલ છે. માટે જે કંઈ અહીંઆ સુધી કહ્યું છે તે ઉપર સંયમી મુનિનું કર્તવ્ય છે કે તેના ઉપર પુરેપુરું ધ્યાન આપે, અને તેનું પોતાના અંયમને નિર્મળ બનાવવા માટે અવશ્ય પાલન કરે. નહિ તો ભગવાનની આજ્ઞાના વિરાધક બનવું પડશે.



અથવા ‘લાભે’ इति-જ્ઞાયા, લાભે સતિ વસ્ત્રાહારાદેરધિગમે ચ ન માચેત ।  
 एवमलाभे वस्त्रपात्रादेरप्राप्तौ ‘धिग् हतभाग्यं मां यदन्यैर्लभ्यते अन्तरायोदयान्मया  
 न लभ्यते’ इति=एवं न शोचेत् शोकं न विदध्यात्, लाभालाभयोर्मध्यस्थभावमव-  
 लम्बेतेत्यर्थः । उक्तञ्च —

“लाभो वरमलाभोऽपि, मुनिरुभयस्मिन्दधाति माध्यस्थ्यम् ।  
 लाभे प्राणपरिस्थितिरथचालाभे तपोवृद्धिः” ॥ १ ॥ इति ।

ऐसा कभी भी भाव न रखे कि-अशनादि-आहारवस्त्रादिक का लाभ मुझे ही होता है अन्य को नहीं । क्यों कि इस प्रकार की भावना से आत्मा में एक प्रकार का अहंकार उत्पन्न होता है जो संयम जीवन में सफेद वस्त्र में धब्बे की तरह बाधक होता है, अतः इस प्रकार का अहंकार कभी नहीं करना चाहिये । अथवा “लाभ इति न माच्येत” इसका अभिप्राय यह भी होता है कि आहार वस्त्रादिक का लाभ होने पर संयमी को हर्षित नहीं होना चाहिये, और अलाभ होने पर उसे “मुझ हतभागी-अभागे को धिक्कार है, दूसरों को तो सब कुछ मिलता है मुझे अन्तराय के उदय से कुछ भी नहीं मिलता” इस प्रकार का शोक भी नहीं करना चाहिये, क्योंकि संयमजीवन की शोभा लाभ और अलाभ में मध्यस्थ भाव रखने से ही है । कहा भी है—

“लाभो वरमलाभोऽपि, मुनिरुभयस्मिन् दधाति माध्यस्थ्यम् ।  
 लाभे प्राणपरिस्थिति-रथ चालाभे तपोवृद्धिः ॥ १ ॥” इति ॥

એવો ભાવ કોઈ વખત ન રાખે કે-‘અશનાદિ-આહારવસ્ત્રાદિકનો લાભ મને જ થાય છે. બીજાને નહિ.’ કારણ કે આ પ્રકારની ભાવનાથી આત્મામાં એક પ્રકારનો અહંકાર ઉત્પન્ન થાય છે જે સંયમ જીવનમાં સફેદ વસ્ત્રમાં ડાઘાની માફક બાધક થાય છે માટે આ પ્રકારનો અહંકાર કોઈ વખત કરવો ન જોઈએ. અથવા “લાભ इति न माच्येत” એનો અભિપ્રાય એ પણ થાય છે કે-આહારનો લાભ થવાથી સંયમીએ હર્ષિત નહિ થવું જોઈએ, અને આલાભ થવાથી તેણે “હું હતભાગી-અભાગીને ધિક્કાર છે, બીજાઓને સઘળું મળે છે, મને અંતરાયના ઉદયથી કંઈ પણ મળતું નથી” આવા પ્રકારનો શોક પણ નહિ કરવો જોઈએ, કારણ કે સંયમજીવનની શોભા લાભ અને અલાભમાં મધ્યસ્થભાવ રાખવામાં જ છે. કહ્યું પણ છે—

“लाभो वरमलाभोऽपि, मुनिरुभयस्मिन् दधाति माध्यस्थ्यम् ।  
 लाभे प्राणपरिस्थिति-रथ चालाभे तपोवृद्धिः ॥ १ ॥” इति ।

કિં ચ-વહ્નિપિ=કેનાપિ કારણેન પુષ્કલં લઘ્વા=પ્રાપ્ય ન સ્નિહ્યાત્=અન્નાદૌ ગૃહપતૌ વા સ્નેહં ન કુર્યાત્, અપિ ચ પરિગ્રહાત્સંયમયાત્રાનિર્વાહમાત્રાતો મૂર્છાભાવે-  
નૈષ્ણીયસ્યાપ્યધિકસ્યાનાદાનાત્ આત્માનમ્ અવજ્વળકેત્=અપગમયેત્, તત્ આત્માનં નિવર્તयेदિત્યર્થઃ ।

નનુ સંયમયાત્રાનિર્વાહાર્થમાવશ્યકવસ્ત્રપાત્રાદીનામપિ ગ્રહણં પરિગ્રહપદેન વક્તુ-

આહારાદિક વસ્તુએ મિલે તો મી ટીક, ન મિલે તો મી ટીક, મુझे તો દોનો અવસ્થાઓં મેં સમતા હૈ । લાભ મેં પ્રાણોં કા રક્ષણ ઔર અલાભ મેં તપ કી વૃદ્ધિ હોગી । એસા વિચાર કરના ચાહિયે ।

કિસી કારણવશ યદિ આહારાદિક સામગ્રી કિસી એક હી જગહ સે અધિક મિલ જાવે તો અન્નાદિક સામગ્રી પર તથા દેને વાલે દાતા-ગૃહસ્થ પર રાગભાવ ન કરે-મધ્યસ્થ ભાવ રક્ષે । ઇસ પ્રકાર કી પ્રવૃત્તિ નહીં રગ્વને સે સંયમી મુનિ મેં દીનતા, તથા સિંહવૃત્તિ કે અભાવ હોને કા પ્રસંગ આજાતા હૈ । સંયમયાત્રા કા નિર્વાહમાત્રાવાલી આહારાદિક સામગ્રી કે અતિરિક્ત અન્ય સામગ્રી સે અપને કો દૂર રક્ષે, કારણ કિ ણૈષ્ણીય હોને પર મી મૂર્છાભાવ સે અધિક ગ્રહણ કરને સે ઉસ મેં પરિગ્રહ કા દોષ આતા હૈ, અનઃ ઇસ પ્રકાર કી પ્રવૃત્તિરૂપ પરિગ્રહ સે સદા અપની રક્ષા કરતા રહે ।

પ્રશ્ન—સંયમયાત્રા કે નિર્વાહ કે લિયે જો આપ આવશ્યક વસ્ત્ર પાત્રાદિકોં કા ગ્રહણ કરના સંયમી મુનિ કે લિયે કહ રહે હો સો યહ

આહારાદિક વસ્તુઓ મળે તો પણ ઠીક છે, ન મળે તો પણ ઠીક છે, એમ મને તો બન્ને અવસ્થાઓમાં સમતા છે. લાભમાં પ્રાણનું રક્ષણ અને અલાભમાં તપની વૃદ્ધિ થશે. એવો વિચાર કરવો બેઠકો.

કોઈ કારણવશ કદાચ આહારાદિક સામગ્રી કોઈ એક જગ્યાથી અધિક મળી જાય તો અન્નાદિક સામગ્રીપર તથા દેવાવાળા દાતા ગૃહસ્થ પર રાગભાવ ન કરે-મધ્યસ્થભાવ રાખે. આ પ્રકારની પ્રવૃત્તિ નહિ રાખવાથી સંયમી મુનિમાં દીનતા, તથા સિંહવૃત્તિનો અભાવ હોવાનો પ્રસંગ આવી જાય છે. સંયમયાત્રાના નિર્વાહ માત્રાવાળી આહારાદિક સામગ્રીથી અતિરિક્ત અન્ય સામગ્રીથી પોતાને દૂર રાખે, કારણ કે ણૈષ્ણીય હોવા છતાં પણ મૂર્છાભાવથી અધિક ગ્રહણ કરવાથી તેમાં પરિગ્રહનો દોષ આવી જાય છે, માટે આ પ્રકારની પ્રવૃત્તિરૂપ પરિગ્રહથી સદા પોતાની રક્ષા કરતા રહે.

પ્રશ્ન—સંયમયાત્રાના નિર્વાહ માટે જે આપ આવશ્યક વસ્ત્ર પાત્રાદિકોંનું ગ્રહણ કરવું સંયમી મુનિ માટે કહી રહ્યા છે તો તે કહેવું બ્યાજળી નથી,

મુચિતમ્, યતશ્ચાનુકૂલે વસ્તુનિ રાગઃ પ્રતિકૂલે દ્વેષશ્ચ સઙ્ગાયતે, એવશ્ચ રાગદ્વેષ-યોરવશ્યંભાવાન્મૂર્છાં, સૈવા પરિગ્રહઃ ‘મુચ્છા પરિગ્રહો વુત્તો’ ઇતિ વચનાત્, તત્સદ્ભાવે ચ કર્મવન્ધ ઇતિ કથં સંયમોપકરણસ્ય ન પરિગ્રહત્વમિતિ ચેદુચ્યતે—ધર્મોપકરણે મુનીનાં ‘મમેદ’—મિતિ ન મોહો ભવતિ । ઉક્તશ્ચ—

“અવિ અપ્પણોઽવિ દેહંમિ નાયરંતિ મમાદ્યં” ઇતિ । (દશ. અ. ૬ ગા. ૨૨)

ટીક નહીં હૈ, કારણ કિ યહ બી પરિગ્રહ હી હૈ, ઔર પરિગ્રહ કા ત્યાગ કિયે વિના સર્વથા સંયમારાધકતા હોતી નહીં હૈ । પરિગ્રહરૂપતા ઇનમેં ઇસલિયે હૈ કિ અનુકૂલ ઇનકી પ્રાપ્તિ મેં પ્રાપ્તકર્તા કો હર્ષ, ઔર પ્રતિકૂલ પ્રાપ્તિ મેં પાનેવાલે કો દ્વેષ હોતા હૈ । જહાં પર રાગ ઔર દ્વેષ હૈ વહાં પર મૂર્છા હૈ, ઔર મૂર્છા કા હોના હી પરિગ્રહ હૈ । “મુચ્છા પરિગ્રહો વુત્તો” મૂર્છા હી પરિગ્રહ હૈ, એસા ભગવાન કા કથન હૈ, જહાં ઇસકા સદ્ભાવ હૈ વહાં કર્મવન્ધ અવશ્ય હૈ, અતઃ વસ્ત્રપાત્રાદિક ઉપકરણ કો પરિગ્રહ ક્યોં નહીં કહા ગયા હૈ ? ।

ઉત્તર—સામાન્યતયા વસ્ત્રપાત્રાદિકોં મેં પરિગ્રહતા કા હમ નિષેધ નહીં કરતે હૈં, કિન્તુ જો સંયમ કે ઉપકારક હૈં વે પરિગ્રહરૂપ નહીં હૈ । યહ એક વિશેષ વિધિ હૈ, કારણ કિ મુનિયોં કો ઇનમેં “મમ દ્વં” “યહ મેરે હૈં” ઇસ પ્રકાર કી સમત્વભાવરૂપ મૂર્છા નહીં હોતી હૈ । કહા બી હૈ—  
“અવિ અપ્પણોવિ દેહંમિ, નાયરંતિ મમાદ્યં” ઇતિ । (દશ. અ. ૬ ગા. ૨૨)

કારણ કે તે પણ પરિગ્રહ જ છે. અને પરિગ્રહનો ત્યાગ કર્યા વિના સર્વથા સંય-મારાધકતા થતી નથી. પરિગ્રહરૂપતા તેમાં એ માટે છે કે અનુકૂળ તેની પ્રાપ્તિમાં પ્રાપ્તકર્તા ને હર્ષ અને પ્રતિકૂળ પ્રાપ્તિમાં લેનારને દ્વેષ થાય છે, જે જગ્યોએ રાગ અને દ્વેષ છે ત્યાં મૂર્છા છે, અને મૂર્છાનું હોવું તે પરિગ્રહ છે. “મુચ્છા પરિ-ગ્રહો વુત્તો” મૂર્છા એ જ પરિગ્રહ છે, એવું ભગવાનનું કથન છે, ન્યાં તેનો સદ્ભાવ છે ત્યાં કર્મવન્ધ અવશ્ય છે, માટે વસ્ત્રપાત્રાદિક ઉપકરણને પરિગ્રહ કેમ માનેલ નથી ?

ઉત્તર—સામાન્ય રીતે વસ્ત્રપાત્રાદિકોમાં પરિગ્રહતાનો અમે નિષેધ કરતા નથી. જે સંયમના ઉપકારક છે તે પરિગ્રહરૂપ નથી. એ એક વિશેષ વિધિ છે, કારણ કે મુનિયોને તેમાં “મમ દ્વં” એ ભાસ છે, એ પ્રકારની સમત્વ ભાવરૂપ મૂર્છા થતી નથી. કહ્યું પણ છે—

“અવિ અપ્પણો વિ દેહંમિ નાયરંતિ મમાદ્ય ” ઇતિ (દશ અ. ૬ ગા. ૨૨)

છાયા—અપ્યાત્મનોઽપિ દેહે નાચરન્તિ મમાયિતમ્ । ઇતિ । તેપાં કર્મનિર્જરણાર્થં સ્વીકારાત્ , યથ્ચ મૂર્છ્યા પરિગૃહ્યતે તસ્ય પરિગ્રહપદેનાભિધેયત્વાચ્ચ । તત્પરિહારે ચ સંયમયાત્રાયા અપિ નિર્વોદુમશક્યત્વાત્ ।

કિન્ચ—અન્યથાનપશ્યકઃ—પશ્યતીતિ પશ્યઃ, સ એવ પશ્યકઃ, અન્યથા=અન્ય-પ્રકારેણ ન પશ્યકઃ=અન્યથાનપશ્યકઃ=ધર્મોપકરણાપરિગ્રહદર્શી સન્ પરિગ્રહં પરિહરેત્ । યથા ગૃહસ્થો વસ્ત્રાદિકં શરીરાદિસુખસાધનં મન્યતે ન તથા મુનિઃ । સ ચૈત્ત્વધર્મોપકરણં મમ ધર્મસાધનમેવ, ન શરીરાદિસુખસાધનમિતિ મન્યમાનઃ પરિગ્રહં

સાધુઓં કો જવ અપને નિજ શરીર મેં હી મોહ મમત્વ નહીં હોતા હૈ, તવ શરીર સે સર્વથા ભિન્ન ઉપકરણાદિકોં મેં મમત્વભાવ કૈસે હો સકના હૈ । મુનિ અવસ્થા મેં માત્રાનુસાર ગ્રહણ કિયે હુએ વસ્ત્ર પાત્રાદિક સંયમ કે ઉપકારક હોને સે કર્મોં કી નિર્જરા કે હી સાધક હોતે હૈં, હસીલિયે વે સંયમ અવસ્થા મેં સ્વીકાર કિયે જાતે હૈં । પરિગ્રહ વહીં પર હૈ કિ જહાં પર મૂર્છાભાવ સે અપનાના હોતા હૈ । ઇન પાત્રાદિકોં કા ગ્રહણ મૂર્છાભાવ સે નહીં કિયા જાતા હૈ, અતઃ યે પરિગ્રહરૂપ નહીં હૈં, પ્રત્યુત ઇનકે અભાવ મેં સંયમયાત્રા કા યથાવત્ નિર્વાહ નહીં હો સકના, હસીલિયે ઇનકા ગ્રહણ કરના આવશ્યક વતલાયા ગયા હૈ । હસી વાત કી પુષ્ટિ સૂત્રકારને “અન્યથાનપશ્યકઃ પરિહરેત્” હસ વાક્ય સે કી હૈ । વસ્ત્ર પાત્રાદિક ધર્મોપકરણ હૈં, ઇનકે વિના સંયમ કા યથાવત્ નિર્વાહ નહીં હો સકતા, હસલિયે ઇનકા રક્ષના આવશ્યક હૈ । હસ પ્રકાર ડનકો પરિગ્રહરૂપ નહીં દેખતા હુઆ અનગાર ઇનસે અતિરિક્ત ધન-

સાધુઓને ન્યારે પોતાના શરીર ઉપર જ મોહ અને મમત્વ નથી થતો તો પછી શરીરથી સર્વથા ભિન્ન ઉપકરણાદિકોમાં મમત્વભાવ કેવી રીતે હોઈ શકે. મુનિ અવસ્થામાં માત્રાનુસાર ગ્રહણ કરેલા વસ્ત્રપાત્રાદિક સંયમના ઉપકારક હોવાથી ધર્મોની નિર્જરણા જ સાધક બને છે, માટે તે સંયમ અવસ્થામાં સ્વીકાર કરવામાં આવે છે. પરિગ્રહ તે જગ્યો ઉપર છે કે ન્યાં મૂર્છા ભાવથી લેવામાં આવે છે. આ પાત્રાદિકોનું ગ્રહણ મૂર્છાભાવથી કરવામાં આવતું નથી, માટે તે પરિગ્રહરૂપ નથી પ્રત્યુત તેના અભાવમાં સંયમયાત્રાનો યથાવત્ નિર્વાહ થઈ શકતો નથી, માટે તેનું ગ્રહણ કરવું આવશ્યક બતાવ્યું છે. આ વાતની પુષ્ટિ સૂત્રકારે “અન્યથાનપશ્યકઃ પરિહરેત્” આ વાક્યથી કરેલ છે. વસ્ત્રપાત્રાદિક ધર્મોપકરણ છે, તે વિના સંયમનો યથાવત્ નિર્વાહ થઈ શકતો નથી, માટે તેનું રાખવું આવશ્યક છે. એ પ્રકારે તેને પરિગ્રહરૂપ નહિ દેખતા

પરિત્યજેત્, ન તત્ર મમત્વં કુર્યાદિત્યર્થઃ। સમુચિતમાત્રયાઽહારાદિગ્રાહી મુનિર્લાભ-  
લાભહર્ષવિષાદવર્જિતઃ પરિગ્રહાગ્રહનિવૃત્તો રત્નત્રયસમારાધનતત્પરો ભવેદિતિ  
તાત્પર્યમ્ ॥ સૂ૦ ૬ ॥

કેન દર્શિતોઽયં માર્ગં इति દર્શયતિ—‘ એસ મગ્ગે ’ इत्यादि ।

મૂલમ્—એસ મગ્ગે આરિણ્હિં પવેઙ્ગે જહેત્થ કુશલો નોપલિં-  
પેજ્જાસિ-ત્તિ વેમિ ॥ સૂ૦ ૭ ॥

છાયા—એષ માર્ગં આર્યૈઃ પ્રવેદિતઃ યથાઽત્ર કુશલો નોપલિમ્પયેઃ। इति  
બ્રૂવૈમિ ॥ સૂ૦ ૭ ॥

ટીકા—‘ એષ માર્ગ ’ इत्यादि । एषः=પૂર્વોક્તરૂપઃ માર્ગઃ શ્રુતચારિત્રલક્ષણઃ  
આર્યૈઃ=તીર્થઙ્કરગણધરાદિભિઃ પ્રવેદિતઃ—પ્ર=પ્રકર્ષેણ=દ્વાદશપરિપદિ કથિતઃ ।

ધાન્યાદિ કો પરિગ્રહ સમજ્ઞકર છોડ દેતા હૈ । ગૃહસ્થ જિસ પ્રકાર વસ્ત્રા-  
દિકોં કો શારીરિક સુખાદિ કા કારણ માનકર ઉન્હેં ગ્રહણ કરતા હૈ  
ઉસ પ્રકાર કી ભાવના સે મુનિ નહીં । ધર્મોપકરણ સે ધર્મ કા હી સાધન  
હોતા હૈ—અન્ય શરીરસુખાદિક કા નહીં । એસા માનકર હી મુનિ ગ્રહણ  
કરતા હૈ, ઔર ઉનમેં મમત્વભાવ સે રહિત હોતા હૈ । તાત્પર્ય યહ હૈ કિ-  
અનગાર કો સમુચિત માત્રા મેં આહારાદિક ગ્રહણ કરને વાલા, લાભ ઔર  
અલાભ મેં સમભાવી; પરિગ્રહ સે વિરત, ઔર રત્નત્રય કી આરાધના મેં  
નિમગ્ન હોના ચાહિયે ॥ સૂ૦ ૬ ॥

इस मार्ग के प्रदर्शक कौन हैं? इस बात को दिखलाते हुए सूत्रकार  
कहते हैं—‘ એસ મગ્ગે ’ इत्यादि ।

यह पूर्वोक्त श्रुतचारित्ररूप मार्ग तीर्थकर गणधरादिक आर्य पुरुषोंने

આણુગાર તેનાથી અતિરિક્ત ધનધાન્યાદિને પરિગ્રહ સમજીને છોડી દે છે. ગૃહસ્થ  
જેવી રીતે વસ્ત્રાદિકોને શારીરિક સુખાદિકનું કારણ માનીને તેને ગ્રહણ કરે છે  
તે પ્રકારની ભાવનાથી મુનિ નહિ. ધર્મોપકરણથી ધર્મનું જ સાધન થાય છે—અન્ય  
શરીરસુખાદિકનું નહિ. એવું માનીને જ મુનિ તેને ગ્રહણ કરે છે, અને તેમાં  
મમત્વભાવથી રહિત થાય છે. તાત્પર્ય એ છે કે—આણુગારે સમુચિત માત્રામાં  
આહારાદિક ગ્રહણ કરવાવાળા, લાભ અને અલાભમાં સમભાવી, પરિગ્રહથી વિરત,  
અને રત્નત્રયની આરાધનામાં નિમગ્ન થવું જોઈ એ. ॥ સૂ૦ ૬ ॥

આ માર્ગનો પ્રદર્શક કોણ છે, આ વાતને બતાવતા સૂત્રકાર કહે છે—  
‘ એસ મગ્ગે ’ इत्यादि.

આ પૂર્વોક્ત શ્રુતચારિત્રરૂપ માર્ગ તીર્થકર ગણધરાદિક આર્ય પુરુષોએ બાર

હે શિષ્ય ! યથા=યેન પ્રકારેણ ત્વં કુશલઃ સન્ આર્યક્ષેત્રસુકુલજન્માદિકં, સંસારાર્ણવતરિં વોથિં, સકલકર્મક્ષપણસમર્થં ચારિત્રં ચ લઙ્ઘ્વા અત્ર=અહ તીર્થક્ષરનિર્દિ-  
ષ્ટમાર્ગેષ્ટવિધકર્મહેતુભૂતેન પાપકર્મણા નોપલિમ્પયેઃ=નોપલિમ્પો ભવેસ્તથા કુરુષ્વ,  
એતસ્મિન્માર્ગે સ્થિત એવ મુનિઃ સમ્યગ્જ્ઞાનાદિકં લભતિતિ ભાવઃ । ઇતિ-શબ્દોઽધિ-  
કારસમાપ્ત્યર્થઃ, સ ચાહારાદિગવેષણારૂપઃ । યન્મયા ભગવત્સમીપે શ્રુતં તત્સર્વં ત્વાં  
બ્રવીમિ=વચ્મિ । ઇતિ ॥સૂ. ૭॥

પરિગ્રહાદાત્મનિવૃત્તિશ્ચ તત્કારણોન્મૂલનં વિના ન સમ્ભવતિ, તત્કારણં ચ શબ્દા-  
દયઃ પશ્ચ કામગુણાઃ, તેપામુન્મૂલનં ચ દુષ્કરમિતિ દર્શયતિ-‘કામા’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્—કામા દુરિક્કમા, જીવિયં દુષ્પડિબૂહગં, કામકામી  
સ્વલુ અયં પુરિસે, સે સોયઙ્ જૂરઙ્ તિપ્પઙ્ પિટ્ઙ્ પરિતપ્પઙ્ ।સૂ. ૮।

બારહ પ્રકાર કી સભા મેં પ્રકટ કિયા હૈ । ઉન્હોને કહા હૈ કિ—જો મનુષ્ય  
આર્યક્ષેત્ર, સુકુલ મેં જન્મ; સંસારરૂપી સમુદ્ર કે પાર પહુંચને કે લિયે નૌકા  
સ્વરૂપ વોથિ, એવં સકલ કર્મોં કે વિનાશક ચારિત્ર કો પ્રાપ્તકર તીર્થકરાદિ  
પ્રદર્શિત હસ માર્ગ કા અવલંબન કરતા હૈ—હસમેં પ્રવૃત્તિ કરતા હૈ વહ  
પાપકર્મ સે—જો અષ્ટ પ્રકાર કે કર્મોં કે આસ્રવ કા હેતુ હૈ—કશી भी ઉપ-  
લિપ્ત નહીં હોતા હૈ, હસલિયે હે શિષ્ય ! તુમ भी अपनी પ્રવૃત્તિ કો  
હસ પ્રકાર કી બનાઓ, તાકિ તુમ भी હસ વિષય મેં કુશલ બન પાપકર્મ  
સે ઉપલિપ્ત ન હો સ્કો । સૂત્ર મેં ‘ઇતિ’ શબ્દ હસ અધિકાર કી સમાપ્તિ  
કા સૂચક હૈ, અર્થાત્ હે શિષ્ય ! આહારાદિક કી ગવેષણારૂપ યહ અધિ-  
કાર જૈસે મૈને ભગવાન્ કે નિકટ સુના હૈ વૈસા હી યહાં તુમ સે  
પ્રકટ કિયા હૈ, મેરી નિજી કલ્પના હસ વિષય મેં કુછ भी નહીં હૈ ॥સૂ. ૭॥

પ્રકારની સભામાં પ્રગટ કરેલ છે. તેઓએ કહ્યું છે કે—જે મનુષ્ય આર્યક્ષેત્ર, સુકુળમાં  
જન્મ. અવ્યાબાધ સુખરૂપી સમુદ્રના પાર સ્વરૂપ યોધિ અને સકલ કર્મોના વિનાશક  
ચારિત્રને પ્રાપ્ત કરી તીર્થકરાદિપ્રદર્શિત આ માર્ગનું અવલંબન કરે છે—આમાં  
પ્રવૃત્તિ કરે છે તે પાપકર્મથી જે આઠ પ્રકારના કર્મોના આસ્રવનો હેતુ છે—કોઈ  
વળત પણ ઉપલિપ્ત થતો નથી. માટે હે શિષ્ય ! તમે પણ તમારી પ્રવૃત્તિને  
એવા પ્રકારની બનાવો કે તમે પણ આ વિષયમાં કુશળ બની પાપ કર્મથી ઉપ-  
લિપ્ત ન થઈ શકો. સૂત્રમાં ‘ઇતિ’ શબ્દ આ અધિકારની સમાપ્તિનો સૂચક છે,  
અર્થાત્ હે શિષ્ય ! આહારાદિકની ગવેષણારૂપ આ અધિકાર જેવો મેં ભગ-  
વાન પાસેથી સાંભળ્યો છે તેવો હું તને કહું છું, મારી પોતાની કલ્પના આ  
વિષયમાં કોઈ પણ નથી. ॥ સૂ. ૭ ॥



છાયા—કામા દુરતિક્રમાઃ, જીવિતં દુષ્પ્રતિબંધનીયં, કામકામી સ્વલ્લ અયં પુરુષઃ, સ શોચતિ જૂર્યતે તેષતે પીડ્યતે પરિતપ્યતે ॥ સૂ. ૮ ॥

ટીકા—‘કામા’ ઇત્યાદિ । કામાઃ—ઈચ્છામદનભેદાદ્વિવિધાઃ । તત્ર-ઈચ્છાકામાઃ-હિરણ્યાદિવાઙ્છારૂપાઃ, મદનકામાઃ=શબ્દાદિરૂપાઃ, પૂર્વસ્ય કારણં મોહનીયભેદો હાસ્યરતી, પરસ્ય ચ કારણં મોહનીયભેદવેદોદયઃ । તતશ્ચોભયોરપિ કામયોઃ પ્રાદુર્ભાવો મોહનીયાદેવ, એવશ્ચ કારણસત્ત્વે કાર્યભૂતસ્ય કામસ્યોન્મૂલનમશક્યમ્ ।

પરિગ્રહ સે નિવૃત્તિ, ઉસકે કારણોં કા નાશ કિયે વિના નહીં હો સકતી । ઉસકે કારણ શબ્દાદિક પાંચ કામ ગુણ હૈં । ઉનકા ઉન્મૂલન કરના બડા કઠિન હૈ, ઇસી બાત કો પ્રદર્શિત કરતે હુએ સૂત્રકાર કહતે હૈં—“કામા દુરિક્રમા” ઇત્યાદિ ।

ઈચ્છા ઔર મદન કે ભેદ સે કામ દો પ્રકાર કા હૈ । હિરણ્યાદિક કી વાઙ્છારૂપ ઈચ્છાકામ હૈ । ઇસકા કારણ મોહનીય કર્મ કા ભેદ હાસ્ય ઔર રતિ હૈ । શબ્દાદિક પાંચ ઇન્દ્રિયોં કે વિષય મદનકામ હૈ । ઇનકા મી કારણ—મોહનીય કર્મ કા ભેદ—વેદ—નોકષાય કા ઉદય હૈ । ઇસ પ્રકાર ઇન દોનોં કામોં કી ઉત્પત્તિ મોહનીયકર્મ કે ઉદય સે હી હોતી હૈ । કારણ કે સદ્ભાવ મેં કાર્ય કા સદ્ભાવ અવશ્યંભાવી હૈ, ઇસીલિયે સૂત્ર મેં સૂત્રકાર ને “દુરતિક્રમાઃ” ઇસ પદ સે ઇનકા ઉન્મૂલન હુષ્કર બતાલાયા હૈ । જ્યતક મોહનીયરૂપ કારણ કા ઉદય હૈ તવ તક ઇનકા અભાવ હો હી નહીં સકતા, અતઃ ઇનકા પ્રતીકાર કરના હુઃશક્ય હૈ । જીવન કા મી પ્રતિ-

પરિગ્રહથી નિવૃત્તિ તેના કારણનો નાશ કર્યા વગર ણની શકતી નથી. તેનું કારણ શબ્દાદિક પાંચ કામ ગુણ છે તેનું ઉન્મૂલન કરવું ઘણું કઠિન છે આ વાતને પ્રદર્શિત કરતાં સૂત્રકાર કહે છે—‘કામા દુરિક્રમા’ ઇત્યાદિ.

ઈચ્છા અને મદનના ભેદથી કામ બે પ્રકારના છે. હિરણ્યાદિકની વાઙ્છારૂપ ઈચ્છાકામ છે, તેનું કારણ મોહનીય કર્મના ભેદ—હાસ્ય અને રતિ છે. શબ્દાદિક પાંચ ઇન્દ્રિયોનો વિષય મદન કામ છે, તેનું પણ કારણ—મોહનીય કર્મના ભેદ—વેદ—નોકષાયનો ઉદય છે. આ પ્રકારે ણને કામોની ઉત્પત્તિ મોહનીય કર્મના ઉદયથી જ થાય છે, કારણ સદ્ભાવમાં કાર્યનો સદ્ભાવ અવશ્યભાવી છે, માટે સૂત્રમાં સૂત્રકારે “દુષ્કરં” આ પદથી તેનું ઉન્મૂલન હુષ્કર બતાવ્યું છે. ત્યાં સુધી મોહનીયરૂપ કારણનો ઉદય છે ત્યાં સુધી તેનો અભાવ થઈ જ શકતો નથી, માટે તેનો પ્રતિકાર કરવો હુઃશક્ય છે. જ્યનનો પણ પ્રતિદિન



અતઃ એવ દ્વિવિધા અપિ કામા 'દુરતિક્રમાઃ' દુઃ=દુઃખેનાતિક્રમઃ=ઉન્મૂલનં=વિનાશો  
યેષાં તે દુરતિક્રમાઃ । અથવા-દુઃખેનાતિક્રમ્યન્તે=ઉન્મૂલ્યન્તે યે તે દુરતિક્રમાઃ=  
દુઃશક્યપ્રતીકારા દુષ્પરિહરા इति યાવત્ ।

કિં ચ-જીવિતં=ભવગ્રહાયુષ્કં પ્રતિદિનમપચીયમાનતયા દુષ્પરિવૃંહણીયં=વૃદ્ધિ-  
યિતુમશક્યં પરિજીર્ણચ્છિન્નવસ્ત્રવત્સન્ધાતુમનર્હમિત્યર્થઃ ।

યદ્વા-જીવિતં-સંયમજીવિતં દુષ્પરિવૃંહણીયં, સંયમિનશ્ચારિત્રાન્તરાયોદયા-  
ત્કામાભિષ્વજ્ઞે સતિ સંયમજીવિતસ્ય પ્રત્યઠં ક્ષીયમાણત્વાત્ ।

દિન હાસ હો રહા હૈ । આયુકર્મ કા શાસ્ત્રકારોં ને અપકર્પણ તો વતલાયા  
હૈ કિન્તુ ઉત્કર્પણ નહીં, ઇસલિયે આયુઃકર્મ કા પ્રતિસમય અપચય હોને સે  
જીવન ભી અપચય કી ઓર હી વઢ રહા હૈ । એસા કોઈ ભી કારણ નહીં હૈ  
જો જીવન કો સ્થિર, અથવા ભુજ્યમાન આયુ મેં એક સમય ભી વૃદ્ધિ કર  
સકે, ઇસલિયે જિસ પ્રકાર ચિલકુલ જીર્ણ ફટે હુણ વસ્ત્ર કા સીના  
અશક્ય હોતા હૈ ઊસી પ્રકાર આયુકર્મ કી વૃદ્ધિ હોની ભી અશક્ય  
હૈ । એસા સમજકર આત્મહિતૈષી કે લિયે ઇન વિષયાદિકોં મેં વાંચ્છા નહીં  
કરની ચાહિયે । જીવન કા જિતના અંશ ઇસ પ્રકાર કી પ્રવૃત્તિ સે સુર-  
ક્ષિત રહ સકે એસા હી પ્રયત્ન કરતે રહના ચાહિયે ।

અથવા-જીવન શબ્દ કા અર્થ સંયમજીવન હૈ । યહ દુષ્પરિવૃંહણીય  
(વઢાના મુશ્કિલ) ઇસલિયે વતલાયા જા રહા હૈ કિ યદિ સંયમી કો  
ચારિત્રમોહનીય કે ઉદય સે કામગુણોં મેં વાંચ્છા ઉત્પન્ન હો જાવે તો

હાસ થઈ રહ્યો છે, આયુકર્મનો શાસ્ત્રકારોએ અપકર્પણ તો બતાવેલ છે, પણ  
ઉત્કર્પણ નહિ, માટે આયુઃકર્મ પ્રતિસમય અપચય હોવાથી જીવન પણ અપ-  
ચય ની તરફ જ વધી રહ્યું છે. એવું કોઈ પણ કારણ નથી જે જીવનને સ્થિર  
અથવા ભુજ્યમાન આયુમાં એક સમય પણ વૃદ્ધિ કરી શકે, માટે જે પ્રકારે  
ખિલકુલ ફટેલા વસ્ત્રનું શીવણ અશક્ય થાય છે તે પ્રકારે આયુકર્મની વૃદ્ધિ થવી  
પણ અશક્ય છે. એવું સમજીને આત્મહિતૈષી માટે આ વિષયાદિકોમાં વાંચ્છના નહિ  
કરવી જોઈએ. જીવનનો જેટલો પણ અંશ આ પ્રકારની પ્રવૃત્તિથી સુરક્ષિત રહી  
શકે તેવો જ પ્રયત્ન કરતા રહેવો જોઈએ.

અથવા—જીવિત શબ્દનો અર્થ સંયમ જીવન છે. આ દુષ્પરિવૃંહણીય  
(વધારણું મુશ્કેલ) છે. એટલા માટે બતાવવામાં આવેલ છે કે કદાચ સંયમીને ચારિત્ર  
મોહનીયતા ઉદયથી કામગુણોમાં વાંચ્છના ઉત્પન્ન થઈ જાય તો તેનું તે સંયમ-

યતઃ કામા દુરતિક્રમા અત એવ અયં પુરુષઃ સ્વલુ=નિશ્ચયેન કામકામી-કામં દ્વિપ્રકારં કમિતું શીલં યસ્ય સ કામકામી=કામસ્પૃહાશીલો ભવતિ, ય ઈદ્દશઃ સઃ= પૂર્વોક્તપ્રકારઃ અપહતમનઃસંકલ્પઃ સન્ કિં કરોતીત્યાહ-શોચતીતિ । શોચતિ= ઇષ્ટવિપયાપ્રાપ્તૌ તન્નાશો વા શોકં કરોતિ । અપિ ચ-સ એવ જૂર્યતે=જૂરણાં કરોતિ— અન્તર્દુઃસ્વેન શરીરં શોષયતીત્યર્થઃ, દીનઃ સન્ વહુ વિલપતિ, તથાહિ—

અસકા વહ સંયમજીવન બિલકુલ હી નષ્ટ હુઆ સમઝના ચાહિયે । એસા તો હો નહીં સકતા કિ સંયમજીવન બના રહે ઓર કામગુણોં કી વાઙ્છા ભી અપના કામ કરતી રહે । ઇસલિયે એસી પરિસ્થિતિ મેં સંયમ-જીવન કા પાલન અશક્ય હી હૈ ।

જવ થે કામગુણ દુરતિક્રમ હૈં તવ હી તો પ્રાણી ઇન્કે અધીન બન ઇન્કી ઓર સ્પૃહાશીલ હોકર આકૃષ્ટ હોતા હૈ । આકૃષ્ટ હોને પર ભી જવ ઇસકા માનસિક સંકલ્પ પૂર્ણ નહીં હોતા, અથવા ઇસકી મનચાહી વસ્તુ ઇસે નહીં મિલતી તવ યહ પ્રાણી શોકાકુલ હોતા રહતા હૈ । યદિ ઇસે મનચાહી વસ્તુ મિલ ભી જાતી હૈ પરન્તુ જ્યોં હી ઇસકા વિયોગ હો જાતા હૈ તો ઇસકે હૃદય મેં અપાર શોક કા સમુદ્ર ઉમડને લગતા હૈ । અનભીષ્ટ સંયોગ હોને પર ડસે દૂર કરને કે લિયે ઇસકે ચિત્ત મેં અનેક પ્રકાર કે અશુભ સંકલ્પ ઉઠતે રહતે હૈં । અનિષ્ટ વસ્તુ કે સંયોગ મેં એસા હી હોતા હૈ । પ્રાણી ડસ સમય અન્તર્દુઃસ્વ સે અપને તક કો ભી સુખા દેતા હૈ । કામી પુરુષ સ્વતઃ હી દીન બનકર પ્રલાપ કરને લગ જાતા હૈ ।

જીવન બિલકુલ જ નષ્ટ થયેલ સમજવું બેઠએ. એવું તો બની જ શકતું નથી કે સંયમજીવન બની રહે અને કામગુણોની વાંછના પણ પોતાનું કામ કરતી રહે. માટે આવી પરિસ્થિતિમાં સંયમજીવનનું પાલન અશક્ય જ છે.

ન્યારે એ કામગુણ દુરતિક્રમ છે ત્યારે જ તો પ્રાણી તેના આધીન બની તેની તરફ સ્પૃહાશીલ બનીને આકૃષ્ટ થાય છે. આકૃષ્ટ થવા છતાં પણ ન્યારે તેનો માનસિક સંકલ્પ પૂર્ણ નથી થતો, અથવા તેની મનપસંદ વસ્તુ તેને નથી મળતી ત્યારે તે પ્રાણી શોકાકુલ થઈ રહે છે. કદાચ તેને મનપસંદ વસ્તુ મળી પણ બીજા પરન્તુ ન્યાં તેનો વિયોગ થઈ બીજા છે તો તેના હૃદયમાં અપાર શોકનો સમુદ્ર ઉભરાવા લાગે છે. અનભીષ્ટ સંયોગ બનવાથી તેને દૂર કરવા માટે તેના ચિત્તમાં અનેક પ્રકારના અશુભ સંકલ્પ વિકસિત થઈ રહે છે, અનિષ્ટ વસ્તુના સંયોગમાં એવું જ થાય છે. પ્રાણી તે વળતે અંતરદુઃખથી પોતાની બતલને પણ યુકાવી નાંખે છે. કામી પુરુષ સ્વતઃ દીન બની પ્રલાપ કરવા લાગી બીજા, આ બાત આ શ્લોકથી પ્રકટ કરવામાં આવે છે.

પ્રથમતરમથેદં ચિન્તનીયં તવાસીદ્,—

વહુજનદયિતેન પ્રેમ કૃત્વા જનેન ॥

હતહૃદય ! નિરાશ ! ક્લીવ ! સંતપ્યસે કિં,

નહિ જહ ! ગતનોયે સેતુવન્ધાઃ ક્રિયન્તે ॥ ૧ ॥ ઇતિ ।

અપિ ચ=તેપતે કુલાદિમર્યાદાતઃ અંચલતિ-નિર્મર્યાદો ભવતીત્યર્થઃ । તથા  
પીડ્યતે=શારીરમાનસદુઃખૈઃ ક્લિશ્યતે । કિં ચ-પરિતપ્યતે-પરિ=સર્વતો વાહ્યમન્તથ

યહ વાન ઇસ શ્લોક સે પ્રકટ કી જાતી હૈ—

“પ્રથમતરમથેદં ચિન્તનીયં તવાસીદ્,

વહુજનદયિતેન પ્રેમ કૃત્વા જનેન ।

હતહૃદય ! નિરાશ ! ક્લીવ ! સંતપ્યસે કિં,

નહિ જહ ! ગતનોયે સેતુવન્ધાઃ ક્રિયન્તે ” ॥ ૧ ॥ ઇતિ ॥

કામિયોં કી દશા હી કુહ એસી વિલક્ષણ હોતી હૈ કિ જિસ કી વજહ સે વે અપની કુલ કી મર્યાદા તક કો ખી છોડ દેતે હૈં । શારીરિક એવં માનસિક દુઃખોં સે વે સદા સંતપ રહા કરતે હૈં । રાતદિન પશ્ચાત્તાપ હી પશ્ચાત્તાપ કિયા કરતે હૈં કિ “યદિ એસા ઉપાય કરતે તો યહ વાત વન જાતી, એસા ઉપાય કરતે તો યહ કામના ફલીભૂત હો જાતી, અવ ક્યા કરેં ?, એસા નહીં હુઆ ” ઇત્યાદિ પશ્ચાત્તાપ સે વાહર ખીતર જલા કરતે હૈં । મન મેં પશ્ચાત્તાપ કરના ખીતરી પશ્ચાત્તાપ હૈ, ઓર ઉસે શબ્દ સે પ્રકટ કરના વાહ્ય પશ્ચાત્તાપ હૈ । મનોજ્ઞ પદાર્થોં કી અપ્રાપ્તિ મેં અથવા પુત્રકલત્રાદિ પદાર્થોં કે વિનાશ મેં દુઃખી હોના ખી પરિતાપ હૈ । ચેજો

પ્રથમતરમથેદં ચિન્તનીયં તવાસીદ્,—

વહુજનદયિતેન પ્રેમ કૃત્વા જનેન ।

હતહૃદય ! નિરાશ ! ક્લીવ ! સંતપ્યસે કિં ,

નહિ જહ ! ગતનોયે સેતુવન્ધાઃ ક્રિયન્તે ” ॥૧॥ ઇતિ ॥

કામીઓની દશા જ કંઈ એવી વિલક્ષણ થાય છે કે જે તે પોતાના  
કુળની મર્યાદાને પણ છોડી દે છે, શારીરિક અને માનસિક દુઃખોથી તે  
સદા સંતપ રહ્યા કરે છે રાતદિન પશ્ચાત્તાપ જ કર્યા કરે છે કે—“કદાચ  
એવો ઉપાય કરત તો એ વાત બની જત, આવો ઉપાય કરત તો તેમાં  
મારી કામના ફળીભૂત થાત, હવે શું કરું એવું બન્યું નહિ ” ઇત્યાદિ પશ્ચાત્તા-  
પથી બહારથી તેમજ અંદરથી બળ્યા કરે છે, મનમાં પશ્ચાત્તાપ કરવો અતરનો  
પશ્ચાત્તાપ છે, અને તેને શબ્દથી પ્રગટ કરવો તે વાહ્ય પશ્ચાત્તાપ છે. મનોજ્ઞ પદ-  
ાર્થોની અપ્રાપ્તિમાં અથવા પુત્રકલત્રાદિ પદાર્થોના વિનાશમાં દુઃખી થવું પણ પરિ-

તપ્યતે=પશ્ચાત્તાપસંતપ્નો ભવતિ । અથવા-હિતાપ્રાપ્તૌ પુત્રકલત્રાદિનાશે ચ પરિતપ્યતે ।  
નિશ્ચિલમિદં હિ શોચનાદિકં વિષયાસક્તેન કલુષિતાન્તઃકરણસ્ય દુઃસ્વાવસ્થાદ્યોતકમ્ ।

યદિ વા યૌવનધનમદમોહાભિભૂતઃ કાશ્ચનકામિન્યાદીન્યુપમુજ્ય વૃદ્ધાવસ્થાયાં  
નિકટમરણકાલે શોચતિ-‘ ધિગ્ માં હતભાગ્યં, યદવસરે સકલસુખદો ધર્મો મયા  
શોચનાદિક અવસ્થાએ યહાં કામી પુરુષોં કી પ્રકટ કી ગઈ હેં ; વે સમસ્ત  
હી વિષય કે સમ્બન્ધ સે કલુષિત-અન્તઃકરણવાલે વ્યક્તિયોં કી દુઃસ્વા-  
વસ્થા કી દ્યોતક હેં ।

અથવા-‘શોચતિ’ આદિ પદોં કે અર્થ કા સમન્વય વૃદ્ધાવસ્થા કે  
સાથ મી ઇસ પ્રકાર સે હોતા હૈ-યૌવન ઓર ધન કે મદ સે ઉન્મત્ત તથા  
મોહ કે નશે સે અચેત બના હુઆ યહ પ્રાણી કંચન કામિની કા ઉપભોગ  
કરતે ૨ જબ વૃદ્ધાવસ્થા કા મેહમાન હોતા હૈ ઓર અપના મરણકાલ  
નિકટ દેખતા હૈ તબ વહ શોકાકુલ હો વિચારતા હૈ-મુક્ષ અભાગે  
કો ધિક્કાર હૈ કિ મૈને યોગ્ય અવસર કે પ્રાપ્ત હોને પર મી  
સકલ સુખદાયી ધર્મ કા અરાધન નહીં કિયા, રાત દિન યૌવન ઓર  
ધન કે મદ સે ઉન્મત્ત હોકર અશુભ કા હી સંગ્રહ કિયા, ઇસકા ફલ  
ક્યા હોગા ? ઇસ વાત કા જરા મી વિચાર નહીં કિયા; અબ વૃદ્ધાવસ્થા  
આચુકી હૈ, ઇસમેં જિન ૨ કષ્ટોં કા મૈ અનુભવ કર રહા હૂં યે સબ પૂર્વ

તાપ છે. આ જે શોચનાદિક અવસ્થાઓ આ ઠેકાણે કામી પુરુષોની પ્રગટ કરેલ  
છે તે સમસ્ત વિષયના સંબંધથી કલુષિત અન્તઃકરણવાળી વ્યક્તિઓની દુઃસ્વા-  
સ્થાની દ્યોતક છે.

અથવા—‘શોચતિ’ આદિ પદોના અર્થનો સમન્વય વૃદ્ધાવસ્થામાં પણ  
આ પ્રકારે થાય છે-યૌવન અને ધનના મદથી ઉન્મત્ત તથા મોહના નશાથી  
અચેત બનેલ તે પ્રાણી કંચન કામિનીનો ઉપભોગ કરતો કરતો જ્યારે વૃદ્ધા-  
વસ્થાનો મહેમાન થાય છે અને પોતાનો મરણકાળ નિકટ આવેલો જાણીને શોકા-  
તુર બની વિચારે છે કે ‘મને અભાગીને ધિક્કાર છે કે મેં યોગ્ય અવસરની  
પ્રાપ્તિ હોવા છતાં પણ સુખદાયી ધર્મનું આરાધન ન કર્યું’. રાતદિન યૌવન અને  
ધનના મદથી ઉન્મત્ત બની અશુભનો જ સંગ્રહ કર્યો, તેનું ક્ષણ શું મળશે ?  
એ વાતનો જરા પણ વિચાર ન કર્યો. હવે વૃદ્ધાવસ્થા આવી તેમાં જે જે કષ્ટોનો  
હું અનુભવ કરી રહ્યો છું તે બધા પૂર્વમાં ઉપાર્જિત અશુભ પરિણતિનું જ

નાચરિતઃ ' ઇતિ શોકં કરોતિ । અશુભસ્ય પરિણતિમનવધાયૈવ તત્ર યા પ્રવૃત્તિર્વિહિતા  
સા વાર્ધક્યે દુઃખદા ભવતિ । ઉક્તञ્ચ—

“ ભવિત્રીં ભૂતાનાં પરિણતિમનાલોચ્ય નિયતાં,  
પુરા યદ્યત્ કિञ્ચિદ્વિહિતમશુભં યૌવનમદાત્ ।  
પુનઃ પ્રત્યાસન્ને મહતિ પરલોકૈકગમને,  
તદેવૈકં પુંસાં વ્યથયતિ જરાજીર્ણવપુષામ્ ” ॥ ૧ ॥

‘જૂર્યતે’ ઇત્યાદેરર્થસ્તુ પૂર્વવત્ । અતો મેધાવિના પૂર્વં કાર્યં પરિણતિમાલોચ્યૈવ  
કરણીયં, યેન પશ્ચાત્ પશ્ચાત્તાપો ન ભવેત્ । ઉક્તञ્ચ—

મેં ઉપાર્જિત અશુભ-પરિણતિ કે હી ફલરૂપ હૈં । નીચે કે શ્લોક મેં યહી  
વાત પ્રકટ કી ગઈ હૈ, જૈસે—

“ ભવિત્રીં ભૂતાનાં પરિણતિમનાલોચ્ય નિયતાં,  
પુરા યદ્યત્ કિञ્ચિદ્વિહિતમશુભં યૌવનમદાત્ ।  
પુનઃ પ્રત્યાસન્ને મહતિ પરલોકૈકગમને,  
તદેવૈકં પુંસાં વ્યથયતિ જરાજીર્ણવપુષામ્ ” ॥ ૧ ॥ ઇતિ ।

વૃદ્ધ અપને કો દુઃખી દેખકર ઝૂરતા હૈ, માનસિક એવં શારીરિક  
અનેક કષ્ટોં કા અનુભવ કરતા હૈ । દુઃખી હોને પર અપની કુલમર્યાદા  
કા ભી ધ્યાન નહીં રખતા । ઇસલિયે બુદ્ધિમાન્ પુરુષ કા કર્તવ્ય હૈ કિ  
પ્રત્યેક કાર્ય કે પ્રારંભ-કાલ મેં ઉસકે ફલાફલ કા વિચાર કર ઉસ  
કાર્ય કે કરને મેં પ્રવૃત્તિ કરે । વિના વિચારે તથા ઉસકી સારતા એવં  
અસારતા કી પૂરી વિચારણા કિયે વિના કોઈ ભી કાર્ય નહીં કરના  
ચાહિયે, નહીં તો પશ્ચાત્તાપ કે સિવાય ઓર કોઈ ફલ હાથ નહીં લગતા

ફળફલ છે. નીચેના શ્લોકમાં એજ વાત પ્રગટ કરવામાં આવેલ છે. જો—

“ ભવિત્રીં ભૂતાનાં પરિણતિમનાલોચ્ય નિયતાં,  
પુરા યદ્યત્ કિञ્ચિદ્વિહિતમશુભં યૌવનમદાત્ ।  
પુનઃ પ્રત્યાસન્ને મહતિ પરલોકૈકગમને,  
તદેવૈકં પુંસાં વ્યથયતિ જરાજીર્ણવપુષામ્ ” ॥ ૧ ॥ ઇતિ.

વૃદ્ધ પોતાને હુ-ખી દેખીને ઝુરે છે, માનસિક અને શારીરિક અનેક કષ્ટોનો  
અનુભવ કરે છે. હુ-ખી થવાથી પોતાની કુળમર્યાદાનો પણ ખ્યાલ રાખતો નથી.  
તેથી બુદ્ધિમાન્ પુરુષનું કર્તવ્ય છે કે પ્રત્યેક કાર્યના પ્રારંભકાળમાં તેના ફળાફળનો  
વિચાર કરી તે કાર્યમાં પ્રવૃત્તિ કરે. વિચાર્યા વગર તથા તેની સારતા અને અસારતાની  
પૂરી તપાસ કર્યા વિના કોઈ પણ કાર્ય કરવું જોઈ એ નહિ. નહિ તો પશ્ચાત્તાપ સિવાય

“ઉચિતમનુચિતં વા કુર્વતા કાર્યમાદૌ  
 પરિણતિરવધાર્યા યત્નતઃ પણ્ડિતેન ।  
 અતિરભસકૃતાનાં કર્મણામાફલાપ્તે,—  
 ભવતિ હૃદયદાહી શલ્યતુલ્યો વિપાકઃ” ॥ ૧ ॥ ઇતિ ।

અતઃ પરિગ્રહકારણં શબ્દાદિકામગુણોઽવશ્યમુન્મૂલનીયો મુનિનેતિ  
 તાત્પર્યમ્ ॥ સૂ. ૮ ॥

કઃ શોકાદિકં ન પ્રાપ્નોતીતિ દર્શયતિ—‘આયયચક્ષૂ’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્—આયયચક્ષૂ લોગવિપસ્સી લોગસ્સ અહોભાગં જાણઇ,  
 ઉડ્ઢં ભાગં જાણઇ, તિરિયં ભાગં જાણઇ, ગડ્ઢિણ લોણ અણુ-  
 પરિયટ્ટમાણે સંધિં વિઙ્ગિત્તા ઇહ મચ્છિણ્ણહિ, એસ વીરે પસંસિણ જે  
 વચ્છે પડિમોયણ, જહા અંતો તહા વાહિં, જહા વાહિં તહા અંતો,  
 અંતો અંતો પૂઙ્ગદેહંતરાણિ પાસઇ પુઢો વિ સવંતાં પંડિણ  
 પડિલેહણ ॥ સૂ. ૯ ॥

હૈ । નીચે કે પદ્ય મેં યહી બાત દિશ્વલાઈ ગઈ હૈ, જૈસે—

“ઉચિતમનુચિતં વા કુર્વતા કાર્યમાદૌ,  
 પરિણતિરવધાર્યા યત્નતઃ પણ્ડિતેન ।  
 અતિરભસકૃતાનાં કર્મણામાફલાપ્તે,—  
 ભવતિ હૃદયદાહી શલ્યતુલ્યો વિપાકઃ” ॥ ૧ ॥

ઇસલિયે મુનિજન કા કર્તવ્ય હૈ કિ વે જૈસે ભી હો સકે પરિગ્રહ  
 કે કારણભૂત ઇન પૂર્વોક્ત કામગુણોં કા ઉન્મૂલન કરે ॥ સૂ. ૮ ॥

ખીભું કાંઈ પણુ ઇળ મળતું નથી. નીચેના પદ્યમાં આજ વાત બતાવવામાં આવી  
 છે, જેમ—

“ઉચિતમનુચિતં વા કુર્વતા કાર્યમાદૌ,  
 પરિણતિરવધાર્યા યત્નતઃ પણ્ડિતેન ।  
 અતિરભસકૃતાનાં કર્મણામાફલાપ્તે,—  
 ભવતિ હૃદયદાહી શલ્યતુલ્યો વિપાકઃ” ॥ ૧ ॥ ઇતિ ।

માટે મુનિનું કર્તવ્ય છે કે ત્યાં સુધી બને ત્યાં સુધી પરિગ્રહના કારણભૂત  
 આ પૂર્વોક્ત કામગુણોનું ઉન્મૂલન કરે. ॥ સૂ. ૮ ॥

છાયા—આયતચક્ષુર્લોકવિદર્શી લોકસ્યાધોભાગં જાનાતિ, ઝઘ્ઘં ભાગં જાનાતિ, તિર્યઞ્ચં ભાગં જાનાતિ, ગૃહો લોકોઽનુપરિવર્તમાનઃ સન્ધિં વિદિત્વા ઇહ મર્ત્યેષુ, એષ વીરઃ પ્રશંસિતો યો વદ્ધાન્ પરિમોચયતિ, યથાઽન્તસ્તથા વાહ્યં, યથા વાહ્યં તથાઽન્તઃ, અન્તઃ અન્તઃ પૂતિદેહાન્તરાણિ પૃથગપિ સ્ત્રવન્તિ પણિતઃ પ્રત્યુપેક્ષેત । ૧ ।

ટીકા—‘ આયતચક્ષુરિત્યાદિ । આયતચક્ષુઃ=આયતં=દીર્ઘં ચક્ષુઃ=જ્ઞાનચક્ષુર્યસ્ય સ આયતચક્ષુઃ=એદિકપારત્રિકદુઃસ્વદર્શી—‘ કામા નિયમતોઽનર્થવહુલાઃ ’ इत्यवधार्य तान् विहायाऽऽत्मसुखानुभवीत्यर्थः । किंच लोकविदर्शी, लोकं विषयासङ्गेन क्लिश्यमानं जनं वि=विशेषेण=कामाभिप्वङ्गेन लोके दुःखाधिक्यं, तत्त्यागेन च प्रशमसुखं भवति ’ इत्येवंरूपेण द्रष्टुं शीलं यस्य स लोकविदर्शी—लोकदुःखाभिज्ञः,

શોકાદિકોં કો કૌન પ્રાપ્ત નહીં કરતા ? ઇસકે લિયે સૂત્રકાર કહતે હૈ—‘ આયયચક્ષૂ ’ ઇત્યાદિ ।

ઇહલોકસમ્બન્ધી ઔર પરલોકસમ્બન્ધી દુઃખોં કા જ્ઞાન જિસસે હોતા હૈ એસે જ્ઞાનચક્ષુ કા હી યહાં પર ચક્ષુ-શબ્દ સે ગ્રહણ કિયા ગયા હૈ । ઉભયલોકસમ્બન્ધી દુઃખોં કે જ્ઞાન સે હી ઉસ ચક્ષુ મેં આયતતા પ્રકટ કી ગઈ હૈ । ઇસી આભ્યન્તર ચક્ષુ સે યહ જાના જાતા હૈ કિ કામ-ગુણ નિયમ સે અનર્થકારી હૈ । અતઃ ઇનકા પરિત્યાગ કર આત્મસુખ કા અનુભવશાલી હોના ચાહિયે । ઇસ પ્રકાર કે પવિત્ર વિચાર સે જો ઉસ સુખ કા અનુભવી હૈ, તથા જો લોકવિદર્શી હૈ—અર્થાત્ જો ઇસ વાત કો જાનતા હૈ કિ યહ લોક વિષયોં કે સમ્બન્ધ સે હી અધિક દુઃખી હો રહા હૈ, યદિ પ્રશમ સુખ યહાં પર હો સકતા હૈ તો ઉનકે સચ્ચે ત્યાગ સે હી હો સકતા હૈ । ઇસ પ્રકાર સે જિસકે દેખને કા સ્વભાવ હૈ ઉસકા

શોકાદિકને કોણ પ્રાપ્ત નથી કરતા તેને માટે સૂત્રકાર કહે છે—‘ આયય-ચક્ષૂ ’ ઇત્યાદિ

આ લોકસંબંધી અને પરલોકસંબંધી દુઃખોનું જ્ઞાન જેને થાય છે એવા જ્ઞાનચક્ષુને આ ઠેકાણે ચક્ષુ-શબ્દથી ગ્રહણ કરેલ છે. બન્ને લોકસંબંધી દુઃખોના જ્ઞાનથી જ તે ચક્ષુમાં આયતતા પ્રગટ કરેલ છે. આ આભ્યન્તર ચક્ષુથી એમ બંધુવામાં આવે છે કે કામગુણ નિયમથી અનર્થકારી છે, માટે તેનો પરિત્યાગ કરી આત્મસુખના અનુભવશાળી બનવું જોઈએ. આવા પ્રકારના પવિત્ર વિચારથી જે તેવા સુખના અનુભવી છે, તથા જે લોકવિદર્શી છે અર્થાત્ જે આ વાતને બંધે છે કે આ લોક વિષયોના સંબંધથી જ અધિક દુઃખી બની રહેલ છે. કદાચ પ્રશમ સુખ આહીં બની શકતું હોય તો તેના સાચા ત્યાગથી જ બની શકે છે. આવા પ્રકારથી જેને દેખવાનો સ્વભાવ છે તેનું નામ લોક-



यद्वा लोकस्य=पञ्चास्तिकायरूपस्य वि=विशेषम् ऊर्ध्वाधस्तिर्यग्गतिसुखदुःखायुः-  
कारणकर्मरूपं द्रष्टुं शीलं यस्य स लोकविदर्शी । तदेवाह-‘लोकस्ये-’ त्यादि । लोकस्य  
अधोभागं=निम्नभागं भवनपतिनारकादिनिवासस्थानरूपं जानाति=ज्ञानविषयी-  
करोति, एवम्, ऊर्ध्व भागम्=उपरितनभागं सौधर्मकल्पादिरूपं जानाति, तथा  
तिर्यश्च भागं=मध्यभागं पशुपक्षि-मनुष्यादिनिवासस्थानरूपं जानाति, लोकवि-  
दर्शी येन कर्मविपाकेन यस्मिँल्लोके यस्य प्राणिनो जन्म भवति तत्सर्वं जानातीत्यर्थः॥

यद्वा—‘लोकविदर्शी’ लोकं=परिग्रहाद्यर्जनतत्परं गृहं विशेषेण द्रष्टुं शीलं  
यस्य स लोकविदर्शी । तदेव दर्शयति ‘गृहः’ इत्यादि । ‘गृहः’=कामभोगमूर्च्छितो  
लोकः=जनः अनुपरिवर्तमानः=चतुर्गतिषु भूयो भूयो जन्ममरणे प्राप्नुवन् वर्तते’

नाम लोकविदर्शी है । अथवा पञ्चास्तिकायरूप इस लोक के ऊर्ध्वलोक,  
अधोलोक एवं तिर्यग्लोक के सुख दुःख और आयुबंध के कारणरूप कर्म  
को जानने का जिसका स्वभाव है वह भी लोकविदर्शी है । लोकविदर्शी  
भवनपति और नारकी आदि के निवासस्थानभूत अधोभाग को,  
तथा सौधर्मकल्पादि रूप ऊर्ध्वभाग को और पशु, पक्षी, मनुष्यादिका  
निवासस्थानरूप मध्य लोक को जानता है । कहने का तात्पर्य यह है कि  
लोकविदर्शी जिस कर्मके विपाक से जिस लोक में जिस जीव का जन्म  
होता है उस सब विषय को भलीभाँति जानता है ।

अथवा परिग्रहादिक के उपार्जन तथा संग्रह करने में तत्पर और  
कामभोग में मूर्च्छित ऐसे इस लोक को विशेष रीति से देखने का जिस  
का स्वभाव है वह भी लोकविदर्शी है । वह यह बात भी जानता है कि  
जो प्राणी कामभोगों में आसक्त हैं वे चतुर्गतिरूप इस संसार में वारं-

विदर्शी छे, अथवा पञ्चास्तिकायरूप आ लोकने, ऊर्ध्वलोक, अधोलोक अने तिर्यग्-  
लोकना सुखदुःख अने आयुबंधना कारणरूप कर्मने ज्ञापवानो जेनो स्वभाव  
छे ते पणु लोकविदर्शी छे. लोकविदर्शी भवनपति अने नारकी आदिना निवा-  
सस्थानभूत अधोलोकने, तथा सौधर्मकल्पादिरूप ऊर्ध्वलोकने, अने पशु, पक्षि,  
मनुष्यादिना निवासस्थानरूप मध्यलोकने ज्ञाणु छे. उडेवानु तात्पर्य अे छे डे-  
लोकविदर्शी जे कर्मना विपाकथी जे लोकमां जे जिवनो जन्म थाय छे ते जधा  
विषयने सारी रीते ज्ञाणु छे.

अथवा परिग्रहादिकनुं उपार्जन, तथा संग्रह करवामां तत्पर अने काम-  
भोगोमां मूर्च्छित अेवा आ लोकने विशेष-रीतिथी देखवानो जेनो स्वभाव छे ते  
पणु लोकविदर्शी छे. ते अे बात पणु ज्ञाणु छे डे-जे प्राणी कामभोगोमां  
आसक्त छे तेनुं चतुर्गतिरूप आ संसारमां वारंवार जन्म अने मरण थया डरे छे.

इत्यादिकमपि जानातीति सम्बन्धः । इह=अर्द्धतृतीयद्वीपरूपे लोके मर्त्येषु=मनुष्य-जन्मसु सन्धि=भावसन्धि-ज्ञानादिरत्नत्रयसमाराधनावसरं विदित्वा=ज्ञात्वा शब्दा-दिविषयान् यो जहाति स एषः=पूर्वोक्त आयतचक्षुर्लोकविदर्शी सन्धिपरिज्ञाता वीरः=कर्मविदारणसमर्थः प्रशंसितः=तीर्थङ्करादिभिरभिनन्दितः, य ईदृशः स एव परान् मोचयितुं समर्थ इत्याह-‘जे वद्धे’ इत्यादि । यः स्वयं द्रव्यभावरूपेण बन्धनेन विमुक्तः स एव बद्धान्=कर्मपाशनिगडितान् इतरानपि प्रतिमोचयति=संसार-सारताप्रदर्शनरूपसदुपदेशेन संसारकारागृहादपनयति । यः स्वयं मुक्तः स एव पर-मोचको भवतीति भावः ।

चार जन्म और मरण करते रहते हैं । इस अर्द्धाई द्वीप में मनुष्य-जन्म में ही जीवों को ज्ञानादिकरत्नत्रय की आराधना करने का अवसर मिलता है-अन्यत्र नहीं, अतः शब्दादिक विषयों का जो परित्याग करता है ऐसा वह पूर्वोक्त आयतचक्षुसंपन्न लोकविदर्शी और संधिपरि-ज्ञाता वीर कर्मों के विनाश करने में शक्तिशाली होता है, और ऐसे ही वीर पुरुष की तीर्थंकरादि महापुरुषों ने प्रशंसा की है । ऐसे मनुष्य ही द्रव्य और भाव-बंधन से रहित होते हुए अन्य-दूसरे कर्मरूपी पाश से जकड़े हुए संसारी जीवों को भी संसार की असारता प्रदर्शन करनेवाले अपने उपदेशों से प्रतिबोधित कर इस संसाररूपी कारागार के बंधन से रहित कर देते हैं । बात भी ठीक है; जो स्वयं मुक्त होता है वही दूसरों को मुक्त करनेवाला होता है ।

જ્ઞાની, અપને તથા પર કો હસ સંસારરૂપી કારાગાર કે બંધન સે કૈસે

આ અર્ધી દ્વીપમાં મનુષ્ય-જન્મમાં જ જીવોને જ્ઞાનાદિક રત્નત્રયની આરા-ધના કરવાનો અવસર મળે છે, અન્યત્ર નહિ. માટે શબ્દાદિક વિષયોનો જે પરિ-ત્યાગ કરે છે, એવા તે પૂર્વોક્ત આયતચક્ષુસંપન્ન, લોકવિદર્શી અને સંધિ-પરિજ્ઞાતા, વીર - કર્મોનો વિનાશ કરવામાં શક્તિશાળી થાય છે. અને એવા જ વીર પુરુષની તીર્થંકરાદિ મહાપુરુષોએ પ્રશંસા કરેલ છે. એવા મનુષ્ય જ દ્રવ્ય અને ભાવબંધનથી રહિત થઈને અન્ય-બીજા કર્મરૂપી પાશથી જકડાએલાં સંસારી જીવોને પણ સંસારની અસારતા પ્રદર્શિત કરવાવાળા પોતાના ઉપદેશોથી પ્રતિબોધિત કરી આ સંસારરૂપી કારાગારના બંધનથી રહિત કરી દે છે. વાત પણ ઠીક છે, જે સ્વયં મુક્ત બને છે તે જ બીજાને મુક્ત કરવાવાળા બને છે.

જ્ઞાની પોતાને તથા બીજાને આ સંસારરૂપી કારાગારના બંધનથી કેવી રીતે

કેન પ્રકારેણ સ્વપરાત્માનં પ્રતિમોચયતીતિ જિજ્ઞાસાયાં શરીરામેધ્યત્વ-નિસ્સાર-ત્વ-પ્રદર્શનપુરસ્સરં નિર્વેદ-જનનેત્યાહ—‘યથાઽન્તઃ’ ઇત્યાદિ । યથા=યેન પ્રકારેણ અન્તઃ=શરીરસ્યાભ્યન્તરે શુક્રશોણિતમેદોમજ્જાવસાસ્થ્યાદિપૂર્ણતયા નિઃસારતાઽસ્તિ તથૈવ વહિઃ=શરીરસ્ય વહિર્ભાગેઽપિ શ્લેષ્મશિઙ્ગામૂત્રપુરીષાદયો મલાઃ નિઃસરન્તિ, ઇતિ નિઃસારતા દ્રષ્ટવ્યા । એવં યથા—યાદૃશા=વહિર્નિવભિર્દ્વારૈર્મલા નિઃસરન્તિ તથા=તાદૃશાસ્તે મલા અન્તરપિ વર્તન્તે । શરીરં હિ—અતિજુગુપ્સિતશુક્રશોણિતસંયોગાદુત્પન્નત્વેનાતિઘૃણિતમૂત્રપુરીષપૂત્યાદેર્નિષ્પન્દમાનતયા ચાન્તર્વહિરત્યન્તામેધ્યમેવ ।

છુડાતા હૈ? इस प्रकार की जिज्ञासा का समाधान करने के लिये सूत्रकार कहते हैं कि—‘यथान्तस्तथा बाह्य’—मिति । संसार में समस्त अज्ञानी जीवों को जितना मोह अपने शरीर पर होता है उतना किसी पर भी नहीं होता । अपने शरीर की संभाल के लिये प्रत्येक प्राणी अपनी प्रिय से प्रिय वस्तु तक की भी उपेक्षा कर दिया करता है । अतः जिस शरीर पर अज्ञानी का इतना अधिक मोह होता है, ज्ञानी जीव उसी की असारता प्रकट कर उससे मोही जीवों का अनुराग घटाने के लिये कहते हैं कि—जिस प्रकार यह शरीर भीतर से शुक्र, शोणित, मेद, मज्जा, वशा और अस्थ्यादि अशुचि पदार्थों से युक्त है—अर्थात् इस शरीर के भीतर इन अपवित्र वस्तुओं का जमघट है उसी प्रकार बाहर में भी यह शरीर श्लेष्म-कफ, मूत्र, पुरीषादि से सदा घृणित बना रहता है । इन अपवित्र पदार्थों को बहाने के लिये जैसे इसमें नवद्वार हैं, उसी तरह भीतर भी हैं । यह अतिजुगुप्सित-घृणित शुक्र और शोणित के संयोग

છોડાવે છે ? તે પ્રકારની જિજ્ઞાસાનું સમાધાન કરવા માટે સૂત્રકાર કહે છે કે—‘યથાન્તસ્તથા બાહ્ય’—મિતિ । સંસારમાં સમસ્ત અજ્ઞાની જીવોને જેટલો મોહ પોતાના શરીર ઉપર હોય છે એટલો બીજા ઉપર હોતો નથી. પોતાના શરીરની સંભાળ માટે પ્રત્યેક પ્રાણી પોતાની પ્રિયમાં પ્રિય વસ્તુની પણ ઉપેક્ષા કરી દે છે. માટે જે શરીર ઉપર અજ્ઞાનીનો આટલો અધિક મોહ હોય છે, જ્ઞાની જીવ તેનીજ અસારતા પ્રગટ કરી તેનાથી સોડી જીવોનો અનુરાગ ઘટાડવા માટે કહે છે કે—જે પ્રકારે આ શરીર બીતરથી શુક્ર, લોહી, મેદ, મજ્જા, વસા અને અસ્થિ આદિ અશુચિ પદાર્થોથી યુક્ત છે, અર્થાત્ આ શરીરની બીતર એ અપવિત્ર વસ્તુઓનો જમાવ છે તે પ્રકારે બહાર પણ આ શરીર શ્લેષ્મ-કફ, મૂત્ર, પુરીષાદિથી સદા ઘૃણિતજ ગન્ધુ રહે છે. આ અપવિત્ર પદાર્થોને બહાર નિકળવા જેમ તેનાં નવ દ્વાર છે તે પ્રકારે બીતરમાં પણ છે. એ અતિજુગુપ્સિત-ઘૃણિત

યથા શલ્યહસ્તવૈદ્યોઽનાથમૃતકં તૃણૈર્વૈષ્ટયિત્વા સપ્તાહં યાવજ્જલે સંસ્થાપ્ય શનૈઃ  
ગનૈસ્તસ્ય કથિતમાંસમપાકૃત્ય દર્શયતિ-પચ્યન્તુ ભવન્તઃ, શરીરમિદં યથાઽન્તસ્તથા  
વહિર્યથા વદિસ્તથાઽન્તઃ, સર્વં ચ શરીરં ત્વદ્માંસશોણિતજાઠરાન્નમૂત્રપુરીષાદ્યશુચિ-  
પિણ્ડરૂપમેવાતઃ શરીરે કઃ શુચિવાદઃ? । અશુચૌ ચ શરીરે મુધૈવ મોહોઽજ્ઞાનિનામ્ ।  
યદ્વા-કુષ્ઠાદિના જાયમાનાં તસ્ય દુર્દશાં દર્શયતિ-‘યથાઽન્તઃ’ ઇત્યાદિ ।

ગલત્કુષ્ઠિનો યથા અન્તઃ=શરીરમધ્યે મૂત્રપુરીષસ્થેલશિઘ્વાણપિત્તશોણિત-

સે ઉત્પન્ન હોને કી વજહ સે, તથા અતિમલિન મૂત્ર, પુરીષ આદિ કો  
વહાને વાલા હોને સે ખીતર ઓર બાહર સદા અત્યન્ત અપવિત્ર હી હૈ ।

જૈસે કોઈ ડૉક્ટર અનાથ મૃતક કો તૃણોં સે લપેટ કર સાત દિન  
તક જલ મેં ઉસે રાખ દેના હૈ ઓર જવ ઉસકા ચમડા ધીરે ૨ સડ-ગલ  
જાના હૈ તવ ઉસ ચમડે કો વહ ઉસકે ઉપર સે નિકાલકર ઉસકે  
અસ્થિપંજર કો દિશ્વલાકર કહતા હૈ કિ-દેશ્વિયે, યહ શરીર જિસ પ્રકાર  
ખીતર હૈ ઉસી પ્રકાર બાહર હૈ । યહ સમસ્ત શરીર ચમડા, માંસ,  
શોણિત, પેટ સંબંધી આને, મૂત્ર ઓર પુરીષાદિ અશુચિ પદાર્થોં કા પિણ્ડ-  
રૂપ હી હૈ ; અતઃ ઇસ શરીર મેં શુચિતા કી માન્યતા કહાં તક શોભા-  
સ્પદ માની જા સકની હૈ ? અશુચિ શરીર મેં વ્યર્થ હી અજ્ઞાની જન મોહ  
કરતે હૈ । તથા-કુષ્ઠાદિક સે જિસ સમય ઇસ શરીર કી દુર્દશા હોતી હૈ  
ઉસ સમય કી પરિસ્થિતિ કા ધ્યાન દિલાતે હુએ ખી યહ કહા જાતા હૈ  
કિ “યથાન્તસ્તથા વાહ્ય”-મિતિ ।

એક એસા ખી કોઠ હોતા હૈ કિ જિસસે શરીર કે પ્રત્યેક અંગ ઉપાંગ

શુક અને લોહીના સંયોગથી ઉત્પન્ન થવાથી તથા અતિમલિન મૂત્ર, પુરીષ  
આદિને વહાવવાવાળા હોવાથી ભીતર અને બહાર સદા અત્યંત અપવિત્ર જ છે.

જેમ કેઈ ડૉક્ટર અનાથ મરદાને ઘાસથી લપેટી સાત દિવસ સુધી જળમાં  
તેને રાખે છે અને બ્યારે તેનું ચામડું ધીરે ધીરે સડી સડી ગળી જાય છે  
ત્યારે તે ચામડીને તેના ઉપરથી કાઢીને તેના અસ્થિપિંજરને દેખાડી કહે છે  
કે-દેખો, આ શરીર જેવી રીતે ભીતર છે તેવી રીતે બહાર છે, જે પ્રકારે બહાર  
છે તે પ્રકારે ભીતર છે. આ સમસ્ત શરીર-ચામડી, માંસ, શોણિત, પેટસંબંધી  
આંતરડા, મૂત્ર અને પુરીષાદિ અશુચિ પદાર્થોના પિંડરૂપ જ છે, માટે આ શરીરમાં  
શુચિતાની માન્યતા કયાં સુધી શોભાસ્પદ માની લેવામાં આવે ? અશુચિ  
શરીરમાં વ્યર્થ જ અજ્ઞાનીજન મોહ કરે છે.

તથા-કુષ્ઠાદિકથી જે વખતે આ શરીરની દુર્દશા થાય છે તે સમયની પરિ-  
સ્થિતિનું ધ્યાન આપીને પણ એ કહેવામાં આવે છે કે “યથાન્તસ્તથા વાહ્ય”-મિતિ.

એક એવો પણ કોઠ થાય છે કે જેનાથી શરીરના પ્રત્યેક અંગ ઉપાંગ

कृम्यादीनि भवन्ति तथा बहिः=शरीरबहिर्भागेऽपि पूयपूतिशोणितकृम्यादीनि स्रवन्ति भवन्ति । तदुपरि 'भिनभिनेति' शब्दं कुर्वाणैर्मक्षिकासहस्रैराक्रान्तं स्वशरीरं विज्ञाय स्वयमपि स्वात्मानं जुगुप्सते उद्विजते च । यच्छरीरदौर्गन्ध्येन सङ्क्रामकरोगभिया च यत्पार्श्वे परिजनोऽपि नोपवेष्टुमुत्सहते ।

‘जहा अंतो तहा बाहिं’ इत्यादिना गूढतयोक्तमेवार्थं प्रकटीकुर्वन्नाह—‘अंतो अंतो’ इत्यादि । स आयतचक्षुर्लोकविदर्शी अन्तः अन्तः=शरीरस्य मध्ये मध्ये पूतिदेहान्तराणि—पूत्यन्तराणि=पूतिविशेषान्, तथा देहान्तराणि=देहावस्थाविशेषान् मांसरुधिरमेदोमज्जादिरूपाणि पूत्यन्तरदेहान्तराणीत्यर्थः, पश्यति=ज्ञानचक्षुषा विलोकयति,

गलने लग जाते हैं, इस रोगी को गलत्कुष्टी कहते हैं । इसके शरीर के भीतर जैसे मूत्र, पुरीष, खेल-कान का मैल, शिङ्घाण-नाक का मैल, पित्त, शोणित और कृम्यादिक होते हैं वैसे ही शरीर के बाहिरी भागों में भी पीव, शोणित और कीड़े बगैरह निकलते रहते हैं, हजारों मक्खियां भी भिन्-भिन् शब्द करती हुई उसके ऊपर मंडराती रहती हैं । ऐसी अपनी दशा देखकर वह स्वयं भी अपने से घृणा करने लग जाता है, और दुःखी भी होता रहता है । उसी समय उसके पास उस रोग के लग जाने के भय से तथा उसकी दुर्गंध से उसके परिजन तक भी बैठने की इच्छा तक भी नहीं करते । अतः इस शरीर की जब यह हालत हो तो फिर उसमें मोह करना ही व्यर्थ है ।

ज्ञानीजन तो इस शरीर को सदा अपवित्र जानकर राग करने का स्थान ही नहीं मानते, उनकी दृष्टि में तो इस देह के समस्त भाग ही अति

गणवा लागे છે, આ રોગીને ગલત્કુષ્ટી કહે છે. તેના શરીરની બીતર બેમ મૂત્ર-પુરીષ, બળખાં, કાનનો મેલ, શિઙ્ઘાણ-નાકનો મેલ, પિત્ત, શોણિત અને ચર-મીઆ આદિ થાય છે તેવી જ રીતે શરીરના બહારના ભાગમાં પણ પડું, શોણિત અને કીડા વિગેરે નીકળતા રહે છે. હજારો માખીઓ પણ બણ-બણ શબ્દો કરતી તેના ઉપર ફરતી રહે છે. એવી પોતાની દશા દેખીને તે પોતે પોતાની બતની ઘૂણા કરવા લાગી જાય છે, અને દુઃખી પણ બને છે. તે વખતે તે રોગના લાગી જવાના ભયથી તથા તેની દુર્ગંધથી તેના પરિજન પણ તેની પાસે બેસવાની ઈચ્છા કરતા નથી. માટે આ શરીરની તેવી સ્થિતિ જનતી હોય તો પછી તે શરીર ઉપર મોહ રાખવો વ્યર્થ છે.

જ્ઞાનીજન તો આ શરીરને સદા અપવિત્ર જાણીને રાગ કરવાનું સ્થાનજ માનતા નથી, તેની દૃષ્ટિમાં તો આ દેહના સમસ્ત ભાગ અતિ દુર્ગંધથી ઘૂમ્મિતતર જ

તથા ‘પુઢો વિ’ પૃથગપિ=દેહાદ્ બહિરપિ ‘સવંતાઈં’ સ્વન્તિ=નિઃસરન્તિ=સ્યન્દ-  
માનાનિ પૃત્તિદેહાન્તરાણિ-પૂત્યન્તરાણિ=વિકૃતદુર્ગન્ધરુધિરાણિ, દેહાન્તરાણિ=  
શ્લેષ્માદીનિ, કુષ્ઠરોગિણાં માંસાદીનિ ચ પંશ્યતિ । યદ્દેવં તતઃ કિં કુર્યાત્ ?  
ઇત્યાદ્—‘પણ્ડિતઃ’ ઇત્યાદિ । પણ્ડિતઃ=પરિજ્ઞાતહેયોપાદેયઃ, પ્રત્યુપેક્ષેત=યથા-  
વસ્થિતરૂપેણ જાનીયાત્ । એતત્સર્વં વિદિત્વાસ્ત્યન્તાશુચૌ યૌવનરૂપસમ્પન્નેઽપિ  
શરીરે રાગં ન વિદધ્યાદિતિ ભાવઃ । ઉક્તञ્ચ—

“મંસદ્વિરુહિરણ્હારુવણદ્વકલમલયમેયમજ્જાહિં ।

પુણ્ણમિ ચમ્મકોસે, દુગ્ગંથે અસુહ્વીમચ્છે ॥ ૧ ॥

સંચારિમજંતગલંતવચ્ચમુત્તંતસેઅપુણ્ણમિ ।

દેહે હુજ્જા કિં રાગકારણં અસુહ્હેઝમ્મિ” ॥ ૨ ॥ ઇતિ ॥

દુર્ગંધ સે ઘૃણિતનર હૈં । યદિ ડન ભાગોં કે દુર્ગંધ કી યાદ કી જાવે તો  
વમન તક ભી હો જાવે । તથા ઇસ દેહ મેં અપને ૨ સ્થાન મેં રહી હુઈ  
જો જો માંસ, રુધિર, મજ્જા, શુક્ર, વસા-(ચરવી) તથા હડ્ડી વગેરહ  
ધાતુઁ ઉપધાતુઁ હૈં વે સવ હી, તથા કુષ્ઠાદિ-અવસ્થા મેં સમસ્ત હી  
દ્વન્દ્રિયાં ગલ જાની હૈં । અતઃ જ્ઞાની જન ઇસ ક્ષણવિનશ્વર એવં નિત્ય  
અશુચિ શરીર મેં મમતાશાલી નહોં હોતે હૈં । કહા ભી હૈ—

“મંસદ્વિરુહિરણ્હારુવણદ્વકલમલયમેયમજ્જાહિં,

પુણ્ણમિ ચમ્મકોસે, દુગ્ગંથે અસુહ્વીમચ્છે ॥ ૧ ॥

સંચારિમજંતગલંતવચ્ચમુત્તંતસેઅપુણ્ણમિ, ।

દેહે હુજ્જા કિં રાગકારણં અસુહ્હેઝમ્મિ” ॥ ૨ ॥ ઇતિ

ભાવાર્થ ઇસકા યહી હૈ કિ યહ દેહ માંસાદિક પદાર્થોં સે યુક્ત

છે. કદાચ તે ભાગોની દુર્ગંધની યાદ કરવામાં આવે તો ઉલટી પણ થાય છે.  
તથા આ દેહમાં ધેતુપોતાના સ્થાનમાં રહેલા જે જે માંસ, રુધિર, મેદ, મજ્જા,  
શુક્ર, ચરબી તથા હાડકાં વિગેરે ધાતુઓ, ઉપધાતુઓ છે તે બધી, તથા  
કુષ્ઠાદિ-અવસ્થામાં સમસ્ત ઇન્દ્રિઓ પણ ગળી જવા માંડે છે, તેથી જ્ઞાનીજન  
આ ક્ષણવિનશ્વર અને નિત્ય અશુચિ શરીરમાં મમતાશાળી થતાં નથી. કહું પણ છે—

“મંસદ્વિરુહિરણ્હારુવણદ્વકલમલયમેયમજ્જાહિં ।

પુણ્ણમિ ચમ્મકોસે દુગ્ગંથે અસુહ્વીમચ્છે ॥ ૧ ॥

સંચારિમજંતગલંતવચ્ચમુત્તંતસેઅપુણ્ણમિ ।

દેહે હુજ્જા કિં રાગકારણં અસુહ્હેઝમ્મિ” ॥ ૨ ॥ ઇતિ,

ભાવાર્થ એ છે કે આ દેહ માંસાદિક પદાર્થોથી યુક્ત હોવાથી અશુચિ



छाया—मांसास्थिरुधिरस्तायववनद्धकलमलकमेदोमज्जाभिः ।

पूर्णे चर्मकोशे दुर्गन्धेऽशुचिवीभत्से ॥ १ ॥

संचारिमयन्त्रगलद्वर्चोमूत्रान्त्रस्वेदपूर्णं ॥

देहे भवेत्किं रागकारणम् अशुचिहेतौ ॥ २ ॥ इति ॥ सू० ९ ॥ सू०

उक्तस्वरूपं शरीरं निर्वर्ण्य किं करोतीति दर्शयति—‘से मइमं’ इत्यादि।

मूलम्—से मइमं परिज्ञाय मा य हु लालपच्चासी, मा तेसु तिरिच्छमप्पाणमावायँए कासंकसे खलु अयं पुरिसे, बहुमाई कडेण मूढे पुणो तं करेइ लोहं वेरं वडूढेइ अप्पणो, जमिणं परिकहिज्जइ इमस्स चेव परिवूहणयाए, अमरायइ महासड्ढी अट्टमेयं तु पेहाए अपरिण्णाए कंदइ ॥ सू० १० ॥

छाया—अथ मतिमन् ! परिज्ञाय मा च हु लालाप्रत्याशी, मा तेषु तिरश्चीन-मात्मानमापादयेः, कासंकषः खलु अयं पुरुषः, बहुमायी कृतेन मूढः पुनस्तत्करोति लोभं वैरं च वर्द्धयति आत्मनः, यदिदं परिकथ्यतेऽस्य चैव परिवृंहणाय अमरायते महाश्रद्धी आर्तमेतं तु प्रेक्ष्यापरिज्ञाय क्रन्दति ॥ सू० १० ॥

होने की वजह से अशुचि, दुर्गन्धयुक्त, बीभत्स है । इसमें कोई भी ऐसी चीज नहीं है जो ज्ञानीजन के राग का कारण हो सके, अतः जो हेयोपादेय के ज्ञाता हैं उनका कर्त्तव्य है कि वे इस शरीर को जैसा इसका स्वभाव है उसी रूप से जानें । इस सबके कहने का तात्पर्य यही है कि यौवन से मदमाते रूप से युक्त भी इस अत्यन्त अपवित्र देह में पूर्वोक्त रीति से कथित इस शरीर का स्वरूप समझकर ज्ञानी-संयमी मुनि को राग नहीं करना चाहिये ॥ सू० ॥ ९ ॥

दुर्गन्धयुक्त बीभत्स छे. तेमां ओवी डोछ पणु चीज नथी डे जेने भाटे ज्ञानी-जनो रागनुं कारण भानी शके, भाटे जे हेयोपादेयना ज्ञाता छे तेनुं कर्त्तव्य छे डे आ शरीरने जेवो तेनो स्वभाव छे तेवा रूपमां जे भाने आ अधशुं डडेवानो मतलब छे छे डे—यौवनना मदमाता रूपधी युक्त पणु आ अत्यन्त अपवित्र देहमां पूर्वोक्त रीतिधी कथित आ शरीरनुं स्वरूप समझने ज्ञानी संयमी मुनिओ राग नहि करवो लेछथे ॥ सू० ६ ॥



ટીકા—‘અથ મતિમન્નિ’-ત્યાદિ । અથ કાયકામસ્વરૂપપરિજ્ઞાનાનન્તરં મતિ-મન્=હે મેધાવિન્ ! પરિજ્ઞાય=અશુચિ અશુચિસમ્ભવં ક્ષણભંગુરં ચ શરીરં કટુવિપાકં શબ્દાદિવિષયસ્વરૂપં ચ જ-પરિજ્ઞયા જાત્વા પ્રત્યાખ્યાન-પરિજ્ઞયા પરિત્યજ્ય ‘ચ’ સમુચ્ચયે ‘હુ’—વાક્યાલઙ્કારે ‘લાલાપ્રત્યાશી’ લાલા=પ્રક્ષરદત્તુટ્તમુલસલિલં, તાં પ્રત્યશિતું=પુનરશિતું શીલં यस્ય સ લાલાપ્રત્યાશી=લાલામયી મા ભવ । યથા વિવે-કકલાવિકલો વાલો મુલ્લનિસ્સૃતામધઃપતન્તીં લાલાં પુનઃ પુનરાસ્વાદયતિ તથૈવ ત્વમપિ પરિત્યક્તાનાં કામભોગાનાં પુનરભિલાષં મા કુરુષ્વેતિ તાત્પર્યમ્ । અપિ ચ તેષુ મિથ્યાત્વાવિસ્ત્યાદિસંસારસ્ત્રોતસ્પુ આત્માનં તિરસ્વીનં=પ્રતિકૂલગામિનં પતન-શીલં મા આપાદયેઃ=મા કુરુ, જન્મ-મરણપ્રવાહે સ્વાત્માનં મા પાતયેત્યર્થઃ, શ્રુત-ચારિત્રલક્ષણપરમાનન્દે સ્થાપયેતિ ભાવઃ ।

જ્ઞાનીજન દેહ કા ઉક્ત સ્વરૂપ જાનકર કયા કરતે હૈં ? સો કહતે હૈં—‘સે મદ્મં’ ઇત્યાદિ ।

શિષ્ય કા સંવોધન કરતે હુણ સૂત્રકાર કહતે હૈં કિ-હે મેધાવી શિષ્ય ! તુમ શરીર ઔર કામગુણ કે વર્ણિત સ્વરૂપ સે પરિચિત હો ચુકે હો, તથા યહ ભી જાન ચુકે હો કિ યહ શરીર સ્વયં અશુચિ તથા અશુચિ-કારણો સે પૈદા હુઆ હૈં ; ઔર ક્ષણભંગુર હૈં, યે શબ્દાદિ વિષય ભી કટુકવિપાકવાલે હૈં, ઇસલિયે ઇન સવ વાતોં કો જપરિજ્ઞા સે જાનકર ઔર પ્રત્યાખ્યાન-પરિજ્ઞા સે ઇનકા પરિત્યાગ કર અવ લાલાપ્રત્યાશી-લાર ચાટને વાલા મત વનો । અર્થાત્ જિસ પ્રકાર વિવેકવિકલ વાલક મુલ્લસે નીચે ગિરતો હુઈ અપની લાર કો વારંવાર ચાટતા હૈં ડસી તરહ તુમ ભી પરિત્યક્ત ઇન કામભોગોં કો ફિર સે ભોગને કી અભિલાષા મત કરો । તથા મિથ્યાત્વ, ઔર અવિરતિ આદિ

જાનીજન દેહતુ ઉક્તસ્વરૂપ જાણીને શું કરે છે, તે કહે છે ‘સે મદ્મં’ ઇત્યાદિ.

શિષ્યને સંવોધન કરીને સૂત્રકાર કહે છે કે-હે મેધાવી શિષ્ય ! તમે શરીર અને કામગુણના વર્ણિત સ્વરૂપથી પરિચિત બની ચૂકેલ છો, તથા એ પણ જાણી ચૂક્યા છો કે-આ શરીર સ્વયં અશુચિ તથા અશુચિ કારણોથી પૈદા થયેલ છે, અને ક્ષણભંગુર છે. એ શબ્દાદિ વિષય પણ કટુકવિપાકવાલા છે, માટે આ સુવર્ણી વાતોને જ-પરિજ્ઞાથી જાણીને પ્રત્યાખ્યાન-પરિજ્ઞાથી તેનો પરિ-ત્યાગ કરી હવે લાલાપ્રત્યાશી-લાળગટનારા ન બનો. અર્થાત્ જેવી રીતે વિવેકવિકલ બાળક મુખથી નીચે ટપકતી પોતાની લાળને વારંવાર ચાટે છે તે માફક તમે પણ પરિત્યક્ત આ કામભોગોને ફરીથી ભોગવવાની અભિલાષા ન કરો. તથા મિથ્યાત્વ અને

ન પ્રમાદવતઃ શાન્તિરિતિ દર્શયતિ=‘કાસંકપઃ’ ઇત્યાદિ । અયં પ્રમાદી પુરુષઃ કાસંકપઃ-કસ્યતે=પીડ્યતે પ્રાણી યૈસ્તે કાસાઃ શબ્દાદિવિષયાસ્તાન્ કપતિ=તદભિમુખં ગચ્છતીતિ ‘કાસંકપઃ’ શબ્દાદિવિષયલોલુપઃ । સ હિ સમુદીયમાન-ભોગસ્પૃહોઽહર્નિશં ‘કૃતવાનમું કરિણ્યે ચેમમ્’ ઇત્યાદિનાનાવિધસંકલ્પવિકલ્પવશતઃ પદે પદે વિષીદન્ન કદાચિદપિ શાન્તિમુપલભમાન ઇત્યર્થઃ । કિં ચ વહુમાયી=માયા-

જો સંસાર કે સ્રોત-કારણ હૈં, ઉનમૈં અપની આત્મા કો પતનશીલ મત બનાઓ ; કારણ કિ એસા કરને સે જન્મ ઓર મરણ કે પ્રવાહ કા કમ્પી મ્પી અંત નહીં આ સકેગા । અતઃ જો ઇસ પ્રવાહ કો રોકને કી યાહના હો તો મિથ્યાત્વ આદિ સાંસારિક કારણોં મૈં અપને કો મત ફસાઓ, શ્રુતચારિત્રરૂપ પરમ આનન્દ મૈં હી અપને કો સ્થિત કરો ।

પ્રમાદી આત્મા કો શાંતિ નહીં મિલતી હૈ યહ માની હુઈ વાત હૈ; ક્યોંકિ પ્રમાદી મનુષ્ય શબ્દાદિ વિષયોં કી ઓર ઝુકતા રહતા હૈ, ઉનમૈં લોલુપી બના રહતા હૈ, ઇસકે ચિત્ત મૈં ભોગોં કી ઇચ્છા નિરન્તર રહ્યા કરતી હૈ, “મૈને ઇસકો કિયા, ઇસકો અવ કરૂંગા” ઇત્યાદિ અનેક સંકલ્પ-વિકલ્પોં કે તાંતોં મૈં ફસકર યહ કમ્પી મ્પી સચ્ચી શાંતિ કા અનુભવ નહીં કર સકતા । ક્ષણ-ક્ષણ મૈં વિષાદી બનતા હૈ, કારણ કિ ઇસકા એક સંકલ્પ પૂરા હોતા હૈ ઓર દૂસરે કો પૂર્ણ કરને કે લિયે આકુલ-વ્યાકુલ હો ઉઠતા હૈ । જો શબ્દાદિ-વિષયોં મૈં લોલુપ હૈ ડસકા નામ કાસંકપ હૈ । “કાસ્યતે પીડ્યતે પ્રાણી યૈસ્તે કાસાસ્તાન્ કપતિ=તદભિ-

અવિરતિ આદિ જે સંસારના સ્રોત-કારણ છે તેમાં પોતાના આત્માને પતનશીલ બનાવો નહિ. કારણ કે એવું કરવાથી જન્મ અને મરણના પ્રવાહનો કોઈ વખત પણ અંત આવી શકશે નહિ. માટે જો આ પ્રવાહને રોકવાની યાહના હોય તો મિથ્યાત્વ આદિ સાંસારિક કારણોમાં પોતાની બીજાને ફસાવો નહિ. શ્રુતચારિત્ર-રૂપ પરમ આનંદમાં જ પોતાને સ્થિર કરો.

પ્રમાદી આત્માને શાંતિ મળતી નથી, એ માનેલી વાત છે, કારણ કે પ્રમાદી મનુષ્ય શબ્દાદિ વિષયોની તરફ ઝુકતા રહે છે, તેમાં લોલુપી બની રહે છે, તેના ચિત્તમાં ભોગોની ઇચ્છા નિરન્તર રહ્યા કરે છે. “મેં આ બનાવ્યું, આ વસ્તુને હમણા કઈ છું અગર કરીશ” ઇત્યાદિ અનેક સંકલ્પ વિકલ્પોના તાંતામાં ફસીને તે સાચી શાંતિનો અનુભવ ક્યારેય પણ કરી શકતો નથી. કાણે કાણે વિષાદી બની રહે છે, કારણ કે તેનો એક સંકલ્પ પુરો થાય છે ત્યાં બીજાને પુરો કરવામાં આકુલ-વ્યાકુલ થઈ બેસે છે. જે શબ્દાદિ વિષયોમાં લોલુપ છે તેનું નામ કાસંકપ છે, “કાસ્યતે પીડ્યતે પ્રાણી યૈસ્તે કાસાઃ, તાન્ કપતિ=તદભિમુખં

વહુલઃ નાનાવિધોપાયૈઃ પરપ્રતારણચતુર इत्यर्थः । शब्दादिविषयासक्तस्य कषायो-  
दयोऽवश्यम्भावी ततो 'बहुमायी'—त्युपलक्षणं क्रोधादीनां त्रयाणां, तेन 'बहुक्रोधी'  
इत्यादि भवति । अपि च 'कृतेन मूढः' कृतेन=कर्तव्येन मूढः=विकलः, कार्य-  
व्याकुलचित्तत्वेन भोजनादिसमये भोक्तुमप्यशक्नुवन् स पुनस्तन्मायादिकं तथा

मुखं गच्छति-इति कासंकषः ” अर्थात् જિનકે દ્વારા પ્રાણી દુઃખિત હોતે  
હैं उनका नाम काम है, और वे शब्दादि विषय हैं, इनकी ओर जो  
प्रवृत्ति करता है उसका नाम कासंकष है ।

શબ્દાદિક-વિષયોં મેં આસક્ત પ્રાણી માયાવહુલ હોતે હૈં । અનેક  
પ્રપંચ રચકર દૂસરોં કી પ્રતારણા (ઠગાઈ) કરને કા उनका ध्येय बना  
રહતા હૈ । ઇસ કાર્ય મેં યે ઇતને ચતુર હોતે હૈં કિ-ભોલે-ભાલે પ્રાણી ઇન  
કી માયાચારી મેં વહુત જલ્દી પૈસ જાતે હૈં । 'વહુમાયી' પદ અન્ય ક્રોધ  
માન લોભ કા ઉપલક્ષક હૈ । ઇસસે શબ્દાદિ-વિષયોં મેં પૈસે હુએ પ્રાણી  
વહુક્રોધી, વહુમાની, વહુલોભી હોતે હૈં, એસા અર્થ ભી ઇસી એક પદ સે  
ગૃહીત હો જાતા હૈ, કારણ કિ શબ્દાદિક વિષયોં મેં આસક્ત પ્રાણિયોં કે  
કષાય કા ઉદય અવશ્ય હોતા હૈ તથા એસે પ્રાણી કર્તવ્ય સે ભી વિકલ  
હોતે હૈં અર્થાત્-સમયાનુસાર જો કર્મ ઉન્હેં કરના ચાહિયે उनको नहीं  
કરતે । અન્ય કાર્યોં મેં વ્યાકુલચિત્ત હોને સે, અધિક ક્યા કહા જાય ?;  
उनको खाने तक की भी फुरसत नहीं मिलती । रातदिन उन्हीं मायादिक

गच्छति-इति कासंकषः ” अर्थात् જે દ્વારા પ્રાણી દુઃખિત થાય છે તેનું નામ કામ  
છે અને તે શબ્દાદિ વિષય છે, તેની તરફ જે પ્રવૃત્તિ કરે છે તેનું નામ કાસંકષ છે.

શબ્દાદિક વિષયોમાં આસક્ત પ્રાણી માયાબહુલ હોય છે, અનેક પ્રપંચ  
રચીને બીજાને ઠગવાનો તેનો ધ્યેય બની રહે છે. તે કાર્યમાં તે એટલો  
ચતુર હોય છે કે ભોળા પ્રાણી તેની માયાબળમાં બહુ જલ્દી ફસા જાય છે.  
બહુમાયીપદ અન્ય ક્રોધ માન લોભનો પણ ઉપલક્ષક છે, તેથી શબ્દાદિ વિષ-  
યોમાં ફસેલાં પ્રાણી બહુક્રોધી, બહુમાની અને બહુલોભી હોય છે, એવો  
અર્થ પણ તેના એક પદથી અહિં થઈ જાય છે, કારણ કે શબ્દાદિ વિષયોમાં  
આસક્ત પ્રાણિયોને કષાયનો ઉદય અવશ્ય થાય છે, તથા એવો આત્મા કર્તવ્યથી  
પણ વિકલ થાય છે, સમયાનુસાર જે કર્મ તેણે કરવું જોઈએ તેતો કરતો નથી,  
અન્ય કાર્યોમાં વ્યાકુળચિત્ત હોવાથી તેને અધિક શું કરેવું ?; ખાવાપીવાની પણ  
ફરસત મળતી નથી. રાતદિન તેવા માયાદિક કાર્યોમાં જ ફસા રહે છે, લોભ

કરોતિ યેન આત્મનો લોભં વૈરં ચ વર્દયતે । શબ્દાદિવિષયાઽપ્રાપ્તિદુઃખપીડિતો  
હિ કદાચિચ્છબ્દાદિવિષયાન્ પ્રાપ્નોત્યપિ કિન્તુ પરિણતિવિરસત્વાત્સેવિતા અપિ તે  
ચિરકાલદુઃખદા એવ ભવન્તિ । ઉક્તञ્ચ—

“ સ્વર્ણમિત્તસુખ્વા બહુકાલદુઃખ્વા ” ઇતિ । યદર્થમાત્મનોઽનન્તસંસારજનકં  
વૈરમુત્પાદયતિ । તદાહ—‘ યદિદ ’—મિત્યાદિ । યદ્ યસ્માત્ અસ્યૈવ ક્ષણભઙ્ગુરસ્ય  
શરીરસ્ય પરિવૃંહણાય=પરિવર્દનાય—પુષ્ટ્યર્થં હિંસાધનેકસાવધવ્યાપારાન્ કરોતિ,  
કાર્યોં કે કરને મેં હી ફેસે રહતે હૈં, લોભ ઓર વૈરભાવ કો વઢાતે રહતે  
હૈં । લોભ સે હી માયાચાર કરને મેં જીવોં કી પ્રવૃત્તિ હોતી હૈ । માયા-  
ચાર સે વૈરભાવ કી વૃદ્ધિ હોતી હૈ । થોડી દેર કે લિયે માન લિયા જાય  
કિ શબ્દાદિવિષયોં કી અપ્રાપ્તિજન્ય દુઃખોં સે પીડિત હુઆ પ્રાણી  
કદાચિત્ત્ ઉન શબ્દાદિકવિષયોં કો પ્રાપ્ત કર ભી લે, તો ભી સેવન કિયે  
ગયે વે શબ્દાદિવિષય પરિણામમેં વિરસ હોને સે ભવિષ્યકાલ મેં જીવોં  
કો ચિરકાલ તક દુઃખદાયી હી હોતે હૈં । “ સ્વર્ણમિત્તસુખ્વા બહુકાલ-  
દુઃખ્વા ”—યે વિષય ક્ષણમાત્ર સુખરૂપ ભાસતે હુએ ભી અનન્ત દુઃખોં  
કે દેનેવાલે હોતે હૈં । જિનકે લિયે જીવ અનન્ત સંસાર કે જનક વૈર  
કો ઉત્પન્ન કરતા હૈ । ડસી વાત કો સૂત્રકાર “ જમિણં ” ઇત્યાદિ સે સ્પષ્ટ  
કરતે હુએ કહતે હૈં—સંસાર મેં જીવોં દ્વારા હિંસાદિક અનેક સાવધ વ્યા-  
પારોં કે કરને મેં જો પ્રવૃત્તિ કી જાતી હૈ ડસકા પ્રધાન કારણ એક નિજ  
શરીર કી પુષ્ટિ કરને કા મોહ હી હૈ । ડસ પ્રકાર કે મોહ કે આધીન  
બના હુઆ જીવ સ્વયં અપને આપકો અનેક કષ્ટોં કો ફેલતા હુઆ ભી

અને વેરભાવને વધારતા રહે છે. લોભથી જ માયાચાર કરવામાં જીવોની પ્રવૃત્તિ  
થાય છે, માયાચારથી વેરભાવની વૃદ્ધિ થાય છે. થોડા વળતને માટે માની દ્વેષ  
કે શબ્દાદિ-વિષયોની અપ્રાપ્તિજન્ય દુઃખોથી પીડિત થયેલ પ્રાણી કદાચ તે  
શબ્દાદિક-વિષયોને પ્રાપ્ત કરી લે તો પણ લોભવવામાં આવેલા તે શબ્દાદિવિષય  
પરિણામમાં વિરસ થવાથી ભવિષ્યકાળમાં જીવોને ચિરકાલ સુધી દુઃખદાયી જ  
થાય છે. કેમ કે—“ સ્વર્ણમિત્તસુખ્વા બહુકાલદુઃખ્વા ” આ વિષય ક્ષણમાત્ર સુખરૂપ  
લાગે છે પણ અનંત દુઃખોના દેવાવાળા હોય છે, જેના માટે જીવ અનંતસંસાર-  
જનક વૈરને ઉત્પન્ન કરે છે, આ વાતને સૂત્રકાર “ જમિણં ” ઇત્યાદિ પદોથી  
સ્પષ્ટ કરીને કહે છે—સંસારમાં જીવો હિંસાદિક અનેક સાવધ વ્યાપારો  
કરવામાં જે પ્રવૃત્તિ કરે છે તેનું પ્રધાન કારણ એક પોતાના શરીરની  
પુષ્ટિ કરવાનો મોહ જ છે. આવા પ્રકારના મોહને આધીન બનેલા જીવ પોતે  
પોતાની બાતને અનેક કષ્ટોથી દુઃખી બનાવતાં છતાં પણ સુખી માને છે. અને

સ્વયં ક્ષિયતે ચ । इदमपरं कथ्यते—‘अमरायते’ इत्यादि, ‘महाश्रद्धी’ महती वासौ श्रद्धाऽर्थकामविषया महाश्रद्धा, साऽस्ति यस्य स महाश्रद्धी—भोगेषु तत्साधनेषु चाति-श्रद्धावान् सन् अमरायते भोगवाञ्छयाऽर्थोपार्जनपर आत्मानममरमिव मन्यते । एतम्=अमरायमाणम् महाश्रद्धिनम् आर्तम्=शारीरमानसिकपीडापीडितं प्रेक्ष्य विवेकबुद्ध्या विचार्य, हे शिष्य ! शब्दादिविषये मनो न निधेयमिति भावः । यश्च भोगगृहः

सुखी मानता रहता है, और अर्थ, काम और विषयों एवं उनके साधनों के जुटाने में ही रान-दिन वह तल्लीन बना रहता है । उसके हृदय में सदा यही दृढ़ विश्वास काम करता रहता है कि—‘अर्थ कामादिक एवं उनके साधनों की प्राप्ति से ही जीवन सुखमय होता है, इनके बिना जीवन का कोई मूल्य नहीं । शारीरिक साता ही जीवन की साता है, यह बिना भोगों के होती नहीं, भोगों का भोगना भी बिना अर्थोपार्जन किये बनता नहीं, अतः वे भोगों की वाञ्छा से प्रेरित होकर अर्थोपार्जन करने में तत्पर होते रहते हैं और सब कुछ साधनसंपन्न हो जाने पर अपने आपको अमर मानने लग जाते हैं । इस प्रकार भोग और उनके साधनों में श्रद्धासंपन्न तथा अपने आपको अमर मानने वाले प्राणियों को हे शिष्य ! तुम कभी भी सुखी न समझो । वे तो सदा शारीरिक एवं मानसिक पीडाओं से व्यथित ही रहते हैं । ऐसा जानकर तुम शब्दादि-विषयों में अपने मनको कभी भी आसक्तियुक्त न करो ।

અર્થ, કામ તથા વિષયો અને તેના સાધનોને ભેગવવામાં જ રાત દિવસ તल्लीન બની રહે છે. તેના હૃદયમાં સદા એ જ વિશ્વાસ કામ કરતો રહે છે કે ‘અર્થ-કામાદિક અને તેના સાધનોની પ્રાપ્તિથી જ જીવન સુખમય થાય છે. તેના વિના જીવનનું કોઈ મૂલ્ય નથી. શારીરિક સાતા જ જીવનની સાતા છે. એના વિના ભોગો થતા નથી. ભોગોનું ભોગવવું અર્થ ઉપાર્જન કર્યા વિના થતું નથી, તેથી તે ભોગોની વાછનાથી પ્રેરિત થઈને અર્થ ઉપાર્જન કરવામાં તત્પર રહ્યા કરે છે. અને બધાસાધનસંપન્ન બનવાથી પોતે પોતાની બીજાને અમર માનવા લાગી બીજા છે. આ પ્રકારે ભોગ અને તેના સાધનોમાં શ્રદ્ધાસંપન્ન તથા પોતે પોતાની બીજાને અમર માનવાવાળા પ્રાણીને હે શિષ્ય ! તમે કોઈ વખત પણ સુખી ન માનો. એ તો સદા શારીરિક અને માનસિક પીડાઓથી વ્યથિત જ રહે છે. એવું સમજીને તમે શબ્દાદિ વિષયોથી પોતાના મનને કોઈ વખત પણ આસક્તિ-યુક્ત ન કરો.

સોઽપરિજ્ઞાય=જ્ઞપરિજ્ઞયાઽનર્થકામં તદ્વિપાકં ચાબુદ્ધ્વા, પ્રત્યાખ્યાનપરિજ્ઞયા ચ તમ-  
પરિત્યજ્ય ચ ક્રન્દતિ=ઇષ્ટવિષયાપ્રાપ્તૌ સ્પૃહાં, તન્નાશે શોકં ચાનુભૂયોઽર્ચૈ રોદિતિ ।  
કામભોગાસક્તશ્ચતુર્ગતિકસંસારે ભ્રામં ભ્રામં નરકનિગોદાદિષ્વનન્તયાતનાં પ્રાપ્નો-  
તીતિ ભાવઃ ॥ સૂ૦ ૧૦ ॥

કામકટુવિપાકમુપદર્શ્ય સામ્પ્રતમુપસંહરતિ-‘ સે તં ’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્-સે તં જાણહ જમહં બેમિ, તેઢ્છં પંડિણ પવયમાણે  
સે હંતા છેત્તા મેત્તા લુંપિતા વિલુંપિતા ઉદવિતા, અકટં કરિસ્સા-  
મિત્તિ મન્નમાણે, જસ્સ વિય ણં કરેઢ્, અલં બાલસ્સ સંગેણં, જે વા  
સે કારઢ્ બાલે, ન એવં અણગારસ્સ જાયઢ્-ત્તિ બેમિ ॥ સૂ૦ ૧૧ ॥

છાયા—તત્ (તસ્માત્) તજ્જાનીત યદહં વ્રવીમિ, ચૈકિત્સ્યં પઙ્કિતઃ પ્રવદન્  
સ હન્તા છેત્તા મેત્તા લુમ્પયિતા વિલુમ્પયિતા અપદ્રાવયિતા, અકૃતં કરિષ્યામિ-ઇતિ  
મન્યમાનઃ, યસ્મૈ અપિ ચ સ્વલુ કરોતિ, અલં બાલસ્ય સજ્ઞેન, યો વા તત્કારયતિ  
વાલઃ, ન એવમનગારસ્ય જાયતે ॥ સૂ૦ ૧૧ ॥ ઇતિ વ્રવીમિ ॥

“અપરિજ્ઞાય ક્રન્દતિ”—જો વિષય-ભોગોં મેં ગૃહ્થ બને હુએ હૈં વે इन  
અર્થકામરૂપ ભોગોં કો ઓર इनके વિપાક કો જ્ઞ-પરિજ્ઞા સે નહીં જાન-  
કર ઓર પ્રત્યાખ્યાન-પરિજ્ઞા સે ઉત્તકા પરિત્યાગ નહીં કર, ઇષ્ટ વિષય  
કો પ્રાપ્તિ કો ઇચ્છા સે ઓર ઉત્તકે વિયોગ મેં શોક સે સદા આકુલ-  
વ્યાકુલ બને રહતે હૈં । કામભોગોં મેં આસક્ત વે પ્રાણી ચતુર્ગતિરૂપ इस  
સંસાર મેં વારંવાર ભ્રમણ કર નરક-નિગોદાદિ કો અનન્ત વેદનાઓં કો  
પાતે રહતે હૈં । ॥ સૂ૦ ૧૦ ॥

કામ કે કટુક વિપાક કો સ્પષ્ટકર અબ इसका उपसंहार करते  
हुए सूत्रकार कहते हैं-‘ સે તં ’ ઇત્યાદિ ।

“અપરિજ્ઞાય ક્રન્દતિ” જે વિષય ભોગોમાં ગૃહ્થ બનેલા છે, તેઓ આ  
અર્થકામ-રૂપ ભોગોને અને તેના વિપાકને જ્ઞ-પરિજ્ઞાથી નહિ જાણીને અને  
પ્રત્યાખ્યાન-પરિજ્ઞાથી તેનો પરિત્યાગ નહિ કરીને ઇષ્ટ વિષયની પ્રાપ્તિની ઇચ્છાથી  
તેના વિયોગમાં શોકથી સદા આકુળ-વ્યાકુળ બની રહે છે. કામભોગોમાં આસક્ત  
પ્રાણી ચતુર્ગતિ-રૂપ આ સંસારમાં વારંવાર ભ્રમણ કરી નરકનિગોદાદિની અનંત  
વેદનાઓને ભોગવતા રહે છે. ॥ સૂ૦ ૧૦ ॥

કામના કટુક વિપાકને સ્પષ્ટ કરીને હવે તેનો ઉપસંહાર કરતાં સૂત્રકાર  
કહે છે-‘ સે તં ’ ઇત્યાદિ.



ટોકા—‘તદિત્યાદિ । યસ્માત્કામા દુઃસ્વમૂલાઃ તત્તસ્માત્કારણાત્ યત્પૂર્વોક્તં વક્ષ્યમાણં વા અહં વ્રવીમિ તત્સર્વં યથાવસ્થિતં યૂયં જાનીત—‘કામભોગા હેયાઃ’ ઇતિ મદીયોપદેશમવગ્યં શૃણુતેત્યર્થઃ ।

નનુ ભવદુપદેશે કિં વૈલક્ષણ્યં યદુપદેશં વયં શૃણુમઃ, અન્યોપદેશાદપિ કામ-નિવૃત્તિર્ભવિતુમર્હતીતિ चेदाह—‘चैकित्स्य’—मित्यादि, पण्डितः=पण्डितम्मन्यः केवलं शब्दज्ञानी चैकित्स्यं कामचिकित्सामुत्पन्नरोगचिकित्सामिव कामसेवनमेव

हे शिष्य ! काम सदा दुःस्वों के मूल-कारण हैं, इसलिये इस विषय में पहिले जो कुछ कहा गया है, अथवा आगे भी जो कुछ कहा जावेगा वह सब यथार्थ है; इसमें थोड़ा सा भी संदेह के लिये स्थान नहीं है, ऐसा तुम विश्वास रखो। ‘कामभोग सदा हेय हैं’ यही हमारा उपदेश है। इस उपदेश की पुष्टि इस प्रकार से कामभोगों में हेयता के प्रदर्शन से भलीभांति हो जाती है। अतः मोक्षामिलाबीजन को इस उपदेश का श्रवण करना चाहिये। इस प्रकार से शिष्यों के प्रति सूत्रकार का आदेश है।

प्रश्न—इस आपके उपदेश में ही ऐसी क्या विलक्षणता है जिसके लिये यह उपदेश अवश्य सुना जाय, अन्य के उपदेश से भी कामादिक की निवृत्ति हो सकती है ?।

उत्तर—जो सिर्फ शब्दज्ञानी हैं, अपने आपको विद्वान् मानते हैं

હે શિષ્ય ! કામ સદા દુઃખોનું મૂળ કારણ છે. માટે આ વિષયમાં પહેલાં જે કંઈ કહેવામાં આવેલ છે અથવા આગળ પણ કહેવામાં આવશે તે સઘળું યથાર્થ છે. તેમાં જરા પણ સંદેહનું સ્થાન નથી. એવો તમે વિશ્વાસ રાખો. કામભોગ સદા હેય—ત્યાજ્ય છે. એજ અમારો ઉપદેશ છે. આ ઉપદેશની પુષ્ટિ આ પ્રકારથી કામભોગોમાં હેયતાના પ્રદર્શનથી ભલી ભાંતિ થાય છે. માટે પ્રત્યેક મોક્ષાર્થીએ આ ઉપદેશનું શ્રવણ કરવું જોઈએ. આ પ્રકારથી શિષ્યો પ્રતિ સૂત્રકારનો આદેશ છે.

प्रश्न—आ आपना उपदेशમાં એવી કઈ વિલક્ષણતા છે જેના માટે આ ઉપદેશ અવશ્ય સાંભળવો પડે. બીજાના ઉપદેશથી પણ કામાદિકની નિવૃત્તિ થઈ શકે છે ?

ઉત્તર—જે ફક્ત શબ્દજ્ઞાની છે, પોતે પોતાને વિદ્વાન માને છે એવી વ્યક્તિ



તચ્ચિકિત્સાં પ્રવદન્ સઃ=મિથ્યોપદેષ્ટા પરતીર્થિકો વિવિધસાવધવ્યાપારપ્રવૃત્તો ભવતિ । તદેવાહ—‘હન્તે’ત્યાદિ । હન્તા દણ્ડાદિના, છેત્તા સ્વઙ્ગાદિના, મેત્તા મહ્લકાદિના, લુમ્પયિતા ગ્રન્થિચ્છેદાદિના, વિલુમ્પયિતા આક્રમણાદિના, અપદ્રાવ-યિતા પ્રાણાતિપાતાદિના ભવતિ । કિં કૃત્વૈતાદૃક્સાવધવ્યાપારકારી ભવતીત્યાહ—‘અકૃતં’ યદન્યેન કેનાપિ પૂર્વં કામચિકિત્સનં ન કૃતં તદહં કરિષ્યે, ઇતિ=ઇત્થં મન્યમાનઃ સઃ, યસ્મૈ ચોપદિશતિ સઃ, તદુભયમપિ ન કેવલમુપદેષ્ટૈવ હનનચ્છેદન-

એસે વ્યક્તિ ‘કામભોગાદિકોં કી નિવૃત્તિ અનેકે સેવન કરને સે હી હોતી હૈ’ એસા માનતે હૈં ઓર કહતે મી હૈં—જૈસે ઉત્પન્ન હુણ રોગ કી ચિકિત્સા દવાઈ સે હોતી હૈ ઉસી પ્રકાર કામાદિકોં કી ચિકિત્સા મી અનેકે સેવનરૂપ દવા સે હી હોતી હૈ । ઇસ પ્રકાર કી માન્યતાવાલે સચ્ચે ઉપદેશક ન હોકર ઉલ્ટે મિથ્યા ઉપદેશક હી હૈં । યે પત્થર કી નાવ કે સમાન હૈં । જિસ પ્રકાર પત્થર કી નૌકા સ્વયં ડૂબ જાતી હૈ ઓર સાથ મેં બેઠે હુણ મનુષ્યોં કો મી ડુબા દેતી હૈ, ઠીક ઇસી પ્રકાર યે સ્વયં એક તો સાવધ વ્યાપાર મેં પ્રવૃત્ત બને રહતે હૈં ઓર જો ઇનકી માન્યતા કે અનુયાયી હોતે હૈં વે મી ઇન્હીં કી માન્યતા કે પથિક બન જાતે હૈં, અર્થાત્—યે સ્વયં ડૂબતે હૈં ઓર અપને અનુયાયિયોં કો મી ડુબાતે હૈં, અતઃ ઇનકે ઉપદેશ સે કામાદિક કી નિવૃત્તિ નહીં હો સકતી, કિન્તુ વીતરાગ કે ઉપદેશ સે હી હોતી હૈ । ઇસલિયે ઇસ ઉપદેશ કે સુનને કી જરૂરત હૈ । યહ ઉપદેશ મી સાક્ષાત્ વીતરાગ પ્રભુ કે હી મુખ સે નિકલા હુઆ હૈ । હે જમ્બૂ ! ભગવાન્ સે જૈસા મૈને સુના હૈ વૈસા હી મૈં તુઝે કહતા હૂં । પર-

‘કામભોગાદિકની નિવૃત્તિ, તેનું સેવન કરવાથીજ થાય છે’ એવું માને છે. અને કહે પણ છે કે—‘જેવી રીતે ઉત્પન્ન થયેલ રોગની ચિકિત્સા દવાથીજ થાય છે તે પ્રકારે કામાદિકની ચિકિત્સા પણ તેના સેવનરૂપ દવાથીજ થાય છે. એવી માન્યતાવાળા સાચા ઉપદેશક ન બનીને ઉલ્ટા મિથ્યા ઉપદેશક જ છે. એઓ પત્થરની નાવ સમાન છે. જેવી રીતે પત્થરની નૌકા પોતે ડૂળી બાય છે અને તેમાં બેઠેલા મનુષ્યોને પણ ડુબાવે છે, તે પ્રકારે આ પોતે પણ એકતો સાવધ વ્યાપારમાં પ્રવૃત્ત રહે છે અને જે એની માન્યતાના અનુયાયી હોય છે તે પણ એની માન્યતાનાજ પથિક બની બાય છે. તે પોતે ડૂબે છે અને પોતાના અનુયાયિઓને પણ ડૂબાવે છે. માટે તેના ઉપદેશથી કામાદિકની નિવૃત્તિ થતી નથી, વીતરાગના ઉપદેશથી જ થાય છે, જેથી તે ઉપદેશને સાંભળવાની આવશ્યકતા છે. આ ઉપદેશ પણ સાક્ષાત્ વીતરાગ પ્રભુના મુખથી નિકળેલ છે. હે જમ્બૂ ! ભગવાન પાસેથી જેવું મેં સાંભળ્યું છે તેવું જ કહું છું.’

તીર્થિકોં કા ઉપદેશ મિથ્યા ઇસલિયે હૈ કિ ઉનકે ઉપદેશ સે જીવોં કી સાવધ ક્રિયાઓં મેં પ્રવૃત્તિ હો જાતી હૈ। ઇસકા કારણ મી યહી હૈ કિ વે સ્વયં ઉન સાવધ ક્રિયાઓં સે વિરક્ત નહીં હોતે હૈ, હનન-છેદન-ભેદન-લુમ્પન ઓર વિલુમ્પનાદિક અનેક અકૃત્યોં મેં ઉનકી પ્રવૃત્તિ બની રહતી હૈ। દણ્ડાદિક સે તાડન કરને કા નામ હનન હૈ, ઇસ ક્રિયા કે કર્તા હોને સે વે હનતા કહે જાતે હૈ। ટ્વડ્ગાદિક સે વિદારણ કરને કા નામ છેદન હૈ, ખાલે વગૈરહ સે ભેદને કા નામ ભેદન, ગાંઠ વગૈરહ કે છેદનાદિક કરને કા નામ લુમ્પન ઓર આક્રમણાદિક કરને કા નામ વિલુમ્પન તથા પ્રાણાતિપાત આદિ કરને કા નામ અપદ્રાવણ હૈ। ઇન ૨ ક્રિયાઓં કે કર્તા હોને સે વે છેત્તા, ભેત્તા, લુમ્પયિતા, વિલુમ્પયિતા ઓર અપદ્રાવયિતા કહે જાતે હૈ। ઇન ૨ ક્રિયાઓં કે કરને મેં ઉનકી પ્રવૃત્તિ ઇસલિયે હોતી હૈ કિ—વે યહ વિચાર કરતે હૈ કિ કામ કી યહ ચિકિત્સા પૂર્વ મેં કિસી ને નહીં કી હૈ હમ ઇસે કરેંગે। ઇસ પ્રકાર કી માન્યતા સે પ્રેરિત હોકર વે જિનકે લિયે ઉપદેશ કરતે હૈ વે ઓર સ્વયં ઉપદેષ્ટા, યે દોનોં પૂર્વોક્ત હનન ઓર છેદનાદિક વ્યાપારોં કો કરતે હૈ, ઇસલિયે કરને વાલે કરાને વાલે તથા ઉસકા અનુમોદન કરને વાલે મી અજ્ઞાની માને ગયે હૈ। અર્થાત્ એસે જીવોં કા જ્ઞાન સિર્ફ શાબ્દિક હી હૈ।

પરતીર્થિઓનો ઉપદેશ મિથ્યા તેટલા માટે છે કે તેઓના ઉપદેશથી જીવોની સાવધ વ્યાપારોમાં પ્રવૃત્તિ થઈ જાય છે. તેનું કારણ એ છે કે તેઓ પોતે તેવા સાવધ વ્યાપારોથી વિરક્ત બનેલા નથી. હણવું, છેદવું, ભેદવું, લુમ્પન, અને વિલુમ્પનાદિક અનેક અકૃત્યોમાં તેઓની પ્રવૃત્તિ બની રહે છે. દંડાદિકથી તાડન કરવાનું નામ હણવું છે. આ ક્રિયાનો કર્તા હોવાથી તે કર્તા હણનાર કહેવાય છે. તલવાર આદિથી વિદારણ કરવાનું નામ છેદન છે, ભાલા વિગેરેથી ભેદવું તેનું નામ ભેદન, ગાંઠ વિગેરેનું છેદવું તેનું નામ લુમ્પન અને આક્રમણાદિક કરવાનું નામ વિલુમ્પન તથા પ્રાણાતિપાત આદિ કરવાનું નામ અપદ્રાવણ છે. આ બધી ક્રિયાઓનો કર્તા બનવાથી તે છેત્તા, ભેત્તા, લુમ્પયિતા, વિલુમ્પયિતા અને અપદ્રાવયિતા કહેવામાં આવે છે. આવી ક્રિયાઓના કરવામાં તેઓની પ્રવૃત્તિ તેટલા માટે થાય છે કે—તે એવો વિચાર કરે છે કે આ કામની ચિકિત્સા પૂર્વમાં કોઈએ કરેલ નથી, અમે તે કરીશું. આવા પ્રકારની માન્યતાથી પ્રેરિત થઈને તે જોના માટે ઉપદેશ કરે છે તે અને સ્વયં ઉપદેષ્ટા એ બંને પૂર્વોક્ત હનન અને છેદનાદિક વ્યાપારો કરે છે, માટે કરનાર, કરાવનાર તથા તેની અનુમોદના કરનાર પણ અજ્ઞાની માનવામાં આવે છે. અર્થાત્ એવા જીવોનું જ્ઞાન ફક્ત શાબ્દિક જ છે.

ભેદનાદિસાવધવ્યાપારાન્ કરોતિ । યો વા તત્ હનનાદિકં કારયતિ 'વા' શબ્દાત્તદ-  
 નુમોદકોઽપિ, વાલઃ=અજ્ઞાની શબ્દજ્ઞાનમાત્રાવલમ્બી ભવતિ, અતો વાલસ્ય=  
 એતાદૃશસ્ય કર્તુઃ કારયિતુરનુમોદયિતુરજ્ઞાનિનઃ સંગેન=સંસર્ગેણ, અલં=વ્યર્થમ્ ।  
 અજ્ઞાનિનઃ સંસર્ગોઽપિ સર્પસંસર્ગ ઇવ સર્વથા પરિવર્જનીય ઇતિ ભાવઃ । તસ્માત્પર-  
 તીર્થિકોપદેશઃ શબ્દાદિવિષયકષાયકલુપિતત્વેન હનનાદિસાવધક્રિયાસુ પ્રવૃત્તિ-  
 જનકતયા ચ હેય એવ, ન ચૈતાદૃશો મદીયોપદેશઃ વીતરાગભગવન્મુખાત્સાક્ષાચ્છુત-  
 સ્યૈવ પરિકથ્યમાનત્વાદિતિ તાત્પર્યમ્ । કસ્યૈવં ન ભવતીત્યાહ-'નૈવ'-મિત્યાદિ ।

इसलिये जिस प्रकार सर्प का संसर्ग सर्वथा त्याज्य होता है उसी प्रकार  
 ऐसे अज्ञानी जीवों का संसर्ग भी सदा छोड़ने योग्य शास्त्रकारों ने  
 बतलाया है, अतः इसे अवश्य ही छोड़ देना चाहिये । इससे यह भाव  
 निकलता है कि परतीर्थिकों का उपदेश शब्दादिक-विषय-कषायों से कलु-  
 पित होने की वजह से, तथा हननादिक सावधक्रियाओं में प्रवृत्ति का  
 जनक होने से सदा हेय-त्याज्य है । जिस प्रकार का इनका उपदेश होता  
 है ऐसा उपदेश मेरा नहीं है । क्योंकि यह जो उपदेश दिया गया है,  
 वह साक्षात् वीतराग प्रभु के मुख से ही सुना हुआ दिया गया है, मनः  
 कल्पित नहीं । जो द्रव्य एवं भाव दोनों प्रकार के अगार से रहित हैं,  
 तथा शब्दादिक विषयों के कटुक फल से परिचित हैं ऐसे संयमी मुनि  
 कभी भी इस प्रकार से काम की चिकित्सा का उपदेश नहीं देते हैं,

માટે જેવી રીતે સર્પનો સંસર્ગ સર્વથા ત્યાજ્ય હોય છે, તે પ્રકારે આવા અજ્ઞાની  
 જીવોનો સંસર્ગ પણ સદા છોડવા યોગ્ય શાસ્ત્રકારોએ બતલાવેલ છે, માટે તેને  
 અવશ્ય છોડી દેવો જોઈએ. આથી સાર એ નિકળે છે કે પરતીર્થિજીનો ઉપદેશ  
 શબ્દાદિક-વિષય-કષાયોથી કલુપિત હોવાથી, તથા હણવું આદિ સાવધ વ્યાપારની  
 પ્રવૃત્તિનો જનક હોવાથી સદા હેય-ત્યાજ્ય છે. જેવી રીતે તેઓનો ઉપદેશ  
 હોય છે, તે પ્રકારે મારો ઉપદેશ નથી. કારણકે આ જે ઉપદેશ આપવામાં  
 આવેલ છે તે સાક્ષાત વીતરાગ પ્રભુના મુખથી સાંભળેલો જે છે તેજ આપવામાં  
 આવેલ છે. મનકલ્પિત નહિ. જે દ્રવ્ય અને ભાવ બન્ને પ્રકારના અગાર-ધરથી  
 રહિત છે, તથા શબ્દાદિક વિષયોના કટુક ફળથી પરિચિત છે એવા સંયમી  
 મુનિ કોઈ વખત પણ આ પ્રકારથી કામની ચિકિત્સાનો ઉપદેશ દેતા નથી,

અનગારસ્ય=દ્રવ્યભાવાગારરહિતસ્ય પરિજ્ઞાતશબ્દાદિવિષયકટુવિપાકસ્ય સંયતસ્ય  
 એવં કામચિકિત્સોપદેશદાનં તત્કારણં ચ ન જાયતે=ન કલ્પતે ‘ઇતિ વ્રવીમિ’ ઇતિ  
 પૂર્વવદ્ વ્યાખ્યેયમ્ ॥ સૂ૦ ॥ સૂ૦ ૧૧ ॥

इत्याचाराङ्गसूत्रस्याचारचिन्तामणिटीकायां द्वितीयाध्ययनस्य  
 पञ्चमोद्देशः समाप्तः ॥ २-५ ॥

और न उसके कारण ही बनते हैं । “इति व्रवीमि” इन पदों की  
 व्याख्या पहिले की जा चुकी है ॥ सू० ११ ॥

॥ आचारांगसूत्रके द्वितीय अध्ययन का  
 पंचम उद्देश समाप्त ॥ २-५ ॥

તેમજ તેનું કારણ પણ બનતા નથી. “ઇતિ વ્રવીમિ” આ પદોની વ્યાખ્યા  
 પહેલાં આપવામાં આવેલ છે. ॥ સૂ૦ ૧૧ ॥

આચારાંગસૂત્રના બીજા અધ્યયનનો  
 પાંચમો ઉદ્દેશ સમાપ્ત ૨-૫.



## ॥ आचाराङ्गसूत्रे द्वितीयाध्ययनस्य षष्ठोद्देशः ॥

अभिहितः पञ्चमोद्देशः, साम्प्रतं षष्ठ आरभ्यते । इहानन्तरोद्देशके शरीरपरि-  
रक्षणाय लोकनिश्रया विहरन्नासक्तिरहितोऽनगारो लोके ममत्वं न कुर्यादित्यर्थोऽ-  
भिहितः, स एवात्र प्रतिपाद्यते—‘ सेतं ’ इत्यादि ।

पूर्वोद्देशस्यान्तिमसूत्रे ‘ न ह्येवं अणगारस्स जायइ ’ संयमिन एवं न कल्पते,  
इति कथितम्, तस्यैव विशदीकरणायाह—‘ से तं ’ इत्यादि ।

मूलम्—से तं संबुज्झमाणे आयाणीयं समुत्थाय तम्हा  
पावकम्मं नेव कुज्जा न कारवेज्जा ॥ सू० १ ॥

छाया—स तत् सम्बुद्धयमान आदानीयं समुत्थाय तस्मात्पापकर्म नैव  
कुर्यात् न कारयेत् ॥ सू० १ ॥

## ॥ आचाराङ्गसूत्रके दूसरे अध्ययनका छठा उद्देश ॥

द्वितीय अध्ययन का पंचम उद्देश संपूर्ण हुवा; अब यहां उसका  
छठा उद्देश प्रारंभ किया जाता है। पंचम उद्देश में ‘ शरीर की रक्षा करने  
के लिये आसक्तिरहित होकर लोक की निश्रया से संयममार्ग में विचरना  
चाहिये, संयमी मुनि को लोक के साथ कभी भी ममत्व नहीं करना  
चाहिये ’—यह बात कही गई है। इसी विषय की पुष्टि इस उद्देश में की  
जायगी ‘ सेतं ’ इत्यादि ।

पंचम उद्देश के “ न ह्येवं अणगारस्स जायइ ” इस अन्तिम सूत्र  
में “ संयमी को ऐसा नहीं कल्पता है ” जो यह कहा है उसी को विशद  
करने के लिये कहते हैं—‘ से तं ’ इत्यादि ।

## आचाराङ्गसूत्रना षीन्त अध्ययननो छठो उद्देश.

षीन्त अध्ययननो पांचमो उद्देश समाप्त થયો. હવે છઠ્ઠા ઉદ્દેશનો આરંભ  
થાય છે. પાંચમાં ઉદ્દેશમાં શરીરની રક્ષા કરવા માટે આસક્તિ રહિત બનીને  
લોકની નિશ્રાથી સંયમીએ સંયમ માર્ગમાં વિચરવું જોઈએ. સંયમી મુનિએ  
લોકોની સાથે કોઈ વળત પણ મમત્વ નહિ કરવું જોઈએ. આ વાત કહેવામાં  
આવેલ છે. તે વિષયની પુષ્ટિ આ ઉદ્દેશમાં કરવામાં આવશે.—‘ સેતં ’ ઇત્યાદિ.

પાંચમાં ઉદ્દેશમાં “ ન હ્યેવં અણગારસ્સ જાયઈ ” આ અંતિમ સૂત્રમાં  
“ સંયમીને એવું કલ્પતું નથી. એમ કહેલ છે તેનું વિશદ કરવાને માટે કહે  
છે—‘ સે તં ’ ઇત્યાદિ

यद्वा—सः पूर्वाक्तोऽनगरस्तदादानीयं=ज्ञानादिकं मोक्षैककारणमस्तीत्येवं सम्बुद्ध्यमानः=सम्यग् ज्ञानानः समुत्थाय=सम्यक्संयमाचरणेनोत्थाय 'सर्वसावध-व्यापारं न करिष्यामी'-ति प्रतिज्ञाय, तं कदापि न कुर्यादित्यादि । यतः सर्वसाव-

अथवा-सूत्रमें आये हुए 'आशानीय' शब्द का अर्थ ज्ञानादिक भी है। जिसका अभिप्राय यह होता है कि-"मोक्ष के प्रधानकारण ज्ञानादिक हैं" इस वान को अच्छी तरह से जानने वाला वह अनगार "मैं समस्त सावध व्यापारों को नहीं करूंगा" इस प्रकार की प्रतिज्ञा करके अच्छी तरह से संयम की आराधना करता हुआ उस सावध व्यापार को कभी भी न करे। क्योंकि इस प्रकार की जब वह प्रतिज्ञा

અથવા—સૂત્રમાં આવેલા ‘આદાનીય’ શબ્દનો અર્થ જ્ઞાનાદિક પણ છે. જેનો અભિપ્રાય એ થાય છે કે—“ મોક્ષના પ્રધાન કારણ જ્ઞાનાદિક છે.” આ વાતને સારી રીતે જાણવાવાળા તે અણુગાર “હું સમસ્ત પાપના વ્યાપારો નહીં કરીશ ” આવા પ્રકારની પ્રતિજ્ઞા કરીને સારી રીતે સંયમની આરાધના કરતા થકા તેવા સાવચ વ્યાપારો કોઈ વખત પણ ન કરે. કારણકે જ્યારે તે આવા પ્રકારની

ઘવ્યાપારાકરણપ્રતિજ્ઞાકારી તસ્માત્કારણાત્ પાપકર્મ=પાપજનકત્વાત્પાપરૂપમેવ કર્મ પ્રાણાતિપાતાદિરૂપાષ્ટાદશપ્રકારકં નૈવ કુર્યાત્=ન કદાચિદપિ સમાચરેત્, ન કારયેત્ ‘એવે-’ત્યસ્ય નિશ્ચયાર્થકત્વાત્કુર્વન્તં કારયન્તં વા નાનુમોદયેત્ ॥ સૂ૦ ૧ ॥

પ્રાણાતિપાતાદિષ્વેકં પાપકર્મ કુર્વન્નન્યસ્યાપિ કર્તા ભવતીતિ દર્શયતિ-‘સિયા તત્થ ’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્—સિયા તત્થ એગયરં વિપ્પરામુસઙ્ગહુ અન્નયરંમિ કપ્પઙ્ગ, સુહટ્ઠી લાલપ્પમાણે સણ્ણ દુક્ખેણ મૂઢો વિપ્પરિયાસ-મુવેઙ્ગ, સણ્ણ વિપ્પમાણેણ પુઢો વયં પકુઠ્ઠવઙ્ગ, જંસિમે પાણા પઠ્ઠહિયા, પઢિલેહાણ નો નિકરણાણ એસ પરિન્ના પવુચ્ચઙ્ગ, કમ્મોવસંતી ॥ સૂ૦ ૨ ॥

હાયા—સ્યાત્તત્રૈકતરં વિપરામૃશતિ, પટ્સ્વન્યતરસ્મિન્ કલપતે, સુસ્વાર્થી લાલ-પ્યમાનઃ સ્વકેન દુઃખેન મૂઢો વિપર્યાસમૃષૈતિ, સ્વકેન વિપ્રમાદેન પૃથગ્વ્રતં પ્રકુરુતે, યસ્મિન્નિમે પ્રાણાઃ પ્રવ્યથિતાઃ પ્રત્યુપેક્ષ્ય નો નિકરણાય, એપા પરિજ્ઞા પ્રોચ્યતે કર્મોપશાન્તિઃ ॥ સૂ૦ ૨ ॥

કર ચુકા હૈ તવ વહ કૈસે પ્રાણાતિપાતાદિક અઠારહ પ્રકાર કે પાપ કર્મોં કો કર સકતા હૈ । જવ નહીં કર સકતા હૈ તવ વહ ઉન પાપકર્મોં કો કરને વાલોં કી તથા ઉન્હેં કરાને વાલોં કી અનુમોદના બી કૈસે કર સકતા હૈ? અર્થાત્ નહીં કર સકતા । સૂત્ર મેં ‘એવ’ શબ્દ નિશ્ચય અર્થ મેં પ્રયુક્ત હૈ, અતઃ યહ નિશ્ચિત હૈ કિ અનગાર કબી બી ન સ્વયં ૧૮ અઠારહ પ્રકાર કે પાપસ્થાનોં કો કરેગા, ન કરાવેગા ઔર ન ઉન કરને-કરાને વાલોં કી કબી અનુમોદના હી કરેગા ॥ સૂ૦ ૧ ॥

પ્રતિજ્ઞા લીધેલ છે ત્યારે તે પછી પ્રાણાતિપાતાદિક અઠાર પ્રકારનાં પાપકર્મોં કેવી રીતે કરી શકે? જો નથી જ કરી શકે તો પછી તેવા પાપ કર્મોંના કરનારની તેને કરાવનારની અનુમોદના પણ કેવી રીતે કરી શકે? અર્થાત્ કરી શકતા નથી. સૂત્રમાં એ શબ્દ નિશ્ચય અર્થમાં પ્રયુક્ત છે, માટે જો નિશ્ચિત છે કે અણુગાર કોઈ વખત પણ ૧૮ અઠાર પ્રકારના પાપસ્થાનોને કરે નહિ, કરાવે નહિ તેમજ તેઓની-કરનારાઓની અને કરાવનારાઓની અનુમોદના પણ કરે નહિ ॥ મૂ૦ ૧ ॥



ટીકા—‘સ્યા—’ દિત્યાદિ । યઃ પુરુષઃ સ્યાત્=કદાચિત્ પ્રમાદવશેન તત્ર=પ્રાણાતિપાતાદિરૂપપાપકર્મસુ એકતરં પ્રાણાતિપાતાદિરૂપં ત્રિપરામૃશતિ=સમારમ્ભતે, યથ્ પદ્મસુ મધ્યે અન્યતરસ્મિન્ પૃથિવીકાયાદિકે એકસ્મિન્નપિ સમારમ્ભતે સ પદ્મસુ જીવનિકાયેષુ કલ્પતે=સમારમ્ભતે, યથા કુલારાણાયા ઉદકેન પ્લાવને એકજીવનિકાયારમ્ભે પદ્મજીવનિકાયારમ્ભો ભવતિ તથૈવાત્રૈકજીવનિકાયવિરાધનાયાં પદ્મજીવનિકાયવિરાધનાઽવગ્યમ્ભાવિની । ઉક્તञ્ચ—

“ જત્ય જલં તત્ય વળં, જત્ય વળં તત્ય નિસ્સિઓ અગ્ની ।

અગ્ની વાડસહગયા, તસા ય તન્નિસિયા ચેવ ” ॥૧॥

છાયા—યત્ર જલં તત્ર વનં યત્ર વનં તત્ર નિઃશ્રિતોઽગ્નિઃ ।

અગ્નિર્વાયુસહગતસ્ત્રસાથ તન્નિઃશ્રિતાથૈવ ॥ ઇતિ ।

પ્રાણાતિપાતાદિક ૧૮ પ્રકાર કે પાપસ્થાનોં મેં સે જો કિસી એક મી પાપસ્થાન કા કરનેવાલા હોતા હૈ વહ અન્ય પાપસ્થાનોં કા મી કરનેવાલા હૈ । હસી વિષય કો સૂત્રકાર પ્રકટ કરતે હૈ—“ સિયા તત્ય ” ઇત્યાદિ ।

જો પુરુષ કદાચિત્ પ્રમાદ કે વશવર્તી હોકર પ્રાણાતિપાતાદિક પાપોં મેં સે કિસી એક પાપ કર્મ કો કરતા હૈ, છહકાય કે જીવોં કી વિરાધના મેં સે કિસી એક કાયકે જીવોં કી વિરાધના કરતા હૈ, વહ સમસ્ત પાપકર્મોં કા, એવં છહકાય કે જીવોં કી વિરાધના કા કર્તા માના જાતા હૈ । જૈસે કુંભકાર કી શાલા કો જલ સે સીંચને પર એક જીવનિકાય કે આરંભ હોને પર પદ્મજીવનિકાય કા આરંભ હોતા હૈ, ડસી તરહ યહાં પર મી એક જીવનિકાય કી વિરાધના મેં પદ્મકાય કે જીવોં કી વિરાધના મી અવગ્ય હોતી હૈ । કહા મી હૈ—

પ્રાણાતિપાતાદિક ૧૮ અઢાર પ્રકારના પાપસ્થાનોમાંથી જે કોઈ એક પણ પાપસ્થાનના કરનાર હોય છે તે અન્ય પાપસ્થાનોના કરનાર હોય છે. આ વિષયને સૂત્રકાર પ્રગટ કરે છે—“ સિયા તત્ય ” ઇત્યાદિ.

જે પુરુષ કદાચિત્ પ્રમાદને વશ બની પ્રાણાતિપાતાદિક પાપોમાંથી કોઈ એક પાપકર્મને કરે છે. છકાય હવોની વિરાધનામાંથી કોઈ એક કાયના હવોની વિરાધના કરે છે, તેને સમસ્ત પાપકર્મોના અને છ કાય હવોની વિરાધનાનો કર્તા માનવામાં આવે છે. જેવી રીતે કુંભારના ઘરને જલથી સીંચવાથી એક હવ નિકાયનો આરંભ થવાથી પદ્મહવનિકાયનો આરંભ થાય છે. તેવી રીતે આ ઠેકાણે પણ એક હવ નિકાયની વિરાધનામાં પદ્મકાય હવોની વિરાધના પણ અવશ્ય થાય છે. કહ્યું પણ છે—

एवं पद्मसु व्रतेष्वध्वव्रतविराधनायां पण्णामपि व्रतानां विराधना भवति, तद्यथा—संयमी प्राणातिपाते प्रवृत्तिं कुर्वन् हिंसादिदोषं स्पृशति, तेन प्रतिज्ञाभङ्गजन्यो मृषावादः । उक्तञ्च—

“न करेमिति भणित्ता, तं चेव निसेवए पुणो सो उ ।

પચ્ચક્ખમુસાવાઈ, માયાનિયડીપસંગો ય । ” इति ।

છાયા—ન કરોમીતિ ભણિત્વા, તદેવ નિષેવતે સ તુ ।

પ્રત્યક્ષમૃષાવાદી, માયાનિકૃતિપ્રસન્નશ્ચ ॥

कश्चिज्जीवं घ्नतो घातयतो वा स जीवो नैव स्वशरीरं तस्मै हननाय ना-  
दात्, अतोऽदत्तादानमपि । सर्वं सावद्यं कर्मापरिग्राह्यं, तस्य ग्रहणात्परिग्रहोऽपि । यत्र

“जत्थ जलं तत्थ वणं, जत्थ वणं तत्थ निस्सिओ अग्गी ।

અગ્ગી વાડસહગયા, તસા ય તન્નિસ્સિયા ચેવ ॥ ૧ ॥ ” इति ।

“जहां जल है वहां वनस्पति है, जहां वनस्पति है वहां उसके निश्चित  
अग्नि होती है, जहाँ अग्नि होती है वहां वायुकाय है, जहां वायुकाय है  
वहां त्रसकाय नियम से होते हैं ॥ १ ॥” इसी प्रकार छह ६ व्रतों में से  
प्रथम व्रत की विराधना होने पर छही व्रतों की विराधना होती है। संयमी  
जब प्राणातिपात में प्रवृत्ति करता है उस समय हिंसादिदोषजन्य पाप का  
भागी होता हुआ प्रतिज्ञाभंगजन्य मृषावाद का भागी होता है। कहा भी है—

“न करेमिति भणित्ता, तं चेव निसेवए पुणो सो उ ।

પચ્ચક્ખમુસાવાઈ, માયાનિયડીપસંગો ય ॥ ૧ ॥ ” इति ।

‘मैं हिंसादिक पापों को नहीं करूँगा’ इस प्रकार की प्रतिज्ञा करने

“जत्थ जलं तत्थ वणं, जत्थ वणं तत्थ निस्सिओ अग्गी ।

અગ્ગી વાડસહગયા, તસા ય તન્નિસ્સિયા ચેવ ” ॥૧॥ इति ।

“જ્યાં જળ છે ત્યાં વનસ્પતિ છે. જ્યાં વનસ્પતિ છે ત્યાં તેને નિશ્ચિત  
અગ્નિ હોય છે. જ્યાં અગ્નિ છે ત્યાં વાયુકાય છે, જ્યાં વાયુકાય છે ત્યાં ત્રસકાય  
નિયમથી થાય છે ॥ ૧ ॥” આ પ્રકાર છ વ્રતોમાંથી પ્રથમ વ્રતની વિરાધના હોવાથી  
છ વ્રતોની વિરાધના થાય છે. સંયમી જ્યારે પ્રાણાતિપાતમાં પ્રવૃત્તિ કરે છે તે  
વખતે હિંસાદિ દોષજન્ય પાપનો ભાગી બનતો થકે પ્રતિજ્ઞાભંગજન્ય મૃષાવાદનો  
ભાગી થાય છે. કહું પણ છે—

“ न करेमिति भणित्ता, तं चेव निसेवए पुणो सो उ ।

પચ્ચક્ખમુસાવાઈ, માયાનિયડીપસંગો ય ” ॥ ૧ ॥ इति ।

પરિગ્રહસ્ત્ર મૈથુનં રાત્રિભોજનં ચ જાયત એવ । તત્તથ પદ્સ્વન્યતરસ્મિન્ પ્રવૃત્તો જનઃ સર્વેષ્વપિ પ્રવર્તત એવ । યદ્વા-એકતરમ્=એકમપિ પાપારમ્મં ય આચરતિ-સ સર્વમપિ સમારમ્મં કરોત્યેવ, ઉન્માર્ગપ્રવૃત્તસ્ય તસ્યૈકકરણે સર્વત્ર પ્રવૃત્તિસદ્ભાવાત્ ।

વાલા સંયમી મુનિ યદિ ડસી પ્રત્યાખ્યાત વિષય મેં પ્રવૃત્તિ કરતા હૈ તો ઇસ પ્રકાર કી ડસકી પ્રવૃત્તિ સે ઁક તો ડસકે ગૃહીતવ્રત કા ભંગ હોતા હી હૈ, ઢૂસરા ડસકા મૃષાવાદ કા ઢોષ ભી લગતા હૈ; ક્યોંકિ ડસને અપની પ્રતિજ્ઞા ભંગ કરનેરૂપ મૃષાવાદ કા સેવન કિયા । જિસ જીવ કી હિંસા કરને મેં વહ પ્રવૃત્ત હો રહા હૈ ડસ જીવને ડસકે લિયે અપને શરીર કો ઘાત કરને કે નિમિત્ત તો ઢિયા નહીં હૈ, અતઃ અદત્ત કા ગ્રહીતા હોને સે ડસકે લિયે અદત્તાઢાન કા ઢોષ ભી લગતા હૈ । જિતને ભી સાવચકર્મ હેં વે અપરિગ્રાહ્ય હેં; ડન અપરિગ્રાહ્યોં કો ગ્રહણ કરનેવાલા હોને સે ડસે પરિગ્રહ કે ગ્રહણ કરને કા ઢોષ ભી લાગૂ હોતા હૈ । જહાં પર પરિગ્રહ હૈ વહાં પર મૈથુન ઁવં રાત્રિભોજનજન્ય ઢોષ ભી લગતા હી હૈ । ઇસલિયે છહ ૬ વ્રતોં મેં સે અન્ય ઁક ભી વ્રત કી વિરાધના કરને વાલા મુનિ સમસ્ત વ્રતોં કી વિરાધના કરતા હૈ, યહ વાત ભલીભાંતિ સિદ્ધ હો જાની હૈ । ઇસી પ્રકાર છહ વ્રતોં મેં સે ઁક ભી વ્રત કા નિર્ઢોષ રીતિ સે પાલન કરને વાલા મુનિ અન્ય ઁર ભી વ્રતોં કા પાલક માના જાતા હૈ ।

‘હું હિંસાદિઢ પાપોને કરીશ નહિ.’ આ પ્રકારની પ્રતિજ્ઞા કરવાવાળા સંયમી મુનિ કદાચ તે પ્રત્યાખ્યાત વિષયમાં પ્રવૃત્તિ કરે છે તો આ પ્રકારની તેની પ્રવૃત્તિથી ઁક તો તેના લીધેલા વ્રતનો ભંગ થાય છે. બીજું તેને મૃષાવાદનો ઢોષ પણ લાગે છે. કારણ કે તેણે પોતાની પ્રતિજ્ઞા ભંગ કરવારૂપ મૃષાવાદનું સેવન કર્યું. જે છવની હિંસા કરવામાં તે પ્રવૃત્ત થઈ રહ્યા છે, તે છવેા તેના માટે પોતાનું શરીર ઘાત કરવાને નિમિત્તે તો આપેલ જ નથી. માટે અદત્તનો પણ ગ્રહીતા હોવાથી તેને માટે અદત્તાઢાનનો ઢોષ પણ લાગે છે. જેટલા પણ સાવચકર્મ છે તે અપરિગ્રાહ્ય છે. તે અપરિગ્રાહ્યોના ગ્રહણ કરવાવાળા હોવાથી તેને પરિગ્રહને ગ્રહણ કરવાનો ઢોષ પણ લાગુ થાય છે. જ્યાં પરિગ્રહ છે ત્યાં મૈથુન અને રાત્રિ ભોજનજન્ય ઢોષ પણ લાગે જ છે માટે છ વ્રતોમાંથી અન્ય ઁક પણ વ્રતની વિરાધના કરવાવાળા મુનિ સમસ્ત વ્રતોની વિરાધના કરે છે. આ વાત ભલીભાંતિ સિદ્ધ થઈ જાય છે. તે પ્રકારે છ વ્રતોમાંથી ઁક પણ વ્રતને નિર્ઢોષ રીતિથી પાલન કરવાવાળા મુનિ અન્ય બીજા પણ વ્રતોના પાલક માનવામાં આવે છે.

કિમર્થમયં પાપકર્મણિ પ્રવર્તેતે ? इत्याह—‘सुखार्थी’—‘त्यादि । सुखार्थी=पौद्गलिक-सुखामिलापी लालप्यमानः=अत्यर्थं मुहुर्मुहुर्वा लपतीति लालप्यमानः, सुखार्थमुन्मत्तवन्मोहवशेन यद्वा तद्वा मुहुर्मुहुर्बुधन्, नानाप्रकारान् धावनवल्गनादिकान् व्यापारान् विदधत्, सुखकारणानि च चेतसि चिन्तयन्, कृष्यादिव्यापारैः पृथिवी-कायमुपमर्दयन्, तत्सेचनाद्यर्थमप्कायं, पाकाद्यर्थं तैजसकायं, ग्रीष्मसन्तापोप-

અથવા-કિસી એક મી પાપારમ્ભ કા જો આચરણ કરતા હૈ વહ અન્ય સમસ્ત પાપારમ્ભોં કા આચરણ કરનેવાલા હોતા હી હૈ; ક્યોંકિ જિસકી પ્રવૃત્તિ ઉન્માર્ગ મેં ચાલૂ હૈ વહ યદિ એક મી પાપારમ્ભ કો કરતા હૈ તો ઉસ એક કે કરને મેં અન્ય સબ પાપારમ્ભ કે કરને કા સદ્ભાવ આ હી જાતા હૈ ।

પાપકર્મ મેં પ્રવૃત્તિ હોને કા કારણ એક કેવલ ઉસકી પૌદ્ગલિક સુખ પ્રાપ્ત કરને કી અભિલાષા હી હૈ । અતઃ સુખાર્થી હોને કે કારણ સે હી હુસકી પ્રવૃત્તિ પાપકાર્યો મેં હોતી હૈ । જિસ પ્રકાર ઉન્મત્ત પ્રાણી નશા કે આવેશ સે યદ્વા-તદ્વા વારંવાર બોલતા હૈ ઓર વ્યર્થ મેં ઇધર-ઉધર દોડતા ફિરતા હૈ, ઉસી પ્રકાર યહ મી મોહ કે આવેશ સે યદ્વા-તદ્વા વારંવાર બોલતા હુઆ અનેક પ્રકાર કી યહાં સે વહાં દોડ-ધૂપ કિયા કરતા હૈ, ‘મુજે ઇન કાર્યો કે કરને સે સુખ પ્રાપ્ત હોગા’ હુસ પ્રકાર કી વિચારધારા સે પ્રેરિત હોકર કૃષિ આદિ અનેક પૃથિવીકાયિક જીવોં કે ઉપમર્દન કરને વાલે વ્યાપારોં કો કરતા હૈ, ઉસકે સિંચન કે લિયે અપ્કાય જીવોં કી વિરાધના કરતા હૈ, રસોઈ આદિ વનાને કે લિયે

અથવા—કોઈ એક પણ પાપારમ્ભનો જે આચરણ કરે છે તે અન્ય સમસ્ત પાપારમ્ભોનું આચરણ કરવાવાળા હોય જ છે. કારણ કે જેની પ્રવૃત્તિ ઉન્માર્ગમાં લાગેલી છે તે કદાચ એક પણ પાપારંભ કરે તો તે એક કરવામાં અન્ય બધા પાપારંભ કરવાનો સદ્ભાવ આવી જ જાય છે.

પાપકર્મમાં પ્રવૃત્તિ હોવાનું કારણ એક કેવળ તેની પૌદ્ગલિક સુખ પ્રાપ્ત કરવાની અભિલાષા જ છે. અતઃ સુખાર્થી હોવાના કારણથી જ તેની પ્રવૃત્તિ પાપ કાર્યોમાં થાય છે. જેવી રીતે ઉન્મત્ત પ્રાણી નશાના આવેશથી જેમ તેમ વારંવાર બોલે છે અને વ્યર્થમાં અહીં તહીં દોડતા ફરે છે, તે પ્રકારે તે પણ મોહના આવેશથી જેમ તેમ વારંવાર બોલતાં અનેક પ્રકારની ત્યાંથી અહીં અને અહીંથી ત્યાં દોડધામ કરતા રહે છે ‘મને એ કાર્યો કરવાથી સુખ પ્રાપ્ત થશે’ આવા પ્રકારની વિચારધારાથી પ્રેરિત થઈને કૃષિ આદિ અનેક પૃથિવીકાયિક જીવોનું ઉપમર્દન કરવાવાળા વ્યાપારોને કરે છે, તેના સિંચન માટે અપકાય

ગાન્તયે વાયુકાયમ્, આહારાદ્યથં વનસ્પતિકાયં, કાષ્ઠાદિનિઃશ્રિતં ત્રસકાયં ચ વિરાધયન્ સ્વકેન સ્વકૃતકર્મજનિતેન પૂર્વભવે જ્ઞાનાવરણીયાદ્યવિધિકર્મરૂપં દુઃસ્વ-તર્હીજં તથોપ્તવાન્ યથાઽસ્મિન્ ભવે સ દુઃસ્વતરુઃ પ્રરોદ્યત્યેવ । તાદૃશેન દુઃસ્વેન શારીરિકમાનસિકેન મૂઢઃ=વ્યાકુલિતઃ પરમાર્થમજાનન્ હિતાહિતપ્રાપ્તિપરિહાર-વિકલઃ વિપર્યાસમુપૈતિ પ્રાણિપીડનાદિકં સાવધવ્યાપારમાચરન્ સુખસ્ય વિપરીતં દુઃસ્વમેવ ફલં પ્રાપ્નોતીત્યર્થઃ ।

યદ્વા—અલ્પસુખદં સાવધાનુષ્ઠાનમનુતિષ્ઠન્, સુખસ્થાનેઽનન્તકાલિકં શારીરિક-માનસિકદુઃસ્વમેવ પ્રાપ્નોતીતિ ભાવઃ । પુનરપ્યાદ્—‘સ્વકેને—’ત્યાદિ । સ્વકેન=અથવા સ્વેની આદિ કી રક્ષા કરને કે લિયે અગ્નિ કા સહારા લેતા હૈ, ઇસમેં અગ્નિકાયિક ણવં ઉસે પ્રજ્વલિત કરને કે લિયે વનસ્પતિકાય તથા ઉસમેં રહે હુઁ ત્રસકાય જીવોં કી ખી વિરાધના કરતા હૈ, ગર્મીજન્ય સંતાપ કે શમન કે લિયે વાયુકાય કે જીવોં કા ખી ઘાત કરતા હૈ । ઇસ પ્રકાર યહ જીવ પટ્કાય કે જીવોં કી વિરાધના કરતા હુઆ તઽજન્ય પાપ-કર્મોં કે ઉદય સે દુઃસ્વિત વન હિતાહિત કે વિવેક સે વિકલ હોકર સદા વિપર્યાસ—મિથ્યાત્વ કો પ્રાપ્ત કરતા હૈ । જીવ પૂર્વભવ મેં જિસ પ્રકાર કે તીવ્ર, મન્દ, મધ્યમાદિ પરિણામોં સે જ્ઞાનાવરણીયાદિ આઠ પ્રકાર કે કર્મોં કો વાંધતા હૈ ડહી પ્રકાર સે ડનકા ફલ ખી ડહી ભવ મેં અથવા આગામી ભવ મેં ભોગતા હૈ, યહ નિશ્ચિત સિદ્ધાન્ત હૈ । દુઃસ્વ ભોગના ખી ઇન્હીં કર્મોં કે ઉદયા-ધીન હૈ । જિસ પ્રકાર વિના વીજ કે વૃક્ષ નહીં હોતા હૈ ડહી પ્રકાર વિના

હવોની વિરાધના કરે છે. રસોઢ આદિ ણનાવવા માટે અથવા ખેતી આદિની રક્ષા કરવા માટે અગ્નિનો આશ્રય લે છે, તેમાં અગ્નિકાયિક અને તેને પ્રજ્વલિત કરવા માટે વનસ્પતિકાય તથા તેમાં રહેલા ત્રસકાય હવોની પણ વિરાધના કરે છે. ગર્મીજન્ય સંતાપને શમાવવા માટે વાયુકાયના હવોનો પણ ઘાત કરે છે. આ પ્રકાર આ હવ પટ્કાય હવોની વિરાધના કરતાં તઽજન્ય પાપકર્મોના ઉદયથી હુ.ખિત બની હિતાહિતના વિવેકથી વિકલ બનીને સદા વિપર્યાસ—મિથ્યાત્વને પ્રાપ્ત કરે છે. હવ પૂર્વભવમાં જેવા પ્રકારે તીવ્ર, મન્દ, મધ્યમાદિ પરિણામોથી જ્ઞાનાવર-ણીયાદિ આઠ પ્રકારના કર્મોને બાંધે છે. તે પ્રકારે તેનું જ્ઞાન પણ તે ભવમાં અથવા આગામી ભવમાં ભોગવે છે, એ નિશ્ચિત સિદ્ધાન્ત છે. દુઃખ ભોગવવું પણ તેના કર્મોના ઉદયાધીન છે. જે પ્રકારે ખીજ વિના વૃક્ષ થતું નથી તે પ્રકારે અશુભ કર્મોદય વિના દુઃખ પણ હવોને પ્રાપ્ત થતું નથી. પરભવના બાંધેલા કર્મ આગામી ભવમાં પણ

નિજાજિતેન વિપ્રમાદેન વિવિધેન પશ્ચપ્રકારેણ પ્રમાદેન પૃથક્ જિનોક્તેષુ પદ્મસુ વ્રતેષુ છિન્નભિન્નરૂપેણ જિનશાસનોક્તવિપરીતં વા વ્રતં પ્રકુરુતે ।

इदमत्र तत्त्वम्—पट्सु व्रतेषु प्रथमस्याचरणे द्वितीयस्यानाचरणं, तृतीयस्य चाचरण—मित्येवं छिन्नभिन्नरूपेण व्रतकरणम् ।

અશુભ કર્મોદય કે દુઃખ भी जीवों को प्राप्त नहीं होता । परभव के बांधे हुए कर्म अगामी भव में भी उदय में आते रहते हैं । इसीलिये जीव उन अशुभ कर्मोदयजन्य दुःखों से हिताहित के विवेक से रहित होकर व्यथित होता रहता है । कभी शारीरिक कष्टों का अनुभव करता है तो कभी मानसिक पीडा से दुःखी होता रहता है । वास्तविक वस्तुस्थिति से अज्ञान बनकर “सावद्य व्यापारों के आचरण से ही मैं सुखी होऊँगा” इस प्रकार की अपनी विपरीत कल्पना से सुख के स्थान में दुःख को ही प्राप्त करता रहता है । अथवा—सावद्य व्यापारों का करना सदा सुखदायी नहीं होता । अपनी आवश्यकता की पूर्ति होने पर जीवों को उसकी पूर्तिजन्य काल्पनिक अल्पसुख भले ही मिल जावे परन्तु वह सदा स्थायी नहीं । जिस सुख की आशा से इन सावद्य व्यापारों में जीव प्रवृत्ति किया करते हैं उनसे तो उन्हें उल्टे उस सुख के स्थान में अनन्तकाल तक भोगने योग्य शारीरिक एवं मानसिक दुःख ही प्राप्त होते हैं । ऐसा समझकर संयमी को कभी भी किसी भी प्राणानिपातादिक में प्रवृत्ति नहीं करना चाहिये ।

ઉદયમાં આવે છે, માટે જીવ એ અશુભ કર્મોદયજન્ય દુઃખથી હિતાહિતના વિવેકથી રહિત થઈને વ્યથિત થતા રહે છે. કોઈ વળત શારીરિક કષ્ટોનો અનુભવ કરે છે તો કોઈ વળત માનસિક પીડાથી દુઃખી થતા રહે છે. વાસ્તવિક વસ્તુસ્થિતિથી અજાણ થીને “ સાવધ વ્યાપારોના આચરણથી જ હું સુખી થઈશ ” એવા પ્રકારની ખોટાની વિપરીત કલ્પનાથી સુખના સ્થાને દુઃખને જ પ્રાપ્ત કરે છે. અથવા—સાવધ વ્યાપારોનું કરવું મદા સુખદાયી થતું નથી. ખોટાની આવશ્યકતાની પૂર્તિ થવાથી જીવોને તેની પૂર્તિજન્ય કાલ્પનિક અલ્પ સુખ ભલે મળી જાય પરંતુ તે મદા સ્થાયી નહિ જે સુખની આશાથી આ સાવધ વ્યાપારોમાં જીવ પ્રવૃત્તિ કરે છે, તેનાથી તો તેને ઉલ્ટા તે સુખના સ્થાનમાં અનન્ત કાળ સુધી ભોગવવા યોગ્ય શારીરિક અને માનસિક દુઃખ જ પ્રાપ્ત થાય છે. એવું સમજીને સંયમીએ કોઈ વળતે પણ કોઈ પણ પ્રાણાનિપાતાદિકમાં પ્રવૃત્તિ કરવી જોઈએ નહિ.



इसी प्रकार जो अपने द्वारा उपार्जित मद्यादि पांच प्रकार के प्रमाद के वशवर्ती होकर जिनोक्त छह प्रकार के व्रतों का पालन छिन्न-भिन्नरूप से करते हैं, अथवा जिन भगवानने इन व्रतों के पालन करने की जो विधि बतलाई है उस विधि-विधान से विपरीत विधि-विधान को लेकर जो व्रतों का आराधन करते हैं, अथवा जिनशासनप्रतिपादित व्रतों से विपरीत व्रतों को जो पालते हैं, वे संसार में परिभ्रमण किया करते हैं। संयमी के लिये छह व्रतों का पालन आवश्यक बतलाया है, वह यदि पांच प्रकार के प्रमाद में पतित होकर अपनी इच्छानुसार प्रथम व्रत का आचरण करे और द्वितीय का आचरण न करे तथा तृतीय का आचरण करे अन्य का नहीं; तो इस प्रकार के व्रताराधन से उसके संसार के बंधन का अन्त नहीं आ सकता। अतः व्रतों के पालन करने की विधि जिस प्रकार शास्त्रों में वर्णित है उसी विधि से व्रतों की आराधना करनी चाहिये। जिन व्रतों का पालन संयमी के लिये बतलाया गया है उनके सिवाय यदि वह अन्य व्रतों की आराधना करता है तो इस प्रकार की उसकी स्वच्छंदवृत्ति उसके भव का अन्त करने वाली न होकर उल्टी उसके अनन्त संसार की बढ़ाने वाली ही होगी; क्यों कि इस प्रकार की निजमान्यता में वीतराग प्रभु की आज्ञा का भंग होता है। यह

આ પ્રકારે જે પોતાના દ્વારા ઉપાર્જિત મદ્યાદિ પાંચ પ્રકારના પ્રમાદને વશ બનીને છનોક્ત છ પ્રકારના વ્રતોના પાલનને છિન્નભિન્ન રૂપમાં કરી નાંખે છે. અથવા જિન ભગવાને આ વ્રતોના પાલન માટે જે વિધિ બતાવી છે તે વિધિ-વિધાનથી વિપરીત વિધિ-વિધાન લઈને જે વ્રતોનું આરાધન કરે છે, અથવા જિન-શાસન પ્રતિપાદિત વ્રતોથી વિપરીત વ્રતોને જે પાળે છે તે સંસારમાં પરિભ્રમણ કર્યા કરે છે. સંયમી માટે છ વ્રતોનું પાલન આવશ્યક બતાવ્યું છે, તે કદાચ પાંચ પ્રકારના પ્રમાદમાં પતિત થઈને પોતાની ઇચ્છાનુસાર પ્રથમ વ્રતનું આચરણ કરે અને બીજાનું આચરણ ન કરે, તથા ત્રીજાનું આચરણ કરે અન્યનું નહિ. તો આ પ્રકારના વ્રતારાધનથી તેના સંસારના બંધનનો અંત આવી શકતો નથી. માટે વ્રતોના પાલન કરવાની વિધિ જે પ્રકારે શાસ્ત્રોમાં વર્ણિત છે તેવી વિધિથી વ્રતોની આરાધના કરવી જોઈએ. જે વ્રતોનું પાલન સંયમી માટે બતાવ્યું છે તેના સિવાય કદાચ તે અન્ય વ્રતોની આરાધના કરે છે તો આવા પ્રકારની તેની સ્વચ્છંદવૃત્તિ તેના ભવનો અંત કરવાવાળી નથી બનતી. ઉલ્ટી તેને અનંત સંસાર વધારવા-વાળી થશે, કારણ કે આ પ્રકારની તેની માન્યતામાં વીતરાગ પ્રભુની આજ્ઞાનો



યદ્વા-‘વયં’ ઇત્યસ્ય ‘વય-’મિતિચ્છાયા, તત્ર વયન્તિ=પરિભ્રમન્તિ જન્તવઃ સ્વેન કર્મણા યસ્મિન્ સ વયઃ સંસારસ્તં પ્રકુરુતે-સંસારે પરિભ્રમતીત્યર્થઃ ।

અથવા ‘વયઃ’ ઇતિચ્છાયા, કારણસ્ય-જ્ઞાનાવરણીયાદિકર્મણઃ કાર્યેણ-પ્રમાદેન સહાબેદાત્ સ્વકેન વિપ્રમાદેન=નિજાર્જિતેનાનેકવિધેન મદ્યાદિરૂપપ્રમાદજનકેન કર્મણા વયઃ=અવસ્થાવિશેષમેકેન્દ્રિયાદિકં, પચ્ચેન્દ્રિયેષુ કલલાર્બુદાદિરૂપં, દારિદ્ર્ય-દૌર્ભાગ્યાદ્યાત્મકં ચ પ્રકુરુતે ।

ભંગ હી મહાન્ અનર્થ કા ઓર ભવ કી અનન્ત પરંપરા કા વઢાનેવાલા કારણ માના ગયા હૈ ।

અથવા-જો સંયમી પાંચ પ્રકાર કે પ્રમાદોં કા આસેવન કરતા હૈ વહ અપને સંસાર કો વઢાતા હૈ, યહ બી “વયં પકુન્વહ” હસ પદ સે પ્રકટ હોતા હૈ । “વયં” હસકી છાયા “વ્રતં” જવ હોતી હૈ તવ પૂર્વોક્ત-રૂપ સે હસકા અર્થ સંગત હોતા હૈ । પરન્તુ જવ “વયં” હસકા અર્થ “વયન્તિ=પરિભ્રમન્તિ જન્તવઃ સ્વેન કર્મણા યસ્મિન્ સ વયઃ” હસ વ્યુત્પત્તિ કે અનુસાર કિયા જાવેગા તો હસકા અર્થ સંસાર હોગા; ક્યોંકિ પ્રાણી અપને ઉપાર્જિત કર્મોં કે દ્વારા સંસાર મેં હી પરિભ્રમણ કરતે રહતે હૈં ।

અથવા—“વયં” કી છાયા “વયઃ” જવ હોગી તવ હસકા યહ બી અર્થ હોગા કિ નિજાર્જિત મદ્યાદિકરૂપપ્રમાદજનક કર્મ સે એકેન્દ્રિયાદિક-રૂપ અવસ્થાઈ, તથા પંચેન્દ્રિયોં મેં ગર્ભ કે અન્દર કલલ અર્બુદાદિરૂપ, તથા

ભંગ થાય છે તે ભંગ જ મહાન અનર્થનો, અને ભવની અનંત પરંપરાને વધારવાના કારણ રૂપ બને છે.

અથવા—જે સંયમી પાંચ પ્રકારના પ્રમાદોનું આસેવન કરે છે તે પોતાના સંસારને વધારે છે તે પણ “વયં પકુન્વહ” એ પદથી પ્રગટ થાય છે. “વયં” તેની છાયા “વ્રતં” બ્યારે હોય છે ત્યારે પૂર્વોક્ત રૂપથી તેનો અર્થ સંગત થાય છે. પરંતુ બ્યારે “વયં” તેનો અર્થ “વયન્તિ=પરિભ્રમન્તિ જન્તવઃ સ્વેન કર્મણા યસ્મિન્ સ વયઃ” આ વ્યુત્પત્તિ અનુસાર કરવામાં આવે તો તેનો અર્થ સંસાર થશે, કારણ કે પ્રાણી પોતાના ઉપાર્જિત કર્મો દ્વારા સંસારમાં જ પરિભ્રમણ કરતા રહે છે.

અથવા “વયં”ની છાયા “વયઃ” બ્યારે થશે ત્યારે તેનો એ પણ અર્થ થશે કે પોતાના ઉપાર્જિત મદ્યાદિકરૂપ પ્રમાદજનક કર્મથી હવેની એકેન્દ્રિયાદિક રૂપ અવસ્થાઓ, તથા પંચેન્દ્રિયોના ગર્ભની અંદર કલલ અર્બુદાદિરૂપ, તથા દારિ-

તત્ર જન્તવઃ ક્લિષ્યન્ત ઇત્યાહ—‘ યસ્મિ—’ નિત્યાદિ । યસ્મિન્નિજાર્જિતપ્રમાદ-જન્યકટુકર્મકે, ભવોપગ્રાહિચતુર્ગતિકે સંસારેઽવસ્થાવિશેષે વા, ઇમે=પ્રત્યક્ષનિર્દિષ્ટાઃ પ્રાણાઃ=પ્રાણિનઃ પ્રવ્યથિતાઃ=વહુવિધવ્યસનસમ્પાતેન પીડિતા ભવન્તિ । તતઃ કિં કુર્યાદિત્યાહ—‘ પ્રત્યુપેક્ષ્યે ’—ત્યાદિ । તદેતત્સર્વ સ્વકૃતકર્મવિપાકેન વિવિધપ્રમાદેન વા પ્રાણિનાં પ્રવ્યથનં પ્રત્યુપેક્ષ્ય=સમાલોચ્ય નિકરણાય—નિતરાં ક્રિયન્તે નાનાદુઃસ્વા-વસ્થાવન્તો જન્તવો યેન તન્નિકરણં દુઃસ્વોત્પાદનં, યેન કર્મણા પ્રાણિનો દુઃસ્વનિવહ-મનુભવન્તિ તત્કર્મ નિકરણં, તસ્મૈ=તદર્થ—કર્મ ન કુર્યાત્, પ્રાણિપીડાજનકં કર્મ સર્વથા

દારિદ્ર્ય ઓર દૌર્ભાગ્યાદિરૂપ અવસ્થાઈં હોતી હૈં । પ્રમાદ કા કારણ કર્મ હૈ ઓર પ્રમાદ ઉસકા કાર્ય હૈ । ઇન દોનોં મેં અભેદ સંબંધ સે યહ અર્થ ઘટિત હો જાતા હૈ । અર્થાત્ જીવોં કી એકેન્દ્રિયાદિક તથા કલલ અર્બુદાદિરૂપ એવં દારિદ્ર્ય-દૌર્ભાગ્યાદિરૂપ અવસ્થાઈં કર્મકૃત માની જાની હૈં । પરન્તુ જો યહાં પર પ્રમાદકૃત ઉન્હેં બતલાયા ગયા હૈ ઉસકા કારણ પ્રમાદ મેં ઉસકે કારણભૂત કર્મ કા અભેદ-સંબંધ માનકર હી પ્રકટ ક્રિયા ગયા હૈ । ઇસ પ્રકાર પ્રમાદજન્ય ઇન અવસ્થાવિશેષોં મેં, અથવા ચતુર્ગતિરૂપ ઇસ સંસાર મેં યે સમસ્ત પ્રાણી અનેક પ્રકાર કે કષ્ટોં કે પડંને સે રાતદિન પીડિત હોતે રહતે હૈં । ઇસલિયે જીવોં કી સ્વકૃત કર્મ કે વિપાક સે અથવા અનેક પ્રકાર કે પ્રમાદ સે દુઃસ્થિત અવસ્થાઓં કા અચ્છી પ્રકાર વિચાર કર સંયમી મુનિ કો પ્રાણિપીડાજનક કાર્ય સર્વથા છોડ દેના ચાહિયે । અનેક પ્રકાર કી અવસ્થાઓં સે યુક્ત પ્રાણી જિસકે દ્વારા ક્રિયે જાતે હૈં, એસે દુઃસ્થોં કો ઉત્પાદન કરનેવાલે કાર્યોં સે જીવ સદા દુઃસ્થોં કી પરંપરા કા હી અનુભવ કરતે રહતે હૈં । એસે કાર્ય સંયમી મુનિ કો

દ્રવ્ય અને દુર્ભાગ્યાદિરૂપ અવસ્થાઓ થાય છે. પ્રમાદનું કારણ કર્મ છે અને પ્રમાદ તેનું કાર્ય છે. આ બંનેમાં અભેદ સંબંધથી તેવો અર્થ ઘટિત થઈ જાય છે. અર્થાત્ જીવોની એકેન્દ્રિયાદિક તથા કલલ અર્બુદાદિરૂપ અવસ્થાઓ કર્મકૃત માનવામાં આવે છે, પરંતુ જે તેને આ બંનેઓ પ્રમાદકૃત બતાવેલ છે તેનું કારણ પ્રમાદમાં તેના કારણભૂત કર્મનો અભેદ-સંબંધ માનીને જ પ્રકટ કરવામાં આવેલ છે. આ પ્રકાર પ્રમાદજન્ય આ અવસ્થા-વિશેષોમાં અથવા ચતુર્ગતિરૂપ આ સંસારમાં એ સમસ્ત પ્રાણી અનેક પ્રકારના કષ્ટો પડવાથી રાતદિન પીડિત થયા કરે છે. માટે જીવોના સ્વકૃત કર્મના વિપાકથી અથવા અનેક પ્રકારના પ્રમાદથી દુઃસ્થિત અવસ્થાઓનો સારી રીતે વિચાર કરી સંયમી મુનિએ પ્રાણિ પીડાજનક કાર્ય સર્વથા છોડી દેવું જોઈએ. અનેક પ્રકારની દુઃસ્થિત અવસ્થાઓથી

વર્જयेदित्यर्थः । ततोऽपि किमित्याह 'एषे'-त्यादि । एषा=पूर्वोक्ता सर्वारम्भ-  
निवृत्तिरूपा परिज्ञा=तत्त्वविचारणा ज्ञप्रत्याख्यानरूपा प्रोच्यते=प्रकर्षेण उच्यते=  
कथ्यते मया । सर्वारम्भपरित्यागे किमित्याह-'कर्मोपशान्ति-'  
रिति । कर्मोपशा-  
न्तिः=कर्मणामष्टविधानामुपशान्तिः=उपशमः कर्मक्षयो वा भवतीत्यर्थः ॥ सू० २ ॥

સદા છોડ દેના ચાહિયે । હસ પ્રકાર કે કાર્યો કે પરિત્યાગ સે આઠ  
કર્મોં કી ઉપશાન્તિ-ઉપશમ અથવા ઉનકા ક્ષય હોતા હૈ । હસ પ્રકાર  
સે યહાં પર જો સંયમી મુનિ કે લિયે સર્વારંભનિવૃત્તિરૂપ જ્ઞપરિજ્ઞા ઓર  
પ્રત્યાખ્યાનપરિજ્ઞા કહી ગઈ હૈ, ઉસકા કારણ યહી હૈ કિ સંયમી મુનિ  
અપની પ્રવૃત્તિ કો પ્રમાદ સે સદા સુરક્ષિત રહે । પ્રમાદ કરને સે નવીન  
કર્મોં કા બન્ધ ઓર ઉસસે ફિર પ્રમાદ હસ પ્રકાર કી પરસ્પર મેં કાર્ય-  
કારણભાવ કી પરંપરા ચલતી હૈ, જિસસે સંયમી અપને લક્ષ્ય કી સિદ્ધિ  
સે વંચિત રહતા હૈ । અતઃ વહ અપને લક્ષ્ય કી સિદ્ધિ કરને કે લિયે  
ગ્રહણ કિયે હુણ સંયમમાર્ગ કી ઓર ઉત્તરોત્તર વૃદ્ધિ કરતા હુઆ અગ્ર-  
સર હોતા રહે । હસી વિચારણા સે સુધર્માસ્વામી કહતે હૈં કિ યહ જો  
સર્વારંભનિવૃત્તિરૂપ પરિજ્ઞા કા કથન મૈને કિયા હૈ ઉસસે સંયમી મુનિ  
અપને અષ્ટવિધ કર્મોં કા નિરાકરણ કર અપને લક્ષ્ય કી સિદ્ધિ કર  
છેતા હૈ ॥ સૂ૦ ૨ ॥

યુક્ત પ્રાણી જે દ્વારા કરવામાં આવે છે, એવા હુઃખોને ઉત્પન્ન કરનાર કાર્યોનું  
નામ નિકરણ છે. એવા કાર્યોથી જીવ સદા હુઃખોની પરંપરાનો જ અનુભવ કરે  
છે. એવું કાર્ય સંયમી મુનિએ સદા છોડી દેવું જોઈએ. આવા પ્રકારના કાર્યના  
પરિત્યાગથી આઠ કર્મોની ઉપશાન્તિ-ઉપશમ અથવા તેનો ક્ષય થાય છે. આ  
પ્રકારે આ જગ્યાએ જે સંયમી મુનિ માટે સર્વારંભનિવૃત્તિરૂપ જ્ઞ-પરિજ્ઞા  
અને પ્રત્યાખ્યાન-પરિજ્ઞા કહેલ છે તેનું કારણ એ છે કે સંયમી મુનિ પોતાની  
પ્રવૃત્તિને પ્રમાદથી સદા સુરક્ષિત રાખે. પ્રમાદ કરવાથી નવીન કર્મોનો બંધ અને  
તેનાથી પછી પ્રમાદ એ પ્રકારની પરસ્પરમાં કાર્યકારણ-ભાવની પરંપરા આવે છે.  
જેનાથી સંયમી પોતાના લક્ષ્યની સિદ્ધિથી વંચિત રહે છે. માટે તે પોતાના લક્ષ્યની  
સિદ્ધિ કરવા માટે ગ્રહણ કરેલા સંયમ-માર્ગની તરફ ઉત્તરોત્તર વૃદ્ધિ કરીને  
અગ્રસર થતા રહે, એવી વિચારણાથી સુધર્માસ્વામી કહે છે કે આ જે સર્વારંભ-  
નિવૃત્તિરૂપ પરિજ્ઞાનું કથન મેં કર્યું છે તેનાથી સંયમી મુનિ પોતાના અષ્ટ-  
વિધ કર્મોનું નિરાકરણ કરી પોતાના લક્ષ્યની સિદ્ધિ કરી લે છે ॥ સૂ૦ ૨ ॥

શારીરિક-માનસિક-દુઃખોત્પાદનકારણં મમત્વબુદ્ધિરેવ, તન્નિવૃત્ત્યા મુનિર્ભવ-  
તીતિ દર્શયતિ-‘ જે મમાઇયમઇં ’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ-જે મમાઇયમઇં જહાઇ, સે ચયઇ મમાઇયં,

સે હુ દિટ્ઠપહે મુળી, જસ્સ નત્થિ મમાઇયં ॥ સૂ. ૩ ॥

છાયા—યો મમાયિતમતિં જહાતિ સ ત્યજતિ મમાયિતમ્ । સ હુ દૃષ્ટપથો મુનિ-  
ર્યસ્ય નાસ્તિ મમાયિતમ્ ॥ સૂ. ૩ ॥

ટીકા—‘ યો મમાયિતમતિ ’-મિત્યાદિ । યઃ પરિગ્રહજન્યકદુઃખપાકજ્ઞો  
‘ મમાયિતમતિ ’ મમેત્યેવંરૂપો મમાયિતઃ પરિગ્રહસ્તસ્ય મતિર્મમાયિતમતિસ્તાં મમા-  
યિતમતિં જહાતિ=ત્યજતિ, સ એવ મમાયિતં દ્રવ્યતઃ પુત્રકલત્રહિરણ્યસુવર્ણેશ્વર્યા-

શારીરિક એવં માનસિક દુઃખોં કી ઉત્પત્તિ કા કારણ એક મમત્વ-  
બુદ્ધિ હી હૈ । ઉસકા જવનક પરિહાર નહીં કિયા જાવેગા તવતક વાસ્ત-  
વિક મુનિપના નહીં આસકના હૈ । ઇસલિયે મુનિ હોને કે લિયે ઉસકી  
નિવૃત્તિ હોના આવડ્યક હૈ । ઇસ વાત કો દિખાતે હુએ સૂત્રકાર કહતે  
હૈ—‘ જે મમાઇયમઇં ’ ઇત્યાદિ ।

જો યહ સમજના હૈ કિ ‘ પરિગ્રહ કા સંગ્રહ મહાદુઃખદાયી હૈ, તથા  
ઇસકા ફલ મી કદુક હી હૈ ’ વહ કમીં મી પરિગ્રહ કે ઉપાર્જન કરનેમેં  
નહીં પૈસતા હૈ, તથા જો ઇસ વાત કો મી મલીભાંતિ જાન ચુકા હૈ કિ  
‘ પરિગ્રહ માત્ર હી દુઃખપ્રદ એવં પરિણામ મેં અનેક અનર્થોં કા મૂલ  
હૈ ’ વહ તો ઉસ પરિગ્રહ કી અભિલાષા તક મી નહીં કરતા હૈ,  
ચાહે વહ દ્રવ્ય સે પુત્ર, કલત્ર, હિરણ્ય, સુવર્ણ, એશ્વર્યાદિરૂપ પરિગ્રહ હો,

શારીરિક અને માનસિક દુઃખોની ઉત્પત્તિનું કારણ એક મમત્વ-બુદ્ધિ જ  
છે. તેનો ત્યાં સુધી પરિહાર નહિ કરવામાં આવે ત્યાં સુધી વાસ્તવિક મુનિપણું  
આવી શકતું નથી. માટે મુનિ હોવાથી તેની નિવૃત્તિ આવશ્યક છે. એ વાતને  
દેખાડીને સૂત્રકાર કહે છે—‘ જે મમાઇયમઇં ’ ઇત્યાદિ.

જે એમ સમજે છે કે ‘ પરિગ્રહનો સંગ્રહ મહા દુઃખદાયી છે, તથા તેનું  
ફળ પણ કદુ જ છે ’ તે કોઇ વખત પણ પરિગ્રહનો ઉપાર્જન કરવામાં ફસતા  
નથી, તથા જે આ વાતને ભલીભાંતિથી જાણે છે કે ‘ પરિગ્રહમાત્ર દુઃખપ્રદ અને  
પરિણામમાં અનેક અનર્થોનું મૂળ છે ’. તે તો તે પરિગ્રહની અભિલાષા સુદ્ધાં  
કરતા નથી, ભલે તે દ્રવ્યથી પુત્ર, કલત્ર, હિરણ્ય, સુવર્ણ, એશ્વર્યાદિરૂપ પરિગ્રહ

દિરૂપં ભાવતો મૂર્છારૂપમાત્મપરિણામં ત્યજતિ=પરિદ્વરતિ-પરિગ્રહવુદ્ધિપરિત્યાગેન પરિગ્રહઃ સુત્યજો ભવતિ । યસ્ય=અનિર્દિષ્ટનામધેયસ્ય મમાયિતં નાસ્તિ સ હુ સ એવ 'દૃષ્ટપથઃ' દૃષ્ટો રત્નત્રયરૂપઃ પન્થાઃ=મોક્ષમાર્ગો યેન સ દૃષ્ટપથઃ પરિજ્ઞાતમોક્ષ-માર્ગો મુનિઃ=અનગારો ભવતિ । મમાયિતમતિપરિત્યાગેનાવશ્યં મમાયિતઃ પરિત્યક્તો ભવતિ, તત્પરિત્યાગે ચ દ્રવ્યભાવરૂપો મમાયિતવ્યપદાર્થસાથો હિરણ્યાદિરૂપોઽપિ નિયતં પરિહતો ભવતિ । એવં પશ્ચાન્નુપૂર્વ્યા મૈથુનમતિપરિત્યાગેન મૈથુનં મુતરાં પરિ-ત્યક્તં ભવતિ । इत्थं शेषत्रतेष्वपि योजनीयम् ।

ચાહે ભાવ સે મૂર્છારૂપ હો; इन दोनों प्रकार के परिग्रह का परित्याग करता है । जहां परिग्रहवुद्धि का परित्याग है वहां परिग्रह का परित्याग करना कोई कठिन कार्य नहीं है । यह तो अनायास ही हो जाता है । परिग्रह का अपनाना या बाह्यपदार्थों में परिग्रहरूपता लाना इच्छा के अधीन है । जब उस प्रकार की इच्छा ही नहीं है, तब बाह्यपदार्थों में परिग्रहता ही नहीं आसकती है । जिस व्यक्ति के पास इस प्रकार का परिग्रह नहीं है वही रत्नत्रयरूप मोक्षमार्ग का द्रष्टा मुनि कहा गया है ।

इसका सारांश यही है कि जिसने परिग्रह की बुद्धि का परित्याग कर दिया है उसके परिग्रह का त्याग अवश्य होता है । इसके परित्याग से द्रव्यभावरूप हिरण्यादि तथा मूर्च्छारूप परिग्रह नियम से दूर हो जाते हैं । यहां पर परिग्रहमति के त्याग से जो परिग्रह का त्याग करना बत-लाया गया है वह पश्चानुपूर्वी को लेकर कहा गया है । इससे यह भी समझ लेना चाहिये कि मૈથુનમતિ के परित्याग से मૈथुन का तथा चोरी

હોય, ભલે ભાવથી મૂર્છારૂપ હોય, આ બંને પ્રકારના પરિગ્રહનો પરિત્યાગ કરે છે. બંન્માં પરિગ્રહ-બુદ્ધિનો પરિત્યાગ છે, ત્યાં પરિગ્રહનો પરિત્યાગ કરવો કાંઈ કઠિન કાર્ય નથી. એ તો અનાયાસ જળની શકે છે. પરિગ્રહને અપનાવવો અગર બાહ્ય પદાર્થોમાં પરિગ્રહરૂપતા લાવવી ઇચ્છાને આધીન છે. બંન્નારે આવા પ્રકારની ઇચ્છા જ નથી ત્યારે બાહ્ય પદાર્થોમાં પરિગ્રહતા આવી શકતી નથી. જે વ્યક્તિની પાને આવા પ્રકારનો પરિગ્રહ નથી તે જ રત્નત્રયરૂપ મોક્ષ માર્ગનો દ્રષ્ટા મુનિ કહેવાય છે.

તેનો સારાંશ એ છે કે જેણે પરિગ્રહની બુદ્ધિનો પરિત્યાગ કરેલ છે તેનાથી પરિગ્રહનો ત્યાગ અવશ્ય થાય છે. તેના પરિત્યાગથી દ્રવ્ય-ભાવરૂપ હિરણ્યાદિ તથા મૂર્છારૂપ પરિગ્રહ નિયમથી દૂર થઈ જાય છે. આ ઠેકાણે પરિગ્રહમતિના ત્યાગથી જે પરિગ્રહનો ત્યાગ કરવો બતાવેલ છે તે પશ્ચાન્નુપૂર્વીને લઈને કહેલ છે. તેથી એ પણ સમજ લેવું જોઈએ કે મૈથુનમતિના પરિત્યાગથી મૈથુનનો, તથા ચોરી કરવાની

દણ્ડિશાક્યાદયઃ પરતૈર્થિકા યદ્યપિ કિશ્ચિત્સચિત્તાદિપરિત્યાગિનોઽપિ સ્વ-  
માનપૂજાદિમૂર્ચ્છાવત્ત્વાદયઃકર્મૈર્દેશિકાદિભોજિત્વાદ્રાગદ્વેપાનુમતત્વાચ્ચ સપરિગ્રહા  
એવ દરીદ્રશ્યન્તે । સર્વથા પરિગ્રહપરિત્યાગી મુનિરેવ મોક્ષમાર્ગં સમારોહતિ નાન્ય  
ઇતિ તાત્પર્યમ્ ॥ સૂ. ૩ ॥

પુનર્મુનિકર્ત્તવ્યમાદ—‘ તં પરિન્નાય ’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્—તં પરિન્નાય મેઘાવી વિદિત્તા લોગં વંતા લોગસન્નં  
સે મહિમં પરક્રમિજ્જા--ત્તિવેમિ ॥ સૂ. ૪ ॥

છાયા—તં પરિજ્ઞાય મેઘાવી વિદિત્વા લોકં વાન્ત્વા લોકસંજ્ઞાં સ મતિમાન્  
પરાક્રમેત । ઇતિ વ્રવીમિ ॥ સૂ. ૪ ॥

ટીકા—‘ ત ’—મિત્યાદિ । મેઘાવી=વિદિતપરિગ્રહકદુષ્પાકઃ તં મમાયિતં  
પરિજ્ઞાય=જ્ઞ-પરિજ્ઞયા જ્ઞાત્વા પ્રત્યાખ્યાન-પરિજ્ઞયા પરિહત્ય ચ લોકં પડ્જીવનિ-  
કરને કી મતિ કે ત્યાગ સે ચોરી કા તથા ઝૂઠ વોલને કી મતિ કા ત્યાગ  
કરને સે ઝૂઠ આદિ કા ખી સહજ મેં ત્યાગ હો જાતા હૈ । ઇસ કથન સે  
દણ્ડી, શાક્યાદિ પરમતાવલંબી સાધુ યદ્યપિ કુછર સચિત્તાદિ પદાર્થો  
કે પરિત્યાગી હોતે હૈં, પરન્તુ અપની માનપ્રતિષ્ઠા આદિ મેં મૂર્ચ્છા રાખને  
સે, આધાકર્મ ઔદેશિક આદિ આહાર કે ભોગને સે ઔર રાગદ્વેષ-  
સહિત હોને સે વે પરિગ્રહધારી હી હૈં । જો પરિગ્રહ કે સર્વથા પરિત્યાગી  
હૈં વે હી મુનિ હૈં ઔર વે હી મોક્ષમાર્ગ પર ચલને વાલે હૈં, અન્ય નહીં;  
એસા સમજનાં चाहिये । યહી ઇસ સૂત્ર કા ભાવાર્થ હૈ ॥ સૂ. ૩ ॥

ફિર ખી મુનિ કા કર્તવ્ય કહતે હૈં—‘ તં પરિન્નાય ’ ઇત્યાદિ ।

જિસને પરિગ્રહ કે કદુકવિપાક કો જાન લિયા હૈ એસા મેઘાવી  
મુનિ જપરિજ્ઞા સે પરિગ્રહ કો જાનકર પ્રત્યાખ્યાનપરિજ્ઞા સે ડસકા

મતિના ત્યાગથી ચોરીનો તથા બુઠ બોલવાની મતિના ત્યાગથી બુઠ આદિનો  
સહજમાં ત્યાગ થઈ શકે છે. આ કથનથી દંડી, શાક્યાદિ પરમતાવલંબી સાધુ  
નેકે છોઈ છોઈ સચિત્તાદિ પદાર્થોના પરિત્યાગી હોય છે પરંતુ પોતાની માન  
પ્રતિષ્ઠા આદિમાં મૂર્ચ્છા રાખવાથી આધાકર્મ ઔદેશિક આદિ આહારના લોગવ-  
વાથી અને રાગદ્વેષ-સહિત હોવાથી તે પરિગ્રહધારી જ છે, જે પરિગ્રહના સર્વથા  
પરિત્યાગી છે તે જ મુનિ છે અને તે જ મોક્ષમાર્ગ પર ચાલવાવાળા છે, બીજા નહિ;  
એવું સમજવું જોઈ એ. એ જ આ સૂત્રનો ભાવાર્થ છે ॥ સૂ. ૩ ॥

ફરી પણ મુનિનું કર્તવ્ય કહે છે—‘ તં પરિન્નાય ’ ઇત્યાદિ.

જેણે પરિગ્રહના કદુ વિપાકને બાણી લીધા છે એવા મેઘાવી મુનિ જપરિજ્ઞાથી  
પરિગ્રહને બાણીને પ્રત્યાખ્યાનપરિજ્ઞાથી તેને સર્વથા પરિત્યાગ કરી આપે છે. ‘ પરિ-



કાયરૂપં પરિગ્રહાગ્રહિણં—પરિગ્રહજનિતકટુવિપાકમનુભવન્તં, યદ્વા-લોકં કષાયલો-  
કમધઃપતનશીલમ્ “અહો વયઃ કોહેણં, માણેણં અહમા ગર્હી । માયા ગર્હીપટિગ્ધાઓ,  
લોહાઓ દુહાઓ મયં ” ॥ ( ઉત્તરા૦ અ૦ ૯ ગા. ૫૪ ) ઇતિવચનાત્ ।  
અથવા-લોકમ્ આપાતસુખદં પરિણામકટુકં યથા—

“કિંપાકફલસમાના વિષયા હિ નિષેવ્યમાણરમણીયાઃ ।

પથ્થાદ્ભવન્તિ કટુકાસ્ત્રપુષ્પિફલનિવન્ધનૈસ્તુલ્યાઃ ” ઇતિ ॥ ૧ ॥

સર્વથા પરિત્યાગ કર દેવે । ‘પરિગ્રહ મેં આસક્ત બના હુઆ યહ પડ્જીવ-  
નિકાયરૂપ લોક પરિગ્રહ સે ઉત્પન્ન હુએ કટુક-વિપાક કા હી હમેશા  
અનુભવ કરતા રહતા હૈ’ એસા સમજાવેલો લોકસંજ્ઞા-લોક કી આહારાદિક-  
મૂર્છારૂપ સંજ્ઞા કા પરિત્યાગ કર હેયોપાદેયવિવેક સે યુક્ત અન્તઃ-  
કરણ વાલા બન વહ મુનિ સંયમ કે અનુષ્ઠાન કરને મેં પુરુષાર્થ કરે ।

સૂત્ર મેં “લોગં” ઇસ પદ કા અર્થ એક તો પડ્જીવનિકાયરૂપ  
લોક હોતા હૈ, દૂસરા અર્થ-કષાયલોક, તથા આપાતતઃ સુંદર-થોડે  
સમય કે લિયે અચ્છા લગને વાલા પરન્તુ પરિણામ મેં દુઃસ્વપ્ન વિષય-  
ભોગાદિક ભી હોતા હૈ । ક્રોધાદિકષાય જીવોં કો કમી ભી કિસી ભી  
અવસ્થા મેં સુખદાયી નહીં હૈ । ઇન્કે સેવન સે જીવોં કા સદા અધઃપતન  
હી હોતા હૈ । કહા ભી હૈ—“અહો વયઃ કોહેણં, માણેણં અહમા ગર્હી”  
ઇત્યાદિ । અર્થાત્ ક્રોધ સે આત્મા કા અધઃપતન હોતા હૈ ઓર માન સે  
અધમગતિ હોતી હૈ । માયા સે શુભગતિ કા પ્રતિધાન હોતા હૈ ઓર લોભ

અહમાં આસક્ત બનીને તે પડ્જીવનિકાયરૂપ લોક પરિગ્રહથી ઉત્પન્ન થયેલ કટુક વિપા-  
કનો જ હમેશાં અનુભવ કરતા રહે છે.’ એવું સમજીને લોકસંજ્ઞા-લોકની આહા-  
રાદિક મૂર્છારૂપ સંજ્ઞાનો પરિત્યાગ કરીને હેયોપાદેયવિવેકથી યુક્ત અંતઃકરણવાળા  
બની તે મુનિ સંયમનું અનુષ્ઠાન કરવામાં પુરુષાર્થ કરે.

સૂત્રમાં “લોગં” આ પદનો અર્થ એક તો પડ્જીવનિકાયરૂપ લોક  
થાય છે, બીજો અર્થ કષાયલોક, તથા આપાતતઃ સુંદર-થોડા વખત માટે સાઈ  
લાગનાર પરન્તુ પરિણામમાં દુઃખરૂપ વિષયભોગાદિક પણ થાય છે. ક્રોધાદિ કષાય  
જીવોને કોઈ વખત પણ કોઈ પણ અવસ્થામાં સુખદાયી થતા નથી. તેના સેવનથી  
જીવોનું સદા અધઃપતન જ થાય છે. કહ્યું છે “અહો વયઃ કોહેણં, માણેણં અહમા ગર્હી”  
ઇત્યાદિ. અર્થાત્ ક્રોધથી આત્માનું અધઃપતન થાય છે અને માનથી અધમગતિ  
થાય છે. માયાથી શુભગતિનો પ્રતિધાન થાય છે. અને લોભથી ઈહલોક અને



વિદિત્વા=જ્ઞાત્વા લોકસંજ્ઞાં લોકસ્ય=પ્રાણિગણસ્ય સંજ્ઞા=આહારાદિમૂર્ચ્છારૂપા,  
તાં લોકસંજ્ઞાં વાન્ત્શ=ઉદ્ધીર્ય પરિત્યજ્યેત્યર્થઃ, સ મતિમાન્ વિદિતહેયોપાદેયઃ  
પરાક્રમેત=સંયમાનુષ્ઠાને પરાક્રમં કુર્યાત્ । ઇતિ-શબ્દોઽધિકારસમાપ્ત્યર્થકઃ । બ્રવી-  
મીત્યસ્યાર્થસ્તૂક્ત એવ ॥ સૂ. ૪ ॥

સંયમાચરણે પરાક્રમમાણઃ પરિહૃતમમાયિતોઽનગારઃ કીદૃશો ભવતીત્યાહ—  
' નારઙ્ સહઙ્ ' ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્—નારઙ્ સહઙ્ વીરે, વીરે ન સહઙ્ રઙ્ ।

જમ્હા અવિમણે વીરે તમ્હા વીરે ન રજ્જઙ્ ॥ સૂ. ૫ ॥

છાયા—નારતિં સહતે વીરો, વીરો ન સહતે રતિમ્ ।

યસ્માદવિમના વીરસ્તસ્માદ્વીરો ન રજ્જયતિ ॥ સૂ. ૫ ॥

સે ઇહ લોક એવં પરલોક સમ્બન્ધી ભય રહતા હૈ । તથા વિષયભોગાદિક  
બી કિંપાકફલ કે સમાન ઉપર સે હી મનોહર માલૂમ પડતે હૈં પરન્તુ  
પરિણામ મેં જીવોં કે લિયે નરક-નિગોદાદિ ગતિયોં કે કારણ બનતે હૈં ।  
કિંપાકફલ કા સેવન જિસ પ્રકાર પ્રાણોં કા હરણ કરને વાલા હોતા હૈ  
ઉસી પ્રકાર યે બી ભવર મેં જીવોં કો અનન્ત યાતનાઓં કે દેનેવાલે હોતે  
હૈં । એસા સમજ્જકર ઉસ કષાયલોક કા સંયમી મુનિ સદા ત્યાગ કર દેવે ।

યહાં “ઇતિ” શબ્દ અધિકાર કી પરિસમાપ્તિ કા સૂચક હૈ  
“બ્રવીમિ” પદ કા અર્થ પહિલે કહા જા ચુકા હૈ । ॥ સૂ. ૪ ॥

સંયમ કે પાલન કરને મેં પરાક્રમશાલી ઔર પરિગ્રહ કા ત્યાગી  
અનગાર કૈસા હોના હૈ ? સો કહતે હૈં—‘નારઙ્ સહઙ્’ ઇત્યાદિ ।

પરલોક સંબન્ધી ભય રહે છે તથા વિષય ભોગાદિક પણ કિંપાક ફળ સમાન  
ઉપરથી જ મનોહર માલૂમ પડે છે પરંતુ પરિણામમાં જીવો માટે નરક નિગોદાદિ  
ગતિઓનું કારણ બને છે. કિંપાક ફળનું સેવન જે પ્રકારે પ્રાણોનું હરણ કરે છે  
તે પ્રકારે આ પણ ભવોભવમાં જીવોને અનંત યાતનાઓ દેનાર બને છે, એવું  
સમજીને તે કષાયલોકનો તથા વિષયલોકનો સંયમી મુનિ સદા ત્યાગ કરે.

અહીં “ઇતિ” શબ્દ અધિકારની પરિસમાપ્તિનો સૂચક છે. “બ્રવીમિ”  
પદનો અર્થ પહેલાં કરવામાં આવેલ છે ॥ સૂ. ૪ ॥

સંયમનું પાલન કરવામાં પરાક્રમશાલી અને પરિગ્રહના ત્યાગી અણુગાર  
કેવા હોય છે તે કહે છે—“નારઙ્ સહઙ્” ઇત્યાદિ.

ટીકા—‘નારતિ—’ મિત્યાદિ । વીરઃ=કર્મવિદારણસમર્થઃ પરિહૃતપુત્રકલત્રાદિઃ સંયમી કદાચિન્મોહનીયોદયાત્સમુત્પન્નામ્, અરતિમ્=ચારિત્રવિષયામપ્રીતિં ન સહતે=ન ક્ષમતે, એવમેવ વીરઃ=પૂર્વોક્તઃ રતિં=વિષયાનુરાગં ચ ન સહતે=ન ક્ષમતે, ધર્મધ્યાનપરાયણો મુનિઃ સમુત્પન્નમાત્રામપિ રતિમરતિ ચ નિષ્કાસયતીત્યર્થઃ । વીરો=યસ્માત્કારણાત્ રત્યરતિપરિત્યાગાત્ અવિમનાઃ=તત્રાનાસક્તઃ, તસ્માત્ વીરઃ શબ્દાદિકામગુણેષુ ન રજ્યતિ=મૂર્છાં ન પ્રાપ્નોતિ । અત્ર વીર-શબ્દસ્ય પુનઃ પુનરુપાદાનં કર્મરિપુરવચ્ચં વિજેતવ્યં ઇતિ ઘોતનાયેતિ ભાવઃ ॥ સૂ૦ ૫ ॥

“નારતિં સહતે વીરઃ” અર્થાત્ કર્મોં કે વિનાશ કરને મેં જો શક્તિસંપન્ન હૈ, એવં જિસને પુત્રકલત્રાદિ પરિગ્રહ કા સર્વથા પરિહાર કર દિયા હૈ એસા વીર સંયમી મુનિ કદાચિત્ મોહનીય કર્મ કે ઉદય સે ચારિત્ર મેં ઉત્પન્ન હુએ અરતિ-પરિણામ કો કમી મી સહન નહીં કર સકતા હૈ, ઓર ન વિષયોં કી તરફ સ્વીચને વાલી રતિ કો કમી હૃદય મેં સ્થાન દે સકતા હૈ; કારણ કિ યે દોનોં પ્રકાર કે પરિણામ સંયમ એવં ધર્મધ્યાન કે વિઘાતક હૈં । સંયમી કા અન્તઃકરણ સદા ધર્મધ્યાન મેં મગ્ન રહતા હૈ । કદાચિત્ કર્મ કી પ્રવલતા સે ઇસ તરહ કે પરિણામ ઉસકે ચિત્ત મેં આ મી જાવેં તો વહ મુનિ એસે પરિણામોંકો અપને ધર્મધ્યાન કે પ્રભાવ સે શીઘ્રાતિશીઘ્ર દૂર કર દેતા હૈ । ઇન પરિણામોં કે પ્રતિ ઉસ સંયમી કી આસક્તિ નહીં હોતી । ઇસીલિયે ઇસ પ્રકાર કે રતિ-અરતિરૂપ પરિણામ, વિના કિસી રુકાવટ કે ઉસકી આત્મા સે વહુત શીઘ્ર દૂર હો જાતે હૈં । જૈસે સૂઝે ઘડે પર આઈ હુઈ વાલુ વિના કુછ કિયે ઉસ ઘડે

નારતિ સહતે વીર. અર્થાત્ કર્મોના વિનાશ કરવામાં જે શક્તિસંપન્ન છે અને જેણે પુત્ર કલત્રાદિ પરિગ્રહનો સર્વથા ત્યાગ કરેલ છે એવા વીર સંયમી મુનિ કદાચિત્ મોહનીય કર્મના ઉદયથી ચારિત્રમાં ઉત્પન્ન થયેલ અરતિ પરિણામને કોઈ વળત પણ સહન કરી શકતા નથી, અને વિષયોની તરફ જેંચવાવાળી રતિને પણ (હૃદયમાં) કોઈ વળત પણ સ્થાન ન આપે, એટલે આપી શકતા નથી. કારણ કે એ બન્ને પ્રકારના પરિણામ સંયમ અને ધર્મધ્યાનના વિઘાતક છે. સંયમીનું અંતઃકરણ સદા ધર્મધ્યાનમાં જ મગ્ન રહે છે. કદાચ કર્મની પ્રવલતાથી આવા પ્રકારનું પરિણામ તેના હૃદયમાં આવી જાય તો તે મુનિ આવા પરિણામોને પોતાના ધર્મધ્યાનના પ્રભાવથી જલ્દી દૂર કરી નાંખે છે. આ પરિણામો તરફ તે સંયમીની આસક્તિ થતી નથી, માટે આ પ્રકારના રતિઅરતિરૂપ પરિણામ કોઈ જાતની રુકાવટ વિના તેના આત્માથી જલ્દી દૂર થઈ જાય છે જેથી રીતે સુદા ઘણ ઉપર ઉડીને આવેલી છુટ કાંઈ પણ કયા વિના તે ઘણી દૂર થઈ જાય છે તે પ્રકારે

તતઃ કિમાયાતમિતિ દર્શયતિ—‘સદે’ ઇત્યાદિ,

મૂલમ્—સદે ય ફાસે અહિયાસમાણે, નિર્વિંદ નંદિંં ઇહ જીવિ-  
યસ્સ । મુણી મોણં સમાયાય, ધુણે કમ્મસરીરગં । પંતં લૂહં ચ  
સેવંતિ, વીરા સંમત્તદંસિણો । એસ ઓહંતરે મુણી તિન્ને મુત્તે વિરણ  
વિયાહિણ-ત્તિવોમિ ॥ સૂ૦ ૬ ॥

છાયા—શબ્દાન્ ચ સ્પર્શાનધિસહમાનો, નિર્વિન્દ નન્દિમિહ જીવિતસ્ય, મુનિર્મોનં  
સમાદાય ધુનીત કર્મશરીરકં, પ્રાન્તં રૂક્ષં ચ સેવન્તે વીરાઃ સમ્યક્ત્વદર્શિનઃ, એષ  
ઓચન્તરો મુનિસ્તીર્ણો મુક્તો વિરતો વ્યાખ્યાત ઇતિ વ્રવીસિ ॥ મૂ૦ ૬ ॥

ટીકા—‘શબ્દા’—નિત્યાદિ, શબ્દાન્ સ્પર્શાંશ્ચ-ઇષ્ટાનનિષ્ઠાંશ્ચ, આદ્યન્તગ્રહણાદિ-  
તરેષાં મધ્યવર્તિનાં રૂપાદીનામપિ ગ્રહણમ્ । અધિસહમાનઃ—સમ્યક્ સહમાનઃ રાગ-  
સે દૂર હો જાતી હૈ, હસી પ્રકાર ઇન પરિણામોં કી ખી યહી સ્થિતિ હોતી  
હૈ । હસીલિયે સંયમી મુનિ શબ્દાદિક કામગુણોં મેં મૂઝાંભાવ કો પ્રાપ્ત  
નહીં હોતે હૈં । સૂત્ર મેં સૂત્રકાર ને વારં વાર જો ‘વીર’ શબ્દ કા પ્રયોગ કિયા  
હૈ, ડસસે યહી ધ્વનિત હોતા હૈ કિ કર્મરૂપી શત્રુ એસે સંયમીજનોં કે  
દ્વારા અવશ્ય જીતને કે યોગ્ય હૈ ॥ મૂ૦ ૬ ॥

હસસે ક્યા સિદ્ધ હોતા હૈ ?—હસ વાતકો દિગ્વલાતે હૈં—“સદે ય  
ફાસે” ઇત્યાદિ ।

સૂત્ર મેં અન્તકી કર્ણ-ઇન્દ્રિય કે વિષય શબ્દ કા ઓર આદિ કી  
સ્પર્શન-ઇન્દ્રિય કે વિષય સ્પર્શ કા નિર્દેશ કિયા હૈ । હસસે મધ્યવર્તી  
હતર ઇન્દ્રિયોં કે વિષય-રૂપાદિકોં કા ખી ગ્રહણ હો જાતા હૈ । શિષ્ય કો  
સંબોધન કરતે હુણ સૂત્રકાર કહતે હૈં કિ હે મેધાવી શિષ્ય ! ઇન્દ્રિયોં  
કે ઇષ્ટ ઓર અનિષ્ટ વિષયોં મેં તુમ સર્વથા રાગદ્વેષ મન કરો । શાસ્ત્ર

આ પરિણામોની પણ તે સ્થિતિ છે. માટે સંયમી મુનિ શબ્દાદિક કામગુણોમાં  
મૂઝાંભાવને પ્રાપ્ત થતાં નથી. સૂત્રમાં સૂત્રકારે વારંવાર જે વીર શબ્દનો પ્રયોગ  
કર્યો છે તેથી એ નસ્ટી થાય છે કે કર્મરૂપી શત્રુ એવા સંયમીજનોથી અવશ્ય  
હતવા યોગ્ય છે ॥ સૂ૦ ૬ ॥

આથી શું ચિદ્ધ થાય છે ? એ વાતને બતાવે છે—“સદે ય ફાસે” ઇત્યાદિ

સૂત્રમાં અન્તની કર્ણ ઇન્દ્રિયના વિષય-શબ્દનો અને આદિની સ્પર્શન  
ઇન્દ્રિયના વિષય-સ્પર્શનો ગ્રહણ થયેલ છે, આથી મધ્યવર્તી બીજી ઇન્દ્રિયોનો  
વિષય-રૂપાદિકોનો પણ ગ્રહણ થાય છે. શિષ્યને સંબોધન કરીને સૂત્રકાર કહે  
છે કે હે મેધાવી શિષ્ય ! ઇન્દ્રિયોના ઇષ્ટ અને અનિષ્ટ વિષયોમાં તમે સર્વથા રાગ

દ્વેષાવકુર્વાણઃ સન્, इह=तिर्यग्लोके जीवितस्य=असंयमजीवितस्य नन्दि=प्रमोदं  
'ममेदं धनादि भवति, भविष्यति, अभूच्च' इत्यादिविकल्परूपां मनस्तुष्टिं निर्विन्द=  
अनाद्रियस्व=अपाकुर्वित्यर्थः, ऐश्वर्यरूपवलादिषु सर्वत्र मनःसंकल्पविकल्पजालं मह-  
दनर्थकरमिति तात्पर्यम् ।

का यह उपदेश है कि “ सद्देशु य भक्ष्यपावणसु सोयविसयमुचगणसु  
तुष्टेण वा रुष्टेण वा समणेण सया न होयञ्च ” शब्द कर्णप्रिय हों या कर्ण-  
कटुक हों, इन्द्रियों के विषय चाहे मनोज्ञ हों, चाहे अमनोज्ञ हों,  
संयमी को उनमें कभी भी नतुष्ट होना चाहिये और नरुष्ट ही होना  
चाहिये । संसार में सभी प्रकार की सामग्री है । बुद्धिमान् संयमी वही है  
जो इनमें से किसी में भी न फँसे और सबमें समताभावसंपन्न बन  
अपने लक्ष्य की सिद्धि में तत्पर रहे । असंयमजीवन की जो यह  
आत्मपरिणति है कि ‘ मेरे पास पहिले इतना धनादि था, अब इतना है,  
आगे और हो जावेगा, ’—इन सब का परित्याग कर दो । दार्ढ्य द्वीप में  
ही संयममार्ग की आराधना करने का सुवर्ण अवसर हाथ आता है;  
बाकी इस तिर्यग्लोक में इस संयमभाव की आराधना हो ही नहीं सकती ।  
इसलिये भ्रमत्वरूप संकल्पविकल्पमय मानसिक तुष्टि का परिहार करो,  
कारण कि इन ऐश्वर्य, रूप और बल आदि में किया गया मानसिक संकल्प-  
विकल्प का जाल आत्मा के लिये महान् अनर्थकर होता है । ये पदार्थ हों

દ્રેષ ન કરો. શાસ્ત્રનો એ ઉપદેશ છે કે “ સદ્દેશુ ય ભક્ષ્યપાવણસુ સોયવિસય-  
મુચગણસુ, તુષ્ટેણ વા રુષ્ટેણ વા સમણેણ સયા ન હોયજ્ચ ” ઇન્દ્રિયોનો વિષય ભલે  
મનોજ્ઞ હોય અગર અમનોજ્ઞ હોય, શબ્દ ભલે કર્ણપ્રિય હોય, અગર કર્ણકટુક  
હોય, સંયમીએ તેમાં કોઈ વળત પણ ન આનંદ માનવો જોઈએ કે ન રૂઢ  
થવું જોઈએ. સંસારમાં બધી સામગ્રી છે. બુદ્ધિમાન્ સંયમી તે જ છે જે આમાંથી  
કોઈમાં પણ ન ફસે અને બધામાં સમતાભાવસંપન્ન બની પોતાના લક્ષ્યની  
સિદ્ધિમાં તત્પર રહે. અસંયમ જીવનની જે આ આત્મપરિણતિ છે કે ‘ મારી  
પાસે પહેલાં આટલું ધન હતું, હવે આટલું છે, આગળ વળી વધારે થઈ જશે’  
આ સંધાનાનો પરિત્યાગ કરી આપો. અર્દ્યદ્વીપમાં જ સંયમમાર્ગની આરાધના  
કરવાનો સુઅવસર હાથ આવે છે બાકી આ તિર્યગ્લોકમાં આ સંયમભાવની  
આરાધના બની જ શકતી નથી, માટે ભ્રમત્વરૂપ સંકલ્પવિકલ્પમય માનસિક  
તુષ્ટિનો પરિહાર કરો, કારણ કે એ ઐશ્વર્ય, રૂપ અને બલ આદિમાં કરેલા માન-  
સિક સંકલ્પ વિકલ્પની જાલ આત્મા માટે મહાન અનર્થકારી છે. એ પદાર્થો

યદ્વા-ઇહ=મનુષ્યજીવિતે વા પશ્ચવિધવ્રતાતીચારાણાં મધ્યે વ્યતીતં નિન્દ, સંજાયમાન સંવૃણ, મવિષ્યન્તં ચાતીચારં પ્રત્યાખ્યાતીત્યાશયઃ । કિમાશ્રિત્ય નન્દિ નિર્વિન્દેદિત્યાહ-‘મુનિ-’રિત્યાદિ । મુનિઃ=કર્મવિષાકજ્ઞો યતિઃ, ‘મૌન’ મુનેરયં મૌનઃ સંયમો વાક્સંયમો વા ઉપલક્ષણતયા કાય-મનસોરપિ સંયમસ્તં તો આત્મા કો ઇનસે કોઈ લાભ નહીં, નહીં હોં તો ઇનકે અભાવ મેં આત્મા કો કોઈ હાનિ નહીં । આત્મા કી જો નિજ ચીજ હૈ વહ ઇનકે સંયોગ ઔર વિયોગ મેં ન અચ્છી હોતી હૈ ઔર ન વિગડતી હી હૈ । એસા ઘ્યાલકર વાહ્ય વસ્તુ મેં સંયમી કો અપના અન્તઃકરણ આસક્તિયુક્ત નહીં કરના ચાહિયે ।

અથવા—શિષ્ય કો સમજાતે હુ! સૂત્રકાર કહતે હું કિ હે મેધાવી ! અપને મનુષ્ય જીવન કો સફલિત કરને કે લિયે જો સંયમજીવન તુમને અંગીકાર કિયા હૈ, ઉસ્સેં જો યે પાંચ મહાવ્રતોં કી તુમ આરાધના કર રહે હો સો યહ સદા ધ્યાન રઘો કિ ઇનમેં જો પહિલે અતીચાર લગ ચુકે હેં ઉનકી નિંદા કરો, વર્તમાન મેં અતીચાર ન લગને પાવેં ઇસકી સંભાલ રઘો, તથા આગામીકાલ મેં લગને વાલે અતીચારોં કા પ્રત્યાઘ્યાન કરો । કર્મ કે વિષાક કા જ્ઞાતા મુનિ વાચિક સંયમ કો, ઉપલક્ષણ સે કાયિક ઔર માનસિક સંયમ કો ભલીપ્રકાર ગ્રહણ કર કાર્મણ-શરીર સે અથવા કર્મજન્ય ઇસ ઔદારિક શરીર સે રહિત હો જાતા હૈ અર્થાત્ મોક્ષ કા મોક્ષા વન જાતા હૈ ।

હોય તો આત્માને એનાથી કેઈ લાભ નહિ. ન હોય તો તેના અભાવમાં આત્માને કેઈ હાનિ નહી. આત્માની જે નિજ ચીજ છે તે તેના સંયોગ અને વિયોગમાં નથી સારી બનતી અને બગડતી પણ નથી. એવો ખ્યાલ કરી બાહ્ય વસ્તુમાં સંયમીએ પોતાનું અંતઃકરણ આગ્રહિતયુક્ત નહિ કરવું જોઈએ.

અથવા શિષ્યને સમજાવતાં સૂત્રકાર કહે છે કે હે મેધાવી ! પોતાના મનુષ્ય જીવનને સફળ બનાવવા માટે જે સંયમ જીવન તમે અંગીકાર કર્યું છે, તેનાં જે આ પાંચ મહાવ્રતોની તમે આરાધના કરી રહ્યા છો તો એ સદા ધ્યાનમાં રાખો કે તેમાં જે પહેલાં અતિચાર લાગી ચુકેલ છે તેની નિંદા કરો. વર્તમાનમાં અતિચાર ન લાગી બધે તેની સંભાળ રાખો અને આવતા કાળમાં લાગવાવાળા અતિચારોનું પ્રત્યાખ્યાન કરો. કર્મના વિષાકના જ્ઞાતા મુનિ વાચિક સંયમને ઉપલક્ષણથી કાયિક અને માનસિક સંયમને ભલી પ્રકારે ગ્રહણ કરી કાર્મણશરીરથી અથવા કર્મજન્ય આ ઔદારિક શરીરથી રહિત થઈ બધે છે, અર્થાત્ મોક્ષનો લાગી બની બધે છે.

‘સમાદાય’ સમ્=સમ્યક્ આદાય=ગૃહીત્વા કર્મશરીરકં કાર્મણશરીરમોદારિકં વા ધુનીત=પરિશાતયેદપનયેદિત્યર્થઃ, અથવા-‘મુળી’ इत्यस्य ‘हे मुने !’ इतिच्छाया, हे सम्यक्त्वदर्शिन् ! मौनं=संयमं समादाय=सम्यग् गृहीत्वा કર્મશરીરકં ધુનીતિ પૃથક્કુરુ, તત્ર મમત્વં ન કુષ્વેત્યર્થઃ । યતઃ કર્મશરીરે મુનેર્મમત્વં ન ભવતિ તસ્માદેવાહ-‘પ્રાન્ત-’મિત્યાદિ । સમ્યક્ત્વદર્શિનઃ=વસ્તુતત્ત્વપરિજ્ઞાનકુશલાઃ, યદ્વા ‘સમત્તદંસિણો’ इत्यस्य ‘समत्वदर्शिनः’ इतिच्छाया, समत्वदर्शिनः=रागद्वेषवर्जिताः,

અથવા—“મુળી” इस शब्द की छाया ‘मुने !’ यह भी होती है । जिसका भाव यह है कि हे सम्यक्त्वदर्शी ! तुम संयम को अच्छी तरह ग्रहण कर कर्मशरीर को अपने से पृथक् करो, अर्थात् यह समझो कि यह कर्मशरीर पुद्गल, जड़, सूक्तिक है और मैं ज्ञाता द्रष्टा शुद्ध ज्ञानादिमय हूं । इस शरीर के बिगड़ने में मेरा कुछ नहीं बिगड़ता है, मैं इससे भिन्न हूं । इसलिये इसमें ममत्ववृद्धि करना ही व्यर्थ है । इसके पोषण के लिये जो वस्तुतत्त्वके परिज्ञान में कुशलमति हैं वे अन्त, प्रान्त, एवं ठंडा और रुक्ष आहार से इस कर्मशरीर की उचित संभाल करते हुए अपने संयमभाव की वृद्धि करने में सावधान रहते हैं, ऐसे मुनि ही वीर कहलाते हैं । परीषह और उपसर्ग आने पर भी वे अपने पथ संयममार्ग में रंचमात्र भी विचलित नहीं होते हैं । जहां पर समताभाव का स्रोत बहता है वहां पर आत्मा अत्यन्त बलिष्ठ होती है । इसी बातका ख्यालकर टीकाकारने “सम्मत्तदंसिणो” की दूसरी छाया “समत्व-

અથવા “મુળી” આ શબ્દની છાયા “મુને” એ પણ થાય છે, જેનો ભાવ એ છે કે હે સમ્યક્ત્વદર્શિ ! તમે સંયમને સારી રીતે ગ્રહણ કરી કર્મ શરીરને પોતાથી પૃથક્ કરો, અર્થાત્ એમ સમજો કે આ કર્મશરીર પુદ્ગલ, જડ સૂક્તિક છે, અને હું જ્ઞાતા, દ્રષ્ટા, શુદ્ધ જ્ઞાનાદિમય છું. આ શરીરના બગડવામાં મારું કંઈ પણ બગડતું નથી. હું તેનાથી ભિન્ન છું. તેથી તેમાં મમત્વવૃદ્ધિ કરવી વ્યર્થ છે. તેના પોષણ માટે જે વસ્તુતત્ત્વના પરિજ્ઞાનમાં કુશળમતિ છે. તે અન્ત પ્રાન્ત, ઠંડા અને રુક્ષ આહારથી આ કર્મશરીરની ઉચિત સંભાળ કરતાં કરતાં પોતાના સંયમભાવની વૃદ્ધિ કરવામાં સાવધાન રહે છે એવા મુનિ જ વીર કહેવાય છે. પરિષદ અને ઉપસર્ગ આવવા છતાં પણ પોતા સંયમમાર્ગમાં રંચમાત્ર પણ વિચલીત થતા નથી જે દેશણે સમતાભાવનો પ્રવાહ જ વહે છે ત્યાં આત્મા અત્યંત બલિષ્ઠ બને છે આ વાતનો ખ્યાલ કરીને ટીકાકારે “સમત્તદંસિણો ની બીજી છાયા “સમત્વદર્શિનઃ” લખી છે. પ્રાન્ત અને રુક્ષ, દ્રવ્ય તથા



વીરાઃ પરીપહોપસર્ગસહનસમર્થા મુનયઃ, પ્રાન્તં=દ્રવ્યતઃ સ્વાભાવિકરસરહિતં શીતલ-પુરાણકુલત્યાદિકં સ્તોકં વા, રુક્ષં=દ્રવ્યત આગન્તુકઘૃતાદિરસવર્જિતં, ભાવતઃ પ્રાન્તં દ્વેષવિકલં ધૂમદોષવર્જિતમ્, ભાવતો રુક્ષમ્=રાગરહિતમઙ્ગારદોષવર્જિતમાહારં ચ સેવન્તે=અશન્તિ. યથ પ્રાન્તરુક્ષભોજી સ કિમાપ્નોતીત્યાહ-‘ એપ ’ ઇતિ, એપઃ=પરિશુદ્ધપ્રાન્તરુક્ષાદ્યારસેવનેન કર્મશરીરં ધુન્વાનો મુનિઃ=અનગારઃ, ‘ ઓઘન્તરઃ ’

દર્શિનઃ ” લિખી છે. પ્રાન્ત ઓર રુક્ષ, દ્રવ્ય તથા ભાવ કે ભેદ સે દો-દો પ્રકાર કે હૈં, ઉનમેં દ્રવ્યપ્રાન્ત સ્વાભાવિકરસવર્જિત ટંઢા પુરાના કુલત્ય આદિ, તથા પ્રમાણ મેં થોડા. ભાવપ્રાન્ત દ્વેષરહિત ધૂમદોષવર્જિત. દ્રવ્ય-રુક્ષ-ઘૃત આદિ રસવર્જિત, ઓર ભાવરુક્ષ-રાગરહિત અઙ્ગારદોષવર્જિત આહાર. મુનિ ઇસ પ્રકાર કા આહાર કરતે હૈં. ઇસ પ્રકાર કે આહાર કો અપને ઉપયોગ મેં લેનેવાલા અનગાર કર્મશરીર ક્ષીણ કરતા હુવા ‘ ઓઘન્તરઃ ’ સંસારરૂપી ભાવ ઓઘકો “ કહેમાણે કહે ” ઇસ વાક્ય કે અનુસાર પાર કરને વાલા હો જાતા હૈ. યદ્યપિ સંસારરૂપી સમુદ્ર કો અમી ઉસને પાર નહીં ક્રિયા હૈ પરન્તુ પાર કરનેરૂપ ક્રિયા અમી ઉસકી ચાલૂ હૈ-પાર કરને કે સન્મુખ હો રહા હૈ, ભવિષ્ય મેં ઉસે પાર કરેગા ફિર મી સૂત્ર મેં “ તિણ્ણે-તીર્ણઃ ” જો ઇસ ભૂતકૃદન્ત કા પ્રયોગ ક્રિયા ગયા હૈ વહ “ ક્રિયમાણં કૃત્તં ” ઇસ વાક્ય કે અનુસાર ક્રિયા હુઆ સમજના ચાહિયે. જૈસે કિસી કાર્ય કી સમાપ્તિ અમી હુઈ નહીં હૈ, સમાપ્તિ કી ઓર વહ અગ્રસર હો રહા હૈ ઓર ભવિષ્ય મેં પાર હોગા; પરન્તુ વ્યવહાર મેં

ભાવ ભેદથી જે પ્રકારે છે. તેમાં દ્રવ્યપ્રાન્ત-સ્વાભાવિક રસવર્જિત ટંઢા પુરાણા કુલત્ય આદિ, તથા પ્રમાણમાં થોડું. ભાવપ્રાન્ત-દ્વેષરહિત-દોષરહિત, દ્રવ્યરુક્ષ-ધી આદિ રસ વર્જિત, અને ભાવરુક્ષ-રાગરહિત અંગારદોષવર્જિત આહાર, મુની આવા પ્રકારનો આહાર કરે છે. આવા પ્રકારના આહારને પોતાના ઉપયોગમાં લાવવાવાળા અણુગારકર્મ-શરીરને ક્ષીણ કરીને “ ઓઘન્તર ” સંસારરૂપી ભાવ ઓઘને “ કહેમાણે કહે ” આ વાક્ય અનુસાર પાર કરવાવાળા થઈ જાય છે, જે કે સંસારરૂપી સમુદ્રને હવે તેમણે ઓળંગેલ નથી પરંતુ ઓળંગવારૂપ ક્રિયા હવે તેમની આલુ છે. ઓળંગવા માટે સન્મુખ થતાં જાય છે. ભવિષ્યમાં તેનો પાર કરશે તો પણ સૂત્રમાં “ તિણ્ણે-તીર્ણઃ ” જે આ ભૂત કૃદન્તનો ઉપયોગ કર્યો છે તે “ ક્રિયમાણં કૃત્તં ” આ વાક્ય અનુસાર કરેલું સમજવું જોઈએ. જેમ કોઈ કાર્યની સમાપ્તિ હવે થયેલ નથી પણ સમાપ્તિના માર્ગ ઉપર છે અને ભવિષ્યમાં સમાપ્ત કરશે, પણ વ્યવહારમાં તે “ થઈ ગયેલ



ઓઘં=ભાવોઘં સંસારં તરતીત્યોઘન્તરઃ, ‘કહેમાણે કહે’ इति वचनात्तीर्णः, मुक्तः=  
વાહ્યાભ્યન્તરમમત્વરહિતો भवति, किञ्च-स एव विरतः=विषयकषायसङ्गवर्जितः,  
व्याख्यातः=मुनित्वेन प्रसिद्धः । इति ब्रवीमीत्यस्यार्थस्तूक्त एव ॥ सू० ६ ॥

यश्च पूर्वोक्तविपरीतवर्ती स कीदृशो भवतीत्याह—‘दुर्वसुमुणी’ इत्यादि ।

મૂલમ્—**दुर्वसुमुणी अणाणाए तुच्छए गिलाइ वत्तए एस  
वीरे पसंसिए, अच्चइ लोगसंजोगं एस नाए पमुच्चइ ॥सू० ७॥**

छाया—दुर्वसुमुनिरनाज्ञया तुच्छो ग्लायति वर्तयेत् एष वीरः प्रशंसितः  
अत्येति लोकसंयोगम्, एष न्यायः प्रोच्यते ॥ सू० ७ ॥

टीका—‘दुर्वसुमुनि’ रित्यादि, दुर्वसुमुनिः, वसु=द्रव्यं भव्यं कल्याणमिति  
यावत्, तच्च दुर्=दुष्टं विपरीतं दूरे स्थितं वा यस्य दुर्वसुः, स चासौ मुनिश्च दुर्वसु-  
वह “होचुका” ऐसा कहा जाता है, उसी प्रकार यहां पर भी यही  
समझकर “तीर्णः” इस पदका प्रयोग किया गया है । जो ‘ओघन्तर’  
होते हैं वे बाह्य और आभ्यन्तर परपदार्थों से ममत्वरहित होते हैं और  
विषयकषायों के संगसे रहित होकर मुनिरूपसे प्रसिद्ध कोटि में आते हैं ।  
“इति ब्रवीमि” इन पदों का भावार्थ पहिले लिखा जा चुका है ॥ सू० ६ ॥

જો સંયમી પૂર્વોક્ત સ્વરૂપ સે વિપરીતવર્તી છે વહ કૈસા હોતા છે ?  
इस विषय को समझाते हैं—‘दुर्वसुमुणी’ इत्यादि ।

वह दुर्वसु मुनि है जो वीतराग प्रभु की आज्ञा से रहित होता  
हुआ स्वच्छन्द आचारविचारवाला होता है । वसु शब्द का अर्थ द्रव्य  
है, द्रव्य से मतलब धन से नहीं किन्तु भव्य अर्थात् कल्याण से है ।

છે” એમ કહેવામાં આવે છે, તે પ્રકારે આ ઠેકાણે પણ તેવું સમજીને “તીર્ણઃ”  
આ પદનો ઉપયોગ કરવામાં આવેલ છે. જે ઓઘન્તર યને છે તે બાહ્ય અને  
આભ્યંતરમાં પરપદાર્થોથી મમત્વરહિત યને છે, અને વિષય કષાયોના સંગથી  
રહિત યની મુનિરૂપથી પ્રસિદ્ધ કોટિમાં આવે છે. “इति ब्रवीमि” આ પદોનો  
ભાવાર્થ પહેલાં લખાઈ ચૂકેલ છે. ॥ સૂ૦ ૬ ॥

જે સંયમી પૂર્વોક્ત સ્વરૂપથી વિપરીતવર્તી છે, તે કેવા હોય છે ? આ  
विषयने समन्तवतां सूत्रकार कहे છે—‘दुर्वसुमुणि’ इत्यादि.

તે દુર્વસુ મુનિ છે કે જે વીતરાગ પ્રભુની આજ્ઞાથી રહિત થઈને સ્વચ્છંદ  
આચાર વિચારવાળા યને છે. વસુ શબ્દનો અર્થ દ્રવ્ય છે. દ્રવ્યનો તાત્પર્ય ધન  
નહિ પણ ભવ્ય અર્થાત્ કલ્યાણ છે. આ ભવ્ય=કલ્યાણ જેનાથી દૂર છે અથવા

મુનિઃ=મોક્ષાનર્હો રત્નત્રયવિરાધક इत्यर्थः, કુત इत्थमित्याह—‘અનાજ્ઞયે’ત્યાદિ । અનાજ્ઞયા વર્તમાનઃ=વીતરાગોપદેશવિકલઃ સ્વચ્છન્દાચારી । નનુ વીતરાગોપદેશાનુસારેણ કુતો ન વર્તતે યેન સ્વૈરિત્વં સ્યાદિતિ चेन्न, લોકેऽમમીકારો, રત્યરત્યોર્વિરોધઃ, શબ્દાદિવિષયે તટસ્થતા ચ, इत्येवंरूपतीक्ष्णासिधाराकल्पसदुपदेशपरिसेवनस्याति-  
 दुष्करत्वेन स्वच्छन्दचारित्वस्य सुलभत्वात् । यथैतादृशः स तुच्छः=ભાવતુચ્છો જ્ઞાના-  
 દિકલાવિકલઃ સન્ ગ્લાયતિ=સંદેહવિષયં પૃષ્ઠવન્તં કંચિત્ સ વસ્તુતત્ત્વસ્યાપરિજ્ઞાનાત્ત-

યહ ભવ્ય-કલ્યાણ જિસસે દૂર હૈ, અથવા જો ભવ્યભાવ સે દુષ્ટ-વિપરીત હૈ, વહ દુર્વસુ હૈ । મુક્તિ પ્રાપ્તિ કે અયોગ્ય એસા રત્નત્રયકા વિરાધક મુનિ હી યહાંદુર્વસુ શબ્દ કા વાચ્યાર્થ હૈ । વીતરાગ પ્રભુ કે ઉપદેશ કા નામ આજ્ઞા હૈ । ઇસ આજ્ઞા સે ભિન્ન અનાજ્ઞા હૈ । દુર્વસુ મુનિ વીતરાગ પ્રભુ કી આજ્ઞા સે વિકલ હોતા હૈ અર્થાત્ સ્વેચ્છાચારી હોતા હૈ । સ્વેચ્છાચારિતા ઇસમેં ઇસલિયે આતી હૈ કિ યહ જો પ્રભુકા ઉપદેશ હૈ કિ—“ કિસી ભી પદાર્થ મેં મમત્વ નહીં રખના । રતિ અરતિ નહીં કરના, તથા ઇન્દ્રિયોં કે શબ્દાદિવિષયોં મેં તટસ્થ રહના ” ઇસે રુચિકર નહીં હોતા, કારણ કિ યહ તીક્ષ્ણ અસિધારાસદૃશ ડનકે સદુપદેશ કે સેવન કો અતિદુષ્કર માનતા હૈ । ઇસીલિયે વહ તુચ્છ-ભાવતુચ્છ હૈ, અર્થાત્-જ્ઞાનાદિક કલાસે વિકલ હૈ । યદિ વહ સમ્યગ્ જ્ઞાનસંપન્ન હોતા તો કમી ભી વીતરાગ પ્રભુ કે ઉપદેશ સે વાહ્યમતિવાલા ન હોતા । જ્ઞાનકલા સે વિકલ હોકર હી તો વહ દુઃખિત હોતા હૈ । જવ કોઈ ડસકી સ્વચ્છન્દ

જે ભવ્ય ભાવથી દુષ્ટ-વિપરીત છે તે દુર્વસુ છે. મુક્તિપ્રાપ્તિના માટે અયોગ્ય એવા રત્નત્રયના વિરાધક મુનિ જ આંહી દુર્વસુ શબ્દનો વાચ્યાર્થ છે. વીતરાગ પ્રભુના ઉપદેશનું નામ આજ્ઞા છે. આ આજ્ઞાથી ભિન્ન અનાજ્ઞા છે. દુર્વસુ મુનિ વીતરાગ પ્રભુની આજ્ઞાથી વિકળ બને છે અર્થાત્ સ્વેચ્છાચારી થાય છે. સ્વચ્છન્દપણું તેઓમાં આ માટે આવે છે કે એવો જે પ્રભુનો આદેશ છે કે “કોઈપણ પદાર્થમાં મમત્વ રાખવું નહિ, રતિ અરતિ કરવી નહિ, તથા ઈન્દ્રિયોના શબ્દાદિ વિષયોમાં તટસ્થ રહેવું.” આ તેઓને રૂચિકર થતું નથી. કારણ કે આ તીક્ષ્ણ તલવારની ધાર સમાન તેના સદુપદેશને માનવું ઘણું કઠીન સમજે છે, તેથી તે તુચ્છ-ભાવતુચ્છ છે, અર્થાત્ જ્ઞાનાદિક કલાથી વિકળ છે. કદાચ તેઓ સમ્યગ્જ્ઞાનસંપન્ન હોત તો કદિ પણ વીતરાગ પ્રભુના ઉપદેશથી વિમુખ ન થાત જ્ઞાનકળાથી વિકળ બની તે દુઃખી થાય છે. બ્યારે કોઈ પણ તેની સ્વચ્છન્દ પ્રવૃત્તિ દેખી વાસ્તવિક મુનિના

દુત્તરં કર્તુમ્ અસમર્થો ભવતીત્યર્થઃ । યદ્વા-જ્ઞાનવાનપિ ચારિત્રશૂન્યઃ પૂજાસત્કારભયાદ્ મોક્ષમાર્ગનિરૂપણાવસરે યથાવસ્થિતં વોધયિતું લજ્જત ઇત્યર્થઃ, યથ તીર્થદ્વારાજ્ઞા-  
પ્રવૃત્તિ દેશ્વકર વાસ્તવિક મુનિકે આચારવિષયક પ્રશ્ન ઉસસે પૂછતા હૈ તો વહ વસ્તુતત્ત્વ કા વાસ્તવિક જ્ઞાતા ન હોને સે ઉસકે પ્રશ્નકા યથાર્થ ઉત્તર નહીં દે સકતા હૈ, યા જો કુછ કહતા હૈ વહ સ્વકપોલકલ્પિત હી કહતા હૈ જિસે લોગ માનને કો તૈયાર નહીં હોતે । ઇસ પ્રકાર વહ અપની માન્યતા મેં વદ્વા લગને કે અથવા પોલ ખુલને કે ડર સે સદા દુઃખી હી બના રહતા હૈ । અથવા-જ્ઞાનકલાસમ્પન્ન હો તો બી યથાર્થ ચારિત્ર સે વહ શૂન્ય હૈ ઇસલિયે જિસ સમય વહ મોક્ષ માર્ગ કી પ્રરૂપણ કરતા હૈ ઉસ સમય વહ ઉસકી યથાર્થ પ્રરૂપણા કરને મેં લજ્જિત જૈસા હોતા હૈ, ક્યોંકિ વહ સમજ્ઞતા હૈ કિ મૈં સ્વયં યથાર્થ ચારિત્રશાલી નહીં હૂં, યદિ મૈં વાસ્તવિક વસ્તુસ્થિતિ કા પરિચય લોગોં કો કરા દૂંગા તો લોગોં કો દૃષ્ટિમેં મેરી માન્યતા ગિર જાવેગી, લોગ કહેંગે કિ-મહારાજ ! જૈસી આપ પ્રરૂપણા કરતે હૈં ઉસ પ્રકાર કી ક્રિયા આપ ક્યોં નહીં પાલતે ? । ઇસ પ્રકાર અપના માન-સમ્માન કે જાને કે ભય સે વહ લોગોં કો અન્ધ-કાર મેં હી રખતા હૈ, પરન્તુ ઉસે યહ ભય સદા લગા રહતા હૈ કિ કહીં કોઈ યથાર્થ વક્તા આકર વાસ્તવિક વસ્તુસ્થિતિ કા પ્રતિપાદન ન કરદે ।

આચારવિષયનો પ્રશ્ન પૂછે છે તો તે વસ્તુતત્ત્વનો વાસ્તવિક જ્ઞાતા ન હોવાથી તેના પ્રશ્નનો ઉત્તર યથાર્થરૂપે આપી શકતો નથી. અગર જો કંઈ પણ જવાબ આપે છે તો તે સ્વકપોલકલ્પિત જ આપે છે, જે માનવાને લોક તૈયાર થતા નથી. આવા પ્રકારથી તે પોતાની માન્યતામાં ડાઘ લાગવાના ભયથી અથવા પોલ ખુલતી થવાના ભયથી સદા દુઃખી બની રહે છે, અથવા જ્ઞાનકલાસંપન્ન હોય તો પણ યથાર્થ ચારિત્રથી તે શૂન્ય છે, તેથી જે વળતે મોક્ષમાર્ગની પ્રરૂપણા કરે તે વળતે તે તેની યથાર્થ પ્રરૂપણા કરવામાં લજ્જિત બને છે, કારણ કે તે સમજે છે કે હું સ્વયં યથાર્થચારિત્રશાળી નથી, કદાચ હું વાસ્તવિક વસ્તુસ્થિતિનો પરિચય લોકોને કરાવી આપીશ તો લોકોની દૃષ્ટિમાં મારી માન્યતા નીચી પડશે, લોક બોલવા માંડશે કે-મહારાજ ! જેવી આપ પ્રરૂપણા કરો છો તેવા પ્રકારની ક્રિયા આપ કેમ પાળતા નથી ? આવા પ્રકારે પોતાનું માન સન્માન જવાના ભયથી તે લોકોને અંધારામાં જ રાખે છે, પરંતુ તેને સદા તે ભય લાગ્યો જ રહે છે કે કદાચ કોઈ યથાર્થવક્તા આવીને વાસ્તવિક વસ્તુસ્થિતિનું પ્રતિ-પાદન ન કરી નાંખે.

નુયાયી સ રત્નત્રયસમારાધકઃ સુવસુમ્નિર્વસ્તુતત્ત્વપરિજ્ઞાનાન્ન કદાચિદપિ ગ્લાયતિ ।  
 એપઃ=સુવસુમ્નિઃ વીરઃ=સંયમાનુષ્ઠાનકુશલઃ પ્રશંસિતઃ=ગણધરાદિભિરભિનન્દિતઃ,  
 સ એવ ચ લોકસંયોગં-લોકેન=અસંયમિલોકેન સહ સંયોગઃ=સમ્બન્ધો મમીકાર इति  
 યાવત્ લોકસંયોગસ્તં, યદ્વા-લોકસંયોગં-લોકૈર્વાહ્યભૂતૈર્હિરણ્યસુવર્ણધનધાન્યમાતા-  
 પિતૃપુત્રકલત્રદુહિત્રાદિભિરાભ્યન્તરૈ રાગદ્વેષાદિભી રાગદ્વેષજન્યૈરષ્ટવિધકર્મભિર્વા  
 સહ સંયોગં=સમ્બન્ધમ્ અત્યેતિ=અતિક્રામ્યતિ સ મુનિર્મમત્ત્વાદિભિઃ પરિમુક્તો ભવતી-

ये लक्षण दुर्वसु मुनि के हैं, अब सुवसु मुनि के सम्बन्ध का वर्णन करते हैं—

वे सुवसु मुनि हैं जो वीतराग प्रभु की आज्ञा के आराधक हैं—रत्न-  
 त्रयमार्ग के पालने में सावधान हैं। वे वस्तुतत्त्व के वास्तविक ज्ञाता  
 होने से कभी भी अन्यथा प्ररूपणा नहीं करते। प्ररूपणा के अनु-  
 सार ही अपनी प्रवृत्ति रखते हैं। जैसा कहते हैं वैसा स्वयं पालन करते  
 हैं, इसलिये इनको किसी भी प्रकार का भय भी नहीं होता; ये वीर होते  
 हैं। गणधरादिक देवोंने ऐसे ही सुवसु मुनियों की प्रशंसा की है। इन्हें  
 वीर इसलिये कहा गया है कि—ये निर्दोष संयम के अनुष्ठान करने में  
 कुशल होते हैं। असंयमी लोगों के साथ यदि कदाचित् इनका संयोग  
 हो जाता है तो भी ये अपने मोक्षमार्ग से चलित नहीं होते हैं। अथवा  
 बाह्यपरिग्रह—हिरण्य सुवर्ण धनधान्य माता-पिता पुत्र कलत्र आदि के  
 साथ इनका सम्बन्ध हो जाता है तो ये उस सम्बन्धसे सदा वहिर्भूत

આ લક્ષણ દુર્વસુ મુનિના છે, હવે સુવસુ મુનિના સંબંધનું વર્ણન કરે છે:—

તે સુવસુ મુનિ છે જે વીતરાગ પ્રભુની આજ્ઞાના આરાધક છે. રત્નત્રય  
 માર્ગનું પાલન કરવામાં સાવધાન છે. તે વસ્તુતત્ત્વના વાસ્તવિક જ્ઞાતા હોવાથી  
 જે કોઈ વખત અન્યથા પ્રરૂપણા કરતા નથી. પ્રરૂપણા અનુસાર જ પોતાની  
 પ્રવૃત્તિ રાખે છે. જેવું કહે છે તેવું સ્વયં પાલન કરે છે, તેથી તેને કોઈ પણ  
 પ્રધારનો ભય રહેતો નથી. તે વીર બને છે. ગણધરાદિક દેવોએ એવા જ સુવસુ  
 મુનિઓની પ્રશંસા કરી છે, તેમને વીર એટલા માટે કહેવામાં આવેલ છે કે તે  
 નિર્દોષ સંયમનું અનુષ્ઠાન કરવામાં કુશળ હોય છે. અસંયમી લોકોનો સંગ  
 કદાચ સંયોગથી બને તો પણ તે પોતાના મોક્ષમાર્ગથી ચલિત થતા નથી, અને  
 બાહ્ય પરિગ્રહહિરણ્ય સુવર્ણ ધન ધાન્ય માતા પિતા પુત્ર કલત્ર આદિની સાથે  
 તેનો સંબંધ થાય તો પણ તે તેવા સંબંધમાં સદા તે બહિર્ભૂત રહે છે. તેમાં  
 તેની મમતા લાગતી નથી. આખ્યંતર પરિગ્રહ રાગ દ્વેષ આદિ, અથવા તેનાથી

ત્યર્થઃ, કિં તેનેત્યાહ—‘એપ’ ઇત્યાદિ, એપઃ=લોકસંયોગાતિક્રમો ન્યાયઃ=સન્માર્ગઃ પ્રોચ્યતે=કલ્પ્યતે, યદ્વા—‘નાયઃ’ ઇતિચ્છાયા, ‘નાયઃ’ આત્માનં મોક્ષં નયતીતિ નાયઃ=સુસુક્ષુરનગારઃ, આર્પત્વાત્કર્તરિ ઘઞ્પ્રત્યયઃ, ભગવદાજ્ઞાનુયાયી સુવસુમુનિરેવ મોક્ષં લભત ઇતિ તાત્પર્યમ્ ॥ સૂ૦ ૭ ॥

સામ્પ્રતં ભગવદુપદેશમેવ દર્શયતિ—‘જં દુઃખં’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્—જં દુઃખં પવેદ્યં ઇહ માણવાણં તસ્સ દુઃખસ્સ કુસલા પરિન્નમુદાહરંતિ, ઇય કમ્મં પરિન્નાય સવ્વસો, જે અણન્નદંસી સે અણન્નારામે, જે અણન્નારામે સે અણન્નદંસી, જહા પુણ્ણસ્સ કત્થઈ તહા તુચ્છસ્સ કત્થઈ, જહા તુચ્છસ્સ કત્થઈ તહા પુણ્ણસ્સ કત્થઈ, અવિ ય હ્ણે અણાઈયમાણે ॥ સૂ૦ ૮ ॥

રહતે હૈં, ઉનમેં ઇનકી સમતા નહીં હોતી હૈ । આમ્યન્તર પરિગ્રહ-રાગદ્વેષ આદિ યા ઇનસે ઉત્પન્ન આઠ કર્મોં કે સાથ કે સમ્બન્ધ કો સદા યે નાશ કરને મેં ઉદ્યત રહતે હૈં । યે કોઈં મીં એસા કાર્ય યા પ્રયત્ન નહીં કરતે કિં જિસસે રાગદ્વેષાદિક યા ઉનકી પરમ્પરા વઢે યા ઇનસે ઉત્પન્ન કર્મોં કા વન્ધ દઢ હોતા રહે । સદા યે વૈસા હીં પ્રયત્ન કરતે હૈં કિં જિસસે રાગ-દ્વેષાદિક કા સમ્બન્ધ છૂટે ઓર સંચિત કર્મોં કી નિર્જરા એવં આગામી કર્મોં કા સંવર અર્થાત્ વન્ધ કા અભાવ હોતા રહે । ઇસ પ્રકાર કા યહ ઇનકા લોકસંયોગ-માતાપિતાદિ કા સમ્બન્ધ-કા ત્યાગ હીં સન્માર્ગ હૈ । અથવા “નાય” કી છાયા “નાય” મીં હૈ । આત્મા કો જો મોક્ષ પ્રાપ્ત કરાતા હૈં વહ નાય હૈ, અર્થાત્ ભગવાન કી આજ્ઞાનુસાર પ્રવૃત્તિ કરને વાલા, એસા સુવસુ મુનિ હીં મોક્ષ કા પ્રાપક હોતા હૈ, અન્ય નહીં ॥ સૂ૦ ૭ ॥

ઉત્પન્ન થતાં આઠ કર્મોના સંબંધનો નાશ કરવામાં સદા તે ઉદ્યમી રહે છે. તે કોઈ પણ એવું કાર્ય કે પ્રયત્ન નથી કરતા કે જેનાથી રાગ દ્વેષાદિક અગર તેની પરંપરા વધે, અગર તેનાથી ઉત્પન્ન કર્મોના બંધ દઢ થતાં રહે. સદા તે એવો જ પ્રયત્ન કરે છે કે જેનાથી રાગદ્વેષાદિકનો સંબંધ છુટે, અને સંચિત કર્મોની નિર્જરા અને આગામી કર્મોનો સંવર અર્થાત્ બંધનો અભાવ થતો રહે આવા પ્રકારનો તેનો લોકસંયોગ-માતા પિતાદિકના સંબંધનો ત્યાગ જ સન્માર્ગ છે. અથવા “નાય”ની છાયા “નાયઃ” પણ છે. આત્માને જેનાથી મોક્ષ પ્રાપ્ત થાય તે નાય છે, અર્થાત્ ભગવાનની આજ્ઞાનુસાર પ્રવૃત્તિ કરવાવાળા એવા સુવસુ મુનિ જ મોક્ષના પ્રાપક બને છે, અન્ય નહિ ॥ સૂ૦ ૭ ॥

છાયા—યદ્દુઃખં પ્રવેદિતમિહ માનવાનાં તસ્ય દુઃખસ્ય કુશલાઃ પરિજામુદાહરન્તિ-  
 ઇતિ કર્મ પરિજાય સર્વશઃ, યોઽનન્યદર્શી સોઽનન્યારામઃ, યોઽનન્યારામઃ સોઽનન્યદર્શી,  
 યથા પુણ્યાય કથ્યતે તથા તુચ્છાય કથ્યતે, યથા તુચ્છાય કથ્યતે તથા પુણ્યાય  
 કથ્યતે, અપિ ચ દન્યાદનાદ્રિયમાણઃ ॥ સૂ. ૮ ॥

ટીકા—‘યદ્દુઃખં’ મિત્યાદિ, યત્=અનિર્દિષ્ટં દુઃખં=શારીરિકમાનસિકં, દુઃખ-  
 જનકં કર્મ વા યથા યત્ર યેન પ્રકારેણ કર્મ વ્યયતે મુચ્યતે વા, યથા ચ વિપાકો ભવતિ  
 યથા ચ ન ભવતિ તત્સર્વં પ્રવેદિતં=તીર્થઙ્કરગણધરૈઃ પ્રરૂપિતમ્ । इह=अस्मिन् लोके  
 कुशलाः=द्रव्यक्षेत्रकालभावपरिज्ञाननिपुणाः स्वसमयपरसमयज्ञाः परीपहोपसर्ग-  
 सहनक्षमाः, કર્મમહાસુમટઘટાવિઘટનોપાયઘટકાઃ રાગદ્વેષમહોરગવિપમવિપશમન-  
 વિષવૈદ્યાઃ, કષાયાનલસન્તાપપ્રશમનપ્રતીનાઃ, વિકટભવાટવીપારગમનનિપ્પાતાઃ  
 ભાવકુશલાઃ, માનવાનાં તસ્ય દુઃખસ્ય પૂર્વોક્તસ્ય પ્રાણાતિપાતાદ્યુપાર્જિતસ્ય કર્મણો  
 વા પરિજામ્=કર્મોપાર્જનતન્નિરોધકારણપરિજ્ઞાનમ્ ઉદાહરન્તિ=ઉપદિશન્તિ-વન્યો

अब फिर भी भगवान के उपदेश को कहते हैं—‘जं दुःखं’ इत्यादि ।

इस चतुर्गतिक रूप संसार में ऐसा कोई भी प्राणी नहीं है जो किसी  
 न किसी तरह से दुःखी न हो । कोई शारीरिक तो कोई मानसिक  
 दुःख से हर समय दुःखी ही बने रहते हैं । इन दुःखों का प्रदाता जीवों  
 को अपने किये हुए कर्म के सिवाय और कोई नहीं है । यह बात हमें  
 हमारे तीर्थङ्कर गणधरादि महापुरुषों ने अच्छी तरह से शास्त्रों में बत-  
 लाई है । साथ में यह भी बतलाया है कि जिन कर्मों से हमें सुखदुःख  
 प्राप्त होता है उन कर्मों को यह जीव किस प्रकार से कैसे बांधता है ?,  
 तथा उन कर्मों के उदय क्षय क्षयोपशमादि कैसे होते हैं ? कैसे नहीं  
 होते हैं ? । उन्हीं के सिद्धान्तानुसार आचार्य आदि महर्षिगण भी—

હવે ફરીથી પણ ભગવાનનો ઉપદેશ કહે છે—‘જં દુઃખં’ ઇત્યાદિ.

આ ચતુર્ગતિરૂપ સંસારમાં એવું કોઈ પણ પ્રાણી નથી જે કોઈને  
 કોઈ પ્રકારે દુઃખી ન હોય. કોઈ શરીરથી તો કોઈ મનથી દુઃખી તેવા પ્રકારે  
 સદા દુઃખી બની રહે છે. આ દુઃખોનો પ્રદાતા જીવોને યોગતાના કારણે કર્મો સિવાય  
 બીજું કોઈ પણ નથી. આ વાત અમને અમારા તીર્થંકરોએ તથા ગણધરાદિકે ઘણી  
 સારી રીતે શાસ્ત્રોમાં બતાવી છે. સાથે એ પણ બતાવેલ છે કે જે કર્મોથી અમોને  
 સુખદુઃખ પ્રાપ્ત થાય છે તેવા કર્મોને આ જીવ કેવા પ્રકારે કેવી રીતે બાંધે  
 છે ? તથા તેવા કર્મોના ઉદય ક્ષય ક્ષયોપશમાદિ કેમ થાય છે ? કેવી રીતે થતા  
 નથી ? તેના સિદ્ધાન્તાનુસાર આચાર્ય આદિ મહર્ષિગણ પણ—જે દ્રવ્ય, ક્ષેત્ર,



બન્ધહેતુસ્તન્મોક્ષો મોક્ષહેતુશ્ચ ભવતીતિ સતતં કથયન્તીત્યર્થઃ, અપિ ચ ઇતિ=યત્પૂર્વોક્તં કર્મ=જ્ઞાનાવરણીયાદિકં તજ્જન્યં યદ્દુઃખં તદ્, યન્ચ પ્રાણિદુઃસ્વપરિજ્ઞાતારઃ કુશલા ઉદાહરન્તિ તદપિ ચ સર્વશઃ=સર્વપ્રકારેણ પરિજ્ઞાય=જ્ઞપરિજ્ઞયા જ્ઞાત્યા પ્રત્યા-  
હ્યાનપરિજ્ઞયા યોગત્રિકકરણત્રિકૈઃ પરિહૃત્ય ચાસ્રવદ્વારેષુ ન વર્તેત, યદ્વા સર્વશઃ=  
ભેદપ્રભેદપૂર્વકં પરિજ્ઞાય કથયતિ, અથવા સર્વશઃ=સર્વસ્માત્ કેવલિનશ્ચતુર્દશપૂર્વવિદો  
વા સકાશાત્ પરિજ્ઞાય=જ્ઞાત્યા, યદિવા સર્વશઃ=આક્ષેપણ્યાદિભિશ્ચતુર્વિધાભિઃ  
કથાભિઃ કથયતિ ।

જો દ્રવ્ય, ક્ષેત્ર, કાલ ઓર ભાવ કે પરિજ્ઞાન મેં નિપુણ હોતે હેં, સ્વ-  
સિદ્ધાન્ત ઓર પરસિદ્ધાન્ત કે જો વેત્તા હોતે હેં, પરીષદ્ ઓર ઉપસર્ગ કે  
સહને મેં જો શક્તિશાલી હોતે હેં, કર્મરૂપી મહાસુખદોં કી ઘટાકો હટાને  
કે ઉપાયોં કે જુટાને મેં પ્રવીણ હોતે હેં, રાગ ઓર દ્વેષરૂપી શ્વેત ઓર  
કાલે નાગ કે ભયઢૂર વિષ કો શમન કરને મેં જો વિષવૈદ્ય કે સમાન હેં,  
કપાયરૂપી અગ્નિ કે જ્વાલાજન્ય સન્તાપ કો શાન્ત કરને મેં જો કુશલ  
હેં, ઓર જો ભયઢૂર ઇસ સંસારરૂપી અટવી સે પાર હોને મેં અદ્વિતીય  
નિપુણ હોતે હેં વેમનુષ્યોં કે ઉસ પૂર્વોક્ત દુઃખકી, અથવા પ્રાણાતિગતાદિ  
સે ઉપાર્જિત જ્ઞાનાવરણાદિક અષ્ટવિધ કર્મોં કી પરિજ્ઞા કો નિરન્તર  
પ્રકટ કરતે રહતે હેં । વે અપને દિવ્ય ઉપદેશોં દ્વારા “કર્મ કિસ તરહ  
બંધતે હેં ?, બંધ કે કૌન-કૌન સે કારણ હેં ?, બંધ કા અભાવ કૈસે હોતા  
હેં ? ઓર મોક્ષકે કારણ ક્યા હૈ ? ” ઇન સબ વાતોંકો સ્પષ્ટ કર સમ-  
જ્ઞાતે હેં । ઉનકે દિવ્ય ઉપદેશરૂપ શાસ્ત્રકા ધર્મોપદેશકકે નિકટ શ્રવણ

કાળ અને ભાવના પરિજ્ઞાનમાં નિપુણ હોય છે, સ્વસિદ્ધાન્ત અને પરસિદ્ધાન્તના  
જે બાણકાર છે પરિષદ અને ઉપસર્ગ સહન કરવામાં જે શક્તિશાળી હોય છે,  
કર્મરૂપી મહાસુખદોની ઘટાને હટાવવામાં ઉપાયો યોજવામાં જે નિપુણ હોય  
છે, રાગ અને દ્વેષરૂપી ધોળા અને કાળા નાગના ભયંકર વિપત્તિ શમન કરવામાં  
જે વિષવૈદ્યસમાન છે, કપાયરૂપી અગ્નિની જ્વાલાજન્ય સંતાપને શાંત કરવામાં  
કુશળ છે અને જે ભયંકર આ સંસારરૂપી અટવીથી પાર થવામાં અદ્વિતીય  
નિપુણ હોય છે.—મનુષ્યોના તે પૂર્વોક્ત દુઃખોની, અથવા પ્રાણાતિપાનાદિથી  
ઉપાર્જિત જ્ઞાનાવરણાદિક અષ્ટવિધ કર્મોની પરિજ્ઞાને નિરંતર પ્રકટ કરના રહે છે  
તે પોતાના દિવ્ય ઉપદેશોદ્વારા “કર્મ કેવી રીતે બંધાય છે ? બંધ શું છે ?  
બંધના ક્યા ક્યા કારણો છે ? બંધ કેવી રીતે થાય ? અને મોક્ષનું કારણ  
શું છે ? ” આ બધી બાબતો સ્પષ્ટ રીતે સમજાવે છે. તેના દિવ્ય ઉપદેશરૂપ  
શાસ્ત્રના ધર્મોપદેશક નિકટ શ્રવણ કરવાવાળા તથા તેના મતાનુસાર ચાલનાર



ધર્મોપદેશકઃ કીદૃશો ભવતીત્યાહ—‘યોઽનન્યે’—ત્યાદિ, યઃ કશ્ચિત્ અનન્યદર્શી-અન્યં દ્રષ્ટું શીલં યસ્ય સોઽન્યદર્શી, ન અન્યદર્શી=અનન્યદર્શી=અન્યદર્શનશ્રદ્ધાનરહિતઃ-ભગવદુપદિષ્ટવસ્તુતત્ત્વરુચિશીલો ભવતિ સ એવ અનન્યારામઃ=રત્નત્રયાતિરિક્ત-વસ્તુરમણવિરતો ભવતિ । મિથ્યાદૃષ્ટિશાસ્ત્રસ્યાનાત્મપ્રણીતત્વાત્તત્ર ન રમત ઇત્યાશયઃ ।

કરનેવાલે, તથા અનેકે મતાનુસાર ચલનેવાલે વ્યક્તિકા યહ પ્રધાન કર્તવ્ય હૈ કિ વહ અનેકે હસ પ્રકારકે દિવ્ય ઉપદેશકો—કિ જ્ઞાનાવરણીયાદિક કર્મોંકો યહ જીવ હસ પ્રકાર વાંધતા હૈ ઓર તજ્જન્ય હન દુઃખોં કો નિતપ્રતિ ભોગતા રહતા હૈ, હન સમી વાતોંકો—જ્ઞ-પરિજ્ઞાસે જાનકર ઓર પ્રત્યાખ્યાન-પરિજ્ઞાસે ત્રીન કરણ ત્રીન યોગોંદ્વારા હન સવકા ત્યાગ કરે, તથા ‘ફિરસે નવીન કર્મોંકા આશ્રવ ન હો’ હસ પ્રકારસે અપની પ્રવૃત્તિકો સંભાલકર રહે ।

ધર્મોપદેશક કૈસા હોતા હૈ? હસ વાતકા ખુલાસા કરતે હુએ કહતે હૈ—‘જે અણન્નદંસી’ ઇત્યાદિ, તીર્થઢ્ઢરાદિદ્વારા પ્રતિપાદિત સિદ્ધાન્તકે સિવાય અન્ય સિદ્ધાન્તમેં જિસકી ઉપાદેયરૂપસે આસ્થા નહીં હોતી હૈ હસકા નામ અનન્યદર્શી હૈ । અન્ય સિદ્ધાન્તકો ગ્રહણ કરનેકી જિસકી દૃષ્ટિ હોતી હૈ વહ અન્યદર્શી હૈ, હસસે વિપરીત અનન્યદર્શી હૈ । જો અનન્યદર્શી હૈ વહી અનન્યારામ હૈ, અર્થાત્ જિસકી રુચિ વીતરાગ પ્રતિપાદિત તત્ત્વોંમેં હી એકતાનરૂપસે તહ્લીન હૈ । વહ હનસે અતિરિક્ત મિથ્યાદૃષ્ટિયોંકે શાસ્ત્રોંમેં કમી ભી રતિશાલી નહીં હોતા હૈ પ્રત્યુત હનકે

વ્યક્તિનું એ પ્રધાન કર્તવ્ય છે કે તે તેના આવા પ્રકારના દિવ્ય ઉપદેશને કે જ્ઞાનાવરણીયાદિક કર્મોંને એ જીવ આ પ્રકારે બાંધે છે અને તજ્જન્ય તેવા દુઃખોંને નિત્ય ભોગવતા રહે છે. આ સઘળી વાતોંને—જ્ઞ-પરિજ્ઞાથી બાળીને, અને પ્રત્યાખ્યાન-પરિજ્ઞાથી ત્રણ કરણ ત્રણ યોગદ્વારા તે સઘળાનો ત્યાગ કરે, તથા ‘ફરીથી નવીન કર્મોંનો આશ્રવ ન બને’ તેવા પ્રકારથી પોતાની પ્રવૃત્તિને સંભાળી રાખે.

ધર્મોપદેશક કેવા હોય છે? એ વાતનો ખુલાસો કરતાં કહે છે—‘જે અણન્નદંસી’ ઇત્યાદિ.

તીર્થઢ્ઢરાદિદ્વારા પ્રતિપાદિત સિદ્ધાંત સિવાય અન્ય સિદ્ધાંતમાં જેની ઉપાદેય રૂપથી આસ્થા થતી નથી તેનું નામ અનન્યદર્શી છે. બીજા સિદ્ધાંતને ગ્રહણ કરવાની જેની દૃષ્ટિ થાય છે તે અન્યદર્શી છે, તેનાથી વિપરીત અનન્યદર્શી છે. જે અનન્યદર્શી છે તે અનન્યારામ છે. અર્થાત્ જેની રૂચી વીતરાગપ્રતિપાદિત તત્ત્વોંમાં જ એકતાન રૂપથી તહલીન છે, તે તેથી અતિરિક્ત મિથ્યાદૃષ્ટિઓના શાસ્ત્રોંમાં કદી પણ રતિશાળી થતા નથી, બલકે તેના સિદ્ધાંતોની

સિદ્ધાન્તકા આલોડનકર જવ વહુ ડનકી માન્યતાઓંકો તર્કણાકી કસોટી પર કસતા હૈ ઓર જવ વે અપની યથાર્થતાસે શૂન્ય સાબિત હોતી હૈં તવ હસકી દૃષ્ટિમૈં જિનપ્રતિપાદિત તત્ત્વોંકી ઓર હી સન્તોષ ઉત્પન્ન હોતા હૈં । વહુ અપનેકો ધન્ય હસલિયે માનતા હૈં કિ મુઝે ત્રિલોકીનાથ દ્વારા પ્રતિપાદિત ધર્મકી શીતલ છત્રછાયા મિલી હૈં । સચ્ચે મણિકી કીમત કાચખણ્ડકે દેખનેસે હી હોતી હૈં । ઉપદેશક જવ તક અપને સિદ્ધાન્તકા પૂર્ણ શ્રદ્ધાવાલા નહીં હોગા તવ તક વહુ દૂસરોંકે લિયે અપને સિદ્ધાન્તકા રહસ્ય હૃદયંગમ નહીં કરા સકતા । ઉપદેશક ગુરુકા કર્તવ્ય હૈં કિ વહુ પહિલે અપને સિદ્ધાન્તકા પૂર્ણ રૂપસે જ્ઞાતા હો, શ્રોતાઓંકી ચિત્તવૃત્તિકો પરખનેવાલા હો, ડનકી શંકાઓંકા યુક્તિ ઓર આગમકે અનુસાર સમાધાન કરનેવાલા હો, સદાચારી હો, અપને ઉપદેશમૈં શંકા સમાધાનકે સાથ અપને સિદ્ધાન્તકા પૂર્ણ વ્યવસ્થાપક હો । ડસ પ્રકારકે ઉપદેશકકા શ્રોતાઓંકે ડપર અસર જિતના પડતા હૈં ઉતના ઓર કિસીકા નહીં પડતા, હસલિયે સૂત્રકારને ડસકી પ્રશંસા-અનન્યારામ ઓર અનન્યદર્શી, હન પદોંસે કી હૈં । ઉપદેશક અપને વિષયકા પ્રતિપાદન આક્ષેપણી વિક્ષેપણી સંવેગિની ઓર નિર્વેદની આદિ ચાર પ્રકારકી કથાઓંમૈંસે જિસ કથાકી જહાં આવશ્યકતા હોતી હૈં ડસી કથાકા

આલોચના કરી જ્યારે તે તેમની માન્યતાઓને તર્કણની કસોટી ઉપર કસે છે અને જ્યારે તે પોતાની યથાર્થતાથી શૂન્ય સાબિત થાય છે ત્યારે તેની દૃષ્ટિમાં જિનપ્રતિપાદિત તત્ત્વોની તરફ જ સંતોષ ઉત્પન્ન થાય છે. તે પોતાને ધન્ય તેટલા માટે માને છે કે મને ત્રિલોકીનાથદ્વારા પ્રતિપાદિત ધર્મની શીતળ છત્રછાયા મળી છે. સાચા મણિની કીમત કાચના દુકડા દેખવાથી થાય છે. ઉપદેશક જ્યાં સુધી પોતાના સિદ્ધાંતનો પૂર્ણ શ્રદ્ધાવાળો નહિ બને ત્યાં સુધી તે બીજાઓને પોતાના સિદ્ધાંતનું રહસ્ય હૃદયંગમ કરાવી શકતો નથી. ઉપદેશક શુરુનું કર્તવ્ય છે કે તે પહેલાં પોતાના સિદ્ધાંતના પૂર્ણ જ્ઞાતા હોય, શ્રોતાઓની ચિત્તવૃત્તિને પારખનાર હોય, તેની શંકાઓનું યુક્તિ અને આગમ અનુસાર સમાધાન કરવાવાળા હોય, સદાચારી હોય, પોતાના ઉપદેશમાં શંકા સમાધાન સાથે પોતાના સિદ્ધાંતનો પૂર્ણ વ્યવસ્થાપક હોય. આવા પ્રકારથી ઉપદેશકની શ્રોતાઓ ઉપર અસર નેટલી પડે છે તેટલી બીજી કશાથી થતી નથી. સૂત્રકારે તેની પ્રશંસા ‘અનન્યારામ અને અનન્યદર્શી’ આ પદોથી કરેલ છે. ઉપદેશક પોતાના વિષયનું પ્રતિપાદન આક્ષેપણી વિક્ષેપણી સંવેગિની અને નિર્વેદની આદિ ચાર પ્રકારની કથાઓમાંથી જે કથાની જ્યાં આવશ્યકતા હોય છે,

एवमुपदेशकस्वरूपमुपदर्श्य सर्वेभ्यः समान एव भगवदुपदेश इति दर्शयति-‘यथे’त्यादि ।

यथा=येन प्रकारेण पुण्याय=पुण्यवते भव्यजीवाय सुरेश्वरचक्रवर्तिमाण्डलि-  
काय च कथ्यते=उपदिश्यते, तथा=एवमेव तुच्छाय=द्रमककाष्ठहारकाय कथ्यते,

अवलम्बन करके उपदेश देते हैं । इसी बातको प्रकट करनेके लिये “सञ्चसो” पदका सूत्रकारने सूत्रमें ग्रहण किया है । जिस विषयमें उपदेशक अकुशल होता है, अथवा जहां पर उसे सन्देह होता है उस विषयको वह स्वयं केवली अथवा श्रुतज्ञानीके पाससे जानकर बादमें उसका प्रतिपादन करता है । जिस समय केवलियोंका यहां पर अस्तित्व था उस समय भी धर्मोपदेशक थे । धर्मोपदेशकोंको जिस विषयमें शंका होती थी वे अपनी शंकाओंका समाधान उनके निकट करते थे, और उस विषयमें पूर्ण निष्णात बनते थे । यद्यपि वर्त्तमानकालमें इस क्षेत्रमें साक्षात् केवली विद्यमान नहीं हैं फिर भी उनके स्थानापन्न उनका उपदेश शास्त्रोंमें अब भी विद्यमान है । उपदेशक गुरु उन्हीं उपदेशोंका अब भी अपनी प्रवृत्ति तदनुकूल बनाकर प्रचार करते रहते हैं ।

वीतराग प्रभुद्वारा प्रतिपादित विषय—चाहे वह दरिद्री हो, धनी हो, इन्द्र हो, चक्रवर्त्ती हो, माण्डलिक राजा हो, कोई भी क्यों न हो—सबके लिये समानरूपसे है, इसमें किसीभी जातिविशेष या वर्ण-विशेषका भेद नहीं रक्खा गया है । भगवानका उपदेश पक्षपातसे

તેવી કથાનું અવલંબન કરીને ઉપદેશ આપે છે. આ વાતને પ્રગટ કરવા માટે “સચ્ચસો” પદનું સૂત્રકારે સૂત્રમાં ગ્રહણ કરેલ છે. જે વિષયમાં ઉપદેશક અકુશળ હોય છે અથવા જે ઠેકાણે તેને સંદેહ થાય છે, તે વિષયને તે સ્વયં કેવળી અથવા શ્રુતજ્ઞાની પાસેથી જાણી લે છે, બાદમાં તેનું પ્રતિપાદન કરે છે. જે વખતે કેવળીઓનું અહીં અસ્તિત્વ હતું તે સમય પણ ધર્મોપદેશક હતા. ધર્મોપદેશકોને જે વિષયમાં શંકા થતી હતી તેઓ પોતાની શંકાઓનું સમાધાન તેમની પાસે કરતા હતા. અને તે વિષયમાં પૂર્ણ નિષ્ણાત બનતા હતા. જે કે વર્તમાનકાળમાં આ ક્ષેત્રમાં સાક્ષાત્ કેવળી વિદ્યમાન નથી તો પણ તેના સ્થાનાપન્ન તેમનો ઉપદેશ શાસ્ત્રોમાં હજી પણ વિદ્યમાન છે, ઉપદેશક ગુરુ તેઓના ઉપદેશોનો હજી પણ પોતાની પ્રવૃત્તિ તદનુકૂળ બનાવી પ્રચાર કરતા રહે છે.

વીતરાગ પ્રભુદ્વારા પ્રતિપાદિત વિષય—આહે કોઈ દરિદ્રી હોય, ધનીક હોય, ઇન્દ્ર હોય કે ચક્રવર્તી હોય, માંડલિક રાજા હોય, બીજા કોઈ પણ હોય—બધાને માટે સમાનરૂપે જ છે. તેમાં કોઈ પણ જાતિવિશેષ અગર વર્ણ વિશેષનો ભેદ રાખવામાં આવેલ નથી. ભગવાનનો ઉપદેશ પક્ષપાતથી રહિત હોય

एवं यथा तुच्छाय कथ्यते तथा पुण्याय कथ्यते । मेघो यथा स्थले जले च सम-  
भावेन वर्षति तथैवोपदेष्टाऽपि निरपेक्षमुच्चावधेभ्यः सर्वेभ्योऽनुग्रहबुद्ध्या समा-  
नमेवोपदिशति । अत्रायं विवेकः—उपदेशको हि द्रव्यक्षेत्रकालभावमनुसृत्य ‘यथा-  
ऽयं नृपादिरभिगृहीतमिथ्यादृष्टिरनभिगृहीतमिथ्यादृष्टिर्वेत्यादि पूर्वमवधार्योप-  
विहीन होता है । जिस प्रकार मेघकी धारा जलमें और स्थलमें समान-  
रूपसे वरसती है, उसे यह पक्षपात नहीं होता कि मुझे यहां वरसना  
चाहिये अथवा यहां नहीं वरसना चाहिये, इस प्रकारकी निरपेक्ष वृत्तिसे  
ही वह एकरूपसे मेघधारा वरसती है । इसी प्रकार भगवानके उपदेशमें  
भी भेदभावकी वृत्ति नहीं होती कि ‘यह पुण्यात्मा है अतः इसके लिये  
मेरा यह उपदेश है, और यह पापी है इसके लिये मेरा यह उपदेश  
नहीं है ’ । पुण्यात्मासे लगाकर पापात्मा तक, और धनीसे लगा कर  
काष्ठहार-लकड़हारे तक, तथा राजासे लगा कर रंक तक सबके लिये  
प्रभुका उपदेश एक रससे सना हुआ होता है फिर भी उपदेशकका  
कर्त्तव्य है कि वह उस उपदेशको द्रव्य क्षेत्र काल और भावके अनुसार  
श्रोताओं तक पहुंचावे । यह उपदेशककी ही कुशलता है । अन्यथा वह  
उस उपदेशसे अपने स्वयंकी हानि करनेवाला हो जाता है । जैसे राज-  
सभामें बैठ कर धर्मोपदेश देनेवाला उपदेष्टा पहिले इस बानका अपने  
मनमें निर्णय कर लेवे कि यह राजा अभिगृहीतमिथ्यादृष्टि है या अन-  
भिगृहीत मिथ्यादृष्टि है ? फिर अपने उपदेशका प्रवाह चलावे । बिना

છે. જેવી રીતે મેઘની ધારા જળમાં અને સ્થળમાં સમાન રૂપથી વરસે છે તેને  
એવો પક્ષપાત થતો નથી કે મારે આંહી જ વરસવું અને ત્યાં વરસવું નહિ. એવા  
પ્રકારની નિરપેક્ષ વૃત્તિથી તે એકરૂપથી મેઘધારા વરસે છે. તેવા પ્રકારે ભગવાનના  
ઉપદેશમાં પણ ભેદભાવની વૃત્તિ હોતી નથી કે ‘ આ પુણ્યાત્મા છે મારે તેના મારે  
મારો આ ઉપદેશ છે, અને આ પાપી છે મારે તેના મારે મારો આ ઉપદેશ નથી.’  
પુણ્યાત્માથી લઈને પાપાત્મા સુધી અને ધનવાનથી લઈને કઢીયારા સુધી, રાજાથી  
રંક સુધી દરેકને મારે પ્રભુનો ઉપદેશ એક રસથી ચરણો જ હોય છે. તો પણ  
ઉપદેશકનું કર્તવ્ય છે કે તે તે ઉપદેશને દ્રવ્ય, ક્ષેત્ર, કાળ, ભાવ, અનુસાર શ્રોતા-  
ઓને સંભળાવે, તે ઉપદેશકની જ કુશળતા છે. અન્યથા તે તેવા ઉપદેશથી પોતાની  
જ હાનિ કરવાવાળા બની જાય છે. જેવી રીતે રાજસભામાં યોગીને ધર્મોપદેશ  
દેનાર ઉપદેશક પહેલાં એ વાતનો પોતાના મનમાં નિર્ણય કરી લે કે આ રાજા  
અભિગૃહીતમિથ્યાદૃષ્ટિ છે અથવા અનભિગૃહીતમિથ્યાદૃષ્ટિ છે ? પછી પોતાના

દિશેત્, અન્યથોપદેશે વહ્વપાયસમ્ભવાત્, તદેવાહ—અપિ ચેત્યાદિ, અનાદ્રિયમાણઃ= અવ્રમન્યમાનો ભૂપાદિઃ, ઉપદેશકવિહિતનિન્દઃ સન્ હન્યાદપિ=સદુપદેશકં નાશયેદપિ, ‘અપિ’ સમ્ભાવને, ‘ચ’—શબ્દાદન્યદપિ દણ્ડ-કશાતાહનાદિકમપિ કુર્યાત્,

“દશસૂનાસમશ્ચક્રી, દશચક્રિસમો ધ્વજઃ ॥

દશધ્વજસમા વેશ્યા, દશવેશ્યાસમો નૃપઃ ॥ ૧ ॥ ”

ઇત્યાદિનિન્દામૂલિકામરુન્તુદાં વાચમભિદધતમુપદેષ્ટારં પ્રતિ રાજા—‘एष मुनिः सर्वधर्मवाहो राजधर्मानभिज्ञो नीतिधर्ममपि न जानाति, मोक्षधर्मस्तावद्दूराद-  
पेतः’ इत्येवं ब्रुवन् क्रुध्यमानो यष्टिमुष्टिभिस्ताडयन् ततो निःसारयन् तत्र रुन्धन्  
वस्त्रादિકं लुण्ठयन् चर्मादिच्छेदं कारयन् प्राणानप्यपहरेदतस्तादृशं नोपदिशे-  
दित्याशयः ॥ सू० ८ ॥

વિચારે જો ઉપદેશ દિયા જાયગા ઉસમેં અનેક કબ્ડોંકા ઉસે સામના કરના પડેગા । ઉપદેશમેં યદિ કિસી મી પ્રકારસે રાજાકી શાનકે વિરુદ્ધ કોઈ શબ્દ ઉસસે નિકલ જાતા હૈ, અથવા રાજધર્મકે પ્રતિપાદનમેં કોઈ એસી વાત આ જાતી હૈ જો ઉસકી પ્રતિષ્ઠાકે વિરુદ્ધ પડતી હો, તો ઇસસે રાજા અપના અપમાન સમજીકર ઉસ ઉપદેષ્ટાકા પ્રાણઘાત તક કર દેતા હૈ । યદિ એસા ન મી કરે તો વહ ઉસે દણ્ડવિધાન કરતા હૈ, કોડોંસે મી પિટવાતા હૈ । ઇસ શ્લોકમેં રાજવિરુદ્ધ વાત પ્રકટ કી ગઈ હૈ, જૈસે—

“દશસૂનાસમશ્ચક્રી, દશચક્રિસમો ધ્વજઃ ।

દશધ્વજસમા વેશ્યા, દશવેશ્યાસમો નૃપઃ ॥ ૧ ॥ ”

ઇસ પ્રકાર રાજનિન્દાસૂચક ઉપદેશ યદિ ઉપદેષ્ટા રાજસભામેં બેઠ કર કરે તો ઇસસે રાજાકે હૃદયમેં અપાર કબ્ડ હોગા । એસે ઉપદેશસે

ઉપદેશનો પ્રવાહ ચલાવે. વગર વિચારે જે ઉપદેશ આપવા માંડશે તો તેમાં તેને અનેક કબ્ડોનો સામનો કરવો પડશે. ઉપદેશમાં કદાચ કોઈ પણ પ્રકારથી રાજાની શાનની વિરુદ્ધ કોઈ શબ્દ તેનાથી નિકળી જાય, અથવા રાજધર્મ પ્રતિ-  
પાદનમાં કોઈ એવી વાત આવી જાય જે તેની પ્રતિષ્ઠાની વિરુદ્ધ પડે છે તો તેનાથી રાજા પોતાનું અપમાન સમજી તેવા ઉપદેશકનો પ્રાણઘાત પણ કરી નાંખે છે. કદાચ એવું ન પણ કરે તો તેને ઢાંડ કરે છે, કોરડાથી માર મારે છે. આ શ્લોકમાં રાજવિરુદ્ધ વાત પ્રગટ કરવામાં આવી છે. જેમ—

‘દશસૂનાસમશ્ચક્રી, દશચક્રિસમો ધ્વજઃ ।

દશધ્વજસમા વેશ્યા, દશવેશ્યાસમો નૃપઃ ॥ ૧ ॥ ”

આ પ્રકાર રાજનિન્દાસૂચક ઉપદેશ કદાચ ઉપદેશક રાજસભામાં બેસીને કરે તેથી રાજાના હૃદયમાં અપાર કબ્ડ થશે. તેવા ઉપદેશથી મુનિ રાજાના ક્રોધનો

શ્રોતારં પરીક્ષ્યોપદેષ્ટા હિસાદિના નોપલિપ્તો ભવતીતિ દર્શયતિ—‘એત્થં’  
 इत्यादि ।

મૂલમ—એત્થં પિ જાણ સેયંતિ નત્થિ, કેયં પુરિસેકં ચ નણ,  
 एस वीरे पसंसिए जे वद्धे परिमोयए, उड्डुं अहं तिरियं दिसासु, से  
 सबओ सबवपरिन्नाचारी, न लिप्पइ छणपएण वीरे, से मेहावी  
 जे अणुग्घायणखेयन्ने, जे य वंधपमुखमन्नेसी कुसले पुण नो  
 वद्धे नो मुक्के ॥ सू० ९ ॥

મુનિ રાજાકા કોપભાજન હો જાયગા । રાજા યહ સમજા લેગા કિ યહ  
 मुनि सर्वधर्मसे बाह्य है, राजधर्म क्या है? इसे भी यह नहीं  
 जानता है । अरे ! जब यह नीतिधर्म तक नहीं जानता है तो मोक्षधर्म  
 की बात ही क्या कहनी ? यह विलकुल जड़-अवुध है । ऐसे व्यक्तियों के  
 अस्तित्वकी क्या आवश्यकता है ? इस प्रकार राजा द्वारा उपेक्षित बन यण्टि-  
 मुण्टि आदिजन्य अनेक कष्टोंको भोगता हुआ वह मुनि वहांसे निकाल  
 दिया जाता है; अथवा कारागारमें बंद कर दिया जाता है । उसके वस्त्रादिक  
 भी छीन लिये जाते हैं । शरीरका छेदन कर उसके प्राण तक भी ले  
 लिये जाते हैं । इसलिये उपदेष्टाका यह सर्वप्रथम कर्त्तव्य है कि वह  
 द्रव्य क्षेत्र काल और भावका अच्छी तरह विचार कर अपने उपदेशका  
 प्रवाह बहावे । ऐसा उपदेश न करे कि जिससे स्वयंको अनेक कष्टोंका  
 या प्राणोंके विनाशका सामना करना पड़े ॥ सू० ८ ॥

ભોગ બનશે. રાજા એવું સમજી લેશે કે આ મુનિ સર્વ ધર્મથી બાહ્ય છે,  
 राजधर्म शुं છે? તે પણ આ બાણુતો નથી. અરે ! ત્યારે આ નીતિધર્મ મુધી  
 પણ બાણુતો નથી તો મોક્ષધર્મની વાત જ શું કરવી ? આ બિલકુલ જડ-  
 અવુધ છે, આવી વ્યક્તિઓના અસ્તિત્વની શું આવશ્યકતા છે ? આવા પ્રકારે  
 રાજાદ્વારા ઉપેક્ષિત બની યણ્ટિ-મુણ્ટિ આદિ જન્ય અનેક કષ્ટોને ભોગવતાં તે  
 મુનિને ત્યાંથી હાંકી કાઢે છે, અગર કારાગારમાં મોકલી દેવામાં આવે છે. તેના  
 વસ્ત્રો પણ આંચકી લેવામાં આવે છે. તેના શરીરનું છેદન કરી તેના પ્રાણ પણ  
 લઈ લેવામાં આવે છે. માટે જ ઉપદેષ્ટાનું એ સર્વપ્રથમ કર્તવ્ય છે કે દ્રવ્ય ક્ષેત્ર  
 કાળ અને ભાવનો સારી રીતે વિચાર કરી પોતાના ઉપદેશનો પ્રવાહ ચલાવે  
 એવો ઉપદેશ ન આપે કે જેનાથી પોતાને અનેક કષ્ટોનો સામનો કરવો પડે  
 અને પ્રાણ પણ શુભાવે ॥ સૂ. ૮ ॥



હાયા —અત્રાપિ જાનીદિ શ્રેય ઇતિ નાસ્તિ, કોડ્યં પુરુષઃ કંચ નતઃ, એષ વીરઃ પ્રશંસિતઃ, યો વદ્ધાન્ પરિમોચયતિ, ઝર્વમથસ્તિર્યક્ષુ દિશામુ, સ સર્વતઃ સર્વપરિ-  
જ્ઞાચારી, ન લિપ્યતે ક્ષણપદેન વીરઃ, સ મેધાવી યઃ અણોદ્ઘાતનચેદજ્ઞઃ, યથ્વ વન્ધ-  
પ્રમોક્ષાન્વેષી કુશલઃ પુનર્નો વદ્ધો નો મુક્તઃ ॥ મૂ. ૯ ॥

ટીકા—‘અત્રાપી’—ત્યાદિ, અત્ર=ધર્મકથાયાં શ્રેયઃ=કલ્યાણમ્ ઇતિ અપિ=નિશ્ચયેન નાસ્તિ=ન વિદ્યતે પ્રત્યુત કર્મવન્ધો ભવતીતિ જાનીદિ=બુદ્ધ્યસ્ય સ્મિતિ શેષઃ, ઇદૈવ તાવન્નાનિષ્ઠમપિ ચ પરત્રાપિ તત્પ્રસજ્યેતેત્યર્થઃ ।

જો ઉપદેષ્ટા શ્રોતાઓનો સમજાવતો દ્રવ્ય ક્ષેત્ર કાલ ઓર ભાવકે અનુસાર ઉપદેશ કરતા હૈં વહ કિસીકે મી કોષકા અથવા દણ્ડાદિકકા પાત્ર નહીં હોતા હૈં, વહ સમજાતે હૈં—“પૃથંપિ જાણ” ઇત્યાદિ ।

વક્તાકો વહ વૈકાન્તરૂપસે માનના ચાહિયે કિ ધર્મકથા કરનેમેં નિશ્ચયસે કલ્યાણ હી હોતા હૈં, પરન્તુ વિના દ્રવ્ય ક્ષેત્ર કાલ ભાવકા ધ્યાન રખે ધર્મકથા કરે તો વહ કર્મવન્ધકા કારણ મી હો જાતી હૈં । વીતરાગ-ભાવસે જહાં જય-પરાજય હોનેકા કુછ ઓ ચ્યાલ નહીં હૈં, સિર્ફ; યે પ્રાણી કૈસે સદ્ધર્મકા આશ્રય કરે? ઇસી સદ્ભિપ્રાયસે જો કથા કી જાતી હૈં, અથવા ઉપદેશ દિયા જાતા હૈં વહી ધર્મકથા હૈં । દ્રવ્ય ક્ષેત્રાદિકકા વિચાર કિયે વિના હી જો ઉપદેશ કિયા જાયગા ડસસે સંનવનઃ ઉપદેષ્ટા કો અનેક અનર્થોકા સામના મી કરના પડેગા, ઇસલિયે ધર્મકથાકે કરનેમેં શ્રેયકા ધ્યાન રખના ચાહિયે, ક્યોં કિ અપની પ્રકૃતિકે અનુસાર જીવોં કો

જે ઉપદેષ્ટા શ્રોતાઓને સમજાવે દ્રવ્ય, ક્ષેત્ર, કાળ અને ભાવ અનુસાર ઉપદેશ કરે છે તે કોઈના પણ કોઈના તેમજ દંડાદિકના પાત્ર થતા નથી. તે સમજાવે છે—“પૃથંપિ જાણ” ઇત્યાદિ.

વક્તાએ એકાન્ત રૂપથી માનવું જોઈએ કે ધર્મકથા કરવામાં નિશ્ચય કલ્યાણ જ થાય છે. પરંતુ દ્રવ્ય, ક્ષેત્ર, કાળ અને ભાવનો ખ્યાલ રાખ્યા વિના ધર્મકથા કરે તો ધર્મવન્ધનું કારણ પણ બની જાય છે.

વીતરાગ ભાવથી ત્યાં જય પરાજય હોવાનો જરા પણ ખ્યાલ નથી, ફક્ત આ પ્રાણી કેવી રીતે સદ્ધર્મનો આશ્રય કરે? એવા પ્રશ્નના સદ્ ભિપ્રાયથી જે કથા કરવામાં આવે છે, અથવા ઉપદેશ આપવામાં આવે છે તે જ ધર્મકથા છે. દ્રવ્યક્ષેત્રાદિકનો વિચાર કર્યા વિના જે ઉપદેશ આપવામાં આવે તો વિના સંદેહ ઉપદેષ્ટાને અનેક અનર્થોના સામનો જ કરવો પડે, માટે ધર્મકથા કરવામાં શ્રેયનું ધ્યાન રાખવું જોઈએ. કારણ કે પોતાની પ્રકૃતિ અનુસાર પોતાને જે જે



યદ્વા—અત્રાપિ યદ્યદ્વિધિજલ્પનં હિસકોડયં રાજેત્યાલોચ્ય પશુવધાદિરુપ હિં-  
સાધર્મમણ્ડનાત્મકં ચાર્વાકાદિમતસ્થાપનં ચ, તત્ર સર્વત્રાપિ શ્રેયો નાસ્તિ શાસ્ત્રપ્રતિ-  
પિદ્ધત્વાત્ । તર્હિ કથમુપદિશેદિત્યાહ—‘ કોડય ’—મિત્યાદિ, શ્રોતારં સમીક્ષ્યોપ-  
દેષ્ટા ચેતસિ ચિન્તયેત્, કોડયં પુરુષઃ કં ચાયં ધર્મે પરિપૃચ્છતિ, સોડયં કઃ કિં  
પુણ્યવાન્ ઉત તુચ્છઃ ? । યદ્વા—અયં વક્રો વા જડો વા વક્રજડો વા પુરુષઃ, કં  
ચ=દેવવિશેષં નતઃ=પ્રણતઃ કં દેવમુપાસ્તે વા ? ।

જો હિતાવહ-ઈષ્ટ હોતા હૈ વહ અન્ય જીવોંકે લિયે બી હિતાવહ હોગા,  
યહ નહીં માના જા સકતા । સમ્યગ્દષ્ટિ અથવા ભગ્યપુરુષકે લિયે જિસ  
ઉપદેશસે આત્મકલ્યાણ કરનેકી ઓર સતર્કતા જાગૃત હોતી હૈ ડસી  
ઉપદેશસે મિથ્યાદષ્ટિમેં સતર્કતા જાગૃત ન હોકર પ્રત્યુત કલુપતા જાગૃત  
હો સકતી હૈ ।

અથવા—“ યહ રાજા હિંસક હૈ ” એસા વિચાર કર પશુવધાદિરુપ  
હિંસાધર્મકા મણ્ડન, તથા ચાર્વાકાદિક નાસ્તિક મતકા સ્થાપનરુપ કથન  
કરના બી ઉપદેશકકે લિયે કલ્યાણપ્રદ માર્ગ નહીં હૈ । ડસસે અનેક  
અનર્થોંકી પરસ્પરા વઢતી હૈ । તથા ડસ પ્રકારકી માન્યતા બી શાસ્ત્રપ્રતિ-  
પિદ્ધ હૈ । અતઃ દૂસરોંકી માન્યતાનુસાર અપની માન્યતાકો દવાકર ડસકી  
હાં મેં હાં મિલા કર જો ઉપદેશક ઉપદેશ કરતા હૈ વહ કલ્યાણકારી  
માર્ગ નહીં હૈ । ડસ સમસ્ત કથનસે યે દો વાતેં ફલિતાર્થ હોતી હેં—એક નો  
અવસર દેખે વિના ધર્મકથા કરનેમેં એકાન્તરુપસે કલ્યાણ નહીં હૈ તથા  
દૂસરોંકી માન્યતાનુસાર અપની માન્યતા બનાકર ઉપદેશ દેના, યહ બી

હિતાવહ-ઈષ્ટ થાય છે તે તે અન્ય જીવોં માટે પણ હિતાવહ થશે તેમ માની શકાતું  
નથી. સમ્યગ્દષ્ટિ અથવા ભગ્ય પુરુષો માટે જે ઉપદેશથી આત્મકલ્યાણ કરવાની  
તરફ સતર્કતા જાગૃત થાય છે તે જ ઉપદેશથી મિથ્યાદષ્ટિમાં સતર્કતા જાગૃત  
થતી નથી જલ્દે કલુપતા જાગૃત થાય છે, અથવા “ રાજા હિંસક છે ” એવો  
વિચાર કરી પશુવધાદિરુપ હિંસાધર્મનું મંડન તથા ચાર્વાકાદિક નાસ્તિકમતનું  
સ્થાપન રૂપ કથન કરવું તે પણ ઉપદેશક માટે કલ્યાણપ્રદ માર્ગ નથી તેનાથી  
અનેક અનર્થોની પરંપરા વધે છે. તથા આ પ્રકારની માન્યતા પણ શાસ્ત્રપ્રતિ-  
પિદ્ધ છે, માટે જીજ્ઞાસોની માન્યતાનુસાર પોતાની માન્યતાઓને ઢળાવીને તેની  
હા માં હા મેળવી જે ઉપદેશક ઉપદેશ કરે છે તે કલ્યાણકારી માર્ગ નથી.  
આ સમસ્ત કથનથી એ જે વાતો સિદ્ધ થાય છે કે—એક તો અવસર દેખ્યા  
વિના ધર્મકથા કરવામાં એકાન્તરૂપથી કલ્યાણ નથી તથા, જીજ્ઞાસોની માન્યતા-  
નુસાર પોતાની માન્યતા બનાવીને ઉપદેશ આપવો એ પણ કલ્યાણકારી માર્ગ

યદ્વા-કં=કતરં ધર્મ=સાદ્ધ્યં વૌદ્ધમન્યં વા નતઃ=પ્રતિપન્નઃ, ઉપલક્ષણાત્, કિમયં મિથ્યાદૃષ્ટિસ્ત સમ્યગ્દૃષ્ટિઃ કેન વાઽઽશ્યેનાહં પૃષ્ટઃ?, ઇત્યાદિકમપિ સમાલોચ્ય ધર્મમુપદિશેદિત્યર્થઃ, ચશબ્દાદેશકાલાદીનાં સમાલોચના કર્તવ્યા । યથૈવં વિચાર્યોપદિશતિ, એષઃ=ઉપદેષ્ટા વાદિમાનમર્દનપૂર્વકપ્રવચનપરિમળ્લન-સમર્થઃ, પ્રશંસિતઃ=ગણધરાદિભિઃ શ્લાઘિતઃ, યો વદ્ધાન્=અષ્ટવિધપાશનિગડિતાન્

કલ્યાણપ્રદ માર્ગ નહીં છે । યદિ એસા છે તો ઉપદેશ કેસા હોના ચાહિયે ? ઇસકે લિયે સૂત્રકાર કહતે હૈં કિ સર્વપ્રથમ ઉપદેષ્ટા શ્રોતાઓંકો ભલી પ્રકાર દેખ કર ચિત્તમેં યહ વિચાર કરે કિ જો યહ મુઝસે ધર્મકો પૂછતા હૈ, વહ પુણ્યાત્મા હૈ યા તુચ્છાત્મા હૈ? અથવા વક્ત્ર હૈ યા જડ હૈ? અથવા વક્ત્ર-જડ દોનોં સ્વભાવવાલા હૈ? કિસ દેવકા ઉપાસક હૈ? કિસ મનકા અનુયાયી હૈ—સાંખ્યમતકા યા વૌદ્ધધર્મકા? । ઉપલક્ષણસે યહ મિથ્યાદૃષ્ટિ હૈ અથવા સમ્યગ્દૃષ્ટિ હૈ? યહ ભી જાન લેના ચાહિયે । યહ જો મુઝસે ધર્મવિષયક પ્રશ્ન પૂછતા હૈ સો કિસ અભિપ્રાયસે પૂછતા હૈ? ઇત્યાદિ સમસ્ત વાતોંકા વિચાર કર ઉપદેશકકો ધર્મકા ઉપદેશ દેના ચાહિયે । સાથમેં દેશકાલાદિકકા ભી વિચાર કરના આવશ્યક હૈ । જો ઉપદેશક ઇસ પ્રકારકી સમસ્ત વાતોંકા વિચાર કર ઉપદેશ કરતા હૈ વહ વાદિયોંકે માનકા મર્દન કરતા હુઆ અપને સિદ્ધાન્તકી સ્થાપના કરનેમેં સમર્થ હોતા હૈ । ઇસ પ્રકાર ગણધરાદિકોંસે પ્રશંસિત વહ ઉપદેશક આઠ પ્રકારકે કર્મરૂપી પાશસે જકડે હુએ પ્રાણિયોંકો અપને ધર્મોપદેશસે

નથી. હવે આવું છે તો ઉપદેશ દેવો હોવો જોઈએ? તેને માટે સૂત્રકાર કહે છે કે—સર્વ પ્રથમ ઉપદેષ્ટા શ્રોતાઓને ભલી પ્રકાર દેખીને ચિત્તમાં એ વિચાર કરે કે જે આ મને ધર્મ વિષે પૂછે છે તે પુણ્યાત્મા છે યા તુચ્છાત્મા છે? અથવા વક્ત્ર છે યા જડ છે? અગર વક્ત્ર અને જડ બન્ને સ્વભાવવાળા છે? કયા દેવના ઉપાસક છે? કયા મતના અનુયાયી છે—સાંખ્યમતના યા વૌદ્ધધર્મના? ઉપલક્ષણથી મિથ્યાદૃષ્ટિ છે યા સમ્યગ્દૃષ્ટિ? એ પણ જાણી લેવું જોઈએ આ જે મને ધર્મવિષયક પ્રશ્ન પૂછે છે તે કયા અભિપ્રાયથી પૂછે છે? ઇત્યાદિ સર્વ વાતોનો વિચાર કરી ઉપદેશકેએ ધર્મનો ઉપદેશ દેવો જોઈએ. સાથમાં દેશ-કાળાદિકનો પણ વિચાર કરવો આવશ્યક છે. જે ઉપદેશક આ પ્રકારની સમસ્ત વાતોનો વિચાર કરી ઉપદેશ આપે છે તે વાદિઓના માનનું મર્દન કરીને પોતાના સિદ્ધાંતની સ્થાપના કરવામાં સમર્થ થાય છે. આ પ્રકારે ગણધરાદિકોથી પ્રશંસિત તે ઉપદેશક આઠ પ્રકારના કર્મરૂપી પાશથી જકડાયેલાં પ્રાણીઓને પોતાના ધર્મ

પ્રાણિનો ધર્મોપદેશેન પરિમોચયતિ=સંસારકારાગારાન્નિષ્કાશયતિ સ એવ ઊર્ધ્વમધ-  
સ્તિર્યશ્ચુ લોકેષુ સર્વતઃ=સર્વાસુ દિશાસુ દશસુ દિક્ષિત્યર્થઃ, સર્વપરિજ્ઞાચારી-સર્વા-  
ચાસૌ પરિજ્ઞા સર્વપરિજ્ઞા તયા જ્ઞપ્રત્યાખ્યાનરૂપયા દ્વિવિધયાઽઽચરિતું શીલં યસ્ય  
સ સર્વપરિજ્ઞાચારી-સમસ્તહેયોપાદેયકુશલઃ। અત્રાયં વિવેકઃ-જ્ઞપરિજ્ઞા દ્વિવિધા-  
છાદ્યસ્થિકી કૈવલિકી ચ, તત્ર છાદ્યસ્થિકી મતિશ્રુત્યવધિમનઃપર્યવભેદેન ચતુર્વિધા,  
કૈવલિકી કેવલજ્ઞાનરૂપૈકૈવ, મૂલોત્તરગુણભેદેન પ્રત્યાખ્યાનપરિજ્ઞાઽપિ દ્વિવિધા,  
યદ્વા સર્વપરિજ્ઞાચારી યો વિધિકથનગુણાન્ જ્ઞપરિજ્ઞયા જ્ઞાત્વાઽવિધિકથનદોષાંશ્ચ  
સંસારરૂપી કારાગારસે મુક્ત કર દેતા હૈ। એસા ઉપદેશક હી ઉર્ધ્વદિશા  
અધોદિશા તથા ઇસ તિર્યગ્લોકમેં ઓર સમસ્ત દિશાઓમેં સર્વપરિજ્ઞા-  
ચારી હોતા હૈ। સમસ્તપરિજ્ઞાકા નામ સર્વપરિજ્ઞા હૈ। સર્વપરિજ્ઞાસે જિસ  
કા આચરણ કરનેકા સ્વભાવ હૈ ઉસકા નામ સર્વપરિજ્ઞાચારી હૈ। પરિજ્ઞા  
દો પ્રકારકી હૈ (૧) જ્ઞપરિજ્ઞા ઓર (૨) પ્રત્યાખ્યાનપરિજ્ઞા। ઇન દોનોં  
પ્રકારકી પરિજ્ઞાસે વહ યુક્ત હોતા હૈ, અર્થાત્ સમસ્ત હેય ઓર ઉપા-  
દેયમેં વહ કુશલ હો જાતા હૈ। ઇસકા ભાવ યહ હૈ કિ-જ્ઞપરિજ્ઞા દો  
પ્રકારકી હૈ-(૧) છદ્મસ્થ-સમ્બન્ધી ઓર (૨) કેવલજ્ઞાની-સમ્બન્ધી।  
છદ્મસ્થ-સમ્બન્ધી પરિજ્ઞા-મતિજ્ઞાન, શ્રુતજ્ઞાન, અવધિજ્ઞાન ઓર મનઃ  
પર્યવજ્ઞાનકે ભેદસે ચાર પ્રકારકી હૈ। કેવલજ્ઞાની-સમ્બન્ધી પરિજ્ઞા ઇક  
કેવલજ્ઞાનરૂપ હી હૈ, ઉસકે ભેદ નહીં હૈ। પ્રત્યાખ્યાનપરિજ્ઞા મી મૂલગુણ  
ઓર ઉત્તરગુણકે ભેદસે દો પ્રકારકી હૈ। જો ઉપદેશક વિધિકે કથનકે  
ગુણોં કો જ્ઞપરિજ્ઞાસે જાન કર અવિધિ કે કથનકે દોષોંકો પ્રત્યાખ્યાન-

ઉપદેશથી સંસારરૂપી કારાગારથી મુક્ત કરે છે. તેવા ઉપદેશક ન ઉર્ધ્વદિશા  
અધોદિશા તથા આ તિર્યગ્લોકમાં અને સમસ્ત દિશાઓમાં સર્વ પરિજ્ઞાચારી  
થાય છે. સમસ્તપરિજ્ઞાનું નામ સર્વપરિજ્ઞા છે. સર્વપરિજ્ઞાથી જેનું આચરણ કરવાનો  
સ્વભાવ છે તેનું નામ સર્વપરિજ્ઞાચારી છે. પરિજ્ઞા બે પ્રકારની છે. (૧) જ-પરિજ્ઞા  
અને (૨) પ્રત્યાખ્યાન-પરિજ્ઞા, આ બંને પ્રકારની પરિજ્ઞાથી તે યુક્ત બને છે.  
અર્થાત્ સમસ્ત હેય અને ઉપાદેયમાં તે કુશળ બની બાય છે. તેનો ભાવ એ છે  
કે-જ્ઞપરિજ્ઞા બે પ્રકારની છે. (૧) છદ્મસ્થસંબંધી અને (૨) કેવલજ્ઞાની સંબંધી  
છદ્મસ્થસંબંધી પરિજ્ઞા-મતિજ્ઞાન, શ્રુતજ્ઞાન, અવધિજ્ઞાન અને મનઃપર્યવજ્ઞાનના  
ભેદથી ચાર પ્રકારની છે. કેવલજ્ઞાનીસંબંધી પરિજ્ઞા એક કેવલજ્ઞાનરૂપ ન છે,  
તેના ભેદ નથી. પ્રત્યાખ્યાન-પરિજ્ઞા પણ મૂલગુણ અને ઉત્તરગુણના ભેદથી બે  
પ્રકારની છે. જે ઉપદેશક વિધિના કથનના ગુણોને જ-પરિજ્ઞાથી બતાવીને અને

પ્રત્યાખ્યાનપરિજ્ઞયા પરિહરતિ, અત એવ સર્વેતિ કથનં સંગતમ્ । એવંભૂતોઽસૌ કિમાસાદયતીત્યાહ-‘ ન લિપ્યત ’ ઇત્યાદિ, વીર:-પ્રત્યાત્મપ્રદેશધર્મપ્રભાવપ્રચાર-શક્તિસમ્પન્નઃ ક્ષણપદેન હિંસાસ્થાનેનાત્મસંયમવિરાધનારૂપેણ ન લિપ્યતે=નોપલિપ્તો ભવતિ આક્રોશનોદ્ધ્વંસનવધાદિનાઽઽત્મવિરાધકો જ્ઞાનાદિપશ્ચાચારાનાચરણેન

પરિજ્ઞાસે છોડ દેતા હૈ વહ ઉપદેશક ભી સર્વપરિજ્ઞાચારી કહલાતા હૈ । હિસ અપેક્ષાસે પરિજ્ઞાકે સાથ ‘ સર્વ ’ યહ વિશેષણ સંગત બૈઠતા હૈ । હિસ પ્રકારકા ઉપદેશક કિ જો આત્માકે પ્રત્યેક પ્રદેશમેં ધર્મકા પ્રચાર કરને કી શક્તિસે સમ્પન્ન હૈ વહ હિંસાકે સ્થાનભૂત અપની આત્માકી વિરાધના સે તથા સંયમકી વિરાધનાસે કમી ભી ઉપલિપ્ત નહીં હોતા હૈ । તાત્પર્ય યહ કિ વહ ઉપદેશક-આક્રોશન, ઉદ્ધ્વંસન ઔર વધાદિકસે અપની આત્માકી વિરાધના કરનેવાલા નહીં હોતા હૈ, ઔર ન જ્ઞાનાચાર દર્શનાચાર ઔર તપઆચાર આદિ પાંચ પ્રકારકે આચારોંકે અનાચરણસે સંયમકા હી વિરાધક હોતા હૈ, ક્યોં કિ વહ હિન દોનોં પ્રકારકી વિરાધના કે કહુક ફલકો મલી પ્રકાર જાનતા હૈ । ઉસે યહ પૂર્ણ રૂપસે વિશ્વાસ હૈ કિ જો હિન દોનોં પ્રકારકી યા કિસી ભી એકપ્રકારકી વિરાધનાકા કરનેવાલા હોતા હૈ ઉસે સંસારમેં હી ભ્રમણ કરના પડતા હૈ, કારણ કિ હિસ પ્રકારકી વિરાધનાસે જીવ અશુભ કર્મોંકા હી બંધ કરતા હૈ ઔર હિનકા ફલ ચતુર્ગતિરૂપ સંસારમેં ભ્રમણ કરના હૈ । હિસ સંસારકે

અવિધિના કથનના દોષોને પ્રત્યાખ્યાન-પરિજ્ઞાથી છોડી આપે છે તે ઉપદેશક પણ સર્વપરિજ્ઞાચારી કહેવાય છે. આ અપેક્ષાથી ‘ પરિજ્ઞા ’ની સાથે ‘ સર્વ ’ આ વિશેષણ સંગત બેસે છે. આ પ્રકારના ઉપદેશક જે આત્માના પ્રત્યેક પ્રદેશમાં ધર્મનો પ્રચાર કરવાની શક્તિથી સંપન્ન છે, તે હિંસાના સ્થાનભૂત પોતાના આત્માની વિરાધનાથી તથા સંયમની વિરાધનાથી કદિ પણ ઉપલિપ્ત થતા નથી. તાત્પર્ય એ છે કે તે ઉપદેશક-આક્રોશન ઉદ્ધ્વંસન અને વધાદિકથી પોતાના આત્માની વિરાધના કરવાવાળા થતા નથી, તેમજ જ્ઞાનાચાર, દર્શનાચાર અને તપઆચાર આદિ પાંચ પ્રકારના આચારોના અનાચરણથી સંયમના વિરાધક બનતા નથી, કારણ કે તે એ બંને પ્રકારની વિરાધનાના કટુ ફળને સારી રીતે જાણે છે. તેને પૂર્ણ રીતે વિશ્વાસ છે કે જે આ બંને પ્રકારની અગર કોઈ પણ એક પ્રકારની વિરાધનાના કરવાવાળા હોય છે, તેને સંસારમાં જ ભ્રમણ કરવું પડે છે. કારણ કે આ પ્રકારની વિરાધનાથી જીવ અશુભ કર્મોના જ બંધ કરે છે, અને તેનું ફળ ચતુર્ગતિરૂપ સંસારમાં ભ્રમણ થાય છે, ‘ આ સંસારના કારણભૂત કર્મોનો નાશ

સંયમવિરાધકો ન ભવતીત્યભિપ્રાયઃ । અન્યદપિ વીરકર્તવ્યમાહ—‘ સ મેધાવી ’-  
ત્યાદિ, સઃ=મુનિઃ મેધાવી=વિદિતાત્મસંયમવિરાધનકટુકફલો યઃ અણોદ્ધાતનચેદજ્ઞઃ-  
અણતિ=ગચ્છતિ યેન પ્રાણિગણશ્ચતુર્ગતિકસંસારં તદ્ અણં=કર્મ, તસ્ય ઉત્=પ્રાવલ્યેન  
ઘાતનમ્=અપનયનમ્ અણોદ્ધાતનં, તસ્ય તત્ર વા ચેદજ્ઞઃ=નિપુણઃ, યથ વન્ધપ્રમો-  
ક્ષાન્વેપી-વન્ધસ્ય=પ્રકૃતિસ્થિત્યનુભાવપ્રદેશરૂપસ્ય પ્રમોક્ષઃ=પ્રકર્ષેણ મોક્ષસ્તદુપાયો  
વા રત્નત્રયરૂપસ્તમન્વેષ્ટું=ગવેષયિતું શીલં યસ્ય સ વન્ધપ્રમોક્ષાન્વેપી, યોઽણો-  
દ્ધાતનચેદજ્ઞો યથ વન્ધપ્રમોક્ષાન્વેપી સ એવ મેધાવી ભવતીતિ સમ્બન્ધઃ ।

કારણભૂત કર્મકો નાશ કરનેકે લિયે હી તો મૈને યહ મુનિવેષ ધારણ  
કિયા હૈ । ઇસી અભિપ્રાયકી પુષ્ટિ સૂત્રકાર—“ અણુગ્ધાયણચેયન્ને ”  
‘ અણોદ્ધાતનચેદજ્ઞઃ ’ ઇસ પદસે કી હૈ—“ અણતિ=ગચ્છતિ યેન પ્રાણિ-  
ગણશ્ચતુર્ગતિકસંસારે તદ્ અણં=કર્મ, તસ્ય ઉત્=પ્રાવલ્યેન ઘાતનમ્=  
અપનયનં, તસ્ય તત્ર વા ચેદજ્ઞઃ ” ઇતિ । અર્થાત્-જિસકે દ્વારા પ્રાણિ-  
સમૂહ ચતુર્ગતિરૂપ ઇસ સંસારમેં ભ્રમણ કરતા હૈ વહ અણ-કર્મ હૈ,  
ઉસ કર્મકે વિનાશ કરનેમેં જો નિપુણ હૈ વહ અણોદ્ધાતનચેદજ્ઞ હૈ । જો  
બંધકે નાશ કરનેકા અથવા ઉસકે નાશ કરનેકે ઉપાયોકે અન્વેષણ કરને  
કા સ્વભાવવાલા હોતા હૈ વહ સંસારકે કારણભૂત કર્મકે વિનાશ કરનેમેં  
કુશલ હોતા હૈ ।

શાસ્ત્રમેં વન્ધકે ચાર ભેદ વતલાયે ગયે હૈ—(૧) પ્રકૃતિવન્ધ, (૨)  
સ્થિતિવન્ધ, (૩) અનુભાગવન્ધ, (૪) પ્રદેશવન્ધ । ઇનકા અત્યન્ત અભાવ  
હોના વહ વન્ધપ્રમોક્ષ હૈ । અથવા ઇનકે અત્યન્ત અભાવ હોનેમેં કારણભૂત

કરવા માટે જ મેં મુનિપણનો વેશ લીધો છે. ’ આ અભિપ્રાયની પુષ્ટિ સૂત્રકાર  
“ અણુગ્ધાયણચેયન્ને ” અણોદ્ધાતનચેદજ્ઞઃ એ પદથી કરેલ છે. “ અણતિ-  
ગચ્છતિ યેન પ્રાણિગણશ્ચતુર્ગતિકસંસારે તદ્ અણં=કર્મ, તસ્ય ઉત્=પ્રાવલ્યેન  
ઘાતનમ્=અપનયનં, તસ્ય તત્ર વા ચેદજ્ઞઃ, ઇતિ. અર્થાત્ જેના દ્વારા પ્રાણીસમૂહ  
ચતુર્ગતિરૂપ આ સંસારમાં ભ્રમણ કરે તે અણ=કર્મ છે. તે કર્મનો વિનાશ કરવામાં  
જે નિપુણ છે તે અણોદ્ધાતનચેદજ્ઞ છે. જે બંધનો નાશ કરવાના, અથવા તેનો  
નાશ કરવાના ઉપાયોનું અન્વેષણ કરવાના સ્વભાવવાળા હોય છે તે સંસારના  
કારણભૂત કર્મનો વિનાશ કરવામાં કુશલ હોય છે.

શાસ્ત્રમાં બંધના ચાર ભેદ બતાવેલ છે (૧) પ્રકૃતિબંધ (૨) સ્થિતિબંધ  
(૩) અનુભાગબંધ, અને (૪) પ્રદેશબંધ તેનો અત્યંત અભાવ થયો તે બંધપ્રમોક્ષ  
છે અથવા તેના અત્યંત અભાવ હોવાના કારણભૂત જે રત્નત્રયાદિક ઉપાય છે

નનુ ય એવ અણોદ્ધાતનચ્છેદજ્ઞઃ સ એવ વન્ધપ્રમોક્ષાન્વેષી ચેતિ પૌનરુક્ત્યં સમાપતિતમિતિ ચેન્ન—‘અણોદ્ધાતનચ્છેદજ્ઞઃ’ इत्यनेन मूलोत्तरप्रकृतिभेदविशिष्टस्य योगनिमित्तेन प्राप्तस्य कषायस्थितिमतः कर्मणो बद्धस्पृष्टनिधत्तनिकाचितरूपवध्यमानावस्थायामास्तद्दूरीकरणोपायस्य च सम्यग्ज्ञातेत्यस्यार्थस्याभिहितत्वाद् वन्धप्रमोक्षेत्यादिना च केवलं तद्दूरीकरणानुष्ठानस्याभिहितत्वात् ।

જો રત્નત્રયાદિક ઉપાય હૈં ઉન્હેં મી ‘વન્ધપ્રમોક્ષ’ શબ્દસે ગ્રહણ કર લિયા ગયા હૈં । વન્ધપ્રમોક્ષકા અથવા ઇન્કે ઉપાયોંકા અન્વેષણ કરનેકા જિસકા સ્વભાવ હૈં વહ વન્ધપ્રમોક્ષાન્વેષી હૈં । જો અણોદ્ધાતનકુશલ ઔર વન્ધપ્રમોક્ષાન્વેષી હૈં વહી મેધાવી હોતા હૈં ।

શઙ્કા—જો અણોદ્ધાતનમેં કુશલ હૈં વહી તો વન્ધપ્રમોક્ષાન્વેષી હૈં । ફિર ઇસ પ્રકારકે કથનસે તો દોનોં શબ્દોંકે અર્થોંમેં પરસ્પરમેં સમાનતા આજાનેસે પુનરુક્તિદોષકા પ્રસન્ન આતા હૈં ।

ઉત્તર—યહ વાત નહીં હૈં—“અણોદ્ધાતનચ્છેદજ્ઞ” ઇસ શબ્દસે “મૂલ ઔર ઉત્તરભેદ વિશિષ્ટ યોગકે નિમિત્તસે ગૃહીત ઔર કષાયસે સ્થિતિયુક્ત, એસે કર્મોંકી વદ્ધ, સ્પૃષ્ટ, નિધત્ત ઔર નિકાચિતરૂપ વધ્યમાન અવસ્થાઓંકા ઔર કર્મોંકો દૂર કરનેવાલે ઉપાયોંકા વહ સમ્યગ્જ્ઞાતા હૈં ” યહ અર્થ પ્રતિપાદિત કિયા ગયા હૈં । ‘વન્ધપ્રમોક્ષાન્વેષી’ ઇસ શબ્દ સે સિર્ફ ઊન્કો દૂર કરનેવાલે અનુષ્ઠાનકા પ્રતિપાદન કિયા ગયા હૈં ।

તેને પણ બંધપ્રમોક્ષ શબ્દથી બ્રહ્મણ કરવામાં આવેલ છે. બંધપ્રમોક્ષનું, અથવા તેના ઉપાયોનું અન્વેષણ કરવાનો જેનો સ્વભાવ છે તે બંધપ્રમોક્ષાન્વેષી છે. જે અણોદ્ધાતનકુશળ અને બંધપ્રમોક્ષાન્વેષી છે તે જ મેધાવી હોય છે.

શંકા—જે અણોદ્ધાતનમાં કુશળ છે તે જ બંધપ્રમોક્ષાન્વેષી છે, એ પ્રકારના કથનથી તો બન્ને શબ્દોના અર્થોમાં પરસ્પરમાં સમાનતા આવવાથી પુનરુક્તિ દોષનો પ્રસંગ આવે છે.

ઉત્તર—એ વાત નથી “અણોદ્ધાતનચ્છેદજ્ઞ” આ શબ્દથી “મૂલ અને ઉત્તરભેદવિશિષ્ટ યોગના નિમિત્તથી ગૃહીત અને કષાયથી સ્થિતિયુક્ત એવા કર્મોની બદ્ધ, સ્પૃષ્ટ, નિધત્ત અને નિકાચિતરૂપ વધ્યમાન અવસ્થાઓના, અને તેવા કર્મોને દૂર કરવાવાળાં ઉપાયોના તે સમ્યગ્જ્ઞાતા છે ” આ અર્થ પ્રતિપાદિત કરેલ છે. તથા ‘વન્ધપ્રમોક્ષાન્વેષી’ આ શબ્દથી ક્ષત તેને દૂર કરનાર અનુષ્ઠાનનું પ્રતિપાદન કરેલ છે.



નનુ યથૈતાદૃશઃ સ કેવલી છદ્મસ્થો વા ? પ્રોચ્યતે-કેવલિનોઽણોદ્ઘાતેત્યાદિ-વિશેષણાસમ્ભવાચ્છદ્મસ્થસ્ય ગ્રહણમ્ । કેવલિનસ્તર્હિ કિં સ્યાદિતિ દર્શયતિ-‘કુશલ’ ઇત્યાદિ । કુશલઃ=કેવલી તીર્થઢ્ઢરઃ સામાન્યકેવલી વા પુનઃ ન વદ્ધઃ વ્રાતિકર્મણો નાશાત્, ન મુક્તઃ=ભવોપગ્રાહિકર્મસત્ત્વાત્ । વાહ્યાભ્યન્તરસાવધાનુષ્ઠાનૈશ્વ મુક્તઃ, ભવોપગ્રાહિકર્મણઃ સત્ત્વેન વદ્ધોઽપિ ।

યદ્વા છદ્મસ્થ એવ કુશલપદેનોચ્યતે, તેન કુશલઃ=પ્રાપ્તરત્નત્રયઃ, ન વદ્ધઃ=અનન્તાનુવન્ધ્યાદિકપાયાનલોપશમાદિસત્ત્વાત્, ન મુક્તઃ=ઇદાનીમપિ તત્કર્મસત્ત્વાત્, અજ્ઞાનાવિરતિમિથ્યાત્વૈશ્વ મુક્તઃ, પ્રશસ્તૈરતુ ચારિત્રતપોવિનયાદિમિર્વાં ન મુક્તઃ ॥મૂ.૦૧॥

શઢ્ઢા—જો એસા હોતા હૈ વહ કૌન હૈ? કેવલી હૈ યા છદ્મસ્થ ?

ઉત્તર—કેવલીમેં “ અણોદ્ઘાતનચેદજ્ઞ ” ઇત્યાદિ વિશેષણ સંભવિત નહીં હોતે હૈં, ઇન દોનોં વિશેષણોંસે તો કેવલ છદ્મસ્થકા હી ગ્રહણ હુઆ હૈ । હાં “ કુશલ ” ઇસ શબ્દસે કેવલીકા ગ્રહણ હોતા હૈ, વે યાહે સામાન્યકેવલી હોં યાહે તીર્થઢ્ઢર હોં । વે ન તો વદ્ધ હૈં; કયોં કિ ડનકે ઘાતી કર્મોંકા અભાવ હો ચુકા હૈ, ઓર ન મુક્ત હી હૈં, કારણ કિ ભવોપગ્રાહી કર્મોંકા ડનકે સદ્ભાવ હૈ । યદ્યપિ વાહ્ય ઓર આભ્યન્તર સાવધ કર્મોંસે વે મુક્ત-રહિત-હૈં તો ઓ ભવોપગ્રાહી કર્મોંકો સત્તા હોનેસે વે વદ્ધ ઓ હૈં ।

અથવા-‘કુશલ’ ઇસ પદસે છદ્મસ્થકા હી ગ્રહણ હુઆ હૈ । જિસને રત્નત્રયકો પ્રાપ્ત કર લિયા હૈ વહ કુશલ હૈ । વહ વદ્ધ નહીં હૈ, કયોં કિ ઇસકે અનન્તાનુવન્ધી આદિ કપાયરૂપ અગ્નિકા ઉપશમાદિ હો ચુકા હૈ ।

શંકા—જે એવા છે તે કોણ છે ? કેવળી છે કે છદ્મસ્થ ?

ઉત્તર—કેવળીમાં “ અણોદ્ઘાતનચેદજ્ઞઃ ” ઇત્યાદિ વિશેષણો સંભવિત થતા નથી. આ અન્ને વિશેષણોથી તો કેવળ છદ્મસ્થનું જ ગ્રહણ થયેલ છે. હા “કુશલ” આ શબ્દથી કેવળીનું ગ્રહણ થાય છે તે ભલે સામાન્ય કેવળી હોય કે તીર્થઢ્ઢર હોય. તેઓ બદ્ધ નથી, કારણ કે તેઓને ઘાતી કર્મોના અભાવ થયેલ છે, અને મુક્ત પણ નથી. કારણ કે ભવોપગ્રાહી કર્મોના તેને સદ્ભાવ છે. જે કે બાહ્ય અને આભ્યંતર આવધ કર્મોથી તેઓ મુક્ત-રહિત છે તો પણ ભવોપગ્રાહી કર્મોની સત્તા હોવાથી તેઓ બદ્ધ પણ છે.

અથવા “કુશલ” આ પદથી છદ્મસ્થનું જ ગ્રહણ થયેલ છે, જેણે રત્નત્રય પ્રાપ્ત કરેલ છે તે કુશલ છે. તેઓ બદ્ધ નથી, કારણ કે તેના અનન્તાનુવન્ધી આદિ કપાયરૂપ અગ્નિનું ઉપશમાદિ થઈ ચુકેલ છે. મુક્ત એટલા માટે નથી કે આ



યથૈતાદ્વગઃ કેવલી છદ્વસ્થો વા સ યદનુષ્ઠિતવાન્ યચ્ચાનુતિષ્ઠતિ વા તદ-  
ન્યેનાપિ સાધુનાડનુષ્ઠેયમિતિ દર્શયતિ—‘ સે જં ચ ’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્—સે જં ચ આરભે જં ચ નારભે , અણારહ્દં ચ ન  
આરભે છળં છળં પરિણાય લોકસન્નં ચ સઠ્ઠવસો ॥ સૂ. ૧૦ ॥

છાયા—સ યચ્ચારમ્ભતે યચ્ચ નારમ્ભતે, અનારબ્ધં ચ નારમ્ભતે ક્ષણં ક્ષણં  
પરિજ્ઞાય લોકસન્નં ચ સર્વગઃ ॥ સૂ. ૧૦ ॥

ટીકા—‘ સ ય ’-દિત્યાદિ, સઃ=તીર્થઙ્કરઃ સામાન્યકેવલી પ્રાપ્તરત્નત્રયો મુનિર્વા  
જ્ઞાનાવરણીયાદિકર્માપનયનાય યત્કર્મ તપઃસંયમવિનયાદિકં ચ આરમ્ભતે=વિદધાતિ  
વટતે=પરાક્રમતે, યતતે વા, યચ્ચ તદ્વિપરીતં સંસારહેતું મિથ્યાત્વાધિરત્યાદિકં

મુક્ત હસલિયે નહીં હૈ કિ હસ સમય મ્હી ઉસકે ઉસ ઉસ કર્મકા સદ્ભાવ  
હૈ । અજ્ઞાન, અધિરતિ ઓર મિથ્યાત્વ, હનસે વહ મુક્ત-રહિત હૈ; પરન્તુ  
પ્રશસ્ત ચારિત્ર, તપ ઓર વિનયાદિસે મુક્ત-રહિત નહીં હૈ ॥ મૂ. ૧ ॥

હસ પ્રકારકે ચાહે કેવલી હોં યા છદ્વસ્થ, પરન્તુ હન્હોંને જિસકા  
આચરણ કિયા ઓર જો આચરણ કર રહે હૈં વહ અન્ય સાધુકો મ્હી  
કરના ચાહિયે, હસ વાતકો કહતે હૈં—‘ સે જં ચ ’ ઇત્યાદિ ।

તીર્થઙ્કર સામાન્યકેવલી અથવા રત્નત્રયકે ધારી મુનિ, યે “ સે ”  
હસ શબ્દસે ગ્રહણ કિયે ગયે હૈં । હન્હોંને જ્ઞાનાવરણીયાદિક આઠ કર્મોંકે  
નાશ કરનેકે લિયે જિન તપ સંયમ ઓર વિનયાદિકોંકા અનુષ્ઠાન-  
પાલન કિયા હૈ, હનકે પાલન કરનેમ્હં જો પરાક્રમ દિશ્વલાયા હૈ, તથા  
હનકી આરાધના કરનેમ્હં જો પ્રયત્ન કિયે હૈં, ઓર હનસે વિપરીત સંસાર

સમયે પણ તેઓને તે તે કર્મનો સદ્ભાવ છે. અજ્ઞાન, અધિરતિ અને મિથ્યાત્વ,  
તેનાથી તે મુક્ત-રહિત છે પરંતુ પ્રશસ્ત ચારિત્ર, તપ અને વિનયાદિથી મુક્ત-  
રહિત નથી. ॥ સૂ. ૬ ॥

આવા પ્રકારના ભલે કેવળી હોય કે છદ્વસ્થ પરંતુ તેઓએ જેનું આચ-  
રણ કર્યું અને જે આચરણ કરે છે તે બીજા સાધુઓએ પણ કરવું જોઈએ.  
આ વાત કહે છે—‘ સે જં ચ ’ ઇત્યાદિ.

તીર્થઙ્કર, સામાન્યકેવળી અથવા રત્નત્રયધારી મુનિ, એ “ સે ” શબ્દથી  
અડધું કરવામાં આવેલ છે. તેઓએ જ્ઞાનાવરણીયાદિક આઠ કર્મોંનો નાશ કરવા  
માટે જે તપ સંયમ અને વિનયાદિનું અનુષ્ઠાન-પાલન કરેલ છે, તેનું  
પાલન કરવામાં જે પરાક્રમ બતાવેલ છે, તથા તેની આરાધના કરવામાં જે પ્રયત્ન  
કરેલ છે, અને તેનાથી વિપરીત સંસારના કારણભૂત મિથ્યાત્વ તેમજ અધિરતિ

प्राणातिपातादिरूपाष्टादशपापस्थानानि च नारभते=न करोति न घटते न यतते न पराक्रमते वा । तद्विपरीतमाचरतीत्यर्थोऽपि । संयतैः पञ्चमहाव्रतपालनं विधेयं, संसारकारणं मिथ्यात्वाविरत्यादिकं च नासेवनीयमित्यभिप्रायः । तदेवाह—‘अनारब्ध’-मित्यादि, अनारब्धं केवलिभिः प्राप्तस्नत्रयैश्छद्मस्थैर्वा अनारब्धम्=अनाचीर्णं च द्विपञ्चाशत्प्रकारं नारभेत=न सेवेत, च शब्दाद्यदारब्धं तत्कुर्यादित्यर्थोऽपि । अनाचरणीयमेवाह—‘क्षण’-मित्यादि, क्षणं क्षणं, क्षणनं क्षणः=हिंसनं, कार्यकारणयोरभेदाद् येन कर्मणा कारणभूतेन हिंसा कार्यरूपा समुत्पद्यते तत्कर्म क्षणः, तम्,

के कारणभूत मिथ्यात्व एवं अविरति आदि तथा प्राणातिपातादिरूप अठारह (१८) पापस्थानों का जिस प्रकारसे इन्होंने परित्याग किया है, उनके छोड़नेमें जो अपनी शक्ति प्रकट की है, और जिस प्रकारका प्रयत्न किया है, तथा इन अविरति आदिकोंसे विपरीत अपनी प्रवृत्ति बनाई है, संयतोंका कर्तव्य है कि वे भी पांच महाव्रतोंका इसी लगनके साथ पालन करें, और संसारके कारण-मिथ्यात्व अविरति आदि-का परित्याग करें, स्वप्नमें भी इनका सेवन न करें । केवलियोंने अथवा स्नत्रयको प्राप्त हुए छद्मस्थ मुनियोंने जिनका सेवन नहीं किया, अर्थात् (५२) प्रकारके जिन अनाचीर्णों-अनाचारों-का अनुष्ठान नहीं किया उनका संयति कभी भी सेवन न करे ।

सूत्रमें आये हुए “ च ” शब्दसे इस प्रकार अर्थ होता है कि जो उन्होंने पालन किया है वही वह पालन करे । उन्होंने क्या आचरण नहीं किया ? इसको प्रकट करते हैं—‘क्षणं क्षणं’ इत्यादि । ‘क्षण’ शब्दका अर्थ हिंसा है । कार्य और कारणमें अभेद सम्बन्धकी विवक्षासे कारणभूत

आदि तथा प्राणातिपातादिरूप अठार (१८) पापस्थानोंको वे प्रकारे तेले परित्याग करेले छे, ते छोड़वामां वे पोतानी शक्ति प्रगट करेले छे, अने वे प्रकारको प्रयत्न करेले छे, तथा आ अविरति आदिथी विपरीत पोतानी प्रवृत्ति बनावी छे. संयतानुं कर्तव्य छे के ते पणु पाप महाव्रतानुं तेवी लावनाथी पालन करे अने संसारनां कारण मिथ्यात्व अविरति आदिनो परित्याग करे. स्वप्नमां पणु तेनुं सेवन न करे केवलीओओ, अथवा स्नत्रयप्राप्त छद्मस्थ मुनीओओ तेनुं सेवन नथी कर्तुं अर्थात् भावन प्रकारना वे अनाचारानुं अनुष्ठान नथी कर्तुं तेनुं कोर पणु संयती सेवन न करे.

सूत्रमां आवेला “ च ” शब्दथी ओ प्रकारे अर्थ थाय छे के वे तेओओ पालन करेले छे ते न ते पालन करे. तेओओ शुं आचरण नथी कर्तुं ? ने प्रगट करे छे—‘क्षणं क्षणं’ इत्यादि. ‘क्षण’ शब्दको अर्थ हिंसा छे. कार्य अने कारणमां अभेदसम्बन्धनी विवक्षाथी कारणभूत कर्मकारां वे हिंसाइय अर्थ उन्पत्त थाय छे

તસ્ય વીપ્સાયાં ક્ષણં—ક્ષણં, હિંસાજનકં સકલં કર્મેત્યર્થઃ, પરિજ્ઞાય=જ્ઞપરિજ્ઞયા જ્ઞાત્વા પ્રત્યાખ્યાનપરિજ્ઞયા પરિહૃત્ય ચ । યદ્વા—ક્ષણઃ સંયમાચારાવસરઃ, તસ્ય વીપ્સાયાં ક્ષણઃ ક્ષણસ્તં પરિજ્ઞાય જ્ઞપરિજ્ઞયા વિદિત્વા, આસેવનપરિજ્ઞયા ચાઽસેવ્ય વિચરેત્ । અપિ ચ લોકસંજ્ઞાં ચ લોકસ્ય=અસંયતલોકસ્ય સંજ્ઞા=સંજ્ઞાનં શબ્દાદિવિષયાસજ્ઞજન્ય-સુખસ્પૃહા પરિગ્રહાદિસંજ્ઞાવા, તાં સર્વશઃ=સર્વપ્રકારેણ યોગત્રિકકરણત્રિકેણ પરિજ્ઞાય પરિહૃત્ય, યદ્વા—ચશબ્દાદાત્મૌપમ્યેન ક્ષણનં ન વિદધ્યાત્ “ જહ સમ ણ પિયં દુઃખં જાણિય એમેવ સંવજીવાણં ” इत्यादिवचनात् । સર્વથા પ્રાણાતિપાતાદૌ ન પ્રવર્તેત

જિસ કર્મકે દ્વારા હિંસારૂપ કાર્ય ઉત્પન્ન હોતા હૈ ઉસ કર્મકા નામ ક્ષણ હૈ । યદ્વા પર વીપ્સા મેં ‘ ક્ષણં ક્ષણં ’ યહ દ્વિશક્તિ હૈ । તાત્પર્ય ઇસકા યહ હૈ કિ હિંસાત્મક સકલકર્મોં કો સંયમી જ્ઞપરિજ્ઞાસે જાનકર ઔર પ્રત્યાખ્યાનપરિજ્ઞાસે ઇનકા પરિત્યાગ કર વિચરણ કરે ।

અથવા—સંયમકે આચરણ કરનેકે પ્રત્યેક અવસરકો મી સંયમી જ્ઞપરિજ્ઞાસે જાનકર ઔર આસેવનપરિજ્ઞાસે ઇસકા સેવન કરે ।

તથા લોકસંજ્ઞાકા સર્વ પ્રકારસે પરિત્યાગ કરે । અસંયત લોકોંકો શબ્દાદિક વિષયોંકે સમ્બન્ધસે ઉત્પન્ન સુખકી જો ચાહના હોતી હૈ ઉસકા નામ લોકસંજ્ઞા હૈ । અથવા પરિગ્રહાદિકસંજ્ઞાકા નામ મી લોકસંજ્ઞા હૈ । સંયમી ઇસ લોકસંજ્ઞાકા સર્વ પ્રકારસે અર્થાત્ ત્રીન કરણ ત્રીન યોગસે ત્યાગ કરે ।

“ લોકસંજ્ઞાં ચ સર્વશઃ ” યદ્વા પર જો “ ચ ” આયા હૈ ઉસસે યહ વાત પ્રકટ કી ગઈ હૈ કિ સંયમી સમસ્ત જીવોંકો અપને સમાન સમજી કર કમી મી હિંસાદિક કાર્યોંમે પ્રવૃત્તિ ન કરે, ક્યોંકિ આગમકા

તે કર્મનું નામ ક્ષણુ છે. અહીં વીપ્સાથી ‘ ક્ષણ ક્ષણ ’ આ દ્વિશક્તિ છે એટલે હિંસાજનક સકલ કર્મોંને સંયમી જ્ઞપરિજ્ઞાથી જાણીને અને પ્રત્યાખ્યાનપરિજ્ઞાથી તેનો પરિત્યાગ કરી વિચરણ કરે.

અથવા સંયમનું આચરણ કરવાના પ્રત્યેક અવસરને પણ સંયમી જ્ઞપરિજ્ઞાથી જાણી અને આસેવનપરિજ્ઞાથી તેનું સેવન કરે.

તથા લોકસંજ્ઞાનો સર્વ પ્રકારથી પરિત્યાગ કરે, અસંયત લોકોંને શબ્દાદિક વિષયોના સંબંધથી ઉત્પન્ન સુખની જે આહના થાય છે તેનું નામ લોકસંજ્ઞા છે. અથવા પરિગ્રહાદિકસંજ્ઞાનું નામ પણ લોકસંજ્ઞા છે, સંયમી આ લોકસંજ્ઞાનો સર્વ પ્રકારથી અર્થાત્ ત્રણ કરણ ત્રણ યોગથી ત્યાગ કરે.

“ લોકસંજ્ઞાં ચ સર્વશઃ ” આ ઠેકાણે જે ‘ ચ ’ શબ્દ આવેલ છે તેનાથી એ વાત પ્રગટ કરી આપેલ છે કે સંયમી સમસ્ત જીવોંને પોતાના સમાન સમજી કોઈ વખત પણ હિંસાદિક કાર્યોંમાં પ્રવૃત્તિ ન કરે, કારણ કે આગમનું વાક્ય

સંયમાચરણાદૌ ચ પ્રવર્તેતેતિ સૂત્રાશયઃ ॥ સૂ૦ ૧૦ ॥

યથા પૂર્વોક્તસકલગુણવિશિષ્ટસ્તસ્ય કિં ભવતીત્યાહ—‘ઉદ્દેસો’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્—ઉદ્દેશો પાસગસ્સ નત્થિ, વાલે પુણ નિહે કામસમણુન્ને અસ-  
મિયદુક્ખે દુક્ખી દુક્ખાણમેવ આવહં અણુપરિયદ્દહિત્તિવેમિ । સૂ૦ ૧૧ ।

॥ ૩૫ વીયજ્ઞયણસ્સ છટ્ઠો ઉદ્દેસો સમત્તો ॥ ૨-૬ ॥

છાયા—ઉદ્દેશઃ પશ્યકસ્ય નાસ્તિ, વાલઃ પુનઃ સ્નિહઃ કામસમણુજ્ઞોડશમિત-  
દુઃખો દુઃખી દુઃખાનામેવાવર્તમનુવર્તતે, ઇતિ વ્રવીમિ ॥ સૂ૦ ૧૧ ॥

॥ ઇતિ દ્વિતીયાધ્યયનસ્ય પષ્ઠ ઉદ્દેશઃ સમાપ્તઃ ॥ ૨-૬ ॥

ટીકા—‘ઉદ્દેશ’ ઇત્યાદિ । સૂત્રમિદં તૃતીયોદ્દેશે વ્યાખ્યાતમિતિ । ઇતિ  
વ્રવીમીત્યસ્યાર્થસ્તુ પ્રથમાધ્યયનોક્તદિશાઽવસેયઃ ॥ સૂ૦ ૧૧ ॥

વાક્ય હૈ કિ—“ જહ મમ ણ પિયં દુક્ખં, જાણિય એમેવ સન્વજીવાણં ”  
જિસ પ્રકાર દુઃખ હમ્ને અપ્રિય હૈ ઉસી પ્રકાર વહ સમસ્ત જીવોંકો ભી  
અપ્રિય હૈ । હિંસાદિક કાર્યોં મેં જીવોંકો દુઃખ પહુંચતા હૈ, એસા સમજ  
કર સંયમી જન કમી ભી પ્રાણાતિપાતાદિક કાર્યોં મેં પ્રવૃત્તિ ન કરે,  
ઔર ન સંયમાચરણસે મુખ મોડે, અર્થાત્ સંયમ મેં પ્રવૃત્તિશાલી બને, યહી  
સૂત્રકા આશય હૈ ॥ સૂ૦ ૧૦ ॥

જો સંયમી પૂર્વોક્ત સકલ ગુણોંસે યુક્ત હોતા હૈ ઉસકે ક્યા હોતા  
હૈ ? ઇસકા સ્ખુલાસા કરતે હૈ—‘ઉદ્દેસો પાસગસ્સ નત્થિ’ ઇત્યાદિ ।

ઇસ સૂત્રકા વ્યાખ્યાન ઇસી અધ્યયનકે તીસરે ઉદ્દેશમેં લિખા જા  
ચુકા હૈ । ‘ઇતિ વ્રવીમિ’ ઇસકા અર્થ પ્રથમ ઉદ્દેશકે અનુસાર જાન  
લેના ચાહિયે ॥ સૂ૦ ૧૧ ॥

॥ આચારાઙ્ગ સૂત્રકે લોકવિજયનામક દૂસરે અધ્યયનકે છઠ્ઠે ઉદ્દેશકા  
હિન્દી-ભાપાનુવાદ સમાપ્ત ॥ ૨-૬ ॥

છે કે “ જહ મમ ણ પિયં દુક્ખં જાણિય એમેવ સન્વજીવાણં ” લે પ્રકારે દુઃખ  
અમને અપ્રિય છે તે પ્રકારે તે અમસ્ત હવેને પણ અપ્રિય છે. હિંસાદિક  
કાર્યોંમા હવેને દુઃખ પહોંચે છે. એવું સમજીને સંયમી જન કદિ પણ પ્રાણા-  
તિપાતાદિક કાર્યોંમા પ્રવૃત્તિ ન કરે, અને સંયમાચરણથી દૂર રહે નહિ. અર્થાત્  
સંયમમાં પ્રવૃત્તિશાળી બને. એ જ સૂત્રનો આશય છે ॥ સૂ૦ ૧૦ ॥

લે સંયમી પૂર્વોક્ત સકલ ગુણોંથી યુક્ત બને છે. તેને શું થાય છે ? તેને  
ખુશાલો કરે છે—‘ઉદ્દેસો પાસગસ્સ નત્થિ’ ઇત્યાદિ

આ સૂત્રનું વ્યાખ્યાન આ અધ્યયનના ત્રીજા ઉદ્દેશમા આપાઈ ગયેલ છે.  
‘ઇતિ વ્રવીમિ’ તેનો અર્થ પ્રથમ ઉદ્દેશ અનુસાર જાણી લેવો ॥ સૂ૦ ૧૧ ॥

ઉપસંહાર:-

અસ્મિન્નધ્યયને હિ લોકવિજયે સજ્ઞો ન કાર્યો બુધે-  
 માત્રાદૌ ચ મહાવ્રતેઽપ્યદૃઢતા માનોઽપિ હેયસ્તથા ॥  
 વૈરાગ્યં વિષયે મુનેર્વિહરણં લોકેઽપિ નિશ્રાણ્યયા  
 પુત્રાદૌ મમતાં ત્યજેન્નિગદિતં તૂદેશપટ્કાન્વિતે ॥ ૧ ॥  
 ઇત્યાચારાંગસૂત્રસ્ય લોકવિજયાણ્યદ્વિતીયાધ્યયનસ્ય આચારચિન્તામણિ-  
 ટીકાયાં પપ્થ ઉદ્દેશઃ સમાપ્તઃ ॥ ૨-૬ ॥

ઇતિશ્રી-વિશ્વવિખ્યાત-જગદ્ગુહ-પ્રસિદ્ધવાચક-પચ્ચદશભાષાકલિત-  
 લલિતકલાપાલાપક-પ્રવિશુદ્ધગદ્યપદ્યનૈકગ્રન્થનિર્માયક-વાદિમાનમર્દક  
 -શ્રીશાહુચરપતિ-કોલ્હાપુરરાજપ્રદત્ત - 'જૈનશાસ્ત્રાચાર્ય'-પદ-  
 ભૂષિત-કોલ્હાપુરરાજગુરુ-શાલબ્રહ્મચારિ-જૈનાચાર્ય-જૈનધર્મ-  
 દિવાકર-પૂજ્યશ્રી-વાસીલાલ-વ્રતિવિરચિતાયામ્ આચા-  
 રાંગસૂત્રસ્યાચારચિન્તામણિટીકાયાં લોકવિજયાણ્ય  
 દ્વિતીયમધ્યયનં સમ્પૂર્ણમ્ ॥ ૨ ॥

ઉપસંહાર-

લોકવિજય નામક ઇસ પ્રકરણ, મેં જે છે ઉદ્દેશ ભરે,  
 માતાદિકમેં સંગ અદૃઢતા, મહાવ્રતોમેં બુધ ન કરે ।  
 માન તજન વૈરાગ્ય વિષયમેં, હો વિહાર જગનિશ્રાસે,  
 પુત્રાદિકસે મમતા હરની છ ઉદ્દેશ ઇસ નિશ્રાસે ॥ ૧ ॥  
 ॥ ઇતિ આચારાંગસૂત્રકે લોકવિજય-નામક દૂસરે અધ્યયનની  
 આચારચિન્તામણિ-ટીકાકા હિન્દીભાષાનુવાદ સંપૂર્ણ ॥ ૨ ॥

—: ઉપસંહાર :—

લોકવિજય નામના બીજા અધ્યયનમાં આ છ ઉદ્દેશો બતાવ્યા છે:-જ્ઞાનીએ  
 માતા વગેરેનો સંગ ત્યજવો. મહાવ્રતોમાં દૃઢતા રાખવી. અભિમાન ત્યજવું.  
 વિષયોથી વિરહત થવું. સંસારીએને આશ્રયે વિહરવું. અર્થાત્ પત્રનપાત્રનાદિક  
 સાવધ ક્રિયાઓને ટાળતો થકો ગૃહસ્થોએ પોતાને માટે કરેલ નિરવધ આહાર  
 પાણીથી સંયમ-યાત્રાનો નિર્વાહ કરવો. તથા પુત્ર વગેરેની મમતા ત્યજવી.  
 એ છ ઉદ્દેશો તેમાં છે. ॥૧॥

આચારાંગ સૂત્રના લોકવિજય નામના બીજા અધ્યયનના છઠ્ઠા ઉદ્દેશનો  
 શુજરાતી અનુવાદ સમાપ્ત. ૨-૬.

આ આચારાંગસૂત્રના લોકવિજય નામના બીજા અધ્યયનની આચાર-  
 ચિન્તામણિ-ટીકાનો શુજરાતી અનુવાદ સંપૂર્ણ. ॥૨॥

। અથાચારાઙ્ગસૂત્રસ્ય શીતોષ્ણીયનામકં તૃતીયમધ્યયનમ્ ।

દ્વિતીયાધ્યયનકથનાનન્તરં શીતોષ્ણીયં નામ તૃતીયમધ્યયનમભિધીયતે ।  
 અસ્ય દ્વિતીયાધ્યયનેન સહાયમભિસમ્બન્ધઃ—શસ્ત્રપરિજ્ઞાનામકાધ્યયનનિર્દિષ્ટવિશિ-  
 ષ્ટવ્રતભારધારિણો લોકવિજયાશ્ચદ્વિતીયાધ્યયનોક્તસંયમમનુતિષ્ઠતોઽપાસ્તસમસ્ત-  
 કષાયાદિલોકસ્ય પરમપદમારુદ્ધોરકસ્માત્ શીતોષ્ણાઃ=અનુકૂલપ્રતિકૂલાઃ પરી-  
 પહાઃ સમુત્પદ્યન્તે । તેષુ સ્ત્રીપરીપહસત્કારપરીપહાવેવાનુકૂલાવન્યે વિંશતિસંખ્યકાઃ  
 પરીપહાઃ પ્રતિકૂલાઃ । તેષાં હર્ષવિપાદપરિત્યાગપૂર્વકં પ્રસહનં કર્તવ્યમિતિ સમ્બન્ધા-  
 ભિધાયકમિદમધ્યયનમ્ । અત્ર ચત્વાર ઉદ્દેશાઃ સન્તિ । તત્ર—

### આચારાઙ્ગસૂત્રકા શીતોષ્ણીયનામક તૃતીય અધ્યયન

દ્વિતીય અધ્યયનકે બાદ અવ હસ શીતોષ્ણીય નામક તૃતીય અધ્ય-  
 યન પ્રારમ્ભ હોતા હૈ । દ્વિતીય અધ્યયનકે સાથ હસ અધ્યયનકા હસ  
 પ્રકારસે સમ્બન્ધ હૈ કિ શસ્ત્રપરિજ્ઞાનામક અધ્યયનમેં જિન વિશિષ્ટ  
 વ્રતોંકે ધારણ કરનેકા વિધાન કિયા ગયા હૈ ડન વ્રતોંકે પાલનેવાલે,  
 તથા લોકવિજય નામક દ્વિતીય અધ્યયનમેં પ્રતિપાદિત સંયમકે અનુષ્ઠાન  
 કરનેવાલે, સમસ્ત કષાયલોકકે નિરાકરણ કરનેવાલે ઓર પરમપદ જો  
 મોક્ષ ડસમેં પહુંચનેકી ઇચ્છાવાલે એસે સંયમી મુનિ અકસ્માત્ ઉત્પન્ન શીત-  
 ઉષ્ણ અર્થાત્ અનુકૂલ પ્રતિકૂલ પરીપહોંકો સહન કરતે હૈં । પરીપહ ૨૨  
 વાઈસ પ્રકારકે હૈં, ડનમેં સ્ત્રીપરીપહ ઓર સત્કારપરીપહ હી અનુકૂલ હૈં,  
 વાકીકે ૨૦ વીસ પરીપહ પ્રતિકૂલ હૈં । ડન સવ પરીપહોંકો હર્ષ વિપાદ

આચારાંગ સૂત્રનું શીતોષ્ણીયનામનું ત્રીજું અધ્યયન.

બીજા અધ્યયન બાદ હવે શીતોષ્ણીય નામના ત્રીજા અધ્યયનનો પ્રારંભ થાય છે. બીજા અધ્યયનની સાથે આ અધ્યયનનો એ પ્રકારે સંબંધ છે કે શસ્ત્ર-  
 પરિજ્ઞા નામના અધ્યયનમાં જે વિશિષ્ટ વ્રતો ધારણ કરવાનું વિધાન કરેલ છે,  
 તે વ્રતોના પાળવાવાળાં, તથા લોકવિજય નામના બીજા અધ્યયનમાં પ્રતિપાદિત  
 સંયમનું અનુષ્ઠાન કરવાવાળાં, સમસ્ત કષાયલોકનું નિરાકરણ કરવાવાળાં અને  
 પરમપદ જે મોક્ષ તેમાં પહોંચવાની ઇચ્છાવાળાં એવાં સંયમી મુનિ અકસ્માત્ ઉત્પન્ન  
 શીત-ઉષ્ણ અર્થાત્ અનુકૂળ પ્રતિકૂલ પરિપહો સહન કરે છે. પરીપહ બાવીસ  
 પ્રકારના છે. તેમાં સ્ત્રીપરીપહ અને સત્કારપરીપહ, એ બે પરીપહ જ અનુકૂળ  
 છે. બાકીના ૨૦ બીસ પરીપહો પ્રતિકૂળ છે આ સઘળાં પરીપહોને હર્ષ વિપાદ



પ્રથમોદ્દેશે ભાવસુપ્તાનાં દોષા જાગ્રતાં ચ ગુણાઃ પ્રદર્શિતાઃ ॥ ૧ ॥

દ્વિતીયે ભાવનિદ્રાવતાં દુઃસ્વાનુભવઃ પ્રદર્શિતઃ ॥ ૨ ॥

તૃતીયે સંયમાચરણમન્તરેણ કેવલં દુઃસ્વસહનાદેવ શ્રમણો ન ભવતીતિ કથિતમ્ ॥ ૩ ॥

ચતુર્થે તુ વાન્તવત્ કપાયાસ્ત્યાજ્યાઃ, પાપકર્મણશ્ચ વિરતિઃ, તથા વિદિત-  
વેદ્યસ્ય સંયમઃ પ્રતિવોદિતઃ, તથા ક્ષપકશ્રેણિપ્રવિષ્ટાનાં ચ સંયમિનાં મોક્ષો  
ભવતીત્યાવેદિતમ્ ॥ ૪ ॥

છોડ કર સંયમીકો સહન કરના ચાહિયે । इस प्रकारके सम्बन्धका  
प्रतिपादन करनेवाला यह अध्ययन है । इसमें ४ चार उद्देश हैं । उनमें—

પ્રથમ ઉદ્દેશમેં ભાવસુપ્ત સંયમિયોંકે દોષ ઓર જગતે હુએ સંયમિયોંકે  
ગુણ દિશ્વલાયે ગયે હેં ૧ ।

દ્વિતીય ઉદ્દેશમેં—‘ભાવનિદ્રાવાલે સંયમિયોંકો દુઃસ્વોંકા અનુભવ  
કરના પડતા હેં ’ यह बात दिखलाई गई है २ ।

તૃતીયઉદ્દેશમેં—‘સંયમાચરણકે વિના કેવલ દુઃસ્વોંકે સહન કરને  
માત્રસે સાધુ નહીં હોતા હેં ’ यह विषय प्रतिपादित किया गया है ३ ।

ચતુર્થ ઉદ્દેશમેં—‘વમન-છર્દિત કિયે હુએ અન્નકે સમાન કપાય ત્યાગ  
કરને યોગ્ય હેં, પાપકર્મ પરિહરણીય હેં, તથા પદાર્થોંકે સ્વરૂપકો જાનને-  
વાલે સંયમી મુનિકે લિયે સંયમ આરાધનીય હેં, એવં ક્ષપકશ્રેણિમેં પ્રાપ્ત  
હુએ સાધુજનોંકો મુક્તિકા લાભ અવશ્યંભાવી હેં ’ આદિ સર્વ વિષય  
પ્રકટ કિયે ગયે હેં ૪ ।

છોડીને સંયમીઓએ સહન કરવા બોધ્યો. આ પ્રકારના સંબંધનું પ્રતિપાદન  
કરવાવાળું આ અધ્યયન છે. તેમાં ચાર ઉદ્દેશ છે. તેમાં—

પ્રથમ ઉદ્દેશમાં ભાવસુપ્ત સંયમીઓના દોષ અને જાગતા સંયમીઓના  
ગુણ બતાવવામાં આવેલ છે. ૧.

બીજા ઉદ્દેશમાં ભાવનિદ્રાવાળા સંયમીઓને દુઃખોનો અનુભવ કરવો પડે  
છે, એ વાત બતાવવામાં આવી છે. ૨.

ત્રીજા ઉદ્દેશમાં ‘સંયમાચરણ વિના કેવળ દુઃખો સહન કરવા માત્રથી  
કોઈ સાધુ બની શકતો નથી ’ એ વિષય પ્રતિપાદિત કરવામાં આવેલ છે. ૩.

ચોથા ઉદ્દેશમાં—‘વમન-છર્દિત કરેલા અન્ન સમાન કપાય ત્યાગ કરવા યોગ્ય છે,  
પાપકર્મ પરિહરણીય છે તથા પદાર્થોના સ્વરૂપને જાણવાવાળા સંયમી મુનિ માટે  
સંયમ આરાધનીય છે, તેમજ ક્ષપકશ્રેણિમાં પ્રાપ્ત થયેલાં સાધુજનોને મુક્તિનો  
લાભ અવશ્યભાવી છે ’ આદિ સમગ્ર વિષય પ્રગટ કરવામાં આવેલ છે. ૪.



દ્વિતીયાધ્યયનસ્ય ચરમમૂત્રેણાસ્યૈવમભિસમ્બન્ધઃ—તત્ર “ દુઃસ્વી દુઃસ્વાનામે-  
વાવર્તમનુપરિવર્તતે ” इत्युक्तं, तदिहापि “ भावसुप्ता दुःस्विनो दुःस्वानामेवावर्तमनु-  
वर्तन्ते ” इति प्रतिबोधयितुमाह—‘ सुप्ता अमुणी ’ इत्यादि ।

મૂલમ્—સુપ્તા અમુણી, સયા મુણિણો જાગરંતિ ॥ સૂ૦ ૧ ॥

છાયા—સુપ્તા અમુનયઃ, સદા મુનયો જાગ્રતિ ॥ સૂ૦ ૧ ॥

ટીકા—અમુનયઃ=ગૃહસ્થાઃ સુપ્તાઃ=ભાવતઃ સુપ્તાઃ મિથ્યાત્વાજ્ઞાનમયનિદ્રા-  
વ્યામોહિતાઃ હિંસાદ્યાસ્રવદ્વારેષુ સતતં પ્રવૃત્તાઃ સન્તિ । સુપ્તા હિ દ્વિવિધા ભવન્તિ  
દ્રવ્યતો ભાવતશ્ચ । તત્ર નિદ્રાપ્રમાદવન્તો દ્રવ્યસુપ્તાઃ, યદ્વા—શિથિલિતનયનપ્રચારા-  
જ્ઞોપાદ્ધાવિસ્પૃષ્ટચેતનાવસ્થાપન્નાઃ દ્રવ્યસુપ્તાઃ । ભાવસુપ્તાસ્ત્રભિહિતા એવ ।

દ્વિતીય અધ્યયનકે અન્તિમ મૂત્રકે સાથે આ અધ્યયનકા આ પ્રકાર  
સમ્બન્ધ હૈ—અસ અધ્યયનકા અન્તિમ મૂત્ર “ . . . . . દુઃસ્વી દુઃસ્વાણમેવ  
આવદ્ અણુપરિવદ્ ” ( દુઃસ્વી દુઃસ્વાનામેવાવર્તમનુપરિવર્તતે ) એ હૈ,   
આસકા ભાવ એ હૈ કિ—દુઃસ્વી દુઃસ્વીકી પરંપરાકા હી અનુવર્તન કરતે  
હૈ । જિસ પ્રકાર એ વાત અસ અધ્યયનમે કહી ગઈ હૈ અસી પ્રકાર યહાં  
પર ભી—‘ જો ભાવસુપ્ત દુઃસ્વી હૈ વે દુઃસ્વીકી હી પરંપરાકા અનુભવ કરતે  
હૈ ’ આ વિષયકો સમજાનેકે લિયે કહતે હૈ—‘ સુપ્તા અમુણી ’ આદિ ।

અમુનિ શબ્દકા અર્થ ગૃહસ્થ હૈ । એ ભાવસે સુપ્ત-સોયે હુએ હૈ ।  
મિથ્યાત્વ અજ્ઞાનમય નિદ્રાસે વ્યામોહિત સતિવાલે હોતે હુએ એ પ્રાણા-  
તિપાતાદિક જો કર્મોકે આનેકે દાર હૈ અનમે નિરન્તર પ્રવૃત્તિશાલી હૈ ।  
સુપ્ત ઘો પ્રકારકે હોતે હૈ—(૧) દ્રવ્યસે ઓર (૨) ભાવસે । નિદ્રાપ્રમાદ-

બીજા અધ્યયનના અન્તિમ મૂત્રની સાથે આ અધ્યયનનો આ પ્રકારે સંબંધ  
છે, તે અધ્યયનનું અન્તિમ મૂત્ર “ . . . . . દુઃસ્વી દુઃસ્વાણમેવ આવદ્ અણુ-  
પરિવદ્ ” ( . . . . . દુઃસ્વી દુઃસ્વાનામેવાવર્તમનુપરિવર્તતે ) એ છે. તેનો ભાવ એ છે કે  
દુઃખી દુઃખોની પરંપરાનું જ અનુવર્તન કરે છે, જેવી રીતે આ વાત ને અધ્યયનમાં  
કહેવામાં આવેલ છે તેવી રીતે આ કહેણે પણ ‘ જે ભાવમુપ્ત દુઃખી છે તેણે  
પણ દુઃખોની જ પરંપરાનો અનુભવ કરે છે. ’ આ વિષયને સમજાવવા માટે કહે  
છે—‘ સુપ્તા અમુણી ’ આદિ.

અમુનિ શબ્દનો અર્થ ગૃહસ્થ છે. એ ભાવથી મુપ્ત-મુતેડા છે. મિથ્યાન્ય  
અજ્ઞાનમય નિદ્રાથી વ્યામોહિત મનિવાળા હોવા છતાં પ્રાણતિપાતાદિક જે કર્મોના  
આવવાના દાર છે તેમાં નિરંતર પ્રવૃત્તિશાળી છે મુપ્ત જે પ્રકારના હોય છે.—

દ્રવ્યસુપ્તાસ્તસ્કરાદિના મણિમાણિક્યરત્નાદ્યપહારેણ યથાઽન્તર્દાહદારિદ્ર્ય-  
દૌર્ભાગ્યાદિલક્ષણપરિતાપકલાપમનુભવન્તિ તથા ભાવસુપ્તા અપિ પ્રમાદાદિના સમ્ય-  
ગ્જ્ઞાનદર્શનચારિત્રાદ્યાત્મકરત્નાપહારાદીર્ઘસંસારપરિભ્રમણેન જન્મજરામરણાદિલક્ષણ-  
વિવિધપરિતાપકલાપમનુભવન્તિ ।

મુનયઃ=મોક્ષમાર્ગાદવિચલન્તો લબ્ધસમ્યગ્વોધાઃ અનગારાઃ, સદા=અનવરતં  
જાગ્રતિ=મિથ્યાત્વાદિનિદ્રાપગમેન ઇષ્ટાનિષ્ટપ્રાપ્તિપરિહારાર્થં યતનયા ગમનાદિ  
શાલી જો હૈં વે દ્રવ્યસે સુપ્ત હૈં । અથવા જિસમૈં નેત્રોંકા પ્રચાર શિથિલ  
હો જાતા હૈં તથા અન્ગ-ઉપાંગોં કી ક્રિયા ભી જહાં શિથિલ હો જાતી હૈં,  
એસી અસ્પષ્ટ ચેતનાકી અવસ્થાસે જો યુક્ત હૈં વે ભી દ્રવ્યસે સુપ્ત હૈં,  
અર્થાત્ નિદ્રાવસ્થાવાલે પ્રાણી દ્રવ્યસુપ્ત હૈં । યે દ્રવ્યસુપ્ત જીવ જિસ પ્રકાર  
ચોરોં વગૈરહકે દ્વારા મણિ માણિક્ય ઓર રત્નાદિક દ્રવ્યકે ચુરાયે જાને  
સે અન્તર્દાહ એવં દારિદ્ર્ય દૌર્ભાગ્યાદિરૂપ અનેક સન્તાપોંકા અનુભવ  
કરતે હૈં ઉસી પ્રકાર ભાવસુપ્ત પ્રાણી ભી પ્રમાદ આદિકે દ્વારા સમ્યગ્જ્ઞાન  
સમ્યગ્દર્શન ઓર સમ્યક્ચારિત્રરૂપ રત્નોંકે ચુરાયે જાનેસે દીર્ઘ સંસારમૈં  
પરિભ્રમણજન્ય જન્મ જરા ઓર મરણ આદિ રૂપ અનેક સન્તાપોંકો  
ભોગતે રહતે હૈં ।

મુનિ સદા જગતે હૈં । મોક્ષમાર્ગસે જો વિચલિત નહીં હોતે હૈં ઉનકા  
નામ મુનિ હૈં । યે નિરન્તર સચેત રહતે હૈં, અર્થાત્ મિથ્યાત્વાદિ નિદ્રાકે  
વિનાશ હોનેસે ઇષ્ટકી પ્રાપ્તિ ઓર અનિષ્ટ કે પરિહારકે લિયે યતનાસે

(૧) દ્રવ્યથી અને (૨) ભાવથી. નિદ્રાપ્રમાદશાળી જે છે તેઓ દ્રવ્યથી સુપ્ત છે,  
અથવા જેમાં આંખોનો પ્રચાર શિથિલ થઈ જાય છે તથા અંગ ઉપાંગોની ક્રિયા  
પણ જ્યાં શિથિલ થઈ જાય છે, એવી અસ્પષ્ટ ચેતનાની અવસ્થાથી જે યુક્ત  
છે તેઓ પણ દ્રવ્યથી સુપ્ત છે. અર્થાત્ નિદ્રાવસ્થાવાળા પ્રાણી દ્રવ્યસુપ્ત છે.  
જે દ્રવ્યસુપ્ત જીવ જે પ્રકારે ચોરો વિગેરે દ્વારા મણિ-માણિક-રત્નાદિક દ્રવ્ય  
આદિના ચોરાઈ જવાથી અન્તર્દાહ અને દારિદ્ર્ય દુર્ભાગ્યાદિ-રૂપ અનેક સન્તા-  
પોનો અનુભવ કરે છે તે પ્રકારે ભાવસુપ્ત પ્રાણી પણ પ્રમાદ આદિ દ્વારા સમ્ય-  
ગ્જ્ઞાન સમ્યગ્દર્શન અને સમ્યક્ચારિત્રાદિરૂપ રત્નો ચોરાઈ જવાથી દીર્ઘ સંસારમાં  
પરિભ્રમણજન્ય જન્મ જરા અને મરણ આદિરૂપ અનેક સન્તાપોને ભોગવતાં રહે છે.

મુનિ સદા જાગતા રહે છે. મોક્ષમાર્ગથી જે વિચલિત થતા નથી, તેનું  
નામ મુનિ છે. એઓ નિરંતર સચેત રહે છે, અર્થાત્ મિથ્યાત્વાદિ નિદ્રાના  
વિનાશ થવાથી ઇષ્ટની પ્રાપ્તિ અને અનિષ્ટના પરિહાર માટે યતનાથી ગમનાદિક

કુર્વન્તઃ સમ્યગ્જ્ઞાનચારિત્રોપાર્જને પ્રવૃત્તાઃ સન્તીત્યર્થઃ । યદ્યપિ ક્વચિદાચાર્યાનુજ્ઞયા પ્રથમપૌરુષ્યામ્ ઉત્સર્ગતશ્ચ દ્વિતીયતૃતીયપૌરુષ્યોર્દીર્ઘસંયમાધારભૂતસ્ય શરીરસ્ય સ્થિત્યર્થં નિદ્રાં ભજન્તિ તથાપિ મુનયઃ સદા ભાવતો જાગરૂકા એવ । ધર્માપેક્ષયા મુમ્તજાગ્રદવસ્થે હ્ર પરિગૃહીતે ।

મુનયો દ્વિધા ભવન્તિ દ્રવ્યતો ભાવતશ્ચ । તત્ર દ્રવ્યમુનયસ્તાવત્-લિઙ્ગમાત્ર-ધારિણઃ, અસંયમપરિણામપરિણતાઃ, અવસન્નપાશ્વસ્થાદિકાઃ । એપાં નાત્રાધિકારઃ, અમુનિકોટૌ તેપાં સમાવિષ્ટત્વાત્ । અધિકારશ્ચાત્ર ભાવમુનીનામ્ । તે ચ ભાવમુનયઃ

ગમનાદિક ક્રિયાઈ કરતે હુણે મી સમ્યગ્જ્ઞાન ઓર સમ્યક્ચારિત્રકે ઉપાર્જન કરનેમેં હી પ્રવૃત્તિશીલ રહા કરતે હેં । યદ્યપિ કમી ૨ આચાર્ય મહારાજ કી આજ્ઞાસે ચે રાત્રિકી પ્રથમ પૌરુષી મેં, ઓર ઉત્સર્ગ સે દ્વિતીય તૃતીય પૌરુષી મેં દીર્ઘ સંયમકે આધારભૂત શરીરકી સ્થિતિકે લિયે નિદ્રા લેતે હેં તો મી ચે સદા ભાવસે જાગરૂક-જગતે હુણે-હી રહતે હેં । સુપ્ત અવસ્થા ઓર જાગ્રત અવસ્થા કા સમ્બન્ધ યહાં ધર્મકી અપેક્ષાસે ગ્રહણ કિયા ગયા હે ।

મુનિ દો પ્રકારકે હોતે હેં-(૧) દ્રવ્યસે ઓર (૨) ભાવસે । લિઙ્ગમાત્રકો ધારણ કરનેવાલે દ્રવ્યમુનિ હેં । ઇનકા પરિણામ અસંયમમેં પરિણંત રહા કરતા હેં । અવસન્ન પાસત્યાદિક ઇસી શ્રેણિકે હેં । ઇનકા યહાં પ્રકરણ નહીં હે, ક્યોં કિ ચે દ્રવ્યલિઙ્ગી અમુનિયોંકી કોટિમેં આતે હેં । યહાં પર ભાવમુનિયોંકા પ્રકરણ ચલ રહા હે અતઃ ડન્હીંકા યહાં પર વિચાર હોગા । વે ભાવમુનિ ચારિત્રમોહનીય કર્મકે ક્ષયોપશમસે તથા

ક્રિયાઓ કરતાં કરતાં પણ સમ્યગ્જ્ઞાન અને સમ્યક્ચારિત્રનું ઉપાર્જન કરવામાં ન પ્રવૃત્તિશીલ રહ્યા કરે છે. બેડે ક્યારેક આચાર્ય મહારાજની આજ્ઞાથી એ રાત્રિની પ્રથમ પોરણીમાં, અને ઉત્સર્ગથી દ્વિતીય તૃતીય પોરણીમાં દીર્ઘ સંયમના આધારભૂત શરીરની સ્થિતિ માટે નિદ્રા લે છે તો પણ મુનિ સદા ભાવથી જાગરૂક-જગતાં ન રહે છે. સુપ્ત અવસ્થા અને જાગ્રત અવસ્થાનો સંબંધ આંદી ધર્મની અપેક્ષાથી ગ્રહણ કરવામાં આવેલ છે.

મુનિ બે પ્રકારના હોય છે. (૧) દ્રવ્યથી અને (૨) ભાવથી. લિંગ માત્રને ધારણ કરવાવાળા દ્રવ્યમુનિ છે. તેનું પરિણામ અસંયમમાં પરિણત રહ્યા કરે છે. અવસન્ન પાસત્યાદિક તેવી શ્રેણિના છે. તેનું અહીં પ્રકરણ નથી, કારણ કે એ દ્રવ્યલિંગી અમુનિઓની કોટિમાં આવે છે આ કદાચે ભાવમુનિઓનું પ્રકરણ આંદી રહ્યું છે. માટે તેઓને આ કદાચે વિચાર થશે. તે ભાવમુનિ ચારિત્રમોહનીય

ચારિત્રમોહનીયક્ષયોપશમક્ષયસમુત્પન્નસ્વરૂપપરાયણાઃ, કષાયોદ્દેકરહિતાઃ, સમર-  
સકન્દાયમાનાઃ, સમ્યગ્દર્શનજ્ઞાનચારિત્રારાધકાઃ, પ્રશસ્તયોગસાધકાઃ, સમિતિ-  
ગુપ્તિધારકાઃ, નિશ્ચયવ્યવહારપ્રચારકાઃ, આશ્રવવર્જિતાઃ સંવેગાદિલક્ષણયુક્તાઃ,  
યથાર્થોપયોગેન દ્રવ્યાર્થિકપર્યાયાર્થિકનયેન સ્વરૂપવેદિનઃ, કર્મરજોહારકાઃ,  
મુખોપરિ સદોરકમુખવચ્ચિકાધારકાઃ, વિંશતિસ્થાનકસમારાધકાઃ, દેવાસુરનરજ-  
નિતત્રિવિધોપસર્ગસહનશીલાઃ, શાસ્ત્રોક્તાચારવિચારપરિપાલકાઃ, જ્ઞાતપરમાર્થા  
ભવન્તિ । ત એવ સદા=નિરન્તરં જાગ્રતિ=પ્રવુદ્ધ્યન્તે-દેયોપાદેયવિવેકપૂર્વકં સકલ-  
પરિપદ્મપ્રસહનં પ્રકુર્વાણાઃ સંયમાનુષ્ઠાનં સમાચરન્તીત્યર્થઃ ।

ક્ષયસે સમુત્પન્ન નિજ આત્મસ્વરૂપમેં લવલીન રહતે હૈં । કષાયોંકે ઉદ્દેક  
સે રહિત હોતે હૈં । સમતારૂપી રસકે કન્દ હોતે હૈં । પાંચ સમિતિ ઓર  
ત્રીન ગુપ્તિકે ધારક હોતે હૈં । નિશ્ચય ઓર વ્યવહારકે પ્રચારક હોતે હૈં ।  
આશ્રવદ્વારોંસે રહિત તથા સંવેગાદિક-લક્ષણોંસે યુક્ત હોતે હૈં । જિસ  
નયકા જહાં ઉપયોગ હોતા હૈ વહાં ઉસી નયકા ઉપયોગ કરનેવાલે હોતે  
હૈં, અર્થાત્ જહાં દ્રવ્યાર્થિક નયકી પ્રધાનતાસે વસ્તુતત્ત્વકા નિર્ણય હોતા  
હો વહાં પર્યાયાર્થિક નયકી ગૌણતા કર ઉસી નયસે ઉસકે સ્વરૂપકા  
નિર્ણય કરતે હૈં, જહાં પર્યાયાર્થિક નયસે વસ્તુકે સ્વરૂપકા નિર્ણય હોતા હો  
વહાં ઉસ નયસે ઇતર-દ્રવ્યાર્થિક નયકો ગૌણકર વસ્તુકે સ્વરૂપકા નિર્ણય  
કરતે હૈં; કિન્તુ અપને આગ્રહસે કિસી બી વસ્તુકા એકાન્તરૂપસે નિર્ણય  
યા પ્રતિપાદન નહીં કરતે હૈં । આત્માકે ઉપર અનાદિ કાલસે ચઢી હુઈ  
કર્મરૂપી ધૂલિકો નાશ કરનેવાલે હોતે હૈં । મુખપર દોરાસહિત મુખ-

કર્મના ક્ષયોપશમથી તથા ક્ષયથી સમુત્પન્ન નિજ આત્મસ્વરૂપમાં આનંદિત રહે  
છે. કષાયોના ઉદ્દેકથી રહિત હોય છે. સમતારૂપી રસના કંદ હોય છે. પાંચ  
સમિતિ અને ત્રણ ગુપ્તિના ધારક હોય છે. નિશ્ચય અને વ્યવહારના પ્રચારક હોય  
છે. આશ્રવદ્વારોથી રહિત અને સંવેગાદિક લક્ષણોથી રહિત હોય છે. જે નયનો  
ત્યાં ઉપયોગ થાય છે, ત્યાં તે નયનો ઉપયોગ કરવાવાળા હોય છે. અર્થાત્ ત્યાં  
દ્રવ્યાર્થિક નયની પ્રધાનતાથી વસ્તુતત્ત્વનો નિર્ણય થતો હોય ત્યાં પર્યાયાર્થિક  
નયની ગૌણતા કરી તે નયથી તેના સ્વરૂપનો નિર્ણય કરે છે. ત્યાં પર્યાયાર્થિક  
નયથી વસ્તુ સ્વરૂપનો નિર્ણય થતો હોય ત્યાં તે નયથી ગૌણ-દ્રવ્યાર્થિક-નયને  
ગૌણ કરી વસ્તુના સ્વરૂપનો નિર્ણય કરે છે, પણ પોતાના આગ્રહથી કેઈ પણ  
વસ્તુનો એકાન્તરૂપથી નિર્ણય અગર પ્રતિપાદન કરતા નથી. આત્માની ઉપર  
અનાદિ કાળથી ચઢેલી કર્મરૂપી ધૂળનો નાશ કરવાવાળા હોય છે. મુખ ઉપર

તે હિ દર્શનાવરણીયકર્મવિપાકોદયાત્ સંયમાધારશરીરસ્થિત્યર્થં નિદ્રોપગતા દ્રવ્યતઃ સુષ્પા અપિ દર્શનમોહનીયરૂપમહાનિદ્રાપગમાત્ સમ્યગ્જ્ઞાનદર્શનચારિત્રારાધકત્વેન સદા જાગરૂકા એવ । તત્ર જિનકલ્પિનો રાત્રો પ્રહરમેકં સ્થવિરકલ્પિનસ્તૂત્સર્ગતઃ પ્રહરદ્વયં સ્વપન્તિ ।

વશ્ચિકા-મુંહપત્તીકે ધારક હોતે હૈં । વીસ સ્થાનોંકી અચ્છી તરહ આરાધના કરનેવાલે હોતે હૈં । દેવ, અસુર તથા મનુષ્ય, इन तीनों द्वारा किये गये तीन प्रकारके उपसर्गोंको सहनेके स्वभाववाले होते हैं । शास्त्रोंमें जिन २ आचार-विचारोंका पालना बतलाया है उन २ आचार-विचारोंको पालनेवाले होते हैं । परमार्थके ज्ञाता होते हैं । ऐसे ये भावमुनि ही सदा जागरूक होते हैं, अर्थात् हेय और उपादेयके विवेकपूर्वक सकल परीपहोंको जीतते हुए संयमके आराधनमें सदा दत्तावधान रहते हैं ।

यद्यपि ये दर्शनावरणीय कर्मके विपाकोदयसे संयमके आधारभूत शरीरकी स्थितिके लिये निद्रा लेते हैं, इस अपेक्षासे ये द्रव्यसे सुप्त हैं, तो भी दर्शनमोहनीयरूप महानिद्राके विनाशसे उत्पन्न सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान और सम्यक्चारित्रके आराधक होनेसे ये सदा जागरूक ही रहते हैं । जिनकल्पी मुनि रात्रिमें एक प्रहर सोते हैं, क्यों कि इनका इसी प्रकारका कल्प है । स्थविरकल्पी मुनि उत्सर्गसे दो प्रहर सोते हैं ।

દોરાસહિત મુળવશ્ચિકા-મુંહપત્તીના ધારક હોય છે. વીસ સ્થાનોની આરી રીતે આરાધના કરનારા હોય છે. દેવ, અસુર તથા મનુષ્ય એમ ત્રણે દ્વારા કરવામાં આવેલાં ત્રણ પ્રકારના ઉપસર્ગોને સહન કરવાના સ્વભાવવાળા હોય છે. શાસ્ત્રોમાં જે જે આચાર વિચારોનું પાલન કરવાનું બતાવેલ છે તે તે આચાર વિચારોના પાળવાવાળાં હોય છે. પરમાર્થના જ્ઞાતા હોય છે. એવા એ ભાવમુનિ જ સદા જાગરૂક હોય છે, અર્થાત્ હેય અને ઉપાદેયના વિવેકપૂર્વક સકળ પરીપહોને જીતતા સંયમના આરાધનમાં સદા દત્તાવધાન રહે છે.

જો કે તેઓ દર્શનાવરણીય કર્મના વિપાકના ઉદયથી સંયમના આધારભૂત શરીરની સ્થિતિ માટે નિદ્રા લે છે, આ અપેક્ષાથી એ દ્રવ્યથી સુપ્ત છે તો પણ દર્શનમોહનીયરૂપ મહાનિદ્રાના વિનાશથી ઉત્પન્ન સમ્યગ્દર્શન સમ્યગ્જ્ઞાન અને સમ્યક્ચારિત્રના આરાધક હોવાથી સદા જાગરૂક જ રહે છે. જનકકલ્પી મુનિ રાત્રિમાં એક પ્રહર સુવે છે, કારણ કે તેનો આ પ્રકારનો કલ્પ છે. સ્થવિરકલ્પી મુનિ ઉત્સર્ગથી બે પ્રહર સુવે છે.

શયનં જાગરણં ચાત્ર ધર્મારાધનમધિકૃત્યાભિધીયતે, અતો દ્રવ્યભાવભેદેન સુપ્તાનાં જાગ્રતાં ચ મધ્યે કસ્ય ધર્મારાધનં ભવતિ કસ્ય નેતિ મદ્ગચતુષ્ટયં પ્રદર્શ્યતે—

- (૧) દ્રવ્યતઃ સુપ્તઃ, ભાવતો જાગર્તિ ।
- (૨) ભાવતઃ સુપ્તઃ, દ્રવ્યતો જાગર્તિ ।
- (૩) દ્રવ્યતોઽપિ જાગર્તિ, ભાવતોઽપિ જાગર્તિ ।
- (૪) દ્રવ્યતોઽપિ સુપ્તઃ, ભાવતોઽપિ સુપ્તઃ ।

અત્ર પ્રથમમદ્ગચતુષ્ટયતો ધર્મારાધનં ભવતિ ૧ । દ્વિતીયસ્ય ન ભવતિ ૨ ।

સોના ઓર જાગના, યે દોનોં વાનેં ધર્મકે આરાધન કરનેકી અપેક્ષાસે યહાં કહી ગઈ હેં । ઇસલિયે દ્રવ્ય ઓર ભાવકે ભેદસે સોનેવાલોંકે તથા જાગનેવાલોંકે વીચમેં કોન ધર્મકા આરાધક હોતા હૈ, કોન નહીં હોના હૈ ? ઇસ વાતકો ચાર ભંગોંસે દિશલાતે હેં—

- (૧) દ્રવ્યસે સુપ્ત હૈ પર ભાવસે જાગ્રત હૈ ।
- (૨) ભાવસે સુપ્ત હૈ પર દ્રવ્યસે જાગ્રત હૈ ।
- (૩) દ્રવ્યસે જાગ્રત હૈ ઓર ભાવસે ભી જાગ્રત હૈ ।
- (૪) દ્રવ્યસે ભી સુપ્ત હૈ ઓર ભાવસે ભી સુપ્ત હૈ ।

ઇન ચાર ભંગોંકો લેકર જવ વિચાર ક્રિયા જાતા હૈ તો જો દ્રવ્યસે તો સુપ્ત હૈ પર ભાવસે જાગ્રત હૈ, એસે પ્રથમ ભંગવાલેકો ધર્મકા આરાધન હોના હૈ । દ્વિતીય ભંગવાલેકો નહીં હોના હૈ, કારણ કિ યહ ભાવસે હી સુપ્ત હૈ, દ્રવ્યજાગૃક્તા તો ધર્મારાધનમેં કાર્યકારી હી નહીં હૈ ।

સુપ્તું અને જાગૃત્તું એ બન્ને વાતો ધર્મનું આરાધન કરવાની અપેક્ષાથી અહીં કહેવામાં આવેલ છે, જેથી દ્રવ્ય અને ભાવના ભેદથી સુવાવાળાની તથા જાગવાવાળાની વચ્ચે ધર્મનું આરાધન કેને થાય છે ? અને કેને થતું નથી ? આ વાતને ચાર ભંગોથી લતાવે છે.

- (૧) જે દ્રવ્યથી સુપ્ત છે પણ ભાવથી જાગૃત છે.
- (૨) જે ભાવથી સુપ્ત છે પણ દ્રવ્યથી જાગૃત છે.
- (૩) જે દ્રવ્યથી જાગૃત છે અને ભાવથી પણ જાગૃત છે.
- (૪) જે દ્રવ્યથી પણ સુપ્ત છે અને ભાવથી પણ સુપ્ત છે.

આ ચાર ભંગોને લઈને ત્યારે વિચાર કરવામાં આવે છે ત્યારે જે દ્રવ્યથી તો સુપ્ત છે પણ ભાવથી જાગૃત છે, એવા પ્રથમ ભંગવાળાને ધર્મનું આરાધન થાય છે, બીજા ભંગવાળાને નહિ, કારણ કે તે ભાવથી જ સુપ્ત છે. દ્રવ્ય જાગૃક્તા ધર્મારાધનમાં કાર્યકારી નથી.



તૃતીયભદ્રવતો દ્રવ્યતો ભાવતશ્ચ જાગ્રતઃ સમ્યગ્જ્ઞાનાદિરૂપો ધર્મઃ સુચારુરૂપેણ સમ્પદ્યતે । મુનિના સદા તૃતીયભદ્રવતૈવ ભાવ્યમતો ભગવતા કથિતમ્—“ સુત્તા અમુણી સયા મુણિણો જાગરંતિ ”—સુપ્તા અમુનયઃ સદા મુનયો જાગ્રતિ—ઈતિ । ચતુર્થભદ્રવતશ્ચ સર્વથા ધર્મારાધનં ન ભવતિ, તસ્ય મિથ્યાત્વોદયપ્રાપ્ત્યાત્ ૪ ।

દ્રવ્યસુપ્તો હિ નિદ્રયા ભવતિ । સા ચ પશ્ચવિધા (૧) નિદ્રા, (૨) નિદ્રાનિદ્રા, (૩) પ્રચલા (૪) પ્રચલાપ્રચલા (૫) સ્ત્યાનર્દ્ધિઃ ।

તાસુ નિદ્રાનિદ્રા-પ્રચલાપ્રચલા-સ્ત્યાનર્દ્ધિરૂપં નિદ્રાત્રિકં દુરન્તમ્ । એતત્રિકો-દયે ભવસિદ્ધિકોઽપિ સમ્યક્ત્વં ન લભતે । અસ્ય વન્ધો હિ મિથ્યાદૃષ્ટિગુણસ્થાને

તૃતીય ભંગવાલેકો સુચારુરૂપસે સમ્યગ્જ્ઞાનાદિરૂપ ધર્મકી આરાધના હોતી હૈ; કારણ કિ યહ દ્રવ્યસે ઔર ભાવસે-દોનોં પ્રકારસે સદા જાગરૂક હૈ । મુનિકો સદા ઇસ તૃતીયભંગવાલા હી હોના ચાહિયે । ઇસીલિયે ભગવાને કહા હૈ કિ—“ સુત્તા અમુણી, સયા મુણિણો જાગરંતિ । ” ( સુપ્તા અમુનયઃ સદા મુનયો જાગ્રતિ ) । ચતુર્થ ભંગવાલેકે ધર્મકા આરાધન સર્વથા હૈ હી નહીં; ક્યોં કિ યહ દ્રવ્ય ઔર ભાવ, ઇન દોનોં પ્રકારસે સોયા હુઆ હૈ, અર્થાત્ ઇસમેં મિથ્યાત્વકે ઉદયકી પ્રવલતા હૈ ।

દ્રવ્યકી અપેક્ષાસે સુપ્તાવસ્થા નિદ્રાસે હોતી હૈ । વહ નિદ્રા પાંચ પ્રકાર કી હૈ—(૧) નિદ્રા, (૨) નિદ્રાનિદ્રા, (૩) પ્રચલા, (૪) પ્રચલાપ્રચલા, (૫) સ્ત્યાનર્દ્ધિ ।

ઇનમેં નિદ્રાનિદ્રા, પ્રચલાપ્રચલા, ઔર સ્ત્યાનર્દ્ધિ, યે ત્રીન નિદ્રાઈ જીવોંકો વહુત દુઃખદાયી હૈ । ઇન ત્રીનોંકે ઉદયમેં ભવસિદ્ધિક (મુક્તિગામી)

ત્રીજા ભંગવાળાને સુચારુરૂપથી સમ્યગ્જ્ઞાનાદિરૂપ ધર્મની આરાધના થાય છે, કારણ કે તે દ્રવ્યથી અને ભાવથી-બન્ને પ્રકારથી સદા જાગરૂક છે. મુનિએ સદા આ ત્રીજા ભંગવાળા બનવું જોઈએ. માટે ભગવાને કહ્યું છે કે “ સુત્તા અમુણી સયા મુણિણો જાગરંતિ । ” ( સુપ્તાઃ અમુનયઃ સદા મુનયો જાગ્રતિ ) એવા ભંગવાળાને ધર્મનું આરાધન સર્વથા છે જ નહિ, કારણ કે એ દ્રવ્ય અને ભાવ, એ બન્ને પ્રકારથી પણ ચુતેલ છે, અર્થાત્ તેમાં મિથ્યાત્વના ઉદયની પ્રણયતા છે.

દ્રવ્યની અપેક્ષાથી સુપ્તાવસ્થા નિદ્રાથી થાય છે તે નિદ્રા પાંચ પ્રકારની છે.—(૧) નિદ્રા, (૨) નિદ્રાનિદ્રા, (૩) પ્રચલા, (૪) પ્રચલાપ્રચલા, (૫) સ્ત્યાનર્દ્ધિ.

તેમાં નિદ્રાનિદ્રા, પ્રચલાપ્રચલા, અને સ્ત્યાનર્દ્ધિ, એ ત્રણ નિદ્રાઓ ઉપાને માગી દુઃખદાયી છે, આ ત્રણના ઉદયમાં ભવસિદ્ધિક (મુક્તિગામી) ઉપ પણ



સાસ્વાદનગુણસ્થાને ચાલન્તાનુવન્ધિકષાયબન્ધેન સહ ભવતિ, ક્ષયસ્તુ નવમાઽનિવૃત્તિ-  
વાદરગુણસ્થાનસ્ય નવસુ ભાગેસુ મધ્યે પ્રથમભાગસ્થકાલસ્ય કિયત્સુ સંખ્યેયાંશેષુ  
ગતેષુ સત્સુ જાયતે । નિદ્રાપ્રચલયોરુદયઃ સામાન્યદર્શનાવરણીયકર્મોદયાદ્ભવતિ ।  
વન્ધોપરમોઽપૂર્વકરણનામકાષ્ટમગુણસ્થાનકાલસ્ય સંખ્યેયભાગાન્તે જાયતે, તત્પ-  
શ્ચાન્નૂતનવન્ધાભાવાત્ । ક્ષયશ્ચ ક્ષીણમોહાખ્યદ્વાદશગુણસ્થાનસ્ય ચરમસમયદ્વયેઽવ-  
શિષ્ટે સતિ ભવતિ । એતયોરુદયસ્તુ ઉપશાન્તક્રોધોપશાન્તમોહયોરપિ ભવતીતિ નિદ્રા-  
પ્રમાદસ્ય દુરન્તત્વં વિજ્ઞેયમ્ ।

જીવ મી સમ્યક્ત્વકો પ્રાપ્ત નહીં કર સકતા હૈ । ઇનકા બન્ધ મિથ્યાદૃષ્ટિ  
નામક પ્રથમ ગુણસ્થાનમ્મં ઓર સાસ્વાદન નામક દ્વિતીય ગુણસ્થાનમ્મં  
અનન્તાનુવન્ધી કષાયકે બન્ધકે સાથ જીવોંકો હોતા હૈ, ઓર ક્ષય નવમ્મં  
અનિવૃત્તિવાદર ગુણસ્થાનકે નૌ ૯ ભાગોંમ્મંસે પ્રથમ ભાગકે કાલકે જબ  
કિનનેક સંખ્યાત અંશ વ્યતીત હો જાતે હૈં તબ હોતા હૈ ।

નિદ્રા ઓર પ્રચલાકા ઉદય સામાન્ય દર્શનાવરણીય કર્મકે ઉદયસે  
હોતા હૈ । ઇનકે બન્ધકા અભાવ અપૂર્વકરણ નામકે આઠવેં ગુણસ્થાનકે  
સંખ્યાતવેં ભાગકે અન્તમ્મં હોતા હૈ । ઉસકે વાદ ઇનકે નૂતન બન્ધકા  
અભાવ હો જાતા હૈ । ઇનકા ક્ષય મી ક્ષીણમોહ નામકે વારહવેં ગુણસ્થાનકે  
અન્તિમ દો સમયોં કે અવશિષ્ટ રહને પર હોતા હૈ । ઇન દોનોંકા ઉદય  
દસવેં ઓર ગ્યારહવેં ગુણસ્થાનક તકકે જીવોંમ્મં મી હોતા હૈ । ઇસી લિયે  
નિદ્રાપ્રમાદકી દુરન્તતા હૈ, અર્થાત્ ઇસકા અન્ત હોના બડા કઠિન હૈ ।

સમ્યક્ત્વને પ્રાપ્ત કરી શકતા નથી. તેનો બંધ મિથ્યાદૃષ્ટિ નામના પ્રથમ ગુણ  
સ્થાનમાં, અને સાસ્વાદન નામના બીજા ગુણસ્થાનમાં અનન્તાનુબંધી કષાયના  
બંધની સાથે જીવોને થાય છે, અને ક્ષય નવમાં અનિવૃત્તિવાદરગુણસ્થાનના નવ  
ભાગોમાંથી પ્રથમ ભાગના કાળના બ્યારે કેટલાક સંખ્યાત અંશ વ્યતીત થઈ  
જાય છે ત્યારે થાય છે.

નિદ્રા અને પ્રચલનો ઉદય સામાન્ય દર્શનાવરણીય કર્મના ઉદયથી થાય  
છે. તેના બંધનો અભાવ અપૂર્વકરણ નામના આઠમા ગુણસ્થાનના સંખ્યાતમાં  
ભાગના અંતમાં થાય છે. ત્યારબાદ તેને નૂતન બંધનો અભાવ થઈ જાય છે.  
તેનો ક્ષય પણ ક્ષીણમોહ નામના બારમા ગુણસ્થાનના અંતિમ બે સમયોના અવ-  
શિષ્ટ રહેવા પર થાય છે. એ બન્નેનો ઉદય દશમા અને અગીયારમા ગુણસ્થાન  
બુધીના જીવોમાં પણ થાય છે, માટે નિદ્રાપ્રમાદની દુરન્તતા છે, અર્થાત્  
તેનો અંત થવો ઘણું કઠિન છે.

દ્રવ્યભાવસુષ્પત્તિવિષયે વિવેકદક્ષઃ સુખમનુભવતિ । યથા પથિ તત્કરાદિભયે સમુપસ્થિતે વિવેકી સ્વાત્મનઃ સાપાયનિરપાયવિષયકં વિવેકમાલમ્બ્ય પલાયનાદિકાં ક્રિયાં કુર્વાણઃ સુખમાગ્મવતિ । एवं મુનિરપિ સમ્યગ્જ્ઞાનાત્મકવિવેકયત્ત્વેન સદા પ્રસાદાદિભયાદ્ જ્ઞાનાચારાદિસમારાધનાવધાનરૂપાં જાગ્રદવસ્થાં વિભ્રાણઃ શિવસુખમાગ્મવતિ । ઉક્તઞ્ચ—

દ્રવ્યસુષ્પ્તિ અને ભાવસુષ્પ્તિના વિષયમાં વિવેકદક્ષ પ્રાણી સુખકા અનુભવ કરતા હૈ, અર્થાત્ જો મુનિ ઇસ વાતકો સમજતા હૈ કિ દ્રવ્યસુષ્પ્તિ અવસ્થા અને ભાવસુષ્પ્તિ-અવસ્થા આત્માકો લિયે સદા દુઃસ્વદાયી હૈ, ઇસલિયે ઇન અવસ્થાઓકા સદા પરિહાર કરના ચાહિયે, ઇન અવસ્થાઓમાં વર્તમાન પ્રાણીકા કમી ભી કલ્યાણ નહીં હોતા હૈ । ઇસ તરહ કા વિવેક જિસ આત્મામાં ઇન દોનો અવસ્થાઓકો પ્રતિ જાગ્રત હો જાતા હૈ વહ ઇનસે સદા દૂર રહતા હૈ । જિસ પ્રકાર માર્ગ મેં ચોરાદિકોંકા ભય ઉપસ્થિત હોનેપર વિવેકી વ્યક્તિ ઇસ વાતકા વિચાર કરતા હૈ કિ ઇસ ઓર ભય હૈ ઇસ ઓર ભય નહીં હૈ । ઇસા વિચાર કર નિર્ભય સ્થાનકી ઓર માગતા હૈ ઓર સુખકી સાંસ લેતા હૈ । ઊસી પ્રકાર મુનિ ભી સમ્યગ્જ્ઞાનાત્મક-વિવેકશાલી હોનેસે સદા પ્રસાદાદિકોંકો ભયસે જ્ઞાનાચારાદિકોંકી સમ્યક્ આરાધનામાં અવધાનરૂપ જાગરૂક અવસ્થાકો ધારણ કરતા હુઆ મોક્ષ સુખકા માગી હોતા હૈ । કહા ભી હૈ—

દ્રવ્યસુષ્પ્તિ અને ભાવસુષ્પ્તિના વિષયમાં વિવેકદક્ષ પ્રાણી સુષ્પ્તિના અનુભવ કરે છે, અર્થાત્ મુનિ આ વાતકો સમજે છે કે ‘દ્રવ્યસુષ્પ્તિ અવસ્થા અને ભાવસુષ્પ્તિ અવસ્થા આત્મા માટે સદા દુઃખદાયી છે માટે તેવી અવસ્થાઓનો સદા પરિહાર કરવો જોઈએ, તેવી અવસ્થાઓમાં વર્તમાન પ્રાણીનું કદિ પણ કલ્યાણ થતું નથી’ એવા પ્રકારનો વિવેક જે આત્મામાં એ જાનને અવસ્થાઓ પ્રતિ જાગૃત થઈ જાય છે તે તેનાથી સદા દૂર રહે છે. જે પ્રકારે માર્ગમાં ચોર આદિનો ભય ઉપસ્થિત હોવા છતાં વિવેકી વ્યક્તિ એ વાતનો વિચાર કરે છે કે, આ ખાતુ ભય છે, આ ખાતુ ભય નથી, પછી નિર્ભય સ્થાનની તરફ ભાગે છે અને સુષ્પ્તિના દ્વારે લે છે. તે પ્રકારે મુનિ પણ સમ્યગ્જ્ઞાનાત્મક-વિવેકશાળી હોવાથી સદા પ્રમાણ દિકોના ભયથી જ્ઞાનાચારાદિકોની સમ્યક્ આરાધનામાં અવધાનરૂપ જાગરૂક અવસ્થાને ધારણ કરીને મોક્ષ સુષ્પ્તિ ભાગી થાય છે, કહ્યું છે.—

“ જાગરહ નરા ણિચ્ચં જાગરમાણસ્સ વહ્દણ વુદ્ધી ।

જો સુયડ સો ન ધણ્ણો, જો જગ્ગડ સો સયા ધન્નો ” । ઇતિ ૧ ॥

નિદ્રાપ્રમાદજ્ઞાનાદ્ભવતિ, તચ્ચ પ્રાણિનામદ્વિતાયેતિ શ્રીસુધર્માસ્વામી જમ્બૂ-  
સ્વામિનમાદ-‘લોચંસિ જાણ, ઇત્યાદિ ।

મૂલ-લોચંસિ જાણ અહિયાય દુઃખં, સમયં લોગસ્સ  
જાણિત્તા ઇત્થ સત્થોવરણ ॥ સૂ. ૨ ॥

છાયા-લોકે જાનીહિ અદ્વિતાય દુઃખં, સમયં લોકસ્ય જ્ઞાત્વા અત્ર શસ્ત્રોપરતઃ ॥૨॥

ટીકા-હે જમ્બૂ ! લોકે=પડ્જીવનિકાયરૂપે જિનશાસને વા, દુઃખં=દુઃખ-

“ જાગરહ નરા ણિચ્ચં, જાગરમાણસ્સ વહ્દણ વુદ્ધી ।

જો સુયડ સો ન ધણ્ણો, જો જગ્ગડ સો સયા ધન્નો ॥૧॥ ” ઇતિ ।

ગાથાકા અર્થે યહ હૈ કિ-‘હે અચ્ચો ! તુમ સદા જાગતે રહો । ક્યોં  
કિ જાગતેવાલોંકી વુદ્ધિ વદ્ધતી હૈ । જો સોના હૈ વહ ધન્ય નહોં હૈ, જો  
જાગતા હૈ વહ સદા ધન્ય હૈ ’ ॥૧॥

યહ પહિલે કહા જા ચુકા હૈ કિ સુપ્ત ઓર જાગ્રત અવસ્થા ધર્મારા-  
ધનકી અપેક્ષાસે હી સમજના ચાહિયે ॥ સૂ. ૧ ॥

નિદ્રાપ્રમાદ અજ્ઞાનસે હોતા હૈ, ઓર અજ્ઞાન પ્રાણિયોંકા સદા અદ્વિ-  
તકારી હૈ, એસા વિચાર કર શ્રી સુધર્માસ્વામી જમ્બૂસ્વામીસે કહતે હૈ-  
“ લોચંસિ જાણ ” ઇત્યાદિ ।

હે જમ્બૂ ! પડ્જીવનિકાયસ્વરૂપ ઇસ લોકમેં, અથવા જિનશાસનમેં,

“ જાગરહ નરા ણિચ્ચં, જાગરમાણસ્સ વહ્દણ વુદ્ધી ।

જો સુયડ સો ન ધણ્ણો, જો જગ્ગડ સો સયા ધન્નો ” ॥૧॥ ઇતિ ।

ગાથાનો અર્થ આ છે કે-હે ભચ્ચો ! તમે સદા જાગતા રહો, કારણ કે  
જાગવાવાળાની બુદ્ધિ વધે છે, જે મુતેલા છે તે ધન્ય નથી જે જાગતા છે તે  
જ સદા ધન્ય છે.

એ પહેલાં કહેવામાં આવ્યું છે કે સુપ્ત અને જાગૃત અવસ્થા ધર્મારાધનની  
અપેક્ષાથી જ સમજવી જોઈએ ॥ સૂ. ૧ ॥

નિદ્રાપ્રમાદ અજ્ઞાનથી થાય છે, અને અજ્ઞાન પ્રાણિઓ માટે સદા અદ્વિત-  
કારી છે. એવો વિચાર કરી શ્રી સુધર્માસ્વામી જમ્બૂસ્વામીને કહે છે-‘લોચંસિ  
જાણ ’ ઇત્યાદિ.

હે જમ્બૂ ! પડ્જીવનિકાયસ્વરૂપ આ લોકમાં અથવા જિનશાસનમાં હઃખ

યતિ=પીડયતીતિ દુઃસ્વમ્, इह દુઃસ્વશબ્દેનાજ્ઞાનં પ્રાણાતિપાતાદિરૂપં કર્મ વા ગૃહ્યતે દુઃસ્વજનકત્વાત્, તત્ અહિતાય=એહિકપારત્રિકદુઃસ્વાય જાયતે । તત્રૈહિકં દુઃસ્વં પ્રાણાતિપાતાદિસાવધાનુષ્ઠાનપ્રવૃત્તાનાં ભાવસુપ્તાનાં ભૂપાદિકૃતં વન્ધવધતાડનશૂ-  
લારોપણાદિકમ્, પારત્રિકઞ્ચ દુઃસ્વં નરકનિગોદાદિયાતનારૂપમિતિ એહિકપારત્રિક-  
દુઃસ્વહેતુભૂતમજ્ઞાનં કર્મ વાઽસ્તીતિ ત્વં જાનીહિ=જપરિજ્ઞયા બુદ્ધ્યસ્વ । એતસ્ય ફલઞ્ચ

દુઃસ્વ-અજ્ઞાન અથવા પ્રાણાતિપાતાદિરૂપ કાર્ય જીવોંકે લિયે ઇસ લોકમેં તથા પરલોકમેં અહિતકારી માને ગયે હેં । યહાં 'દુઃસ્વ' શબ્દકા અર્થ-  
“દુઃસ્વયતિ=પીડયતીતિ દુઃસ્વમ્” જો જીવોંકો પીડા પહુંંચાવે એસા અજ્ઞાન, અથવા હિંસાદિક પાપકર્મ-હે । અજ્ઞાન અથવા હિંસાદિક, જીવોંકો સદા દુઃસ્વદાયી હોતે હેં, ઇસ અપેક્ષાસે અજ્ઞાનાદિક દુઃસ્વકે કારણ હેં । ફિર મી યહાં પર ઇન્હેં જો દુઃસ્વરૂપ કહા ગયા હે વહ કારણમેં કાર્યકે ઉપ-  
ચારસે કહા ગયા હે । ઇન પ્રાણાતિપાતાદિકરૂપ સાવધ અનુષ્ઠાનોમેં પ્રવૃત્તિ કરનેવાલે ભાવસુપ્ત જીવોંકો ઇસ લોકમેં રાજા આદિકે દ્વારા કિયે ગયે વન્ધ, વધ, તાડન ઓર શૂલારોપણ આદિ અનેક કષ્ટ ભોગને પડતે હેં, તથા પરલોકમેં નરકનિગોદાદિકની યાતનાઈ સહની પડતી હેં । ઇસલિયે જમ્બૂસ્વામીકો ઉદ્દેશ કરકે સુધર્માસ્વામી કહતે હેં—

હે જમ્બૂ ! ઇસ લોક ઓર પરલોકસમ્બન્ધી અનેક દુઃસ્વોંકે કારણ પ્રાણાતિપાતાદિક કર્મ તથા અજ્ઞાન હેં, એસા તુમ જપરિજ્ઞાસે જાનો ।

=અજ્ઞાન અથવા પ્રાણાતિપાતાદિકરૂપ કાર્ય આ લોકમાં તથા પરલોકમાં હોવો માટે અહિતકારી માનવામાં આવેલ છે. અહીં દુઃસ્વ શબ્દનો અર્થ-“ દુઃસ્વયતિ પીડ-  
યતીતિ દુઃસ્વમ્ ” જે હોવોને પીડા આપે એવું અજ્ઞાન અને હિંસાદિક પાપકર્મ છે. અજ્ઞાન અથવા હિંસાદિક કર્મ હોવોને સદા દુઃસ્વદાયી થાય છે. આ અપેક્ષાથી અજ્ઞા-  
નાદિક, દુઃસ્વના કારણ છે તે પણ આ ઠેકાણે તેને જે દુઃસ્વરૂપ કહેવામાં આવેલ છે તે કારણમાં કાર્યના ઉપચારથી કહેવામાં આવેલ છે. આ પ્રાણાતિપાતાદિકરૂપ સાવધ અનુષ્ઠાનોમાં પ્રવૃત્તિ કરવાવાળા ભાવસુપ્ત હોવોને આ લોકમાં રાજા આદિ દ્વારા કરવામાં આવેલ બંધ વધ તાડન અને શુળી આદિ અનેક કષ્ટોને ભોગ-  
વવા પડે છે. તથા પરલોકમાં નરકનિગોદાદિકની યાતનાઓ સહન કરવી પડે છે. એથી જમ્બૂસ્વામીને ઉદ્દેશ કરીને સુધર્માસ્વામી કહે છે.—

હે જમ્બૂ ! આ લોક અને પરલોક સંબંધી અનેક દુઃસ્વોંકો કારણ પ્રાણા-  
તિપાતાદિક કર્મ તથા અજ્ઞાન છે, એવું જપરિજ્ઞાથી જાણો. એ જાણવારૂપ

દુઃસ્વહેતોરજ્ઞાનરૂપાદ્ દ્રવ્યભાવસ્વાપાન્નિવર્તનમિતિ । તતઃ કિં કુર્યાદિત્યાહ-લોક-  
સ્યે-ત્યાદિ 'લોકસ્ય=પ્રાણિસદ્વસ્ય સમયમ્=આચારં જ્ઞાત્વા=દુઃસ્વહેતું વિચાર્ય,  
લોકો હિ ભોગેચ્છયા પ્રાણિપીડનાદિજનિતં કર્મ પરિગૃહ્ય નરકેષૂત્પદ્યતે, તતઃ કથં  
ચિન્નિષ્ક્રાન્તો ધર્મોપાર્જનહેતુભૂતં મનુષ્યજન્મવાપ્ય પુનરપિ તત્તદેવ કર્મ કરોતિ યેન  
યેન પુનરથોઽધઃ સ્થાનં વ્રજતિ, ન કદાચિત્સંસારદાવાનલાદ્ વહિર્યાતીતિ લોકાચારઃ ।

इस जाननेरूप क्रियाका फल अज्ञानरूप द्रव्यनिद्रा और भावनिद्रा से  
जीवका निवृत्त होना है । जीव जब इनसे निवृत्तिसंपन्न हो जाता है तब  
वह यह समझने लगता है कि-यह लोक भोगोंकी इच्छासे प्राणिपीडन  
आदि कृत्य करता है, और इस प्रकारके कृत्य करनेसे वह अशुभ क-  
र्मोंका आश्रय कर बन्धक बनता है । उनके उदयमें इसको नरकादि अनेक  
कुगतियोंमें जन्म मरण करना पड़ता है । वहाँसे निकलने पर यदि इसको  
किसी शुभ कर्मके उदयसे मनुष्यभवकी-जिसमें कि इसको धर्मोपार्जन  
करनेका अवसर मिलता है-प्राप्ति हो जाती है तो भी यह जीव बारंबार  
उन्हीं कुकृत्योंको करता है, जिनकी वजहसे इसको पुनः नरकादि गतियों  
में जाना पड़ता है । इस तरहसे इस जीवका कभी भी संसाररूपी दावा-  
नलसे बाहर आना नहीं हो सकता है । यही इस लोकका आचार है । इस  
आचारको-जिससे कि इसको अनेक अनेक संकटोंका सामना करना पड़ता  
है-जान कर तुम इस द्रव्यरूप एवं भावरूप शस्त्रसे सदा निवृत्त होओ ।

ક્રિયાનું ફળ દુઃખનું કારણ જે અજ્ઞાનરૂપ દ્રવ્યનિદ્રા અને ભાવનિદ્રા છે તેનાથી  
છવને નિવૃત્ત થવું છે. છવ બ્યારે તેનાથી નિવૃત્તિસંપન્ન થઈ બીય છે ત્યારે તે  
એવું સમજવા લાગે છે કે આ લોક, ભોગોની ઇચ્છાથી પ્રાણિ-પીડન આદિ કૃત્ય  
કરે છે અને આવા પ્રકારનું કૃત્ય કરવાથી તે અશુભ કર્મોનો આશ્રય કરી બંધક  
બને છે. તેના ઉદયમાં તેને નરકાદિ અनेક કુગતિઓમાં જન્મ મરણ કરવું પડે  
છે. ત્યાંથી નિકળીને કદાચ કોઈ શુભ કર્મના ઉદયથી મનુષ્યલવની-કે જેમાં  
તેને ધર્મોપાર્જન કરવાનો અવસર મળે છે-પ્રાપ્તિ થઈ બીય છે તો પણ તે છવ  
વારંવાર તેજ કુકૃત્યો કરે છે કે જેનાથી તેને પુનઃ નરકાદિ ગતિઓમાં જવું  
પડે છે. આવી રીતે આ છવને કદિ પણ સંસારરૂપી દાવાનળથી બહાર આવવાનું  
બની શકતું નથી એ જ આ લોકનો આચાર છે. આવા આચારને-કે જેનાથી  
તેને અनेક સંકટોનો સામનો કરવો પડે છે-બાણીને તમે આ દ્રવ્યરૂપ તેમજ  
ભાવરૂપ શસ્ત્રથી સદા નિવૃત્ત થાઓ.

यद्वा लोकस्य=जिनशासनस्य समयम्=आचारं ज्ञानाचारादिरूपं पञ्चविधं ज्ञात्वा=मोक्षसुखहेतुभूतं सम्यगवबुध्य, अत्र=पङ्जीवनिकाये शस्त्रोपरतः=शस्त्रात् द्रव्यभावभेदभिन्नात् उपरतः=निवृत्तो भव । धर्मजागरणेन जागृहीत्यर्थः ।

सर्वो हि लोकः शब्दादिविषयभोगेच्छया प्राणातिपातादिकं नानाविधं कर्म करोति, तेन नरकादियातनारथानेषु घोरतरं दुःखमाप्नोति, अतः पङ्जीवनिकाये शस्त्रोपरतो भवेति भावः ।

अथवा लोकस्येति पठ्याः सप्तम्यर्थे विधानात् लोके=प्राणिसङ्घे 'समयं' इत्यस्य समतामितिच्छाया तेन समतां स्वकीयदुःखादिना परदुःखादेस्तुल्यतां,

“समयं लोगस्स जाणित्ता इत्थ सत्थोवरण” इसका यह भी अर्थ होता है कि—‘हे जम्बू ! तुम जिनशासनके ज्ञानाचार आदिरूप पांच प्रकारके आचारको मोक्षसुखका कारण अच्छी तरहसे जानकर पङ्जीवनिकायके विषयमें द्रव्य और भावरूप शस्त्रसे निवृत्त होओ, अर्थात्—सदा धर्मका आचरण करनेमें सतर्क रहो । भावनिद्रासे युक्त न बनो । सारांश इसका यही है कि—यह समस्त लोक शब्दादिक विषय भोगों की इच्छासे प्राणातिपातादिक अनेक प्रकारके दुष्कार्योंको करता है, उन से नरकादिक जो अनेक यातनाके स्थान हैं उनमें घोरानिघोर दुःखोंको भोगता है । इसलिये हे जम्बू ! पङ्जीवनिकायके विषयमें शस्त्रसे सदा अलग रहो ।

अथवा “लोगस्स” इस पट्टी विभक्तिके स्थानमें “लोके” इस सप्तमी विभक्तिका पाठ, तथा ‘समयं’की छाया “समतां” मान कर ऐसा अर्थ हो जाता है कि—हे जम्बू ! तुम सदा इस बानका भली प्रकार

“समयं लोगस्स जाणित्ता इत्थ सत्थोवरण” એનો એ પણ અર્થ થાય છે કે—હે જમ્બૂ ! તમે જીનશાસનના જ્ઞાનાચાર આદિરૂપ પાંચ પ્રકારના આચારને મોક્ષ-સુખનું કારણ સારી રીતે બાણીને પરજીવનિકાયના વિષયમાં દ્રવ્ય અને ભાવરૂપ શસ્ત્રથી નિવૃત્ત થાઓ. અર્થાત્ સદા ધર્મનું આચરણ કરવામાં સતર્ક રહો. ભાવ નિદ્રાથી યુક્ત ન બનો. સારાંશ તેનો એ છે કે—આ સમસ્ત લોક, શબ્દાદિક વિષય-ભોગોની ઈચ્છાથી પ્રાણાતિપાતાદિક અनेક પ્રકારના દુષ્કાર્યો કરે છે, તેનાથી નરકાદિક જે અનેક યાતનાના સ્થાન છે તેમાં ઘોરતિઘોર દુઃખો ભોગવે છે. તે નાટ્રે હે જમ્બૂ ! પરજીવનિકાયના વિષયમાં શસ્ત્રથી સદા અલગ રહો.

અથવા “લોગસ્સ” આ છટ્ટી વિભક્તિના સ્થાનમાં “લોકે” આ સપ્તમી વિભક્તિનો પાઠ તથા ‘સમયં’ની છાયા “સમતાં” માનીને એવો અર્થ થઈ શકે છે કે—હે જમ્બૂ ! તમે સદા આ બાનનો ભલી પ્રકારે વિચાર કરે કે જે પ્રકારે



‘યથા મમ દુઃસ્વાદિકં ભવતિ તથૈવાન્યેષામપ્યેકેન્દ્રિયાદીનાં મૃત્યુમીરૂપાં સુખેચ્છનાં તદુત્પદ્યતે’ इत्यनुभवसिद्धामात्मोपमां ज्ञात्वा अत्र=अस्मिन् षड्जीवनिकायरूपे लोके शस्त्रोपरतो भवेत्यर्थः ॥ सू० २ ॥

षड्जीवनिकायलोके शस्त्रोपरतः सन् यथा मुनित्वं प्राप्नोति तदाह—  
‘जस्सिमे’ इत्यादि ।

મૂલમ્—જસ્સિમે સદા ય રૂચા ય રસા ય ગંધા ય ફાસા ય અભિસમન્નાગયા ભવંતિ, સે આયવં નાણવં વયવં ધમ્મવં વંભવં પન્નાણેહિં પરિયાણઙ્ગ લોચં, મુણીતિ વુચ્ચે, ધમ્મવિઙ્ગ ઉજ્જૂ, આવટ્ઠસોયસંગમભિજાણઙ્ગ ॥ સૂ૦ ૩ ॥

વિચાર કરો કે જિસ પ્રકાર હમ્ને હિંસાદિક કારણોંકે ઉપસ્થિત હોનેપર કષ્ટકા અનુભવ હોતા હૈં ઉસી પ્રકાર દૂસરે એકેન્દ્રિયાદિક પ્રાણિયોંકો—જો સદા મૃત્યુસે ડરતે હૈં ઔર સુખકે અભિલાષી હૈં—હિંસાદિક કારણોંકે ઉપસ્થિત હોનેપર દુઃખ હોતા હૈં । ઇસ પ્રકાર અનુભવસિદ્ધ—“આત્મનઃ પ્રતિકૂલાનિ પરેષાં ન સમાચરેત્” ઇસ વાક્યકો અપને હૃદયપટલ પર ઉતાર કર કમી મી કિસી મી જીવકો કષ્ટ ન પહુંચે એસી પ્રવૃત્તિ કરો । પરકે દુઃખોંકા અપને દુઃખોંકે સાથ મિલન કર સદા જ્ઞાનીકો ઇસ વાતકા દૃઢ વિચાર કરના ચાહિયે કે સંસારકે એકેન્દ્રિયસે લગા કર પંચેન્દ્રિય પર્યન્તા સમસ્ત જીવ મૃત્યુસે ડરતે હૈં ઔર સુખકો ચાહતે હૈં, ઇસલિયે ષડ્જીવનિકાયરૂપ લોકમ્ને અપની પ્રવૃત્તિ સદા ચતનાશાલી બનાની ચાહિયે ॥ સૂ૦ ૨ ॥

અમને હિંસાદિક કારણો ઉપસ્થિત થવાથી કષ્ટનો અનુભવ થાય છે તે પ્રકારે ખીન્ન એકેન્દ્રિયાદિક પ્રાણીઓને—કે જે સદા મૃત્યુથી ડરે છે અને સુખના અભિલાષી છે—હિંસાદિક કારણો ઉપસ્થિત થવાથી દુઃખ થાય છે, આવા પ્રકારે અનુભવસિદ્ધ—“આત્મનઃ પ્રતિકૂલાનિ પરેષાં ન સમાચરેત્” આ વાક્યને પોતાના હૃદયમાં ઉતારીને કોઈ વખત કોઈ પણ જીવને કષ્ટ ન પહોંચે તેવી પ્રવૃત્તિ કરો. પારકાના દુઃખોને પોતાના દુઃખોની સાથે મેળવી સદા જ્ઞાનીએ એ વાતનો દૃઢ નિશ્ચય કરવો જોઈએ કે સંસારના એકેન્દ્રિયથી લઈ પંચેન્દ્રિય પર્યન્ત સમસ્ત જીવ મૃત્યુથી ડરે છે અને સુખને ચાહે છે માટે ષડ્જીવનિકાય રૂપ લોકમાં પોતાની પ્રવૃત્તિ સદા ચતનાશાળી બનાવવા જોઈએ ॥ સૂ૦ ૨ ॥



छाया—यस्येमे शब्दाश्च रूपाणि च रसाश्च गन्धाश्च स्पर्शाश्चाभिसमन्वागता भवन्ति, स आत्मवान् ज्ञानवान् वेदवान् धर्मवान् ब्रह्मवान् प्रब्रानैः परिजानाति लोकम्, मुनिरित्युच्यते, धर्मविद् ऋजुः, आवर्तस्रोतःसद्गमभिजानाति ॥ सू० ३॥

टीका—यस्य मुनेः, इमे=प्रत्यक्षमनुभूयमानाः, शब्दाः रूपाणि रसा गन्धाः स्पर्शाश्च अनुकूलप्रतिकूलरूपाः, अभिसमन्वागताः—अभि=आभिमुख्येन, सम्यग्= इष्टानिष्टावधारणेन, अनु=शब्दादिस्वरूपावगमात् पश्चात्, आगताः=विज्ञाताः, भवन्ति—शब्दादिविषयाः परमार्थतः संसारकारणतयाऽऽत्मकल्याणाय न भवन्ति,

षडजीवनिकायरूप इस लोकमें द्रव्य और भावरूप शस्त्रसे उपरत होता हुआ जीव जिस प्रकारसे मुनिपनेको पाता है उसीका प्रतिपादन करते हैं—‘जस्सिमे’ इत्यादि ।

जिस मुनिके लिये प्रत्यक्ष अनुभूत शब्द; रूप, रस, गन्ध और स्पर्श, ये पौद्गलिक गुण अनुकूल और प्रतिकूल होते हुए इष्ट और अनिष्टकी कल्पनाके कारण नहीं बनते हैं, अर्थात् वे शब्दादिक विषय पुद्गलके गुण हैं, इनसे मेरी आत्माका कोई भी उपकार या अपकार नहीं हो सकता है । इनमें इष्टानिष्टकी कल्पना करनेसे ये मेरे लिये संसारका कारण बनेंगे, क्यों कि ये स्वयं संसारके ही कारण हैं—मुक्तिके नहीं । मुक्तिके कारण वे ही होते हैं जिनसे इस आत्माका कल्याण होता है । इनसे तो मेरी आत्माका कुछ भी कल्याण नहीं हो सकता है, अतः इनमें इष्टानिष्टकी कल्पना कर मैं क्यों अपना बिगाड़ करूँ । इनके स्वरूपको जाननेके बाद इस प्रकारके दृढ़ अध्यवसायसे इन शब्दादिकों

षड्जीवनिकायरूप आ लोकमां द्रव्य अने भावरूप शस्त्रधी उपरत जनीने छव ने प्रकारे मुनिपणाने प्राप्त थाय छे तेनुं प्रतिपादन करे छेः—‘जस्सिमे’ इत्यादि.

जे मुनिना भाटे प्रत्यक्ष अनुभूत—शब्द, रूप, रस, गंध अने स्पर्श, जे पौद्गलिक गुण अनुकूल अने प्रतिकूल होवा छतां इष्ट अने अनिष्टनी कल्पनाना कारण जनता नथी. अर्थात् ते शब्दादिक विषय पुद्गलने गुण छे. तेनाधी भारा आत्माने कोई पण उपकार या अपकार जनी शकतो नथी. तेमां इष्टानिष्टनी कल्पना करवाधी जे भारा भाटे संसारनु कारण जनशे. कारण जे जे स्वयं न संसारनु न कारण छे, मुक्तिनु नहि. मुक्तिनु कारण ते जने छे जेनाधी आ आत्मानुं कल्याण थाय छे, नानाधी तो भारा आत्मानुं कोई पण कल्याण जनी शकतुं नथी. भाटे तेमां इष्टानिष्टनी कल्पना करीने आ भाटे चेताने जगाद कई तेना स्वयंने कारण भाद आ प्रकारना दृढ़ अध्यवसायधी ते शब्दादिकेमां

અતસ્તત્ર મનોજ્ઞામનોજ્ઞવિષયેષુ યસ્ય રાગદ્વેષૌ નોત્પદ્યેતે इत्यर्थः, સ આત્મવાન્= જ્ઞાનાદિગુણસમ્પન્નઃ, યદ્વા-આત્મહિતાચરણપ્રવૃત્તિઃ, શબ્દાદિવિષયેષુ પ્રવર્તમાનમાત્માનં તેભ્યઃ પૃથક્કૃત્ય તુપાદ્ધાન્યમિવ રક્ષિતેત્યર્થઃ । જ્ઞાનવાન્=હેયોપાદેયવિવેકવાન્, શબ્દાદિવિષયે રાગદ્વેષૌ કારણં, રાગદ્વેષતઃ કર્મબન્ધઃ, તસ્માત્ સંસારપરિભ્રમણં ભવતીત્યેવં વિજ્ઞાતેત્યર્થઃ । તથા વેદવાન્ વેદ્યતે જ્ઞાયતે જીવાજીવાદિસ્વરૂપમનેનેતિ વેદઃ=આચારાદ્યાગમઃ, સોઽસ્યાસ્તીતિ વેદવાન્-આચારાદ્યાગમાધિગન્તેત્યર્થઃ, તથા-ધર્મવાન્-દુર્ગતૌ પ્રપતન્તં જીવં ધારયતિ રક્ષતીતિ ધર્મઃ-શ્રુતચારિત્રલક્ષણઃ

મેં-ચાહે યે અનુકૂલ હોં ચાહે પ્રતિકૂલ હોં-જિસ પ્રાણીકો રાગ ઓર દ્વેષ નહીં હોતે હેં વહી પ્રાણી આત્મવાન્ હૈ, અર્થાત્ જ્ઞાનાદિ ગુણોંસે સંપન્ન હૈ, અથવા આત્મહિતકારી આચરણમેં લવલીન હૈ । જિસ પ્રકાર તુષસે ધાન્ય અલગ કિયા જાતા હૈ ઉસી પ્રકાર શબ્દાદિ વિષયોંમેં પ્રવર્તમાન અપની આત્માકો ઉનસે અલગ કર વહ ઉસકી રક્ષા કરનેવાલા હૈ । જ્ઞાનવાન્ હૈ-હેય ઓર ઉપાદેયકે વિવેકવાલા હૈ । ઇષ્ટ ઓર અનિષ્ટ શબ્દાદિક વિષયોંમેં પ્રવૃત્તિ ઓર નિવૃત્તિકે કારણ રાગ ઓર દ્વેષ હેં । રાગ ઓર દ્વેષસે નવીન કર્મોંકા બન્ધ, ઓર ઇસસે જીવોંકા સંસારમેં પરિભ્રમણ હોતા હૈ । વેદવાન્ હૈ-જીવાદિક પદાર્થોંકા સ્વરૂપ જિસસે જાના જાતા હૈ ઉસકા નામ વેદ હૈ, વે આચારાદ્યા આદિ આગમ હેં, ઇનકા જો જાન-નેવાલા હૈ ઉસકા નામ વેદવાન્ હૈ । ધર્મવાન્ હૈ-દુર્ગતિમેં પડતે હુએ જીવોં કી રક્ષા કરતા હૈ ઉસકા નામ ધર્મ હૈ, વહ ધર્મ શ્રુતચારિત્રરૂપ હૈ, યહ

લલે તે અનુકૂળ હોય કે પ્રતિકૂળ હોય, જે પ્રાણીને રાગ અને દ્વેષ થતો નથી. તે પ્રાણી જ આત્મવાન છે. અર્થાત્ જ્ઞાનાદિ ગુણોથી સંપન્ન છે, અથવા આત્મ-હિતકારી આચરણમાં લવલીન છે. જેવી રીતે તુષથી ધાન્ય અલગ કરવામાં આવે છે તેવી રીતે શબ્દાદિક વિષયોમાં પ્રવર્તમાન ચોતાના આત્માને તેનાથી અલગ કરી તે તેની રક્ષા કરવાવાળા છે, જ્ઞાનવાન્ છે-હેય અને ઉપાદેયના વિવેકવાળા છે-ઇષ્ટ અને અનિષ્ટ શબ્દાદિક વિષયોમાં પ્રવૃત્તિ અને નિવૃત્તિના કારણ રાગ અને દ્વેષ છે, રાગ અને દ્વેષથી નવીન કર્મોનો બંધ અને તેનાથી હવોનું સંસારમાં પરિભ્રમણ થાય છે. આવા પ્રકારના જ્ઞાનથી તે સંપન્ન છે. વેદ-વાન્ છે-જીવાદિક પદાર્થોના સ્વરૂપ જેનાથી જાણી શકે છે તેનું નામ વેદ છે. તે આચારાંગ આદિ આગમ છે. તેના જે જાણનાર છે તેનું નામ વેદવાન્ છે. ધર્મવાન્ છે-દુર્ગતિમાં પડતા હવોની જે રક્ષા કરે છે તેનું નામ ધર્મ છે. તે ધર્મ શ્રુતચારિત્રરૂપ છે. તે જેની પાસે છે અર્થાત્ જે આ ધર્મનો પાલક છે, તેનું

સોઽસ્યાસ્તીતિ ધર્મવાન્ । તથા બ્રહ્મવાન્-બ્રહ્મ=મોક્ષસુખં, તદસ્યાસ્તીતિ બ્રહ્મવાન્-મોક્ષસુખાભિજ્ઞાં ઇત્યર્થઃ, યદ્વા બ્રહ્મ=અષ્ટાદશવિધં બ્રહ્મચર્યં, તદસ્યાસ્તીતિ બ્રહ્મવાન્, યદ્વા-બ્રહ્મ=કામસેવનપરિત્યાગઃ તદસ્યાસ્તીતિ બ્રહ્મવાન્, ઇત્યંભૂતઃ સંયમી પ્રજ્ઞાનૈઃ=પ્રકર્ષેણ જ્ઞાયતે જેયં જીવાજીવાદિ યથાવસ્થિતસ્વરૂપં યૈસ્તાનિ પ્રજ્ઞાનાનિ-મત્યાદીનિ, તૈર્લોકં=પદ્મજીવનિકાયસ્વરૂપં પરિજાનાતિ । યદ્વા લોકં=શબ્દાદિવિષયલોકં પરિજાનાતિ=જ્ઞપરિજ્ઞયા બન્ધકારણત્વેન વિજ્ઞાય પ્રત્યાખ્યાનપરિજ્ઞયા પરિહરતીત્યર્થઃ ।

યઃ સ્વત્વાત્મવાન્ જ્ઞાનવાન્ વેદવાન્ ધર્મવાન્ બ્રહ્મવાન્ સ એવ ચ મુનિરિત્યુચ્યતે ।  
કિં ચ-ધર્મવિત્=જીવાજીવદ્રવ્યસ્વભાવાભિજ્ઞઃ, ઋજુઃ=ઋજુમાર્ગસ્ય સમ્યગ્દર્શનજ્ઞાન-  
જિસકે પાસ હૈ, અર્થાત્ જો હિસ ધર્મકા પાલક હૈ ઉસકા નામ ધર્મવાન્ હૈ । બ્રહ્મવાન્ હૈ-બ્રહ્મ શબ્દકા અર્થ મોક્ષસુખ હૈ, વહ જિસકો હૈ ઉસકા નામ બ્રહ્મવાન્ હૈ અર્થાત્ મોક્ષસુખકા જ્ઞાતા હૈ, અથવા ૧૮ અઠારહ પ્રકારકે બ્રહ્મચર્યકા જો પાલક હોતા હૈ વહ ભી બ્રહ્મવાન્ હૈ, અથવા જો મૈથુનકા સર્વથા પરિત્યાગી હોતા હૈ વહ ભી બ્રહ્મવાન્ હૈ । હિસ પ્રકારકા સંયમી અચ્છી તરહસે જીવાદિક પદાર્થોંકે સ્વરૂપકો પ્રકાશિત કરનેવાલે પ્રજ્ઞાનોં-મત્યાદિક જ્ઞાનોં-કે દ્વારા લોક-પદ્મજીવનિકાય-કે સ્વરૂપકો જાનતા હૈ । અથવા લોક-શબ્દાદિકવિષયરૂપ લોકકો જ્ઞપરિજ્ઞાસે બન્ધકા કારણ જાનકર પ્રત્યાખ્યાનપરિજ્ઞાસે ઉનકા પરિહાર-ત્યાગ કર દેતા હૈ । જો આત્મવાન્, જ્ઞાનવાન્, વેદવાન્, ધર્મવાન્ ઓર બ્રહ્મવાન્ હૈ વહી મુનિ કહા જાતા હૈ ।

કિન્ન-જો ધર્મવિત્=જીવ-અજીવ દ્રવ્યકે સ્વરૂપકા જ્ઞાતા હૈ, તથા

નામ ધર્મવાન્ છે, બ્રહ્મવાન્ છે-બ્રહ્મ શબ્દનો અર્થ મોક્ષસુખ છે. જે તેને છે તેનું નામ બ્રહ્મવાન્ છે. અર્થાત્ મોક્ષસુખનો જ્ઞાતા છે, અથવા ૧૮ અઠાર પ્રકારના બ્રહ્મચર્યનો પાલક છે તે પણ બ્રહ્મવાન્ છે. અથવા જે મૈથુનનો સર્વથા પરિત્યાગી થાય છે તે પણ બ્રહ્મવાન્ છે. આવા પ્રકારનો સંયમી સારી રીતે જીવાદિક પદાર્થોના સ્વરૂપને પ્રકાશિત કરવાવાળાં પ્રજ્ઞાન-મત્યાદિક જ્ઞાનોદ્વારા લોક-પદ્મજીવનિકાય-ના સ્વરૂપને જાણે છે, અથવા લોક-શબ્દાદિકવિષયરૂપ લોકને જ્ઞપરિજ્ઞાથી બંધનું કારણ બાળીને પ્રત્યાખ્યાનપરિજ્ઞાથી તેનો પરિહાર-ત્યાગ કરે છે. જે આત્મવાન્, જ્ઞાનવાન્, વેદવાન્, ધર્મવાન્ અને બ્રહ્મવાન્ છે તેને જ મુનિ કહેવામાં આવે છે.

વળી-જે ધર્મવિત્-જીવ અજીવ દ્રવ્યના સ્વરૂપનો જ્ઞાતા છે તથા ઋજુ

ચારિત્રલક્ષણસ્યાવલમ્બનાદકુટિલઃ, યદ્વા-સરલચિત્તઃ, આવર્તસ્રોતઃસદ્ગમ્=આવર્તો-  
ભાવાવર્તો જન્મજરામરણાધિવ્યાધિવ્યસનોપનિપાતરૂપઃ સંસારઃ-ઉક્તઃ—

“રાગદ્વેષવશાચિદ્વં, મિથ્યાદર્શનદુસ્તરમ્ ।

જન્માવર્તે જગત્ ક્ષિપ્તં, પ્રમાદાદ્ ભ્રામ્યતે મૃશમ્ ” ॥ ૧ ॥ ઇતિ ।

સ્રોતશ્ચાત્ર ભાવસ્રોતઃ-શબ્દાદિવિષયાભિલાષઃ, આવર્તશ્ચ સ્રોતશ્ચાવર્તસ્રોત-  
સી, તયોઃ સદ્ગમ્=રાગદ્વેષકૃતઃ સમ્બન્ધઃ, તમ્ અભિજાનાતિ । સંસારસ્રોતઃસદ્ગમ્  
રાગદ્વેષકૃતો ભવતીતિ વિદ્વાય યસ્તં પરિહરતિ, સ એવાવર્તસ્રોતસોઃ સદ્ગમ્ વિજાના-  
તીત્યર્થઃ ॥ સૂ. ૩ ॥

ઋજુઃ=સમ્યગ્દર્શન સમ્યગ્જ્ઞાન ઔર સમ્યક્ચારિત્રરૂપ મોક્ષકે સરલ  
માર્ગકે અવલમ્બનસે ઋજુપરિણામી-અકુટિલ, અથવા સરલચિત્ત હૈ  
વહી હસ વાતકો જાન સકતા હૈ કિ-આવર્ત ઔર સ્રોતકા સમ્બન્ધ  
રાગદ્વેષકૃત હૈ । આવર્ત દો પ્રકારકા હૈ-એક દ્રવ્ય-આવર્ત ઔર દૂસરા  
ભાવ-આવર્ત, જલપ્રવાહમેં મેંવર ડઠતા હૈ વહ દ્રવ્ય-આવર્ત હૈ । જન્મ,  
જરા, મરણ, આધિ, વ્યાધિ આદિ અનેક ઉપદ્રવોંકા સ્થાનરૂપ સંસાર  
ભાવ-આવર્ત હૈ । કહા મી હૈ—

“રાગદ્વેષવશાચિદ્વં, મિથ્યાદર્શનદુસ્તરમ્ ।

જન્માવર્તે જગત્ ક્ષિપ્તં, પ્રમાદાદ્ ભ્રામ્યતે મૃશમ્ ” ॥ ૧ ॥ ઇતિ ।

અર્થાત્—યહ જગત્ રાગ ઔર દ્વેષસે વ્યાપ્ત હૈ, મિથ્યા દર્શનસે  
યુક્ત હોનેકે કારણ યહ દુસ્તર હૈ, જન્મરૂપી આવર્તમેં પડા હુઆ હૈ ઔર  
પ્રમાદસે હતસ્તતઃ ચારોં ગતિઓમેં ચક્કર કાટતા ફિરતા હૈ ॥ ૧ ॥

સમ્યગ્દર્શન સમ્યગ્જ્ઞાન અને સમ્યક્ચારિત્રરૂપ મોક્ષના સરલ માર્ગના અવલ-  
મ્બનથી ઋજુપરિણામી-અકુટિલ અથવા સરલચિત્ત છે તે જ આ વાતને બાણી  
શકે છે કે-આવર્ત અને સ્રોતનો સંબંધ રાગદ્વેષકૃત છે. આવર્ત એ પ્રકારના  
છે. એક દ્રવ્ય-આવર્ત અને બીજું ભાવ-આવર્ત. જળ પ્રવાહમાં જે લેવર પડે  
છે તે દ્રવ્ય-આવર્ત છે. જન્મ, જરા, મરણ, આધિ, વ્યાધિ આદિ અનેક ઉપદ્રવોના  
સ્થાનરૂપ સંસાર ભાવ-આવર્ત છે. કહ્યું છે—

“રાગદ્વેષવશાચિદ્વં, મિથ્યાદર્શનદુસ્તરમ્ ।

જન્માવર્તે જગત્ ક્ષિપ્તં, પ્રમાદાદ્ ભ્રામ્યતે મૃશમ્ ” ॥ ૧ ॥

અર્થાત્ આ જગત્ રાગ અને દ્વેષથી વ્યાપ્ત છે. મિથ્યાદર્શનથી યુક્ત  
હોવાને કારણે તે દુસ્તર છે. જન્મરૂપી આવર્તમાં પડેલ છે અને પ્રમાદથી  
ચારે ગતિઓમાં પરિભ્રમણ કરે છે ॥ ૧ ॥

આવર્તસ્રોતસોઃ સદ્ગમભિજાનન્ કં ગુણં પ્રાપ્નોતીત્યાહ—‘ સીઝસિણચ્ચાઈ’  
 ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્—સીઝસિણચ્ચાઈ સે નિગ્ગન્થે અરરરરરરરરરર ફરુસયં  
 નો વેણ્ઠ, જાગર વેરોવરણ વીરે, ઇવં દુઃસ્વા પમુક્કસિ ॥ સૂ૦ ૪ ॥

છાયા—શીતોષ્ણત્યાગી સ નિર્ગન્થઃ અરતિરતિસહઃ પરુપતાં નો વેત્તિ, જાગરો  
 વૈરોપરતઃ, વીર ઇવં દુઃસ્વાત્ પ્રમોક્ષ્યસે ॥ ૩ ॥

ટીકા—સ નિર્ગન્થઃ=વાહ્યાભ્યન્તરગ્રન્થરહિતો નિષ્પરિગ્રહ ઇતિ યાવત્, શીતો-  
 ષ્ણત્યાગી=અનુકૂલપ્રતિકૂલપરિપદં સહમાનઃ, અનુકૂલેઽનભિલાપી, પ્રતિકૂલે  
 ચાનુદ્વેગીત્યર્થઃ । અરતિરતિસહઃ=અરતિં સંયમે, રતિમસંયમે સહમાનઃ—સંયમારાધને  
 પરીપહોપસર્ગતઃ કદાચિદરતિરુત્પદ્યતે, કદાચિચ્ચાસંયમે રતિરુત્પદ્યતે, તામરતિં રતિં

સ્રોત ભી દ્રવ્ય ઓર ભાવકે ભેદસે દો પ્રકારકા હૈ । નદી આદિકા  
 પ્રવાહ દ્રવ્યસ્રોત હૈ । શબ્દાદિક વિષયોંકી અભિલાપા ભાવસ્રોત હૈ ।  
 ઇન દોનોંકા સમ્બન્ધ રાગ ઇવં દ્વેપસે હુઆ હૈ, ઇસ વાતકો જાન કર  
 જો ડનકે ડસ સમ્બન્ધકા પરિહાર—ત્યાગ કર દેતા હૈ વહી આવર્ત ઓર  
 સ્રોતકે સંગકા પરિજ્ઞાતા કહા જાતા હૈ ॥ સૂ૦ ૩ ॥

જો મુનિ ઇસ આવર્ત ઓર સ્રોતકે સમ્બન્ધકો જાન લેતા હૈ વહ  
 કિસ ગુણકો પ્રાપ્ત કરતા હૈ ? સો કહતે હૈ—‘ સીઝસિણચ્ચાઈ’ ઇત્યાદિ ।

વાહ્ય ઓર આભ્યન્તર પરિગ્રહસે રહિત—નિષ્પરિગ્રહી મુનિ અનુકૂલ  
 ઓર પ્રતિકૂલ પરીપહોંકો સહન કરતા હુઆ અર્થાત્—અનુકૂલ પરીપદમ્માં  
 અભિલાપી ઓર પ્રતિકૂલ પરીપદમ્માં ડહેગી ન ડનના હુઆ રતિ ઓર અરતિ

સ્રોત પણ દ્રવ્ય અને લાવના લેદથી જો પ્રકારનું છે. નદી આદિનો પ્રવાહ  
 દ્રવ્યસ્રોત છે. શબ્દાદિક વિષયોની અભિલાપા લાવસ્રોત છે. એ બન્નેનો સંબંધ  
 રાગ અને દ્વેષથી થયેલ છે. તે વાતને જાણી જે તેના તે સંબંધનો પરિહાર—  
 ત્યાગ કરે છે તે આવર્ત અને સ્રોતના સંગનો પરિજ્ઞાતા કહેવાય છે ॥ સૂ૦ ૩ ॥

જે મુનિ આવર્ત અને સ્રોતના સંબંધને જાણી લે છે તે દેવા ગુણોને પ્રાપ્ત  
 કરે છે ? તે કહે છે—‘ સીઝસિણચ્ચાઈ’ ઇત્યાદિ

બાહ્ય અને આભ્યન્તર પરિગ્રહથી રહિત—નિષ્પરિગ્રહી મુનિ અનુકૂળ અને પ્રતિ-  
 કૂળ પરીપદો સહન કરતાં થઈ અર્થાત્ અનુકૂળ પરીપદમાં અભિલાપી અને પ્રતિકૂળ  
 પરીપદોમાં ડહેગી ન ડનના રતિ અને અરતિની ઉપેક્ષા કરી પરીપદોને કહનનક

ચ કર્મવન્ધહેતુત્વાદુપેક્ષમાણ इत्यर्थः । परुषतां=परीषदाणां पारुष्यं कष्टजनकत्वरूपं नो वेत्ति—न तान् पीडाकारित्वेन गृह्णाति, अपि तु कर्मवन्धोच्छेदार्थमुद्यतः संसारादुद्विग्नमनास्तान् साहाय्यकारित्वेनानुमन्यते इत्यर्थः ।

किंच—स जागरः=मिथ्यात्वाविरतिप्रमादनिद्रापगमाज्जागर्तीति जागरः—श्रुतचारित्र्यमाराधने सदा जागरूक इत्यर्थः । वैरोपरतः—वैरं परापकारचिन्तनं, तस्मादुपरतः, अत एव—वीरः=कर्मवैरिविदारणसमर्थो भवति । हे गिण्य ! एवम्=इत्थंभूतः श्रुतचारित्र्यमाराधने सदा जागरूकः परापकाराध्यवसायरहितः सन् दुःखात्=दुःस्वकारणात् कर्मणः प्रमोक्ष्यसे=मुक्तो भविष्यसि ॥ अ० ४ ॥

કી ઉપેક્ષા કર પરીષદોંકો કષ્ટજનક નહીં માનતા હૈ, કિન્તુ કર્મવન્ધ કે વિનાશ કરનેકી ઓર ઉદ્યમી વહ અનગાર ડન પરીષદોંકો ડસ કર્મ વિનાશરૂપ કાર્ય મેં અપને સહાયક માનતા હૈ ।

ભાવાર્થ—પરિગ્રહમેં આસક્તિસંપન્ન વ્યક્તિ હી અનુકૂલ પરીષદોંમેં અભિલાષી ઓર પ્રતિકૂલ પરીષદોંમેં ઉદ્દેગી બનતા હૈ । જિસકે પાસ પરિગ્રહ હી નહીં હૈ એસે સંયમી મુનિકે લિયે ક્યા પ્રતિકૂલ પરીષદ ક્યા અનુકૂલ પરીષદ સબ એક સમાન હૈ । અનુકૂલમેં ઇસકી લાલસા નહીં ઓર પ્રતિકૂલમેં ઇસકો દ્વેષ નહીં, કારણ કિ ઇસ સિદ્ધાન્તકો ભલીભાંતિ જાન ચુકા હૈ કિ—સંસારકે મૂલ કારણ રાગ ઓર દ્વેષ હૈ । અનુકૂલમેં અભિલાષા હોની યહ રાગકી પર્યાય હૈ, ઓર પ્રતિકૂલમેં ઉદ્દેગ હોના દ્વેષ કી પર્યાય હૈ, અતઃ વહ દોનો પ્રકારકે પરીષદોંકો સમભાવસે સહન કરતા હૈ । પરીષદો એવં ઉપસર્ગોસે કદાચિત્ ઇસકે ચિત્તમેં સંયમપરિ-

માનતા નથી, પણ કર્મબંધનો વિનાશ કરવાની તરફ ઉદ્યમી તે અણગાર તેવા પરીષદોને તે કર્મવિનાશરૂપ કાર્યમાં પોતાના સહાયક માને છે.

ભાવાર્થ—પરિગ્રહમાં આસક્તિસંપન્ન વ્યક્તિ જ અનુકૂળ પરીષદોમાં અભિલાષી અને પ્રતિકૂળ પરીષદોમાં ઉદ્દેગી બને છે. જેની પાસે પરિગ્રહ જ નથી એવા સંયમી મુનિ માટે શું પ્રતિકૂળ પરીષદ અને શું અનુકૂળ પરીષદ ? સઘળા એકસમાન છે. અનુકૂળમાં તેની લાલસા નહિ અને પ્રતિકૂળમાં તેને દ્વેષ નહિ, કારણ કે એ આ સિદ્ધાંતને સારી રીતે બાણી ચુકેલ છે કે સંસારનું મૂળ કારણ રાગ અને દ્વેષ છે. અનુકૂળમાં અભિલાષા થવી તે રાગની પર્યાય છે અને પ્રતિકૂળમાં ઉદ્દેગ થવો તે દ્વેષની પર્યાય છે, માટે સંયમી મુનિ તે બંને પ્રકારના પરીષદોને સમભાવથી સહન કરે છે. પરીષદો તેમજ ઉપસર્ગોથી કેઈ વખત તેના ચિત્તમાં સંયમપરિણામ તરફ અસ્તિ અને અસંયમપરિણામ તરફ રતિ થઈ



નામકે પ્રતિ અરતિ ઔર અસંયમપરિણામકે પ્રતિ રતિ હો જાતી હો સો ભી વાત નહીં હૈ । ક્યોં કિ યહ ઇન દોનોં પ્રકારકી પરિણતિયોંકો ભી કર્મબન્ધકા કારણ જાન કર ઁનકી તર્ફસે ઉપેક્ષિત રહતા હૈ । પરીપહોં કો યહ અપને લિયે કષ્ટકારી નહીં માનતા હૈ પ્રત્યુત ઁનેં અપને લક્ષમેં અધિકરૂપ જુટાનેવાલે હોનેસે અપના સહાયક હી માનતા હૈ । સંસાર શરીર ઔર ભોગોંસે જો નિર્વિણ્ણ-ઉદાસ હોતા હૈ ઁસે પરીપહ ઔર ઉપસર્ગ અપને લક્ષ્યસે નહીં ગિરા સકતે હૈં । ઁસે વ્યક્તિ વિઘ્નકારક કારણકલાપોંકો-પરીપહોંકો કર્મબન્ધકે ઉચ્છેદન કરનેમેં સુવર્ણમેં શુદ્ધિ લાનેકે લિયે અગ્નિરૂપ સહાયકકી તરહ અપના સહાયક માના કરતે હૈં ઔર ઁનકા સહર્ષ સ્વાગત કરતે હૈં ।

નિર્ગન્થ મુનિ મિથ્યાત્વ અવિરતિ ઔર પ્રમાદરૂપ નિદ્રાકે અભાવસે શ્રુતચારિત્રરૂપ ધર્મકે આરાધનમેં સદા જાગરૂક રહતા હૈ, ઁવં પરકે અપકાર કરનેકે વિચારરૂપ વૈરસે વિરક્ત હોતા હુઆ કર્મરૂપી વૈરીકો નિવારણ કરનેમેં સમર્થ હોતા હૈ । ઇસલિયે હે શિષ્ય ! તુમ ભી શ્રુત ચારિત્રરૂપ ધર્મકી આરાધના કરનેમેં સદા જાગરૂક બન પરકે અપકાર કરનેકે અધ્યવસાયસે રહિત હોકર દુઃખ ઁવં દુઃખકે કારણ કર્મોંસે રહિત હો જાઓગે ॥ સૂ. ૪ ॥

જતી હોય તે પણ વાત નથી. કારણ કે તે આ બંને પ્રકારની પરિણતિઓને પણ કર્મબંધનું કારણ બનીને તેની તરફથી ઉપેક્ષિત રહે છે. પરિણતિને તે પોતાને માટે કષ્ટકારી માનતો નથી પ્રત્યુત તેને પોતાના લક્ષમાં અધિકરૂપ બેડવાવાળા હોવાથી પોતાના સહાયક જ માને છે. સંસાર, શરીર અને ભોગોથી જે ઉદાસ થાય છે તેને પરીપહ અને ઉપસર્ગ પોતાના લક્ષથી દૂર કરી શકતા નથી. એવી વ્યક્તિ વિઘ્નકારક કારણકલાપોને-પરીપહોને કર્મબંધનું ઉચ્છેદન કરવામાં સુવર્ણમાં શુદ્ધિ લાવવા માટે અગ્નિરૂપ સહાયકની માફક પોતાના સહાયક માન્યા કરે છે, અને તેઓનું સહર્ષ સ્વાગત કરે છે.

નિર્ગન્થ મુનિ મિથ્યાત્વ અવિરતિ અને પ્રમાદરૂપ નિદ્રાના અભાવથી શ્રુતચારિત્રરૂપ ધર્મનાં આરાધનમાં સદા જાગરૂક રહે છે અને પરના અપકાર કરવાના વિચારરૂપ વૈરથી વિરક્ત બનીને કર્મરૂપી વૈરીનું નિવારણ કરવામાં સમર્થ થાય છે. માટે હે શિષ્ય ! તમે પણ શ્રુતચારિત્રરૂપ ધર્મની આરાધના કરવામાં સદા જાગરૂક બની પરના અપકાર કરવાના અધ્યવસાયથી રહિત થઈ દુઃખ અને દુઃખના કારણ કર્મોથી રહિત બની જશો. ॥ સૂ. ૪ ॥



यश्चावर्तस्रोतसोः सद्भादजागरः, स तु संसारदुःखान्न विमुच्यत इत्याशयेनाह—  
'जरामच्चु०' इत्यादि ।

मूलम्—जरामच्चुवसोवणीए नरे सययं मूढो धम्मं नाभि-  
जाणइ ॥ सू० ५ ॥

छाया—जरामृत्युवशोपनीतो नरः सततं मूढो धर्मं नाभिजानाति ॥ सू० ५ ॥

टीका—जरामृत्युवशोपनीतः=जरामरणपराधीनः, नरः=मनुष्यः, सततं=सर्वदा,  
मूढः=मोहनीयोदयाद् विवेकरहितः धर्मः=श्रुतचारित्र्यलक्षणं नाभिजानाति । भाव-  
सुप्तः संसारी मोक्षमार्गमप्राप्य पुनः पुनर्जरामृत्युवशंगतो दुःखान्तं नोपयातीति  
भावः ॥ सू० ५ ॥

ननु जरामृत्युपारवश्यादेव दुःखान्तो न भवति चेत्तर्हि तत्पारवश्यवारणाय  
मुमुक्षुणा किं कर्तव्यमिति जिज्ञासायामाह—'पासिय आउरपाणे' इत्यादि ।

मूलम्—पासिय आउरपाणे अप्पमत्तो परिट्ठए । मंता एयं  
मइमं पास ॥ सू० ६ ॥

छाया—दृष्ट्वा आतुरप्राणान् अप्रमत्तः परिव्रजेत् । मत्वा एतत् मतिमन्  
पश्य ॥ सू० ६ ॥

जो आवर्त्त और स्रोतके सम्बन्धसे जागरूक नहीं है वह संसारके  
दुःखोंसे छूट नहीं सकता । इस विषयमें कहते हैं—'जरामच्चु०' इ०।

जो आवर्त्त और स्रोतके सम्बन्धसे जागरूक नहीं हैं ऐसे मनुष्य  
जरा और मरणके आधीन होकर निरन्तर मोहनीय कर्मके उदय  
से विवेकरहित हो श्रुतचारित्र्यरूप धर्मको नहीं जानते हैं । इसका भाव  
यही है कि भावसुप्त संसारी मोक्षमार्गको नहीं प्राप्त कर बारंवार जरा  
और मृत्युके आधीन होकर कभी भी दुःखोंसे छुटकारा नहीं पाते हैं । ५।

जे आवर्त्त अने स्रोतना संअंधथी जगइइ नथी ते संसारना दुःखेथी  
छुटी शकता नथी, ते विषयभां डहे छे—'जरामच्चु०' इत्यादि.

जे आवर्त्त अने स्रोतना संअंधथी जगइइ नथी तेवा मनुष्य जरा  
अने मरणने आधीन गनी निरंतर मोहनीय कर्मना उदयथी विवेकरहित धर्म  
श्रुतचारित्र्यरूप धर्मने जगता नथी, आने भाव अे छे डे भावसुप्त संसारी मोक्ष-  
मार्गने प्राप्त कथा विना बारंवार जरा अने मृत्युने आधीन गनी इदि पण दुःखेथी  
छुटकारे भेजवता नथी, ॥ सू० ५ ॥

टीका—आत्मकल्याणार्थी मनुष्यः आतुरप्राणान्=भावस्वापजनितजरामरण-  
पारवश्योपनीतदुःखसागरान्तःपातिप्राणिनः, दृष्ट्वा, अप्रमत्तः=भावजागरूकः सन्  
परिव्रजेत्=संयमाराधनतत्परो भवेत् । मतिमन्=हे मेधाविन् शिष्य ! त्वमपि  
एतत्=सुप्तदूषणं जरामृत्युपारतन्त्र्यम्, मत्वा=ज्ञात्वा पश्य=चक्षुरुन्मीलय-संयम-  
धर्मे जागृहीत्यर्थः ॥ सू० ६ ॥

यदि जरा और मृत्युकी परवशतासे जीवोंके दुःखोंका अन्त नहीं  
होता है तो फिर उनकी परवशताको दूर करनेके लिये मुमुक्षु प्राणियोंको  
क्या उपाय करना चाहिये ? इस प्रकारकी जिज्ञासाका समाधान करनेके  
लिये कहते हैं—‘पासिय आउरपाणे’ इत्यादि ।

“आत्मकल्याणका अभिलाषी मनुष्य भावनिद्रासे उत्पन्न, जरा और  
मरणकी परवशतासे प्राप्त दुःखरूपी सागरमें पड़े हुए प्राणियोंको देख  
कर भावनिद्राका परित्याग करके संयमकी आराधना करनेमें सदा तत्पर  
रहे” प्रभुके इस सर्वोत्तम उपदेशसे हे मेधावी शिष्य ! तुम भी  
भावनिद्राजन्य जरा और मरणकी परवशतारूप दूषणको जानकर सदा  
संयमरूप धर्ममें जागरूक रहो ।

भावार्थ—प्रभुका उपदेश है कि—आत्मकल्याणकी कामना करनेवाला  
मनुष्य भावनिद्राका परित्याग करे, क्योंकि निद्राके सङ्भावमें जरा और  
मरणजन्य अनेक दुःखोंका कभी भी अन्त नहीं आ सकता है । इन  
दुःखोंसे छुटकारा करनेवाला यदि कोई है तो वह भावनिद्राका अभाव

कहाय जरा અને મૃત્યુની પરવશતાથી છુટવાના દુઃખનો અંત થતો નથી તો પછી  
તેની પરવશતાને દૂર કરવા માટે મુમુક્ષુ પ્રાણિઓએ શો ઉપાય કરવો જોઈએ ? આવા  
પ્રકારની જિજ્ઞાસાનું સમાધાન કરવા માટે કહે છે—‘પાસિય આઝરપાણે’ ઇત્યાદિ.

“આત્મકલ્યાણના અભિલાષી મુનિ ભાવનિદ્રાથી ઉત્પન્ન જરા અને મરણની  
પરવશતાથી પ્રાપ્ત દુઃખરૂપી સાગરમાં પડેલાં પ્રાણીઓને દેખીને ભાવનિદ્રાનો  
પરિત્યાગ કરીને સંયમની આરાધના કરવામાં સદા તત્પર રહે” પ્રભુના આ સર્વો-  
ત્તમ ઉપદેશથી હે મેધાવી શિષ્ય ! તમે પણ ભાવનિદ્રાજન્ય જરા અને મરણની  
પરવશતાથી દૂષણને જાણીને સદા સંયમરૂપ ધર્મમાં જાગરૂક રહો.

ભાવાર્થ—પ્રભુનો ઉપદેશ છે કે—આત્મકલ્યાણની કામના કરવાવાળા મુનિ  
ભાવનિદ્રાનો પરિત્યાગ કરે. કારણ કે આ નિદ્રાના સંભાવમાં જરા અને મરણ  
જન્ય અनेક દુઃખોનો કદિ પણ અંત આવી શકતો નથી. આ દુઃખોથી છુટ-  
કારો કરાવનાર જે કોઈ હોય તો તે ભાવનિદ્રાનો અભાવ છે સંભાવી પ્રાણી જે

કિન્ન—

મૂલમ્—આરંભજં દુઃસ્વમિણંતિજ્ઞા, માયી પ્રમાઈ પુનરેઈ ગર્ભમ્ ।

ઉવેહમાણો સદ્ગુણેસુ અંજૂ, મારાભિસંકી મરણા પ્રમુચ્ચઈ ॥ સૂ. ૭ ॥

જ્ઞાયા—આરંભજં દુઃસ્વમિદમિતિ જ્ઞાત્વા, માયી પ્રમાદી પુનરેતિ ગર્ભમ્ ।  
ઉપેક્ષમાણઃ શબ્દરૂપેષુ (યઃ) ઋજુઃ, મારાભિગઢ્ઢી (સઃ) મરણાત્ પ્રમુચ્યતે ॥ સૂ. ૭ ॥

ટોકા—ઈદં=સંસારપરિભ્રમણરૂપં દુઃસ્વમ્, આરંભજમ્=સાવધાનક્રિયાનુષ્ઠાન-  
ફલભૂતમ્, ઇતિ જ્ઞાત્વા આત્મકલ્યાણાય જાગૃહિ । ભાવસુપ્તઃ કિં પ્રાપ્નોતીત્યાહ—‘માયી’  
ઇત્યાદિ । માયી=ક્રોધાદિકષાયયુક્તઃ, કષાયમધ્યવર્તિમાયાગ્રહણેન પૂર્વાપરકષાયાણા-  
મપિ ગ્રહણમ્ । પ્રમાદી=મદ્યાદિસેવી પુનઃ=વારં વારં, ગર્ભમેતિ=નરકાદિયાતનામનુ-  
ભૂય સકલદુઃસ્વહેતુભૂતં ગર્ભં પ્રાપ્નોતિ ।

હૈ । સંસારી પ્રાણી જો જન્મ મરણકે અનન્ત કષ્ટોંકો ભોગ રહે હૈં ઉસકા  
કારણ ભાવનિદ્રાકા સદ્ભાવ હી હૈ, એસા સમજ્ઞકર ઓર પ્રભુકે ઉપદેશ  
પર ધ્યાન દેકર હે મતિમાન્ શિષ્ય ! તુમ અનર્થાત્પાદક ઇસ નિદ્રાકા  
પરિત્યાગ કરો, અર્થાત્ સંયમધર્મમેં સદા જાગરુક રહો, જિસસે જરા-  
મરણજન્ય કષ્ટોંસે તુમ્હે છુટકારા મિલે ॥ સૂ. ૬ ॥

ફિર ભી કહતે હૈં—‘આરંભજં’ ઇત્યાદિ ।

‘સાવધ ક્રિયાઓંકે અનુષ્ઠાનકા ફલ હી યહ સંસારકા પરિભ્રમણરૂપ  
દુઃસ્વ હૈ’ એસા જાનકર હે શિષ્ય ! તુમ આત્મકલ્યાણકી ઓર અપની  
પ્રવૃત્તિ કરો । યહાં કષાયોંકે મધ્યવર્તી માયાકા ગ્રહણ કરનેસે અન્ય  
કષાયોંકા ભી ગ્રહણ હો જાતા હૈ અતઃ ભાવસુપ્ત પ્રાણીકે યે ચિહ્ન હૈં કિ  
વહ ક્રોધાદિક કષાયોંસે યુક્ત હોતા હૈ । પ્રમાદસેવી-મદ્યાદિકકા સેવન

જન્મ મરણના અનંત કષ્ટોને લોગવી રહ્યા છે તેનું કારણ ભાવનિદ્રાનો સદ્ભાવ  
જ છે. એવું સમજીને અને પ્રભુના ઉપદેશ ઉપર ધ્યાન આપીને હે મતિમાન્  
શિષ્ય ! તમે અનર્થાત્પાદક આ નિદ્રાનો પરિત્યાગ કરો, અર્થાત્ સંયમધર્મમાં સદા  
જાગરુક રહો, જેથી તમને જરામરણજન્ય દુઃખોથી છુટકારો મળે. ॥ સૂ. ૬ ॥

ફરી કહે છે—‘આરંભજં’ ઇત્યાદિ.

સાવધ ક્રિયાઓના અનુષ્ઠાનનું ફળ જ આ સંસારના પરિભ્રમણરૂપ દુઃખ  
છે. એવું જાણીને હે શિષ્ય ! તમે આત્મકલ્યાણની તરફ યોતાની પ્રવૃત્તિ કરો.  
આહીં કષાયોના મધ્યવર્તી માયાનું ગ્રહણ કરવાથી અન્ય કષાયોનું પણ ગ્રહણ  
થાય છે, માટે ભાવસુપ્ત પ્રાણીનું એ ચિહ્ન છે કે તે ક્રોધાદિ કષાયોથી યુક્ત  
જને છે, પ્રમાદસેવી-મદ્યાદિકનું સેવન કરવાવાળા જનને છે “પુનર્ગપ જનનં પુનરપિ

एवं भावसुप्तस्य दोषं पर्यालोच्य यः शब्दरूपेषु=इदमुपलक्षणं, तेन शब्दरूप-  
रसगन्धस्पर्शेषु विषयेषु इत्यर्थः, उपेक्षमाणो=रागद्वेषरहितः ऋजुः=अवक्रहृदयो  
मायाप्रमादपरिवर्जितः, माराभिः शङ्की=पुनः पुनर्मरणदुःखाभ्यागमशङ्कया भीरुः,  
तद्दुःखपरिहारार्थं श्रुतचारित्रधर्मे जागरूक इति यावत्, स मरणात् प्रमुच्यते ॥ मू० ७ ॥

किञ्च—

मूलम्—अप्पमत्तो कामेहि, उवरओ पावकम्मेहि, वीरे आ-  
यगुत्ते जे खेयन्ने ॥ सू० ૮ ॥

करनेवाला होता है “पुनरपि जननं पुनरपि मरणं पुनरपि जननीजठरे  
शयनम्” बारंवार जन्म मरण और गर्भमें आगमन; इनसे उसका  
छुटकारा नहीं होता है। सावद्य क्रियाओंमें तत्पर प्राणी नरकनिगोदा-  
दिककी अनन्त यातनाओंको भोगता हुआ इनसे भी अधिक कष्टोंके  
स्थानभूत गर्भमें जाकर बसेरा करता है।

इस प्रकार भावसुप्त प्राणीकी जब यह दशा होती है तब संयमी  
मुनिका कर्तव्य है कि वह इस भावनिद्राका परिहार करे और पांच  
इन्द्रियोंके विषयों—शब्द, रूप, रस, गन्ध और स्पर्श—में रागद्वेषरहित  
होकर मायाप्रमादसे अपनी प्रवृत्तिको सुरक्षित रखता हुआ बारंवार  
जन्म मरणके दुःखोंको प्राप्त होनेकी आशङ्कासे भयभीत होकर सांसा-  
रिक दुःखोंसे छुटकारा पानेके लिये श्रुतचारित्ररूप धर्ममें सदा जागरूक  
रहे। इस प्रकारकी प्रवृत्तिसे ही प्राणी मरणसे छूट सकता है, अन्यथा  
नहीं ॥ सू० ७ ॥

मरणं पुनરપિ જનનીજઠરે શયનમ્” વારંવાર જન્મ મરણ અને ગર્ભમાં આગ-  
મન, તેનાથી તેનો છુટકારો થતો નથી. સાવધ ક્રિયાઓમાં તત્પર પ્રાણી નરક-  
નિગોદાદિકની અનન્ત યાતનાઓને ભોગવતા તેનાથી પણ અધિક કષ્ટોના સ્થાનભૂત  
ગર્ભમાં સ્થાન લે છે

આવા પ્રકારે ભાવસુપ્ત પ્રાણીની ત્યારે આવી દશા થાય છે ત્યારે સંયમી  
મુનિનું એ કર્તવ્ય છે કે તે આ ભાવનિદ્રાનો પરિત્યાગ કરે. અને પાંચ ઈન્દ્રિ-  
યોના વિષયો—શબ્દ, રૂપ, રસ, ગંધ અને સ્પર્શો—માં રાગદ્વેષ રહિત બનીને માયા  
પ્રમાદથી પોતાની પ્રવૃત્તિને સુરક્ષિત રાખીને વારંવાર જન્મ મરણના દુઃખોને  
પ્રાપ્ત થવાની આશંકાથી ભયભીત બની સાંસારિક દુઃખોથી છુટકારો મેળવવા  
માટે શ્રુતચારિત્રરૂપ ધર્મમાં સદા તગરૂક રહે. આવા પ્રકારની પ્રવૃત્તિથી જ  
પ્રાણી મરણથી છુટી શકે છે, અન્યથા નહિ ॥ સૂ૦ ૭ ॥

છાયા—અપ્રમત્તઃ કામૈઃ, ઉપરતઃ પાપકર્મભ્યઃ, વીરો ગુપ્તાત્મા યઃ खेदज्ञः॥૮॥

ટીકા—યઃ खेदज्ञः=સંસારિણાં દુઃસ્વાભિજ્ઞઃ, સ કામૈરપ્રમત્તઃ=કામભોગકૃત-પ્રમાદરહિતઃ, પાપકર્મભ્ય ઉપરતઃ=મનોવાકાયૈઃ સાવધવ્યાપારેભ્યો નિવૃત્તઃ, અતएव वीरः=કર્મવિદારણસમર્થઃ, ગુપ્તાત્મા=આત્મરક્ષણપરાયણઃ આત્મોદ્ધારકારીત્યર્થઃ ॥૮॥

खेदज्ञस्य गुणमाह—‘ जे पञ्जवज्जायसत्थस्स ’ इत्यादि ।

મૂલમ્—જે પજ્જવજ્જાયસત્થસ્સ खेयण्णे, સે असत्थस्स खेयन्ते, जे असत्थस्स खेयण्णे, से पञ्जवज्जायसत्थस्स खेयन्ते॥૯॥

છાયા—યઃ પર્યવજાતશસ્ત્રસ્ય खेदज्ञः, સઃ अशस्त्रस्य खेदज्ञः, યઃ अशस्त्रस्य खेदज्ञः, स पर्यवजातशस्त्रस्य खेदज्ञः ॥ સૂ૦ ૯ ॥

फिर भी कहते हैं—‘ अप्पमत्तो ’ इत्यादि ।

જો સંસારી જીવોંકે દુઃસ્વોંકા જ્ઞાતા હૈ વહ કામભોગજન્ય પ્રમાદસે રહિત હોકર મન વચન ઔર કાયસે હોનેવાલે સાવધ વ્યાપારોંસે દૂર રહતા હુઆ કર્મોંકે નાશ કરનેમેં સમર્થ હોતા હૈ, યહી આત્મરક્ષા હૈ । ઇસ અપની રક્ષા કરને મેં વહ તત્પર રહતા હૈ, અર્થાત્ અપની આત્માકા ઉદ્ધાર કરનેવાલા હોતા હૈ ॥ સૂ૦ ૮ ॥

જો ઇસ પ્રકારસે નિષ્ણાત બન જાતા હૈ ઉસે કયા લાભ હોતા હૈ ? સો વતાતે હૈ—‘ જે પજ્જવજ્જાય૦ ’ ઇત્યાદિ ।

‘ પર્યવ ’ શબ્દકા અર્થ—શબ્દાદિ વિષયોંકે ભેદ-પ્રકાર, ‘ શસ્ત્ર ’ શબ્દકા અર્થ—પ્રાણિપીડનાદિ સાવધકર્મ, ‘ खेदज्ञ ’ શબ્દકા અર્થ—પ્રાણિયોંકે સાવધક્રિયાજન્ય દુઃસ્વોંકા જ્ઞાતા, હોતા હૈ ।

इरीथी डहे छे—‘ अप्पमत्तो ’ इत्यादि.

જે સંસારી હોવોના દુઃખોનો જ્ઞાતા છે તે કામભોગજન્ય પ્રમાદથી રહિત બનીને મન વચન અને કાયાથી બનનારા સાવધ વ્યાપારોથી દૂર રહીને કર્મોનો નાશ કરવામાં સમર્થ થાય છે. તે જ આત્મરક્ષા છે. આ પોતાની રક્ષા કરવામાં તત્પર રહે છે, અર્થાત્ પોતાના આત્માનો ઉદ્ધાર કરવાવાળો થાય છે. ॥ સૂ૦ ૮ ॥

જે આવા પ્રકારથી નિષ્ણાત બની બચ છે તેને શું લાભ થાય છે ? તે બતાવે છે—‘ જે પજ્જવજ્જાય૦ ’ ઇત્યાદિ.

‘ પર્યવ ’ શબ્દનો અર્થ—શબ્દાદિક વિષયોના ભેદ-પ્રકાર, ‘ શસ્ત્ર ’ શબ્દનો અર્થ—પ્રાણિપીડનાદિ સાવધ કર્મ, ‘ खेदज्ञ ’ શબ્દનો અર્થ—પ્રાણિયોના સાવધ ક્રિયાજન્ય દુઃખોનો જ્ઞાતા, થાય છે.

ટીકા—યઃ પર્યવજાતશસ્ત્રસ્ય—પર્યવાઃ=શબ્દાદિવિષયપ્રકારાઃ તેષુ=તન્નિમિત્તં જાતં શસ્ત્રં=પર્યવજાતશસ્ત્રં=શબ્દાદિવિષયવિશેષોપભોગાર્થં યત્ પ્રાણિનાં પીડના-દિરૂપં સાવધકર્મ, તસ્ય સ્વેદજઃ=સાવધક્રિયાસમુત્પાદિતપ્રાણિદુઃસ્વામિજઃ, સઃ અશસ્ત્રસ્ય=નિરવધક્રિયારૂપસ્ય સંયમસ્ય સ્વેદજઃ=અભ્યાસજઃ, સંયમારાધને યાવદ-ધિકદુઃસ્વસહનં તાવદધિકકર્મનિર્જરા ભવતીત્યભિજ્ઞાતેત્યર્થઃ । યથાશસ્ત્રસ્ય=સંયમસ્ય સ્વેદજઃ, સ પર્યવજાતશસ્ત્રસ્યાપિ સ્વેદજઃ ।

ભાવાર્થ—સંસારી જીવ શબ્દાદિક પાંચ ઇન્દ્રિયોંકે વિષયોંકા ઉપ-ભોગ કરનેકી લાલસાકે અધીન બનકર હી અપની પ્રવૃત્તિકો અસંયમિત બનાતે હૈં । ઉનકી ઇસ અસંયમિત પ્રવૃત્તિસે ત્રસ-સ્થાવર પ્રાણિયોંકો અનેક પ્રકારકે કષ્ટ ભોગને પડતે હૈં । અસંયમી જીવોંકી અનર્ગલ પ્રવૃત્તિ હી અન્ય જીવોંકે લિયે અનેક પ્રકારકે કષ્ટોંકો દેનેવાલી હોતી હૈં । સંયમી જીવ ઇસ વાતકા સદા વિશેષ ધ્યાન રખતા હૈં કિ કહીં મેરી પ્રવૃત્તિસે પ્રાણિયોંકો દુઃસ્વ ન પહુંચે । ઇસલિયે વહ અપની પ્રવૃત્તિકો ઇતની સંય-મિત રખતા હૈં કિ કોઈ ભી પ્રાણી ઉસસે દુઃસ્વી નહીં હો પાતા । વહ અપની ઇસ પ્રકારકી પ્રવૃત્તિકો ઉત્તરોત્તર વઢાનેકા ઇતના અધિક સે અધિક અભ્યાસ કરતા હૈં કિ યહ કમી ન કમી વીતરાગ પદકા ધારક હો જાતા હૈં । વહ જાનતા હૈં કિ મૈં સંયમકે આરાધનમેં જિતને અધિક દુઃસ્વોંકો સહુંગા ઉતની હી અધિક મેરે કર્મોંકી નિર્જરા હોગી, યહી વીત-રાગપદ તક પહુંચનેકી ઉત્તમ સીદ્ધી હૈં । ઇસ પ્રકાર જો નિરવધ ક્રિયા

ભાવાર્થ—સંસારી જીવ શબ્દાદિક પાંચ ઇન્દ્રિયોના વિષયોના ઉપભોગ કરવાની લાલસાને આધીન બનીને જ પોતાની પ્રવૃત્તિને અસંયમિત બનાવે છે. તેની આ અસંયમિત પ્રવૃત્તિથી ત્રસ સ્થાવર પ્રાણીઓને અનેક પ્રકારના કષ્ટ ભોગવવા પડે છે. અસંયમી જીવોની સ્વચ્છંદ પ્રવૃત્તિ જ અન્ય જીવો માટે અનેક પ્રકારના કષ્ટોને દેવાવાળી બને છે. સંયમી જીવ આ જાણતું મદા વિશેષ ધ્યાન રાખે છે કે કદાચ મારી પ્રવૃત્તિથી પ્રાણીઓને દુઃખ ન પહોંચે. તેટલા માટે તે પોતાની પ્રવૃત્તિને આટલી સંયમિત રાખે છે કે કોઈ પણ પ્રાણી તેનાથી દુઃખી થતો નથી. તે પોતાની આ પ્રકારની પ્રવૃત્તિને ઉત્તરોત્તર વધારવાનાં એટલા અધિકથી અધિક અભ્યાસ કરે છે કે તે કોઈને કોઈ વખત વીતરાગપદનો ધારક બને છે, તે બાલે છે કે હું જેટલું સંયમ આરાધનમાં દુઃખ સહન કરીશ તેટલી જ મારે કર્મોની નિર્જરા થશે. આ જ વીતરાગપદ સુધી પહોંચવાની ઉત્તમ સીદ્ધી છે. આ પ્રકારે જ નિરવધક્રિયા સંયમનો અભ્યાસ કરવાનાં કર્મો—કુમાર છે તે



અર્થ ભાવ:—યોડનુકૂલપ્રતિકૂલશબ્દાદિવિષયપ્રાપ્તિપરિહારાર્થ સાવચકર્માનુ-  
ષ્ઠાનં શસ્ત્રરૂપં વેત્તિ સ સંયમમપિ સર્વજીવોપકારકમશસ્ત્રરૂપં જાનાતિ । શસ્ત્રાશસ્ત્રરૂ-  
પતાં વિદંસ્તત્ર નિવર્તતે પ્રવર્તતે ચ । સકલસાવચવ્યાપારેભ્યો નિવૃત્ત્યા સંયમારાધને  
પ્રવૃત્ત્યા ચ મુનેઃ કર્મધ્યો ભવતીતિ ।

યદ્વા-યઃ પર્યવજાતશસ્ત્રસ્ય=પર્યવજાતસ્ય=શબ્દાદિપર્યાયજનિતસ્યાષ્ટવિધકર્મણઃ  
શસ્ત્રં=તપઃ તદ્દહનજનકત્વાત્, તસ્ય યઃ સ્વેદજઃ, સોડશસ્ત્રસ્ય સંયમસ્યાપિ સ્વેદજઃ ।

રૂપ સંયમકે અભ્યાસ કરનેમેં કર્મઠ-કુશલ-હૈ વહ જિન ૨ કાર્યોસે  
પ્રાણિયોંકે પ્રાણોંકો કષ્ટ પહુંચે એસી સાવચ ક્રિયાઓંસે સદા વિરક્ત  
હી રહતા હૈ ।

વિસ્તરાર્થ—જો અનુકૂલ ઓર પ્રતિકૂલ શબ્દાદિક વિષયોંકી પ્રાપ્તિ  
એવં પરિહારકે લિયે સાવચ ક્રિયાકો શસ્ત્રરૂપ માનતા હૈ, વહ યહ મી  
સમજના હૈ કિ સંયમ સર્વ જીવોંકા ઉપકારક હોનેસે અશસ્ત્રરૂપ હૈ । ઇસ  
પ્રકાર વહ સાવચ ક્રિયામેં શસ્ત્રરૂપતા ઓર સંયમમેં અશસ્ત્રરૂપતા જાન  
કર અશસ્ત્રરૂપ સંયમમેં પ્રવૃત્ત હોતા હૈ ઓર શસ્ત્રરૂપ સાવચ ક્રિયાઓંકે  
અનુષ્ઠાનસે વિરક્ત હોતા હૈ । યહ માની હુઈ વાત હૈ કિ-મુનિકે, કર્મોંકા  
નાશ સકલ સાવચ વ્યાપારોંકી નિવૃત્તિસે ઓર સંયમકી આરાધનામેં  
પ્રવૃત્તિ કરનેસે હી હોતા હૈ ।

અથવા—‘પર્યવ’ શબ્દકા અર્થ—‘શબ્દાદિ પર્યાય’ હૈ, ‘જાત’ શબ્દ કા  
અર્થ—‘ઉત્પન્ન’ હૈ, ‘શસ્ત્ર’ શબ્દકા અર્થ ‘તપ’ હૈ । તાત્પર્ય ઇસકા યહ હૈ કિ-  
શબ્દાદિ પર્યાયોંસે ઉત્પન્ન હોનેવાલે આઠ પ્રકારકે કર્મોંકા શસ્ત્ર તપ હૈ,

ને ને કાર્યોથી પ્રાણીઓના પ્રાણોને કષ્ટ પહોંચે એવી સાવચ ક્રિયાઓથી સદા  
વિરક્ત ન રહે છે.

વિસ્તરાર્થ—ને અનુકૂળ અને પ્રતિકૂળ શબ્દાદિક વિષયોની પ્રાપ્તિ તેમજ  
પરિહાર માટે સાવચ ક્રિયાને શસ્ત્રરૂપ માને છે તે એ પણ સમજે છે કે સંયમ  
સર્વ જીવોનો ઉપકારક હોવાથી અશસ્ત્રરૂપ છે, આ પ્રકારે તે તેમાં શસ્ત્ર અને  
અશસ્ત્રરૂપતા બાણીને અશસ્ત્રરૂપ સંયમમાં પ્રવૃત્ત થાય છે, અને શસ્ત્રરૂપ સાવચ  
ક્રિયાઓના અનુષ્ઠાનથી વિરક્ત થાય છે. એ માનેલી વાત છે કે મુનિને કર્મોના  
નાશ સકલ સાવચ વ્યાપારોની નિવૃત્તિથી અને સંયમની આરાધનામાં પ્રવૃત્તિ  
કરવાથી ન થાય છે.

અથવા—‘પર્યવ’ શબ્દનો અર્થ શબ્દાદિ પર્યાય છે; ‘જાત’ શબ્દનો  
અર્થ ‘ઉત્પન્ન’ છે. ‘શસ્ત્ર’ શબ્દનો અર્થ ‘તપ’ છે. તેનું તાત્પર્ય એ છે કે  
શબ્દાદિ પર્યાયોથી ઉત્પન્ન હોવાવાળા આઠ પ્રકારના કર્મોનું શસ્ત્ર તપ છે, કારણ



યોઽશસ્ત્રસ્ય સ્વેદજ્ઞઃ, સ પર્યવજાતશસ્ત્રસ્યાપિ સ્વેદજ્ઞઃ । સંયમતપઃસ્વેદજ્ઞસ્યાસ્રવનિરો-  
ધાદનાદિભવોપાર્જિતકર્મણાં ક્ષયો ભવતીતિ ભાવઃ ॥ સૂ૦ ૯ ॥

સ્વેદજ્ઞસ્ય મુનેઃ કર્મક્ષયાત્ કિં ફલં ભવતીત્યાહ—‘અકમ્મસ્સ ’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્—અકમ્મસ્સ વ્યવહારો ન વિજ્ઞઈ, કમ્મુણા ઉવાહી  
જાયઈ ॥ સૂ૦ ૧૦ ॥

છાયા—અકર્મણો વ્યવહારો ન વિદ્યતે । કર્મણા ઉપાધિર્જાયતે ॥ સૂ૦ ૧૦ ॥

ટીકા—અકર્મણઃ=અષ્ટવિધકર્મરહિતસ્ય વ્યવહારઃ=નારકતિર્યગ્દેવમનુષ્યાદિ-  
વ્યપદેશો ન ભવતિ । યથા કર્મવન્ધયુક્તઃ સ એવ નારકાદિવ્યપદેશભાગ્ ભવતી-  
ક્યોં કિ તપ કર્મોંકો જલા કર નાશ કર દેતા હૈ । ઇસ શસ્ત્ર-તપ-કા જો  
સ્વેદજ્ઞ-જાનકાર હૈ વહ મુનિ અશસ્ત્ર-સંયમ-કા મી જાનકાર હૈ । જો  
અશસ્ત્ર-સંયમકા જાનકાર હૈ વહ શબ્દાદિપર્યાયજનિત આઠ પ્રકારકે  
કર્મોંકે વિનાશ કરવાલે શસ્ત્ર-તપ-કા મી જાનકાર હૈ । ઇન દોનોંકો  
જાનનેવાલે મુનિ કે આસ્રવકા નિરોધ હોનેસે અનાદિ ભવોંસે સંચિત  
કર્મોંકા ક્ષય હોતા હૈ ॥ સૂ૦ ૯ ॥

સ્વેદજ્ઞ મુનિકો કર્મોંકા ક્ષય હોનેસે કયા લાભ હોતા હૈ ? ઇસકા  
સુલાસા કરતે હૈ—‘અકમ્મસ્સ ’ ઇત્યાદિ ।

‘અકર્મણઃ વ્યવહારો ન વિદ્યતે ’ જો આઠ પ્રકારકે કર્મોંસે રહિત  
હો જાતા હૈ ઉસકે ચારોં પ્રકારકી ગતિયોંકે સર્વથા અભાવ હો જાનેસે  
ઉસકે લિયે નારક, તિર્યન્ન, મનુષ્ય ઓર દેવ, ઇત્યાદિ શબ્દોંકા વ્યવ-

હે તપ કર્મોંને ખાળીને નાશ કરી નાંખે છે. આ શસ્ત્ર-તપનો જે જેદન જાણુકાર છે  
તે મુનિ અશસ્ત્ર-સંયમનો પણ જાણુકાર છે, જે અશસ્ત્ર-સંયમનો જાણુકાર છે તે  
શબ્દાદિપર્યાયજનિત આઠ પ્રકારના કર્મોંનો વિનાશ કરવાવાળા શસ્ત્ર-તપનો  
પણ જાણુકાર છે. જે જાનનેને જાણવાવાળા મુનિના આસ્રવનો નિરોધ હોવાથી  
અનાદિ ભવોંથી સંચિત કર્મોંનો ક્ષય થાય છે ॥ સૂ૦ ૯ ॥

જેદન મુનિને કર્મોંનો ક્ષય થવાથી શું લાભ થાય છે ? તેનો ખુલાસો કરે  
છે—‘અકમ્મસ્સ ’ ઇત્યાદિ.

‘અકર્મણઃ વ્યવહારો ન વિદ્યતે ’ જે આઠ પ્રકારના કર્મોંથી રહિત થાય છે  
તેને ચારે પ્રકારની ગતિઓનો સર્વથા અભાવ થઈ જવાથી નારક તિર્યન્ન મનુષ્ય  
અને દેવ, ઇત્યાદિ શબ્દોંનો વ્યવહાર થતો નથી. આ પ્રકારના વ્યવહારનું કારણ

ત્યાહ-‘કર્મણા’ इत्यादि । उपाधीयते व्यपदिश्यते येन स उपाधिः=विशेषणम्, यद्वा-उपाधिः=संसारपरिभ्रमणरूपः, कर्मणा=ज्ञानावरणीयादिना जायते । जीवस्य यावन् कर्मसंबन्धस्तावदुपाधिर्जायते-इत्यर्थः ।

उपाधिसिद्ध्या-आत्मशरीरकर्मभेदात् । तत्रात्मोपाधिः-आत्मनो दुष्पयुक्तत्वम्, ततः कर्मोपाधिर्जायते । स एव शरीरोपाधित्वेन व्यपदिश्यते । नारकादिशरीरो-

હાર નહીં હોતા હૈ । ઇસ પ્રકારકે વ્યવહારકા કારણ કર્મવન્ધ થા, વહ ઉસકા નષ્ટ હો ચુકા હૈ । કર્મવન્ધસહિત જીવકે લિયે હી યહ વ્યવહાર ઘટિત હોતા હૈ, ઉસસે રહિત જીવકે લિયે નહીં । ‘ઉપાધિ’ શબ્દકા અર્થ વિશેષણ હૈ, કર્મવન્ધસહિત જીવકે હી નારકી, મનુષ્ય આદિ વિશેષણ સંગત વૈઠતે હૈં । ક્યોં કિ મનુષ્યગતિ-નામકર્મકે ઉદયસે જીવ મનુષ્ય-વિશેષણવાલા હોતા હૈ, નરકગતિ-નામકર્મકે ઉદયસે જીવ ‘નારકી’ ઇસ વિશેષણવાલા હોતા હૈ, इत्यादि । तात्पर्य यह कि-कर्मवन्धसहित जीवके तत्तत्कर्मोदयमें तत्तद्व्यपदेशता घटित होती है । अथवा संसारपरिभ्रमणका नाम भी उपाधि है । यह संसारपरिभ्रमणरूप उपाधि ज्ञानावरणीय आदि कर्मोंके संबन्धसे ही जीवको प्राप्त होती है । जीवको जब तक कर्मका सम्बन्ध रहता है तब तक ही उपाधिका सद्भाव रहता है ।

આત્મા શરીર ઔર કર્મકે ભેદસે ઉપાધિ ત્રીન પ્રકારકી હૈ । અશુભ વૃત્તિ-લ્લોટા પ્રણિધાન આત્માકી ઉપાધિ હૈ । આત્મા જવ અશુભ ક્રિયાઓંમેં પ્રવૃત્તિ કરતા હૈ યા અશુભ પ્રણિધાનવાલા

કર્મબંધ હતું તે તેને નાશ થઈ ચુકેલ છે. કર્મબંધસહિત હવેનો જ આ વ્યવહાર ઘટિત થાય છે. તેનાથી રહિત હવેનો નહિ.

‘ઉપાધિ’ શબ્દનો અર્થ વિશેષણ છે. કર્મબંધસહિત હવેને જ નારકી, મનુષ્ય આદિ વિશેષણ સંગત બેસે છે, કારણ કે મનુષ્યગતિ-નામકર્મના ઉદયથી હવે મનુષ્યવિશેષણવાળા થાય છે, નરકગતિ-નામકર્મના ઉદયથી હવે ‘નારકી’ એવા વિશેષણવાળા થાય છે, इत्यादि. तात्पर्य એ કે-કર્મબંધસહિત હવેને તત્તત્કર્મોદયમાં તત્તદ્વ્યપદેશતા ઘટિત થાય છે. અથવા સંસારપરિભ્રમણનું નામ પણ ઉપાધિ છે. આ સંસારપરિભ્રમણરૂપ ઉપાધિ જ્ઞાનાવરણીય આદિ કર્મોના સંબંધથી હવેને પ્રાપ્ત થાય છે હવેને ત્યાં સુધી કર્મનો સંબંધ રહે છે ત્યાં સુધી જ ઉપાધિનો સદ્ભાવ રહે છે.

આત્મા, શરીર અને કર્મના ભેદથી ઉપાધિ ત્રણ પ્રકારની છે. અશુભવૃત્તિ-જોડા પ્રણિધાન-વિચાર આત્માની ઉપાધિ છે, આત્મા ત્યારે અશુભ ક્રિયાઓમાં

પાધિના નારકાદિરિત્યુચ્યતે, યથા-જ્ઞાનાવરણીયાદિકર્મણઃ સદ્ભાવાત્ સંસારિષ્ઠ ક-  
શ્ચિન્મતિશ્રુતાવધિમનઃપર્યયવાન, કશ્ચિન્મન્દમતિઃ, કશ્ચિચ્છુદર્શની કશ્ચિદ્વચ્છુદર્શની,  
કશ્ચિત્ સુખી કશ્ચિદ્દુઃખી, કશ્ચિન્મિથ્યાદૃષ્ટિઃ કશ્ચિત્ સમ્યગ્દૃષ્ટિરિત્યાદિર્વ્યવહારો  
ભવતીતિ ભાવઃ ॥ સૂ૦ ૧૦ ॥

હોતા હૈ તવ ઇસકે કર્મરૂપ ઉપાધિ હોતી હૈ । ઇસસે હી જીવ શરીર  
ઉપાધિવાળા હોતા હૈ । કર્મ-ઉપાધિસે હી જીવોંકો શરીર-ઉપાધિ  
પ્રાપ્ત હોતી હૈ । અશરીરીકે કોઈ ઉપાધિ નહીં હોતી । નારક આદિ શરી-  
રકી ઉપાધિસે જીવ નારક આદિ નામોંસે વ્યવહૃત હોતા હૈ । ઉસ-ઉસ  
શરીરકી ઉપાધિસે જીવ ઉસ-ઉસ નામવાળા, યા ઉસ-ઉસ પર્યાયવાળા  
હોતા હૈ । જૈસે-જવ જ્ઞાનાવરણીયાદિ કર્મકે સદ્ભાવસે સંસારી જીવોંમેં  
કોઈ મતિશ્રુતજ્ઞાની, કોઈ મતિશ્રુતઅવધિજ્ઞાની, કોઈ મતિ, શ્રુત,  
અવધિ, ઓર મનઃપર્યયજ્ઞાની હોતા હૈ, કોઈ મન્દબુદ્ધિ હોતા હૈ; કોઈ  
ચક્ષુદર્શનવાળા, કોઈ અચક્ષુદર્શનવાળા, કોઈ સુખી, કોઈ દુઃખી, કોઈ  
મિથ્યાદૃષ્ટિ ઓર કોઈ સમ્યગ્દૃષ્ટિ હોતા હૈ તવ ઉનમેં ‘યહ મતિશ્રુતજ્ઞાની  
હૈ, યહ મતિશ્રુતઅવધિજ્ઞાની હૈ, યહ મતિ-શ્રુત-અવધિ-મનઃપર્યયજ્ઞાની  
હૈ, યહ ચક્ષુદર્શની હૈ, યહ અચક્ષુદર્શની હૈ, યહ સુખી હૈ, યહ દુઃખી હૈ,  
યહ મિથ્યાદૃષ્ટિ હૈ ઓર યહ સમ્યગ્દૃષ્ટિ હૈ’ ઇત્યાદિ વ્યવહાર  
હોતા હૈ ॥ સૂ૦ ૧૦ ॥

પ્રવૃત્તિ કરે છે અગર અશુભ પ્રણિધાનવાળા થાય છે ત્યારે તેને કર્મરૂપ ઉપાધિ થાય  
છે, તેનાથી જીવ શરીરઉપાધિવાળા થાય છે. કર્મઉપાધિથી જ જીવોને શરીર  
ઉપાધિ પ્રાપ્ત થાય છે. અશરીરીને કોઈ ઉપાધિ હોતી નથી. નારક આદિ શરીરની  
ઉપાધિથી જીવ નારક આદિ નામોથી વ્યવહૃત થાય છે. તે તે શરીરની ઉપાધિથી  
જીવ તે તે નામવાળા અગર તે તે પર્યાયવાળા બને છે. જેવી રીતે જ્ઞાનાવરણીયાદિ  
કર્મના સદ્ભાવથી સંસારી જીવોમાં ત્યારે કોઈ મતિ શ્રુત અને મનઃપર્યયજ્ઞાની  
થાય છે. કોઈ મન્દબુદ્ધિ હોય છે. કોઈ ચક્ષુદર્શનવાળા કોઈ અચક્ષુદર્શનવાળા,  
કોઈ સુખી કોઈ દુઃખી, કોઈ મિથ્યાદૃષ્ટિ અને કોઈ સમ્યગ્દૃષ્ટિ થાય છે ત્યારે  
તેમાં ‘આ મતિશ્રુતજ્ઞાની છે, આ મતિ-શ્રુત-અવધિજ્ઞાની છે, આ મતિશ્રુત-અવધિ-  
મનઃપર્યયજ્ઞાની છે, આ ચક્ષુદર્શની છે, આ અચક્ષુદર્શની છે, આ સુખી છે,  
આ દુઃખી છે, આ મિથ્યાદૃષ્ટિ છે, અને આ સમ્યગ્દૃષ્ટિ છે’ ઇત્યાદિ વ્યવહાર  
થાય છે ॥ સૂ૦ ૧૦ ॥

યદ્યેવં ભવતિ, તર્હિ મુનિના કિં કર્તવ્યમિત્યાદ-‘કમ્મં ચ’ इत्यादि ।

મૂલમ્=કમ્મં ચ પડિલેહાણ, કમ્મમૂલં ચ જં રૂપં ॥૧૧॥

છાયા—કર્મ ચ પ્રતિલેખ્ય, કર્મમૂલં ચ યત્ ક્ષણમ્ ॥ સૂ. ૧૧ ॥

ટીકા—કર્મ=જ્ઞાનાવરણીયાદિ, યદ્વા-પ્રકૃતિસ્થિત્યાદિવન્ધ્યં, પ્રતિલેખ્ય=સંસારસ્ય કારણમિતિ પર્યાલોચ્ય કર્મમૂલં=પ્રાણિષુ સાવચ્ચ વ્યાપારકરણં રાગદ્વેષમોહરૂપં વા કર્મણઃ કારણમિતિ ચ પર્યાલોચ્ય યત્ ક્ષણં=ક્ષણનં-હિંસનં-પ્રાણાતિપાતાદિ, તત્ પરિત્યજેદિત્યર્થઃ । ઉક્તञ्च—

यदि ऐसा है तो मुनिको क्या करना चाहिये ? सो कहते हैं—  
‘कम्मं च’ इत्यादि ।

જવ યદ્ નિશ્ચિત્ત હો ચુકા કિ કર્મરૂપ ઉપાધિસે હી જીવોમ્ નારકાદિ વ્યવહાર હોતા હૈ તો મુનિકા કર્તવ્ય હૈ કિ વહ જ્ઞાનાવરણીયાદિ કર્મોંકો, અથવા ઉનકે પ્રકૃતિવન્ધ, સ્થિતિવન્ધ આદિ વન્ધોંકો સંસારકા કારણ જાનકર કર્મોંકે મૂલ કારણ સાવચ્ચ વ્યાપારકો, અથવા રાગ દ્વેષ મોહકો જાન કર પ્રાણાતિપાતાદિક જો કાર્ય હૈ ઉનકા સર્વથા પરિત્યાગ કરે ।

भावार्थ—जीवोंमें नारकादि व्यवहार कर्मकृत है, कर्म संसारका कारण है । कर्म जीवोंकी शुभाशुभरूप प्रवृत्तिसे उत्पन्न होते हैं । अशुभादि कर्मों से नारकादि व्यवहार होता है । अशुभादि कर्मोंका मूल कारण हिंसादि पाप या राग द्वेष और मोह हैं । इस लिए जानी मुनिका कर्तव्य है कि वह उनके मूल कारणोंका सर्वथा त्याग करे । कहा भी है—

ને આમ જ હોય તો મુનિએ શું કરવું બેધએ ? તે કહે છે—‘કમ્મં ચ’ ઇત્યાદિ.

ત્યારે એ નિશ્ચય થયો કે કર્મરૂપ ઉપાધિથી જ હવેમાં નારકાદિ વ્યવહાર થાય છે તો મુનિનું કર્તવ્ય છે કે તે જ્ઞાનાવરણીયાદિ કર્મોંને અથવા તેના પ્રકૃતિબંધ, સ્થિતિબંધ આદિ બંધોંને સંસારનું કારણ બનીને તે કર્મોંનું મૂલ કારણ સાવચ્ચ વ્યાપારને, અને રાગદ્વેષ મોહને બાંધીને પ્રાણાતિપાતાદિક જે કાર્ય છે તેનો સર્વથા પરિત્યાગ કરે.

ભાવાર્થ—હવેમાં નારકાદિ વ્યવહાર કર્મકૃત છે, કર્મ સંસારનું કારણ છે. કર્મ હવેની શુભાશુભરૂપ પ્રવૃત્તિથી ઉત્પન્ન થાય છે. અશુભાદિ કર્મોંથી નારકાદિ વ્યવહાર થાય છે. અશુભાદિ કર્મોંનું મૂળ કારણ હિંસાદિ પાપ, અથવા રાગદ્વેષ અને મોહ છે. માટે જાની મુનિનું કર્તવ્ય છે કે તે તેના મૂળ કારણનો સદા ત્યાગ કરે. કહ્યું છે—

“કર્મણો જાયતે કર્મ, તતઃ સંજાયતે ભવઃ ।

ભવાચ્છરીરદુઃખં ચ, તતશ્ચાન્યતરો ભવઃ” ॥૧॥ ઇતિ ॥ મૂ૦ ૧૧ ॥

અપરં ચ મુનિકર્તવ્યમાહ—‘પડિલેહિય’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્—પડિલેહિય સર્વં સમાયાય દોહિં અંતેહિં અદિ-  
સ્સમાણે ॥ સૂ૦ ૧૨ ॥

છાયા—પ્રતિલેખ્ય સર્વં સમાદાય દ્વાભ્યામન્તાભ્યામદૃશ્યમાનઃ ॥ મૂ૦ ૧૨ ॥

ટીકા—પ્રતિલેખ્ય=કર્મસ્વરૂપં પર્યાલોચ્ય સર્વમ્=સર્વજ્ઞપ્રણીતમુપદેશં સંયમં  
વા સમાદાય=ગૃહીત્યા અન્તાભ્યામ્=અન્તકૃદ્ધ્યાં-કારણે કાર્યોપચારાત્, આત્મનો  
જ્ઞાનાદિગુણવિઘાતકાભ્યાં દ્વાભ્યાં=રાગદ્વેષાભ્યામ્ અદૃશ્યમાનઃ=અનુપલક્ષ્યમાણો  
વીતરાગ શબ્દવ્યપદેશ્યો ભવતિ ॥ મૂ૦ ૧૨ ॥

“કર્મણો જાયતે કર્મ, તતઃ સંજાયતે ભવઃ ।

ભવાચ્છરીરં દુઃખં ચ, તતશ્ચાન્યતરો ભવઃ ॥૧॥ ” ઇતિ ।

જીવોંકો કર્મસે હી કર્મકા બન્ધ હોતા હૈ । ઉસસે ભવ-સંસાર હોતા  
હૈ । ભવસે શરીર, શરીરસે દુઃખ ઓર દુઃખોંસે ફિર અન્ય ભવ ઉન્હેં  
મિલતા રહતા હૈ ॥ ૧ ॥ સૂ૦ ૧૧ ॥

ફિર ભી મુનિકે કર્તવ્ય કો કહતે હૈ—‘પડિલેહિય’ ઇત્યાદિ ।

કર્મ કે સ્વરૂપકી પર્યાલોચના કરકે સર્વજ્ઞકથિત ઉપદેશકો અર્થાન્  
સંયમકો ગ્રહણ કર આત્માકે જ્ઞાનાદિગુણોંકે વિઘાતક રાગ ઓર દ્વેષ સે  
રહિત હોતા હુઆ મુનિ-આત્મા વીતરાગ શબ્દકા વાચ્ય હો જાતા હૈ ।

ભાવાર્થ—મુનિકે અન્ય કર્તવ્ય કો પ્રકટ કરનેકે લિયે સૂત્રકાર કહતે  
હૈ કિ-વહ કર્મકે સ્વરૂપકા વિચાર કરે । કર્મ કે સ્વરૂપકા વિચાર કરનેસે

“કર્મણો જાયતે કર્મ, તતઃ સંજાયતે ભવઃ ।

ભવાચ્છરીરં દુઃખં ચ, તતશ્ચાન્યતરો ભવઃ ॥૧॥ ” ઇતિ ।

જીવોંને કર્મથી જ કર્મનો બંધ થાય છે. તેથી ભવ-સંસાર થાય છે. ભવથી  
શરીર, શરીરથી દુઃખ અને દુઃખોંથી વળી અન્યભવ તેને મળતો રહે છે ॥ સૂ૦ ૧૧ ॥

વળી પણ મુનિના કર્તવ્ય બાબત કહે છે—‘પડિલેહિય’ ઇત્યાદિ

કર્મના સ્વરૂપની પર્યાલોચના કરીને સર્વજ્ઞકથિત ઉપદેશને અર્થાન્ સંય-  
મને શબ્દ કી આત્માના જ્ઞાનાદિ ગુણોના વિઘાતક રાગ અને દ્વેષથી મુનિ  
બનીને મુનિ-આત્મા વીતરાગ શબ્દનો વાચ્ય થઈ જાય છે

ભાવાર્થ—મુનિના બીજા કર્તવ્યને પ્રગટ કરવા માટે સૂત્રકાર કહે છે કે-  
તે કર્મના સ્વરૂપનો વિચાર કરવાથી તેને તેવો દૃઢ વિશ્વાસ થઈ જશે કે આત્માના

મૂલમ્—તં પરિન્નાય મેહાવી વિદિત્તા લોગં વંતા લોગસન્નં સે મહ્મં પરક્કમિજ્જાસિ-ત્તિ વેમિ ॥ સૂ૦ ૧૩ ॥

છાયા—તત્ પરિજ્ઞાય મેધાવી વિદિત્વા લોકં વાન્ત્વા લોકસંજ્ઞાં સ મતિમાન પરાક્રમેત—ઇતિ વ્રવીમિ ॥ સૂ૦ ૧૩ ॥

ટીકા—તત્=કર્મણઃ કારણં રાગદ્વેષરૂપં પરિજ્ઞાય=જ્ઞપરિજ્ઞયા કર્મવન્ધહેતું વિજ્ઞાય પ્રત્યાખ્યાનપરિજ્ઞયા પરિત્યજ્ય લોકં વિષયકષાયવ્યામોહિતં સંસારિણં

उसे यह दृढ़ विश्वास हो जावेगा कि—आत्माके ज्ञानादिक गुणोंका घातक यदि कोई हैं तो ये कर्म ही हैं, रागद्वेषको जो ज्ञानादिक गुणोंका घातक सूत्रकारने प्रकट किया है वह कारणमें कार्यके उपचारसे किया है । क्योंकि राग-द्वेषसे जीवोंके नवीन कर्मोंका बन्ध होता है, अतः राग द्वेष उनके बन्धमें कारण हैं, और कर्मोंका बन्ध कार्य है । इन कर्मोंका अभाव जब तक सर्वज्ञ प्रभुके उपदेशानुसार जीव अपनी प्रवृत्ति नहीं बनायेगा तब तक नहीं कर सकता, अर्थात् संयमकी आराधना विना इनका अभाव नहीं हो सकता । यदि उसे वीतराग बनना है तो उसका कर्तव्य है कि वह राग द्वेषका अन्त करनेके लिये उक्त विधिका पालन करे ॥सू० १२॥

इसी बातको सूत्रकार फिर पुष्ट करते हैं—‘तं परिन्नाय’ इत्यादि ।

साधु कर्मोंके बन्धसे मूल कारण राग द्वेषको ज्ञપરિજ્ઞાસે જાન કર ઓર પ્રત્યાખ્યાનપરિજ્ઞાસે उनका त्याग करे । ‘समस्त संसारी जीव विषय-कषायोंसे व्यामोहित हो रहे हैं इस लिये इन विषयोंकी वांछाको

જ્ઞાનાદિક ગુણોના ઘાતક જે કોઈ હોય તો તે કર્મ જ છે. રાગ દ્વેષને જે જ્ઞાનાદિક ગુણોના ઘાતક સૂત્રકારે પ્રગટ કર્યા છે તે કારણમાં કાર્યના ઉપચારથી કરેલ છે. કારણ કે રાગ-દ્વેષથી હોવાને નવીન કર્મોનો બંધ થાય છે, માટે રાગ-દ્વેષ તેના બંધમાં કારણ છે, અને કર્મોનો બંધ કાર્ય છે. તે કર્મોનો અભાવ જ્યાં સુધી સર્વજ્ઞ પ્રભુના ઉપદેશાનુસાર હવ પોતાની પ્રવૃત્તિ નહિ બનાવે ત્યાં સુધી કરી શકતો નથી, અર્થાત્ સંયમની આરાધના વિના તેનો અભાવ થઈ શકતો નથી, કદાચ તેને વીતરાગ બનવાનું છે તો તેનું કર્તવ્ય છે કે તે રાગ દ્વેષનો અંત કરવા માટે કહેલી વિધિનું પાલન કરે. ॥ સૂ૦ ૧૨ ॥

આ વાતને સૂત્રકાર ફરીથી પુષ્ટ કરે છે—‘તં પરિન્નાય’ ઇત્યાદિ.

સાધુ કર્મોના બંધમાં મૂલ કારણ રાગ દ્વેષને જ—પરિજ્ઞાથી જાણીને અને પ્રત્યાખ્યાન-પરિજ્ઞાથી તેનો ત્યાગ કરે. ‘समस्त संसारी हव विषय कषायोથી व्यामोहित થઈ રહેલ છે માટે તેવા વિષયોની વાંછાને સદા દૂર કરવી જોઈએ.’



વિદિત્વા, લોકસંજ્ઞાં=વિષયવાઙ્ઘારૂપાં વાન્ત્યા=દૂરીકૃત્ય સ મતિમાન્=માધુ-  
મર્યાદારક્ષણતત્પરઃ સન્ પરાક્રમેત=સંયમારાધને ઉદ્યુક્તો ભવેત્ । યદ્વા-અપ્ત-  
વિધં કર્મ ક્ષપયિતુમુત્સહેત । સંયમં ગૃહીત્વા ન પશ્ચાત્તાપમવલમ્બેત, સિંહત્વેન નિષ્ક્ર-  
મ્ય શૃગાલત્વેન ન વિહરેત્ । અત્ર ચતુર્ભઙ્ગી વાચ્યા । ઇતિ વ્રવીમિ પૂર્વવત્ ॥મૂ૦ ૧૩॥

તૃતીયાધ્યયનસ્ય પ્રથમોદ્દેશઃ સમાપ્તઃ ॥ ૩-૧ ॥

સદા દૂર કરના चाहिये' ऐसा विचार कर उसका सदा परिहार करे,  
और मुनिपनेकी मर्यादाकी रक्षा करनेमें तत्पर वह मतिमान् मुनि संयम  
की आराधना करनेमें दत्तावधान रहे; क्योंकि संयमकी आराधनाके बिना  
कर्मोंका नाश नहीं हो सकता, इस लिये आठ कमका नाश करनेके  
अभिप्राय से संयमकी आराधना करे । संयमको ग्रहण कर फिर पश्चात्ताप  
न करे, अर्थात्-सिंहवृत्तिसे संयमकी आराधना करे किन्तु इसकी आरा-  
धनामें शृगालवृत्तिको स्थान न दे । यहां इस विषयमें चतुर्भङ्गी समझनी  
चाहिये, वह इस प्रकार—

(१) सिंहवृत्तिसे निकले सिंहवृत्तिसे पाले । (२) सिंहवृत्तिसे निकले  
शृगालवृत्तिसे पाले । (३) शृगालवृत्तिसे निकले सिंहवृत्तिसे पाले ।  
(४) शृगालवृत्तिसे निकले शृगालवृत्तिसे पाले ।

इनमें पहला और तीसरा भंग श्रेष्ठ है ॥ 'इति व्रवीमि' इसका  
अर्थ पहले कहा जा चुका है ॥ सू० १३ ॥

॥ तृतीय अध्ययनका प्रथम उद्देश समाप्त ॥ ३-१ ॥

એવો વિચાર કરી તેનો સદા પરિહાર કરે અને મુનિપણુની મર્યાદાની રક્ષા કર-  
વામાં તત્પર તે મતિમાન્ મુનિ સંયમની આરાધના કરવામાં સાવધાન રહે;  
કારણ કે સંયમની આરાધના વિના કર્મોનો નાશ થઈ શકતો નથી, માટે આઠ  
કર્મોનો નાશ કરવાના અભિપ્રાયથી સંયમની આરાધના કરે. સંયમને ગ્રહણ કરી  
પછી પશ્ચાત્તાપ ન કરે, અર્થાત્ સિંહવૃત્તિથી સંયમની આરાધના કરે પણ તેની  
આરાધનામાં શિયાળવૃત્તિને સ્થાન ન આપે. આઠકાળે આ વિષયમાં ચતુર્ભંગી  
સમજવી જોઈએ, તે આ પ્રકારે—

(૧) સિંહવૃત્તિથી નિકળે, સિંહવૃત્તિથી પાળે. (૨) સિંહવૃત્તિથી નિકળે  
શૃગાલવૃત્તિથી પાળે. (૩) શૃગાલવૃત્તિથી નિકળે, સિંહવૃત્તિથી પાળે. (૪) શૃગાલ-  
વૃત્તિથી નિકળે, શૃગાલવૃત્તિથી પાળે.

તેમાં પહેલો અને ત્રીજો ભંગ ઉત્તમ છે. 'ઇતિ વ્રવીમિ' એનો અર્થ પહેલાં  
કહેવામાં આવેલ છે. ૧૩

ત્રીજા અધ્યયનનો પ્રથમ ઉદ્દેશ સમાપ્ત ૩-૧.



## તૃતીયાધ્યયનસ્ય દ્વિતીયોદ્દેશઃ ॥

તૃતીયાધ્યયનસ્ય પ્રથમોદ્દેશકે ભાવસુખાઃ પ્રતિવોધિતાઃ, અથ તેષાં સ્વાપસ્ય ફલં દુઃખં ભવતીત્યાવેદયિતું દ્વિતીયોદ્દેશકં પ્રસ્તુવન્નાહ—‘જાઈં ચ વુડ્ઢિં ચ’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્—જાઈં ચ વુડ્ઢિં ચ ઇહઽજ્જ પાસે, ભૂણ્હિં જાણે પડિ-  
લેહ સાયં । તમ્હાઽતિવિજ્જો પરમંતિ ણચ્ચા, સમ્મત્તદંસી ન  
કરેહ પાવં ॥ સૂ૦ ૧ ॥

છાયા—જાતિં ચ વૃદ્ધિં ચ ઇહ અથ પચ્ચ, ભૂતૈર્જાનીહિ પ્રતિલેખ્ય સાતમ્ ।  
તસ્માત્ અતિવિદ્યઃ પરમમ્ ઇતિ જ્ઞાત્વા, સમ્યક્ત્વદર્શી ન કરોતિ પાપમ્ ॥ સૂ૦ ૧ ॥

ટીકા—ઇહ=સંસારે અદ્યૈવ=અસ્મિન્નેવ દિવસે, અલં કાલક્ષણેનેતિ ભાવઃ;  
જાતિમ્=ગર્ભોત્પત્તિં વૃદ્ધિં=વાલાદિવૃદ્ધાવસ્થાપર્યન્તં વર્ધનં પ્રાણિનાં, પચ્ચ=ગર્ભોત્પત્તિ-

### ત્રીસરે અધ્યયનકા દૂસરા ઉદ્દેશ ॥

તૃતીય અધ્યયનકે પ્રથમ ઉદ્દેશમેં ભાવસુખ પ્રાણિયોંકા નિરૂપણ  
અચ્છી તરહસે કિયા જા ચુકા હૈ । ઇસ દ્વિતીય ઉદ્દેશમેં યહ સમસ્યાયા  
જાવેગા કિ ઉનકી ઇસ નિદ્રાકા ફલ ઉન્હેં દુઃખકે સિવાય કુછ નહીં  
હોતા હૈ । ઇસી વિષયકો સ્પષ્ટ કરનેકે લિયે સૂત્રકાર ઇસ દ્વિતીય ઉદ્દેશ  
કા પ્રારંભ કરતે હુણ પ્રથમ સૂત્ર કહતે હૈ—‘જાઈં ચ વુડ્ઢિં ચ’ ઇત્યાદિ ।

શિષ્યકો સંવોધન કરતે હુણ સૂત્રકાર કહતે હૈ કિ હે શિષ્ય ! આજ  
હી તુમ ઇસ વાતકા જ્ઞાનદ્રષ્ટિસે વિચાર કરો, કલ પરસોંકી વાત જાને  
દો, સમય વીતાનેસે ક્યા ફાયદા ? સંસારમેં પ્રાણિયોંકી ગર્ભોત્પત્તિસે

### ત્રીજા અધ્યયનનો બીજો ઉદ્દેશ.

ત્રીજા અધ્યયનના પ્રથમ ઉદ્દેશમાં ભાવસુખ પ્રાણીઓ વિષે સારી રીતે  
સમન્તવેલ છે. આ બીજા ઉદ્દેશમાં એ સમન્તવવામાં આવશે કે તેની આ નિદ્રાનું  
ફળ તેને દુઃખ સિવાય બીજું કંઈ થતું નથી. આ વિષયને સ્પષ્ટ કરવા માટે  
સૂત્રકાર આ બીજા ઉદ્દેશનો પ્રારંભ કરીને પ્રથમ સૂત્ર કહે છે—‘જાઈં ચ  
વુડ્ઢિં ચ’ ઇત્યાદિ.

શિષ્યને સંવોધન કરીને સૂત્રકાર કહે છે કે હે શિષ્ય ! આજ તમે  
આ બાબતનો જ્ઞાનદ્રષ્ટિથી વિચાર કરો, કાલ પરમદિવસની વાત જાણો દો. સમય  
વીતાવવામાં શું ફાયદો ? સંસારમાં પ્રાણીઓની ગર્ભોત્પત્તિથી લગાવી બાલાદિ-

વૃદ્ધિશ્ચ પ્રાણિનાં દુઃસ્વસહભાવિન્યેવ ભવતીતિ જ્ઞાનદૃષ્ટ્યાઽવલોકયેત્યર્થઃ । ઉક્તञ्च—

“ જાયમાણસ્સ જં દુક્કલં, મરમાણસ્સ જંતુણો ।

તેણ દુક્કલેણ સંતત્તો, ન સરહ જાહમપ્પણો ॥ ૧ ॥

વિરસરસિયં રસંતો, તો સો જોણીમુદ્દાઽ નિપ્પિહ્હ ।

માઝ્ઞ અપ્પણોઽવિ અ વેઅણમઽલં જણેમાણો ॥ ૨ ॥ ”

લગાકર બાલાદિ-વૃદ્ધાવસ્થાપર્યન્તકી સવ અવસ્થાએ દુઃસ્વોંકે સાથ ૨ હી રહનેવાલી હૈં । સંસારી પ્રાણીકી એસી કોઈં ખી અવસ્થા નહીં હૈ જિસમેં દુઃસ્વોંકા સમ્બન્ધ ન હો । ગર્ભમેં આના ઓર વહાં રહના યહ એક મહા દુઃસ્વમય હૈ । યહ પ્રાણી યેન કેન પ્રકારેણ વહાં સે સુરક્ષિત દશા મેં ઉત્પન્ન હો જાતા હૈ ઓર બાલ-યુવા-વૃદ્ધાવસ્થા તક પહુંચ ખી જાતા હૈ તો ખી ઇન અવસ્થાઓમેં ઇસ જીવકો રંચમાત્ર ખી સાતા નહીં મિલતી હૈ । દુઃસ્વોંકે સિવાય યહાં સુસ્વોંકા નામ ખી નહીં હૈ । અતઃ ગર્ભોત્પત્તિ ઓર બાલાદિ વૃદ્ધાવસ્થા તક કી સમસ્ત દશાએ દુઃસ્વોંકે સાથ ૨ હી રહને વાલી હૈં । અન્યત્ર ખી યહી વાત કહી હૈ—

“ જાયમાણસ્સ જં દુક્કલં, મરમાણસ્સ જંતુણો ।

તેણ દુક્કલેણ સંતત્તો, ન સરહ જાહમપ્પણો ॥ ૧ ॥

વિરસરસિયં રસંતો, તો સો જોણીમુદ્દાઽ નિપ્પિહ્હ ।

માઝ્ઞ અપ્પણોઽવિ ય, વેઅણમઽલં જણેમાણો ॥ ૨ ॥ ” ઇતિ ।

વૃદ્ધાવસ્થાપર્યન્તની સઘણી અવસ્થાઓ દુઃખોની સાથે ને સાથે રહેવાવાળી છે. સંસારી પ્રાણીની એક પણ અવસ્થા એવી નથી કે જેમાં દુઃખોનો સંબંધ ન હોય. ગર્ભમાં આવવું અને ત્યાં રહેવું એ એક મહાન દુઃખ છે. તે પ્રાણી કેાઈં પ્રકારે ત્યાંથી સુરક્ષિત દશામાં ઉત્પન્ન થઈ જાય છે અને બાળ-યુવા-વૃદ્ધાવસ્થા સુધી પહોંચી પણ જાય છે તો પણ આ અવસ્થાઓમાં આ જીવને ૨૪ માત્ર પણ સાતા મળતી નથી. દુઃખો સિવાય આંહી સુખોતું નામ પણ નથી. માટે ગર્ભોત્પત્તિ અને બાળાદિ વૃદ્ધાવસ્થા સુધીની સમસ્ત દશાઓ દુઃખોની સાથે જ રહેવાવાળી છે. અન્યત્ર પણ આ વાત કહેલ છે—

“ જાયમાણસ્સ જં દુક્કલં, મરમાણસ્સ જંતુણો ।

તેણ દુક્કલેણ સંતત્તો, ન સરહ જાહમપ્પણો ॥ ૧ ॥

વિરસરસિયં રસંતો, તો સો જોણીમુદ્દાઽ નિપ્પિહ્હ ।

માઝ્ઞ અપ્પણોઽવિ ય, વેઅણમઽલં જણેમાણો ॥ ૨ ॥ ” ઇતિ

તથા—“ હીણભિષ્ણસ્સરો દીણો, વિવરીઓ વિચિત્તઓ ।

દુઃખલો દુઃખિઓ વસઈ, સંપત્તો ચરિમં દસં ” ॥૩॥ ઇત્યાદિ ।

છાયા—જાયમાનસ્ય યદ્દુઃખં મ્રિયમાણસ્ય જન્તોઃ ।

તેન દુઃખેન સંતપ્તો ન સ્મરતિ જાતિમાત્મનઃ ॥ ૧ ॥

વિરસરસિતં રસન્ તતઃ સ યોનિમુખાદ્ નિસ્સરતિ ।

માતુરાત્મનોઽપિ ચ વેદનામતુલાં જનયન્ ॥ ૨ ॥

હીનભિન્નસ્વરો દીનો વિપરીતો વિચિત્તકઃ ।

દુર્બલો દુઃખિતો વસતિ સંપ્રાપ્તઃ ચરમાં દશામ્ ॥ ૩ ॥

તથા—“ હીણભિષ્ણસ્સરો દીણો, વિવરીઓ વિચિત્તઓ ।

દુઃખલો દુઃખિઓ વસઈ, સંપત્તો ચરિમં દસં । ॥૧॥ ” ઇતિ

ઉત્પન્ન હોનેવાલે એવં મરનેવાલે પ્રાણીકો જો દુઃખ હોતા હૈં ઉસ દુઃખસે સંતપ્ત બના હુઆ પ્રાણી અપની ઉત્પત્તિકા સ્મરણ તક નહીં કરતા ॥ ૧ ॥ જિસ સમય યહ જીવ યોનિમુખ-ગર્ભસ્થાનસે નિકલતા હૈં ઉસ સમય વહુત વુરી તરહસે રોતા હૈં, ક્યોં કિ ઉસ સમય વહ અપની માતા કે ઓર અપને લિયે અતુલ-વર્ણનાતીત-વેદનાકા કારણ બનતા હૈં ॥૨॥

તથા-ફિર વહ જવ વૃદ્ધાવસ્થામેં પહુંચતા હૈં તવ હીન થન જાતા હૈં । હસકા સ્વર અસ્પષ્ટ-ગરગર શબ્દવાલા હો જાતા હૈં, દશા હસકી દયનીય હો જાતી હૈં । તરુણાવસ્થામેં હસકી જો હાલત થી ઉસસે ભિન્ન હી હસકી હાલત હો જાતી હૈં । ચિત્ત ભી હસકા ઠિકાને નહીં રહતા । ઉસ સમય યહ દુર્બલ ઓર સદા દુઃખિત હી રહા કરતા હૈં ॥ ૩ ॥

તથા—“ હીણભિષ્ણસ્સરો હીણો, વિવરીઓ વિચિત્તઓ ।

દુઃખલો દુઃખિઓ વસઈ, સંપત્તો ચરિમં દસં ” ॥ ૩ ॥ ઇતિ ।

ઉત્પન્ન થનાર અને મરનાર પ્રાણીને જે દુઃખ થાય છે તે દુઃખથી સંતપ્ત બનેલા પ્રાણી પોતાની ઉત્પત્તિનું સ્મરણ પણ કરતો નથી ॥૧॥ જે વખતે આ જીવ યોનિમુખ-ગર્ભસ્થાનથી નીકળે છે તે સમય ઘણી જ બુરી રીતે રડે છે; કારણ કે તે વખત તે પોતાને માટે તેમ જ પોતાની માતા માટે અતુલ-વર્ણનાતીત-વેદનાનું કારણ બને છે ॥ ૨ ॥

તથા વળી તે જ્યારે વૃદ્ધાવસ્થામાં પહોંચે છે ત્યારે હીન બની જાય છે. તેનો સ્વર અસ્પષ્ટ-ગરગર શબ્દવાળો બની જાય છે તેની દશા દયાજનક થઈ પડે છે તરુણ-અવસ્થામાં જે તેની હાલત હતી તે હાલતથી ખીલકુલ ભિન્ન તેની હાલત થઈ જાય છે. ચિત્ત પણ તેનું ઠેકાણું રહેતું નથી. આ વખતે તે દુર્બળ અને સદા દુઃખી જ રહ્યા કરે છે. ॥ ૩ ॥

किञ्च—भूतैः=उच्चारादिचतुर्दशसु जीवोत्पत्तिस्थानेषु जातैर्भूतग्रामैः सह स्वात्मनः सातं=सुखं प्रतिलेख्य=पर्यालोच्य जानीहि । यथा तव सुखं प्रियमस्ति, तथाऽन्येषामपीति, यथा च तव दुःखे द्वेषः तथाऽन्येषामपीति ज्ञात्वा कस्यापि जीवस्य दुःखं नोत्पादनीयम्, एवं कृते दुःखं न प्राप्स्यसीति भावः ।

तस्मात्—प्राणिनां सुखदुःखपर्यालोचनात्, अतिविद्यः=अतीव विद्या यस्य सः अतिविद्यः=तत्त्वपरिच्छेदविद्याविभूषितः, परमं=परमश्रेयस्करं निर्वाणपदं तत्प्रापकं सम्यग्दर्शनादिकं वाऽस्ति, इति ज्ञात्वा सम्यक्त्वदर्शी=परमार्थदर्शी सन् पापं न करोति, सावद्यक्रियां न समाचरतीत्यर्थः ॥ सू० १ ॥

तथा हे शिष्य ! जीवोंकी उत्पत्तिके जो उच्चार ( विष्टा ) प्रस्त्रवण (मूत्र) आदि चौदह स्थान हैं उनमें उत्पन्न हुए जीवोंके साथ अपने सुख की पर्यालोचना करो, अर्थात् इस बातका सदा विचार करो कि जिस प्रकार सुख हमें प्रिय है उसी प्रकार अन्य जीवोंको भी वह प्रिय है, दुःख जिस प्रकार हमें अप्रिय-अनिष्ट है उसी प्रकार वह अन्य जीवोंको भी अनिष्ट है । ऐसा विचार कर या जानकर किसीको भी दुःख नहीं देना चाहिये । इस प्रकारसे विचार करने पर तुम स्वयं दुःख न पाओगे ।

इस प्रकार प्राणियों के सुख और दुःखकी पर्यालोचनासे वास्तविक तत्त्वका प्रकाशक ज्ञान जीवको प्राप्त होता है । उस ज्ञानसे युक्त वह मुक्तिपदको अथवा उसको प्राप्त करानेवाले सम्यग्दर्शनादिको परम-परमकल्याणकारी जानकर समदर्शी हो जाता है और सावद्य क्रियाओं को नहीं करता है ॥ सू० १ ॥

तथा हे शिष्य ! जीवोंकी उत्पत्तिना जे उच्चार=विष्टा प्रस्त्रवण-भूत आदि चौदह स्थान छे, तेमां उत्पन्न थयेला जीवोंकी साथे आपणा सुखनी पर्यालोचना करे. अर्थात् जे बातना सदा विचार करे जे जे प्रकारे सुख जोगोने प्रिय छे ते प्रकारे अन्य जीवोने पण प्रिय छे. दुःख जे प्रकारे जोगोने अप्रिय-अनिष्ट छे ते प्रकारे ते अन्य जीवोने पण अनिष्ट छे. जेवो विचार करी जगज्जगतीने डोढने पण दुःख न आपवुं जेईजे आ प्रकारेना विचार करवाधी तमे स्वयं दुःख पामथो नहि

आ प्रकारे प्राणीजोना सुख जने दुःखोनी पर्यालोचनागी वास्तविक तत्त्वना प्रकाशक ज्ञान जीवने प्राप्त थाय छे. ते जानगी युक्त ते मुक्तिपदने नित्यजानेने प्राप्त करवावनाइ सम्यग्दर्शनादिने परम-परमकल्याणकारी जानीने समदर्शी थय जाय छे जने सावद्य क्रियाजो करता नथी ॥ सू० १ ॥

મૂલમ્—ઉમ્મુંચ પાસંં ઇહ મત્ત્યૈઃ આરંભજીવી ઉભયાણુ-  
પસ્સી । કામેસુ ગિદ્ધા નિચયં કરેન્તિ, સંસિચ્ચમાણા પુણેરેન્તિ  
ગર્ભમ્ ॥ સૂ૦ ૨ ॥

છાયા—ઉન્મુશ્ચ પાશમ્ ઇહ મત્યૈઃ આરંભજીવી ઉભયાણુદર્શી । કામેષુ ગૃદ્ધાઃ  
નિચયં કુર્વન્તિ, સંસિચ્ચમાનાઃ પુનર્યન્તિ ગર્ભમ્ ॥ સૂ૦ ૨ ॥

ટીકા—‘ઉમ્મુંચ’ ઇત્યાદિ । ઇહ=મનુષ્યલોકે, મત્યૈઃ=મનુષ્યૈઃ સાકં, પાશં=  
વન્ધનહેતુ કલત્રાદિસમ્બન્ધમ્, યદ્વા-પાશં દ્રવ્યભાવભેદાદ્ દ્વિવિધં, દ્રવ્યતો રજ્જ્વા-  
દિકં, ભાવતો વિષયકપાયાદિરુપમ્, ઉન્મુશ્ચ=ઉત્-ઉત્કર્ષતઃ-અતિશયેન નિરાકુરુ ।  
પાશયુક્તો હિ કામભોગેચ્છયા પ્રાણિર્હિંસાદિકં કરોતીત્યાહ-‘આરંભજીવી’ ઇત્યાદિ ।

‘ઉમ્મું ચ પાસંં’ ઇત્યાદિ । ઇસ મનુષ્યલોકમેં મનુષ્યોંકે સાથ પાશ-  
-વન્ધનકે હેતુ પુત્રકલત્રાદિ સમ્બન્ધ-કા હે શિષ્ય ! તુમ સર્વથા પરિહાર  
કરો । અથવા દ્રવ્ય ઓર ભાવકે ભેદસે પાશ-વન્ધન દો પ્રકારકા હૈ । રસ્સી  
આદિ પદાર્થ દ્રવ્યસે, વિષયકપાયાદિક ભાવસે વન્ધન હૈ, ઇન દોનોં પ્રકાર  
કે વન્ધનોંકા સર્વથા ત્યાગ કરો ।

ભાવાર્થ—સંસારમેં જીવોંકે લિયે સવસે પ્રવલ બંધનકા કારણ પુત્ર-  
કલત્રાદિકા સમ્બન્ધ હૈ । આત્માર્થી ઇસ વન્ધનકે હેતુકા જબનક ત્યાગ નહોં  
કરતા તય તક વહ આત્મકલ્યાણકે માર્ગપર આરુઢ નહોં હો સકના, ઇસી-  
લિયે उसका સર્વથા ત્યાગ કરનેકા યહાં ઉપદેશ દિયા ગયા હૈ । ઇસ પાશસે  
યુક્ત પ્રાણી કામભોગકી ઇચ્છાસે પ્રાણિર્હિંસાદિરુપ આરંભોંકો કરતા હૈ ।

‘ઉમ્મુંચ પાસંં’ ઇત્યાદિ. આ મનુષ્યલોકમાં મનુષ્યોની સાથે પાશ-બંધનના  
હેતુ પુત્રકલત્રાદિક સંબંધ-નો હે શિષ્ય ! તમે સર્વથા પરિત્યાગ કરો. અથવા દ્રવ્ય  
અને ભાવના ભેદથી પાશ-બંધન બે પ્રકારના છે. રસ્સી આદિ પદાર્થ દ્રવ્યથી, વિષય-  
કપાયાદિક ભાવથી બંધન છે. એ બંને પ્રકારના બંધનનો સર્વથા ત્યાગ કરો.

ભાવાર્થ—સંસારમાં જીવો માટે બધાથી પ્રબળ બંધનનું કારણ પુત્રકલ-  
ત્રાદિકનો સંબંધ છે. આત્માર્થી આ બંધનના હેતુનો બંધ ત્યાગ નથી  
કરતો ત્યાં સુધી તે આત્મ-કલ્યાણના માર્ગ ઉપર આગળ વધી શકતો નથી.  
માટે તેનો સર્વથા ત્યાગ કરવાનો આ ઠેકાણે ઉપદેશ આપેલ છે. આ પાશથી  
યુક્ત પ્રાણી કામભોગની ઇચ્છાથી પ્રાણિહિંસાદિરૂપ આરંભો કરે છે.

યસ્તુ-આરમ્ભજીવી=આરમ્ભેણ જીવિતું શીલ્મસ્યેતિ સઃ, આરમ્ભપ્રકલ્પિત-  
જીવિકઃ, સ ઉભયાનુદર્શી=એહિકપારત્રિકદુઃસ્વભોગી ભવતીત્યર્થઃ ।

કામેષુ=વિષયોપભોગેષુ, ગૃહ્ણાઃ=લોલુપાઃ, નિચયમ્=અષ્ટવિધકર્મમંચયં કુર્વન્તિ ।  
સંસિચ્યમાનાઃ=કામભોગાદિજન્યકર્મરજસા શ્લિષ્યમાણાઃ પુનઃ=વારં વારં ગર્ભ  
યન્તિ=ઉપયાન્તિ, સંસારચક્રે ઘટીયન્ત્રવદ્ ભ્રામ્યન્તીતિ ભાવઃ ॥ સૂ૦ ૨ ॥

મૂલમ્-અવિ સે હાસમાસજ્જ, હંતા નંદીતિ મન્નઈ ।

અલં વાલસ્સ સંગેણ, વેરં વડ્ઢઈ અપ્પણો ॥ સૂ૦ ૩ ॥

છાયા--અપિ સ હાસમાસાઘ, હત્વા નન્દીતિ મન્યતે ।

અલં વાલસ્ય સદ્ધેન, વેરં વર્ધયતિ આત્મનઃ ॥ સૂ૦ ૩ ॥

ટીકા--‘ અવિ સે ’ इत्यादि । सः=अन्नः-विषयलोलुपो हासम्=मनोविनोदम्  
आसाद्य=स्वीकृत्य, हत्वाऽपि=प्राणिनो निहत्याऽपि नन्दी=‘ क्रीडा ’ इति मन्त्यते ।

આરંભસે જીનેકા જિસકા સ્વભાવ હૈ વહ આરંભજીવી હૈ । મહાન્  
આરંભોં દ્વારા જો અપની આજીવિકા કરતે હૈં વે ઇસ લોક ઓર પરલોક-  
દોનોં-કે દુઃસ્વોંકો ભોગતે હૈં । કારણ કિ વિષયભોગોંમેં ગૃહ્ણ-લોલુપી  
પ્રાણી અષ્ટવિધકર્મોંકા સંચય કરતે હૈં ઓર ઇન કામભોગોંસે ઉપાર્જિત  
કર્મરૂપી ધૂલિસે લિપ્ત હોકર વે વારંવાર અરહટકે ઘટમાલકી તરહ ઇસ  
સંસારરૂપી ચક્રમેં ધૂમતે રહતે હૈં ॥ સૂ૦ ૨ ॥

‘ અવિ સે ’ इत्यादि ।

વહ વિષયી પ્રાણી મનોવિનોદકો પાકર, અર્થાત્ મનોવિનોદ કરને  
કે અભિપ્રાયસે પ્રેરિત હોકર પ્રાણિયોંકી હિંસા કરકે મી આનન્દિત હોના  
હૈ । ઉસ હિંસાકો યહ અપને મનોવિનોદકા સાધન માન ક્રીડા સમઘ્નતા હૈ

આરંભથી હવવાનો જેનો સ્વભાવ છે તે આરંભહી છે. મહાન  
આરભોદ્વારા જે પોતાની આહુવિકા કરે છે તે આ લોક અને પરલોક બન્નેના  
દુઃખો ભોગવે છે, કારણ કે વિષયભોગોમાં ગૃહ્ણ-લોલુપી પ્રાણી અષ્ટવિધ કર્મોના  
સંચય કરે છે. અને આ કામભોગથી ઉપાર્જિત કર્મરૂપી ધૂળથી લિપ્ત બનીને તે  
વારંવાર રેંટના ઘટમાલની માફક આ સંસારરૂપી ચક્રમાં ધૂમતો રહે છે ॥ સૂ૦ ૨ ॥  
‘ અવિ સે ’ इत्यादि.

તે વિષયી પ્રાણી મનોવિનોદ માટે અર્થાત્ મનોવિનોદ કરવાના અભિપ્રા-  
યથી પ્રેરિત બનીને પ્રાણીઓની વિચાર કરીને પણ આનન્દિત થાય છે. તેવી વિચારને  
તે પોતાના મનોવિનોદનું સાધન માની ક્રીડા સમજે છે. હુહું બોલે છે, કરે છે

બ્રૂતે ચ મૃપાવાદં યથા-મૃગાદયથૈતે મૃગયાર્થં ધાત્રા સૃષ્ટાઃ, મૃગયા ચ ક્રીડાર્થં ભવતીતિ । યદિ મનોવિનોદાર્થમપિ પ્રાણિનો હત્વા મોદતે તર્હિ માંસાદ્યુપભોગાર્થં પ્રાણિનો નિહત્ય પ્રમુદિતો ભવતીત્યત્ર કિમાશ્ચર્યમ્ । એવમદત્તાદાનાદિદોષાનપિ સ ઉપાદત્તે । એવં ચેત્તર્હિ કિં કર્તવ્યં મુનિના ? इत्याह--‘अलम्’ इत्यादि । वालस्य=अन्नस्य संगेन=हास्यादिसङ्गेन प्राणातिपातादिरूपेण वा अलं=व्यर्थम्, अज्ञस्य यः संगो हास्यादिरूपः प्राणातिपातादिरूपो वा स सर्वथा वर्जनीय इत्यर्थः । वालस्य सङ्गकरणे दोषं दर्शयति-‘वैरम्’ इत्यादि । वालस्य सङ्गः आत्मनो वैरं=द्वेषं वर्द्धयति, नूतनभवानुपङ्गिवैरानुबन्धिकर्मणा बध्यते इत्यर्थः ॥ सू० ३ ॥

और झूठ ही कहता है कि ये मृगादिक पशु शिकारके लिये ही विधाताने बनाये हैं । शिकार क्रीडा करनेके निमित्तसे ही की जाती है । शिकार करनेसे मनोविनोद होता है । यदि मनोविनोदके लिये भी प्राणियोंकी हिंसा कर जो आनन्द खानता है वह मांसादिक खानेके लिये यदि उनकी हिंसा कर हर्षित होता है तो इसमें कौनसी अचरजकी बात है ? । इसी प्रकार विषयोंमें लंपट बना हुआ प्राणी चोरी कुशील आदि पापोंको भी करता है । इसलिये मुनिजनका कर्तव्य है कि वह ऐसे बाल-अज्ञानी की संगतिसे, मनोविनोदके कारण हास्यादिकोंसे, अथवा हिंसादिक पापोंसे दूर रहे । बाल-अज्ञानियोंकी संगति, मनोविनोदके कारण हास्यादिक एवं प्राणातिपातादिक पाप, मुनिके लिये सर्वथा वर्जनीय इस लिये हैं कि इनका संग वैर-द्वेषका वर्धक होता है । इस वैरभावकी वृद्धिसे नूतनभवानुपङ्गा और वैरानुबन्धी कर्मका बन्ध होता है ॥ सू० ३ ॥

કે-આ મૃગાદિક પશુ શિકાર માટે જ વિધાતાએ બનાવેલ છે. શિકાર ક્રીડા કરવાના નિમિત્તથી જ કરવામાં આવે છે. શિકાર કરવાથી મનોવિનોદ થાય છે. કદાચ મનોવિનોદ માટે પ્રાણીઓની હિંસા કરી જે આનંદ માને છે તે માંસાદિક ખાવા માટે પણ કદાચ હિંસા કરી હર્ષિત થાય તો તેમાં કંઈ અચરજ નથી. આ પ્રકારે વિષયોમાં લંપટ બનેલ પ્રાણી ચોરી કુશીલ આદિ પાપો પણ કરે છે. તેથી મુનિજનનું કર્તવ્ય છે કે તે આવા બાલ-અજ્ઞાનીની સંગતિથી, મનોવિનોદના કારણ હાસ્યાદિકથી, અથવા હિંસાદિ પાપોથી દૂર રહે. બાલ-અજ્ઞાનીઓની સંગતિ, મનોવિનોદના કારણ હાસ્યાદિક અને પ્રાણાતિપાતાદિક પાપ, મુનિ માટે સર્વથા વર્જનીય આ માટે છે કે તેનો સંગ વૈર-દ્વેષનો વર્ધક થાય છે. આ વૈરભાવની વૃદ્ધિથી નૂતનભવાનુપંગી અને વૈરાનુબન્ધી કર્મનો બંધ થાય છે. ॥ સૂ. ૩ ॥



યથેવં તર્હિ મુનિના કિં કર્તવ્યમિત્યાહ-‘તમ્હા’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્-તમ્હાઽતિવિજ્જો પરમંતિ ણચ્ચા, આયંકદંસી ન કરેહ પાવં । અગ્ગં ચ મૂલં ચ વિગિંચ ધીરે, પલિચ્છિદિયા ણં નિક્ક-મ્મદંસી ॥ સૂ૦ ૪ ॥

છાયા--તસ્માત્ અતિવિદ્યઃ પરમમ્ ઇતિ જ્ઞાત્વા, આતદ્દર્શી ન કરંતિ પાપમ્ । અગ્રં ચ મૂલં ચ વિવિચ્ય ધીરઃ, પરિચ્છિદ્ય સ્વલુ નિક્કર્મદર્શી ॥ સૂ૦ ૪ ॥

ટીકા--‘તમ્હા’ ઇત્યાદિ । તસ્માદ્=વાલસંગેન વૈરવર્ધનાદ્, અતિવિદ્યઃ=સમ્યગ્જ્ઞાનવાન્, પરમં=સર્વોત્કૃષ્ટં-સિદ્ધિગતિનામધેયં પદં, સર્વવિરતિલક્ષણં ચારિત્રં વા અસ્તીતિ જ્ઞાત્વા, આતદ્દર્શી=નરકનિગોદાદિનાનાદુઃખદર્શકઃ, પાપં=પાપાનુ-વન્ધિ કર્મ ન કરોતિ । અત્ર કરોતીત્યુપલક્ષણમ્, ન ચ પરેણ કારયતિ, નાપિ કુર્વન્ત-મન્યમનુમોદયતિ ।

યદિ એસા હૈ તો મુનિ કો ક્યા કરના ચાહિયે? સો કહતે હૈ—  
‘તમ્હા’ ઇત્યાદિ ।

વાલ-અજ્ઞાનીકે સંગસે વૈરભાવકી વૃદ્ધિ હોતી હૈ । ઇસલિયે જો અતિવિદ્ય-સમ્યગ્જ્ઞાનસંપન્ન હૈ વહ-‘સિદ્ધિગતિનામક પરમપદ અથવા ઉસકો પ્રાપ્ત કરાનેવાલા સર્વવિરતિલક્ષણ ચારિત્ર પરમ શ્રેયસ્કર હૈ’ એસા જાનકર નરકનિગોદાદિકકે અનેક દુઃખોંકા જ્ઞાતા, અર્થાત્ ‘નરક નિગોદાદિકોંકે દુઃખ જીવોંકો તવ તક ભોગને પડતે હૈં કિ જવ તક સિદ્ધિપદકી પ્રાપ્તિ ઉન્હેં નહીં હોતી’ ઇસ પ્રકારકા દૃઢશ્રદ્ધાવાલા હોતા હુઆ પાપાનુવન્ધી કર્મ નહીં કરતા હૈ । “કરોતિ” યહ ક્રિયા અન્ય ક્રિયાઓંકી ઉપલક્ષક હૈ, ઇસસે યહ ઘટિત હોતા હૈ કિ વહ ન દુઃખગેસે પાપકર્મ કરાતા હૈ ઓર ન પાપકર્મ કરનેવાલોંકી અનુમોદના હી કરતા હૈ ।

તો આ પ્રમાણે છે તો મુનિએ શું કરવું જોઈએ? તે કહે છે-‘તમ્હા’ ઇત્યાદિ.

ખાલ-અજ્ઞાનીના સંગથી વૈરભાવની વૃદ્ધિ થાય છે, માટે જે અતિવિદ્ય-સમ્યગ્જ્ઞાનસંપન્ન છે તે ‘સિદ્ધિગતિનામક પરમપદ અથવા તેને પ્રાપ્ત કરાવનાર સર્વવિરતિલક્ષણ ચારિત્ર પરમ શ્રેયસ્કર છે’ એવું જાણીને નરકનિગોદાદિકના અનેક દુઃખોના જ્ઞાતા અર્થાત્ ‘નરકનિગોદાદિકોના દુઃખ ઉપાને ત્યાં મુખી ભોગવવા પડે છે ત્યાં મુખી સિદ્ધિપદની પ્રાપ્તિ તેને થતી નથી’ આ પ્રકારના દૃઢ શ્રદ્ધાવાળા ખનીને પાપાનુબન્ધી કર્મ કરતા નથી. “કરોતિ” આ ક્રિયા અન્ય ક્રિયાઓની ઉપલક્ષક છે, તેથી એ ઘટિત થાય છે કે તે ખીન્નજોડી પાપકર્મ કરાવતા નથી અને પાપકર્મ કરવાવાળાઓની અનુમોદના પણ કરતા નથી.

કિંચ-અગ્રં=ભવોપગ્રાહિકર્મચતુષ્ટયં કેવલિકર્મેત્યર્થઃ, મૂલં=ચતુર્વિધં ધાતિકર્મ, યદ્વા મૂલં=મોહનીયં કર્મ, અગ્રં=તદવશિષ્ટસત્તકર્માણિ, મોહનીયક્ષયેણ વિનાઽન્યેષાં કર્મણાં ક્ષયો ન ભવતિ, તસ્માન્મોહનીયસ્ય મૂલત્વં સિદ્ધ્યતિ । ઉક્તञ્ચ-

“નાયગંમિ હૃષ સંતે, જહા સેના વિણસ્સહ ।

एवं कम्माणि णस्संति, मोहणिज्जे खयं गए” ॥ इति ।

छाया--नायके हते सति, यथा सेना विनश्यति ।

एवं कर्माणि नश्यन्ति, मोहनीये क्षयं गते ॥

પરીપહ એવં ઉપસર્ગોં સે અવિચલિત હોકર વહ પૃથક્ પૃથક્ ભેદ પ્રભેદોં સહિત-વિસ્તારપૂર્વકે ઇસ વાતકી પર્યાલોચના કરતા હૈ કિ અગ્ર ઓર મૂલ તપસંયમકે વિના આત્માસે પૃથક્-અલગ નહીં હો સકતે હૈં । ભવોપગ્રાહી અઘાતિયા ચાર કર્મ કિ જો કેવલિકર્મ કહે જાતે હૈં, વે ચાર પ્રકારકે ઘાતિયા કર્મ મૂલ હૈં । અથવા મોહનીય કર્મકા નામ મૂલ હૈં । ઇસસે અવશિષ્ટ સાત કર્મોંકા નામ અગ્ર હૈં । મોહનીયકે ક્ષય હુએ વિના અન્ય કર્મોંકા ક્ષય નહીં હોતા હૈં ઇસલિયે મોહનીયમેં મૂલતા સિદ્ધ હોતી હૈં । કહા મી હૈં—

“નાયગમ્મિ હૃષ સંતે, જહા સેના વિણસ્સહ ।

एवं कम्माणि णस्संति, मोहणिज्जे खयं गए” ॥ १ ॥

જૈસે સેનાપતિકે મારે જાને પર સેના તિતર-વિતર હોકર ભાગ જાતી હૈં ઉસી પ્રકાર મોહનીયકે ક્ષય હોને પર અન્ય કર્મ મી નષ્ટ હો જાતે હૈં ॥ ૧ ॥

પરીપહ અને ઉપસર્ગોંથી અવિચલિત બનીને તે પૃથક્ પૃથક્ ભેદપ્રભેદો સહિત-વિસ્તારપૂર્વકે આ વાતની પર્યાલોચના કરે છે અગ્ર અને મૂલ તપ સંયમ વિના આત્માથી પૃથક્-અલગ થઈ શકતા નથી. ભવોપગ્રાહી અઘાતિયા ચાર કર્મોં કે જે કેવલિકર્મ કહેવાય છે તે ચાર પ્રકારના ઘાતિયા કર્મ મૂલ છે. અથવા મોહનીય કર્મનું નામ મૂલ છે. તેનાથી અવશિષ્ટ સાત કર્મોંનું નામ અગ્ર છે. મોહનીયનો ક્ષય થયા વિના અન્ય કર્મોંનો ક્ષય થતો નથી. માટે મોહનીયમાં મૂલતા સિદ્ધ થાય છે. કહ્યું છે—

“નાયગમ્મિ હૃષ સંતે, જહા સેના વિણસ્સહ ।

एवं कम्माणि णस्संति, मोहणिज्जे खयं गए” ॥ १ ॥

જેવી રીતે સેનાપતિના મરવાથી સેના છિન્નલિન્ન થઈ લાગી જાય છે તે પ્રકારે મોહનીયનો ક્ષય થવાથી અન્ય કર્મ પણ નષ્ટ થઈ જાય છે. ॥ ૧ ॥

यद्वा-मूलं=मिथ्यात्वम्, अग्रं तु अष्टविधकर्मप्रकृतिरूपं तेषां मिथ्यात्वमूलक-  
त्वात्। उक्तञ्च—“ .. ..... मिच्छतेणं उदिण्णेणं एवं खलु जीवे अट्ट-  
कम्मपगङ्गीओ बंधइ ” इति । धीरः=परीपहोपसर्गैरक्षोभ्यः सन् विविच्य=  
पृथक् पृथग् भेदोपभेदैः सविस्तरं पर्यालोच्य, परिच्छिद्य=कर्माणि तत्कारणीभूत-  
मिथ्यात्वादीनि तपः-संयमाभ्यां सर्वथा छित्वा=स्वात्मनः पृथक्कृत्य, पौद्गलिकम्य  
ज्ञानावरणीयादेः कर्मणश्छेदनं द्वैधीकरणरूपं न संभवति, किंत्वात्मनः पृथक्करण-  
मेवेति भावः। निष्कर्मदर्शी=स्वात्मानं निष्कर्माणं द्रष्टुं शीलमस्येति तथाविधो  
भवतीत्यर्थः । ज्ञानावरणीयदर्शनावरणीयकर्मापगमात् सर्वदर्शी भवतीति भावः ॥४॥

अथवा—‘मूल’ नाम मिथ्यात्वका है। ‘अग्र’ नाम आठ प्रकारके कर्मोंका है, क्यों कि आठों कर्मोंका मूलकारण मिथ्यात्व है। इसीलिए मिथ्यात्वको मूल-शब्दसे कहा है। कहा भी है—“मिच्छ-त्वेण उदिण्णेण एवं खलु जीवे अट्ट कम्मपगडीओ बंधई।” इति। मिथ्यात्वके उदयसे जीव आठ कर्मप्रकृतियोंको बांधता है।

इसलिये कर्मों के कारणभूत मिथ्यात्व आदिको तपसंघमद्वारा सर्वथा अपनी आत्मासे अलग कर वह निष्कर्मदर्शी हो जाता है ।

सूत्रमें “ परिच्छिद्य ” पद आया है, जिसका अर्थ—“ छेदन करके ” ऐसा होता है । परन्तु पौद्गलिक ज्ञानावरणीयादि कर्मोंका तो छेदन हो नहीं सकता; अतः—‘ ज्ञानावरणीयादि कर्मोंको अपनी आत्मासे “ परिच्छिद्य ”—अलग करके ’ ऐसा अर्थ करना चाहिये, क्यों कि कर्मोंको आत्मासे पृथक् करना ही उनका छेदन है । आत्मासे कर्मोंके अलग होने

અથવા 'મૂલ' નામ મિથ્યાત્વનું છે. 'અમ્ર' નામ આંડ પ્રકરના કર્મોનું છે, કારણ કે આંડ કર્મોનું મૂલ કારણ મિથ્યાત્વ છે. માટે મિથ્યાત્વને મૂલ ગણદથી કહેલ છે. કહ્યું છે "...મિચ્છક્ષેણં ઉદિષ્ણેણં પવં રાલુ જીવે અદૃ કમ્મપગડીઓ વંચદ્ ।" इति । મિથ્યાત્વના ઉદયથી ૭૫ આંડ કર્મપ્રવૃત્તિઓ બાધે છે. માટે કર્મોના કારણભૂત મિથ્યાત્વ આદિને તપસ્યમદારા સર્વથા પોતાના આત્માથી જુદા કહી તે નિષ્કર્મદર્શી થઈ પત્ય છે.

મુત્રમાં " પરિચ્છિન્ન " પદ આવેલ છે. તેનો અર્થ " છેલ્લ કરીને " એમ થાય છે. પરંતુ પૌદ્ગલિક જ્ઞાનાવસ્થાયાદિ ક્રમેનું તે છેલ્લ જની અક્ત નથી માટે જ્ઞાનાવસ્થાયાદિ ક્રમેને પાતાના અન્તમાંથી " પરિચ્છિન્ન "—વ્યુત કરીને, એવો અર્થ કરવો જોઈએ. કારણ કે ક્રમેને અન્તમાંથી પૃથક કરવા તે જ તેનું છેલ્લ

અન્યદપિ ફલં નિષ્કર્મદર્શિનો ભવતીત્યાહ—‘ એસ મરણા પમુચ્ચઈ’ ઇત્યાદિ।

મૂલમ્—એસ મરણા પમુચ્ચઈ, સે હુ દિટ્ઠમણ મુણી, લોગંસિ પરમદંસી વિવિત્તજીવી ઉવસંતે સમિણ સહિણ સયા જણ કાલ-કંઠી પરિવ્વણ ॥ સૂ૦ ૫ ॥

છાયા—એપ મરણાત્ પ્રમુચ્યતે, સ એવ દિષ્ટમયો મુનિઃ, લોકે પરમદર્શી વિવિત્ત-જીવી ઉપશાન્તઃ સમિતઃ સહિતઃ સદા યતઃ કાલાકાઙ્ક્ષી પરિવ્રજેત્ ॥ સૂ૦ ૫ ॥

ટીકા—એપઃ=નિષ્કર્મદર્શી મરણાત્=આયુઃક્રયાત્ પ્રમુચ્યતે, આયુષ્યકર્મવન્ધા-પગમાદિતિ ભાવઃ। યદ્વા—આવીચિમરણાત્ આવીચિ=અનુસમયં નિરન્તરં મરણં=મૃત્યુઃ સંસારો વા, તસ્માત્ પ્રમુચ્યતે। કેવલી ભૂત્વા અન્યાન્ વા મોચયતિ દેશનાદિના। સ

પર જીવ નિષ્કર્મદર્શી—અર્થાત્ કર્મરહિત અપની આત્માકો દેખનેકે સ્વ-ભાવવાલા હો જાતા હૈ। ઇસ પ્રકારકા સ્વભાવ જીવકે જ્ઞાનાવરણીય કર્મ કે વિનાશસે ઉત્પન્ન હોતા હૈ। ઇસી અવસ્થામેં જીવ સર્વજ્ઞ સર્વદર્શી હોતા હૈ ॥ સૂ૦ ૪ ॥

જો નિષ્કર્મદર્શી હૈ ઉસે ઓર ભી દૂસરા લાભ હોતા હૈ, ઇસ વાતકો પ્રકટ કરતે હૈ—‘ એસ મરણા પમુચ્ચઈ’ ઇત્યાદિ।

યદ્વા નિષ્કર્મદર્શી આયુકર્મકે વન્ધકે અભાવ હોનેપર મરણસે રહિત હો જાતા હૈ। અથવા વદ્વા આવીચિમરણસે છૂટ જાતા હૈ। અનુસમય અર્થાત્ નિરન્તર મરણકો આવીચિમરણ કહતે હૈ। અથવા મરણ નામ સંસારકા હૈ। કેવલી હો જાનેસે આત્મા સંસારવન્ધનસે રહિત હો જાતા હૈ। સિદ્ધસ્થાનમેં વિરાજનેકે નિશ્ચયસે ડસી ભવમેં અઘાતિયા કર્મોંકા

છે. આન્માથી કર્મોના અલગ થવાથી છવ નિષ્કર્મદર્શી—અર્થાત્ કર્મરહિત પોતાના આત્માને જોવાના સ્વભાવવાળો થઈ જાય છે. આ પ્રકારનો સ્વભાવ છવને જ્ઞાનાવરણીય અને દર્શનાવરણીય કર્મના વિનાશથી ઉત્પન્ન થાય છે. આ અવસ્થામાં છવ સર્વજ્ઞ સર્વદર્શી થાય છે ॥ સૂ૦ ૪ ॥

જે નિષ્કર્મદર્શી છે તેને બીજો પણ લાભ થાય છે. તે વાતને પ્રગટ કરે છે—‘ એસ મરણા પમુચ્ચઈ’ ઇત્યાદિ.

આ નિષ્કર્મદર્શી આયુકર્મના બંધનો અભાવ થવાથી મરણથી રહિત થાય છે અને તે આવીચિમરણથી છુટી જાય છે. અનુસમય અર્થાત્ નિરન્તર મરણને આવીચિમરણ કહે છે. અથવા મરણ નામ સંસારનું છે, કેવળી થઈ જવાથી આત્મા સંસારબંધનથી રહિત થાય છે. સિદ્ધસ્થાનમાં વિરાજવાના નિશ્ચયથી તેજ ભવમાં

દૃષ્ટભય એવ, દૃષ્ટં ભયમ્ इहलोकादि सप्तविधं येन स एव मुनिर्भवति । किं च लोके=उच्चारादिचतुर्दशस्थानसमुत्पन्ने जीवसमूहात्मके परम=आत्मनः समुत्कर्षकारित्वात् संयमः, तं द्रष्टुं शीलमस्येति परमदर्शी, तथा-विविक्तं रागद्वेषरहितत्वादक्लिष्टं जीवितुं शीलमस्येति विविक्तजीवी, अत एव उपशान्तः=उपशमसमन्वितः, अत एव समितः मोक्षमार्गं सम्यग् इतः=प्राप्तः, तथा सहितः ज्ञानचारित्र्ययुक्तः, अत एव सदा यतः=अनवरतं प्रमादरहितः । उक्तगुणधारणं कियत्कालपर्यन्तमावश्य-

અભાવ કર સિદ્ધપદકા અધિકારી હો જાતા હૈ । કેવલી હોકર યદ્ય અન્ય જીવોંકો ભી સદેશના દ્વારા સંસારપરિભ્રમણ સે છુડા દેતા હૈ । इहलोक-ભય આદિ સાત પ્રકારકા ભય જિસને દેખ લિયા હૈ વહ દૃષ્ટભય હૈ । દૃષ્ટભય હી મુનિ હોતા હૈ । તથા ઉચ્ચારાદિ ચૌદહ સ્થાનોંમેં સમુત્પન્ન જીવસમૂહરૂપ લોકમેં આત્માકા ઉત્કર્ષકારી હોનેસે પરમ જો સંયમ ઉસકો દેખનેકા જિસકા સ્વભાવ હૈ વહ પરમદર્શી હૈ । તથા રાગદ્વેષ-રહિત હોનેસે અક્લિષ્ટ જીનેકા જિસકા સ્વભાવ હૈ વહ વિવિક્તજીવી હૈ । યદ્ય નિષ્કર્મદર્શી વિવિક્તજીવી હોતા હૈ । इसीलिये वह 'उवसंते' 'उपशान्तः'—उपशमसे युक्त होता है । કષાયોંકે ઉદ્વેગકા અભાવ ઉપશમ હૈ । जब कषायोंमें बिलकुल मन्दता आ जाती है तब वह 'समिप्त' समितः—मोक्षके मार्गको प्राप्त हुआ कहलाता है । તથા 'સહિષ્' સહિતઃ જ્ઞાન ઓર ચારિત્રસે યુક્ત હોનેસે વહ 'સયાજણ' સદાયતઃ—નિરન્તર યતનાવાન્ અર્થાન્ પ્રમાદરહિત હોતા હૈ । इन पूर्वोक्त गुणोंके धारण करने

અઘાતિયા કર્મોનો અભાવ કરી સિદ્ધપદનો અધિકારી થાય છે, કેવળી બની તે અન્ય જીવોને પણ સદેશનાદ્વારા સંસારપરિભ્રમણથી છોડાવે છે. इहलોક ભય આદિ સાત પ્રકારનો ભય જેણે જોઈ લીધેલ છે તે દૃષ્ટભય છે, દૃષ્ટભય જ મુનિ થાય છે, તથા ઉચ્ચારાદિ ચૌદ સ્થાનોમાં સમુત્પન્ન ઉવમમૂહરૂપ લોકમાં આત્માના ઉત્કર્ષકારી થવાથી પરમ જે સંયમ તેને દેખવાનો જેનો સ્વભાવ છે તે પરમ-દર્શી છે, તથા રાગદ્વેષરહિત થવાથી અક્લિષ્ટ જીવવાનો જેનો સ્વભાવ છે તે વિવિક્તજીવી છે, તે નિષ્કર્મદર્શી વિવિક્તજીવી થાય છે, તેથી તે 'ઉવસંતે' ઉપશાન્તઃ—ઉપશમથી યુક્ત થાય છે, કષાયોના ઉદ્વેગનો નાશ થાય ઉપશમ છે, ત્યારે કષાયોમાં બિલકુલ મંદતા આવી જાય છે ત્યારે તે 'સમિપ્ત' સમિતઃ—મોક્ષના માર્ગને પ્રાપ્ત કરેલા કહેવાય છે, તથા 'સહિષ્' સહિતઃ—જ્ઞાન અને ચારિત્રથી યુક્ત થવાથી તે 'સયાજણ' સદાયતઃ—નિરન્તર યતનાવાન્ અર્થાન્ પ્રમાદરહિત થાય છે, આ પૂર્વોક્ત ગુણોને ત્યાં સુધી ધારણ કરવાની આવશ્યકતા છે

કમિત્યાહ-કાલાકાઙ્ક્ષીતિ । કાલં=મૃત્યુકાલમાકાઙ્ક્ષિતું શીલમસ્યેતિ કાલાકાઙ્ક્ષી, તથાવિધઃ સન્ પરિવ્રજેત્=યાવત્ પર્યાયાગતં પણ્ડિતમરણં તાવદાકાઙ્ક્ષમાણો વિવિ-ક્તજીવિત્વાદિગુણસમન્વિતઃ સંયમારાધને સમુદ્યુક્તો ભવેદિત્યર્થઃ ॥ સૂ૦ ૫ ॥

મૂલમ્-વહું ચ खलु पावकर्मं पगडं । सच्चंमि धिइं कुवहा ।  
एत्थोवरए मेहावी सव्वं पापकर्मं झोसइ ॥ सू० ६ ॥

છાયા—વહુ ચ खलु पापकर्म प्रकृतम् । सत्ये धृतिं कुरुष्व । अत्र उपरतो मेधावी सर्वं पापकर्म ओपयति ॥ सू० ६ ॥

ટીકા—‘વહું ચ’ इत्यादि । खलु=निश्चयेन पापकर्म बहु=बन्धस्थानापे-क्षया बहुविधं प्रकृतम्=प्रकथितं, प्रतिबोधितमित्यर्थः । यद्येवं तर्हि तद्व्यपगमार्थं किमाचरणीयमित्यत आह—‘ सत्ये ’ इत्यादि । हे शिष्य ! सत्ये-सद्ब्रह्मो भव्ये-

કી આવશ્યકતા તમી તક હૈ જવ તક કિ ઉસે પણ્ડિતમરણ પ્રાપ્ત નહીં હોતા । યહી વાત સૂત્રકાર પ્રકટ કરતે હૈ—‘ કાલકાંક્ષી ’ इति, કાલ શબ્દ કા અર્થ મૃત્યુકાલ હૈ, ઇસકી આકાઙ્ક્ષા રાખનેવાલેકો કાલાકાઙ્ક્ષી કહતે હૈ । જય તક પર્યાયાગત પણ્ડિતમરણ પ્રાપ્ત નહીં હોતા તવ તક ડસકી ચાહના કરતા હુઆ ઇન પૂર્વોક્ત ગુણોસે યુક્ત હોકર વહ નિષ્કર્મ-દર્શી સંયમકી આરાધનામૈ પ્રયત્નશાલી યા લવલીન રહે ॥ સૂ૦ ૫ ॥

‘વહું ચ’ इत्यादि ।

પાપકર્મ બન્ધસ્થાનકી અપેક્ષાસે વહુત પ્રકારકા કહા ગયા હૈ । વીત-રાગ પ્રભુને વારહ પ્રકારકી પરિપદ્-સભામૈ અપની દિવ્ય દેશનાસે બન્ધ-સ્થાનોકી અપેક્ષાસે કર્મોકે અનેક ભેદ ભવ્ય જીવોકો સમજાવે હૈ । સાથ મૈ યહ ભી પ્રકટ કિયા હૈ કિ ઇન કર્મોકો આત્માસે દૂર કરનેકા ઉપાય

કે બ્યાં સુધી તેને પંડિતમરણ પ્રાપ્ત નહિ થાય, આ વાત સૂત્રકાર પ્રગટ કરે છે—‘ કાલકાંક્ષી ’ इति. કાલ શબ્દનો અર્થ મૃત્યુકાળ છે. તેની આકાંક્ષા રાખવા-વાળાને કાલાકાંક્ષી કહે છે. બ્યાં સુધી પર્યાયાગત પંડિતમરણ પ્રાપ્ત નથી થતું ત્યાં સુધી તેની યાહના કરીને પૂર્વોક્ત ગુણોથી યુક્ત થઈને તે નિષ્કર્મદર્શી સંયમની આરાધનામાં પ્રયત્નશાળી અગર લવલીન રહે ॥ સૂ૦ ૫ ॥

“વહું ચ” इत्यादि.

પાપકર્મ બંધસ્થાનની અપેક્ષાથી ઘણા પ્રકારના કહેલ છે. વીતરાગ પ્રભુએ આ પ્રકારની પરિપદ્-સભામાં પોતાની દિવ્યદેશનાથી બંધસ્થાનોની અપેક્ષાથી કર્મોના અનેક ભેદ ભવ્ય જીવોને સમજાવેલ છે. સાથે એ પણ પ્રગટ કરેલ છે કે આ કર્મોના આત્માથી દૂર કરવાનો ઉપાય છે—“ સચ્ચંમિ ધિં કુવહા ” सत्ये



भ्यो हितः सत्यः=संयमस्तस्मिन् धृतिं कुरुष्व । यद्वा-सत्यः=वीतरागप्रणीतागमः  
यथावस्थिततत्त्वस्वरूपप्रतिबोधनात् , तत्र भगवदाज्ञारूपे प्रवचने धृतिं=चित्तस्थैर्यं  
कुतर्कपरित्यागेन कुरुष्व । किंच-अत्र=अस्मिन् संयमे भगवत्प्रवचने वा, उपरतः=  
उप=सामीप्येन रतः=व्यवस्थितः-परायणः, मेधावी=हेयोपादेयविवेकनिपुणः, सर्व-  
निरवशेषं पापकर्म क्षोपयति=शोपयति-क्षपयतीत्यर्थः ॥ सू० ६ ॥

कषायादिप्रमादयुक्तः किं गुणो भवतीत्याह-‘अणेगचित्ते’ इत्यादि ।

है-“सच्चस्मि धिइं कुव्वहा” सत्ये धृतिं कुरुष्व, सत्य-संयममें धैर्य धारण  
करो, इसलिये शिष्यको सम्बोधित करते हुए कहते हैं कि हे शिष्य !  
तुम यदि इन कर्मों पर विजय करना चाहते हो तो-‘सद्भ्यो हितः सत्यः-  
-संयमः’ सत्पुरुषोंके लिये हितकारी जो संयम है उसमें अटल रहो ।  
उपसर्ग एवं परीषद्को आने पर भी इस मार्गसे कभी भी विचलितचित्त  
न बनो । अथवा सत्य नाम वीतरागप्रणीत आगमका है, क्योंकि इस  
से ही जीवादिक तत्त्वोंके यथार्थस्वरूपकी प्ररूपणा होती है । भगवानके  
इस आज्ञास्वरूप प्रवचनमें कुतर्कोंका परिहार कर चित्तको स्थिर करो ।  
कारण कि-इस संयममें अथवा वीतरागप्रणीत आगममें अच्छी तरहसे  
लवलीन चित्तवाला मनुष्य हेय और उपादेयके विवेकसे निपुणमति बन  
कर सम्पूर्ण पापकर्मोंको नष्ट कर देता है । सू० ६ ॥

कषायादिक प्रमादसे युक्त प्राणी किस २ गुणवाले होते हैं ? इसके  
लिये कहते हैं-‘अणेगचित्ते’ इत्यादि ।

धृतिं कुरुष्व, सत्य-संयमમાં धैर्य धारણ કરો. એ માટે શિષ્યને સંબોધન કરીને  
કહે છે કે હે શિષ્ય ! તમે જે આ કર્મો ઉપર વિજય કરવા માંગતા હો તો-  
‘સદ્ભ્યો હિતઃ સત્યઃ-સંયમઃ’ સત્પુરુષોને માટે હિતકારી જે સંયમ છે તેમાં  
અટલ રહો. ઉપસર્ગ અને પરીષદો આવવા છતાં પણ આ માર્ગથી કોઈવખત  
પણ વિચલિત ન બનો. અથવા સત્ય નામ વીતરાગપ્રણીત આગમનું છે, કારણ  
કે તેનાથી જ ઉપાદેશ તત્ત્વોના યથાર્થ સ્વરૂપની પ્રરૂપણ થાય છે. ભગવાનના  
આ આજ્ઞાસ્વરૂપ પ્રવચનમાં કુતર્કનો પરિહાર કરી ચિત્તને સ્થિર કરો, કારણ કે  
આ સંયમમાં અને વીતરાગપ્રણીત આગમમાં સારી રીતે લવલીન ચિત્તવાળા  
મનુષ્ય હેય અને ઉપાદેયના વિવેકથી નિપુણમતિ બનીને સંપૂર્ણ પાપકર્મો નષ્ટ  
કરી નાંખે છે. ॥ સૂ० ૬ ॥

કષાયાદિ પ્રમાદથી યુક્ત પ્રાણી કયા કયા ગુણવાળા થાય છે ? તેને માટે  
કહે છે-‘અણેગચિત્તે’ ઇત્યાદિ.



મૂલમ્—અણેગચિત્તે સ્વલુ અયં પુરિસે, સે કેયણં અરિહણ પૂરિત્તણ, સે અણવહાણ અણપરિયાવાણ અણપરિગ્ગહાણ જણવયવહાણ જણવયપરિયાવાણ, જણવયપરિગ્ગહાણ ॥ સૂ. ૭ ॥

છાયા—અનેકચિત્તઃ સ્વલુ અયં પુરુષઃ, સ કેતનમ્ અર્હતિ પૂરયિતુમ્ । સોઽન્ય-વધાય, અન્યપરિતાપાય, અન્યપરિગ્રહાય, જનપદવધાય, જનપદપરિતાપાય જન-પદપરિગ્રહાય ॥ મુ. ૭ ॥

ટીકા—અયં પ્રત્યક્ષવિષયઃ સંસારી પુરુષઃ સ્વલુ=નિશ્ચયેન અનેકચિત્તઃ=કૃષિ-વાણિજ્યસેવાદ્યનેકકૃત્યાશ્રિતચિત્તો ભવતિ । સંસારસુખામિલાપિણશ્ચિત્તમેકાગ્રં ન ભવતીતિ ભાવઃ । અનેકચિત્તઃ કિં કુર્યાદિત્યાહ—‘સ કેતનમ્’ इत्यादि । સોઽનેકચિત્તઃ કેતનં=ભાવકેતનમ્ इच्छां पूरयितुम् अर्हति ? काकुवचनमेतत् ; नार्हतीत्यर्थः । કેતનં દ્વિવિધં દ્રવ્યતો ભાવતશ્ચ । તત્ર દ્રવ્યકેતનં ચાલિની, સમુદ્રો

યહ સંસારી પુરુષ નિશ્ચયસે કૃષિ વાણિજ્ય સેવા આદિ અનેક કાર્યો કે કરનેમેં વ્યગ્રચિત્તવાળા બના રહના હૈ । વ્યોં કિ સંસારી જીવોંકી અમિલાપા સાંસારિક અનેક સુખોંકો પ્રાપ્ત કરનેકી ઓર સદા લગી રહતી હૈ, ઇસીલિયે વે કૃષિ વાણિજ્ય આદિ અનેક પ્રકારકે આજીવિકોપયોગી કાર્યોંકે સંપાદનમેં રાતદિન જુદે રહતે હૈં, અતઃ સાંસારિક સુખોંકે અમિલાપી પુરુષોંકા મન કિસી ઁક વિષયમેં ઁકાગ્ર નહીં હોતા હૈ । ઇસ પર સૂત્રકાર કહતે હૈં કિ—‘સે કેયણં અરિહણ પૂરિત્તણ’ સ કેતનમર્હઃ પૂરયિતુમ્, અર્થાન્ ઁસકી ઇસ પ્રકારકી યે ચેષ્ટાઁ કયા ઁસ કેતન-માન-સિક અમિલાપાકી પૂર્તિ કર સકતી હૈં ? કદાપિ નહીં । સૂત્રકારને યહાં કાકુવચનકા પ્રયોગ કિયા હૈ । કેતન દો પ્રકારકા હૈ—(૧) દ્રવ્ય-કેતન

આ સંસારી પુરુષ નિશ્ચયથી કૃષિ, વાણિજ્ય, સેવા આદિ અનેક કાર્યો કરવામાં વ્યગ્રચિત્તવાળા બની રહે છે. કારણકે સંસારી જીવોની અમિલાપા સાંસારિક અનેક મુખો પ્રાપ્ત કરવાની તરફ સદા લાગી રહે છે તેથી તે ખેતી, વાણિજ્ય આદિ અનેક પ્રકારના આશુવિદ્યાના ઉપયોગી કાર્યોના સંપાદનમાં રાતદિવસ લાગ્યા રહે છે. માટે સાંસારિકમુખોના અમિલાપી પુરુષોનું મન કોઈ એક વિષયમાં એકાગ્ર બનતું નથી. આ ઉપર સૂત્રકાર કહે છે—‘સે કેયણં અરિહણ પૂરિત્તણ’—સ કેતનમર્હઃ પૂરયિતુમ્, અર્થાત્ તેની આ પ્રકારની આ ચેષ્ટાઓ શું તેના કેતન=માનસિક અમિલાપા—ની પૂર્તિ કરી શકે છે ? કદાપિ નહિ. સૂત્રકારે આ કહેણે કાકુવચનનો પ્રયોગ કરેલ છે. કેતન બે પ્રકારના છે.

વા । ભાવકેતનમ્ ઇચ્છા, લોભઃ । અત્ર ભાવકેતનાપેક્ષયા કેતનશબ્દઃ પ્રયુક્તઃ ।  
ઉક્તં ચ ભગવતા—“ જહા લાહો તહા લોહો, લાહા લોહો પવડ્ઢહ ” ઇત્યાદિ ।

અપરં ચ—“ ન શયાનો જયેન્નિદ્રાં, ન મુજ્જાનો જયેત્ ક્ષુધામ્ ।

ન કામયાનઃ કામાનાં, લાભેનેહ પ્રશમ્યતિ ” ॥ ૧ ॥

(૨) ભાવ-કેતન । દ્રવ્ય-કેતન ચાલિની અથવા સમુદ્ર છે, ઓર ઇચ્છા, લોભ, યે ભાવ-કેતન હૈં । યહાં ભાવ-કેતનકી અપેક્ષાસે ‘કેતન’ શબ્દકા પ્રયોગ હુઆ છે । ભગવાને યહી વાત કહી છે—“ જહા લાહો તહા લોહો, લાહા લોહો પવડ્ઢહ । ”

અર્થાત્—જેસે જેસે લાભ હોતા છે વૈસે વૈસે લોભ ઓ વધતા છે । લાભસે લોભકી વૃદ્ધિ હોતી છે । જો અનેક કાર્યોમૈં વ્યગ્રચિત્ત બના રહના છે વહ કયા ભાવ-કેતનરૂપ અપની ઇચ્છાઓંકી પૂર્તિ કર સકતા છે ? અર્થાત્ નહીં કર સકતા ? કહા ઓ છે—

“ ન શયાનો જયેન્નિદ્રાં, ન મુજ્જાનો જયેત્ ક્ષુધામ્ ।

ન કામયાનઃ કામાનાં, લાભેનેહ પ્રશમ્યતિ ॥ ૧ ॥ ” ઇતિ ।

જિસ પ્રકાર સોનેસે નિદ્રા નહીં જીતી જા સકતી છે, ઓર ગ્વાનેસે મૂર્ખ નહીં જીતી જા સકતી છે, ડસી પ્રકાર કામ-ઇચ્છાઓંમૈં ફંસા હુવા મનુષ્ય ઇચ્છાકે અનુસાર ઇષ્ટ વસ્તુઓંકા લાભ હોને પર ઓ ડનસે શાન્તિલાભ પ્રાપ્ત નહીં કર સકતા છે । ફિર ઓ કહા છે—

(૧) દ્રવ્યકેતન, (૨) ભાવકેતન. દ્રવ્યકેતન ચાલિની અથવા સમુદ્ર છે, અને ઇચ્છા અને લોભ, યે ભાવકેતન છે. આ ઠેકાણે ભાવકેતનની અપેક્ષાથી ‘કેતન’ શબ્દનો પ્રયોગ થયેલ છે. ભગવાને યે જ વાત કહી છે—“ જહા લાહો તહા લોહો, લાહા લોહો પવડ્ઢહ । ”

અર્થાત્ જેમ જેમ લાભ થાય છે તેમ તેમ લોભ વધે છે. લાભથી લોભની વૃદ્ધિ થાય છે. જે અનેક કાર્યોમાં વ્યગ્રચિત્ત બની રહે છે તે શું ભાવકેતનરૂપ થોતાની ઇચ્છાઓની પૂર્તિ કરી શકે છે ? અર્થાત્ કરી શકતા નથી. કશું પણ છે—

“ ન શયાનો જયેન્નિદ્રાં, ન મુજ્જાનો જયેત્ ક્ષુધામ્ ।

ન કામયાનઃ કામાનાં, લાભેનેહ પ્રશમ્યતિ ” ॥ ૧ ॥ ઇતિ ।

જેવી રીતે મુઠ્ઠિ રહેવાથી નિદ્રા છતી શકાતી નથી અને ખાવાથી ભૂખ છતી શકાતી નથી તે પ્રકારે કામ-ઇચ્છાઓનાં કસેલો પ્રાપ્તિ-મનુષ્ય ઇચ્છાનુસાર ઇષ્ટવસ્તુઓને લાભ થતાં છતાં પણ તેનાથી શાન્તિલાભ પ્રાપ્ત કરી શકતા નથી. વળી પણ કશું છે—

किं च—“ न जातु कामः कामानामुपभोगेन शाम्यति ।

हविषा कृष्णवर्त्मव, भूय एवाभिवर्धते ” ॥ २ ॥ इति ।

इच्छापूर्णाथं व्याकुलितचित्तः किं करोतीत्याह—‘ से अण्णवहाए ’ इत्यादि, यद्वा—‘ से के य णं अरिहए पूरित्तए ’ इत्यस्य ‘ स कश्च तम् अहं: पूरयितुम् ’ इतिच्छाया । स एतादृशो जनः को वर्तते यः तम्=अनेकचित्तं पुरुषं पूरयितुम् अहं: समर्थो भवेत्, कस्तदिच्छां पूरयेत्, न कोऽपीति भावः, यतः सोऽनेकचित्तः पुरुषः अन्यवधाद्यर्थं पर्युत्सुको भवति, तदेवाह सूत्रकारः—‘ से अण्णवहाए ’ इत्यादि ।

“ न जातु कामः कामानामुपभोगेन शाम्यति ।

हविषा कृष्णवर्त्मव, भूय एवाभिवर्धते ॥ १ ॥ ” इति ।

कामविकार विषयभोगोंके सेवन करनेसे शान्त नहीं होता है । प्रत्युत जैसे घृतके डालने से अग्निकी ज्वाला बढ़ती है उसी प्रकार विषयोंके सेवनसे विषयवासनाकी वृद्धि होती है । अपनी इच्छाकी पूर्तिके लिये जीव क्या करता है ? इसी बातको कहते हैं—‘ से अण्णवहाए ’ इत्यादि ।

अथवा “ से के य णं अरिहए पूरित्तए ” इस वाक्यकी छाया “ स कश्च तम् अहं: पूरयितुम् ” ऐसी भी होती है । जिसका अर्थ इस प्रकार होता है—कौन ऐसा व्यक्ति हो सकता है कि जो अनेक चित्तवाले मनुष्यकी इच्छाओंकी पूर्ति करनेमें समर्थ हो सके ? कारण कि वह अनेकचित्त पुरुष अन्यवध—दूसरेको मारना आदि अनेक सावध क्रियाओंके करनेमें उत्सुक बना रहता है । इसी बातको सूत्रकार स्वयं दिखलाते हैं—‘ से अण्णवहाए ’ इत्यादि ।

“ न जातु कामः कामानामुपभोगेन शाम्यति ।

हविषा कृष्णवर्त्मव, भूय एवाभिवर्धते ” ॥ १ ॥ इति ॥

કામવિકાર વિષયભોગનું સેવન કરવાથી શાંત થતો નથી, પણ જેમ ધી નાંખવાથી અગ્નિની જ્વાળા વધે છે તે પ્રકારે વિષયોના સેવનથી વિષયવાસનાની વૃદ્ધિ થાય છે. પોતાની ઇચ્છાની પૂર્તિ માટે જીવ શું કરે છે ? આ વાતને સૂત્રકાર સ્પષ્ટ કરે છે—‘ સે અણ્ણવહાએ ’ ઇત્યાદિ.

અથવા “ સે કે ય ણં અરિહએ પૂરિત્તએ ” આ વાક્યની છાયા “ સ કશ્ચ તમ્ અહં: પુરયિતુમ્ ” એમ પણ થાય છે. જેનો અર્થ આ પ્રકારે થાય છે—કોણ એવો પ્રાણી થઈ શકે છે કે જે અनेક ચિત્તવાળા મનુષ્યની ઇચ્છાઓની પૂર્તિ કરવામાં સમર્થ હોય ? કારણ કે તે અनेકચિત્ત પુરુષ અન્યવધ—ખીનને મારવું—આદિ અनेક સાવધ ક્રિયાઓ કરવામાં ઉત્સુક બની રહે છે. આ વાતને બતાવે છે—‘ સે અણ્ણવહાએ ’ ઇત્યાદિ.

સ ઇચ્છાપૂરણાર્થં પ્રવર્તમાનઃ અન્યવધાય=અન્યેષાં પ્રાણિનાં વધાય ભવતિ । યથા-  
ચૌરઃ સાહસિકો વા ધનાપહરણાર્થં ધનિનં હન્તિ, ઇત્યાદિ । તથા-અન્યપરિતાપાય=  
અન્યેષાં જીવાનાં પરિતાપાય=શારીરમાનસક્લેશાય ભવતિ । તથા-અન્યપરિગ્રહાય  
=અન્યેષાં=દાસદાસીનાં ગોમહિષ્યાદીનાં ચ પરિગ્રહાય=સ્વાયત્તીકરણાય ભવતિ ।  
તથા-જનપદવધાય-મગધાદયો જનપદાસ્તેષાં વધાય । યથા-મ્લેચ્છા ભૂપતયો  
મ્લેચ્છધર્મમસ્વીકુર્વન્તં જનપદં ધ્વન્તીત્યાદિ । તથા-જનપદપરિતાપાય-જનપદાનાં

મનુષ્ય જવ અપની ઇચ્છાકી પૂર્ત્તિકે લિયે પ્રવૃત્તિ કરતા હૈ તવ ઉસ  
કી ઉસ પ્રવૃત્તિસે અન્ય પ્રાણિયોંકી હિંસા હોતી હૈ, અતઃ વહ ઉસકી  
પ્રવૃત્તિ અન્ય જીવોંકી હિંસાકા કારણ વનતી હૈ । જૈસે ચોર અથવા સાહ-  
સિક-ડાકૂ-મનુષ્ય ધનીકે ધનકો ચુરાનેકે લિયે ધનીકો માર ડાલતા હૈ ।  
ઉસકી પ્રવૃત્તિસે અન્ય જીવોંકો શારીરિક તથા માનસિક પરિતાપ-ક્લેશ  
ભોગના પડતા હૈ । ફિર વહ અપની અભિલાષાઓંકી પૂર્ત્તિકે લિયે દાસી  
દાસ આદિકો તથા ગાય મૈંસ આદિકો કહીંસે ચુરા લાકર ઉનકા સંગ્રહ  
કરનેમૈં વ્યસ્ત રહા કરતા હૈ । જનપદ-મગધાદિ દેશોંકો વહ અપની પ્ર-  
વૃત્તિસે વ્રસ્ત-દુઃખિત કર દિયા કરતા હૈ । જૈસે મ્લેચ્છ રાજા મ્લેચ્છ  
ધર્મકો અસ્વીકાર કરનેવાલી પ્રજાકો માર ડાલતે હૈ । ઉસકી પ્રવૃત્તિ  
લોકોંકે પરિતાપકે લિયે-પ્રાણિયોંકો માર્મિક કષ્ટ પહુંચાનેકે લિયે હોતી  
હૈ । અનુચિત કર-ટૈક્સકા લેના, અનુચિત દળડ દેના, ઇત્યાદિકા નામ  
મી પરિતાપ હૈ । અધાર્મિક ભૂપતિ અપની ઇચ્છાકી પૂર્ત્તિકે લિયે ધન-

મનુષ્ય જ્યારે પોતાની ઇચ્છાની પૂર્ત્તિ માટે પ્રવૃત્તિ કરે છે ત્યારે તેની તે  
પ્રવૃત્તિથી અન્ય પ્રાણીઓની હિંસા થાય છે, માટે તે તેની પ્રવૃત્તિ બીજા જીવોની  
હિંસાનું કારણ બને છે; જેમ ચોર અથવા સાહસિક-ડાકૂ પૈસાવાળા માનુષના ધન  
ચોરી જવા માટે પૈસાવાળાને મારી નાખે છે. તેની પ્રવૃત્તિથી અન્ય જીવોને શારી-  
રિક તથા માનસિક પરિતાપ-ક્લેશ ભોગવવો પડે છે. તેમજ તે પોતાની અભિ-  
લાષાઓની પૂર્ત્તિ માટે દાસી-દાસ આદિ તથા ગાય-મૈંસ આદિ કયાંયથી ચોરી  
લાવીને તેનો સંગ્રહ કરવામાં વ્યસ્ત રહ્યા કરે છે. જનપદ-મગધાદિ દેશોને તે  
પોતાની પ્રવૃત્તિથી વ્રસ્ત-દુઃખિત કર્યા કરે છે. જેમ મ્લેચ્છ રાજા મ્લેચ્છધર્મને  
અસ્વીકાર કરનારી પ્રજાને મારી નાખે છે. તેની પ્રવૃત્તિ લોકોના પરિતાપ માટે-  
પ્રાણીઓને માર્મિક કષ્ટ પહોંચાડવા માટે હોય છે. અનુચિત કરખોજ-ટૈક્સ  
લેવો, અનુચિત દંડ આપવો, ઇત્યાદિનું નામ પણ પરિતાપ છે, અધાર્મિક રાજા  
પોતાની ઇચ્છાની પૂર્ત્તિ માટે ધનસંગ્રહ કરવા નિમિત્ત પોતાની પ્રજાને મારી નિ-

ક્લેશાય, યથાઽનુચિતકરગ્રહણદણ્ડાદિભિરંધાર્મિકા ભૂપતયઃ । તથા—જનપદપરિ-  
ગ્રહાય=મગધાદિજનપદાનાં પરિગ્રહાય ભવતિ—સ્વસ્વત્વોત્પાદનેન સ્વાયત્તીકરણાય,  
યુદ્ધાદિકં કરોતીત્યર્થઃ ॥ સૂ૦ ૭ ॥

મૂલમ્—આસેવિત્તા એયસદ્દં ઇચ્છેવેગે સમુદ્વિયા, તમ્હા તં  
વીયં નો સેવે, નિસ્સારં પાસિય નાળી ॥ સૂ૦ ૮ ॥

હાયા—આસેવ્ય એતમ્ અર્થમ્ इत्येव एके समुत्थिताः, तस्मात्तं द्वितीयं નો  
સેવતે નિઃસારં દદ્વા જ્ઞાની ॥ સૂ૦ ૮ ॥

ટીકા—‘ આસેવિત્તા ’ इत्यादि । इत्येव=इच्छापूर्णाथमेव એતમ્=અર્થમ્

સંગ્રહ કરનેકે નિમિત્ત અપની પ્રજાસે અનીતિદ્વારા ધનકા સંગ્રહ કરતે  
હैं । કિસીપર કરકી વૃદ્ધિ કરતે હैं; કિસીકો અભિયોગમેં ફંસા કર ઉસ  
પર અધિક સે અધિક દણ્ડ મી કર દિયા કરતે હैं । ઇસ પ્રકારકે ભૂપતિ  
અપની પ્રજાકે લિયે અપને અધિકૃત દેશકે લિયે ક્લેશકારક યા પરિ-  
તાપદાયક હુઆ કરતે હैं । જનપદપરિગ્રહ—અર્થાત્ દૂસરે રાજાઓં પર  
ચઢાઈ કર વહ ઉનકે દેશકો અપને આધીન કરનેકા પ્રયત્ન—ચેષ્ટા કરતે  
રહતે હैं । મૌકા પાકર જવ વહ ચઢાઈ કર દેતે હैं તવ ઉસ સમય વ્યર્થમેં  
નરસંહાર જૈસા મયઝૂર કાળડ ઉપસ્થિત હો જાતા હૈ । ઉનકી ઇસ પ્રકારકી  
પ્રવૃત્તિ ધાર્મિક નીતિસે ઠીક નહીં હૈ । ક્યોં કિ ઇનકી ઇસ પ્રવૃત્તિસે  
અન્ય જીવોંકો યા જનપદકો ક્લેશ તથા સન્તાપ હોતા હૈ ॥ સૂ૦ ૭ ॥

‘ આસેવિત્તા ’ इत्यादि ।

इच्छाकी पूर्तिके लिये सातवें सूत्रमें प्रतिपादित दूसरे जीवोंका

દાશ ધનનો સંગ્રહ કરે છે. કોઈ ઉપર કર્ણોજ્જની વૃદ્ધિ કરે છે. કોઈને અભિ-  
યોગમા દસાવી તેની ઉપર અધિકમાં અધિક દંડ પણ કરી નાંખે છે. આ પ્રકારનો  
રાજા પોતાની પ્રજા માટે અગર પોતાના અધિકૃત દેશ માટે ક્લેશકારક અને પરિતા-  
પાપદાયક થયા કરે છે. જનપદ પરિગ્રહ અર્થાત્ બીજા રાજાઓ ઉપર ચઢાઈ કરી  
તેના દેશને પોતાના અધિન કરવાના પ્રયત્નમાં રહે છે સમય મળતાં જ ત્યારે તે  
ચઢાઈ કરે છે ત્યારે તે વખત વ્યર્થમાં નરસંહાર જેવું ભયંકર કાંડ ઉપસ્થિત થાય છે,  
તેની આ પ્રકારની પ્રવૃત્તિ ધાર્મિક નીતિથી ઠીક નથી, કારણ કે તેની આ પ્રવૃત્તિથી  
અન્ય જીવોને અને જનપદને ક્લેશ તથા સન્તાપ ઉત્પન્ન થાય છે. ॥ સૂ૦ ૭ ॥

‘ આસેવિત્તા ’ इत्यादि.

इच्छानी पूर्ति માટે सातवें सूत्रમાં प्रतिपादित બીજા જીવોનો વધ પરિ-

અન્યવધપરિતાપપરિગ્રહાદિકમ્ આસેવ્ય પથ્થાત્ તૃપ્તિદેતૃત્વાભાવાન્નિઃસારં વિજ્ઞાય, એકે=ભરતાદયઃ સમુત્થિતાઃ=સંયમારાધને પ્રવૃત્તાસ્તેનૈવ ભવેન સિદ્ધિઃ લઘ્યવન્તઃ । તસ્માદ્ યતો વાન્તવદ્ભોગં પરિત્યજ્ય પ્રતિજ્ઞા કૃતા ‘પુનર્ભોગાર્થં મયા ન પ્રવર્તિનિપ્યતે’ इति, તસ્માદ્ જ્ઞાની=સમ્યગ્જ્ઞાનવાન્ વિષયભોગં નિસ્સારં દૃષ્ટ્વા, વિષયભોગે કૃતેડપિ તૃપ્ત્યભાવાદિતિ ભાવઃ; ભોગલિપ્સયા તં દ્વિતીયં=દ્વિતીયચારં નો સેવતે, ન પુનસ્ત્રાસક્તો ભવતીતિ ભાવઃ ॥ સૂ૦ ૮ ॥

ન મનુષ્યાણામેવ ભોગો નિઃસારઃ કિંતુ દેવાનામપીત્યાદ્ ‘ઉવચાયં’ इत्यादि।

મૂલમ્—ઉવચાયં ચવણં ચ ણચ્ચા અણણં ચર માહણે ॥સૂ૦ ૯॥

છાયા—ઉપપાતં ચ્યવનં ચ જ્ઞાત્વા અનન્યં ચર માહન ! ॥ સૂ૦ ૯ ॥

વધ પરિતાપ એવં પરિગ્રહાદિકા સેવન કરકે મી જવ ઇચ્છાકી તૃપ્તિ નહીં હોતી હૈ તવ કોઈ ભરતાદિક જૈસે મહાપુરુષ સંયમકે આરાધન કરનેમે પ્રવૃત્ત હોતે હૈં ઓર ડસી ભવમેં મુક્તિકા લાભ મી ફર લિયા કરતે હૈં । ઇસ લિયે જો છર્દિત-વમન કિયે હુણ અન્નકે સમાન ભોગોંકા પરિત્યાગ કર “ ફિર અબ મેં ભોગોંકે સેવન કરનેમેં પ્રવૃત્તિ નહીં કરૂંગા ” ઇસ પ્રકારકી પ્રતિજ્ઞા કર લિયા કરતે હૈં, સમ્યગ્જ્ઞાનસંપન્ન વે જ્ઞાની પુરુષ વિષયભોગોંમેં નિસ્સારતા જાન કર, અર્થાત્ “ વિષયભોગોંકે સેવન કરને પર મી જીવોંકો તૃપ્તિ નહીં હોતી હૈ ” ઇસ પ્રકાર સમજ્ઞ કર ફિર ભોગોં કે સેવન કરનેકી ઇચ્છાસે દૂસરે મૃપાવાદ રૂપ પાપકા અથવા અસંયમ કા સેવન નહીં કરતે હૈં ॥ સૂ૦ ૮ ॥

મનુષ્યોંકે વિષયભોગ હી નિસ્સાર નહીં હૈં, કિન્તુ દેવોંકે મી વિષયભોગ નિસ્સાર હૈં; ઇસી વાતકો સમજાતે હૈં—‘ઉવચાયં’ इत्यादि ।

તાપ તેમજ પરિગ્રહાદિનુ સેવન કરીને પણ ત્યારે ઇચ્છાની તૃપ્તિ થતી નથી ત્યારે કોઈ ભરતાદિક જેવો મહાપુરુષ સંયમનું આરાધન કરવામાં પ્રવૃત્ત થાય છે અને તેજ લવમાં મુક્તિનો લાભ પણ કરી લે છે. માટે વમન કરેલા અન્ન સમાન ભોગોનો પરિત્યાગ કરી “ હવે પછી હું ભોગનું સેવન કરવામાં પ્રવૃત્તિ નહિ કરું ” આવા પ્રકારની પ્રતિજ્ઞા કરી લે છે. સમ્યગ્જ્ઞાનસંપન્ન તે જ્ઞાની પુરુષ વિષય ભોગોમાં નિસ્સારતા વર્ણીને અર્થાત્ “ વિષયભોગોનું સેવન કરવા છતાં ઉપોને તૃપ્તિ થતી નથી ” એવા પ્રકારે સમજીને પછી ભોગોનું સેવન કરવાની ઇચ્છાથી ખીન્ત મૃપાવાદરૂપ પાપનું અને અસંયમનું સેવન કરના નથી. ॥ સૂ૦ ૮ ॥

મનુષ્યાનાજ વિષયભોગ નિસ્સાર છે, તેમ નહિ; કિન્તુ દેવોના પણ વિષય ભોગ નિસ્સાર છે. આ વાતને સમજાવે છે—‘ઉવચાયં’ इत्यादि.



ટીકા—હે માહન ! = હે મુને ! ઉપપાતં = દેવજન્મ, જ્યવનં = દેવમરણં ચ જ્ઞાત્વા  
અનન્યં = અન્યો = મોક્ષમાર્ગાદિતરઃ અસંયમઃ, નાન્યોઽનન્યઃ અસંયમાદ્વિન્નઃ શ્રુતચારિ-  
ત્રાત્મકો ધર્મસ્તં ચર = સમાચર ॥ મૃ ૦ ૮ ॥

હે મુનિ ! દેવોંકે ઉપપાત-જન્મ, જ્યવન-મરણકો જ્ઞાનકર તુમ  
અનન્ય-જો શ્રુતચારિત્રરૂપ ધર્મ હૈં ઉસકા સેવન કરો. ભાવાર્થ-દેવોંકી  
આયુ સાગરોંકી હોતી હૈં. ઇનની વડી આયુ હોતે હુણે મીં વિષયભોગોંસે  
તૃપ્તિ નહીં હોતી. ઉન દેવોંકો વહ આયુ ક્ષણસદૃશ હીં લગતી હૈં ઓર  
વ્યતીત હો જાતી હૈં. વહાં કે વિષયભોગ મીં સદા સ્થિર નહીં હૈં, વે મીં  
વિનશ્વર હૈં. જન્મ-મરણકા ચક્કર દેવગનિમેં દેવોંકો મીં ભોગના પડના  
હૈં. અતઃ સંવોધન કરતે હુણે સૂત્રકાર કહતે હૈં કિ હે મુનિ ! ‘મનુષ્ય-  
લોકકે વિષયભોગ હીં અસાર હૈં’ યહ વાત નહીં હૈં, કિન્તુ દેવલોકકે  
મીં વિષયભોગ ઇસી તરહ અસાર હૈં. ઇસ ગતિમેં સંયમકી આરાધના  
નહીં હોતી હૈં, સંયમકી આરાધના મનુષ્યગતિકે સિવાય અન્ય કિસી  
મીં ગતિમેં નહીં હો સકતી હૈં, અતઃ ઇસ દુર્લભ મનુષ્યજન્મકો વિષય-  
ભોગોંકી ચાહનામેં અથવા ઉનકે સેવન કરનેમેં નષ્ટ કર દેના યહ બુદ્ધિ-  
માન કા કર્તવ્ય નહીં હૈં. યહ મત સમજો કિ—‘સંયમકી આરાધનાસે  
હમ દેવપર્યાય પ્રાપ્ત કર વહાંકે વિષયભોગોંકો ભોગતે હુણે સુખી હો

હે મુનિ ! દેવોના ઉપપાત-જન્મ, જ્યવન-મરણને જાણીને તમે અનન્ય  
જે શ્રુતચારિત્રરૂપ ધર્મ છે તેનું સેવન કરો.

ભાવાર્થ—દેવોનું આયુષ્ય સાગરોનું હોય છે. આટલું મોટું આયુષ્ય હોવા  
છતાં પણ વિષયભોગોથી તૃપ્તિ થતી નથી. તે દેવાને તે આયુ ક્ષણસદૃશ જ  
લાગે છે અને વ્યતીત થઈ જાય છે. ત્યાંના વિષયભોગ પણ સદા સ્થિર નથી.  
તે પણ વિનશ્વર છે. જન્મ મરણનું ચક્કર દેવગનિમા દેવોને પણ ભોગવવું પડે છે,  
માટે શિષ્યને સંવોધન કરીને સૂત્રકાર કહે છે—

હે મુનિ ! મનુષ્યલોકના વિષયભોગ જ અસાર છે એ વાત નથી પણ  
દેવલોકના પણ વિષયભોગ આ માફક અસાર છે. આ ગતિમાં સંયમની આરાધના  
થતી નથી. સંયમની આરાધના મનુષ્યગતિ સિવાય અન્ય કીજી કોઈ પણ ગ-  
તિમાં જતી શકતી નથી. માટે આ દુર્લભ મનુષ્ય જન્મને વિષયભોગોની ચાહનામાં  
અને તેનું સેવન કરવામાં નષ્ટ કરી નાખવો તે બુદ્ધિમાનનું કર્તવ્ય નથી. એમ  
જ સમજો કે ‘સંયમની આરાધનાથી અમે દેવપર્યાય પ્રાપ્ત કરી ત્યાંના વિષય-



કિં ચ--' સે ણ છણે ' ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્-સે ણ છણે ણ છણાવણ છણંતં ણાણુજાણણ ॥ સૂ૦ ૧૦ ॥

છાયા-સ ન ક્ષણુયાત્, ન ક્ષાણયેત્, ક્ષણ્વન્તં નાનુજાનીયાત્ ॥ ૧૦ ॥

ટીકા-સઃ=શ્રુતચારિત્રધર્મારાધનપરો મુનિઃ, પ્રાણિનો ન ક્ષણુયાત્=ન દન્યાત્, ન ક્ષાણયેત્=ન ઘાતયેત્, ક્ષણ્વન્તં=ઘનન્તમન્યં નાનુજાનીયાત્=નાનુમોદયેદિત્યર્થઃ ॥

અથ ચતુર્થવ્રતસિદ્ધચર્યમુપદિશતિ-' નિર્વિવદ ' ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્-નિર્વિવદ નંદિં, અરણ પયાસુ, અણોમદંસી નિસણ્ણે પાવેહિં કમ્મેહિં ॥ સૂ૦ ૧૧ ॥

છાયા-નિર્વિન્દસ્વ નન્દીમ્, અરક્તઃ પ્રજાસુ, અનવમદર્શી નિપણ્ણઃ પાપેભ્યઃ કર્મભ્યઃ ॥ સૂ૦ ૧૧ ॥

ટીકા-પ્રજાસુ=પ્રજાયન્તે સુતાદયો યાસુ તાઃ પ્રજાઃ=સ્ત્રિયસ્તાસુ, અરક્તઃ=અનાસક્તઃ, તથા-અવમં=નીચં નીચફલોત્પાદકત્વાદ મિથ્યાદર્શનાદિ, તદ્વિત્તમ્ અન-

જાયેંગે' કારણ કિં વહાંકે વિષયભોગ સ્ત્રી અસાર હી હૈં, અતઃ નિદાન રહિત હો કર હી તુમ શ્રુતચારિત્રરૂપ ધર્મકી આરાધના કરો ॥ સૂ૦ ૧ ॥

ફિર સ્ત્રી કહતે હૈં-' સે ણ છણે ' ઇત્યાદિ ।

શ્રુતચારિત્રરૂપ ધર્મકી આરાધના કરનેમેં તત્પર હુઆ મુનિ કમ્મી સ્ત્રી સ્વયં પ્રાણીઓંકી હિંસા ન કરે, દૂસરોંસે હિંસા ન કરાવે ઓર હિંસા કરનેવાલોંકી અનુમોદના સ્ત્રી ન કરે ॥ સૂ૦ ૧૦ ॥

હસકે વાદ ચતુર્થવ્રત (વ્રત્તચર્યવ્રત) કી સિદ્ધિકે લિયે ઉપદેશ કરતે હૈં-' નિર્વિવદ નંદિં ' ઇત્યાદિ ।

' પ્રજાયન્તે સુતાદયો યાસુ તાઃ પ્રજાઃ ' પુત્રાદિ સન્તાન જિનમેં ઉત્પન્ન

લોગોને લોગવતાં સુખી થઈ જશું.' કારણ કે ત્યાંના વિષયભોગ પણ અગર ન છે. માટે નિદાનરહિત જાનીને ન તમે શ્રુતચારિત્રરૂપ ધર્મની આરાધના કરો. ॥ સૂ૦ ૧૦ ॥

કરી પણ કહે છે-' સે ણ છણે ' ઇત્યાદિ.

શ્રુતચારિત્રરૂપ ધર્મની આરાધના કરવામાં તત્પર જાનેલ મુનિ કહિ પણ સ્વયં પ્રાણીઓની હિંસા ન કરે, બીજા પાસે હિંસા ન કરાવે અને હિંસા કરવાવાળાની અનુમોદના પણ ન કરે ॥ સૂ૦ ૧૦ ॥

ત્યાર બાદ ચતુર્થવ્રત (વ્રત્તચર્યવ્રત)ની સિદ્ધિ માટે ઉપદેશ કરે છે-' નિર્વિવદ નંદિં ' ઇત્યાદિ.

' પ્રજાયન્તે સુતાદયો યાસુ તાઃ પ્રજાઃ '—

પુત્રાદિ સન્તાનજેના ઉત્પત્તિવાચ છે તેનું નામ પ્રજા—સ્ત્રી છે. તથા અવમનમ

વમં, તદ્ દ્રષ્ટું શીલમસ્યેતિ—અનવમદર્શી=સમ્યગ્દર્શનજ્ઞાનચારિત્રારાધનપરઃ, અત એવ  
પાપેભ્યઃ=પાપકારણેભ્યઃ કર્મભ્યઃ=અષ્ટાદશવિધમૈથુનેભ્યઃ નિવૃણઃ=નિવૃત્તઃ સન્  
નન્દી=વૈપયિકં સુખં નિર્વિન્દસ્વ=જુગુપ્સસ્વ । વામિનીકાયસ્યાતિનિન્દ્યત્વાત્તત્સજ્જન-  
નિતમુખસ્ય દ્વિસાદિપાપહેતુત્વાચ્ચ ચતુર્થવ્રતારાધને સાવધાનો ભવેત્યર્થઃ ॥ સૂ. ૧૧ ॥

કિં ચ—‘કોહાઈ’ ઇત્યાદિ ।

હોતી હૈં ઉનકા નામ પ્રજા-સ્ત્રી હૈ । તથા અવમ નામ મિથ્યાદર્શન આદિકા  
હૈ । ઉસસે ભિન્ન સમ્યગ્દર્શનાદિક અનવમ હૈ । ઇસ અનવમકો દેઘનેકા  
જિસકા સ્વભાવ હો વહ અનવમદર્શી હૈ । શિષ્યોંકો વ્રહ્મચર્યવ્રતકે પાલન  
કરનેકી શિક્ષા દેતે હુએ સૂત્રકાર કહતે હૈં કિ હે શિષ્ય ! તુમ સ્ત્રિયોંકે  
વિષયમેં આસક્તચિત્ત ન બનો, સ્વપ્નમેં ખી ઉનકા ધ્યાન ન કરો । તથા  
જઘન્ય ફલકે ઉત્પાદક હોનેસે મિથ્યાદર્શનાદિક અવમ હૈં । ઉનસે વિ-  
પરીત અનવમ-સમ્યગ્દર્શન, સમ્યગ્જ્ઞાન ઓર સમ્યક્ચારિત્ર હૈં ।

ઇન સમ્યગ્દર્શનાદિકકી આરાધનાસે તુમ્હેં બ્રષ્ટ બનાવેવાલે જો  
પાપકે કારણભૂત અઠારહ પ્રકારકે મૈથુન હૈં, ઉનસે નિવૃત્ત હુએ તુમ નન્દી-  
વૈપયિક સુખોંકી ઓર સદા ઘૃણાદૃષ્ટિ રહો ।

આવાર્થ--સ્ત્રિયોંકા શરીર સદા અતિનિન્દ્ય હોતા હૈ । ઉસકે સેવન  
સે ઉત્પન્ન હુઆ વૈપયિક સુખ દ્વિસાદિક પાપોંકા કારણ હોતા હૈ । એસી  
દૃઢશ્રદ્ધા કર તુમ ચતુર્થ વ્રતકી આરાધનામેં સાવધાન રહો ॥ સૂ. ૧૧ ॥

ફિર કહતે હૈં--‘કોહાઈમાણં’ ઇત્યાદિ ।

મિથ્યાદર્શન આદિનું છે. તેનાથી ભિન્ન સમ્યગ્દર્શનાદિક અનવમ છે. આ અનવમને  
દેખવાનો જેનો સ્વભાવ છે તે અનવમદર્શી છે. શિષ્યોને બ્રહ્મચર્યવ્રતનું પાલન  
કરવાની શિક્ષા દેતા સૂત્રકાર કહે છે કે હે શિષ્ય ! તમે સ્ત્રીઓ માટે આસક્ત-  
ચિત્ત ન બનો. સ્વપ્નમાં પણ તેનું ધ્યાન ન કરો. તથા મિથ્યાદર્શનાદિક જઘન્ય ફલના  
ઉત્પાદક હોવાથી અવમ છે. તેનાથી વિપરીત અનવમ સમ્યગ્દર્શન, સમ્યગ્જ્ઞાન  
અને સમ્યક્ચારિત્ર છે તેની આરાધનાથી તમને બ્રષ્ટ બનાવનાર પાપના કારણભૂત  
અઠાર પ્રકારના મૈથુન છે તેનાથી નિવૃત્ત બનીને તમે નન્દી-વૈપયિક સુખોની  
તરફ સદા ઘૃણાદૃષ્ટિ રાખો.

ભાવાર્થ--સ્ત્રીઓનું શરીર સદા અતિનિન્દ્ય હોય છે. તેના સેવનથી ઉત્પન્ન  
થયેલ વૈપયિક સુખ દ્વિસાદિક પાપોનું કારણ બને છે. એવી દૃઢ શ્રદ્ધા કરી  
તમે એવા વ્રતની આરાધનામાં સાવધાન રહો ॥ સૂ. ૧૧ ॥

વળી કહે છે--‘કોહાઈમાણં’ ઇત્યાદિ.

मूलम्—क्रोहादिमाणं हणिया य वीरे, लोभस्स पासं निरयं महंतं । तम्हा य वीरे विरए वहाओ, छिन्दिज्ज सोयं लहु-भूयगामी ॥ सू० १२ ॥

छाया—क्रोधादिमानं हन्यात् च वीरः लोभस्य पश्य निरयं महान्तम् । तस्माच्च वीरो विरतो वधात् छिन्धात् शोकं लघुभूतगामी ॥ सू० १२ ॥

टीका—वीरः=कर्मविदारणसमर्थः, क्रोधादिमानं=क्रोधादीनां मानम् अनन्तानुबन्धादिविशेषं हन्यात्=निवारयेत् । यद्वा—क्रोध आदिर्यस्य स क्रोधादिः, स चासौ मानश्च क्रोधादिमानः—क्रोधहेतुको गर्वस्तं हन्यादित्यर्थः । लोभस्यानन्तानुबन्धादेर्विपाकं महान्तं=दुस्तरं निरयं=नरकं पश्य । उक्तञ्च—‘मच्छा मणुआ य सत्तमिं पुढवि’ इति । अतिलोभाविष्टा मनुष्यारतन्दुलमत्स्यादयश्च सप्तमपृथिवी भाजो भवन्तीति भावः ।

कर्मोंके विनाश करनेकी शक्तिसे संपन्न वीर क्रोधादिक कपायों के अभिमानको अर्थात् अनन्तानुबन्धी आदि क्रोध मान माया और लोभको दूर करे । अथवा—क्रोध है आदियें जिसके वह क्रोधादि है । क्रोधादिरूप जो मान उसका नाश क्रोधादिमान है । जिस गर्वका हेतु क्रोध है उस क्रोधादिकारणक मानको वह नष्ट करे । अनन्तानुबन्धी आदि कपाय सबबन्धी लोभके विपाकको सदा दुस्तर नरक ही समझना चाहिये । कहा भी है—“मच्छा मणुआ य सत्तमिं पुढवि” अति लोभसे युक्त मनुष्य और मत्स्य—तन्दुलमत्स्य आदि नरकर मानवें नरकमें जाते हैं । जब यह निश्चित सिद्धान्त है कि लोभसे युक्त प्राणी हिंसादिक पापकर्मों में प्रवृत्तियुक्त होनेसे मरकर नरक गतिमें जाते हैं तो जो कर्मोंको नाश करनेवाली शक्तिसे युक्त वीर हैं उन्हें प्राणियोंकी हिंसासे सदा

कर्मोंका विनाश करवाती शक्तिथी मयत वीर बुनि, क्रोधादिक कपायोंका अभिमानने अर्थात् अनन्तानुबन्धी आदि क्रोध, मान, माया मनें होवने हरे हरे, अथवा क्रोध छे आदिमा लेने ते क्रोधादि छे क्रोधादिरूप ले मान लेनुं मान क्रोधादिमान छे, ले गर्वने हेतु क्रोध छे, ते क्रोधादिकारणक मानने ते नरक करे, अनन्तानुबन्धी आदि कपाय सबबन्धी होवना विचारने यह दुस्तर नरक न समझवुं नैछेछे, कहा छे—“मच्छा मणुआ य सत्तमिं पुढवि” अति लोभसे युक्त मनुष्य अने मत्स्य—तन्दुलमत्स्य आदि नरकमें जावनी नरकमें जाते हन्यादे जो निश्चित सिद्धान्त छे कि लोभसे युक्त प्राणी हिंसादिक पाप कर्मोंमें प्रवृत्ति युक्त होवधी मरने नरक गतिमें जाय ते जो के होवने नरक समझवानी शक्तिथी युक्त वीर छे तेने प्राणियोंकी हिंसासे सदा नरक में जावुं नैछेछे

યથેવં તતઃ કિં કર્તવ્યમિત્યાહ—‘તસ્માત્’ इत्यादि । लोभाविष्टाः प्राणि-  
हिंसनादौ प्रवृत्त्या नरकं प्राप्नुवन्ति, तस्माद् वीरः=कर्मविदारणोत्साहयुक्तो वधात्=  
प्राणिनां हिंसनाद् विरतः सर्वथा निवृत्तः स्यात् । किंच—लघुभूतगामी=लघुभूत  
आत्मा येन स लघुभूतो मोक्षः, तं गन्तुं शीलमस्येति लघुभूतगामी, यद्वा—‘लघु-  
भूतकामी’ इतिच्छाया, तत्र आत्मानं लघुभूतं कामयते इति लघुभूतकामी=मोक्षा-  
भिलाषी, मोक्षमार्गारूढः शोकं, ‘स्रोत’ इतिच्छायापक्षे स्रोतो=भावस्रोतोवा कर्म-  
कारणं, छिन्द्यात्=व्यपनयेत् ॥ मु० १२ ॥

સર્વરીતિસે દૂર હી રહના ચાહિયે । હિંસાદિક પાપકર્મોસે સદા ત્રીન કરણ  
ત્રીન યોગસે અર્થાત્ મન, વચન ઓર કાય, એવં કૃત કારિત ઓર અનુ-  
મોદના સે જો દૂર રહતા હૈ વહ કર્મવન્ધકૈ ભારસે ભારી નહીં હોતા હૈ ।  
એસે વ્યક્તિકી આત્મામેં સ્વાભાવિક રીતિસે લાઘવ ગુણકા આવિર્ભાવ  
હોના હૈ ઓર ઉસસે ઝર્વગતિકી પ્રાપ્તિ હોતી હૈ । ‘લઘુભૂત’ શબ્દકા  
અર્થ મોક્ષ હૈ, ક્યોં કિ મુક્તિકા લાભ ઉસી આત્માકો હોતા હૈ કિ જિસ  
સે કર્મકા ભાર ઉતર જાતા હૈ । કર્મકા ભાર ઉતર જાનેસે આત્મા સ્વા-  
ભાવિક રીતિસે લઘુ-હલ્કા હો જાતા હૈ । જો चीज वजनमें हल्की होती  
है वह स्वभावसे ही ऊपरकी ओर उठती है । आत्मा भी जब कर्मव-  
न्धनसे रहित हो जाती है तब इसका भी स्वभाव स्वतः ऊर्ध्वगमन करने  
का हो जाना है । सकल कर्मोंका क्षय होना ही आत्माकी मुक्ति है । इस  
मुक्तिको प्राप्त करनेका जिसका स्वभाव है वह लघुभूतगामी है । अथवा  
‘लघुभूतगामी’ इस पदकी छाया ‘लघुभूतकामी’ ऐसी भी होती है ।

હિંસાદિક પાપકર્મોથી સદા ત્રણ કરણ ત્રણ યોગથી અર્થાત્ મન વચન કાય  
અને કૃત કારિત અને અનુમોદનાથી જે દૂર રહે છે તે કર્મબંધના ભારથી ભારી  
થતા નથી, એવી વ્યક્તિના આત્મામાં સ્વાભાવિક રીતથી લાઘવ ગુણનો આવિ-  
ર્ભાવ થાય છે અને તેનાથી ઉર્ધ્વગતિની પ્રાપ્તિ થાય છે ‘લઘુભૂત’ શબ્દનો અર્થ  
મોક્ષ છે. કારણ કે મુક્તિનો લાભ તે આત્માને થાય છે કે જેથી કર્મનો ભાર  
ઉતરી જાય છે. કર્મનો ભાર ઉતરી જવાથી આત્મા સ્વાભાવિક રીતથી લઘુ-  
હલકો બને છે. જે ચીજ વજનમાં હલકી થાય છે તે સ્વભાવથી જ ઉપરની  
તરફ ઉઠે છે. આત્મા પણ ત્યારે કર્મબંધનથી રહિત થઈ જાય છે ત્યારે તેનો  
પણ સ્વભાવ સ્વતઃ ઉર્ધ્વગમન કરવાનો થઈ જાય છે. સકલ કર્મોનો ક્ષય થવો  
તે જ આત્માની મુક્તિ છે. તેવી મુક્તિને પ્રાપ્ત કરવાનો જેનો સ્વભાવ છે તે  
લઘુભૂતગામી છે. અને ‘લઘુભૂતગામી’ આ પદની છાયા ‘લઘુભૂતકામી’ એમ પણ

કિંચ—‘ ગંથં ’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્—ગંથં પરિણાય ઇહઽઙ્ગ ધીરે, સોયં પરિણાય ચરિઙ્ગ દંતે । ઉમ્મઙ્ગ લદ્ધું ઇહ માણુસેહિં, નો પાણિણં પાણે સમારભિઙ્ગાસિ-ત્તિ વેસિ ॥ સૂ૦ ૧૩ ॥

છાયા—ગ્રન્થં પરિજ્ઞાય ઇહાઘ ધીરઃ, સ્ત્રોતઃ પરિજ્ઞાય ચરેદ્ દાન્તઃ । ઉન્મઙ્ગનં લબ્ધ્વા ઇહ માનુષ્યેષુ નો પ્રાણિનાં પ્રાણાન્ સમારભેથાઃ । ઇતિ વ્રવીમિ ॥ મૂ૦ ૧૩ ॥

ટીકા—ઇહ સંસારે મનુષ્યલોકે વા, અથૈવ=કાલાનતિક્રમેણ, ધીરઃ સન ગ્રન્થં =વાહ્યાભ્યન્તરભેદાદ્ દ્વિવિધં પરિજ્ઞાય=જ્ઞપરિજ્ઞયા વન્ધકારણત્વેન વિજ્ઞાય, પ્રત્યા-રુપ્યાનપરિજ્ઞયા પરિવર્જયેત્ । કિં ચ સ્ત્રોતઃ=ભાવસ્ત્રોતો વિષયાસક્તિરુપં સંસારં પરિજ્ઞાય=જ્ઞાત્વા દાન્તઃ=ઇન્દ્રિયનોઇન્દ્રિયદમનશીલઃ ચરેત્=સંયમમાચરેત્ ।

इसका अर्थ यह होता है कि मोक्षका जो अभिलाषी है वह लघुभूत-कामी है । मोक्षाभिलाषी मोक्षमार्गपर आरुढ़ होता हुआ शोक को. अथवा कर्मोंके आस्रवके कारणभूत भावस्रोतको अपनी आत्मासे सदा दूर करे ॥ सू० १२ ॥

और भी कहते हैं—‘ गंथं परिणाय ’ इत्यादि ।

इस संसार अथवा मनुष्यलोकमें आत्मार्थी को समय बिताना व्यर्थ है । जहां तक हो सके जल्दी से जल्दी धैर्यशाली बन कर बाल्य और आभ्यन्तर परिग्रहको ज्ञपरिज्ञासे बन्धका कारण जानकर प्रत्या-रुप्यानपरिज्ञासे उसका त्याग करे । तथा विषयोंमें आसक्तिरूप संसार को जान कर पांच इन्द्रिय एवं मनका दमन करना हुआ संयमकी आ-राधनामें अपनेको लगावे ।

ધાથ છે. તેનો અર્થ એ થાય છે કે મોક્ષનો જે અભિલાષી છે તે લઘુભૂતકામી છે. મોક્ષાભિલાષી મોક્ષ માર્ગ ઉપર આરુઢ થઈને મોક્ષને અથવા કર્મોના અભ્ય-વના કારણભૂત ભાવસ્રોતને પોતાના આત્માથી સદા દૂર કરે. ॥ સૂ૦ ૧૨ ॥

इरी इडे छे—‘ गंथं परिणाय ’ इत्यादि.

આ સંસાર અને મનુષ્ય લોકમાં આત્માર્થી માટે અમય વિતાવવો વ્યર્થ છે. ત્યાં સુધી જની શકે જલ્દીમાં જલ્દી ધૈર્યશાળી બનીને બાળ અને આભ્યન્તર પરિગ્રહને જ્ઞપરિજ્ઞાથી બંધનું કારણ જાણી પ્રત્યારુપ્યાનપરિજ્ઞાથી તેનો ત્યાગ કરે. તથા વિષયોમાં આસક્તિરૂપ સંસારને જાણીને પાંચ ઇન્દ્રિય અને મનનું દમન કરીને સંયમની આરાધનામાં પોતાને લગાવે.

इह संसारद्वंद्वे मानुष्येषु=मनुष्यभवेषु, उत्सृज्यते=जन्मरूपं लब्ध्वा, मनुष्य-  
भवादित्यत्र संपूर्णमोक्षमार्गप्राप्त्यसंभवादिदं दुर्लभमिति भावः; प्राणिनां=जीवानां

इस संसारमें मनुष्यभवकी प्राप्ति दुर्लभ है। यदि कोई पुण्यानुबन्धी पुण्यके उदयसे इस मनुष्यभवकी प्राप्ति तुम्हें हुई है तो तुम इस अमूल्य जीवनको व्यर्थ हिंसादिक कार्योंमें लगाकर नष्ट न करो। इसी बात को समझाते हुए सूत्रकार शिष्योंके प्रति कहते हैं—मनुष्यभवके सिवाय अन्य किसी भी भवमें संपूर्ण मोक्षमार्गकी प्राप्ति जीवको नहीं होती है इसीलिये जानियोंने इसकी प्राप्ति दुर्लभ बतलाई है। इसे प्राप्तकर जीवोंके दस द्रव्य प्राणों (५ इन्द्रिय, ३ बल, १ आयु और १ श्वासोच्छ्वास-१०) का वियोग करनेमें ही इसे व्यर्थ गंवा देना यह बुद्धिमान मनुष्यका काम नहीं है। इस मनुष्यभवकी प्राप्तिकी सफलता तो जब ही है कि इससे संयमका आराधन किया जाय और सुक्तिमार्गका पथिक बना जाय। इसलिये हे शिष्य ! तुम्हारा कर्तव्य है कि तुम इस दुर्लभतम मनुष्यभवको पाकर व्यर्थ हिंसादिक कार्योंमें न फंसकर मोक्षमार्गके पथिक बनो और अपने इस मनुष्यभवको सफल बनाओ, यही सूत्रका आशय है। अर्थात्—मनुष्यभवमें जन्म प्राप्त कर तुम प्राणियोंके प्राणोंका

આ સંસારમાં મનુષ્ય ભવની પ્રાપ્તિ મહા દુર્લભ છે. કહાય કેઈ પુણ્યાનુબંધી પુણ્યના ઉદયથી આ મનુષ્યભવની પ્રાપ્તિ તમોને મળી છે તો તમો આ અમૂલ્ય ભવને વ્યર્થ હિંસાદિક કાર્યોમાં લગાવી નષ્ટ ન કરો. આ વાતને સમજાવતાં સૂત્રકાર શિષ્યો પ્રતિ કહે છે—મનુષ્ય ભવ સિવાય બીજા કોઈ પણ ભવમાં સંપૂર્ણ મોક્ષમાર્ગની પ્રાપ્તિ ભવને થતી નથી. માટે જ્ઞાનીઓએ તેની પ્રાપ્તિ દુર્લભ બતાવી છે. તેને પ્રાપ્ત કરી એવાના દસ દ્રવ્ય પ્રાણો (૫ ઇન્દ્રિય, ૩ બળ, ૧ આયુ અને ૧ શ્વાસોચ્છ્વાસ-૧૦)નો વિયોગ કરવામાં જ તેને વ્યર્થ ગુમાવવો તે બુદ્ધિમાન મનુષ્યનું કામ નથી.

આ મનુષ્યભવની પ્રાપ્તિની સફળતા તો ત્યારે જ છે કે તેનાથી સંયમનું આરાધન કરવામાં આવે અને સુક્તિ માર્ગનો પથિક બની જાય, તેથી છે શિષ્ય ! તમારું કર્તવ્ય છે કે તમે આ દુર્લભ મનુષ્ય ભવ મેળવીને વ્યર્થ હિંસાદિક કાર્યોમાં ન ફસતાં મોક્ષમાર્ગના પથિક બનો, અને એવાના આ મનુષ્યભવને સફળ બનાવો. એ જ સૂત્રનો આશય છે. અર્થાત્ મનુષ્યભવમાં જન્મ પ્રાપ્ત કરી તમે પ્રાણીઓના

પ્રાણાન્=પશ્ચેન્દ્રિયવલત્રયોચ્છ્વાસનિઃશ્વાસાયુષ્કરૂપાન્ દશત્રિધાન્ નો સમારંભેથાઃ  
=નાતિપાતયેરિત્યર્થઃ । પ્રાણિનાં પ્રાણાતિપાતં મા કૃથા ઇતિ ભાવઃ । ઇતિ વ્રવીમિ-  
ઇતિશબ્દઃ ઉદ્દેશપરિસમાપ્તિવોધકઃ, વ્રવીમિ=યથા ભગવન્મુખાન્મયા શ્રુતં તથા  
કથયામીત્યર્થઃ ॥ સૂ૦ ૧૩ ॥

॥ ઇતિ તૃતીયાધ્યયનસ્ય દ્વિતીયોદ્દેશઃ સમ્પૂર્ણઃ ॥ ૩-૨ ॥

વ્યપરોપણ મત કરો । ‘ ઇતિ ’ શબ્દ ઇસ ઉદ્દેશકી સમાપ્તિકા સૂચક છે ।  
“વ્રવીમિ” યહ પદ વતલાતા છે કે જૈસા મૈને ભગવાનકે મુખસે સુના  
છે વૈસાહી તુમસે કહા છે ॥ સૂ૦ ૧૩ ॥

॥ ત્રીસરે અધ્યયનકા દૂસરા ઉદ્દેશ સમાપ્ત ॥ ૩-૨ ॥

પ્રાણોનો ધાત ન કરો. “ ઇતિ ” શબ્દ આ ઉદ્દેશની સમાપ્તિનું સૂચક છે “ વ્રવીમિ ”  
આ પદ બતાવે છે કે જેવું મેં ભગવાનના મુખથી સાંભળ્યું છે તેવું જ તમોને  
કહ્યું છે ॥ સૂ૦ ૧૩ ॥

ત્રીજા અધ્યયનનો બીજો ઉદ્દેશ સમાપ્ત ॥ ૩-૨ ॥





## ॥ अथ तृतीयाध्ययनस्य तृतीय उद्देशः ॥

इहानन्तरद्वितीयोद्देशके जात्या वृद्ध्या च दुःखं, तद्ध्याच्च शीतोष्णपरीषहसहनं च प्रतिबोधितम् । अथ तत्सहनमात्रेण पापकर्मानाचरणमात्रेण वा चारित्र्याचरणरहितः श्रमणो न भवतीति प्रतिबोधयितुं तृतीयोद्देशकं प्रस्तुवन् प्रथमं सूत्रमाह—  
'संधिं लोगस्स' इत्यादि ।

मूलम्—संधिं लोगस्स जाणित्ता ॥ सू० १ ॥

छाया—सन्धिं लोकस्य ज्ञात्वा ॥ सू० १ ॥

### । तीसरे अध्ययनका तीसरा उद्देश ।

इसके द्वितीय उद्देशमें प्राणियोंकी गर्भसे लगा कर वालादि वृद्धावस्था पर्यन्त सब ही अवस्थाएँ दुःखोंसे समन्वित हैं, उन दुःखोंसे भयभीत प्राणियोंको आत्मकल्याणके मार्गस्वरूप संयमकी आराधना करनी चाहिये, इस आराधनामें उन्हें शीत-उष्ण परीषहोंको सहन करना चाहिये, यह सब विषय बतलाया जा चुका है, अर्थात् मोक्षाभिलाषीके लिये यह सब समझाया जा चुका है । अब इस तीसरे उद्देशमें यह समझाया जायगा कि जो चारित्र्यके आचरणसे रहित है वह भले ही शीत उष्ण परीषहोंको सहे, पापकर्मोंको न भी करे तो भी वह श्रमण नहीं है । इसी अभिप्रायको लेकर सूत्रकार प्रथम सूत्रको कहते हैं—'संधिं' इत्यादि।

### ત્રીજા અધ્યયનનો ત્રીજો ઉદ્દેશ

અગાઉના બીજા ઉદ્દેશમાં પ્રાણીઓની ગર્ભથી માંડી જાલાદિ વૃદ્ધાવસ્થા પર્યન્ત સઘળી અવસ્થાઓ દુઃખોથી ભરેલી છે, તે દુઃખોથી ભયભીત પ્રાણીઓને આત્મકલ્યાણના માર્ગસ્વરૂપ સંયમની આરાધના કરવી જોઈએ. આ આરાધનામાં તેણે શીત અને ઉષ્ણ પરીપહો સહન કરવા જોઈએ. આ સઘળા વિષયો જતાવવામાં આવેલ છે. અર્થાત્ મોક્ષાભિલાષીએ માટે આ સઘળું સમજાવવામાં આવેલ છે. હવે આ ત્રીજા ઉદ્દેશમાં એ સમજાવવામાં આવશે કે જે ચારિત્રના આચરણથી રહિત છે તે ભલે શીત અને ઉષ્ણ પરીપહો સહન કરે, પાપકર્મો પણ ભલે ન કરે, તો પણ તે શ્રમણ નથી. આ અભિપ્રાયને લઈને સૂત્રકાર પ્રથમ સૂત્ર કહે છે—  
'સંધિં લોગસ્સ' ઇત્યાદિ.

સંધાનં સન્ધિઃ=વ્રુહ્યતઃ પુનઃ સંમીલનં, સ દ્વિધા-દ્રવ્યસન્ધિર્માવસન્ધિર્થેતિ । તત્ર દ્રવ્યસન્ધિઃ=કુહ્યવસ્ત્રાદેઃ સંધાનં, માવસન્ધિઃ=ચારિત્રમોહનીયક્ષયોપગમઃ, નં જ્ઞાત્યા=ત્રિદિત્વા જ્ઞાતવત્ इत्यर्थः, લોકમ્ય=ક્ષાયોપશમિકાદિભાવલોકમ્ય પ્રમાદઃ શ્રેયસે ન ભવતિ । યદ્વા-સન્ધિઃ=શ્રુતચારિત્રલક્ષણો ધર્મારાધનાવસરઃ, નં જ્ઞાન્વા લોકસ્ય=પદ્મજીવનિકાયરૂપસ્ય દુઃસ્વોત્પાદનં ન કુર્યાત્ ॥ મૂ. ૧ ॥

સર્વત્રાત્મોપમ્યેન સુખં દુઃખં વા જાનીયાદિત્યાહ-‘આયઓ’ इत्यादि ।

મૂલમ્-આયઓ વહિયા પાસ, તમ્હા ન હંતા ન વિઘાયમ્ ॥૨॥

છાયા-આત્મતો વહિઃ પશ્ય । તસ્માન્ન હન્તા ન વિઘાતયેત્ ॥ મૂ. ૨ ॥

ટીકા-આત્મતઃ યથાऽऽત્મનઃ સુખં પ્રિયં, દુઃખમપ્રિયમ્, તથા-વહિઃ=આત્મવ્યતિરિક્તાનાં પ્રાણિનામપિ પશ્ય=જાનીદિ । આત્મતુલ્યં સુખં દુઃખં સર્વપ્રાણિનાં વિજ્ઞાય કિં કર્તવ્યમિત્યાહ-‘તસ્માદ્’ इत्यादि ।

ટૂટી વસ્તુકો જોડના ઇસકા નામ સંધિ હૈ । વહ્ દો પ્રકારકી હૈ— (૧) દ્રવ્યસન્ધિ, (૨) માવસન્ધિ । મીંત ઓર વસ્ત્ર આદિકા જોડના-યહ દ્રવ્યસન્ધિ, ઓર ચારિત્રમોહનીયકા ક્ષયોપગમ માવસન્ધિ હૈ । ઇસ સન્ધિકે જ્ઞાતા મુનિકો ક્ષાયોપગમિકાદિ ભાવલોકકે વિષયમેં પ્રમાદ કરના ઉચિત નહીં હૈ । અથવા શ્રુતચારિત્રરૂપ ધર્મકે આરાધનકા અવસર મી સન્ધિ હૈ । ઇસકો જાનકર પદ્મજીવનિકાયરૂપ લોકકો દુઃસ્વ ઉત્પન્ન ન કરે ॥ મૂ. ૧ ॥

‘સમસ્ત સંસારી જીવોંકો સુખ તથા દુઃસ્વ મેરે હી સમાન પ્રિય ઓર અપ્રિય હૈ’ એસા જાનના ચાહિયે, ઇસે સ્પષ્ટ કરતે હૈ-‘આયઓ’ इ०

સંયમી જીવ સદા ઇસ વાતકા પૂર્ણ ધ્યાન રહે કિ-જિમ પ્રકાર મુક્તે સુખ પ્રિય ઓર દુઃસ્વ અપ્રિય હૈ ઉસી પ્રકાર મુક્તસે ભિન્ન અન્ય સમસ્ત

ભાંગી ગયેલ વસ્તુને જોડવી તેનું નામ સંધિ છે. તે બે પ્રકારની છે (૧) દ્રવ્યસંધિ (૨) ભાવસંધિ. ભીન અને વસ્ત્ર આદિનું જોડવું તે દ્રવ્યસંધિ અને ચારિત્રમોહનીયનો ક્ષયોપગમ ભાવસંધિ છે. આ સંધિના જ્ઞાતા મુનિને ક્ષાયોપશમિકાદિ ભાવલોકના વિષયમાં પ્રમાદ કરવા ઉચિત નથી. અથવા શ્રુતચારિત્રરૂપ ધર્મનાં આરાધનનો અવસર પણ સંધિ છે તેને જાણીને પદ્મજીવનિકાયરૂપ લોકને દુઃખ ઉત્પન્ન ન કરે ॥ મૂ. ૧ ॥

સમસ્ત સંસારી જીવોને સુખ અને દુઃખ મારી બે પ્રકાર પ્રિય અને અપ્રિય છે. એવું જાણવું જોઈશે, તેને સ્પષ્ટ કરે છે-‘આયઓ’ इ०

સંયમી જીવ સદા એ વાતનું પૂર્ણ ધ્યાન રાખે કે બે પ્રકાર અને સુખ પ્રિય અને દુઃખ અપ્રિય છે તે પ્રકાર મારાથી ભિન્ન અન્ય સમસ્ત સંસારી જીવોને

યતઃ સર્વેષાં પ્રાણિનાં મુખેઽભિલાષો દુઃખે દ્વેષઃ, તસ્માત્ તેષાં ન હન્તાન્ન પ્રાણાતિપાતકઃ સ્યાત્ । અન્યૈરપિ તાન્ ન વિદ્યાતયેત્, ઘનન્તમન્યં નાનુમોદયેત્ । યદપિ કુર્તીર્થિકા ઉદ્દિગ્ધમોજિનો દ્રવ્યલિઙ્ગિનો દણ્ડિનશ્ચ સ્વયં પાકાદિભિઃ સ્થૂલાન્ પ્રાણિનો ન ઘનન્તિ, તથાપ્યન્યૈર્ધાતયન્તિ ॥ સૂ. ૨ ॥

સંસારી જીવોંકો ભી યહ સુખ પ્રિય ઓર દુઃખ અપ્રિય હૈ । ઇસ લિયે ઉન જીવોંકે પ્રાણોંકો મૈં કિસી ભી રૂપમેં કષ્ટ ન પહુંચાઝું, દૂસરોંસે ભી ઉન્હેં મૈં કષ્ટ ન પહુંચવાઝું, કષ્ટ દેનેવાલે યા ઘાત કરનેવાલે અન્યકી મૈં અનુમોદના ભી ન કરૂં । યદપિ કુર્તીર્થિક-અન્યમતાવલમ્બી સાધુ સન્યાસી, ઉદ્દિષ્ટમોજી, દ્રવ્યલિઙ્ગી, તથા દણ્ડી આદિ સ્વયં રસોઈ આદિ પકાકર નહીં खाते पीते हैं, इस प्रकार वे स्वयं स्थूल जीवोंकी हिंसा नहीं करते हैं फिर भी दूसरोंसे अपने लिये जीवोंकी हिंसा कराते ही हैं, क्योंकि वे अपने निमित्त पाकादि आरंभ दूसरोंसे कराते हैं, उस आरंभ में जो हिंसा होती है उसका निमित्त उन्हें होना पड़ता है ।

ભાવાર્થ—સચ્ચે મુનિ હોનેકે લિયે પ્રાણાતિપાતાદિક પાપોંકા ત્યાગ મન વચન ઓર કાયસે, એવં કૃત કારિત ઓર અનુમોદનાસે કરના ચાહિયે તમી આત્મામેં સાધુતા આતી હૈ । ડપર-ડપરસે હિંસાદિ પાપ છોડનેસે અથવા હિંસાદિક પાપ સ્વયં ન કરને સે મુનિપના નહીં આતા હૈ । ઉસકી પ્રાપ્તિકે લિયે જિસ પ્રકાર જીવ સ્વયં હિંસાકા ત્યાગ કરતા હૈ, ઉસી પ્રકાર વહ દૂસરોંસે અપને નિમિત્ત હિંસાદિક નહીં કરા સકના હૈ, ઓર

પણ આ મુખ પ્રિય અને દુઃખ અપ્રિય છે. માટે તે જીવોને હું કદાચ પણ પ્રકારે દુઃખ ન પહોંચાડું, બીજાથી પણ તેઓને દુઃખ ન પહોંચાડવું, કષ્ટ દેવાવાળા અને ઘાત કરવાવાળા બીજાઓની હું અનુમોદના પણ ન કરું. કદાચ કુર્તીર્થિક-અન્યમતાવલમ્બી સાધુ સંન્યાસી ઉદ્દિષ્ટભોજી દ્રવ્યલિંગી તથા દંડી વિગેરે સ્વયં રસોઈ આદિ પકાવીને ખાતા પીતા નથી, તે પ્રકારે તેઓ સ્વયં સ્થૂલ જીવોની હિંસા કરતા નથી તો પણ બીજાથી ખોતાને માટે જીવોની હિંસા કરાવે છે જ. કદાચ કે તેઓ ખોતાના નિમિત્ત પાકાદિ આરંભ બીજાઓથી કરાવે છે. તે આરંભમાં જે હિંસા થાય છે તેનું નિમિત્ત તેને થવું પડે છે

ભાવાર્થ—સાચા મુનિ થવા માટે પ્રાણાતિપાતાદિક પાપોનો ત્યાગ મન વચન અને કાયથી તેમજ કૃત કારિત અને અનુમોદનાથી કરવો જોઈએ, ત્યારે જ આત્મામાં સાધુતા આવે છે. ઉપર-ઉપરથી હિંસાદિ પાપ છોડવાથી અને હિંસાદિક પાપ સ્વયં ન કરવાથી મુનિપણું આવતું નથી. તેની પ્રાપ્તિ માટે જે પ્રકારે જીવ સ્વયં હિંસાનો ત્યાગ કરે છે તે પ્રકારે તે બીજાઓથી પણ ખોતાને નિમિત્ત હિંસાદિક

पापकर्मानाचरणमात्रेण श्रमणो न भवति किं तु सम्यगाम्बर्मानरोधेनेन्याद-  
'जमिणं' इत्यादि।

मूलम्—जमिणं अन्नमन्नवित्तिगिच्छाए पडिलेहाए न करेइ  
पावं कम्मं, किं तत्थ मुणी कारणं सिया ?, समयं तत्थुव्वेहाए  
अप्पाणं विप्पसायए ॥ सू० ३ ॥

छाया—यदिदम् अन्योन्यविचिकित्सया प्रत्युपेक्ष्य न करोति पापं कर्म ।  
किं तत्र मुनिः कारणं स्यात् ? समयं तत्रोत्प्रेक्ष्य आत्मानं विप्रसादयेत् ॥ सू० ३ ॥

टीका—यदिदं पापं=पापानुबन्धि कर्म=पचनपाचनपरिग्रहादिलक्षणम् अन्यो-  
न्यविचिकित्सया=विचिकित्सा=आशङ्का भयं लज्जा वा, अन्योन्यस्य=परस्परस्य या  
विचिकित्सा=आशङ्का, यद्वा=अन्योन्यस्मात्=परस्परतो भयं लज्जा वा, तथा प्रत्यु-

न अपने लिये हिंसा करनेवालोंकी अनुमोदना ही कर सकता है । यदि  
ऐसा करता है तो वह साधु नहीं कहला सकता । जो साधु हो कर  
जीवहिंसाके भयसे स्वयं पाकादिक क्रिया तो नहीं करते हैं परन्तु उद्दिष्ट  
भोजन लेते हैं, तथा अपने लिये दूसरोंसे भोजन तैयार करवाते हैं वे नव  
कोटिसे हिंसा के त्यागी नहीं हैं, अतः वे साधु भी नहीं हैं ॥ सू० २ ॥

पाप कर्म नहीं करने मात्रसे प्राणी मुनि नहीं होता है किन्तु कर्मों  
के आस्रवको भली प्रकार रोकनेसे ही वह मुनि होता है, अब इसी  
वातको स्पष्ट करते हैं—'जमिणं' इत्यादि ।

जो मुनि-अवस्थामें पापकर्मों के नहीं करनेके कारण हैं वे प्रत्यक्ष  
हैं । वे ये हैं—आशङ्का, भय अथवा लज्जा । अर्थात् मुनि हो कर भी जो  
पाप नहीं करता है उसमें प्रधान कारण परस्परकी अथवा एक दूसरेसे

डरावता नहीं, अने पोताने भाटे हिंसा डरवायाणाओनी अनुमोदना पाणु करना  
नहीं, डराव ओवुं डरे तो तेने साधु ओवेवागां आवता नहीं वे साधु अपनी  
छव हिंसाना लयधी न्ययं पाकादिक क्रिया नहीं करना परन्तु उद्दिष्ट भोजन लेते,  
तथा पोताने भाटे जीवहिंसाके भयसे स्वयं भोजन तैयार करावे छे तेणो नव कोटिसे हिंसाना  
त्यागी नहीं तेभन तेणो साया साधु पाणु नहीं ॥ सू० २ ॥

पापकर्म नहिं करवा मात्रधी मुनि बनता नहीं पाणु कर्मोंना नालयने लक्ष्मी  
प्रकार रोकवाधी न मुनि थाय छे, ते पातने स्पष्ट डरे छे—'जमिणं' इत्यादि

वे मुनि अवस्थागां पापकर्मों नहिं करवाना डरते छे ते प्रत्यक्ष छे ते  
आ छे—आशङ्का भय अथवा लज्जा अर्थात् मुनि अपनी पाणु ते पाप करना नहीं  
तेगां प्रधान कारण परस्परकी अथवा एक जीवहिंसाके भयसे

પેક્ષ્ય=મનસિ વિચાર્ય ન કરોતિ । તત્ર=પાપકર્માનાચરણે તસ્ય કિં મુનિઃ=મુનિત્વં  
 કારણં સ્યાત્ ? ન, યતસ્તત્ર પાપકર્માનાચરણે અન્યોન્યવિચિકિત્સૈવ કારણં, ન તુ  
 મુનિત્વમ્ । યસ્તુ મુનિર્ભવતિ તસ્યૈવ મુનિત્વં પાપકર્માનાચરણે કારણં ભવતીતિ ।  
 યદ્વા-‘કિમ્’-ઇતિ કાક્ષા નિર્દેશઃ । ‘મુળી’ ઇતિ સપ્તમ્યન્તમ્, તતશ્ચ-‘મુનૌ’-  
 ઇતિચ્છાયા । તત્ર=તસ્મિન્ મુનૌ=મુનિત્વે કિં પાપકર્માનાચરણમેવ કારણમ્ ? અપિ  
 તુ ન, નહિ અન્યોન્યવિચિકિત્સયા પાપમનનુતિષ્ઠન્ મુનિર્ભવતીતિ । તર્હિ કથં મુનિર્ભ-  
 વતિ ? ઇત્યાહ-‘સમયં તત્યુવ્વેહાણ’ ઇત્યાદિ । તત્ર સમયમ્=આગમમ્ ઉત્પેક્ષ્ય=  
 પર્યાલોચ્ય આત્માનં વિપ્રસાદયેત્, જિનપ્રવચનરહસ્યપર્યાલોચનેનાત્માનમપ્રમાદ-  
 શુભભાવનાદિભિર્વિવિધૈરુપાયૈઃ પ્રસન્નં કુર્યાદિત્યર્થઃ । શુભાધ્યવસાયપૂર્વકમાગમો-  
 ક્તાનુસારેણ યદનુષ્ઠાનં તત્સર્વમુનિત્વે કારણમિતિ ભાવઃ । इदं निश्चयनयाभिप्रायेण ।

પરસ્પરમેં આશઙ્કા, ભય અથવા લજ્જા હૈ, ન કિ મુનિત્વ । વહ તો ઇન્હીં  
 સવ વાતોંકો મનમેં વિચાર કર પાપાનુબન્ધી કર્મ જો પચન પાચન એવં  
 પરિગ્રહ આદિ હૈં ઉન્હેં નહીં કરતા હૈ ।

અથવા-પરસ્પરકી આશઙ્કા યા ભયાદિસે પાપકર્મોંકા નહીં કરના ક્યા  
 યહી મુનિપનાકા કારણ હૈ ? ઇસ પ્રકારકી આશઙ્કાકા ઉત્તર દેતે હૈ-  
 ‘સમયં તત્યુવ્વેહાણ’ ઇત્યાદિ । સમય શબ્દકા અર્થ ‘આગમ’ તથા  
 ‘ઉત્પેક્ષ્ય’ શબ્દકા અર્થ ‘વિચાર કર’ હૈ, અર્થાત્-જિનપ્રતિપાદિત આ-  
 ગમકે રહસ્યકા વિચાર કર ‘અપ્પાણં વિપ્પસાયણ’ આત્માનં વિપ્રસાદયેત્,  
 મુનિ અપની આત્માકો અપ્રમાદ એવં શુભ ભાવનાદિક વિવિધ ઉપાયોંસે  
 પ્રસન્ન કરે । શુભ અધ્યવસાયપૂર્વક આગમપ્રતિપાદિત વિધિકે અનુસાર જો  
 અનુષ્ઠાન મુનિ-અવસ્થામેં કરનેયોગ્ય કહે ગયે હૈંવે સવ કરે, યે હી અનુ-  
 ષ્ઠાન મુનિપનામેં કારણ હૈં । યદ્ કથન નિશ્ચય નયકે અભિપ્રાયસે કિયા હૈ ।

અથવા લક્ષ્ણ છે, ન કે મુનિત્વ. તેઓ (મુનિઓ) તો આ સઘળી વાતોનો મનમાં વિચાર  
 કરી પાપાનુબન્ધી કર્મ જે પચન-પાચન અને પરિગ્રહ આદિ છે તેને કરતા નથી.

અથવા-પરસ્પરની આશંકા અથવા લયાદિથી પાપકર્મોંનું નહિ કરવું તે  
 શું મુનિપણાનું કારણ છે ? આ પ્રકારની આશંકાનું સ્પષ્ટીકરણ કરે છે-‘સમયં  
 તત્યુવ્વેહાણ’ ઇત્યાદિ. સમય શબ્દનો અર્થ ‘આગમ’ તથા ‘ઉત્પેક્ષ્ય’ શબ્દનો  
 અર્થ ‘વિચાર કરી’ છે અર્થાત્ જિનપ્રતિપાદિત આગમના રહસ્યનો વિચાર કરી  
 ‘અપ્પાણં વિપ્પસાયણ’ આત્માનં વિપ્રસાદયેત્-મુનિ પોતાના આત્માને અપ્રમાદ અને શુભ  
 ભાવનાદિક વિવિધ ઉપાયોથી પ્રસન્ન કરે. શુભ અધ્યવસાયપૂર્વક આગમપ્રતિપાદિત વિધિ-  
 અનુસાર જે અનુષ્ઠાન મુનિ અવસ્થામાં કરવાયોગ્ય કહેવામાં આવેલ છે તે સઘળા કરે  
 તે જ અનુષ્ઠાન મુનિપણાનું કારણ છે. આ કથન નિશ્ચયનયના અભિપ્રાયથી કરેલ છે.

यद्वा-परस्पराशङ्कया भयेन लज्जया वा यदाधाकर्मादीनि परिहरति, यथा-  
कालं प्रतिलेखनादीनि करोति, मासक्षपणानि, आतापनादिकं च समाचरति, तदिदं  
सर्वं किं मुनित्वे कारणं स्यान्न वा? इति शिष्याशङ्कानिराकरणाय कथयति-‘जमिणं’  
इत्यादि । अत्रोच्यते-जिनशासने पदार्थतत्त्वाधिगमाय नयद्वयमुपादीयते । तत्र  
तावन्निश्चयनयमाश्रित्य अन्योपाध्यनावेशेन परिवर्जिताऽकल्पनीयव्यापारत्वमेव  
मुनित्वे कारणम् । मुनित्वं हि शुभान्तःकरणपरिणामेन प्रवचनोक्तविधिनाऽनुष्ठित-  
क्रियस्यैव भवति, नान्यस्य ।

अथवा-परस्परकी आशङ्कासे भयसे या लज्जासे जो आधाकर्मा-  
दिक दोषोंका परिहार करता है, और समयानुसार पडिलेहनादिक क्रियाओं  
को करता है, मासखमण और आतापना आदि योगोंका अनुष्ठान  
करता है, ये सब क्रियाएँ क्या मुनिपनेमें कारण हैं या नहीं? इस प्रकार  
की शिष्यकी आशङ्काका परिहार करनेके लिये सूत्रकारने “जमिणं”  
इत्यादि सूत्र कहा है । जिनशासनमें पदार्थके स्वरूपको जाननेके लिये दो  
नयोंका विधान है-(१) निश्चय नय और (२) व्यवहार नय । इनमें  
प्रथम निश्चयनयकी अपेक्षासे जो अन्य किसी सांसारिक उपाधिके संस-  
र्गसे रहित हो कर अकल्पनीय व्यापारसे दूर हो चुका है, इस प्रकारका  
उसका रहन-सहन ही उसके मुनिपनेमें कारणभूत है, क्योंकि कि शुभ  
अन्तःकरणके परिणामसे शास्त्रोक्त विधिके अनुसार अपनी क्रियाओंको  
करनेवाले व्यक्तिके ही मुनिपना होता है, अन्यको नहीं ।

अथवा-परस्परकी आशङ्काले भयली, लज्जाली ने आधाकर्मादिक दोषोंका  
परिहार करे छे, अने समयानुसार पडिलेहनादिक क्रियाओं करे छे, मासखमण  
अने आतापना आदि योगोंनु अनुष्ठान करे छे, ये भयली क्रियाओं शुं मुनि-  
पणानुं कारण छे या नहि? आ प्रश्नली शिष्यली आशङ्काले परिहार करवा भाटे  
सूत्रकार “जमिणं” इत्यादि सूत्र डेलेल छे । जिनशासनमें पदार्थका स्वरूपने  
जाणवा भाटे जे नयोंनु विधान छे, (१) निश्चयनय अने (२) व्यवहारनय, तेना  
प्रथम निश्चयनयली अपेक्षाली ने अन्य डोस सांसारिक उपाधिका संसर्गली रहित  
वधने अकल्पनीय व्यापारली रूप धरैल छे, आ प्रश्ननुं तेनु रहन-सहन जे  
तेना मुनिपणानुं अनुपपन्न छे, तना, जे शुभ अन्तःकरणली परिणामली अशेष  
विधि-अनुसार पानाली क्रियाएँने करवावली व्यक्तिने जे मुनिपणुं करल छे  
पीतने नहि ।



વ્યવહારનયે તુ યઃ પરસ્પરાશઙ્કયા ભયાદિના વા કેનચિત્ કારણેનાઽઽધ્યા-  
કર્માદિ પરિવર્જયતિ, પ્રતિલેખનાદિકં કરોતિ, માસક્ષપણાદિતપશ્ચાચરતિ, તસ્ય  
મુનિત્વે તદનુષ્ઠાનં કારણં ભવત્યેવ, તાદૃશાનુષ્ઠાનસ્ય નિશ્ચયનયાશ્રિતમુનિત્વહેતુ-  
શુમાધ્યવસાયજનકત્વાત્ । નિશ્ચયમુપલબ્ધું વ્યવહારઃ શરણીકરણીયો ભવતિ, યથા  
નદ્યાદિતરણં કરચરણપ્રચાલનાદિવ્યવહારેણ વિના નોપપદ્યતે, યથા વા રજ્જુ-  
સોપાનાદ્યાલમ્બનેન વિના પ્રસાદશિખરારોહણં ન સંજાયતે ॥ સૂ. ૩ ॥

આત્મનઃ પ્રસન્નતા સંયમારાધનતત્પરસ્ય ભવતિ, અતસ્તત્ર પ્રમાદો ન કાર્ય  
इत्याह—‘अणण्णपरमं’ इत्यादि ।

વ્યવહાર નયની અપેક્ષાસે તો જો પરસ્પરની આશઙ્કા અથવા ભયા-  
દિક કિસી કારણકે વશસે આધાકર્માદિક દોષોંકા પરિહાર કરતા હૈ,  
સમયાનુસાર પ્રતિલેખનાદિક ક્રિયાઓંકો, એવં માસક્ષપણાદિક તપકો  
આચરતા હૈ, ઉસ વ્યક્તિકે મુનિપનેમેં યે સવ વાતેં કારણ હોતી હૈં । વ્ય-  
વહાર, નિશ્ચયકા હેતુ હોતા હૈ । ઇસ પ્રકારકે વ્યાવહારિક અનુષ્ઠાન  
નિશ્ચયનયની અપેક્ષાસે મુનિપનેકે કારણભૂત શુભ અધ્યવસાયકે ઉત્પાદક  
હોતે હૈં । નિશ્ચયકો પાનેકે લિયે વ્યવહારકા અવલમ્બન કરના હી પડતા  
હૈ । જૈસે નદી આદિકા તૈરના હાથ પૈર આદિકે ચલાનેરૂપ વ્યવહાર ક્રિયા  
કે વિના, અથવા રજ્જુ-રસ્સી યા સીંઢી આદિકે અવલમ્બન વિના મકાન  
કે ડપર ચઢના નહીં હોતા હૈ ॥ સૂ. ૩ ॥

આત્મામેં પ્રસન્નતા સંયમકે આરાધનમેં તત્પર મુનિકો હી હોતી હૈ ।  
ઇસ લિયે સંયમકે આરાધનમેં મુનિકો પ્રમાદ નહીં કરના ચાહિયે, ઇસ  
વાતકો પ્રગટ કરતે હૈં—‘અણણપરમં’ ઇત્યાદિ ।

વ્યવહારનયની અપેક્ષાથી તો જે પરસ્પરની આશંકા અને લયાદિક ડોષ  
કારણના વશથી આધાકર્માદિક દોષોનો પરિહાર કરે છે, સમયાનુસાર પ્રતિલેખ-  
નાદિ ક્રિયાઓને તેમજ માસક્ષપણાદિક તપને આચરે છે, તે વ્યક્તિના મુનિપણામાં  
જે સઘળી વાતો કારણ બને છે. વ્યવહાર, નિશ્ચયનો હેતુ થાય છે. આ પ્રકારના  
વ્યાવહારિક અનુષ્ઠાન નિશ્ચયનયની અપેક્ષાથી મુનિપણાના કારણભૂત શુભ અધ્ય-  
વસાયના ઉત્પાદક બને છે. નિશ્ચય મેળવવા માટે વ્યવહારનું અવલંબન લેવું જ  
પડે છે. જેમ નદી આદિનું તરવું હાથપગ આદિના ચલાવવારૂપ વ્યવહાર કર્યા  
બગર, અને રજ્જુ-રસ્સી અગર સીંઢી આદિના અવલંબન વિના મકાન ઉપર  
ચઢવું બની શકતું નથી ॥ સૂ. ૩ ॥

આત્મામાં પ્રસન્નતા સંયમ આરાધનમાં તત્પર મુનિને જ થાય છે, માટે  
સંયમ આરાધનમાં મુનિએ પ્રમાદ નહિ કરવો જોઈએ. એ વાતને પ્રગટ કરે  
છે—‘અણણપરમં’ ઇત્યાદિ.



मूलम्—अणणपरमं ज्ञानी, नो प्रमादयेत् कदाचिदपि ।

आयगुप्ते सया वीरे, जायामायाइ जावए ॥सू० ४॥

छाया—अनन्यपरमं ज्ञानी नो प्रमादयेत् कदाचिदपि ।

आत्मगुप्तः सदा वीरः यात्रामात्रया यापयेत् ॥ सू० ४ ॥

टीका—ज्ञानी=सम्यग्दृष्टिः, अनन्यपरमं=नान्यत् परमम् उत्कृष्टं यस्मात्-  
अनन्यपरमं=चारित्रं, तत् कदाचिदपि नो प्रमादयेत्=कस्मिन्नपि काले चारित्रे  
प्रमादं न कुर्यादित्यर्थः । केनोपायेन प्रमादो वारणीयः? इत्यत आह—‘आत्मगुप्त’  
इत्यादि । आत्मगुप्तः=आत्मना=इन्द्रियनोऽइन्द्रियेण गुप्तः, इन्द्रियनोऽइन्द्रियनिग्रही-

ज्ञानी-सम्यग्दृष्टि मनुष्य चारित्रमें किसी भी समय प्रमाद न करे ।  
‘अनन्यपरम’ शब्दका अर्थ चारित्र है, क्योंकि “अन्यत् परमं यस्मात्  
न” जिससे दूसरी कोई वस्तु उत्कृष्ट नहीं है वह अनन्यपरम है ।  
शास्त्रमें साक्षात् मोक्षकी प्राप्ति करानेवाला चारित्र ही बतलाया गया  
है अतः वही सर्वोत्कृष्ट है । प्रमाद चारित्रका विधातक होता है इसी  
लिये वह सम्यग्दृष्टिके लिये वर्जनीय कहा है । प्रमादको दूर करनेका  
उपाय बतलानेके लिये सूत्रकार कहते हैं—‘आयगुप्ते’ इत्यादि, अर्थात् मुनि  
को सदा आत्मगुप्त-इन्द्रिय और नोइन्द्रिय-मनका विजयी बनना चाहिये ।  
इन पर जब तक विजयरूपी अङ्गुश वह प्राप्त नहीं कर लेता है तब तक  
इनके आधीन बना हुआ माधु प्रमादसे रहित नहीं हो सकता । जिहा-  
इन्द्रियकी लोलुपतासे वह मात्रासे भी अधिक आहार ले लेता है । इस  
से प्रमादकी वृद्धि होती है । तथा अधिक सरस-रसीला आहार लेनेसे

ज्ञानी-सम्यग्दृष्टि मनुष्य चारित्रमा छोड़ पावु समय प्रमाद न करे ।  
‘अनन्यपरम’ शब्दका अर्थ चारित्र है अतः “अन्यत् परमं यस्मात् न”  
लेनाही भीछ छोड़ वस्तु उत्कृष्ट नहीं है अनन्यपरम है । शास्त्रमें साक्षात्  
मोक्षकी प्राप्ति करानेवाला चारित्र न जनाववाना आवेक है भाटे ने न सर्वोत्कृष्ट  
है । प्रमाद चारित्रको विधातक होने के भाटे ते सम्यग्दृष्टि भाटे वर्जनीय होकर  
है । प्रमादने दूर दूरवाने उपाय जनाववा भाटे तबतक छोड़ है—‘आयगुप्ते’  
इत्यादि । अर्थात् मुनिके सदा आत्मगुप्त-इन्द्रिय और नोइन्द्रिय-मनको विजयी  
जानवुं नेछने लेना उपर ल्याइधी विजयइधी अङ्गुश ने प्राप्त नहीं करी लेना  
ल्या सुधी लेना आधीन होनेका माधु प्रमादकी रहित नहीं हो सकता । जिहा-  
इन्द्रियकी लोलुपतासे ते मात्रासे भी अधिक आहार ले लेता है । इस  
की वृद्धि भाटे ते तथा अधिक सरस-रसीला आहार लेनेसे

ત્યર્થઃ, સદા=સર્વસ્મિન્ કાલે, વીરઃ=કર્મવિદારણોત્સાહવાન્, યાત્રામાત્રયા=યાત્રા-  
સંયમયાત્રા તદર્થં યા માત્રા=જિનપ્રવચનોક્તમાહારાદિપ્રમાણં તયા, શરીરં યાપ-  
યેત્=નિર્વહેત્-ગમયેદિત્યર્થઃ ।

પ્રમાણાધિકેનાહારેણ રાજપિણ્ડાદિના વા ઇન્દ્રિયનિગ્રહો ન ભવતિ, તસ્માદ્  
ધર્મોપાર્જનસહાયભૂતસ્ય શરીરસ્ય ધારણાર્થં પ્રમાણોપેતમાહારમઙ્ગીકુર્યાત્ । એવં  
કૃતે સતિ પ્રમાદો ન ભવતીતિ ભાવઃ । ઉક્તञ્ચ—

“ આહારાર્થં કર્મ કુર્યાદનિન્દ્યં, સ્યાદાહારઃ પ્રાણસંધારણાર્થમ્ ।

પ્રાણા ધાર્યાસ્તત્ત્વજિજ્ઞાસનાર્થં, તત્ત્વં જ્ઞેયં યેન દુઃસ્વાદ્ વિમુચ્યેત્ ” ॥૧॥૩૬૮॥

ઇન્દ્રિયોંકો મી ઉત્તેજના મિલતી હૈ, ઇસસે ચતુર્થ વ્રતકી રક્ષામેં મી વાધા  
ઉપસ્થિત હોતી હૈ । ઇસી વાતકા વિચારકર સૂત્રકાર કહતે હૈ—‘જાયા-  
માયાએ ’ યાત્રામાત્રયા, ઇતિ, અર્થાત્-સંયમયાત્રાકે નિર્વાહયોગ્ય આહા-  
રાદિકકા ઉચિત પ્રમાણમેં લેના વતલાતે હૈ । મુનિ કી સદા યહી ભાવના  
રહની ચાહિયે કિ-મેં જૈસે મી વને વૈસે નિર્દોષ ચારિત્રકી આરાધના  
કરતા હુઆ કર્મોંકો નષ્ટ કરૂં । ઇસ તરહકે ઉત્સાહસે સંપન્ન વહ મુનિ  
અપની સંયમરૂપી યાત્રાકી નિર્વિઘ્ન પરિસમાપ્તિકે લિયે જિનપ્રવચનમેં  
પ્રતિપાદિત પ્રમાણકે અનુરૂપ આહારાદિ ગ્રહણ કરે । ઇસસે હી અપને  
શરીરકા નિર્વાહ કરે । પ્રમાણસે અધિક આહારકે લેનેસે અથવા અક-  
લ્પનીય રાજપિણ્ડાદિકસે ઇન્દ્રિયોંકા નિગ્રહ નહીં હોતા હૈ । ઇસલિયે  
ધર્મકે ઉપાર્જનમેં સહાયક શરીરકી રક્ષાકે લિયે શાસ્ત્રમેં પ્રતિપાદિત  
માત્રાનુસાર આહાર લેના ચાહિયે । કહા મી હૈ—

ઉત્તેજના મળે છે. તેથી ચતુર્થ વ્રતની રક્ષામાં પણ વાધા ઉપસ્થિત થાય છે.  
આ વાતનો વિચાર કરી સૂત્રકાર કહે છે—“ જાયામાયાએ ” યાત્રામાત્રયા, ઇતિ.  
અર્થાત્-સંયમયાત્રાના નિર્વાહયોગ્ય આહારાદિકનું ઉચિત પ્રમાણમાં લેવું જતાવેલ છે.  
સદા મુનિની એ ભાવના રહેલી જોઈએ કે હું બ્યાંસુધી અને ત્યાં સુધી નિર્દોષ  
ચારિત્રની આરાધના કરીને કર્મોના નાશ કરું, આવા પ્રકારના ઉત્સાહથી સંપન્ન તે મુનિ  
પોતાની સંયમરૂપી યાત્રાની નિર્વિઘ્ન પરિસમાપ્તિ માટે જનપ્રવચનમાં પ્રતિપા-  
દિત પ્રમાણને અનુરૂપ આહારાદિ ગ્રહણ કરે, તેનાથી જ પોતાના શરીરનો નિર્વાહ  
કરે. પ્રમાણથી અધિક આહાર લેવાથી અને અકલ્પનીય રાજપિણ્ડાદિકથી ઇન્દ્રિ-  
યોનો નિગ્રહ બનતો નથી માટે ધર્મના ઉપાર્જનમાં સહાયક શરીરની રક્ષા માટે  
શાસ્ત્રમાં પ્રતિપાદિત માત્રાનુસાર આહાર લેવો જોઈએ, કહ્યું પણ છે—

આત્મગુપ્તઃ કથં સ્યાદિતિ શિષ્યજિજ્ઞાસાયમાહ-‘વિરાગં’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્-વિરાગં રૂપેણ ગચ્છેજ્ઞા મહયા સુહૃદ્દર્શિ વા ॥સૂ૦ ૫॥

છાયા-વિરાગં રૂપેણ ગચ્છેત્ મહત્ત્વ ક્ષુલ્લકેણ વા ॥ સૂ૦ ૫ ॥

“આહારાર્થં કર્મ કુર્યાદનિન્દ્યં, સ્યાદાહારઃ પ્રાણસંધારણાર્થમ્ ।

પ્રાણા ધાર્યાસ્તત્ત્વજિજ્ઞાસનાર્થં, તત્ત્વં જ્ઞેયં યેન દુઃસ્વાદ વિમુચ્યેત્ ॥૧॥”

આહારકે લિયે અનિન્દ્ય કર્મ કરે । આહારકા ગ્રહણ પ્રાણોંકી રક્ષા કે નિમિત્ત છે । પ્રાણોંકી રક્ષા તત્ત્વોંકી જિજ્ઞાસાકે લિયે છે, ઓર તત્ત્વજ્ઞાન અપનેકો ( જીવકો ) સાંસારિક દુઃસ્વોંસે છુટ્ટાનેકે લિયે હોતા છે ॥

ઇસલિયે સાધુકો આહારકી પ્રાપ્તિકે લિયે અનિન્દ્ય કર્મ ( ણપણા-સમિતિયુક્ત પ્રવૃત્તિ ) કરના ચાહિયે નિન્દ્ય કર્મ નહીં । પ્રાણોંકી રક્ષાકે લિયે હી આહાર ગ્રહણ કરના ચાહિયે, વિષયાદિકોંકી યા પ્રમાદકી પુષ્ટિ કે લિયે નહીં । તત્ત્વોંકી વિચારણા કરનેકે લિયે હી પ્રાણોંકી રક્ષા કરની ચાહિયે, દૂસરે જીવોંકી હિંસાદિકકે લિયે નહીં । તત્ત્વજ્ઞાનકા વિચાર ઓ સાંસારિક દુઃસ્વોંસે છુટ્ટાનેકે લિયે કરના ચાહિયે, માન માયા આદિ કપાયકી પુષ્ટિકે લિયે નહીં । ઇસલિયે સંયમયાત્રાકા નિર્વાહકે લિયે માત્રાનુસાર આહાર લેના ચાહિયે જિસસે પ્રમાદ નહીં હો ॥ સૂ૦ ૪ ॥

મુનિ-આત્મગુપ્ત-ઇન્દ્રિય ઓર મનકા નિગ્રહ કરનેવાલા કેસે બને ? ણેસી શિષ્યકી જિજ્ઞાસાકા સમાધાન કરતે છે-‘વિરાગં’ ઇત્યાદિ ।

“આહારાર્થં કર્મ કુર્યાદનિન્દ્યં, સ્યાદાહારઃ પ્રાણસંધારણાર્થમ્ ।

પ્રાણા ધાર્યાસ્તત્ત્વજિજ્ઞાસનાર્થં, તત્ત્વં જ્ઞેયં યેન દુઃસ્વાદ વિમુચ્યેત્” ॥૧॥

આહાર માટે અનિન્દ્ય કર્મ કરે. આહારનુ ગ્રહણ પ્રાણોંની રક્ષા નિમિત્ત છે. પ્રાણોંની રક્ષા તત્ત્વોંની જિજ્ઞાસા માટે છે, અને તત્ત્વજ્ઞાન પોતાને ( છુટ્ટાને ) સાંસારિક દુઃખોંથી છોડાવવા માટે ધાય છે.

માટે સાધુએ આહારની પ્રાપ્તિ માટે અનિન્દ્ય કર્મ ( ણપણાનિનિયુક્ત પ્રવૃત્તિ ) કરવું જોઈએ, નિન્દ્ય કર્મ નહિ. પ્રાણોંની રક્ષા માટે જ આહાર ગ્રહણ કરવો જોઈએ, વિષયાદિકોંની અને પ્રમાદની પુષ્ટિ માટે નહિ. તત્ત્વોંની વિચારણા કરવા માટે જ પ્રાણોંની રક્ષા કરવી જોઈએ - બીજા છુટ્ટાનેની વિચારણા માટે નહિ. તત્ત્વજ્ઞાનનો વિચાર પણ સાંસારિક દુઃખોંથી છુટ્ટાવા માટે કરવો જોઈએ - માન માયા આદિ કપાયની પુષ્ટિ માટે નહિ. માટે સંયમયાત્રાના નિર્વાહ માટે માત્રા નુસાર આહાર લેવો જોઈએ જેથી પ્રમાદ ન થાય ॥ સૂ૦ ૪ ॥

મુનિ, આત્મગુપ્ત-ઇન્દ્રિય અને મનના નિગ્રહ કરનાર કેવી રીતે બને ? જેવી શિષ્યની જિજ્ઞાસાનું સમાધાન કરે છે-‘વિરાગં’ ઇત્યાદિ.

ટીકા—રૂપેષુ=ચક્ષુર્વિષયીભૂતેષુ મનોજ્ઞેષુ રૂપેષુ વિરાગં ગચ્છેત્, રૂપં હિ શબ્દાદ્યપેક્ષયાઽતીવાક્ષિપતિ ચિત્તં, તસ્માદિહ રૂપગ્રહણમ્ । રૂપેષુ વૈરાગ્યસદ્ભાવે સતિ શેષવિષયેષ્વપિ તસ્ય સુતરાં સંભવાદિતિ ભાવઃ । મહત્સુ=દિવ્યભાવેન યાન્યવસ્થિતાનિ રૂપાણિ તેષુ, મૂત્રે આર્પણાદેકવચનમ્, ક્ષુલ્લકેષુ=ક્ષુદ્રેષુ રૂપેષુ યથા તિરથાં, મનુષ્યાણાં તુ મધ્યમાનિ રૂપાણિ, તેષ્વપિ વિરાગં ગચ્છેદિતિ સમ્બન્ધઃ । આદ્યન્તરૂપગ્રહણેન મધ્યમાનામપિ ગ્રહણમ્ । અત્ર સપ્તમ્યર્થે તૃતીયા પ્રાકૃતત્વાત્ । યદ્વા-एकैकं રૂપં ત્રિવિધં-દિવ્યમધ્યમક્ષુદ્રભેદાત્ । કુબ્જાદીનાં ક્ષુદ્રાણિ, અન્યેષાં મધ્યમાનિ, કેષાંચિત્ પૂર્વભવસુકૃતિનાં દિવ્યાનિ રૂપાણિ ભવન્તિ ॥ સૂ. ૫ ॥

સાધુકા કર્તવ્ય છે કે વહ ચક્ષુરિન્દ્રિયકે વિષયભૂત જવ જવ સુંદર રૂપ હોં તવ-તવ ઉનમેં અસારતા કી ભાવના મા કર ઉન સે વિરક્ત હોવે । સૂત્રમેં ‘સ્વેસુ-રૂપેષુ’ જો યહ પદ દિયા છે ઉત્તસે સૂત્રકાર ઇસ વાતકો વતલાતે હેં કિ રૂપ હી શબ્દાદિક વિષયોંકી અપેક્ષા ચિત્તકો અપની ઓર અધિક આકૃષ્ટ ક્રિયા કરતે હેં । મુનિકો જવ રૂપમેં વૈરાગ્યકી જાગૃતિ હો જાવેગી તવ અન્ય રસાદિક વિષયોંમેં તો સ્વતઃ હી ઉત્તસે ચિત્તમેં વૈરાગ્ય જાગૃત હો જાવેગા । ઇસ લિયે સૂત્રકાર કહતે હેં કિ જો વહુત હી જ્યાદા સુંદર સ્વરૂપવાન્-દિવ્ય રૂપવાલા હૈ, જૈસે વિશિષ્ટ રૂપ દેવતાઓંમેં મધ્યમ રૂપ મનુષ્યોંમેં ઓર સામાન્ય રૂપ તિર્યચ્ચોંમેં હોતે હેં-ઉનમેં કમી મી ઇષ્ટ-અનિષ્ટકી કલ્પના સે અપને ચિત્તકો વાસ્તિત ન કરે, સદા ઉનમેં વિરક્ત બુદ્ધિ હી રહે । દિવ્ય, મધ્યમ ઓર ક્ષુદ્રકે ભેદસે રૂપ ત્રિન પ્રકાર કે હેં । કુબ્જ આદિમેં ક્ષુદ્રરૂપ, ઇનસે અન્યમેં મધ્યમ રૂપ ઓર કિન્હીં પુણ્યાત્માઓંમેં દિવ્યરૂપ હોતે હેં ॥ સૂ. ૫ ॥

સાધુનું કર્તવ્ય છે કે તે ચક્ષુરિન્દ્રિયના વિષયભૂત ન્યા ન્યાં સુંદર રૂપ હોય ત્યાં ત્યાં તેમાં અસારતાની લાવના લાવીને તેનાથી વિરક્ત બને. સૂત્રમાં ‘સ્વેસુ-રૂપેષુ’ ને આ પદ આપેલ છે તેનાથી સૂત્રકાર એ વાતને સમજાવે છે કે રૂપ જ શબ્દાદિક વિષયોની અપેક્ષા ચિત્તને પોતાની તરફ અધિક આકૃષ્ટ કર્યા કરે છે, મુનિને ન્યારે રૂપમાં વૈરાગ્યની જાગૃતિ થઈ જશે ત્યારે અન્ય રસાદિક વિષયોમાં તો સ્વતઃ જ તેના ચિત્તમાં વૈરાગ્ય જાગૃત થઈ જશે. માટે સૂત્રકાર કહે છે કે જે ઘણા જ સુંદર સ્વરૂપવાન દિવ્ય સ્વરૂપવાળા છે-જેવી રીતે વિશિષ્ટ રૂપ દેવતાઓમાં, મધ્યમરૂપ મનુષ્યોમાં, અને સામાન્ય રૂપ તિર્યચોમાં હોય છે તેમાં કોઈ વળત પણ ઇષ્ટ-અનિષ્ટની કલ્પનાથી પોતાના ચિત્તને વાસ્તિત ન કરે, સદા તેમાં વિરક્ત બુદ્ધિ જ રાખે દિવ્ય મધ્યમ અને ક્ષુદ્રના ભેદથી રૂપ ત્રણ પ્રકારના છે. કુબ્જ આદિમાં ક્ષુદ્રરૂપ, તેનાથી અન્ય મધ્યમરૂપ અને કોઈ પુણ્યાત્માઓમાં દિવ્ય રૂપ હોય છે ॥ સૂ. ૫ ॥

કિમાલમ્થૈતત્ કર્તવ્યમિત્યાહ—‘ આગઈ ’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્—આગઈ ગઈ પરિણાય દોહિ વિ અંતેહિં અદિસ્સ-  
માણે । સે ન છિજ્જઈ ન મિજ્જઈ ન ઉજ્જઈ ન હમ્મઈ કંચણં  
સવ્વલોપ ॥ સૂ૦ ૬ ॥

છાયા—આગતિ ગતિં પરિજ્ઞાય દ્વાભ્યામન્તાભ્યામદ્દશ્યમાનઃ । મ ન છિદ્યતે  
ન મિદ્યતે ન દહ્યતે ન હન્યતે કેનચિત્ સર્વલોકે ॥ મૃ૦ ૬ ॥

ટીકા—‘ આગતિં ગતિ ’—મિતિ, આગતિઃ=આગમનં, ગતિર્ગમનં, તત્ર તિરશ્ચાં  
મનુષ્યાણાં આગતિશ્ચતુર્વિધા ભવતિ, નરકાદિચતુર્વિધગતિતસ્તેષામાગમનસદ્ધાવાત્ ।

કયા વિચાર કર રૂપાદિકોં મેં વિરક્ત બુદ્ધિવાલા બને ? સો કહતે  
હેં—‘ આગઈ ’ ઇત્યાદિ ।

દૂસરી ગતિસે આનેકા નામ આગતિ ઓર દૂસરી ગતિમેં જાનેકા  
નામ ગતિ હૈ । મનુષ્ય ઓર તિર્યચોંકી આગતિ ચાર પ્રકારસે હોની હૈ,  
અર્થાત્ ચારોં ગતિયોંસે આકર જીવ મનુષ્ય ઓર તિર્યચ ગતિમેં જન્મ  
લેતે હૈં । દેવ ઓર નારકિયોંકી આગતિ દો પ્રકારસે હોતી હૈં, અર્થાત્  
તિર્યચ ઓર મનુષ્ય ગતિસે આ કર હી જીવ દેવગતિ ઓર નરકગતિમેં  
ઉત્પન્ન હોતે હૈં । ગતિ મીં ડન સવકી ઇસી તરહસે હોતી હૈં । મનુષ્ય  
ઍવં તિર્યચ ગતિકે જીવ ચારોં ગતિયોં મેં ઉત્પન્ન હો સકતે હૈં પરન્તુ દેવ-  
ગતિ ઍવં નરક ગતિકે જીવ મનુષ્ય ઓર તિર્યચ ગતિકે સિદ્ધાચ અન્ય  
ગતિયોંમેં જન્મ નહીં લેતે । દેવ ચ્યવકર દૂસરે ભવમેં દેવગતિમેં ઓર

શું વિચાર કરી રૂપાદિકોમાં વિરક્તબુદ્ધિવાળા બને ? તે કહે છે—‘ આગઈ ’  
ઇત્યાદિ.

ગી૭ ગતિધી આવવાનું નામ આગતિ અને ગી૭ ગતિના જવાનું નામ  
ગતિ છે. મનુષ્ય અને તિર્યચોની આગતિ ચાર પ્રકારની હોય છે અર્થાત્ ચાર  
ગતિધી આવીને ૭વ મનુષ્ય અને તિર્યચ ગતિનાં જન્મ લે છે. દેવ અને  
નારકીઓની આગતિ બે પ્રકારની હોય છે. અર્થાત્ તિર્યચ અને મનુષ્ય ગતિથી  
આવીને ૭વ દેવગતિ અને નરકગતિનાં ઉત્પન્ન થાય છે. ગતિ ધત્તુ ને ગતિ  
ઓની આ પ્રકારે જ હોય છે. મનુષ્ય અને તિર્યચ ગતિને ૭વ નરક ગતિને  
ઉત્પન્ન થઈ શકે છે પરંતુ દેવગતિ અને નરકગતિના ૭વ મનુષ્ય અને તિર્યચ  
ગતિના સિદ્ધાચ અન્ય ગતિયોનાં જન્મ લેતા નથી. દેવ સ્ત્રીને બોલતો બરમં

देवानां नारकिणां चागतिर्द्विविधैव, तेषां तिर्यग्मनुष्यगतिभ्यामेवाऽऽगमनात् । गतिरप्येवं भवति, केवलं मनुष्याणां गतिः पञ्चविधा प्रोक्ता, तेषां मोक्षगतिसंभवात् । तामागतिं गतिं च, परिज्ञाय=संसारचक्रे घटीयन्त्रवत् परिभ्रमणरूपामागतिं गतिं च बुद्ध्वा मनुष्याणां मोक्षगतिसंभवं चावगत्य स आगतिगतिस्वरूपाभिज्ञः, यद्वा-संसारदुःखभीतो मोक्षगतिसुखगवेपी, रूपादिषु विषयेषु अन्ताभ्याम्=स्वसत्तायां मुक्तेरन्तकारित्वाऽन्तौ=रागद्वेषौ ताभ्याम् द्वाभ्यामपि=रागद्वेषाभ्याम् अदृश्यमानः=अवर्तमानः, रागद्वेषरहित इत्यर्थः, न छिद्यते केनचित्=खड्गादिना, न भिद्यते कण्टकमृचीशूलादिना, न दह्यते दहनादिना, न हन्यते कशादिना नरकगत्यानुपू-

नरकगतिमें उत्पन्न नहीं होता । इसी प्रकार नारकी जीव भी नरकसे निकल कर दूसरे भवमें देवगति या नरकगतिमें उत्पन्न नहीं होता । मनुष्य एवं तिर्यञ्च तो मर कर दूसरे भवमें मनुष्य, तिर्यञ्च, देव और नरकगतिमें जन्म ले सकता है । मनुष्योंकी गति मुक्तिप्राप्तिकी अपेक्षासे पांच प्रकारकी भी कही गई है । इस प्रकार संसारचक्रमें घटी यन्त्रके समान परिभ्रमणरूप आगति और गति, एवं मनुष्योंमें मोक्षगतिकी संभवताको जानकर उनके स्वरूपका ज्ञाता, अथवा संसारके दुःखों से भयभीत हो कर मोक्षगतिके सुखका गवेपी वह साधु रूपादि विषयो में राग और द्वेषसे रहित हो कर सर्वलोकमें न किसीके द्वारा तलवार आदिसे हाथ पैर आदि में कभी छेदा जाता है, न कण्टकसूची शूलादिसे भेदा जाता है, न अग्नि आदिसे जलाया जाता है और न कोड़े आदिसे मारा जाता है और न उसके नरकगत्यानुपूर्वी आदिका उदय

देवगतिमां अने नरकगतिमां उत्पन्न थतां नथी. ते प्रकारे नारकी छव पणु नर-कधी नीकणी णीज्ज लवमां देव गति अगर नरक गतिमां उत्पन्न थतां नथी. मनुष्य अने तिर्यच्च तो मरीने णीज्ज लवमां मनुष्य तिर्यच्च देव अने नरकगतिमां जन्म लव्थ शके छे. मनुष्येनी गति मुक्तिप्राप्तिनी अपेक्षाधी पांच प्रकारनी पणु छेवामां आवेल छे. आ प्रकारे संसारचक्रमां घटी-यन्त्रनी समान परिभ्रमणरूप आगति अने गति तेमज्ज मनुष्येमां मोक्षगतिनी संभवताने नखीने तेना स्वप्नना जाता अने संसारना दुःखोधी लयभीत णीने मोक्षगतिना सुप्पना गवेपी ते साधु, रूपादि विषयोमां राग अने द्वेषधी रहित णीने सर्वलोकमां देखनाधी पणु तलवार आदिधी हाथ पण आदिमां छेदिपणु छेदवामां आवता नथी. तेमज्ज कण्टक सूची शूलादिधी नेदवामां आवता नथी. तेमज्ज नथी अग्निधी णाणवामां आवतां, तेमज्ज नथी डेरश आदिधी मारवामां



વ્યાદિના વા । અયં ભાવઃ-તિર્યગ્મનુષ્યાદીનામાગતિગતિપરિજ્ઞાનેન રાગદ્વેષ-  
નિવૃત્તિઃ, તયોરભાવાચ્ચ છેદનાદિના સંસારદુઃખાનિ ન ભવન્તીતિ ॥ સૂ૦ ૬ ॥

હોતા હૈ । ‘અન્ત’ શબ્દકા અર્થ રાગ દ્વેષ હૈ, ક્યોં કિ યે દોનો “અન્ત-  
કારિત્વાત્” અપની સત્તામેં જીવકી મુક્તિકા અન્ત-નિરોધ-કરનેવાલે  
હોતે હૈ, इन दोनोंके सद्भाव में जीवको सच्चे स्वरूप-मोक्षकी प्राप्ति नहीं  
होती है । इसका भावार्थ यह है—तिर्यश्च अथवा मनुष्यादिकोंकी गति  
और आगतिके परिज्ञानसे साधुको अच्छे एवं बुरे रूपादिकोंमें राग द्वेष  
न हो कर प्रत्युत उनमें मध्यस्थता ही उसे रहती है । रागद्वेषकी निवृत्ति  
से, छेदनभेदनादिद्वारा सांसारिक दुःखोंका जो उसे अनुभव होता था  
वह फिर नहीं होता । क्यों कि दुःखोंका अनुभव करानेवाली जो राग-  
परिणति थी वह उसकी दूर हो चुकी है । दूसरा इसका भाव यह भी  
हो सकता है कि जब मुनिकी आत्मासे राग द्वेषका अभाव हो जाता है  
तो उसकी आत्मा अत्यन्त निर्मल एवं विशिष्ट प्रभावशाली हो जाती  
है । इस अवस्थामें कोई भी ऐसी शक्ति नहीं है जो उसे छेदन भेदन  
एवं ताडनादिजन्य दुःख पहुंचा सके । ‘न हन्यते नरकगत्यानुपूर्व्यादिना  
वा’ इस टीकाका भाव यह है कि-सर्वसंयमीके लिये नरकगति एवं  
तिर्यश्च गतिका बन्ध नहीं होता है इस लिये उसकी आनुपूर्विका भी उसे  
उदय नहीं होता है ॥ सू० ६ ॥

આવતાં. અને નહિ તેને નરકગત્યાનુર્વ્યા આદિનો ઉદય થાય છે. ‘અન્ત’ શબ્દનો  
અર્થ રાગ દ્વેષ છે. કારણ કે એ બંને “અન્તકારિત્વાત્” પોતાની સત્તામાં  
હવની મુક્તિનો અંત કરવાવાળા હોય છે એ બંનેના સદ્ભાવમાં હવને સત્યા  
સ્વરૂપ-મોક્ષ-ની પ્રાપ્તિ થતી નથી. તેનો ભાવાર્થ એ છે કે તિર્યચ અથવા મનુ-  
ષ્યાદિકોની ગતિ અને આગતિના પરિજ્ઞાનથી સાધુને સારા તેમજ ખરાબ રૂપા-  
દિકોમાં રાગ દ્વેષ ન થઈને પ્રત્યુત તેમાં મધ્યસ્થતા જ તેને રહે છે. રાગદ્વેષની  
નિવૃત્તિથી, છેદન-ભેદનાદિ દ્વારા સાંસારિક દુઃખોનો જે તેને અનુભવ થતો હતો  
તે પછી થતો નથી. કારણ કે દુઃખોનો અનુભવ કરાવનારી જે રાગપરિણતિ  
હતી તે તેની દૂર થઈ ચૂકેલ છે ખીલુ તેનો ભાવ એ પણ થઈ શકે છે કે  
ત્યાંદે મુનિના આત્માથી રાગ દ્વેષનો અભાવ થઈ જાય છે તો તેની આત્મા  
અત્યન્ત નિર્મળ અને વિશિષ્ટ પ્રભાવશાળી બની જાય છે. આ અવસ્થામાં તેની  
કોઈ પણ શક્તિ નથી કે જે તેને છેદન-ભેદન તેમજ માર મારવાનાદિ દુઃખ  
પહોંચાડી શકે. ‘ન હન્યતે નરકગત્યાનુર્વ્યાદિના વા’ આ ટીકાનો ભાવ એ છે  
કે સકલસંયમી માટે નરકગતિ અને તિર્યચગતિના બંધ થતા નથી તેથી તેને  
તેની આનુર્વ્યાનો પણ ઉદય થતા નથી ॥ સૂ૦ ૬ ॥



મિથ્યાદૃષ્ટીનામાગતિગતિજ્ઞાનાભાવ ઇત્યાહ—‘ અવરેણ ’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમૂ—અવરેણ પુઞ્વે ન સરંતિ એગે કિમસ્સ તીયં ? કિં વાઽઽગમ્મિસ્સં ? ભાસંતિ એગે ઇહ માણવા ડ જમસ્સ તીયં તં આગમિસ્સં ॥ સૂ૦ ૭ ॥

છાયા—અપરેણ પૂર્વ ન સ્મરન્તિ એકે કિમસ્ય અતીતં ? કિં વા આગમિષ્યત્ ? માપન્તે એકે ઇહ માનવાસ્તુ યદસ્ય અતીતં તદ્ આગમિષ્યત્ ॥ સૂ૦ ૭ ॥

એકે=અન્યે મિથ્યાદૃષ્ટયઃ, અપરેણ=પશ્ચાત્કાલભાવિના સહ, પૂર્વ=પૂર્વકાલિકં ન સ્મરન્તિ, યથા—અસ્ય જીવસ્ય કિમ્=અનેન જીવેન કીદૃશં દુઃખં સુખં વાઽનુભૂત?—મિતિ ન સ્મરન્તિ । તથા—કિં વા આગમિષ્યત્=ભવિષ્યત્કાલિકે નરકાદિભવે કીદૃશં દુઃખં સુખં વાઽસ્ય જીવસ્ય ભાવીતિ ન સ્મરન્તિ । યદિ પુનરસ્ય જીવસ્યાતીતાના-ગતગતિચિન્તનં કુર્યાત્તર્હિ વૈરાગ્યં સુતરામુદ્ભવેત્ । ઉક્તશ્ચ—

મિથ્યાદૃષ્ટિયોંકો જીવોંકી ગતિ ઓર આગતિકા જ્ઞાન નહીં હોતા હૈ, ઇસ વાતકો કહતે હૈ—‘ અવરેણ ’ ઇત્યાદિ ।

મિથ્યાદૃષ્ટિ જીવોંકે ભવિષ્યત્ કાલમેં હોનેવાલી અવસ્થાઓંકે સાથ પૂર્વકાલિક અવસ્થાઓંકી તથા ભવિષ્યત્કાલમેં હોનેવાલી સુખદુઃખાદિકોં કે સાથ પૂર્વકાલિક સુખદુઃખાદિકોંકી સ્મૃતિ નહીં હોતી હૈ । જૈસે ઇસ જીવકા સમય પૂર્વ મેં કૈસેર સુખદુઃખાદિકોંસે વીતા હૈ ? અર્થાત્ નરક આદિ પર્યાયોંમેં ઇસ જીવને કિસર પ્રકારકે દુઃખ અથવા સુખ ભોગે હૈ ? એવં આગામી કાલમેં નરકાદિક પર્યાયોંમેં યહ જીવ કિસર પ્રકારકે દુઃખ અથવા સુખ ભોગેગા ? ઇસકા ઉન્હેં સ્મરણ તક નહીં હોતા । યદિ ઇસ જીવકી અતીત એવં અનાગત કાલ સમ્બન્ધી ગતિકા વાર-વાર વિચાર કિયા જાય તો જીવકો વૈરાગ્ય સ્વતઃ ઉત્પન્ન હો જાવે । કહા ભી હૈ—

મિથ્યાદૃષ્ટિજ્ઞોને જીવોની ગતિ અને આગતિનું જ્ઞાન થતું નથી. એ વાતને કહે છે—‘ અવરેણ ’ ઇત્યાદિ.

મિથ્યાદૃષ્ટિ જીવોના ભવિષ્યકાળમાં બનવાવાળી અવસ્થાઓની સાથે પૂર્વ-કાલિક અવસ્થાઓની તથા ભવિષ્યકાળમાં થવાવાળા સુખદુઃખાદિકોની સાથે પૂર્વકાલિક સુખદુઃખાદિકોની સ્મૃતિ થતી નથી. આ જીવનો સમય પૂર્વમાં કેવા કેવા પ્રકારે સુખદુઃખોમાં વીત્યો છે ? અર્થાત્ નરક આદિ પર્યાયોમાં આ જીવે કયા કયા પ્રકારના દુઃખ અથવા સુખ ભોગવ્યા છે ? તેમજ આગામી કાળમાં નરકાદિ પર્યાયોમાં આ જીવ કેવા કેવા પ્રકારના દુઃખ અથવા સુખ ભોગવશે ? તેનું તેને સ્મરણ સુદ્ધાં હોતું નથી. કહાય આ જીવની અતીત તેમજ અનાગત કાળ સંબંધી ગતિનો વાર વાર વિચાર કરવામાં આવે તો જીવને વૈરાગ્ય સ્વતઃ ઉત્પન્ન થઈ જાય. કહ્યું છે—

“ केण ममेत्युप्पत्ती ? कहं इओ तह पुणोऽवि गंतव्वं ।

जो एत्तियंपि चितइ, इत्थं सो को न निव्विण्णो ” ॥ १ ॥ इति ।

इह=अस्मिन् मनुष्यलोके, एके पुनर्महामिथ्यादृष्टयो मानवाः=मनुष्याः भाषन्ते=कर्मविपाकज्ञानाभावादेवं वदन्ति-अस्य जीवस्य यद् अतीतं=ब्राह्मण-क्षत्रिय-वैश्य-शूद्र-गवा-ऽश्व-भवादि, तत्संस्कारवशात्तदेव पुनरन्यस्मिन् भवेऽपि आगमिष्यत्=भावीति ॥ सू० ७ ॥

ये तु संसारसिन्धुमुत्तीर्णास्ते पूर्वापरगतिवेदिनः सर्वज्ञा नैवं वदन्ति । तस्मात् कर्मक्षपणार्थं संयमः सेवनीय इत्याह-‘नाईय’० इत्यादि ।

मूलम्-नाईयमट्टं न य आगमिस्सं, अट्टं नियच्छंति तहा-  
गया उ । विहूयकप्पे एयाणुपस्सी, निज्झोसइत्ता खवए  
महेसी ॥ सू० ८ ॥

“ केण ममेत्युप्पत्ती ? कहं इओ तह पुणोऽवि गंतव्वं ? ।

जो एत्तियं पि चितइ, इत्थं सो को ण निव्विण्णो ॥१॥ ” इति ।

अर्थात् किस कारणसे मेरी इस पर्याय में उत्पत्ति हुई है ? क्या मुझे यहांसे फिर अब दूसरी पर्यायमें जाना पड़ेगा ? । जो इतना भी विचार करे तो कौनसा ऐसा जीव है जिसे वैराग्य जाग्रत न हो जाय ॥

इस संसारमें ऐसे भी महामिथ्यादृष्टि जीव हैं जो कर्मोंके विपाक के ज्ञानसे शून्य हो कर ऐसा कहते हैं कि-इस जीवका जो भव, चाहे वह ब्राह्मण सम्बन्धी हो, चाहे क्षत्रिय सम्बन्धी हो, चाहे वैश्य, शूद्र, गो और अश्व-घोडा-सम्बन्धी हो; व्यतीत हो चुका है, वही भव उनर भवोंके संस्कारके वशसे आगामी कालमें फिरसे इसे प्राप्त होगा ॥७॥

“ केण ममेत्युप्पत्ती, कहं इओ तह पुणोऽवि गंतव्वं ? ।

जो एत्तियंपि चितइ, इत्थं सो को ण निव्विण्णो ” ॥ १ ॥ इति ।

अर्थात् क्या कारणसे मेरी आ पर्यायमा उत्पत्ति हुई है ? शु भने आईयाधी इरीगी दवे जीउ पर्यायमा जलुं पओ ? ने ओटओ पओ विचार करे तो इयो ओयो उव छे नेने वैराग्य जाग्रत न थाय ?

आ संसारमा जेया पओ भवामिथ्यादृष्टि उव छे ने उगंमा विपाकना ज्ञानधी शून्य जनीने जेयु ओड छे जेन्ना उवने ने जव भवे ते प्राप्ताय संजधी छाय, जेहे क्षत्रिय संजधी छाय, जेहे वैश्य, शूद्र, जय जने = ग-  
प्राप्त संजधी छाय-व्यतीत नई जयेछ छे तेज जव ने ने जयेना भवेउरन्य वजही आगामी भवनां इरीगी नेने प्राप्त करे ॥ सू० ७ ॥

છાયા—નાતીતમર્થ ન ચ આગમિષ્યન્તમ્ અર્થ નિચ્છન્તિ તથાગતાસ્તુ ।  
વિદ્યુતકલ્પ એતદનુદર્શી નિર્જુષ્ય ક્ષપયેત્ મહર્ષિઃ ॥ મૂ૦ ૮ ॥

ટીકા—તથાગતાઃ=યથા તીર્થઢ્કરેણ ભાષિતં તથૈવ ગતં-જ્ઞાનં યેષાં તે તથાગતા-  
સ્તત્ત્વજ્ઞાનિનસ્તુ-અતીતમર્થ ન નિચ્છન્તિ=ચેતસિ નાનયન્તિ, આગમિષ્યન્તમર્થ-  
મપિ ન નિચ્છન્તિ । કિં તુ કર્મપરિણામવૈચિત્ર્યાત્ કર્માનુસારિ સુખં દુઃખં વા  
પ્રાણિનાં ભવતીત્યેવં નિર્ણયન્તિ । તસ્માત્-એતદનુદર્શી=વર્તમાનાર્થાનુદર્શી વર્તમાન-  
ભવસંપ્રાપ્તશ્રુતચારિત્રધર્મારાધનપર इत्यर्थः, અતીતાનાગતસ્વર્ગાદિસુખાનભિચિન્તક  
इति यावत्, तथाचोक्तम्-

જો સંસારસાગરસે પાર હો ચુકે હૈં વે જીવોંકી પૂર્વાપર-ગતિકે  
જ્ઞાના સર્વજ્ઞ ભગવાન્ એસા નહીં કહતે હૈં, ઇસલિયે કર્મોંકો નાશ કરને  
કે લિયે સંયમકી આરાધના કરની ચાહિયે, ઇસ વાતકો કહતે હૈં—  
'નાર્દયમદ્' ઇત્યાદિ ।

જૈસા તીર્થઢ્કર પ્રભુને કહા હૈં ડસીકે અનુસાર જિનકા જ્ઞાન હૈં વે  
તથાગત-તત્ત્વજ્ઞાની અતીત અર્થ-અવસ્થા-કો ચિત્તમેં નહીં લાતે હૈં ઓર  
ન આગામી અર્થ કો હી ચિત્તમેં લાતે હૈં, કિંતુ 'પ્રાણિયોંકે સુખ અથવા  
દુઃખ કર્મોંકે અનુસાર હોતે હૈં' એસા હી વે નિર્ણય કરતે હૈં । ઇસલિયે  
વર્તમાન ભવમેં પ્રાપ્ત શ્રુતચારિત્રરૂપ ધર્મકી આરાધનામેં તત્પર-અર્થાત્  
અતીત ઓર અનાગત કાલ સમ્બન્ધી સ્વર્ગ આદિકે સુખોંકા ચિંતવન નહીં  
કરનેવાલા તથા વિશુદ્ધ આચારવાલા, અથવા અતીત ંવં અનાગતકે સંક-  
ત્પકો દૂર કરનેવાલા મહામુનિ નિરતિચાર સંયમકા આરાધના કરકે  
પૂર્વોપાર્જિત કર્મોં કા નાશ કરે । જ્ઞાની કા સ્વરૂપ ઇસ પ્રકાર કહા હૈં—

જે સંસારસાગરથી પાર થઈ ચુકેલ છે તે જીવોની પૂર્વાપર ગતિના જ્ઞાતા  
સર્વજ્ઞ ભગવાન એવું કહેતા નથી. માટે કોઈનો નાશ કરવા માટે સંયમની  
આરાધના કરવી જોઈએ. એ વાતને કહે છે—'નાર્દયમદ્' ઇત્યાદિ.

જેવું તીર્થઢ્કર પ્રભુએ કહ્યું છે તેના અનુસાર જેનું જ્ઞાન છે તે તથાગત-  
તત્ત્વજ્ઞાની અતીત અર્થ-અવસ્થા-ને ચિત્તમાં લાવતા નથી. ન આગામી અર્થને  
ચિત્તમાં લાવે છે. પણ 'પ્રાણિયોના સુખ અથવા દુઃખ કોઈના અનુસાર બને  
છે' એવો જ તે નિર્ણય કરે છે. માટે વર્તમાન ભવમાં પ્રાપ્ત જે શ્રુત ચારિ-  
ત્રરૂપ ધર્મની આરાધનામાં તત્પર અર્થાત્ અતીત અને અનાગત કાળ સંબંધી  
સ્વર્ગ આદિના સુખોનું ચિંતવન નહિ કરવાવાળા, તથા વિશુદ્ધ આચારવાળા, અથવા  
અતીત અને અનાગતના સંકલ્પને દૂર કરવાવાળા મહામુનિ નિરતિચાર સંયમની  
આરાધના કરીને પૂર્વોપાર્જિત કોઈનો નાશ કરે. જ્ઞાનીનું સ્વરૂપ આ પ્રકારે કહ્યું છે—

“ गतं शोचति यो नैव, भविष्यन्नैव वाञ्छति ।

वर्तते वर्तमाने यः, सैव ज्ञानी निगद्यते ” ॥ १ ॥ इति ।

विधूतकल्पः=विधूतो=विशुद्धः कल्पः=आचारो यस्य सः, यद्वा-विधूतः=अप-  
नीतः कल्पः=अतीतानागतसंकल्पो येन सः, महर्षिः=महामुनिः, निर्जुप्य=संयमं  
निरतिचारं समाराध्य, क्षपयेत्=पूर्वोपार्जितकर्माणि नाशयेत् ॥ सू० ८ ॥

कर्मक्षपणार्थं समुद्यतस्य महर्षेर्धर्मध्यानतः शुक्लध्यानतो वा यत् फलं भवति  
तदाह—‘ का अरई ’ इत्यादि ।

“ गतं शोचति यो नैव, भविष्यन्नैव वाञ्छति ।

वर्तते वर्तमाने यः, सैव ज्ञानी निगद्यते ॥ १ ॥ ”

अर्थात्—‘ गई बात सोचे नहीं, आगम चिंते नाहि ।

वर्तमान वरते सही, सो ज्ञानी घटमाहि ॥ ’

जो बीती हुई बातों पर ध्यान नहीं देता, भविष्यकी बातोंकी चाहना  
नहीं करता, किन्तु वर्तमान अवस्था पर ही संभल कर रहता है, वही  
ज्ञानी कहलाता है ॥

इस श्लोकसे टीकाकार इस बातकी पुष्टि कर रहे हैं कि तत्त्वज्ञानी  
भूत भविष्यत् कालके सांसारिक सुखोंकी स्मृति एवं इच्छा न कर  
वर्तमान कालमें श्रुतचारित्ररूप धर्मकी आराधना करनेरूप अपनी अव-  
स्थामें ही तत्पर रहता है ॥ सू० ८ ॥

कर्मोंको नाश करनेमें कटिबद्ध महर्षि को धर्मध्यान या शुक्लध्यान  
से जो फल होता है उसको बतलाते हैं—‘ का अरई ’ इत्यादि ।

“ गतं शोचति यो नैव, भविष्यन्नैव वाञ्छति ।

वर्तते वर्तमाने यः, सैव ज्ञानी निगद्यते ॥ १ ॥ ”

अर्थात्—‘ गई बात सोचे नहीं, आगम चिंते नाहि ।

वर्तमान वरते सही, सो ज्ञानी घटमाहि ॥

जो बीती गयेकी बातों पर ध्यान नहीं देता, भविष्यकी बातोंकी चाहना  
नहीं करता, किन्तु वर्तमान अवस्था पर ही संभल रहता है, वही ज्ञानी कहलाता है ॥

इस श्लोककी टीकाकार इस बातकी पुष्टि कर रहे हैं कि तत्त्वज्ञानी भूत भविष्य  
आराधना सांसारिक सुखोंकी स्मृति एवं इच्छा न कर वर्तमानकालमें श्रुतचार-  
ित्ररूप धर्मकी आराधना करनेरूप अपनी अवस्थामें ही तत्पर रहता है ॥ सू० ८ ॥

कर्मोंको नाश करनेमें कटिबद्ध महर्षि को धर्मध्यान या शुक्लध्यान से जो  
फल होता है उसे बतलाते हैं—‘ का अरई ’ इत्यादि ।

મૂલમ્—કા અરઈ ? કે આણંદે?, इत्थं पि अग्गहे चरे ।

सर्वं हासं परिच्चज्ज, आलीणगुत्तो परिव्वए ॥सू० ९॥

છાયા—કા અરતિઃ ? ક આનન્દઃ ? અત્રાપિ અગ્રહચરેત્ ।

सर्वं हास्यं परित्यज्य आलीनगुप्तः परिव्रजेत् ॥ सू० ९ ॥

ટીકા—ઈપ્સિતસ્યાપ્રાપ્ત્યા વિનાશેન વા, તથા—અનિષ્ટપ્રાપ્ત્યા વા યન્મનોદુઃખં સા અરતિઃ, અભિલષિતાર્થસ્ય પ્રાપ્તૌ સત્યાં યો હર્ષઃ સુખં વા સ આનન્દઃ, एतद्द्वयं धर्मशुक्लध्यानलवलीनचित्तस्य महर्षेर्न भवति, तत्कारणाभावात् । इममेवार्थं कथयति—કા અરતિઃ ક આનન્દ ઇતિ । મહર્ષેઃ કા અરતિઃ ? ક આનન્દઃ ? । મિથ્યાદૃષ્ટેરિવાતિરાનન્દશ્ચ મહર્ષેર્ધર્મશુક્લધ્યાનાવેશાન્ન સમુદ્ભવત ઇતિ ભાવઃ । અત્રાપિ=અરતાવાનન્દે ચ, અગ્રહઃ=અવિચલિતઃ સન્ ચરેત્=ધ્યાનમાર્ગે વિહરેત્ ।

इच्छित पदार्थकी अप्राप्ति से, अथवा उसके विनाशसे या अनिष्ट पदार्थके समागमसे जो मानसिक दुःख होता है उसका नाम अरति है। इष्ट पदार्थकी प्राप्ति होने पर जो हर्ष या सुख होता है उसका नाम आनन्द है। ये दोनों धर्मध्यान या शुक्लध्यानमें लवलीन चित्तवाले महर्षिके नहीं होते हैं, क्यों कि अरति और आनन्दके कारणोंका वहां अभाव हो चुका है। महर्षिके लिये, क्या अरति? क्या आनन्द?, दोनों सम हैं। मिथ्यादृष्टिको जिस प्रकार अरति और आनन्द होते हैं उस प्रकार महर्षिके वे दोनों धर्मध्यान और शुक्लध्यानके प्रभावसे नहीं होते हैं। इसलिये अरति और आनन्दमें चञ्चलचित्त न बन कर महर्षिको अपने ध्यानके मार्गमें लवलीन रहना चाहिये।

ઇચ્છિત પદાર્થની અપ્રાપ્તિથી અથવા તેના વિનાશથી અગર અનિષ્ટ પદાર્થના સમાગમથી જે માનસિક દુઃખ થાય છે તેનું નામ અરતિ છે. ઇષ્ટ પદાર્થની પ્રાપ્તિ થવાથી જે હર્ષ અથવા સુખ થાય છે તેનું નામ આનંદ છે. જે બન્ને ધર્મધ્યાન અગર શુક્લ ધ્યાનના લવલીન ચિત્તવાળા મહર્ષિને થતાં નથી. કારણુ કે અરતિ અને આનંદના કારણોનો ત્યાં અભાવ થઇ ચુકેલ છે. મહર્ષિ માટે શું અરતિ કે શું આનંદ ? બન્ને અરખાં છે. મિથ્યાદૃષ્ટિને જેવી રીતે અરતિ અને આનંદ થાય છે, તે પ્રકારે મહર્ષિને તે બન્ને ધર્મધ્યાન અને શુક્લધ્યાનના પ્રભાવથી થતા નથી. માટે અરતિ અને આનંદમાં ચંચળચિત્ત ન બનીને મહર્ષિએ પોતાના ધ્યાનના માર્ગમાં લવલીન રહેવું જોઇએ.

यद्वा-संयमाराधनपरायणस्य महर्षेः का अरतिः ? क आनन्दः ? । अयंभावः—  
संयमाराधनतत्परस्य कुतश्चित् कारणात् प्रतिकूलपरीषद्दोषसर्गोपस्थितो अरतिर्न-  
भवति । स हि तदानीमेवं चिन्तयति—अनेनात्मना पूर्वभवेषु नरकनिगोदादौ क्षुब्ध-  
पासादिजनितं वधवन्धनादिजनितं च यद् घोरतरं दुःखमनन्तवारं प्राप्तं तत्पुरतः  
किमेभिरल्पदुःखजनकैः परीषद्दोषसर्गैरिति । तथा—ऋद्धि—रस—ज्ञाताद्युपस्थितो हर्षः  
सुखं वा नोत्पद्यते ।

स हि तदानीमेवं विभावयति—अनेनात्मना पूर्वं देवभवेषु नरलोकदुर्लभं  
नानाविधऋद्ध्यादिसुखमनन्तशोऽनुभूतं, तस्य समुद्रसदृशस्य दिव्यसुखस्य पुरतः

अथवा—संयमकी आराधना करनेमें दत्तावधान महर्षिको अरति  
और आनन्दसे कोई प्रयोजन नहीं है ।

तात्पर्य यह है—संयमकी आराधना करनेमें तत्पर महर्षिके जब किसी  
कारणसे प्रतिकूल परीषद् और उपसर्गकी उपस्थिति होती है उस समय  
उसे उससे अरति नहीं होती है, किन्तु उसे उस समय यही विचार आता  
है कि इस आत्माने पूर्वभवमें नरकनिगोदादि गतियोंमें क्षुब्धा-तृषा-  
आदि-जनित एवं वध और बन्धन आदिसे उत्पन्न हुए जो घोरतर दुःख  
अनन्त बार पाये हैं उनके आगे अल्पदुःखजनक ये परीषद् और उपसर्ग  
क्या चीज हैं ? तथा ऋद्धि, रस, ज्ञाना आदिकी उपस्थिति होने पर भी  
उसे हर्ष या सुख नहीं होता है, क्योंकि उस समय भी वह यही विचार  
करता है कि इस आत्माने पूर्व-देव-भवोंमें, मनुष्यलोकमें दुर्लभ ऐसे  
अनेक प्रकारके ऋद्धि-आदिजन्य सुखोंको अनन्त बार भोगा है तो समुद्र

अथवा संयमकी आराधना કરવામાં દત્તાવધાન મહર્ષિને અરતિ અને આ  
નંદથી કોઈ પ્રયોજન નથી.

તાત્પર્ય એ છે કે—સંયમની આરાધના કરવામાં તત્પર મહર્ષિને ક્યારે કે.ક  
કારણથી પ્રતિકૂળ પરીષદ અને ઉપસર્ગની ઉપસ્થિતિ થાય છે તે વખત તેને તેનાથી  
અરતિ થતી નથી. પણ તેને તે વખત તેવો વિચાર આવે છે કે આ આત્માએ  
પૂર્વભવમાં નરક નિગોદાદિ ગતિઓમાં ક્ષુબ્ધ તૃષા આદિ જનિત નેમજ વધ અને  
બંધન આદિથી ઉત્પન્ન થયેલ જે ઘોરતર હુખ અનન્ત વાર ભોગવેલ છે તેની  
અપેક્ષા અલ્પ દુઃખજનક આ પરિણામ અને ઉપસર્ગ કઈ સીક છે ? તથા ઋદ્ધિ  
અ. જ્ઞાના આદિની ઉપસ્થિતિ હોવા છતાં પણ તેને હર્ષ અથવા સુખ થતું  
નથી. કારણ કે તે સમય પણ તે એજ વિચાર કરે છે કે આ આત્માએ પૂર્વ  
દેવભવોમાં, મનુષ્યલોકમાં દુર્લભ એવા અનંક પ્રકારના અદિ આદિ જન્ય સુખોને

किमनेन विन्दुतुल्येन ऋद्ध्यादिसुखेन? इति । उक्तञ्च—

“ न तृप्तोऽसि यदा कामैः, सेवितैरप्यनेकशः ।

स नाम तेषु वृत्तोऽन्तो, यतो वैराग्यमाप्नुहि ” ॥ १ ॥ इति ।

तस्मात्—अत्रापि=अस्मिन् अस्त्यानन्दकारणेऽपि अग्रहः=तदनपेक्षमाणः—  
माध्यस्थ्यभावमुपगतः सन् चरेत्=संयममार्गे विहरेत् ।

तथा—सर्व=समस्तं हास्यं=हासं, तत्स्थानं वा परित्यज्य, आलीनगुप्तः—तत्र—  
आलीनः—आङ्=मर्यादया—इन्द्रियनिरोधादिरूपया लीनः, गुप्तः—मनोवाक्कायकर्मभिः,  
यद्वा—गुप्तः=कर्मवत्संवृतगात्रः, आलीनश्चासौ गुप्तश्चेत्यालीनगुप्तः, एवंभूतः सन्

के तुल्य उस सुखके सामने विन्दुतुल्य इस ऋद्धि रस आदिके सुखकी  
क्या गिनती है । कहा भी है—

“ न तृप्तोऽसि यदा कामैः, सेवितैरप्यनेकशः ।

स नाम तेषु वृत्तोऽन्तो, यतो वैराग्यमाप्नुहि ॥ १ ॥ ”

हे आत्मन् ! जब तू अनन्तवार सेवन किये गये इन कामोंसे तू स नहीं  
हुआ, उल्टा इनके भोगने से तेरा ही अन्त हुआ तो फिर इन के भोगने से  
तुझे क्या लाभ है? अतः अब इन से वैराग्य ही लेना सर्वश्रेयस्कर है ।

इसलिये उस संयमी को चाहिये कि वह अरति और आनन्द के  
कारणोंमें भी अग्रह—अनपेक्षावाला बन कर अर्थात् माध्यस्थ्यभाव  
रखता हुआ संयममार्गमें विचरे ।

तथा—समस्त हास्य अथवा हास्यके स्थानभूत—जिनकी तीर्थङ्करा-  
दिकोंने निन्दा की है ऐसे—विषयकषायोंका परित्याग कर इन्द्रियनिग्रही  
एवं मन, वचन और कायसे सदा साव्यक्रियासे रहित होते हुए अथवा

अनंतवार लोगवेद छे तो समुद्रना तुल्य ते सुખनी सामे णिडु तुल्य आ ऋद्धि  
आदिना सुખनी शुं गणुना छे डहु पणु छेः—

“ न तृप्तोऽसि यदा कामैः, सेवितैरप्यनेकशः ।

स नाम तेषु वृत्तोऽन्तो, यतो वैराग्यमाप्नुहि ॥ १ ॥ ”

हे आत्मा ! न्यारे अनंत वार सेवी चुकेला ते कामोथी न्यारे तुं तृप्त  
न थयो, उडहुं तेना लोगववाथी तारेओ अंत थयो, तो पछी तेना लोगववाथी  
तने शुं लाब छे? माटे ते वस्तुथी वैराग्य न देवो सर्व श्रेयस्कर छे.

तेथी ते संयमीने जेष्ठ ओ छे ते अरति अने आनंदना कारणोभां पणु  
अग्रह—अनपेक्षावाणा णनी अर्थात् माध्यस्थ्य भाव राणीने संयम मार्गभां विचरे.

तथा—समस्त हास्य अथवा हास्यना स्थानभूत छे जेनी तीर्थङ्करेओ निन्दा  
करेला छे, ओवा विषयकषायोना परित्याग करी इन्द्रियनिग्रही तेमन मन, वचन



પરિવ્રજેત્-પરિ=સમન્તાદ્ વ્રજેત્=વિહરેત્-સંયમાનુષ્ઠાનવિધાયી ભવેદિત્યર્થઃ॥મૂ.૦૯॥

સ્વાત્મનો વીર્યગુણાવલમ્બનેનૈવ મોક્ષઃ પ્રાપ્યતે ન તુ પરસાહ્યાશ્રયણેનેતિ દર્શયિતું કથયતિ-‘પુરિસા’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્-પુરિસા ! તુમમેવ તુમં મિત્તં, કિં વહિયા મિત્ત-મિચ્છસિ ॥ સૂ.૦ ૧૦ ॥

છાયા—પુરુષ ! ત્વમેવ તવ મિત્રં, કિં વહિર્મિત્રમિચ્છસિ ॥ મૂ.૦ ૧૦ ॥

ટીકા—હે પુરુષ ! =પુરુષાર્થસાધનસમર્થ ! શિષ્ય ! તવ મિત્રં ત્વમેવ=આત્મનઃ કલ્યાણાર્થં સમુદ્યતસ્ય-ગૃહીતસંયમભારસ્ય તવ સહાયસ્તવાત્મૈવાસ્તીત્યર્થઃ । શ્રુત-ચારિત્રધર્માચરણકરણેનૈકાન્તતોડ્યન્તતશ્ચ પરમસુખજનકત્વાત્પ્રમાદરહિત આત્મૈ-વાત્મનો મિત્રમુપકારી પરમાર્થતો, ન ત્વન્ય ઇતિ ભાવઃ । વહિઃ=વાહ્યં સ્વાત્મનો વ્ય-તિરિક્તં, મિત્રં=હિતકારિણં સહાયં, કિમ્=કુતઃ, ઇચ્છસિ=અન્વેષયસિ ।

કમઠ-કચ્છપકે સમાન સંવૃતશરીર હોતે હુણ વે મહર્ષિ સંયમકી આરાધના કરનેમેં સાવધાન રહે ॥ સૂ.૦ ૯ ॥

અપની આત્માકે વીર્યગુણકે અવલમ્બન સે હી મોક્ષ પ્રાપ્ત હોતા હૈ કિન્તુ દૂસરોંકી સહાયતાકે સહારે નહીં । ઇસ વાતકો દિલ્લોલને કે લિયે કહતે હૈ-‘પુરિસા’ ઇત્યાદિ ।

પુરુષાર્થ સાધન કરનેમેં સમર્થ હે પુરુષ=હે શિષ્ય ! તુમ હી સ્વયં અપને મિત્ર હો-અપની આત્માકે કલ્યાણ કરનેમેં ઉદ્યત હો કર જો તુમને યહ સંયમકા ભાર અંગીકાર કિયા હૈ ઇસમેં તુમ્હારી આત્માસે અનિરિક્ત ઔર દૂસરા કોઈ સહાયક નહીં હૈ । શ્રુતચારિત્રરૂપ ધર્મ કે આચરણ કરને સે આત્મા અપ્રમાદી બનતા હૈ । પ્રમાદ સે રહિત આત્મા હી આત્માકા ણેકાન્તિક

અને કાયાથી સદા સાવધ ક્રિયાઓથી રહિત થઈને, અથવા કમઠ-કચ્છપના સમાન સંવૃતશરીર થઈને તે મહર્ષિ સંયમની આરાધના કરવામાં સાવધાન રહે. ॥સૂ.૦૯॥

પોતાના આત્માના વીર્યગુણના અવલંબનથી જ મોક્ષ પ્રાપ્ત થાય છે, પણ બીજાઓની સહાયતાના સહારથી થતો નથી. આ વાતને બતાવવા માટે કહે છે-‘પુરિસા’ ઇત્યાદિ.

પુરુષાર્થ સાધન કરવામાં સમર્થ છે પુરુષ=હે શિષ્ય ! તમે પોતે જ તમારી બતના મિત્ર છો. પોતાના આત્માનું કલ્યાણ કરવામાં ઉદ્યોગી બની જે તમે સંયમનો ભાર અંગીકાર કરેલ છે, તેમાં તમારી આત્માથી અનિરિક્ત બીજા કોઈ સહાયક નથી. શ્રુતચારિત્ર ધર્મનું આચરણ કરવાથી આત્મા અપ્રમાદી

સ્વાત્મવ્યતિરિક્તસ્ય સંસારકાર્યે સાહાય્યકારિણઃ પુત્રકલત્રાદેઃ સંસારિણસ્તથા હિરણ્યસુવર્ણાદેશ્ચ જન્મમરણાદિવહુવિધાનન્તવ્યસનોપનિપાતસંસારસાગરાન્તઃપતન-કારિત્વાદમિત્રં મિત્રં મન્યમાનઃ કિં મોહાર્ણવે સ્વાત્માનં નિપાતયસિ ?, પરમાર્થતઃ શ્રુતચારિત્રધર્માનુષ્ઠાનાત્સ્વાત્મૈવ મિત્રં, તદ્વિરોધિસાવધક્રિયાનુષ્ઠાનાદમિત્રં ચ સ્વાત્મૈવાસ્તીતિ ભાવઃ । ઉક્તञ્ચ—

“અપ્યેકં મરણં કુર્યાત્, સંકુદ્ધો વલવાનરિઃ ।

મારણાનિ ત્વનન્તાનિ, જન્માનિ ચ કરોત્યયમ્ ॥” ઇતિ ॥ સૂ૦ ૧૦ ॥

તથા આત્યન્તિક પરમ સુખકા જનક હોનેસે ઉત્કૃષ્ટ વન્ધુ હૈ । ફસલિયે જવ આત્માકા આત્માસે અનિરિક્ત ફસ અવસ્થામેં કોઈ વાસ્તવિક દષ્ટિ સે વન્ધુ-સહાયક હૈ હી નહીં; તો ફિર હે આત્મન્ ! અપને સે સદા મિત્ર રહે હુઓંકો તુમ અપના સહાયક માનને કી ચાહના ક્યોં કરતે હો ? ।

નાત્પર્ય યદ્ હૈ કિ-આત્માસે સદા મિત્ર રહે હુઁ યે સાંસારિક સમસ્ત પદાર્થ, વે ચાહે સ્ત્રી, પુત્ર, મિત્ર આદિ હોં, ચાહે હિરણ્ય, સુવર્ણ આદિ હોં; તુજે સાંસારિક કાર્યોંમેં હી સહાયક હોતે હોં, પારમાર્થિક કાર્યોંમેં નહીં । આત્માકો ફનકે મમત્વસે નિરન્તર હી જન્મ જરા ઓર મરણાદિક અનેક પ્રકારસે અનેક કષ્ટોંકા સામના કરના પડતા હૈ । ફન કષ્ટોંકે સ્થાનભૂત ફસ સંસારસમુદ્રમેં ઉસે વારંવાર ગોતે ચ્વાને પડતે હોં । ફસલિયે ફન્હેં અપના સહાયક માનના શત્રુકો સહાયક માનને જૈસા હૈ । અતઃ હે શિષ્ય ! યદ્ નિશ્ચય વિશ્વાસ રચ્ચકર અપની સંયમયાત્રા કા નિર્વાહ કરો ઓર

બને છે. પ્રમાદથી રહિત આત્મા જ આત્માનો એકાંતિક તથા આત્યન્તિક પરમ સુખનો જનક હોવાથી ઉત્કૃષ્ટ બંધુ છે. માટે જ્યારે આત્માનો આત્માથી અતિ-રિક્ત આ અવસ્થામાં કોઈ વાસ્તવિક દષ્ટિથી બંધુ-સહાયક છે જ નહિ, તો પછી હે આત્મન્ ! પોતાનાથી સદા મિત્ર રહેલાઓને તું પોતાના સહાયક માનવાની ચાહના શા માટે કરે છે ?

ભાવાર્થ—આત્માથી સદા મિત્ર રહેલા એ સાંસારિક સમસ્ત પદાર્થ—ભલે સ્ત્રી પુત્ર મિત્ર આદિ હોય, ગાહે હિરણ્ય સુવર્ણ આદિ હોય. તને સાંસારિક કાર્યોમાં જ સહાયક બને છે પરમાર્થિક કાર્યોમાં નહિ. આત્માને તેના મમત્વથી નિરંતર જ જન્મ, જરા અને મરણાદિક અનેક પ્રકારના અનંત કષ્ટોનો સામનો કરવો પડે છે. તે કષ્ટોના સ્થાનભૂત આ સંસારસમુદ્રમાં તેને વારંવાર ગોથા ખાવા પડે છે માટે તેના પોતાના સહાયક માનવા તે શત્રુને સહાયક માનવા બરાબર છે. માટે હે શિષ્ય ! એ નિશ્ચય વિશ્વાસ રાખીને પોતાની સંયમ યાત્રાનો નિર્વાહ

આત્મા યસ્ય મિત્રં સ કથં જ્ઞાતવ્યઃ ? इति शिष्यजिज्ञासायामाह—‘ जं जाणिज्जा ’ इत्यादि ।

સોચો કિં હસ યાત્રામેં મેરા સહાયક મેરી આત્મા હી હૈ, અન્ય-આત્મ-વાહ્ય-કોઈં ભી પદાર્થ નહીં । જો હનકી સહાયતાકી અપેક્ષાવાલે બનોગે તો અપની આત્માકો મોહરૂપી સમુદ્રમેં ડુબોનેવાલે હોઓગે । હસલિયે હનકે મોહમેં ફંસ કર આત્માકો મોહરૂપી સમુદ્રમેં ડાલનેકી ચેષ્ટા ન કરો ઓર પરમાર્થસે યહ સમઝતે હુએ હસ યાત્રામેં આગે વઢતે રહો કિં શ્રુત-ચારિત્રરૂપ ધર્મકે અનુષ્ઠાનસે આત્માકા સહાયક આત્મા હી હૈ ઓર તદ્દિ-રોધી સાવચક્રિયાઓંકે કરનેસે આત્મા હી આત્માકા શત્રુ હૈ । કહા ભી હૈ—

“अप्येकमरणं कुर्यात्, संक्रुद्धो बलवानरिः ।

मरणानि त्वनन्तानि, जन्मानि च करोत्ययम् ॥ ૧ ॥” इति ।

અર્થ-બલવાન સે બલવાન ભી શત્રુ અગર ક્રુદ્ધ હો કર મારે તો એક હી જન્મમેં મારતા હૈ, પરન્તુ સાવચક્રિયામેં પ્રવૃત્ત આત્મા સ્વયં શત્રુ બન કર અનન્તવાર અપને આપકો મારતા હૈ ઓર જન્મ લેતા હૈ । અર્થાત્ આત્મા હી અપના શત્રુ બન કર ચતુર્ગતિ સંસારમેં જન્મ મરણ કરતા રહતા હૈ, કિન્તુ કબી ભી મોક્ષકો પ્રાપ્ત નહીં હોતા ॥ ૧ ॥ સૂ૦ ૧૦ ॥

કરો, અને વિચારો કે-આ યાત્રામા મારો સહાયક મારો આત્મા જ છે. બીજું બાહ્ય કોઈ પણ પદાર્થ નહિ. જો તેની સહાયતાની અપેક્ષાવાળા બનશો તો પોતાના આત્માને મોહરૂપી સમુદ્રમાં ઘુડાવનારા બનશો, મોટે તેના મોહમાં ફસીને આત્માને મોહરૂપી સમુદ્રમાં નાંખવાની ચેષ્ટા ન કરો, અને પરમાર્થથી જો સમજીને આ યાત્રામાં આગળ વધતા રહો. શ્રુતચારિત્રરૂપ ધર્મના અનુષ્ઠાનથી આત્માનો સહાયક આત્મા જ છે, અને તેના વિરોધી સાવચક્રિયાઓના કરવાથી આત્મા જ આત્માનો શત્રુ છે. કહું છે—

“अप्येकमरणं कुर्यात्, संक्रुद्धो बलवानरिः ।

मरणानि त्वनन्तानि, जन्मानि च करोत्ययम्” ॥ ૧ ॥ इति ।

અર્થ:—બળવાનથી બળવાન પણ શત્રુ કોથી ઘમને મારે તો એક જ જન્મમાં મારે છે, પરંતુ સાવચક્રિયામાં પ્રવૃત્ત આત્મા સ્વયં શત્રુ બનીને અનન્ત વાર પોતે પોતાને મારે છે. અને જન્મ લે છે. અર્થાત્ આત્મા જ પોતાનો શત્રુ બનીને ચતુર્ગતિ સંસારમાં જન્મ મરણ કરતો રહે છે, કિન્તુ કદી પણ મોક્ષ પ્રાપ્ત કરતો નથી ॥ ૧ ॥ સૂ૦ ૧૦ ॥

મૂલમ્—જં જાણિજ્ઞા ઉચ્ચાલઇયં, તં જાણિજ્ઞા દૂરાલઇયં ।

જં જાણિજ્ઞા દૂરાલઇયં, તં જાણિજ્ઞા ઉચ્ચાલઇયં ॥સૂ૦ ૧૧॥

જ્ઞાયા—યં જાનીયાન્ ઉચ્ચાલયિકં તં જાનીયાદ્ દૂરાલયિકમ્ ।

યં જાનીયાદ્ દૂરાલયિકં તં જાનીયાન્ ઉચ્ચાલયિકમ્ ॥ મૂ૦ ૧૧ ॥

ટીકા—યં પુરુષમ્ ઉચ્ચાલયિકમ્—ઉચ્ચઃ=કર્માપનયનભાવમંપન્નઃ, આલયઃ—  
આ=સમન્તાન્ લીયન્તે વિચારા યસ્મિન્ સ આલયઃ=અન્તઃકરણમ્, ઉચ્ચઃ આલયઃ  
ઉચ્ચાલયઃ, સોઽસ્યામ્તીતિ—ઉચ્ચાલયિકમ્ કર્મણામપનેતારં જાનીયાત્, તં  
દૂરાલયિકં=કઠિનતરતપઃસંયમારાધનપ્રાપ્તીયત્વેન દૂરે આલયઃ દૂરાલયઃ=મોક્ષ-  
સ્થાનં, સોઽસ્યામ્તીતિ દૂરાલયિકમ્ મોક્ષગામિનં જાનીયાત્ । પરસ્પરકાર્યકારણભા-  
વપ્રદર્શનાયોક્તમયં ગત-પ્રત્યાગતરૂપેણ કથયતિ—‘યં જાનીયાદ્દૂરાલયિકમ્’

જિસકા આત્મા હી મિત્ર હૈ એસે પુરુષકી પહિચાન કેસે હોતી હૈ?  
હસપ્રકારકી શિષ્યકી જિજ્ઞાસા હોને પર સૂત્રકાર કહતે હૈ—‘જં  
જાણિજ્ઞા ’ इत्यादि ।

કર્મોંકા જો અપનેતા હૈ ઉસકા નામ ઉચ્ચાલયિક, તથા મોક્ષગામી  
કા નામ દૂરાલયિક હૈ । અર્થાત્—જો ઉચ્ચાલયિક=કર્મોંકા નાશ કરને-  
વાલા હૈ વહ દૂરાલયિક=મોક્ષગામી હૈ, એસા સમજો । કઠિનતર તપ  
ઔર સંયમકી આરાધના સે પ્રાપ્ત હોનેવાલા હોને કે કારણ દૂર જો આલય  
-સ્થાન હૈ ઉસકા નામ દૂરાલય-મોક્ષ હૈ । યહ જિસકે હોતા હૈ વહ દૂ-  
રાલયિક અર્થાત્ મોક્ષગામી હૈ । પરસ્પરમેં કાર્ય-કારણ ભાવકા પ્રદર્શન  
કરનેકે લિયે ઉક્ત અર્થકો સૂત્રકાર ગત-પ્રત્યાગત (હિર-ફેર) રૂપસે કહતે  
હૈ—જો દૂરાલયિક=મોક્ષગામી-અર્થાત્ મુક્તિકે માર્ગપર આરુઢ હૈ, ઉસકો

જેને આત્મા જ મિત્ર છે એવા પુરુષની ઓળખાણ કેવી રીતે થાય?  
આ પ્રશ્નની શિષ્યની જિજ્ઞાસા થવાથી સૂત્રકાર કહે છે—‘જં જાણિજ્ઞા ’ इत्यादि.

કર્મોંના જે અપનેતા છે તેનું નામ ઉચ્ચાલયિક તથા મોક્ષગામીનું નામ  
દૂરાલયિક છે. અર્થાત્—જે ઉચ્ચાલયિક=કર્મોંના નાશ કરવાવાળા છે તે દૂરાલયિક=  
મોક્ષગામી છે, એમ સમજો. કઠિનતર તપ અને સંયમની આરાધનાથી પ્રાપ્ત  
થવાવાળા હોવાના કારણે દૂર જે આલય-સ્થાન છે. તેનું નામ દૂરાલય-મોક્ષ છે.  
તે જેને થાય છે તે દૂરાલયિક અર્થાત્ મોક્ષગામી છે. પરસ્પરમાં કાર્યકારણ  
ભાવનું પ્રદર્શન કરાવવા માટે ઉક્ત અર્થને સૂત્રકાર ગત-પ્રત્યાગત (હિર-ફેર)  
રૂપથી કહે છે—જે દૂરાલયિક=મોક્ષગામી અર્થાત્ મુક્તિના માર્ગ ઉપર આરુઢ છે

ઇત્યાદિ । યં પુરુષં દૂરાલયિકં મોક્ષગામિનં મોક્ષમાર્ગારૂઢં જાનીયાત્, તમુચ્ચાલ-  
યિકં=કર્મણાં તદાસ્રવદ્વારાણાં ચાપનેતારં કર્માણિ દૂરીકર્તુ કૃતનિશ્ચયં સોત્સાહં વદ્ધ-  
પરિકરમિતિ યાવત્ જાનીયાત્ ॥ સૂ૦ ૧૧ ॥

સ્વાત્મેવ યેન મિત્રતયાઽઙ્ગીકૃતઃ સ કિં ફલં પ્રાપ્નોતીત્યાહ—‘પુરિસા’ ઇત્યાદિ।  
ઉચ્ચાલયિક = કર્મ ઓર ડનકે આસ્રવોંકે દ્વારોંકા નાશ કરનેવાલા  
સમજ્ઞો । ક્યોં કિ વહ કર્મોં કો દૂર કરનેકે લિયે કૃતનિશ્ચય ંવં ઉત્સા-  
હસંપન્ન હોતા હૈ । કર્મોં કે નાશ કરનેમેં વહ કિસી ખી પ્રકારસે પીંછે  
પૈર નહીં રલ્લતા હૈ, અર્થાત્ કટિલ્લ હોતા હૈ ।

ભાવાર્થ—શિષ્યને જો યહ પ્રશ્ન કિયા થા કિ આત્માકો હી જો  
સંયમયાત્રામેં સહાયક માનતા હૈ ડસકી પહિચાન ક્યા હૈ ? ડસકા  
સમાધાન સૂત્રકારને ડસ સૂત્રસે કિયા હૈ । લે કહતે હેં કિ જો સંયમી  
હસ પ્રકારકી પ્રવૃત્તિ કરતા હૈ વહ કર્મોંકે દૂર કરનેમેં સદા કટિલ્લ  
રહતા હૈ । ડસી રૂપસે વહ દૃષ્ટિપથ હોતા હૈ । ડસકી પ્રત્યેક કિયાં  
ેસી હોતી હેં કિ જિનસે કર્મોંકા આસ્રવ રુકતા હૈ ઓર સંચિત કર્મોં  
કી નિર્જરા હોતી રહતી હૈ । ેસા સંયમી મુનિ હી મોક્ષમાર્ગ પર આરૂઢ  
માના જાતા હૈ ॥ સૂ૦ ૧૧ ॥

અપની આત્મા કો હી જિસને મિત્રરૂપસે અંગીકાર કિયા હૈ વહ  
સંયમી કિસ ફલકો પ્રાપ્ત કરતા હૈ ? ડસકેલિયે કહતે હેં—‘પુરિસા’  
ઇત્યાદિ ।

તેને ઉચ્ચાલયિક-કર્મ અને તેના આસ્રવદ્વારોના નાશ કરવાવાળા સમજો. કારણ  
કે તે કર્મોને દૂર કરવા માટે કૃતનિશ્ચય તેમજ ઉત્સાહસંપન્ન બને છે. કર્મોના  
નાશ કરવામાં તે કોઈ પણ પ્રકારે પાછળ પગલું ભરતાં નથી, અર્થાત્ કટિબદ્ધ થાય છે.

ભાવાર્થ—શિષ્યે જે આ પ્રશ્ન કરેલ હતો કે આત્માનેજ જે સંયમયાત્રામાં  
સહાયક માને છે તેની ઓળખાણ શું છે ? તેનું સમાધાન સૂત્રકારે આ સૂત્રથી  
કરેલ છે, તે કહે છે કે જે સંયમી આ પ્રકારની પ્રવૃત્તિ કરે છે તે કર્મોને દૂર  
કરવામાં સદા કટિબદ્ધ રહે છે. તેવા રૂપથી તે દૃષ્ટિપથ થાય છે. તેની દરેક  
કિયાઓ એવી હોય છે કે જેનાથી કર્મોના આસ્રવ રોકાય છે, અને સંચિત  
કર્મોની નિર્જરા થતી રહે છે, એવા સંયમી મુનિ જ મોક્ષ માર્ગ પર આરૂઢ  
માનવામાં આવે છે. ॥ સૂ૦ ૧૧ ॥

ચોતાના આત્માને જ જેણે મિત્રરૂપથી અંગીકાર કરેલ છે તે સંયમી કેવા  
ધ્વજને પ્રાપ્ત કરે છે તેને માટે કહે છે—‘પુરિસા’ ઇત્યાદિ.

મૂલમ્—પુરિસા! અત્તાણમેવ અભિણિગિજ્ઞ એવં દુઃસ્વા  
પમુચ્ચસિ ॥ સૂ૦ ૧૨ ॥

છાયા—પુરુષ ! આત્માનમેવાભિનિગૃહ્ય એવં દુઃસ્વાત્ પ્રમોક્ષ્યસે ॥ સૂ૦ ૧૨ ॥

ટીકા—હે પુરુષ ! પરમપુરુષાર્થસાધનસમર્થ ! ભવ્ય ! આત્માનમેવ=સ્વસ્વ-  
રૂપાવલોકનં શ્રુતચારિત્રધર્મારાધનં વા પરિત્યજ્યાઽનાદિમિથ્યાત્વાવિરત્યાદિ-  
વાસનાવશાદ્ વિષયસંગાર્થં વહિર્ધાવમાનં સ્વાત્માનમેવ અભિનિગૃહ્ય=મોક્ષસાધકધ-  
ર્માનુષ્ઠાનપ્રવલતરસંસ્કારેણ તતઃ પ્રતિનિવર્ત્ય, એવં=પુનઃપુનરનેન પ્રકારેણ સ્વાત્માનં  
જ્ઞાનદર્શનચારિત્રાત્મનિષ્ઠં કુર્વન્, દુઃસ્વાત્=દુઃસ્વકારણાત્ જ્ઞાનાવરણીયાદિકર્મવ-  
ન્ધાત્ પ્રમોક્ષ્યસે=મુક્તો ભવિષ્યસિ ॥ સૂ૦ ૧૨ ॥

હે પુરુષ—અર્થાત્ પરમ પુરુષાર્થ—મોક્ષકે સાધનમેં સમર્થ હે ભવ્ય !  
અપની આત્માકો વૈષયિક માર્ગ સે હટા કર આત્મનિષ્ઠ કરો, હસીસે  
તુમ્હારે દુઃસ્વોંકા અન્ત હોગા ।

ભાવાર્થ—જો સંયમી અપની આત્માકો હી સંયમ-માર્ગકે સાધનમેં  
સહાયી માનતા હૈ ઉસે મુક્તિકા લાભરૂપ ફલ પ્રાપ્ત હોતા હૈ । સંસાર-  
દશામેં ફંસે હુએ વ્યક્તિયોંસે, અથવા સંયમકી આરાધનામેં સાંસારિક  
પરપદાર્થ કી સહાયતાકી હી અપેક્ષા રખનેવાલે સંયમી સે સ્વરૂપકા અવ-  
લોકન, અથવા શ્રુતચારિત્ર રૂપ ધર્મકા આરાધન નહીં હો સકતા હૈ । જવ  
તક હસ પ્રકારકી પ્રવૃત્તિ સંયમી મેં ઉત્પન્ન નહીં હોતી હૈ તવ તક વહ  
અપને કર્તવ્ય-માર્ગસે અલગ હી રહતા હૈ । ઉસકી આત્મા અનાદિકાલસે  
સંસક્ત ( લગા હુઆ ) મિથ્યાત્વ અવિરતિ આદિકી ભાવનાકે વશસે

હે પુરુષ ! અર્થાત્ પરમપુરુષાર્થ—મોક્ષના સાધનમાં સમર્થ હે ભવ્ય !  
પોતાના આત્માને વૈષયિક માર્ગથી હટાવી આત્મનિષ્ઠ કરો, તેનાથી તમારા  
દુઃખોનો અંત આવશે

ભાવાર્થ:—જે સંયમી પોતાના આત્માને જ સંયમ માર્ગના સાધનમાં  
સહાયક માને છે તેને મુક્તિના લાભરૂપ ફળ પ્રાપ્ત થાય છે. સંસારદશામાં  
ફંસેલી વ્યક્તિયોથી, અથવા સંયમની આરાધનામાં સાંસારિક પરપદાર્થની સહા-  
યતાની જ અપેક્ષા રાખવાવાળા સંયમીથી સ્વરૂપનું અવલોકન, અથવા શ્રુતચા-  
રિત્રરૂપ ધર્મનું આરાધન બની શકતું નથી. જ્યાં સુધી આ પ્રકારની પ્રવૃત્તિ  
સંયમીમાં ઉત્પન્ન નથી થતી ત્યાં સુધી તે પોતાના કર્તવ્ય માર્ગથી અલગ જ  
રહે છે. તેની આત્મા અનાદિ કાળથી સંસક્ત ( લાગેલા ) મિથ્યાત્વ અવિરતિ



અપિ ચ--‘પુરિસા’ ઇત્યાદિ ।

—પુરિસા ! સચ્ચમેવ સમભિજાણાહિ, સચ્ચસ્સ આ-  
ણાણ સે ઉવટ્ટિણ મેહાવી મારં તરહિ । સહિઓ ધમ્મમાયાય સેયં  
સમણુપસ્સહિ ॥ સૂ૦ ૧૩ ॥

વિષયોંની કી ઓર ચક્કર કાટા કરતા હૈ ઓર મોક્ષકે સાધક ધાર્મિક અનુ-  
ષ્ઠાનકે સંસ્કારોં સે વશ્ચિત રહતા હૈ । ઇસ વાતકા ધ્યાલ કર સૂત્રકાર  
શિષ્યજન કે શિક્ષાર્થ કહતે હૈં કિ—હે શિષ્ય ! યદિ તુમ પરમપુરુષાર્થ  
મોક્ષ કે સાધન કરને મેં અપનેકો શક્તિશાલી સમજતે હો તો તુમ  
સ્વરૂપકા અવલોકન મેં, યા શ્રુતચારિત્રરૂપ ધર્મની આરાધના મેં અપને કો  
વિસર્જિત કર દો । જો એસા નહીં કરતે, વે અનાદિકાલિક મિથ્યાત્વ  
અવિરતિ આદિકી લગી હુઈ વાસનાકે વશ સે વિષયોંકે સંગકે લિયે  
વાહિરી પદાર્થોં મેં પ્રવૃત્તિ કરનેવાલી અપની આત્મા કો ઉસ ઓર સે હટા  
નહીં સકતે । ઇસલિયે તુમ મોક્ષકે સાધક ધાર્મિક અનુષ્ઠાનકે સંસ્કાર  
કો અપને આપમેં પ્રબલતર કરો, તાકિ વિષયમાર્ગની ઓર વઢતી હુઈ  
યહ તુમ્હારી આત્મા ઉસ ઓર ન જા સકે—ઉસ તરફસે નિવૃત્તિ હો જાવે ।  
ઇસ પ્રકારકે વારં વારં કે અભ્યાસ સે આત્માકો અપને નિજરૂપ—સમ્યગ્દર્શન  
સમ્યગ્જ્ઞાન ઓર સમ્યક્ચારિત્ર—મેં સ્થાપિત કરતે હુણ તુમ દુઃખોં કે  
કારણભૂત જ્ઞાનાવરણીયાદિક કર્મોં કે બન્ધન સે મુક્તિ હો જાઓગે ॥૧૨॥

આદિ ભાવનાના વશથી વિષયોની તરફ જ લાગ્યો રહે છે, અને મોક્ષના  
સાધક ધાર્મિક અનુષ્ઠાનના સંસ્કારોથી વશ્ચિત રહે છે. આ વાતનો ખ્યાલ કરી  
સૂત્રકાર શિષ્યજનના શિક્ષાર્થ કહે છે કે—હે શિષ્ય ! જો તું પરમપુરુષાર્થ  
મોક્ષનું સાધન કરવામાં પોતાને શક્તિશાળી સમજતો હોય તો તું સ્વરૂપના  
અવલોકનમાં અગર શ્રુતચારિત્રરૂપ ધર્મની આરાધનામાં પોતાને વિસર્જિત કરી દે.  
જો આમ નથી કરતા તે અનાદિકાલિક મિથ્યાત્વ અને અવિરતિ આદિની લાગેલી  
વાસનાના વશથી વિષયોના સંગ માટે બહારના પદાર્થોમાં પ્રવૃત્તિ કરવાવાળા  
પોતાના આત્માને તે તરફથી હટાવી શકતા નથી, માટે તમે મોક્ષના સાધક ધાર્મિક  
અનુષ્ઠાનના સંસ્કારને પોતે પોતામાં પ્રબલતર કરો, જેથી વિષયમાર્ગની તરફ  
વધતો જો તમારો આત્મા જો તરફ જઈ શકે નહિ—તે તરફથી નિવૃત્તિ થઈ જાય.  
આ પ્રકારના વારંવારના અભ્યાસથી આત્માને—પોતાને નિજરૂપ—સમ્યગ્દર્શન સમ્યગ્-  
જ્ઞાન અને સમ્યક્ચારિત્ર—માં સ્થાપિત કરીને તમે દુઃખોના કારણભૂત જ્ઞાનાવર-  
ણીયાદિક કર્મોના બન્ધનથી મુક્ત થઈ જશો ॥ સૂ૦ ૧૨ ॥



છાયા—પુરુષ ! સત્યમેવ સમભિજાનીહિ, સત્યસ્યાજ્ઞયા સ ઉપસ્થિતો મેધાવી મારં તરતિ । સહિતો ધર્મમાદાય શ્રેયઃ સમનુપચ્યતિ ॥ મૂ० ૧૩ ॥

ટીકા—હે પુરુષ ! સત્યમેવ સમભિજાનીહિ—ગુરુદેવં સાક્ષીકૃત્ય યા શ્રુતચારિત્ર-ધર્મસ્ય ગ્રહણી તથાઽઽસેવની ચ શિક્ષા પરિગૃહીતા, તામ્ અવિસ્મરન્ પરિપાલયે-ત્યર્થઃ । યદ્વા—સત્યઃ=આગમસ્તમેવ સમભિજાનીહિ=ચરણકરણરૂપમાગમોક્તમર્થ પ્ર-તિપાલયેત્યર્થઃ । એતત્ કિમર્થમિત્યાહ—‘સત્યસ્ય’ इत्यादि । સત્યસ્ય=ગુરુદેવં સા-ક્ષીકૃત્ય પરિગૃહીતાયાઃ શ્રુતચારિત્રધર્મસ્ય ગ્રહણ્યા આસેવન્યાશ્ચ શિક્ષાયાઃ જિનપ્ર-વચનસ્ય વા આજ્ઞયા=અનુસરણેન ઉપસ્થિતઃ સન્ મેધાવી=હેયોપાદેયવિવેકકુશલઃ, મારં=સંસારાર્ણવં તરતિ=સમુત્તીર્ણો ભવતિ । કિં ચ—સહિતઃ=હિતેન જ્ઞાનાદિના યુક્તઃ ધર્મમાદાય=શ્રુતચારિત્રલક્ષણં ધર્મં ગૃહીત્વા શ્રેયઃ=શુભં મોક્ષપદં સમનુપચ્યતિ, તીર્થઙ્ક-રાદિભિર્દૃષ્ટં સમ્યગવલોકયતીત્યર્થઃ ॥ મૂ० ૧૩ ॥

ફિર કહતે હૈ—‘પુરિસા’ इत्यादि ।

હે પુરુષ=પરમપુરુષાર્થ કે સાધન કરને મેં સમર્થ ભવ્ય ! ભગવાન્ તથા ગુરુકો સાક્ષી કરકે જો તુમને ગ્રહણી—શ્રુતચારિત્રરૂપ ધર્મકો અંગીકાર કરનેવાલી એવં આસેવની=ઉસ ધર્મકો નિર્દોષ રીતિસે પાલન કરનેવાલી શિક્ષા ગ્રહણ કી હૈ, ઉસે તુમ સ્વપ્ન મેં ભી મત ભૂલો । હસકા અન્તઃ-કરણસે પાલન કરો । અથવા ચરણકરણરૂપ આગમોક્ત અર્થ—(ચરણ-સત્તરી ઓર કરણસત્તરી) કા પાલન કરો । જિનપ્રવચનકી આજ્ઞા કે અનુસાર જો અપની પ્રવૃત્તિ કરતા હૈ વહ હેય ઓર ઉપાદેય કે વિવેકસે કુશલ હો જાતા હૈ । હસ કુશલતાકા યહ ફલ હૈ કિ—વહ સંસારસમુદ્ર સે પાર હો જાતા હૈ । તથા—આત્માકે હિતકારી હોનેસે હિતરૂપ

ફરીથી કહે છે—‘પુરિસા’ इत्यादि.

હે પુરુષ ! = પરમપુરુષાર્થનું સાધન કરવામાં સમર્થ ભવ્ય ! ભગવાન તથા ગુરુને સાક્ષી કરીને જે તમે ગ્રહણી—શ્રુતચારિત્રરૂપ ધર્મને અંગીકાર કરવાવાળી, અને આસેવની—તેને નિર્દોષ રીતિથી પાળવાવાળી શિક્ષા ગ્રહણ કરી છે તેને તમે સ્વપ્નમાં પણ ભૂલો નહિ. તેનું અંતઃકરણથી પાલન કરો. અને ચરણકરણરૂપ આગમોક્ત અર્થ (ચરણસત્તરી અને કરણસત્તરી)નું સેવન કરો. જનપ્રવચનની આજ્ઞાનુસાર જે પોતાની પ્રવૃત્તિ કરે છે તે હેય અને ઉપાદેયના વિવેકથી કુશળ બની જાય છે. તે કુશળતાનું એ ફળ છે કે તે સંસારસમુદ્રથી પાર થઈ જાય છે, તેમજ આત્માના હિતકારી હોવાથી હિતરૂપ જ્ઞાનાદિ શુભોથી યુક્ત

પ્રમાદરહિતસ્ય મહર્ષેર્ગુણા ઉક્તાઃ, અથ પ્રમાદવતો દોષાન્ દર્શયિતુમાદ-  
'દુહઓ' ઇત્યાદિ ।

મૂલમ-દુહઓ જીવિયસ્સ પરિવંદનમાળણપૂયણાણ, જંસિ  
એગે પમાયંતિ ॥ સૂ૦ ૧૪ ॥

છાયા-દ્વિહતો જીવિતસ્ય પરિવન્દનમાનનપૂજનાર્થ, યસ્મિન્ એકે પ્રમાદ્યન્તિ ॥

ટીકા-દ્વિહતઃ=દ્વાભ્યાં રાગદ્વેષાભ્યાં હતઃ રાગદ્વેષવશીભતઃ જીવિતસ્ય=ચપ-  
લાવિલાસચશ્ચલસ્ય ક્ષણભંડુરસ્ય જીવનસ્ય, સુખાર્થ, તથા પરિવન્દનમાનનપૂજ-  
નાર્થ-પરિવન્દનં=સંસ્તવઃ, યથા-'શ્રીમાન્ આયુષ્માન્ ભવે'-ત્યાદિ, તદર્થ, તથા  
માનનં=જનસત્કારઃ, યથા-'અભ્યુત્થાનાસનદાનાદિભિર્જના માં માનયિષ્યન્તી'-તિ  
તદર્થ, તથા પૂજનં, યથા-'સમુપાર્જિતગ્રામજનપદસ્ય મમ દાનમાનપ્રણામસેવાદિભિ-  
ર્જનાઃ પૂજન કરિષ્યન્તી'-તિ, તદર્થ પ્રાણાતિપાતાદિપુ પ્રવર્તતે । એવમ્-એકે=યે કે

જ્ઞાનાદિ ગુણોંસે યુક્ત વહ સંયમી શ્રુતચારિત્રરૂપ ધર્મકી આરાધના કર શુભ  
એવં તીર્થઙ્કરાદિદ્વારા દૃષ્ટ એસે મુક્તિસ્થાનકા દર્શક હોતા હૈ ॥ સૂ૦ ૧૩ ॥

પૂર્વ સૂત્રમેં પ્રમાદરહિત મહર્ષિકે ગુણોંકા કથન ક્રિયા હૈ, અવ પ્રમા-  
દસંપન્ન પ્રાણીકે દોષોંકો દિશ્વલાતે હૈં-'દુહઓ' ઇત્યાદિ ।

જો મનુષ્ય, રાગ એવં દ્વેષ, હન દોનોંસે યુક્ત હૈ વહ વિજલીકે ચમકારે કે  
સમાન ક્ષણભંગુર હસ જીવનકો સુખી કરનેકે લિયે 'આપ લક્ષ્મીવાન્ હોં,  
ચિરંજીવી હોં' ઇત્યાદિ રૂપસે અપની સ્તુતિ કરાનેકે લિયે, 'લોગ મુઝે દેશ્વ  
કર શ્વહે હોંગે, આસનાદિકકે પ્રદાનસે મેરા સન્માન કરેંગે' હસ પ્રકાર  
અન્ય જનોંસે સત્કાર પ્રાપ્તિકે લિયે, તથા 'મુઝે ગ્રામાધિપતિ યા નગરાધિ-  
પતિ દાન, માન, પ્રણામ ઓર સેવા-શુશ્રૂષા આદિસે પ્રતિષ્ઠિત કરેંગે' હસ  
પ્રકાર અપની પૂજાકે લિયે પ્રાણાતિપાતાદિક અકૃત્યોંમેં પ્રવૃત્તિ કરતા હૈ ।

તે સંયમી શ્રુતચારિત્રરૂપ ધર્મની આરાધના કરી શુભ તેમજ તીર્થઙ્કરાદિદ્વારા દૃષ્ટ  
એવા મુક્તિસ્થાનના દર્શક બને છે ॥ સૂ૦ ૧૩ ॥

પૂર્વ સૂત્રમાં પ્રમાદરહિત મહર્ષિના ગુણોંનું કથન કરેલ છે, હવે પ્રમાદ-  
સંપન્ન પ્રાણીના દોષો કહે છે-'દુહઓ' ઇત્યાદિ.

જે મનુષ્ય રાગ અને દ્વેષ, એ બન્નેથી યુક્ત છે તે વીજળીના ચમકારા સમાન  
ક્ષણભંગુર આ હવનને મુખી કરવા માટે 'તમે લક્ષ્મીવાન્ થાઓ ચિરંજીવી થાઓ'  
ઇત્યાદિ રૂપથી પોતાની સ્તુતિ કરાવવા માટે, તથા 'લોક અને દેખીને ઉભા થશે, આસ-  
નાદિકના પ્રદાનથી માંડે સન્માન કરશે' આ પ્રકારે અન્ય જનોથી સન્કાર પ્રાપ્તિ માટે. તથા  
'મને ગ્રામાધિપતિ અગર નગરાધિપતિ દાન, માન, પ્રણામ અને સેવા-શુશ્રૂષા આદિથી  
પ્રતિષ્ઠિત કરશે.' આ પ્રકારે પોતાની પૂજા માટે પ્રાણાતિપાતાદિક અકૃત્યોંમાં પ્રવૃત્તિ

ચન રાગદ્વેષાભિભૂતાઃ અસંયમરતાઃ સ્વાર્થ પરાર્થ વા યસ્મિન્=પરિવન્દનાદૌ પ્રમાદ્યન્તિ= આર્તરૌદ્રધ્યાનલગ્નેન ચેતસા પરિવન્દનાદિરૂપસાવધવ્યાપારેષુ પ્રવૃત્તિરૂપં પ્રમાદં કુર્વન્તિ । તે પ્રમાદકારિણઃ સ્વલુ નિજાત્મનો દુઃખં ન ક્ષપયન્તિ; કિન્તુ કર્મોપચયેન સ્વાત્માનં દુઃસ્વાર્ણવે નિપાતયન્તીતિ ભાવઃ । યદ્વા-‘પમોર્યન્તિ’ ઇતિ પાઠપક્ષે ‘પ્રમો-દન્તે’ ઇતિ જ્ઞાયા । તસ્યાયમર્થઃ -‘જંસિ’ યસ્મિન્ પરિવન્દનાદૌ ‘એગે’ એકે= કેચિત્ પ્રમોદન્તે=હૃણ્યન્તિ-હર્ષ પ્રાપ્નુવન્તિ, ન તત્તસ્ય હિતાયેતિ ભાવઃ ॥ સૂ૦ ૧૪॥

एतत्प्रतिपक्षभूतस्वप्रमादी यत् फलं प्राप्नोति तदाह-‘सहिओ’ इत्यादि ।

इस प्रकारकी चाहनावाले जो कोई भी मुनि हैं वे राग और द्वेषसे युक्त हैं और असंयममें आसक्त हैं । ऐसे प्राणी स्वार्थ अथवा परमार्थका कुछ भी ख्याल न कर सिर्फ अपनी ख्यातिलाभ पूजादिककी चाहनाके आधीन हो आर्त और रौद्र ध्यानमें संलग्नचित्त रहा करते हैं और सावध व्यापारोंमें प्रवृत्ति करनेरूप प्रमादका सेवन करते रहते हैं । ये प्रमादकारी प्राणी निश्चित ही अपनी आत्माके दुःखोंको दूर न कर प्रत्युत कर्मोंके संचयसे स्वयं अपनी आत्माको दुःखरूपी समुद्रमें धकेलते हैं । अथवा सूत्रमें ‘पमायन्ति’ के स्थानमें कहीं ‘पमोयन्ति’ ऐसा भी पाठ है । उसका अर्थ इस प्रकार होता है-जिस परिवन्दन आदिमें कितनेक प्राणी हर्ष मनाते हैं किन्तु वह उसकी आत्मा के हितके लिये नहीं होता ॥ सू० १४॥

इससे भिन्न प्रवृत्ति करनेवाला अप्रमादी मुनि जिस फलको पाता है वह दिखलाते हैं—‘सहिओ’ इत्यादि ।

કરે છે. આ પ્રકારની ચાહનાવાળા જે કોઈ મુનિ છે તે રાગ અને દ્વેષથી યુક્ત છે. અને અસંયમમાં આસક્ત છે. એવા પ્રાણી સ્વાર્થ અથવા પરાર્થનો જરા પણ ખ્યાલ કરતા નથી, ફક્ત પોતાની ખ્યાતિલાભ અને પૂજાદિકની ચાહનાને આધીન થઈ આર્ત અને રૌદ્ર ધ્યાનમાં સંલગ્નચિત્ત રહ્યા કરે છે, અને સાવધ વ્યાપારોમાં પ્રવૃત્તિ કરવારૂપ પ્રમાદનું સેવન કરતા રહે છે. એ પ્રમાદકારી પ્રાણી નિશ્ચિત જ પોતાના આત્માને દુઃખોથી દૂર ન કરતાં પ્રત્યુત કર્મોના સંચયથી સ્વયં પોતાના આત્માને દુઃખરૂપી સમુદ્રમાં નાંખે છે. અથવા સૂત્રમાં ‘પમાયન્તિ’ ના સ્થાનમાં ક્યાંક ‘પમોયન્તિ’ એવો પણ પાઠ છે, તેનો અર્થ આ પ્રકારે થાય છે-જે પરિવંદન આદિમાં કેટલાક પ્રાણી હર્ષ મનાવે છે, પણ તે તેના આત્માના હિત માટે હોતું નથી ॥ સૂ૦ ૧૪ ॥

તેનાથી ભિન્ન પ્રવૃત્તિ કરવાવાળા અપ્રમાદી મુનિ જે ફળને પામે છે તે બતાવે છે—‘સહિઓ’ ઇત્યાદિ.

मूलम्--सहिओ दुःखमच्चत्ताए पुटो नो झंझाएति, पासिमं  
दविए लो गालोगपवंचाओ मुच्चइ-त्तिवेमि ॥ सू० १५ ॥

छाया—सहितो दुःखमात्रया स्पृष्टः न झञ्झायति, पश्येमं द्रविको लोकाऽऽलोक-  
प्रपञ्चान्मुच्यते—इति ब्रवीमि ॥ सू० १५॥

टीका—सहितः=ज्ञानचारित्र्ययुक्तः, दुःखमात्रया शीतोष्णपरीपहसमुत्पन्नया  
व्याध्युपसर्गजनितया वाऽल्पया महत्या वा स्पृष्टो सन् न झञ्झायति=न व्याकुलीभवति,  
कपायं न कुर्यादित्यर्थः । किंच—हे शिष्य ! इमं=वक्ष्यमाणमर्थं, यद्वा—इममुक्तमर्थं  
'संधिं लोगस्स जाणित्ता' इत्यारभ्य 'णो झंझाएति' इत्यन्तेन प्रतिबोधितं,  
पश्य=हेयोपादेयविवेकेन सम्यग् जानीहि । तमेवार्थं दर्शयितुमाह—'द्रविक'

ज्ञान एवं चारित्रसंपन्न संयमी मुनि शीत-उष्ण परीपहसे उत्पन्न  
अथवा कोई व्याधि या उपसर्गसे जनित दुःखकी थोड़ी या बहुत मात्रासे  
स्पृष्ट होता हुआ भी कभी भी आकुलितचित्त नहीं होता है । इस लिये  
हे शिष्य ! इस आगे कहे जानेवाले अर्थको अथवा "संधिं लोगस्स"  
यहां से लगाकर "णो झंझाएति" यहां तक जो कुछ अभी तक अर्थ  
प्रकट किया गया है उसको हेय और उपादेयके विवेकसे वासितअन्तः-  
करण हो तुम पूर्णरूपसे अपने ध्यानमें रखो । "संधिं लोगस्स" यहांसे  
प्रारंभकर "णो झंझाएति" यहां तक जो कुछ भी विषय कहा गया है  
उसका निचोड़ अर्थ यही है कि—रागद्वेषसे रहित मुनि चौदह ( १४ )  
राजुप्रमाण इस लोकमें प्रत्यक्षसे दिखते हुए चतुर्गति में भ्रमणरूप  
व्यवहारसे सदाके लिये मुक्त हो जाता है ।

ज्ञान अने चारित्र-संपन्न संयमी मुनि, शीत, उष्ण परीपहसी उत्पन्न धयेल,  
अथवा डोछ व्याधि अगर उपसर्गधी जनित थोड़ी अगर वधारेहुःअनी मात्राधी  
स्पृष्ट भनवा छतां पणु इदि पणु आकुलितचित्त नधी थतां. भाटे छे शिष्य !  
आगण डडेवाभां आवशे ते अर्थने अथवा "संधिं लोगस्स" अर्द्धीयाधी  
लधने 'णो झंझाएति' त्यां सुधी ने डंछ अत्यार सुधी अर्थ प्रगट डरेल  
छे तेने छेय अने उपादेयना विवेकधी वासितअंतःकरणु अनी तमे पूर्णरूपधी  
पोताना ध्यानभां राखे. "संधिं लोगस्स" त्यांधी प्रारंभकरी "णो झंझाएति"  
त्यां सुधी ने डंछ पणु विषय डडेवाभां आवेल छे तेने निचोड अर्थ छे छे  
डे-रागद्वेषधी रहित मुनि चौदह (१४) राजु प्रमाण आ लोकभां प्रत्यक्षधी देखातां  
चतुर्गतिभा भ्रमणरूप व्यवहारधी सदाने भाटे मुक्त धर्म नदय छे.

इत्यादि। द्विकः=रागद्वेषनिर्मुक्तः मुनिरित्यर्थः, लोकाऽऽलोकप्रपञ्चात् चतुर्दश-  
रज्ज्वात्मकलोके आलोकात्=दृश्यमानात् प्रपञ्चात्=चतुर्गतिभ्रमणरूपाद् व्यवहाराद्  
मुच्यते=मुक्तो भवतीत्यर्थः। ' इति ब्रवीमि ' अस्य व्याख्यानं प्राग्वत् ॥सू० १५॥

॥ तृतीयाध्ययनस्य तृतीयोद्देशः संपूर्णः ॥ ३-३ ॥

भावार्थ—“ સંધિ લોગસ્સ ” ઇસ સૂત્રસે લગાકર “ જો જ્ઞાણાણિ ”  
યહાં તક મુનિકે સમ્બન્ધમેં જો કુછ સૂત્રકારને પ્રકટ કિયા હૈ ઉસ પર  
વહ મુનિ યદિ હૃદયકી લગનસે પ્રવૃત્તિયુક્ત હોતા હૈ તો યહ નિશ્ચિત હૈ  
કિ વહ અવશ્ય હી રાગ ઔર દ્વેષસે રહિત હોતા હુઆ ઇસ ચૌદહ (૧૪)  
રાજૂ પ્રમાણ લોકમેં ચારોં ગતિયોંકે ભ્રમણસે મુક્ત હો જાતા હૈ। ‘ તિવેમિ ’  
ઈતિ બ્રવીમિ, ઇસ પદકા વ્યાખ્યાન પહિલેકે સમાન હૈ ॥ સૂ૦ ૧૫ ॥

॥ તૃતીય અધ્યયનકા તૃતીય ઉદ્દેશ સમાપ્ત ॥ ૩-૩ ॥

ભાવાર્થ:—“ સંધિ લોગસ્સ ” એ સૂત્રથી લગાવી “ જો જ્ઞાણાણિ ” ત્યાં  
સુધી મુનિના સંબંધમાં જે કાંઈ સૂત્રકારે પ્રગટ કરેલા છે તે ઉપર તે મુનિ  
જે હૃદયના ભાવથી પ્રવૃત્તિયુક્ત થાય છે તો એ નિશ્ચિત છે કે તે અવશ્ય જ  
રાગ અને દ્વેષથી રહિત બનીને આ ચૌદ (૧૪) રાજૂ પ્રમાણલોકમાં ચાર ગતિ-  
ઓના ભ્રમણથી મુક્ત થઈ જાય છે. ‘તિવેમિ’ ઇતિ બ્રવામિ—આ પદનું વ્યાખ્યાન  
પહેલા સમાન છે. ॥ સૂ૦ ૧૫ ॥

ત્રીજા અધ્યયનનો ત્રીજો ઉદ્દેશ સમાપ્ત ॥ ૩-૩ ॥



## । तृतीयाध्ययनस्य चतुर्थ उद्देशः ।

इहानन्तरतृतीयोद्देशके “न केवलं पापकर्मानाचरणेन मुनिर्भवति, किंतु-अप्रमादशुभभावनापूर्वकसंयमानुष्ठानादेवे”-ति प्रतिबोधितं, तत्र शुभभावना=शुभाध्यवसायः, स च कषायवमनाद् भवति । तस्माद् वान्तवत् कषायास्त्याज्या इति बोधयितुं चतुर्थमुद्देशकं कथयन्नाद्यं सूत्रमाह ‘से वंता’ इत्यादि ।

यद्वा-श्रुतचारित्रलक्षणधर्मे जागरूको वैरोपरतः सन् जार्ति वृद्धिं च विदित्वा निष्कर्मदर्शी यो लोकालोकप्रपञ्चात् प्रमुच्यते, स पुनरेवं प्रमुच्यते इति बोधयितुमाह-‘से वंता’ इत्यादि ।

## तृतीय अध्ययनका चतुर्थ उद्देश ।

तीसरे अध्ययनके तीसरे उद्देशमें “केवल पापकर्मके नहीं करनेसे मुनि नहीं होता है किन्तु अप्रमाद तथा शुभभावनापूर्वक संयमके अनुष्ठानसे ही मुनि-अवस्था प्राप्त होती है ” यह विषय समझाया गया है । अब-“शुभभावना शुभअध्यवसायरूप है । उस शुभअध्यवसायकी प्राप्ति कषायोंके त्यागसे ही होती है । इसलिये “वान्त-वमन किये हुए अन्नकी तरह कषाय छोड़ने योग्य हैं” - इस विषय को समझानेके लिये इस चतुर्थ उद्देशककी प्ररूपणा करते हुए सूत्रकार कहते हैं-‘से वंता’ इत्यादि ।

अथवा—जो श्रुतचारित्ररूप धर्ममें जागरूक संयमी वैरसे रहित होकर तथा जन्म और वाल्यादि-अवस्थाओंको दुःखसहभाविनी जान कर निष्कर्मदर्शी होता है वह लोग में दृश्यमान चतुर्गतियों में भ्रमणरूप प्रपंच

## त्रीज अध्ययनना चोथो उद्देश.

त्रीज अध्ययनना त्रीज उद्देशमां “केवल पाप कर्म नहि करवाधी मुनि यतां नधी. પણ अप्रमाद तथा शुभलावनापूर्वक संयमना अनुष्ठानधी न मुनि अवस्था प्राप्त થાય છે.” આ વિષય સમજાવવામાં આવેલ છે. હવે શુભ લાવના શુભ અધ્યવસાયરૂપ છે. તે શુભ અધ્યવસાયની પ્રાપ્તિ કષાયોના ત્યાગની થાય છે માટે વાન્ત-વમન કરેલા અન્નની માફક કષાય છોડવા યોગ્ય છે આ વિષયને સમજાવવા માટે આ ચોથા ઉદ્દેશની પ્રરૂપણા કરનાં સૂત્રકાર કહે છે-‘સે વંતા’ ઇત્યાદિ.

અથવા—જે શ્રુતચારિત્રરૂપ ધર્મમાં જાગરૂક સંયમી વૈરથી રહિત બનીને તથા જન્મ અને જાત્યાદિ અવસ્થાઓને દુઃખસહભાવિની જાણીને નિષ્કર્મદર્શી થાય છે તે લોકમાં દૃશ્યમાન ચતુર્ગતિઓમાં ભ્રમણરૂપ પ્રપંચથી છુટી જાય છે.

મૂલમ્—સે વંતા કોહં ચ માણં ચ માયં ચ લોભં ચ, એયં પાસગસ્સ  
દંસણં, ઉવરયસત્થસ્સ પલિયંતકરસ્સ, આયાણં સગહઠ્ઠિમ્ ॥સૂ.૦૧॥

છાયા—સ વમિતા ક્રોધં ચ માનં ચ માયાં ચ લોભં ચ । એતત્ પઞ્ચકસ્ય દર્શનં  
ઉપરતશ્ચસ્ય પર્યન્તકરસ્ય, આદાનં સ્વકૃતમિત્ ॥મુ.૦ ૧ ॥

ટીકા—સઃ=શુભાધ્યવસાયપૂર્વકસંયમારાધનપરાયણઃ શ્રમણઃ, ક્રોધં માનં  
માયાં લોભં ચ વમિતા=અપનેતા ભવતિ । અત્રૈકપદેન ક્રોધમાનમાયાલોભાનિતિ  
વક્તવ્યે પૃથક્ પૃથગુપાદાનમેકૈકસ્ય ક્રોધાદેરનન્તાનુબન્ધ્યાદિભેદેન ચતુર્વિધત્વં  
દર્શયતિ । તેષામુપશમો યુગપન્ન સંભવતિ, તસ્માદેકૈકસ્યોપશમાર્થં પૃથક્ પૃથક્ પ્રયત્નો

સે છૂટ જાતા હૈ । યે સવ વાતેં તીસરે ઉદ્દેશકકે અન્તિમ મૂત્રોમેં પ્રકટ કર  
દી ગઈ હૈ । પરન્તુ વહ છૂટતા કેસે હૈ ? સો કહતે હૈ—‘સે વંતા ’ ઇત્યાદિ ।

શુભઅધ્યવસાયપૂર્વક સંયમકી આરાધનામેં તત્પર શ્રમણ-મુનિ  
ક્રોધ, માન, માયા ઓર લોભકા વમિતા-અપનેતા-નાશક હોતા હૈ ।

મૂત્રમેં “ ક્રોધં માનં માયાં લોભં ” ઇસ પ્રકાર ઇન દ્વિતીયાન્ત પદોંકા  
અલગ અલગ સ્વતંત્ર પ્રયોગ ક્રિયા ગયા હૈ, ડસકા કારણ ક્રોધાદિકોંમેં  
એકએકકે અનન્તાનુબન્ધી આદિકે ભેદસે ચાર-ચાર ભેદોં કો દિશ્વાના હૈ ।  
અર્થાત્-સમાસ કરને પર-“ ક્રોધમાનમાયાલોભાન્ ”-એસા એક પદ બન  
જાતા હૈ, ફિર મી ઇસ એક પદકા પ્રયોગ ન કર જો પ્રત્યેક પદ મૂત્રમેં સ્વતન્ત્ર  
વિભક્તિવાલે રચે હૈ ડસકા કારણ ક્રોધ આદિ, અનન્તાનુબન્ધી, અપ્રત્યા-  
ખ્યાન; પ્રત્યાખ્યાનાવરણ એવં સંજ્વલનકે ભેદસે ચાર ૨ પ્રકારકે હૈ, યહ  
બનલાના હૈ । તથા ઇનકા ઉપશમ એક સાથે એક હી જગહ નહીં હોતા હૈ કિન્તુ

એ સઘળી વાતો ત્રીબ્ધ ઉદ્દેશના અંતિમ સૂત્રમાં તથા આ ઉદ્દેશના અન્ય સૂત્રોમાં  
પ્રગટ કરવામાં આવેલ છે. પરન્તુ તે છુટે છે કેવી રીતે ? તે કહે છે—સે વંતા ઇત્યાદિ.

શુભ અધ્યવસાયપૂર્વક સંયમની આરાધનામાં તત્પર શ્રમણ-મુનિ ક્રોધ,  
માન, માયા અને લોભના વમિતા-અપનેતા-નાશક બને છે.

સૂત્રમાં “ ક્રોધં, માનં, માયા, લોભં ” આ પ્રકારે આ દ્વિતીયાન્ત પદોના અલગ  
અલગ સ્વતંત્ર પ્રયોગ કરેલ છે. તેનું કારણ ક્રોધાદિકોમાં એક-એકના અનન્તાનુબન્ધી  
આદિના લેદ્ધી ચાર ચાર લેદ્ધ બતાવવાના છે. અર્થાત્ સમાસ કરવાથી “ ક્રોધમાન-  
માયાલોભાન્ ” એવું એક પદ બને છે. તો પણ આ એક પદનો પ્રયોગ ન કરીને  
જે પ્રત્યેક પદ સૂત્રમાં સ્વતંત્ર વિલક્ષિતવાળા રાખેલ છે તેનું કારણ ક્રોધ આદિ-  
અનન્તાનુબન્ધી, અપ્રત્યાખ્યાન, પ્રત્યાખ્યાનાવરણ અને સંજ્વલનના લેદ્ધી ચાર ચાર  
પ્રકારે છે, તે બતાવવાનું છે. તથા તેનો ઉપશમ એક સાથે એક જ જગ્યા ઉપર



વિધેય इति भावः । किं च-परमार्थतो मुनित्वं क्रोधादिकषायवमनादेव संपद्यते, नान्यथेति स्वबुद्ध्या नाहं कथयामि । किंतु तीर्थंकरस्य श्रीवर्धमानस्वामिनो निरावरणज्ञानत्वाद् दृष्टिपथावतीर्णमिति बोधयितुमाह-‘एतत् पश्यकस्य दर्शनम्’ इत्यादि । एतत्=यदुक्तं क्रोधादिवमनकर्ता मुनिर्भवतीति, तदेतत् पश्यकस्य=पश्यति निरावरणज्ञानत्वाद् जानातीति पश्यः, स एव पश्यकस्तीर्थंकरः श्रीवर्धमानस्वामी, तस्य दर्शनम्=केवलालोकेनावलोकनम्, तदुपदेशान्मया ज्ञातमेतदिति भावः ।

भिन्न ૨ समयमें भिन्न ૨ गुणस्थानोंमें होता है । इस कारण इनके प्रत्येक का उपशम करनेके लिये पृथक्-पृथक्-रूपसे प्रयत्न करना पड़ता है । इस समस्त अभिप्रायको स्पष्ट करनेके लिये सूत्रमें क्रोधादिक पदोंको असमा-सरूपसे स्वतन्त्र विभक्तिमें रखा है ।

तथा-परमार्थ दृष्टિसे मुनिपના ક્રોધાદિકષાયોં का निग्रह करनेसे ही प्राप्त होता है, अन्य रीतिसे नहीं । इस बातको सुधर्मा स्वामी कहते हैं-हे जम्बू ! मैं अपनी निजी कल्पनासे नहीं कहता हूँ किन्तु तीर्थंकर श्री वर्धमान स्वामीने कि जिनका ज्ञान निरावरण है इस बातका साक्षात्कार किया है, अतः उन्हींके कथनानुसार कहता हूँ । इस अपने अभिप्रायको प्रकट करनेके लिये सूत्रमें-“एयं पासगस्स दंसणं” पद रखा है । क्रोधादिक कषायोंका वमन करनेवाला ही मुनि होता है, यह सिद्धान्त भगवान् वर्धमान स्वामीका है । “पश्यति=निरावरणज्ञानत्वात् जानातीति पश्यः, स एव पश्यकः” निरावरणज्ञानशाली होने से जो समस्त त्रिकालवर्त्ती पदार्थोंको

થતો નથી. પણ ભિન્ન ભિન્ન સમયમાં ભિન્ન ભિન્ન ગુણસ્થાનોમાં થાય છે આથી પ્રત્યેકના ઉપશમ કરવા માટે પૃથક્-પૃથક્-રૂપથી પ્રયત્ન કરવો પડે છે. આ તેમાંના સમસ્ત અભિપ્રાયને સ્પષ્ટ કરવા માટે સૂત્રમાં ક્રોધાદિક પદોને અસમાસ-રૂપથી સ્વતંત્ર વિભક્તિમાં રાખેલ છે.

અને પરમાર્થ દૃષ્ટિથી મુનિપણું ક્રોધાદિક્ષાયોંનો નિગ્રહ કરવાથી પ્રાપ્ત થાય છે. અન્ય રીતિથી નહિ. આ વાત માટે શ્રી સુધર્મા સ્વામી કહે છે-હે જમ્બૂ ! મેં મારી પોતાની કલ્પનાથી આ કહ્યું નથી પણ તીર્થંકર શ્રી વર્ધમાન સ્વામી કે જેનું જ્ઞાન નિરાવરણ છે. તેમણે આ વાતનો સાક્ષાત્કાર કરેલ છે, માટે તેમના કથનાનુસાર કહું છું. આ પોતાના અભિપ્રાયને પ્રગટ કરવા માટે સૂત્રમાં-“એયં પાસગસ્સ દંસણં” પદ રાખેલ છે. ક્રોધાદિક્ષ કષાયોંનું વમન કરનારા જ મુનિ અને છે. એ સિદ્ધાંત ભગવાન વર્ધમાન સ્વામીનો છે. “પશ્યતિ-નિરાવરણજ્ઞાનત્વાત્ જાનાતીતિ પશ્યઃ, સ એવ પશ્યકઃ” નિરાવરણજ્ઞાનશાળી સ્વામી જે સમસ્ત

પશ્યકસ્ય વિશેષણમાદ્-‘ઉપરતશસ્ત્રસ્ય’ ઇત્યાદિ । ઉપરતશસ્ત્રસ્ય=ઉપરતમ્-અપ-  
ગતં દ્રવ્યશસ્ત્રં શ્વઙ્ગાદિ, ભાવશસ્ત્રં કષાયરૂપં ચ યસ્માત્ સકાશાત્ સ ઉપરતશસ્ત્ર-  
સ્તસ્ય, અયં ભાવઃ-ક્રોધાદિકષાયવમનમન્તરેણ તીર્થંકરસ્યાપિ સર્વપદાર્થાવભાસકં  
નિરાવરણજ્ઞાનં ન ભવતિ, એવં તદુપદેશાનુસારિણાઽન્યેન મુમુક્ષુણાઽપિ ક્રોધાદિકષા-  
યવમનં કરણીયમિતિ । અપરવિશેષણમાદ્-‘પર્યન્તકરસ્ય’ ઇતિ । પર્યન્તં=સર્વથા  
વિનાશં કર્મણાં કરોતિ તચ્છીલચ્ચેતિ પર્યન્તકરસ્તસ્યૈતદ્ દર્શનમિતિ સમ્બન્ધઃ ।

યુગપત્-એકસાથ-જાનતે હૈં વે પશ્ય હૈં, પશ્યકો હી પશ્યક કહતે હૈં ।  
‘પશ્યક’ શબ્દ તીર્થંકર વર્ધમાન સ્વામીકા વાચક હૈ । કેવલજ્ઞાનરૂપી આલોક  
( પ્રકાશ ) સે દેખનેકા નામ દર્શન હૈ । ભગવાને યહ સમસ્ત વિષય  
અપને કેવલજ્ઞાનરૂપ પ્રકાશસે પ્રત્યક્ષ દેખા હૈ । શ્રી સુધર્માસ્વામી કહતે  
હૈં કિ ઉન્હીંકે ઉપદેશસે ઇસ્કો મૈને જાના હૈ અતઃ ઇસમેં અન્યથાપનકી  
આશંકા હો હી નહીં સકતી હૈ । ભગવાનકા જ્ઞાન નિરાવરણ કૈસે હુઆ ?  
ઇસ વાતકો પ્રકટ કરનેકે લિયે સૂત્રકાર ‘ઉપરતશસ્ત્રસ્ય’ ઇસ વિશેષણ  
કા પ્રયોગ કરતે હૈં । શસ્ત્ર દો પ્રકારકે હૈં-(૧) દ્રવ્યશસ્ત્ર ઓર (૨)  
ભાવશસ્ત્ર । તલવાર આદિ દ્રવ્યશસ્ત્ર હૈં । ક્રોધાદિક કષાય ભાવશસ્ત્ર  
હૈં । જય તક આત્માસે ભાવશસ્ત્રોંકા અભાવ-ઉચ્છેદ નહીં હોતા હૈ તવ  
તક જ્ઞાનમેં નિરાવરણતા નહીં આ સકતી । ભગવાન્ વર્ધમાન સ્વામીને  
ઇનકા અપની આત્માસે સર્વથા વિનાશ કર દિયા હૈ, ઇસીલિયે ઉનકા  
જ્ઞાન નિરાવરણ હૈ । દ્રવ્યશસ્ત્ર ઓર ભાવશસ્ત્ર જિસસે સર્વથા દૂર હો ચુકે

ત્રિકાળવર્તી પદાર્થોનિ યુગપત્-એક સાથે જાણે છે તે પશ્ય છે. પશ્યને જ પશ્યક  
કહેવામાં આવે છે. ‘પશ્યક’ શબ્દ તીર્થંકર વર્ધમાન સ્વામીનો વાચક છે.  
દેવજ્ઞાનરૂપી આલોક ( પ્રકાશ ) થી દેખવાનું નામ દર્શન છે. ભગવાને આ  
સમસ્ત વિષય પોતાના દેવજ્ઞાનરૂપ પ્રકાશથી પ્રત્યક્ષ દેખેલ છે. શ્રી સુધર્મા  
સ્વામી કહે છે કે “તેમના ઉપદેશથી તે જ્ઞાન મેં જાણેલ છે. માટે તેમાં અન્યથા-  
પણાની આશંકા બની શકતી જ નથી ભગવાનનું જ્ઞાન નિરાવરણ કેવી રીતે થયું ?  
આ વાતને પ્રકટ કરવા માટે સૂત્રકાર ‘ઉપરતશસ્ત્રસ્ય’ આ વિશેષણનો પ્રયોગ  
કરે છે. શસ્ત્ર બે પ્રકારના છે. (૧) દ્રવ્યશસ્ત્ર અને (૨) ભાવશસ્ત્ર. તલવાર આદિ  
દ્રવ્યશસ્ત્ર છે. ક્રોધાદિક કષાય ભાવશસ્ત્ર છે. ત્યાં સુધી આત્માથી ભાવશસ્ત્રોને  
અભાવ-ઉચ્છેદ નથી થતો ત્યાં સુધી જ્ઞાનમાં નિરાવરણતા આવી શકતી નથી.

ભગવાન વર્ધમાન સ્વામીએ પોતાના આત્માથી તેનો સર્વથા વિનાશ કરી  
નાખેલ છે, માટે તેમનું જ્ઞાન નિરાવરણ છે. દ્રવ્યશસ્ત્ર અને ભાવશસ્ત્ર બેનાથી

યથા તીર્થંકરઃ કપાયશસ્ત્રવિનિવર્તનાત્ સકલકર્મણાં ક્ષપયિતા, એવમન્યોઽપિ તદુપદેશાનુસારી ભવ્યો ભવતીત્યાહ—‘આદાનમ્’ ઇત્યાદિ। આદાનમ્=આદીયતે =ગૃહ્યતે—આત્મપ્રદેશૈઃ સહ શ્લિષ્યતેઽષ્ટવિધં કર્મ યેન તદાદાનમષ્ટાદશપાપસ્થાનમ્, તત્સ્થિતિહેતુત્વાત્ કપાયા વાઽઽદાનં તદ્વમિતા સ્વકૃતભિદ્ ભવતિ। યઃ સ્વલુકર્મ-ણામાદાનં કપાયાદિ નિરાકરોતિ, સ સ્વકૃતકર્મણાં મેક્ષા ભવતીત્યર્થઃ ॥ મ્ર૦૧ ॥

હૈં उसका नाम उपरतशस्त्र है। जब तक आत्मासे कपायोंका वमन नहीं होगा तब तक, चाहे वे कोई भी क्यों न हों; निरावरणशाली नहीं हो सकते। ज्ञानमें जब तक निरावरणता नहीं आती है तब तक किसी भी पदार्थका साक्षात्कार नहीं हो सकता है। अतः समस्त पदार्थोंको हस्तामलक-वत् प्रकट करनेवाला ज्ञान सर्वज्ञको कपायोंके वमनसे ही प्राप्त होता है। जब यह सिद्धांत निश्चित है तो उन्हींके उपदेशानुसार प्रवृत्ति करनेवालेअन्य मोक्षाभिलाषीजनको भी क्रोधादिक कपायोंका वमन करना आवश्यक है। क्रोधादिक कपायोंके वमन किये बिना ज्ञानमें निरावरणता नहीं आती है। इसकी पुष्टि—‘पलियंतकरस्स-पर्यन्तकरस्य’ इस पदसे करते हैं। यद्यपि यह पद षष्ठ्यन्त है और पश्यकके विशेषणरूपसे ही प्रयुक्त हुआ है, परन्तु यह इस बातकी घोषणा करता है कि तीर्थङ्कर कपायरूप भाव-शस्त्रोंके नाशसे ही सकल कर्मोंके नाशक हुए हैं। अतः क्रोधादिक कपायोंका नाश सकल कर्मोंके नाश होनेमें तथा घानियाके नाशमें एवं केवलज्ञानरूपी निरावरण ज्ञानकी प्राप्तिमें कारण है। इस प्रकार परम्परासम्ब-

સર્વથા દૂર થઈ ચૂકેલ છે તેનું નામ ઉપરતશસ્ત્ર છે, જ્યાં સુધી આત્માથી કપાયોનું વમન નહિ થાય ત્યાં સુધી, ભલે તેઓ કોઈ પણ કેમ ન હોય, નિરાવરણજ્ઞાનશાળી બની શકતા નથી. જ્ઞાનમાં જ્યાં સુધી નિરાવરણતા નથી આવતી ત્યાં સુધી કોઈ પણ પદાર્થનો સાક્ષાત્કાર થતો નથી. માટે સમસ્ત પદાર્થોને હસ્તામલકવત્ પ્રગટ કરવાવાળું જ્ઞાન સર્વજ્ઞને કપાયોના વમનથી જ પ્રાપ્ત થાય છે. જ્યારે આ સિદ્ધાંત નિશ્ચિત છે તો તેના ઉપદેશાનુસાર પ્રવૃત્તિ કરવાવાળા અન્ય મોક્ષાભિલાષીજનને પણ ક્રોધાદિક કપાયોનું વમન કરવું આવશ્યક છે. ક્રોધાદિક કપાયોનું વમન કર્યા વગર જ્ઞાનમાં નિરાવરણતા આવતી નથી. તેની પુષ્ટિ ‘પલિચંતકરસ્સ-પર્યન્તકરમ્મ્ય’ આ પદથી કરે છે, જે કે આ પદ ષષ્ઠ્યન્ત છે, અને પશ્યકના વિશેષણરૂપથી જ પ્રયુક્ત થયેલ છે. તો પણ આ જોવાતની ઘોષણા કરે છે કે તીર્થંકર કપા-યરૂપ ભાવશસ્ત્રોના નાશથી જ સકળ કર્મોના નાશક બનેલ છે. માટે ક્રોધાદિક કપાયોનો નાશ સકળ કર્મોનો નાશમાં તથા ઘાનિયાના નાશમાં તેમજ કેવળજ્ઞાન રૂપી નિરાવરણ જ્ઞાનની પ્રાપ્તિમાં કારણ છે. આ પ્રકારે પરંપરા-સંબંધથી કપાયોનું

નન્વસ્તુ હેયોપાદેયોપદેશેન પરોપકારકરણાત્ તીર્થંકરત્વમ્, કથમેતાવતા સર્વજ્ઞતા તસ્યેતિ चेन्न, यतः सम्यग्ज्ञानरहितो यथोचितं हेयोपादेयोपदेशं कर्तुं न प्रभवति, यथावस्थितैकपदार्थज्ञानमपि न भवति सर्वज्ञतामन्तरेणेति प्रतिबोधयितु-  
माह-‘ जे एगं ’ इत्यादि ।

यद्वा-ननु ‘ एतत् पश्यकस्य दर्शनम् ’ इति यदुक्तं तत्र स पश्यकः किमे-  
कमेव पदार्थं जानाति, आहोस्वित्-अनेकम् ? इति शिष्यजिज्ञासायामाह-  
‘ जे एगं ’ इत्यादि ।

ન્ધસે કષાયોંકા વમન નિરાવરણ જ્ઞાનકા ઉત્પાદક માના જાતા હૈ । જો સકલ કર્મોંકા વિનાશ કરતા હૈ, અથવા કર્મોંકે વિનાશ કરનેકા જિસકા સ્વભાવ હૈ ઉસકા નામ-“ પર્યન્તકર ” હૈ, ઉસકા યહ સિદ્ધાન્ત હૈ । જૈસે તીર્થંકર કષાયશસ્ત્રકી નિવૃત્તિસે સકલ કર્મોંકે વિનાશક હુએ હૈં ઉસી તરહસે ઉનકે ઉપદેશાનુસાર અપની પ્રવૃત્તિ રાખનેવાલા અન્ય ભવ્યજન ભી સકલ કર્મોંકા વિનાશક હોતા હૈ । ઇસી અભિપ્રાયકો પ્રકટ કરનેકે લિયે સૂત્રમ્ ‘ આદાનમ્ ’ પદ રાખા હૈ । આત્માકે પ્રદેશોંકે સાથે અષ્ટવિધ કર્મ જિનસે દૂધ-પાનીકી તરહ એકક્ષેત્રાવગાહરૂપ હોકર ઠહરતે હૈં ઉનકા નામ આદાન હૈ । વે અઠારહ પાપસ્થાન હૈં । અથવા કર્મોંમ્ સ્થિતિબન્ધકા કારણ હોનેસે કષાયેં ભી આદાન હૈં, ઇનકા વમન કરનેવાલા ‘ સગડબ્ધિ ’ સ્વ-કૃતભિદ્-હોતા હૈ, અર્થાત્ જો ભવ્ય કર્મોંકે આદાનભૂત કષાયોંકા નિરાકરણ-વિનાશ કરતા હૈ વહ અપને કિયે હુએ કર્મોંકા વિનાશક હોતા હૈ ॥ સૂ. ૧ ॥

વમન નિરાવરણ જ્ઞાનનું ઉત્પાદક માનવામાં આવે છે. જે સકળ કર્મોના વિનાશ કરે છે અથવા કર્મોના વિનાશ કરવાનો જેનો સ્વભાવ છે તેનું નામ “ પર્યન્તકર ” છે. તેનો એ સિદ્ધાંત છે. જેમ તીર્થંકર કષાયશસ્ત્રની નિવૃત્તિથી સકળ કર્મોના વિનાશક બને છે તે માફક તેના ઉપદેશાનુસાર પોતાની પ્રવૃત્તિ રાખવાવાળા અન્ય ભવ્યજન પણ સકળ કર્મોના વિનાશક બને છે. આ અભિપ્રાયને પ્રગટ કરવા માટે સૂત્રમાં ‘ આદાનમ્ ’ પદ રાખેલ છે. આત્માના પ્રદેશોની સાથે અષ્ટવિધ કર્મો જેનાથી દૂધ-પાણીની માફક એકક્ષેત્રાવગાહરૂપ બનીને રહે છે તેનું નામ આદાન છે. તે અઠાર પાપસ્થાનક છે. અથવા કર્મોમાં સ્થિતિબંધનું કારણ હોવાથી કષાયો પણ આદાન છે. તેનું વમન કરવાવાળા ‘ સગડબ્ધિ ’-સ્વકૃતભિદ્ થાય છે. અર્થાત્ જે ભવ્ય કર્મોના આદાનભૂત કષાયોંકોનું નિરાકરણ-વિનાશ કરે છે તે પોતાના કરેલા કર્મોના વિનાશક બને છે. ॥ સૂ. ૧ ॥

મૂલમ્—જે એગં જાણઈ સે સર્વં જાણઈ, જે સર્વં જાણઈ સે એગં જાણઈ ॥ સૂ૦ ૨ ॥

છાયા—ય એકં જાનાતિ સ સર્વં જાનાતિ, યઃ સર્વં જાનાતિ સ એકં જાનાતિ ॥ મૂ૦ ૨ ॥

તીર્થંકર ભગવાન્ જીવોંકો હેય ઔર ઉપાદેયકા ઉપદેશ દેતે હૈં । એતાવતા પરકે ઉપકારકે કર્તૃત્વસે उनमें तीर्थंकरपना भले ही आ जावे इसमें हमें कोई विवाद नहीं है । परन्तु इससे उनमें सर्वज्ञता कैसे सिद्ध हो सकती है ? ऐसी शङ्का नहीं करनी चाहिये । क्यों कि जब तक आत्मा में पदार्थोंका सम्यग्-वास्तविक ज्ञान नहीं हो जाता है तब तक तीर्थंकर भगवान् उपदेश नहीं देते हैं । जीवोंको उपदेश देना सम्यग्ज्ञान अर्थात् केवलज्ञानके आधीन है । केवलज्ञान उत्पन्न होनेपर त्रिकालवर्ती समस्त पदार्थोंका वास्तविक स्वरूप दर्पणमें प्रतिबिम्बकी तरह प्रतिभासित होने लगता है । केवलज्ञानकी प्राप्ति ही सर्वज्ञता है । इस सर्वज्ञताके बिना एक पदार्थका भी वास्तविक स्वरूप ज्ञात नहीं हो सकता है । इस बात को समझानेके लिये कहते हैं—‘जे एगं’ इत्यादि ।

अथवा—यह जो अभी कहा है कि—‘एयं पासगस्स दंसणं-एतत् पइयकस्य दर्शनम्’ सो शिष्य यहां पर यह प्रश्न करता है कि—सर्वज्ञ क्या एक ही पदार्थ को जानता है या अनेक पदार्थोंको ?’ इस प्रकारके शिष्यके प्रश्नका उत्तर देते हैं—‘जे एगं’ इत्यादि ।

તીર્થંકર ભગવાન જીવોને હેય અને ઉપાદેયનો ઉપદેશ આપે છે. એતાવતા બીજના ઉપકારના કર્તૃત્વથી તેમાં તીર્થંકરપણુ ભલે આવી બાથ તેમાં અમને કોઈ વિવાદ નથી, પરંતુ તેથી તેમાં સર્વજ્ઞતા કેવી રીતે સિદ્ધ થાય છે ? એવી શંકા કરવી બેઈ એ નહિ. કારણ કે ત્યાં સુધી આત્મામાં પદાર્થોનું સમ્યગ્-વાસ્તવિક જ્ઞાન થતું નથી ત્યાં સુધી તીર્થંકર ભગવાન ઉપદેશ આપતા નથી. હવેને ઉપદેશ આપવો સમ્યગ્જ્ઞાન અર્થાત્ કેવળજ્ઞાનને આધીન છે. કેવળજ્ઞાન ઉત્પન્ન થવાથી ત્રિકાળવર્તી સમસ્ત પદાર્થોનું વાસ્તવિક સ્વરૂપ દર્પણમાં પ્રતિબિંબની માફક પ્રતિભાસિત થવા માંડે છે. કેવળજ્ઞાનની પ્રાપ્તિ જ સર્વજ્ઞતા છે. આ સર્વજ્ઞતા વિના એક પણ પદાર્થનું વાસ્તવિક સ્વરૂપ જ્ઞાન થઈ શકતું નથી. આ વાતને સમજાવવા માટે કહે છે—‘જે એગં’ ઇત્યાદિ.

અથવા એ જે સમજા કર્યું કે ‘એયં પાસગસ્સ દંસણ-એતત્ પઇયકસ્ય દર્શનમ્’ તેથી શિષ્ય આ કેટલે એ પ્રશ્ન કરે છે કે—સર્વજ્ઞ શું એક જ પદાર્થને જાણે છે કે અનેક પદાર્થોને ? આ પ્રકારના શિષ્યના પ્રશ્નનો ઉત્તર આપે છે ‘જે એગં’ ઇત્યાદિ.

ટીકા-યઃ એકં=જીવદ્રવ્યમ્ અજીવદ્રવ્યં વા દ્રવ્યક્ષેત્રકાલભાવતઃ, અતીતાનાગતવર્તમાનૈઃ સર્વપર્યાયૈશ્ચ જાનાતિ, સ સર્વં જાનાતિ । સકલપદાર્થસમ્યગ્જ્ઞાનમન્તરેણૈ-કસ્ય કસ્યચિત્ પદાર્થસ્ય દ્રવ્યક્ષેત્રાદિનાઽતીતાનાગતવર્તમાનસર્વપર્યાયત્તથ જ્ઞાનં ન સંભવતીતિ ભાવઃ । ઇમેવેવાર્થં વૉધયિતું કાર્યકારણભાવં પ્રદર્શયન્નાહ—‘યઃ સર્વં જાનાતિ ’ ઇત્યાદિ । યઃ સર્વં=લોકાન્તર્વર્તિ સકલં પદાર્થજાતં જાનાતિ, સ એકં દ્રવ્યં ઘટાદિકં જાનાતિ । અતીતાનાગતવર્તમાનસર્વપર્યાયૈસ્તત્તત્સ્વભાવપ્રાપ્ત્યાજ્ઞા-

જો એક જીવ દ્રવ્યકો, અથવા અજીવ દ્રવ્યકો દ્રવ્ય ક્ષેત્ર કાલ ઓર ભાવસે એવં અતીત અનાગત ઓર વર્તમાનકાલ-સમ્બન્ધી પર્યાયોસે યુક્ત જાનતા હૈ વહ સમસ્ત પદાર્થોં કો જાનતા હૈ । સમસ્ત પદાર્થોં કે સમ્ય-ગ્જ્ઞાન હુએ વિના કોઈ એક વિવક્ષિત પદાર્થ દ્રવ્ય ક્ષેત્ર કાલ ઓર ભાવસે એવં અતીત અનાગત ઓર વર્તમાન સમસ્ત પર્યાયોં સે નહીં જાના જા સકતા હૈ । ઇસી અભિપ્રાયકો સમજાનેકે લિયે કાર્યકારણભાવ દિગ્વલાતે હુએ સૂત્રકાર કહતે હૈ—‘જે સર્વં જાણહ ’ ‘યઃ સર્વં જાનાતિ ’ ઇતિ । જો ઇસ લોકકે ખીતરકે સમસ્ત પદાર્થોં કો જાનતા હૈ વહ એક ઘટાદિક દ્રવ્યકો ખી જાનતા હૈ । ભૂત ભવિષ્યત્ ઓર વર્તમાનકાલ-સમ્બન્ધી જિતની ખી ડસ દ્રવ્યકી પર્યાયોં હૈ વે સમસ્ત ડસ દ્રવ્યકે સ્વભાવ હૈ । ઇન પર્યાયોંસે પરિણત દ્રવ્ય તત્તત્સ્વભાવવાલા હોતા રહતા હૈ । ઇસ પ્રકાર દ્રવ્યમેં ડનર પર્યાયોંસે તત્તત્સ્વભાવકી પ્રાપ્તિ હોનેસે વહ દ્રવ્ય અપને અનાદિ અનન્ત-કાલપનેસે ( ઇસ રૂપસે હુઆ, ઇસ રૂપસે હો રહા હૈ ઓર ઇસ રૂપસે

જે એક જીવદ્રવ્યને, અથવા અજીવદ્રવ્યને દ્રવ્ય ક્ષેત્ર કાળ અને ભાવથી તેમજ અતીત અનાગત અને વર્તમાનકાળ-સંબંધી સમસ્ત પર્યાયોથી યુક્ત બાણ છે તે સમસ્ત પદાર્થોને બાણ છે, સમસ્ત પદાર્થોનું સમ્યગ્જ્ઞાન થયા વિના કોઈ એક વિવક્ષિત પદાર્થનું જ્ઞાન દ્રવ્ય ક્ષેત્ર કાળ અને ભાવથી અને અતીત અનાગત અને વર્તમાન સમસ્ત પર્યાયોથી થઈ શકતું નથી, આ અભિપ્રાય સમ-જાવવા માટે કાર્ય-કારણ ભાવ દરસાવતાં સૂત્રકાર કહે છે—“જે સર્વં જાણહ-યઃ સર્વં જાનાતિ ” ઇતિ. જે આ લોકના ખીતરના સમસ્ત પદાર્થોને બાણ છે તે એક ઘટાદિક દ્રવ્યને પણ બાણ છે. ભૂત ભવિષ્ય અને વર્તમાનકાળ સંબંધી જેટલી પણ તે દ્રવ્યની પર્યાયો છે તે સમસ્ત, દ્રવ્યનો સ્વભાવ છે. તે પર્યાયોથી પરિણત દ્રવ્ય તત્તત્સ્વભાવવાળા બનતા રહે છે. આ પ્રકારે દ્રવ્યમાં તે તે પર્યાયોથી તત્તત્સ્વભાવની પ્રાપ્તિ થવાથી તે દ્રવ્ય પોતાના અનાદિ અનંતકાળપણથી ( આ રૂપથી બન્યા; આ રૂપથી બને છે અને હવે આ રૂપથી બનશે ) તે તે



ઘનન્તકાલતયા સમસ્તવસ્તુસ્વભાવપરિજ્ઞાનાદિત્યર્થઃ । એકસ્ય વસ્તુનઃ સમગ્રસ્વરૂપં સર્વજ્ઞ એવ જાનાતીતિ ભાવઃ ॥ સૂ૦ ૨ ॥

એવં જાનન્ સર્વજ્ઞ એવ સર્વજીવોપકારકમુપદેશં દદાતીત્યાહ—‘સઽવઓ’ ઇત્યાદિ ।  
યદ્વા—સર્વજ્ઞઃ શિષ્યેભ્યઃ પ્રમાદદોષાન્ અપ્રમાદગુણાંશ્ચ કથયતિ—‘સઽવઓ’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્—સઽવઓ પમત્તસ્ય અતિથિ ભયં, સઽવઓ અપ્પમત્તસ્ય નતિથિ ભયં ॥ સૂ૦ ૩ ॥

છાયા—સર્વતઃ પ્રમત્તસ્ય અસ્તિ ભયં, સર્વતોઽપ્રમત્તસ્ય નાસ્તિ ભયમ્ ॥ સૂ૦ ૩ ॥

ટીકા—પ્રમત્તસ્ય=મદ્યાદિપ્રમાદયુક્તસ્ય સર્વતઃ=દ્રવ્યક્ષેત્રકાલભાવતઃ ભયં=ભયકારિત્વાત્ કર્મ અસ્તિ । પ્રમાદવાન્ સ્વલુ જ્ઞાનાવરણીયાદિકમષ્ટવિધં કર્મોપચિનો-  
હોગા ) ડન ડન સ્વભાવોંવાલા જાન લિયા જાતા હૈ । અર્થાત્ એક વસ્તુકા સમસ્ત સ્વરૂપ સર્વજ્ઞ હી જાનતે હૈ ॥ સૂ૦ ૨ ॥

હસ પ્રકાર સમસ્ત દ્રવ્યોંકો જાનનેવાલે સર્વજ્ઞ હી સમસ્ત જીવોંકે લિયે હિતકારી ઉપદેશ દેતે હૈ । હસ વાતકો સૂત્રકાર દિસલાતે હૈ—  
‘સઽવઓ’ ઇત્યાદિ ।

અથવા—સર્વજ્ઞ સ્વયં અપને શિષ્યોંકે પ્રતિ પ્રમાદકે દોષોંકો ઓર અપ્રમાદકે ગુણોંકો પ્રદર્શિત કરતે હૈ—‘સઽવઓ’ ઇત્યાદિ ।

મદ્યાદિપ્રમાદસેવી વ્યક્તિ, દ્રવ્ય ક્ષેત્ર કાલં ઓર ભાવસે ભય-ભય-કારી હોનેસે કર્મ-કા વન્ધ કરતા હૈ । ‘ભય’ શબ્દકા અર્થ કર્મ હૈ, ક્યોં કિ કર્મ જીવોંકો સદા ભયકારી હોતે હૈ હસલિયે યહાં કાર્યમેં કારણ કા ઉપચાર કિયા ગયા હૈ । ભય, કર્મોં કા કાર્ય હૈ ઓર કર્મ, ભય કે કારણ હૈ । પ્રમાદવાલા વ્યક્તિ નિશ્ચયસે જ્ઞાનાવરણીયાદિક આઠ પ્રકાર

સ્વભાવોવાળા બાણી લેવામાં આવે છે. અર્થાત્ એક વસ્તુનું સમસ્ત સ્વરૂપ સર્વજ્ઞ જ બાણે છે ॥ સૂ૦ ૨ ॥

આ પ્રકારે સમસ્ત દ્રવ્યોને બાણવાવાળા સર્વજ્ઞ જ સમસ્ત છવોને માટે હિતકારી ઉપદેશ દે છે. આ વાતને સૂત્રકાર બતાવે છે—‘સઽવઓ’ ઇત્યાદિ.

અથવા સર્વજ્ઞ સ્વયં પોતાના શિષ્યો પ્રતિ પ્રમાદના દોષોને અને અપ્રમાદના ગુણોને પ્રદર્શિત કરે છે—‘સઽવઓ’ ઇત્યાદિ.

મદ્યાદિપ્રમાદસેવી છવ દ્રવ્ય ક્ષેત્ર કાળ અને ભાવથી ભય-ભયકારી હોવાથી કર્મનો બંધ કરે છે. ‘ભય’ શબ્દનો અર્થ કર્મ છે. કારણ કે કર્મ જ છવોને સદા ભયકારી હોય છે. માટે આ ઠેકાણે કાર્યમાં કારણને ઉપચાર કરેલ છે. ભય, કર્મોનું કાર્ય છે અને કર્મ, ભયનું કારણ છે. પ્રમાદવાળો છવ



તિ । સ ચ દ્રવ્યતઃ સર્વેરાત્મપ્રદેશૈઃ કર્મ ગૃહ્ણતિ, ક્ષેત્રતઃ=પદ્મુ દિશુ, કાલતોઽનુ-  
સમયં, ભાવતોઽષ્ટાદશભિઃ સ્થાનૈઃ, પશ્ચવિધેન વા પ્રમાદેન, એવં કર્મ સર્વતઃ પ્રમાદિનં  
વધ્નાતીત્યર્થઃ । યદ્વા-‘સર્વતઃ’ इत्यस्य ‘सर्वत्र’ इत्यर्थः । यथा चौरस्य  
करच्छेदन-शूलादिभेदन-कणादिताडन-कठिनतरराजकीययन्त्रणादिभयमस्मिन् लोके,  
परलोकेऽपि नरकनिगोदादियातनाभयं भवति, तथा-प्रमत्तस्य सर्वत्र भय-  
मित्यर्थः । प्रमादरहितस्य तु नास्ति भयमित्याह-‘सर्वतोऽप्रमत्तस्य’ इत्यादि ।  
अप्रमत्तस्य=प्रमादरहितस्य आत्मकल्याणाय संयमाराधने जाग्रत इत्यर्थः, सर्वतः=  
ऐहिकामुष्मिकदुःखकारणात् संसाराद् भयं नास्ति । प्रमादरहितस्य संसारो न  
भवतीत्यर्थः ॥ मृ० ३ ॥

કે કર્મોંકા વન્ધક હોતા હૈ । વહ દ્રવ્યકી અપેક્ષા સમસ્ત આત્મપ્રદેશોંસે  
કર્મોંકા ગ્રહણ કરનેવાલા હોતા હૈ । ક્ષેત્રકી અપેક્ષા ષટ્-છહ-દિશાઓં  
મેં, કાલકી અપેક્ષા પ્રત્યેક સમયમેં, ભાવકી અપેક્ષા અઠારહ (૧૮) પાપ  
સ્થાનોંસે, અથવા પાંચ પ્રકારકે પ્રમાદસે કર્મોંકા વન્ધક હોતા હૈ । ઇસ  
પ્રકાર ઉસકે સવતરફસે કર્મોંકા વન્ધ હોતા રહતા હૈ । અથવા ‘સર્વતઃ’  
‘સર્વ પ્રકારસે’ ઇસકે સ્થાનમેં ‘સર્વત્ર’ એસા અર્થ કરને પર-પ્રમાદી કે  
લિયે ‘સર્વત્ર’-સવ જગહ-ભય હોતા હૈ, એસા અર્થવોધ હોતા હૈ । યહાં  
“ભય” શબ્દકા અર્થ ‘હર’ હૈ જિસ પ્રકાર ચોરકે લિયે ઇસ લોકમેં  
હાથોંકે કટને, શૂલાદિસે ભિદને, કણા-ચાવુક આદિસે તાડને આદિ રૂપસે  
કઠિનતર રાજકીય યન્ત્રણાઓં-કણ્ટોં-કે ભોગને કા ભય હોતા હૈ, તથા  
પરલોકમેં ભી નરક-નિગોદાદિકકે અનેક કણ્ટોંકે સહનેકા ભય હોતા  
હૈ, ઇસીતરહસે પ્રમાદી પ્રાણીકો સર્વત્ર ભય હી ભય હૈ । આત્મકલ્યાણ

નિશ્ચયથી જ્ઞાનાવરણીયાદિક આઠ પ્રકારના કર્મોંનો બંધક થાય છે. તે દ્રવ્યની  
અપેક્ષા સમસ્ત આત્મપ્રદેશોથી કર્મોંના ગ્રહણ કરવાવાળા બને છે. ક્ષેત્રની અપેક્ષા  
ષટ્-છ દિશાઓમાં, કાળની અપેક્ષા પ્રત્યેક સમયમાં, ભાવની અપેક્ષા અઠાર  
પાપસ્થાનોથી અથવા પાંચ પ્રકારના પ્રમાદથી કર્મોંનો બંધક થાય છે, આ પ્રકારે  
તેને સઘળી બાબતથી કર્મોંનો બંધ થતો રહે છે. અથવા ‘સર્વતઃ=સર્વપ્રકારથી’ તેના  
સ્થાનમાં ‘સર્વત્ર’ એવો અર્થ કરવાથી પ્રમાદી માટે ‘સર્વત્ર’ દરેક જગ્યાએથી  
ભય થાય છે, એવો અર્થબોધ થાય છે. આ ઠેકાણે ભય શબ્દનો અર્થ ‘હર’ છે.  
જે પ્રકારે ચોર માટે આ લોકમાં ખડ્ગાદિથી હાથોનું કાપવું, શૂલાદિથી ભેદાવું,  
કણા-ચાવુક આદિથી માર બાવો આદિય કઠિનતર રાજકીય યન્ત્રણાઓ-કણ્ટો-ને  
ભોગવવાનો ભય હોય છે, તથા પરલોકમાં પણ નરકનિગોદાદિક અનેક કણ્ટોને  
સહનકરવાનો ભય હોય છે. તેવી રીતે પ્રમાદી પ્રાણીને સર્વત્ર ભય જ ભય છે.

ઇહ કપાયાધિકારો વર્તેતે, તદ્વમનં દ્વિવિધમ્-ઉપશમનવમનં, ક્ષપણવમનં ચ । તત્રોપશમનવમનં નામનમિતિ પર્યાયસ્તદભિપ્રાયેનાહ—‘ જે એગં નામે ’ इत्यादि ।

यद्वा—कपायाभावात् प्रमादाभावः, तदभावाच्च सकलमोहनीयाऽभावः, तस्मात् सकलकर्मक्षयः, तदेवमेकाभावे सति बहूनामभावः, बहूनामभावे सति एकाभावः; इत्येवं गतप्रत्यागतरूपेण कार्यकारणभावं दर्शयितुमाह—‘ જે એગં ’ इत्यादि ।

करनेके लिये जो संयमकी आराधनामें जागरूक हैं ऐसे अप्रमादी प्राणीको कहीं भी भय नहीं होता है । वे न इस लोकमें दुःखी होते हैं और न परलोकमें । अधिक क्या कहा जाय ? वे इस संसारके भयसे ही निर्मुक्त हो जाते हैं । इहलोकसम्बन्धी और परलोकसम्बन्धी दुःखका कारण यह संसार ही उन्हें फिरसे प्राप्त नहीं होता, अर्थात् वे सदा के लिये मुक्त हो जाते हैं ॥ सू० ३ ॥

यहां पर कपायका अधिकार है । कपायका वमन दो प्रकारका है—(१) उपशमनवमन, (२) क्षपणवमन । कपायोंका उपशम होना यह उपशमनवमन है, तथा कपायोंका क्षय होना यह क्षपणवमन है । उपशमन-वमनका पर्यायान्तर शब्द नामन है । इस अभिप्रायसे कहते हैं—‘ જે એગં ’ इत्यादि ।

अथवा—कपायोंके अभावसे प्रमादका अभाव, प्रमादके अभावसे समस्त मोहनीयका अभाव, उससे सकल कर्मोंका क्षय होता है । इस प्रकार एकका अभाव होने पर बहुतोंका अभाव, बहुतोंका अभाव होने

આત્મકલ્યાણ કરવા માટે જે સંયમની આરાધનામાં જાગરૂક છે એવા અપ્રમાદી પ્રાણીઓને કાંઈ પણ ભય હાંતો નથી. તેઓ નથી આ લોકમાં દુઃખી થતાં. નથી પરલોકમાં દુઃખી થતાં અધિક શું કહેવું ? તેઓ આ સંસારના ભયથી જ નિર્મુક્ત થઈ જાય છે. આ—લોકસંબંધી અને પરલોકસંબંધી દુઃખનું કારણ આ સંસાર જ તેને ફરીથી પ્રાપ્ત થતો નથી, અર્થાત્ તે સદાને માટે મુક્ત થઈ જાય છે ॥ સૂ. ૩ ॥

આ ઠેકાણે કપાયનો અધિકાર છે. કપાયોનું વમન બે પ્રકારે છે. (૧) ઉપશમવમન (૨) ક્ષપણવમન. કપાયોનું ઉપશમ થવું તે ઉપશમવમન છે. તથા કપાયોનું ક્ષય થવું તે ક્ષપણવમન છે. ઉપશમવમનનો પર્યાયાન્તર શબ્દ નામન છે આ અભિપ્રાયથી કહે છે—‘ જે એગં ’ ઇત્યાદિ.

अथवा—कपायेना अलावथी प्रमादना अलाव, प्रमादना अलावथी समस्त मोहनीयना अलाव, तेनाथी सकल कर्मोना क्षय थाय છે. આ પ્રકારે એકનો અલાવ થવાથી બહુનો અલાવ, બહુનો અલાવ થવાથી એકનો અલાવ થાય છે.

મૂલમ્—જે એગં નામે સે વહું નામે, જે વહું નામે સે એગં નામે ॥ સૂ૦ ૪ ॥

છાયા—યઃ એકં નામયતિ સ વહૂન્ નામયતિ, યો વહૂન્ નામયતિ, સ એકં નામયતિ ॥ સૂ૦ ૪ ॥

ટીકા—યઃ એકમ્=અનન્તાનુવન્ધિનં ક્રોધં નામયતિ=ઉપશમયતિ સ વહૂન્=અપ્રત્યાખ્યાનાદીન્ તદ્ભેદાન્ માનાદીન્ વા નામયતિ ।

યદ્વા—યઃ એકં સપ્રકૃતિકં મોહનીયં નામયતિ=ઉપશમયતિ, સ વહૂનિ=તદવશિષ્ટાનિ સપ્રકૃતિકાનિ જ્ઞાનાવરણીયાદિકાનિ સર્વાણ્યપિ નામયતિ=ઉપશમયતિ । યો વહૂન્=સ્થિતિશેષાન્ નામયતિ=ઉપશમયતિ, સ એકમ્=અનન્તાનુવન્ધિનં ક્રોધં મોહનીયં વા નામયતિ=ઉપશમયતિ । અત્ર નામનમ્-ઉપશમઃ ક્ષપણં વા । તથા ચાયમપ્યર્થઃ—

પર એકકા અભાવ હોતા હૈ । ઇસ પ્રકાર ગત-પ્રત્યાગત ( હેર-ફેર ) સે કાર્ય-કારણ ભાવકો દિશાનેકે લિયે કહતે હૈ—‘ જે એગં ’ ઇત્યાદિ ।

જો અનન્તાનુવન્ધી ક્રોધકા ઉપશમ કરતા હૈ વહ અપ્રત્યાખ્યાન આદિ કષાયોંકા એવં અનન્તાનુવન્ધી લોભાદિકોંકા ઉપશમ કરતા હૈ । યદ્વા—જો એક મોહનીય કર્મકા ઉપશમ કરતા હૈ વહ ઉસસે અવશિષ્ટ જ્ઞાનાવરણીય આદિ સમસ્ત કર્મપ્રકૃતિયોંકા ભી ઉપશમ કરતા હૈ । જો સ્થિતિસે અવશિષ્ટ કર્મોંકા ઉપશમ કરતા હૈ વહ એક અનન્તાનુવન્ધી ક્રોધ અથવા મોહનીયકા ભી ઉપશમ કરતા હૈ । યહાં નામન શબ્દકા અર્થ ઉપશમન અથવા ક્ષપણ હૈ । ઉપશમનકી અપેક્ષાસે યહ વ્યાખ્યા કી હૈ । ક્ષપણકી અપેક્ષાસે વ્યાખ્યા ઇસ પ્રકાર હૈ—

આ પ્રકારે ગત-પ્રત્યાગત ( હેર-ફેર ) થી કાર્ય કારણ ભાવને બતાવવા માટે કહે છે—‘ જે એગં ’ ઇત્યાદિ.

જે અનંતાનુબંધી કષાયોનો અને અનંતાનુબંધી લોભાદિનો ઉપશમ કરે છે, આ ઠેકાણે જે એક મોહનીય કર્મનો ઉપશમ કરે છે તે તેનાથી અવશિષ્ટ જ્ઞાનાવરણીય આદિ સમસ્ત કર્મપ્રકૃતિયોનો પણ ઉપશમ કરે છે. જે સ્થિતિથી અવશિષ્ટ કર્મોનો ઉપશમ કરે છે તે એક અનંતાનુબંધી ક્રોધ અથવા મોહનીયનો પણ ઉપશમ કરે છે. આ ઠેકાણે નામન શબ્દનો અર્થ ઉપશમ અથવા ક્ષપણ છે. ઉપશમની અપેક્ષાથી આ વ્યાખ્યા કરેલ છે. ક્ષપણની અપેક્ષાથી વ્યાખ્યા આ પ્રકારે છે—

યઃ એકમ્-નામયતિ=ક્ષપયતિ, સ વહૂનપિ નામયતિ=ક્ષપયતિ । એકસ્યાનન્તાનુ-  
વન્ધિનઃ ક્રોધસ્ય ક્ષપકો વહૂનાં=તદ્ભેદાનામપ્રત્યાખ્યાનાદીનાં માનાદીનાં વા કપા-  
યાણાં ક્ષપકો ભવતીતિ । યદ્વા-એકસ્ય મોહનીયસ્ય ક્ષપકઃ, વહૂનાં તદવશિષ્ટાનાં સર્વાસાં  
પ્રકૃતીનાં ક્ષપકો ભવતીતિ । તથા-યો વહૂનાં ક્ષપકઃ, સ એકસ્ય ક્ષપક ઇતિ ॥મૂ. ૪॥

વહુકર્મોપશમેનૈકકર્મોપશમેન વા વિના મોહનીયસ્યોપશમો ન ભવતિ, તથા વહુ-  
કર્માભાવમન્તરેણ એકકર્માભાવમન્તરેણ વા મોહનીયકર્મણઃ ક્ષયો ન ભવતિ । ત-  
સ્માદેવ કારણાજ્જન્તૂનાં વહુવિધદુઃસ્વસમુદ્ભવ ઇત્યાહ-‘ દુઃસ્વં ’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્-દુઃસ્વં લોગસ્સ જાણિત્તા વંતા લોગસ્સ સંજોગં જંતિ  
ધીરા મહાજાણં, પરેણ પરં જંતિ, નાવકંસ્વંતિ જીવિયં ॥સૂ. ૫॥

છાયા-દુઃસ્વં લોકસ્ય જ્ઞાત્વા વાન્ત્વા લોકસ્ય સંયોગં યાન્તિ ધીરા મહાયાનં,  
પરેણ પરં યાન્તિ, નાવકાહ્સન્તિ જીવિતમ્ ॥ મૂ. ૫ ॥

જો એકકા ક્ષય કરતા હૈ વહુ વહુતોંકા ક્ષય કરતા હૈ । એક અન-  
ન્તાનુવન્ધી ક્રોધકા ક્ષપક અપ્રત્યાખ્યાન આદિ કપાયોંકા અથવા અપને  
ભેદસ્વરૂપ માનાદિ-કપાયોંકા ક્ષપક હોતા હૈ । અથવા-એક મોહનીય  
કર્મકા ક્ષપક વહુત-તદવશિષ્ટ ( મોહનીય કર્મસે વાંકી રહી ) સવ કર્મ-  
પ્રકૃતિયોંકા ક્ષપક હોતા હૈ । હસી પ્રકાર જો વહુતોંકા ક્ષપક હોતા હૈ વહુ  
એકકા ભી ક્ષપક હોતા હૈ ॥ સૂ. ૪ ॥

વહુત કર્મોંકે ઉપશમ વિના અથવા એક કર્મકે ઉપશમ વિના મોહ-  
નીય કર્મકા ઉપશમ નહીં હોતા હૈ, તથા વહુત કર્મોંકે અભાવ-ક્ષય-હુએ  
વિના મોહનીય કર્મકા ક્ષય નહીં હોતા હૈ । હસી કારણસે પ્રાણિયોંકો  
અનેક પ્રકારકે દુઃસ્વોંકી ઉત્પત્તિ હોતી હૈ । હસી વાતકો સૂત્રકાર પ્રકટ  
કરતે હૈ—‘ દુઃસ્વં ’ ઇત્યાદિ ।

એ એકનો ક્ષય કરે છે તે બહુનો ક્ષય કરે છે. એક અનંતાનુબંધી  
ક્રોધનો ક્ષપક અપ્રત્યાખ્યાન આદિ કપાયોનો અથવા પોતાના ભેદસ્વરૂપ માનાદિ  
કપાયોનો ક્ષપક થાય છે. અથવા એક મોહનીય કર્મના ક્ષપક બહુ-તદવશિષ્ટ  
( મોહનીય કર્મથી બાકી રહી ) સઘળી કર્મપ્રકૃતિયોનો ક્ષપક થાય છે. આ  
પ્રકારે બહુનો ક્ષપક થાય છે તે એકનો પણ ક્ષપક થાય છે. ॥ સૂ. ૪ ॥

બહુ કર્મોના ઉપશમ વિના અથવા એક કર્મના ઉપશમ વિના મોહનીય  
કર્મનો ઉપશમ થતો નથી. તથા બહુ કર્મોનો અભાવ-ક્ષય વિના, અથવા એક  
કર્મનો અભાવ થયા વિના મોહનીય કર્મનો ક્ષય થતો નથી. તે કારણથી પ્રાણી-  
યોને અનેક પ્રકારના દુઃખોની ઉત્પત્તિ થાય છે. આ વાતને સૂત્રકાર પ્રકટ કરે  
છે—‘ દુઃસ્વં ’ ઇત્યાદિ.

ટીકા—લોકસ્ય=ષડ્જીવનિકાયસ્ય દુઃસ્વં=દુઃસ્વકારણં કર્માસ્તીતિ જ્ઞાત્વા લોકસ્ય=પુત્રકલત્રાદેસ્તથા હિરણ્યસુવર્ણાદેશ્વ સંયોગં=મમત્વલક્ષણં સમ્બન્ધં પરિગ્રહં વાઽષ્ટવિધકર્મહેતું વાન્ત્વા=પરિત્યજ્ય ધીરાઃ=કર્મવિદારણસમર્થાં મહાયાનં=યાન્ત્ય-નેન મોક્ષમિતિ યાનં ચારિત્રમ્, તત્ત્વ ભવકોટિદુર્લભતયા મહદસ્તીત્યાશયેન મહાયાનમિત્યુચ્યતે । યાન્તિ=ગચ્છન્તિ પ્રાપ્નુવન્તીત્યર્થઃ ।

નનુ પ્રાપ્તચારિત્રસ્ય કિમેકેનૈવ ભવેન મોક્ષઃ, ઉત પારંપર્યેણેતિ શિષ્યજિ-જ્ઞાસાયામુભયથાઽપિ મોક્ષો ભવતીતિ વોધયિતુમાહ—‘પરેણ પરં યાન્તિ’ ઇતિ ।

“ઇસ ષડ્જીવનિકાયરૂપ લોકકે દુઃસ્વકા કારણ કર્મ હૈ” એસા જાન કર કર્મોં કે નાશ કરનેમેં શક્તિશાલી ધીર મુનિ, પુત્ર સ્ત્રી આદિ સે, તથા હિરણ્ય સુવર્ણ આદિસે ‘મમેદં’—મમત્વભાવરૂપ સંયોગકા અથવા અષ્ટપ્રકારકે કર્મોંકે આશ્રવકે કારણરૂપ પરિગ્રહકા સર્વથા ત્યાગ કર ચારિત્ર કો અંગીકાર કરતે હૈં । “યાન” શબ્દકા અર્થ ચારિત્ર હૈ—“યાન્તિ અનેન મોક્ષમિતિ યાનમ્” અર્થાત્—જિસકે દ્વારા મોક્ષકો પ્રાપ્ત કરે ઉસ કા નામ “યાન” હૈ, ક્યોંકિ ઇસકી પ્રાપ્તિસે જીવોંકો મુક્તિકા લાભ હોતા હૈ । “યાન” કે સાથ જો “મહા” વિશેષણ લગા હુઆ હૈ વહ ઇસમેં મહત્તાકા વ્યોતક હૈ । ચારિત્રમેં મહત્તા ઇસી લિયે હૈ કિ જીવોંકો ઇસકી પ્રાપ્તિ કરોડોં ભવોંમેં ભી દુર્લભ હૈ । ઇસી અભિપ્રાયસે ચારિત્રકો મહાયાન કહા હૈ ।

જિસકો ચારિત્ર પ્રાપ્ત હો ચુકા હૈ એસે મુનિકી મુક્તિ ઉસી ભવસે હો સકતી હૈ ? અથવા ભવપરમ્પરાસે ?, ઇસ પ્રકારકી શિષ્યકી આશંકાકા

‘આ ષડ્જીવનિકાયરૂપ લોકના દુઃખનું કારણ કર્મ છે.’ એવું જાણીને કર્મોના નાશ કરવામાં શક્તિશાળી ધીર મુનિ, પુત્ર સ્ત્રી આદિથી, તથા હિરણ્ય સુવર્ણ આદિથી ‘મમેદં’—મમત્વભાવરૂપ સંયોગોનો, અથવા અષ્ટ પ્રકારના કર્મોના આશ્રવના કારણરૂપ પરિગ્રહનો સર્વથા ત્યાગ કરી ચારિત્રને અંગીકાર કરે છે. “યાન” શબ્દનો અર્થ ચારિત્ર છે. “યાન્તિ અનેન મોક્ષમિતિ યાનમ્” અર્થાત્ જેના દ્વારા મોક્ષને પ્રાપ્ત કરે તેનું નામ “યાન” છે, કારણ કે તેની પ્રાપ્તિથી જીવોને મુક્તિનો લાભ થાય છે. “યાન”ની સાથે જે “મહા” વિશેષણ લાગેલ છે. તે તેની મહત્તાનો વ્યોતક છે, ચારિત્રમાં મહત્તા એ માટે છે કે જીવોને તેની પ્રાપ્તિ કરોડો લવોમાં પણ દુર્લભ છે. તે અભિપ્રાયથી ચારિત્રને મહાયાન કહેલ છે.

જેને ચારિત્રપ્રાપ્ત થઈ ચુકેલ છે તેવા મુનિની મુક્તિ તે લવથી થઈ શકે છે ? અથવા ભવપરંપરાથી ?, આ પ્રકારની શિષ્યની આશંકાનું સમાધાન કરતાં

तद्योग्यक्षेत्रकालप्राप्त्या लघुकर्मणस्तेनैव भवेन मोक्षः, अन्यस्य तु पारम्पर्येण भवति, इह तदेवोच्यते—

यथा—यथाशक्तिसमाराधितसंयमा आयुषोऽन्ते सति कर्मावशेषेण सौधर्मादिदेवलोकं गच्छन्ति, ततः परं पुनः कर्मभूमावार्थक्षेत्रे सुकुले जन्म लब्ध्वा श्रद्धासंयमादिधर्मापराधनेन सौधर्मादिदेवलोकादपि विशिष्टतरं स्वर्गमनुत्तरोपपातिकं यावत् प्रयान्ति । ततः परं पुनरपि ततश्च्युतास्तत्समुचितमहाविदेहादिक्षेत्रं प्राप्य संपूर्णश्रुतचारित्रधर्मसमाराधनेन कृत्स्नकर्मक्षयादपुनरावृत्तिकं मोक्षमुपगच्छन्ति ।

समाधान करते हुए सूत्रकार कहते हैं—उस मुनिकी मुक्ति दोनों प्रकार से होती है, इसी बातको स्पष्ट करते हैं—‘परेण परं जन्ति-परेण परं यान्ति’ मुक्तिप्राप्तिके योग्य क्षेत्र और कालकी प्राप्तिसे लघुकर्मी जीवों की उसी भवसे, और अन्य जीवोंकी परंपरासे-अन्य-अन्य भवोंसे मुक्ति होती है । इसी बातको टीकाकार स्पष्ट करते हैं—जैसे कितनेक जीव अपनी शक्तिके अनुसार संयमका आराधन करते हैं और संयमका आराधन करते ही वे उस भव सम्बन्धी आयु का अन्त होने पर काल कर कर्मावशेषसे सौधर्मादि देवलोकोंमें उत्पन्न होते हैं । वहाँकी ऋद्धिका गृद्धिरहित हो भोग करते २ उस भव सम्बन्धी आयुका भी अन्त करके वे कर्मभूमि आर्थक्षेत्र और सुकुलमें जन्म पा कर फिरसे श्रद्धा संयमादिक की आराधना करनेमें लवलीन होने के प्रभावसे आयुके अवसानमें सौधर्मादिक देवलोकोंसे भी आगे विशिष्टतर अनुत्तरोपपातिक विमानमें देव हो जाते हैं । वहाँ से च्यव कर

सूत्रकार कहे छे के ते मुनिनी मुक्ति भन्ने प्रकारथी थाय छे. आ वातने स्पष्ट करे छे—‘परेण परं जन्ति’-‘परेण परं यान्ति’ मुक्ति प्राप्तिने योग्य क्षेत्र अने ज्ञाननी प्राप्तिथी लघुकर्मी जिवोनी ते लवथी, अने अन्य जिवोनी परंपराथी-अन्य लवोथी मुक्ति थाय छे, आ वातने टीकाकार स्पष्ट करे छे—जेवी रीते केटलाक जिवो पोतानी शक्ति-अनुसार संयमनुं आराधन करे छे अने संयमनु आराधन करतां करतां ते लवसंयंधी आयुनो अंत थवाथी ते भरीने कर्मावशेषथी सौधर्मादि देवलोको-मां उत्पन्न थाय छे. त्यांनी ऋद्धिनो गृद्धिरहित थछ भोग करतां करतां ते लवसंयंधी आयुनो पणु अंत करीने ते कर्मभूमि आर्थक्षेत्र अने सुकुलमां जन्म पाभीने करीथी श्रद्धासंयमादिकनी आराधना करवामां लवलीन थवाना प्रभावथी आयुना अवसानमां सौधर्मादिक देवलोकोथी पणु आगण विशिष्टतर अनुत्तरोपपातिक विमानमां देव भने छे. त्यांथी यवीने संयम आराधनाने योग्य महाविदेहादि



યદ્વા-પરેણ=ચતુર્થગુણસ્થાનેન, પરં=ચતુર્દશગુણસ્થાનં યાવત્, યાન્તિ=અધિતિષ્ઠન્તિ ।

યદ્વા--પરેણ અનન્તાનુવન્ધિકષાયક્ષયેણ, પરં=મોહનીયક્ષયં ઘાતિ-ભવોપગ્રાહિ-કર્મણાં વા ક્ષયં યાન્તિ ।

એવંભૂતા ધીરાઃ, જીવિતં=આયુઃ, નાવકાઙ્ક્ષન્તિ=કિયદ્ વ્યતીતં, કિયદવ-શિષ્ટમિતિ ન વિભાવયન્તિ-દીર્ઘજીવિત્વમસંયમજીવિત્વં વા નેચ્છન્તીત્યર્થઃ ॥મુ.૦૫॥

સંયમ આરાધનાકે યોગ્ય મહાવિદેહાદિ ક્ષેત્રોંમેં જન્મ પ્રાપ્ત કર ફિર સમ્પૂર્ણ શ્રુતચારિત્રધર્મકી આરાધનાકે પ્રભાવસે સમસ્ત કર્મોંકા ક્ષયકર અપુનરાવૃત્તિસ્વરૂપ મોક્ષસ્થાન મેં જા વિરાજતે હેં ।

ભાવાર્થ—‘ ચારિત્રપ્રાપ્ત મુનિ ઉસી ભવસે અથવા અન્યભવ-સે ખી કયા મોક્ષ જાતે હેં ? ’ એસી શિષ્યકી આશંકાકા શાસ્ત્રકાર ઉત્તર દેતે હેં કિ-જો સંયમકી આરાધના કરતે હેં વે જીવ ઉસી ભવમેં, અથવા ઉસ ભવમેં મોક્ષ ન જા કર અન્ય ભવોંસે ખી મુક્તિકા લાભ કર લેતે હેં । જવ તક વે મુક્તિકા લાભ નહીં કર લેતે તવ તક વે ઉત્તમ મનુષ્ય-પર્યાય એવં દેવપર્યાયમેં ઉત્પન્ન હોતે રહતે હેં । મુક્તિયોગ્ય ક્ષેત્ર ઓર કાલ કી પ્રાપ્તિ હોતે હી પૂર્ણ સંયમકી આરાધનાકે પ્રભાવસે ઘાતિયા ઓર અઘાતિયા કર્મોંકા સર્વથા વિનાશ કર પંચમગતિ-મુક્તિકા લાભ કર લેતે હેં ।

અથવા—“ પરેણ પરં યાન્તિ ” ઇસકા યહ ખી અર્થ હોતા હૈ કિ-જો કર્મોંકે નાશ કરનેકી શક્તિસે સમ્પન્ન વીર હેં વે ‘ પરેણ ’ ચતુર્થ ગુણ-

ક્ષેત્રોમાં જન્મ પ્રાપ્ત કરી કરીથી શ્રુતચારિત્ર ધર્મની આરાધનાના કારણથી સમસ્ત કર્મોંનો ક્ષય કરી અપુનરાવૃત્તિસ્વરૂપ મોક્ષસ્થાનમાં જઈ બિરાજે છે.

ભાવાર્થ—‘ ચારિત્રપ્રાપ્ત મુનિ તે લવથી અથવા અન્ય લવથી પણ શું મોક્ષ જાય છે ? ’ એવી શિષ્યની આશંકાનો શાસ્ત્રકાર ઉત્તર દે છે કે જે સંયમની આરાધના કરે છે તે જીવ તેજ લવમાં અથવા તેલવથી મોક્ષ ન જતાં અન્ય લવોથી પણ મુક્તિનો લાભ કરી લે છે. જ્યાં સુધી તે મુક્તિનો લાભ નથી કરી લેતા ત્યાં સુધી તે ઉત્તમ મનુષ્યપર્યાય તેમજ દેવપર્યાયમાં ઉત્પન્ન થતા રહે છે, મુક્તિયોગ્ય ક્ષેત્ર અને કાળની પ્રાપ્તિ થતાં જ પૂર્ણ સંયમની આરાધનાના લાવથી તે ઘાતિયા અને અઘાતિયા કર્મોંનો સર્વથા વિનાશ કરી પંચમગતિ-મુક્તિનો લાભ કરી લે છે.

અથવા—“ પરેણ પરં યાન્તિ ” તેનો એ પણ અર્થ થાય છે કે જે કર્મોંનો નાશ કરવાની શક્તિથી સંપન્ન વીર છે તે ‘ પરેણ ’ એથા શુણ્ણસ્થાનથી લગાવી

સ્થાનસે લગા કર ‘પરં’ ચૌદહવેં ગુણસ્થાનતક જાતે હેં, અર્થાત્—  
“ અ-ઇ-ઉ-ઋ-લૃ ” ઇન પાંચ દ્વસ્વ અક્ષરોંકે ઉચ્ચારણ કરનેમેં જિતના  
સમય લગતા હૈ ઉતને સમય પ્રમાણ ઉસ ચૌદહવેં ગુણસ્થાનમેં ઉનકી  
સ્થિતિ હોતી હૈ, વાદમેં વે મુક્તિકો પ્રાપ્ત કરતે હેં ।

અથવા-પ્રથમ ‘પર’ શબ્દકા અર્થ અનન્તાનુબન્ધી કષાયકા ક્ષય  
મી હૈ । દ્વિતીય ‘પર’ શબ્દકા અર્થ-મોહનીયકા નાશ, અથવા ઘાતિ  
અઘાતિ કર્મોંકા વિનાશ હૈ । ઇસકા યહ ફલિતાર્થ હોતા હૈ કિ-અનન્તા-  
નુબન્ધી કષાયકે ક્ષયસે વે મોહનીય કા ક્ષય, અથવા ઘાતિ ઓર અઘાતિ  
કર્મોંકા ક્ષય કરતે હેં ।

ભાવાર્થ—વીરોંકો ચતુર્થ ગુણસ્થાનસે લગા કર જો ચૌદહવેં ગુણસ્થાન  
તકકી પ્રાપ્તિ બતલાઈ ગઈ હૈ ઉસકા યહ તાત્પર્ય હૈ કિ સમકિતકી પ્રાપ્તિ  
જીવોંકો ચૌથે ગુણસ્થાનમેં હો જાની હૈ । સમકિતકા લાભ હી જીવોંકો સા-  
ક્ષાત્ (ભાવચરિત્ર કી અપેક્ષાસે) યા પરમ્પરાસ્પસે મુક્તિકા કારણ હોતા હૈ ।  
જિસ વ્યક્તિકો સમકિતકા લાભ હો જાતા હૈ ઉસ ભવ્યાત્માકા અર્ધ્વપુદ્ગલ  
પરાવર્તનમાત્ર કાલ સંસારમેં રહનેકા રહતા હૈ, ઉસસે અધિક નહીં । ધીરેર  
વહ અપની ઉન્નતિ કરતા હુઆ આગે ૨ કે ગુણસ્થાનોં પર આરોહણ કર  
પરિણામોંકી વિશુદ્ધિકે પ્રભાવસે ઘાતિયા ઓર અઘાતિયા કર્મોંકે નાશ

‘પરં’ ચૌદમા ગુણસ્થાનક સુધી જાય છે, અર્થાત્ “ અ-ઇ-ઉ-ઋ-લૃ ” આ પાંચ  
દ્વસ્વ અક્ષરોના ઉચ્ચારણ કરવામાં જેટલો સમય લાગે છે તેટલા સમય પ્રમાણ  
તે ચૌદમાં ગુણસ્થાનમાં તેની સ્થિતિ થાય છે, બાદમાં તે મુક્તિને પ્રાપ્ત કરે છે.

અથવા પ્રથમ “ પર ” શબ્દનો અર્થ અનંતાનુબંધી કષાયનો ક્ષય પણ  
છે. બીજો ‘પર’ શબ્દનો અર્થ મોહનીયનો નાશ અથવા ઘાતિ અઘાતિ કર્મોનો  
વિનાશ છે. તેનો એ ફલિતાર્થ થાય છે કે અનંતાનુબંધી કષાયના ક્ષયથી મોહ-  
નીયનો ક્ષય, અથવા ઘાતિ અને અઘાતિ કર્મોનો ક્ષય તે કરે છે.

ભાવાર્થ:—વીરોને ચોથા ગુણસ્થાનથી લઈને જે ચૌદમાં ગુણસ્થાન સુધીની પ્રાપ્તિ  
ખતાવવામાં આવી છે તેનો એ તાત્પર્ય છે કે સમકિતની પ્રાપ્તિ હોવાને ચોથા  
ગુણસ્થાનમાં થઈ જાય છે. સમકિતનો લાભ જ હોવાને સાક્ષાત્ (ભાવચરિત્રની  
અપેક્ષાથી) અગર પરંપરા-રૂપથી મુક્તિનું કારણ થાય છે. જે વ્યક્તિને સમકિતનો  
લાભ થઈ જાય છે તે ભવ્યાત્માનો અર્ધ્વપુદ્ગલપરાવર્તનમાત્ર કાલ સંસારમાં  
રહેવાનું રહે છે, તેનાથી અધિક નહિ. ધીરે ધીરે તે પોતાની ઉન્નતિ કરતાં કરતાં  
આગળ આગળના ગુણસ્થાનો ઉપર આરોહણ કરી પરિણામોની વિશુદ્ધિના પ્રભા-

સે પ્રાપ્ત હોનેવાલી મુક્તિકા સ્વામી હો જાતા હૈ । ઇસી અભિપ્રાયકો લે કર “અનન્તાનુબન્ધી કષાયકે ક્ષયસે મોહનીયકા અથવા ઘાતી અઘાતી કર્મોંકા નાશ કર વે મુક્તિકો પાતે હૈ ” યહ વાત કહી ગઈ હૈ, ક્યોં કિ અનન્તાનુબન્ધિચતુષ્ક ઓર દર્શનમોહનીયત્રિકકા જબ તક આત્મામેં ક્ષય આદિ નહીં હોતા હૈ તબ તક સમકિત ગુણકી પ્રાપ્તિ નહીં હોતી હૈ । હસ લિયે અનન્તાનુબન્ધી કષાયકા ક્ષય આદિ હી મોહનીયકર્મકે નાશ આદિમેં કારણ હોતે હૈ । મોહનીયકે અભાવ હોતે હી શેષકર્મ ભી વહુત શીઘ્રતાસે નષ્ટ હો જાતે હૈ । ટીકાકારને—“પરેણ ” ઇસ પદકા અર્થ જો ‘અનન્તાનુબન્ધિકષાયક્ષયેણ’ અર્થાત્-અનન્તાનુબન્ધી કષાયકા ક્ષય રૂપ કિયા હૈ, ઉસકા અભિપ્રાય યહ હૈ કિ શિષ્યને જો યહ પ્રશ્ન કિયા હૈ કિ—“પ્રાપ્તચરિત્રવાલેકી મુક્તિ એક હી ભવસે હોતી હૈ યા અન્ય ભવોં સે હોતી હૈ ?” સો ઇસકા સમાધાન “અન્ય ભવોંસે હોતી હૈ” એસા તો પહિલે કિયા જા ચુકા હૈ । યહાં પર તો “ક્યા એક ભવસે હોતી હૈ ?” ઇસકા સમાધાન કિયા ગયા હૈ, ક્યોં કિ અનન્તાનુબન્ધિકષાયચતુષ્ક એવં દર્શનમોહનીયત્રિકકે ક્ષયસે જીવોંકો ક્ષાયિક-સમ્યક્ત્વકા લાભ હોતા હૈ । ક્ષાયિકસમ્યક્ત્વી યદિ ક્ષયકશ્રેણિ પર આરૂઢ હોતે હૈ તો નિયમસે ઉસી ભવસે મુક્તિ પ્રાપ્ત કર લેતે હૈ ।

વથી ઘાતિયા અને અઘાતિયા કર્મોંના નાશથી પ્રાપ્ત થવાવાળી મુક્તિનો સ્વામી થઈ જાય છે. આ અભિપ્રાયને લઈને ‘અનંતાનુબંધી કષાયના ક્ષયથી મોહનીયનો અથવા ઘાતી અઘાતી કર્મોંનો નાશ કરી તે મુક્તિને પ્રાપ્ત કરે છે.’ એ વાત કહેવાઈ ગઈ છે કારણ કે અનંતાનુબંધિચતુષ્ક અને દર્શનમોહનીયત્રિકનો જ્યાં સુધી આત્મામાં ક્ષય આદિ નથી થતો ત્યાં સુધી સમકિત-ગુણની પ્રાપ્તિ થતી નથી. તેથી અનંતાનુબંધી કષાયનો ક્ષય આદિ મોહનીય કર્મના નાશ આદિમાં કારણ થાય છે. મોહનીયનો અભાવ થતાં જ શેષ કર્મ પણ ખડું શીઘ્રતાથી વિનષ્ટ થઈ જાય છે. ટીકાકારે “પરેણ ” આ પદનો અર્થ જે “અનન્તાનુબન્ધિકષાયક્ષયેણ”—અર્થાત્ અનંતાનુબંધી કષાયનો ક્ષયરૂપ કરેલ છે તેનો અભિપ્રાય છે કે શિષ્યે જે એ પ્રશ્ન કરેલ છે કે—“પ્રાપ્તચરિત્રવાળાની મુક્તિ એક જ ભવથી થાય છે ?” અથવા અન્ય ભવથી થાય છે.’ તો તેનું સમાધાન ‘અન્ય ભવોંથી થાય છે’ એવું તો પહેલાં કહી ચુકેલ છે. આ ઠેકાણે તો ‘શું એક ભવથી થાય છે ?’ તેનું સમાધાન કરવામાં આવેલ છે. કારણ કે અનન્તાનુબંધિકષાયચતુષ્ક અને દર્શનમોહનીયત્રિકના ક્ષયથી જીવોને ક્ષાયિક-સમ્યક્ત્વનો લાભ થાય છે, ક્ષાયિકસમ્યક્ત્વી જે ક્ષયક શ્રેણી ઉપર આરૂઢ થાય છે તો તે નિયમથી તે ભવમાં મુક્તિ પ્રાપ્ત કરી લે છે.

યશ્વાનન્તાનુવન્ધ્યાદિક્ષણપ્રવૃત્તિઃ, સ કિમેકસ્યૈવ ક્ષયે પ્રવર્તતે ઉતાનેકસ્યેત્યાહ  
-‘ એગં વિગિંચમાણે ’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્-એગં વિગિંચમાણે પુઢો વિગિંચઙ્, પુઢો વિગિંચમાણે  
એગં વિગિંચઙ્ ॥ સૂ૦ ૬ ॥

એસે વીર “ નાવકાઙ્ક્ષન્તિ જીવિતમ્ ” હસ વાતકા વિચાર નહીં  
કરતે હૈં કિ મેરી આયુ કિતની વ્યતીત હો ગઈ હૈં ઓર કિતની અવ  
વાકી હૈં ? । ક્યોં કિ દીર્ઘ આયુષ્ય મી મિલા ઓર ઉસમેં અસંયમ જીવન  
રહા તો આત્માકા હસસે કોઈ હિત નહીં હો સકતા હૈં । અતઃ ઉન્હેં જો  
કુછ મી જીવન પ્રાપ્ત હોતા હૈં ઉસીમેં વે સન્તુષ્ટ રહ કર અપને જીવનકો  
સફલ બનાનેકા પ્રયત્ન કરતે રહતે હૈં । જિતની મી આયુ ઉનકી વ્યતીત  
હો ચુકી હૈં વહ, તથા આગે મી જો વ્યતીત હોતી હૈં વહ સવ આત્મોદ્ધાર  
કે સદુપાયોંકે સેવન કરતે રહી વ્યતીત હોતી હૈં । અસંયમ જીવનકી  
ચાહના ઇનમેં હોતી નહીં હૈં । અતઃ એસે જીવ અપની આયુકે વ્યતીત  
હોનેકા ઓર ઉસકે અવગિષ્ટ રહનેકા વિચાર નહીં કરતે હૈં, અર્થાત્ વે  
અસંયમ જીવન ઓર દીર્ઘ જીવનકી ચાહના નહીં કરતે હૈં ॥ સૂ૦ ૫ ॥

જો અનન્તાનુવન્ધી આદિકે ક્ષય કરનેમેં પ્રવૃત્તિ હૈં વહ ક્યા એકકે  
હી ક્ષય કરનેમેં પ્રવૃત્તિ કરતા હૈં ? અથવા અન્યકે મી ક્ષય કરનેમેં  
પ્રવૃત્તિ કરતા હૈં ? હસ આશંકાકા સમાધાન કરનેકે લિયે કહતે હૈં-‘ એગં  
વિગિંચમાણે ’ ઇત્યાદિ ।

આવા વીર “ નાવકાઙ્ક્ષન્તિ જીવિતમ્ ” એ વાતનો વિચાર નથી કરતા  
કે મારી આયુ કેટલી વ્યતીત થઈ ગઈ છે અને હવે કેટલી બાકી છે ? કારણ  
કે દીર્ઘ આયુષ્ય પણ મળે અને તેમાં અસંયમ જીવન રહ્યું તો આત્માનું તેમાં  
હિત કોઈ પ્રકારે થતું નથી. માટે તેને જે કંઈ જીવન પ્રાપ્ત થાય છે તેમાં તે  
સંતુષ્ટ રહી પોતાના જીવનને સફળ બનાવવા માટે પ્રયત્ન કરતા રહે છે. જેટલી  
પણ આયુ તેની વ્યતીત થવાવાળી છે તે સઘળી આત્મોદ્ધારના સદુપાયોનું સેવન  
કરતાં કરતાં વ્યતીત થાય છે, અસંયમ જીવનની ચાહના તેમાં થતી નથી. માટે  
તેવા જીવ પોતાની આયુના વ્યતીત થવાનો તથા તેના અવશિષ્ટ રહેવાનો વિચાર  
કરતા નથી. અર્થાત્ તે અસંયમ જીવન અને દીર્ઘ જીવનની ચાહના કરતા નથી.  
॥ સૂ૦ ૫ ॥

જે અનન્તાનુબધી આદિનો ક્ષય કરવામાં પ્રવૃત્ત છે તે શું એકનો જ ક્ષય  
કરવામાં પ્રવૃત્ત થાય છે ? અથવા અન્યનો પણ ક્ષય કરવામાં પ્રવૃત્તિ કરે છે.  
આ શંકાનું સમાધાન કરવા માટે કહે છે-‘ એગં વિગિંચમાણે ’ ઇત્યાદિ.

છાયા—एकं विवेचयन् पृथक् वेवेक्ति, पृथग् विवेचयन् एकं वेवेक्ति ॥सू०६॥

ટોકા—एकम्=अनन्तानुबन्धिनं क्रोधं, विवेचयन्=क्षपयन् क्षपकश्रेणिसमारूढः संयतः, पृथक्=अन्यदपि अनन्तानुबन्धिचतुष्टयं, मिथ्यात्व-मिश्र-सम्यक्त्व-मोहनी-यत्रयं चेति मिथ्यात्वसप्तकं, वेवेक्ति=नियमतः क्षपयति । यो वद्धायुष्कः, सोऽपि त्रीन् भवान् नातिक्रामति । तृतीये भवे नियमतो मोक्षं प्राप्नोति । अवद्धायुष्कस्तु—मोह-नीयस्य सप्तविंशतिं कर्मांशान् नियमतः क्षपयति, चत्वारि घातिकर्माणि वा, सिध्यन् वा चत्वारि केवलिकर्माणि क्षपयति ।

અનન્તાનુબન્ધી ક્રોધકા ક્ષય કરનેવાલા ક્ષપકશ્રેણિમેં આરૂઢ સંયત નિયમસે અનન્તાનુબન્ધિચતુષ્ટય એવં મિથ્યાત્વમોહનીય, મિશ્રમોહનીય ઔર સમ્યક્ત્વમોહનીય, ઇન સાત પ્રકૃતિયોંકા ક્ષય કરતા હૈ । જો વ-દ્ધાયુષ્ક ( આયુકર્મકા પહેલે બંધ કર ચુકા હૈ ) વહ ભી ત્રીન ભવોં કો ઉલ્લંઘન નહીં કરતા, અર્થાત્ તૃતીય ભવમેં નિયમસે મુક્તિકા લાભ કર લેતા હૈ । અવદ્ધાયુષ્ક—( જિસને પહેલે આયુકર્મકા બન્ધ નહીં કિયા હૈ વહ ) જીવ મોહનીય કર્મકી ૨૭ સત્તાઈસ પ્રકૃતિયોંકા નિયમસે નાશ કરતા હૈ । અથવા ચાર ઘાતિયા કર્મોંકા નાશ કર કે અવશિષ્ટ ચાર અઘાતિયા કર્મોંકા ભી નાશ કર દેતા હૈ ।

ભાવાર્થ—પૂર્વોક્ત સાત પ્રકૃતિયોંકે ક્ષયસે જિસને ક્ષાયિક-સમ્ય-ક્ત્વકા લાભ કિયા હૈ, ઔર ક્ષાયિક-સમ્યક્ત્વકો લે કર ક્ષપકશ્રેણિ પર ચઢા હૈ ઉસ જીવકી મુક્તિ નિયમતઃ ઉસી ભવસે હો જાતી હૈ । પરંતુ ઈસા જીવ યદિ વદ્ધાયુષ્ક હૈ તો વહ ઉસ ભવસે મુક્તિકા લાભ ન કર

અનન્તાનુબન્ધી ક્રોધનો ક્ષય કરવાવાળા ક્ષપકશ્રેણિમાં આરૂઢ સંયત નિયમથી અનન્તાનુબન્ધિચતુષ્ટય અને મિથ્યાત્વમોહનીય, મિશ્રમોહનીય અને સમ્યક્ત્વ-મોહનીય, એ સાત પ્રકૃતિઓનો ક્ષય કરે છે. જે બદ્ધાયુષ્ક ( આયુકર્મનો જે પહેલાં બંધ કરી ચુકેલ છે ) તે પણ ત્રણ ભવોનું ઉલ્લંઘન નથી કરતા, અર્થાત્ ત્રીજા ભવમાં નિયમથી મુક્તિનો લાભ કરી લે છે. અવદ્ધાયુષ્ક ( જેણે પહેલાં આયુકર્મનો બંધ નથી કર્યો તે ) જીવ મોહનીય કર્મની ૨૭ સત્તાવીસ પ્રકૃતિઓનો નિયમથી નાશ કરે, છે અથવા ચાર ઘાતિયા કર્મોનો નાશ કરીને અવશિષ્ટ ચાર અઘાતિયા કર્મોનો પણ નાશ કરી નાખે છે.

ભાવાર્થ—પૂર્વોક્ત સાત પ્રકૃતિઓના ક્ષયથી જેણે ક્ષાયિક-સમ્યક્ત્વનો લાભ કરેલ છે, અને ક્ષાયિક-સમ્યક્ત્વને લઈને ક્ષપકશ્રેણિ ચઢેલ છે તે જીવની મુક્તિ નિયમતઃ તે ભવથી થઈ જાય છે, પરંતુ તેવા જીવ કદાચ બદ્ધાયુષ્ક છે તો તે, તે

યદ્વા-પૃથક્=અન્યદપિ મિથ્યાત્વસપ્તકં વિવેચયન્=ક્ષપયન્, એકમ્=અનન્તા-  
નુવન્ધિક્રોધં વેવેક્તિ=નિયમતઃ ક્ષપયતિ ॥ સૂ૦ ૬ ॥

કેન ગુણેન ક્ષપકશ્રેણિયોગ્યતાં પ્રાપ્નોતીતિ વોધયિતું કર્મક્ષપણોદયતસ્ય વિશે-  
ષણાન્યાહ-‘સડ્ઢી’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્-સડ્ઢી આણાણ મેહાવી ॥ સૂ૦ ૭ ॥

છાયા—શ્રદ્ધી આજ્ઞયા મેધાવી ॥ સૂ૦ ૭ ॥

ટીકા—શ્રદ્ધી=મોક્ષાભિલાપરૂપા જિનમતાભિરુચિઃ શ્રદ્ધા, સાઽસ્યાસ્તીતિ  
તથાવિધઃ; સ દિ કેવલિનો ભાવિતાત્મનોઽનગારસ્ય વા સમીપે ધર્મં શ્રુત્વા સંયમં  
પ્રતિપદ્યતે । આજ્ઞયા=આદર્શતાગમાનુસારેણ પ્રવર્તમાનઃ, મેધાવી=અપ્રમત્તસંયમી ક્ષપ-  
કશ્રેણિયોગ્યો ભવતિ, નાન્ય ઇત્યર્થઃ ॥ સૂ૦ ૭ ॥

દૂસરે અથવા તીસરે ભવમેં નો નિયમસે મુક્તિકો પ્રાપ્ત કરનેવાલા હોતા  
હૈ । યદિ અવદ્વાયુષ્ક હૈ તો વહ્ ઉસી ભવસે મુક્તિ પ્રાપ્ત કર લેતા હૈ ।

इसी तरह—“ पुढो विगिंचमाणे एगं विगिंचइ ” अर्थात् मिथ्यात्व-  
सप्तकका क्षय करनेमें प्रवृत्त संयत एक अर्थात् अनन्तानुबन्धी क्रोधका  
नियमसे क्षय करता है ॥ सू० ६ ॥

કિસ ગુણસે મુનિ ક્ષપકશ્રેણિકી યોગ્યતાકો પ્રાપ્ત કરતા હૈ ? હસ  
વાતકો સમજાનેકે લિયે કર્મોંકે ક્ષય કરનેમેં ઉચ્ચત મુનિકે વિશેષણોં  
કો કહતે હૈ—‘સડ્ઢી’ ઇત્યાદિ ।

મોક્ષકી અભિલાપારૂપ જિનમતની ઓર અભિરુચિકા નામ શ્રદ્ધા  
હૈ । હમ પ્રકારકી શ્રદ્ધાસે સમ્પન્નકા નામ શ્રદ્ધી-શ્રદ્ધાવાન હૈ । શ્રદ્ધા-  
વાન્ વ્યક્તિ કેવલી અથવા અન્ય કિસી ભાવિતાત્મા સાધુકે સમીપ  
ધર્મકા શ્રવણ કર સંયમકો ગ્રહણ કરતા હૈ । અરિહન્તદેવદ્વારા પ્રતિ-

ભવમાં મુક્તિનો લાભ ન પામીને ણીજી અથવા ત્રીજી ભવમાં તો નિયમથી મુક્તિને પ્રાપ્ત  
કરવાવાળા થાય છે. જો અણદ્વાયુષ્ક છે તો તે તેજ ભવથી મુક્તિ પ્રાપ્ત કરી લે છે.

આવી રીતે “ પુઢો વિગિંચમાણે એગં વિગિંચइ ” અર્થાત્ મિથ્યાત્વસપ્તકનો  
ક્ષય કરવામાં પ્રવૃત્ત સંયત એક અર્થાત્ અનંતાનુબંધી ક્રોધનો નિયમથી  
ક્ષય કરે છે. ॥ સૂ૦ ૬ ॥

કયા ગુણથી મુનિ ક્ષપક શ્રેણીની યોગ્યતાને પ્રાપ્ત કરે છે ? આ વાતને સમ-  
જાવવા માટે કર્મોના ક્ષય કરવામાં ઉચ્ચત મુનિના વિશેષણોને કહે છે—‘સડ્ઢી’ ઇત્યાદિ.

મોક્ષની અભિલાષારૂપ જીનમતની તરફ અભિરૂચિનું નામ શ્રદ્ધા છે, આ  
પ્રકારની શ્રદ્ધાથી સંપન્નનું નામ શ્રદ્ધી-શ્રદ્ધાવાન છે. શ્રદ્ધાવાન વ્યક્તિ કેવળી  
અથવા અન્ય કોઈ પણ ભાવિતાત્મા સાધુની સમીપે ધર્મનું શ્રવણ કરી સંયમને ગ્રહણ



કિંચ—‘લોગં ચ’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્—લોગં ચ આણાણ અભિસમિચ્ચ અકુતોભયં ॥સૂ૦ ૮॥

છાયા—લોકં ચાઽઽજ્ઞયા અભિસમેત્ય અકુતોભયમ્ ॥ સૂ૦ ૮ ॥

ટીકા—ચ—શબ્દઃ સમુચ્ચયાર્થઃ । લોકં=પૃથ્વીજીવનિકાયરૂપમ્, આજ્ઞયા=જિન-પ્રવચનેન, અભિસમેત્ય=વિદિત્વા, અકુતોભયમ્=કુતશ્ચિત્ કારણાદુત્પદ્યમાનસ્ય ભય-સ્યામાવો યથા ભવતિ પૃથ્વીજીવનિકાયલોકસ્ય, તથારૂપં સંયમં કુર્યાદિત્યર્થઃ ॥સૂ૦૮॥

પાદિત આગમકે અનુસાર પ્રવૃત્તિ કરનેવાલા અપ્રમત્ત સંયમી જીવ ક્ષપ-કશ્રેણિકે યોગ્ય હોતા હૈ, અન્ય નહીં ।

ભાવાર્થ—શ્રદ્ધાસંપન્ન વ્યક્તિ સંયમકી આરાધના કર જવ સપ્તમ-ગુણસ્થાનવર્ત્તી હો જાતા હૈ તમી વહ ક્ષપકશ્રેણિપર આરૂઢ હોનેકે યોગ્ય માના જાતા હૈ ॥ સૂ૦ ૭ ॥

ઔર શ્રી કહતે હૈ—“લોગં ચ ” ઇત્યાદિ ।

યહાં “ ચ ” શબ્દ સમુચ્ચય અર્થ મૈં હૈ । મુનિ ઇસ પૃથ્વીજીવનિકાયરૂપ લોકકો જિનપ્રવચન-આગમ-સે જાન કર ‘જિસ પ્રકાર ભવિષ્યમૈં ડસ પૃથ્વીજીવનિકાયરૂપ લોકકો અપનેદ્વારા અચકા અભાવ હો’ ઇસ પ્રકાર સંયમ કી આરાધના કરતા રહે ।

ભાવાર્થ—સંયમકી આરાધના કરનેકી આવશ્યકતા ઇસી લિયે હૈ કિ જિસસે અન્ય જીવોંકી રક્ષા હોતી રહે । અસંયમ પ્રવૃત્તિસે જીવોંકા ઘાત હોતા હૈ । ઁસે વ્યક્તિયોંકો ઇસ લોક ઔર પરલોકમૈં સદા અચકા

કરે છે. અરિહંતદ્વારા પ્રતિપાદિત આગમ-અનુસાર પ્રવૃત્તિ કરવાવાળા અપ્રમત્ત સંયમી જીવ ક્ષપકશ્રેણીને યોગ્ય થાય છે—અન્ય નહિ.

ભાવાર્થ:—શ્રદ્ધાસંપન્ન વ્યક્તિ સંયમની આરાધના કરી જ્યારે સાતમા ગુણસ્થાનવર્ત્તી થઈ જાય છે ત્યારે તે ક્ષપક શ્રેણી પર આરૂઢ હોવાના યોગ્ય માનવામાં આવે છે. ॥ સૂ૦ ૭ ॥

વળી બીજું પણ કહે છે— “ લોગં ચ ” ઇત્યાદિ.

આ ઠેકાણે “ ચ ” શબ્દ સમુચ્ચય અર્થમાં છે. મુનિ આ પૃથ્વીજીવનિકાયરૂપ લોકને જીનપ્રવચન-આગમથી જાણીને જે પ્રકારે ભવિષ્યમાં તે પૃથ્વીજીવનિકાયરૂપ લોકને પોતાના દ્વારા ભયનો અભાવ હોય એ પ્રકારે સંયમની આરાધના કરતા રહે.

ભાવાર્થ—સંયમની આરાધના કરવાની આવશ્યકતા એટલા માટે છે કે જેનાથી અન્ય જીવોની રક્ષા થતી રહે. અસંયમ પ્રવૃત્તિથી જીવોનો ઘાત થાય છે. એવી

તદપિ ભયં પદ્મજીવનિકાયલોકસ્ય શસ્ત્રાદેવ ભવતિ । તસ્ય શસ્ત્રસ્ય કિં પ્રકર્ષ-  
પરમ્પરાઽસ્તિ ? નાસ્તિ વા ? इति शिष्यजिज्ञासायाम् ‘अस्ती’-ति बोधयितुमाह—  
‘अत्थि’ इत्यादि ।

यद्वा-शस्त्रतो भयं भवति, अतस्तत् परिहर्तव्यमित्याशयेन-शस्त्रं कथयति—  
‘अत्थि’ इत्यादि ।

मूलम्—अत्थि सत्थं परेण परं, नत्थि असत्थं परेण परं ॥सू० ९॥

छाया—अस्ति शस्त्रं परेण परम् , नास्ति अशस्त्रं परेण परम् ॥ सू० ९ ॥

टीका—શસ્ત્રં=દ્રવ્યભાવભેદાદ્ દ્વિવિધં; તત્ર દ્રવ્યશસ્ત્રં સ્વદ્ગાદિકં, તત્ પરેણ પરમ  
સ્તિ, લોકદર્ત્વમંસ્કારાનુસારેણ દ્રવ્યશસ્ત્રં તીવ્રાત્ તીવ્રતરમસ્તીત્યર્થઃ । યદ્વા—યત્ પીડા-  
સામના કરના પડતા હૈ । સંઘમી જીવ હસ પ્રકારકે ભયસે સદા નિર્મુક્ત  
રહેતે હૈ ॥ સૂ० ૮ ॥

इस पद्मजीवनिकारूप लोकके लिये भय शस्त्रसे ही होता है । यह  
यात जब निश्चित है तो क्या उस शस्त्रमें प्रकर्षकी परम्परा है या नहीं ? इस  
प्रकार की शिष्यकी आशङ्काका उत्तर कहते हैं—‘अत्थि सत्थं’ इत्यादि ।

अथवा-शस्त्रसे भय होता है; अतः उसका परिहार करना चाहिये,  
इस आशयसे शस्त्रको कहते हैं—‘अत्थि सत्थं’ इत्यादि ।

शस्त्र, द्रव्य और भावके भेदसे दो प्रकारका है । तलवार वगैरह द्रव्य  
शस्त्र हैं । इनमें प्रकर्षकी परम्परा, शस्त्रको बनानेवाले लुहारके संस्कार  
के अनुसार आती है । कोई तलवार अत्यन्त तीक्ष्ण होती है और कोई  
उससे भी अधिक । अथवा जो जीवको पीडाकारक होता है वही शस्त्र

વ્યક્તિઓને આ-લોક અને પરલોકમાં સદા ભયનો સામનો કરવો પડે છે. સંઘમી  
જીવ આ પ્રકારના ભયથી સદા નિર્મુક્ત રહે છે. ॥ સૂ० ૮ ॥

આ પદ્મજીવનિકાયરૂપ લોકના માટે ભય શસ્ત્રથી જ થાય છે. એ વાત જ્ઞાત  
નિશ્ચિત છે તો શું તે શસ્ત્રમાં પ્રકર્ષની પરંપરા છે યા નહિ ? આ પ્રકારે શિષ્યની  
આશંકાનું ઉત્તર કહે છે—‘અત્થિ સત્થં’ ઇત્યાદિ.

અથવા શસ્ત્રથી ભય થાય છે; માટે તેનો પરિહાર કરવો જોઈએ; એ આશ-  
યથી શસ્ત્રને કહે છે—‘અત્થિ સત્થં’ ઇત્યાદિ.

શસ્ત્ર દ્રવ્ય અને ભાવના ભેદથી બે પ્રકારે છે. તલવાર વિગેરે દ્રવ્ય-શસ્ત્ર  
છે. તેમાં પ્રકર્ષની પરંપરા, શસ્ત્રના બનાવવાળા લુહારના સંસ્કાર અનુસાર આવે  
છે, કોઈ તલવાર અત્યંત તીક્ષ્ણ હોય છે અને કોઈ તેનાથી પણ અધિક. અથવા  
જે જીવોને પીડાકારક થાય છે તે શસ્ત્ર છે. પીડાકારક એક જ વસ્તુથી અન્ય

કારકં તદેવ શસ્ત્રમિત્યુચ્યતે । એકસ્માત્ પીડાજનકાદન્યત્ પીડાજનકં પ્રાદુર્ભવતિ ।  
યથા—સ્વદ્ગાભિઘાતેન શિરઃપીડા, તતો જ્વરઃ, તતોઽપિ મૂર્ચ્છાદય ઇતિ ।  
ભાવશસ્ત્રસ્ય પારમ્પર્યં ત્વત્રૈવોદ્દેશકે ‘ જે કોહદંસી ’ ઇત્યાદિનાઽનુપદં વક્ષ્યતિ ।

યથા શસ્ત્રસ્ય પારમ્પર્યમસ્તિ, ન તથા પારમ્પર્યમશસ્ત્રસ્યાસ્તીત્યાદ—‘નાસ્તિ’  
ઇત્યાદિ । અશસ્ત્રં સંયમઃ, તત્ પરેણ પરં નાસ્તિ—પ્રકર્ષપરમ્પરાયુક્તં ન ભવતીત્યર્થઃ ।  
યથા પૃથિવ્યાદિજીવેષુ સ્વાત્મના સમભાવઃ કર્તવ્યઃ, તત્ર—‘ એગે આયા ’ ઇતિ  
ભગવદ્વચનાદ્ મન્દતીવ્રભેદો નાસ્તિ, તસ્માત્ તત્ર સમત્વસદ્ભાવાત્ સામાયિકસ્ય ન  
પ્રકર્ષપારમ્પર્યમ્ । યદ્વા—શૈલશ્યવસ્થાસંયમાત્પરઃ સંયમો નાસ્તિ, તદ્દૂર્વ્વં ગુણસ્થાના-  
ભાવાદિતિ ભાવઃ ॥ સૂ૦ ૯ ॥

હૈ । પીડાકારક એક હી વસ્તુસે અન્ય અનેક વાતેં ઉત્પન્ન होती हैं, जैसे  
तलवारद्वारा मारनेसे लगनेवालेके शिरमें पीडा, उससे ज्वर, उससे  
भी उसे मूर्छा आदि दुःख होते हैं । ये सब वार्ते द्रव्यशस्त्रमें प्रकर्ष  
परम्पराकी द्योतक हैं ।

ભાવશસ્ત્રમેં પ્રકર્ષકી પરમ્પરા હસી ઉદ્દેશમેં હસીકે આગે “ જે કો-  
હદંસી ” હસ સૂત્રમેં કહેંગે । જિસ પ્રકાર શસ્ત્રમેં પ્રકર્ષકી પરમ્પરા હૈ ઉસ  
પ્રકાર અશસ્ત્રમેં પ્રકર્ષપરમ્પરા નહીં હૈ, હસ વાતકો “ નત્થિ ” હસ વાક્ય  
સે સૂત્રકાર પ્રકટ કરતે હૈ—અશસ્ત્ર નામ સંયમકા હૈ, વહ “ પરેણ પરં  
નાસ્તિ ” પ્રકર્ષપરમ્પરાસે યુક્ત નહીં હોતા હૈ । જૈસે—પૃથિવીકાયિકાદિ  
જીવોમેં સંયમીકો આત્મતુલ્યતાકી ભાવના રચની ચાહિયે, ક્યોં કિ યહ  
વચન હૈ “ એગે આયા ” આત્મા એક હૈ । હસ પ્રકારકી ભાવનારૂપ સંયમ  
મેં મન્દ ઓર તીવ્ર ભેદ નહીં હૈ । હસ કારણ સમસ્ત પૃથિવીકાયિકાદિ

અનેક વાર્તો ઉત્પન્ન થાય છે. જેમ—તલવાર દ્વારા મારવાથી લાગવાવાળાના માથામાં  
પીડા, તેનાથી જ્વર, તેનાથી તેને મૂર્છા આદિ દુઃખ થાય છે. એ સઘળી વાર્તો  
દ્રવ્યશસ્ત્રમાં પ્રકર્ષપરંપરાની દ્યોતક છે.

ભાવશસ્ત્રમાં પ્રકર્ષની પરંપરા આ જ ઉદ્દેશમાં એનાથી આગળના “ જે  
કોહદંસી ” એ સૂત્રમાં કહેવામાં આવશે. જે પ્રકારે શસ્ત્રમાં પ્રકર્ષની પરંપરા છે  
તે પ્રકારે અશસ્ત્રમાં પ્રકર્ષપરંપરા નથી. એ વાર્તાને “ નત્થિ ” ઇત્યાદિ વાક્યથી  
સૂત્રકાર પ્રગટ કરે છે. અશસ્ત્ર નામ સંયમનું છે, તે “ પરેણ પરં નાસ્તિ ” પ્રકર્ષ-  
પરંપરાથી યુક્ત થતું નથી. જેમ—પૃથિવીકાયાદિ જીવોમાં સંયમીએ આત્મ  
તુલ્યતાની ભાવના રાખવી જોઈએ, કારણ કે ભગવાનનું એ વચન છે—‘એગે આયા’  
આત્મા એક છે. આ પ્રકારની ભાવનારૂપ સંયમમાં મન્દ અને તીવ્ર ભેદ નથી.  
એ કારણથી સમસ્ત પૃથિવીકાયાદિક જીવોમાં સમતાશાળી સંયમીના સામાયિક

ભાવશસ્ત્રં કથં પરેણ પરમસ્તીત્યાહ—‘ જે કોહદંસી ’ इत्यादि ।

મૂલમ્—જે કોહદંસી સે માણદંસી, જે માણદંસી સે માયા-  
દંસી, જે માયાદંસી સે લોહદંસી, જે લોહદંસી સે પેજ્જદંસી,  
જે પેજ્જદંસી સે દોસદંસી, જે દોસદંસી સે મોહદંસી, જે મોહદંસી  
સે ગઘ્મદંસી, જે ગઘ્મદંસી સે જમ્મદંસી, જે જમ્મદંસી સે  
મારદંસી, જે મારદંસી સે નરયદંસી, જે નરયદંસી સે તિરિયદંસી,  
જે તિરિયદંસી સે દુક્ખદંસી ॥ સૂ૦ ૧૦ ॥

જીવોંમેં સમનાગાલી સંયમીકે સામાયિકરૂપ ચારિત્રમેં તીવ્રમન્દરૂપ  
પ્રકર્ષકી પરમ્પરા નહીં હૈ । અથવા—શૈલેશી અવસ્થાકે સંયમસે આગે ગુણ-  
સ્થાનકા અભાવ હોનેસે ઔર કોઈ પર-ઉત્કૃષ્ટ-સંયમ નહીં હૈ ।

ભાવાર્થ—શૈલેશી અવસ્થા ચૌદહવેં ગુણસ્થાનમેં હોતી હૈ, કયોં કિ  
હમી ગુણસ્થાનમેં ચારિત્રકી પૂર્ણતા હોતી હૈ । યથાખ્યાત-ચારિત્રસે ઔર  
કોઈ ચારિત્ર તો એસા ઉત્કૃષ્ટ હૈ નહીં જો હસસે મી અધિક ઉત્કૃષ્ટ હો,  
હસલિયે હસ અવસ્થાકે ચારિત્રમેં પ્રકર્ષકી પરમ્પરાકા નિષેધ હૈ । ચારિત્ર  
કે મેદોંમેં પરસ્પર પ્રકર્ષપ્રકર્ષવૃત્તિ મલે હી હો પરન્તુ કિસી મી ચારિત્ર  
મેં નિજમેં પ્રકર્ષપ્રકર્ષવૃત્તિ નહીં હૈ । યથાખ્યાત-ચારિત્ર સ્વયં પ્રકર્ષકી  
અવધિસ્વરૂપ હૈ ॥ સૂ૦ ૯ ॥

દ્રવ્યશસ્ત્રમેં પ્રકર્ષપરમ્પરાકો સ્પષ્ટ કર અવ ‘ભાવશસ્ત્રમેં વહ પ્રકર્ષ-  
પરમ્પરા કૈસે હૈ?’ હસે સ્પષ્ટ કરનેકે લિયે કહતે હૈ—‘જે કોહદંસી ’ इत्यादि ।

इय चारित्रिमां तीव्रमंदरूप प्रकर्षणी परंपरा नथी. अथवा शैलेशी अवस्थाना  
संयमथी आगण गुणस्थाननो अभाव यवाथी भीजे कोछ उत्कृष्ट संयम नथी.

ભાવાર્થ—શૈલેશી અવસ્થા ચૌદમા ગુણસ્થાનમાં થાય છે, કારણ કે તે  
ગુણસ્થાનમાં ચારિત્રની પૂર્ણતા થાય છે. યથાખ્યાત-ચારિત્રથી બીજા કોઈ ચારિત્ર  
તો એવું ઉત્કૃષ્ટ છે નહિ કે જે એનાથી પણ અધિક ઉત્કૃષ્ટ હોય. માટે આ અવસ્થાના  
ચારિત્રમાં પ્રકર્ષની પરંપરાનો નિષેધ કરે છે. ચારિત્રના ભેદોમાં પરસ્પર પ્રકર્ષ-  
પ્રકર્ષ વૃત્તિ ભલે હોય પરંતુ કોઈ પણ ચારિત્રમાં પોતામાં પ્રકર્ષપ્રકર્ષવૃત્તિ  
નથી. યથાખ્યાત-ચારિત્ર સ્વયં પ્રકર્ષની અવધિસ્વરૂપ છે. ॥ સૂ૦ ૯ ॥

દ્રવ્યશસ્ત્રમાં પ્રકર્ષપરંપરાને સ્પષ્ટ કરીને હવે ‘ભાવશસ્ત્રમાં તે પ્રકર્ષ  
પરંપરા કેવી રીતે છે?’ તેને સ્પષ્ટ કરવા માટે કહે છે—‘ જે કોહદંસી ’ इत्यादि.

છાયા—યઃ ક્રોધદર્શી સ માનદર્શી, યઃ માનદર્શી સ માયાદર્શી, યો માયાદર્શી સ લોભદર્શી, યો લોભદર્શી સ પ્રેમદર્શી, યઃ પ્રેમદર્શી સ દ્વેષદર્શી, યો દ્વેષદર્શી સ મોહદર્શી, યો મોહદર્શી સ ગર્ભદર્શી, યો ગર્ભદર્શી સ જન્મદર્શી, યો જન્મદર્શી સ મારદર્શી, યો મારદર્શી સ નરકદર્શી, યો નરકદર્શી સ તિર્યગ્દર્શી, યસ્તિર્યગ્દર્શી સ દુઃખદર્શી ॥ મૃ૦ ૧૦ ॥

ટીકા—યઃ ક્રોધદર્શી ક્રોધં પશ્યતિ-ભાવયતિ ક્રુદ્ધતીત્યર્થઃ, ક્રોધં દર્શયતીતિ યાવત્ । યથા ક્રુદ્ધસ્ય દૃષ્ટિસ્તીવ્રા, પ્રસન્નચિત્તસ્ય તુ સિતકમલવદ્ધવલા ભવતિ । સ માનદર્શી માનં પશ્યતિ-ભાવયતિ, ગર્વં દર્શયતીતિ યાવત્ । એવમગ્રેऽપિ યોજનીયં યાવત્-‘સ મોહદર્શી’તિ । યો મોહદર્શી-મોહાઽઽક્રાન્તઃ, સ ગર્ભદર્શી ગર્ભં પશ્યતિ-ગર્ભવાસોદ્ભૂતદુઃખાનુભવી ભવતીત્યર્થઃ । એવં-‘સ તિર્યગ્દર્શી’-તિ

જો ક્રોધદર્શી હૈ અર્થાત્ ક્રોધકો દેખતા હૈ-ક્રોધ કરનેકી ભાવના કરતા હૈ-ક્રુદ્ધ હોતા હૈ, દૂસરે વ્યક્તિ પર ક્રોધ દિગ્વલાતા હૈ, જૈસે-‘ક્રુદ્ધ વ્યક્તિકી દૃષ્ટિ તીવ્ર હોતી હૈ, પ્રસન્નચિત્તવાલેકી સફેદ કમલ જૈસી ધવલ હોતી હૈ’ । ઇસ પ્રકારસે જો દૂસરોંકે લિયે દૃષ્ટિ વગૈરહ ચિહ્નોસે અપની ક્રોધપરિણતિ દિગ્વલાતા હૈ-પ્રકટ કરતા હૈ વહ માનદર્શી હોતા હૈ-માનકો દેખતા હૈ-માન કરનેકી ભાવના કરતા હૈ, માન કરતા હૈ-અન્યકે લિયે વહ અપની માનપરિણતિ પ્રકટ કરતા હૈ । ઇસી પ્રકાર જો માનદર્શી હૈ વહ માયાદર્શી હોતા હૈ । જો માયાદર્શી હૈ વહ લોભદર્શી હૈ । જો લોભદર્શી હૈ વહ રાગદર્શી હૈ । જો રાગદર્શી હૈ વહ દ્વેષદર્શી હૈ । જો દ્વેષદર્શી હૈ વહ મોહદર્શી હૈ । જો મોહદર્શી હોતા હૈ વહ ગર્ભદર્શી હોતા હૈ । ઇસકા ભાવ યહ હૈ કિ-મોહદર્શી પ્રાણી ગર્ભા-

જે ક્રોધદર્શી છે અર્થાત્ ક્રોધને દેખે છે-ક્રોધ કરવાની ભાવના કરે છે-ક્રુદ્ધ થાય છે, બીજા વ્યક્તિના ઉપર ક્રોધ દેખાડે છે. જેમ-‘ક્રુદ્ધ વ્યક્તિની દૃષ્ટિ તીવ્ર હોય છે. પ્રસન્ન ચિત્તવાળાની સફેદ કમળ જેવી ધવળ હોય છે.’ એવા પ્રકારથી જે બીજાઓને માટે દૃષ્ટિ વિગેરે ચિન્હોથી પોતાની ક્રોધ-પરિણતિ દેખાડે છે-પ્રકટ કરે છે તે માનદર્શી થાય છે-માનને દેખે છે-માન કરવાની ભાવના રાખે છે, માન કરે છે-બીજાને માટે તે પોતાની માન-પરિણતિ પ્રકટ કરે છે. એ પ્રકારે માનદર્શી છે તે માયાદર્શી હોય છે. જે માયાદર્શી છે તે લોભદર્શી છે, જે લોભદર્શી છે તે રાગદર્શી છે. જે રાગદર્શી છે તે દ્વેષદર્શી છે, જે દ્વેષદર્શી છે તે મોહદર્શી છે જે મોહદર્શી છે તે ગર્ભદર્શી છે. તેનો ભાવ એ છે કે-મોહદર્શી પ્રાણી ગર્ભાવાસથી ઉત્પન્ન અનન્ત

યાવદ્વગન્તવ્યમ્ । યસ્તિર્યગ્દર્શી=તિર્યગ્ભવનિગોદસમ્બન્ધિદુઃસ્વદર્શી, સ દુઃસ્વદર્શી-  
-ઇહ દુઃસ્વશબ્દેન સર્વતઃ સમુત્કૃષ્ટતમં નિગોદભવસમ્બન્ધિ દુઃસ્વં પરિગૃહ્યતે, તત્  
પઞ્ચતિ=અનુભવતીત્યર્થઃ । એતેન ગર્ભદર્શીત્યાદાવપિ દુઃસ્વદર્શિત્વેન તિર્યગ્દર્શિન  
એવ દુઃસ્વદર્શિત્વકથનમયુક્તમિતિ શક્યાવસરો નાસ્તીતિ વોધ્યમ્ । અનેન-પારમ્પર્યા-  
પન્નસ્ય સર્વસ્ય ભાવશસ્ત્રસ્ય નિદાનં ક્રોધઃ, તથા સર્વતઃ સમુત્કૃષ્ટદુઃસ્વં નિગોદભ-  
વેઽસ્તીતિ ધ્વનિતમ્ ॥ મૂ૦ ૧૦ ॥

વાસસે ઉત્પન્ન અનન્ત યાતનાઓંકો ભોગતા હૈ । इसी प्रकार जो गर्भ-  
दर्शी है वह जन्मदर्शी है । जो जन्मदर्शी है वह मरणदर्शी है । जो मर-  
णदर्शी है वह नरकदर्शी है । जो नरकदर्शी है वह तिर्यग्दर्शी है, जो  
तिर्यग्दर्शी है अर्थात् तिर्यग्भगतिस्वरूप निगोदके दुःस्वोंका अनुभवकर्त्ता  
है वह वहांके सर्वोत्कृष्ट दुःस्वोंका अनुभव करता है । यही भाव  
“स दुःस्वदर्शी ” इस पदसे सूत्रकारने प्रकट किया है । यहां दुःस्व-  
शब्दसे सर्वोत्कृष्ट निगोदसम्बन्धी दुःस्वों का ही ग्रहण किया है । इस  
लिये “यो गर्भदर्शी ” इत्यादि पद हैं उनमें भी दुःस्वदर्शित्व तो आता  
ही है, फिर भी जो तिर्यग्दर्शी में ही दुःस्वदर्शित्व स्वतन्त्र रूपसे प्रकट  
किया गया है वह अयुक्त है । इस प्रकारकी शङ्का करनेका यहां अवसर  
ही नहीं प्राप्त होता है । इस समस्त कथनसे यह ध्वनिता होता है कि  
इस प्रकर्षपरम्पराप्राप्त भावशस्त्रका निदान-मूल कारण-क्रोध है और  
सबसे उत्कृष्ट दुःस्व निगोदभवमें है ।

યાતનાઓને લોગવે છે. એ પ્રકારે જે ગર્ભદર્શી છે તે જન્મદર્શી છે. જે જન્મ-  
દર્શી છે તે મરણદર્શી છે, જે મરણદર્શી છે તે નરકદર્શી છે. જે નરકદર્શી છે  
તે તિર્યગ્દર્શી છે. જે તિર્યગ્દર્શી છે અર્થાત્ તિર્યગ્ભગતિસ્વરૂપ નિગોદના દુઃખોનો  
અનુભવકર્તા છે, તે ત્યાંના સર્વોત્કૃષ્ટ દુઃખોનો અનુભવ કરે છે. એ જ ભાવ.  
“સ દુઃસ્વદર્શી ” એ પદથી સૂત્રકારે પ્રગટ કરેલ છે. અહીં દુઃખ-શબ્દથી  
સર્વોત્કૃષ્ટ નિગોદસંબંધી દુઃખોનું જ ગ્રહણ કરેલ છે. માટે જે “ગર્ભદર્શી” ઇત્યાદિ  
પદ છે તેમાં પણ દુઃખ-દર્શિત્વ તો આવેજ છે તો પણ જે તિર્યગ્દર્શીમાં જ  
દુઃખ-દર્શિત્વ સ્વતંત્ર રૂપથી પ્રગટ કરેલ છે તે અયુક્ત છે. આ પ્રકારની શંકા  
કરવાનો આ ઠેકાણે અવસર જ પ્રાપ્ત થતો નથી, આ સમસ્ત કથનથી એ ધ્વનિતા  
થાય છે કે આ પ્રકર્ષપરંપરાપ્રાપ્ત ભાવશસ્ત્રનું નિદાન-મૂલ કારણ-ક્રોધ છે. અને  
અધારથી ઉત્કૃષ્ટ દુઃખ નિગોદભવમાં છે.



યસ્તુ મુમુક્ષુઃ, સ ક્રોધાદિકં પરિહરેદિત્યાહ—‘સે મેહાવી’ इत्यादि ।

મૂલમ્—સે મેહાવી અભિણિવટ્ટિજ્ઞા કોહં ચ માણં ચ માયં ચ લોહં ચ પેજં ચ દોસં ચ મોહં ચ ગઘ્મં ચ જમ્મં ચ મારં ચ નરયં ચ તિરિયં ચ દુક્ખં ચ । એયં પાસગસ્સ દંસણં ઉવરયસ-ત્થસ્સ પલિયંતકરસ્સ ॥ સૂ૦ ૧૧ ॥

છાયા—સ મેધાવી અભિનિવર્તયેત્ ક્રોધં ચ માનં ચ માયાં ચ લોભં ચ પ્રેમ ચ દ્વેષં ચ મોહં ચ ગર્મ્મં ચ જન્મ ચ મારં ચ નરકં ચ તિર્યચ્ચં ચ દુઃખં ચ । એતત્ પડ્ય-કસ્ય દર્શનમ્, ઉપરતશસ્ત્રસ્ય પર્યન્તકરસ્ય ॥ મૂ૦ ૧૧ ॥

ટીકા—સ મેધાવી ક્રોધાદિમોહાન્તં ભાવશસ્ત્રં, તથા—ગર્ભાદિદુઃખાન્તં તત્પ્રયો-ગફલભૂતમ્, અભિનિવર્તયેત્=પરિહરેત્—અપનયેદિત્યર્થઃ । ક્રોધાદિમોહાન્તં ભાવશસ્ત્રં સર્વથા પરિવર્જયેત્, યેન ગર્ભદુઃખાદારમ્ય નિગોદદુઃખં યાવત્ સર્વમપિ દુઃખં ન પ્રાપ્નુયાદિતિ ભાવઃ ।

ભાવાર્થ—યે ક્રોધાદિક પર-ભાવ હી ભાવશસ્ત્ર હૈં ઓર ક્રોધસે માન, માનસે માયા, માયાસે લોભ, इत्यादि रूपसे उनमें प्रकर्षपरम्परा है; यह बात प्रकट की गई है ॥ સૂ૦ ૧૦ ॥

જો મુમુક્ષુ—મોક્ષ જાનેકી ઇચ્છા રાખનેવાલા હો ડસકો ક્રોધાદિકકા પરિહાર કર દેના ઑહિયે, ઇસ વાતકો પ્રકટ કરતે હૈં—‘સે મેહાવી’ इत्यादि ।

વહ મેધાવી મુનિ ક્રોધસે લગાકર મોહ તક ભાવશસ્ત્રકા તથા ડન કે પ્રયોગસે ઉત્પન્ન ડનકે ફલસ્વરૂપ ગર્ભાવાસકે દુઃખોસે લેકર નિગોદકે દુઃખો તકકા પરિહાર કરે, અર્થાત્—બુદ્ધિમાનકા કર્તવ્ય હૈં કિ વહ ક્રોધા-દિક કષાયરૂપ ભાવશસ્ત્રકા પરિત્યાગ કરે । ક્યોંકિ ક્રોધાદિકષાયોંકે કરને સે કર્તાકો ડનેક પ્રકારકે દુઃખોંકો ભોગના પડતા હૈં । ગર્ભાવાસકે દુઃખોં

ભાવાર્થઃ—એ ક્રોધાદિક પર-ભાવ જ ભાવશસ્ત્ર છે, ડને ક્રોધથી માન, માનથી માયા, માયાથી લોભ, ઇત્યાદિ રૂપથી તેમાં પ્રકર્ષપરંપરા છે; એ વાત પ્રગટ કરી છે. ॥ સૂ૦ ૧૦ ॥

જે મુમુક્ષુ—મોક્ષ જવાની ઇચ્છા રાખનારા હોય તેને ક્રોધાદિકનો પરિહાર કરી દેવો જોઈએ, આ વાતને પ્રગટ કરે છે—‘સે મેહાવી’ इत्यादि.

તે મેધાવી મુનિ ક્રોધથી લઈ મોહ સુધી ભાવશસ્ત્રને તથા તેના પ્રયોગથી ઉત્પન્ન તેના ફળસ્વરૂપ ગર્ભાવાસના દુઃખોથી લઈને નિગોદના દુઃખો સુધીનો પરિહાર કરે; અર્થાત્ બુદ્ધિમાનનું કર્તવ્ય છે કે તે ક્રોધાદિકકષાયરૂપ ભાવશસ્ત્રનો પરિત્યાગ કરે, કારણ કે ક્રોધાદિક કષાયોના કરવાથી કર્તાને તેનાથી ડનેક પ્રકારના દુઃખો ભોગવા

एतच्च मया न स्वबुद्धिकल्पनया कथ्यते, किंतु भगवतस्तीर्थकरस्य समीपे तदुपदेशवचनं यथा मया श्रुतं तथा निगद्यते, इत्याशयेनाह—‘ एतत् पश्यकस्य दर्शनम् ’ इत्यादि । अत्रैवोद्देशे कृतव्याख्यानमेतत् ॥ सू० ११ ॥

असौ तीर्थकरः कथंभूतः ? इत्यत आह—‘ आयाणं ’ इत्यादि ।

मूलम्—आयाणं निसिद्धा सगडविभ ॥ सू० १२ ॥

छाया—आदानं निषेद्धा स्वकृतमित् ॥ सू० १२ ॥

સે મીં અનન્તગુને કષ્ટ નિગોદમેં જીવે ઇનકે કરનેકે હી ફલસ્વરૂપ ભોગતા હૈ । અતઃ મુનિકે લિયે ક્રોધાદિ કષાયોંકા પરિહાર કરના હી સર્વશ્રેયસ્કર હૈ । ઇનકા પરિહાર કરનેસે ફિર ડસકો ગર્ભવાસાદિક તથા નિગોદકે અનન્ત કષ્ટોંકો નહીં સહના પડતા હૈ । ઇનકા ત્યાગ કરના હી ડન દુઃખોંકે અભાવકા હેતુ હૈ । શ્રીસુધર્માસ્વામી જમ્બૂસ્વામીસે કહતે હૈં—હે જમ્બૂ ! યહ જો કુલ્લ મીં મૈને યહાં તક પ્રતિપાદન કિયા હૈ વહ અપની બુદ્ધિસે કલ્પિત કર નહીં કિયા હૈ; કિન્તુ ભગવાન્ તીર્થંકર શ્રીવર્ધમાનસ્વામીકે સમીપ ડનકે ઉપદેશરૂપ વચન જૈસા મૈને સુના હૈ ડસી તરહસે કહા હૈ । ઇસી આશયસે શ્રી સુધર્માસ્વામી “ એયં પાસગસ્સ દંસણં ” ઇત્યાદિ સૂત્ર કી સાક્ષી દેતે હૈં । ઇસ સૂત્રકા વ્યાખ્યાન ઇસી ઉદ્દેશકે પહેલે સૂત્રમેં કિયા જા ચુકા હૈ ॥ સૂ० ૧૧ ॥

જિનકા યહ દર્શન હૈ વે તીર્થંકર ભગવાન્ કૈસે હોતે હૈં ? સો કહતે હૈં—‘ આયાણં ’ ઇત્યાદિ ।

પડે છે. ગર્ભવાસના દુઃખોથી અનંતગણા કષ્ટ નિગોદમાં જીવે તેના કરવાના ફળ સ્વરૂપ ભોગવે છે, અતઃ મુનિ માટે ક્રોધાદિ કષાયોના પરિહાર કરવો જ સર્વશ્રેયસ્કર છે. તેનો પરિત્યાગ કરવાથી ફરીથી તેને ગર્ભવાસાદિકના તથા નિગોદના અનંત દુઃખોને સહન કરવા પડતા નથી. તેનો ત્યાગ કરવું જ તે દુઃખોના અભાવનો હેતુ છે.

શ્રી સુધર્માસ્વામી જમ્બૂસ્વામીથી કહે છે—હે જમ્બૂ ! આ જે કાંઈ પણ મેં આહીંયા સુધી પ્રતિપાદન કરેલ છે તે પોતાની બુદ્ધિથી કલ્પિત કરી કહેલ નથી, પણ ભગવાન તીર્થંકર શ્રી વર્ધમાન સ્વામીના સમીપે તેના ઉપદેશરૂપ વચન જેવું મેં સાંભળેલ છે તે જ મેં કહેલ છે. તે આશયથી શ્રી સુધર્માસ્વામી “એયં પાસગસ્સ દંસણં” ઇત્યાદિ સૂત્રની સાક્ષી આપે છે. આ સૂત્રનું વ્યાખ્યાન આ ઉદ્દેશના પહેલા સૂત્રમાં કરવામાં આવેલ છે. ॥ સૂ० ૧૧ ॥

જેનું આ દર્શન છે તે તીર્થંકર ભગવાન કેવા હોય છે ? તે કહે છે—‘આયાણં’ ઇત્યાદિ.

ટીકા— આદાનમિતિ—આદાનં કર્મોપાદાનં ક્રોધં, નિષેદ્ધા=અપનેતા સ્વકૃત-  
મિત્=પૂર્વોપાર્જિતકર્મક્ષપયિતા ભવતીત્યર્થઃ ॥ સૂ. ૧૨ ॥

જમ્બૂસ્વામી પૃચ્છતિ—‘ કિમત્થિ ઉવાહી ’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્—કિમત્થિ ઉવાહી પાસગસ્સ !, ન વિજ્ઞઙ્ગ નત્થિત્તિ  
વેમિ ॥ સૂ. ૧૩ ॥

છાયા—કિમસ્તિ ઉપાધિઃ પશ્યકસ્ય, ન વિદ્યતે નાસ્તીતિ વ્રવીમિ ॥ ૧૩ ॥

ટીકા—પશ્યકસ્ય=કેવલિનઃ, ઉપાધિઃ ઉપાધીયતે ઇત્યુપાધિઃ, તત્ર દ્રવ્યો-  
પાધિર્હિરણ્યસુવર્ણાદિઃ, ભાવોપાધિર્જ્ઞાનાવરણીયાદિકં કર્મ, યદ્વા-ઉપાધીયતે વ્યપ-

આદાન=કર્મોંકે ઉપાદાન-ગ્રહણ કરનેમેં પ્રધાનકારણ એસે ક્રોધકા  
જો પરિહાર કરતા હૈ વહ અપને પૂર્વોપાર્જિત કર્મોંકા વિનાશક હોતા હૈ ।

ભાવાર્થ—અષ્ટવિધ કર્મોંકા મૂલ કારણ ક્રોધ હૈ, એસા સમઙ્ગકર  
તીર્થંકર ભગવાનને ઇસકા સર્વથા પરિહાર ક્રિયા હૈ । અતઃ ઇસકે પરિ-  
હારસે વે નવીન કર્મોંકે બંધક નહીં હુએ, ઇતના હી નહીં; ઉનકી આત્મામેં  
જો કુછ પૂર્વસંચિત કર્મ થે ઉનકો ભી સંવરકી પ્રાપ્તિસે ઉન તીર્થંકર પ્રભુને  
નષ્ટ કર દિયે । ઇસલિયે મોક્ષાભિલાષી મુનિકા કર્તવ્ય હૈ કિ વહ વીતરાગ  
તીર્થંકરપ્રભુકા આદર્શ સામને રાખકર ઉસ માર્ગકા અનુસરણ કરે ॥ સૂ. ૧૨ ॥

અવ ઉપાધિ કે વિષયમેં કહતે હૈ—‘ કિમત્થિ ’ ઇત્યાદિ ।

જમ્બૂસ્વામી શ્રી સુધર્માસ્વામીસે પૂછતે હૈ કિ—હે ભદ્રન્ત ! કેવલી  
ભગવાનકે ઉપાધિ હૈ ક્યા ? શ્રી સુધર્માસ્વામી કહતે હૈ કિ ઉનકે કિસી  
ભી પ્રકારકી ઉપાધિ નહીં હૈ । હિરણ્યસુવર્ણાદિરૂપ દ્રવ્ય-ઉપાધિ ઔર

આદાન=કર્મોંના ઉપાદાન-ગ્રહણ કરવામાં પ્રધાન કારણ જે ક્રોધ છે તેનો જે  
પરિહાર કરે છે તે પોતાના પૂર્વોપાર્જિત કર્મોંના વિનાશક બને છે.

ભાવાર્થ—અષ્ટવિધ કર્મોંનું મૂલ કારણ ક્રોધ છે, એવું સમજીને તીર્થંકર ભગ-  
વાને તેનો સર્વથા પરિહાર કરેલ છે, માટે તેના પરિહારથી તે નવીન કર્મોંના બંધક  
નથી થયાં, એટલું જ નહિ, જેટલા કંઈ તેની આત્મામાં પૂર્વ સંચિત કર્મ હતા  
તે સંવરની પ્રાપ્તિથી તે તીર્થંકર પ્રભુએ નષ્ટ કરી નાખ્યા. માટે મોક્ષાભિલાષી  
મુનીનું કર્તવ્ય છે કે તે વીતરાગ પ્રભુનો આદેશ સામે રાખીને તે માર્ગનું  
અનુસરણ કરે ॥ સૂ. ૧૨ ॥

હવે ઉપાધિના વિષયમાં કહે છે—‘ કિમત્થિ ’ ઇત્યાદિ.

જમ્બૂ સ્વામી સુધર્મા સ્વામીને પૂછે છે કે હે ભદ્રન્ત ! કેવળી ભગવાનને  
ઉપાધિ છે કે નહિ ? શ્રી સુધર્માસ્વામી કહે છે કે તેને કોઈ પણ પ્રકારની ઉપાધિ  
નથી. હિરણ્ય સુવર્ણાદિરૂપ દ્રવ્ય-ઉપાધિ અને જ્ઞાનાવરણીયાદિ કર્મ ભાવ-ઉપાધિ આ

दिश्यते येनेत्युपाधिः—कर्मजनितो नरकादिभवः, अस्ति किम् ? । श्रीसुधर्मास्वामी उत्तरयति—न विद्यते । ‘नास्ति’ इति—उत्तरवाक्यार्थस्य दाढ्यबोधनाय, अध्ययन-समाप्तिमुच्यनाय वाऽर्थतः पुनः कथनम् । यद्वा—‘न विद्यते’ इत्यन्तं प्रश्नवाक्यम् । पश्यकस्योपाधिः किमस्ति, उत न विद्यते ? अत्रोत्तरमाह—नास्तीति । अष्टविधं कर्म, कर्मजनितनरकादिभवो वा केवलिनो न भवतीत्यर्थः । तथा चोक्तं—

ज्ञानावरणीयादिकर्म भाव-उपाधि, इस प्रकारसे उपाधिके दो भेद हैं; इनमेंसे कोई भी उपाधि उनके नहीं है । अथवा कर्मजनित जो नरकादि पर्याय है वह भी उपाधि है, यह उपाधि भी उनमें नहीं है । प्रश्न और उत्तरके रूपमें यह सूत्र है, जैसे—“किमत्थि उवाही पासगस्स” किमस्ति उपाधिः पश्यकस्य ?, यहां तक प्रश्नवाक्य है “न विज्जइ नत्थि”—न विद्यते नास्ति, यह उत्तर वाक्य है । अर्थात् सर्वज्ञ-तीर्थङ्कर भगवानके उपाधि है कि नहीं? नहीं है । यहां पर “न विद्यते” इस क्रियाकी पर्यायवाची क्रिया जो “नास्ति” बतलाई है, सो उत्तरवाक्यके अर्थकी दृढ़ता समझानेके लिये, और अध्ययनकी समाप्ति सूचन करनेके लिये ।

अथवा—“किमत्थि उवाही पासगस्स न विज्जइ” यहां तक प्रश्न-वाक्य है, और “नत्थि” यह उत्तरवाक्य है । अर्थात्—सर्वज्ञ-तीर्थङ्करको उपाधि है कि नहीं? यहां तक शिष्यका प्रश्न है । गुरुका उत्तर है—‘नत्थि’—नहीं है ।

भावार्थ—केवली तीर्थङ्कर भगवानके न अष्टविध कर्मरूप उपाधि है और न कर्मजन्य-नरकादिपर्यायरूप उपाधि ही है, वे उपाधिसे निर्मुक्त

प्रकारे उपाधिना એ ભેદ છે. તેમાંથી કેઈ પણ ઉપાધિ તેને નથી. અથવા કર્મજનિત જે નરકાદિ પર્યાય છે તે પણ ઉપાધિ છે, તે ઉપાધિ પણ તેમનામાં નથી. પ્રશ્ન અને ઉત્તરના રૂપમાં એ સૂત્ર છે, જેમ—“કિમત્થિ ઉવાહી પાસગસ્સ”—કિમસ્તિ ઉપાધિ: પચ્ચકસ્ય ? આંહી સુધી પ્રશ્નવાક્ય છે. “ન વિજ્જઈ નત્થિ”—નવિદ્યતે નાસ્તિ એ ઉત્તર વાક્ય છે. અર્થાત્ સર્વજ્ઞ તીર્થંકર ભગવાનને ઉપાધિ છે કે નહિ ?, નથી. આ ઠેકાણે “ન વિદ્યતે” આ ક્રિયાની પર્યાયવાચી ક્રિયા જે “નાસ્તિ” બતાવી છે તે ઉત્તરવાક્યના અર્થની દૃઢતા સમજાવવા માટે, અને અધ્યયનની સમાપ્તિ સૂચન કરવા માટે. અથવા—“કિમત્થિ ઉવાહી પાસગસ્સ ન વિજ્જઈ” અહીં સુધી પ્રશ્નવાક્ય છે, અને ‘નત્થિ’ આ ઉત્તરવાક્ય છે. અર્થાત્ સર્વજ્ઞ તીર્થંકરને ઉપાધિ છે કે નહિ ? અહીં સુધી શિષ્યનો પ્રશ્ન છે. ગુરુનો ઉત્તર છે—‘નત્થિ’ નથી.

ભાવાર્થ—કેવળી તીર્થંકર ભગવાનને અષ્ટવિધકર્મરૂપ ઉપાધિ નથી, અને કર્મજન્ય નરકાદિપર્યાયરૂપ ઉપાધિ પણ નથી. તે તો ઉપાધિથી નિર્મુક્ત છે.

“દગ્ધે વીજે યથાઽત્યન્તં, પ્રાદુર્ભવતિ નાદ્કુરઃ ।

કર્મવીજે તથા દગ્ધે, ન રોહતિ ભવાદ્કુરઃ ” ॥ ૧ ॥

इति ब्रवीमि—इति=इदं, ब्रवीमि=यथा श्रुतं भगवन्मुखात् तथा कथयामीत्यर्थः । सू० १३ ।

॥ તૃતીયાધ્યયનસ્ય ચતુર્થોદ્દેશઃ સમાપ્તઃ ॥ ૩-૪ ॥

“તૃતીયેઽધ્યયને સુપ્તજાગરુકો ચ વર્ણિતો ।

સુપ્તદુઃસ્વં મુનિત્વે ચ, કારણં ક્રોધવર્જનમ્ ” ॥ ૧ ॥

॥ इतिथी विश्वविख्यात-जगद्वल्लभ-प्रसिद्धवाचक-पञ्चदशभाषाकलितललित-  
कलापाऽऽलापक-प्रविशुद्धगद्यपद्यनैकग्रन्थनिर्मापक-त्रादिमानमर्दक-शाहू-  
छत्रपति-कोल्हापुरराजप्रदत्त-“जैनशास्त्राचार्य”-पदभूषित-कोल्हापुर-  
राजगुरु-वालव्रह्मचारि-जैनाचार्य-जैनधर्मदिवाकर-पूज्य-श्री-  
वासीलाल-व्रतिविरचितायाम् आचाराङ्गसूत्रस्याचारचिन्ता-  
मणिटीकायां शीतोष्णीयाख्यं तृतीयमध्ययनं संपूर्णम् ॥३॥

हैं । क्यों कि उनके कर्मरूपी बीज जल चुका है, कहा भी है—

“દગ્ધે વીજે યથાઽત્યન્તં, પ્રાદુર્ભવતિ નાદ્કુરઃ ।

કર્મવીજે તથા દગ્ધે, ન રોહતિ ભવાદ્કુરઃ ॥ ૧ ॥ ”

जिस प्रकार बीजके नष्ट होनेपर अङ्कुर उत्पन्न नहीं होता है उसी प्रकार कर्मरूपी बीजके विनाश होने पर संसाररूपी अङ्कुर उत्पन्न नहीं होता है । ‘त्ति वे मि’ ‘इति ब्रवीमि’ इस प्रकार मैं कहना हूँ, अर्थात्-भगवानके मुखसे मैंने जैसा सुना है वैसा ही तुमसे कहता हूँ ॥सू० १३॥

તીસરે અધ્યયન કા ચોથા ઉદ્દેશ સમાપ્ત ॥ ૩-૪ ॥

इस तृतीय अध्ययनके चार उद्देशोंमें यथाक्रमसे इस प्रकार विषय वर्णित हुए हैं ।

કારણ કે તેને કર્મરૂપી બીજ બળી ગયેલ છે, કહ્યું પણ છે—

“દગ્ધે વીજે યથાઽત્યન્તં, પ્રાદુર્ભવતિ નાદ્કુરઃ ।

કર્મવીજે તથા દગ્ધે, ન રોહતિ ભવાદ્કુરઃ ” ॥ ૧ ॥

જેવી રીતે બીજનો નાશ થવાથી અંકુર ઉત્પન્ન થતાં નથી તે પ્રકારે કર્મ રૂપી બીજનો વિનાશ થવાથી સંસારરૂપી અંકુર ઉત્પન્ન થતો નથી.

‘ત્તિ વેમિ’ इति ब्रवीमि—आ प्रकारे हुं कहुं छुं. अर्थात् भगवानना सुभथी में जेवुं सांलग्युं छे तेवुं न हुं तमोने कहुं छु. ॥ सू० १३ ॥

ત્રીજા અધ્યયનનો ચોથો ઉદ્દેશ સમાપ્ત ॥ ૩-૪ ॥

આ ત્રીજા અધ્યયનના ચાર ઉદ્દેશોમાં યથાક્રમથી આ પ્રકારે વિષય વર્ણિત થયેલ છે.—

(૧) પ્રથમ ઉદ્દેશમાં ભાવસુષ્ટ સંયમિયોંકે દોષ ઓર સંયમમાં જાગ-રૂક સંયમિયોં કે ગુણ પ્રકટ કિયે હેં ।

(૨) ઢિતીય ઉદ્દેશમાં ભાવનિદ્રાવાલે સંયમિયોંકો અનેક દુઃખોંકા અનુભવ કરના પડતા હેં, યહ વિષય વર્ણિત કિયા ગયા હેં ।

(૩) તૃતીય ઉદ્દેશમાં સંયમાચરણકે વિના કેવલ દુઃખોંકે સહનમાત્ર સે કોઈ સાધુ નહીં કહલા સકતા, યહ વિષય પ્રતિપાદિત કિયા હેં ।

(૪) ચતુર્થ ઉદ્દેશમાં છર્દિત-વાન્ત-અન્નકે સમાન કષાય ત્યાગને યોગ્ય હેં, પાપકર્મ પરિહરણીય હેં, તથા પદાર્થોંકે સ્વરૂપકો જાનનેવાલે સંયમીકે લિયે સંયમ આરાધનીય હેં, ઇત્યાદિ સમસ્ત વિષય પ્રકટ કિયા ગયા હેં ॥ ૧૧ ॥

॥ યહ આચારાંગસૂત્રકે શીતોષ્ણીયનામક તૃતીય અધ્યયનકા  
હિન્દી-ભાષાનુવાદ સમાપ્ત ॥ ૩ ॥

(૧) પ્રથમ ઉદ્દેશમાં ભાવસુષ્ટ સંયમિઓના દોષ અને જાગરૂક સંયમિ-ઓના ગુણ પ્રકટ કરેલ છે.

(૨) બીજા ઉદ્દેશમાં ભાવનિદ્રાવાળા સંયમિઓને અનેક દુઃખોના અનુભવ કરવો પડે છે. એ વિષય વર્ણિત કરેલ છે.

(૩) ત્રીજા ઉદ્દેશમાં સંયમાચરણ વિના કેવળ દુઃખોના સહન માત્રથી કોઈ સાધુ કહેવાતા નથી. એ વિષય પ્રતિપાદિત કરેલ છે.

(૪) ચોથા ઉદ્દેશમાં છર્દિત—વાન્ત અન્ન સમાન કષાય ત્યાગવાયોગ્ય છે. પાપકર્મ પરિહરણીય છે. તથા પદાર્થોના સ્વરૂપને જાણવાવાળા સંયમી માટે સંયમ આરાધનીય છે. ઇત્યાદિ સમસ્ત વિષય પ્રકટ કરેલ છે.

આ આચારાંગસૂત્રના શીતોષ્ણીય નામના ત્રીજા અધ્યયનનો  
ગુજરાતી-ભાષાનુવાદ સમાપ્ત ॥ ૩ ॥





। અથાચારાઙ્ગસૂત્રસ્ય સમ્યક્ત્વનામકં ચતુર્થમધ્યયનમ્ ।

નિરુપાધિકં સંયમાનુષ્ઠાનં મુનિત્વસ્ય મોક્ષસ્ય ચ કારણમિતિ પ્રાગુક્તાધ્યયન-  
ત્રયેણ પ્રતિપાદિતં, તદ્વિ સમ્યક્ત્વમન્તરેણ ન સંભવતીત્યતઃ સમ્યક્ત્વાચ્ચ ચતુર્થ-  
મધ્યયનં કથયતિ । સમ્યક્ત્વપ્રતિવોધકત્વાદિદમધ્યયનમપિ સમ્યક્ત્વમુચ્યતે ।  
યથા ચતુઃશાલમધ્યગતઃ પ્રદીપઃ શાલાચતુષ્ઠયં પ્રદ્યોતયતિ, તદ્વદિદં મધ્યગતમધ્યયનં  
સર્વાધ્યયનસ્થમાચારમવભાસયતિ । પ્રસન્નતસ્તાવત્ સમ્યક્ત્વં નિરૂપ્યતે—

સમન્વતિ જ્ઞાનાદિગુણં પ્રાપ્નોતીતિ સમ્યગ્=જીવસ્તસ્ય ભાવઃ સમ્યક્ત્વમ્ । તચ  
તત્ત્વાર્થશ્રદ્ધાનમ્, તત્ત્વાર્થેષુ સર્વજ્ઞવીતરાગોપદિષ્ટતયા પારમાર્થિકેષુ જીવાજીવાદિ-  
પદાર્થેષુ શ્રદ્ધાનં=રુચિરભિપ્રીતિઃ । ઉક્તઞ્ચ—

। આચારાઙ્ગસૂત્રકા સમ્યક્ત્વનામક ચતુર્થ અધ્યયન ।

ઉપાધિરહિત સંયમકા આરાધન, મુનિપનેકા ઔર મોક્ષકા કારણ  
હોતા હૈ, યહ વાત યદ્યપિ પહિલે કહે ગયે ત્રીન અધ્યયનોંમેં અચ્છી  
તરહ સે પ્રકટ કી જા ચુકી હૈ । પરન્તુ વહ સંયમારાધન સમ્યક્ત્વકે વિના  
નહીં હો સકતા હૈ । ઇસલિયે સમ્યક્ત્વ નામકા ચૌથા અધ્યયન કહા  
જાતા હૈ । જૈસે આમને-સામનેકે ચાર મકાનોં કે ચૌક મેં રહ્યા હુઆ  
દીપક ઉન ચારોં હી મકાનોં કો પ્રકાશિત કરનેવાલા હોતા હૈ, ઠીક ઇસી  
તરહસે સવં અધ્યયનોં કે મધ્ય મેં રહ્યા હુઆ યહ અધ્યયન ભી સમસ્ત  
અધ્યયનોં કે આચાર કા પ્રકાશક હૈ । ઇસલિયે પ્રકરણવશ ઁસીકા  
નિરૂપણ કિયા જાતા હૈ ।

જ્ઞાનાદિક ગુણોં કો જો પ્રાપ્ત કરતાં હૈ ઁસકા નામ સમ્યક્ હૈ । ઇસ  
અપેક્ષા સે વહ સમ્યક્ જીવસ્વરૂપ હૈ । ઁસકા જો ભાવ ઁસે સમ્યક્ત્વ

આચારાંગસૂત્રનું સમ્યક્ત્વનામનું ચોથું અધ્યયન.

ઉપાધિરહિત સંયમનું આગધન મુનિપણનું તથા મોક્ષનું કારણ થાય  
છે, આ વિષય પહેલાં ત્રણ અધ્યયનોમાં સ્પષ્ટ રીતે પ્રકાશિત કરવામાં આવેલ છે;  
પણ આ સંયમારાધન સમ્યક્ત્વ વિના બની શકતું નથી. માટે સમ્યક્ત્વ નામનું  
ચોથું અધ્યયન કહેવામાં આવે છે. જેવી રીતે ચાર મકાનોના ચોકમાં રાખેલ  
એક દીપક ચારે મકાનોને પ્રકાશિત કરે છે તેવી રીતે બધા અધ્યયનોના મધ્યમાં  
સ્થિત આ અધ્યયન બધા અધ્યયનોના આચારનું પ્રકાશક છે આ માટે પ્રકરણ  
વશ તેનું જ પ્રતિપાદન કરવામાં આવે છે.

જ્ઞાનાદિક ગુણને જે પ્રાપ્ત કરે છે તેનું નામ સમ્યક્ છે. તે અપેક્ષાએ  
આ સમ્યક્ જીવસ્વરૂપ છે. એનો જે ભાવ તેને સમ્યક્ત્વ કહે છે. આ સમ્યક્ત્વ  
તત્ત્વાર્થશ્રદ્ધાનરૂપ છે. સર્વજ્ઞ વીતરાગ પ્રભુદ્વારા ભાષિત હોવાથી પારમાર્થિક સત્ય-

“ જિનોક્તતત્ત્વેષુ રુચિઃ, શુદ્ધા સમ્યક્ત્વમુચ્યતે । ” इति ।

જિનોક્તતત્ત્વેષુ જીવાજીવાદિપદાર્થેષુ યા શુદ્ધા=અજ્ઞાનસંશયવિપર્યયનિરાકરણેન નિર્મલા રુચિઃ=શ્રદ્ધાનં સા સમ્યક્ત્વમુચ્યતે ।

કહતે હૈં । વહ સમ્યક્ત્વ તત્ત્વાર્થશ્રદ્ધાનરૂપ હૈ । સર્વજ્ઞ વીતરાગ પ્રભુકે દ્વારા કહે હુગ હોનેસે પારમાર્થિક-સત્યસ્વરૂપ જીવ અજીવાદિક પદાર્થોં મેં જો શ્રદ્ધા-રુચિ-પ્રીતિ હૈં उसीका नाम तत्त्वार्थश्रद्धान है । कहा भी है—

“ જિનોક્તતત્ત્વેષુ રુચિઃ, શુદ્ધા સમ્યક્ત્વમુચ્યતે ” इति ।

અર્થાત્—જિનેન્દ્ર ભગવાન્ દ્વારા કહે ગયે તત્ત્વોં મેં જો નિર્દોષ રુચિ-પ્રીતિ હૈં, उसीका नाम सम्यक्त्व है ।

વિશેષાર્થઃ—સર્વજ્ઞ, વીતરાગ ઔર હિતોપદેશી પ્રભુકે દ્વારા પ્રતિ-પાદિત કિયે ગયે જો જીવ-અજીવ આદિ નૌ પદાર્થ હૈં, વે યહાં પર ‘તત્ત્વ’-શબ્દવાચ્ય હૈં । ‘તત્ત્વ’ શબ્દ કા અર્થ પારમાર્થિક-વાસ્તવિક હૈ । ‘શ્રદ્ધાન’ શબ્દકા અર્થ રુચિ-દૃઢ વિશ્વાસ-આસ્થા હૈ । જીવ અજીવાદિક પદાર્થ પ્રભુદ્વારા ઉપદિષ્ટ હોને સે સત્ય-વાસ્તવિક હૈં । ફલિતાર્થ હસકા યહી હૈ—જીવાદિક પદાર્થ વીતરાગ પ્રભુકે દ્વારા પ્રતિપાદિત કિયે ગયે હૈં, इसी-लिये वे यथार्थ-सत्य तत्त्व हैं । उनमें जो दृढ़ विश्वास है उसी का नाम तत्त्वार्थश्रद्धान है । इसीका नाम सम्यग्दर्शन है ।

સ્વરૂપ જીવ અજીવ આદિ પદાર્થોંમાં જે શ્રદ્ધાન-રૂચિ પ્રીતિ છે એનું નામ તત્ત્વાર્થ-શ્રદ્ધાન છે. કહ્યું છે—

“ જિનોક્ત તત્ત્વેષુ રુચિઃ, શુદ્ધા સમ્યક્ત્વમુચ્યતે ” इति ।

અર્થાત્—જિનેન્દ્ર ભગવાન દ્વારા જે તત્ત્વો કહેવાયા છે એમાં જે નિર્દોષ રૂચિ-પ્રીતિ છે એનું નામ સમ્યક્ત્વ છે.

વિશેષાર્થઃ—સર્વજ્ઞ, વીતરાગ અને હિતોપદેશી પ્રભુદ્વારા પ્રતિપાદિત જે જીવ-અજીવ આદિ નવ પદાર્થ છે તે અહીંયા તત્ત્વશબ્દવાચ્ય છે. તત્ત્વ-શબ્દનો અર્થ પારમાર્થિક-વાસ્તવિક છે. શ્રદ્ધાન-શબ્દનો અર્થ રૂચિ-દૃઢવિશ્વાસ-આસ્થા છે. જીવ અજીવ આદિ પદાર્થ પ્રભુદ્વારા ઉપદિષ્ટ હોવાથી સત્ય-વાસ્તવિક છે. એનો ફલિતાર્થ એ છે કેઃ—જીવાદિક પદાર્થ વીતરાગ પ્રભુદ્વારા પ્રતિપાદિત કરેલ છે. જેથી તે યથાર્થ-સત્ય તત્ત્વ છે, એમાં જે દૃઢ વિશ્વાસ છે તેનું નામ તત્ત્વાર્થ શ્રદ્ધાન છે. એનું જ નામ સમ્યગ્દર્શન છે.

નનુ યદુચ્યતે—“ તત્ત્વાર્થશ્રદ્ધાનં સમ્યક્ત્વ ”—મિતિ; તત્ર શ્રદ્ધાનં તથેતિપ્રત્યયઃ, તીર્થકરેણ યથા પ્રતિવોધિતં તથૈવ વસ્તુતો જીવાજીવાદિપદાર્થાનાં સ્વરૂપમિતિ નિશ્ચયપૂર્વિકા પ્રીતિરૂપા રુચિનામ્ની માનસી પરિણતિઃ । ઇયં સ્વલ્પપર્યાપ્તકાઘવસ્થાયાં

રુચિ ( પ્રીતિ ) કે સાથ જો શુદ્ધ-નિર્દોષ વિશેષણ દિયા ગયા હૈ ઉસકા ભાવ યહી હૈ કિ વહ રુચિ ( પ્રીતિ ) અજ્ઞાન સંશય ઔર વિપર્યય, इन तीन दोषों से रहित होनी चाहिये, तब ही वह निर्दोष रूचि है । जिसमें इन अज्ञानादिका सद्भाव है वह सत्य रूचि नहीं, किन्तु सदोष रूचि है ।

વિશેષાર્થઃ—પરસ્પર વિરુદ્ધ અનેક કોટિકે સ્પર્શ કરનેવાલે જ્ઞાન કો ‘સંશય’ કહતે હૈં । જૈસે—યહ સ્થાણુ હૈ કિ પુરુષ હૈ ? । વિપરીત એક કોટિકા નિશ્ચય કરનેવાલા જ્ઞાન ‘ વિપર્યય ’ કહલાતા હૈ—જૈસે સીપ કો ચાંદી સમઘ્નના । યહ કુછ હોગા, એસે પ્રતિભાસકો અજ્ઞાન યા અનધ્યવસાય કહતે હૈં, જૈસે માર્ગ ચલતે હુએ કો તૃણસ્પર્શ વગૈરહ કા જ્ઞાન । યે ત્રીન—અજ્ઞાન, સંશય, વિપર્યય, રુચિકે દૂષણ હૈં । इनसे रहित रूचि ही सम्यक्-यथार्थ रूचि कहलाती है ।

શંકા—“તત્ત્વાર્થશ્રદ્ધાનં સમ્યગ્દર્શનં હૈ” એસા જો સમ્યક્ત્વકા લક્ષણ કહા ગયા હૈ, વહાં “તથા” ઇસ પ્રકાર કે પ્રત્યય-વિશ્વાસ કા નામ હી શ્રદ્ધાનં હૈ । અર્થાત્—‘ તીર્થકર પ્રભુને જીવાદિક પદાર્થોં કા જિસ સ્વરૂપસે પ્રતિપાદન કિયા હૈ, उन जीवादिक पदार्थों का वैसा ही स्वरूप है ’ ઇસ પ્રકાર

રૂચિ ( પ્રીતિ ) ની સાથે જે શુદ્ધ-નિર્દોષ વિશેષણ આપવામાં આવ્યું છે તેનો ભાવ એ છે કે તે રૂચિ ( પ્રીતિ ) અજ્ઞાન, સંશય અને વિપર્યય, આ ત્રણ દોષોથી રહિત હોવી જોઈએ. ત્યારેજ તે નિર્દોષ રૂચિ છે. જેમાં આ અજ્ઞાનાદિનો સદ્ભાવ છે તે સત્ય રૂચિ નહીં; પણ સદોષ રૂચિ છે.

વિશેષાર્થઃ—પરપર વિરુદ્ધ અનેક કોટિના (પ્રકારના) સ્પર્શ કરવાવાળા જ્ઞાનને સંશય કહે છે, જેમ—આ સ્થાણુ છે કે પુરુષ છે ? । વિપરીત એક કોટિના નિશ્ચય કરવાવાળા જ્ઞાનને વિપર્યય કહે છે, જેમ—છીપને ચાંદી બાણવી આ કાંઈકે હશે, આવા પ્રતિભાસને અજ્ઞાન અગર અનધ્યવસાય કહે છે, જેમ—માર્ગ પર ચાલવાવાળાને તૃણસ્પર્શ વિગેરેનું જ્ઞાન, આ ત્રણ—અજ્ઞાન, સંશય, વિપર્યય—રૂચિનાં દૂષણો છે. એનાથી રહિત રૂચી જ સમ્યક્-યથાર્થ—રૂચી કહેવાય છે.

શંકા—“ તત્ત્વાર્થશ્રદ્ધાનં સમ્યગ્દર્શનં છે ” એવું જે સમ્યક્ત્વનું લક્ષણ કહેવામાં આવે છે ત્યાં “તથા” આવા પ્રકારના પ્રત્યય-વિશ્વાસ-નું નામ જ શ્રદ્ધાનં છે. અર્થાત્ ‘ તીર્થકર પ્રભુએ જીવાદિક પદાર્થોને જે સ્વરૂપે પ્રતિપાદન કર્યા છે. એ જીવાદિક પદાર્થોના તેવા જ સ્વરૂપ છે ’ આવા પ્રકારની નિશ્ચયપૂર્વક જે

नेप्यते, सम्यक्त्वं तु तस्यामपीष्टं, पदपष्टिसागरोपमरूपायाः साद्यपर्यवसितकालरूपायाश्च तस्योत्कृष्टस्थितेः प्रतिबोधनादिति कथं नागमविरोधः ? किंच-तत्त्वार्थ-श्रद्धानम्य रागात्मकरुचिरूपत्वेन वीतरागे तदभावात् तत्र सम्यक्त्वं कथमुपपद्येत?—

कीं निश्चयपूर्वक जो प्रीतिस्वरूप रुचि नास की मानसिक परिणति है वही तत्त्वार्थ-श्रद्धान है । यह अपर्याप्तावस्था में घटित नहीं होती, परंतु सम्यक्त्व तो वहां पर भी माना गया है । कारण कि कुछ अधिक छासठ ६६ सागर एवं सादि अनन्त उस सम्यक्त्व की उत्कृष्ट स्थिति बतलाई गई है, तब तो आगम से विरोध ही आवेगा ।

अर्थात्—आप तत्त्वार्थश्रद्धान सम्यक्त्व का लक्षण करते हैं । लक्षण के दोष-अव्याप्ति, अतिव्याप्ति और असंभव है । जो लक्षण अपने संपूर्ण लक्ष्य में नहीं घटित होता; वहां अव्याप्ति दोष होता है । जो अपने लक्ष्य में रहते हुए अलक्ष्य में भी रहता है, वहां अतिव्याप्ति दोष होता है । तथा-जिस लक्षण का समन्वय लक्ष्य में नहीं होता, वहां असंभव दोष होता है । यहां प्रकृत में अव्याप्ति दोष होगा । क्योंकि शास्त्रकारों ने क्षायोपशमिक सम्यक्त्व की उत्कृष्ट स्थिति कुछ अधिक ६६ छासठ सागरोपम और क्षायिक सम्यक्त्व की स्थिति सादि और अनन्त मानी है । श्रायिक या क्षायोपशमिक सम्यक्त्व सहित मरण करनेवाले जीव के

प्रीतिस्वरूप इति नामनी मानसिक परिणति છે તે જ તત્ત્વાર્થશ્રદ્ધાન છે. એ અપર્યાપ્તાવસ્થામાં ઘટિત નથી થતી. પરંતુ સમ્યક્ત્વ તો ત્યાં પણ માનેલ છે. કારણ કે ૬૬ છાસઠ સાગર અઝેરી એવં સાદિ અનન્ત, એ સમ્યક્ત્વની ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ કહેલી છે ત્યારે તો આગમથી વિરોધ આવશે.

અર્થાત્—આપ ‘તત્ત્વાર્થશ્રદ્ધાન સમ્યક્ત્વ છે.’ એ પ્રકારે સમ્યક્ત્વનું લક્ષણ કહો છો. લક્ષણના દોષ અવ્યાપ્તિ, અતિવ્યાપ્તિ અને અસંભવ છે. જે લક્ષણ પોતાના સમસ્ત લક્ષ્યમાં ઘટિત નથી હોતું, ત્યાં અવ્યાપ્તિ દોષ થાય છે. જે પોતાના લક્ષ્યમાં અને અલક્ષ્યમાં પણ ઘટિત થાય છે ત્યાં અતિવ્યાપ્તિ દોષ થાય છે. અને જે લક્ષણનો સમન્વય લક્ષ્યમાં હોતો જ નથી, ત્યાં અસંભવ દોષ થાય છે. અહીં આ પ્રકૃતમાં અવ્યાપ્તિ-દોષ આવશે, કેમ કે શાસ્ત્રકારોએ ક્ષાયોપશમિક-સમ્યક્ત્વની ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ ૬૬ છાસઠ સાગરોપમ અઝેરી અને ક્ષાયિક-સમ્યક્ત્વની સ્થિતિ સાદી અને અનન્ત માનેલી છે. ક્ષાયિક અથવા ક્ષાયોપશમિક સમ્યક્ત્વ સહિત મરવાવાળા જીવને

અત્રોચ્યતે—તત્ત્વાર્થશ્રદ્ધાનં સમ્યક્ત્વસ્ય કાર્યમ્ । સમ્યક્ત્વં તુ સમ્યગ્દર્શનાપરનામ-  
ધેયો મિથ્યાત્વક્ષયોપશમાદિજન્યઃ પ્રશમસંવેગાદિલક્ષણઃ શુભ આત્મપરિણામવિશેષઃ ।

અપર્યાપ્તાવસ્થા મેં મી ઉસ ૨ સમ્યક્ત્વ કા સદ્ભાવ માના ગયા હૈ; પરન્તુ તત્ત્વાર્થશ્રદ્ધાન વ્હાં નહીં માના ગયા હૈ । આપ તો સમ્યક્ત્વ કા લક્ષણ તત્ત્વાર્થશ્રદ્ધાન કહતે હૈ ।

તત્ત્વાર્થશ્રદ્ધાન અપર્યાપ્તાવસ્થા કે જીવોં મેં નહીં હોતા; અતઃ વ્હાં સમ્યક્ત્વ કા લક્ષણ નહીં ઘટેગા । લક્ષ્ય મેં લક્ષણકા નહીં ઘટના હી તો અવ્યાપ્તિ હૈ, સો ઇસ લક્ષણ મેં અવ્યાપ્તિ દોષ અનિવાર્ય હૈ । યદિ આપ કહેંગે કિ હમ અપર્યાપ્તાવસ્થા કે જીવોં મેં સમ્યક્ત્વ નહીં માનતે તો આપકો આગમવિરોધરૂપ દોષ આયેગા । ક્યોંકિ આગમ મેં અપર્યાપ્તાવસ્થા કે જીવોં મેં મી સમ્યક્ત્વ માના ગયા હૈ ।

તથા—સમ્યક્ત્વ કા યહ લક્ષણ રાગાત્મકરુચિરૂપ હોને સે વીતરાગ અવસ્થા મેં ઘટિત નહીં હોતા । કારણ કિ ઉસ અવસ્થામેં રાગાત્મક રુચિ કા સર્વથા અભાવ હૈ । એસી પરિસ્થિતિમેં વ્હાં સમ્યક્ત્વ કી ઉત્પત્તિ કા નિર્વાહ મી કૈસે હો સકેગા ?

સમાધાન—તત્ત્વાર્થશ્રદ્ધાન, યહ સમ્યક્ત્વ કા લક્ષણ નહીં હૈ; કિન્તુ ઉસકા કાર્ય હૈ । સમ્યક્ત્વ, જિસકા દૂસરા નામ સમ્યગ્દર્શન હૈ, એવં જો મિથ્યાત્વ કે ક્ષાયોપશમિકાદિક સે ઉત્પન્ન હોતા હૈ, તથા જિસકે લક્ષણ પ્રશમ, સંવેગાદિક હૈ, વહ આત્મા કા શુભપરિણામવિશેષ હૈ ।

અપર્યાપ્તાવસ્થામાં પણ તે તે સમ્યક્ત્વનો સદ્ભાવ માનેલ છે, પરન્તુ તત્ત્વાર્થશ્રદ્ધાન ત્યાં માનવામાં નથી આવેલ. આપ તો સમ્યક્ત્વનું લક્ષણ તત્ત્વાર્થશ્રદ્ધાન કહો છો.

તત્ત્વાર્થશ્રદ્ધાન અપર્યાપ્તાવસ્થાના છવોમા હોતું નથી, માટે ત્યાં સમ્યક્ત્વનું લક્ષણ ઘટશે નહિ. લક્ષ્યમાં લક્ષણનો સમન્વય નહિ થવાથી જ અવ્યાપ્તિ થાય છે. માટે આ લક્ષણમાં અવ્યાપ્તિ-દોષ અનિવાર્ય છે. કહાય આપ કહોશો કે અમે અપર્યાપ્તાવસ્થાના છવોમાં સમ્યક્ત્વ નથી માનતા તો આપને આગમવિરોધરૂપ દોષ લાગશે, કેમ કે આગમમાં અપર્યાપ્તાવસ્થાના છવોમાં પણ સમ્યક્ત્વ માનેલ છે.

તથા—સમ્યક્ત્વનું એ લક્ષણ રાગાત્મકરુચિરૂપ હોવાથી વીતરાગ અવસ્થામાં ઘટિત નથી થતું, કારણ કે આ અવસ્થામાં રાગાત્મક-રુચિનો સર્વથા અભાવ છે, આવી પરિસ્થિતિમાં ત્યાં સમ્યક્ત્વની ઉત્પત્તિનો નિર્વાહ પણ કેવી રીતે થઈ શકે ?

સમાધાન—તત્ત્વાર્થ-શ્રદ્ધાન એ સમ્યક્ત્વનું લક્ષણ નથી, પણ તેનું કાર્ય છે, સમ્યક્ત્વ જેનું ખીજું નામ સમ્યગ્દર્શન છે, અને જે મિથ્યાત્વના ક્ષયોપશમાદિકથી ઉત્પન્ન થાય છે તથા જેનું લક્ષણ પ્રશમ, સંવેગાદિક છે તે આત્માનું શુભ પરિણામવિશેષ છે.

અત્ર મિથ્યાત્વશબ્દેન મિથ્યાત્વસપ્તકં ગૃહ્યતે, તત્ત્વાનન્તાનુવન્ધિકપાયચતુષ્ટયં મિથ્યાત્વમિશ્રસમ્યક્ત્વમોહનીયત્રયં ચેતિ । इह दर्शनमोहनीयभेदसप्तकं मिथ्यात्वमुच्यते । यद्यपि-अनन्तानुवन्धिकपायचतुष्टयं चारित्रमोहनीयस्य भेदस्तथापि मिथ्यात्वक्षयोपशमाद्यवसरे तत्पूर्वं तस्य क्षय उपशमो वाऽवश्यं भवतीति कृत्वा तदपि मिथ्यात्वशब्देन व्यपदिश्यते । एतच्चाग्रे सम्यक्त्वफलप्रकरणे स्फुटीभविष्यति ।

यहां मिथ्यात्व-शब्द से मिथ्यात्वसप्तक का ग्रहण किया गया है । वे ये हैं—अनन्तानुवन्धी कपाय ४ और मिथ्यात्वमोहनीय, मिश्रमोहनीय, एवं सम्यक्त्वमोहनीय ये तीन ३ । ये सात दर्शनमोहनीय के भेद मिथ्यात्व कहे जाते हैं । यद्यपि अनन्तानुवन्धी ४ कपाय चारित्रमोहनीय के भेद हैं, तो भी मिथ्यात्वके क्षायोपशमादिक के अवसर में उसके पहिले उनका क्षय अथवा उपशम अवश्य ही हो जाता है, इसलिये मिथ्यात्व-शब्दसे उन चारों का भी व्यपदेश होता है ।

विशेषार्थः—मिथ्यात्व यह उपलक्षण शब्द है । उपलक्षण का लक्षण है—“स्वबोधकत्वे सति स्वेतरबोधकत्वम्” अर्थात्—जो स्वबोधक होते हुए अपने से इतर का भी बोधक होता है वह उपलक्षण है । इससे सात प्रकृतियों का ग्रहण होता है । वे ७ प्रकृतियां ये हैंः—अनन्तानुवन्धी क्रोध, अनन्तानुवन्धी मान, अनन्तानुवन्धी माया और अनन्तानुवन्धी लोभ, तथा मिथ्यात्वमोहनीय, मिश्रमोहनीय एवं सम्यक्त्वमोहनीय । मोहनीय कर्म के मूल भेद दो हैं—एक दर्शनमोहनीय, दूसरा चारित्रमोहनीय । इनमें दर्शन-

આ ઠેકાણે મિથ્યાત્વ શબ્દથી મિથ્યાત્વસપ્તકનું ગ્રહણ કરેલ છે. તે એ છે—અનંતાનુબંધી કપાય ચાર ૪, અને મિથ્યાત્વ-મોહનીય, મિશ્ર-મોહનીય, અને સમ્યક્ત્વ-મોહનીય, એ ત્રણ ૩, એ સાત દર્શન-મોહનીયના ભેદો મિથ્યાત્વ કહેવાય છે. કદાચ અનંતાનુબંધી ચાર ૪ કપાય, ચારિત્ર-મોહનીયના ભેદો છે તો પણ મિથ્યાત્વના ક્ષયોપશમાદિકના અવસરમાં એના પહેલાં એનો ક્ષય અથવા ઉપશમ અવશ્ય થઈ જાય છે, તેથી મિથ્યાત્વ-શબ્દથી આ ચારનું વ્યપદેશ થાય છે.

વિશેષાર્થઃ—મિથ્યાત્વ એ ઉપલક્ષણ શબ્દ છે. ઉપલક્ષણનું લક્ષણ છે—સ્વબોધકત્વે સતિ સ્વેતરબોધકત્વમ્, અર્થાત્—સ્વબોધક હોવા છતાં જે પોતાથી બીજાના પણ બોધક થાય છે તે ઉપલક્ષણ છે. એથી સાત પ્રકૃતિયોનું ગ્રહણ થાય છે. એ સાત પ્રકૃતિયો આ છેઃ—અનંતાનુબંધી ક્રોધ, અનંતાનુબંધી માન, અનંતાનુબંધી માયા અને અનંતાનુબંધી લોભ, તથા મિથ્યાત્વ-મોહનીય, મિશ્ર-મોહનીય અને સમ્યક્ત્વ-મોહનીય. મોહનીય કર્મના મૂળ ભેદ એ છે. એક દર્શન-મોહનીય, બીજો ચારિત્ર-મોહનીય.



મોહનીય કે ત્રીણ ભેદ હૈં—મિથ્યાત્વ (અશુદ્ધાંશ) ૧, મિશ્ર (અર્ધશુદ્ધાંશ) ૨, ઔર સમ્યક્ત્વ (શુદ્ધાંશ) ૩ । ઇસ કર્મ કે ઉદય મેં આત્માકા ગુણ સમ્યગ્દર્શન પ્રકટ નહીં હોતા । અર્થાત્ યહ કર્મ આત્માકે સમક્તિ ગુણકા ઘાતક હૈ । ચારિત્રમોહનીયકે અનંતાનુબંધી—ક્રોધ, માન, માયા ઔર લોભ, અપ્રત્યાખ્યાન—ક્રોધ, માન, માયા, લોભ, પ્રત્યાખ્યાન—ક્રોધ, માન, માયા, લોભ, સંજ્વલન—ક્રોધ, માન, માયા, લોભ; ંવં નવ નોકપાય—હાસ્ય, રતિ, અરતિ, ભય, શોક, જુગુપ્સા, સ્ત્રીવેદ, પુંવેદ ઔર નપુંસકવેદ, ં ૨૫ પચીસ ભેદ હૈં । યહ કર્મ આત્મા કે ચારિત્રગુણ કા ઘાતક હોતા હૈ । ઇસકે ઉદય મેં ન તો સર્વસંયમ કા હી ઉદય હોતા હૈ ઔર ન દેશસંયમ કા હી । શંકાકાર કા યહાં પર યહ કહના હૈ કિ સમ્યગ્દર્શન કી ઉત્પત્તિ મેં દર્શનમોહનીયત્રય કા હી ક્ષયોપશમાદિક કહના ચાહિયે; ક્યોં કિ વહ હી ઇસકા પ્રતિપક્ષી કર્મ હૈ । ચારિત્રમોહનીય કે ભેદ અનંતાનુબંધી—ચતુષ્ટય કા ક્ષયોપશમાદિક ંસકે સાથ ૨ ક્યોં કહા । વહ તો સિર્ફ આત્મા કે ચારિત્રગુણ કા હી ઘાતક હૈ ? । ઇસકા યહ સમાધાન હૈ કિ—દર્શનમોહનીય કે ક્ષયોપશમાદિક કે પહિલે હી ંનકા ( કષાયોં કા ) ક્ષયોપશમાદિ અવશ્ય હો જાતા હૈ, ઇસકે વિના ંસકા ક્ષયોપશમાદિ

એમાં દર્શન—મોહનીયના ત્રણ ભેદ છે—મિથ્યાત્વ ( અશુદ્ધાંશ ) ૧, મિશ્ર ( અર્ધશુદ્ધાંશ ) ૨, અને સમ્યક્ત્વ ( શુદ્ધાંશ ) ૩.

આ કર્મના ઉદયમાં આત્માનો ગુણ—સમ્યગ્દર્શન—પ્રગટ નથી થતું. અર્થાત્ આ કર્મ આત્માના સમક્તિ ગુણનું ઘાતક છે. ચારિત્રમોહનીયના અનંતાનુબંધી—ક્રોધ, માન, માયા અને લોભ; અપ્રત્યાખ્યાન—ક્રોધ, માન, માયા, લોભ; પ્રત્યાખ્યાન—ક્રોધ, માન, માયા, લોભ, સંજ્વલન—ક્રોધ—માન—માયા—લોભ અને નવ નોકપાય—હાસ્ય, રતિ, અરતિ, ભય, શોક, જુગુપ્સા, સ્ત્રીવેદ, પુંવેદ અને નપુંસકવેદ, એ પચીસ ૨૫ ભેદ છે. આ કર્મ આત્માના ચારિત્રગુણનું ઘાતક છે. આના ઉદયમાં નથી સર્વસંયમનો ઉદય થતો કે નથી દેશસંયમનો. શંકાકારનું અહીંયા એ કહેવાનું છે કે સમ્યગ્દર્શનની ઉત્પત્તિમાં દર્શનમોહનીયત્રયનું ક્ષયોપશમાદિક કહેવું જોઈએ. કારણ કે તે જ એનું પ્રતિપક્ષી કર્મ છે. ચારિત્રમોહનીયના ભેદ અનંતાનુબંધિયતુષ્ટયના આની સાથેર ક્ષયોપશમાદિક કેમ કહ્યા ? એ તો ક્રૂર આત્માના ચારિત્રગુણના ઘાતક છે ? એનું એ સમાધાન છે કે—દર્શન મોહનીયના ક્ષયોપશમાદિકના પહેલાં જ એનું ( કષાયોનું ) ક્ષયોપશમાદિ અવશ્ય થઈ જાય છે. આના વિના એનું ( મોહનીયનું ) ક્ષયોપશમાદિ

ઉક્તઞ્ચ ચાવશ્યકસૂત્રે—

“ સે ય સમ્મત્તે પસત્થસમ્મત્તમોહણિજ્જકમ્માણુવેયણોપસમક્ખયસમુત્થે પસમ-  
સંવેગાહિલિંગે સુદ્ધે આયપરિણામે પણ્ણત્તે ” ઇતિ ।

છાયા—તત્ત્વ સમ્યક્ત્વં પ્રશસ્તસમ્યક્ત્વમોહનીયકર્માનુવેદનોપશમક્ષયસમુત્થઃ  
પ્રશમસંવેગાદિલિદ્ધઃ શુભઃ આત્મપરિણામઃ પ્રગ્નઃ ઇતિ ।

કાર્યં કારણોપચારાન્ તત્ત્વાર્થશ્રદ્ધાનમપિ સમ્યક્ત્વમુચ્યતે । તથા ચોક્તં—

“ જીવાડનવપયત્યે, જો જાણડ તમ્સ દોડ્ સમ્મત્તં ।

ભાવેણ સદ્ધંતે, અયાણસાણે વિ સમ્મત્તં ” ॥ ઇતિ ।

હો હી નહીં સકતા । ઇમકા ચુલાસા આગે સમ્યક્ત્વ કે ફલકે પ્રકરણમે  
અછલી તરહ સે દો જાયગા ।

આવશ્યક સૂત્રમેં યહી વાત કહી હૈ—

“ સે ય સમ્મત્તે પસત્થસમ્મત્તમોહણિજ્જકમ્માણુવેયણોપસમક્ખયસમુત્થે  
સમુત્થે પસમસંવેગાહિલિંગે સુદ્ધે આયપરિણામે પણ્ણત્તે ” ઇતિ । અર્થાત્—  
વદ્ સમ્યગ્દર્શન પ્રશસ્ત સમ્યક્ત્વમોહનીય કર્મ કે અનુવેદન કે ઉપશમ  
ઔર ક્ષય સે ઉત્પન્ન હોતા હૈ, તથા પ્રશમસંવેગાદિક લિદ્ધોં સે જાના  
જાના હૈ, ઇદં યદ્ આત્મા કા શુભ પરિણામ કહા ગયા હૈ । તત્ત્વા-  
ર્થશ્રદ્ધાન સમ્યક્ત્વકા કાર્ય હૈ, યદ્ ઉપર કહા જા ચુકા હૈ ઔર સમ્ય-  
ક્ત્વ ઉસકા કારણ હૈ । અતઃ કાર્ય મેં કારણ કે ઉપચાર-આરોપ સે  
કાર્ય-તત્ત્વાર્થશ્રદ્ધાન ઓ સમ્યક્ત્વરૂપ સે કહ દિયા જાતા હૈ । અન્યત્ર  
ભી ઁસા હી કહા હૈ--

આદિ થઇ જ શકતું નથી. એનો ખુલાસો આગળ સમ્યક્ત્વના ક્ષણના પ્રકરણમાં  
ઘણી જ સરલ રીતે થઇ જશે.

આવશ્યકસૂત્રમાં આ વાત કહી છે—

“ સે ય સમ્મત્તે પસત્થસમ્મત્તમોહણિજ્જકમ્માણુવેયણોપસમક્ખયસમુત્થે પસમ-  
સંવેગાહિલિંગે સુદ્ધે આયપરિણામે પણ્ણત્તે ” ઇતિ ।

અર્થાત્—આ સમ્યગ્દર્શન પ્રશસ્ત સમ્યક્ત્વ-મોહનીય કર્મના અનુવેદનના  
ઉપશમ અને ક્ષયથી ઉત્પન્ન થાય છે; તથા પ્રશમસંવેગાદિક લિંગોથી બાણવામાં  
આવે છે, અને તે આત્માના શુભ પરિણામ કહેવામાં આવે છે. તત્ત્વાર્થશ્રદ્ધાન  
સમ્યક્ત્વનું કાર્ય છે, એ ઉપર કહેવામાં આવેલ છે અને સમ્યક્ત્વ એનું કારણ  
છે, એથી કાર્યમાં કારણના ઉપચાર-આરોપથી કાર્ય-તત્ત્વાર્થશ્રદ્ધાન પણ સમ્યક્ત્વ  
રૂપથી કહેવામાં આવે છે. બીજી જગ્યાએ એમ કહેવામાં આવેલ છે—

અસ્ય ચ લક્ષણસ્ય મનરહિતેષુ સિદ્ધાદિષ્વપિ સમન્વયો ભવતિ ।

યદ્વા-તત્ત્વાર્થશ્રદ્ધાનમિતિ લક્ષણં સરાગસમ્યક્ત્વસ્યૈવ, અત એવ સ્થાનાઙ્ગસૂત્રે પ્રોક્તમ્-

“ દસવિદ્દે સરાગસમ્મત્તદંસણે પણ્ણત્તે, તં જહા—

નિસગ્ગુવણ્ણસરુદ્ધં, આણારુદ્ધં સુત્તવીયરુદ્ધમેવ ।

અભિગમવિત્થારુદ્ધં, કિરિયા-સંલેવ-ધમ્મરુદ્ધં ” ॥ ૧ ॥ ઇતિ ।

એવં ચાપર્યાપ્તકાદૌ વીતરાગે ચ રુચ્યભાવેઽપિ ન ક્ષતિઃ ।

“ જીવાઈનવપયત્થે, જે જાણઈ તસ્સ હોઈ સમ્મત્તં ।

ભાવેણ સદ્દહંતે, અયાણમાણે વિ સમ્મત્તં ॥ ” ॥૧॥

અર્થાત્-જીવાદિક નવ પદાર્થોંકો જો જાનતા હૈં ઉસકો સમ્યક્ત્વ હોતા હૈં । તથા નહીં જાનને પર મીં ઉનકા આવ સે શ્રદ્ધાન કરનેવાલે કે મીં સમ્યક્ત્વ કહા ગયા હૈં । ઇસ કથન સે ઇસ લક્ષણકા સમન્વય મનરહિત સિદ્ધાદિકોં મેં મીં હો જાતા હૈં ।

અથવા-“ તત્ત્વાર્થશ્રદ્ધાન ” યહ લક્ષણ સરાગ સમ્યક્ત્વકા હી સમજનાં ચાહિયે, ઇસલિયે સ્થાનાઙ્ગસૂત્રમેં “ દસવિદ્દે ” ઇત્યાદિ દસ પ્રકાર કા સરાગ સમ્યગ્દર્શન કહા ગયા હૈં । જૈસે—

“ દસવિદ્દે સરાગસમ્મત્તદંસણે પણ્ણત્તે, તં જહા—

નિસગ્ગુવણ્ણસરુદ્ધં, આણારુદ્ધં સુત્તવીયરુદ્ધમેવ ।

અભિગમવિત્થારુદ્ધં, કિરિયા-સંલેવ-ધમ્મરુદ્ધં ” ॥૧॥

સરાગસમ્યગ્દર્શનકે દસ પ્રકાર યે હૈં—(૧) નિસર્ગરુચિ, (૨) ઉપ-

“ જીવાઈનવપયત્થે, જે જાણઈ તસ્સ હોઈ સમ્મત્તં ।

ભાવેણ સદ્દહંતે, અયાણમાણે વિ સમ્મત્તં ” ॥ ૧ ॥

અર્થાત્—જીવાદિક નવ પદાર્થોંકે જે જાણે છે તેને સમ્યક્ત્વ થાય છે. અને ન જાણવા છતાં પણ ભાવથી તેનું શ્રદ્ધાન કરવાવાળાને પણ સમ્યક્ત્વ કહેવામાં આવેલ છે. આ વાક્યથી આ લક્ષણનો સમન્વય મનરહિત સિદ્ધાદિકોં મેં મીં થાય છે.

અથવા—“ તત્ત્વાર્થશ્રદ્ધાન ” એ લક્ષણ સમ્યક્ત્વનું જ સમજવું જોઈએ; માટે સ્થાનાંગસૂત્રમાં “ દસવિદ્દે ” ઇત્યાદિ દશ પ્રકારના સરાગ સમ્યગ્દર્શન કહા છે. જેમ-

“ દસવિદ્દે સરાગસમ્મત્તદંસણે પણ્ણત્તે, તં જહા—

નિસગ્ગુવણ્ણસરુદ્ધં, આણારુદ્ધં સુત્ત-વીય-રુદ્ધમેવ ।

અભિગમ-વિત્થારુદ્ધં, કિરિયા-સંલેવ-ધમ્મરુદ્ધં ” ॥ ૧ ॥ ઇતિ ।

સરાગ સમ્યગ્દર્શનના દશ પ્રકાર આ છે—(૧) નિસર્ગરુચિ, (૨) ઉપ-

वस्तुतस्तु-इदं सम्यक्त्वलक्षणं न तत्स्वरूपं, किंतु तल्लिङ्गं तद्व्यञ्जकमिति यावत्। व्यञ्ज्यभूतं सम्यक्त्वं हि मिथ्यात्वक्षयोपशमादिजन्यं शुद्धात्मपरिणामरूपं परमार्थ-तोऽनाख्येयं स्वानुभवगम्यमेव ।

यथा वह्निव्यञ्जकस्य धूमस्यासद्भावेऽपि संतप्तायोगोलके वह्निरस्ति, तथा तत्त्वार्थाभिरुच्यभावेऽपि आत्मपरिणामरूपसम्यक्त्वमस्त्येव । अत एवोत्तराध्ययनसूत्रे प्रोक्तम् ।

देशरुचि, (३) आज्ञारुचि, (४) सूत्ररुचि, (५) बीजरुचि, (६) अभिगमरुचि, (७) विस्ताररुचि, (८) क्रियारुचि, (९) संक्षेपरुचि, १० धर्मरुचि ॥

इस अपेक्षासे अपर्याप्त अवस्था एवं वीतरागदशा में रागात्मक रुचिका अभाव होने पर भी उसके सद्भाव में किसी भी प्रकारकी क्षति नहीं आती ।

यथार्थ में तो यह सम्यक्त्व का लक्षण-सम्यक्त्व का स्वरूप-नहीं है; किन्तु उसका व्यञ्जक एक लिङ्ग है । जो लिङ्ग होता है वह अपने लिङ्गी का बोधक या व्यञ्जक हुआ करता है । मिथ्यात्वके क्षयोपशमादिक से उत्पन्न होनेवाला, तथा शुद्ध आत्मपरिणामस्वरूप वह सम्यक्त्व तो वास्तवमें अनाख्येय-वचनके अगोचर ही है । जैसे-अग्निका अभिव्यञ्जक धूम हुआ करता है, परन्तु तप्त अयोगोलक (लोहे के पिण्ड) में उसके अभाव में भी अग्निका सद्भाव रहता है । उसी तरह से तत्त्वार्थश्रद्धान के अभाव में भी आत्मपरिणामस्वरूप सम्यक्त्वका सद्भाव सिद्धादिकों में रहता ही है । इसलिये उत्तराध्ययन सूत्र (अध्य० २८) में कहा है-

देशरुचि, (३) आज्ञारुचि, (४) सूत्ररुचि, (५) बीजरुचि, (६) अभिगमरुचि, (७) विस्ताररुचि, (८) क्रियारुचि, (९) संक्षेपरुचि, (१०) धर्मरुचि.

आ अपेक्षाधी अपर्याप्त अवस्था तेमज् वीतराग दशामां रागात्मक रुचिनो अलाव होवा छतां पणु तेना सद्भावमां डोछ पणु प्रकारे क्षति आवती नथी.

यथार्थमां तो आ सम्यक्त्वनुं लक्षण-सम्यक्त्वनुं स्वरूप-नथी, पणु तेनुं व्यञ्जक ओक लिङ्ग छे. जे लिङ्ग थाय छे ते पोताना लिङ्गीना ओधक अगर व्यञ्जक थया करे छे. मिथ्यात्वना क्षयोपशमादिकथी उत्पन्न थवावाला, तथा शुद्ध आत्मपरिणामस्वरूप ओ सम्यक्त्व तो वास्तवमां अनाख्येय-वचननुं अगोचर छे, जेम अग्निनो अलिव्यञ्जक धूम थया करे छे, परन्तु तप्त अयोगोलक (लोहना पिण्ड)मां ओना अलावमां पणु अग्निनो सद्भाव रहे छे. ओवी रीते तत्त्वार्थश्रद्धानना अलावमां पणु आत्मपरिणामस्वरूप सम्यक्त्वनो सद्भाव सिद्धादिकेमां पणु रहे छे. तेथी उत्तराध्ययन सूत्र अध्य० २८ मां कछुं छे-

“નાણં ચ દંસણં ચેવ, ચરિત્તં ચ તવો તદ્વા ।

વીરિયં ઉવઓગો ય, એયં જીવસ્સ લક્ખણં ” ॥૧॥ ઇતિ ।

અત્ર જ્ઞાનાદિકં જીવસ્વરૂપવ્યજ્ઞકરૂપં જીવલક્ષણમુક્તં, તેન જ્ઞાનાદીનામન-  
ભિવ્યક્તાવપિ પૃથિવ્યાદિષુ જીવસદ્ભાવઃ । શુદ્ધાત્મપરિણામરૂપં સમ્યક્ત્વં નાન્યપ્ર-  
માણવિષયસ્તસ્માત્ સ્વાનુભવગમ્યમેવેતિ નિર્ણયિતે ।

एतच्चात्रापि पञ्चमाध्ययने शुद्धात्मस्वरूपं प्रतिबोधतया भगवता वक्ष्यते—

“નાણં ચ દંસણં ચેવ, ચરિત્તં ચ તવો તદ્વા ।

વીરિયં ઉવઓગો ય, એયં જીવસ્સ લક્ખણં ॥ ૧ ॥ ” ઇતિ ।

જ્ઞાન, દર્શન, ચારિત્ર, તપ તથા વીર્યે એવં ઉપયોગ, એ જીવકે  
લક્ષણ હૈં ।

इस गाथा में ज्ञानादिकों को जीवस्वरूपादिव्यञ्जक जीवलक्षण  
कहा है, इससे पृथिव्यादिक एकेन्द्रिय जीवों में ज्ञानादिककी स्पष्टतः  
अभिव्यक्ति-प्रकटता नहीं प्रतीत होने पर भी वहां पर जीवत्वका सद्भाव  
सिद्ध होना है । सम्यक्त्व जो शुद्ध आत्मपरिणामस्वरूप है और जिसे  
अनाख्येय-वचनअगोचर-कहा गया है उसका कारण यही है कि वह  
अन्य किसी भी प्रमाणका विषय नहीं होता है । इसीलिये तो वह  
स्वानुभवगम्य कहा जाता है । यही बात आगे इसी शास्त्रके पञ्चमाध्ययन  
में शुद्ध आत्मस्वरूपका कथन करते समय भगवान स्वयं कहेंगे । जैसे—

“નાણં ચ દંસણં ચેવ, ચરિત્તં ચ તવો તદ્વા ।

વીરિયં ઉવઓગો ય, એયં જીવસ્સ લક્ખણં ” ॥ ૧ ॥ ઇતિ ।

જ્ઞાન, દર્શન, ચારિત્ર, તપ તથા વીર્ય અને ઉપયોગ એ જીવના લક્ષણ છે.

આ ગાથામાં જ્ઞાનાદિને જીવસ્વરૂપાભિવ્યંજક જીવલક્ષણ કહે છે. એથી  
પૃથિવી આદિ એકેન્દ્રિય જીવોમાં જ્ઞાનાદિકની સ્પષ્ટતઃ અભિવ્યક્તિ પ્રગટ નેવામાં  
આવતી નથી તો પણ આ ઠેકાણે જીવને સદ્ભાવ સિદ્ધ થાય છે. સમ્યક્ત્વ જે  
શુદ્ધ આત્મપરિણામસ્વરૂપ છે અને જેને અનાખ્યેય-વચનઅગોચર કહ્યું છે,  
એનું કારણ એ છે કે તે બીજા કોઈ પ્રમાણનો વિષય બનતો નથી, તેથી તો  
તે સ્વાનુભવગમ્ય કહેવાય છે. આ વાત આગળ આ શાસ્ત્રના પાંચમા અધ્યયનમાં  
શુદ્ધ આત્મસ્વરૂપનું કથન કરતી વખત ભગવાન સ્વયં કહેશે. જેમ—

“सर्वे सरा णियद्वंति तक्का जत्थ ण विज्जइ, मई तत्थ ण गाहिआ” इत्यादि ।  
छाया—“सर्वे स्वरा निवर्त्तन्ते, तर्का यत्र न विद्यते, मतिस्तत्र न ग्राहिता” इत्यादि ।  
स्वानुभवविषयत्वेऽपि सम्यक्त्वस्येक्षुक्षीरादिरसमाधुर्यविशेषाणामिव वाग्विषय-  
त्वाऽभावादनारूप्यत्वम् । तथा चोक्तम्—

“इक्षुक्षीरगुडादीनां माधुर्यस्यान्तरं महत् ।

तथापि न तदाख्यातुं सरस्वत्यापि पार्यते” ॥ २ ॥

“सर्वे सरा णियद्वंति तक्का जत्थ ण विज्जइ, मई तत्थ ण गाहिआ” इत्यादि ।

समस्त स्वरोंकी वहां पर निवृत्ति होती है, तर्क भी वहां प्रवेश नहीं कर सकता है, एवं बुद्धि के भी वह अगम्य है । इत्यादि ।

शुद्ध सम्यक्त्व को जो वचनानीत एवं स्वानुभवगम्य कहा है वह इस प्रकार से—जैसे—इक्षु—(गन्ना) और दुग्धादिककी मधुरता उप-  
भोक्ता के ही अनुभवगम्य होती है । उससे यदि कोई यह पूछे कि गन्ना कैसा मीठा है ? दूध की मधुरता कैसी है ? तो वह इस बातको वचन से नहीं कह सकता, वह तो उनकी मधुरता अपने निजी अनुभव से ही जानता है । यही बात अन्यत्र भी कही है ।

“इक्षु-क्षीर-गुडादीनां, माधुर्यस्यान्तरं महत् ।

तथापि न तदाख्यातुं, सरस्वत्यापि पार्यते” ॥ १ ॥

यद्यपि गन्ना, दूध और गुड आदि मिष्ट पदार्थों की मधुरता में बहुत ही अन्तर है, तो भी उनके उस अन्तर को सरस्वती भी नहीं कह सकती ॥ १ ॥

“सर्वे सरा णियद्वंति तक्का जत्थ ण विज्जइ, मई तत्थ ण गाहिआ” इत्यादि ।

समस्त स्वरानी न्यां निवृत्ति થઈ જાય છે, ત્યાં તર્ક પણ પ્રવેશ કરી શકતો નથી. તેમ જ બુદ્ધિથી પણ તે અગમ્ય છે. ઇત્યાદિ. શુદ્ધ સમ્યક્ત્વને જે વચનાનીત અને સ્વાનુભવગમ્ય કહેલ છે તે આ પ્રકારે કે જેવી રીતે ઇક્ષુ (શેરડી) અને દુગ્ધાદિકની મધુરતા ઉપલોક્તાથી અનુભવગમ્ય હોય છે. કદાચ કોઈ તેને પૂછે કે શેરડી કેવી મીઠી છે ? દૂધની મધુરતા કેવી છે ? તો તે આ વાતને વચનથી કહી શકશે નહિ. તે તો તેની મધુરતાને પોતાના નિજ અનુભવથી જ જાણે છે. આ વાત ખીણ જગ્યોએ પણ કહેવામાં આવી છે—

“इक्षु-क्षीर-गुडादीनां, माधुर्यस्यान्तरं महत् ।

तथापि न तदाख्यातुं, सरस्वत्यापि पार्यते ॥ १ ॥” इति ।

જે કે-શેરડી, દૂધ અને ગોળ આદિ મિષ્ટ પદાર્થોની મધુરતામાં ઘણો જ ભેદ છે તો પણ એ ભેદને સરસ્વતી પણ કહી શકતી નથી.



સમ્યક્ત્વભેદઃ—સમ્યક્ત્વં દ્રવ્યભાવભેદાદ્ દ્વિવિધમ્ । તત્ર દ્રવ્યતઃ સમ્યક્ત્વં વિશોધિતા મિથ્યાત્વપુદ્ગલા એવ । વિશોધિતા હિ મિથ્યાત્વપુદ્ગલા અતિસ્વચ્છ-  
સૂક્ષ્મવસ્ત્રમિવ દૃષ્ટેરધ્યવસાયાત્મકસ્ય સમ્યક્ત્વસ્યાઽઽવરકા ન ભવન્તિ, તસ્માત્ તત્ર  
સમ્યક્ત્વોપચારઃ । ભાવતસ્તુ-મિથ્યાત્વક્ષયોપશમાદિજન્યઃ શુભ આત્મપરિણામવિશેષઃ ।

### સમ્યક્ત્વકે ભેદ—

સમ્યક્ત્વ દો પ્રકાર કા હૈ—(૧) દ્રવ્ય-સમ્યક્ત્વ, (૨) ભાવ-સમ્યક્ત્વ  
મિથ્યાત્વ પ્રકૃતિ કે જો વિશુદ્ધ પુદ્ગલ હૈં વે દ્રવ્યસમ્યક્ત્વ હૈ । યે  
વિશુદ્ધ મિથ્યાત્વ કે પુદ્ગલ, જિસ તરહ સૂક્ષ્મ વસ્ત્ર દૃષ્ટિકા રોધક નહીં  
હોતા ઉસી તરહ અધ્યવસાયસ્વરૂપ સમ્યક્ત્વ કે પ્રતિબન્ધક નહીં હોતે ।  
અર્થાત્ જૈસે સૂક્ષ્મવસ્ત્ર દૃષ્ટિકા પ્રતિબન્ધક નહીં હોતા, ઠીક ઈસી પ્રકાર  
સે વહ મિથ્યાત્વ કા શુદ્ધ પુંજ સમ્યક્દર્શનરૂપ દૃષ્ટિકા રોધક નહીં  
હોના । ઈસ કારણ ઉસે ઉપચાર સે સમ્યક્ત્વ કહા ગયા હૈ । મિથ્યાત્વ  
કર્મ કે ક્ષયોપશમાદિક ઉત્પન્ન હુઆ આત્માકા શુભ પરિણામ ભાવ-  
સમ્યક્ત્વ હૈ । અન્ય પ્રકાર સે બી સમ્યક્ત્વ દો પ્રકાર કા હૈ—(૧) નૈશ્વ-  
યિક-સમ્યક્ત્વ, (૨) વ્યાવહારિક-સમ્યક્ત્વ । એક પૌદ્ગલિક-સમ્યક્ત્વ,  
દૂસરા અપૌદ્ગલિક-સમ્યક્ત્વ । એક નૈસર્ગિક ઓર દૂસરા આધિગમિક  
સમ્યક્ત્વ ।

### સમ્યક્ત્વના ભેદ—

સમ્યક્ત્વ બે પ્રકારનું છે. (૧) દ્રવ્ય-સમ્યક્ત્વ (૨) ભાવ-સમ્યક્ત્વ, મિથ્યાત્વ  
પ્રકૃતિના જે વિશુદ્ધ પુદ્ગલ છે તે દ્રવ્ય-સમ્યક્ત્વ છે. જેવી રીતે સૂક્ષ્મ વસ્ત્ર  
દૃષ્ટિનું રોધક નથી થતું તેવી રીતે એ વિશુદ્ધ મિથ્યાત્વના પુદ્ગલ અધ્યવસાય-  
સ્વરૂપ સમ્યક્ત્વનાં પ્રતિબન્ધક નથી થતાં. અર્થાત્—જેવી રીતે સૂક્ષ્મ વસ્ત્ર દૃષ્ટિનું  
પ્રતિબન્ધક નથી થતું, ઠીક આ પ્રકારથી તે મિથ્યાત્વના વિશુદ્ધ પુદ્ગલ પુંજ સમ્યક્દ-  
ર્શનરૂપ દૃષ્ટિનાં રોધક નથી થતાં. આ કારણે તેને ઉપચારથી સમ્યક્ત્વ કહેવામાં આવે  
છે. મિથ્યાત્વ કર્મના ક્ષયોપશમાદિકથી ઉત્પન્ન થયેલા આત્માના શુભ પરિણામ  
ભાવ-સમ્યક્ત્વ છે. બીજા પ્રકારે પણ સમ્યક્ત્વ બે પ્રકારના છે (૧) નૈશ્વયિક-  
સમ્યક્ત્વ (૨) વ્યાવહારિક-સમ્યક્ત્વ, એક પૌદ્ગલિક સમ્યક્ત્વ, બીજું અપૌ-  
દ્ગલિક-સમ્યક્ત્વ, એક નિસર્ગ અને બીજું અધિગમ-સમ્યક્ત્વ.

પ્રકારાન્તરૈરપિ સમ્યક્ત્વં દ્વિવિધમ્, યથા-નૈશ્વયિક-વ્યાવહારિકભેદાદ્ દ્વિ-  
વિધમ્, પૌદ્ગલિકાપૌદ્ગલિકભેદાદ્ દ્વિવિધમ્, નૈસર્ગિકાધિગમિકભેદાદ્ દ્વિવિધમિતિ ।

તત્ર મિથ્યાત્વક્ષયોપશમાદિજન્યં શુદ્ધાત્મપરિણામવિશેષરૂપં નૈશ્વયિકં સમ્યક્ત્વમ્ ।  
વ્યાવહારિકં તુ કુદેવકુગુરુકુધર્મપરિત્યાગપૂર્વકં નિશ્ચિતરૂપેણ સુદેવસુગુરુસુધર્મસ્વીકરણં  
રુચિરૂપં તત્ત્વાર્થશ્રદ્ધાનાદિકમપિ ।

તથા—અપનીતમિથ્યાત્વસ્વભાવસમ્યક્ત્વપુણ્ણગતપુદ્ગલવેદનસમુત્થં ક્ષાયોપશ-  
મિકં વેદકં ચ પૌદ્ગલિકં સમ્યક્ત્વમ્ । અપૌદ્ગલિકં તુ પુદ્ગલવેદનવર્જિતં કેવલજીવ-  
પરિણામરૂપં ક્ષાયિકમૌપશમિકં ચ । નૈસર્ગિકમાધિગમિકં ચ સમ્યક્ત્વં પ્રથમાધ્યયને  
તૃતીયોદેશે પ્રાગેવ વર્ણિતમ્ ।

ભાવ-સમ્યક્ત્વ કા જો લક્ષણ કહા હૈ વહી નૈશ્વયિક-સમ્યક્ત્વ કા  
સ્વરૂપ હૈ । અર્થાત્ મિથ્યાત્વકર્મ કે ક્ષયોપશનાદિક સે ઉત્પન્ન હુઆ  
આત્મા કા શુભ અધ્યવસાયવિશેષ હી નૈશ્વયિક-સમ્યક્ત્વ હૈ । કુદેવ,  
કુગુરુ ઓર કુધર્મ કા પરિહાર-ત્યાગ-પૂર્વક નિશ્ચિતરૂપ સે સુદેવ, સુગુરુ  
ઓર સુધર્મ કા સ્વીકાર કરના, તથા રુચિરૂપ સે તત્ત્વાર્થકા શ્રદ્ધાન  
કરના આદિ વ્યવહાર-સમ્યક્ત્વ હૈ । ઇસી પ્રકાર મિથ્યાત્વ સ્વભાવ જિસ  
સે દૂર હો ચુકા હૈ એસા જો સમ્યક્ત્વપ્રકૃતિ કા પુંજ હૈ ઉસકે ખીતર રહે  
હુણ પુદ્ગલોં કે વેદનસે ઉત્પન્ન હુઆ જો ક્ષાયોપશમિકસમ્યક્ત્વ એવં વેદક-  
સમ્યક્ત્વ હૈ વહ પૌદ્ગલિક-સમ્યક્ત્વ હૈ । ઉસ પુદ્ગલ કે વેદન સે રહિત  
કેવલ જીવ કે પરિણામસ્વરૂપ જો ક્ષાયિક-સમ્યક્ત્વ ઓર ઔપશમિક  
સમ્યક્ત્વ હૈ, વહ અપૌદ્ગલિક-સમ્યક્ત્વ હૈ । નૈસર્ગિક ઓર આધિગમિક  
સમ્યક્ત્વકા વર્ણન પ્રથમ અધ્યયન કે તીસરે ઉદ્દેશ મેં કિયા જા ચુકા હૈ ।

ભાવ-સમ્યક્ત્વનું જે લક્ષણ કહ્યું છે તે નૈશ્વયિક-સમ્યક્ત્વનું સ્વરૂપ છે.  
અર્થાત્ મિથ્યાત્વ કર્મના ક્ષયોપશમાદિકથી ઉત્પન્ન થયેલ આત્માનું શુભ અધ્ય-  
વસાયવિશેષ જે નૈશ્વયિક-સમ્યક્ત્વ છે. કુદેવ, કુગુરુ અને કુધર્મના પરિહાર-  
ત્યાગ-પૂર્વક નિશ્ચિતરૂપથી સુદેવ, સુગુરુ અને સુધર્મનો સ્વીકાર કરવો, તથા રૂચિ-  
રૂપથી તત્ત્વાર્થનું શ્રદ્ધાન કરવું આદિ વ્યવહાર-સમ્યક્ત્વ છે. આ પ્રકારે મિથ્યાત્વ  
સ્વભાવ જેનાથી દૂર થઈ ગયેલ છે એવા જે સમ્યક્ત્વ પ્રકૃતિના પુંજ છે એની અંદર  
રહેલા પુદ્ગલોના વેદનથી ઉત્પન્ન થયેલા જે ક્ષાયોપશમિક-સમ્યક્ત્વ તેમજ વેદક-  
સમ્યક્ત્વ છે તે પૌદ્ગલિક સમ્યક્ત્વ છે. એ પુદ્ગલના વેદનથી રહિત કેવલ જીવના  
પરિણામસ્વરૂપ જે ક્ષાયિક-સમ્યક્ત્વ અને ઔપશમિક-સમ્યક્ત્વ છે આ અપૌદ્ગલિક  
સમ્યક્ત્વ છે. નિર્સર્ગ અને અધિગમ સમ્યક્ત્વનું વર્ણન પ્રથમ અધ્યયનના ત્રીજા  
ઉદ્દેશમાં કરવામાં આવેલ છે.

પ્રકારાન્તરેણ સમ્યક્ત્વં દશથા, તદ્યથા—(૧) ઔપશમિક—(૨) ક્ષાયિક—(૩) ક્ષાયોપશમિક—(૪) સાસ્વાદન—(૫) વેદકભેદાત્ પञ्चविधम् । તત્ર પ્રત્યેકં નૈસર્ગિકાધિગમિકભેદાદ્ દ્વૈવિધ્યે દશવિધત્વં ભવતિ ।

(૧) અનન્તાનુબન્ધિકપાયચતુષ્ટયોપશમાનન્તરં મિથ્યાત્વ—મિશ્ર—સમ્યક્ત્વ—મોહનીયકર્મણાં સર્વથોપશમાજ્ઞાતો જીવમ્ય તત્ત્વરુચિરૂપઃ શુભપરિણામઃ ઔપશમિકં સમ્યક્ત્વમ્ । એત્ત્વોપશમશ્રેણિપ્રતિપન્નસ્ય જીવસ્ય ભવતિ ।

(૨) તેષાં સર્વથા ક્ષયેણ નિર્વૃત્તં જીવસ્ય શુભપરિણામરૂપં ક્ષાયિકં સમ્યક્ત્વમ્ ।

(૩) ક્ષાયોપશમિકં સમ્યક્ત્વં પ્રોચ્યતે—અનન્તાનુબન્ધિકપાયચતુષ્ટય—

અન્ય પ્રકાર સે સમ્યક્ત્વ દશ પ્રકાર કા મી કહા ગયા હૈ, જૈસે—(૧) ઔપશમિક, (૨) ક્ષાયિક, (૩) ક્ષાયોપશમિક, (૪) સાસ્વાદન, ઔર (૫) વેદક । યે પાંચો હી નિસર્ગ ઔર અધિગમ કૈ ભેદ સે દો દો પ્રકારકે હોતે હૈં, ઇસ પ્રકાર સમ્યક્ત્વ કૈ દશ ભેદ હો જાતે હૈં ।

(૧) અનન્તાનુબન્ધી ક્રોધ, માન, માયા ઔર લોભ, ઇન ચાર કષાયોં કૈ ઉપશમ ( સત્તા મેં સ્થિત રહને )કૈ વાદ મિથ્યાત્વમોહનીય, મિશ્ર-મોહનીય ઁવં સમ્યક્ત્વમોહનીય કર્મ કૈ સર્વથા ઉપશમ સે ઉત્પન્ન હુઆ જો તત્ત્વરુચિરૂપ જીવકા શુભ પરિણામવિશેષ હૈ વહ ઔપશમિક-સમ્યક્ત્વ હૈ । યહ સમ્યક્ત્વ ઉપશમ શ્રેણિવાલે જીવ કૈ હોતા હૈ ૧ ।

(૨) અનન્તાનુબન્ધી આદિ (૭) સાત પ્રકૃતિયોં કૈ સર્વથા ક્ષય સે જો જીવ કો શુભ પરિણામ ઉત્પન્ન હોતા હૈ વહ ક્ષાયિક-સમ્યક્ત્વ હૈ ૨ ।

(૩) ક્ષાયોપશમિક-સમ્યક્ત્વ કા લક્ષણ ઇસ પ્રકાર હૈ—

બીજા પ્રકારે સમ્યક્ત્વ દશ પ્રકારના પણ કહેવામાં આવે છે. જેમ—(૧) ઔપશમિક, (૨) ક્ષાયિક, (૩) ક્ષાયોપશમિક, (૪) સાસ્વાદન, અને (૫) વેદક. એ પાંચે નિસર્ગ અને અધિગમના ભેદથી બે બે પ્રકારના છે. એ રીતે સમ્યક્ત્વના દશ ભેદ થઈ જાય છે.

(૧) અનન્તાનુબન્ધી ક્રોધ માન માયા અને લોભ, એ ચાર કષાયોના ઉપશમ ( સત્તામાં સ્થિત રહેવું ) પછી મિથ્યાત્વ મોહનીય, મિશ્રમોહનીય અને સમ્યક્ત્વ મોહનીય કર્મોના સર્વથા ઉપશમથી ઉત્પન્ન થયેલાં જે તત્ત્વરુચિરૂપ જીવના શુભ પરિણામવિશેષ છે તે ઔપશમિક-સમ્યક્ત્વ છે. આ સમ્યક્ત્વ ઉપશમ શ્રેણીવાળા જીવને થાય છે (૧).

(૨) અનન્તાનુબન્ધી આદિ ૭ સાત પ્રકૃતિયોના સર્વથા ક્ષયથી જે જીવને શુભ પરિણામ ઉત્પન્ન થાય છે તે ક્ષાયિક-સમ્યક્ત્વ છે (૨).

(૩) ક્ષાયોપશમિક સમ્યક્ત્વના લક્ષણ આ પ્રકારે છે—

ક્ષયાન્તરં મિથ્યાત્વમોહનીયકર્મણાં ક્ષયોપશમાત્ સમ્યક્ત્વમોહનીયકર્મણામુદયાચ્ચ સંજાત આત્મપરિણામઃ ક્ષાયોપશમિકસમ્યક્ત્વમ્ । તત્રેદમવગન્તવ્યમ્-યદુદીર્ણમુદય-માગતં મિથ્યાત્વમોહનીયં કર્મ, તદ્દિ વિપાકોદયેન વેદિતત્વાત્ ક્ષયં પ્રાપ્તમ્, યચ્ચ શેષસત્તાયામનુદિતં વર્તતે, તદુપશાન્તમ્ । ઉપશાન્તં નામ-અનુદયાવસ્થાપનમ્ । તત્ર-મિથ્યાત્વમિશ્રપુઝ્જાનાશ્રિત્યાનુદયાવસ્થાપનનં સમ્યક્ત્વપુઝ્જમાશ્રિત્ય તુ અધિકાંશ-તયા ઉદીર્ણાવસ્થાપનમ્ । તદેવમુદિતરય મિથ્યાત્વસ્ય ક્ષયેણાનુદિતસ્ય ચોપશમેન સમ્ય-ક્ત્વકર્મપુદ્ગલાનાં ક્રિયતાશ્ચિદ્દેદનેન ચ નિર્વૃત્તં=નિષ્પન્નં ક્ષાયોપશમિકં સમ્યક્ત્વમુચ્યતે ।

અનન્તાનુદયર્થી ચાર કપાયોં કે ક્ષય કે અનન્તર, મિથ્યાત્વમોહનીય કર્મ કે ક્ષયોપશમ સે, એવં સમ્યક્ત્વમોહનીય કર્મ કે ઉદય સે જો આત્મા કા પરિણામ ઉત્પન્ન હોતા હૈ વહી ક્ષાયોપશમિક સમ્યક્ત્વ હૈ, અર્થાત્ ઇસ સમ્યક્ત્વ મેં મિથ્યાત્વ કે કુછ ભાગકા ક્ષય હો જાતા હૈ ઓર કુછ ભાગકા ઉપશમ રહતા હૈ, વહ ઇસ પ્રકાર સે કિ-મિથ્યાત્વકે જો સર્વઘાતિસ્પર્દક હૈં ડનકા તો ઉદયભાવી ક્ષય (ઉદય મેં આયે હુએ સર્વઘાતિસ્પર્દકોં કા વિના ફલ દિયે હી ધિર જાના) હો જાતા હૈ, એવં ડન્હીં કે આગામી કાલમેં ઉદય આનેવાલે નિષેકોં (કર્મ પુદ્ગલોંકે રચનાવિશેષોં) કા સદવસ્થારૂપ ઉપશમ રહતા હૈ, ઓર સમ્યક્ત્વ પ્રકૃતિ જો દેશઘાતી હૈ ડસકા યદાં પર ઉદય રહતા હૈ, અતઃ યદાં પર મિથ્યાત્વમોહનીય કર્મ કા જિતના ખી અંશ ઉદય મેં આયા હૈ, વહ તો વિપાકરૂપ ઉદય સે વેદ લિયા ગયા હૈ, ઇસલિયે ડતને ભાગ કા તો ક્ષય હો ચુકા હૈ, એવં જો અવશિષ્ટ અવેદિત ભાગ હૈ કિ જો અખી તક

અનંતાનુગંધી ચાર કપાયોના ક્ષયના અનન્તર મિથ્યાત્વ-મોહનીય કર્મના ક્ષયોપશમર્થી અને સમ્યક્ત્વ-મોહનીય કર્મના ઉદયર્થી જે આત્માનો પરિણામ-ભાવ-ઉત્પન્ન થાય છે તે ક્ષાયોપશમિક-સમ્યક્ત્વ છે. અર્થાત્ આ સમ્યક્ત્વમા મિથ્યાત્વના કોઈ ભાગનો ક્ષય થઈ જાય છે અને કોઈ ભાગનો ઉપશમ રહે છે. તે એ પ્રકારથી કે મિથ્યાત્વના જે સર્વઘાતી સ્પર્દક છે તેનો તો ઉદય-ભાવી ક્ષય (ઉદયાગત સર્વઘાતિ સ્પર્દકોનું ફળ આપ્યા વિના તુટી જવું) થઈ જાય છે અને એના આગામી કાળમાં ઉદય આવવાવાળા નિષેકો (કર્મ પુદ્ગલોના રચના વિશેષો) નો સદવસ્થારૂપ ઉપશમ રહે છે અને સમ્યક્ત્વપ્રકૃતિ જે દેશઘાતી છે એનો આંહી ઉદય રહે છે, એટલે અહીંયા મિથ્યાત્વમોહનીય કર્મનો જેટલો પણ અંશ ઉદયમાં આવ્યો તે તો વિપાકરૂપ ઉદયથી વેદવામાં આવેલ છે જેથી એટલા ભાગનો તો ક્ષય થઈ ગયેલ છે. અને જે અવશિષ્ટ અવેદિત ભાગ છે

આત્મપરિણામરૂપસ્ય સમ્યક્ત્વસ્યાનાવારકત્વાદયં વિશોધિતપુદ્ગલપુજ્જોડપ્યુપ-  
ચારતઃ સમ્યક્ત્વમુચ્યતે । સમ્યક્ત્વપુદ્ગલવેદનસમુદ્ભૂતત્વાદિદં સમ્યક્ત્વં પૌદ્ગલિકમ્ ।

ઉદય મેં નહીં આયા છે—સિર્ફ સત્તા મેં હી બેઠા હુઆ છે, વસ इसीका नाम सदवस्थारूप उपशम है, इसीको अनुदित=अनुदय अवस्था भी कहते हैं । यहां पर जो मिथ्यात्व की अनुदयावस्था कही गई है वह मिथ्यात्वके कुछ भाग की तथा मिश्रपुंजकी अपेक्षा को लेकर ही कही गई है, क्योंकि इनका यहां पर उदय नहीं है तथा सम्यक्त्वप्रकृतिका ही कितनेक अंश से उदय है । इसप्रकार उदित मिथ्यात्व के क्षय से और अनुदित उसी मिथ्यात्व के उपशम से और कितनेक सम्यक्त्व-कर्मके पुद्गलों के वेदन होनेसे यह क्षायोपशमिक सम्यक्त्व उत्पन्न होता है । इस प्रकार से क्षायोपशमिक सम्यक्त्व का लक्षण सुघटित हो जाता है ।

यह सम्यक्त्व आत्मपरिणामरूप सम्यक्त्व का अनावारक-आवरण करनेवाला नहीं—होने से उपचार से सम्यक्त्व कहा गया है, क्योंकि इस सम्यक्त्वमें विशोधितपुद्गलपुंज का-सम्यक्त्व-प्रकृतिका उदय है और उसीके उदयरूप वेदन से यह सम्यक्त्व हुआ है, इसलिये पुद्गलजनित होने से यह पौद्गलिक है । इस पौद्गलिक कार्य का जो सम्यक्त्व कहा गया है वह इसी हेतु से कि वह आत्मपरिणामरूप जो सम्यक्त्व है उसका आवरण नहीं करता है ।

જે હબ્બુ સુધી ઉદયમાં આવેલ નથી ફક્ત સત્તામાંજ બેઠેલ છે, યસ એનું નામ સદવસ્થારૂપ ઉપશમ છે, એને અનુદિત-અનુદયઅવસ્થા પણ કહે છે. અહીંયા જે મિથ્યાત્વની અનુદયાવસ્થા કહેવાઈ છે તે મિથ્યાત્વના કોઈ ભાગની અને મિશ્ર-પુંજની અપેક્ષાએ કહેવાઈ છે. કારણ કે એનો આ જગ્યોએ ઉદય નથી, તથા સમ્યક્ત્વપ્રકૃતિનો થોડા ભાગે ઉદય છે. આ પ્રકારે ઉદિત મિથ્યાત્વના ક્ષયથી, અને અનુદિત એજ મિથ્યાત્વના ઉપશમથી અને કેટલાંક સમ્યક્ત્વકર્મના પુદ્ગલોના વેદન હોવાથી આ ક્ષાયોપશમિક સમ્યક્ત્વ ઉત્પન્ન થાય છે. આ પ્રકારથી ક્ષાયોપશમિક સમ્યક્ત્વના લક્ષણ સુઘટિત થઈ જાય છે.

આ સમ્યક્ત્વ આત્મ-પરિણામરૂપ સમ્યક્ત્વના અનાવારક-આવરણ કરવાં વાળાં નહિ-હોવાથી ઉપચારથી સમ્યક્ત્વ કહેવામાં આવેલ છે, કારણ કે આ સમ્યક્ત્વમાં વિશોધિતપુદ્ગલપુંજનો-સમ્યક્ત્વ પ્રકૃતિનો ઉદય છે અને એના ઉદયરૂપ વેદનથી એ સમ્યક્ત્વ થયેલ છે, માટે પુદ્ગલજન્ય હોવાથી આ પૌદ્ગલિક છે, અને આ પૌદ્ગલિક કાર્યને જે સમ્યક્ત્વ કહેલ છે તે આ હેતુથી કે તે આત્મપરિણામરૂપ જે સમ્યક્ત્વ છે એનું આવરણ નથી કરતું.

નનુ ક્ષાયોપશમિકસમ્યક્ત્વસ્યૌપશમિકસમ્યક્ત્વાત્કો ભેદઃ ? इति चेदुच्यते—  
ક્ષાયોપશમિકે મિથ્યાત્વદલિકવેદનં વિપાકતો નાસ્તિ, પ્રદેશતસ્તુ વિદ્યતે । ઔપશ-  
મિકે તુ પ્રદેશતોઽપિ નાસ્તીતિ વિશેષ ઇતિ ।

(૪) અથ સાસ્વાદનં સમ્યક્ત્વમુચ્યતે—આસ્વાદનેન=સમ્યક્ત્વરસાસ્વાદ-  
નેન સહ વર્તત ઇતિ સાસ્વાદનમ્ । યથા—ક્ષીરાન્નં ભુક્ત્વા તદ્વિપયે ચિત્તવિકારેણ યદિ  
કથિત્ તદ્વમતિ, તદાઽસૌ વમનકાલે ક્ષીરાન્નરસમાસ્વાદયતિ, તથા મિથ્યાત્વોદયે

શંકા--ક્ષાયોપશમિક-સમ્યક્ત્વ મેં ઔર ઔપશમિક-સમ્યક્ત્વ મેં  
કયા ભેદ હૈ? શંકાકારકા અભિપ્રાય યહાં પર इतना ही है कि जैसे  
ક્ષાયોપશમિક-સમ્યક્ત્વ મેં મિથ્યાત્વકા ઉદય નહીં હૈ, उसी प्रकार से  
उपशमसम्यक्त्व में भी नहीं हैं; फिर इन दोनों में अन्तर क्या है? ।

उत्तर--इन दोनों में अन्तर है और वह इस प्रकार से है कि  
ક્ષાયોપશમિક સમ્યક્ત્વ મેં મિથ્યાત્વકે દલિયોં કા વેદન યદ્યપિ વિપાક-  
રૂપ સે નહીં હૈ પરન્તુ પ્રદેશોદય સે उनका वेदन वहां पर है ही। औप-  
शमिक सम्यक्त्व में तो दोनों रूप से ही उनका वेदन नहीं है ३ ।

(૪) અવ સાસ્વાદનસમ્યક્ત્વ કા સ્વરૂપ કહતે હેં--

‘સહ-આસ્વાદનેન વર્તતે ઇતિ સાસ્વાદનમ્’—અર્થાત્ જો સમ્યક્ત્વ-  
રૂપ રસકે આસ્વાદન સે સહિત હો उसका नाम सास्वादनसम्यक्त्व है।  
જૈસે કોઈ વ્યક્તિ खीर खाकर पश्चात् चित्त में तद्विषयक विकार होनेपर  
વમન કરતા હૈ उस समय में भी वह उसके रसास्वादका अनुभव करता है,

શંકા--ક્ષાયોપશમિક-સમ્યક્ત્વમાં અને ઔપશમિક-સમ્યક્ત્વમાં શો ભેદ  
છે ? શંકાકારનો અભિપ્રાય આ ઠેકાણે એ છે કે જેવી રીતે ક્ષાયોપશમિક-સ-  
મ્યક્ત્વમાં મિથ્યાત્વનો ઉદય નથી તેવી જ રીતે ઉપશમ-સમ્યક્ત્વમાં પણ નથી  
તો પછી એ બન્નેમાં ભેદ શો છે ?

ઉત્તર--એ બન્નેમાં ભેદ છે અને તે આ પ્રકારે છે--ક્ષાયોપશમિક-સમ્યક્ત્વમાં  
મિથ્યાત્વના દલિયોનું વેદન છે, જો કે વિપાકરૂપથી નથી પરન્તુ પ્રદેશોદયથી એનું વેદન  
ત્યાં છે જ. ઔપશમિક-સમ્યક્ત્વમાં તો બન્ને રૂપથી તેનું વેદન છે જ નહિ. (૩)

(૪) હવે સાસ્વાદન-સમ્યક્ત્વનું સ્વરૂપ કહે છે--

‘સહ આસ્વાદનેન વર્તતે ઇતિ સાસ્વાદનમ્’—અર્થાત્ જે સમ્યક્ત્વરૂપ રસના  
આસ્વાદનથી સહિત છે એનું નામ સાસ્વાદન-સમ્યક્ત્વ છે, જેમકે કોઈ વ્યક્તિ  
દૂધપાક જમ્યા પછી ચિત્તમાં તદ્વિષયક વિકાર થવાથી વમન કરે છે એ સમયમાં  
પણ તે એના રસાસ્વાદનો અનુભવ કરે છે. આ પ્રકારે મિથ્યાત્વના ઉદયથી મિથ્યા-



સતિ મિથ્યાત્વાભિમુખતયાઽનન્તાનુવન્ધિકપાયોદયાદૌપશમિકસમ્યક્ત્વોપરિ વ્ય-  
લીકચિત્તસ્ય તત્સમ્યક્ત્વપુઢ્વમતસ્તદ્રસાસ્વાદનં જઘન્યતઃ સમયમાત્રે, ઉત્કર્ષતથ્ચ પડા-  
વલિકાયાં ભવતિ, તસ્માદિદં સમ્યક્ત્વં સાસ્વાદનમુચ્યતે । અસ્મિન્ સમ્યક્ત્વેઽનન્તા-  
નુવન્ધિકપાયોદયસત્ત્વેનાત્મપરિણામનૈર્મલ્યાભાવાદવ્યક્તા તત્ત્વાર્થાનભિરુચિસ્તિષ્ઠતિ,  
મિથ્યાત્વે તુ વ્યક્તા, इत्येव तयोर्भेदः ।

यद्वा-इदं सासादननाम्नाऽपि निगद्यते । तत्र-आयम्=औपशमिकसम्य-  
क्त्वलाभं सादयति=अपनयतीत्यासादनम्=अनन्तानुवन्धिकपायवेदनम् । तस्मिन्

उसी प्रकार मिथ्यात्वके उदय होनेसे मिथ्यात्वप्राप्तिके सम्मुख हुआ  
जीव भी अनन्तानुवन्धी कपाय के उदय से जब औपशमिक सम्यक्त्वके  
ऊपर अरुचि-चित्तवाला होकर उसका वमन-त्याग कर देता है, अर्थात्  
-जब वह सम्यक्त्व उससे छूट जाता है, तब उसका आस्वादन भी उसे  
कमसे कम एक समय तक, और ज्यादा से ज्यादा छह आवलिकाल तक  
बना ही रहता है । इस कारण इस सम्यक्त्व को सास्वादनसम्यक्त्व  
कहा गया है । इस सम्यक्त्वमें अनन्तानुवन्धी कपाय के उदय का सद्भाव  
होने से (क्रोधादिकों में से किसी एक के उदयका सद्भाव होने से) आत्मा के  
परिणामों में यथावत् निर्मलता-विशुद्धि-का अभाव हो जाता है । इससे  
यहां तत्त्वार्थ के प्रति यद्यपि व्यक्त-प्रगट-रूप में अप्रीति-अरुचि नहीं है;  
फिर भी अव्यक्त रूपसे वह यहां है ही । इसीलिये तो मिथ्यात्व और  
सास्वादनमें इसी अप्रीति की व्यक्ताव्यक्तता से भेद माना गया है ।

ત્વપ્રાપ્તિના સમ્બુજ થયેલ છવ પણ અનતાનુબંધી કપાયના ઉદયથી જ્યારે  
ઔપશમિક-સમ્યક્ત્વના ઉપર અરુચિચિત્તવાળા થઈને એનો વમન-ત્યાગ કરે  
છે, અર્થાત્ જ્યારે તે સમ્યક્ત્વ છુટી જાય છે ત્યારે એનું આસ્વાદન પણ એને  
ઓછામાં ઓછા એક સમય સુધી અને વધારેમાં વધારે છ-આવલિકાળ સુધી  
રહે છે. આ કારણે આ સમ્યક્ત્વને સાસ્વાદન-સમ્યક્ત્વ કહેવામાં આવેલ છે.

આ સમ્યક્ત્વમાં અનંતાનુબંધી કપાયના ઉદયનો સદ્ભાવ હોવાથી (ક્રોધા-  
દિકેમાંથી કેઈ એકના ઉદયનો સદ્ભાવ હોવાથી) આત્માના પરિણામેમાં યથાવત્  
નિર્મળતા-વિશુદ્ધિ-નો અભાવ થઈ જાય છે, તેથી અહીંયા તત્ત્વાર્થના પ્રતિ  
યદ્યપિ વ્યક્ત-પ્રગટ-રૂપમાં અપ્રીતિ-અરુચી નથી; તો પણ અવ્યક્તરૂપથી તે  
અહીંયા છે જ. તેથી તો મિથ્યાત્વ અને સાસ્વાદમાં એ જ અપ્રીતિની વ્યક્તા-  
વ્યક્તતાથી ભેદ માનવામાં આવે છે.

સતિ હિ—અનન્તસુખદો નિઃશ્રેયસતરૂવીજભૂત ઔપશમિકસમ્યક્ત્વલાભો જઘન્યતઃ સમયમાત્રેણ ઉત્કર્ષતઃ પઙ્કભિરાવલિકાભિરપગચ્છતિ । આસાદનમિત્યત્ર પૃષોદરાદિત્વાદ્ યકારલોપઃ, ‘કૃદ્વહુલ’—મિતિ કર્તર્યનટ્ । આસાદનેન સહ વર્તત—ઈતિ સાસાદનમ્ । અનન્તાનુવંધીકપાયોદયે સતિ ઔપશમિકસમ્યક્ત્વાત્ પ્રપતન્ મિથ્યાત્વસંક્રમણા-ભિમુખઃ સન્ યાવત્ મિથ્યાત્વભૂમિં ન પ્રાપ્નોતિ તદન્તરાલે વર્તમાનસ્ય યત્ સમ્યક્ત્વં તત્ સાસાદનં ભવતિ ।

અથવા—યહ સમ્યક્ત્વ સાસાદન કે નામ સે ઓ કહા જાતા હૈ, અર્થાત્ ઇસકા દૂસરા નામ સાસાદનસમ્યક્ત્વ ઓ હૈ । ‘આયં સાદયતિ—અપનયતીત્યાસાદનમ્; આસાદનેન સહ વર્તતે—ઈતિ સાસાદનમ્’ અર્થાત્—‘આય’ નામ ઔપશમિકસમ્યક્ત્વકે લાભકા હૈ । ડસ લાભકો જો હટાતા હૈ, ડસે આસાદન કહતે હૈ । ડસકે સહિત હોને સે વહ સાસાદન કહા જાતા હૈ । ઇસ સમ્યક્ત્વ કી પ્રાપ્તિરૂપ લાભકો હટાનેવાલા અનંતાનુવંધી કપાય કે ડદયકા વેદન હી હૈ । કયોં કિ ઇસકે હોને પર અનન્ત સુગ્રદાતા ઔર નિશ્રેયસ—મોક્ષરૂપ વૃક્ષકા વીજરૂપ જો ઔપશમિક સમ્યક્ત્વ હૈ ડસકા લાભ—સદ્ભાવ કસ સે કમ ઁક સસયતક ઔર અધિક સે અધિક છહ આવલિકાલ તક હી રહ કર ફિર દૂર હો જાતા હૈ । ઇમકા ફાલિનાર્થ યહી હૈ કિ ઔપશમિકસમ્યક્ત્વમેં જો અનંતાનુવંધી કપાય કા ડપશમ હૈ વહ અપને કાલ—અન્તર્મુહૂર્ત—તક હી રહતા હૈ । ઇસકે વાદ જવ ડસ કપાય કા ડદય હો જાતા હૈ તવ યહ જીવ ઔપ-

અથવા—આ સમ્યક્ત્વ સાસાદનના નામથી પણ કહેવામા આવે છે. અર્થાત્ એનું ‘બીજુ’ નામ સાસાદન—સમ્યક્ત્વ પણ છે. ‘આયં સાદયતિ—અપનયતીત્યાસાદનમ્, આસાદનેન સહ વર્તતે ઇતિ સાસાદનમ્’ અર્થાત્ ‘આય’ નામ ઔપશમિક સમ્યક્ત્વના લાભનું છે. એ લાભને જે કહેવે છે એને સાસાદન કહે છે. એના સહિત હોવાથી તે સાસાદન કહેવાય છે.

આ સમ્યક્ત્વની પ્રાપ્તિરૂપ લાભને કહેવાવાળા અનંતાનુબંધી કપાયના ઉદયનું વેદન જ છે, કારણ કે આના હોવાથી અનન્ત સુખ દેવાવાળા અને નિશ્રેયસ—મોક્ષ—રૂપ વૃક્ષના બીજસ્વરૂપ જે ઔપશમિક—સમ્યક્ત્વ છે એનો લાભ—સદ્ભાવ ઓછામાં ઓછા એક સમય સુધી અને વધારેમાં વધારે છ આવલી કાળ સુધી રહીને પછી દૂર થઈ જાય છે. એનો ફલિતાર્થ એ છે કે ઔપશમિક સમ્યક્ત્વમાં જે અનંતાનુબંધી કપાયનો ઉપશમ છે તે પોતાના કાલ—અન્તર્મુહૂર્ત સુધી રહે છે. ત્યારબાદ જ્યારે એ કપાયનો ઉદય થઈ જાય છે

(૫) વેદકસમ્યક્ત્વમુચ્યતે-વેદયતિ-અનુભવતિ સમ્યક્ત્વપુદ્ગલાનિતિ વેદ-  
કોઽનુભવિતા, તદર્થાન્તર્ભૂતત્વાત્ સમ્યક્ત્વમપિ વેદકમ્ । સમ્યક્ત્વપુદ્ગલપુઞ્જસ્ય વહુ-  
તરક્ષપિતસ્ય ચરમપુદ્ગલાનાં ગ્રાસસમયે વેદકસમ્યક્ત્વં ભવતિ । તથાહિ-ક્ષપકશ્રેણિ-  
પ્રાપ્તોઽન્તાનુવંધિકપાયચતુષ્ટયમપિ ક્ષપયિત્વા મિથ્યાત્વમિશ્રપુદ્ગલપુજાન્ ક્ષપયતિ,  
શમિકસમ્યક્ત્વસે પતિત હોકર મિથ્યાત્વકે સમ્મુખ હોતા હૈ—(અમી  
મિથ્યાત્વમેં પ્રાપ્ત નહીં હુઆ હૈ કિન્તુ ઉસકે સમ્મુખ હી હુઆ હૈ); સો  
જવ તક યહ જીવ મિથ્યાત્વરૂપી ભૂમિ કો પ્રાપ્ત નહીં હુઆ હૈ, અર્થાત્-  
જવ તક સમ્યક્ત્વરૂપી પર્વત સે ગિર કર વીચમેં હી હૈ, તવ તક ઉસ  
જીવકા જો સમ્યક્ત્વ હૈ ઉસકા નામ સાસાદન હૈ ૪ ।

(૬) વેદકસમ્યક્ત્વ કા સ્વરૂપ—

વેદયતિ=અનુભવતિ સમ્યક્ત્વપુદ્ગલાન્-इति વેદકઃ=અનુભવિતા,  
તદર્થાન્તર્ભૂતત્વાત્ સમ્યક્ત્વમપિ વેદકમ્ ।

અર્થાત્-સમ્યક્ત્વપ્રકૃતિ કે પુદ્ગલોં કા જો અનુભવ કરનેવાલા હૈ,  
ઉસે વેદક-અનુભવિતા કહતે હૈં । ઉસસે અભિન્ન હોનેસે સમ્યક્ત્વ મી  
વેદક કહલાતા હૈ । સમ્યક્ત્વપ્રકૃતિ કે જિતને મી પુદ્ગલપુંજ હૈં, ઉનમેં  
સે અધિકતર પુદ્ગલપુંજોં કા ક્ષય હો ચુકને પર વાકી જો ચરમપુદ્ગલપુંજ  
રહતે હૈં ઉનકે ગ્રાસકે સમીપ ( નષ્ટ કરને કે સમય )મેં વહ વેદકસ-  
મ્યક્ત્વ હોતા હૈ । ક્ષપકશ્રેણીકો પ્રાપ્ત હુઆ જીવ અનંતાનુવંધિચતુષ્ટય

ત્યારે એ જીવ ઔપશમિક-સમ્યક્ત્વથી પતિત થઈ મિથ્યાત્વની સમ્મુખ થાય  
છે ( હજી મિથ્યાત્વમાં પ્રાપ્ત નથી થયોપણ એની સમ્મુખ થયો છે ) માટે ન્યાં  
સુધી એ જીવ મિથ્યાત્વરૂપી ભૂમિને પ્રાપ્ત નથી થયો, અર્થાત્-ન્યાં સુધી  
સમ્યક્ત્વરૂપી પર્વતથી પડીને વચમાં જ છે તે સમય તે જીવનું જે સમ્યક્ત્વ  
છે તેનું નામ સાસાદન છે (૪).

(૫) વેદક-સમ્યક્ત્વનું સ્વરૂપ કહે છે—‘વેદયતિ=અનુભવતિ સમ્યક્ત્વપુદ્ગલાન્  
इति વેદકઃ=અનુભવિતા, તદર્થાન્તર્ભૂતત્વાત્ સમ્યક્ત્વમપિ વેદકમ્’

અર્થાત્—સમ્યક્ત્વપ્રકૃતિના પુદ્ગલોનો જે અનુભવ કરવાવાળો છે,  
એને વેદક-અનુભવિતા કહે છે. એનાથી અભિન્ન હોવાથી સમ્યક્ત્વ પણ વેદક  
કહેવાય છે. સમ્યક્ત્વપ્રકૃતિના જેટલા પણ પુદ્ગલપુંજ છે, એમાંથી અધિકતર  
પુદ્ગલપુંજનો નાશ થયા પછી બાકી જે ચરમ પુદ્ગલ રહે છે એના ગ્રાસની  
સમીપ (નાશ કરવાના સમય)માં તે વેદક-સમ્યક્ત્વ થાય છે. ક્ષપકશ્રેણીને  
પ્રાપ્ત થયેલા જીવ અનંતાનુબંધિ-ચતુષ્ટયનું પણ ક્ષપણ કરીને મિથ્યાત્વપ્રકૃતિ

તતઃ પરં સમ્યક્ત્વપુઞ્જમપિ ઉદીર્યોદીર્યાનુભવેન નિર્જરયતિ, તેનોદીરણીયસમ્યક્ત્વ-પુઞ્જાભાવો જાયતે, તદેવં ચરમગ્રાસેઽવતિષ્ઠમાનેઽઘ્યાપિ સમ્યક્ત્વપુદ્ગલનાં ક્રિયતા-મપિ વેદ્યમાનત્વાત્ વેદકં સમ્યક્ત્વમુપજાયતે । इदमपि सस्यक्त्वं पौद्गलिकं विज्ञेयम् ।

ધાયોપશમિકસમ્યક્ત્વની જીવઃ સમ્યક્ત્વમોહનીયપુઞ્જસ્યાધિકાંશં ક્ષપયિત્વા યદા સમ્યક્ત્વમોહનીયસ્યાન્તિમપુદ્ગલનાં વેદનં કરોતિ તદાનીં જાયમાન આત્મપ-રિણામો વેદકસમ્યક્ત્વમિતિ નિષ્કર્ષઃ । વેદકસમ્યક્ત્વપ્રાપ્ત્યનન્તરં ક્ષાયિકસમ્યક્ત્વં લભ્યત એવ ।

કાંઘી ક્ષપણ કરકે મિધ્યાત્વપ્રકૃતિ ઓર મિશ્રપ્રકૃતિ કે પુદ્ગલપુંજોંકા જવ ક્ષય કર દેતા હૈ તવ ડસકે વાદ સમ્યક્ત્વપ્રકૃતિ કે પુંજોંકી અપને અનુભવ સે ડદીરણા કરકે નિર્જરા કરતા હૈ । ંસા કરને સે ડદીરણીય-ડદીરણા કરને યોગ્ય-સમ્યક્ત્વપ્રકૃતિ કે પુંજોં કા અભાવ હો જાતા હૈ । ડસ પ્રકાર અન્તિમ ગ્રાસ કે રહને પર ડસ સમય ઘી કિતનેક અંતિમ અંશવર્તી સમ્યક્ત્વપ્રકૃતિ કે પુદ્ગલપુંજોં કા અનુભવ હોતા હૈ । ડસકા અનુભવ કરના હી વેદક-સમ્યક્ત્વ હૈ । યહ સમ્યક્ત્વ ઘી પૌદ્ગલિક જા-નના ચાહિયે ।

ડસકા ફલિતાર્થ યહી હૈ-કિ ક્ષાયોપશમિક-સમ્યક્ત્વવાલા જીવ સમ્યક્ત્વમોહનીય કર્મ કે પુદ્ગલપુંજકે અધિકાંશ ભાગકા ક્ષય કરકે જવ ડસી સમ્યક્ત્વમોહનીય કર્મ કે અંતિમ પુદ્ગલોં કા વેદન કરતા હૈ ડસ સમય મેં ડત્પન્ન હોનેવાલા આત્મપરિણામ વેદક-સમ્યક્ત્વ હૈ । વેદકસમ્ય-ક્ત્વ કી પ્રાસિકે યાદ જીવ ક્ષાયિકસમ્યક્ત્વ કો પ્રાસ કર હી લેતા હૈ ।

અને મિશ્રપ્રકૃતિના પુદ્ગલપુંજનેનો ન્યારે ક્ષય કરી નાળે છે ત્યારે પછી સમ્યક્ત્વપ્રકૃતિના પુંજની પોતાના અનુભવથી ઉદીરણા કરીને નિર્જરા કરે છે. એમ કરવાથી-ઉદીરણીય-ઉદીરણા કરવા યોગ્ય સમ્યક્ત્વ પ્રકૃતિના પુંજનો અભાવ થઈ જાય છે. આ પ્રકારે અન્તિમ ગ્રાસના રહેવાથી તે સમય પણ કેટલાક અંતિમ અંશવર્તી સમ્યક્ત્વપ્રકૃતિના પુદ્ગલપુંજનેનો અનુભવ થાય છે. એનો અનુભવ કરવો તે વેદક-સમ્યક્ત્વ છે. આ સમ્યક્ત્વ પણ પૌદ્ગ-લિક જાણવું જોઈએ.

આનો ફલિતાર્થ એ છે કે ક્ષાયોપશમિક સમ્યક્ત્વવાળા જીવ સમ્યક્ત્વ-મોહનીય કર્મના પુદ્ગલપુંજના અધિકાંશ ભાગનો ક્ષય કરીને ન્યારે એ સમ્યક્ત્વ-મોહનીય કર્મના અંતિમ પુદ્ગલોનું વેદન કરે છે તે સમયમાં ઉત્પન્ન થવાવાળા આત્મપરિણામ વેદક-સમ્યક્ત્વ છે, વેદક-સમ્યક્ત્વની પ્રાપ્તિ પછી ક્ષાયિક-સમ્યક્ત્વને જીવ પ્રાપ્ત કરી જ લે છે.

નન્વેવં સતિ વેદકસ્ય ક્ષાયોપશમિકાત્ કો ભેદઃ, સમ્યક્ત્વપુદ્ગલપુંજવેદનસ્યો-  
ભયત્રાપિ તુલ્યત્વાત્? અત્રોચ્યતે—વેદકે સ્વલુ સર્વોદિતસમ્યક્ત્વપુદ્ગલપુંજચરમગ્રાસ-  
વેદનમ્, ક્ષાયોપશમિકસમ્યક્ત્વકાલે તુ ચરમગ્રાસવર્તિસમ્યક્ત્વપુદ્ગલા અવશિષ્ટાસ્તિ-  
ષ્ઠન્તિ, તેન તદ્વર્જિતપુદ્ગલાનાં વેદનં ભવતિ, ઇતિ વિશેષોઽવધારણીય ઇતિ। ઉક્તશ્ચ—

શંકા—યદિ યહી વાત હૈ કિ ઇન દોનોં સમ્યક્ત્વોં મેં સમ્યક્ત્વ-  
પ્રકૃતિ કે પુંજોં કા વેદન હોતા હૈ નો ફિર વેદકસમ્યક્ત્વકા ક્ષાયોપ-  
શમિકસમ્યક્ત્વસે ભેદ હી ક્યા રહા ?

સમાધાન—વેદકસમ્યક્ત્વમેં સમ્યક્ત્વપ્રકૃતિ કે ચરમપુદ્ગલોં કા  
વેદન હોતા હૈ, ઓર ક્ષાયોપશમિકસમ્યક્ત્વ મેં ઇનસે અવશિષ્ટોંકા।  
વસ, યહી ઇન દોનોં મેં ભેદ હૈ। ઇસી વાત કો “વેદકે સ્વલુ સર્વો-  
દિતસમ્યક્ત્વપુદ્ગલપુંજચરમગ્રાસવેદનમ્, ક્ષાયોપશમિકસમ્યક્ત્વકાલે તુ  
ચરમગ્રાસવર્તિસમ્યક્ત્વપુદ્ગલા અવશિષ્ટાસ્તિષ્ઠન્તિ”। ઇન પંક્તિયોંમેં  
ટીકાકારને સ્પષ્ટ કિયા હૈ। અર્થાત્—વેદકસમ્યક્ત્વ મેં સમ્યક્ત્વપ્રકૃતિકે  
ઉદિત હુએ સમસ્ત પુદ્ગલપુંજોંમેંસે સિર્ફ ચરમગ્રાસવર્તી પુદ્ગલોં કા વેદન  
હોતા હૈ। ક્ષાયોપશમિક—સમ્યક્ત્વ કે સમય મેં નો ડસ ચરમગ્રાસવર્તી  
પુદ્ગલપુંજ સે અવશિષ્ટ સમ્યક્ત્વપ્રકૃતિ કે પુદ્ગલપુંજોં કા વેદન હોતા હૈ।  
કલ્પના કીજિયે—સમ્યક્ત્વપ્રકૃતિ કે સમસ્ત પુદ્ગલપુંજોંકી સંખ્યા ૧૦૦ હૈ।

શંકા—એ એ વાત છે કે ત્યારે એ બંને સમ્યક્ત્વોમાં સમ્યક્ત્વપ્રકૃ-  
તિના પુંજોનું વેદન થાય છે તો પછી વેદક—સમ્યક્ત્વના ક્ષાયોપશમિક—સમ્યક્ત્વથી  
ભેદ જ શો રહ્યો ?

સમાધાન—વેદક—સમ્યક્ત્વમાં સમ્યક્ત્વપ્રકૃતિના ચરમ પુદ્ગલોનાં વેદન થાય  
છે, અને ક્ષાયોપશમિક—સમ્યક્ત્વમાં એનાથી અવશિષ્ટોનાં વેદન થાય છે. બન્ને  
આજ આ બંનેમાં ભેદ છે.

આજ વાતને “વેદકે સ્વલુ સર્વોદિતસમ્યક્ત્વપુદ્ગલપુંજચરમગ્રાસવેદનમ્ ક્ષાયોપ-  
શમિકસમ્યક્ત્વકાલે તુ ચરમગ્રાસવર્તિસમ્યક્ત્વપુદ્ગલા અવશિષ્ટાસ્તિષ્ઠન્તિ”

આ પંક્તિઓમાં ટીકાકારે સ્પષ્ટ કરી છે. અર્થાત્ વેદક—સમ્યક્ત્વમાં સમ્ય-  
ક્ત્વપ્રકૃતિના ઉદિત થયેલ બધા પુદ્ગલપુંજોમાંથી ફક્ત ચરમગ્રાસવર્તી પુદ્ગલ-  
ોનાં જ વેદન થાય છે.

ક્ષાયોપશમિક—સમ્યક્ત્વના સમયમાં તો આ ચરમગ્રાસવર્તી પુદ્ગલપુંજથી  
અવશિષ્ટ સમ્યક્ત્વપ્રકૃતિના અવ્યવહિત પૂર્વવર્તી પુદ્ગલપુંજોનું વેદન થાય છે.  
કલ્પના કરિયે કે સમ્યક્ત્વ—પ્રકૃતિના સમસ્ત પુદ્ગલપુંજોની સંખ્યા ૧૦૦ છે.

“खीणे दंसणमोहे, तिविहम्मि वि खाइयं भवे सम्मं ।  
 वेयगमिह सव्वोइय, चरमिल्लयपुग्गलग्गासं ॥ १ ॥  
 उवसमसेट्ठिगयस्स उ, होइ हु उवसामियं तु सम्मत्तं ।  
 जो वा अकयतिपुंजो, अखवियमिच्छो लहइ सम्मं ॥ २ ॥  
 उवसमसम्मत्ताउ, चइउं मिच्छं अपावमाणस्स ।  
 सासायणसम्मत्तं, तयंतरालम्मि छावलियं ॥ ३ ॥  
 मिच्छत्तं जमुइन्नं, तं खीणं अणुइयं च उवसंतं ।  
 मिस्सीभावपरिणयं, वेइज्जंतं खओवसमं ” ॥ ४ ॥ इति ।

इनमें से ९९ वें तकके पुद्गलपुंजोंका वेदन क्षायोपशमिकसम्यक्त्वमें होगा, अन्तिम १०० वें का वेदन वेदकसम्यक्त्वमें । इस अन्तिम १०० वें का वेदन क्षायोपशमिक-सम्यक्त्वमें नहीं होगा ५ । औपशमिकसम्यक्त्वादिकों का स्वरूप इन गाथाओंमें भी संक्षेपस्वरूप से इस प्रकार कहा है—

गाथा—खीणे दंसणमोहे, तिविहम्मि वि खाइयं भवे सम्मं ।  
 वेयगमिह सव्वोइय, चरमिल्लयपुग्गलग्गासं ॥ १ ॥  
 उवसमसेट्ठिगयस्स उ, होइ हु उवसामियं तु सम्मत्तं ।  
 जो वा अकयतिपुंजो, अखवियमिच्छो लहइ सम्मं ॥ २ ॥  
 उवसमसम्मत्ताउ, चइउं मिच्छं अपावमाणस्स ।  
 सासायणसम्मत्तं, तयंतरालम्मि छावलियं ॥ ३ ॥  
 मिच्छत्तं जमुइन्नं, तं खीणं अणुइयं च उवसंतं ।  
 मिस्सीभावपरिणयं, वेइज्जंतं खओवसमं ॥ ४ ॥ ” इति ।

आभांथी ८८ युधीना पुद्गलपुंजेनु वेदन क्षायोपशमिक-सम्यक्त्वमां थशे.  
 अन्तिम १०० भातुं वेदन वेदक-सम्यक्त्वमां थशे (प)।

औपशमिक-सम्यक्त्वादिकोनु स्वरूप आ गाथाओमां पणु संक्षेपइथी  
 आ प्रकारे कहुं छे:—

“खीणे दंसणमोहे, तिविहम्मि वि खाइयं भवे सम्मं ।  
 वेयगमिह सव्वोइय, चरमिल्लयपुग्गलग्गासं ॥ १ ॥  
 उवसमसेट्ठिगयस्स उ, होइ हु उवसामियं तु सम्मत्तं ।  
 जो वा अकयतिपुंजो, अखवियमिच्छो लहइ सम्मं ॥ २ ॥  
 उवसमसम्मत्ताउ, चइउं मिच्छं अपावमाणस्स ।  
 सासायण-सम्मत्तं, तयंतरालम्मि छावलियं ॥ ३ ॥  
 मिच्छत्तं जमुइन्नं, तं खीणं अणुइयं च उवसंतं ।  
 मिस्सीभावपरिणयं, वेइज्जंतं खओवसमं ” ॥ ४ ॥ इति ॥



છાયા—ક્ષીणे दर्शनमोहे, त्रिविधेऽपि क्षायिकं भवति सम्यक् (सम्यक्त्वम्) ।  
 वेदकमिह सर्वोदित-चरमकपुद्गलासम् ॥ १ ॥  
 उपशमश्रेणिगतस्य तु, भवति ह्य औपशमिकं तु सम्यक्त्वम् ।  
 यो वा अकृतत्रिपुञ्जः, अक्षपितमिथ्यात्वो लभते सम्यक् (सम्यक्त्वम्) ॥२॥  
 उपशमसम्यक्त्वात् च्युत्वा मिथ्यात्वमप्राप्नुवतः ।  
 सास्वादनसम्यक्त्वं, तदन्तराले पडावलिकम् ॥ ३ ॥  
 मिथ्यात्वं यदुदीर्णं, तत्क्षीणमनुदितं चोपशान्तम् ।  
 मिश्रीभावपरिणतं, वेद्यमानं क्षायोपशमम् (क्षायोपशमिकम्) ॥४॥ इति ।

મિથ્યાત્વમોહનીય, મિશ્રમોહનીય ઔર સમ્યક્ત્વમોહનીયરૂપ દર્શન-મોહનીય કર્મ કે સર્વથા ક્ષય હોને પર હી ક્ષાયિક-સમ્યક્ત્વ હોતા હૈ, સર્વ ઉદિત પુદ્ગલોં મેં ચરમ-અન્તિમ-અંશવર્તી પુદ્ગલોંકા વેદન હોના વેદકસમ્યક્ત્વ હૈ ॥ ૧ ॥ ઉપશમશ્રેણિપ્રાપ્ત જીવોંકો ઉપશમસમ્યક્ત્વ કા લાભ હોતા હૈ । અથવા જિસને મિથ્યાત્વકર્મ કે ત્રીન પુંજ નહીં કિયે હૈં એસે મિથ્યાદૃષ્ટિ જીવ કે, તથા જિસને મિથ્યાત્વકા ક્ષય મી નહીં કિયા હૈ કિંતુ ઉસકા ઉપશમ કિયા હૈ ઉસ જીવ કે ઉપશમસમ્યક્ત્વ હોતા હૈ । મિથ્યાદૃષ્ટિ જીવકે ૭ પ્રકૃતિયોં (અનન્તાનુબન્ધી ૪, મિથ્યાત્વમોહનીય ૫, મિશ્રમોહનીય ૬, સમ્યક્ત્વમોહનીય ૭) કે ઉપશમસે ઉપશમસમ્યક્ત્વ હોતા હૈ; એસા સિદ્ધાન્તકારોંને કહા હૈ । ૮વેં ૯વેં ૧૦વેં ઔર ૧૧ વેં ગુણસ્થાનમેં ઉપશમસમ્યક્ત્વ હોતા હૈ, ક્યોં કિ યે ઉપશમશ્રેણિ કે સ્થાન હૈં । તથા અનાદિ-મિથ્યાદૃષ્ટિ જીવ

“ મિથ્યાત્વમોહનીય, મિશ્રમોહનીય અને સમ્યક્ત્વમોહનીયરૂપ દર્શનમોહનીય કર્મનો ક્ષય થયા પછી જ ક્ષાયિક-સમ્યક્ત્વ થાય છે, બધા ઉદિત પુદ્ગલોમાં ચરમ-અન્તિમ-અંશવર્તી પુદ્ગલોનું વેદન થવું વેદક-સમ્યક્ત્વ છે (૧)

ઉપશમશ્રેણિપ્રાપ્ત જીવોને ઉપશમ-સમ્યક્ત્વનો લાભ થાય છે. અથવા જો જો મિથ્યાત્વકર્મના ત્રણ પુંજ નથી કર્યા, એવા મિથ્યાદૃષ્ટિ જીવને તથા મિથ્યાત્વનો ક્ષય કર્યો નથી પણ તેનો ઉપશમ કર્યો છે, એ જીવને ઉપશમ-સમ્યક્ત્વ થાય છે. મિથ્યાદૃષ્ટિ જીવની સાત ૭ પ્રકૃતિયો (અનન્તાનુબન્ધી ૪, મિથ્યાત્વમોહનીય ૫, મિશ્રમોહનીય ૬, સમ્યક્ત્વમોહનીય ૭)ના ઉપશમથી ઉપશમસમ્યક્ત્વ થાય છે; એવું સિદ્ધાન્તકારોએ કહ્યું છે. ૮ માં, ૯ માં, ૧૦ માં અને ૧૧ માં ગુણસ્થાનમાં ઉપશમસમ્યક્ત્વ થાય છે, કારણ કે એ ઉપશમશ્રેણીનું સ્થાન છે. તથા અનાદિ

યન્મિથ્યાત્વમુદીર્ણં તત્ ક્ષીણમ્ । યત્ અનુદિતમ્ અનુદીર્ણં તન્મિથ્યાત્વં, મિ-  
શ્રીભાવપરિણતં=મિશ્રમોહનીયં, ચ શબ્દાત્ સમ્યક્ત્વદલિકં યદનુદીર્ણમનુદિતં તદપિ,  
ઉપશાન્તમ્, અનુદીર્ણાનુદિતમિથ્યાત્વમિશ્રસમ્યક્ત્વદલિકેતિત્રયમુપશમાવસ્થમિ-  
ત્યર્થઃ । વેદ્યમાનમ્=ઉદયાવસ્થાં સમાપન્નં સમ્યક્ત્વદલિકં યત્ર તત્ ક્ષાયોપશમિકં  
સમ્યક્ત્વમુચ્યતે, इत्यर्थः ॥ ૪ ॥

કે સર્વપ્રથમ ઉપશમસમ્યક્ત્વ હોતા હૈ । યહ જીવ મિથ્યાત્વ કર્મ કે  
ત્રીન પુંજ નહીં કરતા હૈ ઓર ન મિથ્યાત્વકા ક્ષય હી કરતા હૈ ॥ ૨ ॥  
ઉપશમસમ્યક્ત્વ સે ચ્યુત હોકર મિથ્યાત્વ કો નહીં પ્રાપ્ત હુણ જીવ  
કે હી અન્તરાલ સમય મેં કસ સે કસ ? સમય ઓર અધિક સે અધિક  
૬ આવલીકાલ તક સાસ્વાદન-સમ્યક્ત્વ રહતા હૈ ॥ ૩ ॥ ઉદય પ્રાપ્ત  
મિથ્યાત્વકા નાશ ઓર અનુદિત મિથ્યાત્વકા ઉપશમ, ઇન દો અવસ્થાઓં  
સે મિશ્રિત ક્ષાયોપશમિક-સમ્યક્ત્વ હૈ ॥ ૪ ॥

इस सम्यक्त्व में उदयप्राप्त मिथ्यात्वका विनाश-क्षय होता है  
और अनुदीर्ण मिथ्यात्व का क्षय नहीं है; किन्तु उसका परिणामन मिश्र  
प्रकृति के रूपमें है, और इसका यहां पर उपशम है । इसी प्रकार सम्य-  
क्त्वप्रकृति का पुंज भी जो अनुदीर्ण है वह भी उपशम अवस्था में है ।  
यह बात भी श्लोकमें आये हुए ‘च’ शब्द से प्रकट है । अतः ‘जो क्षय  
और उपशम से उत्पन्न होता है, वह क्षायोपशमिक-सम्यक्त्व है’ इस प्रकार

મિથ્યાદષ્ટિ જીવને સર્વ પ્રથમ ઉપશમસમ્યક્ત્વ થાય છે. આ જીવ મિથ્યાત્વ  
કર્મના ૩ ત્રણ પુંજ નથી કરતો, તેમજ મિથ્યાત્વનો ક્ષય પણ નહિ. (૨)  
ઉપશમસમ્યક્ત્વથી જુદા પડી મિથ્યાત્વને નહિ પ્રાપ્ત થયેલ જીવને અંતરાળ  
સમયમાં જોછામાં જોછું ૧ એક સમય અને વધારેમાં વધારે ૬ છ આવલીકાળ  
સુધી સાસ્વાદન-સમ્યક્ત્વ રહે છે. (૩)

ઉદયપ્રાપ્ત મિથ્યાત્વનો નાશ અને અનુદિત મિથ્યાત્વનો ઉપશમ, એ બે  
અવસ્થાઓથી મિશ્રિત ક્ષાયોપશમિકસમ્યક્ત્વ છે. (૪)

આ સમ્યક્ત્વમાં ઉદયપ્રાપ્ત મિથ્યાત્વનો વિનાશ-ક્ષય થાય છે, અને અનુ-  
દીર્ણ મિથ્યાત્વનો ક્ષય નથી; પણ એનું પરિણમન મિશ્રપ્રકૃતિના રૂપમાં છે, અને  
તેનો અહીંયા ઉપશમ છે. આ પ્રકારે સમ્યક્ત્વપ્રકૃતિના પુંજ પણ જે અનુ-  
દીર્ણ છે તે પણ ઉપશમ અવસ્થામાં છે. આ વાત પણ શ્લોકમાં આવેલ “ચ”  
શબ્દથી પ્રગટ છે, માટે ‘જે ક્ષય અને ઉપશમથી ઉત્પન્ન થાય છે, તે ક્ષયો-  
પશમ-સમ્યક્ત્વ છે’ એવી રીતે જે ક્ષાયોપશમિકસમ્યક્ત્વનું લક્ષણ કહ્યું છે, તે

પ્રકારાન્તરેણાપિ સમ્યક્ત્વસ્ય દશવિધત્વં સ્થાનાઙ્ગાદૌ પ્રતિવોધિતમ્, યથા-  
(૧) નિસર્ગરુચિઃ, (૨) ઉપદેશરુચિઃ, (૩) આજ્ઞારુચિઃ, (૪) સૂત્રરુચિઃ, (૫) વીજ-  
રુચિઃ, (૬) અધિગમરુચિઃ, (૭) વિસ્તારરુચિઃ, (૮) ક્રિયારુચિઃ, (૯) સંક્ષેપરુચિઃ  
(૧૦) ધર્મરુચિરિતિ ।

તત્ર-નિસર્ગઃ સ્વભાવસ્તેન રુચિર્જિનોક્તતત્ત્વાભિલાપરૂપા યસ્ય સ નિસર્ગ-  
રુચિઃ ૧ । ઉપદેશો ગુર્વાદિભિર્વસ્તુતત્ત્વકથનં, તેન રુચિર્યસ્ય સ ઉપદેશરુચિઃ ૨ ।

જો ક્ષાયોપશમિક સમ્યક્ત્વ કા લક્ષણ કહા હૈ, વહ મી સુઘટિત હો જાતા  
હૈ; કારણ કિ યહાં પર મિથ્યાત્વમોહનીય મિશ્રમોહનીય ઓર સમ્ય-  
ક્ત્વમોહનીય પ્રકૃતિયોં કે અનુદીર્ણ પુંજ ઉપશમ-અવસ્થા મેં રહતે હૈં  
એવં ઉદીર્ણ મિથ્યાત્વ કા ક્ષય હૈ, ઓર સમ્યક્ત્વ પ્રકૃતિ કે દલોંકા વર્ત-  
માન મેં ઉદય હો રહા હૈ ।

પ્રકારાન્તર સે મી સમ્યક્ત્વ દસ પ્રકાર કા હૈ, વહ સ્થાનાઙ્ગ આદિ  
સૂત્રોં મેં વર્ણિત હૈ, જૈસે-(૧) નિસર્ગરુચિ, (૨) ઉપદેશરુચિ, (૩) આજ્ઞા-  
રુચિ, (૪) સૂત્રરુચિ, (૫) વીજરુચિ, (૬) અધિગમરુચિ, (૭) વિસ્તારરુચિ,  
(૮) ક્રિયારુચિ, (૯) સંક્ષેપરુચિ, (૧૦) ધર્મરુચિ ।

નિસર્ગ નામ સ્વભાવ કા હૈ; સ્વભાવ સે હી જિસ જીવ કો  
જિનોક્ત તત્ત્વોં મેં રુચિ-અભિલાષા હોતી હૈ ઉસકે યહ સમ્યક્ત્વ હોતા હૈ ।  
અર્થાત્-સ્વભાવ સે હી જીવ કી રુચિ જિસકે દ્વારા જિનકથિત તત્ત્વોં મેં  
હુઆ કરતી હૈ વહ નિસર્ગરુચિ હૈ (૧) । ગુર્વાદિક કે ઉપદેશ સે તત્ત્વોં મેં જો

પણ સુઘટિત થઈ જાય છે, કારણ કે આ ઠેકાણે મિથ્યાત્વમોહનીય મિશ્રમોહનીય  
અને સમ્યક્ત્વમોહનીય પ્રકૃતિયોના અનુદીર્ણ પુંજ ઉપશમ અવસ્થામાં રહે છે,  
એવં ઉદીર્ણ મિથ્યાત્વનો ક્ષય છે અને સમ્યક્ત્વપ્રકૃતિના દિગ્ગિઓનો વર્તમાનમાં  
ઉદય થાય છે.

પ્રકારાન્તરથી પણ સમ્યક્ત્વ દશ પ્રકારના છે, તે સ્થાનાંગ આદિ સૂત્રોમાં  
વર્ણિત છે. જેમ:-(૧) નિસર્ગરૂચિ, (૨) ઉપદેશરૂચિ, (૩) આજ્ઞારૂચિ, (૪) સૂત્ર  
રૂચિ, (૫) વીજરૂચિ, (૬) અધિગમરૂચિ, (૭) વિસ્તારરૂચિ, (૮) ક્રિયારૂચિ,  
(૯) સંક્ષેપરૂચિ, (૧૦) ધર્મરૂચિ.

નિસર્ગ નામ સ્વભાવનું છે, સ્વભાવથી જ જે જીવને જીનોક્ત તત્ત્વોમાં  
રૂચિ-અભિલાષા થાય છે તેને આ સમ્યક્ત્વ થાય છે. અર્થાત્-સ્વભાવથી જ જીવની  
રૂચિ જેના દ્વારા જિનકથિત તત્ત્વોમાં થયા કરે છે, તે નિસર્ગરૂચિ છે (૧).  
ગુર્વાદિકના ઉપદેશથી તત્ત્વોમાં જે રૂચિ જીવને માટે પેદા કરવામાં આવે

આજ્ઞા=સર્વજ્ઞવીતરાગવચનાત્મિકા, તત્ર રુચિરભિલાષો यस્ય સ આજ્ઞારુચિઃ ૩ । સૂત્રમ્-આચારાઙ્ગાદિકમ્, આવશ્યક-દશવૈકાલિકાદિકં ચ, તેન રુચિર્યસ્ય સ સૂત્રરુચિઃ ૪ । વીજમિવ વીજં યદેકમપ્યનેકાર્થવોધજનકં વચઃ, તેન રુચિર્યસ્ય સ વીજરુચિઃ ૫ । અધિગમેન=વિશિષ્ટપરિજ્ઞાનેન રુચિર્યસ્ય સઃ અધિગમરુચિઃ ૬ । વિસ્તારઃ=સકલદ્વાદશાઙ્ગસ્ય નયૈઃ પર્યાલોચનમ્, તેન પરિવર્ધિતા રુચિર્યસ્ય સ વિસ્તારરુચિઃ ૭ । ક્રિયા=યથાવિધિ સંયમાનુષ્ઠાનં તસ્યાં રુચિર્યસ્ય સ ક્રિયારુચિઃ ૮ । સંક્ષેપઃ=સંગ્રહઃ, તત્ર રુચિર્યસ્ય સ સંક્ષેપરુચિઃ । વિસ્તરાર્થપરિજ્ઞાનાભાવેન સંક્ષેપે રુચિર્ભવતિ ૯ । ધર્માસ્તિકાયે શ્રુતધર્માદૌ વા રુચિર્યસ્ય સ ધર્મરુચિઃ ૧૦ । इह सम्यक्त्वस्य जीवभेदेन कथनं गुणगुणिनोः कथंचिदभेदोऽस्तीति बोधनार्थम् ।

રુચિ જીવ કે લિયે પૈદા કરાયી જાતી' હૈ' ઉસકા નામ ઉપદેશરુચિ' હૈ' (૨) સર્વજ્ઞ વીતરાગ પ્રભુકે વચનોં મેં જો રુચિ જીવ કો હોતી' હૈ' ઉસે આજ્ઞા-રુચિ કહતે' હૈં (૩) । આચારાઙ્ગ આદિ અઙ્ગપ્રવિષ્ટ' એવં આવશ્યક, દશ વૈકાલિક આદિ અઙ્ગબાહ્યોં કે દ્વારા તત્ત્વોં મેં જીવ કી જો પ્રીતિ-શ્રદ્ધા કરાઈ જાતી' હૈ' વહ સૂત્રરુચિ નામકા સમ્યક્ત્વ' હૈ' (૪) । જિસ પ્રકાર' એક હી વીજસે અનેક ફલોંકી ઉત્પત્તિ' હુઆ કરતી' હૈ' ઉસી પ્રકાર' જિસ' એક વચન' સે અનેક પદાર્થોં કી પ્રતીતિ' હો' ઉસકા નામ વીજ' હૈ', ઉસસે જિસ જીવકો તત્ત્વોં મેં રુચિ જાગૃત' હોતી' હૈ' ઉસકા નામ વીજરુચિ' હૈ' (૫) । વિશિષ્ટ જ્ઞાનકો અધિગમ' કહતે' હૈં, હસકે દ્વારા જિસ જીવકો તત્ત્વોં મેં રુચિ' હોતી' હૈ' ઉસે અધિગમરુચિ' કહતે' હૈં (૬) । સમ્પૂર્ણ નયોંકે દ્વારા સકલ દ્વાદશાંગ' કા પર્યાલોચન' કરના, હસકા નામ વિસ્તારરુચિ' હૈ' । હસ' કે દ્વારા જીવ કી રુચિ તત્ત્વોં મેં પરિવર્ધિત' કરાઈ જાતી' હૈ' (૭) । शास्त्र-

છે તેનું' નામ ઉપદેશરૂચિ' છે (૨). સર્વજ્ઞ વીતરાગ પ્રભુના વચનોમાં જે રૂચિ જીવની થાય છે તેને આજ્ઞારૂચિ' કહે છે (૩) આચારાંગ આદિ અંગપ્રવિષ્ટ એમજ આવશ્યક, દશવૈકાલિક, આદિ અંગબાહ્યો દ્વારા તત્ત્વોમાં જીવની જે પ્રીતિ-શ્રદ્ધા કરાવામાં આવે છે તે સૂત્રરૂચિ' નામનું સમ્યક્ત્વ છે (૪). જેવી રીતે એકજ બીજથી અનેક ફલોની ઉત્પત્તિ થાય છે એ પ્રકારે એક જ વચનથી અનેક પદાર્થોની જે પ્રતીતિ થાય તેનું નામ બીજ છે, તેનાથી જે જીવને તત્ત્વોમાં રૂચિ જાગૃત થાય છે તેનું નામ વીજરૂચિ' છે (૫). વિશિષ્ટ જ્ઞાનને અધિગમ કહે છે. એના દ્વારા જે જીવને તત્ત્વોમાં રૂચિ થાય છે એને અધિગમરૂચિ' કહે છે. (૬) સંપૂર્ણ નયોના દ્વારા સકલ દ્વાદશાંગનું પર્યાલોચન કરવું તેનું નામ વિસ્તારરૂચિ' છે, એના દ્વારા જીવની રૂચિ તત્ત્વોમાં પરિવર્ધિત કરવામાં આવે

વિહિત વિધિકે અનુસાર સંયમકા અનુષ્ઠાન કરના ક્રિયા છે, इसमें जिस जीवकी रुचि होती है वह क्रियारुचि नामका सम्यक्त्व है (८)। संक्षेप नाम संग्रहका है, उसमें जो रुचि हो वह संक्षेपरुचि है। अर्थात्-जिस जीवको विस्तृतरूपसे पदार्थपरिज्ञान नहीं है उसको संक्षेपमें रुचि हुआ करती है। इसी अपेक्षा से इस सम्यक्त्व का नाम संक्षेपरुचि है। इस सम्यक्त्ववाला जीव जीवादिक पदार्थों में विस्ताररूप से रुचि-संपन्न नहीं होता; किन्तु संक्षेपरूप से ही उन्हें समझ कर उनमें दृढ़ आस्थावाला हो जाता है (९)। धर्मास्तिकायादिक जो अमूर्तिक पदार्थ हैं, उनमें अथवा श्रुत एवं धर्मादिकमें जीवको जिसके द्वारा रुचि होती है वह धर्मरुचि है (१०)। यद्यपि सम्यक्त्व आत्माका निजी गुण है, परन्तु इस दस प्रकार के सम्यक्त्व कथन में जो उसका जीव से भिन्न रूपमें जो कथन किया है वह इस बातकी पुष्टि करता है कि गुण और गुणीमें कथंचित् भिन्नता और कथंचित् अभिन्नता है। द्रव्यार्थिक नयकी अपेक्षा से गुण और गुणी अभिन्न हैं। पर्यायार्थिक नयकी विवक्षा से ये दोनों लक्षण, संख्या आदिकी अपेक्षा से भिन्न २ हैं। यह दशप्रकार के सम्यक्त्व का वर्णन हुआ (१०)।

છે (૭). શાસ્ત્રવિહિત વિધિના અનુસાર સંયમનું જે અનુષ્ઠાન કરવું તે ક્રિયા છે, તેમાં જે જીવની રુચિ થાય તે ક્રિયારુચિ નામનું સમ્યક્ત્વ છે (૮). સંક્ષેપ નામ સંગ્રહનું છે. એમાં જેની રુચિ હોય તે સંક્ષેપરુચિ છે. અર્થાત્-જે જીવને વિસ્તૃતરૂપથી પદાર્થપરિજ્ઞાન નથી તેને સંક્ષેપમાં રુચિ થયા કરે છે, એ અપેક્ષાથી એ સમ્યક્ત્વનું નામ સંક્ષેપરુચિ છે. આ સમ્યક્ત્વવાળા જીવ જીવાદિક પદાર્થોમાં વિસ્તારરૂપથી રુચિસંપન્ન નથી થતા; પણ સંક્ષેપરૂપથી જ તેને સમ-જીવે એમાં દૃઢ આસ્થાવાળા બની રહે છે (૯). ધર્માસ્તિકાયાદિક જે અમૂર્તિક પદાર્થ છે એમાં, અથવા શ્રુત એમજ ધર્માદિકમાં જીવની જેના દ્વારા રુચિ થાય છે તે ધર્મરુચિ છે (૧૦). યદ્યપિ સમ્યક્ત્વ આત્માનો નિજગુણ છે; પરંતુ આ દશ પ્રકારના સમ્યક્ત્વ કથનમાં તેનું જીવથી ભિન્નરૂપમાં જે કથન કર્યું છે તે એ વાતની પુષ્ટિ કરે છે કે ગુણ અને ગુણીમાં કથંચિત્ ભિન્નતા અને કથંચિત્ અભિન્નતા છે. દ્રવ્યાર્થિક નયની અપેક્ષાથી ગુણ અને ગુણી અભિન્ન છે, પર્યાય-ાર્થિક નયની વિવક્ષાથી એ બન્ને લક્ષણ સંખ્યા આદિની અપેક્ષાથી ભિન્નભિન્ન છે. આ દશ પ્રકારના સમ્યક્ત્વનું વર્ણન થયું ૧૦

### (૧) સમ્યક્ત્વસ્થિતિઃ ।

સાસ્વાદનસમ્યક્ત્વસ્ય સ્થિતિરેકસમયમાત્રં જઘન્યતઃ, ઉત્કર્ષતસ્તુ પઢાવ-  
લિકાઃ, ઔપશમિકસમ્યક્ત્વસ્ય સ્થિતિર્જઘન્યોત્કૃષ્ટા ચાન્તર્મુહર્તમ્ । વેદક-  
સમ્યક્ત્વસ્ય સ્થિતિર્જઘન્યોત્કૃષ્ટા ચેકસમયમાત્રમ્ । ક્ષાયોપશમિકસમ્યક્ત્વસ્ય જઘ-  
ન્યા સ્થિતિરેકસમયમાત્રમ્, ઉત્કૃષ્ટા તુ કિંચિદધિકપટ્પટ્ટિસાગરોપમા, ક્ષાયિક-  
સમ્યક્ત્વસ્ય સ્થિતિઃ સાદ્યપર્યવસિતકાલરૂપા ।

### (૨) સમ્યક્ત્વસ્ય પ્રાદુર્ભાવવ્યવસ્થા ॥

एकभवमाश्रित्यौपशमिकसारवादनसम्यक्त्वे जघन्यतः सकृदेव प्रादुर्भवतः ।  
उत्कृष्टतस्तु पञ्चवारम् । वेदकसम्यक्त्वं जघन्यत उत्कृष्टतश्चैकवारं प्रादुर्भवति ।

### (૧) સમ્યક્ત્વકી સ્થિતિ ।

સાસ્વાદન સમ્યક્ત્વકી સ્થિતિ જઘન્ય એક સમય માત્ર ઓર ઉત્કૃષ્ટ  
છદ્ ૬ આચલિકા પ્રમાણ છે, ઔપશમિક ઓર વેદક સમ્યક્ત્વકી સ્થિતિ  
જઘન્ય ઓર ઉત્કૃષ્ટ અન્નર્મુહર્તની છે । ક્ષાયોપશમિક સમ્યક્ત્વકી જઘન્ય  
એકસમયમાત્ર ઉત્કૃષ્ટ કુછ અધિક ૬૬ છાસઠ સાગર પ્રમાણ છે, ઓર  
ક્ષાયિક સમ્યક્ત્વકી સ્થિતિ સાદિ અનંત છે ।

### (૨) સમ્યક્ત્વકી ઉત્પત્તિકી વ્યવસ્થા—

एक भवकी अपेक्षा औपशमिक सम्यक्त्व और सास्वादन सम्य-  
क्त्व जघन्यसे एक बार ही उत्पन्न होते हैं और उत्कृष्टसे पांच बार ।  
वेदक सम्यक्त्व उत्कृष्टसे और जघन्य से एक ही बार उत्पन्न होता है ।

### (૧) સમ્યક્ત્વની સ્થિતિ

સાસ્વાદન સમ્યક્ત્વની સ્થિતિ જઘન્ય એક સમય માત્ર અને ઉત્કૃષ્ટ ૬  
આવલિકાપ્રમાણ છે. ઔપશમિક અને વેદક સમ્યક્ત્વની સ્થિતિ જઘન્ય અને  
ઉત્કૃષ્ટ અન્તર્મુહર્તની છે. ક્ષાયોપશમિક-સમ્યક્ત્વની જઘન્ય એકસમયમાત્ર,  
ઉત્કૃષ્ટ કાંઈ અધિક ૬૬ છાસઠ સાગર પ્રમાણ છે, અને ક્ષાયિક-સમ્યક્ત્વની  
સ્થિતિ સાદિ અનંત છે.

### (૨) સમ્યક્ત્વની ઉત્પત્તિની વ્યવસ્થા

એક ભવની અપેક્ષાએ ઔપશમિક સમ્યક્ત્વ અને સાસ્વાદન સમ્યક્ત્વ  
જઘન્યથી એક વાર જ ઉત્પન્ન થાય છે. અને ઉત્કૃષ્ટથી પાંચ વાર. વેદક સમ્ય-  
ક્ત્વ ઉત્કૃષ્ટથી અને જઘન્યથી એક જ વાર ઉત્પન્ન થાય છે. ક્ષાયોપશમિક  
સમ્યક્ત્વ જઘન્યથી એક વાર અને ઉત્કૃષ્ટથી અસંખ્યાતવાર ઉત્પન્ન થાય છે.



ક્ષાયોપશમિકં જઘન્યતઃ સકૃત્, ઉત્કૃષ્ટતસ્ત્વસંખ્યાતવારમ્ । ક્ષાયિકં તુ પ્રાદુર્ભૂતં સત્ પુનર્ન પ્રતિનિવર્તતે । પ્રાદુર્ભાવાનન્તરમવિચ્છેદેન સર્વદા તિષ્ઠતિ ।

### (૩) સમ્યક્ત્વસ્યાઽન્તરકાલઃ ।

ઔપશમિક-સાસ્વાદન-ક્ષાયોપશમિકસમ્યક્ત્વાનાં પ્રત્યેકમન્તરકાલો જઘન્યતોઽન્તર્મુહૂર્તમ્, ઉત્કૃષ્ટતસ્તુ દેશોનાર્દ્રપુદ્ગલપરાવર્તનકાલઃ । વેદકસ્યાઽન્તરં ન ભવતિ, તદનન્તરં નિયમતઃ ક્ષાયિકસમ્યક્ત્વોત્પત્તેઃ સંભવાત્ । ક્ષાયિકસમ્યક્ત્વં સાધનન્તં ચ, તસ્ય પુનર્નિવૃત્ત્યભાવાદન્તરં ન ભવતિ ।

ક્ષાયોપશમિક સમ્યક્ત્વ જઘન્યસે એક વાર ઓર ઉત્કૃષ્ટસે અસંખ્યાત વાર ઉત્પન્ન હોતા હૈ । ક્ષાયિક સમ્યક્ત્વ ઉત્પન્ન હોનેકે વાદ ફિર નિવૃત્ત નહીં હોતા । વહ તો ઉત્પન્ન હોનેકે વાદ અવિચ્છિન્નરૂપસે સર્વદારહતા હૈ ।

### (૩) સમ્યક્ત્વકા અન્તરકાલ

ઔપશમિક, સાસ્વાદન, ઓર ક્ષાયોપશમિક સમ્યક્ત્વમેં સે પ્રત્યેક કા વિરહકાલ જઘન્ય અંતર્મુહૂર્ત ઓર ઉત્કૃષ્ટ કુછ કમ અર્ધપુદ્ગલપરાવર્તનકાલ પ્રમાણ હૈ । વેદક-સમ્યક્ત્વમેં વિરહકાલ સંભવિત નહીં હૈ, ક્યોં કિ હસ સમ્યક્ત્વ કે અનન્તર નિયમ સે ક્ષાયિક સમ્યક્ત્વકા લાભ જીવકો હો જાતા હૈ । ક્ષાયિક-સમ્યક્ત્વ મેં અંતરકાલ નહીં હૈ, કારણ કિ હસકા સદ્ભાવ હોને પર જીવ કો મુક્તિકા લાભ હો જાતા હૈ, હસી લિયે યહ સમ્યક્ત્વ સાદિ ઓર અનન્ત હૈ । એક વાર સમકિત હો કર ફિર છૂટ જાને પર ફિર સે ડસકી પ્રાપ્તિ હોને મેં જિતના સમય લગતા હૈ ડસકા નામ વિરહ-કાલ હૈ । વેદક-સમ્યક્ત્વમેં વિરહ-કાલકા અભાવ

ક્ષાયિક સમ્યક્ત્વ ઉત્પન્ન થયા પછી ફરી નિવૃત્ત થતું નથી. તે તો ઉત્પન્ન થયા પછી અવિચ્છિન્નરૂપથી સર્વદા રહે છે.

### (૩) સમ્યક્ત્વનો અંતરકાલ

ઔપશમિક, સાસ્વાદન અને ક્ષાયોપશમિક સમ્યક્ત્વ, એ પ્રત્યેકના વિરહકાલ જઘન્ય અંતર્મુહૂર્ત અને ઉત્કૃષ્ટ કાંઈ ઓછું અર્ધપુદ્ગલપરાવર્તનકાળ પ્રમાણ છે. વેદક સમ્યક્ત્વમાં વિરહકાળ સંભવિત નથી, કારણ કે આ સમ્યક્ત્વની પછી નિયમથી ક્ષાયિક-સમ્યક્ત્વનો લાભ જીવને થઈ જાય છે. ક્ષાયિક સમ્યક્ત્વમાં અંતરકાલ નથી, કારણ કે એનો સદ્ભાવ થવાથી જીવને મુક્તિનો લાભ થઈ જાય છે, તેથી આ સમ્યક્ત્વ સાદિ અને અનન્ત છે. એક વાર સમ્યક્ત્વ થઈને પછી બ્યારે તે છુટી જાય છે ત્યારે ફરીથી તેની પ્રાપ્તિ થવામાં જોડો સમય લાગે છે તેનું નામ વિરહકાળ છે. વેદક-સમ્યક્ત્વમાં વિરહકાળનો અભાવ

### (૪) સમ્યક્ત્વસ્ય ફલમ્—

સમ્યક્ત્વે સતિ-અસદ્ગ્રહઃ=આસવચનવાધિતાર્થેષુ પક્ષપાતો ન ભવતિ । અસદ્ગ્રહં પ્રતિ મિથ્યાત્વોદયસ્ય કારણત્વાત્ સમ્યક્ત્વસ્ય મિથ્યાત્વક્ષયોપશમજન્યત્વેન સમ્યક્ત્વસદ્ભાવકાલે મિથ્યાત્વોદયાભાવાત્ ।

સમ્યક્ત્વે સતિ શ્રુતશ્રવણવાઙ્મત્સ્યા, શ્રુતચારિત્રધર્મરાગઃ, ચતુર્વિધતીર્થવૈયાવૃત્ત્ય-નિયમશ્ચ ભવતિ । એપામુત્તરોત્તરં પ્રતિ પૂર્વપૂર્વસ્ય હેતુત્વં વોદ્યમ્ ।

હૈ, ક્યોં કિ વેદક-સમ્યક્ત્વ હોને પર ઉસકે વાદ ફિર ક્ષાયિક-સમ્યક્ત્વ હોતા હૈ, વેદક-સમ્યક્ત્વ નહીં । વેદક-સમ્યક્ત્વકે છૂટ્તને પર યદિ વેદક-સમ્યક્ત્વ કી પ્રાપ્તિ ફિર સે હોતી તો વિરહકાલ વહાં સંભવિત હોતા । ઇસ પ્રકાર ક્ષાયિક-સમ્યક્ત્વકે હોને પર જીવ અપની સ્થિતિ કો પૂર્ણ કર મુક્તિ સ્થાનકા હી સ્વામી બન જાતા હૈ, અતઃ એક વાર ક્ષાયિક સમ્યક્ત્વકે હોને પર ફિર ઉસી જીવકો ક્ષાયિક-સમ્યક્ત્વકી પ્રાપ્તિ નહીં કરની પડતી । અતઃ યહાં પર બી વિરહકાલ સંભવિત નહીં ।

### (૪) સમ્યક્ત્વકા ફલ—

સમ્યક્ત્વકે હોતે હી જીવ કદાગ્રહસંપન્ન નહીં હોતા હૈ । ઉસકી દષ્ટિ-શ્રદ્ધા આસવચન સે અવાધિત પદાર્થોં મેં અનુરાગવાલી હોતી હૈ, ઇનસે ભિન્ન પદાર્થોં મેં નહીં । ક્યોંકિ કદાગ્રહ કા કારણ મિથ્યાત્વ કા ઉદય થતલાયા હૈ ઓર મિથ્યાત્વ કે ક્ષયોપશમાદિસે સમ્યક્ત્વ ઉત્પન્ન હોતા હૈ । સમ્યક્ત્વકે હોને પર મિથ્યાત્વકા અભાવ હો જાતા હૈ । કારણ કે અભાવમેં કાર્ય કા અભાવ સુતરાં સિદ્ધ હી હૈ । કદાગ્રહ કા કારણ

છે, કારણ કે વેદક-સમ્યક્ત્વ થયાં પછી ક્ષાયિક-સમ્યક્ત્વ થાય છે, વેદક-સમ્યક્ત્વ નહિ. વેદક-સમ્યક્ત્વના છૂટ્યા પછી જો વેદક-સમ્યક્ત્વની ક્ષીરથી પ્રાપ્તિ થતી હોત તો વિરહકાળ ત્યાં સંભવિત થાત. એ પ્રકારે ક્ષાયિક સમ્યક્ત્વ થયા પછી જીવ પોતાની સ્થિતિને પૂર્ણ કરીને મુક્તિસ્થાનનો સ્વામી બની જાય છે. તેથી એક વાર ક્ષાયિક-સમ્યક્ત્વ થતાં તે જ જીવને પછીથી ક્ષાયિક-સમ્યક્ત્વની પ્રાપ્તિ કરવી પડતી નથી, માટે આ કેકાણે પણ વિરહકાળ સંભવિત નથી.

### (૪) સમ્યક્ત્વનું ફલ

સમ્યક્ત્વ થવાથી જીવ કદાગ્રહસંપન્ન થતો નથી, એની દષ્ટિ-શ્રદ્ધા આપ્ત વચનથી અવાધિત પદાર્થોમાં જ અનુરાગવાળી થાય છે, એથી ભિન્ન પદાર્થોમાં નહિ. કેમ કે કદાગ્રહનું કારણ મિથ્યાત્વનો ઉદય બતાવ્યો છે, અને મિથ્યાત્વના ક્ષયોપશમાદિથી સમ્યક્ત્વ ઉત્પન્ન થાય છે. સમ્યક્ત્વના હોવાથી મિથ્યાત્વનો અભાવ થઈ જાય છે. કારણના અભાવમાં કાર્યનો અભાવ સ્વતઃ સિદ્ધ છે. કદાગ્રહનું

મિથ્યાત્વ હૈ । સમ્યક્ત્વી જીવકે ઇમ્કા અભાવ હૈ ।

સમ્યક્ત્વકે હોને પર શ્રુતશ્રવણની અભિલાષા, શ્રુતધર્મકે પ્રતિ અનુરાગ ઓર ચારિત્રધર્મકે પ્રતિ અનુરાગ, ંવં ચતુર્વિધ સંઘની વૈયાવૃત્તિ કરનેકા નિયમ જીવકે જાગૃત હોતા હૈ । ઇનમેં આગે ૨ કે પ્રતિ પૂર્વ ૨ કો કારણતા હૈ, અર્થાત્ શ્રુતધર્મકા અનુરાગ જીવકે તવ હી જાગૃત હો સકેગા જવ ડસકે અન્તરંગમેં શ્રુતશ્રવણની ઇચ્છા હોગી, શ્રુતશ્રવણેચ્છા કે વિના શ્રુતમેં અનુરાગ નહીં હો સકતાં, જવ સદ્ગુણોંમેં અનુરાગ હૈ તો યહ શ્રુતશ્રુતિરૂપ કાર્ય શ્રુતશ્રવણકે વિના નહીં હો સકતા, શ્રુતશ્રવણ મી વિના ઇચ્છા કે સંભવિત નહીં । શ્રુતધર્મકે અનુરાગકે પ્રતિ શ્રુતશ્રવણ કો વાઙ્છા કારણ હૈ । ચારિત્રધર્મકે પ્રતિ અનુરાગ મી જીવકો તવ હી હોગા જવ ડસકે અન્તરંગમેં શ્રુતધર્મકા અનુરાગ હોગા । શ્રુતાનુરાગકા અભિપ્રાય યહી હૈ કિ શાસ્ત્રપ્રતિપાદિત માર્ગ પર દૃઢ આસ્થા । ઇસ માર્ગ પર દૃઢ આસ્થાવાલા જીવ હી ચારિત્રધર્મકા સ્વયં આરાધન કરનેવાલા, અથવા ડસકે ધારક મુનિયોંકે પ્રતિ અનુરાગી બનતા હૈ, અનાસ્થાવાલા નહીં, અતઃ ચારિત્રધર્મકે અનુરાગ કા કારણ શ્રુતાનુરાગ હી હૈ । ચારિત્રધર્મમેં જવ તક અનુરાગ નહીં હોગા તવ તક યહ જીવ કિસી પ્રકાર મી ચતુર્વિધ સંઘ કો સેવા કરને કા નિયમકર્તા નહીં હો સકતા; અતઃ ડન

અરણ મિથ્યાત્વ છે. સમ્યક્ત્વી ઊવને એનો અભાવ છે

સમ્યક્ત્વના હોવાથી શ્રુતશ્રવણની અભિલાષા, શ્રુતધર્મ પ્રતિ અનુરાગ અને ચારિત્રધર્મ પ્રતિ અનુરાગ એમજ ચતુર્વિધ સંઘની વૈયાવૃત્તિ કરવાનો નિયમ ઊવને જાગૃત થાય છે. એમાં આગળ ૨ ના પ્રતિ પૂર્વ ૨ મા કારણતા છે. અર્થાત્ શ્રુતધર્મનો અનુરાગ ઊવને ત્યારે જ જાગૃત થાય છે, જ્યારે એના અંતરંગમાં શ્રુતશ્રવણની ઇચ્છા થાય છે. શ્રુતશ્રવણેચ્છા વિના શ્રુતમાં અનુરાગ થઈ જ શકતો નથી. જ્યારે સદ્ગુણોમાં અનુરાગ છે તો એ શ્રુતશ્રુતિરૂપ કાર્ય શ્રુતશ્રવણ વિના નથી થતું. શ્રુતશ્રવણ પણ વગર ઇચ્છાએ સંભવિત નથી. શ્રુતધર્મના અનુરાગની પ્રતિ શ્રુતશ્રવણની ઇચ્છા કારણ છે. ચારિત્રધર્મના પ્રતિ અનુરાગ પણ ઊવને ત્યારે જ થશે જ્યારે એના અંતરંગમાં શ્રુતધર્મનો અનુરાગ હોય. શ્રુતાનુરાગનો અભિપ્રાય એ છે કે શાસ્ત્રપ્રતિપાદિત માર્ગ પર દૃઢ આસ્થાવાળા ઊવ જ ચારિત્રધર્મનું સ્વયં આરાધન કરવાવાળા, અથવા એના ધારક મુનિયોની પ્રતિ અનુરાગી બને છે, અનાસ્થાવાળા નહિ, માટે ચારિત્રધર્મના અનુરાગનું કારણ શ્રુતાનુરાગ જ છે. ચારિત્રધર્મમાં જ્યાં સુધી અનુરાગ નહિ થાય ત્યાં સુધી એ ઊવ કોઈ પ્રકારે પણ ચતુર્વિધ સંઘની સેવા કરવાનો નિય-

નન્વમદગ્રહસ્ય મિથ્યાત્વોદયજન્યત્વેન સમ્યક્ત્વે સતિ તત્ક્ષયોપશમાદસ્તુ તદભાવઃ, કિંતુ શ્રુતશ્રવણેચ્છાદીનાં જ્ઞાનચારિત્રાંગરૂપત્વેન જ્ઞાનાવરણીયચારિત્રમોહનીયવીર્યાન્તરાયકર્મક્ષયોપશમજન્યત્વાત્ કથં સમ્યક્ત્વફલરૂપત્વં તેષામ્ ? इति चेत्,

કી સેવા આદિ કરનેરૂપ નિયમ કે પ્રતિ ચારિત્રધર્મકા અનુરાગ હી કારણ હોના હૈ ।

જઠ્ઠા--માના કિ અસદગ્રહ કે મિથ્યાત્વોદયજન્ય હોને સે મિથ્યાત્વ કે ક્ષયોપશમ સે ડસ અસદગ્રહકા અભાવ હો જાતા હૈ, પરંતુ શ્રુતશ્રવણેચ્છા વગેરહ જો જ્ઞાન ઓર ચારિત્રકે અંગરૂપ હૈં, ડન્હેં સમ્યક્ત્વ કા ફલ કૈસે માના જા સકતા હૈ ? કારણ કિ ડનકે રોધક જ્ઞાનાવરણીય, ચારિત્રમોહનીય ઓર વીર્યાન્તર કર્મ હૈં. ડનકે ક્ષયોપશમ સે ડનકા પ્રાદુર્ભાવ હોના હૈ, અતઃ શ્રુતશ્રવણેચ્છા વગેરહ કો સમ્યક્ત્વકા ફલ ન માનકર જ્ઞાનાવરણીય આદિ કર્મોકે ક્ષયોપશમકા હી ફલ માનના ચાહિયો.

વિશેષાર્થ--જઠ્ઠાકારકા અભિપ્રાય યહ હૈ કિ શ્રુતશ્રવણેચ્છા મિથ્યાત્વ કે ક્ષયોપશમાદિસે નહીં હોતી હૈ; કિન્તુ યહ શ્રુતજ્ઞાનાવરણીય કર્મ કે ક્ષયોપશમસે હી જીવ કો હોતી હૈ । શ્રુતજ્ઞાનાવરણીય કર્મ જ્ઞાનાવરણીય કર્મકા ઁક ભેદ હૈ । ચારિત્રધર્મકે પ્રતિ જીવકા અનુરાગ ભી ચારિત્રમોહનીય કર્મ કે ક્ષયોપશમાધીન હૈ, અતઃ ડસે ભી સમ્યક્ત્વ કા ફલ ન માન કર ચારિત્રમોહનીય કે ક્ષયોપશમ કા હી ફલ માનના

મકર્તા નથી થતો. માટે એની સેવા કરવારૂપ નિયમની પ્રતિ ચારિત્રધર્મનો અનુરાગ જ કારણ રૂપ થાય છે.

શંકા--માન્યુ કે અસદગ્રહ મિથ્યાત્વોદયજન્ય હોવાથી મિથ્યાત્વના ક્ષયોપશમથી એ અસદગ્રહનો અભાવ થઈ જાય છે. પરંતુ શ્રુતશ્રવણેચ્છા વિગેરે જે જ્ઞાન અને ચારિત્રના અંગરૂપ છે એને સમ્યક્ત્વનું ફળ કેવી રીતે માનવામાં આવે ? કારણ કે એના રોધક જ્ઞાનાવરણીય ચારિત્રમોહનીય અને વીર્યાન્તરાય કર્મ છે. એના ક્ષયોપશમથી એનો પ્રાદુર્ભાવ થાય છે માટે શ્રુતશ્રવણેચ્છા વિગેરેને સમ્યક્ત્વનું ફળ ન માનીને જ્ઞાનાવરણીય આદિ કર્મોના ક્ષયોપશમનું જ ફળ માનવું ભેદ છે.

વિશેષાર્થ--શંકાકારનો એ અભિપ્રાય છે કે--શ્રુતશ્રવણેચ્છા મિથ્યાત્વના ક્ષયોપશમાદિથી નથી થતી કિન્તુ તે શ્રુત જીવને જ્ઞાનાવરણીય કર્મના ક્ષયોપશમથી જ થાય છે. શ્રુતજ્ઞાનાવરણીય કર્મ જ્ઞાનાવરણીય કર્મનો એક ભેદ છે. ચારિત્રધર્મની પ્રતિ જીવનો અનુરાગ પણ ચારિત્રમોહનીય કર્મના ક્ષયોપશમાધીન છે. માટે એને સમ્યક્ત્વનું ફળ ન માનીને ચારિત્રમોહનીયના ક્ષયોપશમનું જ ફળ

અત્રોચ્યતે—મિથ્યાત્વક્ષયોપશમાવસરે જ્ઞાનાવરણીયાનન્તાનુવંધિકપાયરૂપ-  
ચારિત્રમોહનીયાદિકર્મણામપિ ક્ષયોપશમો ભવતીતિ કૃત્વા સમ્યક્ત્વે સતિ શ્રુતશ્રવ-  
ણેચ્છાદયો ભવન્તીત્યુચ્યતે । યથા કેવલજ્ઞાનાવરણક્ષયજન્યમપિ કેવલજ્ઞાનં ચારિ-  
ત્રમોહનીયાંશકપાયક્ષયે સત્યેવ ભવતીતિ । યથા વા મિથ્યાત્વક્ષયોપશમલભ્યમપિ  
સમ્યક્ત્વમનન્તાનુવંધિકપાયરૂપચારિત્રમોહનીયોદયે સતિ ન લભ્યતે । ઉક્તશ્ચ—

ઉપયુક્ત પ્રતીતિ હોતા હૈ । નિષ્કર્ષ યહી હૈ કિ શ્રુતશ્રવણેચ્છાદિકોં કો  
સમ્યગ્જ્ઞાન ઓર સમ્યક્ચારિત્રકા હી ફલ માનના ચાહિયે, સમ્ય-  
ક્ત્વ કા નહીં ।

સમાધાન—શઙ્કાકારકી શઙ્કા ટીક નહીં । કારણ કિ જિસ સમય  
મિથ્યાત્વકા ક્ષયોપશમ હોતા હૈ ઉસ સમય જ્ઞાનાવરણીય ઓર અનન્તા-  
નુવંધિકપાયરૂપ ચારિત્રમોહનીયાદિક કર્મોં કા ભી ક્ષયોપશમ હોતા  
હૈ । ઇસી ધ્યેય કો લેકર—‘સમ્યક્ત્વ કે હોને પર શ્રુતશ્રવણેચ્છાદિક હોતે  
હૈ’ એસા કહા ગયા હૈ । જૈસે-કેવલજ્ઞાન, કેવલજ્ઞાનાવરણકે ક્ષય સે  
ઉત્પન્ન હોતા હૈ, પરન્તુ જવ તક ચારિત્રમોહનીય કર્મ કે અંશ-ભેદ-  
સ્વરૂપ કપાયોં કા ક્ષય નહીં હોતા તવ તક કેવલજ્ઞાનકી ઉત્પત્તિ નહીં  
હોતી, અતઃ કેવલજ્ઞાન કી ઉત્પત્તિ ઇન્કે ક્ષય હોને પર હી હોતી હૈ ।  
ઇસી પ્રકાર સમ્યક્ત્વ ભી યદ્યપિ મિથ્યાત્વકે ક્ષયોપશમ સે હી હોતા હૈ,  
પરન્તુ જવ તક અનંતાનુવંધિકપાયરૂપ ચારિત્રમોહનીયકા ઉદય બના  
રહતા હૈ તવ તક યહ પ્રાપ્ત નહીં હો સકતા હૈ ।

માનવું ઉપયુક્ત પ્રતીતિ થાય છે. નિષ્કર્ષ એ છે કે શ્રુતશ્રવણેચ્છાદિકોને સમ્ય-  
ગ્જ્ઞાન અને સમ્યક્ચારિત્રનું જ ફળ માનવું જોઈએ, સમ્યક્ત્વનું નહિ.

સમાધાન—શંકાકારની શંકા ઠીક નહિ, કારણ કે જે વખતે મિથ્યાત્વનો  
ક્ષયોપશમ થાય છે તે વખતે જ્ઞાનાવરણીય અને અનંતાનુવંધિકપાયરૂપ ચારિત્ર  
મોહનીયાદિક કર્મોનો પણ ક્ષય થાય છે.

એ ધ્યેયને લઈને જ—‘સમ્યક્ત્વના થવાથી શ્રુતશ્રવણેચ્છાદિક થાય છે’—  
એવું કહેવામાં આવ્યું છે. જેવી રીતે કેવળજ્ઞાન કેવળ જ્ઞાનાવરણના ક્ષયથી ઉત્પન્ન  
થાય છે; પરન્તુ જ્યાં સુધી ચારિત્રમોહનીય કર્મના અંશ-ભેદ-સ્વરૂપ કપાયોનો ક્ષય  
નથી થતો ત્યાં સુધી કેવળજ્ઞાનની ઉત્પત્તિ નથી થતી, માટે કેવળજ્ઞાનની ઉત્પત્તિ  
એનો ક્ષય થવાથી જ થાય છે. એવી જ રીતે સમ્યક્ત્વ પણ યદ્યપિ મિથ્યાત્વના  
ક્ષયોપશમથી જ થાય છે, પરંતુ જ્યાં સુધી અનંતાનુવંધિકપાયરૂપ ચારિત્ર  
મોહનીયનો ઉદય બન્યો રહે છે ત્યાં સુધી તે પ્રાપ્ત થતું નથી.

વિશેષાર્થ—કારણ દો પ્રકારકે હુઆ કરતે હૈ—એક સંનિકટ-કારણ દૂસરા વ્યવહિત-કારણ, સંનિકટ-કારણ કો મુખ્ય કારણ ઔર વ્યવહિત કારણ કો ગૌણ કારણ ભી કહતે હૈ । પ્રકૃતમેં શ્રુતશ્રવણેચ્છાદિકોં કા મુખ્ય કારણ સમ્યગ્દર્શન હી હૈ, ક્યોં કિ વિના સમ્યગ્દર્શન કે इनका सद्भाव नहीं हो सकता, सम्यग्दर्शन के होने पर ही ये होते हैं, इसी लिये ये सम्यग्दर्शन के फलरूप से कहे गये हैं । “ एक कार्य के अनेक कारण भी होते हैं, परन्तु जो मुख्य होता है वही प्रधान माना जाता है । ” इस नीतिके अनुसार भले ही श्रुतश्रवणेच्छादिकों का कारण ज्ञानावरणीय आदि कर्मों का क्षयोपशम भी हो, परन्तु ये सब व्यवहित कारण हैं । दृष्टान्त के लिये—केवलज्ञानकी प्राप्ति का मुख्य कारण केवल ज्ञानावरणीय कर्म का क्षय ही है, परन्तु जब तक मोहनीय कर्म का क्षय नहीं होता, तब तक केवलज्ञानावरणीय कर्म का क्षय नहीं हो सकता ।

“ स्त्रीणमोहस्मणं अरहओ तओ कम्मंसा जुगवं खिज्जंति, तं जहा-नाणावरणिज्जं, दंसणावरणिज्जं, अंतराइयं ” ( સ્થા. સ્થા. ૩ ઉ. ૪ )

यही बात इस सूत्रमें प्रगट की गई है । इसी तरह सમ્યગ્દર્શન भी मिथ्यात्व के क्षयोपशम से होता है, परन्तु जब तक अनंतानुबंधी कषाय

વિશેષાર્થ—કારણ બે પ્રકારે થયા કરે છે—એક સંનિકટ-કારણ, બીજું વ્યવહિત-કારણ. સંનિકટ-કારણને મુખ્ય કારણ અને વ્યવહિત કારણને ગૌણ કારણ પણ કહે છે. પ્રકૃતમા શ્રુતશ્રવણેચ્છાદિકોનું મુખ્ય કારણ સમ્યગ્દર્શન છે, કારણ કે સમ્યગ્દર્શન વિના તેનો સદ્ભાવ નથી થતો. સમ્યગ્દર્શનના થવાથી તે થાય છે, તેથી તે સમ્યગ્દર્શનના ક્ષયપથી કહેવામાં આવે છે. “ એક કાર્યના અનેક કારણો પણ થાય છે પરંતુ જે મુખ્ય થાય છે તે જ પ્રધાન માનવામાં આવે છે ” આ નીતિ-અનુસાર ભલે શ્રુતશ્રવણેચ્છાદિકોનું કારણ જ્ઞાનાવરણીય આદિ કર્મોનો ક્ષયોપશમ પણ હોય, પરંતુ એ બધા વ્યવહિત કારણ છે. દૃષ્ટાન્તને માટે—કેવળજ્ઞાનની પ્રાપ્તિનું મુખ્ય કારણ કેવળજ્ઞાનાવરણીય કર્મનો ક્ષય જ છે, પરંતુ જ્યાં સુધી મોહનીયકર્મનો ક્ષય નથી થતો ત્યાં સુધી કેવળજ્ઞાનાવરણીય કર્મનો ક્ષય નથી થતો.

“ સ્ત્રીણમોહસ્સ ણં અરહઓ તઓ કમ્મંસા જુગવં સ્વિજ્જંતિ, તં જહા-નાણા-વરણિજ્જં, દંસણાવરણિજ્જં અંતરાઈયં ( સ્થા. સ્થા. ૩ ઉ ૪ )

આ વાત આ સૂત્રથી પ્રગટ કરી છે. એ પ્રકારે સમ્યગ્દર્શન પણ મિથ્યા-ત્વના ક્ષયોપશમથી થાય છે, પરંતુ જ્યાંસુધી અનંતાનુબંધી કષાયનો ક્ષયોપ-શમ નથી થતો ત્યાં સુધી મિથ્યાત્વનો ક્ષયોપશમ નથી થતો.



“ પદમિલ્લુયાણ ઉદયે નિયમા, સંજોયણા કસાયાણં ।

સમ્મદંસણલંભં, ભવસિદ્ધિયા વિ ન લહંતિ ” ॥ ૧ ॥

હાયા — “ પ્રાથમિકાનામુદયે નિયમાત્ સંયોજના કપાયાણામ્ ।

સમ્યગ્દર્શનલાભં, ભવસિદ્ધિકા અપિ ન લભન્તે ॥ ૧ ॥

નનુ વૈયાવૃત્ત્યનિયમસ્ય તપઃપ્રભેદત્વેન ચારિત્રાંશરૂપત્વાત્ સમ્યક્ત્વે સતિ  
ચાવશ્યંભાવાદવિરતસમ્યગ્દૃષ્ટિગુણસ્થાનં વિલુપ્યેત ? इति चेत्, न,—

કા ક્ષયોપશમ નહીં હોતા, તથા તક મિથ્યાત્વ કા ક્ષયોપશમ નહીં હો  
સકતા । હસી લિયે મિથ્યાત્વકે ક્ષયોપશમકે અવસર મેં અનંતાનુબંધી  
કષાયકા ક્ષયોપશમ અપેક્ષણીય હોતા હૈ । નિષ્કર્ષ-શ્રુતશ્રવણેચ્છાદિકોં  
કા અવ્યવહિત-સુખ્ય-કારણ સમ્યગ્દર્શન હી હૈ, અતઃ યે ઉસકે હી ફલ  
સ્વરૂપ સે યહાં પ્રકટ કિયે ગયે હૈ । કહા ભી હૈ—

“ પદમિલ્લુયાણ ઉદયે, નિયમા સંજોયણા કસાયાણં ।

સમ્મદંસણલંભં, ભવસિદ્ધિયા વિ ન લહંતિ ” ॥ ૧ ॥

શઙ્કા—વૈયાવૃત્ત્યનિયમ કો આપને સમ્યક્ત્વ કા ફલ કૈસે કહ  
દિયા ? કારણ કિ વહ તો અંતરંગ ચારિત્રકા એક ભેદ હૈ । યદિ હસ  
વૈયાવૃત્ત્યનિયમોં કા સમ્યક્ત્વ કે હોને પર અવશ્યંભાવ માના જાવે તો  
ફિર અવિરતસમ્યગ્દૃષ્ટિ નામકા ચતુર્થ ગુણસ્થાન હી નહીં બન સકતા,  
કારણ કિ હસ અવસ્થા મેં ભી આંશિક રૂપસે ચારિત્રકા સદ્ભાવ હસ  
માન્યતાસે સિદ્ધ હો જાતા હૈ ।

એથી મિથ્યાત્વના ક્ષયોપશમના અવસરમાં અનંતાનુબંધી કષાયનો ક્ષયો-  
પશમ અપેક્ષણીય થાય છે. નિષ્કર્ષ-શ્રુતશ્રવણેચ્છાદિકોનું અવ્યવહિત-સુખ્ય-કારણ  
સમ્યગ્દર્શન જ છે, માટે એ એના જ ફલસ્વરૂપથી અહીંયા પ્રગટ કરવામાં  
આવેલ છે કહ્યું પણ છે—

“ પદમિલ્લુયાણ ઉદયે, નિયમા સંજોયણા કસાયાણં ।

સમ્મદંસણલંભં, ભવસિદ્ધિયા વિ ન લહંતિ ” ॥ ૧ ॥

શંકા—વૈયાવૃત્ત્ય નિયમને આપે સમ્યક્ત્વનું ફળ કેવી રીતે કહ્યું, કારણ  
કે તે તો અંતરંગ ચારિત્રનો એક ભેદ છે. યદિ સમ્યક્ત્વ થવાથી એનો અવ-  
શ્યંભાવ માનવામાં આવે તો પછી અવિરતસમ્યગ્દૃષ્ટિ નામનું ચતુર્થ ગુણસ્થાન  
બની શકતું નથી, કારણ કે આ અવસ્થામાં પણ આંશિક રૂપથી ચારિત્રનો સદ્ભાવ  
આ માન્યતાથી સિદ્ધ થાય છે.

वैयावृत्यनियमरूपचारित्रस्याल्पतमत्वेन चारित्रतया तद्विवक्षाया अभावात् । यथा—संमूर्च्छनजानां संज्ञासामान्यसत्त्वेऽपि विशिष्टसंज्ञाया अभावादसंज्ञित्वमङ्गीकृतम् । विरतत्वं हि महाव्रतादिरूपानल्पचारित्रसद्भाव एव स्वीक्रियते । यथा—एकरूप्यकमात्रधनेन धनवानयमिति न व्यपदिश्यते, यथा वा नाप्येकया गवा गोमान्; यथा वा एकेनैव शुण्ठीग्रन्थिना ‘पंसारी’ ति—भाषापदव्यपदेश्यो वणिग् न भवतीति ।

शङ्काकार की शङ्का का खुलासा इस प्रकार है—चतुर्थगुणस्थानवर्ती जीवके चारित्रका सद्भाव नहीं माना गया है, कारण कि वह अविरत-दशासंपन्न है । उसके केवल एक सम्यग्दर्शनरूपी ज्योतिका प्रादुर्भाव है, चारित्र का नहीं । चारित्रका सद्भाव पंचमगुणस्थान से प्रारंभ होता है । अब यदि वैयावृत्यनियम को सम्यग्दर्शन का फल माना जावेगा तो सम्यग्दर्शन के होने पर इसका सद्भाव अवश्य मानना ही पड़ेगा । ऐसी दशा में चतुर्थगुणस्थानवर्ती जीवके भी आंशिकरूप से चारित्र का सद्भाव सिद्ध हो जाता है, तब वह अविरत न रह कर विरत ही सिद्ध हुआ ।

समाधान—वैयावृत्यनियम चारित्र का एक भेद है, परन्तु वह पूर्ण चारित्र नहीं है, आंशिक चारित्र ही है, और यह यहां पर बहुत ही अल्प दशामें है, इस लिये उसकी चारित्ररूप से यहां विवक्षा नहीं है । महाव्रतादिरूप विशिष्ट चारित्र ही चारित्ररूपसे विवक्षित होते हैं, वे यहां पर नहीं हैं; अतः सम्यग्दर्शनका अस्तित्व होने पर भी इस दशामें इस प्रकारका कोई भी चारित्र यहां पर नहीं है । इसी लिये वह अविरत

शङ्काकारनी शङ्कानो ખુલાસો આ પ્રકારે છે:—ચતુર્થગુણસ્થાનવર્તી જીવને ચારિત્રનો સદ્ભાવ માનવામાં નથી આવ્યો, કારણ કે તે અવિરતદશાસંપન્ન છે. તેને ફક્ત એક સમ્યગ્દર્શનરૂપી જ્યોતિનો પ્રાદુર્ભાવ છે, ચારિત્રનો નહિ. ચારિત્રનો સદ્ભાવ પંચમગુણસ્થાનથી પ્રારંભ થાય છે. હવે જો વैयाવૃત્યનિયમને સમ્યગ્દર્શનનું ફળ માનવામાં આવે તો સમ્યગ્દર્શનના થવાથી એનો સદ્ભાવ અવશ્ય માનવો પડે. આવી દશામાં ચતુર્થગુણસ્થાનવર્તી જીવને પણ આંશિકરૂપથી ચારિત્રનો સદ્ભાવ સિદ્ધ થાય છે, ત્યારે એ અવિરતિ ન રહીને વિરત જ સિદ્ધ થાય છે.

સમાધાન—વैयाવૃત્યનિયમ ચારિત્રનો એક ભેદ છે, પરન્તુ તે પૂર્ણ ચારિત્ર નથી, આંશિક ચારિત્ર છે, અને તે અહીંયા ઘણો જ અલ્પ દશામાં છે, એથી એના ચારિત્રરૂપથી આ ઠેકાણે વિવક્ષા નથી. મહાવ્રતાદિરૂપ વિશિષ્ટ ચારિત્ર જ ચારિત્રરૂપથી વિવક્ષિત થાય છે, તે આ ઠેકાણે નથી; માટે સમ્યગ્દર્શનનું અસ્તિત્વ હોવા છતાં પણ આ દશામાં આ પ્રકારનું કોઈ પણ ચારિત્ર આ ઠેકાણે નથી,

નનૂપશાન્તમોહાદીનાં સમ્યક્ત્વે સત્યપિ કૃતકૃત્યતયા શ્રુતશ્રવણેચ્છાદયો ન ભવન્તિ, તથા ચ કાર્યકારણભાવનિયામકાન્વયવ્યતિરેકવિરહાત્ તેષાં સમ્યક્ત્વ-સમ્યગ્દષ્ટિ કહલાતા હૈ । અલ્પતમ ચારિત્રકે સદ્ભાવસે યહ ચારિત્રરૂપસે વિવક્ષિત નહીં હો સકતા હૈ । જૈસે-સંમૂર્ચ્છજન્મસે ઉત્પન્ન હુએ જીવ અત્યન્ત સામાન્ય સંજ્ઞાકા સદ્ભાવ રહને પર મી વિશિષ્ટ સંજ્ઞાકે અભાવ હોને સે અસંજ્ઞી હી કહે જાતે હૈં । હાં, મહાવ્રતાદિકરૂપ વિશિષ્ટ ચારિત્ર યદિ કોઈ હોતા તો યહ વ્રતી કહલાતા । ક્યોં કિ-સમસ્ત મહાવ્રતરૂપી ચારિત્રકે સદ્ભાવ મેં હી વ્રતિત્વ સ્વીકાર કિયા જાતા હૈ । હસી વસ્તુ કો ટીકાકાર કહતે હૈં--

“વિરતત્વં હિ મહાવ્રતાદિરૂપાનલ્પચારિત્રસદ્ભાવ એવ સ્વીક્રિયતે” ઇતિ । ઠીક હૈ; જૈસે-માત્ર એક રૂપયા કે રહને પર કોઈ ધની નહીં માના જાતા હૈ ?, જૈસે એક હી ગાય કે અસ્તિત્વમેં કોઈ ગોપાલ નહીં કહા જાતા હૈ, ઓર જૈસે એક ગાંઠ સોંઠકે રખને સે કોઈ પંસારી નહીં હોતા હૈ, ડસી પ્રકાર હસ અલ્પતમ આંશિક ચારિત્ર કે અસ્તિત્વ સે મી સમ્યગ્દષ્ટિ ( અવિરતદશાસંપન્ન સમ્યગ્દષ્ટિ જીવ ) ચારિત્રી નહીં બન સકતા ।

શઙ્કા—ઉપશાન્તમોહવાલે જીવોં કે સમ્યક્ત્વકે હોને પર મી શ્રુત-શ્રવણેચ્છાદિક નહીં હોતે હૈં, કારણ કિ વે કૃતકૃત્ય હો ચુકે હૈં । હસ

તેથી આ અવિરતસમ્યગ્દષ્ટિ કહેવાય છે અલ્પતમ ચારિત્રના સદ્ભાવથી એ ચારિત્રરૂપથી વિવક્ષિત નથી થઈ શકતું. જેમ સંમૂર્ચ્છન જન્મથી ઉત્પન્ન થયેલ જીવ અત્યન્ત સામાન્ય સંજ્ઞાનો સદ્ભાવ હોવા છતાં પણ વિશિષ્ટ સંજ્ઞાનો અભાવ હોવાથી અસંજ્ઞી કહેવાય છે. હાં, મહાવ્રતાદિકરૂપ વિશિષ્ટ ચારિત્ર યદિ કોઈ હોત તો તે વ્રતી કહેવાત ? કારણ કે-સમસ્ત મહાવ્રતરૂપી ચારિત્રના સદ્ભાવમાં જ વ્રતિત્વ સ્વીકાર કરવામાં આવે છે, એ જ વસ્તુને ટીકાકાર કહે છે--

“વિરતત્વં હિ મહાવ્રતાદિરૂપાનલ્પચારિત્રસદ્ભાવ એવ સ્વીક્રિયતે” ઇતિ.

ઠીક પણ છે; જેમ ફક્ત એક રૂપિયાના રહેવાથી કોઈ ધનવાન નથી કહેવાતો, જેમ એક ગાય રહેવાથી કોઈ ગોપાલ નથી કહેવાતો, અને જેમ મુંઠની એક ગાંઠ રાખવાથી કોઈ ગાંધી નથી થતો, તે પ્રકારે આ અલ્પતમ આંશિક ચારિત્રના અસ્તિત્વથી પણ સમ્યગ્દષ્ટિ ( અવિરતદશાસંપન્ન સમ્યગ્દષ્ટિ જીવ ) ચારિત્રી બની શકતો નથી.

શઙ્કા—ઉપશાન્તમોહવાળા જીવોને સમ્યક્ત્વ હોવા છતાં પણ શ્રુતશ્રવણેચ્છાદિક નથી થતાં, કારણ કે તે કૃતકૃત્ય થયેલ છે, તેથી કાર્યકારણભાવનું નિયામક

ફલત્વં ન સંભવતીતિ ચેત્, મૈવમ્, શ્રુતશ્રવણેચ્છાદીનાં મોહોપશાન્તિફલકત્વેન ફલરૂપેણ તેષ્વપિ શ્રુતશ્રવણવાચ્છાદિસદ્ભાવાત્, યદ્વા-શ્રાવકાવસ્થાયાં યત્ સમ્યક્ત્વં તદાશ્રિત્ય શ્રુતશ્રવણેચ્છાદયો ભવન્તીતિ વિવક્ષ્યા તેષાં સમ્યક્ત્વફલત્વં સંભવત્યેવેતિ ।  
લિયે કાર્યકારણભાવકે નિયામક અન્વય ઔર વ્યતિરેકકા વિઘટન હોનેસે સમ્યક્ત્વ ઔર શ્રુતશ્રવણેચ્છાદિકોં મેં પરસ્પરમેં કાર્યકારણભાવ નહીં બન સકતા ।

સમાધાન—શ્રુતશ્રવણેચ્છાદિકોંકા મોહોપશાન્તિ ફલવાલે હોનેસે ફલરૂપસે વહાં પર સદ્ભાવ હૈં ।

વિશેષાર્થ—અમી પ્રતિવાદીને જો સમ્યગ્દર્શન ઔર શ્રુતશ્રવણેચ્છાદિકોંકા યહાં પર કાર્યકારણભાવ, અન્વય વ્યતિરેક કે ન ઘટનેસે નહીં સ્વીકાર કિયા થા ઉસકા સમાધાન કરતે હુઁ આચાર્ય મહારાજ કહતે હૈં કિ-હે શિષ્ય ! ઉપશાન્ત મોહવાલે જીવોંમેં મી શ્રુતશ્રવણેચ્છાદિકોંકા સદ્ભાવ હૈં । યદિ ઇનકા યહાં પર સદ્ભાવ ન માના જાવે તો ઇન જીવોંકી ઉપશાન્તતા હુઈ હૈં વહ ઘટિત નહીં હો સકતી । મોહકી ઉપશાન્તતા શ્રુતશ્રવણેચ્છાદિકોંકા ફલ હૈં, ઔર શ્રુતશ્રવણાદિક સમ્યગ્દર્શનકે ફલ સ્વરૂપ હૈં, ઇતાવતા વે નિષ્ફલ હોં યહ વાત નહીં; કારણ કિ ફલ મી તો સ્વયં ફલવાન્ હુઆ કરતે હૈં, અતઃ ઉપશાન્ત મોહવાલે જીવોંમેં વિદ્યમાન સમ્યગ્દર્શન સફલ હૈં; નિષ્ફલ નહીં, ઇસ લિયે સમ્યગ્દર્શન

અન્વય અને વ્યતિરેકનું વિઘટન હોવાથી સમ્યક્ત્વ અને શ્રુતશ્રવણેચ્છાદિકોંમાં પરસ્પરમાં કાર્યકારણભાવ બની શકતો નથી.

અમાધાન—શ્રુતશ્રવણેચ્છાદિકોંનો મોહોપશાન્તિ ઇળવાળા હોવાથી ઇળરૂપથી ત્યાં પણ સદ્ભાવ છે.

વિશેષાર્થ:—અત્યારે પ્રતિવાદીએ જે સમ્યગ્દર્શન અને શ્રુતશ્રવણેચ્છાદિકોંના આ ઠેકાણે કાર્યકારણ-ભાવ અન્વયવ્યતિરેકના નહિ ઘટવાથી સ્વીકાર કરેલ નથી, એનું અમાધાન કરતાં આચાર્ય મહારાજ કહે છે કે-ભાઈ ! ઉપશાન્તમોહવાળા જીવોંમાં પણ શ્રુતશ્રવણેચ્છાદિકોંનો સદ્ભાવ છે. જે તેનો ત્યાં સદ્ભાવ ન માનવામાં આવે તો આ જીવોંના મોહની જે ઉપશાન્તતા થઈ છે તે ઘટિત થતી નથી. મોહની ઉપશાન્તતા શ્રુતશ્રવણેચ્છાદિકોંનું ઇળ છે, અને શ્રુતશ્રવણાદિક સમ્યગ્દર્શનનું ઇળસ્વરૂપ છે, તેથી તે સમ્યગ્દર્શન નિષ્કળ થાય એવી કોઈ વાત નહિ, કારણ કે ઇળ પણ સ્વયં ઇળવાન થયા કરે છે, તેથી ઉપશાન્ત-મોહવાળા જીવોંમાં વિદ્યમાન સમ્યગ્દર્શન સફળ થાય છે, નિષ્કળ નહિ. આ માટે

ભાવતો વ્રતાક્ષીકરણમપિ સમ્યક્ત્વસ્ય ફલં ભવતિ, પરન્તુ સમ્યક્ત્વે સતિ કદાચિત્ તદ્ ભવતિ, કદાચિન્ન । યદ્યપિ ગ્રન્થિભેદાદેવ સમ્યક્ત્વમુદ્ભવતિ સમ્યક્ત્વ-  
વાંશ્ચ વ્રતાક્ષીકરણમેવોપાદેયતરં વિજાનાતિ; તથાપિ યાવત્યાં કર્મસ્થિતો સત્યાં  
સમ્યક્ત્વલાભો ભવતિ તાવત્યામેવ વ્રતાક્ષીકરણં ન સંભવતિ । વ્રતાક્ષીકરણં પ્રતિ  
ચારિત્રમોદનીયકર્મક્ષયોપશમસ્ય સમ્યક્ત્વપ્રાપ્તિકરણકર્મક્ષયોપશમાપેક્ષયાઽધિકત-  
રસ્ય કારણત્વાત્ ।

ઔર શ્રુતશ્રવણેચ્છાદિકોં મેં પરસ્પર કાર્યકારણ સંવંધ સુઘટિત હો જાતા  
હે । અથવા—સમ્યગ્દર્શન ઔર શ્રુતશ્રવણેચ્છાદિકોં મેં જો કાર્યકારણ  
ભાવ સંવંધ કહા ગયા હે વહ શ્રાવક-અવસ્થા મેં હોનેવાલે સમ્યગ્દર્શનકી  
અપેક્ષા સે સમજ્ઞ લેના ચાહિયે । શ્રાવક-અવસ્થા મેં વિદ્યમાન સમ્યક્ત્વ  
શ્રુતશ્રવણેચ્છાદિકોં કા જનક વહાં પર હોતા હે ।

સદ્ભાવનાપૂર્વક વ્રતાદિકોં કા અંગીકાર કરના મી સમ્યક્ત્વ કા ફલ  
હે । યહાં ટીકા મેં જો “અપિ” શબ્દ દિયા ગયા હે ડસકા અભિપ્રાય  
યહ હે કિ સમ્યક્ત્વ કે હોને પર વ્રતાદિકોં કા આચરણ કમી હોતા મી  
હે ઔર કમી નહીં મી હોતા । યહ નિયમ નહીં કિ સમ્યક્ત્વ કે હોને પર  
વ્રતાદિક અનુષ્ઠાનોં કા સદ્ભાવ જીવોં કે હોવે હી । યદ્યપિ રાગદ્વેષકી પ્રબલ  
ગ્રન્થિ કે ભેદ સે હી સમ્યક્ત્વ ઉત્પન્ન હોતા હે, ઔર સમ્યક્ત્વ જીવ વ્રતા-  
દિક અનુષ્ઠાનોં કા અંગીકાર કરના શ્રેયસ્કર માનતા હે, પરન્તુ જિતની  
કર્મ કી સ્થિતિ રહને પર સમ્યક્ત્વકા લાભ હોતા હે ડતની સ્થિતિ મેં વ્રત

સમ્યગ્દર્શન અને શ્રુતશ્રવણેચ્છાદિકોમાં પરસ્પર કાર્યકારણ સંબંધ સુઘટિત થઈ  
જાય છે. અથવા—સમ્યગ્દર્શન અને શ્રુતશ્રવણેચ્છાદિકોમાં જે કાર્યકારણભાવ  
સંબંધ કહેવામાં આવ્યો છે તે શ્રાવક-અવસ્થામાં જનવાવાળા સમ્યગ્દર્શનની  
અપેક્ષાથી સમજી લેવું જોઈએ. શ્રાવક-અવસ્થામાં વિદ્યમાન સમ્યક્ત્વ શ્રુતશ્રવ-  
ણેચ્છાદિકોનો ઉત્પાદક ત્યાં અવશ્ય થાય છે.

સદ્ભાવનાપૂર્વક વ્રતાદિકોનું અંગીકાર કરવું તે પણ સમ્યક્ત્વનું ફળ છે.  
અહીં આ ટીકામાં જે “અપિ” શબ્દ આવ્યો છે એનો અભિપ્રાય એ છે કે  
સમ્યક્ત્વના થવાથી વ્રતાદિકોનું આચરણ કોઈ વખત થાય પણ છે અને કોઈ  
વખત નથી પણ થતું. એ નિયમ નથી કે સમ્યક્ત્વના થવાથી વ્રતાદિક અનુ-  
ષ્ઠાનોનો સદ્ભાવ જીવોને થાય જ. કદાચ રાગદ્વેષની પ્રબલ ગ્રન્થિના લેદ્ધથી જ  
સમ્યક્ત્વ ઉત્પન્ન થાય છે, અને સમ્યક્ત્વ જીવ વ્રતાદિક અનુષ્ઠાનોનું અંગી-  
કાર કરવું શ્રેયસ્કર માને છે, પરન્તુ જેટલી કર્મની સ્થિતિ રહેવાથી સમ્યક્ત્વનો

अत्रेदमवगन्तव्यम्—ज्ञानावरणीयादिकर्मस्थितेहि द्विप्रभृतिनवपर्यन्तसंख्यारूपे पल्योपमपृथक्त्वे वेदनादपगते सति भावतो व्रताङ्गीकरणं भवति । तत्रैवं क्रमः—

मोहनीयादिकर्मणामुत्कृष्टा स्थितिः सागरोपमकोटीकोटीसप्तत्यादिका, तन्मध्यात् तावतीं स्थितिं यथाप्रवृत्तिकरणेनादौ क्षपयति, येन पल्योपमानामसंख्येयभागन्यूना एकसागरोपमकोटीकोटी शेषा स्थितिर्भवति । ततो ग्रन्थिभेदेन सम्यक्त्वं प्राप्नोति । तदनन्तरं शेषकर्मस्थितेः पल्योपमपृथक्त्वे क्षपिते सत्यणुव्रतं लभते, एवमेव भावतो व्रतप्राप्तिर्भवति, परन्तु दीर्घतरकर्मस्थितौ सत्यामपि द्रव्यतोऽणुव्रतं महाव्रतं च भवति । तथा चोक्तम्—

का अङ्गीकार करना संभवित नहीं होता । सम्यक्त्व की प्राप्ति होना एक बात है और चारित्र्यकी प्राप्ति होना इस से भिन्न बात है । सम्यक्त्व की उत्पत्तिका कारण मिथ्यात्व (दर्शनमोहनीयादिक) का क्षयोपशमादिक है और चारित्र्य की उत्पत्तिका कारण चारित्र्यमोहनीय कर्मका क्षयोपशम है । यह क्षयोपशम, सम्यक्त्वकी प्राप्ति के कारण की अपेक्षा व्रत अङ्गीकार करनेमें अधिकतर रूपसे कारण माना गया है । सम्यक्त्व की प्राप्ति होने पर भी यदि चारित्र्यमोहनीय कर्मका क्षयोपशम नहीं हुआ है तो चारित्र्य की प्राप्ति जीवको नहीं होती है । सम्यक्त्वके होते ही चारित्र्यमोहनीय कर्मका क्षयोपशम नहीं होता है, किन्तु सम्यक्त्वके होने पर जब ज्ञानावरणीयादिक कर्मों की स्थिति अपनी स्थितिमेंसे दो से लगा कर नौ पल्य तक और घट जाती है तब ही जीव भावकी अपेक्षा व्रतोंको अङ्गीकार करना है । इसका क्रम इस प्रकार है—मोहनीयादि कर्मोंकी जितनी

लाल थाय છે તેટલી સ્થિતિમાં વ્રતનું અંગીકાર કરવું સંભવિત નથી. સમ્યક્ત્વની પ્રાપ્તિ થવી એક વાત છે અને ચારિત્રની પ્રાપ્તિ થવી એનાથી ભિન્ન વાત છે. સમ્યક્ત્વની ઉત્પત્તિનું કારણ મિથ્યાત્વના (દર્શનમોહનીયાદિના) ક્ષયોપશમાદિક છે. ચારિત્રની ઉત્પત્તિનું કારણ ચારિત્રમોહનીય કર્મનો ક્ષયોપશમ છે. આ ક્ષયોપશમ, સમ્યક્ત્વની પ્રાપ્તિના કારણની અપેક્ષાએ વ્રત અંગીકાર કરવામાં અધિકતર રૂપથી કારણ માનવામાં આવે છે. સમ્યક્ત્વની પ્રાપ્તિ થાય તો પણ જો ચારિત્રમોહનીય કર્મનો ક્ષયોપશમ નહિ થયો હોય તો ચારિત્રની પ્રાપ્તિ હોવને નથી થતી. સમ્યક્ત્વના થવાથી જ ચારિત્રમોહનીય કર્મનો ક્ષયોપશમ નથી થતો; પણ સમ્યક્ત્વના થવાથી જ્યારે જ્ઞાનાવરણીયાદિક કર્મોની સ્થિતિ પોતપોતાની સ્થિતિમાંથી એથી માંડીને નવ પલ્ય સુધી ઘટી જાય છે ત્યારે હવ, ભાવની અપેક્ષા વ્રતોને અંગીકાર કરે છે. એનો ક્રમ આ પ્રકારે છે—



ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ હૈ વહ જવ અન્તઃકોટાકોટીસાગર પ્રમાણ રહ જાતી હૈ તવ હી જીવ સમ્યક્ત્વપ્રાપ્તિ કરને કે યોગ્ય હોતા હૈ । જૈસે મોહનીય કર્મ કી ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ (૭૦) સત્તર કોડાકોડી સાગર પ્રમાણ હૈ । ઇસ સ્થિતિકો યથાપ્રવૃત્તિકરણ પરિણામ સે જીવ ક્ષય કરતા હુઆ જવ પલ્યકે અસંખ્યાતવે ભાગ ન્યૂન-કમ એક કોડાકોડી સાગર કી કર લેતા હૈ તવ રાગ-દ્વેષરૂપી પ્રબલ ગ્રન્થિ કે ભેદસે સમ્યક્ત્વ કો પ્રાપ્ત કરતા હૈ । આયુકર્મકો છોડ કર ઇસી પ્રકાર શેષ કર્મો કી સ્થિતિ ભી અન્તઃકોટા-કોટીસાગરપ્રમાણ રહ જાની ચાહિયે । કર્મો કી ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ મેં ઔર જઘન્ય સ્થિતિમેં જીવ કે સમ્યક્ત્વ કી ઉત્પત્તિ નહીં હોતી, યહ નિયમ હૈ । સમ્યક્ત્વકી પ્રાપ્તિ આયુકર્મ કો છોડ કર શેષ મોહનીયાદિ ( ૭ ) સાત કર્મો કી અન્તઃ કોડાકોડ સાગરકી સ્થિતિ રહ જાને પર હી હોતી હૈ । ઇસકે વાદ અવશિષ્ટ કર્મસ્થિતિ જવ પલ્યોપમપૃથક્ત્વ પ્રમાણ ક્ષીણ હો જાતી હૈ ઁસ સમય જીવ ભાવકી અપેક્ષા અણુવ્રતરૂપ ચારિત્ર કી પ્રાપ્તિ કરતા હૈ । ઇસ કર્મસ્થિતિમેં ઇતના જવ પરિવર્તન હો જાતા હૈ તવ હી ભાવસે વ્રતપ્રાપ્તિ હુઆ કરતી હૈ । ઇસસે યહ સાબિત હોતા હૈ કિ ‘સમ્ય-ગ્દર્શનકે હોને પર જીવ ભાવસે વ્રત-ચારિત્ર પ્રાપ્ત કર હી લેતા હૈ’ યહ નિયમ નહીં હૈ । દીર્ઘતર-ઉત્કૃષ્ટ કર્મસ્થિતિમેં દ્રવ્ય સે હી ( ભાવશૂન્ય )

મોહનીયાદિ કર્મોની જેટલી જેટલી ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ છે તે જ્યારે અન્તઃકોટાકોટી સાગર પ્રમાણ રહી જાય છે ત્યારે જ જીવ સમ્યક્ત્વ પ્રાપ્ત કરવાને યોગ્ય થાય છે. જેમ મોહનીય કર્મની ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ (૭૦) સિત્તર કોડાકોડી સાગર પ્રમાણ છે. આ સ્થિતિનો યથાપ્રવૃત્તિકરણ પરિણામથી જીવ ક્ષય કરીને જ્યારે પલ્યના અસંખ્યાતમાં ભાગ ન્યૂન કોડાકોડી સાગરની કરે છે ત્યારે રાગદ્વેષરૂપી પ્રબલ ગ્રન્થિના ભેદથી સમ્યક્ત્વને પ્રાપ્ત કરે છે, આયુકર્મને છોડીને આ જ પ્રકારે શેષ કર્મોની સ્થિતિ પણ અન્તઃકોટાકોટીસાગરપ્રમાણ રહેવી જોઈએ. કર્મોની ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિમાં અને જઘન્ય સ્થિતિમાં સમ્યક્ત્વની ઉત્પત્તિ જીવને નથી થતી, એ નિયમ છે. સમ્યક્ત્વની પ્રાપ્તિ આયુકર્મને છોડીને શેષ મોહનીયાદિ (૭) સાત કર્મોની એક કોડાકોડ સાગરની સ્થિતિ રહેવાથી જ થાય છે. ત્યાર બાદ અવશિષ્ટ કર્મસ્થિતિ જ્યારે પલ્યોપમપૃથક્ત્વપ્રમાણ ક્ષીણ થઈ જાય છે તે વખતે જીવ, ભાવની અપેક્ષા આણુવ્રતરૂપ ચારિત્રની પ્રાપ્તિ કરે છે. આ પ્રકારે કર્મસ્થિતિમાં એટલું જ્યારે પરિવર્તન થાય છે ત્યારે ભાવથી વ્રતપ્રાપ્તિ થાય છે. એથી એ સાબિત થાય છે કે ‘સમ્યગ્દર્શનના થવાથી જીવ, ભાવથી વ્રત-ચારિત્ર પ્રાપ્ત કરી જ લે છે’ એ નિયમ નથી, દીર્ઘતર-ઉત્કૃષ્ટ કર્મસ્થિતિમાં દ્રવ્ય-

“ સન્વજિયાણં જમ્હા, સુત્તે ગેવિજ્જગેસુ ઉવવાઓ ।

ભણિઓ જિણેહિ સો ન ય, લિંગં મોત્તું જઓ ભણિયં ॥૧॥

જે દંસણવાવણ્ણા, લિંગગ્ગહણં કરિંતિ સામન્ને ।

તેસિં પિ ય ઉવવાઓ, ઉક્કોસો જાવ ગેવિજ્જા ” ॥ ૨ ॥ ઇતિ ।

છાયા—સર્વજીવાનાં યસ્માત્પ્રત્તે ગ્રૈવેયકેષૂપપાતઃ ।

ભણિતો જિનૈઃ સ ન ચ લિઙ્ગં મુક્ત્વા યતો ભણિતમ્ ॥ ૧ ॥

યે દર્શનવ્યાપન્ના, લિઙ્ગગ્રહણં કુર્વન્તિ શ્રામણ્યે ।

તેષામપિ ચોપપાત, ઉત્કર્ષો યાવદ્ ગ્રૈવેયકાન્ ॥ ૨ ॥ ઇતિ ।

અયમત્ર સારાંશઃ—યાવત્યાં કર્મસ્થિતૌ સત્યાં સમ્યક્ત્વં પ્રાપ્તં, તન્મધ્યાત્ પલ્યોપમપૃથક્ત્વરૂપે સ્થિતિભાગેऽનુક્રમેણ ત્રીર્યોલ્લાસાત્ ક્ષપિતે સતિ દેશવિરતો ભવતિ।

અણુવત-મહાવતરૂપ ચારિત્ર પ્રાપ્ત કરના છે, જિમ્મકા ફલ કર્મક્ષય નહીં છે । દ્રવ્યચારિત્રિકા અભિપ્રાય ભાવશૂન્ય ચારિત્ર છે । યહ ચારિત્ર સમ્ય-ગ્દર્શનમૂલક નહીં હોતા । ભાવચારિત્ર હી સમ્યગ્દર્શનમૂલક હોતા છે । કહા મી છે—

“ સન્વજિયાણં જમ્હા, સુત્તે ગેવિજ્જગેસુ ઉવવાઓ ।

ભણિઓ જિણેહિ સો ન ય, લિંગં મોત્તું જઓ ભણિયં ॥૧॥

જે દંસણવાવણ્ણા, લિંગગ્ગહણં કરિંતિ સામન્ને ।

તેસિં પિ ય ઉવવાઓ, ઉક્કોસો જાવ ગેવિજ્જા ॥ ૨ ॥ ” ઇતિ ।

इन सब पूर्वोक्त कथनका सारांश यही है कि-जितनी कर्मस्थितिके रह जाने पर सम्यक्त्वका लाभ हुआ है, उस स्थितिमें से कम से कम पल्योपमपृथक्त्व (दो से लगाकर ९ पल्य तक) प्रमाण स्थिति

થી જ (લાવશૂન્ય) આણુવત મહાવતરૂપ ચારિત્ર પ્રાપ્ત કરે છે, જેનું ફળ કર્મ-ક્ષય નથી. દ્રવ્યચારિત્રનો અભિપ્રાય લાવશૂન્ય ચારિત્ર છે. આ ચારિત્ર સમ્યગ્દર્શન-મૂલક નથી થતું. લાવચારિત્ર જ સમ્યગ્દર્શનમૂલક થાય છે. કહ્યું પણ છે:—

“ સન્વજિયાણં જમ્હા, સુત્તે ગેવિજ્જગેસુ ઉવવાઓ ।

ભણિઓ જિણેહિ સો ન ય, લિંગં મોત્તું જઓ ભણિયં ॥ ૧ ॥

જે દંસણવાવણ્ણા લિંગગ્ગહણં કરિંતિ સામન્ને ।

તેસિંપિ ય ઉવવાઓ ઉક્કોસો જાવ ગેવિજ્જા ” ॥ ૨ ॥ ઇતિ ।

આ બધા પૂર્વોક્ત કથનનો સાર એ છે કે જેટલી કર્મસ્થિતિના રહેવાથી સમ્યક્ત્વનો લાભ થાય છે, આ સ્થિતિમાંથી ઓછામાં ઓછું પલ્યોપમ પૃથક્ત્વ (જે થી માંડી ૯ પલ્ય સુધી) પ્રમાણ સ્થિતિ ત્રીર્યોલ્લાસથી ક્ષપિત થઈ જાય

દેશવિરતિપ્રાપ્ત્યનન્તરં સંખ્યાતેષુ સાગરોપમેષુ ક્ષપિતેષુ સર્વવિરતિચારિત્રં લભતે । તદનન્તરમપિ સંખ્યાતેષુ સાગરોપમેષુ ક્ષપિતેષુપશમશ્રેણિં પ્રતિપદ્યતે । તતોઽપિ સંખ્યાતેષુ સાગરોપમેષુ ક્ષપિતેષુ ક્ષપકશ્રેણિર્ભવતિ । તતસ્તસ્મિન્નેવ ભવે મોક્ષ इति । एवं यस्य सम्यक्त्वमप्रतिपतितं तस्यैव देवमनुष्यभवेषु संसरणं कुर्वतो देशविरत्यादि-  
લામ્ભો ભવતિ । સમ્યક્ત્વં હિ અનન્તાનન્દ-રૂપાનુપમ મોક્ષસુખસ્ય કારણમ્ । ઉક્તञ्च—

“ જાત્યન્ધસ્ય યથા પુંસશ્ચક્ષુર્લાભે શુભોદયે ।

સદ્ગર્ગનં તથૈવાસ્ય, સમ્યક્ત્વે સતિ જાયતે ॥ ૧ ॥

આનન્દો જાયતેઽત્યન્તં, સાત્ત્વિકોઽસ્ય મહાત્મનઃ ।

સદ્બોધ્યુપગમે યદ્વદ્, વ્યાધિતસ્ય સદૌપધમ્ ” ॥ ૨ ॥ इति ।

વીર્યોલ્લાસ સે ક્ષપિત હો જાવે તચ દેશવિરતિકા લાભ હોતા હૈ । દેશ-  
વિરતિ-શ્રાવકચારિત્ર-પંચમ ગુણસ્થાન કી પ્રાપ્તિકે અનન્તર સંખ્યાત  
સાગરપ્રમાણ સ્થિતિકે ક્ષય હોને પર સર્વવિરતિ-મુનિવ્રત-પષ્ટગુણ-  
સ્થાનકી પ્રાપ્તિ હોતી હૈ । ઇસકે વાદ સંખ્યાતસાગરપ્રમાણ સ્થિતિકે  
વ્યતીત હો જાનેપર ઉપશમશ્રેણિ ઔર ફિર સંખ્યાતસાગરપ્રમાણસ્થિતિ  
કે ક્ષય હોને પર ક્ષપકશ્રેણિકા લાભ હોતા હૈ । ફિર ડસી ભવસે ડસકો  
મુક્તિકી પ્રાપ્તિ હો જાતી હૈ । દેશવિરતિ આદિ ચારિત્રકા લાભ ડસી  
જીવકે હોતા હૈ કિ જિસને અપને સમ્યક્ત્વ કી વિરાધના દેવ મનુષ્યભવોંમેં  
રહતે હુઁ નહોં કી હૈ । અર્થાત્ દેવપર્યાયમેં યા મનુષ્યપર્યાયમેં જિસકે  
સમ્યક્ત્વકી વિરાધના હો ગઈ હૈ ડસ જીવકે દેશવિરતિ આદિ ચારિત્ર  
કા લાભ નહોં હોતા । યહ સમ્યક્ત્વ અનન્તઆનન્દરૂપ અનુપમ મોક્ષ-  
સુખકા કારણ હૈ । જૈસે કહા હૈ—

ત્યારે દેશવિરતિનો લાભ થાય છે. દેશવિરતિ-શ્રાવકચારિત્ર પાંચમા ગુણસ્થાનની  
પ્રાપ્તિની પછી સંખ્યાતસાગરપ્રમાણ સ્થિતિનો ક્ષય થવાથી સર્વવિરતિ-  
મુનિવ્રત-છઠ્ઠા ગુણસ્થાનની પ્રાપ્તિ થાય છે. ત્યાર બાદ સંખ્યાતસાગરપ્રમાણ  
સ્થિતિના વ્યતીત થઈ જવાથી ઉપશમશ્રેણિ, અને પછી સંખ્યાતસાગરપ્રમાણ  
સ્થિતિનો ક્ષય થવાથી ક્ષપકશ્રેણિનો લાભ થાય છે. વળી એ જ લવથી તેને  
મુક્તિની પ્રાપ્તિ થઈ જાય છે. દેશવિરતિ આદિ ચારિત્રનો લાભ તે જ જીવને  
થાય છે કે જેણે પોતાના સમ્યક્ત્વની વિરાધના દેવ મનુષ્ય ભવોમાં રહીને નથી  
કરી, અર્થાત્-દેવપર્યાયમાં અગર મનુષ્યપર્યાયમાં જેને સમ્યક્ત્વની વિરાધના  
થઈ ગઈ છે એ જીવને દેશવિરતિ આદિ ચારિત્રનો લાભ નથી થતો. તે સમ્યક્ત્વ  
અનંત આનંદરૂપ અનુપમ મોક્ષસુખનું કારણ છે. જેમ કહ્યું છે:—

અન્યચ્ચ—“દ્વારં મૂલં પ્રતિષ્ઠાનમાધારો ભાજનં નિધિઃ ।

દ્વિપટ્કસ્યાસ્ય ધર્મસ્ય, સમ્યક્ત્વં પરિકીર્તિતમ્” ॥ ૩ ॥

અપરં ચ—“સસ્યાનીવોપરક્ષેત્રે, નિક્ષિપ્તાનિ કદાચન ।

ન વ્રતાનિ પ્રરોહન્તિ, જીવે મિથ્યાત્વવાસિતે” ॥ ૪ ॥ ઇતિ ।

“જાત્યન્ધસ્ય યથા પુંસશ્ચક્ષુર્લાભે શુભોદયે ।

સદ્દર્શનં તથૈવાસ્ય, સમ્યક્ત્વે સતિ જાયતે ॥ ૧ ॥

આનન્દો જાયતેઽત્યન્તં, સાત્ત્વિકોઽસ્ય મહાત્મનઃ ।

સદ્વોદ્યુપગમે યદ્વદ્, -વ્યાધિતસ્ય સદૌષધમ્” ॥ ૨ ॥

અન્યચ્ચ—“દ્વારં ૧ મૂલં ૨ પ્રતિષ્ઠાન ૩ માધારો ૪ ભાજનં ૫ નિધિઃ ૬ ।

દ્વિપટ્કસ્યાન્ય ધર્મસ્ય, સમ્યક્ત્વં પરિકીર્તિતમ્” ॥ ૩ ॥

અપરશ્ચ—“સસ્યાનીવોપરક્ષેત્રે, નિક્ષિપ્તાનિ કદાચન ।

ન વ્રતાનિ પ્રરોહન્તિ જીવે મિથ્યાત્વવાસિતે” ॥ ૪ ॥

અર્થાત્—જન્માન્ધ પુરુષકો શુભ કર્મોંકે ઉદયસે નેત્રોંકે खुल जाने પર जिस प्रकार सदृशान ( समस्त वस्तुओंका दीखना ) होता है उसी प्रकार इस जीवको सम्यक्त्वका लाभ होने पर यथार्थ ज्ञान होता है । १।

जिस प्रकार रोगीको श्रेष्ठ औषधसे आरोग्यप्राप्ति होने पर आनन्द होता है उसी प्रकार सद्वोधि ( सम्यक्त्व ) के प्राप्त होने पर उस महा-त्मा पुरुष को सात्त्विक अत्यानन्द होता है ॥ २ ॥

“જાત્યન્ધસ્ય યથા પુંસશ્ચક્ષુર્લાભે શુભોદયે ।

સદ્દર્શનં તથૈવાસ્ય, સમ્યક્ત્વે સતિ જાયતે ॥ ૧ ॥

આનન્દો જાયતેઽત્યન્તં, સાત્ત્વિકોઽસ્ય મહાત્મનઃ ।

સદ્વોદ્યુપગમે યદ્વદ્, વ્યાધિતસ્ય સદૌષધમ્” ॥ ૨ ॥

અન્યચ્ચ—“દ્વારં ૧ મૂલં ૨ પ્રતિષ્ઠાન ૩, -માધારો ૪ ભાજનં ૫ નિધિઃ ૬

દ્વિપટ્કસ્યાસ્ય ધર્મસ્ય, સમ્યક્ત્વં પરીકીર્તિતમ્” ॥ ૩ ॥

અપરં ચ—“સસ્યાનીવોપરક્ષેત્રે, નિક્ષિપ્તાનિ કદાચન ।

ન વ્રતાનિ પ્રરોહન્તિ, જીવે મિથ્યાત્વવાસિતે” ॥ ૪ ॥

અર્થાત્—જન્માંધ પુરુષને શુભ કર્મના ઉદયથી નેત્રોના खुलવાથી જે પ્રકારે सदृशान ( दरेक वस्तुओंनुं देखवुं ) થાય છે, તે પ્રકારે આ જીવને સમ્યક્ત્વનો લાભ થવાથી યથાર્થ જ્ઞાન થાય છે. (૧)

જે પ્રકારે રોગીને શ્રેષ્ઠ ઔષધિથી આરોગ્યપ્રાપ્તિ થવાથી આનંદ થાય છે તે પ્રકારે सद्वोधि ( सम्यक्त्व ) ની પ્રાપ્તિ થવાથી તે મહાત્મા પુરુષને સાત્ત્વિક અત્યાનન્દ થાય છે. (૨)

નનુ ચદુક્તં સમ્યક્ત્વે સતિ કદાચિદ્ વ્રતાઙ્ગીકરણં નાપિ ભવતીતિ, તત્ કથં સંભવતિ ? ઉચ્ચતે—

ચદા સમ્યક્ત્વલાભાનન્તરં નવપલ્યોપમાધિકસ્થિતિકો દેવેષૂત્પદ્યતે તદા તસ્યામ-  
વસ્થાયાં ચાવતીં સ્થિતિં ક્ષપયતિ તાવતીમન્યાં વધ્નાતિ, તતો દેશોનસાગરોપમકોટી-  
કોટીરૂપાયા અધિકૃતકર્મસ્થિતેઃ પલ્યોપમપૃથક્ત્વસ્યાપગમો ન ભવતીતિ—અતો દેવર્મ-  
વે દેશવિરતિલાભો ન સંભવતિ, તસ્માત્ સમ્યક્ત્વે સત્યપિ વ્રતાનઙ્ગીકરણં સિદ્ધમ્ ।

ઔર મી—યહ સમ્યક્ત્વ ચારહ પ્રકારકે આવક ધર્મકા દ્રાર હૈ ૧, મૂલ હૈ ૨, પ્રતિષ્ઠાન ( આલમ્બન ) હૈ ૩, આધાર હૈ ૪, ભાજન—પાત્ર હૈ ૫, ઔર નિધિરૂપ હૈ ૬ ॥ ૩ ॥

ફિર મી—જિસ પ્રકાર ઝપર ક્ષેત્રમ્લે વોયે હુઅ બીજ નહીં ઝગતે હૈં  
ઉસી પ્રકાર મિથ્યાત્વવાસિત જીવમ્લે વ્રતોંકા ઉદય નહીં હોતા ॥૪॥

શઙ્કા—સમ્યક્ત્વ કે હોને પર કદાચિન્ વ્રતકા લાભ નહીં મી હોતા  
હૈ, યહ વાત કૈસે સંભવ હોતી હૈ ? ।

સમાધાન—સમ્યક્ત્વકે હોને પર મી વ્રતકા લાભ નહીં હોતા, યહ વાત  
ઁક તો ઝપર કથિત પ્રકારસે પ્રકટ કી ગઈ હૈ, ઔર દૂસરા પ્રકાર યહ મી હૈ—  
જિસ જીવકો સમ્યક્ત્વકા લાભ હુઆ હૈ વહ અપની આયુકે અન્તમ્લે  
નો પલ્યસે અધિક સ્થિતિકા બંધ કર દેવપર્યાય મ્લે ઉત્પન્ન હુઆ ઉસ  
સમય વહ ઉસ પર્યાય મ્લે સે જિતની મી સ્થિતિકા ક્ષય કરતા હૈ ઉતની  
ઔર દૂસરી સ્થિતિકા બંધ મી કરતા રહતા હૈ । સમ્યક્ત્વકે ઉત્પાદનકે

કરી—આ સમ્યક્ત્વ બાર પ્રકારના શ્રાવક ધર્મનુ દ્રાર છે ૧, મૂલ છે ૨, પ્રતિ-  
ષ્ઠાન (આલંબન) છે ૩, આધાર છે ૪, ભાજન—પાત્ર છે ૫ અને નિધિ છે ૬. (૩)

વળી—જે પ્રકારે ઊપર ક્ષેત્રમાં વાવેલા બીજ ઝગતા નથી તે પ્રકારે મિથ્યા-  
ત્વવાસિત જીવમાં વ્રતનો ઉદય થતો નથી. (૪)

શંકા—સમ્યક્ત્વના થવાથી વ્રતનો લાભ કોઈ વખત નહીં પણ થાય, આ વાત  
કેમ સંભવે છે ?

સમાધાન—સમ્યક્ત્વના થવાથી પણ વ્રતનો લાભ નથી થતો, એ વાત એક તો  
ઊપર કથિત પ્રકારથી પ્રગટ કરી છે, અને બીજો પ્રકાર એ પણ છે—જે જીવને સમ્યક્ત્વનો  
લાભ થયો છે તે પોતાની આયુના અંતમાં નવ પદ્યથી અધિક સ્થિતિનો બંધ કરીને  
દેવપર્યાયમાં ઉત્પન્ન થયો, તે વખત તે પર્યાયમાં જેટલી સ્થિતિનો ક્ષય કરે છે તેટલી  
બીજી સ્થિતિનો તે બંધ પણ કરે છે. એ પ્રકારે સમ્યક્ત્વના ઉત્પાદનના સમયની

यस्य सम्यक्त्वान्नो व्रतप्राप्तिर्न भवति, स तु अव्रती सम्यग्दृष्टिः श्रावको निगद्यते ।

किंच—सम्यक्त्वाभावे सति मोक्षो न लभ्यते । मिथ्यादृष्टिर्हि कुशास्त्रप्रति-  
बोधितां संयमनियमादिरूपां निवृत्तिमाचरन्नपि, स्वजनधनभोगान् परित्यजन्नपि,  
शीतोष्णक्षुत्पिपासादिभिर्दुःखस्य परां काष्ठामुपगच्छन्नपि सम्यक्त्वरहितत्वेन  
मोक्षसिद्धये न प्रभवति । सम्यक्त्वाभावे सति कर्मक्षयो न भवति । सम्यक्त्ववतामेव  
ज्ञानतपश्चारित्राण्यपि सफल्यभवन्ति । सम्यक्त्वे सत्येव चाणुव्रतगुणव्रतशिक्षाव्रतानि  
भवितुमर्हन्ति, तस्मात् सम्यक्त्वं मोक्षस्य बीजमिति बोध्यम् ।

समय की कुछ कम कोटाकोटीसागरोपम स्थितिमेंसे पल्योपम-  
पृथक्त्वरूप स्थितिका अपगम अभाव नहीं होनेसे देवपर्यायमें देशविरति  
का लाभ संभवित नहीं होता ।

जिम सम्यक्त्वीको व्रतप्राप्ति नहीं होती है वह सम्यग्दृष्टि श्रावक  
कहलाता है । इसको कभी न कभी (अर्धपुद्गलपरावर्तनकालके बाद )  
मुक्तिका लाभ अवश्य हो जाता है, परन्तु जिसके मूलमें सम्यक्त्व ही  
नहीं है उसको मुक्तिपद की प्राप्ति हो नहीं सकती । मिथ्यादृष्टि जीव  
(द्रव्यलिङ्गी मुनि जैसा ) खोटे २ शास्त्रों के द्वारा प्रतिपादित संयम  
नियमादिरूप चारित्रिका पालन करनेपर भी स्वजन धन एवं पांच इन्द्रियों  
के विषयों का परित्यागी होने पर भी, और अनेक प्रकारसे शीत उष्ण,  
भूख और प्यास आदि परीषद्जन्य कष्टों का कठोर से कठोर सामना  
करते हुए भी सम्यक्त्व से रहित होनेके कारण ही मोक्षरूपी सिद्धि  
का भागी नहीं माना गया है । यह तो अटल सिद्धान्त है कि-सम्य-

कांछ ओछी कोटाकोटीसागरोपम स्थितिमांथी पल्योपमपृथक्त्वरूप स्थितिना  
अपगम-अभाव नहि थवार्थी देवपर्यायमां देशविरतिना लाभ संभवित थतो नथी.

जे सम्यक्त्वाने व्रतप्राप्ति नथी थती ते अविरतसम्यग्दृष्टि श्रावक  
कहेवाय छे. जेने कोछ वणत (अर्धपुद्गलपरावर्तन कालनी पछी ) मुक्तिना  
लाभ अवश्य थाय छे. પણ जेना भूणमां सम्यक्त्व नथी तेने मुक्तिपदनी प्राप्ति  
थती नथी. मिथ्यादृष्टि लव (द्रव्यलिङ्गी मुनि जेवा ) जोटा जोटा शास्त्रोद्वारा  
प्रतिपादित संयमनियमादिरूप चारित्रनुं पालन करवाथी स्वजन धन अने पंचे-  
न्द्रियोना विषयोना परित्यागी होवा छतां પણ, अने अनेक प्रकारथी शीत,  
उष्ण, भूण अने प्यास आदि परिषद्जन्य कष्टोना कठोरमां कठोर सामना करवा  
छतां પણ सम्यक्त्वथी रहित होवाना कारणे मोक्षरूपी सिद्धिना लागी मानवामां  
आवतो नथी. जे तो अटल सिद्धांत छे કે:—सम्यक्त्वप्राप्ति विना कर्म क्षय



નન્વાત્મપરિણામરૂપં સમ્યક્ત્વં કથં વિજ્ઞેયં ભવેદિતિ ચેત્, ઉચ્યતે—સમ્યક્ત્વ-  
કાર્યરૂપૈઃ શમસંવેગનિર્વેદાનુકમ્પાસ્તિક્યૈઃ સાધુસામાચારીપ્રવૃત્ત્યાદિરૂપૈઃ સામાયિક-  
પોષધપ્રતિક્રમણત્યાગપ્રત્યાખ્યાનાદિશ્રાવકાચારરૂપૈશ્ચ બાહ્યપ્રશસ્તવ્યાપારૈરેતદવગન્તું  
શક્યતે । તત્ર—

ક્ત્વપ્રાપ્તિકે વિના કર્મક્ષય હોતા હી નહીં હૈ । સમ્યક્ત્વકે વિના જ્ઞાન  
ઔર ચારિત્ર નિષ્ફલ હૈ । ઇનકી સફલતા કા મૂલ કારણ યદિ કોઈ હૈ  
તો વહ એક સમ્યક્ત્વ હી હૈ । સમ્યક્ત્વી જીવ કે હી જ્ઞાન તપ ચારિત્ર  
સફલ હોતે હૈ, અણુવ્રત, ગુણવ્રત એવં શિક્ષાવ્રત—રૂપ શ્રાવકકા દેશ  
ચારિત્ર હી સમ્યક્ત્વ કે સદ્ભાવમેં હી સફલ માના ગયા હૈ, ઇસ લિયે  
સમ્યક્ત્વ હી મોક્ષકા કારણ હૈ ।

શઙ્કા—સમ્યક્ત્વ તો આત્માકા એક પરિણામ હૈ, ડસકા અસ્તિત્વ  
કૈસે જાના સકતા હૈ ?

શઙ્કાકારકા અભિપ્રાય યહાં ઇસ પ્રકારકા હૈ કિ જબ સમ્યક્ત્વ  
આત્માકા એક પરિણામ હૈ તો વહ હી અમૂર્ત્ત હી હોગા । અર્થાત્—જિસ  
પ્રકાર આત્મા અમૂર્ત્ત હૈ ડસી પ્રકાર વહ સમ્યક્ત્વ હી અમૂર્ત્ત હોગા, ફિર  
ડસકે અસ્તિત્વકા બોધ કૈસે હોતા હૈ ?

ઇસ શઙ્કાકા સમાધાન કરતે હુએ આચાર્ય મહારાજ કહતે હૈ કિ—  
બાત ઠીક હૈ; પરન્તુ ડસકે કાર્યો સે ડસકે અસ્તિત્વ કા ભાન હોતા હૈ ।  
શમ, સંવેગ, નિર્વેદ, અનુકમ્પા, આસ્તિક્ય, સાધુઓંકી સમાચારીરૂપ  
પ્રવૃત્તિ આદિ, એવં સામાયિક, પોષધ, પ્રતિક્રમણ, ત્યાગ, પ્રત્યાખ્યાન

થતાં નથી, સમ્યક્ત્વ વિના જ્ઞાન અને ચારિત્ર નિષ્ફળ છે, એની સફળતાનું મૂળ  
કારણ જો કોઈ હોય તો તે એક સમ્યક્ત્વ જ છે. સમ્યક્ત્વી જીવને જ જ્ઞાન તપ  
ચારિત્ર સફળ થાય છે. અણુવ્રત, ગુણવ્રત અને શિક્ષાવ્રતરૂપ શ્રાવકનું દેશચારિત્ર  
પણ સમ્યક્ત્વના સદ્ભાવમાં જ સફળ મનાય છે, તેથી સમ્યક્ત્વ જ મોક્ષનું કારણ છે.

શંકા—સમ્યક્ત્વ તો આત્માનું એક પરિણામ છે, તેનું અસ્તિત્વ કેવી  
રીતે જાણી શકાય ? શંકાકારનો અભિપ્રાય આ ઠેકાણે આ પ્રકારનો છે કે જ્યારે  
સમ્યક્ત્વ આત્માનું એક પરિણામ છે તો તે પણ અમૂર્ત્ત થશે. અર્થાત્—જે પ્રકારે  
આત્મા અમૂર્ત્ત છે તે પ્રકારે તે સમ્યક્ત્વ પણ અમૂર્ત્ત થશે, પછી તેના અસ્તિત્વનો  
બોધ કેવી રીતે થાય ? આ શંકાનું સમાધાન કરતાં આચાર્ય મહારાજ કહે છે  
કે—વાત ઠીક છે; પરંતુ તેના કાર્યોથી તેના અસ્તિત્વનું ભાન થાય છે. શમ, સંવેગ  
નિર્વેદ, અનુકમ્પા, આસ્તિક્ય, સાધુઓની સમાચારીરૂપ પ્રવૃત્તિ આદિ, અને સા-

(૧) શમરૂપેણ સમ્યક્ત્વપરિણામેન સર્વસ્મિન્નપિ કાલે પ્રતિકૂલકારિણેઽપિ ન ક્રુધ્યતિ ।

(૨) સંવેગાશ્ચ્યેન તેન 'સકલમહીમળ્ડલેશ્વરસ્ય દેવેન્દ્રસ્ય ચ સુખં પરમાર્થતો દુઃખમેવ, કર્મજન્યત્વાત્ સાવસાનત્વાદસ્વાભાવિકત્વાચ્चेति मन्यमानो मोक्षादन्यत् किञ्चिन्न वाञ्छति, मोक्षो हि स्वाभाविकात्मपरिणामरूपः कर्माजन्यः पर्यवसानरहितो निरतिशयानन्दरूपश्चास्ति ।

આદિ જો બાહર કે પ્રગસ્ટ વ્યાપાર હૈં યે હી ઉસકે કાર્ય હૈં । હનસે હી ઉસકે અસ્તિત્વકા બોધ હોતા હૈ ।

(૧) શમ--શમરૂપ સમ્યક્ત્વકે પરિણામવાળા જીવ કિસી ખી સમય અપને સે પ્રતિકૂલ આચરણ કરનેવાલોં પર ખી ક્રોધ નહીં કરતા હૈ, અર્થાત્-કષાયોં કા શમનરૂપ યહ પરિણામ હૈ, અથવા કષાયોં કા શમન હી શમ હૈ ।

(૨) સંવેગ-સંસારાદ્ભીરુતા સંવેગः--સંસારસે ભયભીત હોના હી સંવેગ હૈ । ઇસ પરિણામવાળા જીવ ચક્રવર્તી ઑર ઇન્દ્ર કે ખી વૈષયિક સુખોં કો અપની દૃષ્ટિસે દુઃખરૂપ હી માનતા હૈ । કારણ કિ વહ ઉનકા સુખ, કર્મ-( સાતાવેદનીય ) કે ઉદયાધીન હોને સે સાન્ત-નાશવાન હૈ, ંવં યહ આત્મિક સ્વભાવ સે પ્રતિકૂલ હૈ, ઑર મોક્ષ તો ઇસસે વિપરીત સ્વભાવવાળા હૈ, અતઃ ઉસકે અનિરિક્ત ઑર કોઈ ખી સાંસારિક પદાર્થ ઇસકી દૃષ્ટિ કા મોહક નહીં બન સકતા, ઇસલિય મોક્ષ કે અતિરિક્ત ઑર કિસી ખી પદાર્થ કી પ્રાપ્તિકી વાંછા ઇસકે નહીં રહતી । 'મોક્ષ ઇસસે વિપ-

માયિક પોષધ, પ્રતિક્રમણ, ત્યાગ, પ્રત્યાખ્યાન આદિ જે ણાહ્ય પ્રગસ્ટ વ્યાપાર છે તે જ તેના કાર્યો છે, તેનાથી જ તેના અસ્તિત્વનો ખોધ થાય છે.

(૧) શમ--શમરૂપ સમ્યક્ત્વના પરિણામવાળો જીવ કોઈ વખત પોતાથી પ્રતિકૂળ આચરણ કરવાવાળા ઉપર પણ ક્રોધ કરતો નથી. અર્થાત્ કષાયોના શમનરૂપ આ પરિણામ છે, અથવા કષાયોનો શમન જ શમ છે.

(૨) સંવેગ--'સંસારાદ્ભીરુતા સંવેગઃ' સંસારથી ભયભીત થવું તે સંવેગ છે. આ પરિણામવાળા જીવ ચક્રવર્તી અને ઇન્દ્રોના વૈષયિક સુખોને પણ પોતાની દૃષ્ટિથી દુઃખરૂપ જ માને છે. કારણ કે તે એના સુખ, કર્મ (સાતાવેદનીય)ના ઉદયાધીન હોવાથી સાંત-નાશવાન છે, એ આત્મિકસ્વભાવથી જ પ્રતિકૂળ છે, અને મોક્ષ તો એનાથી વિપરીત સ્વભાવવાળો છે. એથી એનાથી અતિરિક્ત બીજો કોઈ પણ સાંસારિક પદાર્થ એની દૃષ્ટિનો મોહક નથી બની શકતો, તેથી મોક્ષના અતિરિક્ત કોઈ પણ પદાર્થની પ્રાપ્તિની વાંછના એને રહેતી નથી. 'મોક્ષ એથી

(૩) નિર્વેદાણ્યેન સમ્યક્ત્વપરિણામેન જીવો મન્યતે—‘નારકતિર્યઙ્મનુષ્યદેવ-ભવેષુ સર્વેષ્વેવ દુઃસ્વમસ્તિ, અતઃ સર્વમેવ જગન્નિઃસાર’-મિતિ । અપિ ચ મમત્વવિપ-વેગરહિતો ભવતિ ।

(૪) પ્રાણિવર્ગે સમન્તાદવલોક્યાનુકમ્પાણ્યેન સમ્યક્ત્વપરિણામેન—‘ઇમે સંસારચક્રપરિભ્રાન્તાઃ શારીરૈર્માનસૈશ્વ વિવિધદુઃસ્વૈઃ પરાભૂતાઃ સન્તી’-તિ મત્વા સ્વા-ત્મૌપમ્યેન તેષાં દુઃસ્વાન્યનુભૂય સ્વકીયપરકીયભાવાઽભાવપૂર્વકમભયદાનેન, પ્રાણિનાં રીત સ્વભાવવાળા હૈ’ इसका तात्पर्य यही है कि वह कर्म के उदय के आधीन नहीं हैं, अपितु आत्मा का निजस्वभाव है । एक बार जिस जीव को इसकी प्राप्ति हो जाती है उसको फिर इस संसारमें परिभ्रमण नहीं करना पड़ता, एवं जीव को वहां पर निरतिशय अनंत आनन्द की प्राप्ति होती है इसलिये वह मोक्ष स्वयं अपूर्व अनंत आनन्द का एक धाम है । संवेगपरिणामवाला जीव इस प्रकारके मोक्षसुखकी ही अभिलाषा करता है ।

(૩) નિર્વેદ—નિર્વેદગુણવાળા જીવ—‘નરક, તિર્યંચ દેવ ઓર મનુ-ષ્યભવમેં સર્વત્ર હી દુઃસ્વકા સામ્રાજ્ય છાયા હુઆ હૈ’ इस लिये यह समस्त जगत दुःस्वका एक भाजन है’ ऐसा समझ कर उसको निःसार—साररहित ही जानता है । ममत्तरूप जहर से वह दूर ही रहता है ।

(૪) અનુકંપા—દુઃસ્વી જીવોં પર દયાભાવ હોના હી અનુકંપા હૈ । इस गुणवाला जीव संसारस्थ समस्त प्राणिवर्ग को शारीरिक मानसिक

વિપરીત સ્વભાવવાળો છે’ એનો તાત્પર્ય એ છે કે તે કર્મના ઉદયને આધીન નથી પણ આત્માનો નિજસ્વભાવ છે. એક વાર જે જીવને મોક્ષની પ્રાપ્તિ થઈ ગઈ તો પછી એને આ સંસારમાં પરિભ્રમણ કરવું પડતું નથી. અને જીવને ત્યાં નિરતિ-શય અનંત આનંદની પ્રાપ્તિ થાય છે, તેથી તે મોક્ષ પોતે અપૂર્વ અનંત આનંદનો ધામ છે. સંવેગપરિણામવાળો જીવ આવા પ્રકારના મોક્ષ-સુખનીજ અભિલાષા કરે છે.

(૩) નિર્વેદ—નિર્વેદગુણવાળો જીવ—‘નરક, તિર્યંચ, દેવ અને મનુષ્ય ભવમાં સર્વત્ર દુઃખનું સામ્રાજ્ય જ પથરાયેલું છે, એથી સમસ્ત આ જગત દુઃખનું એક ભાજન છે’ એવું સમજીને તેને નિઃસાર—સારરહિત માને છે. મમતાથી ઝેરથી તે દૂર જ રહે છે.

(૪) અનુકંપા—દુઃખી જીવો ઉપર દયા કરવી તેનું નામ અનુકંપા છે. આ ગુણવાળા જીવ સંસારના સમસ્ત પ્રાણિવર્ગને અનેક શારીરિક માનસિક કષ્ટોથી

રક્ષણેન, સાર્યમાણાનાં સંકટાન્મોચનેન, ધર્મોપદેશેન મોક્ષમાર્ગે યોજનયા ચ યથા-સામર્થ્યમનુગ્રહં કુરુતે ।

(૫) આસ્તિક્યપરિણામેન ચ ‘યદિહ તીર્થકરૈઃ પ્રતિવોધિતં તત્ સર્વમેવ સત્યં, તથૈવ સર્વે જીવાજીવાદયોઽર્થાઃ સન્તિ નિશ્શંકામ્’ ઇતિ મન્યતે । સ ચ કાઙ્ગાદિ-વિસ્રોતસિફારહિતો ભવતિ ।

एवंभूतैः शमादिपरिणामैः सम्यक्त्वं विज्ञेयं भवितुमर्हति । लब्धसम्यक्त्वश्च सम्यग्दृष्टिरित्युच्यते । स चान्तर्मुहूर्तकालमपि सम्यक्त्वेन स्पृष्टश्चेदुत्कृष्टतो देशो-  
अनेક કણ્ઠોં સે વ્યથિત હી અનુભવ ક્રિયા કરતા હૈ, ઓર અપને સમાન હી ડન્હેં માન કર ડનકે ડન ડુઃખોં કા સ્વયં અનુભવ કરકે નિષ્પક્ષ દષ્ટિ સે યુક્ત હો કર ડનકે ડન ડુઃખોં કો વ્ર કરને કી યથાશક્તિ કોશિશ મેં રહતા હૈ । અપની શક્તિકે અનુસાર ડનકી રક્ષા કરતા હૈ । મરતે હુએ તથા ઘાતકદ્વારા મારે જાતે હુએ જીવોં કો યથાશક્તિ વચાતા હૈ ઓર મોક્ષમાર્ગસે વિપરીત જનોં કો સદ્ધર્મકે ઉપદેશ સે ભાથિત કર ડન્હેં મોક્ષમાર્ગ મેં લગાને કી અપની શક્તિકે અનુસાર ચેષ્ટા ભી કરતા હૈ ।

(૬) આસ્તિક્ય—“જો જિનેન્દ્રદેવને કહા હૈ વહ સર્થ હી સત્ય હૈ”  
इस प्रकार दृढ़ आस्थावाली भति ही आस्तिक्य भाव है । इस आस्तिक्य भाववाला जीव जिनप्रतिपादित तत्त्वों में निशंक होकर दृढ़ आस्था-सम्पन्न होता है । वह जीव जिनवचनों में शंकाकाङ्गादिरहित होता है ।

इन पूर्वोक्त शमादिभावरूप चिह्नोंसे सम्यक्त्व का अस्तित्व जाना जाता है । जीव यदि सम्यग्दर्शनका एक अंतर्मुहूर्त भी स्पर्श कर लेता

વ્યથિત જ અનુભવ કર્યા કરે છે. યને પોતાના સમાન જ તેઓને માનીને તેઓના તે ડુઃખોંને અનુભવ સ્વયં કરીને નિષ્પક્ષદષ્ટિયુક્ત થઈ તેઓના તે ડુઃખોંને દૂર કરવાની યથાશક્તિ કોશિશમાં રહે છે, પોતાની શક્તિના પ્રમાણમાં તેની રક્ષા કરે છે. મરતા હોવોને તથા ઘાતકીદ્વારા મરતા હોવોને યથાશક્તિ બચાવે છે, યને મોક્ષમાર્ગથી વિપરીત જનોને સદ્ધર્મના ઉપદેશથી ભાવિત કરી તેને મોક્ષમાર્ગમાં લગાડવામાં પોતાની શક્તિ-અનુસાર ચેષ્ટા કરે છે.

(૫) આસ્તિક્ય—“જે જિનેન્દ્ર દેવે કહ્યાં છે તે સર્વે સત્ય છે.” આ પ્રકારની દૃઢ આસ્થાવાળી ભતિ જ આસ્તિક્ય ભાવ છે. આ આસ્તિક્યભાવવાળાં હોવ જિનપ્રતિપાદિત તત્ત્વોમાં નિશંક થઈને દૃઢ આસ્થાવાળા થઈ જાય છે. તે હોવ જિન વચનોમાં શંકાકાંક્ષાદિરહિત હોય છે.

આ પૂર્વોક્ત શમાદિભાવરૂપ ચિહ્નોથી સમ્યક્ત્વનું અસ્તિત્વ જાણવામાં આવે છે. હોવ જે સમ્યગ્દર્શનનો એક અંતર્મુહૂર્ત પણ સ્પર્શ કરી લે તો તે નિયમથી

નાર્ધપુદ્ગલપરાવર્તનતરે નિયમેન મોક્ષં પ્રાપ્નોતિ । અલમધિકેન, લબ્ધસમ્યક્ત્વઃ સુરગતિં નિયમતો લભતે । તથા ચોક્તમ્—

“ અંતોમુહુત્તમિત્તં,—પિ ફાસિઅં હુજ્જ જેહિં સમ્મત્તં ।

તેસિં અવહ્લપુગ્ગલ,—પરિઅટ્ટો ચેવ સંસારો ” ॥ ૧ ॥ ઇતિ ।

છાયા—અન્તર્મુહૂર્તમાત્રમપિ સ્પૃષ્ટં ભવેદ્ગૈઃ સમ્યક્ત્વમ્ ।

તેષામપાર્દ્ધપુદ્ગલપરિવર્તે એવ સંસારઃ ॥ ૧ ॥ ઇતિ ।

અપરં ચ—“ સમ્મદિટ્ઠી જીવો, ગચ્છહ્ નિયમા વિમાણવાસીસુ ।

જહ્ ન વિગયસંમત્તો, અહવ ન વદ્ધાઉઓ પુવ્વિ ” ॥ ૧ ॥

હૈ તો વહ નિયમસે જ્યાદા સે જ્યાદા અર્ધપુદ્ગલપરાવર્તન કાલ તક હી હસ સંસાર મેં રહતા હૈ ઓર ઉસકે વાદ મોક્ષસ્થાનકો પ્રાપ્ત કર હી લેતા હૈ । કહા બી હૈ—

“ અંતોમુહુત્તમિત્તં,—પિ ફાસિઅં હુજ્જ જેહિં સમ્મત્તં ।

તેસિં અવહ્લપુગ્ગલ,—પરિઅટ્ટો ચેવ સંસારો ” ॥ ૧ ॥ ઇતિ ।

જિન જીવોંને એક અંતર્મુહૂર્તમાત્ર બી સમ્યક્ત્વકા સ્પર્શ કિયા હૈ ઉન જીવોં કા સંસાર અર્ધ પુદ્ગલપરાવર્તનકાલ તક હી અવશિષ્ટ રહતા હૈ । હસ વિષયમેં અધિક ક્યા કહા જાય ? સમ્યગ્દષ્ટિ જીવ નિયમ સે, યદિ વહ વિગતસમ્યક્ત્વ નહીં હૈ, તથા વદ્ધાયુષ્ક નહીં હૈ તો, વૈમાનિક દેવોં મેં જન્મ ધારણ કરતા હૈ । કહા બી હૈ—

“ સમ્મદિટ્ઠી જીવો, ગચ્છહ્ નિયમા વિમાણવાસીસુ ।

જહ્ ન વિગયસંમત્તો, અહવ ન વદ્ધાઉઓ પુવ્વિ ” ॥ ૧ ॥

વધારેમાં વધારે અર્ધપુદ્ગલપરાવર્તન કાળ સુધી જ આ સંસારમાં રહે છે, અને ત્યાર પછી મોક્ષસ્થાનને પ્રાપ્ત કરી જ લે છે. કહ્યું છે:—

“ અંતોમુહુત્તમિત્તં,—પિ ફાસિઅં હુજ્જ જેહિં સમ્મત્તં ।

તેસિં અવહ્લપુગ્ગલ,—પરિઅટ્ટો ચેવ સંસારો ” ॥ ૧ ॥ ઇતિ ।

જે જીવોએ એક અંતર્મુહૂર્ત માત્રપણ સમ્યક્ત્વનો સ્પર્શ કર્યો છે તે જીવોનો સંસાર અર્ધપુદ્ગલપરાવર્તનકાળ સુધી જ અવશિષ્ટ રહે છે, આ વિષયમાં વધારે શું કહેવું ? સમ્યગ્દષ્ટિ જીવ, જે તે વિગતસમ્યક્ત્વ નથી તથા બદ્ધાયુષ્ક નથી તો નિયમથી તે વૈમાનિક દેવોમાં જન્મ ધારણ કરે છે. કહ્યું છે.—

“ સમ્મદિટ્ઠી જીવો, ગચ્છહ્ નિયમા વિમાણવાસીસુ ।

જહ્ ન વિગયસંમત્તો, અહવ ન વદ્ધાઉઓ પુવ્વિ ॥ ૧ ॥ ” ઇતિ ।

છાયા—સમ્યગ્દષ્ટિર્જીવો, ગચ્છતિ નિયમાદ્ વિમાનવાસિણુ ।

યદિ ન વિગતસમ્યક્ત્વઃ, અથવા ન વદ્ધાયુષ્કઃ પૂર્વમ્ ॥ ૧ ॥

અન્યચ્—‘જં સક્કહ તં કીરહ, જં ચ ન સક્કહ તયમ્મિ સદ્દહણા ।

સદ્દહમાણો જીવો, વચ્ચહ અયરામરં ઠાણં ” ॥ ૧ ॥ ઇતિ ।

છાયા—યન્ ગક્કનોતિ (કર્તુ) તત્ ક્રિયતે, યચ્ચ ન શક્કનોતિ તસ્મિન્ શ્રદ્ધા ।

શ્રદ્ધાનાં જીવો, વ્રજતિ અજરામરં સ્થાનમ્ ॥ ૧ ॥ ઇતિ ।

નત્તેવં સમ્યક્ત્વેનૈવ મોક્ષપ્રાપ્તિશ્ચેત્તર્હિં કિં પુનસ્તીવ્રતરક્ષણસાધ્યૈરહિંસાદિવ્રત-  
સમ્યગ્દષ્ટિ જીવ મર કર નિયમસે વૈમાનિક દેવોં મેં ઉત્પન્ન હોતા હૈ  
યદિ ઉસકા સમ્યક્ત્વ વિગત (નષ્ટ) નહીં હુઆ હૈ, ઓર સમ્યક્ત્વપ્રાપ્તિકે  
પહેલે અન્ય ગતિયોં કો આયુ નહીં વાંધી હૈ તો ॥ ૧ ॥

હસલિયે પ્રત્યેક સંજી પંચેન્દ્રિય પર્યાપ્ત પ્રાણી કા કર્તવ્ય હૈ કિ વહ  
એસે સુંદર સમ્યક્ત્વ કો પ્રાપ્ત કરનેકા પ્રયત્ન કરતા રહે । કહાં મી હૈ—

“જં સક્કહ તં કીરહ, જ ચ ન સક્કહ તયમ્મિ સદ્દહણા ।

સદ્દહમાણો જીવો, વચ્ચહ અયરામરં ઠાણં ” ॥ ૧ ॥ ઇતિ ।

જો શુભ કર્તવ્ય પ્રાણી સે હો સકતા હો વહ આત્મવીર્ય—વલ પરા-  
ક્રમકો નહીં ગોપતે હુગ અવરૂપ કરનાં ચાહિયે । યદિ ન બન સકે તો  
મી ઉમમેં શ્રદ્ધા રખવી હી ચાહિયે, ક્યોં કિ શુદ્ધ શ્રદ્ધાકે પ્રભાવસે હી  
જીવ અજર—અમર પદકા અધિકારી બનતા હૈ ॥ ૧ ॥

શંકા—યદિ એસી હી વાત હૈ તો ફિર તીવ્રતર કષ્ટોંકે દ્વારા સાધ્ય

સમ્યગ્દષ્ટિ જીવ મરીને નિયમથી વૈમાનિક દેવોમાં ઉત્પન્ન થાય છે. જે એનો  
સમ્યક્ત્વ વિગત નથી થયો અને તેને સમ્યક્ત્વ પ્રાપ્તિના પહેલાં અન્ય ગતિની  
આયુ નહિ વાંધી હોય તો ॥ ૧ ॥

તેથી પ્રત્યેક સંજી પંચેન્દ્રિય પર્યાપ્ત પ્રાણીનું કર્તવ્ય છે કે તે આવા સુંદર  
સમ્યક્ત્વને પ્રાપ્ત કરવા પ્રયત્ન કરતો રહે. કહ્યું છે—

“જ સક્કહ તં કીરહ, જ ચ ન સક્કહ તયમ્મિ સદ્દહણા ।

સદ્દહમાણો જીવો, વચ્ચહ અયરામરં ઠાણં ” ॥ ૧ ॥ ઇતિ ।

જે શુભ કર્તવ્ય પ્રાણીથી બની શકતું હોય તે આત્મવીર્ય—અલ પરાક્રમને  
છુપાવ્યા વિના અવશ્ય કરવું જોઈએ. જે ન બની શકે તો પણ તેમાં શ્રદ્ધા રાખવી  
જ જોઈએ, કારણ કે શુદ્ધ શ્રદ્ધાના પ્રભાવથી જ જીવ અજર—અમર પદનો અધિ-  
કારી બને છે ॥ ૧ ॥

શંકા—જે આવી વાત છે તો પછી તીવ્રતર કષ્ટોંકે દ્વારા સાધ્ય અહિંસાદિ



સંયમતપઃસમારાધનૈઃ, તથાહિ-પર્યાપ્તાપર્યાપ્તકાદિભેદવતાં પૃથિવ્યપ્તેજોવાયુવનસ્પ-  
તીનાં દ્વીન્દ્રિયાદિવિવિધત્રસાનાં ચ ત્રિકરણત્રિયોગૈરુપમર્દનપરિહારપૂર્વકરક્ષણરૂપમ  
હિંસાવ્રતં, તથા સ્વસ્ત્રભેદૈર્વહુવિધમૃષાવાદાદત્તાદાનમૈથુનપરિગ્રહપરિહારરૂપાણિ  
વ્રતાનિ, શીતોષ્ણાદિકઠિનતરપરિષહસહનપૂર્વકસપ્તદશવિધસંયમસમારાધનમ્, અનશ-  
નાદ્યુગ્રતરદ્વાદશવિધતપશ્ચરણજનિતશરીરાદિશોષણેન ધન્યમુનિવદ્ ઘોરતરકષ્ટસહનં  
ચેતિ । તથા-કિં પુનર્મહાવિસ્તરદુરધિગમસામાયિકાદિદ્વાદશાંગરૂપશ્રુતજ્ઞાનૈરપિ ?  
इति चेन्न,

अहिंसादि महाव्रत संयम और तप आदिके पालन एवं आराधन करने  
की आवश्यकता क्या है ? अर्थात्-एक सम्यग्दर्शन से ही जीवको मुक्ति  
का लाभ हो जावे तो पर्याप्त और अपर्याप्त-भेदविशिष्ट एकेन्द्रिय-  
पृथिवीकाय, अपकाय, तेजस्काय, वायुकाय, और वनस्पतिकायके जीवों  
की, एवं द्वीन्द्रियादिक अनेक प्रकारके त्रस जीवों की कृत कारित अनु-  
मोदना और मन वचन कायसे विराधना का त्याग करना, एवं उनका  
रक्षण करना जो अहिंसा-महाव्रत है उसका पालन १, तथा अनेक प्रका-  
रके मृषावाद २, अनेक प्रकारके अदत्तादान-चोरी ३, मैथुन ४, एवं परि-  
ग्रह ५ का त्यागरूप पांच महाव्रतों का आराधन, एवं कठिनतर परिषहों  
के सहनपूर्वक (१७) सतरह प्रकारके संयम का सेवन करना, तथा धन्य  
मुनिकी तरह अनशनादिक (१२) बारह प्रकारके तपके आचरणसे उत्पन्न  
शरीरादिक शोषण से घोरतर कष्टों का सहन करना; ये सभी बिल्कुल  
ही व्यर्थ हैं ? तथा सामायिकादिद्वादशांगरूप श्रुतज्ञान, कि जो महा-

મહાવ્રત સંયમ અને તપ વિગેરેનું પાલન અને આરાધન કરવાની આવશ્યકતાજ  
શી છે ? અર્થાત્-એક સમ્યગ્દર્શનથી જ જીવને મુક્તિનો લાભ થઈ જાય તો  
પર્યાપ્ત અને અપર્યાપ્ત ભેદ-વિશિષ્ટ એકેન્દ્રિય-પૃથ્વીકાય, અપ્કાય, તેજસ્કાય,  
વાયુકાય, અને વનસ્પતિકાય-ના જીવોની, અને એકેન્દ્રિયાદિક અનેક પ્રકારના  
ત્રસ જીવોની કૃત કારિત અનુમોદના અને મનવચન કાયાથી વિરાધનાનો ત્યાગ કરવો,  
અને તેનું રક્ષણ કરવું જે અહિંસામહાવ્રત છે તેનું પાલન ૧, તથા અનેક પ્રકારના  
મૃષાવાદર, અનેક પ્રકારના અદત્તાદાન-ચોરી ૩, મૈથુન ૪, અને પરિગ્રહ ૫ ના ત્યાગરૂપ  
પાંચ મહાવ્રતોનું આરાધન, અને કઠિનતર પરિષદોનું સહનપૂર્વક સતર પ્રકારે સંયમનું  
સેવન કરવું, તથા ધન્યમુનિની પેઠે અનશનાદિક બાર પ્રકારના તપના આચરણથી  
ઉત્પન્ન શરીરાદિક શોષણથી ઘોરતર કષ્ટોનું સહન કરવું, એ બધા બિલકુલ જ

જ્ઞાનચારિત્રસમુત્પાદનદ્વારા સમ્યક્ત્વસ્ય મોક્ષં પ્રતિ કારણત્વાત્, તથાદિ-ન કેવલં સમ્યક્ત્વમાત્રેણ સિદ્ધિપદં લઘું શક્યતે, કિન્તુ સમ્યક્ત્વકાર્યસ્ય તદભિ-વ્યજ્ઞકસ્ય ચારિત્રસ્યૈવ મોક્ષં પ્રતિ સાધાત્કારણતયા તેનૈવ તત્પ્રાપ્તિર્ભવિતુર્મર્હતિ, સમ્યગ્જ્ઞાનમપિ ચારિત્રોત્પાદનદ્વારેણૈવ મોક્ષજનકમ્ । યતશ્ચારિત્રપરિણાયેનૈવ જ્ઞાન-મપિ મોક્ષાય પ્રભવતિ. ન કેવલં સ્વસત્તામાત્રેણ । અત એવ ભગવતાઽત્રૈવ પ્રથમાધ્યયને વિસ્તારમમ્પન્ન એવં દુરધિગમ હૈ, ડમ્કા શ્રવણ, મનન આદિ કરના ખી નિસ્સાર હી હૈ ? ।

સમાધાન—જઙ્ઙાકારકી યહ જઙ્ઙા ટીક નહીં હૈ; કયોં કિ સ્વતન્ત્ર સમ્યગ્દર્શન મોક્ષકા કારણ નહીં માના ગયા હૈ । જવ તક જીવ કો સમ્ય-ક્ત્વ કી પ્રાપ્તિ નહીં હોતી હૈ તવ તક ડસકે જ્ઞાન ઓર ચારિત્ર મિથ્યા-રૂપ મેં રહતે હૈ । જ્ઞાન ઓર ચારિત્રમેં સમ્યક્પના ડસી સમ્યક્ત્વ કે દ્વારા આના હૈ, અતઃ સમ્યગ્જ્ઞાન ઓર સમ્યક્ચારિત્ર કી ઉત્પત્તિ દ્વારા હી સમ્યક્ત્વ મોક્ષકા હેતુ હોતા હૈ । ડસી અભિપ્રાયકો લે કર સમ્યક્ત્વ, મોક્ષકા કારણ કહા ગયા હૈ । જવ તક સમ્યક્ત્વ પૂર્ણ જ્ઞાન ઓર પૂર્ણ ચારિત્ર કો ઉત્પન્ન નહીં કર દેતા તવ તક વહ મોક્ષકા કારણ નહીં હોતા । મુક્તિ સમ્યક્ચારિત્ર સે હી પ્રાપ્ત હોતી હૈ, ડસ કારણ સે સમ્યક્ ચારિત્ર હી મુક્તિકા સાક્ષાત્ કારણ હૈ । યહ ચારિત્ર સમ્યક્ત્વ કા કાર્ય ઓર ડસકા અભિવ્યંજક-પ્રકાશક હોતા હૈ ।

વ્યર્થ છે ? તથા આમાયિકાદિદ્વાદશાંગરૂપ શ્રુતજ્ઞાન, કે જે મહાવિસ્તારમ્પન્ન અને દુરધિગમ છે; તેનું શ્રવણ મનન આદિ કરવું પણ નિસ્સાર જ છે ?

સમાધાન—શ કાકારની શંકા ઠીક નથી, કારણ કે સમ્યગ્દર્શન મોક્ષનું સ્વ-તન્ત્ર કારણ માનવામાં આવ્યું નથી. જ્યાં સુધી જીવને સમ્યક્ત્વની પ્રાપ્તિ નથી થતી ત્યાં સુધી તેનું જ્ઞાન અને ચારિત્ર મિથ્યારૂપમાં રહે છે. જ્ઞાન અને ચારિ-ત્રમાં સમ્યક્પણું આ સમ્યક્ત્વદ્વારા આવે છે, એથી સમ્યગ્જ્ઞાન અને સમ્યક્-ચારિત્રની ઉત્પત્તિ દ્વારા જ સમ્યક્ત્વ મોક્ષનો હેતુ થાય છે. આ અભિપ્રાયને લઈને જ સમ્યક્ત્વને મોક્ષનું કારણ કહેવામાં આવ્યું છે. જ્યાં સુધી સમ્યક્ત્વ પૂર્ણ જ્ઞાન અને પૂર્ણ ચારિત્રને ઉત્પન્ન નથી કરતું ત્યાં સુધી તે મોક્ષનું કારણ નથી થતું. મુક્તિ સમ્યક્-ચારિત્રથી જ પ્રાપ્ત થાય છે, આ કારણથી સમ્યક્ ચારિત્ર જ મુક્તિનું સાક્ષાત્ કારણ છે. આ ચારિત્ર સમ્યક્ત્વનું કાર્ય અને તેનું અભિવ્યંજક (પ્રગટ કરવાવાળું) થાય છે.

‘સે હુ મુળી પરિણાયકમ્મે’ इति पुनः पुनर्वदता सम्यक्चारित्रमेव मोक्षप्राप्ति-  
कारणमिति प्रतिबोधितम् । उत्तराध्ययनेऽपि—

“नादंसणिस्स नाणं, नाणेण विणा न हुंति चरणगुणा ।

अगुणिस्स नत्थि मोक्खो, नत्थि अमोक्खस्स निव्वाणं” ॥ १ ॥ (अ० २८)

सम्यग्ज्ञान भी सम्यक्चारित्र को उत्पन्न करता हुआ मोक्षका कारण माना गया है । जानकी सत्ता भले ही आत्मा में हो परन्तु जब तक वह आत्मामें चारित्रपरिणाम को उत्पन्न नहीं कर देता, तब तक मोक्ष का जनक नहीं हो सकता । इसी अभिप्राय को लेकर भगवान्ने इसी प्रथम अध्ययनमें “से हु मુળી પરિણાયકમ્મા” अर्थात्—जो छ काय के आरंभ को जपरिज्ञा से जानकर प्रत्याख्यानपरिज्ञा से त्यागता है वही मुनि चारित्रवान् गिना जाता है । इस कथन द्वारा भी सम्यक्चारित्र को ही मोक्षप्राप्तिका कारण प्रकट किया है । उत्तराध्ययनके २८ वें अध्ययनमें भी इसकी पुष्टि की गई है । जैसे—

“ नादंसणिस्स नाणं, नाणेण विणा न हुंति चरणगुणा ।

अगुणिस्स नत्थि मोक्खो, नत्थि अमोक्खस्स निव्वाणं ” ॥ १ ॥

अर्थात्—सम्यग्दर्शनरहित आत्मामें सम्यग्ज्ञान नहीं होता । सम्यग्ज्ञान से रहित आत्मा को चारित्रगुणकी प्राप्ति नहीं होनी । चारित्र गुण की प्राप्ति किये विना मोक्ष नहीं होता, एवं अमुक्तका निर्वाण नहीं होता ॥ १ ॥ उत्त० अ० २८ ॥

સમ્યગ્જ્ઞાન પણ સમ્યક્-ચારિત્રને ઉત્પન્ન કરતા મોક્ષનું કારણ માનવામાં આવે છે. જાનની સત્તા ભલે જ આત્મામાં છે, પરંતુ જ્યાં સુધી તે આત્મામાં ચારિત્રપરિણામને ઉત્પન્ન નથી કરતું ત્યાં સુધી મોક્ષનું ઉત્પાદક નથી થતું. આ અભિપ્રાયને લઈને લગવાને આ પ્રથમ અધ્યયનમાં “સે હુ મુળી પરિણાયકમ્મા” અર્થાત્—જે છ કાયના આરંભને જપરિજ્ઞાથી જાણીને પ્રત્યાખ્યાનપરિજ્ઞાથી ત્યાગે છે તે જ મુનિ ચારિત્રવાન માનવામાં આવે છે. આ કથન દ્વારા પણ સમ્યક્-ચારિત્રને જ મોક્ષપ્રાપ્તિનું કારણ પ્રગટ કર્યું છે. ઉત્તરાધ્યયન અધ્યયન ૨૮માં પણ એની પુષ્ટિ કરી છે. જેમ—

“ નાદંસણિસ્સ નાણં, નાણેણ વિણા ન હંતિ ચરણગુણા ।

અગુણિસ્સ નત્થિ મોક્ખો, નત્થિ અમોક્ખસ્સ નિવ્વાણં” ॥ ૧ ॥ ઉત્ત० અ० ૨૮ ॥

અર્થાત્—સમ્યગ્દર્શનરહિત આત્મામાં સમ્યગ્જ્ઞાન નથી થતું. સમ્યગ્જ્ઞાનથી રહિત આત્માને ચારિત્ર ગુણની પ્રાપ્તિ થતી નથી ચારિત્રગુણની પ્રાપ્તિ કર્યા વિના મોક્ષ થતું નથી, અને અમુક્તનું (કર્મથી મુક્ત નહિ તેનું) નિર્વાણ થતું નથી. ૧

सूत्रकृताङ्गे च—“एवं खु नाणिणो सारं, जं न हिंसइ किंचणं ।

अहिंसा समयं चेव, एयावंतं वियाणिया ॥१॥ ” (अ० ११)

ज्ञानं हि क्रियापरिणामाऽनापन्नं सत् कमप्यर्थं साधयितुं न शक्नोति । यथा शास्त्राभ्यसनकुशलोऽपि तदर्थविज्ञाननिपुणोऽपि तदुक्तधर्मानाचरणेन तदभ्यसनादिकं सर्वं निष्फलीकुर्यन्नहि विद्वत्पदं लभते । यथा वा—औषधस्वरूपगुणप्रज्ञावतामपि वैद्यानां तत्सविधिसेवनक्रियामन्तरेण तत्प्रज्ञा नैरुज्यं न जनयति, यद्यौषधज्ञानवतामियम-वस्था, तर्हि का वार्त्ता केवलं तन्नामरटनशीलानां जनानाम् । तथा चोक्तम्—

सूत्रकृताङ्ग में भी यही लिखा है—

“एवं खु नाणिणो सारं, जं न हिंसइ किंचणं ।

अहिंसा समयं चेव, एयावंतं वियाणिया ” ॥ १ ॥ (सू० अ० ११)

ज्ञान जब तक क्रियात्मक ( चारित्ररूप ) नहीं होता तब तक वह किसी भी इष्ट अर्थ की पुष्टि नहीं कर सकता । जैसे—शास्त्रके अभ्यास करनेमें कुशलमति व्यक्ति उसके अर्थका विशिष्ट ज्ञाता होकर भी जब तक शास्त्रविहित मार्ग को जीवनमें क्रियात्मकरूप नहीं देता तब तक वह उसके अभ्यास या ज्ञान से अपने किसी भी इच्छित कार्य की सिद्धि नहीं कर सकता है, और न वह यथार्थ विद्वत्ता के पदसे ही विभूषित हो सकता है । अतः उसको क्रियात्मक रूप देने के बिना जैसे उसका वह अभ्यास एवं ज्ञान निष्फल है, उसी प्रकार सम्यग्दर्शन भी ज्ञान-क्रियाके अभाव में मोक्षका साधक नहीं होता है । वैद्यका औषधि-

सूत्रकृताङ्गमां पणु अे न लण्णु छे—

“एवं खु नाणिणो सारं, जं न हिंसइ किंचणं ।

अहिंसा समयं चेव, एयावंतं वियाणिया ” ॥ १ ॥ सूत्र० अ० ११ ।

ज्ञान न्यां सुधी क्रियात्मक ( चारित्ररूप ) नहीं थतु त्यां सुधी ते डोछ पणु छण्ट अर्थनी पुष्टि नहीं करी शक्तुं, जेम शास्त्रनो अभ्यास करवामां कुशलमति मनुष्य अेना अर्थनो विशिष्ट ज्ञाता होवा छतां पणु न्यां सुधी शास्त्रविहित मार्गने लुपनमां क्रियात्मकइयथी नहीं उतारतो त्यां सुधी ते तेना अभ्यासना ज्ञानथी पोताना डोछ पणु छिच्छित कार्यनी सिद्धि प्राप्त करी शक्तो नहीं, अने यथार्थ विद्वत्ताना पदथी पणु ते विभूषित थछ शक्तो नहीं अेथी तेने क्रिया-त्मक इप आभ्या विना जेम तेनो आ अभ्यास तेमज् ज्ञान निष्फल छे ते प्रकारे सम्यग्दर्शन पणु ज्ञान-क्रियाना अभावमां मोक्षनुं साधक थतुं नहीं, वैद्यनो औषधविषयक अभ्यास अने परिपक्व ज्ञान औषधिसेवनना विधिनी

“ શાસ્ત્રાણ્યધીત્યાપિ ભવન્તિ મૂર્ખા, યસ્તુ ક્રિયાવાન્ પુરુષઃ સ વિદ્વાન્ ।  
સુચિન્તિતં ચૌષધમાતુરાણાં, ન નામમાત્રેણ કરોત્યરોગમ્ ” ॥ ૧ ॥

સમ્યક્ત્વસદ્ભાવે શમસંવેગાદયો ગુણાઃ પ્રસન્નમુદયન્તે, તદાનીં કથમપિ તદુ-  
દયં પ્રતિરોઢું ન કશ્ચન સમર્થો ભવતિ । ઉક્તઞ્ચ—

“ અસમસુખનિધાનં ધામ સંવિગ્નતાયાઃ, ભવસુખવિમુક્ત્વોદીપને સદ્વિવેકઃ ।  
નરનરકપશુત્વોચ્છેદહેતુર્નરાણાં, શિવસુખતરુવીજં શુદ્ધસમ્યક્ત્વલાભઃ ” ॥ ૧ ॥

વિષયક અભ્યાસ, एवं પરિપક્વ જ્ઞાન કયા કમી ઔષધિસેવનકે વિધિ  
કી અનભિજ્ઞતા મેં નીરોગતા કા કારણ હો સકતા હૈ ? નહીં હો સકતા ।  
યદિ હો સકતા તો ફિર ઉસકા નામ રટનેવાલે રોગી પુરુષોં કી વાત હી  
કયા કહની ? ઉન્હેં મી ઉસસે ફાયદા હો જાના ચાહિયે । કહા મી હૈ—

“ શાસ્ત્રાણ્યધીત્યાપિ ભવન્તિ મૂર્ખા, —યસ્તુ ક્રિયાવાન્ પુરુષઃ સ વિદ્વાન્ ।  
સુચિન્તિતં ચૌષધમાતુરાણાં, ન નામમાત્રેણ કરોત્યરોગમ્ ” ॥ ૧ ॥

શાસ્ત્રોંકો પઢકર મી મનુષ્ય મૂર્ખ રહ જાતે હૈં । જો ક્રિયાવાન્ હૈ  
વહી વિદ્વાન્ હૈ । વીમાર વ્યક્તિકો સુચિન્તિત મી ઔષધિ નામમાત્ર  
લેને સે આરોગ્યદાયક નહીં હોતી ॥ ૧ ॥

સમ્યક્ત્વકે સદ્ભાવમેં શમસંવેગાદિક ગુણોંકી ઉત્પત્તિ અવશ્ય  
હોતી હૈ, ઉનકો રોકને કેલિયે કોઈ મી સમર્થ નહીં હો સકતા, ક્યોં  
કિ યહ સર્વગુણસમ્પન્ન હૈ । કહા મી હૈ—

“ અસમસુખનિધાનં ધામ સંવિગ્નતાયાઃ,  
ભવસુખવિમુક્ત્વોદીપને સદ્વિવેકઃ ।

નરનરકપશુત્વોચ્છેદહેતુર્નરાણાં,

શિવસુખતરુવીજં શુદ્ધસમ્યક્ત્વલાભઃ ” ॥ ૧ ॥

અનભિજ્ઞતામાં નીરોગતાનુ કારણ કોઈ વખત બની શકે છે ?—નથી બની શકતું.  
જો બની શકે તો પછી તેનુ નામ લેવાવાળા રોગી પુરુષોની વાત જ શું કહેવી ?  
તેને પણ તેનાથી ફાયદો થવા જોઈએ. કહું પણ છે—

“ શાસ્ત્રાણ્યધીત્યાપિ ભવન્તિ મૂર્ખા, —યસ્તુ ક્રિયાવાન્ પુરુષઃ સ વિદ્વાન્ ।

સુચિન્તિતં ચૌષધમાતુરાણાં, ન નામમાત્રેણ કરોત્યરોગમ્ ” ॥ ૧ ॥

શાસ્ત્રનો અભ્યાસ કરીને પણ મનુષ્ય મૂર્ખ રહી જાય છે. જે ક્રિયાવાન્  
છે તે વિદ્વાન્ છે. બીમાર મનુષ્યને સુચિન્તિત પણ ઔષધિ નામમાત્ર લેવાથી  
આરોગ્યદાયક નથી થતી ॥ ૧ ॥

સમ્યક્ત્વના સદ્ભાવમાં શમસંવેગાદિક ગુણોની ઉત્પત્તિ અવશ્ય થાય છે, એને  
રોકવાને માટે કોઈ સમર્થ થતું નથી. કારણ કે તે સર્વગુણસમ્પન્ન છે. કહું પણ છે—

किंच—“सम्यक्त्वरत्नान्न परं हि रत्नं, सम्यक्त्वबन्धोर्न परोऽस्ति बन्धुः ।  
सम्यक्त्वमित्रान्न परं हि मित्रं, सम्यक्त्वलाभान्न परोऽस्ति लाभः” ॥ २ ॥  
तदेवं सम्यक्त्वमिह मोक्षस्य बीजमिति सिद्धम् ।

### सम्यक्त्वप्राप्तिक्रमः ।

अनादिमिथ्यादृष्टेर्जीवस्य सम्यक्त्वप्राप्तौ यथाक्रमं त्रीणि करणानि भवन्ति ।

यह सम्यक्त्व अनुपम सुखका निधान है, वैराग्यकी उत्पत्ति का कारण है, वैराग्यको प्रकट करने में शुद्ध विवेक है, चार गतिके दुःखोंका उच्छेद करने में कारण है और मोक्षसुखरूप वृक्षका यह बीज है ॥ १ ॥

और भी कहा है—

“सम्यक्त्वरत्नान्न परं हि रत्नं, सम्यक्त्वबन्धोर्न परोऽस्ति बन्धुः ।  
सम्यक्त्वमित्रान्न परं हि मित्रं, सम्यक्त्वलाभान्न परोऽस्ति लाभः” ॥ २ ॥

सम्यक्त्व-रत्नसे कोई उत्कृष्ट रत्न नहीं है, इससे बढ़कर कोई बन्धु नहीं है । यह सम्यक्त्व परम मित्र है, और इसका लाभ ही परमलाभ है ॥

इससे यह सिद्ध हुआ कि सम्यक्त्व मोक्षका मूल कारण है ।

### सम्यक्त्वकी प्राप्ति का क्रम—

अनादिमिथ्यादृष्टि जीव जब सम्यक्त्वप्राप्तिके संमुख होता है उस समय उसके यथाक्रमसे तीन करण होते हैं—(१) यथाप्रवृत्तिकरण, (२) अपूर्वकरण, (३) अनिवृत्तिकरण ।

“असमसुखनिधान धाम संविग्नतायाः, भवसुखविमुखत्वोद्दीपने सद्विवेकः ।

नरनरकपशुत्वोच्छेदहेतुर्नराणां, शिवसुखतन्मवीजं शुद्धसम्यक्त्वलाभः” ॥ १ ॥

आ सम्यक्त्व अनुपम सुखनुं निधान छे. वैराग्यनी प्राप्तिनुं कारण छे. वैराग्यने प्रकट करवाभां शुद्ध विवेक छे. चार गतिना दुःखना उच्छेद करवाभां कारण छे अने मोक्षसुखरूप वृक्षनुं ओ बीज छे. ॥ १ ॥ वणी पणुं कहुं छे—

“सम्यक्त्वरत्नान्न परं हि रत्नं, सम्यक्त्वबन्धोर्न परोऽस्ति बन्धुः ।

सम्यक्त्वमित्रान्न परं हि मित्रं, सम्यक्त्वलाभान्न परोऽस्ति लाभः” ॥ २ ॥

सम्यक्त्वरत्नथी कोछ उत्कृष्ट रत्न नथी अनाथी बंधीने कोछ बंधु नथी.

आ सम्यक्त्व परम मित्र छे, अने अने लाल न परम लाल छे ॥ १ ॥

अथी ओ सिद्ध थयुं के सम्यक्त्व मोक्षनुं भूण कारण छे.

### सम्यक्त्वनी प्राप्तिनो क्रम

अनादिमिथ्यादृष्टि जीव न्यारे सम्यक्त्वप्राप्तिने सम्मुख थाय छे ते वणते तेने यथाक्रमथी त्रणुं करण थाय छे—(१) यथाप्रवृत्तिकरण (२) अपूर्वकरण, (३) अनिवृत्तिकरण.



યથાપ્રવૃત્તિકરણમ્, અપૂર્વકરણમ્, અનિવૃત્તિકરણં ચેતિ । યથા=અનાદિસંસિદ્ધપ્રકારેણ પ્રવૃત્તિઃ=પ્રવર્તમાન—યથાપ્રવૃત્તિ, ક્રિયતે કર્મક્ષયમનેનેતિ કરણં—જીવપરિણામરૂપમ્ । યથાપ્રવૃત્તિ ચ તત્ કરણં ચેતિ યથાપ્રવૃત્તિકરણમ્ ।

અવગુત્તરત્રાપિ કરણશબ્દેન કર્મધારયો વોદ્યઃ । એવં ચાનાદિકાલાત્ કર્મક્ષયપ્રવૃત્તોઽધ્યવમાયવિશેષો યથાપ્રવૃત્તિકરણમિતિ ફલિતમ્ । એતાનિ ત્રીણ્યપિ કરણાનિ ભવ્યાનાં ભવન્તિ । અભવ્યાનાં તુ પ્રથમમેવ યથાપ્રવૃત્તિકરણં ભવતિ નેતરદ્વયમ્ ।

અનાદિ પરંપરા સે જો પ્રવર્તમાન હૈ વહ યથાપ્રવૃત્તિ હૈ, તથા કર્મ ક્ષય જિસકે દ્વારા ક્રિયા જાતા હૈ વહ કરણ હૈ, યહ કરણ જીવકા પરિણામસ્વરૂપ હી હૈ । યથાપ્રવૃત્તિરૂપ જો કરણ હૈ ઉસકા નામ યથાપ્રવૃત્તિકરણ હૈ । યહ ઇસકા નિરુક્ત-અર્થ હૈ । ઇસી પ્રકાર આગે ભી કરણ શબ્દ કે સાથ કર્મધારય સમાસ કા સંબંધ કર લેના ચાહિયે । ઇસ પ્રકાર અનાદિ કાલસે કર્મક્ષય કરનેમેં પ્રવૃત્ત જીવકા પરિણામવિશેષ હી યથાપ્રવૃત્તિકરણ હૈ, યહી ઇસકા ફલિતાર્થ હૈ । યે ત્રીન કરણ ભવ્યોં કે હોતે હૈ । અભવ્યોં કે સિર્ફ પ્રથમ હી કરણ હોતા હૈ, અન્નકે દો નહીં હોતે ।

યથાપ્રવૃત્તિકરણરૂપ પરિણામ જીવકે હોતા હી રહતા હૈ । ઇસકે દ્વારા જીવ ઉદયમેં આવે હુઅ જ્ઞાનાવરણીયાદિક આઠ કર્મોંકી પ્રકૃતિયોં કા ક્ષય કરતા રહતા હૈ । ઇસ લિયે ઇસ પરિણામકે કર્મક્ષય કા કારણ હોને સે જીવ ઇસકે વલ પર યથાસંભવ કર્મસ્થિતિકા ક્ષય કરતા હુઆ ઘન-કઠિનતર રાગદ્વેષરૂપી ગ્રન્થિકે સમીપ તક પહુંચ જાતા હૈ । યહ ગ્રન્થિ

અનાદિ પરંપરાથી જે પ્રવર્તમાન છે તે યથાપ્રવૃત્તિ છે, અને કર્મક્ષય જેના દ્વારા કરવામાં આવે છે તે કરણ છે. આ કરણ જીવના પરિણામસ્વરૂપ છે. યથાપ્રવૃત્તિરૂપ જે કરણ છે તેનું નામ યથાપ્રવૃત્તિકરણ છે. તે એના નિરૂક્ત-અર્થ છે. આ પ્રકારે આગળ પણ કરણ-શબ્દની સાથે કર્મધારયસમાસનો સંબંધ કરી લેવો જોઈએ. આ પ્રકારે અનાદિકાળથી કર્મક્ષય કરવામાં પ્રવૃત્ત જીવનું પરિણામ વિશેષ જ યથાપ્રવૃત્તિકરણ છે, તે તેનું ફલિતાર્થ છે. એ ત્રણ કરણ ભવ્યોને થાય છે. અભવ્યોને ફક્ત પ્રથમ જ કરણ થાય છે, બાકીનાં બે નથી થતાં.

યથાપ્રવૃત્તિકરણરૂપ પરિણામ જીવને થતાં જ રહે છે. એના દ્વારા જીવ ઉદયમાં આવેલા જ્ઞાનાવરણીયાદિક આઠ કર્મોંની પ્રકૃતિયોંનો ક્ષય કરતો રહે છે. તેથી આ પરિણામ કર્મક્ષયનું કારણ હોવાથી આ જીવ તેના બદલ ઉપર યથાસંભવ કર્મસ્થિતિનો ક્ષય કરતાં ઘન-કઠિનતર રાગદ્વેષરૂપી ગ્રન્થિની સમીપ સુધી પહોંચી જાય છે. આ ગ્રન્થિ એટલી ગાઢ-પ્રબલતમ છે કે જેનું આ

અધ્યવસાયસ્ય સર્વદૈવ માત્રાદુદયપ્રાપ્તાનાં જાનાવરણીયાદ્યૃકર્મપ્રકૃતીનાં ક્ષપણેન કર્મક્ષયકારણતયા યથાપ્રવૃત્તિકરણેન યથાસંભવં કર્મસ્થિતિં ક્ષપયતો જીવસ્ય ઘનરાગ-  
દ્વેષપરિણામરૂપો ગ્રન્થિરવતિષ્ઠતે, યથાપ્રવૃત્તિકરણસ્ય મન્દત્રિશુદ્ધિપરિણામરૂપત્વેન ગ્રન્થિભેદનસામર્થ્યાભાવાત્ ।

નનુ તર્હિ યથાપ્રવૃત્તિકરણેન કિયતી કર્મસ્થિતિઃ ક્ષપિતા ભવતિ ? ઉચ્યતે—  
યથા ગિરિનદ્યાં પાપાણ્યખણ્ડાનિ તદ્વેગતો ઘર્ષણાદિના વર્તુલ્યકારાણિ જાયન્તે,  
એવમનાદિકાલતઃ પૂર્વપૂર્વકર્મવગાચતુર્ગતિકસંસારસાગરં પ્રાપ્તસ્યાનન્તદુઃખાનિ સહ-  
માનસ્ય જીવસ્ય પરિણામસ્વભાવતયાઽનાભોગનિર્વર્તિતેન યથાપ્રવૃત્તિકરણાખ્યેન  
ત્રિશુદ્ધિપરિણામેન દીર્યતરાઽપિ કર્મસ્થિતિસ્તથા ક્ષપિતા ભવતિ યથાઽઽયુર્વર્જાનાં  
જ્ઞાનાવરણીયાદિકર્મણાં સર્વેષાં સ્થિતિઃ પલ્યોપમાસંખ્યાતભાગન્યૂનૈકકોટીકોટી-  
સાગરોપમપ્રમાણાઽવશેષા તિષ્ઠતિ ।

ઇતની ગાઢ-પ્રવલનમ્ દોની છે કે જેણેના આ પરિણામકે દ્વારા ભેદન  
કરના સર્વથા અશક્ય કાર્ય છે । જીવકો આ ગ્રન્થિકે દેશ તક પહુંચાના  
હી આ પરિણામ કા કામ છે । ગ્રન્થિકા ભેદન આકે દ્વારા આ લિયે  
નહીં દોના છે કે આ પરિણામ મન્દત્રિશુદ્ધિવાળું છે ।

શંકા—આપકા કથન ટીક છે; પરન્તુ અમી તક આ માલૂમ નહીં  
દો રહ્યા છે કે આ પરિણામકે દ્વારા કિતની કર્મસ્થિતિકા ક્ષય દોતા છે ।

ઉત્તર—જેસે પર્વતીય નદી મેં પાપાણ્યખણ્ડ નદીકે પ્રવલ પ્રવાહ કે વેગસે  
લુઢકતે હુણ ઓર ઇધર ડધર સે ટકરાતે હુણ સ્વાભાવિક રીતિસે ગોલમોલ  
દો જાતા છે, ડસી પ્રકાર અનાદિકાલસે કર્મકી અનવચ્છિન્ન સંતતિ (અટૂટ  
પરંપરા) કે વઢીભૂત રહ કર ચતુર્ગતિસ્વરૂપ આ સંસાર મહાસાગરમેં ગોતે

પરિણામદ્વારા ભેદન કરવું સર્વથા અશક્ય કાર્ય છે. જીવને આ ગ્રન્થિકા દેશ સુધી  
પહોંચ્યાડવું જ આ પરિણામનું કામ છે. ગ્રન્થિકા ભેદન એના દ્વારા તે માટે નથી  
થતું કે આ પરિણામ મન્દત્રિશુદ્ધિવાળું છે.

શંકા—આપનું કથન ટીક છે, પરંતુ હજી સુધી એ માલૂમ નથી કે આ  
પરિણામદ્વારા કેટલી કર્મસ્થિતિનો ક્ષય થાય છે.

ઉત્તર—જેમ પર્વતીય નદીમાં પાપાણ્યખંડ એના પ્રબલ પ્રવાહના વેગથી  
આમ-તેમ અથડાઈને ઘસાતો ઘસાતો સ્વાભાવિક રીતિથી ગોળમોલ થઈ જાય  
છે, તે જ પ્રકારે અનાદિ કાળથી કર્મની અનવચ્છિન્નસંતતિ-અટૂટપરંપરાને  
વશીભૂત રહીને ચતુર્ગતિસ્વરૂપ આ સંસારમહાસાગરમાં ગોથા ખાતાં અને  
અનંત દુઃખોની પરંપરાને સહન કરતાં એ જીવને સ્વાભાવિક રીતિથી-વિના કોઈ

ગ્વાતે, તથા અનંત દુઃખોંની પરંપરાકો સદતે હુણ્. ઇસ જીવકે સ્વાભાવિક રીતિ સે-વિના કિસી પ્રયત્ન કે-વિશુદ્ધ યથાપ્રવૃત્તિકરણ નામકા પરિણામ પ્રગટ હોતા હૈ, જિસકે દ્વારા યહ જીવ દીર્ઘતર કર્મસ્થિતિ કો ખી ઇતની રૂપા દેતા હૈ કિ જિસસે આયુકર્મ કો છોડ કર શેષ જ્ઞાનાવરણીયાદિક સમસ્ત સાત કર્મોંની સ્થિતિ પન્થ કે અસંખ્યાતવેં ભાગ કમ ંક કોટાકોટીમાગરપ્રમાણ અવશિષ્ટ રહ જાતી હૈ ।

વિશેષાર્થ—જૈસે પર્વતપ્રદેશમેં વહેનેવાળી નદીકા પથર ઉસકી પ્રવલ ધારાસે આહત હો ઇધર-ઉધર ટકરા કર સ્વાભાવિક રીતિસે ગોલમોલ હો જાયા કરતા હૈ, ઉસી પ્રકાર અનાદિકાલસે કર્મકે વશીભૂત હોકર સંસારરૂપી સમુદ્રમેં પડા હુઆ યહ જીવરૂપી પાપાણગ્વણ્ડ ખી ચતુર્ગતિયોં કે દુઃખરૂપી પ્રવલતમ પ્રવાહોં સે રાત-દિન ટકરા કર ગોલમોલસ્વરૂપ યથાપ્રવૃત્તિકરણરૂપ-અવસ્થામંપન્ન હો જાતા હૈ । જિસ પ્રકાર નદીકા પાપાણ વિના કિસી પ્રયત્ન ંવં અનાભોગરૂપસે (સ્વાભાવિકરૂપસે) ગોલ હો જાયા કરતા હૈ ઉસી પ્રકાર યહ કરણ ખી વિના કિસી પ્રયત્ન સે-સ્વાભાવિકરૂપ સે હી જીવ કો પ્રાપ્ત હો જાયા કરતા હૈ । યહ જીવ કા વિશુદ્ધ પરિણામ હૈ । ઇસકે પ્રભાવસે ઉસકે આયુકર્મ કો છોડ કર અવશિષ્ટ (શેષ) સાત કર્મોંની ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ ઘટ કર પન્થકે અસં-

પ્રયત્ને વિશુદ્ધ યથાપ્રવૃત્તિકરણ નામનું પરિણામ પ્રાદુર્ભૂત (પ્રગટ) થાય છે. જેના દ્વારા આ જીવ દીર્ઘતર કર્મસ્થિતિને પણ એટલી ખપાવી દે છે કે જેથી આયુકર્મને છોડીને શેષ જ્ઞાનાવરણીયાદિક સમસ્ત સાત કર્મોંની સ્થિતિ પન્થના અસંખ્યાતમાં ભાગ હીન એકકોટાકોટિમાગરપ્રમાણ અવશિષ્ટ રહી જાય છે.

વિશેષાર્થ—જેમ પર્વતપ્રદેશમાં વહેવાવાળી નદીનો પથર એની પ્રબલ ધારાથી અહીં-તહીં અથડાઈ ટુટાઈને સ્વાભાવિક રીતિથી ગોળમોળ થઈ જાય છે, તે પ્રકારે અનાદિ કાળથી કર્મના વશીભૂત થઈને સંસારરૂપી સમુદ્રમાં પડી રહેલા આ જીવરૂપી પાપાણખંડ પણ ચતુર્ગતિના દુઃખરૂપ પ્રબલ પ્રવાહથી રાતદિન અથડાઈને ગોળમોલસ્વરૂપ યથાપ્રવૃત્તિકરણરૂપ-અવસ્થામંપન્ન થઈ જાય છે જેમ નદીના પાપાણ, કોઈ પ્રયત્ન વિના અને અનાભોગરૂપથી (સ્વાભાવિક રૂપથી) ગોળ થયા કરે છે તે પ્રકારે આ કરણ પણ કોઈ પ્રયત્ન વિના સ્વાભાવિક રૂપમાં જ જીવને પ્રાપ્ત થઈ જાય છે. આ જીવનો વિશુદ્ધ પરિણામ છે. આના પ્રભાવથી એ જીવના આયુકર્મને છોડીને અવશિષ્ટ (શેષ) સાત કર્મોંની

અત્રાન્તરે ચ જીવસ્ય કર્મજનિતો ઘનરાગદ્વેષપરિણામરૂપઃ કર્કશનિવિઢચિરપ્રહ-  
ઠગૃહવક્રગ્રન્થિવદ્ દુર્ભેદઃ કર્મસ્થિતિવિશેષો ગ્રન્થિર્ભવતિ ।

અભવ્યોઽપિ જીવઃ સ્વત્વ યથાપ્રવૃત્તિકરણેન પ્રાગુક્તકર્મણાં દીર્ઘતરસ્થિતિં  
હાસયન્નેકકોટીકોટીસાગરોપમપ્રમાણાં કર્તુમર્હતિ, પરન્તુ ગ્રન્થિભેદનાય ન સમર્થો  
હ્યતર્વે ભાગ કમ એકકોટીકોટીસાગરપ્રમાણ ( અન્તઃકોટીકોટી  
સાગરપ્રમાણ ) રહ જાતી હૈ ।

इसके बाद जीवके कर्मजनित-कर्मों से उत्पन्न की गई-और सघन  
कठिनतर रागद्वेष परिणामवाली कर्मोंकी विशेषस्थितिरूप एक ग्रन्थि  
होती है, जो अत्यन्त कठोर, सघन और पुरानी गूढ़ गांठके समान  
दुर्भेद्य होती है । जैसे-बहुत पुरानी कठोर गांठका-कि जो चिकनाई  
आदिके संबंधसे अत्यन्त चिपट गई है और जिसका फंदा भी नजर  
नहीं आ रहा है, एवं जो टेढ़ी मेढ़ी लगी हुई है; उसका खोलना दुःशक्य  
है, उसी प्रकार की यह कर्मस्थिति भी एक दुर्भेद्य गांठ है ।

અભવ્ય જીવ भी इसी यथाप्रवृत्तिकरण द्वारा आयुर्कर्म सिवाय अन्य  
सात कर्मोंकी उत्कृष्ट स्थिति को खपा कर एक कोटाकोटी सागर प्रमाण  
कर देता है; परन्तु ग्रन्थिभेदन नहीं कर सकता । इसके पश्चात् कोई ही  
महात्मा भव्य जीव यथाप्रवृत्तिकरण से भी अधिक विशुद्धिसंपन्न अपूर्व  
करण को प्राप्त करता है । इसके द्वारा वह घन रागद्वेषरूप अतिदृढ़

ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ ઘટીને પદ્યના અસંખ્યાતમા ભાગ હીન એક કોટીકોટીસાગર  
પ્રમાણ ( અન્તઃકોટીકોટીસાગરપ્રમાણ ) રહી જાય છે.

ત્યાર બાદ જીવની કર્મજનિત-કર્મોથી ઉત્પન્ન થયેલી-અને સઘન કઠિનતર  
રાગદ્વેષપરિણામવાળી કર્મોની વિશેષ સ્થિતિરૂપ એક ગ્રન્થિ હોય છે, જે  
અત્યન્ત કઠોર, સઘન અને જુની ગૂઢ-ગાંઠની સમાન દુર્ભેદ હોય છે. જેમ  
ઘણી જુની કઠણ ગાંઠનું, કે જે ચિકણપણા વિગેરેના સંબંધથી અત્યન્ત ચોટી  
ગયેલ છે, અને જેનો સાંધો પણ નજર નથી આવતો, અને જે વાંકીચુકી લાગેલી  
છે, એનું તોડવું જેમ અશક્ય હોય છે. તે જ પ્રકારની આ કર્મસ્થિતિ પણ  
એક દુર્ભેદ ગાંઠ છે

અભવ્ય જીવ પણ આ યથાપ્રવૃત્તિકરણદ્વારા આયુર્કર્મ સિવાય અન્ય  
સાત કર્મોની ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિને ખપાવીને એકકોટીકોટીસાગરપ્રમાણ કરી દે  
છે, પરંતુ ગ્રન્થિભેદન કરી શકતા નથી એના પશ્ચાત્ કોઈ પણ મહાત્મા ભવ્ય  
જીવ યથાપ્રવૃત્તિકરણથી પણ અધિકવિશુદ્ધિસંપન્ન અપૂર્વ-કરણને પ્રાપ્ત  
કરે છે. એના દ્વારા તે ઘન-રાગદ્વેષરૂપ અતિદૃઢ ગ્રન્થિને સર્વ પ્રકારથી છેદી

ભવતિ । એતદનન્તરં કશ્ચિદેવ મહાત્મા ભવ્યજીવસ્તુ યથાપ્રવૃત્તિકરણાશ્ચયપરિણામા-  
દપ્યધિકવિશુદ્ધિપરિણામં પ્રાપ્તુર્મર્હતિ, સ એવાપૂર્વકરણાશ્ચયઃ પરિણામઃ । તં પ્રાપ્ત્વાસૌ  
નિશિતકુઠારધારયેવ પરમવિશુદ્ધ્યા ઘનરાગદ્વેપાતિદ્વદસંસ્કારરૂપં ગ્રન્થિ સર્વથા  
છિનત્તિ ભિનત્તિ ચ ।

યત્ પૂર્વં ન જાતં તદપૂર્વમ્, અપૂર્વં ચ તત્ કરણં ચેત્યપૂર્વકરણમ્ । અયં પરિ-  
ણામઃ સક્રદેવ ભવતિ, ન તુ પુનઃ પુનરિતિ । યથાપ્રવૃત્તિકરણં ત્વમવ્યાનામપ્યનન્તશઃ  
પ્રાદુર્ભવતિ । તસ્માદભવ્યા અપિ યથાપ્રવૃત્તિકરણેન કર્મ ક્ષપયિત્વા ગ્રન્થિ યાવદન-  
ન્તશઃ સમાગચ્છન્તિ ।

અપૂર્વકરણપરિણામેન ગ્રન્થેઃ સર્વથા ભેદને કૃતે સતિ તદપેક્ષ્યાડપ્યધિકવિશુદ્ધિ-  
પરિણામો ભવતિ, સ ત્વનિવૃત્તિકરણપરિણામઃ । તદવ્યવહિતોત્તરકાલે જીવઃ સમ્ય-  
ક્ત્વં નિયમતઃ પ્રાપ્નોતિ, ન ચાસૌ સમ્યક્ત્વમનવાપ્ય નિવર્તતે, તસ્માદનિવૃત્તિ-  
ગ્રન્થિકો સર્વ પ્રકાર સે છિન્ન-ભિન્ન કર ડાલતા હૈ । યહ પરિણામ જીવ  
કો પહિલે કમી મી પ્રાપ્ત નહીં હુઆ ઇસી લિયે ઇસકી અપૂર્વકરણ સંજ્ઞા  
હૈ । જો પહિલે ન હુઆ હો વહ અપૂર્વ હૈ । અપૂર્વ જો કરણ વહ અપૂર્વકરણ  
હૈ । વહ પરિણામ જીવકે લિયે એકવાર હી હોતા હૈ, વારંવાર નહીં । યથા-  
પ્રવૃત્તિકરણ તો અભવ્યોં કે અનન્તવાર મી હો જાતા હૈ, ઇસ લિયે વે  
ઇસ કે દ્વારા કર્મોંકા ક્ષપણ કર ગ્રન્થિદેશ નક અનંતવાર આ જાતે હૈં ।

અપૂર્વકરણ-પરિણામ સે ગ્રન્થિકા સર્વથા ભેદ હોને પર ઇસકે  
અનન્તર ઇસ સે મી અધિક વિશુદ્ધ પરિણામ ઉત્પન્ન હોતા હૈ, જિસ  
કા નામ અનિવૃત્તિકરણ હૈ । ઇસકે દ્વારા વ્યવધાનરહિત ઇસીકે ઉત્તર-  
કાલમેં (ઇસી સમય) જીવ નિયમસે સમ્યક્ત્વકી પ્રાપ્તિ કર લેતા હૈ ।

નાંખે છે અને ભેદી નાંખે છે. આ પરિણામ જીવને પહેલાં કોઈ વખત પણ  
પ્રાપ્ત નથી થયું તેથી એની અપૂર્વકરણ સંજ્ઞા છે. જે પહેલા નથી થયું તે  
અપૂર્વ છે અપૂર્વ જે કરણ તે અપૂર્વ કરણ છે. આ પરિણામ જીવને માટે એક  
વાર જ થાય છે, વારંવાર નહિ. યથાપ્રવૃત્તિકરણ તો અભવ્યોને અનંત વાર પણ  
થાય છે. આથી તે એના દ્વારા કર્મોનું ક્ષપણ કરીને ગ્રન્થિદેશ સુધી અનંતી-  
વાર આવે છે.

અપૂર્વકરણ-પરિણામથી ગ્રન્થિનો સર્વથા ભેદ થવાથી એના પછી  
આનાથી પણ અધિક વિશુદ્ધ પરિણામ ઉત્પન્ન થાય છે, જેનું નામ અનિવૃત્તિ-  
કરણ છે. એના દ્વારા વ્યવધાનરહિત એના ઉત્તરકાળમા (એ જ વખતે) જીવ  
નિયમથી સમ્યક્ત્વની પ્રાપ્તિ કરી લે છે આ પરિણામ સમ્યક્ત્વપ્રાપ્તિ કરાવ્યા

કરણમિત્યુચ્યતે । તસ્ય સ્થિતિકાલોઽન્તર્મુહૂર્તપ્રમાણઃ, તદાનીં જીવસ્ય વીર્યસમુદ્ધા-  
સોઽપૂર્વકરણાપેક્ષયા પરિવર્ધતે । તસ્યાન્તર્મુહૂર્તપ્રમાણાયાં સ્થિતો સંખ્યેયેષુ ભાગેષુ  
ગતેષુ સત્સ્વેકસ્મિંશ્ચ સંખ્યેયતમે ભાગે શેષે તિષ્ઠતિ સતિ મિથ્યાત્વપ્રદેશવેદ્યદલિકા-  
ભાવકરણરૂપમ્ અન્તરકરણં પ્રવર્તતે । અન્તરકરણાગ્ન્યસ્ય જીવપરિણામસ્યાપિ સ્થિ-  
તિકાલોઽન્તર્મુહૂર્તપ્રમાણઃ, પરંત્વન્તર્મુહૂર્તસ્યાસંખ્યાતભેદસદ્ભાવેનાનિવૃત્તિકરણકાલ-  
સ્વરૂપાન્તર્મુહૂર્તાપેક્ષયા તદન્તિમભાગવર્તી ન્યૂનોઽયમન્તરકરણકાલોઽન્તર્મુહૂર્તમિતિ ।

અનિવૃત્તિકરણરયાન્તિમે ભાગેઽન્તરકરણસ્ય કાર્યં પ્રારમ્ભયતે, તદ્યથા-અપૂર્વક-  
રણાનિવૃત્તિકરણલક્ષણચિત્રુદ્ધિપરિણામજનિતસામર્થ્યસમન્વિતો મન્યસ્તદવ્યવહિતોત્ત-  
યહ પરિણામ સમ્યક્ત્વ પ્રાપ્ત કરાયે વિના છૂટતા હી નહીં હૈ, ઇસી લિયે  
ઇસકા નામ “ અનિવૃત્તિકરણ ” પડા હૈ । ઇસકી સ્થિતિ અન્તર્મુહૂર્ત કી  
હૈ, જીવકે અપૂર્વકરણકી અપેક્ષા ઇસ સમય અધિક માત્રામૈં વીર્યોલ્લાસ  
વઢતા હૈ । અન્તર્મુહૂર્તપ્રમાણ સ્થિતિ મૈં સે સંખ્યાત ભાગ ઘટતે ૨ જવ  
ઉસકા અન્તિમ સંખ્યાતવાં ભાગ અવશિષ્ટ રહ જાતા હૈ ઉસ સમય  
અન્તરકરણ હોતા હૈ । યહ મિથ્યાત્વ કે પ્રદેશોંકે વેદન કરને યોગ્ય દ-  
લિયોં કે અભાવ ( ક્ષય ) કા કારણ હોતા હૈ । ઇસકી મી સ્થિતિ અન્ત-  
ર્મુહૂર્ત કી હૈ । યહ અન્તર્મુહૂર્ત જઘન્ય અન્તર્મુહૂર્ત હૈ । અનિવૃત્તિકરણ  
કે કાલકા અન્તર્મુહૂર્ત ઉત્કૃષ્ટ અન્તર્મુહૂર્ત હૈ । અન્તર્મુહૂર્તકે મી અસં-  
ખ્યાત ભેદ હૈ ।

અનિવૃત્તિકરણ કે અંતિમ ભાગમૈં અન્તરકરણકા કાર્ય પ્રારમ્ભ હોતા  
હૈ । મિથ્યાત્વકે પ્રદેશોંકે વેદન કરને યોગ્ય દલિયોં કા અભાવ કરના હી  
અન્તરકરણકા કાર્ય હૈ । વહ કાર્ય ઇસકે દ્વારા જીવ જિમ પ્રકાર સે કરતા

વગર છુટતો જ નથી, તેથી તેનું નામ “ અનિવૃત્તિકરણ ” પડ્યું છે, એની  
સ્થિતિ અંતર્મુહૂર્તની છે. છપને અપૂર્વકરણની અપેક્ષા આ સમયે અધિક માત્રામાં  
વીર્યોલ્લાસ વધે છે. અન્તર્મુહૂર્તપ્રમાણ સ્થિતિમાંથી સંખ્યાત ભાગ ઘટતાં ઘટતાં  
જ્યારે તેનો અંતિમ સંખ્યાતભાગ અવશિષ્ટ રહી જાય છે તે વખતે અન્ત-  
રકરણ થાય છે. આ મિથ્યાત્વના પ્રદેશોના વેદન કરવા યોગ્ય દલિયોના અભાવ  
( ક્ષય ) નું કારણ થાય છે. એની પણ સ્થિતિ અન્તર્મુહૂર્તની છે. આ અન્ત-  
ર્મુહૂર્ત જઘન્ય અન્તર્મુહૂર્ત છે અનિવૃત્તિકરણના કાળનું અંતર્મુહૂર્ત ઉત્કૃષ્ટ  
અંતર્મુહૂર્ત છે અંતર્મુહૂર્તના પણ અસંખ્યાત ભેદ છે

અનિવૃત્તિકરણના અંતિમ ભાગમાં અન્તરકરણનું કાર્ય પ્રારંભ થાય છે.  
મિથ્યાત્વના પ્રદેશોના વેદન કરવા યોગ્ય દલિયોનો અભાવ કરવો, એ જ અંતર-



રાન્તર્મુહૂર્તકાલે ઉદ્વેગમાણં મિથ્યાત્વદલિકં દ્વિધા વિધાય તત્રૈકં દલિકમનિવૃત્તિ-  
કરણાન્તિમમયપર્યન્તે ઉદયમાનમિથ્યાત્વદલિકેષુ નિશ્ચિપતિ, દ્વિતીયં દલિકં  
ત્વનિવૃત્તિકરણાવ્યવહિતોત્તરકાલિકાન્તર્મુહૂર્તસમાપ્ત્યનન્તરકાલે ઉદ્વેગમાણૈર્મિથ્યા-  
ત્વદલિકૈઃ સહ સંયોજયતિ । તથા ચાનિવૃત્તિકરણકાલાવ્યવહિતોત્તરકાલે પ્રથમો-  
ન્તર્મુહૂર્તકાલઃ એકસ્તાદશઃ સંજાયતે યત્ર મિથ્યાત્વકર્મણાં કિંચિદપિ દલિકં નૈવ  
તિષ્ઠતિ । તથાચાનેનાન્તરકરણેન ભવ્યસ્તસ્મિન્નન્તર્મુહૂર્તે ઉદયયોગ્યમિથ્યાત્વદલિક-

હે વહ કહતે હૈ—જિસકે અપૂર્વકરણ ઓર અનિવૃત્તિકરણ, ઇન દો  
વિશુદ્ધ પરિણામોં સે વિશિષ્ટ શક્તિકા વિકામ હુઆ હૈ એસા ભવ્ય જીવ  
વ્યવધાનરહિત અનિવૃત્તિકરણ કે ઉત્તર અન્તર્મુહૂર્ત-સમય મેં આગામી  
કાલમેં ઉદય આને યોગ્ય મિથ્યાત્વ દલિયોં કે દો ટુકડે-ભાગ કરતા હૈ।  
ઉસમેં એક ટુકડે કો અનિવૃત્તિકરણકે અન્તિમમયપર્યન્ત ઉદયાગત  
મિથ્યાત્વકે દલિયોં મેં પ્રક્ષિપ્ત કરના હૈ, ઓર દુસરે ભાગકો અનિવૃત્તિ-  
કરણ કે અવ્યવહિત ઉત્તરકાલીન અન્તર્મુહૂર્ત કી સમાપ્તિકે અનન્તર  
(અન્તરરહિત) કાલમેં ઉદય આને યોગ્ય મિથ્યાત્વ કે દલિયોં કે સાથ  
સંયુક્ત કરના હૈ । ઇસ તરહ અનિવૃત્તિકરણ કાલકે વ્યવધાનરહિત  
ઉત્તર કાલમેં પ્રથમ અન્તર્મુહૂર્તકાલ એક એસા કાલ હોના હૈ કિ જિસમેં  
મિથ્યાત્વ કર્મકા એક ભી દલિયા શેષ નહીં રહતા । ઇસ અન્તરકરણ  
પરિણામ કે દ્વારા ભવ્ય જીવ ઉસ અન્તર્મુહૂર્તકાલ મેં ઉદય યોગ્ય મિથ્યાત્વ  
કે દલિયોં કે પ્રથમ સ્થિતિરૂપ એક ભાગકો ઉસકે પૂર્વકાલવર્તી જો અ-

કરણનું કાર્ય છે, આ કાર્ય એના દ્વારા હવે જે પ્રકારથી કરે છે તે કહે છે—જેને  
અપૂર્વકરણ અને અનિવૃત્તિકરણ, આ જે વિશુદ્ધ પરિણામોંથી વિશિષ્ટ શક્તિનો  
વિકાસ થયો છે આવા ભવ્ય હવે વ્યવધાનરહિત અનિવૃત્તિકરણની પછી અન્તર્મુહૂર્ત  
સમયમાં આગામી કાળમાં ઉદય આવવા યોગ્ય મિથ્યાત્વના દલિયોના જે ટુકડા-ભાગ  
કરે છે, એમાં એક ટુકડાને અનિવૃત્તિકરણના અંતિમ સમયના અન્તમાં ઉદયાગત  
મિથ્યાત્વના દલિયોમાં પ્રક્ષિપ્ત કરે છે અને બીજા ભાગને અનિવૃત્તિકરણના અવ્ય-  
વહિત ઉત્તરકાલીન અન્તર્મુહૂર્તની સમાપ્તિના અનન્તર (અન્તરરહિત) કાળમાં ઉદય  
આવવા યોગ્ય મિથ્યાત્વના દલિયોની સાથે સંયુક્ત કરે છે. આ રીતે અનિવૃત્તિ-  
કરણકાળના વ્યવધાનરહિત ઉત્તર કાળમાં પ્રથમ અન્તર્મુહૂર્તકાળ એક એવો કાળ  
થાય છે કે જેમાં મિથ્યાત્વ કર્મનો એક પણ દલિયુ શેષ નથી રહેતું. આ અન્તર-  
કરણ-પરિણામદ્વારા ભવ્ય હવે આ અન્તર્મુહૂર્તકાળમાં ઉદયયોગ્ય મિથ્યાત્વના  
દલિયોના પ્રથમ સ્થિતિરૂપ એક ભાગને એનો પૂર્વકાળવર્તી જે અનિવૃત્તિકરણનો

સ્યૈકભાગં પ્રથમસ્થિતિરૂપં તત્પૂર્વકાલવર્ત્યનિવૃત્તિકરણસ્ય ચરમભાગે ઉદયમાનમિથ્યા-  
ત્વદલિકૈઃ સહ સંયોજ્ય સ્વોદયકાળાત્ પ્રાગેવોદયં પ્રાપયતિ, તેન તસ્ય મિથ્યાત્વ-  
દલિકસ્ય સ્વોદયકાલે ઉદયં પ્રતિરુણદ્વિ । દ્વિતીયભાગસ્યાપિ દ્વિતીયસ્થિતિનામ્નસ્ત-  
સ્માદન્તર્મુહૂર્તાદવ્યવહિતોત્તરકાલે ઉદેપ્યમાણતયા સ્વોદયકાલે ઉદયં પ્રતિરોધયતિ;  
તદેવમનિવૃત્તિકરણાનન્તરોદયયોગ્યદલિકાનાં વ્યવધાનકરણાદન્તરકરણમિત્યુચ્યતે ।

નિવૃત્તિકરણ કા અન્તિમ ભાગ હૈં ઉસમેં ઉદયમાન મિથ્યાત્વ કે દલિયોં  
કે સાથ સંયુક્ત કરકે ઉસે અપને નિજ ઉદયકાલસે પહિલે હી ઉદયમેં લે  
આના હૈં, હમ સે ચહ મવ્ય જીવ ઉસ મિથ્યાત્વ કે દલિયે કે ઉદય કો  
ઉસકે અપને ઉદયકાલમેં રોક દેતા હૈં । તથા દૂસરી સ્થિતિરૂપ મિથ્યા-  
ત્વકા જો દ્વિતીય ભાગ હૈં, જો ઉસ અન્તર્મુહૂર્ત સે વ્યવધાનરહિત ઉત્તર  
કાલમેં ઉદયમેં આને યોગ્ય હૈં; ઉસકે ઉદય કો ઉસકે અપને ઉદયકાલ  
મેં રોક દેતા હૈં । હમ પ્રકાર અનિવૃત્તિકરણ કે અનન્તર ઉદયયોગ્ય  
મિથ્યાત્વ કે દલિયોં કે ઉદયમેં વ્યવધાન કરનેવાલા હોને સે ચહ ‘અ-  
ન્તરકરણ’ કહલાતા હૈં । ચહ કરણ મિથ્યાત્વકે દલિયોં કો અગલે ઔર  
પિછલે ભાગમેં મિલા દેતા હૈં । અનિવૃત્તિકરણ કા અંતિમ સમય પૂર્ણ  
હોને પર અન્તર્મુહૂર્ત તક મિથ્યાત્વકે દલિયોંકા કિસી ભી તરહ સે ઉદય  
નહીં હો સકતા । ઉસ સમય જિન મિથ્યાત્વકે દલિયોંકા ઉદય સંભવ  
થા, ઉનમેંસે કિતનેક દલિયોંમેં અપને ઉદયકાલ સે પહિલે હી ઉદયમેં  
આને કી યોગ્યતા આતી હૈં, ઔર કિતનેક દલિયોંમેં અપને ઉદયકાલસે

અંતિમ ભાગ છે તેમાં ઉદયમાન મિથ્યાત્વના દલિયોની સાથે સંયુક્ત કરીને તેને  
પોતાના નિજ ઉદયકાળથી પહેલા જ ઉદયમાં લઈ આવે છે, આ કારણે તે ભવ્ય જીવ  
તે મિથ્યાત્વના દલિયાના ઉદયને તેના પોતાના ઉદયકાળમાં રોકી દે છે, અને બીજી  
સ્થિતિરૂપ મિથ્યાત્વનો જે બીજો ભાગ છે જે તે અન્તર્મુહૂર્તથી વ્યવધાનરહિત ઉત્તર  
કાળમાં ઉદયમાં આવવા યોગ્ય છે તેના ઉદયને તેના પોતાના ઉદયકાળમાં રોકી દે છે.  
આ પ્રકારે અનિવૃત્તિકરણના અનન્તર ઉદયયોગ્ય મિથ્યાત્વના દલિયોના ઉદયમાં  
વ્યવધાન કરવાવાળા હોવાથી આ ‘અન્તરકરણ’ કહેવાય છે

આ કરણ મિથ્યાત્વના દલિયોને આગળ અને પાછળના ભાગમાં જોડી આવે  
છે, અને અનિવૃત્તિકરણનો અંતિમ સમય પૂર્ણ થતાં તેની પછી અંતર્મુહૂર્ત સુધી  
મિથ્યાત્વના દલિયોનો કોઈ પણ પ્રકારથી ઉદય થતો નથી. તે જે મિથ્યાત્વના  
દલિયોનો ઉદય સંભવ હતો, તેમાંથી કેટલાક દલિયોમાં પોતાના ઉદયકાળના  
પહેલાં જ ઉદયમાં આવવાની યોગ્યતા આવે છે, અને કેટલાક દલિયોમાં પોતાના

અનિવૃત્તિકરણાન્તિમસમયે વ્યતીતે સતિ યાવદન્તર્મુદૂર્ત કથમપિ મિથ્યાત્વદલિકાનામુદયો ન ભવતિ તદાનીં યેપાં મિથ્યાત્વદલિકાનામુદયસંભવસ્તેષુ કેષાંચિદ્ દલિકાનાં તત્પૂર્વકાલે, કેષાંચિત્ તત્પશ્ચાત્કાલેઽન્તરકરણેનોદયાર્હતા સંપાદ્યતે । અનિવૃત્તિકરણસ્ય ચરમસમયપર્યન્તં મિથ્યાત્વદલિકાનામુદયસદ્ભાવેન તાવત્કાલપર્યન્તં જીવો મિથ્યાત્વી વર્તતે, પરં ત્વનિવૃત્તિકરણકાલે વ્યતીતે સતિ સપદિ જીવેનોપશમિકસમ્યક્ત્વં પ્રાપ્યતે, તદાનીં મિથ્યાત્વમોહનીયકર્મણો વિપાકતઃ પ્રદેશતશ્ચ સર્વથોદયાભાવાત્, અત એવ જીવસ્ય સ્વાભાવિકઃ સમ્યક્ત્વપરિણામઃ પ્રકટીભવતિ । इदं च सम्यक्त्वमौपशमिकमित्युच्यते । उक्तञ्च—

“ જા ગંઠી તા પઢમં, ગંઠિં સમઙ્છઓ ભવે વીયં ।

અણિયટ્ટીકરણં પુણ, સમ્મત્તપુરક્કલ્હે જીવે ” ॥ ૧ ॥

છાયા—યાવદ્ગ્રન્થિસ્તાવત્પ્રથમં (કરણં) ગ્રન્થિ સમતિક્રામતો ( મિન્દાનસ્ય ) ભવેદ્ દ્વિતીયમ્ । અનિવૃત્તિકરણં પુનઃ સમ્યક્ત્વપુરસ્કૃતે જીવે (ભવતિ) ॥ ૧ ॥ ઇતિ ।

પીછે ઉદયમેં આલેકી યોગ્યતા આતી હૈ । અનિવૃત્તિકરણ કે ચરમ સમય પર્યન્ત મિથ્યાત્વ કે દલિયોં કા ઉદય હોનેસે ઉતને સમય તક જીવ મિથ્યાત્વી રહતા હૈ, પરન્તુ જ્યોંહી અનિવૃત્તિકરણ કા કાલ સમાપ્ત હો જાના હૈ ત્યોં હી જીવ ઇદિતિ ઔપશમિક-સમ્યક્ત્વ કો પ્રાપ્ત કર લેતા હૈ । ઇસ સમય મિથ્યાત્વમોહનીય કર્મ કા ન તો વિપાકોદય હી રહતા હૈ ઔર ન પ્રદેશોદય હી । સર્વપ્રકાર સે ઉસકે ઉદય કા ઇસ સમય અભાવ રહતા હૈ । ઇસી લિયે જીવ કા નૈસર્ગિક ઔપશમિકસમ્યક્ત્વ-રૂપ પરિણામ ઉદ્ભૂત ( પ્રગટ ) હો જાના હૈ । કહા ભી હૈ—

“ જા ગંઠી તા પઢમં, ગંઠિં સમઙ્છઓ ભવે વીયં ।

અણિયટ્ટી કરણં પુણ, સમ્મત્તપુરક્કલ્હે જીવે ” ॥ ૧ ॥

ગ્રન્થિદેશ તક જીવકો પહુંચા દેના યહ યથાપ્રવૃત્તિકરણ (પ્રથમ

ઉદયકાળની પછી ઉદયમાં આવવાની યોગ્યતા આવે છે. અનિવૃત્તિકરણના ચરમ સમયના અંતિમભાગમાં મિથ્યાત્વના દલિયોનો ઉદય હોવાથી એટલા સમય સુધી જ મિથ્યાત્વી રહે છે, પરંતુ જ્યારે અનિવૃત્તિકરણનો કાળ સમાપ્ત થઈ જાય છે ત્યારે જ જીવ ઇદિતિ ઔપશમિક સમ્યક્ત્વને પ્રાપ્ત કરી લે છે. આ સમયે મિથ્યાત્વમોહનીય કર્મના નથી વિપાકોદય જ રહેતા અગર નથી પ્રદેશોદય જ. સર્વ પ્રકારથી તેના ઉદયનો આ વળત અભાવ રહે છે તેથી જીવનું નૈસર્ગિક ઔપશમિકસમ્યક્ત્વરૂપ પરિણામ પ્રગટ થઈ જાય છે. કહ્યું છે:—

“ જા ગંઠી તા પઢમં, ગંઠિં સમઙ્છઓ ભવે વીયં ।

અણિયટ્ટીકરણં પુણ, સમ્મત્તપુરક્કલ્હે જીવે ” ॥ ૧ ॥

અન્યત્ત્વ—

“કાઝળ ગંઠિભેયં, સહસંમદ્યાણ પાણિણો કોઢ્ઠ ।

પરવાગરણા અન્ને, લહંતિ સમ્મત્તવરરયણં ” ॥ ૨ ॥

સમ્યક્ત્વાધિકારી જીવો દ્વિવિધઃ—(૧) મન્દવિશુદ્ધિપરિણામી, (૨) તીવ્ર-વિશુદ્ધિપરિણામી ચેતિ । તત્ર—

(૧) મન્દવિશુદ્ધિપરિણામી ભવ્યોઽપૂર્વકરણમારૂઠો ગ્રન્થિભેદં વિધાયાઽપિ તીવ્રાધ્યવસાયામાવાત્ર મિથ્યાત્વં ત્રિપુજ્જીકર્તુ શક્નોતિ । તતોઽનિવૃત્તિકરણં પ્રાપ્યા-  
કરણ ) કા, ઔર ઉમ્મકા ભેદન કરના-અપૂર્વકરણ ( દ્વિતીય કરણ ) કા,  
ઔર સમ્યક્ત્વકે સન્મુખ જીવકો કર દેના યહ અનિવૃત્તિકરણ ( તૃતીય  
કરણ ) કા કાયે હૈ ॥ ૧ ॥

ફિર મી—

“કાઝળ ગંઠિભેયં, સહસંમદ્યાણ પાણિણો કેઢ્ઠ ।

પરવાગરણા અન્ને, લહંતિ સમ્મત્તવરરયણં ” ॥ ૨ ॥

ગ્રન્થિભેદ કરકે કિતનેક પ્રાણી નિસર્ગ-સ્વભાવ-જાતિસ્મરણ આદિ  
સે સમ્યક્ત્વ કો પ્રાપ્ત કરતે હૈં ઔર કિતનેક પરકે ઉપદેશસે પાતે હૈં । ૨ ।

સમ્યગ્દષ્ટિ ( સમ્યગ્દર્શનસહિત જીવ ) દો પ્રકાર કૈ હોતે હૈં—  
(૧) મન્દવિશુદ્ધિપરિણામવાલે ઔર (૨) તીવ્રવિશુદ્ધિપરિણામવાલે ।

હનમૈં સે—(૧) મન્દવિશુદ્ધિપરિણામવાલા ભવ્ય જીવ અપૂર્વકરણ પરિ-  
ણામ કૈ અવલમ્બન સે ગ્રન્થિ કા ભેદન કરકે મી તીવ્ર અધ્યવસાય કૈ

ગ્રન્થિદેશ સુધી જીવને પહોંચાડવો એ યથાપ્રવૃત્તિકરણ ( પ્રથમ કરણ ) નું  
અને એનું ભેદન કરવું અપૂર્વકરણ ( બીજા કરણ ) નું, અને સમ્યક્ત્વની સન્મુખ  
જીવને કરવો, એ અનિવૃત્તિકરણ ( ત્રીજા કરણ ) નું કાર્ય છે ॥ ૧ ॥ વળી:—

“કાઝળ ગંઠિભેયં, સહસંમદ્યાણ પાણિણો કેઢ્ઠ ।

પરવાગરણા અન્ને, લહંતિ સમ્મત્તવરરયણં ” ॥ ૨ ॥

ગ્રન્થિભેદ કરીને કેટલાંક પ્રાણી નિસર્ગ-સ્વભાવ-જાતિસ્મરણ આદિથી  
સમ્યક્ત્વને પ્રાપ્ત કરે છે, અને કેટલાંક બીજાના ઉપદેશથી મેળવે છે ॥ ૨ ॥

સમ્યગ્દષ્ટિ ( સમ્યગ્દર્શનસહિત જીવ ) બે પ્રકારના હોય છે. (૧) મન્દ  
વિશુદ્ધિપરિણામવાળાં અને (૨) તીવ્રવિશુદ્ધિપરિણામવાળાં.

આમાંથી (૧) મન્દવિશુદ્ધિપરિણામવાળાં ભવ્ય જીવ અપૂર્વકરણ પરિણામના  
અવલંબનથી ગ્રન્થિનું ભેદન કરીને પણ તીવ્ર અધ્યવસાયનો અભાવ હોવાથી

નત્તરકરણં કૃત્વાऽનુપદોક્તરીત્યા પ્રથમમૌપશમિકસમ્યક્ત્વં લભતે । અયમૌપશમિકસમ્યક્ત્વમન્તર્મુહૂર્તમનુભૂય તદનન્તરમવગ્યં સર્વપ્રતિપાતેન પુનર્મિથ્યાત્વી ભવતિ ।

(૨) યસ્તીત્રવિશુદ્ધિપરિણામી ભવતિ, સ સ્વલ્પપૂર્વકરણમારુઢો મિથ્યાત્વં ત્રિપુઙ્ગીકૃત્ય તદનન્તરમનિવૃત્તિકરણે પ્રવિષ્ટઃ સમ્યક્ત્વપુઙ્ગોદયાત્ પ્રથમતયા ક્ષાયોપશમિકં સમ્યક્ત્વમવાપ્નોતિ, પરન્તુ કૃતત્રિપુઙ્ગોઽયં પ્રથમતયૌપશમિકસમ્યક્ત્વં ન લભતે ।

ઔપશમિકસમ્યક્ત્વં દ્વિવિધમ્—ગ્રન્થિભેદજન્યમ્, ઉપશમશ્રેણિભાવિ ચેતિ । તત્ર પ્રથમં ગ્રન્થિભેદજન્યં મન્દવિશુદ્ધિપરિણામિનો જીવસ્ય ભવતિ, દ્વિતીયં તૂપશમ-

અભાવ હોનેસે મિથ્યાત્વકે ત્રીન પુંજ કરનેકી શક્તિ સે શૂન્ય રહતા હૈ, હસલિયે યહ અનિવૃત્તિકરણ કો પ્રાપ્ત હો કર અન્તરકરણ કરકે ઉપર્યુક્ત રીતિસે સર્વ પ્રથમ ઔપશમિક સમ્યક્ત્વ કો પ્રાપ્ત કરતા હૈ । ઔપશમિક સમ્યક્ત્વકી અન્તર્મુહૂર્તપરિમિત સ્થિતિકા અનુભવ કર પશ્ચાત્ ઉસકે પૂર્ણ હોતે હી અવશ્ય સર્વપ્રતિપાત સે વહ પુનઃ મિથ્યાત્વી હો જાતા હૈ ।

(૨) જો તીવ્રવિશુદ્ધિપરિણામી હોતા હૈ વહ અપૂર્વકરણ મેં રહ કર મિથ્યાત્વ કે ત્રીન પુંજ કરકે પશ્ચાત્ અનિવૃત્તિકરણ મેં પ્રવિષ્ટ હોકર સમ્યક્ત્વમોહનીયપુંજકે ઉદયસે સર્વપ્રથમ ક્ષાયોપશમિક સમ્યક્ત્વકા લાભ કરતા હૈ, ઉપશમ સમ્યક્ત્વકા નહીં ।

ઔપશમિક સમ્યક્ત્વકે દો ભેદ હૈં । (૧) ગ્રન્થિભેદજન્ય ઔર દૂસરા (૨) ઉપશમશ્રેણિભાવિ । હનમેં ગ્રન્થિભેદજન્ય ઉપશમસમ્યક્ત્વ, મન્દવિશુદ્ધિપરિણામવાલે જીવ કે હોતા હૈ । દૂસરા ઉપશમશ્રેણિપ્રાપ્ત જીવ

મિથ્યાત્વના ત્રણ પુંજ કરવાની શક્તિથી શૂન્ય રહે છે. તેથી આ અનિવૃત્તિકરણને પ્રાપ્ત કરીને અને અન્તરકરણ કરીને ઉપર બતાવેલી રીતિથી સર્વ પ્રથમ ઔપશમિક સમ્યક્ત્વને પ્રાપ્ત કરે છે. અન્તર્મુહૂર્તની ઔપશમિક સમ્યક્ત્વની સ્થિતિનો અનુભવ કરીને પછી તેના પૂર્ણ થતાં જ અવશ્ય સર્વપ્રતિપાતથી તે પુનઃ મિથ્યાત્વી થઈ જાય છે.

જે (૨) તીવ્રવિશુદ્ધિપરિણામી હોય છે તે અપૂર્વકરણમાં રહીને મિથ્યાત્વના ત્રણ પુંજ કરીને પછી અનિવૃત્તિકરણમાં પ્રવિષ્ટ થઈને સમ્યક્ત્વમોહનીય પુંજના ઉદયથી સર્વ પ્રથમ ક્ષાયોપશમિક સમ્યક્ત્વનો લાભ કરે છે, ઉપશમ-સમ્યક્ત્વનો નહિ.

ઔપશમિક-સમ્યક્ત્વના બે ભેદ છે (૧) એક ગ્રન્થિભેદજન્ય અને બીજો (૨) ઉપશમશ્રેણિભાવી. આમાં ગ્રન્થિભેદજન્ય ઉપશમસમ્યક્ત્વ મન્દવિશુદ્ધિ-

શ્રેણિગતસ્ય । તત્રોપશમશ્રેણિગતઃ સમ્યક્ત્વી દેશપ્રતિપાતેન સર્વપ્રતિપાતેન વા પ્રતિ-  
પતતિ-મિથ્યાત્વમવાપ્નોતિ । અસ્મિન્ સમ્યક્ત્વે પ્રાપ્તે સતિ જીવસ્ય પદાર્થાનાં  
સ્ફુટતયા નિશ્ચઙ્કં પ્રતીતિર્જન્માન્ધસ્ય નેત્રલાભે સતીવ જાયતે । સદૌપધસેવનેન  
રોગે પ્રતિનિવૃત્તે વ્યાધિતેનેવ મિથ્યાત્વમહારોગેઽપગતે સત્યપૂર્વ આનન્દોઽનુભૂયતે  
જીવેન ।

ગ્રન્થિભેદજન્યમૌપશમિકસમ્યક્ત્વમનાદિમિથ્યાત્વિભવ્યાનાં ભવતિ । ઇદં ચ  
પ્રથમૌપશમસમ્યક્ત્વમિત્યપિ કથ્યતે । ઉપશમશ્રેણિમાવિન ઔપશમિકસમ્યક્ત્વસ્ય  
કો હોતા હૈ । ઉપશમશ્રેણિપ્રાપ્ત જીવ નિયમસે વહાં સે સર્વદેશકે પ્રતિપાત  
સે અથવા ઇકદેશકે પ્રતિપાત સે નીચે કે ગુણસ્થાનકો પ્રાપ્ત હો જાતા હૈ ।

જૈસે—જન્માન્ધકો નેત્રકે લાભ હોને પર પદાર્થોં કી પ્રતીતિ વિના  
કિસી સન્દેહ કે સ્ફુટરૂપસે હોને લગતી હૈ ઉસી પ્રકાર ઇસ સમ્યક્ત્વ  
કે પ્રાપ્ત હોને પર જીવાદિ પદાર્થોંકી પ્રતીતિ ખી વિના કિસી સન્દેહ કે  
સ્ફુટરૂપ સે જીવકો હોતી હૈ । તથા જિસ પ્રકાર નિર્દોષ ઔષધ કે  
સેવન સે રોગકે ચલે જાને પર રોગી પુરુષ અપૂર્વ આનન્દકા અનુભવ  
કરતા હૈ, ઉસી પ્રકાર મિથ્યાત્વ મહારોગકે નષ્ટ હોને પર ઇસ સમક્તિ  
વાલા જીવ ખી અપૂર્વ આનન્દકા અનુભવ કરતા હૈ ।

ગ્રન્થિભેદસે ઉત્પન્ન સમ્યક્ત્વ ( ઔપશમિક સમ્યક્ત્વ ) અનાદિ-  
મિથ્યાદૃષ્ટિભવ્યજીવોં કે હોતા હૈ । ઇસ સમ્યક્ત્વકા દૂસરા નામ પ્રથ-

પરિણામવાળા હોવને થાય છે. બીજું ઉપશમશ્રેણિપ્રાપ્ત હોવને થાય છે. ઉપશમ-  
શ્રેણિપ્રાપ્ત હોવ નિયમથી ત્યાંથી સર્વ દેશના પ્રતિપાતથી અથવા એક દેશના  
પ્રતિપાતથી નીચેના ગુણસ્થાનોમાં આવીને આખરે મિથ્યાત્વગુણસ્થાનને પ્રાપ્ત  
થઈ જાય છે.

જેવી રીતે જન્માન્ધને નેત્રનો લાભ થતાં જ પદાર્થોંની પ્રતીતિ કોઈ જાતના  
સંદેહ વિના સ્ફુટરૂપથી થવા માંડે છે, તે પ્રકારે આ સમ્યક્ત્વની પ્રાપ્તિ થતાં  
જ હોવાદિ પદાર્થોંની પ્રતીતિ પણ કોઈ જાતના સંદેહ વગર સ્ફુટરૂપથી હોવને  
થાય છે. તથા જે પ્રકારે નિર્દોષ ઔષધના સેવનથી રોગનો નાશ થતાં જ રોગી  
પુરુષ અપૂર્વ આનંદનો અનુભવ કરે છે તેવી રીતે મિથ્યાત્વ-મહારોગનો નાશ  
થતાં જ આ સમ્યક્ત્વવાળા હોવ પણ અપૂર્વ આનંદનો અનુભવ કરે છે.

ગ્રન્થિ-ભેદથી ઉત્પન્ન સમ્યક્ત્વ ( ઔપશમિક-સમ્યક્ત્વ ) અનાદિમિથ્યા-  
દૃષ્ટિ ભવ્ય હોવને થાય છે. આ સમ્યક્ત્વનું બીજું નામ પ્રથમોપશમ-સમ્યક્ત્વ



પ્રાપ્તિશ્ચતુર્થપञ्चમषष्ठसप्तमेषु कस्मिंश्चिद् गुणस्थाने भवितुमर्हति, परं तु अष्टमगुण-  
स्थाने तत्प्राप्तिरवश्यमेव भवति ।

મિથ્યાત્વં ત્રિપુञ્જીકૃત્ય સમ્યક્ત્વપુઞ્જોદયાત્ ક્ષાયોપશમિકં સમ્યક્ત્વમવાપ્નોતિ-  
इति यदुक्तं, तत्रायं क्रमः—केवलिप्रभृतीनां वचः श्रुत्वा, जातिस्मरणादिना वा  
सम्यक्त्वस्वरूपं ज्ञात्वाऽपूर्वकरणे वर्धमानपरिणामो दर्शनमोहनीयापरनामकमिथ्या-  
त्वपुद्गलान् युगपत् त्रिधा करोति, सम्यक्त्वमोहनीय—मिश्रमोहनीय—मिथ्यात्वमोह-  
नीयभेदात् । तत्र तावत् सम्यक्त्वमोहनीयमुच्यते—

મોહમસમ્યક્ત્વ મી હૈ । ઉપશમશ્રેણિગત જીવોંકો જો સમકિત હોતા  
હૈ વહ ઉપશમશ્રેણિભાવિ ઔપશમિકસમ્યક્ત્વ હૈ । યહ સમ્યક્ત્વ ચૌથે,  
પાંચવેં, છઠવેં ઔર સાતવેં ગુણસ્થાનોં મેં સે કિસી એક ગુણસ્થાનમેં હો  
સકતા હૈ, પરંતુ આઠવેં ગુણસ્થાનમેં તો ઉસકી પ્રાપ્તિ જીવકો અવશ્ય  
હી હો જાતી હૈ ।

મિથ્યાત્વકે ત્રીન પુંજ કરને કે વાદ જીવ ઉન ત્રીન પુંજોં મેં સે એક  
સમ્યક્ત્વમોહનીયપુંજકે ઉદયસે ક્ષાયોપશમિક સમ્યક્ત્વકી પ્રાપ્તિ કિયા  
કરતા હૈ । યહ જો વાત ઉપર કહી ગઈ હૈ વહાં પર ઇસ પ્રકારકા ક્રમ સમ-  
જ્ઞના ચાહિયે । કેવલી વગૈરહ કે વચન સુન કર અથવા જાતિસ્મરણાદિકસે  
સમ્યક્ત્વકે સ્વરૂપકો જાન કર અપૂર્વકરણમેં જિસકા પરિણામ વૃદ્ધિગત હો  
રહા હૈ, એસા જીવ દર્શનમોહનીય કર્મ કો—જિસકા દૂસરા નામ મિથ્યાત્વ  
પુદ્ગલ હૈ ઉસકો—એક સાથ ત્રીન ભેદોં મેં, અર્થાત્—મિથ્યાત્વમોહનીય,  
મિશ્રમોહનીય ઔર સમ્યક્ત્વમોહનીયકે રૂપમેં પરિણમાતા હૈ ।

પણ છે. ઉપશમશ્રેણિગત જીવોને જે સમ્યક્ત્વ થાય છે તે ઉપશમશ્રેણિભાવી  
ઔપશમિક—સમ્યક્ત્વ છે. આ સમ્યક્ત્વ ત્રીથા, પાંચમા, છઠ્ઠા અને સાતમા ગુણ  
સ્થાનોમાંથી કોઈ એક ગુણસ્થાનમાં થઈ શકે છે, પરંતુ આઠમા ગુણસ્થાનમાં તો  
તેની પ્રાપ્તિ જીવને અવશ્ય જ થઈ જાય છે.

મિથ્યાત્વના ત્રણ પુંજ કર્યા બાદ જીવ આ ત્રણ પુંજોમાંથી એક સમ્યક્ત્વ-  
મોહનીયપુંજના ઉદયથી ક્ષાયોપશમિક સમ્યક્ત્વની પ્રાપ્તિ કર્યા કરે છે. આ જે વાત  
ઉપર કહેવાઈ ગઈ છે ત્યાં આ પ્રકારનો ક્રમ સમજવો જોઈએ—કેવળી વિગેરેનું  
વચન સુણીને અથવા જાતિસ્મરણાદિકથી સમ્યક્ત્વના સ્વરૂપને જાણીને અપૂર્વકરણમાં  
જેનો પરિણામ વૃદ્ધિગત થઈ રહ્યો છે, એવો જીવ દર્શનમોહનીય કર્મને, જેનું  
બીજું નામ મિથ્યાત્વપુદ્ગલ છે તેને એકસાથ ત્રણ ભેદોમાં, અર્થાત્ મિથ્યાત્વ-  
મોહનીય, મિશ્રમોહનીય અને સમ્યક્ત્વમોહનીયના રૂપમાં પરિણમાવે છે.

## સમ્યક્ત્વમોહનીયસ્ય સ્વરૂપમ્—

યસ્ય કર્મણઃ પ્રભાવાત્ જીવાજીવાદિનવતત્ત્વેષુ શ્રદ્ધા સમુત્પદ્યતે તત્ સમ્યક્ત્વ-મોહનીયમ્ । યથા—ઉપનેત્રં નેત્રાવરકં સદપિ દૃષ્ટિ ન પ્રતિરુણદ્ધિ, તથૈવ સમ્ય-ક્ત્વમોહનીયમાવરણસ્વરૂપમપિ સદ્ વિશુદ્ધત્વાત્ તત્ત્વાત્ શ્રદ્ધાનં નહિ વિઘાતયતિ, તસ્માત્ સમ્યક્ત્વમોહનીયકર્મત એવ નવતત્ત્વેષુ શ્રદ્ધા ભવતીતિ સિદ્ધમ્ ।

અપૂર્વકરણાધ્યવસાયેન યસ્ય મિથ્યાત્વપુદ્ગલપુન્જસ્ય મિથ્યાત્વસ્વભાવોઽપનીતઃ સ શોધિતમિથ્યાત્વપુદ્ગલપુન્જઃ, સ એવ તત્ત્વાર્થશ્રદ્ધાનરૂપસ્ય જીવપરિણામસ્યાના-વરકત્વાદુપચારતઃ સમ્યક્ત્વમુચ્યતે ।

સમ્યક્ત્વમોહનીયકા સ્વરૂપ દ્વસ પ્રકાર હૈ—જિસ કર્મકે પ્રભાવ સે જીવાદિક નૌ તત્ત્વોં મેં જીવકો શ્રદ્ધા ઉત્પન્ન હોતી હૈ ઉસકા નામ સમ્ય-ક્ત્વમોહનીય હૈ । જિસ પ્રકાર ચક્ષુમા નેત્રોંકા પ્રતિબન્ધક હોતા હુઆ ભી પદાર્થોં કે દેખને મેં દૃષ્ટિકા વિઘાત નહીં કરતા, ઉસી પ્રકાર યહ સમ્યક્ત્વ-મોહનીય કર્મ યદ્યપિ મિથ્યાત્વકા અંશ હોને સે આવરણ સ્વરૂપ હૈ તો ભી ઉસકા શોધિત અંશ હોને કી વજહ સે વિશુદ્ધ હૈ, ઇસલિયે વહ તત્ત્વ-શ્રદ્ધાન કા વિઘાતક નહીં હોતા હૈ । જીવ કો નવ તત્ત્વોં મેં શ્રદ્ધા ઇસી સમ્યક્ત્વમોહનીય કે દ્વારા ઉત્પન્ન હોતી હૈ । યદ્યપિ યહ મિથ્યાત્વ કા હી અંશ હૈ તો ભી શ્રદ્ધા કા વિઘાતક નહીં હૈ, કારણ કિ અપૂર્વકરણરૂપ પરિણામ દ્વસમેં સે શ્રદ્ધાવિઘાતક અંશ કો, કિ જિસકા દૂસરા નામ મિથ્યાત્વ સ્વભાવ હૈ; દૂર ફર દેતા હૈ । યહ શોધિત મિથ્યાત્વપુદ્ગલપુંજ

સમ્યક્ત્વ મોહનીયનું સ્વરૂપ આ પ્રકારે છે—

સમ્યક્ત્વમોહનીયનું સ્વરૂપ—જે કર્મના પ્રભાવથી જીવાદિક નવ તત્ત્વોમાં જીવને શ્રદ્ધા ઉત્પન્ન થાય છે તેનું નામ સમ્યક્ત્વમોહનીય છે. જેવી રીતે ચક્ષુમા નેત્રોના પ્રતિબંધક હોવા છતાં પણ પદાર્થોના દેખવામાં દૃષ્ટિનો વિઘાત નથી કરતાં તેમ આ સમ્યક્ત્વમોહનીય કર્મ જો કે મિથ્યાત્વનો અંશ હોવાથી આવરણસ્વરૂપ છે તો પણ તેના શોધિત અંશ હોવાથી વિશુદ્ધ છે, તેથી તે તત્ત્વ-શ્રદ્ધાનનો વિઘાતક નથી થતું. જીવને નવતત્ત્વોમાં શ્રદ્ધા આ સમ્યક્ત્વ-મોહનીય દ્વારા ઉત્પન્ન થાય છે, જો કે આ મિથ્યાત્વનો જ અંશ છે તો પણ શ્રદ્ધાનો વિઘાતક નથી. કારણ કે અપૂર્વકરણરૂપ પરિણામ આમાંથી શ્રદ્ધાવિઘાતક અંશોને જેનું બીજું નામ મિથ્યાત્વ-સ્વભાવ છે તેને દૂર કરે છે. આ શોધિત મિથ્યાત્વપુદ્ગલપુંજ

યથા—સતુષકોદ્રવા ભક્ષણેન માદકા ભવન્તિ, ત એવ યદ્યપનીતતુષાસ્તક્રાદિના શોધિતાસ્તર્હિ મદં ન જનયન્તિ, તથા મિથ્યાત્વમોહનીયપુદ્ગલાઃ જીવં હિતાહિત-જ્ઞાનરહિતં કુર્વન્તિ । તત્ર દ્વિસ્થાનકાદિશ્વતુઃસ્થાનકાન્તઃ સર્વઘાતી રસસ્તિષ્ઠતિ । યદિ સ્વકીયવિશુદ્ધપરિણામવલાત્તેષાં સર્વઘાતિરૂપં રસં ક્ષપયતિ, તદા સ્વાભાવિકસ્યૈકસ્થાનકરસસ્ય સદ્ભાવે મિથ્યાત્વમોહનીયપુદ્ગલા એવ સમ્યક્ત્વમોહનીયા ઉચ્યન્તે । વિશોધિતત્વાદિદં કર્મ તત્ત્વરુચિરૂપસમ્યક્ત્વં ન પ્રતિરોધયતિ, પરં ત્વે-તત્કર્મોદ્યાદાત્મસ્વભાવરૂપમૌપશમિકસમ્યક્ત્વં ક્ષાયિકસમ્યક્ત્વં ચ ન પ્રાદુર્ભવતિ, સૂક્ષ્મતત્ત્વસમાલોચનાયાં શઙ્કાશ્ચોત્તિષ્ઠન્તિ, યતઃ સમ્યક્ત્વે માલિન્યમુપજાયતે । અસ્માદેવ દોષાદેતત્ કર્મ સમ્યક્ત્વમોહનીયં વ્યપદિશ્યતે ।

હૈ । યહી શોધિત મિથ્યાત્વપુદ્ગલપુષ્પ તત્ત્વાર્થશ્રદ્ધાનરૂપ જીવકે પરિણામ કા અનાવારક હોને કી વજહ્ સે કારણ મેં કાર્યકે ઉપચાર સે સમ્યક્ત્વ કહા ગયા હૈ ।

જૈસે—સતુષ (તુષયુક્ત) કોદ્રવ (અન્નવિશેષ) ખાને પર માદકતા ઉત્પન્ન કરતે હૈ; પરન્તુ જવ વે હી કોદ્રવ નિસ્તુષ કર દિયે જાતે હૈં ઓર તત્ર (છાશ) વગૈરહ કે દ્વારા ડનકા માદક અંશ દૂર કર દિયા જાતા હૈ તવ ડનમેં સે માદકશક્તિકા અભાવ હો જાતા હૈ ઓર ખાને પર ફિર વે માદકતા પૈદા નહીં કરતે । ઠીક ઇસી તરહ સે યહ મિથ્યાત્વમોહનીય જવ તક અશોધિત અવસ્થા મેં રહતા હૈ તમી તક જીવ કો હિતાહિત-વિવેકસે શૂન્ય કરતા રહતા હૈ; ક્યોં કિ ઇસમેં દ્વિસ્થાન સે લેકર ચતુઃ-સ્થાન તક વાલા સર્વઘાતી રસ રહતા હૈ । પરન્તુ જ્યોં હી ઇસમેં સે સર્વ-ઘાતી રસ કા ક્ષય હો જાતા હૈ ત્યોં હી યહ શુદ્ધ અવસ્થાવાલા પુષ્પ કહ-

છે. આ જ શોધિત મિથ્યાત્વપુદ્ગલપુંજ તત્ત્વાર્થશ્રદ્ધાનરૂપ જીવના પરિણામનો અનાવારક હોવાથી કારણમાં કાર્યના ઉપચારથી સમ્યક્ત્વ કહેવાય છે.

જેમ સતુષ (તુષયુક્ત) કોદ્રવ (અન્નવિશેષ) ખાવાથી માદકતા ઉત્પન્ન કરે છે; પરન્તુ જ્યારે તે જ કોદ્રવ નિસ્તુષ કરી દેવામાં આવે છે અને તકે (છાશ) વિગેરે દ્વારા તેનો માદક અંશ દૂર કરવામાં આવે છે ત્યારે તેમાંથી માદક શક્તિનો અભાવ થઈ જાય છે, અને ખાવાથી ફરી તે માદકતા પેદા કરતું નથી. ઠીક આ પ્રકારે આ મિથ્યાત્વમોહનીય જ્યાં સુધી અશોધિત અવસ્થામાં રહે છે ત્યાં સુધી જીવને હિતાહિતવિવેકથી શૂન્ય કરતું રહે છે, કારણ કે આમાં દ્વિસ્થાનથી લઈને ત્રિસ્થાનવાળા સર્વઘાતી રસ રહે છે, પરંતુ જ્યારે જ તેમાંથી સર્વઘાતી રસનો ક્ષય થઈ જાય છે. ત્યારે જ શુદ્ધ અવસ્થાવાળા પુંજ

लाने लगता है । मिथ्यात्वप्रकृति यह सर्वधातिप्रकृति है । इसमें बहुत भाग सर्वधातिरस है और शेष एक भाग देशधातिरस है । कर्मा में मन्द, तीव्र, तीव्रतर और तीव्रतम इस प्रकारकी चार शक्तिरूप रस रहता है । इनमेंसे इस मिथ्यात्व कर्ममें तीव्र, तीव्रतर और तीव्रतम ये तीन शक्तियां—जिन्हें सर्वधातिरस कहा गया है—हैं । यदि कोई भव्य जीव अपने विशुद्ध परिणामके बलसे इसमें से इन तीन शक्तिरूप सर्वधातिरसका क्षय कर देता है तो उसमें स्वभावतः एक स्थानक रस का ही सद्भाव रहता है । इस परिस्थिति में मिथ्यात्वमोहनीय का नामान्तर ही सम्यक्त्वमोहनीय हो जाता है । शुद्ध होनेसे यह कर्म यद्यपि तत्त्व-रुचिरूप सम्यक्त्व का प्रतिरोधक नहीं होता है तो भी इसके सद्भाव में एक तो आत्मस्वरूप औपशमिकसम्यक्त्व, एवं क्षायिकसम्यक्त्व का प्रादुर्भाव नहीं होता, दूसरे इसके अस्तित्व में सूक्ष्म तत्त्व की गवेषणा करते समय शङ्काओंका भी उत्थान हो जाया करता है; जिससे समकित में मलिनता आ जाती है । इसी दोषकी वजहसे इस कर्मकी “सम्यक्त्वमोहनीय” यह संज्ञा पड़ी है ।

કહેવાવામાં આવે છે. મિથ્યાત્વપ્રકૃતિ એ સર્વધાતિ પ્રકૃતિ છે. એમાં ઘણો ભાગ સર્વધાતિ રસ છે અને શેષ એક ભાગ દેશધાતિ રસ છે. કર્મોમાં મંદ, તીવ્ર, તીવ્ર-તર અને તીવ્રતમ, આ પ્રકારની ચાર શક્તિરૂપ રસ રહે છે. એનાંથી આ મિથ્યાત્વ કર્મમાં તીવ્ર, તીવ્રતર અને તીવ્રતમ, એ ત્રણ શક્તિઓ—જેને સર્વ-ધાતિ રસ કહેવામાં આવે છે—રહે છે. જો કોઈ ભવ્ય જીવ પોતાના વિશુદ્ધ પરિણામના બળથી એમાંથી આ ત્રણ શક્તિરૂપ સર્વધાતિ રસનો ક્ષય કરી દે છે તો તેમાં સ્વભાવતઃ એક સ્થાનક રસનો જ સદ્ભાવ રહે છે. આ પરિસ્થિતિમાં મિથ્યાત્વમોહનીયનું નામાન્તર જ સમ્યક્ત્વમોહનીય થઈ જાય છે. શુદ્ધ હોવાથી તે કર્મ જો કે તત્ત્વરૂચિરૂપ સમ્યક્ત્વનું પ્રતિરોધક નથી થતું તો પણ એના સદ્ભાવમાં એક તો આત્મસ્વભાવરૂપ ઔપશમિકસમ્યક્ત્વ અને ક્ષાયિકસમ્યક્ત્વનો પ્રાદુર્ભાવ નથી થતો, બીજું એના અસ્તિત્વમાં સૂક્ષ્મ તત્ત્વોની ગવેષણા કરતી સમય શંકાઓની પણ ઉત્પત્તિ થઈ જાય છે; જેથી સમ્યક્ત્વમાં મલિનતા આવી જાય છે. આ દોષના કારણથી આ કર્મની “સમ્યક્ત્વમોહનીય” એ સંજ્ઞા પડી છે.

## ॥ મિશ્રમોહનીયમ્ ॥

येषां केचिदंशाः सतुषाः केचिद् विशुद्धास्तैः कोद्रवैः साम्यं मिश्रमोहनीय-  
पुद्गलानाम् । एतत्कर्मोदयात्तत्त्वरुचिर्नोत्पद्यते, न चातत्त्वरुचिरपि । मिश्रमोहनीय-  
कर्मपुद्गलेषु द्विस्थानको रसः सर्वधाती विद्यते ।

## ॥ मिथ्यात्वमोहनीयम् ॥

सतुषकोद्रवसमा मिथ्यात्वमोहनीयपुद्गलाः, तस्मादेतत्कर्मोदयाज्जीवो हितम-  
हितरूपेण जानाति, हितरूपेण चाहितमपि । मिथ्यात्वमोहनीयकर्मपुद्गलेषु चतुः-  
स्थानकस्त्रिस्थानको द्विस्थानकश्च रसो भवति ।

### મિશ્રમોહનીય—

જિન કોદ્રવોં કા કુલેક અંશ સતુષ હૈં ઓર કુલેક અંશ નિસ્તુષ હૈં, ડન કોદ્રવોં કૈ સાથ મિશ્રમોહનીય કૈ પુદ્ગલોં કી સમાનતા જાનના ચા-  
હિયૈ । ઇસ કર્મ કૈ ઉદયસૈ ન તો તત્ત્વરુચિરૂપ સમ્યક્ત્વ ઉત્પન્ન હોતા હૈ, ઓર ન અતત્ત્વરુચિ મિથ્યાત્વ હી । ઇસ કર્મ કૈ પુદ્ગલોં મૈં સર્વધાતિરસ કા દ્વિતીય ( તીવ્રતર ) અંશ હૈ ।

### મિથ્યાત્વમોહનીય—

સતુષ કોદ્રવોં કૈ સ્થાનાપન્ન મિથ્યાત્વમોહનીય કૈ પુદ્ગલ હૈં । ઇસ કર્મ કૈ ઉદય સૈ જીવ અહિતકારી પદાર્થોં કો હિતકારી ઓર હિતકારી પદાર્થોં કો અહિતકારી માનતા રહતા હૈ । ઇસ કર્મ કૈ પુદ્ગલોં મૈં ચતુઃ સ્થાનક, ત્રિસ્થાનક ઓર દ્વિસ્થાનક રસ રહતા હૈ ।

### મિશ્રમોહનીય —

જે કોદ્રવોનો કોઈ કોઈ અંશ સતુષ છે અને કોઈ કોઈ અંશ નિસ્તુષ છે, એ કોદ્રવોની સાથે મિશ્રમોહનીયના પુદ્ગલોની સમાનતા સમજવી જોઈએ. આ કર્મના ઉદયથી નથી તત્ત્વરૂચિરૂપ સમ્યક્ત્વ ઉત્પન્ન થતું અને નથી અતત્ત્વરૂચિરૂપ મિથ્યાત્વજ. આ કર્મના પુદ્ગલોમાં સર્વધાતિ રસનો બીજો (તીવ્રતર) અંશ છે.

### મિથ્યાત્વમોહનીય —

સતુષ કોદ્રવોના સ્થાનાપન્ન મિથ્યાત્વમોહનીયના પુદ્ગલો છે. આ કર્મના ઉદયથી જીવ અહિતકારી પદાર્થોને હિતકારી, અને હિતકારી પદાર્થોને અહિતકારી માનતો રહે છે. આ કર્મના પુદ્ગલોમાં ચતુઃસ્થાનક, ત્રિસ્થાનક, અને દ્વિ-સ્થાનક રસ રહે છે.

एकस्य चतुर्थांशश्चतुःस्थानकः, तृतीयांशस्त्रिस्थानकः, द्वितीयांशो द्विस्थानक उच्यते । यश्च रसः स्वाभाविकः स एकस्थानक इति बोध्यम् । शुभाशुभफलप्रदा कर्मणां तीव्रतमा शक्तिश्चतुःस्थानकरसः, तथा तीव्रतरा शक्तिस्त्रिस्थानकरसः, तीव्रा शक्तिर्द्विस्थानकरसोऽवगन्तव्यः । मन्दशक्तिस्त्वेकस्थानको रस इत्यन्यत्र विस्तरः ।

अथैतेषां त्रिविधानां पुद्गलानां किं परस्परं संक्रमो भवति, किं वा न ? उच्यते- भवतीति । प्रवर्धमानपरिणामः सम्यग्दृष्टिः मिथ्यात्वदलिकात् पुद्गलानाकृष्य मिश्रे सम्यक्त्वे च संक्रमयति । मिश्रपुद्गलानां संक्रमो द्वयोर्भवति-सम्यक्त्वे

एक रस का चतुर्थांश चतुःस्थानक, तृतीय अंश त्रिस्थानक, और द्वितीय अंश द्विस्थानक होता है । अर्थात् शुभ और अशुभरूप अपने-एक फल देनेवाले प्रत्येक कर्मों के तीव्रतम अंश की चतुःस्थानक, तीव्रतर अंश की त्रिस्थानक और द्वितीय तीव्र अंश की द्विस्थानक एवं प्रथम मन्द अंश की एक स्थानक संज्ञा है । प्रथम अंश स्वाभाविक है । इसीलिये उसे एक स्थानक कहा है । इस विषयका खुलासा अन्य शास्त्रों में विस्तार से किया गया है ।

प्रश्न—इन तीन प्रकार के पुद्गलों का परस्पर में संक्रमण होता है या नहीं ?

उत्तर—हां, होता है । जिसका अध्यवसाय अहर्निश वृद्धिगत हो रहा है ऐसा सम्यक्त्वी जीव मिथ्यात्वके दलिये से पुद्गलपुञ्जको खींच कर मिश्र और सम्यक्त्व प्रकृति के पुद्गलपुञ्जोंमें उन्हें संक्रमित करता है । मिश्रप्रकृति के पुद्गलोंका संक्रमण मिथ्यात्व और सम्यक्त्व, इन दोनों प्रकृतियों में होता है । प्रवर्धमानपरिणामवाला सम्यग्दृष्टि जीव

એક રસનો ચતુર્થાંશ ચતુઃસ્થાનક, તૃતીય અંશ ત્રિસ્થાનક, અને દ્વિતીય અંશ દ્વિસ્થાનક હોય છે. અર્થાત્ શુભ અને અશુભ-રૂપ પોતપોતાનાં ફળ દેવાવાળાં પ્રત્યેક કર્મોની તીવ્રતમ અંશની ચતુઃસ્થાનક, તીવ્રતર અંશની ત્રિસ્થાનક અને દ્વિતીય તીવ્ર અંશની દ્વિસ્થાનક અને પ્રથમ મંદ અંશની એકસ્થાનક સંજ્ઞા છે. પ્રથમ અંશ સ્વાભાવિક છે, તેથી તેને એક સ્થાનક કહે છે. આ વિષયનો ખુલાસો બીજા શાસ્ત્રોમાં વિસ્તારથી આપ્યો છે.

પ્રશ્ન—આ ત્રણ પ્રકારના પુદ્ગલોના પરસ્પરમાં સંક્રમણ થાય છે કે નહિ ?

ઉત્તર—હાં, થાય છે. જેનો અધ્યવસાય અહર્નિશ વૃદ્ધિગત થતો રહે છે એવો સમ્યક્ત્વી જીવ મિથ્યાત્વના દલિયાથી પુદ્ગલપુંજને ખેંચીને મિશ્ર અને સમ્યક્ત્વ-પ્રકૃતિના પુદ્ગલ પુંજોમાં એને સંક્રમિત કરે છે. મિશ્રપ્રકૃતિના પુદ્ગલોના સંક્રમણ મિથ્યાત્વ અને સમ્યક્ત્વ, એ બંને પ્રકૃતિઓમાં થાય છે. પ્રવર્ધમાન



सम्यग्दर्शनप्राप्तौ सत्यां हीयमानपरिणामस्तु मिश्रपुद्गलान् मिथ्यात्वपुद्गलांश्च न सम्यक्त्वपुद्गलान् करोति, न च तस्य केचिदन्ये शोधितपुद्गलाः सन्ति, यान् संप्रति प्रस्तुतसम्यक्त्वपुद्गलानिष्ठाकाले वेदयेत् । ततः सम्यक्त्वपुद्गलानामन्तिमग्रासं वेदयित्वा पूर्वं लब्धसम्यक्त्वोऽपि पश्चान्मिथ्यात्वमेव संक्रामति ।

सम्यग्दर्शन की प्राप्ति होने पर भी जिसका परिणाम हीयमान है  
ऐसा सम्यग्दृष्टि जीव मिश्रप्रकृति के पुद्गलपुंजों का, एवं मिथ्यात्व-  
प्रकृति के पुद्गलपुंजोंका सम्यक्त्वप्रकृति के पुद्गलपुंजोंमें संक्रमण  
नहीं करता; कारण कि उसके निकट दूसरे कोई शोधित पुद्गल नहीं  
हैं कि जिन्हें वह वर्तमान में प्राप्त सम्यक्त्वप्रकृति के पुद्गलोंके समाप्ति  
काल में वेदन कर सके। इसलिये वह जीव यद्यपि लब्धसम्यक्त्व है  
तो भी हीयमानपरिणामवाला होने से सम्यक्त्वप्रकृति के अन्तिम प्राप्ति  
का वेदन कर पीछे से मिथ्यात्वमें ही संक्रमण करता है।

સમ્યગ્દર્શનની પ્રાપ્તિ થતાં પણ જેના પરિણામ હીયમાન છે એવો સમ્ય-  
ગ્દષ્ટિ જીવ મિશ્રપ્રકૃતિના પુદ્ગલપુંજેનું અને મિથ્યાત્વપ્રકૃતિના પુદ્ગલપુંજેનું  
સમ્યક્ત્વપ્રકૃતિના પુદ્ગલપુંજેમાં સંકેમણ નથી કરતો. કારણ કે એની નજીક  
ખીજા કોઈ શોધિત પુદ્ગલ નથી કે જેને તે વર્તમાનમાં પ્રાપ્ત સમ્યક્ત્વપ્રકૃતિના  
પુદ્ગલોની સમાપ્તિ કાળમાં વેદન કરી શકે. તેથી તે જીવ જો કે લબ્ધસમ્ય-  
ક્ત્વ છે તો પણ હીયમાન પરિણામવાળા હોવાથી સમ્યક્ત્વપ્રકૃતિના અંતિમ  
આસનો વેદન કરી પછીથી મિથ્યાત્વમાં જ સંકેમણ કરે છે.

મિથ્યાત્વપુંજસ્ય ક્ષયામાવે યઃ સમ્યગ્દષ્ટિઃ સ ત્રિપુંજી, ક્ષીણે તુ મિથ્યાત્વ-પુંજે દ્વિપુંજી, મિથ્યાત્વપુંજસ્ય મિશ્રપુંજરય ચ ક્ષયે ત્વેકપુંજી, સમ્યક્ત્વપુંજસ્યાંપ ક્ષયે તુ ક્ષાયિકસમ્યક્ત્વી ભવતીતિ ।

કારણવગાત્ સમ્યક્ત્વપ્રાપ્તાવઠૌ દૃષ્ટાન્તાઃ સન્તિ । યથા—(૧) ગિરિનદીપ્રસ્તરઃ (૨) પન્થાઃ, (૩) જ્વરઃ, (૪) વસ્ત્રમ્, (૫) જલમ્, (૬) પિપીલિકા, (૭) પુરુષઃ (૮) કોદ્રવથેતિ ।

(૧) યથાપ્રવૃત્તારણ્યે કરણે ગિરિનદીપ્રસ્તરદૃષ્ટાન્તઃ, યથા ગિરિનદ્યાં પ્રસ્તર-સ્વખંડાસ્તદ્વેગતો વર્ષણાદિના વર્તુલા જાયન્તે, એવં યથાપ્રવૃત્તકરણપ્રભાવાદ્ દીર્ઘત-રાયા અપિ કર્મસ્થિતેસ્તાવત્ ક્ષપણં ભવતિ યાવતા ગ્રન્થિરૂપઃ શેષોઽવતિષ્ઠતે ।

મિથ્યાત્વપુંજ કા જિસને ક્ષય નહીં કિયા હૈ એસા જીવ સમ-કિત કી પ્રાપ્તિ હોને પર ત્રિપુંજી, મિથ્યાત્વ કે ક્ષય હોને પર દ્વિપુંજી, ઔર મિથ્યાત્વપુંજ ંદ્રે મિશ્રપુંજકે ક્ષય હોને પર ંકપુંજી (સમ્યક્ત્વપુંજવાલા) હોતા હૈ, તથા ંક પુંજ-સમ્યક્ત્વપ્રકૃતિ કે ક્ષય હોને પર ક્ષાયિકસમ્ય-ક્ત્વી હો જાતા હૈ ।

સમકિતપ્રાપ્તિ મેં આઠ દૃષ્ટાન્ત હૈં—(૧) ગિરિનદીપ્રસ્તર, (૨) માર્ગ, (૩) જ્વર, (૪) વસ્ત્ર, (૫) જલ, (૬) કીડી, (૭) પુરુષ, ઔર ૮વાં કોદ્રવ । ઇનકા ખુલાસા અર્થે ઇસ પ્રકાર હૈ—

(૧) પહિલા દૃષ્ટાન્ત યથાપ્રવૃત્તિનામક કરણમેં હૈ । જૈસે-પર્વત ડપરસે વહનેવાલી નદીમેં પથરોં કે ટુકડે ડસકે પ્રવાહ કે વેગસે ઇધર-ડધર ઘિસે જાકર ગોલ હો જાતે હૈં, ઇસીપ્રકાર યથાપ્રવૃત્તિકરણ કે પ્રભાવ સે ડલ્કૃષ્ટ ભી કર્મસ્થિતિ ઘટતે ૨ ઇતની કમ રહ જાતી હૈ જિસકી વજહ સે

મિથ્યાત્વપુંજનો જેણે ક્ષય નથી કર્યો એવો જીવ સમ્યક્ત્વની પ્રાપ્તિ થતાં ત્રિપુંજ, મિથ્યાત્વનો ક્ષય થતાં દ્વિપુંજ, મિથ્યાત્વપુંજ અને મિશ્રપુંજનો ક્ષય થતાં એકપુંજ (સમ્યક્ત્વપુંજવાળો) થાય છે, તથા એક પુંજ-સમ્યક્ત્વપ્રકૃતિનો ક્ષય થતાં જ ક્ષાયિકસમ્યક્ત્વી થઈ જાય છે.

સમ્યક્ત્વની પ્રાપ્તિમાં આઠ દૃષ્ટાન્તો છે. (૧) ગિરિનદીપ્રસ્તર, (૨) માર્ગ, (૩) જ્વર, (૪) વસ્ત્ર, (૫) જળ, (૬) કીડી, (૭) પુરુષ, અને (૮) કોદ્રવ. એનો સ્પષ્ટ અર્થ આ પ્રકારે થાય છે—

(૧) પહેલો દૃષ્ટાન્ત યથાપ્રવૃત્તિનામવાળા કરણમાં છે. જેમ પર્વતથી વહેવાવાળી નદીમાં પથરનો ટુકડો તેના પ્રવાહના વેગથી અહીં-તહીં ઘસડાઈ જેમ ગોળ થઈ જાય છે, તે પ્રકારે યથાપ્રવૃત્તિકરણના પ્રભાવથી ઉલ્કૃષ્ટી

(૨) અનિવૃત્તિકરણં સમ્યક્ત્વપુરસ્કૃતે જીવે ભવતિ । કથં તત્ સમ્યક્ત્વં ભવતિ ? ઉચ્યતે—ઉપદેશતઃ સ્વયં વા । તત્ર પથિદૃષ્ટાન્તઃ—યથા કશ્ચિન્નપ્થપથઃ પુરુષોઽન્યં દૃષ્ટ્વા તદુપદેશતો માર્ગમારોઢતિ, કશ્ચિત્ સ્વયમેવોદ્ધાપોહં કૃત્વા, તથા કશ્ચિદાચાર્યાદીનામુપદેશતઃ સમ્યક્ત્વં લભતે, કશ્ચિત્ સ્વયમેવ જાતિસ્મરણાદિના ।

(૩) જ્વરદૃષ્ટાન્તોઽપ્યત્રૈવ, યથા—જ્વરિતઃ કશ્ચિદૌષધાદારોગ્યં લભતે, કશ્ચિત્તુ તદ્ વિનૈવ લઙ્ઘનાદિના; તથાઽત્રાપિ કસ્યચિન્મિથ્યાત્વં ગુર્વાદ્યુપદેશતો નચ્યતિ, કસ્ય-ચિત્તુ સ્વયમેવ તત્ત્વપર્યાલોચનતઃ ।

યહ જીવ ગ્રન્થિદેશ તક પહુંચ જાના હૈ । અર્થાત્—ઈસ કરણ કે પ્રભાવ સે ઉત્કૃષ્ટ મી કર્મસ્થિતિ ક્ષય હોતે ૨ ગ્રંથિ રૂપમેં અવશિષ્ટ રહ જાતી હૈ ।

(૨) સમ્યક્ત્વ કે સંમુખ હુએ જીવ કે અનિવૃત્તિકરણ હોતા હૈ । સમ-કિત કી પ્રાપ્તિ કે દો ઉપાય હૈ—(૧) ગુર્વાદિકકા ઉપદેશ, (૨) નિસર્ગ । યહાં પર માર્ગ કા દૃષ્ટાન્ત હૈ । જૈસે—કોઈ ૨ માર્ગ ભૂલા પથિક ડસી માર્ગ પર ચલતે હુએ દૂસરે કો દેખ કર યા ડસસે પૂછ કર તથા કોઈ ૨ સ્વયં તર્ક-વિતર્ક કરકે અપને માર્ગ કી પ્રાપ્તિ કર લિયા કરતે હૈ, ડસી તરહ કોઈ ૨ પ્રાણી આચાર્યાદિક ગુરુઓં કે ઉપદેશ સે, ઓર કોઈ ૨ સ્વયં અપને આપ જાતિસ્મરણાદિક સાધનોં સે સમકિત કા લાભ કર લેતે હૈ ।

(૩) જ્વર કા દૃષ્ટાન્ત મી યહીં પર ઘટિત હોના હૈ । જૈસે—કિસી રોગી કા જ્વર ઓષધિ કે સેવન સે ઓર કિસી ૨ કા વિના ઓષધિ કે કેવલ લંઘનાદિક કરને સે શાન્ત હો જાતા હૈ, ડસી પ્રકાર કિસી ૨ જીવ

કર્મસ્થિતિ ઘટતી ઘટતી એટલી ઓછી રહી જાય છે કે જેના કારણથી એ જીવ ગ્રન્થિદેશ સુધી પહોંચી જાય છે, અર્થાત્ આ કારણના પ્રભાવથી ઉદ્ધૃષ્ટી કર્મસ્થિતિ ક્ષય થતાં થતાં ગ્રન્થિરૂપમાં અવશિષ્ટ રહી જાય છે.

(૨) સમ્યક્ત્વના સંમુખ થયેલ જીવને અનિવૃત્તિકરણ થાય છે. સમ્યક્ત્વની પ્રાપ્તિના એ ઉપાયો છે—(૧) ગુર્વાદિકનો ઉપદેશ, (૨) નિસર્ગ. આ ઠેકાણે માર્ગનો દૃષ્ટાન્ત છે. જેમ કોઈ કોઈ માર્ગભૂલ્યા મુસાફિર તે માર્ગ પર ચાલતાં બીજાને દેખીને અગર તેને પૂછીને, તથા કોઈ કોઈ સ્વયં તર્ક વિતર્ક કરીને પોતાના માર્ગની પ્રાપ્તિ કરી લે છે. તેવી રીતે કોઈ કોઈ પ્રાણી આચાર્યાદિક ગુરુઓના ઉપદેશથી અને કોઈ સ્વયં પોતે પોતાના જાતિસ્મરણાદિક સાધનોથી સમ્યક્ત્વનો લાભ કરી લે છે.

(૩) જ્વરનો દાખલો પણ આ ઠેકાણે ઘટિત થાય છે. જેમ કોઈ કોઈ રોગીનો જ્વર ઓષધીના સેવનથી, અને કોઈ કોઈનો ઓષધિ વિના લંઘનાદિક કરવાથી

(૪-૫) તીવ્રવિશુદ્ધિપરિણામિજીવસ્ય પ્રથમતયા ક્ષાયોપશમિકસમ્યક્ત્વં ભવતિ, તત્ સ્વલ્પપૂર્વકરણવશાત્ । તત્રાપૂર્વકરણેન જીવો મિથ્યાત્વદલિકં ત્રિધા કરોતિ, તથા—(૧) મિથ્યાત્વં, (૨) સમ્યગ્મિથ્યાત્વં, (૩) સમ્યક્ત્વં ચેતિ । તત્ર (૪) વસ્ત્રં, (૫) જલં ચેતિ દૃષ્ટાન્તદ્વયમ્ । યથા કિંચિદ્ વસ્ત્રં જલં વા મલિનં ભવતિ, કિંચિદીપદ્ વિશુદ્ધં, કિંચિત્ શુદ્ધમ્, તથા મિથ્યાત્વદલિકમપ્યપૂર્વકરણવશાત્ કિંચિન્મિથ્યાત્વરૂપં મલિનં ભવતિ, કિંચિત્ સમ્યગ્મિથ્યાત્વરૂપમીપદ્ વિશુદ્ધં, કિંચિત્ સમ્યક્ત્વરૂપં શુદ્ધમ્ ।

કા મિથ્યાત્વ ગુર્વાદિક કે ઉપદેશ સે, ઔર કિસી ૨ કા અપને આપ તત્ત્વોં કી પર્યાલોચના સે નષ્ટ હો જાતા હૈ ।

(૪-૫) તીવ્રવિશુદ્ધિપરિણામવાલે જીવ કે અપૂર્વકરણ કે પ્રભાવ સે સર્વપ્રથમ ક્ષાયોપશમિકસમ્યક્ત્વ હોતા હૈ । અપૂર્વકરણ કે પ્રભાવ સે હી જીવ મિથ્યાત્વ કે (૩) ત્રીન ભાગ કરતા હૈ—(૧) મિથ્યાત્વ, (૨) સમ્યગ્મિથ્યાત્વ, (૩) સમ્યક્ત્વ । યહાં પર વસ્ત્ર ઔર જલ યે દો દૃષ્ટાન્ત ઘટિત હોતે હૈ । જૈસે—કોઈ વસ્ત્ર અથવા જલ અત્યન્ત મલિન હોતા હૈ, ઔર કોઈ ડસસે કુછ કમ મલિન, ઔર કોઈ ૨ ચિલ્કુલ સાફ—નિર્મલ હોતા હૈ, ડસી તરહ સે જીવ અપૂર્વકરણ કે પ્રભાવ સે મિથ્યાત્વ કે ત્રીન ટુકડે કર દેતા હૈ, ડનમેં કોઈ ટુકડા ચિલ્કુલ મલિન, ઔર કોઈ ટુકડા કુછ કમ મલિન, ંવં કોઈ ટુકડા ચિલ્કુલ સાફ—શુદ્ધ હોતા હૈ । ચિલ્કુલ મલિન ટુકડે કા નામ મિથ્યાત્વ, કુછ કમ મલિન ટુકડે કા નામ સમ્યગ્મિથ્યાત્વ, ઔર સર્વથા શુદ્ધ ટુકડે કા નામ સમ્યક્ત્વ હૈ ।

શાંત થઇ જાય છે, તે પ્રમાણે કોઈ કોઈ જીવનો મિથ્યાત્વ ગુર્વાદિકના ઉપદેશથી, અને કોઈ કોઈનો પોતાની મેળે તત્ત્વોની પર્યાલોચનાથી નષ્ટ થઇ જાય છે.

(૪-૫) તીવ્ર વિશુદ્ધ પરિણામવાળા જીવને અપૂર્વકરણના પ્રભાવથી સર્વપ્રથમ ક્ષાયોપશમિક—સમ્યક્ત્વ થાય છે. અપૂર્વકરણના પ્રભાવથી જ જીવ મિથ્યાત્વના ત્રણ ભાગ કરે છે—(૧) મિથ્યાત્વ, (૨) સમ્યગ્મિથ્યાત્વ, (૩) સમ્યક્ત્વ. આ કોઈકાણે વસ્ત્ર અને જળ, આ બે દૃષ્ટાન્ત ઘટિત થાય છે. જેમ કોઈ વસ્ત્ર અથવા જળ અત્યન્ત મલિન છે, અને કોઈ એનાથી ઓછું મલિન, અને કોઈ કોઈ બિલ્કુલ સાફ—નિર્મળ હોય છે, તેમજ જીવ અપૂર્વકરણના પ્રભાવથી મિથ્યાત્વના ત્રણ ભાગ કરી નાંખે છે. તેમાં કોઈ ભાગ બિલ્કુલ મલિન અને કોઈ ભાગ થોડો મલિન, કોઈ ભાગ તદ્દન સાફ—શુદ્ધ હોય છે. તદ્દન મલિન ભાગનું નામ મિથ્યાત્વ, થોડા ઓછા મલિન ભાગનું નામ સમ્યગ્મિથ્યાત્વ, અને સર્વથા શુદ્ધ ભાગનું નામ સમ્યક્ત્વ છે.

(૬) નન્વભવ્યાઃ કથં તસ્મિન્ યથાપ્રવૃત્તિકરણેઽવતિષ્ઠન્તે, કથં વા તતઃ પ્રતિ-  
પતન્તિ, ?, ભવ્યા વા ગ્રન્થિ મિત્વા કથં તતઃ પરતો ગચ્છન્તિ ?; અત્રોચ્યતે—  
પિપીલિકાદૃષ્ટાન્તાત્ । તથાહિ—કાશ્વિત્ પિપીલિકા અનાભોગતો વિલા-  
ન્નિસ્સૃત્ય ઇતસ્તતો ગન્તું પ્રવૃત્તાઃ, કાશ્વિદપૂર્વકરણેન વૃક્ષાદાવારૂઢાઃ, તાસામપિ  
મધ્યે પક્ષરહિતાસ્તત્રૈવ તિષ્ઠન્તિ, તતઃ પ્રત્યવરોહન્તિ ચ । કાશ્વિત્ પક્ષોદ્ભવેન તત  
ઉડ્ડીયન્તે । ઇહ યથા પિપીલિકાનામિતસ્તતો ગમનં યથાપ્રવૃત્તિકરણેન, વૃક્ષાદાવા-  
રોહણમપૂર્વકરણેન, ઉડ્ડયનમનિવૃત્તિકરણેન, તથાઽત્રાપિ ગ્રન્થિદેશગમનં યથાપ્રવૃત્તિ-

(૬) અભવ્ય જીવ કૈસે યથાપ્રવૃત્તિકરણમેં સ્થિત હોતે હૈં ? ઓર કૈસે  
ફિર વહાં સે ચ્યુત હો જાતે હૈં ? તથા ભવ્ય જીવ ગ્રન્થિ કા ભેદન કર  
કૈસે ડસસે આગે બઢ જાતે હૈં ?, એસી શંકા કો દૂર કરને કે લિયે પિપી-  
લિકા-દૃષ્ટાન્ત કી સાર્થકતા હૈ ।

જૈસે કિતનેક પિપીલિકાઈ ( કીડિયાં ) યૌં હી અપને બિલસે બાહર  
નિકલ કર ઇધર-ઉધર ઘૂમને લગતી હૈં, ઓર ઇનમેંસે કિતનીક પિપી-  
લિકાઈ અપૂર્વકરણ સે વૃક્ષાદિક કે ડપર ચઢ જાતી હૈં । અનન્તર ડનમેં  
પાંખરહિત કિતનીક વહીં પર રહ જાતી હૈં, ઓર કિતનીક વહાં સે ડતર  
આતી હૈં, ઓર કિતનીક પિપીલિકાઈ કે જિનકે પર હોતે હૈં વે વહાંસે  
ડડ જાતી હૈં । જૈસે પિપીલિકાઓં કા ઇધર-ઉધર ભ્રમણ યથાપ્રવૃત્તિ-  
કરણસે હોતા હૈ, વૃક્ષાદિક પર ડનકા ચઢના અપૂર્વકરણ સે હોતા હૈ,  
ઍવં વહાં સે ડનકા ડડ જાના અનિવૃત્તિકરણસે હોતા હૈ, ડસી પ્રકાર  
જીવકા ગ્રન્થિદેશ તક જાના-યથાપ્રવૃત્તિકરણકે દ્વારા હોતા હૈ, ગ્રન્થિકા

(૬) અભવ્ય જીવ કેવી રીતે યથાપ્રવૃત્તિકરણ કરે છે ? અને કેવી રીતે  
પછી ત્યાંથી પતિત થઈ જાય છે ? તથા ભવ્ય જીવ ગ્રન્થિનું ભેદન કરીને કેવી  
રીતે એનાથી આગળ વધી જાય છે ? આવી શંકાને દૂર કરવાને માટે પિપીલિકા  
ઓ (કીડીઓ)ના દૃષ્ટાન્તની સાર્થકતા છે. જેમ કેટલીક પિપીલિકાઓ (કીડીઓ)  
એમજ પોતાના દરથી બાહર નિકળીને અહીંતહીં ફરવા લાગે છે, અને તેઓમાંથી  
કેટલીક કીડીઓ વૃક્ષાદિકની ઉપર ચઢી જાય છે. બાદમાં તેઓમાંથી પાંખરહિત  
કેટલીક કીડીઓ ત્યાં જ રહી જાય છે, અને કેટલીક કીડીઓ ત્યાંથી ડતરી આવે  
છે, તથા કેટલીક કીડીઓ—કે જેઓ પાંખરહિત હોય છે તેઓ ત્યાંથી ડડી જાય  
છે. જેમ કીડીઓનું અહીંતહીં ફરવું યથાપ્રવૃત્તિકરણથી થાય છે, વૃક્ષાદિકની ઉપર  
તેઓનું ચઢવું અપૂર્વકરણથી થાય છે, અને ત્યાંથી તેઓનું ડડવું અનિવૃત્તિકરણથી  
થાય છે; તે જ પ્રમાણે જીવનું ગ્રન્થિદેશ સુધી જવું તે યથાપ્રવૃત્તિકરણદ્વારા થાય

करणेन, ग्रन्थिभेदनमपूर्वकरणेन, सम्यक्त्वमनिवृत्तिकरणेन । पक्षरहितास्तु यथा वृक्षादौ स्थितास्ततः प्रत्यवरोहन्ति, तथाऽध्यवसायस्य मान्द्यात् कोऽपि तीव्रविशोधि-रहितोऽपूर्वकरणेन ग्रन्थिभेदं कर्तुमुद्यतोऽपि तीव्ररागद्वेषपरिणामोदयात् तत्रैव तिष्ठति, पश्चात् तत एव परावर्तते ।

(૭) અત્રૈવ પુરુષદૃષ્ટાન્તોઽપિ—યથા ત્રયો મનુષ્યાઃ ભયઢ્ઢરં પન્થાનં ભયેન ગચ્છન્તઃ સાયંકાલે સંમાગતે ત્વરમાણા વ્રજન્તિ । અત્રાન્તરે સ્વદ્ગહસ્તૌ દ્વૌ ચૌરૌ પાર્શ્વદ્વયતઃ સંપ્રાપ્તૌતૌચૈવમાક્ષિપતઃ—“ક્વ ગચ્છથ યૂયં? યુષ્માકમિદાનીં મરણં ભેદન કરના યહ અપૂર્વકરણ કે દ્વારા હોતા હૈ, ઔર સમકિત કી પ્રાપ્તિ કરના યહ અનિવૃત્તિકરણ કે દ્વારા હોતા હૈ । પક્ષરહિત પિપીલિકાઁ જૈસે વૃક્ષાદિક પર ચઢ કર વહાં સે ફિર ઉતરતી હૈં ઁસી પ્રકાર અધ્યવ-સાય કી મન્દતાસે જીવ ભી તીવ્રવિશુદ્ધિસમ્પન્ન પરિણામ કે વિના અપૂર્વકરણ કે દ્વારા ગ્રન્થિભેદ કરનેમૈં ઁદ્યત હોતા હુઆ ભી તીવ્ર રાગ-દ્વેષ પરિણામકે ઁદયસે વહીં પર ઁહર જાતા હૈ ઔર પીછે વહાં સે લૌટ આતા હૈ; આગે નહીં વઢ સકતા ।

(૭) યહીં પર પુરુષકા દૃષ્ટાન્ત ભી લાગૂ પડતા હૈ । જૈસે તીન મનુષ્ય ભય સે સંત્રસ્ત હો વિકટ માર્ગ સે જાતે હુઅ સાયંકાલ કે સમય અપને સ્થાનકી ઔર વહુત હી શીઘ્રતાસે આગે વઢ રહે થે, ઁનમૈં સે ઁકકે પાસ હી તલવાર થી । ઁસી સમય તલવાર લિયે હુઅ દો ચોર ભી જો ઁનકે પીછે લગે હુઅ થે, વે ઁનકે સામને આ કર બોલે—‘તુમ લોગ કહાં જાતે હો ? જો કુછ હો હમૈં દે દો, નહીં તો તુમહારી ઁસ સમય મૃત્યુ નિકટ

છે. ગ્રન્થિનું ભેદન કરવું, તે અપૂર્વકરણદ્વારા થાય છે, અને સમકિતની પ્રાપ્તિ કરવી તે અનિવૃત્તિકરણ દ્વારા થાય છે. પાંખરહિત કીડિઓ જેમ વૃક્ષાદિની ઉપર ચઢીને ઉતરે છે. તે પ્રમાણે અધ્યવસાયની મંદતાથી જીવ પણ તીવ્ર વિશુદ્ધ-સમ્પન્ન પરિણામના અભાવે અપૂર્વકરણદ્વારા ગ્રન્થિભેદ કરવામાં તૈયાર હોવા છતાં પણ તીવ્રરાગદ્વેષપરિણામના ઉદયથી ત્યાં જ રોકાઈ જાય છે અને પછી ત્યાંથી ફરી આવે છે અને આગળ વધી શકતાં નથી.

(૭) એ જ ઁકાણે પુરૂષનો દૃષ્ટાન્ત પણ લાગુ પડે છે જેમ—સાયંકાળની વખત વિકટ માર્ગથી જતાં ત્રણ મનુષ્ય લયથી દુઃખી હતા, અને પોતાના સ્થાનની તરફ ઘણી જ શીઘ્રતાથી આગળ વધી રહ્યા હતા. તેમાં ઁકની પાસે તલવાર હતી. આ વખતે તલવારવાળા જે ચોર જે તેમની પછવાડે પડ્યાં હતાં તે ઁમની સામે આવી ખોડ્યાં ‘—તમે લોક કયાં જાઓ છો ? તમારી પાસે જે હોય



સમાયાતમ્ ” ઇતિ । તત્રૈકઃ પુરુષસ્તૌ સમાપતન્તૌ વિલોક્ય પ્રથમતઃ એવ નિવૃત્તઃ, દ્વિતીયસ્તદ્વાક્યશ્રવણેન ચ સંજાતભયસ્તત્રૈવ સ્થિતઃ, તૃતીયસ્તુ પરમસાહસિકઃ પ્રકટીકૃતકૃપાણસ્તૌ દ્વાવપિ ચૌરૌ પશ્ચાત્કૃત્ય તત્ સ્થાનમતિક્રાન્તઃ ।

इह त्रयाणामपि या प्रथमतः क्रमेण गतिः सा यथाप्रवृत्तिकरणम्, यत्तु तद्वयं तदपूर्वकरणम्, यच्च तौ पराजित्य तत्परतो गमनं तत् तृतीयमनिवृत्तिकरणं द्रष्टव्यम् । यच्च ततः पलायनं तत् पतनम् ।

(૮) અપૂર્વકરણેન મિથ્યાત્વં ત્રિથા કરોતીતિ યદુક્તં તત્ર કોદ્રવદૃષ્ટાન્તઃ । સ તુ પ્રાગેવ નિરૂપિતઃ ।

है' यह सुनते ही उनमें से एक पुरुष तो पहिले से ही कहीं भाग गया । दूसरा उनकी बात सुन कर और तलवार देख कर वहीं पर चुपचाप खड़ा रह गया । तीसरेने जो परमसाहसी था अपनी तलवार निकाल कर उनका सामना किया और उन्हें परास्त कर आगे बढ़ गया । यहां तीनों का गमन करना यह यथाप्रवृत्तिकरण के, तथा उनमें से दूसरे का भयान्वित हो कर वहीं पर खड़े रहना यह अपूर्वकरणके और तीसरे का चोरोंको परास्त कर आगे बढ़ना यह अनिवृत्तिकरणके स्थानापन्न समझना चाहिए । तथा भागना यह पतन का स्थानापन्न है ।

(૮) અપૂર્વકરણ-પરિણામ કે દ્વારા યહ જીવ જો મિથ્યાત્વકે ત્રીન ચ્વણ્ડ કરતા હૈ વહાં પર કોદ્રવ કા દૃષ્ટાન્ત લાગૂ પડતા હૈ । ઇસ દૃષ્ટાન્ત કા સમન્વય પહિલે કિયા જા ચુકા હૈ ।

તે અમોને આપી ઘો, નહિ તો તમારો મોત આ વખતે નજીક છે' આ સાંભળતાં જ તેમાંથી એક પુરૂષ તો પહેલેથી જ ક્યાંક ભાગી ગયો, બીજો તેમની વાત સાંભળી અને તલવાર દેખીને ચુપચાપ ઉભો રહ્યો, ત્રીજો જે ઘણો સાહસિક હતો તેણે પોતાની તલવાર કાઢીને સામો થઈ ગયો અને તેમને ભગાડીને આગળ વધી ગયો.

આ ઠેકાણે ત્રણેનું જવું તે યથાપ્રવૃત્તિકરણનું, તથા આમાંથી બીજાનું ભયભીત થઈ ત્યાં રોકાઈ જવું તે અપૂર્વકરણનું, અને ત્રીજાનું ચોરોને હરાવીને આગળ વધવું તે અનિવૃત્તિકરણનું સ્થાનાપન્ન સમજવું જોઈએ. જે ભાગવું તે પતનનું સ્થાનાપન્ન છે.

(૮) અપૂર્વકરણ પરિણામ દ્વારા આ જીવ જે મિથ્યાત્વના ત્રણ ખંડ કરે છે ત્યાં કોદ્રવનો દૃષ્ટાન્ત લાગૂ પડે છે. આ દૃષ્ટાન્તનો સમન્વય પહેલાં જ કરવામાં આવ્યો છે.

आर्हतधर्म एव श्रद्धेय इति बोधयितुं श्रीसुधर्मास्वामी कथयति—‘से वेमि’ इत्यादि ।

मूलम्—से वेमि, जे अईया जे य पडुप्पन्ना जे य आगमि-  
स्सा अरहंता भगवंतो ते सव्वेवि एवमाइक्खंति एवं भासंति  
एवं पण्णविति एवं परूविति—सव्वे पाणा सव्वे भूया सव्वे  
जीवा सव्वे सत्ता न हंतव्वा, न अज्जावेयव्वा, न परिघेत्तव्वा,  
न परियावेयव्वा, न उद्देव्यव्वा ॥ सू० १ ॥

छाया—तद् ब्रवीमि, ये अतीता ये च प्रत्युपन्नाः ये चागमिष्यन्तः अर्हन्तो  
भगवन्तस्ते सर्वेऽपि एवमाख्यान्ति, एवं भापन्ते, एवं प्रज्ञापयन्ति, एवं प्ररूपयन्ति—  
सर्वे प्राणाः सर्वे भूताः सर्वे जीवाः सर्वे सत्त्वाः न हन्तव्याः, न आज्ञापयितव्याः,  
न परिग्रहीतव्याः, न परितापयितव्याः, नापद्रावयितव्याः ॥ सू० ॥ १ ॥

तीर्थकरैर्गणधरैश्च स्वस्वशिष्येभ्यो यत् सम्यक्त्वमुक्तं तदहं ब्रवीमि=कथयामि ।  
यद्वा—‘से’ इत्यस्य स इतिच्छाया । येन मया भगवतः श्रीवर्धमानस्वामिन-  
स्तीर्थकरस्य सकाशे तद्वचनेन तत्त्वज्ञानं लब्धं, सोऽहं ब्रवीमि । भगवदुक्तमेवार्थं  
कथयामि, तस्मान्मम वाक्यं श्रद्धेयमिति भावः ।

अर्हन्त प्रभुके द्वारा प्रतिपादित धर्म ही श्रद्धा करनेके योग्य है । इस  
वातका प्रतिबोध करानेके लिये श्रीसुधर्मास्वामी जम्बूस्वामी से कहते हैं—  
—‘से वेमि’ इत्यादि ।

हे जम्बू ! तीर्थङ्करों ने एवं गणधरादिकों ने अपने २ शिष्योंके लिये  
जिस सम्यक्त्वका उपदेश दिया है उसी सम्यक्त्वका मैं व्याख्यान करता  
हूँ । अथवा भगवान् श्रीवर्धमान तीर्थङ्कर के निकट जो उनके वचनोंद्वारा  
सुना है, वही मैं कहता हूँ, किन्तु अपनी तर्फसे कुछ भी नहीं कहता हूँ ।

‘अर्हन्त प्रभुद्वारा प्रतिपादित धर्म ही श्रद्धा करवायेज्य छे’ आ वातने  
प्रतिबोध करवाने भाटे श्री सुधर्मास्वामी कहे छे—‘से वेमि’ इत्यादि.

हे जम्बू ! तीर्थङ्करोणे तेम ज गणधरादिकोणे पोतपोताना शिष्योने भाटे  
जे सम्यक्त्वने उपदेश आय्यो छे ते सम्यक्त्वनुं हुं पणु व्याख्यान करूं छुं.  
अथवा भगवान् श्री वर्धमान तीर्थङ्कर पासे तेमना वचनोथी जे सांलज्युं छे ते  
हुं कहुं छुं पणु भारी तरङ्गी कंई पणु कहेतो नथी.

અતીતાઃ=અતીતકાલિકા અનન્તાઃ, યે ચ પ્રત્યુત્પન્નાઃ=વર્તમાનકાલિકાઃ-પશ્ચ-  
ભરતેષુ પશ્ચૈરવતેષુ પશ્ચમહાવિદેહેષુ વર્તમાનાઃ, યે ચ આગમિષ્યન્તઃ=ભવિષ્યત્કાલે  
આગમિનોઽનન્તાઃ, તે સર્વે=અર્હન્તો ભગવન્તઃ એવં=વક્ષ્યમાણપ્રકારેણ, આખ્યાન્તિ=  
પરપ્રશ્નાવસરે કથયન્તિ ।

અત્ર વર્તમાનગ્રહણમુપલક્ષણં, તેનાતીતાનાગતયોરપિ ગ્રહણમ્ । તથા ચ-એવમાચ-  
ખ્યુઃ, એવમાખ્યાસ્યન્તીત્યપિ યોજનીયમ્ । એવં સર્વત્ર ક્રિયામુ યોજનીયમ્ । તથા-  
એવં ભાષન્તે=સુરનરપરિપદિ સર્વજીવાનાં સ્વસ્વભાષાપરિણામિન્યાઽર્ધમાગધ્યા  
ભાષયા બ્રુવન્તિ । તથા-એવં પ્રજ્ઞાપયન્તિ=હેતુદૃષ્ટાન્તાદિના પ્રકર્ષેણ વોધયન્તિ । તથા  
-એવં પ્રરૂપયન્તિ=તત્તદ્ભેદં પ્રદર્શ્ય પ્રકર્ષેણ નિર્ણયન્તિ ।

અતીતકાલ મેં જિતને મી અનન્ત તીર્થઙ્કર હુએ હૈં, તથા પાંચ ભરત,  
પાંચ ઈરવત ઓર પાંચ મહાવિદેહ ક્ષેત્ર મેં જિતને વિદ્યમાન હૈં, ઓર  
ભવિષ્યત્કાલમેં જિતને મી તીર્થઙ્કર હોંગે ડન સર્વોને દૂસરોં કે પ્રજ્ઞાવસરમેં  
ઈસી પ્રકાર સે કહા હૈ, કહતે હૈં ઓર કહેંગે । યહાં પર “આખ્યાન્તિ”  
યહ વર્તમાનકાલિક ક્રિયા હૈ, ઇસસે ભૂત ઓર ભવિષ્યત્-કાલીન ક્રિયા  
મી સમજ્ઞ લેના ઑહિએ । આગે મી જહાં પર વર્તમાન ક્રિયાપદકા પ્રયોગ  
હો, વહાં પર ભૂત ઓર ભવિષ્યત્-કાલીન ક્રિયાપદકા ઉપલક્ષણ સે અધ્યા-  
હાર કર લેના ઑહિયે ।

“એવં ભાષન્તે” ડન સમસ્ત તીર્થઙ્કર મહાપ્રભુઓંને દેવ, મનુષ્યોં  
કી સભામેં અપની અર્ધમાગધી ભાષાકે દ્વારા, જો ભાષા સમસ્ત જીવોંકી  
ભાષામેં પરિણત હો જાતી હૈ; ઇસ પ્રકાર સ્પષ્ટ કહા હૈ ।

અતીતકાળમાં જેટલા પણ અનંત તીર્થંકર થયાં છે, તથા પાંચ ભરત પાંચ ઐર-  
વત અને પાંચ મહાવિદેહ ક્ષેત્રમાં જેટલાં વિદ્યમાન છે, અને ભવિષ્યકાળમાં જેટલાં  
પણ તીર્થંકર થશે તે બધા બીજાના પ્રશ્નાવસરમાં આ પ્રકારથી કહ્યું છે, કહે છે  
અને કહેશે. આ ઠેકાણે “આખ્યાન્તિ” તે વર્તમાનકાલિક ક્રિયા છે, એથી ભૂત  
અને ભવિષ્યકાલિક ક્રિયા પણ સમજી લેવી જોઈએ. આગળ પણ જે ઠેકાણે  
વર્તમાનકાલિક ક્રિયાપદનો પ્રયોગ છે, ત્યાં પણ ભૂત અને ભવિષ્યકાલિક ક્રિયા-  
પદનો ઉપલક્ષણથી અધ્યાહાર કરી લેવો જોઈએ.

“એવં ભાષન્તે” આ સમસ્ત તીર્થંકર મહાપ્રભુઓંએ દેવ મનુષ્યોની સભામાં  
પોતાની અર્ધમાગધીભાષાદ્વારા-જે ભાષા સમસ્ત જીવોની ભાષામાં પરિણત થઈ  
જાય છે-આ પ્રકારે સ્પષ્ટ કહ્યું છે.

सर्वेऽर्हन्तो भगवन्त एवं किमाख्यान्तीति जिज्ञासायामाह—‘सर्वे पाणा’ इत्यादि । सर्वे=निरवशेषाः प्राणाः=प्राणिनः पृथिव्यादयः स्थावराः, द्वीन्द्रियादि-पञ्चेन्द्रियपर्यन्ताः त्रसाश्चेत्यर्थः, इन्द्रियादिप्राणानां यथासंभवं धारणात् तेषु प्राणित्वमस्तीति भावः । तथा सर्वे भूताः=भवन्ति भविष्यन्त्यभूवन्निति च भूताः चतुर्दश-भूतग्रामरूपाः, तथा—सर्वे जीवाः=जीवन्ति जीविष्यन्त्यजीविषुरिति जीवाः नार-कतिर्यङ्मनुष्यदेवरूपाश्चतुर्गतिकाः, तथा सर्वे सत्त्वाः=स्वकृतकर्मजन्यसुखदुःख-सत्तावन्तः । तत्त्वानां भेदपर्यायैः प्रतिबोधनमर्हन्तो भगवन्तः कुर्वन्तीति कृत्वा पर्यायश-ब्दनिर्देशः । यद्वा—सर्वप्राणिषु पुनः पुनर्दयाभावसमुत्पादनाय पर्यायशब्दनिर्देशः । न हन्तव्याः=दण्डादिभिर्न ताडयितव्या इत्यर्थः । नाज्ञापयितव्याः=अनभिमतकार्येषु न प्रवर्तयितव्याः, न परिग्रहीतव्याः=इमे भृत्यादयो ममेति कृत्वा परिग्रहरूपेण स्वाधीन-तया न स्वीकर्तव्याः, न परितापयितव्याः=न अन्नपानाद्यवरोधनेन ग्रीष्मातपादौ स्थापनेन च पीडनीयाः, नापद्रवयितव्याः=न विषशस्त्रादिना मारयितव्याः ॥मू० १॥

‘एवं प्रज्ञापयन्ति’ हेतु दृष्टान्तादिक के द्वारा अच्छी तरह से समझाया है, और ‘एवं प्ररूपयन्ति’ भेदप्रभेदपूर्वक स्पष्ट रीति से निर्णय किया है ।

समस्त तीर्थङ्करों ने क्या कहा ? इस प्रकार की जिज्ञासा होने पर भगवान् कहते हैं—‘सर्वे पाणा’ इत्यादि ।

समस्त प्राणी, समस्त भूत, समस्त जीव और समस्त सत्त्वों को अर्थात् किसी को भी ‘न हन्तव्या’ डंडे आदि से न हने । ‘न अज्जावेयव्या’ न इनको मारनेके लिये आज्ञा दे । ‘न परिघेतव्या’ ‘ये भृत्यादिक मेरे अधीन हैं’ ऐसा समझ कर उन्हें दास नहीं बनावें । ‘न परियावेयव्या’ अन्नपानी आदि बंध करके तथा धूप आदिमें रख कर न पीड़ा पहुंचावे ‘न किलामेयव्या’ बन्धनादि से न खेद पहुंचावे ‘न उद्देयव्या’ इनका

‘एवं प्रज्ञापयन्ति’ हेतुदृष्टान्तादिकथी सारी रीते समज्जान्थुं छे अने “ एवं प्ररूपयन्ति ” भेदप्रभेदपूर्वक स्पष्ट रीतिथी निर्णय कर्यो छे.

समस्त तीर्थङ्करेण्ये शुं कल्युं ? आ प्रकरणी ज्ञाणुवानी धम्मिथा यवाथी लग-वान् कळे छे—‘सर्वे पाणा’ इत्यादि.

समस्त प्राणी, समस्त भूत, समस्त जीव अने समस्त सत्त्वोने अर्थात् कोधने यणु ‘न हन्तव्या’ दाडडी आदिथी न भारे. ‘न अज्जावेयव्या’ न भारवाने भाटे आज्ञा आपे, ‘न परिघेतव्या’ ‘आ नोडशदि भारी आज्ञाभां छे’ जेवुं समज्जने तेओने दास न बनावे. ‘न परियावेयव्या’ अन्न पाणी आदि बंध करीने तथा तडका आदिभां राणीने न पीडा पडोंगाडे. ‘न किलामेयव्या’ बंधनादिथी जेद न

વિષ શસ્ત્રાદિક સે પ્રાણવિયોગ ન કરે. પ્રાણી, ભૂત, જીવ ઓર સત્ત્વ, યે યદ્યપિ જીવ કે હી પર્યાયવાચી શબ્દ હૈ, ફિર ખી ભિન્નરૂપસે જો इनका यहां पर निर्देश किया है वह पर्यायभेद मान कर ही किया है, और पर्यायभेद से अर्थभेद होता है इसलिये यहां पुनरुक्ति दोषकी संभावना नहीं है। जो इन्द्रियादिक दश प्राणोंको यथासंभव धारण करते हैं वे प्राणी कहलाते हैं। वे त्रस और स्थावरके भेद से दो प्रकारके होते हैं। द्वीन्द्रिय से लेकर पंचेन्द्रियपर्यन्त जीव त्रस, और एकेन्द्रिय-पृथिवीकायादिक जीव स्थावर हैं। ये सब हैं, होंगे एवं हुए हैं, इसलिये भूत कहलाते हैं। ये चौदह प्रकारके हैं। ये सब जीते हैं, आगे भी जीयेंगे और भूतकाल में जीये, इसलिये इनकी 'जीव' संज्ञा सार्थक है। नारकी, तिर्यञ्च, मनुष्य और देवके भेदसे ये चार गतिवाले हैं। तथा ये समस्त ही अपने-कर्मोदयजन्य सुख दुःखोंकी सत्तावाले होते रहते हैं; इसलिये सत्त्व हैं।

તીર્થંકર પ્રભુ તત્ત્વોં કી વિવેચના, ભેદ ઓર પર્યાયોં કે દ્વારા કિયા કરતે હૈ, ઇસ કારણસે પર્યાય-શબ્દોંકા નિર્દેશ કિયા ગયા હૈ। અથવા 'સર્વ જીવોંકે ડપર અત્યન્ત દયા રાખની ચાહિયે' ઇસ વાત કો વાર વાર સમજાને કે અભિપ્રાય સે ખી ઇન પર્યાય શબ્દોંકા કથન હૈ ॥ સૂ. ૧ ॥

પોહંચાડે. 'ન હ્રદયેવ્વા' વિષ શસ્ત્રાદિકથી તેના પ્રાણોના વિયોગ ન કરે. પ્રાણી, ભૂત, જીવ અને સત્ત્વ, આ બધા શબ્દો જો કે જીવના જ પર્યાય શબ્દો છે તે પણ ભિન્ન ભિન્ન રૂપથી જોઓને આ ઠેકાણે નિર્દેશ કર્યો છે તે પર્યાયભેદ માનીને જ કર્યો છે, અને પર્યાયભેદથી અર્થભેદ થાય છે, માટે આ ઠેકાણે પુનરુક્તિ દોષની સંભાવના નથી. જે ઇન્દ્રિયાદિક દશ પ્રાણોને યથાસંભવ ધારણ કરે છે તે પ્રાણી કહેવાય છે. તે ત્રસ અને સ્થાવરના ભેદથી બે પ્રકારે હોય છે. એકેન્દ્રિયથી લઈને પંચેન્દ્રિયપર્યન્ત જીવ ત્રસ, અને એકેન્દ્રિય-પૃથ્વીકાયાદિક જીવ સ્થાવર છે. આ બધા-છે; થશે. તેમજ થએલ છે, તેથી ભૂત કહેવાય છે. તે ચૌદ પ્રકારના છે. એ બધા જીવે છે આગળ પણ જીવશે અને ભૂતકાળમાં જીવ્યા તેથી તેની 'જીવ' સંજ્ઞા સાર્થક છે. નારકી, તિર્યંચ, મનુષ્ય અને દેવના ભેદથી એ ચાર ગતિવાળા છે. તથા એ સમસ્ત પોતપોતાનાં કર્મોદયજન્ય સુખ દુઃખોની સત્તાવાળા હોય છે તેથી સત્ત્વ છે.

તીર્થંકરપ્રભુ તત્ત્વોની વિવેચના, ભેદ અને પર્યાયો દ્વારા કરે છે. આ બધાથી પણ પર્યાય-શબ્દોનો નિર્દેશ કરવામાં આવ્યો છે. અથવા 'સર્વ જીવોની ઉપર અત્યંત દયા રાખવી જોઈએ' આ વાતને વારંવાર સમજાવવાના અભિપ્રાયથી આ પર્યાય-શબ્દોનું કથન છે ॥ સૂ. ૧ ॥

सम्यक्त्वमुद्गावयितुम् आर्हतधर्मस्य महिमानमाह—‘एस धम्मे’ इत्यादि।

मूलम्—एस धम्मे सुद्धे निइए सासए समिच्च लोयं खेय-  
ण्णेहिं पवेइए, तं जहा—उट्टिएसु वा अणुट्टिएसु वा, उवट्टिएसु  
वा अणुवट्टिएसु वा, उवरयदंडेसु वा अणुवरयदंडेसु वा, सोवहि-  
एसु वा अणोवहिएसु वा, संजोगरएसु वा असंजोगरएसु वा। सू० २॥

छाया—एष धर्मः शुद्धः नित्यः शाश्वतः समेत्य लोकं खेदज्ञैः प्रवेदितः । तद्  
यथा—उत्थितेषु वा अनुत्थितेषु वा, उपस्थितेषु वा अनुपस्थितेषु वा, उपरतदण्डेषु  
वा अनुपरतदण्डेषु वा, सोपधिकेषु वा अनुपधिकेषु वा, संयोगरतेषु वा  
असंयोगरतेषु वा ॥ सू० २ ॥

टीका—एषः=अनन्तरोक्तः सर्वार्हद्भगवत्प्ररूपितः, धर्मः=सर्वप्राणिप्राणातिपा-  
तविरमणादिरूपः, शुद्धः=निर्मलः—पापानुबन्धरहित इत्यर्थः । आर्हतधर्मादन्यस्तु  
धर्मत्वेन यः शाक्यादेरभिमतः स खल्वसर्वज्ञसरागोपदिष्टत्वेन हिंसादिदोषानुब-  
न्धसद्भावेन च न शुद्ध इति भावः ।

सम्यक्त्वका उद्गावन करनेके लिये जिनेन्द्रप्रतिपादित धर्मकी महिमा  
कहते हैं—‘एस धम्मे’ इत्यादि ।

समस्त जीवों के घात करनेका निषेधरूप यही धर्म—जिसे समस्त  
तीर्थङ्करोंने प्रतिपादित किया है—पापानुबन्ध से रहित होनेसे निर्मल है,  
इसके अतिरिक्त बौद्धादिकों का अभिमत जो सिद्धान्त है वह हिंसादि-  
दोषविशिष्ट होनेसे निर्मल नहीं है; यह बात ‘निर्मल’ इस पद से प्रकट  
होती है । पञ्चमहाविदेहों में सदा वर्तमान होने के कारण यह अविनाशी-  
ध्रौव्यस्थितिवाला है, शाश्वतगति—मोक्षका कारण होनेसे, अथवा नित्य  
होनेसे यह शाश्वत है, अतः यही धर्म श्रद्धा करने योग्य एवं ग्रहण करने

सम्यक्त्व प्रगट करवा माटे जनेन्द्र प्रतिपादित धर्मनो महिमा कहे छे—  
‘एस धम्मे’ इत्यादि.

समस्त जिवोना घात करवाना निषेधइय आ न धर्म के जेने समस्त  
तीर्थङ्करोणे प्रतिपादित कयो छे, पापानुबन्धथी रहित होवाथी निर्मल छे. जेनाथी  
अतिरिक्त बौद्धादिकोनो अलिमत जे सिद्धान्त छे ते हिंसादिदोषविशिष्ट  
होवाथी निर्मल नथी; आ बात “निर्मल” आ यहथी प्रगट थाय छे. पंच-  
महाविदेहोमां सदा वर्तमान होवाथी आ अविनाशी—ध्रुव स्थितिवाणो छे. शाश्वत-  
गति—मोक्षनुं कारण होवाथी, अथवा नित्य होवाथी ते शाश्वत छे. तेथी आ न



અતઃ એવૈષ નિત્યઃ=અવિનાશી, સર્વદા પશ્ચસુ મહાવિદેહેષુ સદ્ભાવાત્ । તથા શાશ્વતઃ શાશ્વતગતિકારણત્વાત્, યદ્વા-યતો નિત્યસ્તસ્માચ્છાશ્વતઃ । અયમેવ ધર્મઃ શ્રદ્ધેયો ગ્રાહ્યથેત્યત્ર હેતું પ્રદર્શયન્ વિશેષણાન્તરમાહ-‘ સમેત્ય ’ ઇત્યાદિ । લોકં=પદ્મજીવનિકાયં દુઃસ્વદાવાનલાન્તઃપતિતં, સમેત્ય=કેવલજ્ઞાનેન પ્રત્યક્ષતયા વિજ્ઞાય, સ્વેદજૈઃ=સર્વપ્રાણિદુઃસ્વાભિજૈસ્તીર્થકરૈઃ, પ્રવેદિતઃ=પ્રતિવોદિતઃ । ધર્મોઽયં મયા ન સ્વમનીપાકલ્પિત ઇતિ ચ મુધર્મસ્વામિના શિષ્યમુદ્દિશ્ય સૂચિતમ્ ।

તીર્થકરાણામુપદેશો યથા ભવતિ, તં પ્રકારમાહ—તદ્ યથેત્યાદિ । યથા=યેન પ્રકારેણ તત્ પ્રતિવોદિતં તત્ પ્રદર્શયામીત્યર્થઃ । ઉત્થિતેષુ વા-ઉત્થિતાઃ=ધર્માચરણાર્થમુદ્યતાઃ, તેષુ વા, તથા-અનુત્થિતેષુ=અનુત્થિતાઃ-તદ્વિપરીતાસ્તેષુ વા । ઉત્થિતાઽનુત્થિતસાધારણસ્તદુપદેશો ભવતીત્યર્થઃ ।

યોગ્ય હૈ । યદ્ અન્ય વિશેષણોં કે દ્વારા સ્ખુલાસા કરતે હુએ શ્રીસુધર્માસ્વામી કહતે હૈં કિ-સમસ્ત જીવોં કે નાના પ્રકારકે ક્લેશોંકે જ્ઞાતા શ્રીતીર્થકર પ્રભુને દુઃસ્વરૂપી દાવાનલસે જલતે હુએ ઇસ પદ્મજીવનિકાયસ્વરૂપ લોક કો અપને કેવલજ્ઞાનસે પ્રત્યક્ષ કર ઇસી ધર્મકા ઉપદેશ દિયા હૈ, અતઃ ધર્મકે આદિ પ્રવર્તક શ્રીતીર્થકર પ્રભુ હી હૈં । ઇસ પ્રકાર શ્રીસુધર્માસ્વામી અપને શિષ્ય જમ્બૂસ્વામીસે સૂચિત કિયા હૈ કિ મૈને અપની કલ્પના સે કુછ ભી નહીં કહા હૈ ।

અન તીર્થકરોંકા ઉપદેશ-પ્રવાહ જિસ એકરૂપસે જહાં ૨ વહા ડસી કો પ્રકટ કરતે હુએ શ્રીસુધર્માસ્વામી કહતે હૈં કિ-અનકા ઉપદેશ સિર્ફ અન્હીં જીવોંકે લિયે નહીં હુઆ જો ધર્માચરણ કરનેમેં ઉત્થિત-ઉદ્યત થે, કિન્તુ જો અનુત્થિત-અનુદ્યત થે અન્હેં ભી પ્રભુને ધર્મ સમજાયા, અર્થાત્

ધર્મ, શ્રદ્ધા કરવા યોગ્ય અને ગ્રહણ કરવાયોગ્ય છે, આ વાતનો અન્ય વિશેષણોંદ્વારા ખુલાસો કરતાં શ્રી સુધર્માસ્વામી કહે છે કે-સમસ્ત જીવોના નાના પ્રકારના ક્લેશોના જ્ઞાતા શ્રી તીર્થકરપ્રભુએ દુઃખરૂપી દાવાનળથી બળતાં આ પદ્મજીવનિકાયસ્વરૂપ લોકને પોતાના કેવલજ્ઞાનથી પ્રત્યક્ષ કરીને આ જ ધર્મનો ઉપદેશ આપ્યો છે. એથી આ ધર્મના આદિપ્રવર્તક શ્રી તીર્થકરપ્રભુ જ છે, આ પ્રકારે શ્રીસુધર્માસ્વામી પોતાના શિષ્ય જમ્બૂસ્વામીને સૂચિત કરે છે કે-મેં મારી પોતાની કલ્પનાથી કાંઈ પણ નથી કહ્યું.

આ તીર્થકરોના ઉપદેશ-પ્રવાહ જે એકરૂપથી ન્યાં ન્યાં થયો તેને જ પ્રકાશિત કરતાં શ્રીસુધર્માસ્વામી કહે છે કે-એમનો ઉપદેશ કેવલ તેવા જીવો માટે નથી થયો કે જે ધર્માચરણ કરવામાં ઉદ્યત હતા, કિન્તુ જે જીવો ધર્માચરણ કરવામાં અનુદ્યત હતા તેમને પણ પ્રભુએ ધર્મ સમજાવ્યો. અર્થાત્ એમનો ઉપ-

યદ્વા—દ્રવ્યતઃ યે ઉત્થિતાઃ, અનુત્થિતાઃ, તેષુ તેષુ વા । યથા—ઉત્થિતેષ્વે-  
કાદશસુ ગણધરેષુ શ્રીવર્ધમાનસ્વામિના ભગવતા ધર્મ ઉપદિષ્ટઃ । અનુત્થિતેષુ યથા  
ચણ્ડકૌશિકાદિષુ । તથા—ઉપસ્થિતેષુ વા =ધર્મે શ્રોતું ગ્રહીતું વા યે વાઙ્મનન્તિ  
તે ઉપસ્થિતાસ્તેષુ વા, યથા ચિલાતિપુત્રાદિષુ । અનુપસ્થિતેષુ વા=તદ્વિપરીતા  
અનુપસ્થિતાઃ તેષુ વા, યથા—ઇન્દ્રનાગાદિષુ, અનિચ્છયાઽપિ શ્રવણેન કર્મપરિણામ-  
વૈચિત્ર્યાત્ તેષાં ક્ષયોપશમસંભવાત્, યથા રોહકચોરસ્ય ક્ષયોપશમઃ સંજાતઃ ।  
ઉપસ્થિતાનુપસ્થિતેષ્વપિ સમાનસ્તદુપદેશો ભવતીત્યર્થઃ ।

उनके उपदेशका प्रवाह उभयसाधारण (दोनोंके लिये समान) था । अथवा  
जो जीव धर्माचरण से उस समय बाह्य भी थे, किंतु भगवानके दिव्य उप-  
देशका पान कर जो सुमार्ग में आनेकी योग्यता रखते थे; उन्हें भी प्रभुने  
धर्मका उपदेश दिया । जैसे—ग्यारह (११) गणधर जो द्रव्यतः उत्थित थे  
उन्हें श्रीवर्धमानप्रभुने सद्धर्मका स्वरूप समझा कर सन्मार्गगामी किया ।  
अनुत्थितों में भी इसी प्रकार से प्रभुके उपदेशका प्रवाह बहा है,  
जैसे चण्डकौशिकादिकों में । धर्मको सुननेकी अभिलाषा रखनेवाला  
चिलातिपुत्रादिकोंको, और अनुपस्थित—इससे बहिर्भूत इन्द्रनागा-  
दिकों को भी प्रभुने अपने धर्मके उपदेशका पान कराया है । धर्मके  
जाननेकी अभिलाषा से रहित प्राणी को भी जो धर्म सुनाया जाता  
है उसका कारण यही है कि जिस प्रकार अनिच्छा से पिया हुआ  
भी अमृत अपने गुण को प्रकट करता है उसी प्रकार श्रुतधर्म भी कर्म के  
परिणामनकी विचित्रता से क्षयोपशम का कारण होता हुआ अपना प्रभाव

દેશપ્રવાહ બનનેને માટે સાધારણ—બરાબર છે. અથવા જે જીવો ધર્માચરણથી  
તે વખત બહાર પણ હતા, કિન્તુ ભગવાનના દિવ્ય ઉપદેશનું પાન કરીને જે  
સુમાર્ગમાં આવવાની યોગ્યતા રાખતા હતા, તેને પણ ભગવાને ઉપદેશ આપ્યો  
જેમ ગ્યારહ (૧૧) ગણધરે જે દ્રવ્યથી ઉત્થિત હતા તેઓને શ્રીવર્ધમાન પ્રભુએ  
સદ્ધર્મનું સ્વરૂપ સમજાવીને સન્માર્ગ તરફ વાળ્યા. અનુત્થિતોમાં પણ આ પ્રકારે  
પ્રભુનો ઉપદેશપ્રવાહ આવ્યો છે, જેમ ચંડકૌશિકાદિકોમાં. ઉપસ્થિત-ધર્મને  
સાંભળવાની અભિલાષા રાખવાવાળા ચિલાતિપુત્રાદિકોને, અને અનુપસ્થિત-  
એનાથી બહિર્ભૂત ઇન્દ્રનાગાદિકોને પણ પ્રભુએ પોતાના ધર્મના ઉપદેશનું પાન  
કરાવ્યું છે. ધર્મ સાંભળવાની અભિલાષાથી રહિત પ્રાણીને પણ જે ધર્મ સાંભળા-  
વવામાં આવે છે તેનું કારણ એ જ છે કે જે પ્રકારે અનિચ્છાથી પિવાએલું પણ  
અમૃત પોતાના ગુણને પ્રગટ કરે છે, તે જ પ્રકારે શ્રુતધર્મ પણ કર્મના  
પરિણામનની વિચિત્રતાથી ક્ષયોપશમનું કારણ થતાં પોતાનો પ્રભાવ પ્રગટ કરે છે,

તથા-ઉપરતદણ્ડેષુ વા-એકેન્દ્રિયાદીન્ પ્રાણિનો દણ્ડયતીતિ દણ્ડો મનોવા-કાયરૂપઃ, ઉપરતો દણ્ડો યેષાં તે ઉપરતદણ્ડાઃ-મુનયઃ, તેષુ વા, તદ્વિપરીતા અનુ-પરતદણ્ડાઃ-ગૃહસ્થાઃ, તેષુ વા । એતદુભયસાધારણોઽપ્યુપદેશસ્તેષામિત્યર્થઃ ।

તથા-સોપધિકેષુ વા ઇતિ । ઉપધીયતે=ગૃહ્યતે ઇત્યુપધિઃ દ્રવ્યતો હિરણ્યસુવ-ર્ણાદિઃ, ભાવતો રાગદ્વેષાદિઃ, સહોપધિના વર્તન્ત ઇતિ સોપધિકા-ભરતાદયસ્તેષુ વા । અનુપધિકેષુ વા=ન વિદ્યતે ઉપધિર્યેષાં તેઽનુપધિકાઃ-કાષ્ટહારાદયસ્તેષુ વા । એતદ્વયેઽપિ તીર્થકરોપદેશઃ સમાન એવ ભવતીત્યર્થઃ ।

પ્રકટ કરતા હૈ । ઇસ વિષયમેં રોહતક ચોરકા દૃષ્ટાન્ત શાસ્ત્રોં મેં પ્રસિદ્ધ હી હૈ । ઇસી પ્રકાર ઉપસ્થિતોં ઓર અનુપસ્થિતોં મેં, ઉપરતદંડવાલોં મેં ઓર અનુપરતદંડવાલોં મેં, સોપધિકોં મેં ઓર નિરુપધિકોં મેં, તથા સંયોગરતોં મેં ઓર અસંયોગરતોં મેં બી પ્રમુકા ધાર્મિક ઉપદેશ એક હી સરીખા હુઆ હૈ । જો પ્રમુ કા ધાર્મિક ઉપદેશ સુનનેકી અભિલાષાસે સમવસરણ મેં આતે હૈં વે ‘ઉપસ્થિત’ કહલાતે હૈં, ઓર ઇસસે વિપરીત ‘અનુપસ્થિત’ । એકેન્દ્રિયા-દિક સ્થાવર ઓર છીન્દ્રિયાદિક ત્રસ જીવોં કી હિંસાકે કારણભૂત માન-સિક, વાચિક એવં કાયિક વ્યાપારોં સે જો નિવૃત્ત હો ચુકે હૈં વે ‘ઉપ-રતદણ્ડ’ કહે જાતે હૈં, જૈસે મુનિરાજ । ઇસસે ઉલ્ટે ‘અનુપરતદણ્ડ’ હૈં જૈસે ગૃહસ્થ । જો ગ્રહણ કી જાવે ઉસે ‘ઉપધિ’ કહતે હૈં । યહ દો પ્રકાર કી હૈ-એક ‘દ્રવ્ય-ઉપધિ’ દૂસરી ‘ભાવ-ઉપધિ’ । ‘દ્રવ્ય-ઉપધિ’-હિરણ્ય-સુવર્ણાદિ, ઓર ‘ભાવ-ઉપધિ’ રાગદ્વેષાદિ હૈં । ઇસ ઉપધિસે યુક્ત જો હોતે હૈં વે ‘સોપધિક’ જૈસે ભરતાદિક, ઓર ઇસ ઉપધિસે રહિત જો હૈં

આ વિષયમાં રોહતક ચોરનો દૃષ્ટાન્ત શાસ્ત્રમાં પ્રસિદ્ધ છે. આ પ્રકારે ઉપસ્થિતો અને અનુપસ્થિતોમાં, ઉપરતદંડવાળામાં અને અનુપરતદંડવાળામાં, સોપધિકોમાં અને નિરુપધિકોમાં, તથા સંયોગરતોમાં અને અસંયોગરતોમાં પણ પ્રભુનો ધાર્મિક ઉપદેશ એક જ સરળો છે. જે પ્રભુનો ધાર્મિક ઉપદેશ સાંભળવાની ભાવનાથી સમવસરણમાં આવે છે તેઓ ‘ઉપસ્થિત’ કહેવાય છે. અને તેનાથી વિપરીત ‘અનુપસ્થિત.’ એકેન્દ્રિયાદિક સ્થાવર અને બેન્દ્રિયાદિક ત્રસ જીવોની હિંસાના કારણભૂત માનસિક વાચિક અને કાયિક વ્યાપારોથી જે નિવૃત્ત થઈ ચુકેલાં તે ‘ઉપરતદણ્ડ’ કહેવાય છે, જેમ મુનિઓ. એનાથી ઉલટાં “અનુપરતદણ્ડ” છે, જેમ ગૃહસ્થો. જે ગ્રહણ કરવામાં આવે તેને ‘ઉપધિ’ કહે છે. આ બે પ્રકારની છે. એક દ્રવ્ય-ઉપધિ અને બીજી ભાવ-ઉપધિ. દ્રવ્ય-ઉપધિ હિરણ્યસુવર્ણાદિ અને ભાવ-ઉપધિ રાગદ્વેષાદિ છે. આ ઉપધિસહિત જે હોય છે તે ‘સોપધિક’ જેમ

તથા-સંયોગરતેષુ વા-સંયોગઃ પુત્રકલત્રાદિસમ્બન્ધસ્તસ્મિન્ રતા=આસક્તાઃ  
સંયોગરતાઃ=ગૃહસ્થા દેશવિરતિશ્રાવકાસ્તેષુ વા । અસંયોગરતેષુ-અસંયોગઃ=સંયમ-  
સ્તત્ર રતા અસંયોગરતાઃ=ઉપશમશ્રેણ્યાદિસમ્પન્નાસ્તેષુ વા । એતદુભયવિધેષ્વપિ  
સમાન એવ તદુપદેશો ભવતીત્યર્થઃ ।

અયં ભાવઃ—તીર્થંકરાણામુપદેશઃ સૂર્યોદય ઇવ પ્રવોદ્યવિશેષમનપેક્ષ્ય પ્રવ-  
ર્તતે, તસ્માત્ તત્ર નાસ્તિ રાગદ્વેષપક્ષપાતાદિદોષલેશાવસર ઇતિ ॥ સૂ૦ ૨ ॥

સમ્યક્ત્વસ્ય સ્વરૂપમાહ—‘તત્ત્વં’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્—તત્ત્વં ચેયં તદા ચેયં અસ્મિંસ ચેયં પવુચ્ચઈ ॥સૂ૦૩॥

છાયા—તથ્યં ચેદં તથા ચેદં અસ્મિંશ્ચેદં પ્રોચ્યતે ॥સૂ૦ ૩ ॥

ટીકા—ઈદં=ભગવદ્વચનં તથ્યં ચ=સત્યમેવ । અત્ર સૂત્રે ચકારો નિયમાર્થઃ ।

વે ‘નિરુપધિક’ હૈં, જૈસે કઠિયારાદિક । પુત્રકલત્રાદિક કે મોહમેં જો  
ફંસે હુએ હૈં એસે ગૃહસ્થ ‘સંયોગરત’ જૈસે દેશવિરતિ શ્રાવક, ઓર इनके  
त्यागी संयमी साधु ‘असंयोगरत’ कहलाते हॆं जैसे उपशमश्रेण्यादिसंपन्न ।  
इसका फलितार्थ यही है कि जिस प्रकार सूर्यका उदय ऊंचनीच के पक्षपात  
से रहित हो कर समस्त जगतको प्रकाश देता है ठीक उसी तरह प्रभुका  
दिव्य धार्मिक उपदेश भी उस्थित और अनुत्थितादिकों के पक्षपात बिना  
समस्त जीवोंके हितके लिये एक ही जैसा होता है, कारण कि पक्षपाता-  
दिदोषों को कारण रागद्वेष ही है, और प्रभु वीतरागी हैं, इसलिये वे  
पक्षपातादि दोषों से रहित हैं ॥ सू० २ ॥

સમ્યક્ત્વ કે સ્વરૂપ કો પ્રકટ કરતે હુએ શ્રી સુધર્માસ્વામી કહતે હૈં—  
‘તત્ત્વં ચેયં’ ઇત્યાદિ ।

ભગવાન્ તીર્થંકર પ્રભુકે વે વચન સત્ય હી હૈં, કારણ કિ જિન પ-

ભરતાદિક અને આ ઉપધિરહિત જે છે તે ‘નિરુપધિક’ છે, જેમ કઠિયારાદિક.  
પુત્રકલત્રાદિના મોહમાં જે ફસેલા છે એવા ગૃહસ્થી ‘સંયોગરત’ જેમ દેશવિરતિ  
શ્રાવક, અને તેના ત્યાગી સંયમી સાધુ ‘અસંયોગરત’ કહેવાય છે, જેમ ઉપશમ-  
શ્રેણ્યાદિસંપન્ન. એનો ભાવ એ છે કે જેમ સૂર્યનો ઉદય ઉંચનીચના પક્ષપાતથી  
રહિત થઈને સમસ્ત જગતને પ્રકાશ આપે છે તે જ માફક પ્રભુનો દિવ્ય ધાર્મિક  
ઉપદેશ પણ ઉત્થિત અને અનુત્થિતાદિકોના પક્ષપાતથી રહિત થઈને સમસ્ત  
જીવના હિતને માટે એક જ સરખો હોય છે, કેમ કે પક્ષપાતાદિ દોષોનું  
કારણ રાગ-દ્વેષ જ છે અને પ્રભુ વીતરાગી છે; તેથી તે પક્ષપાતાદિદોષથી  
રહિત છે ॥ સૂ૦ ૨ ॥

સમ્યક્ત્વના સ્વરૂપને પ્રકટ કરીને શ્રીસુધર્માસ્વામી કહે છે—‘તત્ત્વં ચેયં’ ઇત્યાદિ.  
ભગવાન તીર્થંકર પ્રભુના તે વચનો સત્ય જ છે, કારણ કે જે પદાર્થોનું જે

इदं=तद्वाक्यार्थरूपं वस्तु, तथा च=तथैव-तीर्थकरभगवद्भिर्यथा प्ररूपितं तथैव वस्तुसद्भावोऽपीत्यर्थः । एकेन्द्रियादिपञ्चेन्द्रियान्ताः स्थावरत्रसरूपाः सर्वे प्राणिनो न हन्तव्याः, एष धर्मः शुद्धो नित्यः शाश्वत इत्यादि यथा प्ररूपितं तद्वाक्यार्थोऽपि तथैव विद्यते, तस्मात् सत्यमेवेदं वचनमिति भावः । अनेन श्रद्धानलक्षणं सम्यक्त्वं प्ररूपितम् । अस्मिंश्चेदं प्रोच्यते इति-इदं=श्रद्धानलक्षणं सम्यक्त्वम्, अस्मिंश्च=आर्हतप्रवचनविषय एव प्रोच्यते=विधेयतया प्रकर्षेणोपदिश्यते । केवलमार्हत-प्रवचनविषये पुनः पुनरतिशयेन वा श्रद्धानलक्षणं सम्यक्त्वमास्थेयमित्युपदिश्यते तीर्थकरैरित्यर्थः ॥ सू० ३ ॥

દાર્થોંકા જિસ સ્વરૂપ કા ભગવાને અપની દિવ્યવાણીદ્વારા પ્રતિપાદન કિયા હૈ ઉન પદાર્થોંકા સ્વરૂપ ઔર ઉનકા અસ્તિત્વ ડસી પ્રકાર સે હૈ; અન્યથા નહીં । ઇસ પ્રકારકા તત્ત્વાર્થશ્રદ્ધાનરૂપ સમ્યક્ત્વ સિર્ફ અર્હન્ત પ્રભુકે દ્વારા પ્રતિપાદિત વચનોંમેં હી વિશ્વાસ રાખને સે જીવોંકો પ્રાપ્ત હોતા હૈ ।

इस सूत्रमें तीन बार “ च ” शब्दका प्रयोग किया है वह नियम का द्योतक है । इससे यह समझना चाहिये कि भगवानने जो त्रस स्थावर जीवों को नहीं मारनेरूप शुद्ध, नित्य, शाश्वत धर्म के उपदेशरूप वचन कहे हैं वे सत्य हैं । कारण कि जिन पदार्थों का प्रतिपादन प्रभुने अपनी वाणी द्वारा किया है उन पदार्थों का स्वरूप ठीक वैसा ही है, अर्थात्—भगवान् के वचन इसलिये प्रमाण हैं कि उन वचनों के प्रतिपाद्य अर्थमें किसी भी प्रकार से विसंवादादिक नहीं देखा जाता । अर्थ

સ્વરૂપમાં ભગવાને પોતાની દિવ્ય વાણીદ્વારા પ્રતિપાદન કર્યું છે તે પદાર્થોંનું સ્વરૂપ અને તેનું અસ્તિત્વ તે પ્રકારનું જ છે; અન્યથા નહિ. આ પ્રકારનું તત્ત્વાર્થશ્રદ્ધાનરૂપ સમ્યક્ત્વ ફક્ત અર્હતપ્રભુદ્વારા પ્રતિપાદિત વચનોમાં જ વિશ્વાસ રાખવાથી જીવોને પ્રાપ્ત થાય છે.

આ સૂત્રમાં જે ત્રણ વાર “ ચ ” શબ્દનો પ્રયોગ કર્યો છે તે નિયમનો દ્યોતક છે. તેથી એ સમજવાનું છે કે ભગવાને જે ત્રસ સ્થાવર જીવોને નહિ મારવારૂપ શુદ્ધ, નિત્ય, શાશ્વત ધર્મના ઉપદેશરૂપ વચન કહ્યું છે તે સત્ય જ છે, કારણ કે જે પદાર્થોંનું પ્રતિપાદન પ્રભુએ પોતાની વાણીદ્વારા કર્યું છે તે પદાર્થોંનું સ્વરૂપ તેવું જ છે. અર્થાત્ ભગવાનનું વચન એટલા માટે પ્રમાણ છે કે તે વચનોના પ્રતિપાદ્ય અર્થમાં કોઈ પણ પ્રકારથી વિસંવાદાદિક નથી દેખાતું.

उक्तरीत्या सन्यक्तवरूपं प्रदर्श्य, तत्प्राप्त्यनन्तरं तत्र स्थिरीकरणाय सन्यग्दृष्टेः कर्तव्यं प्रतिबोधयति—‘ तं आइत्तु ’ इत्यादि ।

मूलम्—तं आइत्तु न निहे न निखिखवे जाणित्तु, धम्मं जहा—तहा ॥ सू० ॡ ॥

छाया—तत् आदाय न निहुवीत, न निक्षिपेत्, ज्ञात्वा धर्मं यथा—तथा ॥ॡ॥

टीका—तत्=सन्यग्दर्शनापरनामकं सन्यक्तवम्, आदाय=गृहीत्वा प्राप्येति यावत्, धर्म=श्रुतचारित्ररूपं, यथा—तथा=येन केनापि प्रकारेण गुरूपदेशादिना ज्ञात्वा, यद्वा—धर्मं वस्तुस्वभावं ज्ञात्वा न निहुवीत, सन्यक्तवं तत्कार्याऽकरणेन नाऽऽच्छादयेदित्यर्थः । प्रशमसंवेगनिर्वेदानुकम्पादिभिः सन्यक्तवं प्रकाशयेदिति

की प्रमाणतासे ही वचनमें प्रमाणता आती है । जब प्रतिपाद्य अर्थरूप धार्मिक उपदेश विसंवाद आदि से रहित है तो फिर क्यों नहीं उसके प्रतिपादक वचनों में सत्यता आवेगी ? अवश्य ही आवेगी । इस प्रकारकी दृढ़ आस्था ही तत्त्वार्थश्रद्धानरूप सन्यक्तव है ॥ सू० ३ ॥

पूर्वोक्त रीतिसे सन्यक्तवका स्वरूप प्रकट कर उसकी प्राप्तिके बाद उसमें सुस्थिर करनेके लिये सन्यग्दृष्टि जीव का कर्तव्य प्रकट करते हुए श्री सुधर्मास्वामी कहते हैं—‘ तं आइत्तु न निहे ’ इत्यादि ।

जीव उस समकित को प्राप्त कर गुरूपदेशादिकरूप जिस किसी भी प्रकारसे श्रुतचारित्ररूप धर्म को अथवा वस्तुस्वभावको जान कर उस समकित को आच्छादित नहीं करे और न उसको छोड़े । समकित को प्राप्त कर लेने पर समकित जीव को प्रशम, संवेग, निर्वेद और

अर्थनी प्रमाणताथी न वचनभा प्रमाणता आवे छे. न्यारे प्रतिपाद्य—अर्थरूप धार्मिक उपदेश विसंवाद आदिथी रहित छे तो पछी तेना प्रतिपादक वचनोभां केम सत्यता न आवे ? अवश्य न आवे. आ प्रकारनी दृढ़ आस्था न तत्त्वार्थ श्रद्धानरूप सन्यक्तव छे ॥ सू० ३ ॥

पूर्वोक्त रीतिथी सन्यक्तवनुं स्वरूप प्रगट करीने तेनी प्राप्ति पछी तेभां सुस्थिर करवाने भाटे सन्यग्दृष्टि ज्वनुं कर्तव्य प्रगट करतां श्रीसुधर्मास्वामी छोडे छे—‘ तं आइत्तु न निहे ’ इत्यादि.

ज्व ते समकितने प्राप्त करी गुर्—उपदेश आदि कोछ पछ प्रकारे श्रुत चारित्ररूप धर्मने अथवा वस्तुस्वभावने जानीने ते समकितने छोड़े नाछे, अने तेने छोडे पछ नछे. समकित भेगव्या पछी समकित जीवने शम, संवेग निर्वेद



ભાવઃ । ન નિષ્કિપેદિતિ તત્ સમ્યક્ત્વં ન ત્યજેત્ । યદિ સંસર્ગાદિના મિથ્યાદૃષ્ટ્યો મિથ્યાત્વં સ્થાપયેયુઃ, તદા સ્વાત્મનઃ સામર્થ્યગુણં પ્રકાશયેદિત્યર્થઃ । યદ્વા-ન નિષ્કિપેદિતિ—નિષ્કેપણં=છર્દનં વમનમિત્યર્થઃ, યથા કશ્ચિદ્ આચાર્ય સમીપે વ્રતાનિ ગૃહીત્વા પશ્ચાત્ કાલાન્તરે તત્પરતો નિષ્કિપ્યોત્પ્રવ્રજતિ, પુનરાગત્ય ગૃહ્ણતિ, તથા ન સમ્યક્ત્વં કદાપિ પરિત્યજેત્, કિંતુ યાવજ્જીવમનુપાલયેદિત્યર્થઃ । યદ્વા-ધર્મ= યથાઽવસ્થિતં ધર્મં શ્રુતચારિત્રરૂપં, તથા તેનૈવ પ્રકારેણ જ્ઞાત્વા તં શ્રુતધર્મં ચારિત્ર-ધર્મં ચ ન નિષ્કિપેત્=ન ત્યજેત્ ॥ મૂ૦ ૪ ॥

અનુકમ્પા આદિ જો સમકિત્તે કાર્ય હૈં વે પ્રાપ્ત હો જાતે હૈં, ડનસે હી સમકિત્તે અસ્તિત્વ જાના જાતા હૈં, અતઃ ઇન કાર્યોં કો કરને સે સમ-કિત્તે પ્રકાશ હોતા હૈં, નહીં કરને પર ડસકા આછાડન હોતા હૈં । યદિ કદાચિત્ મિથ્યાદૃષ્ટિયોં કી સંગતિ ઢી હો જાવે ઓર વે મિથ્યાત્વ કી ઓર લે જાને કા પ્રયત્ન ઢી કરે તો ઢી ડસ સમય અપની શક્તિ કા પ્રકાશન કર સમકિત્તે કા પરિત્યાગ નહીં કરના ચાહિયે । અથવા જૈસે કોઈ જીવ આચાર્ય કે સમીપ વ્રતોં કો ધારણ કર પશ્ચાત્ કાલાન્તર મેં ડનકે નિકટ ડનકા વમન-ત્યાગ કર ચલા જાતા હૈં, ઓર ફિર આકર ડન્હેં ધારણ કર લેતા હૈં, ડસ પ્રકાર ઇસ સમ્યક્ત્વકા વમન નહીં કરના ચાહિયે, કિંતુ પ્રાપ્ત હોને પર ઇસકો પ્રયત્નપૂર્વક યાવજ્જીવન પાલતે રહના ચાહિયે । અથવા-સમકિત્તે કો કાર્યરૂપ શ્રુતચારિત્રધર્મ કી જિસ પ્રકાર સે અવસ્થિતિ હૈં ડસી રૂપસે ડન્હેં જાન કર ફિર નહીં છોડના ચાહિયે ॥૪॥

અને અનુકમ્પા આદિ જે સમકિતના કાર્ય છે તે પ્રાપ્ત થઈ જાય છે. તેનાથી જ સમકિતનું અસ્તિત્વ જાણવામાં આવે છે. માટે તે કાર્યોને કરવાથી સમકિતનો પ્રકાશ થાય છે, અને નહિ કરવાથી તે ઢંકાઈ જાય છે, અને કદાચ મિથ્યાદૃષ્ટિઓની સંગત પણ થઈ જાય અને તેને મિથ્યાત્વની તરફ લઈ જવાનો પ્રયાસ પણ કરે તો પણ તે વળત પોતાની શક્તિનો પ્રકાશ કરી સમકિતનો ત્યાગ નહિ કરવો જોઈએ. અથવા જેમ કોઈ જીવ આચાર્યની સમીપ વ્રતોને ધારણ કરીને પછી કાલાન્તરમાં તેની નજીક તેનો વમન-ત્યાગ કરી આવ્યો જાય છે અને ફરી આવીને જેમ તેને ધારણ કરી લે છે તે પ્રકારે આ સમ્યક્ત્વનો વમન-ત્યાગ કરવો નહિ જોઈએ, પણ પ્રાપ્ત થયા પછી તેને પ્રયત્નપૂર્વક જાવજીવન-પર્યન્ત પાળતાં રહેવું જોઈએ. અથવા સમકિતના કાર્યરૂપ શ્રુતચારિત્ર ધર્મની જે પ્રકારે અવસ્થિતિ છે તે રૂપમાં તેને જાણીને છોડવું ન જોઈએ ॥સૂ૦ ૪॥

અપરં ચ સમ્યગ્દષ્ટિકતવ્યમાહ—‘દિદ્દેહિં’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્—દિદ્દેહિં નિર્વેયં ગચ્છિજ્જા ॥ સૂ૦ ૫ ॥

છાયા—દૃષ્ટેષુ નિર્વેદં ગચ્છેત્ ॥ સૂ૦ ૫ ॥

ટીકા—દૃષ્ટેષુ=દૃષ્ટિપથસમાગતેષુ એહિકેષ્ટાનિષ્ટશબ્દાદિવિષયેષુ, અસ્યો-  
પલક્ષણાર્થત્વાત્ સ્વર્ગાદિસમ્બન્ધિષ્વપિ, નિર્વેદં=વૈરાગ્યં, ગચ્છેત્=કુર્યાદિત્યર્થઃ ।  
યદા યદા-શબ્દાઃ શ્રવણગોચરાઃ, રસા આસ્વાદિતાઃ, ગન્ધા આગ્રાતાઃ, સ્પર્શા વા  
સ્પૃષ્ટા ભવન્તિ, તદા તદા ભાવયેત્-શબ્દાદયઃ સ્વલુ પુદ્ગલાસ્ત એવ કદાચિત્ પ્રિય-  
શબ્દાદિરૂપેણ કદાચિદપ્રિયશબ્દાદિરૂપેણ પરિણમન્તે, અતઃ તેષુ પુદ્ગલપરિણા-  
નામરૂપેષુ કો રાગઃ ક્ષ્વ વા દ્વેષ ઇતિ ॥ સૂ૦ ૫ ॥

और भी सम्यग्दृष्टिका कर्तव्य कहते हैं—‘दिद्वेहिं’ इत्यादि ।

દૃષ્ટ પદાર્થોં મેં નિર્વેદ-ઇષ્ટાનિષ્ટ શબ્દાદિ વિષયોંમેં વિરક્તભાવ હો, સંસાર કે જિતને મનોજ્ઞ ઓર અમનોજ્ઞ પંચેન્દ્રિયોં કે વિષયભૂત શ-  
બ્દાદિ પદાર્થ હેં ઉનમેં સમ્યગ્દષ્ટિ જીવકો વિરક્ત ભાવ રાખના ચાહિયે, કારણ કિ યે શબ્દાદિ સર્વ પૌદ્ગલિક હેં । જો કમી મનોજ્ઞ પ્રતીત હોતે હેં વે હી કાલાન્તર મેં અમનોજ્ઞ રૂપસે મી પરિણમિત હોતે હુએ દેસે જાતે હેં । અથવા જો એક કી અપેક્ષા મનોજ્ઞ હેં વે હી દૂસરે કી અપેક્ષા અમનોજ્ઞ હો જાતે હેં । નિમ્બ હમારી અપેક્ષા અમનોજ્ઞ હૈ પરન્તુ જાંટકી અપેક્ષા મનોજ્ઞ હૈ । ફલિતાર્થ યહી હૈ કિ સંસાર કા કોઈ મી પદાર્થ સર્વથા ન મનોજ્ઞ હૈ ન અમોજ્ઞ હૈ, મનકી કલ્પનાશક્તિ હી ઉસકો મનોજ્ઞ ઓર અમનોજ્ઞ રૂપસે મ્હાન કરાતી હૈ, અતઃ ઉનમેં રાગ દ્વેષ કરના સમકિતી જીવકા કર્તવ્ય

બીજું પણ સમ્યગ્દષ્ટિનું કર્તવ્ય કહે છે—“દિદ્દેહિ” . ઇત્યાદિ.

દેખીત પદાર્થોમાં નિર્વેદ-ઇષ્ટ અને અનિષ્ટ શબ્દાદિ નિષયોમાં વિરક્તભાવ હોય, સંસારના જેટલા પણ મનોજ્ઞ અને અમનોજ્ઞ પંચેન્દ્રિયોના વિષયભૂત શબ્દ આદિ પદાર્થ છે તેમાં સમ્યગ્દષ્ટિ જીવને વિરક્તભાવ રાખવો જોઈએ, કારણ કે એ બધા પૌદ્ગલિક છે. જે કોઈ વખત મનોજ્ઞ પ્રતીત થાય છે તે જ કાલાન્તરમાં અમ-  
નોજ્ઞરૂપથી પણ પરિણમિત થતાં દેખવામાં આવે છે. અથવા જે એકની અપેક્ષા મનોજ્ઞ છે, તે બીજાની અપેક્ષા અમનોજ્ઞ થઈ જાય છે. લીંબડો આપણી અપેક્ષાએ મનોજ્ઞ છે, પરંતુ ઊંટની અપેક્ષાએ મનોજ્ઞ છે. ફલિતાર્થ એ છે કે સંસારનો કોઈ પણ પદાર્થ સર્વથા મનોજ્ઞ પણ નથી તેમજ અમનોજ્ઞ પણ નથી. મનની કલ્પના-શક્તિ જ તેને મનોજ્ઞ અને અમનોજ્ઞ પ્રતિજ્ઞિત કરાવે છે, માટે તેમાં રાગદ્વેષ કરવો તે સમકિતી જીવનું કર્તવ્ય નથી. એ જ પ્રકારે સ્વર્ગાદિક સુખોની

કિંચ—“ નો લોગસ્સે. ” ત્યાદિ ।

મૂલમ્—નો લોગસ્સેસણં ચરે ॥ સૂ૦ ૬ ॥

છાયા—નો લોકસ્યૈપણાં ચરેત્ ॥ સૂ૦ ૬ ॥

ટીકા—લોકસ્ય પ્રાણિવર્ગસ્ય, એપણામ્—એપણા=અનુકૂલેષુ શબ્દાદિવિષયેષુપા-

નહીં હૈ । इसी प्रकार स्वर्गादिक सुखोंकी वाञ्छा करना भी समकितीके लिये योग्य नहीं । अनुकूल शब्दों के सुनने से हर्षित होना, एवं प्रतिकूल शब्दों के सुनने से दुःखित होना, स्वादिष्ट रसादिकों के मिलनेसे आनन्द मानना, और प्रतिकूल रसादिकोंकी प्राप्तिमें आकुलित हो जाना, सुगन्धित पदार्थों के सूँघनेमें प्रेम प्रदर्शित करना, और दुर्गन्धित वस्तुओं पर अरुचि रखना, कोमलादि स्पर्शों में प्रमुदितमन होना, एवं कठिनादि स्पर्शों के होने पर म्लानवदन होना; यह समकिती के लिये सर्वथा अयोग्य ही है । समकिती तो समदृष्टि होना है । इस तरह की रागद्वेष-मयी विषमदृष्टि उसमें नहीं होनी चाहिये । प्रतिकूल और अनुकूल शब्दादिकों की प्राप्ति में उसे यही भावना करनी चाहिये कि ये सब पुद्गल की पर्यायें सदा बदलती रहती हैं—पर्यायें स्थिररूप नहीं हैं, अतः इन अस्थिर पर्यायों में राग करनेसे और द्वेष रखने से मुझे कौनसा लाभ हो सकता है ? ॥ सू० ५ ॥

तथा—‘ नो लोगस्स ’ इत्यादि ।

સમ્યગ્દૃષ્ટિ જીવ લોકૈષણા ન કરે, જિસ પ્રકાર લોક, અનુકૂલ

ઇચ્છા પણ સમકિતીને માટે યોગ્ય નથી. અનુકૂળ શબ્દ સાંભળીને હર્ષિત થવું, અને પ્રતિકૂળ શબ્દ સાંભળીને દુઃખી થવું, સ્વાદિષ્ટ રસાદિક મળવાથી આનંદ માનવો, અને પ્રતિકૂળ રસાદિકથી વ્યાકુળ થવું, સુગંધિત પદાર્થોના સૂંઘવામાં પ્રેમ દેખાડવો અને દુર્ગંધિત વસ્તુઓ ઉપર અરુચિ રાખવી, કોમલાદિ સ્પર્શમાં આનંદિત થવું અને કઠણ આદિ સ્પર્શોમાં મોઢું બગાડવું; આ બધું સમકિતીને માટે સર્વથા અયોગ્ય જ છે, સમકિતી તો સમદૃષ્ટિ હોય છે. આવા પ્રકારની રાગદ્વેષવાળી વિષમદૃષ્ટિ તેને હોવી જોઈએ નહિ. પ્રતિકૂળ અને અનુકૂળ શબ્દ વિગેરેમાં તેણે ભાવના રાખવી જોઈએ કે આ બધા પર્યાયો છે. પર્યાય સદા બદલાતી જ રહે છે, પર્યાય સ્થિરરૂપ નથી, માટે આ અસ્થિર પર્યાયોમાં રાગ કરવાથી અને દ્વેષ રાખવાથી મને શું લાભ થવાનો છે ॥ સૂ૦ ૫ ॥

તથા—‘ નો લોગસ્સે ’ ઇત્યાદિ.

સમ્યગ્દૃષ્ટિ જીવ લોકૈષણા કરે નહિ, અર્થાત્—જે પ્રકારે લોક, અનુકૂળ શબ્દો

દેયબુદ્ધિઃ, પ્રતિકૂલેષુ હેયબુદ્ધિસ્તાં ન ચરેત્=ન કુર્યાત્ ॥ સૂ. ૬ ॥

લોકૈષણાચરણસ્ય ફલમાહ--“જસ્સ નત્થિ” ઇત્યાદિ । યદ્વા-સમ્યક્ત્વા-લાભે સમ્યગ્જ્ઞાનં ન ભવતીત્યાહ--‘જસ્સ નત્થિ’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્—જસ્સ નત્થિ ઇમા જાઈ અણ્ણા તસ્સ કઓ સિયા ॥ ૭ ॥

છાયા--યસ્ય નાસ્તિ ઇયં જાતિઃ અન્યા તસ્ય કુતઃ સ્યાત્ ॥ મૂ. ૭ ॥

ટીકા—યસ્ય સાધોઃ ઇયં જાતિઃ=લોકૈષણાબુદ્ધિઃ નાસ્તિ, તસ્ય અન્યા=અન્ય-વિધા સાવધવ્યાપારપ્રવૃત્તિઃ કુતઃ સ્યાત્ । ભોગેચ્છા હિ લોકૈષણા, તત્પરિત્યાગેન સાવધક્રિયાસુ પ્રવૃત્તિર્નોપજાયતે, ઇતિ ભાવઃ ।

શબ્દાદિકોં મેં ઉપાદેય-બુદ્ધિ એવં પ્રતિકૂલ વિષક્રુષ્ટકાદિકોં મેં હેય-બુદ્ધિ રખતે હૈં’ ઉસ પ્રકાર સમકિતી જીવકો અનુકૂલ પદાર્થોં મેં ઉપાદેય-બુદ્ધિ ઓર પ્રતિકૂલ પદાર્થોં મેં હેયબુદ્ધિ નહીં રખની ચાહિયે, અપિ તુ મધ્યસ્થ-ભાવ રખના ચાહિયે ॥ સૂ. ૬ ॥

લોકૈષણા કા ફલ કહતે હૈં--‘જસ્સ નત્થિ’ ઇત્યાદિ ।

હસ પ્રકાર લોકૈષણા કી બુદ્ધિ રખનેવાલે જીવકે સાવધ વ્યાપારોં સે નિવૃત્તિ નહીં હો સકતી હૈ । ભોગેચ્છારૂપ હી લોકૈષણા હૈ । જિસ સાધુ કો હસ પ્રકારકી લોકૈષણા નહીં હૈ’ ઉસકી પ્રવૃત્તિ શબ્દાદિ વિષયોં મેં નહીં હોતી હૈ । અનુકૂલપ્રતિકૂલ પદાર્થોં મેં હેયોપાદેયબુદ્ધિ રખનેવાલા વ્યક્તિ નિયમતઃ હસ પ્રકાર કે કાર્યોં મેં પ્રવૃત્તિ કર અપની મનોવૃત્તિકો દૂષિત કિયા કરતા હૈ, જવકિ સમકિતી નિરન્તર અપની પ્રવૃત્તિ કો નિર્મલ બનાને કી હી કોશિશ મેં રહતા હૈ, અતઃ હસ પ્રકારકી પ્રવૃત્તિ

આદિમાં ઉપાદેય બુદ્ધિ અને પ્રતિકૂળ વિષક્રાંટા વિગેરેમાં હેયબુદ્ધિ રાખે છે તે પ્રમાણે આ સમકિતી જીવને અનુકૂળ પદાર્થોમાં ઉપાદેયબુદ્ધિ અને પ્રતિકૂળ પદાર્થોમાં હેયબુદ્ધિ રાખવી જોઈ એ નહિ, બલકે મધ્યસ્થ ભાવ રાખવો જોઈ એ ॥ સૂ. ૬ ॥

લોકૈષણાનું ડુંગ ડહે છે--‘જસ્સ નત્થિ’ ઇત્યાદિ.

આ પ્રકારની લોકૈષણાની બુદ્ધિ રાખવાવાળા જીવને વ્યાપારોમાંથી નિવૃત્તિ થતી નથી. ભોગેચ્છા રૂપ જ લોકૈષણા છે. જે સાધુને આ પ્રકારની લોકૈષણા નથી થતી તેની પ્રવૃત્તિ શબ્દ આદિ વિષયોમાં થતી નથી. અનુકૂળ પ્રતિકૂળ પદાર્થોમાં હેય-ઉપાદેય-બુદ્ધિ રાખવાવાળા જીવ નિયમથી આ પ્રકારના કાર્યોમાં પ્રવૃત્તિ કરીને પોતાની મનોવૃત્તિને દૂષિત કર્યા કરે છે, જ્યારે સમકિતી હમેશા પોતાની પ્રવૃત્તિને નિર્મળ બનાવવાની મહેનત કર્યા કરે છે, માટે આ પ્રકારની પ્રવૃત્તિ

યદ્વા-ઇયમ્=ઉપક્રાન્તા, જ્ઞાતિઃ=સમ્યક્ત્વરૂપા પરિણતિઃ, યસ્ય નાસ્તિ, તસ્યા-  
ન્યા=વિવેકિની પરિણતિઃ સાવધાનુષ્ઠાનપરિહારકારિણી કુતઃ સ્યાદિત્યર્થઃ ॥સૂ.૦૭॥

સમ્યક્ત્વે શિષ્યમતિસ્થિરીકરણાર્થં પુનરાહ-‘દિદ્ઠં સુયં’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્-દિદ્ઠં સુયં મયં વિષ્ણાયં જં ઇયં પરિકહિજ્જહ ॥સૂ.૦૮॥

છાયા-દૃષ્ટં શ્રુતં મતં વિજ્ઞાતં યદેતત્ પરિકથ્યતે ॥ મૂ. ૮ ॥

ટીકા-યદેતત્ સમ્યક્ત્વં મયા પરિકથ્યતે, તત્ દૃષ્ટં=તીર્થકરૈઃ કેવલાલો-  
કેનાવલોકિતમ્, તતઃ શ્રુતં=ગણધરાદિભિઃ શ્રવણવિષયીકૃતં, મતં=લઘુકર્મણાં

મનોવૃત્તિ કો દૃષ્ટિત કરનેવાલી હોને સે હી સમકિતી કે લિયે હેય  
વતલાઈ ગઈ હૈ ।

અથવા-‘સમ્યક્ત્વ કી અપ્રાપ્તિ મેં સમ્યગ્જ્ઞાન નહીં હોતા હૈ’  
હિસ વાત કો બી હસી સૂત્ર મેં કહતે હૈ-‘જસ્સ નતિય’ ઇત્યાદિ ।

જિસ જીવકે પાસ સમ્યક્ત્વપરિણતિ નહીં હૈ ડસકો સાવધ વ્યા-  
પારોસે હટાનેવાલી વિવેકપરિણતિ બી કૈસે હો સકતી હૈ? અર્થાત્ નહીં  
હો સકતી હૈ ॥ સૂ. ૭ ॥

સમ્યક્ત્વમેં શિષ્યકી બુદ્ધિકો દૃઢ કરને કે લિયે સુધર્માસ્વામી ફિરસે  
કહતે હૈ-‘દિદ્ઠં સુયં’ ઇત્યાદિ ।

જિસ સમકિતકા મૈને વર્ણન કિયા હૈ વહ દૃષ્ટ, શ્રુત, અનુમન ઔર  
વિજ્ઞાત હૈ । યહાં પર સુધર્માસ્વામી સમકિતકે વિષયમેં ખુલાસા કરતે  
હુણ કહતે હૈ કિ-હે જમ્મૂ ! જિસ સમકિતકા યહાં વર્ણન કિયા ગયા હૈ  
વહ મૈને અપની બુદ્ધિ સે નહીં કહા હૈ; કિંતુ ‘દૃષ્ટ’-તીર્થકરોને-ડસકા

મનોવૃત્તિને દૃષ્ટિત કરવાવાળી હોવાથી જ સમકિતીને માટે હેય છે, એમ કહ્યું છે.

અથવા સમ્યક્ત્વની અપ્રાપ્તિમાં સમ્યગ્જ્ઞાન થતું નથી. આ વાતને પણ આ  
સૂત્રમાં કહે છે-‘જસ્સ નતિય’ ઇત્યાદિ.

જે જીવની પાસે સમ્યક્ત્વપરિણતિ નથી તેને સાવધ વ્યાપારોથી દૂર  
કરવાવાળી વિવેકપરિણતિ પણ કેવી રીતે થઈ શકે? અર્થાત્ થઈ શકતી નથી ॥સૂ.૦૭॥

સમ્યક્ત્વમાં શિષ્યની બુદ્ધિને દૃઢ કરવાને માટે સુધર્માસ્વામી ફરીથી કહે  
છે-‘દિદ્ઠં સુયં’ ઇત્યાદિ

જે સમકિતનું મેં વર્ણન કર્યું છે તે દૃષ્ટ, શ્રુત, અનુમત અને વિજ્ઞાત છે.  
આ ઠેકાણે સુધર્માસ્વામી સમકિતવિષયમાં ખુલાસો કરીને કહે છે કે-હે જમ્મૂ !  
જે સમકિતનું આ ઠેકાણે વર્ણન કરવામાં આવ્યું છે તે મેં પોતાની બુદ્ધિથી  
નથી કર્યું; પણ ‘દૃષ્ટ’ તીર્થકરોએ તેનો પોતાના કેવળજ્ઞાનરૂપી પ્રકાશથી સાક્ષા-

ભવ્યાનાં મતં, વિજ્ઞાતં=જ્ઞાનાવરણીયક્ષયોપશમાત્, અતઃ સમ્યક્ત્વલાભે તદ્રક્ષણે ચ પ્રયતિતવ્યમિત્યર્થઃ ॥ સૂ૦ ૮ ॥

યે તુ સમ્યક્ત્વમુપેક્ષન્તે તેષામનન્તદુઃસ્વમયી સંસારગતિર્નૈવ વિરમતીત્યાહ—  
'સમેમાણા પલેમાણા' ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્—સમેમાણા પલેમાણા પુણો પુણો જાઈં પકપ્પંતિ ॥સૂ૦ ૯॥

છાયા—સમાયન્તઃ પ્રલીયમાનાઃ પુનઃ પુનર્જાતિં પ્રકલ્પયન્તિ ॥સૂ૦ ૯॥

ટીકા—સમાયન્તઃ—સમાગચ્છન્તઃ=આર્હતાગમવિષયે શ્રદ્ધાનલક્ષણસમ્યક્ત્વા-  
કરણેન માતાપિત્રાદિભિઃ સહ સંસારસમ્બન્ધં કુર્વન્તઃ, પ્રલીયમાનાઃ=મૃત્યુવશાદ્  
માતાપિત્રાદિભ્યો વિયુજ્યમાનાઃ, યદ્વા—પ્રલીયમાનાઃ=શબ્દાદિવિષયેષુ સમાસક્તિં  
કુર્વાણાઃ પુનઃ પુનઃ=અનન્તશઃ જાતિમ્=એકેન્દ્રિયાદિરૂપાં પ્રકલ્પયન્તિ । સમ્યક્ત્વ-  
મનવાપ્તાઃ સંસારદુઃસ્વતો ન મુચ્યન્તે ઇતિ ભાવઃ ॥ સૂ૦ ૯ ॥

અપને કેવલજ્ઞાનરૂપી પ્રકાશ સે સાક્ષાત્કાર ક્રિયા હૈ, 'શ્રુતં'—ગણધરા-  
દિકોને ડનસે સુના હૈ, 'મતં'—હલુકર્મી ભવ્યોને ડસે માના હૈ, ઓર  
'વિજ્ઞાતમ્'—અપને જ્ઞાનાવરણીય કર્મ કે ક્ષયોપશમાનુસાર ડન્હોને ડસે  
જાના હૈ, અતઃ સમ્યક્ત્વકા લાભ હોને પર ડસ કી રક્ષા કરને મેં સદા  
સાવધાન રહના ઑહિયે ॥સૂ૦ ૮॥

જો વ્યક્તિ ડસ સુન્દર સમકિતકે પ્રતિ ડપેક્ષા ભાવ રખતા હૈ ડસકે  
ડસ અનન્ત દુઃસ્વરૂપ સંસારકા અન્ત નહીં ઑતા, યહી ઑાત કહતે હૈ—  
'સમેમાણા' ઇત્યાદિ ।

જો પ્રાણી પ્રભુપ્રતિપાદિત ઑાગમકી શ્રદ્ધારૂપ ડસ સમકિતસે શૂન્ય  
રહતા હૈ વહ સંયોગ વિયોગ કો પાતા હુઑા જન્મ મરણ કર ઑારંઑાર ઑેકે-  
ન્દ્રિયાદિક ભવોં મેં ભટકતા ફિરતા હૈ ।

ત્કાર કર્યો છે. 'શ્રુતં' ગણધરાદિકોએ તેમનાથી સાંભળ્યું છે. 'મતં' હળુકર્મી  
લવ્યોએ તે માન્યુ છે, અને 'વિજ્ઞાતમ્' પોતાના જ્ઞાનાવરણીય કર્મના ક્ષયોપ-  
શમ અનુસાર તેઓને તેમણે જાણ્યાં છે, તેથી સમ્યક્ત્વનો લાભ થઈ ગયા પછી  
તેની રક્ષા કરવામાં હમેશાં સાવધાન રહેવું જોઈએ ॥ સૂ૦ ૮ ॥

જે જીવ ઑા સુંદર સમકિત પ્રત્યે ડપેક્ષાલાભ રાખે છે તેનો ઑા અનન્ત  
દુઃખરૂપ સંસારનો અત ઑાવતો નથી. ઑા ઑાત કહે છે—'સમેમાણા' ઇત્યાદિ.

જે પ્રાણી પ્રભુપ્રતિપાદિત ઑાગમની શ્રદ્ધારૂપ ઑા સમકિતથી શૂન્ય રહે  
છે તે સંયોગ-વિયોગને મેળવતો જન્મ મરણ કરીને ઑારંઑાર ઑેકેન્દ્રિયાદિક  
લવોમાં ભટકતો ફરે છે.



યદ્યેવં તતઃ કિં કર્તવ્યમિત્યાહ—“ અહો ય રાઓ ય ” ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્—અહો અ રાઓ ય જયમાણે ધીરે સયા આગયપણાણે પમત્તે વહિયા પાસ અપ્પમત્તે સયા પરિક્કમિજ્જાસિ—તિવેમિ । સૂ ૧૦ ।

॥ પઢમો ઉદ્દેસો સમત્તો ॥ ૪-૧ ॥

છાયા—અહથ્થ રાત્રિં ચ યતમાનો ધીરઃ સદા આગતપ્રજ્ઞાનઃ પ્રમત્તાન્ વહિઃ પઞ્ચ, અપ્રમત્તઃ સદા પરાક્રમેથાઃ, ઇતિ વ્રવીમિ ॥ મૂ. ૧૦ ॥

॥ પ્રથમ ઉદ્દેશઃ સમાપ્તઃ ॥

ટીકા—અહથ્થ રાત્રિં ચ=અહર્નિશં, યતમાનઃ=મોક્ષપ્રાપ્તયે સમુદ્યુક્તઃ, ધીરઃ=મિથ્યાદૃષ્ટિભિઃ સંસર્ગાદિના સ્થાપિતેऽપિ મિથ્યાત્વે વિશુદ્ધિપરિણામધારામનવરુ-

જો પ્રાણી इस समकित के लाभसे वंचित रहता है वह अनन्त काल तक अनन्त बार माता-पिताके साथ ‘ये मेरे माता-पिता हैं, मैं इनका पुत्र हूँ’ इस प्रकारका संबंध करता है, और अन्तमें मृत्युका ग्रास बनकर एकेन्द्रियादिक कुयोनियों में भ्रमण करता है ।

अथवा शब्दादिविषयों में आसक्ति धारण कर अनन्तवार एकेन्द्रियादिक पर्यायों में उत्पन्न होता रहता है, तथा वहाँके अनन्त कष्टोंको सहन करता रहता है । अर्थात्-असम्यक्त्वो जीव संसार के दुःखसे कभी भी छुटकारा नहीं पाता ॥ सू० ९ ॥

अगर ऐसा हो तो क्या करना चाहिये ? सो कहते हैं—‘अहो य राओ य’ इत्यादि ।

हे जम्बू ! तुम अहर्निश मोक्षप्राप्तिके लिये प्रयत्नशील बनो, और धीर वीर बन कर सदा उत्तरोत्तर हेयोपादेयके विवेक से विशिष्ट

જે પ્રાણી આ સમકિતના લાભથી વંચિત રહે છે તે અનંતકાળસુધી અનંતી વાર માતા-પિતાની સાથે ‘ આ મારા માતા-પિતા છે, હું એમનો પુત્ર છું ’ આ પ્રકારના સંબંધ કરે છે, અને છેવટમાં મરીને એકેન્દ્રિયાદિકે કુયોનિઓમાં ભ્રમણ કરે છે. અથવા શબ્દ આદિ વિષયોમાં આસક્તિ ધારણ કરી અનંતીવાર એકેન્દ્રિયાદિક પર્યાયોમાં ઉત્પન્ન થાય છે, તથા ત્યાંના અનંત દુઃખોને સહન કરતો રહે છે. અર્થાત્-અસમ્યક્ત્વો જીવ સંસારના દુઃખોથી ક્યારે પણ છુટતો નથી. ॥સૂ.૦૯॥

તે આ પ્રમાણે છે તો શું કરવું જોઈએ ? તે કહે છે—‘અહો ય રાઓ ય’ ઇત્યાદિ.

હે જમ્બૂ ! તમે અહર્નિશ મોક્ષપ્રાપ્તિને માટે પ્રયત્નશીલ બનો, અને ધીર વીર બનીને હમેશાં ઉત્તરોત્તર હેયોપાદેયના વિવેકથી વિશિષ્ટ બનીને અસંયમી

न्धानः, अत एव सदा=सर्वस्मिन् काले, आगतप्रज्ञानः=उत्तरोत्तरप्रवर्धमानहेयो-  
पादेयविवेकपरिणामः सन्, प्रमत्तान्=असंयतान्, वह्निः=आर्हतधर्माद्वहिरवस्थि-  
तान् अलब्धसम्यक्त्वान् इति यावत्, पठ्य। दृष्ट्वा च अप्रमत्तः=पञ्चविधप्रमादरहितः  
सन् सदा=अविच्छेदेन पराक्रमेयाः=मोक्षतरुबीजस्य सम्यक्त्वस्य लाभार्थं रक्षणार्थं च  
हो कर असंयमी जीवों के संसर्ग से सदा दूर रहो। एवं स्वकर्तव्य में  
अप्रमत्त हो सम्यग्दर्शन की प्राप्ति और उसका रक्षण करने के लिए, अथवा  
कर्म शत्रुओं पर विजय पानेके लिये कटिवद्ध रहो। हे जम्बू ! मैंने जैसा  
भगवान से सुना है वैसा ही तुम्हें कहता हूँ।

इस सूत्रमें जम्बूस्वामीको संबोधन करते हुए श्रीसुधर्मास्वामी  
कहते हैं कि-हे जम्बू ! जब प्रत्येक प्राणीका लक्ष्य मोक्षकी प्राप्ति करनेका  
है तो उसका यह प्रधान कर्तव्य है कि वह सर्वप्रथम सम्यग्दर्शन की  
प्राप्ति करनेके लिये अहर्निश-सदा कटिवद्ध रहे, कारण कि—एक तो  
इसके अभाव में मुक्तिकी प्राप्ति नहीं हो सकती, दूसरे सांसारिक  
अनन्त कष्टों का अन्त भी नहीं आ सकता। यद्यपि यह बात निश्चित  
है कि मिथ्यादृष्टि जीव अपने संसर्ग से मिथ्यात्वकी स्थापना करनेमें  
कसर नहीं रखते हैं तो भी भव्य जीवका कर्तव्य है कि वह ऐसे समयमें  
अपनी विशुद्ध परिणामवाराको न रोके; किन्तु परिणामों में विशुद्धता  
जिस प्रकारसे बढे उस प्रकार से उसको बढ़ाने का उत्तरोत्तर प्रयत्न करता

जोवोना संसर्गथी सदा दूर रहो, अने स्वकर्तव्यमां अप्रमत्त थाव, सम्यग्दर्शननी  
प्राप्ति अने तेना रक्षणने भाटे, अथवा कर्मशत्रुओ उपर विजय भेगववाने  
भाटे कटिवद्ध रहो. हे जम्बू ! में जेम लगवान पासेथी सांलज्युं छे तेम  
तमने कहुं छुं.

आ सूत्रमां जम्बूस्वामीने संबोधन करीने श्रीसुधर्मास्वामी कहे छे के-  
हे जम्बू ! ज्यारे दरेक प्राणीनु लक्ष मोक्षनी प्राप्ति करवानुं छे तो तेनुं ओ  
मुख्य कर्तव्य छे के पड़ेलां सम्यग्दर्शननी प्राप्ति करवाने भाटे उमेशां तैयार  
रहे, कारण के ओके तो तेना अलावमां मुक्तिनी प्राप्ति थती नथी, तेमज भीजुं  
सांसारिक अनंत दुःखानो अंत पणु नथी आवतो. जे के आ बात निश्चित छे  
के मिथ्यादृष्टि जेव पोताना संसर्गथी मिथ्यात्वनी स्थापना करवामां कसर राखतो  
नथी, तो पणु लव्य जेवनुं कर्तव्य छे के ते आवा समयमां पोतानी विशुद्ध  
परिणामधाराने न रोकी राणे; पणु परिणामोमां विशुद्धता जे प्रकारे वधे ते प्रकारे,  
तेने वधारवामां उत्तरोत्तर प्रयत्न करता रहे. जोनाथी जेयोपादेयनो विवेक जगशे

વિશુદ્ધિપરિણામપ્રકર્ષે સોત્સાહં પ્રયત્નમાનો ભવ । યદ્વા-પરાક્રમેથાઃ=અષ્ટવિધકર્મશ-  
ત્રૂન્ વિજેતું વિશુદ્ધિપરિણામપ્રકર્ષેણ વીર્યગુણસામર્થ્યમુદ્ભાવયેત્યર્થઃ । इति=અધિ-  
કારપરિસમાપ્તૌ, વ્રવીમિ=ભગવન્મુખાદ્યથા શ્રુતં તથા કથયામીત્યર્થઃ ॥ સૂ૦ ૧૦ ॥

॥ इति चतुर्थाध्ययने प्रथम उद्देशः सम्पूर्णः ॥ ४-१ ॥

રહે । इससे हेयोपादेयका विवेक जागृत होगा और इस विवेकबुद्धिसे वह यह समझ सकेगा कि 'जो समकितसे शून्य हैं वे इस धर्मसे बहिर्भूत हैं अतः मैं भी पांच प्रकारके प्रमादोंका त्याग कर मोक्षतरु का बीज-स्वरूप समकितकी प्राप्ति करनेमें, और प्राप्त समकित की रक्षा करने में कारणभूत विशुद्ध परिणाम धाराके बढ़ानेमें सदा यत्न करता रहूँ ।' अथवा 'इस अनन्त संसारमें अनन्तकष्टप्रदाता कर्मरूप शत्रु ही हैं; अतः इन्हें परास्त करनेके लिये भी मैं अपने भीतर विशुद्ध परिणामोंकी धारा बहा कर वीर्यगुणस्वरूप अपनी शक्तिका विकास करूँ तो अवश्य ही सफलता प्राप्त कर लूँगा' इस प्रकार सदा उस भव्य जीव को उत्साहित रहना चाहिये ॥ सू० १० ॥

॥ चतुर्थ अध्ययन का प्रथम उद्देशक सम्पूर्ण ॥ ४-१ ॥

અને આ વિવેકબુદ્ધિથી તે એ સમજી શકશે કે 'જે સમકિતથી શૂન્ય છે તે આ ધર્મથી બહિર્ભૂત છે, તેથી હું પણ પાંચ પ્રકારના પ્રમાદોને ત્યાગીને મોક્ષવૃક્ષના બીજસ્વરૂપ સમકિતની પ્રાપ્તિ કરવામાં, અને મેળવેલાં સમકિતની રક્ષા કરવામાં કારણભૂત વિશુદ્ધ પરિણામધારાને વધારવામાં હમેશાં યત્ન કરતો રહું.' અથવા- 'આ અનન્ત સંસારમાં અનંત દુઃખ આપવાવાળા કર્મરૂપ શત્રુ જ છે, તેનો પરાજય કરવાને માટે પણ મારા અંતરની વિશુદ્ધ પરિણામોની ધારા વહાવીને વીર્યગુણ-સ્વરૂપ મારી શક્તિનો વિકાસ કરું તો અવશ્ય સફળતા પ્રાપ્ત થશે' એવા પ્રકારે હમેશાં ભવ્ય જીવે ઉત્સાહી રહેવું જોઈએ. ॥ સૂ૦ ૧૦ ॥

એથા અધ્યયનનો પ્રથમ ઉદ્દેશ સંપૂર્ણ ॥ ૪-૧ ॥



## ॥ अथ चतुर्थाध्ययनस्य द्वितीय उद्देशः ॥

इहानन्तरप्रथमोद्देशके सम्यग्दर्शनं प्रतिबोधितम् । तच्च नवतत्त्वश्रद्धानात्मकम् । तत्र—किं तत्त्वं संसारकारणं ? किं च मोक्षकारणम् ? इत्युभयोर्निर्णयमन्तरेण मुमुक्षोः सम्यग्दर्शनं न संभवतीत्यतः सम्यक्त्वप्रतिबोधनप्रसङ्गागते आस्रवनिर्जरे संसार-मोक्षहेतुभूते प्रतिबोधयितुमाह—‘जे आसवा’ इत्यादि ।

मूलम्—जे आसवा ते परिस्सवा, जे परिस्सवा ते आसवा ।

जे अणासवा ते अपरिस्सवा, जे अपरिस्सवा ते अणासवा ॥सू०१॥

छाया—ये आस्रवास्ते परिस्सवाः, ये परिस्सवास्ते आस्रवा ।

ये अनास्रवास्ते अपरिस्सवाः, ये अपरिस्सवास्ते अनास्रवाः ॥ सू० १ ॥

## ॥ चौथे अध्ययन का दूसरा उद्देश ॥

सम्यक्त्व नामक चतुर्थ अध्ययनके प्रथम उद्देशकमें सम्यग्दर्शन का स्वरूप समझा दिया गया है । वहाँ यह कहा गया है कि—वह सम्यग्दर्शन नव तत्त्वों की श्रद्धास्वरूप है । वे नवतत्त्व ये हैं—१ जीव, २ अजीव, ३ पुण्य, ४ पाप, ५ आस्रव, ६ संवर, ७ निर्जरा, ८ बन्ध और ९ मोक्ष । मोक्षाभिलाषी को जब तक यह निश्चय नहीं हो जाता कि इनमें से कौनसा तत्त्व संसारका कारण है और कौनसा मोक्षका, तब तक उसके समकित की प्राप्ति नहीं हो सकती, अतः उसके लिये इस सम्यक्त्वबोधन के प्रकरणमें आये हुए तत्त्वोंमेंसे ‘आस्रव संसार का और निर्जरा मोक्षका कारण है’ इस बातको स्पष्ट करने के लिए कहते हैं—‘जे आसवा’ इत्यादि ।

## ચોથા અધ્યાયનો બીજો ઉદ્દેશ

સમ્યક્ત્વ નામના ચોથા અધ્યયનના પહેલા ઉદ્દેશમાં સમ્યગ્દર્શનનું સ્વરૂપ સમજાવવામાં આવ્યું છે. ત્યાં જણાવવામાં આવ્યું છે કે—તે સમ્યગ્દર્શન નવ તત્ત્વોની શ્રદ્ધાસ્વરૂપ છે. આ નવ તત્ત્વ નીચે પ્રમાણે છે:—

જીવ ૧, અજીવ ૨, પુણ્ય ૩, પાપ ૪, આસ્રવ ૫, સંવર ૬, નિર્જરા ૭, બંધ ૮, અને મોક્ષ ૯. ત્યાં સુધી મોક્ષાભિલાષીને એ નિશ્ચય નથી થતો કે આમાંથી કયું તત્ત્વ સંસારનું કારણ છે ? અને કયું મોક્ષનું ? , ત્યાં સુધી તેને સમકિતની પ્રાપ્તિ થતી નથી, એથી તેને માટે આ સમ્યક્ત્વબોધનના પ્રકરણમાં આવેલા તત્ત્વોમાંથી આસ્રવ સંસારનું અને નિર્જરા મોક્ષનું કારણ છે, આ વાતને સ્પષ્ટ કરવાને માટે કહે છે— ‘ જે આસવા ’ ઇત્યાદિ.

ટીકા—યે આસ્રવાઃ=અષ્ટવિધં કર્માસ્રવતિયૈસ્તે આસ્રવાઃ=કર્મવન્ધહેતવો વિષયાઃ, તે પરિસ્રવાઃ=પરિ=સમન્તાત્ સ્રવતિ=અપગચ્છતિ અષ્ટપ્રકારં કર્મયૈસ્તે પરિસ્રવાઃ=કર્મનિર્જરાહેતવઃ, વિષયસુખાઽઽસક્તાનાં સ્રક્ચન્દનવનિતાદયો વિષયાઃ કર્મવન્ધજનકત્વાદાસ્રવા ભવન્તિ, ત એવ સેવનચિન્તનાદિભિઃ સંસારાનન્તદુઃસ્વકરણતયા પ્રતીયમાના હેયોપાદેયવિવેકવતાં તત્ત્વજ્ઞાનિનાં વૈરાગ્યજનકત્વાત્ પરિસ્રવા ભવન્તિ । યથા ભરતસ્ય આસ્રવાઃ પરિસ્રવરૂપેણ પરિણતા વભૂવુઃ, યથા વા-સમુદ્ર-પાલસ્ય, યથા વા નમિરાજર્પેઃ । તથા ચોક્તમ્—

‘યે આસ્રવાઃ’ જો કિસી અપેક્ષાસે કર્મવન્ધકે હેતુ હૈં ‘તે પરિસ્રવાઃ’ વે હી કિસી દૂસરી અપેક્ષાસે કર્મોંકી નિર્જરાકે ભી હેતુ હૈં । ‘યે પરિસ્રવાઃ’ જો નિર્જરાકે હેતુ હૈં ‘તે આસ્રવાઃ’ વે આસ્રવકે ભી હેતુ હૈં । ‘યે અનાસ્રવાઃ’ જો આસ્રવસે ભિન્ન હૈં ‘તે અપરિસ્રવાઃ’ વે કર્મવન્ધકે ભી કારણ હૈં । ‘યે અપરિસ્રવાઃ’ જો કર્મવન્ધકે કારણ હૈં ‘તે અનાસ્રવા’ વે કર્મવન્ધકે કારણ નહીં ભી હૈં ।

(૧) ‘યે આસ્રવાસ્તે પરિસ્રવાઃ’ જ્ઞાનાવરણાદિક આઠ પ્રકારકે કર્મ જિનકે દ્વારા આતે હૈં એસે કર્મવન્ધકે કારણરૂપ જો વિષયકષાયાદિક હૈં ઉન્હેં આસ્રવ કહતે હૈં । તથા જિનકે દ્વારા અષ્ટ પ્રકારકે કર્મ સર્વથા નિર્જરિત હોતે હૈં, એસે નિર્જરાકે કારણ જો તપસંયમાદિક હૈં ઉન્હેં પરિસ્રવ કહતે હૈં । વિષયસુખોંમેં આસક્ત મનવાલેકે લિયે માલ્યા ચન્દન એવં વનિતાદિક જો પાંચ ઇન્દ્રિયોંકે વિષય હૈં વે કર્મવન્ધકે કારણ હોનેસે આસ્રવ હોતે હૈં, કારણ કિ વહ ઉન્કે સેવનસે અપને કો પરમસુખી માનતા હૈ, એવં ઉન્હેં

‘યે આસ્રવાઃ’ જે કોઈ અપેક્ષાથી કર્મબંધના હેતુ છે ‘તે પરિસ્રવાઃ’ તે જ કોઈ બીજી અપેક્ષાથી કર્મોની નિર્જરાના હેતુ છે. ‘યે પરિસ્રવાઃ’ જે નિર્જરાના હેતુ છે ‘તે આસ્રવાઃ’ તે આસ્રવના પણ હેતુ છે. ‘યે અનાસ્રવાઃ’ જે આસ્રવથી ભિન્ન છે ‘તે અપરિસ્રવાઃ’ તે કર્મબંધના પણ કારણ છે. ‘યે અપરિસ્રવાઃ’ જે કર્મબંધના કારણ છે ‘તે અનાસ્રવાઃ’ તે કર્મબંધના કારણ હોતા પણ નથી.

(૧) ‘યે આસ્રવાસ્તે પરિસ્રવાઃ’ જ્ઞાનાવરણાદિક આઠ પ્રકારના કર્મ જે દ્વારા આવે છે એવા કર્મબંધના કારણરૂપ જે વિષયકષાયાદિક છે તેને આસ્રવ કહે છે. તથા જે દ્વારા આઠ પ્રકારના કર્મ સર્વથા નિર્જરિત થાય છે, એવા નિર્જરાના જે કારણ છે તેને પરિસ્રવ કહે છે. વિષયસુખોમા આસક્તમનવાળાને માળા, ચંદન અને સ્ત્રી આદિક જે પાંચ ઇન્દ્રિયોના વિષય છે તે કર્મબંધના કારણ હોવાથી આસ્રવ થાય છે, કારણ કે તે તેના સેવનથી પોતાને ઘણા સુખી માને છે, અને તેને

“યથાપ્રકારા યાવન્તઃ સંસારાવેશહેતવઃ ।

તાવન્તસ્તદ્વિપર્યાસાઃ, નિર્વાણસુખહેતવઃ ” ॥ ૧ ॥

શાશ્વત-નિત્ય સમઘ્નતા હૈ, ‘યે મેરે હૈં ઓર મૈં ઇનકા હૂં’ ઇસ પ્રકારકી ડસકી સદા માન્યતા હોતી હૈ, ડનકે વિગાડમેં અપના વિગાડ, ઓર ડનકે સુધારમેં અપના સુધાર માનતા હૈ, તવ જ્ઞાની કી જિસકે હૃદયમેં હેયોપાદેયકા વિવેક જાગૃત હો રહા હૈ ઓર જો કર્મ કે ડદયસે ઇનકા સેવન ખી કરતા હૈ ફિર ખી ઇનસે અપનેકો જલમેં કમલ કી તરહ સર્વથા ભિન્ન હી દેખતા હૈ, યે હી પાંચ ઇન્દ્રિયોંકે વિષય ડસકો સાંસારિક અનન્ત કષ્ટોંકે કારણરૂપ પ્રતીત હોનેસે વૈરાગ્ય કે જનક, પરિસ્રવ-હોતે હૈં, ઇસ કારણ ડસકે લિયે યે આસ્રવ કર્મકી નિર્જરાકે હી કારણ હૈં । જૈસે છહ સ્વખંડોં કા રાગ્ય કરનેવાલે ભરતચક્રવર્તીં કે લિયે ંવં સમુદ્રપાલ તથા નમિ રાજર્ષિકે લિયે યે હી પદાર્થ જો અજ્ઞાનીકે લિયે આસ્રવ કે કારણ થે, નિર્જરા કે હી કારણ હું । જૈસે કહા હૈ—

“યથાપ્રકારા યાવન્તઃ, સંસારાવેશહેતવઃ ।

તાવન્તસ્તદ્વિપર્યાસાઃ, નિર્વાણસુખહેતવઃ ” ॥ ૧ ॥

અર્થાત્—જિસ પ્રકારકે જિતને સંસારપરિભ્રમણ કે કારણ હોતે હૈં, ડનસે વિપરીત પ્રકારકે ડતને હી મોક્ષસુખકે કારણ હોતે હૈં ॥ ૧ ॥

શાશ્વત-નિત્ય સમઘ્ને છે. ‘આ મારા છે અને હું તેમનો છું’ આ પ્રકારની તેની સદા માન્યતા રહે છે. તેના બગડવામાં પોતાનું બગાડ થયેલ, અને તેના સુધારામાં પોતાનો સુધારો માન્યા કરે છે. ત્યારે જ્ઞાની કે જેના હૃદયમાં હેયોપાદેયનો વિવેક જાગૃત થયેલ છે અને કર્મના ઉદયથી તેનું સેવન પણ કરે છે તો પણ તેનાથી પોતાને જળમાં કમળની માફક સર્વથા ભિન્નપણે દેખે છે. આ પાંચ ઇન્દ્રિયોના વિષયો તેને સાંસારિક અનન્ત દુઃખોનું કારણરૂપ પ્રતીત થવાથી તેના માટે તેવૈરાગ્યના કર્તા બને છે, આ કારણ તેના માટે તે કર્મની નિર્જરાના જ કારણ છે. જેમ છ ખંડનું રાજ્ય કરવાવાળા ભરત ચક્રવર્તીને માટે અને સમુદ્રપાલ તથા નમિરાજર્ષિને માટે તે જ પદાર્થો, જે અજ્ઞાનીને માટે આસ્રવના કારણ હતા; નિર્જરાના જ કારણ થયા. જેમ કહ્યું છે—

“યથાપ્રકારા યાવન્તઃ, સંસારાવેશહેતવઃ ।

તાવન્તસ્તદ્વિપર્યાસાઃ, નિર્વાણસુખહેતવઃ ” ॥ ૧ ॥

અર્થાત્—જે પ્રકારના જેટલા સંસારપરિભ્રમણના કારણ થાય છે, તેનાથી વિપરીત પ્રકારના તેટલા જ મોક્ષસુખના કારણ થાય છે. (૧)



રાગદ્વેષમલિનમનસો વૈષયિકસુખોન્મુલ્યસ્ય સર્વં સંસારકારણં ભવતિ, યથા નિમ્બરસાક્રાન્તરસનસ્ય ક્ષીરશર્કરાદિકં સર્વં મધુરં કઠુતયા પરિણમતે । સમ્યગ્દૃષ્ટે-સ્તુ વિષયચિત્તૃણસ્ય સર્વં સ્વક્ચન્દનવનિતાઽઽદિકમથુચિ દુઃસ્વકારણં ચેતિ ભાવયતઃ પ્રાદુર્ભૂતસંવેગસ્ય તદેવ મોક્ષજનકં ભવતિ ।

ઉક્તાર્થમેવ દ્રઢયિતું પરાઘૃત્ય કથયતિ—“ જે પરિસ્ત્રવા ” ઇત્યાદિ । ય એવ પરિસ્ત્રવાઃ=નિર્જરાહેતવસ્તપઃસંયમાદયસ્ત એવ કર્મોદયપ્રતિરુદ્ધશુભપરિણામસ્ય સાવધક્રિયાપ્રવૃત્તસ્ય જન્તોર્કદ્ધિરસસાતગૌરવપ્રાપ્તિમનસઃ આસ્ત્રવા ભવન્તિ । કર્મ-નિર્જરાર્થં યાવન્તિ સંયમસ્થાનાનિ તાવન્ત્યેવ કર્મવન્ધનાયાસંયમસ્થાનાનિ । યથા નાગેશ્વરીબ્રાહ્મણ્યાઃ પરિસ્ત્રવા આસ્ત્રવરૂપેણ પરિણતા વમ્ભુઃ ॥

રાગ દ્વેષસે આકુલ એવં વૈષયિક સુખમેં લવલીન જીવકે લિયે પંચેન્દ્રિયોંકે સમી વિષય સંસારકે કારણ હોતે હૈં । જૈસે-નીમકે રસપાન કરનેસે જિસકી જીભકા સ્વાદ કઠુ ( કઠુઆ ) હો ચુકા હૈ એસે વ્યક્તિ કે લિયે મીઠા પદાર્થ મી કઠુઆ પ્રતીત હોના હૈ । સમ્યગ્દૃષ્ટિ જીવકે લિયે, કિ જિસકા ચિત્ત વિષયાદિકોંસે વિતૃણ-તૃણારહિત હો ચુકા હૈ, વે હી માલા ચન્દન આદિ સમસ્ત વિષય અપવિત્ર ઔર દુઃસ્વકે હી કારણરૂપ પ્રતીત હોતે હૈં, અતઃ. ઇનસે ઊનકા ચિત્ત સદા વિરક્ત રહા કરતા હૈ, ઇસલિયે ઊનકે પ્રતિ સંવેગભાવ કી જાગૃતિ હોનેસે વે હી વસ્તુએં ઊસકે લિયે નિર્જરાકા કામ કરતી હૈં ।

નિર્જરા હી મોક્ષકા કારણ હૈ, ઇસી વાતકો દૃઢ કરનેકે લિયે ઊપર કહે હુએ અર્થકો હી ઘુમાકર કહતે હૈં—(૨) “ યે પરિસ્ત્રવાસ્તે આસ્ત્રવાઃ ” ઇત્યાદિ । જો તપસંયમાદિક ભાવ જ્ઞાની કે ‘પરિસ્ત્રવાઃ’ નિર્જરા કે કારણ હોતે હૈં, વે હી અજ્ઞાની કે કિ-જિસ કી અપને કર્મકે

રાગદ્વેષથી વ્યાકુળ તેમજ વૈષયિક સુખમાં રાચેલાં જીવોને માટે પાંચ ઈન્દ્રિયોના બધા વિષયો સંસારના કારણ થાય છે, જેમ લીંબડાનો રસ પીવાથી જેની જીભનો સ્વાદ કડવો બનેલ છે તેવી વ્યક્તિને માટે મીઠો પદાર્થ પણ કડવો લાગે છે. સમ્યગ્દૃષ્ટિ જીવ કે જેનું ચિત્ત વિષયાદિકની તૃણાથી રહિત છે તે માણા, ચંદન આદિ સમસ્ત વિષયોને અપવિત્ર અને દુઃખનું કારણ માને છે, તેથી તે વિષયોથી તેનું ચિત્ત હમેશાં વિરક્ત રહ્યા કરે છે. આ માટે તેના પ્રતિ સંવેગભાવની નબત્તિ થવાથી તેજ વસ્તુઓ તેને માટે નિર્જરાનું કામ કરે છે.

નિર્જરાજ મોક્ષનું કારણ છે. આ વાતને દૃઢ કરવાને માટે ઉપર કહેલા અર્થને જ દેરવીને કહે છે—(૨) ‘યે પરિસ્ત્રવાસ્તે આસ્ત્રવાઃ’ ઇત્યાદિ. જે તપ, સંયમ આદિ ભાવો જ્ઞાની માટે ‘પરિસ્ત્રવાઃ’ નિર્જરાના કારણ થાય છે, તે અજ્ઞાની માટે—

ये अनास्रवाः=आस्रवेतराः-व्रतविशेषाः, तेऽपि कर्मोदयवशादशुभाध्यवसायवतो जन्तोरपरिस्रवाः=कर्मबन्धकारणानि भवन्ति, यथा वान्तसम्यक्त्वस्य मुनेः । तथा-ये अपरिस्रवाः=कर्मबन्धहेतवः ते प्रवचनोपकारादिना क्रियमाणाः अनास्रवाः भवन्ति, कर्मबन्धजनका न भवन्तीत्यर्थः, यथा वालग्नानाद्यर्थं नित्यपिण्डादिग्राहकस्य ।

यद्वा—अत्र सूत्रे चतुर्भङ्गी प्रोच्यते, तथाहि—

उदयसे शुभ परिणामधारा म्की हुई है, सावद्य क्रियाओं के करनेमें ही जिसकी प्रवृत्ति चालू रहती है, और जो ऋद्धि, रस, सात गौरवकी प्राप्ति करनेके अभिप्राय से ही तप संयमादिकोंका आराधन करता है उसके आस्रव-नवीन २ कर्मोंके आने के द्वार होते हैं । समकितके विना की गई समस्त ही क्रियाएं कर्मबन्धका कारण होती हैं । अज्ञानियों के तपसंयमादिक, समकित के अभावमें मिथ्यारूप-असंयमरूप होते हैं, अतः वे उसके निर्जराके हेतु न हो कर उल्टे आस्रवके ही कारण बनते हैं । समकितके कर्मनिर्जराके लिये जितने भी संयमस्थान हैं उतने ही अज्ञानियों के कर्मबन्धके लिये असंयमस्थान भी हैं । इस विषयमें नागेश्वरी ब्राह्मणीका दृष्टान्त प्रसिद्ध है, उसके लिए परिस्रव आस्रवरूपसे परिणत हुए हैं ।

(३) 'ये अनास्रवास्ते अपरिस्रवाः'—जिनसे कर्मबन्ध नहीं होता ऐसे जो व्रतविशेष हैं वे भी, कर्मोदयके वशसे जिसके अध्यवसाय अशुभ हो रहे हैं ऐसे अज्ञानी जीवके लिये कर्मबन्धके ही कारण होते हैं ।

जेनी पोताना कर्मना उदयथी शुभपरिणामधारा बन्ध छे, सावद्य-क्रियाओ करवामां जेनी प्रवृत्ति चालु छे, अने जे ऋद्धि, रस, सात गौरवनी प्राप्ति करवामां जे तपसंयमादिनुं आराधन करे छे तेने भाटे आस्रवना-नवा नवा कर्मोना आववाना-द्वार थाय छे समकित वगर करवामां आवेली गधी क्रियाओ कर्म-बन्धना कारण थाय छे. अज्ञानियोना तप संयमादि समकितना अलावमां मिथ्यारूप-असंयमरूप थाय छे, तेथी ते निर्जराना हेतु न थधने आस्रवना जे कारण बने छे. समकितना कर्मनिर्जराने भाटे जेटला पणु संयम-स्थानो छे तेटला जे अज्ञानियोना कर्मबन्धना भाटे असंयम-स्थानो पणु छे. आ विषयमां नागेश्वरी ब्राह्मणीनुं दृष्टान्त प्रसिद्ध छे. तेने भाटे परिस्रव, आस्रवइथी परिणत थयेल छे.

(३) 'ये अनास्रवास्ते अपरिस्रवाः' जेनाथी कर्मबन्ध नथी थता ओवा जे व्रत-विशेष छे ते पणु कर्मोदयना वशथी जेना अध्यवसाय अशुभ जे रहैला छे, ओवा अज्ञानी जेवने भाटे कर्मबन्धना जे कारण बने छे.

(૧) યે આસ્રવાસ્તે પરિસ્રવાઃ, (૨) યે આસ્રવાસ્તે અપરિસ્રવાઃ,

(૩) યે અનાસ્રવાસ્તે પરિસ્રવાઃ, (૪) યે અનાસ્રવાસ્તે અપરિસ્રવાઃ,

(૧) યે આસ્રવાઃ—આસ્રવન્તિ=કર્મ સંચિન્વન્તીત્યાસ્રવાઃ=કર્મવન્ધકર્તારો જીવાઃ, ત એવ પરિસ્રવાઃ=કર્મનિર્જરાકર્તારઃ। અસ્મિન્ પ્રથમભજ્ઞે સર્વે સંસારિણો જીવાઃ પ્રવિષ્ઠાઃ, તે હિ પ્રતિક્ષણમિથ્યાત્વાદિભિરાગન્તુકાનાં કર્મણાં વન્ધં, પૂર્વાર્જિતાનાં ચ નિર્જરાં કુર્વન્તિ ।

તથા—(૨) યે આસ્રવાસ્તે અપરિસ્રવાઃ, इति द्वितीयभज्जवर्त्तिनो जीवाः

(૪) ‘ યે અપરિસ્રવાસ્તે અનાસ્રવાઃ ’ જો કર્મકે વન્ધ કરાને મેં કારણ હોતે હેં વે હી પ્રવચનકે ઉપકારકે અભિપ્રાયસે ક્રિયે હુણ હોને સે કર્મ-વન્ધકે કારણ નહીં હોતે, જૈસે બાલગ્લાનાદિકે લિયે નિત્યપિણ્ડાદિ કા ગ્રહણ કરના । ઇસ સૂત્રમેં આદિ અંત કે દો હી ભંગ બતલાયે ગયે હેં, મધ્ય કે નહીં, ઉનકા ગ્રહણ કરને પર ઇસ સૂત્રમેં ચતુર્ભજ્ઞી ઇસ પ્રકાર સે બનતી હૈ—

(૧) યે આસ્રવાઃ—તે પરિસ્રવાઃ, (૨) યે આસ્રવાઃ—તે અપરિસ્રવાઃ

(૩) યે અનાસ્રવાઃ—તે પરિસ્રવાઃ, (૪) યે અનાસ્રવાઃ—તે અપરિસ્રવાઃ

૧—યહાં પર પ્રથમ ભજ્ઞ મેં સમસ્ત સંસારી જીવોં કા સમાવેશ હો જાતા હૈ, કારણ કિ વે હી જીવ પ્રતિક્ષણ મિથ્યાત્વાદિક જો કર્મવન્ધકે કારણ હેં ઉનસે કર્મોંકા વન્ધ કરતે રહતે હેં, ઓર પૂર્વોપાર્જિત સંચિત કર્મોં કી નિર્જરા ભા ક્રિયા કરતે હેં ।

૨—દ્વિતીય ભજ્ઞ શૂન્ય હૈ; કારણ—એસે કોઈ ભી જીવ નહીં હેં જો

(૪) ‘ યે અપરિસ્રવાઃ તે અનાસ્રવાઃ ’ જે કર્મબંધ કરાવવામાં કારણ બને છે, પ્રવચનના ઉપકાર કરવાના અભિપ્રાયથી કરવામાં આવેલ તે જ કર્મબંધના કારણ થતા નથી, જેમ બાળ-ગ્લાનાદિ માટે નિત્યપિણ્ડાદિનું ગ્રહણ કરવું. આ સૂત્રમાં આદિઅંતના બે ભંગ બતાવેલ છે, મધ્યના નહિ. આના ગ્રહણ કરવાથી આ સૂત્રમાં ચતુર્ભજ્ઞી આ પ્રકારે બને છે—

(૧) યે આસ્રવાઃ — તે પરિસ્રવાઃ, (૨) યે આસ્રવાઃ — તે અપરિસ્રવાઃ,

(૩) યે અનાસ્રવાઃ — તે પરિસ્રવાઃ, (૪) યે અનાસ્રવાઃ — તે અપરિસ્રવાઃ ।

(૧) અહીં પ્રથમ ભંગમાં સમસ્ત સંસારી જીવોનો સમાવેશ થઈ બંધ છે, કારણ કે તે જ જીવ પ્રતિક્ષણ મિથ્યાત્વાદિક જે કર્મબંધના કારણ છે તે-ઓથી કર્મનો બંધ કરે છે, અને પૂર્વોપાર્જિત સંચિત કર્મોની નિર્જરા કરે છે.

(૨) બીજો ભંગ શૂન્ય છે; કારણ કે એવો કોઈ પણ જીવ નથી જે આસ્રવકર્તા

કેડપિ નોપલભ્યન્તે, કુતઃ ? એ-આસ્રવાઃ-કર્મવન્ધકર્તારસ્તેડવશ્યમેવ કર્મ-  
નિર્જરાકર્તારો ભવન્તિ, તસ્માત્તે-અપરિસ્રવાઃ=કર્મનિર્જરાયાઃ અકર્તારો ન ભવન્તિ ।

તથા-(૩) એ અનાસ્રવાઃ=કર્મવન્ધસ્યાડકર્તારરતે પરિસ્રવાઃ=પૂર્વકર્મનિર્જરા-  
કર્તારઃ, ઇત્યેતસ્મિન્ તૃતીયભક્તે ચાયોગિકેવલિનશ્ચતુર્દશગુણસ્થાનવર્તિનઃ સન્તિ ।

તથા—(૪) એ અનાસ્રવાસ્તે અપરિસ્રવાઃ, ઇતિ ચતુર્થભક્તે સિદ્ધાઃ સન્તિ, તેષા-  
મનાસ્રવત્વાદપરિસ્રવત્વાચ્ચ । અગ્રાધન્તભક્તો મૂત્રે ગૃહીતૌ । આધન્તભક્તગ્રહણેન મધ્યમ-  
ભક્તદ્વયં મુતરાં ગૃહ્યતે ॥

યદ્વા-એ આસ્રવાઃ=કર્મવન્ધકર્તારો જીવાસ્તે પરિસ્રવાઃ=કર્મનિર્જરાકર્તારો  
ભવન્તિ । તથા-એ પરિસ્રવાઃ=કર્મનિર્જરાકર્તારસ્તે આસ્રવાઃ=પુનર્નવીનકર્મવન્ધ-  
કર્તારો ભવન્તિ ।

આસ્રવકર્તા હોતે હુણ્ મી નિર્જરા કે કર્તા નહીં, જો કર્મવન્ધકે કર્તા હોતે  
હૈં વે અવશ્ય હી કર્મકી નિર્જરા કે મી કર્તા હોતે હૈં ।

૩-તૃતીય ભક્તમેં અયોગિકેવલિનામક ચૌદહવેં ગુણસ્થાનમેં રહ-  
નેવાલે જીવોંકા ગ્રહણ હૈ, કારણ કિ અનેકે નવીન કર્મોંકે વન્ધકા અભાવ  
હૈ, ઓર પૂર્વોપાર્જિત કર્મોંકી નિર્જરા કા સદ્ભાવ હૈ ।

૪-ચતુર્થ ભક્ત મેં સિદ્ધ જીવોંકા ગ્રહણ કિયા ગયા હૈ, વહાં પર ન  
કર્મોં કા આસ્રવ હૈ ઓર ન અનેકી નિર્જરા હી હૈ ।

અથવા-જો જીવ આસ્રવ-કર્મવન્ધકે કરનેવાલે હૈં વે પરિસ્રવ-કર્મ-  
નિર્જરાકે કરનેવાલે હૈં, તથા-જો પરિસ્રવ-કર્મનિર્જરા કે કરનેવાલે હૈં વે  
આસ્રવ-ફિરસે નવીન કર્મોંકે વન્ધ કરનેવાલે હૈં ।

હોવા છતાં નિર્જરાનો કર્તા ન હોય ? જે કર્મવન્ધનો કર્તા હોય છે તે અવશ્ય  
જ કર્મની નિર્જરાનો પણ કર્તા હોય છે.

(૩) ત્રીજા ભંગમાં અયોગિકેવળી નામના ચૌદમા ગુણસ્થાનમાં રહેવાવાળા  
જીવોનું ગ્રહણ છે, કારણ કે તેને નવા કર્મના બંધનો અભાવ છે, અને પૂર્વોપાર્જિત  
કર્મોની નિર્જરાનો સદ્ભાવ છે.

(૪) ચોથા ભંગમાં સિદ્ધ જીવોનું ગ્રહણ કરેલું છે. ત્યાં નથી કર્મોનું આસ્રવ  
અને નથી તેઓની નિર્જરા.

અથવા-જે જીવો આસ્રવ-કર્મોના બંધ કરવાવાળા છે તે પરિસ્રવ-કર્મ  
નિર્જરાના કરવાવાળા છે, તથા જે પરિસ્રવ-કર્મનિર્જરાના કરવાવાળા છે તે આસ્રવ  
-ફરી નવીન કર્મોના બંધ કરવાવાળા છે.

નન્વેવં 'યે પરિસ્ત્રવાસ્તે આસ્ત્રવાઃ' ઇતિ સ્વીકારે ત્રયોદશે સયોગિકેવલિ-ગુણસ્થાને ઈર્યાપથિકક્રિયયા સમાગતં કર્મ નિર્જરયતો મુનેઃ પુનર્નવીનકર્મવન્ધાપત્તૌ સત્યાં કર્મવન્ધપરમ્પરોચ્છેદઃ કદાપિ ન સ્યાત્, તથા ચ-આગમોક્તમોક્ષવાદસ્ય વૈયર્થ્યં પ્રસજ્યેત ? ઇતિ ચેત્, ઉચ્યતે—

ત્રયોદશગુણસ્થાનસમાગતકર્મણો નિર્જરા યદિ જીવેન પ્રયત્નવિશેષેણ ક્રિયેત તર્હિ યથોક્તરીત્યા તન્નિર્જરાકર્તુર્મુનેઃ પુનરપિ નવીનકર્મવન્ધકર્તૃત્વમાપદ્યેત, પરન્તુ નૈવં ભવતિ, યતઃ—તસ્ય કર્મણો નિર્જરા સ્વભાવાદેવ જાયતે ।

શંકા—“જો નિર્જરા કરનેવાલે હૈં વે નવીન કર્મકા વન્ધ કરનેવાલે હૈં” ઇસ પ્રકારકે પૂર્વોક્ત ભક્તી સ્વીકૃતિમેં સયોગિ-કેવલિનામક તેરહવેં ગુણસ્થાનવર્તી જીવોં કે ભી નવીન કર્મવન્ધકા સદ્ભાવ માનના પડેગા; કારણ કિ વહાં પર નિર્જરા ભી હોતી હૈં ઓર ઈર્યાપથ ક્રિયાસે નવીન કર્મોંકા વન્ધ ભી હોતા હૈં । ઇસ પ્રકાર કી માન્યતા કે અનુસાર તો વહાં કમી ભી કર્મવન્ધ કી પરમ્પરા કા ઉચ્છેદ હી નહીં હો સકેગા; ફિર આગમમેં જિસ મુક્તિવાદ કા સમર્થન કિયા હુઆ મિલતા હૈં વહ સર્વથા અસંગત હી ઠહરેગા ?

ઉત્તર—યહ આપકા કહના તવ ટીક હો સકતા, જવ કિ ત્રયોદશ ગુણસ્થાનવર્તી જીવકે આગત કર્મોં કી નિર્જરા કિસી પ્રયત્ન વિશેષસે સાધ્ય હોતી માની જાતી, પરંતુ એસી માન્યતા તો હૈં હી નહીં, ક્યોં કિ વહાં પર આગત કર્મોં કી નિર્જરા સ્વતઃ—સ્વભાવ સે હી હોતી હૈં ।

શંકા—‘યે પરિસ્ત્રવાસ્તે આસ્ત્રવાઃ’ અર્થાત્—“જે નિર્જરા કરવાવાળા છે તે નવીન કર્મોના બંધ કરવાવાળા છે.” આ પ્રકારે જે માનવામાં આવે તો સયોગિકેવળીનામના તેરમાં ગુણસ્થાનવર્તી જીવોને પણ નવા કર્મના બંધનો સદ્ભાવ માનવો પડશે, કારણ કે ત્યાં નિર્જરા પણ થાય છે અને ઈર્યાપથક્રિયાથી નવા કર્મનો બંધ પણ થાય છે. આવા પ્રકારની માન્યતાના અનુસારે તો ત્યાં કોઈ વખત પણ કર્મબંધની પરંપરાનો ઉચ્છેદ થઈ શકે નહિ, તો પછી આગમમાં જે મુક્તિવાદનું સમર્થન કરેલું છે તે સર્વથા અસંગત જ થઈ જશે.

ઉત્તર—આ આપનું કહેવું ત્યારે સંગત થાય, જ્યારે ત્રયોદશગુણસ્થાન-વર્તી જીવના આગત-કર્મોની નિર્જરા કોઈ પ્રયત્નવિશેષાધીન માનવામાં આવે, પરંતુ એવી માન્યતા તો છે જ નહિ, કેમ કે તે ઠેકાણે આગત (આવેલા) કર્મોની નિર્જરા સ્વભાવથી જ થાય છે.

અત્ર પરિસ્ત્રવપદાર્થે જીવપ્રયત્નકૃતા નિર્જરા પરિગૃહ્યતે, एवं च नोक्तदोषप्रसङ्गः । त्रयोदशगुणस्थाने उक्तकर्मैव जीवो निर्जरयति, प्रथमसमये ऐर्यापथिककर्मणो बन्धः, द्वितीये तद्वेदनं, तृतीये च तन्निर्जरेत्येवं क्रमेण बन्धो निर्जरा चेति द्वयं स-योगिकेवल्लिगुणस्थानं यावत् प्रवर्तते । तत्रत्या निर्जरा न जीवप्रयत्नजनिता किंतु स्वभावादेवेति पुनः पुनः स्मृतिपथमानेतव्यम् ।

तथा—चतुर्दशगुणस्थानवर्तिजीवोऽपि नैतद्वाक्यविषयः । तस्याघातिकर्मचतुष्टय-निर्जराकर्तृत्वं प्रयत्नविशेषमनपेक्ष्य भवति, केवलज्ञानोत्पत्तौ सत्यां तत्सामर्थ्या-दवशिष्टकर्मचतुष्टयनिर्जराया अवश्यम्भावनिरूप्यते ।

“પરિસ્ત્રવ” હસ શબ્દ મેં જીવકે પ્રયત્ન સે હોનેવાલી નિર્જરા કા હી ગ્રહણ ક્રિયા ગયા હૈ, અતઃ ઉસ ગુણસ્થાનવર્તી જીવ કે નવીન કર્મબંધ કે પ્રતિ કર્તાપન કિસી પ્રકાર ખી સંભવિત નહીં હો સકતા હૈ । વહાં પ્રથમ સમય મેં ઈર્યાપથ ક્રિયાસે આગત કર્મકા બંધ હોતા હૈ, દ્વિતીય સમયમેં ઉસકા વેદન ઔર તૃતીય સમયમેં ઉસકી નિર્જરા । હસ પ્રકારકા ક્રમ ઉસ જીવ કે તય તક ચાલૂ રહતા હૈ જય તક ઉસ જીવ કે ઉસ ગુણસ્થાનવર્તીપના રહતા હૈ, અતઃ યહ માનના કિ—ઉસકે આગત કર્મોં કી નિર્જરા કિસી પ્રયત્નવિશેષાધીન હોતી હૈ, યહ ઁક ભ્રમ હી હૈ, ક્યોં કિ ઉન કર્મોં કી નિર્જરા તો સ્વાભાવિક હી હૈ ।

તથા ચૌદહવેં ગુણસ્થાનવર્તી જીવમેં અવશિષ્ટ અઘાતિયા કર્મોંકી નિર્જરા કે પ્રતિ કર્તૃત્વ પ્રયત્નવિશેષકે વિના સ્વતઃ હી હૈ, કારણ કિ કેવલજ્ઞાનકી ઉત્પત્તિ હોને પર ઉસકે પ્રભાવસે ઉન અઘાતિયા કર્મોંકી

“પરિસ્ત્રવ” આ શબ્દમાં જીવના પ્રયત્નથી થવાવાળી નિર્જરાનું જ અહીં કહેલ છે, તેથી આ ગુણસ્થાનવર્તી જીવનું નવીન કર્મબંધ કરવામાં કર્તાપણું કોઈ પણ પ્રકારે સંભવિત થઈ શકતું નથી. ત્યાં પ્રથમ સમયમાં ઈર્યાપથક્રિયાથી આગત ( આવતા ) કર્મનો બંધ થાય છે, બીજા સમયમાં તેનું વેદન અને ત્રીજા સમયમાં તેની નિર્જરા. આ પ્રકારનો ક્રમ તે જીવને ત્યાં સુધી ચાલુ રહે છે જ્યાં સુધી તે જીવને તે ગુણસ્થાનવર્તીપણુ રહે છે. આથી એમ માનવું કે ‘તેના આગત કર્મની નિર્જરા કોઈ પ્રયત્નવિશેષાધીન હોય છે.’ એ એક ભ્રમ જ છે, કારણ કે તે કર્મોની નિર્જરા તો સ્વભાવથી જ થાય છે.

તથા—ચૌદમા ગુણસ્થાનવર્તી જીવમાં અવશિષ્ટ ( બાકી રહેલા ) અઘાતિયા કર્મોની નિર્જરા પ્રતિ કર્તાપણુ કોઈ એક પ્રયત્ન વગર સ્વતઃ જ છે. તેનું કારણ એ છે કે કેવળજ્ઞાનની ઉત્પત્તિ થતાં જ તેના પ્રભાવથી તે અઘાતિયા કર્મોની



एवञ्च—‘ये आस्रवास्ते परिस्रवाः, ये परिस्रवास्ते आस्रवाः’ इति पूर्वार्द्धवाक्यं चतुर्गतिभ्रमणाधिकारिजीवाभिप्रायेण कथितम् । ‘ये अनास्रवास्ते अपरिस्रवाः, ये अपरिस्रवास्ते अनास्रवाः’ इत्युत्तरार्द्धवाक्यं तु सिद्धापेक्षया; ते हि—नवीनकर्मबन्धकर्तृत्वाऽभावादनास्रवाः, सकलपूर्वकर्मक्षयेण नवीनकर्मबन्धाभावेन च निर्जरणीयकर्माभावात्कर्मनिर्जराया अकर्तारस्तस्मादपरिस्रवाः ।

तथा—सकलपूर्वकर्मक्षयेण नवीनकर्मानागमनेन च निर्जरणीयकर्माभावात्कर्म-निर्जराया अकर्तृत्वाद् अपरिस्रवाः, नवीनकर्मबन्धकर्तृत्वाभावाच्च अनास्रवाः, इति ।

निર્જરા નિયમસે હોતી હૈ, ઇસે રોકનેવાલી કોઈ મી શક્તિ નહીં હૈ, ઇસલિયે ચૌદહવેં ગુણસ્થાનવર્ત્તી જીવકે પ્રતિ મી યહ આક્ષેપ નહીં હોતા ।

इस प्रकार “ये आस्रवास्ते परिस्रवाः, ये परिस्रवास्ते आस्रवाः” यह पूर्वार्ध वाक्य चतुर्गतियों में भ्रमण करनेके अधिकारी जीवों की अपेक्षा से ही कहा गया है । तथा—“ये अनास्रवास्ते अपरिस्रवायेः अपरिस्रवास्ते अनास्रवाः” यह उत्तरार्ध वाक्य सिद्धों की अपेक्षासे कहा गया है, कारण कि एक तो वे नवीन कर्मबन्धके कर्ता नहीं हैं इससे वे अनास्रव हैं । दूसरे उनमें पूर्वके सकल कर्मोंका क्षय और आगामी नवीन कर्मबन्धका अभाव भी हो चुका है, इसलिये निर्जराके भी कर्ता नहीं माने गये हैं । इसलिये वे अपरिस्रव हैं । तथा—उनमें पूर्वसंचित सकल कर्म के क्षय से और नवीन कर्मों के नहीं आने के कारण निर्जरा करने योग्य कर्मोंके अभाव से कर्मोंकी निर्जराके कर्ता नहीं होने के कारण वे अपरिस्रव हैं, और नवीन कर्मोंके बन्ध नहीं करने के कारण वे अनास्रव हैं ।

નિર્જરા નિયમથી થઈ જાય છે, તેને રોકવાવાળી કોઈ પણ શક્તિ નથી, માટે ચૌદમા ગુણસ્થાનવર્ત્તી જીવના પ્રતિ પણ આ આક્ષેપ થઈ શકતો નથી.

આ પ્રકારે “યે આસ્રવાસ્તે પરિસ્રવાઃ, યે પરિસ્રવાસ્તે આસ્રવાઃ” આ પૂર્વાર્ધ વાક્ય ચતુર્ગતિયોમા ભ્રમણ કરવાવાળા જીવોની અપેક્ષાથી જ કહેલ છે તથા—“યે અનાસ્રવાસ્તે અપરિસ્રવાઃ, યે અપરિસ્રવાસ્તે અનાસ્રવાઃ” આ ઉત્તરાર્ધ વાક્ય સિદ્ધાંતની અપેક્ષાએ કહેલ છે. કારણ કે એક તો તે નવા કર્મબંધના કર્તા નથી તેથી તે અનાસ્રવ છે. બીજું તેમાં પૂર્વના સકળ કર્મનો ક્ષય અને આગામી નવા કર્મબંધનો અભાવ પણ થઈ ચુકેલ છે, માટે નિર્જરા કરવાયોગ્ય કર્મનો અભાવ થવાથી તે નિર્જરાના પણ કર્તા માનવામાં આવેલ નથી, માટે તે અપરિસ્રવ છે. તથા—તેમાં પૂર્વસંચિત સકળ કર્મના ક્ષયથી, અને નવીન કર્મોનાં નહિ આવવાથી, નિર્જરા કરવાયોગ્ય કર્મનો અભાવ થવાથી કર્મોની નિર્જરાના કર્તા નહીં હોવાને લીધે તે અપરિસ્રવ છે. અને નવીન કર્મો તો બંધ નહીં કરવાથી તે અનાસ્રવ છે.

યદ્વા-અનાસ્રવાપરિસ્રવયોઃ ક્રમં દર્શયતિ-‘યેઽનાસ્રવાસ્તેઽપરિસ્રવાઃ’ ઇતિ । યે પ્રથમે સમયેઽનાસ્રવા ભવન્તિ-કર્મવન્ધકા ન ભવન્તિ, તે તત્પશ્ચાત્ સમયે અપરિસ્રવા ભવન્તિ-કર્મનિર્જરકા ન ભવન્તિ, વદ્ધસ્યૈવ કર્મણો નિર્જરણીયત્વાત્ । એવં યેઽપરિસ્રવાસ્તેઽનાસ્રવા ઇતિ બોધ્યમ્ । એતદપિ વ્યાખ્યાનં સિદ્ધાપેક્ષયા ॥ સૂ. ૧ ॥

યદ્દેવં તતઃ કિમ્ ? ઇત્યાહ-‘एए पए ’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્-एए पए संबुज्जमाणे लोयं च आणाए अभिसमिच्चा पुढो पवेइयं ॥ सू. २ ॥

છાયા-एतानि पदानि संबुध्यमानः लोकं चात्रयाऽभिसमेत्य पृथक् प्रवेदितम् । २।

ટીકા-एतानि=અનન્તરોક્તાનિ, પદાનિ=‘યે આસ્રવાસ્તે પરિસ્રવાઃ’ ઇત્યાદીનિ સંબુદ્ધ્યમાનઃ=સમ્યગ્ જાનન્, તથા લોકં=પદ્ધજીવનિકાયમ્ આસ્રવાગતકર્મણા

અથવા-અનાસ્રવ ઓર અપરિસ્રવ કે ક્રમકો દિશાતે હૈ-“યે અનાસ્રવાસ્તે અપરિસ્રવાઃ” જો પ્રથમ સમયમેં અનાસ્રવ હૈ-કર્મવન્ધ કે કર્તા નહીં હૈ, વે ઉસકે વાદ કે સમયમેં અપરિસ્રવ હૈ-કર્મ કી નિર્જરા કરનેવાલે નહીં હૈ, કારણ કિ જો કર્મોસે વંધા હુઆ હોતા હૈ વહી ઉનકી નિર્જરા કરનેવાલા ભી હોતા હૈ । જો કર્મોસે વંધા હુઆ હી નહીં હૈ વહ નિર્જરા ભી કિમકી કરેગા । ઇસી પ્રકાર “યે અપરિસ્રવાસ્તે અનાસ્રવાઃ” યહ વાક્ય ભી સમજ્જ લેના ચાહિયે । યહ વિવરણ ભી સિદ્ધોંકી અપેક્ષા સે હી કિયા ગયા હૈ એસા સમજ્જના ચાહિયે ॥ સૂ. ૧ ॥

यदि ऐसा है तो इससे क्या? इसका उत्तर कहते हैं-‘एए पए संबुज्जमाणे ’ इत्यादि ।

इन पूर्वोक्त पदों को अच्छी तरहसे जाननेवाला कौनसा ऐसा प्राणी होगा जो आस्रवसे आये हुए कर्मों से बंधे हुए, और तप एवं संयम के

અથવા-અનાસ્રવ અને અપરિસ્રવના ક્રમને બતાવે છે-

“યે અનાસ્રવાસ્તે અપરિસ્રવાઃ” જે પ્રથમ સમયમાં અનાસ્રવ છે-કર્મબંધના કર્તા નથી તે ત્યારબાદના સમયમાં અપરિસ્રવ છે-કર્મની નિર્જરા કરવાવાળા નથી, કારણ કે જે કર્મોથી બંધાયેલા રહે છે તે તેની નિર્જરા કરવાવાળા પણ હોય છે. જે કર્મોથી બંધાયેલા નથી તે નિર્જરા પણ કેવી રીતે ? આ બે પ્રકારે “યે અપરિસ્રવાસ્તે અનાસ્રવા” આ વાક્ય પણ સમજી લેવું જોઈએ. આ વિવેચન પણ સિદ્ધોની અપેક્ષાથી જ કરેલ છે. ॥ સૂ. ૧ ॥

જે એમ છે તો તેનાથી શું ? આનું ઉત્તર કહે છે-‘एए पए संबुज्जमाणे’ ઇત્યાદિ । તે પૂર્વોક્ત પદોને ઘણી સારી રીતે બાણનાર કોણ તેવો પ્રાણી હશે જે આસ્રવથી આવેલા કર્મોથી બંધાયેલા અને તપ સંયમના આરાધનથી રહિત આ

વધ્યમાનં, તપઃસંયમસમારાધનેન ચ મુચ્યમાનમ્, આજ્ઞયા=આર્હતાગમાનુસારેણ, અભિસમેત્ય=સમ્યગ્ વિજ્ઞાય, પૃથક્=અન્યાન્યપ્રકારેણ પ્રવેદિતં ચ=અતીતાનાગતવર્તમાનૈઃ સર્વતીર્થકરૈઃ પ્રવોદિતં વન્ધકારણં નિર્જરાકારણં ચ, અભિસમેત્ય=જ્ઞાત્વા, કો નામ ધર્માચરણે પ્રવૃત્તો ન ભવેત્? અપિ તુ ભવે દેવે દિત્યર્થઃ ॥ સૂ૦ ૨ ॥

આર્હતપ્રવચનાનુસારી ચતુર્દશપૂર્વધરાદિરપિ જીવાનાં હિતાય પ્રવેદયતીત્યાહ-  
'આઘાઙ નાળી' ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્—આઘાઙ નાળી ઇહ માણવાળં સંસારપટિવળ્લાણં સંબુજ્જમાળાણં વિન્નાળપત્તાણં અટ્ટાવિ સંતા અદુવા પમત્તા અહા-  
સચ્ચમિળં—તિબેમિ ॥ સૂ૦ ૩ ॥

છાયા—આખ્યાતિ જ્ઞાની ઇહ માનવેભ્યઃ સંસારપ્રતિપન્નેભ્યઃ સંબુધ્યમાનેભ્યઃ વિજ્ઞાનપ્રાપ્તેભ્યઃ, આર્તા અપિ સન્તઃ અથવા પ્રમત્તાઃ યથાસત્યમિદમ્ ઇતિ બ્રવીમિ ॥૩॥

ટીકા—જ્ઞાની=પ્રવચનજ્ઞાનસંપન્નઃ, ઇહ=પ્રવચને પ્રોક્તં ધર્મ માનવેભ્યઃ, આ-  
ખ્યાતિ—ઇત્યન્વયઃ, મનુષ્યાણાં સર્વસંવરચારિત્રસંભવાત્તેભ્ય ઉપદિશતીત્યર્થઃ ।

આરાધનસે રહિત ઇસ ષડ્જીવનિકાયરૂપ લોકકો તથા અતીત, અના-  
ગત ઔર વર્તમાન સમસ્ત તીર્થકરોં દ્વારા ભિન્ન ૨ પ્રકારસે ઉપદિષ્ટ બંધકે  
કારણોં ંવં નિર્જરા કે કારણોં કો જિનાગમસે જાન કર ધર્માચરણ કરને  
મેં પ્રવૃત્ત નહીં હોગા ? અપિતુ અવશ્ય હી હોગા ॥ સૂ૦ ૨ ॥

અર્હત પ્રભુકે પ્રવચનાનુસાર પ્રવૃત્તિ કરનેવાલે ચતુર્દશપૂર્વ કે પાઠી  
ગણધરાદિક ભી જીવોં કે હિતકે લિયે હી ઉપદેશ કરતે હૈં; યહી વાત  
પ્રકટ કી જાતી હૈ—'આઘાઙ નાળી' ઇત્યાદિ ।

જિનેન્દ્રોપદિષ્ટ પ્રવચનકે જ્ઞાનસે સંપન્ન જ્ઞાની ગણધરાદિક શાસ્ત્ર-  
વિહિત ધર્મકા પ્રતિપાદન, હેયોપાદેય—વિવેકશીલ સંસારી મનુષ્યોં કે

ષડ્જીવનિકાયરૂપ લોકને, તથા અતીત અનાગત અને વર્તમાન સમસ્ત તીર્થકરો  
દ્વારા બુદ્ધ બુદ્ધ પ્રકારથી ઉપદિષ્ટ બંધના કારણોને અને નિર્જરાના કારણોને અના-  
ગમથી બાળીને ધર્માચરણ કરવામાં પ્રવૃત્ત ન થાય ? પરન્તુ અવશ્ય જ થાય. ॥સૂ૦૨॥

અર્હન્ત પ્રભુના પ્રવચન અનુસાર પ્રવૃત્તિ કરનાર ચતુર્દશ—ચૌદ પૂર્વના  
પાઠી ગણધરાદિક પણ જીવના હિતને માટે જ ઉપદેશ કરે છે. આ વાત પ્રગટ  
કરવામાં આવે છે—'આઘાઙ નાળી' ઇત્યાદિ.

જિનેન્દ્ર લગવાને કહેલાં પ્રવચનના જ્ઞાનથી સંપન્ન જ્ઞાની ગણધરાદિક શાસ્ત્રવિહિત  
ધર્મનું પ્રતિપાદન હેયોપાદેયવિવેકશીલ સંસારી મનુષ્યોને માટે કરે છે. આ સૂત્રમાં

કથંભૂતેભ્યો માનવેભ્યઃ ? સંસારપ્રતિપન્નેભ્યઃ=ચતુર્ગતિષુ વર્તમાનેભ્યઃ, કેવલિપ્રમુ-  
તીનામુપદેશશ્રવણપ્રયોજનં નાસ્તીતિ ભાવઃ । સંસારિષ્વપિ ધર્મગ્રહણયોગ્યા એવ ઉપ-  
દેશાર્હાં इत्यत आह-संबुध्यमानेभ्य इति, यथोपदिष्टं धर्मज्ञातृभ्य इत्यर्थः ।  
અસંજ્ઞિનો નોપદેશાર્હાં, इत्यतस्तान् व्यावर्तयितुं विशेषणान्तरमाह-विज्ञानप्राप्तेभ्य  
इति हेयोपादेयज्ञानवद्भ्यः-सर्वथापर्याप्तकेभ्यः संज्ञिभ्य इत्यर्थः ।

લિયે કરતે હૈં । હસ સૂત્રમેં જિનેન્દ્રપ્રતિપાદિત સદ્ધર્મકા ઉપદેશ સંસારી  
માનવોં કે લિયે જો પ્રકટ કિયા ગયા હૈં ઉસકા કારણ યહી હૈં કિ ઉનમેં  
હી સર્વસંવર ઓર સર્વવિરતિરૂપ ચારિત્ર કે આરાધન કરને કી યોગ્યતા  
રહી હુઈ હૈં । ઉનમેં ભી જો ધર્મગ્રહણ કરનેકી યોગ્યતા સે સમ્પન્ન હોતે  
હૈં ઉન્હેં હી ધર્મકા ઉપદેશ દિયા જાતા હૈં, ઓર વહીં પર વહ અસરકા-  
રક હોતા હૈં । જો અપર્યાપ્તાવસ્થામેં રહે હુએ હૈં વે ધાર્મિક ઉપદેશકે પાત્ર  
નહીં હૈં । યહી વાત ‘સંબુદ્ધમાન’ ઓર ‘વિજ્ઞાનપ્રાપ્ત’ ઇન દો વિશે-  
ષણોં સે પ્રકટ કી ગઈ હૈં । જો ધાર્મિક ઉપદેશકો યથાવત્ નહીં સમજ  
સકતેવે ઉસ ઉપદેશ સે લાભ ભી કુછ નહીં પ્રાપ્ત કર સકતે ।  
એવં જો અપર્યાપ્ત હૈં, અસંજ્ઞી હૈં, ઉન પર ભી ઉપદેશ અપના કુછ ભી  
પ્રભાવ નહીં દિશ્વા સકતા । મનકે વિના વિચારશક્તિકા અભાવ  
હોનેસે વે ઉસ લાભસે સર્વથા વંચિત હી રહતે હૈં, અતઃ જો સંજ્ઞી હૈં,  
જિનમેં ‘યહ હેય હૈં યહ ઉપાદેય હૈં’ હસ પ્રકારકા જ્ઞાન જાગૃત હો રહા  
હૈં, વહીં પર દિયા ગયા ધાર્મિક ઉપદેશ અપના પ્રભાવ પ્રકટ કરતા હૈં ।

જિનેન્દ્રપ્રતિપાદિત સદ્ધર્મનો ઉપદેશ સંસારી જીવોને માટે જે પ્રગટ કરવામાં  
આવેલ છે તેનું કારણ એ જ છે કે તેમાં સર્વ-સંવર અને સર્વ-વિરતિરૂપ  
ચારિત્રનું આરાધન કરવાની યોગ્યતા રહેલી છે. તેમાં પણ જે ધર્મ ગ્રહણ કરવાની  
યોગ્યતાથી સંપન્ન હોય છે તેને જ ધર્મનો ઉપદેશ આપવામાં આવે છે, અને  
ત્યાં જ તે અસરકારક પણ થાય છે. જે અપર્યાપ્તાવસ્થામાં રહેલાં છે તે ધાર્મિક  
ઉપદેશને પાત્ર નથી, આ વાત ‘સંબુદ્ધમાન’ અને ‘વિજ્ઞાનપ્રાપ્ત’ આ બે વિશે-  
ષણોથી પ્રગટ કરેલ છે. જે ધાર્મિક ઉપદેશને યથાવત્ નથી સમજી શકતા તે  
એ ઉપદેશથી કંઈ પણ લાભ પ્રાપ્ત કરી શકતા નથી. તેમજ જે અપર્યાપ્ત છે-  
અસંજ્ઞી છે તેની ઉપર પણ ઉપદેશ પોતાનો કંઈ પણ પ્રભાવ પાડી શકતો નથી.  
મન વગર વિચાર-શક્તિનો અભાવ હોવાથી તે એ લાભથી સર્વથા દૂર જ રહે  
છે, પણ જે સંજ્ઞી છે તેમાં ‘આ હેય છે, આ ઉપાદેય છે’ આવા પ્રકારના  
જ્ઞાનની જાગૃતિ છે તેવાઓને ધર્મનો ઉપદેશ પોતાનો પ્રભાવ બતાવી શકે છે.

જ્ઞાનીકા દિવા ગયા ધાર્મિક ઉપદેશ ઇસ પદ્ધતિ કા હોતા હૈ જો પૂર્વોક્ત-  
વિશેષણવિશિષ્ટ માનવોંમેં અપને કર્તવ્ય માર્ગકી અવશ્ય ૨ જાગૃતિ  
કરતા હુઆ ઉન્હેં ધર્મકી ભાવનાસે ભાવિત કર દેતા હૈ । યદિ કોઈ  
કિસી કારણ સે આતુર-પીડિત યા પ્રમત્ત-પ્રમાદદશાવાલા ભી હો તો  
ભી વહ ઉસ ઉપદેશદ્વારા પ્રતિબોધિત હો જાતા હૈ । યહી “અદ્વા વિ સંતા  
અદુવા પમત્તા ” ઇસ પદ સે સ્પષ્ટ કિયા ગયા હૈ । કિસી કારણવશ જો  
આર્તધ્યાનમેં લવલીન હૈ, અથવા રાગદ્વેષ આદિ કારણોં સે યા વૈષયિક  
કિસી ભી સંબંધ સે જો પ્રમત્ત હો રહે હૈ; એસે માનવ ભી જ્ઞાની કે દિવ્ય  
ઉપદેશ સે ધાર્મિક લાભસે સંપન્ન હુએ હૈ । જૈસે-આર્ત ચિલાતિપુત્ર વગૈરહ  
ઔર પ્રમત્ત શાલિભદ્રાદિકોંને ધર્મકા લાભ જ્ઞાનીકે ઉપદેશસે લિયા હૈ ।

ઇસ સૂત્રમેં “ મનુષ્યોં કે લિયે જ્ઞાની ધર્મકા ઉપદેશ દેતે હૈ ” યહ  
જો પ્રકટ કિયા ગયા હૈ, ઉસકા કારણ યહ હૈ કિ-ઉનમેં સર્વસંવર ઔર  
સર્વવિરતિરૂપ ચારિત્રારાધન કરનેકી અધિકારિતા હૈ । યદ્યપિ પ્રભુકા  
ધાર્મિક આશ્યાન-સ્રોત મેઘધારાકી તરહ એકસી ધારામેં સર્વત્ર પક્ષપાત  
રહિત વહતા હૈ । ઉનકી પર્વદા-સમવસરણ-મેં જો (૧૨) વારહ પ્રકારકી  
પરિપદ હોતી હૈ ઉસમેં સવકે લિયે પ્રભુકી દિવ્યવાણી એકરૂપમેં  
વિના કિસી ભેદ-ભાવકે ઉન ૨ જીવોંકી ભાષામેં પરિણત હોતી હૈ ।

જ્ઞાનીએ આપેલ ધાર્મિક ઉપદેશ પણ આ પદ્ધતિનો હોય છે જે પૂર્વોક્ત વિશે-  
ષણ-વિશિષ્ટ મનુષ્યોમાં પોતાના કર્તવ્ય માર્ગની અવશ્ય અવશ્ય જાગૃતિ કરતાં  
કરતાં તેમાં ધર્મની ભાવના ભરી દે છે. કદાચ કોઈ કોઈ કારણથી પીડિત અગર  
પ્રમાદદશાવાળા પણ હોય તો પણ તે આ ઉપદેશદ્વારા પ્રતિબોધિત થઈ જાય છે,  
માટે “અદ્વા વિ સંતા અદુવા પમત્તા ” આ પદોથી સ્પષ્ટ કરેલ છે. કોઈ કારણ  
વશ જે આર્તધ્યાનમાં તત્પર છે, અથવા રાગદ્વેષ આદિ કારણોથી યા વૈષયિક  
કોઈ પણ સંબંધથી જે પ્રમત્ત થઈ રહ્યા છે; એવા મનુષ્ય પણ જ્ઞાનીના દિવ્ય  
ઉપદેશથી ધાર્મિક લાભ પ્રાપ્ત કરે છે, જેમ આર્ત-ચિલાતિપુત્ર વિગેરે, અને  
પ્રમત્ત-શાલિભદ્રાદિકોએ ધર્મનો લાભ જ્ઞાનીના ઉપદેશથી લીધો છે.

આ સૂત્રમાં “ મનુષ્યોને માટે જ્ઞાની ધર્મનો ઉપદેશ આપે છે ” આ જે  
પ્રગટ કરેલ છે તેનું કારણ એ છે કે-તેમાં સર્વ-સંવર અને સર્વ-વિરતિરૂપ  
ચારિત્ર આરાધન કરવાની યોગ્યતા છે. પ્રભુનું ધાર્મિક આશ્યાનસ્રોત વરસાદધારાની  
માફક એક ધારાથી સર્વત્ર પક્ષપાતરહિત વહે છે. તેમની પર્વદા-સમવસરણ-માં  
જે બાર પ્રકારની પરિપદ ભરાય છે તેમાં બધાને માટે પ્રભુની દિવ્ય વાણી  
કોઈ પણ ભેદભાવ વિના-એક રૂપમાં તે તે જીવોની ભાષામાં પરિણત થાય છે,

જ્ઞાની યથા ધર્મમાર્યાદિતિ તથા દર્શયતિ—‘ આર્તાઅપિ ’ ઇત્યાદિ । આર્તાઅપિ =કુતશ્ચિત્ કારણાત્ આતુરા અપિ, અથવા રાગદ્વેષોદયાત્ અન્યસ્માદ્ વા વિષય-સંગવશાત્ પ્રમત્તા અપિ સન્તઃ પ્રતિબુદ્ધ્યન્તે, યથા—આર્તાશ્ચિલાતિપુત્રાદયઃ, પ્રમત્તાઃ શાલિભદ્રાદયો ધર્મં વિદન્તિ સ્મ, તથા જ્ઞાની પુરુષો ધર્મમુપદિશતીત્યર્થઃ । એતસ્મિન્ વિષયે શ્રદ્ધાનં વિધેયમિતિ દર્શયિતુમાહ—‘ યથાસત્યસિદમ્ ’ ઇતિ । મયા યત્ કથિતં કથ્યમાનં ચ તદિદં યથાસત્યં સત્યમનતિક્રમ્ય વર્તતે—ઇત્યર્થઃ, મુમુક્ષુ-ફિર મી જો યહાં પર મનુષ્યોં કે લિયે જ્ઞાની પુરુષ ધર્મકા ઉપદેશ દેતે હૈં ઉસકા કારણ ઉનમેં સર્વસંવર ઓર સર્વવિરતિરૂપ ચારિત્રારાધન કરને કી યોગ્યતા હી હૈં । ઓર ઉસી યોગ્યતા કો લક્ષમેં રખ કર યહ કહા ગયા હૈં ।

મનુષ્યોં કે સિવાય અન્યગતિયોં કે જીવોં મેં યહ યોગ્યતા નહીં હૈં । તિર્યચ્ચગતિકે જીવ (૬) પાંચ ગુણસ્થાનોં સે આગે નહીં વઢ સકતે હૈં । દેવગતિ કે જીવોં મેં (૪) ચાર ગુણસ્થાન હી પાયે જાતે હૈં, અન્ય ગુણસ્થાન નહીં । મનુષ્યોં મેં હી (૧૪) ચૌદહ ગુણસ્થાનોંકે આરાધન કરનેકી યોગ્યતા હૈં । ઇતના હોને પર મી જો પર્યાસ નહીં હૈં કિન્તુ અપર્યાસદશાવર્તીં હૈં, વે ઉપદેશકે પાત્ર હી નહીં હૈં ।

‘ નિર્વૃત્ત્યપર્યાસક ’ વે હૈં—જિનકી અમી પર્યાસિયાં પૂર્ણ નહીં હુઈ હૈં, એક અન્તર્મુહૂર્ત મેં નિયમ સે પૂર્ણ હો જાવેગી । ‘ લબ્ધ્યપર્યાસક ’ વે હૈં—જો પર્યાસિયોં કી પૂર્ણતાસે રહિત હૈં, ઓર અન્તર્મુહૂર્ત મેં જિનકા મરણ

તો પણ ને આ ઠેકાણે ‘ મનુષ્યોને માટે જ્ઞાની પુરુષ ધર્મનો ઉપદેશ આપે છે ’ આવું ને કહેવામા આવ્યું છે તેનું કારણ તેમાં સર્વ—સંવર અને સર્વ—વિરતિરૂપ ચારિત્ર આરાધન કરવાની યોગ્યતા જ છે. અને તે યોગ્યતાને ધ્યાનમાં રાખીને આ કહેવામાં આવેલ છે.

મનુષ્ય સિવાય બીજી ગતિઓના જીવોમાં આ યોગ્યતા નથી. તિર્યચ્ચ ગતિના જીવો પાંચ ગુણસ્થાનથી આગળ વધી શકતા નથી. દેવગતિમાં જીવોને ચાર ગુણસ્થાન જ દેખાય છે, બીજા ગુણસ્થાનો નથી. મનુષ્યોમાં જ ચૌદ ગુણ-સ્થાન આરાધન કરવાની યોગ્યતા છે. આટલું હોવા છતાં ને પર્યાસ નથી પણ અપર્યાસદશાવર્તીં છે તે ઉપદેશને પાત્ર નથી.

‘ નિર્વૃત્ત્યપર્યાસક ’ તે છે, જેની હજી પર્યાસિઓ પુરી થઈ નથી, એક અંતર્મુહૂર્તમાં નિયમથી પૂર્ણ થશે. ‘ લબ્ધ્યપર્યાસક ’ તે છે જે પર્યાસિઓની પૂર્ણ-તાથી રહિત છે, અને અંતર્મુહૂર્તમાં જેનું મરણ અવશ્યભાવી છે, તે સંમૂર્ચિમ



સ્મિન્ વિષયે સમ્યક્ત્વં કુર્યાદિતિ ભાવઃ । इति=इदं ब्रवीमि=यथा मया भगवद्वाक्यं श्रुतं तथा कथयामीत्यर्थः । दुर्लभं सમ્યક્ત્વં ચારિત્રં વા પ્રાપ્ય પ્રમાદો ન કર્તવ્ય इति भावः ॥ सू० ३ ॥

પ્રમાદવતાં સંસારિણાં પુનઃ પુનર્મરણં જન્મ ચ નિરવસાનં ભવતીતિ વોધયિતુમાદ — ‘નાણાગમો’ ઇત્યાદિ ।

અવશ્યંભાવી છે । ये संमूर्च्छिम मनुष्य होते हैं । इसी बातको प्रकट करने के लिये सूत्रमें ‘संबुध्यमान’ और ‘विज्ञानप्राप्त’ ये दो विशेषण दिये गये हैं ।

કૈસી ૨ દશાસંપન્ન જીવોં ને પ્રભુકી ધર્મદેશના સે ધર્મલાભ લિયા હૈ, यह बात चिलातिपुत्र और शालिभद्र आदिके दृष्टान्तसे स्पष्ट की गई है । इनका कथानक शास्त्रों में वर्णित है ।

हे जम्बू ! इस विषयमें जो मैंने कहा है, अथवा आगे भी जो कहा जायगा वह सब सर्वथा सत्य ही है । मुमुक्षुका कर्तव्य है कि वह इस विषयमें पूर्ण श्रद्धालु हो, कारण कि प्रभुके मुख से जैसा सुना है वैसा ही मैं तुझे कहता हूं, अतः हे जम्बू ! दुर्लभ सम्यक्त्व और चारित्रको प्राप्त कर प्रमादका सेवन न करो, यही बारबार कहना है ॥सू० ३॥

પ્રમાદી સંસારી જીવોંકા પુનઃ પુનઃ મરણ ઓર જન્મ નિરંતર હોતા રહતા હૈ, यही प्रकट किया जाता है—‘नाणागमो’ इत्यादि ।

મનુષ્ય હોય છે, આ જ વાતને પ્રગટ કરવાને માટે સૂત્રમાં ‘સંબુદ્યમાન’ અને ‘વિજ્ઞાનપ્રાપ્ત’ એ બે વિશેષણો આપેલા છે.

કેવી કેવી દશાવાળા હોયોને પ્રભુની ધર્મદેશનાથી ધર્મનો લાભ થયેલ છે તે વાત ચિલાતિપુત્ર અને શાલિભદ્ર આદિના દૃષ્ટાન્તથી સ્પષ્ટ છે. ( આની કથા શાસ્ત્રોમાં વર્ણવેલી છે )

હે જમ્બૂ ! આ વિષયમાં જે મેં કહ્યું છે અને આગળ પણ જે કહેવામાં આવશે તે બધું સાચું જ છે. મોક્ષાલિલાધીનું કર્તવ્ય છે કે તે આ વિષયમાં પૂર્ણ શ્રદ્ધાળુ રહે; કારણ કે પ્રભુના મુખથી જેવું સાંભળ્યું છે તેવું જ હું તમોને કહું છું, માટે હે જમ્બૂ ! દુર્લભ સમ્યક્ત્વ અને ચારિત્રને પ્રાપ્ત કરીને પ્રમાદનું સેવન ન કરો, એ જ વારંવાર કહેવાનું છે. ॥ સૂ. ૩ ॥

પ્રમાદી સંસારી હોવોના વારંવાર મરણ અને જન્મ નિરંતર થયા કરે છે, તેને પ્રગટ કરવામાં આવે છે—‘નાણાગમો’ ઇત્યાદિ.

मूलम्—नाणागमो मच्चुमुहस्स अत्थि, इच्छा पणीया वंकानि-  
केया कालग्गहीया निचये निविट्ठा पुढो पुढो जाइं पकप्पयंति । सू० ४।

छाया—नाऽनागमो मृत्युमुखस्यास्ति, इच्छा प्रणीता वङ्कानिकेताः, काल-  
गृहीता निचये निविष्टाः पृथक् पृथक् जातिं प्रकल्पयन्ति ॥ सू० ४ ॥

टीका—मृत्युमुखस्यानागमः संसारिणां नास्तीत्यन्वयः । एवंभूतः कश्चिदपि  
संसारी नास्ति, य उपक्रमेण निरुपक्रमेण वा मृत्युमुखे नाऽऽपततीत्यर्थः । उपक्रमो  
= निमित्तं-दण्डकशाशस्त्ररज्जुविषादयः, निरुपक्रमो=निमित्ताभावः । तथा चोक्तम्—

“ नश्यति नौति याति वितनोति करोति रसायनं क्रियां,  
चरति गुरुव्रतानि विवराण्यपि विशति विशेषकातरः ।  
तपति तपांसि खादति मितानि करोति च मन्त्रसाधनं,  
तदपि कृतान्तदन्तयन्त्रक्रकचक्रमणैर्विदार्यते ” ॥ १ ॥ इति,

ऐसा कोई संसारी जीव नहीं है जो कि उपक्रम-निमित्तसे अथवा  
अनुपक्रम-विना निमित्त से मृत्युके मुखमें नहीं पड़ता हो । कहा भी है—

“ नश्यति नौति याति वितनोति करोति रसायनक्रियां,  
चरति गुरुव्रतानि विवराण्यपि विशति विशेषकातरः ।  
तपति तपांसि खादति मितानि करोति च मन्त्रसाधनं,  
तदपि कृतान्तदन्तयन्त्रक्रकचक्रमणैर्विदार्यते ॥ १ ॥ ” इति ।

अर्थात्—कायर पुरुष मृत्युके भयसे चाहे कहीं भग जाय, या मृत्यु  
की लाचारी करे, कहीं चला जाय, कोई प्रपञ्च करे, अथवा अमर होनेके  
लिये रसायन क्रिया ( कायाकल्प ) करे, तथा बडे २ व्रत करे, पहाड़ों की  
गुफाओं में छिप जावे, अनेक प्रकारके तप तपे, परिमित खोराक खावे,

એવો કોઈ સંસારી જીવ નથી જે નિમિત્તથી અથવા વગર નિમિત્તથી  
મૃત્યુના મુખમાં ન પડતા હોય. કહ્યું છે—

“ નશ્યતિ નૌતિ યાતિ વિતનોતિ કરોતિ રસાયનક્રિયાં,  
ચરતિ ગુરુવ્રતાનિ વિવરાણ્યપિ વિશતિ વિશેષકાતરઃ ।  
તપતિ તપાંસિ ખાદતિ મિતાનિ કરોતિ ચ મન્ત્રસાધનં,  
તદપિ કૃતાન્તદન્તયન્ત્રક્રકચક્રમણૈર્વિદાર્યતે ” ॥ ૧ ॥ इति ।

अर्थात्—कायर पुरुष मृत्युना ભયથી ભલે કોઈ જગ્યાએ ભાગી જાય,  
અથવા મૃત્યુની લાચારી કરે, કોઈ જગ્યાએ ચાલી જાય, કોઈ પ્રપંચ કરે, અથવા  
અમર થવાને માટે રસાયન ક્રિયા ( કાયાકલ્પ ) કરે, તથા મોટા વ્રત કરે, પહાડોની  
ગુફાઓમાં છુપાઈ જાય, અનેક પ્રકારના તપ કરે, પરિમિત ખોરાક ખાય, મન્ત્ર-

ये तु रागान्धतया प्रमत्ता धर्मं नाभिजानन्ति ते किंभूता भवन्तीत्याह—‘इच्छा’  
इत्यादि । इच्छया=विषयसुखवाञ्छया, प्रणीताः=विषयाभिमुखं प्रकर्षेण नीताः,  
इच्छापरतन्त्रा इत्यर्थः । यद्वा—इहेन्द्रियावनुकूला प्रवृत्तिरिच्छा, तया संसाराभिमुखं  
मन्त्रसाधना करे; नो भी वह कराल कालके नीखे दांतों से चीरा ही जाता  
है, अर्थात् किसी प्रकार भी प्राणी मृत्यु से नहीं बच सकता ॥१॥

उपक्रम—मृत्युका निमित्त कारण । जैसे—दण्ड, चाबुक, शस्त्र, रस्सी,  
विष आदि । निरुपक्रम—निमित्त रहित—आयुके पूर्ण होने पर अपने-  
आप मृत्युको प्राप्त होना ।

इस सूत्र में यह प्रकट किया जा रहा है कि जो राग और द्वेषसे  
अन्धे होकर प्रमादी हुए हैं और धर्म को नहीं जान रहे हैं वे विषय-  
सुख की वाञ्छा से ही विषयों में आसक्त होते हैं । अपनी उस अभि-  
लाषा की पूर्त्तिकरनामात्र ही वे अपना परम कर्तव्य समझते हैं । इस  
समय उन्हें न्याय अन्याय का कुछ भी ध्यान नहीं रहता है । इच्छा की पूर्ति  
करनामात्र ही एक लक्ष्य होता है । इन्द्रियों के अनुकूल प्रवृत्तिका नाम  
ही इच्छा है । जो इन्द्रियोंके इन्हें अनुकूल जचा उसमें ही अन्धे होकर  
ये गिर पड़ते हैं, ‘इसका भविष्यमें क्या परिणाम होगा?’ यह विचार  
इन्हें नहीं रहता । इच्छाओंके आधीन बने हुए मनुष्य संसारकी ओर  
ही दौड़ लगा रहे हैं । निवृत्तिमार्गसे वे दूर हैं । निवृत्तिमार्गकी प्राप्ति

સાધના કરે તો પણ તે કરાણકાળના તીખા દાંતથી ચિરાઈ જ નાચ છે, અર્થાત્  
પ્રાણી મૃત્યુથી કોઈ પ્રકારે પણ બચી શકતો નથી. ॥ ૧ ॥

उपक्रम—मृत्युनुं निमित्तकारण, जेम—दंड, चाबुक, शस्त्र, रस्सी, विष आदि.

निरुपक्रम—निमित्तरहित—आयुष्य पुर्ण થવાથી આપમેળે મૃત્યુને વશ થવું.

આ સૂત્રમાં એમ કહેવામાં આવેલ છે કે જેઓ રાગ અને દ્વેષથી અંધ  
બનીને પ્રમાદી બને છે અને ધર્મને જાણતા નથી તેઓ વિષયસુખની ઇચ્છાથી  
વિષયોમાં આસક્ત બને છે. પોતાની આ ઇચ્છાને પૂર્ણ કરવામાં જ પોતાનું પરમ  
કર્તવ્ય સમજે છે. આ વખતે ન્યાય અન્યાયનો કોઈ ખ્યાલ રાખતો નથી. ઇચ્છાને  
પૂર્ણ કરવાનો જ માત્ર એક ખ્યાલ રાખે છે ઇન્દ્રિયોને અનુકૂળ પ્રવૃત્તિનું નામ  
જ ઇચ્છા છે. જે ઇન્દ્રિયોને અનુકૂળ ગમ્યું તેમાં જ અંધ બનીને તેઓ પડે  
છે. ‘એનું ભવિષ્યમાં શું પરિણામ આવશે?’ આ વિચાર એને નથી આવતો.  
ઇચ્છાઓને આધીન બનેલો મનુષ્ય સંસારની તરફ જ દોટ લગાવે છે નિવૃત્તિ  
માર્ગથી તે દૂર છે. નિવૃત્તિ માર્ગની પ્રાપ્તિ વિના ઇચ્છાઓ પર અંકુશ થતો

પ્રણીતા इत्यर्थः । अत एव-वृद्धानिकेताः वृद्धः असंयमस्तस्य आ-समन्तात् निकेताः आश्रयाः, अत एव-कालगृहीताः=कालेन-मृत्युना गृहीताः-पुनःपुनर्मरणदुःखभागिनः, यद्वा-कालगृहीताः-गृहीतः कालो यैस्ते कालगृहीताः, आर्पत्वान्निष्ठान्तस्य परनि-पातः, धर्माचरणाय कालाभिसन्धायिनः-‘वृद्धावस्थायां परुद् वा परारि वा तनय-दुहितृपरिणयानन्तरं वा धर्मं करिष्यामः’ इत्येवं संकल्पकारिण इत्यर्थः । अत एव निचये निविष्टाः=द्रव्यतो हिरण्याद्युपचये, भावतः कर्मोपचये निविष्टाः=संलग्नाः सन्तः, पृथक् पृथक् अन्यामन्याम् जातिम्=एकेन्द्रियादिकाम् अनन्तवारं प्रकल्पयन्ति

વિના, ઇચ્છાઓ પર અંકુશ નહીં હો સકતા હૈ, યહ નિર્વિવાદ સિદ્ધ હૈ । જહાં તક પ્રવૃત્તિમાર્ગ હૈ વહીં તક સંસાર હૈ । નિવૃત્તિમાર્ગની પ્રાપ્તિ હી સંસારકા સાક્ષાત્ યા પરમ્પરામુખ્યે અન્ત હૈ । ઇચ્છાઓ પર વિજય પાના યહી તો સંયમભાવ હૈ । ઇસકે વિપરીત અસંયમભાવ હૈ । અસંયમી જીવ ધર્મની પ્રાપ્તિ કરને સે કાલ-અસમયકા વહાના કિયા કરતે હૈ—  
“ અમી તો જવાનીકા સમય હૈ સાંસારિક આનન્દ ભોગ લૂં, વૃદ્ધાવસ્થા આને પર ધર્મ ધારણ કર લૂંગા । અથવા આગામી વર્ષ મેં યા ઉસકે વાદ કે વર્ષ મેં અથવા પુત્ર-પુત્રીયોં કા વિવાહ કરકે ફિર ધર્મ કરૂંગા । ” ઇસ પ્રકાર કા વિચાર કરતે ૨ હી વે કાલ કે ગ્રાસ વન જાતે હૈં ઓર ધર્મકે લાભ સે વંચિત રહ જાતે હૈં । વિષયેચ્છા કે આધીન બના હુઆ સંસારી મનુષ્ય જિહ્ન કિમી પ્રકારસે હિરણ્ય-સુવર્ણાદિક પરિગ્રહકે સંચય કરને મેં હી અપને જીવન કે અધિકાંશ ભાગ કો નષ્ટ કર દેતા હૈ, ઓર ઉપા-ર્જિત કર્માનુસાર એકેન્દ્રિયાદિક યોનિયોંમેં અનંતવાર જન્મમરણ કે અનંત

નથી, તે નિર્વિવાદ સિદ્ધ છે. ત્યાં સુધી પ્રવૃત્તિમાર્ગ છે ત્યાં સુધી સંસાર છે. નિવૃત્તિમાર્ગની પ્રાપ્તિ સંસારનો સાક્ષાત્ અગર પરંપરાથી અંત છે. ઇચ્છાઓ ઉપર વિજય મેળવવો તે જ સંયમ-ભાવ છે. તેથી વિપરીત અસંયમભાવ છે. અસંયમી જીવ ધર્મની પ્રાપ્તિ કરવામાં સમયનું બહાનું બતાવે છે—‘હજી તો જવાનીનો સમય છે, સાંસારિક આનંદ ભોગવી લઉં’, વૃદ્ધાવસ્થા આવ્યા પછી ધર્મ ધારણ કરી લઉંશ. અથવા-આગામી વર્ષમાં, અગર તેના બાદના વર્ષમાં, અથવા પુત્ર-પુત્રીઓના વિવાહ થયા પછી ધર્મ કરીશ ’ આવા પ્રકારના વિચાર કરી કરીને તે કાળનો ગ્રાસ બની જાય છે, અને ધર્મના લાભથી વંચિત રહી જાય છે. વિષ-યેચ્છાને આધીન બનેલા સંસારી મનુષ્ય જે કોઈ પ્રકારથી હિરણ્ય-સુવર્ણાદિક પરિગ્રહનો સંચય કરવામાં જ પોતાના જીવનના અધિકાંશ ભાગને નષ્ટ કરે છે, અને ઉપાર્જિત-કર્માનુસાર એકેન્દ્રિયાદિક યોનિયોમાં અનંત વાર જન્મ મરણના

=જનયન્તિ । રાગદ્વેષવશાત્પ્રમાદિનઃ સંસારિણો ધર્મમનવબુદ્ધ્ય ઇન્દ્રિયાનુકૂલવિષયે મોહં પ્રાપ્ય પુનઃ પુનઃ કર્મોપચયં કુર્વન્તસ્તદ્વન્ધ્યાત્ પ્રચ્યુતા ન ભવન્તીતિ ભાવઃ ॥૪॥

પ્રમાદવતાં પુનઃ પુનર્જાતિપ્રકલ્પને કા હાનિર્ભવતીતિ શિષ્યજિજ્ઞાસાયમાહ—  
'ઇહમેગેસિં તત્થ તત્થ' ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્—ઇહમેગેસિં તત્થ તત્થ સંથવો ભવઈ । અહોવવાઈણ  
ફાસે પડિસંવેયંતિ ॥ સૂ૦ ૫ ॥

છાયા—ઇહૈકેપાં તત્ર તત્ર સંસ્તવો ભવતિ । અધઔપપાતિકાન્ સ્પર્શાન્ પ્રતિ  
સંવેદયન્તિ ॥ સૂ૦ ૫ ॥

ટીકા=અસ્મિન્ લોકે, એકેપાં=મિથ્યાત્વાવિરતિપ્રમાદકષાયવતાં, તત્ર-તત્ર=નરકાદિયાતનાસ્થાનેષુ, સંસ્તવઃ=પ્રકર્ષેણ પરિચયો ભવતિ, તત્ર પુનઃ-પુનર્ગમનવશા-  
કષ્ટોં કો સહન કરતા રહતા હૈ । સારાંશ યહ હૈ કિ-રાગદ્વેષકે વશ સે સંસારી જીવ ધર્મ કો નહીં સમજ્ઞ કર ઇન્દ્રિયાં ઔર મન કે અનુકૂલ વિષયોં મેં મુગ્ધ હોકર વારંવાર કર્મપરંપરા કી વૃદ્ધિ કરતા હુઆ કર્મોં સે રહિત નહીં હોતા હૈ ॥ સૂ૦ ૪ ॥

પ્રમાદશાલી જીવોં કી એકેન્દ્રિયાદિક યોનિયોં મેં જન્મ ધારણ કરને પર ક્યા હાનિ હોતી હૈ ? એસી શિષ્યકી જિજ્ઞાસા હોને પર ઉત્તર દેતે હૈ—'ઇહમેગેસિં' ઇત્યાદિ ।

હસ સંસાર મેં મિથ્યાત્વ, અવિરતિ, પ્રમાદ ઔર કષાયવાલે જીવોં કા છેદન, ભેદન, બન્ધન આદિ કષ્ટોં કે સ્થાનભૂત નરકાદિમેં વારંવાર ઉત્પન્ન હોને સે ઉન નરકાદિકોંકે સાથ અધિક પરિચય હો જાતા હૈ, હસસે વે વહાં કે દુઃખોં કો ભોગતે રહતે હૈ ।

અનંત દુઃખોને સહન કરતા રહે છે. આ કથનનો સાર એ છે કે—રાગ દ્વેષના કારણથી સંસારી જીવ ધર્મને નહિ સમજીને ઇન્દ્રિયો અને મનના અનુકૂળ વિષયોમાં મુગ્ધ થઈને વારંવાર કર્મપરંપરાની વૃદ્ધિ કરે છે, અને કર્મોથી રહિત થતા નથી. ॥સૂ૦ ૪॥

પ્રમાદશાળી જીવોની એકેન્દ્રિયાદિક યોનિયોમાં જન્મ ધારણ કરવાથી શું નુક-  
સાન થાય છે ? એવી શિષ્યની જિજ્ઞાસા થવાથી ઉત્તર આપે છે—'ઇહમેગેસિં' ઇત્યાદિ.

આ સંસારમાં મિથ્યાત્વ, અવિરતિ, પ્રમાદ અને કષાયવાળા જીવોને છેદન ભેદન, બન્ધન આદિ દુઃખોના સ્થાનભૂત નરકાદિમાં વારંવાર ઉત્પન્ન થવાથી તે નરકાદિકોની સાથે અધિક પરિચય થઈ જાય છે, તે ત્યાંના દુઃખોને ભોગવતા રહે છે.

दिति भावः । तत्परिचये सति किं भवतीत्याह—‘अधऔपपातिकान्’ इत्यादि। भोगेच्छापरतन्त्रतयेन्द्रियानुकूलाऽऽचरणेन नरकादिस्थानं संप्राप्ताः, अधऔपपातिकान्=नरकादिसम्बन्धिनः, स्पर्शान्=दुःखानि प्रतिसंवेदयन्ति=अनुभवन्ति ॥५॥

ननु भोगेच्छाविवशाः सर्वेऽपि अधऔपपातिकान् स्पर्शान् प्रतिसंवेदयन्ति, किं वा तेषु कश्चिदेवेति जिज्ञासायामाह—‘चिद्वं कूरेहिं’ इत्यादि ।

मूलम्—चिद्वं कूरेहिं कस्मेहिं चिद्वं परिचिद्वइ । अचिद्वं कूरेहिं कस्मेहिं नो चिद्वं परिचिद्वइ ॥ सू० ६ ॥

छाया—तिष्ठन् क्रूरेषु कर्मसु भृशं परितिष्ठति । अतिष्ठन् क्रूरेषु कर्मसु नो भृशं परितिष्ठति ।

यद्वा—भृशं क्रूरैः कर्मभिः भृशं परितिष्ठति । अभृशं क्रूरैः कर्मभिः नो भृशं परितिष्ठति ॥ सू० ६ ॥

जो कर्मबन्ध के कारण मिथ्यात्व, अविरति, प्रमाद और कषाय के सेवन करनेमें ही रातदिन संलग्न रहते हैं, एवं विषयभोगों की इच्छा के आधीन होने से धार्मिक आचारविचार से गहन्य हैं, इन्द्रियों के अनुकूल आचरण करने में ही जो लगे हैं वे मृत्यु के ग्रास बनकर नरकादियोनियों में—कि जहां पर छेदन, भेदन, बन्धनादि अपार कष्ट हैं—बार बार उत्पन्न होते हैं और वहां के उन अनन्त कष्टों को भोगते रहते हैं ॥सू०५॥

क्या विषयभोगोंकी इच्छा के पराधीन बने हुए समस्त ही प्राणी नरकादियोनियों के कष्टों को भोगते हैं या उनमें से कोई २ ? इस प्रकार के प्रश्नका उत्तर कहते हैं—‘चिद्वं कूरेहिं’ इत्यादि ।

जे मनुष्य कर्मबन्धना कारण मिथ्यात्व अविरति प्रमाद अने कषायना सेवन करवामां रात-दिन रन्धो-परन्धो रहे छे, अने विषयभोगोनी धन्धोने अधीन डोवाथी धार्मिक आचार विचारथी शून्य छे, इन्द्रियोना अनुकूल आचरण करवामां जे लागेल छे, ते मृत्युनो आस अनीने नरकादि योनियोमां के जे छेडावेल छेदन-भेदन बन्धनादि अपार दुःखो छे, त्यां बार-बार उत्पन्न थाय छे अने त्यांना ते अनन्त दुःखोने लोगवतो रहे छे ॥सू० ५॥

शुं विषयभोगोनी धन्धोने पराधीन अनेदा समस्त प्राणी नरकादि योनियोमां दुःखोने लोगवे छे के तेमांथी केछ केछ लोगवे छे ? आ प्रकारना प्रश्नना जवाबमां कहे छे—‘चिद्वं कूरेहिं’ इत्यादि.



ટીકા—ક્રૂરેષુ=ઘોરતરપરિણામેષુ વધવન્ધાદિષુ, કર્મસુ=ક્રિયાસુ, તિષ્ઠન્=પ્રવૃત્તિઃ, ભૃશમ્=અત્યર્થ—ચિરં નરકે પરિતિષ્ઠતિ—તત્ર વૈતરણીતરણાઽસિપત્રપાતાઽઽદિ-જનિતં ઘોરતરં દુઃસ્વમન્નુભવન્ દીર્ઘકાલમવસ્થિતો ભવતીત્યર્થઃ । ક્રૂરેષુ કર્મસુ અતિ-ષ્ઠન્=અપ્રવૃત્તસ્તુ ભૃશં=સર્વથા નરકે નો પરિતિષ્ઠતિ=ઉપસ્થિતો ન ભવતિ, ન તત્રોત્પ-દ્યતે इत्यર્થઃ ।

યદ્વા—ભૃશં ક્રૂરૈઃ=અતિકુટિલૈઃ પ્રાણાતિપાતાદિભિઃ કર્મભિઃ=વ્યાપારૈઃ, ભૃશમ્=અત્યર્થ—ચિરં નરકે પરિતિષ્ઠતિ । એવમ્ અભૃશં ક્રૂરૈઃ=મન્દક્રૂરૈઃ કર્મભિઃ નરકે ભૃશમ્=અત્યર્થ—ચિરં નો પરિતિષ્ઠતિ, શ્રેણિકવત્ ॥ સૂ૦ ૬ ॥

જિનકા પરિણામ ઘોરતર હૈ, એસે વધ-વંધનાદિક જો ક્રૂર કર્મ હૈં ઉનમૈં પ્રવૃત્તિ કરનેવાલા પ્રાણી મરકર નરકોં મૈં ઉત્પન્ન હોતા હૈ, ઓર ચિરકાલ તક અનેક સાગરપર્યન્ત વહાં કે દુઃસ્વ ભોગના, વૈતરણી નદી મૈં તૈરના, શાલ્મલી-સેમર જાતકે વૃક્ષોંકે તલવાર કી ધાર કે સદૃશ પત્તોં કે ગિરને સે દેહ કા ચીરે જાના આદિ જો ભયંકર દુઃસ્વ હૈં ઉન્હેં ભોગતા હુઆ વહીં પર અપની ભુજ્યમાન આયુકો વ્યતીત કરતા હૈ । જો ઇન ક્રૂર કર્મોં કે સેવન મૈં પ્રવૃત્તિ નહીં કરતા હૈ વહ નરક-નિગોદ મૈં ઉત્પન્ન નહીં હોતા હૈ ।

અથવા—અતિકુટિલ જો પ્રાણાતિપાત આદિ કર્મ હૈં ઉનકે દ્વારા યહ પ્રાણી ચિરકાલ તક નરક મૈં નિવાસ કરતા હૈ ઓર મન્દ ક્રૂર કર્મોં કે દ્વારા વહાં ચિરકાલ તક નહીં, કિન્તુ કુછ કાલ તક હી શ્રેણિકરાજા કી તરહ રહતા હૈ ॥ સૂ૦ ૬ ॥

જેના પરિણામ ઘોરતર છે એવા વધ વંધનાદિક જે જે ક્રૂર કર્મ છે તેમાં પ્રવૃત્તિ કરવાવાળા પ્રાણી મરીને નરકમાં ઉત્પન્ન થાય છે, અને ચિરકાળ સુધી અનેક સાગર પર્યન્ત ત્યાંના દુઃખને ભોગવવું, વૈતરણી નદીમાં તરવું, શાલ્મલી-સેમર જાતના વૃક્ષોના તલવારની ધાર જેવા પાંદડાઓના પડવાથી દેહનું ચીરાઈ જવું આદિ જે ભયંકર દુઃખો છે તેઓને ભોગવતાં ભોગવતાં ત્યાં જ પોતાના ભુજ્ય-માન આયુષ્યને વ્યતીત કરે છે. જે આવા ક્રૂર કર્મોનું સેવન કરવામાં પ્રવૃત્તિ કરતા નથી તે નરક-નિગોદમાં ઉત્પન્ન થતા નથી.

અથવા—અતિકુટિલ જે પ્રાણાતિપાત આદિ કર્મોં છે તેઓ દ્વારા આવા પ્રાણી ચિરકાળ સુધી નરકમાં નિવાસ કરે છે, અને મન્દ ક્રૂર કર્મોં દ્વારા ત્યાં ચિરકાળ સુધી નહિ પણ કાંઈક ઓછા સમય સુધી શ્રેણિક રાજાની માફક રહે છે. ॥સૂ૦ ૬॥

एवं को वदति, यस्य वचनेऽस्माकं श्रद्धा समुत्पद्येत ? इति जिज्ञासायामाह—  
' एगे वयंति ' इत्यादि ।

मूलम्—एगे वयंति अदुवावि नाणी, नाणी वयंति अदुवावि  
एगे ॥ सू० ७ ॥

छाया—एके वदन्ति अथवाऽपि ज्ञानिनः । ज्ञानिनो वदन्ति अथवाऽपि एके ॥७॥

टीका—एके=चतुर्दशपूर्वधराः श्रुतकेवलिनो यद् वदन्ति, अथवा ज्ञानिनः निरा-  
वरणज्ञानवन्तः सर्वज्ञा अपि तदेव वदन्ति । उक्तार्थमेव परावर्त्य कथयति—' ज्ञानिनः'  
इत्यादि । ज्ञानिनः=निरावरणज्ञानवन्तः केवलिनो यद् वदन्ति, अथवा—एकेऽपि=

श्री जम्बूस्वामी श्रीसुधर्मास्वामी से पूछते हैं कि—हे भदन्त ! ऐसी  
प्ररूपणा कौन करते हैं कि जिनके वचनों में हम श्रद्धा करें ? श्री सुधर्मा  
स्वामी कहते हैं—' एगे वयंति ' इत्यादि ।

इस प्रकारका प्रतिपादन चतुर्दश पूर्व के पाठी श्रुतकेवली श्रीगण-  
धरादिक देव करते हैं, और यही बात निरावरणज्ञानशाली श्री सर्वज्ञ  
भगवान भी कहते हैं । दोनों का इस विषयमें एक मत है । इस विषय  
की आचार्य महाराज फिर पुष्टि करते हैं कि—जिस अर्थका प्रतिपादन  
केवली करते हैं उसीका प्रतिपादन श्रुतकेवली महाराज करते हैं । कारण  
कि केवली और श्रुतकेवली के कथनमें रंचमात्र भी फरक नहीं होता है ।  
केवली भगवान केवलज्ञानविशिष्ट होते हैं, और श्रुतकेवली चौदह पूर्व  
के पाठी होते हैं; अतः ये दोनों यथार्थवक्ता हैं । यद्यपि केवली और  
श्रुतकेवली के ज्ञानमें प्रत्यक्ष और परोक्ष के रूपसे भिन्नता है; परन्तु वस्तु-

श्री જમ્બૂસ્વામી શ્રી સુધર્માસ્વામીને પૂછે છે કે—હે ભદન્ત ! આવી પ્રરૂપણા  
કોણ કરે છે જે તેનાં વચનોમાં અમે શ્રદ્ધા કરીએ ? શ્રી સુધર્માસ્વામી કહે છે—  
—' એગે વયંતિ ' ઇત્યાદિ.

આ પ્રકારનો પ્રતિપાદન ચતુર્દશ પૂર્વના પાઠી, શ્રુતકેવળી, શ્રીગણધરાદિક  
દેવ કરે છે, અને આ વાત નિરાવરણજ્ઞાનશાળી શ્રી સર્વજ્ઞ ભગવાન પણ કહે છે.  
આ વિષયમાં બંનેના એક મત છે. આ વિષયની આચાર્ય મહારાજ ફરીથી પુષ્ટિ  
કરે છે કે જે અર્થનું પ્રતિપાદન કેવળી કરે છે તેજ અર્થનું પ્રતિપાદન શ્રુતકેવળી  
મહારાજ કરે છે, કારણ કે કેવળી અને શ્રુતકેવળીના વચનોમાં જરા પણ ફરક પડતો  
નથી. કેવળી ભગવાન કેવળજ્ઞાન-વિશિષ્ટ છે અને શ્રુતકેવળી ચૌદ પૂર્વના પાઠી  
છે, માટે આ બંને યથાર્થવક્તા છે. જે કે કેવળી અને શ્રુતકેવળીના જ્ઞાનમાં પ્રત્યક્ષ  
અને પરોક્ષ રૂપથી ભિન્નતા છે પરન્તુ વસ્તુસ્વરૂપના પ્રતિપાદન કરવામાં અગર

श्रुतकेवलिनोऽपि तदेव वदन्ति । दिव्यज्ञानवन्तः केवलिनः, चतुर्दशपूर्वधराः श्रुत-  
केवलिनश्चेत्युभये यथार्थवादित्वादेकमेवार्थं वदन्ति, न तु विरुद्धमिति भावः ॥७॥  
एवं वक्ष्यमाणेऽप्यर्थे तेषामेकवाक्यताऽस्तीत्याह—‘आवंती’ इत्यादि ।

मूलम्—आवंती केयावंती लोयंसि समणा य माहणा य  
पुढो विवायं वयंति—“से दिङ् च णे, सुयं च णे, मयं च णे, विण्णायं  
च णे, उड्ढं अहं तिरियं दिसासु सव्वओ सुपडिलेहियं च णे—  
सव्वे पाणा सव्वे भूया सव्वे जीवा सव्वे सत्ता हंतव्वा  
अजावेयव्वा परिघेतव्वा परियावेयव्वा उदवेयव्वा, इत्थवि जाणह,  
नत्थित्थ दोषो, ”—अणारियवयणसेयं ॥ सू० ८ ॥

छाया—यावन्तः कियन्तो लोके श्रमणाश्च ब्राह्मणाश्च पृथग् विवादं वदन्ति—  
“तत् दृष्टं च नः, श्रुतं च नः, मतं च नः, विज्ञातं च नः, ऊर्ध्वमधस्तिर्यग् दिशासु  
सर्वत्र सुप्रतिष्ठितं च नः—सर्वे प्राणाः, सर्वे भूताः सर्वे जीवाः सर्वे सत्त्वाः हन्त-  
व्याः आज्ञापयितव्याः परिग्रहीतव्याः परितापयितव्याः अपद्रावयितव्याः, अत्रापि  
जानीत, नास्त्यत्र दोषः ” अनार्यवचनमेतत् ॥ सू० ८ ॥

टीका—लोके=मनुष्यलोके यावन्तः कियन्तः=वदन् इत्यर्थः श्रमणाः=दण्डि-  
शाक्यादयः, ब्राह्मणाः=औद्देशिकभोजिनः पृथक्=अन्यप्रकारेण विवादं=धर्मविरुद्ध-  
वचनं वदन्ति । तद्विवादस्वरूपं दर्शयितुमाह—‘तद् दृष्टम्’ इत्यारभ्य यावत्  
स्वरूपं के प्रतिपादन करने में जरा भी भिन्नता नहीं है । केवली और  
श्रुतकेवली यथार्थवक्ता होनेसे एक ही अर्थका प्रतिपादन करते हैं, विरुद्ध  
अर्थका नहीं ॥ सू० ७ ॥

इसी प्रकार आगे कहे जानेवाले अर्थ में भी एकवाक्यता होती है;  
वह दिखलाते हैं—“आवंती केयावंती’ इत्यादि ।

इस लोकमें जितने भी श्रमण और ब्राह्मण हैं वे सब धर्मके विरुद्ध  
पृथक् २ रूपसे प्ररूपणा करते हैं और कहते हैं कि—“जो कुछ भी हमारी

तेने ज्ञानुवामां अनेना ज्ञानमा जरा पणु भिन्नता नथी. डेवणी अने श्रुतकेवणी  
यथार्थवक्ता होवाथी એક જ અર્થનો પ્રતિપાદન કરે છે, વિરુદ્ધ અર્થનો નહિ. ॥सू०७॥

आ ज प्रक्षरे आगण डडेवामां आवनारा अर्थमां पणु એકવાક્યતા થાય  
છે, તે બતાવે છે—‘આવંતી કેયાવંતી’ ઇત્યાદિ

આ લોકમાં જેટલા પણુ શ્રમણુ એટલે દંડી શાક્યાદિક અને બ્રાહ્મણુ એટલે  
ઔદેશિક આહાર લેવાવાળા છે તે બધા, ધર્મની વિરુદ્ધ જુદા જુદા રૂપે પ્રરૂપણુ

‘नास्त्यत्र दोषः’ इति । ‘तद् दृष्टं च नः’ इति, यद्वयं वक्ष्यामस्तदस्माकं दृष्टम्—दिव्य-  
ज्ञानेन प्रत्यक्षीकृतम् । ‘नः’ इति कर्तुः सम्बन्धसामान्यविवक्षायां पट्टी । यद्वा  
—अस्माकमाचार्यैर्दृष्टम् । श्रुतं च नः=अस्माकं श्रुतं च आचार्यादिभ्यः । मतं च  
नः=युक्तियुक्तत्वादस्माकम् अस्मदाचार्याणां वा अभिमतम् । विज्ञातं च नः=पदार्थानां  
भेदपर्यायैरस्माकम्, अस्मदाचार्याणां वा विज्ञातम् । एतच्च—ऊर्ध्वम्, अधः, तिर्यक्षु  
दिशासु—दशसु दिक्षु इत्यर्थः; सर्वतः=प्रत्यक्षादिभिः सर्वैः प्रमाणैः सर्वप्रकारेण वा  
सुप्रतिलेखितं च नः=मनःप्रणिधानादिनाऽस्माकमस्मदाचार्याणां वा सुष्ठु पर्या-  
लोचितं च । यद् दृष्टं श्रुतं मतं विज्ञातं सुप्रतिलेखितं, तत्स्वरूपं प्रदर्शयति—“सर्वे  
प्राणाः” इत्यादि । सर्वे प्राणाः सर्वे भूताः सर्वे जीवाः सर्वे सत्त्वा हन्तव्याः, आज्ञाप-  
यितव्याः, परिग्रहीतव्याः, परितापयितव्याः, अपद्रावयितव्याः, एतद् वाक्यं प्राग्-  
मान्यता है वह हमारी देखी हुई है, हमारी सुनी हुई है, हमारी मानी  
हुई है और हमारी जानी हुई है, तथा ऊर्ध्व (उंची) अधः (नीची) और  
तिर्यग् ( तिरछी ), इन समस्त दिशाओं में हमने अथवा हमारे आचा-  
र्यों ने अच्छी तरह से इसका पर्यालोचन भी किया है कि—समस्त प्राणी,  
समस्त भूत, समस्त जीव, और समस्त सत्त्व मारने योग्य हैं, मारनेके  
लिए आज्ञा देने के योग्य हैं, मारनेके लिए ग्रहण करनेके योग्य हैं, परि-  
तापित करनेके योग्य हैं और विष-शस्त्रादिक के द्वारा वध करने योग्य  
हैं । यह हमारा अभिमत निर्दोष है । ” ये सब अनार्यों के वचन हैं,  
आर्यों के नहीं ।

स्पष्टार्थ—परस्परविरुद्धार्थ का कथन अल्पज्ञता के होने पर ही होता  
है । केवली और श्रुतकेवली पदार्थों के जानकार होते हैं; अतः उन्होंने

करे છે અને કહે છે—“ જે કાંઈ અમારી માન્યતા છે તે અમારી દેખેલી છે,  
અમારી સાંભળેલી છે, અમારી માનેલી છે અને અમારી જાણેલી છે  
તથા ઉર્ધ્વ—(ઉંચી) અધઃ (નીચી) અને તિર્યગ્ (તિરછી) આ સમસ્ત  
દિશાઓમાં અમે તથા અમારા આચાર્યોએ ઘણી સારી રીતે તેનું પર્યાલોચન  
કર્યું છે કે સમસ્ત પ્રાણી, સમસ્ત ભૂત, સમસ્ત જીવ, અને સમસ્ત સત્ત્વ મારવા  
યોગ્ય છે, મારવા માટે આજ્ઞા આપવા યોગ્ય છે, મારવા માટે ગ્રહણ કરવા યોગ્ય  
છે, પરિતાપિત કરવા યોગ્ય છે, અને વિષ શસ્ત્રાદિક દ્વારા વધ કરવા યોગ્ય છે, આ  
અમારા અભિપ્રાય નિર્દોષ છે ” આ બધા અનાર્યોના વચન છે, આર્યોના નથી.

સ્પષ્ટાર્થ—પરસ્પર વિરુદ્ધાર્થનું કથન અલ્પજ્ઞતા હોવાથી થાય છે, કેવળી  
અને શ્રુતકેવળી પદાર્થોના જાણકાર છે, માટે તેમણે જે કાંઈ પ્રતિપાદન કર્યું

જો કુછ મ્હી પ્રતિપાદન કિયા હૈ વહ નિર્દોષ એવં પરસ્પરવિરુદ્ધાર્થતા સે રહિત હૈ । અલ્પજ્ઞોં કે વચનોં મેં યહ વાત નહીં પાઈ જાની, ઉનકે વચન સદોષ ઔર પરસ્પરવિરુદ્ધાર્થપ્રરૂપક હુઆ કરતે હૈં । યહી વાત ઇસ સૂત્ર મેં ભાષ્યરૂપસે પ્રકટ કા ગઈ હૈ ।

દુનિયા મેં જિતને મ્હી બ્રાહ્મણ યા શ્રમણ, ઢણ્ડી, બુદ્ધમતાનુયાયી આદિ હૈં વે સવ ધર્મતત્ત્વ કે યથાર્થ સ્વરૂપસે અનભિજ્ઞ હૈં । ઉનકી માન્યતા પરસ્પરવિરુદ્ધાર્થપ્રરૂપક હૈ । હિંસાદિક પાપોં કે સેવન કરનેમેં ઇનકી માન્યતાનુસાર કોઈ દોષ નહીં હૈ ।

વે એસે હી ઇન અકૃત્યોં કી પુષ્ટિ કરતે હુએ કહતે હૈં કિ—જો કુછ હમારે યહાં કહા ગયા હૈ વહ કપોલકલ્પિત—અસત્ય નહીં હૈ; કિંતુ હમને અપને દિવ્યજ્ઞાનસે ઇસકા સાક્ષાત્કાર કિયા હૈ । અથવા—હમારે આચાર્યોં ને અપને દિવ્યજ્ઞાનસે ઇસકા સાક્ષાત્કાર કિયા હૈ । હમને યહ અપને આચાર્યોં સે સુના હૈ । યુક્તિયુક્ત હોનેસે હમેં યા હમારે આચાર્યોંકે લિયે યહ માન્ય હૈ । પદાર્થોં કા ભેદ પર્યાયોં દ્વારા વિશ્લેષણ કરને સે હમને ઔર હમારે આચાર્યોં ને યહ ભેદ અચ્છી તરહ જાન મ્હી લિયા હૈ । પ્રત્યેક દિશામેં હમને તથા હમારે આચાર્યોં ને પ્રત્યક્ષાદિ પ્રમાણોં સે ઇસકા ભલી-પ્રકાર શાન્તચિત્ત હોકર નિર્ણય મ્હી કર લિયા હૈ કિ—સમસ્ત પ્રાણી, સમસ્ત

છે તે નિર્દોષ અને પરસ્પર વિરુદ્ધાર્થી રહિત છે. અલ્પજ્ઞોના વચનોમાં આ વાત દેખવામાં આવતી નથી. તેના વચન સદોષ અને પરસ્પર વિરુદ્ધાર્થપ્રરૂપક થયા કરે છે. આ વાત આ સૂત્રમાં ભાષ્યરૂપથી પ્રગટ કરેલ છે.

સંસારમાં બેટલા શ્રમણ, ઢંડી બુદ્ધમતાનુયાયી આદિ છે અને બ્રાહ્મણ—ઔદેશિક આહરના લેવાવાળા છે ધર્મતત્ત્વના યથાર્થ સ્વરૂપથી અનભિજ્ઞ છે, તેમની માન્યતા પરસ્પરવિરુદ્ધાર્થપ્રરૂપક છે, હિંસાદિક પાપોનું સેવન કરવામાં તેમની માન્યતા મુજબ કોઈ દોષ નથી. તે આવા કૃત્યોની પુષ્ટિ કરતાં કહે છે કે—બે કંઈ અમોને કહેવામાં આવ્યું છે તે કપોલકલ્પિત—અસત્ય નથી; પણ અમે પોતાના દિવ્યજ્ઞાનથી એનો સાક્ષાત્કાર કરેલ છે. અથવા—અમારા આચાર્યોએ પોતાના દિવ્ય જ્ઞાનથી એનો સાક્ષાત્કાર કરેલ છે. અમોએ આ અમારા આચાર્યોદિકોથી સાંભળ્યું છે. યુક્તિયુક્ત હોવાથી અમોને તેમજ અમારા આચાર્યોને માટે માન્ય છે, પદાર્થોના ભેદ પર્યાયોદ્વારા પૃથક્કરણ કરવાથી અમો અને અમારા આચાર્યોએ આ ભેદો સારી રીતે બાણી લીધેલ છે. પ્રત્યેક દિશામાં અમે તથા અમારા આચાર્યોએ પ્રત્યક્ષાદિ પ્રમાણોથી તેનો સારી રીતે શાન્તચિત્તે નિર્ણય પણ કર્યો છે કે—સમસ્ત પ્રાણી,

વ્યાખ્યાતમ્ । અત્ર ધર્મવિષયે-મન્દિરનિર્માણપ્રતિમાપ્રતિષ્ઠાદૌ, અપિશબ્દાદૌદેશિકે, તથા-વિહારાદૌ શ્રાવકં સાર્થીકૃત્ય સ્વસેવાર્થમનુજ્ઞાપ્ય તત્કૃતાઽઽહારાદિગ્રહણે ચ જાનીત, અત્ર=અસ્મિન્નુક્તવિષયે નાસ્તિ દોષઃ=નાસ્તિ પાપાનુબન્ધ इति । અનાર્ય-વચનમેતદિતિ । આરાદ્ યાતાઃ=સર્વસાવધવ્યાપારેભ્યો દૂરં ગતા इति-આર્યાઃ, તદ્વિ-પરીતા અનાર્યાઃ-ક્રૂરકર્માણઃ, તેષાં પ્રાણ્યુપમર્દકં વચનમેતત્ ॥ સૂ૦ ૮ ॥

ભૂત, સમસ્ત જીવ ઓર સમસ્ત સત્ત્વ મારને યોગ્ય હૈં, મારનેકી આજ્ઞા દેને યોગ્ય હૈં, મારને કે લિયે ગ્રહણ કરને યોગ્ય હૈં, પરિતાપિત કરને યોગ્ય હૈં ઓર વિપશસ્ત્રાદિકોં કે દ્વારા વધ કરને યોગ્ય હૈં । પ્રાણી સત્ત્વ આદિ શબ્દોં કા વ્યુત્પત્તિસિદ્ધ અર્થ પહિલે પ્રકટ કિયા જા ચુકા હૈ ।

इसी प्रकार जिनप्रतिपादित धर्म में भी मंदिरादिक के निर्माण करने की एवं जिनप्रतिमा बनवा कर उसकी प्रतिष्ठा करने की जो प्रथा चालू है वह पद्धति भी सदोष है, उपादेय नहीं है । तथा साधुओं में औद्देशिक आहार ग्रहण करने की एवं विहारादिक करते समय अपनी सेवा करवाने के बहाने से श्रावकों को साथ लेकर उनके द्वारा तैयार किये आहारादिक लेनेकी एक प्रकार की जो प्रथा सी चल पड़ी है, और उसमें जो दोष-पापानुबंध नहीं मानते हैं, प्रत्युत इसका किसी दूसरे रूपसे समर्थन करते हैं; यह सब पूर्वोक्त कथन अनार्यों का ही समझना चाहिये ।

સાવધ વ્યાપાર સે જો દૂર રહતે હૈં ડનકી આર્યસંજ્ઞા ઓર વિપ-

સમસ્ત ભૂત, સમસ્ત જીવ, અને સમસ્ત સત્ત્વ મારવા યોગ્ય છે, મારવાની આજ્ઞા દેવા યોગ્ય છે, મારવા માટે ગ્રહણ કરવા યોગ્ય છે, પરિતાપિત કરવા યોગ્ય છે, અને વિપશસ્ત્રાદિક દ્વારા વધ કરવા યોગ્ય છે. પ્રાણી સત્ત્વ આદિ શબ્દોનો વ્યુત્પત્તિસિદ્ધ અર્થ પહેલાં જ પ્રકટ કરવામાં આવેલ છે.

આ પ્રકારે જનપ્રતિપાદિત ધર્મમાં પણ મંદિરાદિક નિર્માણ કરવાનું, તેમજ જિનપ્રતિમા બનાવી તેની પ્રતિષ્ઠા કરવાની જે પ્રથા ચાલુ છે તે પદ્ધતિ પણ સદોષ છે, ઉપાદેય નથી. તથા સાધુઓમાં ઔદેશિક આહાર લેવાની તેમજ વિહારાદિક કરતી વખતે પોતાની સેવા કરવાના બહાને શ્રાવકોને સાથે લઈને તેના દ્વારા તૈયાર કરેલા આહાર પ્રાણી લેવાની એક પ્રકારની જે પ્રથા ચાલુ થઈ છે, અને તેમાં જે દોષ-પાપાનુબંધ નથી માનતા, અને દરેક તે બાબતને બીજા રૂપથી સમર્થન કરે છે તે બધા પૂર્વોક્ત કથન અનાર્યોના જ સમજવા જેઠાં છે.

સાવધ વ્યાપારથી જે દૂર રહે છે તેની આર્ય સંજ્ઞા, અને તેનાથી વિપરીતની



યે તુ આર્યાસ્તે કિં વદન્તીતિ શિષ્યજિજ્ઞાસાયમાહ—‘તત્થ જે’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્—તત્થ જે આરિયા તે એવં વયાસી—“સે દુદ્ધિઢ્ઠં ચ મે, દુસ્સુયં ચ મે, દુસ્મયં ચ મે, દુવિણ્ણાયં ચ મે, ઉદ્ધં અહં તિરિયં દિસાસુ સવ્વઓ દુપ્પહિલોહિયં ચ મે; જંઞં તુબ્બમે એવં આઙ્કલ્લહ, એવં ભાસહ, એવં પરુલ્લેહ, એવં પણ્ણલ્લેહ—સવ્વે પાણા ૪, હંતવા ૫, ઇત્થ વિ જાણહ નત્થિત્થ દોસો” અનારિયવચનમેયં ॥ સૂ૦ ૧॥

છાયા—તત્ર યે આર્યાસ્ત એવમવાદિષુઃ—તદ્ દુર્દૃષ્ટં ચ વઃ, દુઃશ્રુતં ચ વઃ, દુર્મતં ચ વઃ, દુર્વિજ્ઞાતં ચ વઃ, ઋર્ધ્વમ્ અથઃ તિર્યગ્ દિશાસુ સર્વતઃ દુષ્પતિલેખિતં ચ વઃ, યત્ સ્વલુ ગ્રુયમેવમ્ આખ્યાય, એવં ભાપધ્વે, એવં પ્રરૂપયથ, એવં પ્રજ્ઞાપયથ—સર્વે પ્રાણાઃ ૪ હન્તવ્યાઃ ૫ । અત્રાપિ જાનીત, નાસ્ત્યત્ર દોષઃ । ” અનાર્ય-વચનમેતત્ ॥ મૂ૦ ૧ ॥

ટીકા—યે દેશતો ભાપાતશ્ચારિત્રતશ્ચાર્યાસ્તે, તત્ર=ઉક્તવિષયે, એવં વક્ષ્યમા-  
ણપ્રકારેણ અવાદિષુઃ=ઉક્તવન્તઃ—‘તદ્ દુર્દૃષ્ટં ચ વઃ’ ઇત્યાદિ । યુષ્માભિર્ય-  
દુક્તં—‘તદ્ દૃષ્ટં ચ નઃ’ ઇતિ, તદ્ વઃ=યુષ્માકં યુષ્મદાચાર્યાણાં વા દૃષ્ટં દુર્દૃષ્ટમ્=

રીત કી અનાર્યસંજ્ઞા હૈ । યે ક્રૂરકર્મી હોતે હૈં । યહ પ્રાણિયોં કે પીડા-  
કારક સમસ્ત પૂર્વોક્ત કથન ઇન્હોં અનાર્યોં કા પ્રતિપાદિત કિયા હુઆ હૈ । ૮।

યદિ યહ પૂર્વોક્ત સમસ્ત ધર્મવિરુદ્ધ કથન અનાર્યોં કા હૈ તો ફિર  
આર્યોં કી માન્યતા કૈસી હૈ ? ઇસ પ્રકાર શિષ્યકી જિજ્ઞાસા કા સમાધાન  
કિયા જાતા હૈ—‘તત્થ જે આરિયા’ ઇત્યાદિ ।

ઇસ પૂર્વોક્ત કથનમેં આર્યોં કી ઇસ પ્રકાર કી પ્રત્યુત્તરરૂપ માન્યતા  
હૈ, અર્થાત્—દેશ સે, ભાષા સે ઓર ચારિત્ર સે જો આર્ય હૈં ઉનકા ઇસ  
પ્રકાર કા કથન હૈ કિ—આપને વ આપકે આચાર્યોંને જો દેખા હૈ, જો

અનાર્ય સંજ્ઞા છે. તે ક્રૂરકર્મી હોય છે. પ્રાણીઓને માટે પીડાકારક આ સમસ્ત  
પૂર્વોક્ત કથન આ અનાર્યોના ૪ પ્રતિપાદિત કરેલાં છે. ॥ સૂ૦ ૮ ॥

આ પૂર્વોક્ત સમસ્ત ધર્મવિરુદ્ધ કથન અનાર્યોના છે તો પછી આર્યોની  
માન્યતા કેવી છે ? આ પ્રકારની શિષ્યની શંકાનુ સમાધાન કરે છે—‘તત્થ  
જે આરિયા’ ઇત્યાદિ.

આ પૂર્વોક્ત કથનમાં આર્યોની આ પ્રકારની પ્રત્યુત્તરરૂપ માન્યતા છે,  
અર્થાત્—દેશથી ભાષાથી અને ચારિત્રથી ને આર્ય છે તેનું આ પ્રકારનું કથન છે  
કે—તમોએ તમારા આચાર્યોએ ને દેખ્યું છે, સાંભળ્યું છે, માન્યું છે અને ને

=दुष्टं दृष्टं न तु सम्यग् दृष्टमित्यर्थः । एवं यावत् “ दुष्पत्तिलेखितं च वः ” इति स्वयमूहनीयम् । पुनरपि त एवार्थाः प्रागुक्तश्रमणादिवचनं हिंसादिप्रवर्तक-तया सदोषमिति बोधयितुं यदवादिपुस्तदाह—‘ यत् खलु यूयमेवम् ’ इत्यादि । एवं=वक्ष्यमाणप्रकारेण यूयं यद्वचनमाख्याय, एवं यद् भाषध्वे, एवं यत् प्रज्ञापयथ, एवं यत् प्ररूपयथ—सर्वे प्राणाः ४ हन्तव्याः ५ इत्यादि, यावत्—नास्त्यत्र दोष इति, तदेतत् सर्वमनार्यवचनं=हिंसादिप्रवर्तकतया पापानुबन्धि वचनं युष्मदाचार्याणां वेत्यर्थः ॥ सू० ९ ॥

सुना है, जो माना है, और जो जाना है एवं प्रत्येक दिशामें जिसकी प्रत्यक्षादि प्रमाणों के द्वारा अच्छीतरह से ज्ञान-धीन की है; वह सर्वथा सदोष है—वह आपका व आपके आचार्यों का देखना, सुनना, मानना, एवं जानना और पर्यालोचना करना दोषोंसे रिक्त नहीं है, अतः आपने व आपके आचार्यों ने जो देखा है वह सुन्दर निर्दोष नहीं देखा, जो सुना है वह निर्दोष नहीं सुना, जो माना है वह निर्दोष नहीं माना, जो जाना है वह निर्दोष नहीं जाना, एवं जो प्रत्यक्षादि प्रमाणों द्वारा प्रत्येक दिशामें पर्यालोचना की है वह भी निर्दोष नहीं की । यह सब उनका व आपका नाममात्रका ही देखना सुनना वगैरह हुआ है, कारण कि यह आपका पूर्वोक्त कथन जीवों की हिंसादिक पापों से प्रवृत्ति की जागृति करानेवाला है, अतः ‘समस्त प्राणी, समस्त जीव, समस्त भूत और समस्त सत्त्व मारने योग्य हैं, मारने की आज्ञा देनेयोग्य हैं, मारने के लिए ग्रहण करने योग्य हैं, परिनापित करनेयोग्य हैं और विष-श-

नष्ट्युं छे तेमज्ज प्रत्येक दिशामां जेनी प्रत्यक्षादि प्रमाणोद्वारा सारी रीते शोध करी छे ते सर्वथा सदोष छे. ते तमाइं तेमज्ज तमारा आचार्योंनुं देणवुं, सांभणवुं, मानवुं, तेमज्ज नष्ट्युं अने पर्यालोचना करवी ते दोषोधी मुक्त नथी, माटे तमोज्जे तेमज्ज तमारा आचार्योंजे जे देण्युं छे ते सुद्धर-निर्दोष नथी देण्युं, जे सांभण्युं छे निर्दोष नथी सांभण्यु, जे मान्युं ते निर्दोष नथी मान्युं, तेमज्ज जे नष्ट्युं छे ते निर्दोष नथी नष्ट्युं, अने जे प्रत्यक्षादिप्रमाणोद्वारा प्रत्येक दिशामां पर्यालोचना करी छे ते पणु निर्दोष नथी करी, आ णधु तेज्जोनुं तेमज्ज तमाइं नाममात्रनु देणवुं सांभणवुं विगेरे थ्युं छे, कारण छे तमाइं पूर्वोक्त कथन जेवानी हिंसादिक पापोंमां प्रवृत्ति जन्मत करवावाणुं छे, माटे ‘समस्त प्राणी, समस्त भूत, समस्त जव, अने समस्त सत्त्व मारवा योग्य छे, मारवानी

एवं केवलिनो दण्डिशाक्यादीनां वादे हिंसादिदोषसद्भावादधर्मविरोधं प्रदर्श्य स्वमतं प्रतिबोधयितुं वदन्ति—‘वयं पुण ’ इत्यादि ।

મૂલમ્—વયં પુણ એવમાઙ્કલામો, એવં ભાસામો, એવં પન્ન-  
વેમો, એવં પરુવેમો—સવે પાણા, સવે ભૂયા, સવે જીવા, સવે સત્તા  
ળ હંતવા, ણ અજ્ઞાવેચવા, ણ પરિઘેતવા, ણ પરિયાવેચવા, ણ ઉદ્ધવે-  
ચવા । એતથવિ જાણહ, ણત્થિતથ દોસો । આરિયવચનમેયં ॥ સૂ૦ ૧૦ ॥

સ્ત્રાદિકોં કે દ્વારા વધ કરને યોગ્ય હૈં, इसमें कोई दोष नहीं है । ’  
यह जो आपका कथन है, आपका भाषण है, आपकी प्रज्ञापना है,  
आपकी प्ररूपणा है, तथा इसे जो आपने निर्दोष प्रकट किया है; वे सब  
अनार्यों के ही वचन हैं और सदोष हैं, कारण कि आपके व आपके  
आचार्यों के इन वचनों में प्रवृत्ति करनेवाला प्राणी केवल पापका ही उपा-  
र्जन करनेवाला होता है, धर्मका नहीं, अतः अनार्यवचन होने से ये  
न्याज्य ही हैं । इस पूर्वोक्त कथन का तात्पर्य यही है कि यह सब कथन  
धर्मविरुद्ध होनेसे जीवोंमें असदाचार की प्रवृत्ति का कारण होने से  
सदोष एवं पापानुबन्ध का हेतु है, अनः अनार्य वचन होने से यह सर्वथा  
निन्दनीय एवं गर्हणीय है ॥ सू० ९ ॥

केवली भगवान इस प्रकार दण्डी शाक्यादिकों के कथन में हिंसा-  
दिक दोषों का सद्भाव होनेसे धर्मविरुद्धता प्रदर्शित कर अपना सिद्धान्त  
प्रकट करनेके लिये कहते हैं—‘ वयं पुण ’ इत्यादि ।

આજ્ઞા દેવા યોગ્ય છે, મારવાને અહણ કરવા યોગ્ય છે, પરિતાપિત કરવા યોગ્ય  
છે, અને વિષશસ્ત્રાદિકો દ્વારા વધ કરવા યોગ્ય છે, આમાં કાંઈ પણ દોષ નથી ’  
આ પ્રકારે જે તમારું કથન છે, તમારું ભાષણ છે, તમારી પ્રજ્ઞાપના છે,  
તમારી પ્રરૂપણા છે, તથા એને જે તમેએ નિર્દોષ પ્રગટ કરેલ છે તે બધા  
અનાર્યોના જ વચનો છે અને સદોષ છે, કારણ કે તમારા તેમજ તમારા આચાર્ય-  
ઓના આ વચનોમાં પ્રવૃત્તિ કરવાવાળાં પ્રાણી કેવળ પાપના જ ઉપાર્જન કરવાવાળા  
બને છે, ધર્મના નહીં, માટે અનાર્યવચન હોવાથી તે તજવા યોગ્ય છે. આ  
પૂર્વોક્ત કથનનું તાત્પર્ય એ છે કે આ બધા કથન ધર્મ-વિરુદ્ધ હોવાથી જીવોને  
અસદાચારની પ્રવૃત્તિનું કારણ હોવાથી સદોષ અને પાપાનુબંધનો હેતુ છે, માટે  
અનાર્યવચન હોવાથી તે સર્વથા નિન્દનીય તેમજ ગર્હણીય છે. ॥ સૂ૦ ૯ ॥

કેવળી ભગવાન આ પ્રકારે દંડી શાક્યાદિકોના કથનમાં હિંસાદિક દોષોનો  
સદ્ભાવ હોવાથી ધર્મ-વિરુદ્ધતા પ્રદર્શિત કરી ચોતાનો સિદ્ધાન્ત પ્રગટ કરવાને  
માટે કહે છે—‘ વયં પુણ ’ ઇત્યાદિ.

छाया—वयं पुनरेवमाख्यामः, एवं भाषामहे, एवं प्रज्ञापयामः, एवं प्ररूपयामः—सर्वे प्राणाः सर्वे भूताः, सर्वे जीवाः, सर्वे सत्त्वाः, न हन्तव्याः १, न आज्ञापयितव्याः २, न परिग्रहीतव्याः ३, न परित्तापयितव्याः ४, न अपद्रावयितव्याः ५ । अत्रापि जानीत, नास्त्यत्र दोषः । आर्यवचनमेतत् ॥ सू० १० ॥

टीका—वयं पुनरित्यादि । अत्र पुनः—शब्द उक्तश्रमणादिवैलक्षण्यद्योतनाय । यथा धर्मविरुद्धवादो न भवति, तथा वयम् एनं=वक्ष्यमाणरीत्या आख्यामः, एवं भाषामहे, एवं प्रज्ञापयामः, एवं प्ररूपयामः—सर्वे प्राणाः ४ न हन्तव्याः ५ । एतानि पदानि प्राग् व्याख्यातानि । अत्रापि—अत्रैव=अस्मिन् उक्तविषये—सर्वे प्राणाः ४ न हन्तव्याः ५, इत्यत्रैव जानीत=युयमवबुध्यध्वम्, अत्र=अस्मिन्—अस्मद्वाक्ये

इस सूत्रमें “ पुनः ” यह शब्द पूर्वोक्त श्रमणादिकों की मान्यतासे केवलियों की मान्यतामें भिन्नप्रकारता का द्योतन करनेवाला है, अर्थात् केवलियों का कथन इस प्रकारका नहीं है, किन्तु ऐसा है कि जिससे उसमें किसी भी प्रकार धर्मसे विरोध नहीं आ सकता है । उनका कहना है कि हम तो इस प्रकार का कथन करते हैं, भाषण करते हैं, प्रज्ञापना करते हैं, प्ररूपणा करते हैं कि—समस्त प्राणी, समस्त जीव, समस्त भूत और समस्त सत्त्व न मारने योग्य हैं, न मारनेकी आज्ञा देने योग्य हैं, न मारनेके लिए ग्रहण करने योग्य हैं, न परित्तापित करने योग्य हैं और न विषशस्त्रादिकों के द्वारा वध करने योग्य ही है । ( इन समस्त पदों का विवरण पहिले लिखा जा चुका है ) यह हमारा कथन हिंसादिक पापों में जीवों की प्रवृत्ति करानेवाला नहीं होनेसे प्रमाणरूप निर्दोष है । यह आप अच्छी तरहसे समझ लें । यही

आ सूत्रमा ‘ पुनः ’ आ शब्द पूर्वोक्त श्रमणादिकोनी मान्यताथी डेवणी-योनी मान्यतामां भिन्न-प्रकारता प्रकाशित करे छे. अर्थात्—डेवणीयोनुं कथन आ प्रकारनुं नथी पणु आम छे जेनाथी केछ पणु प्रकारे धर्मथी विरोध आवी शकतो नथी. जेमनुं कडेवुं छे के—जमे तो आ प्रकारनु कथन करीजे छीजे, लाषणु करीजे छीजे, प्रज्ञापना करीजे छीजे अने प्ररूपणा करीजे छीजे के समस्त प्राणी, समस्त भूत, समस्त जिव अने समस्त सत्त्व मारवा योग्य नथी, मारवानी आज्ञा देवा योग्य नथी, मारवाने भाटे ग्रहणु करवा योग्य नथी, परित्तापित करवा योग्य नथी, तेमज विष अने शस्त्रादिकोथी वध करवाने योग्य नथी. ( आ समस्त पदार्थोनुं विवेचन पड़ेलां करवामा आव्युं छे ) आ अमाइं कथन हिंसादिक पापेमां जेवानी प्रवृत्ति करवावाणुं नहि डोवार्थो प्रमाणरूप निर्दोष छे. जे तमे सारी रीते समज

દોષો નાસ્તિ; ઠિંસાદિપ્રવર્તકસ્વાભાવાદિતિ ભાવઃ । એતચ્ચ આર્યવચનમ્=દેશતો  
ભાષાતશ્ચારિત્રતથ્યે આર્યાસ્તેષાં વાક્યં, તસ્માન્નાસ્ત્યત્ર દોષ इत्यर्थः ॥ મૂ० ૧૦ ॥

દણ્ડિશાક્યાદીનાં પાપણ્ડિનાં ધર્મવિરુદ્ધવાદપ્રગમનાય કેવલિનો યદ્ વદન્તિ  
તદાહ—‘ પુવ્વં નિકાય ’ इत्यादि ।

મૂલમ્—પુવ્વં નિકાય સમયં પત્તેયં પત્તેયં પુચ્છિસ્સામો, હં ભો  
પવાડયા ! કિં મે સાયં દુઃખં અસાયં? સમિયા પઢિવણ્ણે યાવિ  
एवं ब्रूया—सर्वेसिं पाणाणं सर्वेसिं भूयाणं सर्वेसिं जीवाणं सर्वेसिं  
सत्ताणं असायं अपरिनिव्वाणं महवभयं दुक्खं-तिवेमि ॥ સૂ० ૧૧ ॥

હાયા—પૂર્વ નિકાય સમયં પ્રત્યેકં પ્રત્યેકં પ્રશ્ન્યામઃ, હં ભોઃ પ્રવાડુકાઃ !  
કિં યુષ્માકં સાતં દુઃખમ્ અસાતમ્? સમ્યક્પ્રતિપન્નાંશ્ચ અપ્યેવં બ્રૂયાત્—સર્વેષાં  
પ્રાણાનાં સર્વેષાં ભૂતાનાં સર્વેષાં જીવાનાં સર્વેષાં સત્ત્વાનાં અસાતમ્ અપરિનિર્વ્વાણં  
મહાભયં દુઃખમ્—इति ब्रवीमि ॥ મૂ० ૧૧ ॥

ટીકા—ભોઃ પ્રવાડુકાઃ ! વયં પૂર્વમ્=આદો, સમયમ્=આગમમ્ આગમોક્ત-  
મર્થ, નિકાય=વ્યવસ્થાપ્ય, યુષ્માન્ પ્રત્યેકં પ્રત્યેકં પ્રશ્ન્યામઃ, દુઃખં યુષ્માકં કિં  
સાતં=મનોડનુકૂલં, કિં વા અસાતમ્=મનઃપ્રતિકૂલમ્ ?

દેશસે, ભાષાસે ઓર ચારિત્રસે જો આર્ય હૈં उनका कथन है, इसी कारण  
यह निर्दोष है । आर्य देशमें जो उत्पन्न हुए हैं वे देशसे आर्य, आर्योंकी  
भाषा जो बोलते हैं वे भाषासे आर्य और चारित्र का जो आराधन करते  
हैं वे चारित्रसे आर्य कहलाते हैं ॥ मू० १० ॥

દણ્ડીશાક્યાદિક પાપણ્ડિયોં કે ધર્મવિરુદ્ધ કથનકો શાન્ત કરને કે  
લિયે કેવલિયોં કા જો કથન હૈં वह कहा जाता है—‘ પુવ્વં નિકાય ’ इत्यादि ।

હે વાદિયોં ! હમ સવસે પ્રથમ આગમોક્ત-અર્થતત્ત્વકી વ્યવસ્થા કર  
કે આપ લોગોં મેં સે પ્રત્યેક કો यह पूछते हैं कि आप दुःख किसे मानते

इयो. देशधी, भाषाधी અને ચારિત્રધી જે આર્ય છે તેનુ આ જ કથન છે, આ  
માટે જ આ નિર્દોષ છે. આર્ય દેશમાં જે ઉત્પન્ન થયાં છે તે દેશધી આર્ય, આર્યોની  
ભાષા બોલે છે માટે ભાષાધી આર્ય અને ચારિત્રનું જે આરાધન કરે છે તે  
ચારિત્રધી આર્ય કહેવાય છે. ॥ મૂ० ૧૦ ॥

દંડીશાક્યાદિક પાપણ્ડિયોના ધર્મવિરુદ્ધ કથનને શાંત કરવા માટે કેવ-  
ળીયોનું જે કથન છે તે કહે છે—‘ પુવ્વં નિકાય ’ इत्यादि.

હે વાદવિવાદ કરવાવાળા ! અમે સૌથી પ્રથમ આગમોક્ત અર્થ-તત્ત્વની વ્યવસ્થા  
કરીને તમારે લોકોમાંથી દરેકને પૂછીએ છીએ કે તમે દુઃખ કેને માને છે ? જે

એવં પૃષ્ઠાઃ સન્તો યદિ તે 'દુઃસ્વં સાતમ્' ઇતિ વ્રુયુસ્તદા તેપાં પ્રત્યક્ષાગ-  
મલોકવિરોધ આપદ્ધેત, યદિ તુ દુઃસ્વમસાનમ્' ઇતિ વદેયુસ્તદા સમ્યક્-  
પ્રતિપન્નાન્=યથાર્થમર્થ જ્ઞાતવતઃ પ્રવાદુકાન્ સ્વતઃ સ્તમ્ભિતવાક્પ્રચારાન્, અપ્યેવમ્-  
અપિશબ્દઃ સંભાવનાર્થઘોતકઃ; એવં સંભાવ્યતે-દુઃસ્વં ભવતામેવ નાસાતરૂપં, કિંતુ  
સર્વેષામપિ પ્રાણિનાં સર્વેષામપિ ભૂતાનાં સર્વેષામપિ જીવાનાં સર્વેષામપિ સત્ત્વાનાં  
દુઃસ્વમ્-અસાતં=મનઃપ્રતિકૂલમ્-અપ્રિયમિત્યર્થઃ । તથા-અપરિનિર્વાણમ્=અજ્ઞાન્તં  
હૈં ? જો જ્ઞાતા-મનકે અનુકૂલ હૈં વહ દુઃસ્વ હૈં ? યા જો અજ્ઞાતા-મનકે  
પ્રતિકૂલ હૈં વહ દુઃસ્વ હૈં ?

મનકે અનુકૂલ જ્ઞાતાકો યદિ દુઃસ્વ માના જાવે તો ઇસમેં પ્રત્યક્ષ  
તથા આગમ પ્રમાણસે ઔર લોકસે ખી વિરોધ આતા હૈં, કારણ કિ  
મન અપને અનુકૂલ પદાર્થકે સેવનમેં સુસ્વ માનતા હૈં, યહ પ્રત્યક્ષસિદ્ધ  
વાત હૈં । આગમમેં ખી 'મનોઽનુકૂલં સુસ્વં' યહ લિખા હુઆ હૈં, અર્થાત  
મનોઽનુકૂલ પદાર્થોં કી પ્રાપ્તિ જ્ઞાતાવેદનીય કર્મકે ઉદયસે હી જીવોંકો  
પ્રાપ્ત હોતી હૈં, એસા જ્ઞાત્રકા વચન હૈં । લોક ખી મનોઽનુકૂલ પદાર્થકે  
સેવનમેં સુસ્વ હૈં-એસા હી કહતે ઔર માનતે હૈં ।

મનકે પ્રતિકૂલ અજ્ઞાતા કો યદિ દુઃસ્વ માના જાવે તો જો યથાર્થવક્તા-  
સમજ્ઞદાર પ્રવાદી હૈં ઔર જો ઇસ વિષય મેં કેવલ મૌન હૈં ડનસે હમ  
યહી કહેંગે કિ જિસ પ્રકાર અજ્ઞાતા તુમહેં દુઃસ્વરૂપ પ્રતીત હોતી હૈં ડસી  
તરહસે સમસ્ત પ્રાણિયોં કો, સમસ્ત ભૂતોં કો, સમસ્ત જીવોં કો ઔર  
સમસ્ત સત્ત્વોં કો યહ અજ્ઞાતા મહાઘોર ઔર ડનકે પ્રાણોં કો કષ્ટ

જ્ઞાતા-મનને અનુકૂળ છે તે દુઃખ છે ? અગર જે અજ્ઞાતા-મનને પ્રતિકૂળ છે તે  
દુઃખ છે ?

મનને અનુકૂળ-જ્ઞાતાને કદાચ દુઃખ માનવામાં આવે તો તેમાં પ્રત્યક્ષ તથા  
આગમપ્રમાણથી અને લોકથી પણ વિરોધ આવે છે, કારણ કે મન પોતાના અનુ-  
કૂળ પદાર્થના સેવનમાં સુખ માને છે એ પ્રત્યક્ષ-સિદ્ધ વાત છે. આગમમાં પણ  
'મનોઽનુકૂલં સુસ્વં' એમ લખેલ છે, અર્થાત્-મનના અનુકૂળ પદાર્થોની પ્રાપ્તિ  
જીવોને જ્ઞાતાવેદનીય કર્મના ઉદયથી જ થાય છે, એવું જ્ઞાત્રકું વચન છે, લોક પણ  
'મનને અનુકૂલ પદાર્થના સેવનમાં સુખ છે' એવું જ કહે છે તેમ જ માને છે. મનને  
પ્રતિકૂળ અજ્ઞાતાને કદાચ દુઃખ માનવામાં આવે તો જે યથાર્થવક્તા-સમજ્ઞદાર  
પ્રવાદી છે અને જે આ વિષયમાં કેવળ મૌન છે તેને પણ અમે એ જ કહીશું કે  
—જે પ્રકારે અજ્ઞાતા તમોને દુઃખરૂપ પ્રતીત થાય છે તે માફક સમસ્ત પ્રાણિયો  
સમસ્ત ભૂતો, સમસ્ત જીવો અને સમસ્ત સત્ત્વોને આ અજ્ઞાતા મહાઘોર અને



ધોરમિત્યર્થઃ । તથા—મહાભયમ્=નિશ્ચિલપ્રાણિપ્રાણોદ્વેજકત્વાન્મહાભયરૂપમ્ । इत्येवं  
 ब्रूयात्=‘प्रत्येकं प्रत्येकं गणयित्वा, सर्वे प्राणिनो न हन्तव्या नाज्ञापयितव्या न परि-  
 ग्रहीतव्या न परितापयितव्याः, नापद्रावयितव्याः, यतो हिंसादिकरणे दोषः  
 प्रसज्येत’ इत्येवं वचनं वदेदित्यर्थः । यस्तु हिंसादिकरणे दोषो नास्तीति वदति,  
 तदनार्यवचनम्—इति प्रत्यक्षानुमानोपमादिप्रमाणैः सिद्धमिति भावः । इति ब्रवीमीति  
 पूर्ववद् व्याख्याऽवगन्तव्या ॥ सू० ११ ॥

॥ चतुर्थाध्ययनस्य द्वितीय उद्देशः समाप्तः ॥ ४-२ ॥

પહુંચાનેવાલી હોનેસે મહાભયરૂપ પ્રતીત હોતી હૈ, અતઃ સમસ્ત પ્રાણી,  
 સમસ્ત ભૂત, સમસ્ત જીવ ઔર સમસ્ત સર્વ ન મારને યોગ્ય હૈ, ન મારને  
 કી આજ્ઞા દેને યોગ્ય હૈ, ન મારનેકે લિખ ગ્રહણ કરનેયોગ્ય હૈ ન પરિ-  
 તાપિત કરને યોગ્ય હૈ ઔર ન વધ કરને યોગ્ય હૈ । અશાતા દેનેસે  
 હિંસાદિક દોષોંકા ભાગી હોના પડતા હૈ । જો હિંસાદિક પાપોંકે કરને મેં  
 દોષ નહીં માનતે હૈ વે અનાર્ય હૈ ઔર “ હિંસાદિક પાપોંકે કરને મેં  
 દોષ નહીં હૈ ” ઉનકે યે વચન અનાર્યવચન હી હૈ । શ્રી સુધર્માસ્વામી  
 કહતે હૈ—હે જમ્બૂ ! જૈસા મૈને ભગવાન કે સમીપ સુના હૈ વૈસા હી  
 કહતા હૂં ॥ સૂ० ૧૧ ॥

॥ चौथे अध्ययनका दूसरा उद्देश समाप्त ॥ ४-२ ॥

તેમના પ્રાણોને દુઃખ પહોચાડવાવાળી હોવાથી મહાભયરૂપ પ્રતીત થાય છે, માટે  
 સમસ્ત પ્રાણી, સમસ્ત ભૂત, સમસ્ત જીવ અને સમસ્ત સર્વ નહિ મારવાયોગ્ય  
 છે, નહિ મારવાની આજ્ઞા દેવા યોગ્ય છે, નહિ મારવાને ગ્રહણ કરવા યોગ્ય છે,  
 નહિ પરિતાપિત કરવાને યોગ્ય છે, નહિ વધ કરવા યોગ્ય છે. અશાતા દેવાથી  
 હિંસાદિક દોષોનું ભાગી બનવું પડે છે. જે હિંસાદિક પાપો કરવામાં દોષ નથી  
 માનતા તે અનાર્ય છે, અને “ હિંસાદિક પાપો કરવામાં દોષ નથી ” એમ જે  
 તેનું વચન છે આ અનાર્યવચન છે. સુધર્માસ્વામી કહે છે—હે જમ્બૂ ! જેવું મે  
 ભગવાન સમીપે સાંભળ્યું છે તેવું કહું છું. ॥ સૂ० ૧૧ ॥

अथा अध्ययनो षीन्ने उद्देश समाप्त ॥ ४-२ ॥



## અથ ચતુર્થાધ્યયનસ્ય તૃતીય ઉદ્દેશઃ ।

इहानन्तरद्वितीयोद्देशके दण्डिशाक्यादिपापण्डिमतनिराकरणेन सम्यक्तत्वं स्थिरीकृतम् । सत्यपि सम्यक्तत्वे निरवद्यतपश्चरणमन्तरेण कर्मक्षयो न भवतीत्यतस्तत्र प्रवर्तयितुं तृतीयोद्देशकं वथयति । तत्र प्रथमं धर्मबहिष्क्रान्तस्यानार्यतया तदुपेक्षा करणीयेति बोधयितुमाह—‘उवेहि णं’ इत्यादि ।

मूलम्—उवेहि णं बहिया यलोगं, से सबलोगंमि जे केइ विण्णू ॥ सू० १ ॥

छाया—उपेक्षस्व खलु बहिश्च लोकम्, स सर्वलोके ये केचिद् विज्ञः ॥ सू० १ ॥

टीका—बहिः=धर्माद् बहिष्क्रान्तं लोकं खलु=निश्चयेन उपेक्षस्व=मा अनुसर । दण्डिशाक्यादिपापण्डिमं मा अनुमन्यस्वेत्यर्थः । धर्मबहिष्क्रान्तलोकोपेक्ष-

### चौथे अध्ययनका तीसरा उद्देश

इस पीछेके द्वितीय उद्देश में दण्डी शाक्यादिक पाण्डिओंकी मान्यताका निराकरण करके सम्यक्तत्वको सुस्थिर किया: परन्तु इतने मात्र से कर्मक्षय नहीं हो सकता, कर्मक्षय तो निरतिचार तपश्चरण से ही होता है, इसलिये उस तपमें जीवों की प्रवृत्ति कराने के लिये इस तृतीय उद्देशका कथन प्रारंभ किया जाता है । इसमें सर्वप्रथम धर्मसे बहिर्भूत जो व्यक्ति हैं वे अनार्य हैं और उनके साथ रागद्वेष न करते हुए उपेक्षाभाव ही रखना चाहिये, इस बातका परिज्ञान कराने के लिये कहते हैं—‘उवेहि णं’ इत्यादि ।

धर्मसे बहिर्भूत व्यक्तियों की सदा उपेक्षा ही करनी चाहिए । अर्थात्—दण्डी शाक्यादिक जो धर्मसे बहिर्भूत हैं, धर्मका यथार्थ स्वरूप

### ચોથા અધ્યયનનો ત્રીજો ઉદ્દેશ.

પાછળનાં બીજા ઉદ્દેશમાં દડી-શાક્યાદિક પાંખડીઓની માન્યતાનું નિરાકરણ કરીને સમ્યક્ત્વને સુસ્થિર કર્યું, પણ આટલાથી જ કર્મક્ષય થઈ શકે નહિ. કર્મક્ષય તો નિરતિચાર તપશ્ચરણથી જ થાય છે, માટે તે તપમાં જીવેલી પ્રવૃત્તિ કરવાને માટે આ ત્રીજા ઉદ્દેશના કથનનો પ્રારંભ કરવામાં આવે છે. આમાં સર્વપ્રથમ ધર્મથી બહિર્ભૂત જે વ્યક્તિ છે તે અનાર્ય છે અને તેની સાથે રાગ દ્વેષ ન કરતાં ઉપેક્ષા ભાવ જ રાખવો જોઈએ, આ વાતનું પરિજ્ઞાન કરવાને માટે કહે છે—‘ઉવેહિ ણં’ ઇત્યાદિ.

ધર્મથી બહિર્ભૂત વ્યક્તિઓની સદા ઉપેક્ષા જ રાખવી જોઈએ. અર્થાત્—દંડી શાક્યાદિક જે ધર્મથી બહિર્ભૂત છે, ધર્મનું યથાર્થ સ્વરૂપ નથી જાણતા તેમજ

કસ્ય ગુણમાહ-‘સ સર્વલોકે’ इत्यादि । योऽनार्यं मत्वा धर्मवहिष्क्रान्तलोकं  
 नानुसरति, स सर्वलोके=समस्ते मनुष्यलोके, ये केचिद् विद्वांसस्ततोऽप्यधिको  
 विज्ञः=विद्वानित्यर्थः ॥ सू० १ ॥

નહીં જાનતે હૈં એવં હિંસાદિક પાપ કાર્યોં મેં જીવોં કો પ્રવર્તિત કરાને કે  
 લિયે મિથ્યા ઉપદેશ કરતે હૈં, ઉનકા અનુસરણ નહીં કરના ચાહિયે ।  
 જિમ્મ પ્રકાર ઘાસકે તૃણ કે ઊપર સમજદાર જીવકે હૃદયમેં ન રાગ હોતા  
 હૈં ઓર ન દ્વેષ હી હોતા હૈં; કિન્તુ સદા માધ્યસ્થ્યભાવ રહતા હૈં । હસી  
 પ્રકાર જો આર્હત ધર્મ કે વિપરીત ચલનેવાલે હૈં ઓર ઉસસે અપની વૃત્તિ  
 કો વિકૃદ્ધ બનાયે હુણ હૈં ઉનકે પ્રતિ મી ભગવાન્ કા યહી આદેશ હૈં કિ હે  
 મહાનુભાવોં ! તુમ મી રાગ દ્વેષ ન કરકે ઉનકે પ્રતિ ઉપેક્ષાભાવ હી રક્ષવોં;  
 કારણ કિ હસ ઉપેક્ષાભાવસે આત્મામેં શાંતિ કી માત્રા અધિક રૂપમેં  
 જાગૃત હોતી રહની હૈં । નવીન કર્મોં કા બંધ, જો ઉસકે પ્રતિ રાગદ્વેષ  
 કરને સે ઉત્પન્ન હોતા હૈં વહ રુક જાતા હૈં, અતઃ ધર્મવહિર્ભૂત મનુષ્યોં કો  
 અનાર્ય સમજ કર જો ઉનકા અનુસરણ નહીં કરતા હૈં વહ મનુષ્ય હસ  
 લોકમેં જિતને મી વિદ્વાન્ હૈં ઉન સબસે અધિક વિજ્ઞ-વિદ્વાન્ હૈં । યહાં પર  
 જો ઉસ વ્યક્તિ કો સમસ્ત વિદ્વાનોં સે અધિક વિદ્વાન્ બનલાયા ગયા હૈં,  
 વહ તત્ત્વોં કા સમ્યક્ પ્રકારસે જાનનેવાલે હોનેસે હી સમજ્ઞાના ચાહિયે,  
 કારણ કિ વહ સમકિતી જીવ અપને પ્રયોજનભૂત તત્ત્વોં સે હી મનલબ

હિંસાદિક પાપ કાર્યોંમાં જીવોંની પ્રવૃત્તિ કરાવવામાં મિથ્યા ઉપદેશ આપે છે તેનું  
 અનુસરણ નહિ કરવું જોઈએ. જેમ ઘાસના તણખલા ઉપર સમજદાર જીવના  
 હૃદયમાં રાગ તેમજ દ્વેષ હોતો નથી પણ હમેશા મધ્યસ્થ ભાવ રહે છે, તે  
 પ્રકારે જે આર્હત ધર્મથી વિપરીત ચાલવાવાળાં છે, અને તેનાથી જેની વૃત્તિ વિકૃત્ત  
 બનેલી છે તેના પ્રત્યે પણ ભગવાનનો એ જ આદેશ છે કે-હે દેવાનુપ્રિય ! તમે  
 રાગ દ્વેષ ન કરતાં તે પ્રત્યે ઉપેક્ષા ભાવજ રાખો, કારણ કે આ ઉપેક્ષાભાવથી  
 આત્મામાં શાંતિની માત્રા અધિક રૂપમાં જાગૃત થાય છે. નવીન કર્મોંના બંધ, જે  
 તે પ્રત્યે રાગ દ્વેષ કરવાથી ઉત્પન્ન થાય છે તે રોકાઈ જાય છે, તેથી ધર્મવિમુખ  
 મનુષ્યોને અનાર્ય સમજીને જે તેનું અનુસરણ નથી કરતા તે મનુષ્ય આ લોકમાં  
 જેટલાં વિદ્વાનો છે તે બધા કરતાં પણ અધિક વિદ્વાન છે, પણ આ ઠેકાણે તે વ્યક્તિ  
 જેને બધા વિદ્વાનો કરતા વધારે જાણવાવાળો બતાવેલ છે તે તત્ત્વોના સમ્યક્  
 પ્રકારથી જાણવાવાળા હોવાથી જ સમજવું જોઈએ; કારણ કે તે સમકિતી જીવ  
 પોતાના પ્રયોજન-ભૂત તત્ત્વોથી જ મતલબ રાખે છે. એનાથી વિમુખ તત્ત્વોમાં

નનુ તે વિદ્વાંસ. કથં વિજ્ઞેયાઃ ? इति शिष्यजिज्ञासायामाह—‘अणुवीड्’ इत्यादि ।

મૂલમ્—અણુવીડ પાસ, નિશ્ચિત્તદંડા જે કેડ સત્તા પલિયં  
ચર્યાંતિ, નરા મુચ્ચા ધમ્મવિઉ-ત્તિ અંજૂ, આરંભજં દુઃખમિણં-તિ  
ળચ્ચા, એવમાહુ સંમત્તદંસિણો ॥ સૂ૦ ૨ ॥

છાયા—અનુવિચિન્ત્ય પઞ્ચ, નિશ્ચિત્તદંડાઃ યે કેડપિ સત્ત્વાઃ પલિતં ત્યજન્તિ,  
નરા મૃતાર્ચા ધર્મવિદઃ ઋજવઃ આરંભજં દુઃખમ્ इदमिति ज्ञात्वा एवमाहुः  
સમ્યક્ત્વદર્શિનઃ ॥ મૃ૦ ૨ ॥

ટીકા—અનુવિચિન્ત્ય=પુનઃ પુનઃ પર્યાલોચ્ય, પઞ્ચ=જ્ઞાનદૃષ્ટ્યા વિલોક્ય, યે  
કેડપિ સત્ત્વાઃ=જીવાઃ, નિશ્ચિત્તદંડાઃ=પરિત્યક્તમનોવાકાયમયસાવધવ્યાપારરૂપ-  
દંડાઃ સન્તઃ, પલિતં=પુરાતનં કર્મત્યર્થઃ, અનાદિકાલવસ્થાયિત્વેન ચિરન્તનં કર્માપિ  
રચ્ચતા હૈ, इनसे वहिर्भूत तत्त्वों में उसकी सदा उपेक्षा ही बनी रहती  
है। जहां अपने में स्वपरका विवेक जागृत हो रहा है वही दुनियां में  
विद्वानों से भी अधिक विद्वान् है। अनेक शास्त्रों का अध्येता हो कर  
भी जो इस ज्ञानसे शून्य है वह विद्वान् होकर भी सिद्धान्तज्ञों की  
दृष्टि में मूर्ख ही है ॥ सू० १ ॥

જિનધર્મસે વહિર્ભૂત વ્યક્તિયોં કે પ્રતિ ઉપેક્ષાભાવ ધારણ કરને-  
વાલા મનુષ્ય વિદ્વાન્ કયોં વતલાયા ગયા હૈ? इस प्रकार शिष्य की  
जिज्ञासा होने पर कहते हैं—‘अणुवीड्’ इत्यादि।

જો મનુષ્ય વારંવાર વિચાર કરકે તથા જ્ઞાનદૃષ્ટિસે દેવકર મન,  
વચન ઔર કાયકે સાવધવ્યાપારરૂપ દંડોં સે રહિત હો જાતા હૈ વહી  
અનાદિકાલસે આત્માકે સાથે એકદેવ્યાવગાહરૂપ હોને સે આશ્ચર્ય ચિર-

તેની સદા ઉપેક્ષા જ રહે છે. જે જીવમાં સ્વ-પરનો વિવેક જાગ્રત રહે છે તે જ  
સંસારમાં સૌ વિદ્વાનો કરતાં પણ અધિક વિદ્વાન છે. અનેક શાસ્ત્રોનો જાણકાર  
હોવા છતાં પણ જે જ્ઞાનથી શૂન્ય છે તે વિદ્વાન હોવા છતાં પણ સિદ્ધાંતોની  
દૃષ્ટિમાં મૂર્ખ જ છે. ॥ સૂ૦ ૧ ॥

જિનધર્મથી વિમુખ વ્યક્તિયો પ્રતિ ઉપેક્ષાભાવ ધારણ કરવાવાળા મનુષ્યને  
વિદ્વાન કેમ માનવામાં આવેલ છે? આ પ્રકારની શિષ્યની જિજ્ઞાસા થવાથી કહે  
છે—‘અણુવીડ્’ ઇત્યાદિ.

જે મનુષ્ય વારંવાર વિચાર કરીને તથા જ્ઞાનદૃષ્ટિથી જોઈ મન, વચન અને  
કાયાના સાવધવ્યાપારરૂપ દંડોથી રહિત થઈ જાય છે તે જ અનાદિ કાળથી  
એક જ ક્ષેત્રમાં રહેવાવાળા હોવાથી આત્માની સાથે અંધારેલા પુરાતન અષ્ટવિધ

પલિતસાદૃશ્યાત્પલિતમિત્યુચ્યતે; ત્યજન્તિ, આત્મનો માલિન્યકરણાદ્રજોરૂપમષ્ટવિધં કર્માપનયન્તિ તે વિદ્વાંસ इति भावः । ये निक्षिप्तदण्डाः सन्तोऽष्टविधं कर्म क्षपय-  
यन्ति, एवंभूताः के जीवविशेषाः सन्तीति गिष्यजिज्ञासायामाह—‘नरा’इत्यादि।

નત્તન અષ્ટવિધ કર્મોં કો, જો વસ્ત્રાદિકોં કો ધૂલકે સમાન આત્મા કો મલિન કર રહે હેં; અપનેસે દૂર કર દેતા હૈ, ઔર વહી વિદ્વાન્ ભી હૈ। શિષ્યને જો યહ પ્રશ્ન ક્રિયા થા કિ ‘જિન ધર્મ સે વહિર્મૂન વ્યક્તિયોં મેં ઉપેક્ષાભાવ ધારણ કરનેવાલા વ્યક્તિ ઉત્તમ વિદ્વાન્ ક્યોં બન જાતા હૈ?’ ઉસકા હી યહ સમાધાન હૈ—‘વેત્તીતિ વિદ્વાન્’—અર્થાત્ જિસકે મીતર સ્વપર કા વિવેક જાગૃત હો રહા હૈ વહી વિદ્વાન્ હૈ। ઇસ પ્રકારકી વિદ્વત્તા પ્રાપ્ત કરનેકે લિયે સર્વપ્રથમ ઇસ બાનકા જ્ઞાનદૃષ્ટિસે અવશ્ય વિચાર કરના ચાહિયે કિ યે કર્મ જો અનાદિ કાલસે મેરી આત્મા કે સાથ ક્ષીર-નીરકી તરહ સંબંધિત હો રહે હેં, ઇસકા કારણ ક્યા હૈ?, સૂક્ષ્મ વિચાર કરને પર જ્ઞાત હોગા કિ ઇન્કે સાથ અમી તક સંબંધ હોનેકા કારણ મન, વચન ઔર કાયકી સાવચ પ્રવૃત્તિ હી હૈ, અતઃ જૈસે ૨ યહ પ્રવૃત્તિ રુકેગી વૈસે ૨ નવીન કર્મોં કા આસ્રવ રુકેગા ઔર સંચિત કર્મોં કી નિર્જરા હોગી। મન ઔર કાયકી સાવચ પ્રવૃત્તિ કો રોકનેકે લિયે તપ સંયમ કે આરાધન કરનેકી પૂર્ણ આવશ્યકતા શાસ્ત્રકારોં ને બનલાઈ હૈ। તપ સંયમ કે આરાધન કરને સે સાવચ વ્યાપારોં કા જિતને ૨ અંશ મેં અભાવ હોગા ઉતને ૨

કર્મોને—ધૂળ જેમ વસ્ત્રાદિકોને મલિન કરે છે તેમ આત્માને જેઓ મલિન કરી રહ્યા છે તેઓને—પોતાથી દૂર કરી નાખે છે, અને તે જ વિદ્વાન પણ છે શિષ્યે જે પ્રશ્ન કરેલો હતો કે ‘જનધર્મથી વિમુખ વ્યક્તિઓમાં ઉપેક્ષાભાવ ધારણ કરવાવાળી વ્યક્તિને ઉત્તમ વિદ્વાન કેમ માનવામાં આવે છે?’ તેનું આ સમાધાન છે—‘વેત્તીતિ વિદ્વાન્’—અર્થાત્ જેની અંદર સ્વ-પરનો વિવેક જાગૃત છે તે જ વિદ્વાન છે. આ પ્રકારની વિદ્વત્તા પ્રાપ્ત કરવા માટે સર્વ પ્રથમ આ વાતનું જ્ઞાનદૃષ્ટિથી વિચાર અવશ્ય કરવો જોઈએ કે આ કર્મો જે અનાદિ કાળથી મારા આત્માની સાથે દૂધ-પાણીની માફક એક થઈ રહ્યા છે તેનું કારણ શું છે? સૂક્ષ્મ વિચાર કરવાથી જ્ઞાત થશે કે એની સાથે હજી મુધી સંબંધ રહેવાનું કારણ મન, વચન અને કાયની સાવચ પ્રવૃત્તિ જ છે, માટે જેમ જેમ આ પ્રવૃત્તિ રોકશે તેમ તેમ નવા કર્મોનો આસ્રવ અને સંચિત કર્મોની નિર્જરા થશે. મન, વચન અને કાયની સાવચ પ્રવૃત્તિ રોકવાને માટે તપ સંયમ આરાધન કરવાની આવશ્યકતા શાસ્ત્રકારોએ બતાવી છે. તપ સંયમની આરાધના કરવાથી સાવચ વ્યાપારોનો જેટલા જેટલા અંશે અભાવ થશે, તેટલા તેટલા અંશે આત્મામાં

નરાઃ=મનુષ્યાઃ, તેપામેવ નિરવશેષકર્મક્ષપણસામર્થ્યમસ્તીતિ ભાવઃ । તત્રાપિ સાધારણતયા ન સર્વે મનુષ્યા અશેષકર્મક્ષપણસામર્થ્યવન્તઃ-इति बोधयितुं तद्विशेषणमाह-‘मृतार्चा’ इति ।

અંશમેં આત્મા મેં નિર્મલતા જાગૃત હોગી । ઇસ નિર્મલતા કે આતે હી સ્વતઃ શબ્દાદિ વિષયોં મેં જીવકો ઉપેક્ષાભાવકી જાગૃતિ હો જાતી હૈ । મનુષ્ય કો તપ સંયમ હી ઉત્તમ વિદ્યતા કે સ્થાન પર લાકર રચને-વાલા હોતા હૈ, ઇસીલિયે સિદ્ધાન્તકારોં ને એસે મનુષ્યકો વિદ્વાનોં મેં શ્રેષ્ઠ માના હૈ ।

યહાં પર ‘પલિત’ શબ્દ કા અર્થ ‘પુરાતનકર્મ’ હૈ । અનાદિકાલિક હોને કે કારણ પુરાતન કર્મ બી પલિત=શ્વેતકેશ સદૃશ હૈં, અતઃ ઉન્હેં યહાં પલિત કહા ગયા હૈ । ઇસકા અભિપ્રાય યહ હૈ કિ જિસ પ્રકાર મનુષ્ય પલિત-સફેદ કેશ કો શીઘ્ર ડગાડ ઢાલતા હૈ ડસી પ્રકાર મન, વચન ઔર કાયકી સાવધ પ્રવૃત્તિ કો ત્યાગ કરનેવાલા મનુષ્ય બી ડન પુરાતન કર્મોં કો શીઘ્ર નષ્ટ કર દેતા હૈ । યહ કામ સામાન્ય જીવોં સે નહીં હો સકતા ઇસલિયે ઇસ કાર્ય કે કરનેવાલે વિશેષ જીવ હી હોતે હૈં, ઇસી વાતકો પ્રકટ કરનેકે લિયે સૂત્રકાર ઇસ સૂત્રમેં “ નરાઃ ” ઇસ પદકા વિન્યાસ કરતે હૈં; ક્યોં કિ સમસ્ત કર્મોં કે વિનષ્ટ કરને કી સાક્ષાત્ શક્તિ મનુષ્ય મેં હી રહી હુઈ હૈ । ઇનમેં બી સમી મનુષ્ય સમસ્ત કર્મોં કે ક્ષપણ કરને મેં સમર્થ નહીં હોતે હૈં; યહી વાત “ મૃતાર્ચા ” ઇસ પદસે પ્રકટ કી ગઈ હૈ ।

નિર્મળતા જાગૃત થશે. આ નિર્મળતા આવવાથી શબ્દાદિવિષયોમાં જીવને ઉપેક્ષા લાવની જાગૃતિ થાય છે. મનુષ્યને તપ સંયમ જ વિદ્યતાના સ્થાન પર લાવીને રાખવાવાળાં છે, માટે ચિદાંતકારોએ આવા મનુષ્યને વિદ્વાનોમાં ઉત્તમ માનેલ છે.

આ ઠેકાણે ‘પલિત’ શબ્દનો અર્થ ‘પુરાતનકર્મ’ છે. અનાદિકાલિક હોવાના કારણે પુરાતન કર્મોં પણ પલિત-શ્વેતકેશસદૃશ છે, માટે તેઓને અહીં પલિત કહ્યા છે. આનો અભિપ્રાય આ છે કે-જે પ્રકારે મનુષ્ય પલિત-સફેદ વાળને શીઘ્ર ઉખાડી નાળે છે તે પ્રકારે મન વચન કાયાની સાવધ પ્રવૃત્તિનો ત્યાગ કરવાવાળા મનુષ્ય પણ આ પુરાણા કર્મોંને શીઘ્ર નષ્ટ કરી દે છે. આ કામ સામાન્ય જીવથી થઈ શકતું નથી; માટે આ કાર્યને કરવાવાળા કોઈક જ જીવ હોય છે. આ વાતને પ્રગટ કરવાને માટે સૂત્રકારે આ સૂત્રમાં “ નરાઃ ” આ પદ રાખ્યું છે; કેમ કે બધા કર્મોંનો નાશ કરવાની સાક્ષાત્ શક્તિ મનુષ્યમાં જ રહેલી છે. આમાં પણ બધા મનુષ્યો સકળ કર્મોંનો ક્ષય કરવામાં સમર્થ થતા નથી. આ વાત ‘મૃતાર્ચા’ આ શબ્દથી પ્રગટ કરવામાં આવી છે.



સંસ્કારરાહિત્યાદ્ મૃતેવ મૃતા-અર્ચા શરીરં યેષાં તે મૃતાર્ચાઃ, શુશ્રૂષાવિભૂષાદિવર્જિતશરીરા इत्यर्थः । यद्वा-अर्चा अर्चिः, तत्सादृश्यात् क्रोधोऽप्यर्चा, स च कषायमात्रोपलक्षणम् । तथा च-मृता नष्टा अर्चा कषायरूपा येषां ते मृतार्चार्चः, कषायरहिता इत्यर्थः । किंच-धर्मविदः=श्रुतचारित्रधर्मज्ञानवन्तः,

“મૃતેવ મૃતા અર્ચા-શરીરં યેષાં તે મૃતાર્ચાઃ” અર્થાત્-શારીરિક-શુશ્રૂષાવિભૂષારૂપસંસ્કારરહિત હોનેસે મૃતકે સમાન હૈ શરીર જિનકા એસે અપને શરીરમેં નિસ્પૃહવૃત્તિ રાખનેવાલે મનુષ્યશિરોમણિ હી इन कर्मों पर विजय लाभ करते हैं । अथवा “अर्चा-अर्चिः” अर्थ है ज्वाला । जिस प्रकार अग्निकी ज्वाला लाल होती है उसी प्रकार क्रोध भी लाल होता है; अतः ज्वालाके सादृश्य से क्रोध को भी अर्चा कहा है । क्रोध यह अन्य कषायों का उपलक्षण है, इससे मान, माया और लोभ का भी ग्रहण हो जाता है । जिनकी आत्मासे कषायरूप अर्चा नष्ट हो चुकी है, अर्थात् जो कषायरहित हो चुके हैं वे मनुष्य ही अष्टविध कर्मों के नष्ट करनेमें विशिष्टशक्तिशाली होते हैं । संसारमें बहुत से ऐसे भी बहुत से मनुष्य होते हैं कि जिन्हें शारीरिक श्रृङ्गार करने का जीवन में अवसर तक ही प्राप्त नहीं होता है, भील आदि ऐसे ही मनुष्यों में हैं; अतः इनकी भी यह अवस्था कर्मक्षयण के योग्य मानी जानी चाहिये ? इस प्रकारकी आशंकाको दूर करनेके लिये ही “मृतार्चा”

“મૃતેવ મૃતા અર્ચા=શરીરં યેષાં તે મૃતાર્ચાઃ” અર્થાત્ શારીરિક શુશ્રૂષા વિભૂષારૂપ સંસ્કાર રહિત હોવાથી મૃતકસદૃશ જેનું શરીર છે; આવા પોતાના શરીરમાં નિસ્પૃહ વૃત્તિ રાખવાવાળા મનુષ્યશિરોમણિ જે આ કર્મો ઉપર વિજય લાભ કરે છે, અથવા “અર્ચા-અર્ચિઃ”નો અર્થ જ્વાળા છે. જે પ્રકારે અગ્નિની જ્વાળા લાલ હોય છે તે પ્રકારે ક્રોધ પણ લાલ છે, માટે જ્વાળાની સદૃશતાથી ક્રોધને પણ અર્ચા કહે છે, ક્રોધ-શબ્દ બીજા કષાયોનું ઉપલક્ષણ છે. આમાં માન, માયા અને લોભનો પણ સમાવેશ થાય છે. જેના આત્માથી કષાયરૂપી અર્ચાનો નાશ થયેલ છે, અર્થાત્-જે કષાયરહિત છે તે જ મનુષ્ય આઠ પ્રકારના કર્મોનો ક્ષય કરવામાં વિશિષ્ટશક્તિશાળી છે. સંસારમાં એવા પણ ઘણા માણસો છે કે જેને શારીરિક શૃંગાર કરવાનો અવસર જીવનમાં કોઈ વખત પણ પ્રાપ્ત થતો નથી, ભીલ આદિ એવા મનુષ્યો છે, માટે તેની પણ આ અવસ્થા કર્મક્ષયણયોગ્ય માનવી જોઈએ ? આ પ્રકારની શંકાને દૂર કરવાને માટે જ “મૃતાર્ચા” શબ્દનો અર્થ “કષાયરહિત”

અતઃ એવઃ ઋજવઃ=સરલહૃદયઃ, અમાયિન ઇત્યર્થઃ । મનુષ્યાઃ કિં કૃત્વા એવઃ ભવન્તી-  
તી જિજ્ઞાસાયામાહ—‘ આરમ્ભજમ્ ’ ઇત્યાદિ । ઇદં સર્વપ્રાણિપ્રત્યક્ષં દુઃસ્વમ્  
શબ્દકા અર્થ “ કષાયરહિત ” કિયા હૈ । યદ્યપિ અસાતા-અશુભ કર્મ કે  
તીવ્ર ઉદય હોને સે વે ઉસ પ્રકારકી સામગ્રી સે રહિત હૈં ફિર ભી વે ઉસ  
જાતકી કષાય સે રહિત નહીં હૈં, અતઃ શારીરિક સંસ્કાર સે રહિત હોકર  
ભી જો કષાયોંસે રહિત હોતે હૈં વે હી કર્મક્ષપણ કરનેમ્ ગત્તિ-સમ્પન્ન  
હોતે હૈં । સચ્ચે શારીરિક સંસ્કાર સે વિહીન વે હોંગે જો ઇસ ગરીર કો  
અપવિત્ર એવઃ મલ, સ્થિર, રાધ ( પીવ ) કી થૈલી માન કર નિસ્સાર સમ-  
ઝોંગે । શારીરિક સંસ્કાર કરના યહ્ એક જાતકી કષાય હૈ । ઇસ પ્રકાર  
કે મનોભાવ કી જાગૃતિ આત્મામ્ વિના શ્રુતચારિત્ર ધર્મ કે જ્ઞાન હુએ  
નહીં હો સકતી, અતઃ ‘ ધર્મવિદઃ ’ યહ્ વિશેષણ ઇસી વાતકી પુષ્ટિ  
કરના હૈ । ધર્મકે યથાર્થ સ્વરૂપ કો જાન કર ઉસ પર શ્રદ્ધા રગ્વનેવાલા  
મનુષ્ય હી ધાર્મિક નિયમોં કો અપની આત્મામ્ ઉતારનેકી ચેષ્ટા યા  
ઉત્સાહ સે સમ્પન્ન હોતા હૈ । ધાર્મિક જ્ઞાન ભી ઉસીકી આત્મામ્ અપના  
પ્રભાવ પ્રકટ કરના હૈ ઓર વહી ‘ અમાયાવી ’ સરલ હૃદયવાલા હોતા  
હૈ । માયાવી-દુરંગી ચાલ ચલને વાલે-મનુષ્ય ધર્મકા સેવન કરતે હુએ ભી  
ઉસસે જૈસા ફલ પ્રાપ્ત ઉન્હેં હોના ચાહિયે વૈસે ફલસે સદા વંચિત હી  
રહતે હૈં । યહી વાત સૂત્રકારને “ ઋજવઃ ” ઇસ પદસે સ્પષ્ટ કી હૈ ।

ક્યોં છે. જો કે અસાતા-અશુભ કર્મ-નો તીવ્ર ઉદય હોવાથી તે તેવા પ્રકારની  
સામગ્રીથી રહિત છે તો પણ તે તેવા પ્રકારના કષાયથી રહિત નથી, માટે શારી-  
રિક સંસ્કારથી રહિત થઈને પણ જે કષાયોથી રહિત થાય છે તે જ કર્મક્ષપણ  
કરવામાં શક્તિસંપન્ન થાય છે. સાચા શારીરિક સંસ્કારથી દૂર તેજ થશે જે આ  
શરીરને અપવિત્ર અને મળ, લોહી, રસની થેલી માનીને નિસ્સાર સમજશે.  
શારીરિક સંસ્કાર કરવો તે પણ એક જાતનો કષાય છે. આ પ્રકારના મનોભાવની  
જાગૃતિ આત્મામાં શ્રુતચારિત્ર ધર્મનું જ્ઞાન થયા વગર થતી નથી માટે ‘ ધર્મ-  
વિદઃ ’ આ વિશેષણ આ વાતની પુષ્ટિ કરે છે. ધર્મના યથાર્થ સ્વરૂપને જાણીને  
તેના ઉપર શ્રદ્ધા રાખવાવાળા મનુષ્ય જ ધાર્મિક નિયમોને પોતાના આત્મામાં  
ઉતારવાની ચેષ્ટા અને ઉત્સાહ રાખે છે. ધાર્મિક જ્ઞાન પણ તેના જ આત્મામાં  
પોતાનો પ્રભાવ પાડે છે, અને તે જ ‘ અમાયાવી ’ ગ્રણ હૃદયવાળો હોય છે.  
માયાવી—માયા-કપટથી આલવાવાળો—મનુષ્ય ભલે તે ધર્મનું સેવન કરતો હોય  
તો પણ જેવું કળ તેને મળવું જોઈએ તેના કળથી તે સદા વંચિત જ રહે છે.  
આ વાતનું સ્પષ્ટીકરણ સૂત્રકારે “ ઋજવઃ ” આ પદથી કર્યું છે.

આરમ્ભજમ્=કૃષિવાણિજ્યાદિસકલસાવધવ્યાપાર આરમ્ભઃ, તસ્માજ્ઞાતમ્, इति  
 જ્ઞાત્વા=‘આરમ્ભે કૃતે સતિ પ્રાણિનાં દુઃખમુત્પદ્યતે’ इति વિદિત્વા તતો નિવૃત્તા  
 નરાઃ સર્વં કર્મ ક્ષયયન્તીત્યર્થઃ । અસ્મિન્ વિષયે શ્રદ્ધાનં વિધેયમિતિ बोधयितुमाह  
 -एवमाहुः सम्यक्त्वदर्शिन इति । सम्यक्त्वदर्शिनः=सम्यक्तत्वं प्राप्ताः केवलि-  
 प्रभृतयः, अथवा समदर्शिनः=रागद्वेषाभावेन एकेन्द्रियादिसर्वजीवे तुल्यभावेना-  
 बल्योक्तिः एवम्=उक्तरीत्या आहुः=वदन्ति । तस्मादत्र श्रद्धानं विधेयमितिभावः । २।

કુતઃ સમ્યક્ત્વદર્શિનો વદન્તીતિ જિજ્ઞાસાયમાહ-‘તે સન્વે’ इत्यादि ।

કૃષિ-લેતી, વાણિજ્ય-વ્યાપાર આદિ સાવધ કાર્યોંકા નામ આરંભ હૈ ।  
 इस आरम्भ से ही समस्त जीवों को दुःख उत्पन्न होता है और इस दुःखका  
 समस्त ही जीव अपने २ स्वानुभवरूप प्रत्यक्ष से साक्षात् अनुभव करते हैं,  
 ऐसा समझ कर जो मनुष्य उस सावध व्यापारसे निवृत्त हो जाते हैं वे ही  
 समस्त कर्मों का क्षय करते हैं । इस प्रकार के इस कथनमें भव्य प्राणियों  
 को श्रद्धा करना चाहिये । इस प्रकारकी सूचना करते हुए सूत्रकार कहते  
 हैं कि-इस प्रकार का यह कथन समकिन को प्राप्त हुए केवली आदि  
 महापुरुषोंने, अथवा जो समदर्शी हैं, समस्त जीवोंको राग द्वेष के अभाव  
 होनेसे अपने तुल्य समझते हैं-उन्होंने किया है । इस विषयमें निश्शङ्क  
 होकर दृढ़ श्रद्धा ही करनी चाहिये ॥ सू० २ ॥

સમ્યક્ત્વદર્શી કેવલી આદિ એસા ક્યોં કહતે હૈ ? इस प्रकारकी शि-  
 ष्यकी जिज्ञासा शांत करनेके लिये सूत्रकार कहते हैं-‘ते सन्वे’ इत्यादि ।

ખેતી, વ્યાપાર આદિ સાવધ કાર્યોંનું નામ આરંભ છે. આ આરંભથી જ  
 સર્વ જીવોને દુઃખ ઉત્પન્ન થાય છે, અને આ દુઃખને સર્વ જીવ પોતપોતાના  
 સ્વાનુભવરૂપ પ્રત્યક્ષથી સાક્ષાત્ અનુભવ કરે છે. એવું સમજીને જે મનુષ્ય આવા  
 સાવધ વ્યાપારથી નિવૃત્ત થઈ જાય છે તે જ સર્વ કર્મોંનો ક્ષય કરે છે. આવા  
 પ્રકારના આ કથનમાં ભવ્ય પ્રાણિઓએ શ્રદ્ધા રાખવી જોઈએ. આ પ્રકારની  
 સૂચના કરતાં સૂત્રકાર કહે છે કે-આવા પ્રકારનું આ કથન સમકિતને પ્રાપ્ત  
 થયેલાં દેવળી આદિ મહાપુરુષોએ, અથવા સમદર્શી છે, રાગદ્વેષ રહિત હોવાથી  
 સર્વ જીવોને પોતાના તુલ્ય માને છે, તેઓએ કયું છે, આ વિષયમાં નિશ્ચંક  
 થઈને દૃઢ શ્રદ્ધા જ રાખવી જોઈએ ॥ સૂ० ૨ ॥

સમ્યક્ત્વદર્શી દેવળી આદિ આ પ્રકારે કેમ કહે છે ? આ પ્રકારની  
 શિષ્યની જિજ્ઞાસાને શાન્ત કરવા માટે સૂત્રકાર કહે છે-‘તે સન્વે’ इत्यादि.

मूलम्—ते सर्वे प्रावाइया दुःखस्स कुसला परिणमुदाहरन्ति  
इय कम्म परिणाय सवसो ॥ सू० ३ ॥

छाया—ते सर्वे प्रावादिकाः दुःखस्य कुशलाः परिजामुदाहरन्ति इति कर्म  
परिजाय सर्वशः ॥ सू० ३ ॥

टीका—यतस्ते सर्वे सर्वविदः, प्रावादिकाः=प्र=प्रकर्षेण आ=धर्ममर्यादापुर-  
स्सरं वदितुं शीलं येषां ते प्रावादिनस्त एव प्रावादिकाः—यथावस्थितार्थं प्रतिबो-  
धयितुं वाग्मिन इत्यर्थः । दुःखस्य=शारीरमानसदुःखकारणस्य, कारणे कार्योपचा-  
रात् अष्टविधकर्मण इति यावत्, अपनोदने कुशलाः=प्रवीणाः सन्तः, सर्वशः=  
सर्वप्रकारैः मूलोत्तरप्रकृतिप्रकारैरित्यर्थः, कर्म परिजाय इति=अनया रीत्या परिज्ञां

वे समस्त सर्वज्ञ केवली भगवान् कि जिनका स्वभाव धार्मिक-  
मर्यादा के अनुसार ही चोलने-उपदेश देनेका है, अर्थात्-जो वाग्मी-  
यथावस्थित पदार्थका प्रतिबोधन करनेमें पटु हैं और जो शारीरिक और  
मानसिक दुःखके कारणभूत अष्टविध कर्म को नष्ट करने में कुशल हैं,  
मूल और उत्तर प्रकृति के भेदसे विविधरूप (८ और १४८) कर्म को  
जान कर जपरिज्ञा और प्रत्याख्यानपरिज्ञाके भेदसे दो प्रकार की परिज्ञाका  
प्रतिपादन करते हैं, अर्थात्-‘ज्ञ’ परिज्ञा से अष्ट प्रकार के कर्म को जान कर  
‘प्रत्याख्यान’ परिज्ञा से उस समस्त कर्मका परिहार करे, ऐसा कहते हैं।

परिज्ञा दो प्रकारकी है (१) जपरिज्ञा, (२) प्रत्याख्यानपरिज्ञा। ज्ञाता  
जपरिज्ञासे कर्मों के स्वरूपादिक को जानकर प्रत्याख्यानपरिज्ञासे-ज्ञान-  
पूर्वक त्यागसे उनके नाश करने में उद्यमशील होता है। कर्मों की मूल

ते यथा सर्वज्ञ डेवणी लागवान, જેઓનો સ્વભાવ ધાર્મિક મર્યાદા અનુસાર જ  
બોલવાનો-ઉપદેશ દેવાનો-છે, અર્થાત્ જે વાગ્મી યથાવસ્થિત પદાર્થનું પ્રતિ-  
બોધન કરવામાં કુશળ છે, અને જે શારીરિક અને માનસિક દુઃખના કારણભૂત  
આઠ પ્રકારના કર્મોનો નાશ કરવામાં કુશળ છે, મૂળ અને ઉત્તર પ્રકૃતિના ભેદથી  
વિવિધરૂપ (આઠ કર્મ અને એકસો અઠતાલીસ પ્રકૃતિરૂપ કર્મ) કર્મને જાણીને જ-  
પરિજ્ઞા અને પ્રત્યાખ્યાન-પરિજ્ઞાના ભેદથી બે પ્રકારની પરિજ્ઞાનું પ્રતિપાદન કરે છે.  
અર્થાત્-‘જ’ પરિજ્ઞાથી આઠપ્રકારના કર્મને જાણીને ‘પ્રત્યાખ્યાન’ પરિજ્ઞાથી તે  
સમસ્ત કર્મનો નાશ કરે, એમ કહે છે.

પરિજ્ઞા બે પ્રકારની છે (૧) જ-પરિજ્ઞા, (૨) પ્રત્યાખ્યાન-પરિજ્ઞા, જ્ઞાતા  
જ-પરિજ્ઞાથી કર્મોના સ્વરૂપાદિક જાણીને પ્રત્યાખ્યાન-પરિજ્ઞાથી જ્ઞાનપૂર્વક ત્યાગથી  
તેનો નાશ કરવામાં ઉદ્યમશીલ રહે છે. કર્મોની મૂળ પ્રકૃતિઓ ૮ છે, અને ઉત્તર

જપ્રત્યાગ્યાનભેદાદ્ દ્વિવિધામ્, ઉદાહરન્તિ=કથયન્તિ । જપરિજ્ઞયા અષ્ટવિધં કર્મ સર્વથા પરિજ્ઞાય, પ્રત્યાગ્યાનપરિજ્ઞયા તત્ સર્વં પરિહરેદિતિ વદન્તીત્યર્થઃ ॥૩॥

યદિ સર્વજ્ઞાઃ કર્મપરિજ્ઞામુદાહરન્તિ, તસ્માત્ કિં કર્તવ્યમ્ ? ઇતિ શિષ્યજિજ્ઞાસાયમાહ—‘ ઇહ આણાકંચી ’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્—ઇહ આણાકંચી પંડિણ અણિહે, એગમપ્પાણં સંપેહાણ ધુણે સરીરં ॥ સૂ૦ ૪ ॥

છાયા—ઇહ આજ્ઞાકાઙ્કી પંડિતઃ અસ્મિન્હઃ, એકમાત્માનં સંપ્રેક્ષ્ય ધુનીયાત્ શરીરમ્ ॥ મૂ૦ ૪ ॥

પ્રકૃતિયાં ૮ હૈં ઓર ઉત્તરપ્રકૃતિયાં ૧૪૮ હૈં । સૂત્રમેં ‘ દુઃખ ’ શબ્દ સે ડસકે કારણભૂત કર્મોં કા કારણ મેં કાર્ય કે ઉપચાર સે ગ્રહણ કિયા હૈં । કેવલી ભગવાન્ વે હૈં જો સમસ્ત જીવોં કો ધાર્મિક મર્યાદા કે અનુસાર હી હિતકા ઉપદેશ દેતે હૈં ઓર સ્વયં જો અષ્ટ કર્મોં મેં સે ચાર ઘાતિયા કર્મોં કો નષ્ટ કર ચુકે હૈં, અવશિષ્ટ ચાર અઘાતિયા કર્મોં કા નાશ કરને મેં જો લગેહુણ હૈં, શારીરિક ઓર માનસિક આધિ વ્યાધિ જિનમેં નહીં હૈં, ઓર જો યહી પ્રવચન કરતે હૈં કિ જો દુઃખસે છૂટને કી અભિલાષા રગવતે હૈં ડનકા કર્તવ્ય હૈં કિ વે પહિલે દુઃખકે કારણભૂત કર્મોં કે જ્ઞાના વને ઓર ફિર જ્ઞાનપૂર્વક ચારિત્રકે આરાધન સે ડનકા સમૂલ વિચ્છેદ કરે ॥ સૂ૦ ૩ ॥

યદિ સર્વજ્ઞ ભગવાન્ કર્મપરિજ્ઞા કા કથન કરતે હૈં તો ડસસે ભવ્ય જીવોં કા ક્યા કર્તવ્ય હૈં ? એસી શિષ્ય કી જિજ્ઞાસા હોને પર કહતે હૈં—‘ ઇહ આણાકંચી ’ ઇત્યાદિ ।

પ્રકૃતિઓ ૧૪૮ છે, સૂત્રમાં ‘ દુઃખ ’ શબ્દથી તેના કારણભૂત કર્મોંનું કારણમાં કાર્યના ઉપચારથી ગ્રહણ કરેલ છે. કેવળી ભગવાન તે છેલે સર્વ હોવાને ધાર્મિક મર્યાદા અનુસાર ૪ હિતનો ઉપદેશ આપે છે, અને પોતે આઠ કર્મમાંથી ચાર ઘાતિયા કર્મોંનો નાશ કરી ચૂક્યા છે, અવશિષ્ટ રહેલાં ચાર અઘાતિયા કર્મોંનો નાશ કરવામાં બે લાગેલ છે, શારીરિક અને માનસિક આધિ-વ્યાધિ બેઓમાં નથી, અને બેઓનું પ્રવચન આ પ્રકારનું છે કે-બે દુઃખથી છુટવાની અભિલાષા રાખે છે તેમનું કર્તવ્ય એ છે કે-પહેલાં દુઃખના કારણભૂત કર્મોંને જાણે અને પછી જ્ઞાનપૂર્વક ચારિત્રનું આરાધન કરવાથી તેનો સમૂળો નાશ કરે ॥ સૂ૦ ૩ ॥

યદિ સર્વજ્ઞ ભગવાન કર્મ પરિજ્ઞાનું કથન કરે છે તો તેથી ભવ્ય હોવાનું શું કર્તવ્ય છે ? એવી શિષ્યની હજાસા થવાથી કહે છે—‘ ઇહ આણાકંચી ’ ઇત્યાદિ.

टीका—इह=अस्मिन् मनुष्यलोके, आज्ञां=सर्वज्ञनिदेशं काङ्क्षितुं शीलमस्येति आज्ञाकाङ्क्षी सम्यक्तत्त्वस्य दृढीकरणेन पुनः पुनरार्हतागमश्रवणमननसमाराधनशीलः, अत एव पण्डितः=हेयोपादेयविवेकनिपुणः, अत एव अस्निहः=स्निह्यतीति स्निहः रागवान्, न स्निह इत्यस्निहः, स्निह इत्युपलक्षणं, तेन रागद्वेषपरहित इत्यर्थः, आत्मानम् एकं=स्वजनधनशरीरादिभ्यः पृथग्भूतं संप्रेक्ष्य=विविच्य-पर्यालोच्य शरीरं=स्वदेहं धुनीयात्=निर्ममत्वभावेन निराद्रियेत, कञ्चुके सर्प इव शरीरे ममत्वं परित्यजेदित्यर्थः। अयं भावः—स्वजनधनशरीरादिषु धनभङ्गुरत्वादिदोषदर्शनेन रागापगमो भवति। तदनन्तरमयमात्मा—एक एवास्तीति पर्यालोचयति। यथा—

इस मनुष्यलोकमें सर्वज्ञ भगवानकी एकमात्र आज्ञाके समाराधन करनेके स्वभाववाला हेयोपादेय के विवेक करनेमें निपुणमतिवाला और रागद्वेषसे विरक्तबुद्धिवाला भव्य जीव अपनी आत्माकी पर्यालोचना करके शरीर को निर्ममत्व-भावसे रखे।

शरीर में जितना अधिक ममत्व होगा उतना ही अधिक इस संसार के चक्रमें फँसेगा। 'ममेदं' भावसे शरीरकी सेवा ही आत्मकल्याण से विमुख होनेकी निशानी है, अतः सूत्रकार यहाँ पर इसी बातका उल्लेख करने हुए उपदेश देने हैं कि—हे भव्य ! तुम सर्वप्रथम समकित को दृढ़ करो। इसकी दृढ़ता होने पर तुम्हें अपने कल्याण का मार्ग अपने आप ज्ञात होने लगेगा। उस समय तुम्हारा आत्मस्वभाव शब्दादि विषयों की ओर न झुक कर प्रभुप्रतिपादित आगमके श्रवण, मनन और उसके समाराधन की ओर ही झुकेगा। उससे तुम समझ सकोगे कि हमारा

आ मनुष्यलोकमा सर्वज्ञ भगवाननी ओक मात्र आज्ञानु आराधन करवानां स्वभाववाणा, हेयोपादेयना विवेक करवानां निपुण मतिवाणा अने राग द्वेषधी विरक्त बुद्धिवाणा लव्य एव पोताना आत्मानी पर्यालोचयना करीने शरीरने निर्ममत्व लावथी राणे.

शरीरमां जेटलो अधिक ममत्व हुशे तेटलो न अधिक आ संसारना चक्रमां दशाशे. 'ममेदं' लावथी—'आ माईं छे'—ओवा लावथी शरीरनी सेवा न आत्म-कल्याणुथी विमुख थवानी निशानी छे, माटे सूत्रकार आ ठेकाछे आ बातने उल्लेख करीने उपदेश आपे छे के—हे लव्य ! तमो पड़ेलां समकितने दृढ़ करो. समकितनी दृढ़ता डोवाथी तमने तमारा कल्याणुने मार्ग आपमेणे जाणुवामां आवशे. ओवे वअते तमारो आत्मस्वभाव शब्दादि विषयानी तरङ्ग न जतां प्रभुप्रतिपादित आगमनु श्रवण मनन अने तेना आराधननी तरङ्ग न वणशे,



ઉપાદેય કયા છે અને હેય કયા છે ? હસ પ્રકાર કા પરિપક્વ-પુષ્ટ વિવેક જવ આત્મામેં સ્થિરતા ધારણ કર લેગા તવ બાહ્ય પદાર્થોં મેં જો રાગ અને દ્વેષકી ભાવના જાગૃત હો જાયા કરતી છે વહ રુક જાયગી, યહાં તક કિ જો શરીર, આત્માકા અત્યન્ત નિકટ સમ્બન્ધી છે ઉસકે પ્રતિ ભી 'મમેદં' ભાવકા સર્વથા હાસ હો જાવેગા અને 'તપ-સંયમ હી ઉપાદેય વસ્તુ છે' હસકા ભાન અચ્છી તરહ સે હોને લેગેગા ।

તાત્પર્ય હસકા યહી છે કિ કર્મ કે સ્વરૂપકો જાન કર મનુષ્ય સાંસારિક પદાર્થોં કી ઓર સે ઉપેક્ષાભાવ ધારણ કરે । હસસે મોહ કી ન્યૂનતા હોતે ૨ સમકિત કી ઉત્પત્તિ અને પુષ્ટિ હોગી । હસકી પુષ્ટિ હોને પર આર્હત પ્રવચનકે આરાધન કી ઓર હી ધ્યાન આકૃષ્ટ હોગા । હસસે હેયોપાદેય કા વિવેક જાગૃત હોકર આત્માકો પરપદાર્થોં કી ઓર રાગદ્વેષ કી પરિણતિ સે રહિત કરેગા; તવ જ્ઞાત હોગા કિ યહ આત્મા સ્વજન-સ્ત્રી-પુત્ર-મિત્રાદિકોં સે અને શરીર સે સર્વથા ભિન્ન-જુદા છે, ઉનકે સાથ હસકા કિસીભી પ્રકાર કા સમ્બન્ધ નહીં છે । ઉનકે સુધાર-બિગાડ મેં હસકા યત્કિંચિત્ ભી સુધાર-બિગાડ નહીં છે । હસ પ્રકાર કી ધારણા પરિપુષ્ટ હોને પર જ્ઞાની આત્મા જૈસે કચુક ( કાંચલી ) કો સર્પ નિર્મમત્વભાવસે છોડ દેતા છે ઉસી પ્રકાર હસ શરીર મેં 'મમત્વ' ભાવ

અને તેથી તમે સમજી શકશો કે અમારું ઉપાદેય શું છે અને હેય શું છે ? આ પ્રકારનો પરિપક્વ-પુષ્ટ વિવેક જ્યારે આત્મામાં સ્થિર થશે ત્યારે જ બહારના પદાર્થોમાં જે રાગ દ્વેષની ભાવના જાગૃત થાય છે તે રોકાઈ જશે, ત્યાં સુધી કે શરીર આત્માનું અત્યંત નિકટ સંબંધી છે તેના પ્રતિ પણ 'મમેદં' ભાવનો- 'આ મારું છે' એવા ભાવનો સર્વથા નાશ થઈ જશે, અને 'તપ સંયમ જ ઉપાદેય વસ્તુ છે' તેનું ભાન સારી રીતે થઈ જશે.

આનો અભિપ્રાય એ છે-મનુષ્યનું કર્તવ્ય છે કે તે સાંસારિક પદાર્થો પ્રતિ ઉપેક્ષાભાવ ધારણ કરે. આથી મોહની અલ્પતા થતાં થતાં સમકિતની ઉત્પત્તિ અને પુષ્ટિ થશે. સમકિતની પુષ્ટિ થતાં જ આર્હત પ્રવચનનું આરાધન કરવાની તરફ ધ્યાન દોરાશે, અને તેથી હેયોપાદેયનો વિવેક જાગૃત થઈ આત્માને પરપદાર્થોની તરફ રાગદ્વેષપરિણતિરહિત કરશે, ત્યારે ભાન થશે કે આ આત્મા સ્વજન સ્ત્રી પુત્ર મિત્રાદિકોથી અને શરીરથી સર્વથા જુદો છે, તેની સાથે આત્માનો કોઈ પ્રકારનો સંબંધ નથી. તેમના સુધરવા બગડવામાં તેનો એટલે આત્માનો જરા પણ સુધારો-બગાડો નથી. આ પ્રકારની ધારણા પાકી થવાથી સાપ જેમ કાંચળીને મમતા વગર છોડી દે છે તે રીતે જ તે જ્ઞાની

“ કાયઃ સંનિહિતાપાયઃ, સંપદઃ પદમાપદામ્ ।  
સમાગમા સાપગમાઃ, સર્વમુત્પાદિ ભંગુરમ્ ॥ ૧ ॥  
નાયમત્યન્તસંવાસઃ, કસ્યચિત્ કેનચિત્ સહ ।  
અપિ સ્વેન શરીરેણ, કિમુતાન્યૈઃ પૃથગ્જનૈઃ ॥ ૨ ॥

કા પરિત્યાગ કરતા હૈ । વહ જાનતા હૈ કિ ઇન સ્વજન ધન ઓર શરી-  
રાદિકોં કે સાથ જો ઇસ જ્ઞાતા દ્રષ્ટા આત્મા કા સમ્બન્ધ હુઆ હૈ વહ  
કેવલ સંયોગમાત્ર હૈ । સંયોગસમ્બન્ધવાલોં કા વિયોગ અવશ્યંભાવી  
હૈ । જ્ઞાન ઓર આત્મા કા જિસ પ્રકાર તાદાત્મ્યસમ્બન્ધ હૈ ઉસ પ્રકાર  
કા સમ્બન્ધ ઇસકે સાથ ઇનકા નહીં હૈ, અતઃ ઇનકા યહ સંયોગ ક્ષણભં-  
ગુર હૈ, ઓર આત્મા કા સ્વભાવ શાશ્વત હૈ, ફિર ક્ષણિક પદાર્થોંકે સાથ  
રાગ કરનેસે લાભ હી ક્યા હૈ ? । ઇસ પ્રકારકે વિવેકપૂર્ણ સદ્વિચારોં સે  
જવ ડનકે પ્રતિ ડસકી દૃષ્ટિ રાગરહિત હોતી હૈ ઓર આત્મસ્વભાવકી  
ઓર વિશેષ ડન્મુખ હોતી હૈ તવ વહ વિચારતા હૈ કિ-મૈં ઇકાકી હું,  
સંસારમેં મેરા કોઈ નહીં હૈ ઓર મૈં ભી કિસીકા નહીં હું । કહા ભી હૈ-

“ કાયઃ સંનિહિતાપાયઃ, સંપદઃ પદમાપદામ્ ।  
સમાગમાઃ સાપગમાઃ, સર્વમુત્પાદિ ભંગુરમ્ ॥ ૧ ॥  
નાયમત્યન્તસંવાસઃ, કસ્યચિત્ કેનચિત્સહ ।  
અપિ સ્વેન શરીરેણ, કિમુતાન્યૈઃ પૃથગ્જનૈઃ ॥ ૨ ॥

આત્મા આ શરીરના મમત્વભાવનો ત્યાગ કરે છે. તે જાની જાણે છે કે-આ  
સ્વજન ધન અને શરીરાદિકોની સાથે જે આ જ્ઞાતા દ્રષ્ટા આત્માનો સંબંધ  
થયેલ છે તે કેવળ સંયોગમાત્ર છે. સંયોગ-સંબંધવાળાઓનો વિયોગ અવશ્ય-  
ભાવી છે. જ્ઞાન અને આત્માનો જે પ્રકારે તાદાત્મ્ય સંબંધ છે તે પ્રકારનો સંબંધ  
તેની સાથે તેનો નથી, માટે આ તેનો સંયોગ ક્ષણભંગુર છે, અને આત્માનો  
સ્વભાવ શાશ્વત છે, પછી ક્ષણિક પદાર્થોની સાથે રાગ કરવાથી લાભ જ શું છે ?,  
આવા પ્રકારના વિવેકપૂર્ણ સદ્વિચારોથી જ્યારે તેના પ્રતિ તેની દૃષ્ટિ રાગ-રહિત  
થાય છે, અને આત્મસ્વભાવની તરફ વિશેષ ડન્મુખ થાય છે ત્યારે આ રીતે  
વિચારે છે કે-હું એકલો જ છું, સંસારમાં મારું કોઈ નથી, અને હું પણ કોઈનો  
નથી. કહું પણ છે—

“ કાયઃ સંનિહિતાપાયઃ, સંપદઃ પદમાપદામ્ ।  
સમાગમાઃ સાપગમાઃ, સર્વમુત્પાદિ ભંગુરમ્ ॥ ૧ ॥  
નાયમત્યન્તસંવાસઃ, કસ્યચિત્કેનચિત્સહ ।  
અપિ સ્વેન શરીરેણ, કિમુતાન્યૈઃ પૃથગ્જનૈઃ ॥ ૨ ॥

मातापितृसहस्राणि, पुत्रदारशतानि च ।

संसारेष्वनुभूतानि, यान्ति यास्यन्ति चापरे ” ॥ ३ ॥

अपरं च—“ एकः प्रकुरुते कर्म, भुनक्त्येकश्च तत्फलम् ।

जायते म्रियते चैक,—एको याति भवान्तरम् ” ॥ ४ ॥

अन्यच्च —“ सदैकोऽहं न मे कश्चित्, नाहमन्यस्य कस्यचित् ।

न तं पश्यामि यस्याहं, नासौ भावीति यो मम ” ॥ ५ ॥

किंच —“ न खलु विघटिताः पुनर्घटन्ते,

न च घटिताः स्थिरसंगतं श्रयन्ते ।

पिपतिपुमवशं रुजन्ति वज्याः

तदतरुमाप इवाऽऽपगागणस्य ” ॥ ६ ॥ इति ।

तस्मात् म्रजनधनगरीरादिषु ममत्वं परिवर्जयेदिति ॥ सू० ४ ॥

मातापितृसहस्राणि, पुत्रदारशतानि च ।

संसारेष्वनुभूतानि, यान्ति यास्यन्ति चापरे ” ॥ ३ ॥ इति ।

तथा “ एकः प्रकुरुते कर्म, भुनक्त्येकश्च तत्फलम् ।

जायते म्रियते चैक,—एको याति भवान्तरम् ” ॥ ४ ॥

सदैकोऽहं न मे कश्चित्, नाहमन्यस्य कस्यचित् ।

न तं पश्यामि यस्याहं, नासौ भावीति यो मम ” ॥ ५ ॥

न खलु विघटिताः पुनर्घटन्ते,

न च घटिताः स्थिरसंगतं श्रयन्ते ।

पिपतिपुमवशं रुजन्ति वज्याः,

तदतरुमाप इवापगागणस्य ” ॥ ६ ॥ इति ।

मातापितृसहस्राणि, पुत्रदारशतानि च ।

संसारेष्वनुभूतानि, यान्ति यास्यन्ति चापरे ” ॥ ३ ॥ इति ।

तथा—“ एकः प्रकुरुते कर्म, भुनक्त्येकश्च तत्फलम् ।

जायते म्रियते चैक,—एको याति भवान्तरम् ” ॥ ४ ॥

सदैकोऽहं न मे कश्चित्, नाहमन्यस्य कस्यचित् ।

न तं पश्यामि यस्याहं, नासौ भावीति यो मम ” ॥ ५ ॥

न खलु विघटिताः पुनर्घटन्ते,

न च घटिताः स्थिरसंगतं श्रयन्ते ।

पिपतिपुमवशं रुजन्ति वज्याः,

तदतरुमाप इवाऽऽपगागणस्य ” ॥ ६ ॥ इति ।

યહ શરીર જો મુજે પ્રાપ્ત હુઆ હૈં ઉસકા પતન અવશ્યંભાવી હૈં । સંપત્તિ અનેક વિપત્તિયોં કી જનની હૈં । ઇષ્ટમિત્રાદિકોં કા સમાગમ ધ્રુવ નહીં હૈં । સવ પદાર્થ ઉત્પત્તિ ઓર વિનાશ રવંભાવવાલે હૈં ॥ ૧ ॥ યહાં પર કિસી કા કિસી કે સાથ નિવાસ સ્થિર નહીં હૈં । દૂસરોં કી તો વાત હી કયા કરની ? અરે ! ઇસ શરીર કે સાથ મી તો આત્માકા સમ્બન્ધ સ્થિર નહીં હૈં ॥ ૨ ॥ ઇસ અનન્ત સંસારમેં જો મેરે હજારોં માતા-પિતા હો ગયેવે દૂસરે હી થે, અમી જો હૈં વે દૂસરે હી હૈં; આગે જો હોંગે વે મી દૂસરે હી હોંગે ॥ ૩ ॥ ફિર મી કહા હૈં—

યહાં પર જીવ અકેલા હી શુભાશુભ કર્મોંકા કર્તા હૈં ઓર અકેલા હી શુભાશુભ ફલોંકા મોક્તા હૈં । યહ અકેલા હી મરતા હૈં ઓર અકેલા હી મવાન્તરમેં જાતા હૈં ॥ ૪ ॥

મેં સદા અકેલા હૂં, ન મેરા કોઈ હૈં ઓર ન મેં કિસીકા હૂં । મેં જિનકા હૂં એસે અપને પિતા-પિતામહાદિકોં કો આજ નહીં દેગ્વ રહા હૂં, ક્યોં કિ વે કાલકવલિત હો ગયે । ઓર એસા મી કોઈ નહીં હોગા જિસકા મેં હોઝ । અર્થાત્-મેરે કાલકવલિત હો જાને પર મેં મી અપને પુત્રાદિકોં કા નહીં રહૂંગા ॥ ૫ ॥ જો ઇસ સંસારસે પરલોકવાસી હો ગયે હૈં વે અવ મિલનેકે

આ શરીર જે મને પ્રાપ્ત થયેલ છે, તેનો નાશ જરૂર છે. સંપત્તિ અનેક વિપત્તિઓની માતા છે. ઇષ્ટ મિત્રોનો સમાગમ પણ ધ્રુવ નથી. જે ઉત્પત્તિશીલ પદાર્થો છે તે બધા ધણુલંગુર છે. (૧) અહીંઆ કંઈનો કંઈની સાથે નિવાસ સ્થિર નથી. બીજાની તો વાત જ શી કરવી ? અરે ! આ શરીરની સાથે આત્માનો સંબંધ પણ સ્થિર નથી. (૨) આ અનંત સંસારમાં જે મારા હજારો માતા પિતા અને સેંકડો પુત્રો અને સ્ત્રિઓ થઈ ગયા તે બીજા જ હતા; અને જે અત્યાદે છે તે પણ બીજા જ છે, અને જે આગળ થશે તે પણ બીજા જ થશે. ॥૩॥ વળી પણ કહ્યું છે—

અહીં જીવ એકલો જ શુભાશુભ કર્મોંનો કર્તા છે, અને એકલો જ શુભાશુભ ફળોંનો ભોક્તા છે. તે એકલો જ મરે છે અને એકલો જ ભવાન્તરમાં જાય છે. (૪)

હમેશાં હું એકલો છું, મારો કોઈ નથી, તેમ જ હું પણ કંઈનો નથી. જેનો હું છું એવા પોતાના બાપ દાદાઓને આજે હું જોતો નથી, કેમ કે-તે બધા કાળકવણિત થઈ ગયા, અને એવો પણ કોઈ નહિ થશે જેનો હું થાઉં, અર્થાત્-મારું શરીર છુટ્યા પછી હું પણ પોતાના પુત્રાદિકોંનો રહીશ નહિ (૫) જે આ સંસારથી પરલોકવાસી થયા છે તે હવે મળવાનાં નથી, જે હાલ

કિંચ—કસેહિ અપ્પાણં ' ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્—કસેહિ અપ્પાણં જરેહિ અપ્પાણં ॥ સૂ૦ ૫ ॥

છાયા—કૃશં કુરુ આત્માનં જારય આત્માનમ્ ॥ મૂ૦ ૫ ॥

ટીકા—આત્માનં=શરીરમ્, ઇહ આત્મશબ્દઃ શરીરવાર્તી ગૃહ્યતે; કૃશં કુરુ=તપશ્ચરણાદિના શરીરશોષણે પ્રવૃત્તો ભવેદિત્યર્થઃ । તથા—આત્માનં=શરીરં જારય=જીર્ણં કુરુ, તપશ્ચરણેન તથા કુરુ યથા જરાજીર્ણમિવ ભવેદિત્યર્થઃ । શુશ્રૂષાવિભૂષાપરિ-દારેણ શરીરસ્ય નિઃસારતામાપાદય, સ્વદેહં નિર્વલં રૂક્ષં ચ કુરુણ્વેતિ ભાવઃ ॥મૂ૦ ૫॥

નહીં; જો અમી સાથમેં રહ રહે હૈં વે મી સદા સાથ રહનેકે નહીં । જિસ પ્રકાર નદિયોં કે તટ પર खड़े हुए वृक्षोंको उनका जल उखाड़ कर फेंक देता है उसी प्रकार मेरे ये स्वजनादिक मुझे हर तरह से आत्मस्वरूप से उखाड़ देनेकी कोशिश में लगे हुए हैं ॥ ६ ॥

इसलिये मनुष्यको चाहिये कि इन संयोगी पदार्थों से समत्वरहित होकर आत्मकल्याणके मार्गका पथिक बने ॥ सू० ४ ॥

भगवान् अपनी दिव्यदेशनामें भव्य जीवोंको समझाते हुए कहते हैं—  
' कसेहि अप्पाणं ' इत्यादि ।

हे भव्य ! तू इस शरीरका तपस्या आदि शुभ साधनों के द्वारा शोषण कर, तथा तपस्या भी ऐसी कर कि जिससे यह शरीर जरा-वृद्धावस्था से जीर्ण हुए के समान हो जावे ।

शरीरके प्रति ममता रख कर उसकी सेवा शुश्रूषा और विभूषा आदि न कर; किन्तु तपश्चर्या के द्वारा इसे निर्वल और रूक्ष बना ॥मૂ० ५॥

સાથે રહે છે તે પણ હમેશાં સાથે રહેનાર નથી. જેવી રીતે નદીના કિનારા ઉપરના વૃક્ષોને તેનુ પાણી ઉખાડીને ફેંકી દે છે તેવી જ રીતે મારા આ સ્વજનાદિકે મને કોઈ પ્રકારે આત્મ સ્વરૂપથી ઉખાડી દેવાની કોશિશમાં લાગેલાં છે. (૬)

માટે મનુષ્યેને સમજવું જોઈએ કે—આ સંયોગી પદાર્થોથી મમત્વ-રહિત થઈને આત્મકલ્યાણના માર્ગમાં આગળ વધે. ॥ સૂ૦ ૪ ॥

ભગવાન પોતાની દિવ્યદેશનામાં ભવ્ય જીવોને સમજાવતાં કહે છે—  
' કસેહિ અપ્પાણં ' ઇત્યાદિ.

હે ભવ્ય ! તું આ શરીરનું તપ આદિ શુભસાધનદ્વારા શોષણ કર, અને તપ પણ એવી રીતે કર કે જેથી તારૂં આ શરીર જરા-વૃદ્ધાવસ્થાથી છુટી જાય. શરીર પ્રતિ મમતા રાખીને તેની સેવા શુશ્રૂષા અને વિભૂષા આદિ ન કર, કિન્તુ તપશ્ચર્યાદ્વારા તેને નિર્બળ અને રૂક્ષ બનાવ. ॥ સૂ૦ ૫ ॥

કિમર્થમ્ इत्येतदिति जिज्ञासायामाह---‘जहा जुन्नाइं’ इत्यादि ।

મૂલમ્—જહા જુન્નાઈં કઢાઈં હવવાહો પમત્થઈ, એવં અત્તસ-  
માહિણ અણિહે ॥ સૂ૦ ૬ ॥

છાયા—યથા જીર્ણાનિ કાષ્ઠાનિ હવ્યવાદ્ પ્રમથ્નાતિ, એવમ્ આત્મસમાહિતઃ  
અસ્નિહઃ ॥ સૂ૦ ૬ ॥

ટીકા—યથા હવ્યવાદ્=અગ્નિઃ, જીર્ણાનિ=અસારાણિ શુષ્કાણિ, કાષ્ઠાનિ પ્રમ-  
થ્નાતિ=ત્વરિતં ભસ્મસાત્ કરોતિ, એવમ્=અનેન પ્રકારેણ અસ્નિહઃ=શબ્દાદિવિષય-  
યેષુ રાગરહિતઃ સન્, શરીરાદૌ નિર્મમો ભૂત્વા, इति ફલિતાર્થઃ; આત્મસમાહિતઃ=  
આત્મનિ=આત્મનઃ શુભપરિણામે સમ્યગ્દર્શનાદૌ સમાહિતઃ=સાવધાનઃ આત્મનિષ્ઠ  
इत्यર્થઃ, અતએવ-અસ્નિહઃ શબ્દાદિવિષયેષુ રાગરહિતઃ સન્ જ્ઞાનાવરણીયાદ્યષ્ટવિધ-  
કર્મકાષ્ઠાનિ પ્રમથ્નાતીત્યર્થઃ ॥ સૂ૦ ૬ ॥

इस प्रकार शरीरको निर्धूल और रुक्ष करनेकी आवश्यकता क्यों  
है ? इसको कहते हैं—‘ जहा जुन्नाइं ’ इत्यादि ।

जिस प्रकार शुष्क काष्ठको अग्नि शीघ्र भस्म कर देती है उसी  
प्रकार शब्दादि विषयों में निर्मम होकर केवल आत्माके शुभपरिणाम-  
रूप समकित आदिमें सावधान-आत्मनिष्ठ हुआ मनुष्य ज्ञानावरणी-  
यादिक अष्ट प्रकारके कर्मरूप काष्ठको जला देता है—नष्ट कर देता है ।

शरीरमें जब तक ममत्वभाव रहता है तब तक यथावत् तपश्चर्यादिक  
साधनों का अनुष्ठान नहीं हो सकता है, अतः यथावत् तपश्चर्यादिक  
अनुष्ठानों को करने के लिये शरीरमें निर्ममत्व भावकी जागृति अवश्य  
आवश्यक है । ऐसा होने पर यथावत् अनुष्ठित तपश्चर्यादिक साधनों  
से कर्मों का नाश अवश्यभावी है ॥ सू० ६ ॥

આ પ્રકારે શરીરને નિર્જળ અને રૂક્ષ બનાવવાની આવશ્યકતા શા માટે ?  
તો કહે છે—‘ જહા જુન્નાઈં ’ ઇત્યાદિ.

જેમ સુકા લાકડાને અગ્નિ જલ્દી બાળી નાંખે છે તેમ શબ્દાદિ વિષયોમાં  
મમતા વગર થઈને રૂક્ષ આત્માના શુભપરિણામરૂપ સમકિત આદિમાં સાવ-  
ધાન-આત્મનિષ્ઠ થયેલો મનુષ્ય જ્ઞાનાવરણીયાદિક આઠ પ્રકારના કર્મરૂપ કાષ્ઠોને  
બાળી નાંખે છે—નાશ કરે છે.

શરીરમાં જ્યાં સુધી મમતાભાવ રહે છે ત્યાં સુધી બરોબર રીતે તપશ્ચર્યા-  
દિક સાધનાનું અનુષ્ઠાન બનતું નથી, માટે બરોબર રીતે તપશ્ચર્યાદિક અનુષ્ઠાનોને  
કરવા શરીરમાં નિર્મમત્વ ભાવની જાગૃતિની ખાસ જરૂર છે. આમ થવાથી સરખી  
રીતે અનુષ્ઠિત તપશ્ચર્યાદિક સાધનોદ્વારા કર્મોનો અવશ્ય નાશ થાય છે. ॥ સૂ૦ ૬ ॥



ઉક્તરીત્યા રાગનિવૃત્તિ પ્રદર્શ્ય દ્વેષનિવૃત્તિમાહ—‘વિગિંચ કોહં’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્—વિગિંચ કોહં અવિકંપમાણેઽમં નિરુદ્ધાઉયં સંપેહાણ ॥૭॥

છાયા—વેવિક્ષ્વ ક્રોધમ્ અવિકમ્પમાનઃ ઇમં નિરુદ્ધાયુષ્કં સંપ્રેક્ષ્ય ॥ મૂ૦ ૭ ॥

ટીકા—ઇમં=મનુષ્યલોકં, નિરુદ્ધાયુષ્કમ્=અવર્ધિતાયુષ્કં સંપ્રેક્ષ્ય=પર્યાલોચ્ય, અવિકમ્પમાનઃ ક્રોધજનિતકમ્પરહિતઃ પ્રશમગુણસમન્વિતઃ સન્નિત્યર્થઃ, ક્રોધમ્-પ્રજ્વલનરૂપાતિક્રૂરાધ્યવસાયઃ ક્રોધસ્તં વેવિક્ષ્વ=પરિત્યજ, ક્રોધમિતિપદં સકલક-પાયોપલક્ષણમ્ ॥ મૂ૦ ૭ ॥

પૂર્વોક્ત રીતિસે રાગકી નિવૃત્તિ પ્રકટ કર અવ દ્વેષકી નિવૃત્તિ કહતે હૈં । ‘વિગિંચ કોહં’ ઇત્યાદિ ।

ઇસ મનુષ્યલોકકો અવર્ધિત-નિયમિત આયુવાલા જાન ક્રોધસે ઉત્પન્ન હુણ વિકાર-પરિણામસે રહિત હોકર અર્થાત્ પ્રશમગુણસમ્પન્ન હોકર આત્માકો જલારેવાલે ક્રૂર અધ્યવસાયસ્વરૂપ ઇમ ક્રોધકા, ઉપલક્ષણસે-માન, માયા ઓર લોભકા ખી ત્યાગ કર ।

તાત્પર્ય યહ હૈ કિ જિસ પ્રકાર રાગભાવ ત્યાજ્ય હૈં ઉસી પ્રકાર દ્વેષભાવ ખી ત્યાજ્ય હૈ, અતઃ જવ કિસી ખી સચેતન, અચેતન વસ્તુ પર દ્વેષ હોના હૈ તવ આત્મામેં ક્રોધ પૈદા હોતા હૈ; ક્રોધસે શરીરમેં કંપ કી જાગૃતિ હોતી હૈ; શારીરિક કંપ સે આત્માકે પ્રદેશોમેં ખી એક પ્રકાર કી પરિસ્પંદરૂપ ક્રિયા હોતી હૈ જિસસે ઉસ હાલતમેં અધિક શ્વાસ-ઉચ્છ્વાસ ચલને લગતે હૈં, અધિક શ્વાસોચ્છ્વાસોં કે ચલને સે આયુકર્મ કે અવિભાગી પ્રતિછેદો-વિભાગો-કા હાસ હોતા હૈ, ઓર ઇસ તરહસે અકાલમેં હી આયુ-

પૂર્વોક્ત રીતિથી રાગની નિવૃત્તિ પ્રગટ કરી, હવે દ્વેષની નિવૃત્તિ કહે છે—‘વિગિંચ કોહં’ ઇત્યાદિ.

આ મનુષ્યલોકને અવર્ધિત-નિયમિત આયુવાળો બાણીને ક્રોધથી ઉત્પન્ન થયેલ વિકારપરિણામથી રહિત થઈ અર્થાત્ પ્રશમગુણસંપન્ન થઈ આત્માને બાળવાવાળા ક્રૂરઅધ્યવસાયસ્વરૂપ આ ક્રોધનો, ઉપલક્ષણથી માન માયા અને લોભનો ત્યાગ કર તાત્પર્ય એ છે કે-જે પ્રકારે રાગભાવ ત્યાજ્ય છે તે પ્રકારે દ્વેષભાવ પણ ત્યાજ્ય છે, માટે જ્યારે કોઈ પણ સચેત-અચેત વસ્તુ ઉપર દ્વેષ થાય છે ત્યારે આત્મામાં ક્રોધ પૈદા થાય છે. ક્રોધથી શરીર ધ્રુજવા માડે છે. શરીરના ધ્રુજવાથી આત્માના પ્રદેશોમાં પણ એક પ્રકારની પરિસ્પંદરૂપ ક્રિયા થાય છે જેથી તેની હાલમાં અધિક શ્વાસ-ઉચ્છ્વાસ ચાલવા લાગે છે, અધિક શ્વાસોચ્છ્વાસોના ચાલવાથી આયુકર્મના અવિભાજ્ય પ્રતિછેદો-વિભાગો-નો હાસ

કિંચ—‘ દુઃસ્વં ચ જાણ ’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્—દુઃસ્વં ચ જાણ અદુ આગમેસ્સં, પુઠ્ઠો ફાસાઈં ચ ફાસે, લોયં ચ પાસ વિફંદમાણં ॥ સૂ૦ ૮ ॥

છાયા—દુઃસ્વં ચ જાનીહિ અથ આગમિ, પૃથક્ સ્પર્શાન્ ચ સ્પૃશેત્, લોકં ચ પશ્ય વિસ્પન્દમાનમ્ ॥ મૃ૦ ૮ ॥

ટીકા—ક્રોધાદિવશાત્ ત્રિકરણત્રિયોગૈઃ પ્રાણાતિપાતાદિકરણે સમુત્પદ્યમાનં કર્મ કી સ્થિતિ પૂર્ણ હો જાતી હૈ, અનઃ ભગવાન્ કા કથન હૈ કિ કષાય-રૂપ ક્રોધ કરતે સમય ઇસ વાતકા પ્રત્યેક આત્મહિતૈષી જીવકો વિચાર કરના चाहिये कि जिस प्रकार घड़ी की चावी उसके नीचे चलते हुए गोले को अधिक-बारंबार घुमानेसे असमयमें ग्वाली हो जाती है उसी प्रकार कषायादि करने से आयुर्कर्म की स्थिति भी असमयमें खिर जाती है । आयुर्कर्म की निर्जरा नो होती है परन्तु बद्ध आयु में उत्कर्षण ( अधिकता ) नहीं होता । जिस प्रकार जीव सात कर्मों को प्रत्येक समय बांधता और निर्जीर्ण करता है उस प्रकार आयुर्कर्म को नहीं बांधता । जितनी कुछ आयुर्कर्म की स्थिति बंध चुकी वह उतनी ही रहेगी, उसमें फिर वृद्धि नहीं हो सकती । हां ! बाह्य निमित्तों को लेकर उसमें अप-कर्षण ( ह्रास ) जरूर होता है ॥ म० ७ ॥

फिर भगवान कहते हैं—‘ दुःस्वं च जाण ’ इत्यादि ।

यह निश्चित है कि—क्रोधादिक कषायके आधीन होकर जब जीव

થાય છે, અને આવી રીતે અકાળે આયુકર્મની સ્થિતિ પૂર્ણ થઈ જાય છે, માટે ભગ-વાનનું કથન છે કે—કષાયરૂપ ક્રોધ કરતી વખતે પ્રત્યેક આત્મહિતૈષી જીવને વિચાર કરવો જોઈએ કે જેમ ઘડીયાળની આવી તેની નીચે ચાલતા લોલકને વારંવાર અધિક ઘુમાવવાથી અસમયમાં ખાલી થઈ જાય છે, તેમ કષાયાદિ કરવાથી આયુ-કર્મની સ્થિતિ પણ અસમયમાં ખલાસ થઈ જાય છે. આયુ કર્મની નિર્જરા તો થાય છે પણ બદ્ધ-બાંધેલા આયુમાં ઉત્કર્ષણ ( અધિકપણ ) નથી હોતું. જેવી રીતે જીવ સાત કર્મોને પ્રત્યેક સમય બાંધે છે, અને તેની નિર્જરા કરે છે, તેવી રીતે આયુકર્મને નથી બાંધતો. જેટલી પણ આયુકર્મની સ્થિતિ બાંધાયેલી છે તે તેટલી જ રહેશે. તેમાં વધારો થઈ શકતો નથી. હાં, બાહ્ય નિમિત્તો લઈને તેમાં અપકર્ષણ ( હ્રાસ ) અવશ્ય થાય છે ॥ સૂ૦ ૭ ॥

વળી ભગવાન કહે છે—‘ દુઃસ્વં ચ જાણ ’ ઇત્યાદિ.

એ નિશ્ચિત છે કે—ક્રોધાદિક કષાયને આધીન થઈ જ્યારે જીવ કરવું,

પ્રાણિનાં દુઃખં જાનીહિ, યદ્વા-ક્રોધાદિના પ્રજ્વલિતાત્મનો યન્માનસં દુઃખમુપજા-  
યતે તજ્જાનીહિ । અથ-આગામિ=ક્રોધજનિતકર્મવિપાકોદયાજ્જાયમાનમનાગતકા-  
લિકં દુઃખં ચ જાનીહિ । આગામિનો દુઃખસ્ય પ્રાપ્તિસ્થાનમાહ-‘પૃથક્’ ઇત્યાદિ ।  
પૃથક્=અન્યત્ર નરકનિગોદાદૌ સ્પર્શાન્-દુઃખાનિ ચ ક્રોધી સ્પૃશેત્=અનુભવેત્ ।  
અત્ર ચકારઃ સમુચ્ચયાર્થઃ, ક્રોધપ્રજ્વલિતાત્મનો ન કેવલં વર્તમાનકાલિક એવ મનસ્તાપઃ  
કિંતુ ભવિષ્યત્કાલેઽપિ નરકાદૌ ક્રોધજનિતકર્મફલભૂતં દુઃખં ભવતીત્યર્થઃ । મોક્ષ-

करना कराना और अनुमोदना, इन तीन करणों से, एवं मन, वचन  
तथा काय से दूसरे जीवों की हिंसादिक करने में प्रवृत्त होता है तब उन  
प्राणियों को दुःख अवश्य उत्पन्न होता है । अथवा-क्रोधादि कषाय से  
आत्मा जब संतप्त हो जाता है तब उसके लिये अवश्य मानसिक कष्ट  
होता है । तथा क्रोध कषाय करते समय जीव जिन कर्मों का बंध करता  
है और जब वे तीव्र अनुभागरूपसे उदयमें आते हैं तब उनका फल  
दुःखरूप ही होता है । इस फलकी प्राप्ति जीवको नरकनिगोदादि गतियों  
में वहां के अनंत कष्टों को भोगने के रूपमें होती है ।

यहां पर ‘चकार’ समुच्चय अर्थ को प्रकट करता है, अर्थात्-  
क्रोधसे संतप्त आत्मा केवल वर्तमानकालमें (उसी भवमें) ही मनस्ताप-  
रूप दुःखको नहीं भोगता है; किन्तु आगामी कालमें (परभवमें) भी  
नरकादि गतियों में उस क्रोधसे जनित कर्मके फलरूप दुःखका अनुभव  
करता है, इसलिये क्रोधादिक कषायों को छोड़ कर मोक्ष मार्ग में प्रवृत्ति

કરાવવું, અને અનુમોદવું, આ ત્રણ કારણોથી, અને મન, વચન, કાયાથી ખીન્ન  
જીવોની હિંસા આદિ કરવામાં પ્રવૃત્ત થાય છે ત્યારે આ પ્રાણીયોને દુઃખ અવશ્ય  
થાય છે. અથવા-ક્રોધાદિ કષાયથી આત્મા જ્યારે સંતપ્ત થઈ જાય છે ત્યારે તેને  
માટે માનસિક કષ્ટ અવશ્ય થાય છે. તથા ક્રોધકષાય કરતી વખતે જીવ જે  
કર્મોનો બંધ કરે છે, અને જ્યારે તે તીવ્ર અનુભાગરૂપથી ઉદયમાં આવે છે  
ત્યારે તેનું જીવ દુઃખરૂપ જ થાય છે. આ જીવની પ્રાપ્તિ જીવને નરકનિગોદાદિ  
ગતિઓમાં ત્યાંના અનંત કષ્ટોના ભોગવવારૂપે થાય છે.

આ ઠેકાણે ‘ચકાર’ સમુચ્ચય અર્થને પ્રગટ કરે છે, અર્થાત્-ક્રોધથી સંતપ્ત  
આત્મા કેવળ વર્તમાનકાળમાં (આ ભવમાં જ) મનસ્તાપરૂપી દુઃખને ભોગવતો  
નથી; પરંતુ આગામી કાળમાં (પરભવમાં) પણ નરકાદિ ગતિઓમાં તે ક્રોધથી  
ઉત્પન્ન થયેલાં કર્મના જીવરૂપ દુઃખનો અનુભવ કરે છે, માટે ક્રોધાદિકષાયોને

मार्गे प्रवर्तयितुमाह—‘लोकं च’ इत्यादि । विस्पन्दमानं=दुःखागमभयात् कम्प-  
मानं लोकं=जीवनिकायं पश्य. प्रशमसमन्वितः सन् दुःखभयात्कम्पमानं जीवलोकं  
दयादृष्ट्याऽवलोकयेत्यर्थः ॥ सू० ८ ॥

कराने के लिये सूत्रकार कहते हैं कि—हे भव्य ! दुःखकी प्राप्ति के भयसे  
कंपायमान इस षड्जीवनिकाय को तूं देख, अर्थात् प्रशमभाव से युक्त  
होकर दुःखके भयसे त्रस्त जीवलोक को सदा तूं दयादृष्टिसे देख ।

बन्ध चार प्रकारका है—प्रकृतिबन्ध, स्थितिबन्ध, अनुभागबन्ध  
और प्रदेशबन्ध । इनमें योगसे प्रकृतिबन्ध और प्रदेशबन्ध होते हैं ।  
कषायसे स्थितिबन्ध और अनुभागबन्ध होते हैं । रंगका काम कपड़ेको  
रंगने का है परन्तु हर्ग और फिटकरी के समागमसे जिस प्रकार वह  
रंग कपड़े पर गहरा हो जाता है उसी प्रकार कषाय की अल्पता और  
अधिकता कर्मोंके स्थितिबन्ध और अनुभागबन्धकी अल्पता और अधि-  
कता में कारण होती है, अत एव कषाय यदि तीव्र होगी, तो कर्मों का  
तीव्र स्थितिबन्ध और अनुभागबन्ध होगा । कषाय मध्यमांशवाली होगी  
तो उनका मध्यमांश बंध होगा । बुद्धिपूर्वक प्राणातिपातादि सावद्य  
व्यापार करते समय जीवको अनन्तानुबन्धी क्रोधकषाय का तीव्रतम  
अंश होता है, ऐसी हालतमें जीवको जो कर्मों का बंध होगा वह  
तीव्रतम स्थिति और अनुभागबंध को ही लेकर होगा । ऐसी हालतमें

छोड़ीने मोक्षमार्गमां प्रवृत्ति कशववा सूत्रकार कडे છે કે-હે ભવ્ય ! દુઃખના  
ભયથી કંપાયમાન આ ષડ્જીવનિકાયને તું દેખ, અર્થાત્-પ્રશમભાવથી યુક્ત  
થઈ દુઃખના ભયથી ત્રાસેલા જીવલોકને સદા તું દયાદૃષ્ટિથી દેખ.

બંધ ચાર પ્રકારના છે-પ્રકૃતિબંધ, સ્થિતિબંધ, અનુભાગબંધ અને પ્રદે-  
શબંધ. આમાં યોગથી પ્રકૃતિબંધ અને પ્રદેશબંધ થાય છે. કષાયથી સ્થિતિબંધ  
અને અનુભાગબંધ થાય છે. રંગનું કામ કપડાને રંગવાનું છે પરંતુ હરડાં  
અને ફટકડીથી જે પ્રકારે તે રંગ વધારે ગાઢો થાય છે તે પ્રકારે કષાયની અલ્પતા  
અને અધિકતા કર્મોના સ્થિતિબંધ અને અનુભાગબંધની અલ્પતા અને અધિકતામાં  
કારણ થાય છે, માટે કષાય જે તીવ્ર હશે તો કર્મોના સ્થિતિબંધ અને અનુભાગબંધ  
તીવ્ર થશે. કષાય મધ્યમાંશવાળો હશે તો કર્મોના સ્થિતિબંધ અને અનુભાગબંધ  
મધ્યમ થશે. બુદ્ધિપૂર્વક પ્રાણાતિપાતાદિ સાવધ વ્યાપાર કરતી વખતે જીવને અ-  
નંતાનુબંધી ક્રોધકષાયનો તીવ્રતમ અંશ થાય છે, તેવી હાલતમાં જીવને જે તે  
સમયે કર્મોનો બંધ થશે તે તીવ્રતમ સ્થિતિબંધ અને અનુભાગબંધને જ લઈને

જવે તેના અપને અવાધાકાલ કો છોડી કર ઉદય આવેગા તવે વહ મી તીવ્રતમ સ્વપ્ને હી અપના ફલ દેગા, અતઃ જીવ યા તો હસી મવમેં તજ્જન્ય દુઃસ્વાદિકોં કા પૂર્ણ મોક્તા હોગા, ઓર યદિ અવશિષ્ટ વચેંગે તો તેના ફલ ઉસે નરકનિગોદાદિ મેં જાકર મોગના પડેગા। યહી વાત હસ સૂત્રમેં પ્રકટ કી ગઈ હૈ। ‘ચકાર’ શબ્દ જો સૂત્રમેં પડા હૈ વહ યહ મી પ્રકટ કરતા હૈ કિ—ક્રોધકષાય કે વશ હોકર પ્રાણાતિપાતાદિક મેં પ્રવૃત્તિ કરનેવાલા જીવ તજ્જન્ય દુઃસ્વ કો હસ મવમેં ઓર પરમવમેં (નરકનિગોદાદિકોં મેં) મી મોગતા હૈ।

ક્રોધકષાય સે જિસ સમય આત્મા સંતપ્ત હો જાતા હૈ ઉસ સમય ઉસ આત્મા કા મન સંતપ્ત હોતા હૈ, મનકા સંતપ્ત હોના હી ભાવહિંસા હૈ। મનકે સંતાપ સે અશુભ કર્મોં કા આસ્રવ હોતા હૈ।

અન્તમેં સૂત્રકાર ઉપસંહાર કરતે હુણ કહતે હૈં કિ જવે ક્રોધાદિક કષાયોં કે કરને સે જીવોં કો દુઃસ્વ મોગના પડતા હૈ ઓર સંસાર મેં કોઈ મી પ્રાણી દુઃસ્વ કો નહીં ચાહતા, સવ સુસ્વકે હી અમિલાષી હૈં, તો મવ્ય કા કર્તવ્ય હૈ કિ વહ હસ દુઃસ્વ કે અભાવસ્વ મોક્ષ માર્ગ મેં પ્રવૃત્તિ કરે। સંસાર મેં થોડા સા મી સુસ્વ નહીં હૈ। જિસે જીવને સુસ્વ માન રચા હૈ વહ કાલ્પનિક હૈ। આકુલતા કા જવે તક સર્વથા અન્ત નહીં હો

થશે. એવી સ્થિતિમાં ન્યારે પોતાના અબાધાકાળને છોડીને તેનો ઉદય થશે ત્યારે તે પણ તીવ્રતમરૂપથી જ પોતાનું ક્ષણ આપશે, માટે જીવ કાં તો આ લવમાં જ તજ્જન્ય દુઃખાદિકોને પૂર્ણરૂપે ભોગવશે, અને જો અવશિષ્ટ અથશે તો તેનું ક્ષણ તેણે નરક નિગોદાદિમાં જઈને ભોગવવું પડશે આ જ વાત આ સૂત્રમાં પ્રગટ કરવામાં આવી છે ‘ચકાર’ શબ્દ જે સૂત્રમાં છે, તે એમ પ્રગટ કરે છે કે—ક્રોધ-કષાયને વશ થઈ પ્રાણાતિપાતાદિકમાં પ્રવૃત્તિ કરવાવાળા જીવ તજ્જન્ય દુઃખને આ લવમાં અને પરલવમાં (નરકનિગોદાદિકોમાં) પણ ભોગવે છે.

ક્રોધ-કષાયથી જે વળતે આત્મા સંતપ્ત થઈ જાય છે, તે વળતે તે આત્માનું મન સંતપ્ત થાય છે. મનનું સંતપ્ત થવું એ જ ભાવહિંસા છે

મનના સંતાપથી અશુભ કર્મોના આસ્રવ થાય છે. અતમાં સૂત્રકાર ઉપસંહાર કરતાં કહે છે કે—ન્યારે ક્રોધાદિક કષાયો કરવાથી જીવને દુઃખ ભોગવવું પડે છે અને સંસારમાં કોઈ પણ પ્રાણી દુઃખને નથી ચાહતો, બધા સુખના જ અભિલાષી છે, ત્યારે લવ્ય પ્રાણીનું કર્તવ્ય છે કે આ દુઃખના અભાવરૂપ મોક્ષમાર્ગમાં પ્રવૃત્તિ કરે. સંસારમાં થોડું પણ સુખ નથી, જીવે જેને સુખ માન્યું છે તે કાલ્પનિક છે. આકુળતાનો ન્યા સુધી સર્વથા અન્ત નથી થતો ત્યાં

યે તુ એવં ન સન્તિ, તે કથં ભવન્તિ ? इत्यत आह—‘जे निव्वुडा’ इत्यादि।

મૂલમ—જે નિવ્વુડા પાવેહિં કમ્મેહિં અણિયાણા તે વિયાહિયા ॥૧॥

છાયા—યે નિર્વૃતાઃ પાપેષુ કર્મસુ અનિદાનાઃ તે વ્યાખ્યાતાઃ ॥ મૂ૦ ૧ ॥

ટીકા—યે ભગવત્તીર્થકરોપદેશે શ્રદ્ધાવન્તસ્તદુપદેશધારણયા ક્રોધાદિકપા-  
યાનલપ્રશમનાન્નિર્વૃતાઃ=શીતીભૂતાઃ, અત એવ પાપેષુ કર્મસુ અનિદાનાઃ=નિદાન-  
રહિતાઃ, તે વ્યાખ્યાતાઃ=મોક્ષસુખસ્થાનરુપેણ કથિતાઃ, इह लोके औपशमिकसुख-  
वस्त्वेन ख्यातिमुपगता भवन्तीत्यर्थः ॥ મૂ૦ ૧ ॥

જાતા, તય તક સુખ પ્રાપ્ત નહીં હો સકતા । સાંસારિક જીવન કા  
એક ખી ક્ષણ વિના આકુલતા કે નહીં હૈ । ઉસ આકુલતારુપ  
પરિણતિ કા અભાવ તો મોક્ષમાર્ગ મેં હી હૈ, ઇસલિયે પ્રત્યેક આત્મક-  
લ્યાણાખિલાષી જીવકો ઉસ માર્ગ મેં હી લગને કી પરમાવશ્યકતા હૈ ।  
જવતક ઉસ માર્ગ મેં નહીં લગા જાવેગા તવ તક દુઃખ ઓર આકુલતા કા  
અન્ત નહીં હો સકતા । મોક્ષમાર્ગ મેં લગા હુઆ પ્રાણી અવશ્ય હી દુઃખ  
કી પ્રાપ્તિ કે અય સે ત્રસ્ત ઇસ પ્રત્યક્ષ મેં દિશ્વનેવાલે ષડ્જીવનિકાય કો  
પ્રશમભાવસે સમન્વિત હોકર દયાદૃષ્ટિ સે દેખેગા । કિસીકો ખી  
સ્વપ્ન તક મેં સતારને કી ભાવના નહીં કરેગા । ઉસકી ભાવના યહી સદા  
રહેગી કિ યે દુઃખ સે કેસે છૂટે ? ॥ મૂ૦ ૮ ॥

જો ક્રોધાદિ કપાયોં સે રહિત હોતે હૈં વે કેસે હોતે હૈં ? સો કહતે હૈં  
—‘જે નિવ્વુડા’ ઇત્યાદિ ।

ભગવાન્ તીર્થકરના ઉપદેશ મેં જો શ્રદ્ધાસમ્પન્ન હૈં, અર્થાત્—ઉનકે  
દિવ્ય ઉપદેશ કી ધારણા સે જો ક્રોધાદિક કપાય રુપ અગ્નિકે શમન હોને

સુખ પ્રાપ્ત થતું નથી, સાંસારિક જીવનમાં એક પણ ક્ષણ આકુળતા વગર નથી.  
આ આકુળતારૂપ પરિણતિનો અભાવ તો મોક્ષમાર્ગમાં જ છે, માટે આત્મકલ્યાણ  
ધૃષ્ટવાવાળા પ્રત્યેક જીવને તે માર્ગમાં જ લાગવાની પરમ આવશ્યકતા છે. ત્યાં  
સુધી જીવ તે માર્ગમાં નહિ જશે, ત્યાં સુધી દુઃખ અને આકુળતાનો અંત થઈ  
શકતો નથી. મોક્ષમાર્ગમાં લાગેલા પ્રાણી જરૂર જ દુઃખ આવવાના ભયથી ત્રાસેલા  
આ પ્રત્યક્ષમાં દેખાતા ષડ્જીવનિકાયને પ્રશમભાવથી સમન્વિત થઈ દયાદૃષ્ટિથી  
ભેશે, કોઈને પણ સ્વપ્નમાં પણ સતારવાની ભાવના રાખશે નહિ. તેની ભાવના  
સદા એવી જ રહેવાની કે ક્યારે આ પ્રાણી દુઃખથી છૂટે ॥ મૂ૦ ૮ ॥

જે ક્રોધાદિ કપાયોથી રહિત છે તે કેવા છે ? તે કહે છે—‘જે નિવ્વુડા’ ઇત્યાદિ.

ભગવાન તીર્થકરના ઉપદેશમાં જેને શ્રદ્ધા છે અર્થાત્—પ્રભુના દિવ્ય  
ઉપદેશની ધારણાથી જેનો ક્રોધાદિકકપાયરૂપ અગ્નિ શાંત થઈ ગયેલ છે, અને તેથી



સે સર્વદા શાંત હો ચુકે હૈં, ઔર હસીલિયે પાપકર્મોં મેં જો નિદાનવન્ધ સે રહિત હૈં વે પરમ સુખ કે સ્થાનરૂપ સે કહે ગયે હૈં ।

ટીકાકારને જો ક્રોધાદિક કષાયોં કે લિયે અગ્નિ કી ઉપમા દી હૈ વહ સાર્થક હૈ, કારણ કિ જિસ પ્રકાર અગ્નિ સે અત્યન્ત તપ લોહે કા ગોલા પાની મેં ડાલને પર અપને ચારોં ઔર કે પાની કો સ્ખીંચતા હૈ ઉસી પ્રકાર યહ આત્મામી જવ કષાયોં સે અત્યન્ત સંતપ્ત હો જાતા હૈ તવ અપની ચારોં ઔર ભરી હુઈ કાર્મણવર્ગણાઓં કો મન, વચન, કાયરૂપ નાલિયોં સે સ્ખીંચતા હૈ । સ્વાયા હુઆ અન્ન જિસ પ્રકાર રસ-રુધિર-આદિ રૂપમેં પરિણત હોતા હૈ ઉસી પ્રકાર ગૃહીત વે કાર્મણવર્ગણાં મી જ્ઞાનાવરણાદિક-કર્મરૂપસે એકહી સાથ પરિણત હો જાતી હૈં । કર્મરૂપ સે બંધી હુઈ ઇન કાર્મણવર્ગણાઓં કી ચાર પ્રકાર કી અવસ્થાં હોતી હૈં, પ્રકૃતિબંધ, સ્થિતિ-બંધ અનુભાગબંધ ઔર પ્રદેશબંધ । યહ નિશ્ચિત હૈ કિ જવ કોઈ એક પદાર્થ કિસી દૂસરે પદાર્થ કો આવૃત કરતા હૈ યા ઉસકી શક્તિ કા ઘાત કરતા હૈ તવ આવરણ કરનેવાલે પદાર્થમેં-‘આવરણ કરને કા સ્વભાવ, આવરણ કરને કા કાલ, આવરણકી શક્તિ કી હીનાધિકતા ઔર આવરણ કરને-વાલે પદાર્થ કા પરિમાણ, યે ચાર અવસ્થાં એક સાથ પ્રકટ હોતી હૈં । યહી વાત ઇન બંધ કે ભેદોં મેં મી સમજ્ઞના ચાહિયે । આત્મા આત્રિયમાણ હૈ

તે સર્વથા શાંત થયેલ છે. આથી જે પાપકર્મોમા નિદાનબંધથી રહિત છે તેને પરમ સુખના સ્થાનરૂપ કહેવામાં આવેલ છે. ટીકાકારે ક્રોધાદિક કષાયોને માટે જે અગ્નિની ઉપમા આપી છે તે બરાબર છે, કારણ કે જે પ્રકારે અગ્નિથી અત્યન્ત તપાવેલો લોખંડનો ગોળો પાણીમાં નાંખવાથી પોતાના ચારે બાજુના પાણીને ખેંચે છે તે પ્રકારે જ્યારે આત્મા પણ કષાયોથી અત્યન્ત સંતપ્ત થાય છે ત્યારે પોતાની ચારે બાજુ ભરેલી કાર્મણવર્ગણાઓને મન-વચન-કાર્યારૂપ નાળિયોથી ખેંચે છે. જેવી રીતે ખાંધેલું અનાજ રસ રુધિર આદિ રૂપમાં પરિણત થાય છે તે પ્રકારે ગૃહીત આ કાર્મણવર્ગણાઓ પણ જ્ઞાનાવરણાદિક કર્મરૂપથી એક જ સાથે પરિણત થઈ જાય છે. કર્મરૂપથી બાંધેલી આ કાર્મણવર્ગણાઓની ચાર પ્રકારની અવસ્થાઓ થાય છે-પ્રકૃતિબંધ સ્થિતિબંધ, અનુભાગબંધ અને પ્રદેશબંધ, એ નિશ્ચિત છે કે જ્યારે કોઈ એક પદાર્થ કોઈ બીજા પદાર્થને આવૃત કરે છે અગર તેની શક્તિનો ઘાત કરે છે ત્યારે આવરણ કરનાર પદાર્થોમા-આવરણ કરવાનો સ્વભાવ ૧, આવરણ કરવાનો કાળ ૨, આવરણની શક્તિની હીનાધિકતા ૩, અને આવરણ કરનાર પદાર્થનું પરિમાણ ૪. આ ચાર અવસ્થાઓ એક સાથે પ્રગટ થાય છે, આ વાત બંધના ભેદોમાં પણ અમળવી

और कर्म आवरण हैं, अतः कर्म की भी बंध के समय में चार अवस्थाएँ प्रगट होती हैं। ये चारों अवस्थाएँ कर्मबंध के प्रथम समय में ही सुनिश्चित हो जाती हैं। उदाहरणार्थ—जिस समय हम लालटेन को वस्त्र से ढांकते हैं उसी समय उस आवरण करनेवाले वस्त्र में चार अवस्थाएँ स्पष्टतः प्रतिभासित होती हैं—

(१) वस्त्र का स्वभाव लालटेन के प्रकाश को आवृत करना (२) निश्चित काल तक लालटेन के प्रकाश को आवृत किये रहना (३) लालटेन के प्रकाश आवृत करने की शक्ति का वस्त्र में हीनाधिक रूपसे पाया जाना और (४) आवृत करने वाले वस्त्र का परिमाण।

उन गृहीत कर्मणवर्गणाओं का प्रत्येक कर्म में बटवारा इस प्रकार से होता है। यदि आयुर्कर्म का भी बंध हो रहा है तो आयुर्कर्म को सब से थोड़ा द्रव्य मिलता है। नामगोत्र में प्रत्येक को इससे अधिक द्रव्य मिलता है तो भी इन दोनों कर्मों का द्रव्य समान रहता है। ज्ञानावरण, दर्शनावरण और अन्तराय में प्रत्येक को इससे अधिक द्रव्य मिलता है तो भी इनका द्रव्य परस्पर समान होता है। इससे मोहनीय कर्म को अधिक द्रव्य मिलता है और इससे वेदनीय कर्म को अधिक द्रव्य मिलता है। घातिया कर्मों को जो द्रव्य मिलता है इसमें जो सर्वघाति द्रव्य है

જોઈએ. આત્મા આત્રિયમાણ છે અને કર્મ આવરણ છે, માટે બંધ સમયમાં કર્મની પણ ચાર અવસ્થાઓ પ્રગટ થાય છે. આ ચારે અવસ્થાઓ કર્મ-બંધના પ્રથમ સમયમાં જ સુનિશ્ચિત થઈ જાય છે. દાખલા તરીકે જ્યારે બત્તીને વસ્ત્રથી ઢાંકીએ ત્યારે આવરણ કરવાવાળા તે વસ્ત્રમાં ચાર અવસ્થાઓ સ્પષ્ટ પ્રતિભાસિત થાય છે— (૧) વસ્ત્રનો સ્વભાવ બત્તીના પ્રકાશને રોકવું. (૨) નિશ્ચિત સમય સુધી બત્તીના પ્રકાશને રોકી રાખવો. (૩) બત્તીનો પ્રકાશ આવૃત કરવાની શક્તિનો વસ્ત્રમાં હીનાધિકરૂપથી સદ્ભાવ. (૪) આવૃત કરનાર વસ્ત્રનું પરિમાણ. ગ્રહણ કરવામાં આવેલી તે કાર્મણવર્શણાઓની વહેંચણી પ્રત્યેક કર્મમાં આ પ્રકારે થાય છે—જો આયુ કર્મનો બંધ થઈ રહ્યો છે તો આયુ કર્મને બધાથી થોડું દ્રવ્ય મળે છે, નામ-ગોત્રમાં પ્રત્યેકને તેથી અધિક દ્રવ્ય મળે તો પણ આ બન્ને કર્મોના દ્રવ્ય સમાન રહે છે. જ્ઞાનાવરણ, દર્શનાવરણ અને અંતરાયમાં પ્રત્યેકને તેથી અધિક દ્રવ્ય મળે છે તો પણ તેઓનું દ્રવ્ય પરસ્પર સમાન હોય છે. એનાથી મોહનીય કર્મને અધિક દ્રવ્ય મળે છે અને વેદનીય કર્મને એનાથી પણ અધિક દ્રવ્ય મળે છે. ઘાતિયા કર્મોને જે દ્રવ્ય મળે છે તેમાં જે સર્વઘાતિક દ્રવ્ય છે તે સર્વઘાતિક દ્રવ્યનો

ઉક્તાર્થપ્રસંહરત્વાદ્—‘તમ્હા’ इत्यादि ।

मूलम्—तम्हा अतिविज्जो नो पडिसंजलिज्जासि-त्ति वेमि ॥सू० १०॥

छाया—तस्मात् अतिविद्वान् न प्रतिसंज्वलेः—इति ब्रवीमि ॥ सू० १० ॥

टीका—हे शिष्य ! तस्मात्=यतः क्रोधादिकषायवान् अनन्तदुखं प्राप्नोति तस्मात्, त्वम्-अतिविद्वान्-अर्हतागमपरिशीलनजनितसम्यग्ज्ञानवान् सन् न प्रतिसंज्वलेः=क्रोधवह्निनाऽऽत्मानं न प्रतापयेरित्यर्थः । कषायेषु क्रोधस्य प्राधा-

वह सर्वघाति દ્રવ્ય કા અનન્તવાં ભાગ હોતા હૈ, ઝૌર જો દેશઘાતિ દ્રવ્ય હૈ વહ દેશઘાતિ દ્રવ્ય કા અનન્તવહુભાગ હોતા હૈ । ઇસમેં ંધી દેશઘાતિ દ્રવ્ય કા વટવારા દેશઘાતી પ્રકૃતિયોં મેં હી હોતા હૈ, સર્વઘાતિ દ્રવ્ય કા વટવારા સર્વઘાતી દેશઘાતી દોનોં પ્રકારકી પ્રકૃતિયોં મેં હોતા હૈ, ઝૌર નૌ નોકષાયોં કો દેશઘાતી દ્રવ્ય હી પ્રાપ્ત હોતા હૈ, સર્વઘાતી નહીં ॥ સૂ. ૧૦ ॥

उक्त अर्थका उपसंहार करते हुए सूत्रकार कहते हैं—‘तम्हा अति-विज्जो’ इत्यादि ।

जब यह निर्विवाद सिद्ध है कि क्रोधादिक कषायवाले जीव अनन्त यातनाओं को इस लोक और परलोक में भोगते हैं तो हे शिष्य ! अर्हन्त-प्रतिपादित आगम के परिशीलन से सम्यग्ज्ञानसंपन्न होते हुए तुम क्रोध-रूप अग्नि से अपनी आत्मा को कभी भी प्रज्वलित नहीं करना । यहां

અનતમે ભાગ હોય છે, અને જે દેશઘાતિક દ્રવ્ય છે તે દેશઘાતિક દ્રવ્યને અનત બહુભાગ હોય છે. આમાં પણ દેશઘાતી દ્રવ્યની વહેંચણી દેશઘાતિ પ્રકૃતિયોમાં જ થાય છે, સર્વઘાતિ દ્રવ્યની વહેંચણી સર્વઘાતિ દેશઘાતિ બંને પ્રકારની પ્રકૃતિયોમાં થાય છે, અને નવનોકષાયોને દેશઘાતિ દ્રવ્ય જ પ્રાપ્ત થાય છે, સર્વઘાતિ નહિ ॥ સૂ. ૧૦ ૬ ॥

उक्त अर्थको उपसंहार करता सूत्रकार કહે છે—‘તમ્હા અતિવિજ્જો’ इत्यादि.

ત્યારે આ નિર્વિવાદ સિદ્ધ છે કે ક્રોધાદિક કષાયવાળો જીવ અનંત યાતનાઓને આ લોકમાં અને પરલોકમાં ભોગવે છે ત્યારે હે શિષ્ય ! અતિવિદ્વાન્-અર્હન્ત પ્રતિપાદિત આગમનના પરિશીલનથી સમ્યગ્જ્ઞાનસંપન્ન થતાં તમે ક્રોધરૂપ અગ્નિથી પોતાના આત્માને કોઈ વખતે પણ સળગાવશો નહિ. આ જગ્યાએ ક્રોધની પ્રધા-

न्यात् क्रोधप्रतिषेधेनाऽन्येषामपि कषायाणां प्रतिषेधः कर्तव्य इति बोधितम् ।  
इति=अयमुद्देशकः समाप्यते । ब्रवीमि=भगवतः समीपे यथाश्रुतं तथा कथ-  
यामीत्यर्थः ॥ मू० १० ॥

॥ चतुर्थाध्ययनस्य तृतीय उद्देशः समाप्तः ॥ ४-३ ॥

पर क्रोध की प्रधानता बतलाई है, इससे अन्य कषायों का भी परित्याग  
समझ लेना चाहिये । हे जम्बू ! मैंने भगवान् के समीप जैसा सुना है  
वैसा ही तुझे कहता हूँ ।

॥ चौथे अध्ययनका तीसरा उद्देश समाप्त ॥ ४-३ ॥

नता षतावी छे तेथी णीन कषायेनो पणु परित्याग गमण देवेो नेछणे.  
हे जम्बू ! भगवाननी पासो जेवुं मे' आंलज्युं छे तेवुं न तने कहुं छुं.  
ओथा अध्ययननो नीजे उद्देश समाप्त ॥ ४-३ ॥



। अथ चतुर्थाध्ययनस्य चतुर्थ उद्देशः ।

इहानन्तरतृतीयोद्देशकेऽनवद्यतपो वर्णितम् । तच्च संयमव्यवस्थितस्यैव संपूर्णतया भवति, तस्मात् संयमं प्रतिबोधयितुं चतुर्थोद्देशकं कथयन्नादौ गृहीतप्रव्रज्यस्य कर्तव्यमाह—‘ आवीलए ’ इत्यादि ।

मूलम्—आवीलए पवीलए निप्पीलए जहिच्चा पुव्वसंजोगं हिच्चा उवसमं ॥ सू० १ ॥

छाया—आपीडयेत् प्रपीडयेत् निप्पीडयेत् त्यक्त्वा पूर्वसंयोगं हित्वा उपशमम् ॥

टीका—पूर्वसंयोगं=पूर्वकालिकं मातापित्रादिसम्बन्धं, उपलक्षणात्पश्चात्संयोगं श्वशुरादिसम्बन्धमपि त्यक्त्वा, यद्वा—पूर्वः=अनादिभवसमायातत्वेन प्राक्तनोऽसंयमः, तेन सह संयोगः पूर्वसंयोगस्तं त्यक्त्वा, तथा—उपशमं=कर्मोपशमकार-

॥ चौथे अध्ययनका चौथा उद्देश ॥

इसके पहिले तृतीय उद्देशक में निरवद्य-निर्दोष तप का वर्णन किया जा चुका है, परन्तु निर्दोष तप की आराधना संपूर्ण रीति से जब तक जीव संयम में स्थित नहीं हो सकता तब तक उससे नहीं हो सकती; अतः संयम को प्रतिबोधित करने के लिये इस चतुर्थ उद्देशक का प्रारम्भ किया जाता है । उसमें भी जिसने दीक्षा धारण की है, उसका सर्व प्रथम क्या कर्तव्य है ? इसका निरूपण सूत्रकार करते हैं—‘ आवीलए ’ इत्यादि ।

पूर्वकालिक—पूर्वकाल से सम्बन्ध रखनेवाले मातापिता आदि के तथा पश्चात्कालिक—श्वशुरादि के सम्बन्ध को, अथवा अनादि जन्मपरम्परा से संबंधित होने के कारण प्राक्तन असंयम भाव के अभी तक के

चौथा अध्ययनको चौथा उद्देश.

આ પહેલાં ત્રીજા ઉદ્દેશમાં નિરવધ-નિર્દોષ તપનું વર્ણન કરેલ છે, પરન્તુ નિર્દોષ તપની આરાધના સંપૂર્ણ રીતિથી ત્યાં સુધી જીવ સંયમમાં સ્થિત નથી થતો ત્યાં સુધી થઈ શકતી નથી; માટે સંયમને પ્રતિબોધિત કરવાને માટે આ ચોથા ઉદ્દેશનો પ્રારંભ થાય છે. તેમાં પણ જોણે દીક્ષા ધારણ કરેલી છે. તેનું સર્વ પ્રથમ શું કર્તવ્ય છે તેનું નિરૂપણ સૂત્રકાર કરે છે—‘ આવીલણ ’ ઇત્યાદિ.

પૂર્વકાળથી સંબંધ રાખનાર માતા પિતા આદિના, તથા પછીના કાળમાં સંબંધ રાખવાવાળા શ્વશુરાદિના સંબંધને, અથવા અનાદિ જન્મપરંપરાથી સંબંધિત હોવાને કારણે પૂર્વકાલિક જે અસંયમભાવ છે તેના આજ સુધીના સંબંધને છોડી

णत्वात्संयमं हित्वा=गत्वा प्राप्येति यावत्, आपीडयेत् प्रथमप्रव्रज्याकालेऽविकृष्टेन तपसा शरीरमीपत्पीडयेदित्यर्थः । प्रपीडयेत्-तदनन्तरं प्रकर्षेण विकृष्टतपसा शरीरं पीडयेत् । ततः निष्पीडयेत्=पण्डितमरणेन शरीरं त्यक्तुमना सासार्धमासक्षणणादिरूपघोरतरतपोभिः शरीरं निश्चयेन पीडयेदित्यर्थः । यद्वा-आपीडयेत्=सम्यग्दृष्ट्यादिषु गुणस्थानेषु ज्ञानावरणीयादिकं कर्म ईपत् पीडयेत्, ततः प्रपीडयेत्=अपूर्वकरणानिवृत्तिवादरयोः, ततः-निष्पीडयेत्-सूक्ष्मसंपरायावस्थायाम्, यद्वा-अष्टविधं कर्म उपशमश्रेण्यामापीडयेत्, क्षपकश्रेण्यां प्रपीडयेत्, शैलेज्यवस्थायां निष्पीडयेदित्यर्थः ॥ सू० १ ॥

सम्बन्ध को छोड़ कर कर्मों के उपशम का कारण होने से उपशम-संयम को प्राप्त कर प्रथम दीक्षा के अवसर पर साधारण तप के द्वारा शरीर को किञ्चित् कृश करे । पश्चात् उत्कृष्ट तप से शरीर को पूर्ण रीति से कृश करे । तदनन्तर पण्डितमरण से शरीर का नियमपूर्वक परित्याग करे ।

अथवा—सम्यग्दृष्ट्यादिक-चतुर्थादिक गुणस्थानों में ज्ञानावरणीयादिक कर्मों की स्थितिका ह्रास करे, पश्चात् अपूर्वकरण और अनिवृत्तिकरण में उनकी स्थिति का पहिलेकी अपेक्षा और अधिक ह्रास करे । इस के अनन्तर सूक्ष्मसंपराय नामके दशवें गुणस्थान में और अधिक ह्रास करे ।

अथवा—उपशमश्रेणी में ज्ञानावरणादिक कर्मों का ह्रास करे, क्षपकश्रेणी में और अधिक ह्रास करे तथा शैलेजी अवस्थामें उनका समूल नाश करे ॥ सू० १ ॥

कर्मेना उपशमनु कारणु ढोवार्थी उपशममयमने प्राप्त करी प्रथम दीक्षाना अवसरे साधारण तप द्वारा शरीरने आपीडित-किञ्चित् दुण्णुं करे. पछी उत्कृष्ट तपथी शरीरने पूर्ण रूपथी दुण्णुं करे. त्यार पछी पण्डितमरणथी शरीरने नियमपूर्वक परित्याग करे.

अथवा—सम्यग्दृष्ट्यादिक-चोथा आदि-गुणस्थानोमां ज्ञानावरणीयादिक कर्मोनी स्थितिने घटाडे. पछी अपूर्वकरण अने अनिवृत्ति करणुमां तेनी स्थितिने पछे-लांनी अपेक्षा वधारे घटाडे करे, त्यार णाह सूक्ष्मसांपराय नामना दशमा गुण स्थानमां ओथी वधारे घटाडे करे.

अथवा—उपशम-श्रेणीमां ज्ञानावरणादिक कर्मोनी घटाडे करे, क्षपकश्रेणीमां ओथी अधिक घटाडे करे, तथा शैलेजी अवस्थामां तेनी समूलो नाश करे. ॥सू० १॥



ઉપશમાશ્રયણસ્ય ફલં પ્રદર્શયન્ ગૃહીતપ્રવ્રજ્યસ્ય મુમુક્ષોઃ કર્તવ્યમાહ—  
'તમ્હા અવિમણે' ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્—તમ્હા અવિમણે વીરે સારણ સમિણ સહિણ સયા  
જણ ॥ સૂ૦ ૨ ॥

છાયા—તસ્માત્ અવિમના વીરઃ સ્વારતઃ સમિતઃ સદા યતેત ॥ સૂ૦ ૨ ॥

ટીકા—તસ્માત્=ઉપશમાશ્રયણાત્, વીરઃ=કર્મવિદારણસમર્થઃ અવિમનાઃ=સંય-  
મારાધને સ્વેદરહિતઃ, અત એવ સ્વારતઃ=સુષ્ટુ આરતઃ=યાવજ્જીવનમર્યાદયા સંય-  
માઽઽચરણે તત્પરઃ, સમિતઃ=સમિતિસમન્વિતઃ, સહિતઃ=હિતેન સહ સહિતઃ=સમ્યગ્-  
જ્ઞાનાદિગુણયુક્તઃ, સદા=સર્વકાલં યતેત=સંયમારાધનભારોઢ્ઢનપ્રતિજ્ઞામઙ્ગીકૃત્ય  
તત્પરિપાલનાર્થં પ્રયતમાનાં ભવેદિત્યર્થઃ ॥ સૂ૦ ૨ ॥

પુનઃ પુનઃ સંયમાનુષ્ઠાનોપદેશે હેતું પ્રદર્શયન્નાહ—'દુરણુચરો' ઇત્યાદિ ।

ઉપશમસંયમ કે આશ્રય કરને કે ફલકો દિશાતે હુણ સૂત્રકાર  
જિસને વીક્ષા અંગીકાર કર લી હૈ એસે મોક્ષાભિલાષી મુનિ કા કર્તવ્ય  
વતલાતે હૈ—'તમ્હા અવિમણે' ઇત્યાદિ ।

ઉપશમસંયમ કે આશ્રય કરનેસે કર્મ કો નષ્ટ કરને કી શક્તિસે  
સંપન્ન જીવ સંયમ કે આરાધન કરને મેં સ્વેદરહિત હોકર યાવજ્જીવન  
સંયમ કે આરાધનામેં તત્પર હોતા હુઆ સમિતિ સે ઔર સમ્યગ્દર્શન-  
જ્ઞાનાદિ ગુણોં સે યુક્ત હોકર સર્વદા સંયમ કે આરાધનરૂપી ભાર કો  
વહન કરને કી પ્રતિજ્ઞા કો અંગીકાર કર ઉસકે પાલન કરને મેં પ્રયત્ન  
શીલ બને ॥ સૂ૦ ૨ ॥

પુનઃ પુનઃ સંયમ કે અનુષ્ઠાન કરને કે ઉપદેશ મેં કારણ પ્રકટ કરતે  
હુણ સૂત્રકાર કહતે હૈ—'દુરણુચરો' ઇત્યાદિ ।

ઉપશમ—સંયમના આશ્રય કરવાના ફળને દેખાડતાં સૂત્રકાર જેણે વીક્ષા અંગી-  
કાર કરેલી છે એવા મોક્ષાભિલાષી મુનિનું કર્તવ્ય કહે છે—'તમ્હા અવિમણે' ઇત્યાદિ.

ઉપશમ—સંયમનો આશ્રય કરવાથી કર્મને નષ્ટ કરવાની શક્તિવાળાં જીવ  
સંયમનું આરાધન કરવામાં સ્વેદરહિત થઈને યાવજ્જીવન સંયમના આરાધનમાં  
તત્પર બનીને સમિતિથી અને સમ્યગ્દર્શનજ્ઞાનાદિ ગુણોથી યુક્ત થઈને હમેશાં  
સંયમના આરાધનરૂપી ભારને વહન કરવાના નિયમને અંગીકાર કરીને તેનું  
પાલન કરવામાં પ્રયત્નશીલ બને. ॥ સૂ૦ ૨ ॥

વારંવાર સંયમનું અનુષ્ઠાન કરવાના ઉપદેશમાં કારણ પ્રકટ કરીને સૂત્ર-  
કાર કહે છે—'દુરણુચરો' ઇત્યાદિ.

મૂલમ્—દુરણુચરો મગ્ગો વીરાણં અનિયટ્ટગામીણં ॥ સૂ૦ ૩ ॥

છાયા—દુરનુચરો માર્ગો વીરાણામનિવૃત્તગામિનામ્ ॥ મૂ૦ ૩ ॥

ટીકા—માર્ગઃ=સંયમરૂપઃ પન્થાઃ અનિવૃત્તગામિનાં=ન નિવર્તતે યસ્માત્ સઃ—અનિવૃત્તો=મોક્ષઃ, તત્ર ગન્તું શીલં ચેષાં તે—અનિવૃત્તગામિનસ્તેષાં, વીરાણાં=કર્મ-વિદારણસમર્થાનાં પ્રમાદરહિતાનાં દુરનુચરઃ=દુઃસ્થેન સદ્ અનુ=પૂર્વપૂર્વતીર્થકરેભ્યઃ પશ્ચાત્ ચર્યતે=ગમ્યતે इति દુરનુચરઃ=દુઃસ્વાનુગમ્યઃ—સદુઃસ્વમનુસેવ્યોઽસ્તિ, તસ્માત્ પુનઃ પુનઃ સંયમાનુષ્ઠાનોપદેશઃ ક્રિયત્ इति ભાવઃ ॥ મૂ૦ ૩ ॥

તન્માર્ગાનુચરણં પ્રમાદપરિત્યાગાદ્ ભવતીત્યાદ્—‘વિગિંચ’ इत्याદિ ।

મૂલમ્—વિગિંચ મંસસોણિયં, एस पुरिसे दविए वीरे आया-  
णिज्जे वियाहिए जे धुणाइ समुस्सयं वसित्ता वंभचेरांसि ॥ સૂ૦ ૪ ॥

છાયા—વેવિક્ષ્ય માંસશોણિતમ્, एस पुरुषो द्रविको वीर आदानीयो व्या-  
ख्यातो यो धुनाति समुच्छ्रयम् उपित्वा ब्रह्मचर्ये ॥ મૂ૦ ૪ ॥

ટીકા—માંસશોણિતં સ્વશરીરમ્થં વેવિક્ષ્ય=અપનય—અન્તપ્રાન્તાદારાદિના અન-

યહ સંયમરૂપ માર્ગ, મુક્તિ કો પ્રાપ્ત કરને કી ઇચ્છાવાલે પુરુષ જો કી વીર-કર્મો કે નષ્ટ કરને મેં શક્તિશાલી एवं અપ્રમાદી હૈં અને લિયે મી દુરનુચર—અર્થાત્ અતિક્રષ્ટસાધ્ય હૈ, કયોં કી પૂર્વ પૂર્વ તીર્થદ્ધરોં ને ઇસ કે આચરણ કરને કી જો વિધિ પ્રદર્શિત કી હૈં ઉસી કે અનુસાર યહ આચરિત ક્રિયા જાતા હૈ, અતઃ હસકે અનુષ્ઠાન કરને કા વારંવાર ઉપદેશ દિયા જાતા હૈ ॥ સૂ૦ ૩ ॥

ઉસ સંયમરૂપ માર્ગકા આચરણ પ્રમાદ કે ત્યાગ સે હોતા હૈ, ઇસી વાત કી પુષ્ટિ કરતે હૈં—‘વિગિંચ મંસસોણિયં’ इत्याદિ ।

સંયમી અપને શરીર કે માંસશોણિત કો સુઝાવે, અર્થાત્ અન્તપ્રાન્ત

આ સયમરૂપ માર્ગ, મુક્તિને પ્રાપ્ત કરવા ઇચ્છનાર પુરુષ જે વીર એટલે કે કર્મને ક્ષય કરવામાં શક્તિશાળી અને અપ્રમાદી છે તેના મટે પણ દુરનુચર અર્થાત્ અતિક્રષ્ટસાધ્ય છે, કારણ કે પહેલાંના તીર્થકરોએ તેનું આચરણ કરવાની જે વિધિ બતાવી છે તેનુસારે જ એનું આચરણ કરવામાં આવે છે, માટે એનું અનુષ્ઠાન કરવાનો ઉપદેશ વારંવાર કરવામાં આવેલ છે. ॥ સૂ૦ ૩ ॥

આ સયમરૂપ માર્ગનું આચરણ પ્રમાદના ત્યાગથી થાય છે આ વાતની પુષ્ટિ કરે છે—‘વિગિંચ મંસસોણિયં’ इत्याદિ.

સંયમી પોતાના શરીરના માંસ લોહીને સુઝાવે, અર્થાત્ અંત-પ્રાંત આહા-

શનાદિતપસા વા શરીરં શોષયેત્યર્થઃ । શરીરશોષણસ્ય ફલમાહ—‘ એપ ’ ઇત્યાદિ ।  
 એપ =સ્વશરીરશોષકઃ પુરુષઃ—મોક્ષાર્થી જનો દ્રવિકઃ=દ્રવઃ=સંયમઃ સ વિદ્યતે યસ્યા-  
 સૌ, સંયમીત્યર્થઃ, તથા—ચીરઃ=કર્મવિદારણસમર્થઃ, તથા—આદાનીયઃ=મવ્યાનાં ગ્રાહ્યઃ  
 શ્રદ્ધેયવચન ઇત્યર્થઃ, વ્યાખ્યાતઃ=તીર્થકરૈઃ કથિતઃ । યથ્વ બ્રહ્મચર્યે=બ્રહ્મચર્યાખ્ય-  
 મદાવ્રતે સંયમે વા ઉષિત્વા=સ્થિત્વા—તત્પરો ભૂત્વેતિ યાવત્, સમુચ્છ્રયં=કર્મોપચયં  
 ધુનાતિ=દ્વાસયતિ—અપયતીત્યર્થઃ, સોઽપિ—આદાનીયો વ્યાખ્યાત ઇતિ સમ્બન્ધઃ । ૪।

પ્રમાદરહિતાનાં ગુણાન્ પ્રદર્શ્ય પ્રમાદવતાં દોષાનાદ્—‘ નિત્તેહિં ’ ઇત્યાદિ ।

મૂલ્મ—નિત્તેહિં પલિચ્છિન્નેહિં આયાણસોયગઢિષ્ વાલે  
 અવ્વોચ્છિન્નવંધણે અણભિક્કંતસંજોષ્ તમંસિ અવિયાણઓ  
 આણાણ્ લંભો નત્થિ-ત્તિ વેમિ ॥ સૂ૦ ૫ ॥

હાયા—નેત્રૈઃ પ્રતિચ્છન્નૈઃ આદાનસ્રોતોગૃહ્ણો વાલઃ અવ્યુચ્છિન્નવન્ધનઃ અન-  
 મિક્રાન્તસંયોગઃ તમસિ અધિજાનત આજ્ઞાયા લાભો નાસ્તિ—ઇતિ વ્રવીમિ ॥ સૂ૦ ૫ ॥

ટીકા—નેત્રૈઃ=ચક્ષુરાદિભિરિન્દ્રિયૈઃ, પ્રતિચ્છન્નૈઃ=સ્વસ્વવિષયતોઽપવારિતૈઃ—

આહારાદિક સે અથવા અનશનાદિક તપ કે દ્વારા શરીર કા શોષણ કરે ।

હસ ક્રિયા કા આચરણ કરનેવાલા વહ મોક્ષાભિલાષી સંયમી જીવ  
 કર્મોં કો નષ્ટ કરને કી શક્તિ સે સમન્વિત હોતા હુઆ ભવ્ય પુરુષોં કે  
 લિયે ઉપાદેયવચનવાલા હોતા હૈ, એસા તીર્થઙ્કરોં ને કહા હૈ । તથા જો  
 બ્રહ્મચર્ય મેં અથવા સંયમ મેં તત્પર હોકર કર્મોં કો નષ્ટ કરના હૈ વહ  
 ભી ભવ્યોં કે લિયે માનનીયવચનવાલા હોતા હૈ ॥ સૂ૦ ૪ ॥

પ્રમાદસહિત વ્યક્તિયોં મેં કયા કયા દોષ ઉત્પન્ન હોતે હૈં ? યહ વાત  
 સૂત્રકાર કહતે હૈં—‘ નિત્તેહિં ’ ઇત્યાદિ ।

અપનેર વિષયોં સે અપવારિત—પ્રતિરુદ્ધ ચક્ષુરાદિક ઇન્દ્રિયોં સે યુક્ત

રાદિદથી અથવા અનશનાદિક તપ દ્વારા શરીરનું શોષણ કરે.

આ ક્રિયાનું આચરણ કરવાવાળો તે મોક્ષાભિલાષી સંયમી જીવ કર્મોને  
 નષ્ટ કરવાની શક્તિથી અંપન્ન થઈ ભવ્ય પુરુષો માટે ઉપાદેય વચનવાળો થઈ જાય  
 છે, એમ તિર્થ કરે એ કહ્યું છે. તથા જે બ્રહ્મચર્યમાં અને સંયમમાં તત્પર થઈ  
 કર્મોને નાશ કરે છે તે પણ ભવ્યોને માટે માનનીય—વચનવાળો થાય છે. ॥ સૂ૦ ૪ ॥

પ્રમાદસહિત વ્યક્તિઓમાં શું શું દોષ ઉત્પન્ન થાય છે ? આ વાત સૂત્ર-  
 કાર કહે છે—‘ નિત્તેહિં ’ ઇત્યાદિ.

પોતપોતાના વિષયોથી નિવારિત ચક્ષુ—આદિ ઇન્દ્રિયોથી યુક્ત થઈને, બ્રહ્મ-

प्रतिरुद्धैर्युक्तोऽपि, ब्रह्मचर्ये स्थितोऽपि, आदानीयो भूत्वाऽपि, यदि-आदानस्रोतो-  
गृहः=आदीयते=गृह्यते सावधक्रियाप्रवृत्तेन यत्-तदादानं=संसारबीजरूपं कर्म, तस्य  
स्रोतांसि=शब्दादिविषयभोगाः, तत्र गृहः=आसक्तो भवति, तर्हि स बालः=मोहोद-  
द्यान्मूढः सन् अव्युच्छिन्नबन्धनः=अव्युच्छिन्नं बन्धनं यस्य स तथोक्तः-अत्रुटित-  
कर्मबन्धः स्यादित्यर्थः । किं च—स बालः अनभिक्रान्तसंयोगः स्यादित्यन्वयः ।  
अनभिक्रान्तः=अनतिलङ्घितः संयोगः=मातापित्रादिसम्बन्धः, अथवा-असंयमसंब-  
न्धो येन सः-अनभिक्रान्तसंयोगः स्यादित्यर्थः । यः पूर्वं गृहीतप्रव्रज्यः पश्चाद्  
विषयभोगासक्तो भवति चेत्तर्हि स मूढः कदापि=अतसहस्रभवान्तेऽपि कर्मबन्धोच्छेदं  
नाप्नोति, नापि मातापित्रादिसांसारिकसम्बन्धावसानं पश्यतीति वर्तुलार्थः ।

होकर भी, ब्रह्मचर्य में स्थित रह कर भी, तथा आदानीय-लोकमान्य हो  
कर भी जो आदानस्रोतोगृह, अर्थात् शब्दादि विषयभोगों में आसक्त  
हो जाना है उस बाल-अज्ञानी का कर्मबन्ध कभी भी नष्ट नहीं होता,  
और न वह माता-पिता आदि के सम्बन्ध को, अथवा असंयम के भाव  
को ही अपने से दूर कर सकता है ।

तथा-अज्ञानरूप अंधकार में रहने वाला वह बाल अज्ञानी, कि जो  
अपने हितको ही नहीं समझता है, भगवान् तीर्थङ्कर के उपदेशरूप प्रव-  
चनका लाभ नहीं ले सकता ।

विशेषार्थः—संयम का लक्षण सिद्धान्तकारों ने ' इन्द्रियवृत्तिनिरोधः  
संयमः ' इन्द्रियों की वृत्ति का निरोध करना ही बतलाया है । इन्द्रियों की  
वृत्ति का निरोध कर लेने पर भी यदि संयमी व्यक्ति के हृदय में उनके  
विषयभूत पदार्थों के सेवन के प्रति लालसा याने रागभाव बना हुआ है

अर्थों में स्थित रहने वाले आदानीय-लोकमान्य पणु थोड़े से आदानस्रोतो-  
गृह-अर्थात् शब्दादि विषयभोगों में आसक्त बनी जाय छे ते जाण-अज्ञानीने  
कर्मबन्ध क्यारे पणु छूटतो नथी अने ते माता-पिता-आदिना संबंधने अथवा  
असंयमभावने पोताथी दूर करी शकतो नथी. तथा अज्ञानरूप अंधकार में रहे-  
नार ते जाण अज्ञानी ने पोताना छितने पणु समझतो नथी तेने लगवान  
तीर्थङ्करना उपदेशरूप प्रवचनने लाल पणु भणी शकतो नथी.

विशेषार्थः—संयमनुं लक्षण सिद्धान्तकारोंने ' इन्द्रियवृत्तिनिरोधः संयमः '  
इन्द्रियों की वृत्तिने निरोध करवो, तेस बतावेले छे इन्द्रियों की वृत्तिने निरोध  
करी लेवा छतां पणु ने संयमी व्यक्तिना हृदय में तेना विषयभूत पदार्थोंना  
सेवन करवानी लालसा ओटले रागभाव थाय तो शास्त्रकारनी दृष्टि में ते व्यक्ति

તસ્ય વાલ્લસ્ય તમસિ=મોહરૂપે ભાવાન્ધકારે વર્તમાનસ્ય, અત એવ—અવિજાનતઃ= આત્મહિતમનવબુદ્ધ્યમાનસ્ય આજ્ઞાયાઃ=ભગવત્તીર્થકરોપદેશરૂપસ્ય પ્રવચનસ્ય લાભો નાસ્તિ । અનાદિમિથ્યાત્વપ્રતિચ્છન્નવિવેકજ્ઞાનસ્ય મહામોહવશાદાઽઽર્હતપ્રવચન-શ્રવણે પ્રવૃત્ત્યભાવાદ્ હેયોપાદેયવિવેકાનર્હત્વાચ્ચ સમ્યક્ત્વલાભારંભવ इति ભાવઃ । યદ્વા-આજ્ઞા=વોધિઃ-સમ્યક્ત્વમ્, તસ્યા લાભો નાસ્તીત્યર્થઃ । इति=एतद् ब्रवीमि यथा भगवद्वचनं श्रुतं तथा कथयामीत्यर्थः ॥ सू० ५ ॥

તો ગાસ્ત્રકારોં કી દૃષ્ટિમેં વહ વ્યક્તિ અસંયમી હી હૈ । વહ ઉનર પદાર્થોં કા સેવન નહીં કર રહા હૈ, બ્રહ્મચર્ય જૈસે મહાવ્રતમેં વહ સ્થિત હો, અન્ય અવ્ય પ્રાણી ભી ઉસકે ઉપદેશ કો શ્રદ્ધાકી દૃષ્ટિ સે દેખતે ઓર માનતે હોં; તો ભી ઉસકે સંસાર કે કારણભૂત કર્મોં કા બન્ધ કમી ભી નષ્ટ નહીં હો સકના । એસા વ્યક્તિ એક પ્રકાર કા ‘વકવૃત્તિ’ હી હૈ । વહ ઉપર સે શુભ્ર-નિર્દોષ પ્રતીત હોતે હુઅ ભી ભીતર સે અશુભ્ર-મલિન હી હૈ । દિશ્વાને કે લિયે હી ઉસને વાહ્યરૂપમેં માતા-પિતાદિક અથવા અસંયમભાવોં સે સંબંધ છોડ રક્ષા હૈ, ભીતર સે નહીં, અતઃ એસે વ્યક્તિયોં કો-કિ જિન્હે વાસ્તવિક રીતિ સે હેયોપાદેય કા વિવેક નહીં હૈ, જો યહ ભી નહીં સમજતે હૈં કિ મેરા સ્વયંકા હિત કિસ મેં હૈ ? હતને ગહરે અંધ-કાર મેં પડે હુઅ હૈં ઉન્હે વીતરાગ પ્રભુ કી વાણીકા રસાસ્વાદ કમી ભી નહીં આ સકના ।

‘આદીયતે યન્-તન્ આદાનમ્’ અર્થાત્-સાવધ ક્રિયા મેં પ્રવૃત્તિ રક્ષ-

અસંયમી જ છે, ભલે તે પદાર્થોનું સેવન તે ન કરતો હોય, બ્રહ્મચર્ય જેવા મહાવ્રતમાં ભલે તે સ્થિત હોય, બીજા અવ્ય પ્રાણી પણ તેના ઉપદેશને શ્રદ્ધાની દૃષ્ટિથી દેખતા અને માનતા હોય, તો પણ તેના સંસારના કારણભૂત કર્મોના બંધ કોઈ વળત પણ નષ્ટ થતો નથી. એવી વ્યક્તિ એક પ્રકારના ‘વકવૃત્તિ’ જ છે. તે ઉપરથી શુભ્ર-નિર્દોષ દેખાતા છતાં પણ અંતરથી અશુભ્ર-મલિન જ છે. દેખાડવાને જ માટે તેણે બાહ્યરૂપમાં માતા-પિતાદિક, અથવા અસંયમ ભાવોથી સંબંધ છોડી દીધેલા હોય છે, પણ અંતરથી નહિ, માટે આવી વ્યક્તિ-ઓને-કે જેઓને વાસ્તવિક રીતિથી હેયોપાદેયનો વિવેક હોતો નથી, અને જેઓ એટલા ગાઢ અંધકારમાં પડેલા હોય છે કે માફે સ્વયંનું-પોતાનું હિત શેમાં છે ? એની પણ જેઓને અમજ હોતી નથી; તેઓને વીતરાગ પ્રભુની વાણીનો રસાસ્વાદ ક્યારે પણ આવી શકતો નથી.

આદીયતે યન્ તન્ આદાનમ્—અર્થાત્-સાવધ ક્રિયામાં પ્રવૃત્તિ રાખનાર પ્રાણી દ્વારા જે અહુણ કરવામાં આવે છે તે આદાન-કર્મ છે, અને તે સંસારના બીજરૂપ

નેવાલે પ્રાણી કે દ્વારા જો ગ્રહણ ક્રિયા જાતા હૈ વહ આદાન-કર્મ હૈ, ઓર વહ સંસાર કા વીજરૂપ હૈ । વીજ સે હી વૃક્ષ તૈયાર હોતા હૈ, વિના વીજ કે નહીં; યહ સંસારરૂપ મહાવૃક્ષ ભી ઇસ કર્મરૂપ વીજ કા હી ફલ હૈ । ઇસ સે યહ ફલિતાર્થ નિકલતા હૈ કિ વીજ કી કિસી નિમિત્ત સે અંકુરોત્પાદન શક્તિ વિનષ્ટ હો જાતી હૈ તથ વહ જિસ પ્રકાર અપને કાર્ય કો નહીં કર સકતા હૈ ઊસી પ્રકાર રાગ-દ્વેષાદિક કષાયોં કે અભાવ મેં ગૃહીત કાર્મણવર્ગણાઓં કી ભી જીવકો પરતન્ત્રાદિરૂપ કરને કી, અથવા જીવ કે જ્ઞાનાદિક ગુણોં કા ઘાત આદિ કરને કી શક્તિ નષ્ટ હો જાતી હૈ । ઇસ આદાન કા સ્ત્રોત શબ્દાદિક ઇન્દ્રિયોં કે વિષયભોગ હી હૈં, ઊનમેં જો ગૃહ-આસક્ત હૈ વહ આદાનસ્ત્રોતોગૃહ હૈ । જો મોહ કે ઉદય સે પર-પદાર્થોં મેં તહીન હૈ એવં હેયોપાદેય કે જ્ઞાન સે વિકલ હૈ વહી યહાં પર ચાલ હૈ । જો મોહાધીન-આત્મજ્ઞાન સે રહિત હૈ-ચાહે વહ વ્યાકરણાદિક એવં ન્યાયશાસ્ત્રાદિ ગ્રંથોં કા અધ્યેતા ભી કયો ન હો વહ ચાલ-મૂર્ખ હી હૈ । સંયમ કો ગ્રહણ કર પશ્ચાત્ પ્રચલ મોહ કે ઉદય સે અસંયમભાવ કો પ્રાપ્ત કરનેવાલે વડે સે વડે વિદ્વાન્ ભી જાત્રોં મેં ‘ચાલ’ નામસે વર્ણિત કિયે ગયે હૈં । યહી વાત ટીકાકાર ઇસ પ્રકાર સે પ્રકટ કરતે હૈં—

છે. બીજી જ વૃક્ષ તૈયાર થાય છે, બીજ વિના નહિ. આ સંસારરૂપ મહા-વૃક્ષ પણ આ કર્મરૂપ બીજનું જ ફળ છે. આથી એ સારાંશ નિકળે છે કે—  
ત્યારે કેઈ પણ નિમિત્તથી બીજની અંકુરોત્પાદનશક્તિ નષ્ટ થઈ જાય છે ત્યારે તે જે પ્રકારે પોતાના કાર્યને નથી કરી શકતું તે પ્રમાણે રાગદ્વેષાદિક કષાયોના અભાવમાં ગૃહીત કાર્મણવર્ગણાઓની પણ જીવને પરતન્ત્રાદિરૂપ કરવાની, અથવા જીવના જ્ઞાનાદિક ગુણોનો ઘાત આદિ કરવાની શક્તિનો નાશ થાય છે. આ ‘આદાન’નું સ્ત્રોત (માર્ગ) શબ્દાદિક ઇન્દ્રિયોના વિષયભોગ જ છે, આમાં જે ગૃહ-આસક્ત છે તે આદાનસ્ત્રોતોગૃહ છે, એટલે કર્મ આવવાના કારણોમાં ગૃહ રહે છે. જે મોહના ઉદયથી પરપદાર્થોમાં આસક્ત છે તેમજ હેયોપાદેયના જ્ઞાનથી વિકળ છે તે જ આ ઠેકાણે બાળ છે. જે મોહાધીન-આત્મજ્ઞાનથી રહિત છે, ભલે તે વ્યાકરણાદિક અને ન્યાય શાસ્ત્રોના ગ્રંથોનો અભ્યાસી કેમ ન હોય તો પણ તે બાળ-મૂર્ખ જ છે. મોટામાં મોટો વિદ્વાન પણ સંયમને ગ્રહણ કરી પાછળથી પ્રબળ મોહના ઉદયથી અસંયમભાવને પ્રાપ્ત કરવાનો મોટામાં મોટો વિદ્વાન પણ શાસ્ત્રોમાં ‘બાળ’ આ નામથી કહેવામાં આવ્યો છે. એ જ વાતને ટીકાકાર આ સારાંશથી પ્રગટ કરે છે—



“यः पूर्वं गृहीतप्रव्रज्यः पश्चाद् विषयभोगासक्तो भवति चेत्तर्हि स मूढः कदापि=शतसहस्रभवान्तेऽपि कर्मबन्धोच्छेदं नाप्नोति, नापि मातापित्रादिसांसारिकसंबन्धावसानं पश्यतीति ।”

जो पहिले दीक्षा अंगीकार कर के भी फिर पीछे मोह के प्रबल उदय से पांच इन्द्रियों के विषयभोगों में आसक्त हो जाना है वह मूढ है—बाल है । उसके कर्म के बन्ध का उच्छेद—अवसान लाखों भवों में भी नहीं हो सकता, और न वह मातापितादिकल्प सांसारिक संबंध का अंत ही कर सकता है । ‘तमसि’ यह पद गाढ़ अन्धकार का वाचक सप्तमी विभक्ति का एक वचन है । जिस प्रकार अन्धकार में वर्तमान व्यक्ति अपने हाथ पर भी रखी हुई वस्तु का अवलोकन नहीं कर सकता है, ठीक इसी प्रकार मोहरूप भावान्धकार में रहा हुआ व्यक्ति भी अपनी आत्मा में ही समाये हुए अपने हिनरूप कर्तव्य को नहीं जान सकता है । ऐसे जीव के लिये भगवान् तीर्थङ्कर प्रभु की उपदेशरूप वाणी का भी लाभ नहीं हो सकता है, कारण कि अनादिकालिक मिथ्यात्व से उसका विवेकज्ञान लुप्त हो रहा है, और प्रबल मोह के उदय से अर्हन्तप्रभु की वाणी का लाभ लेने में असमर्थ बन रहा है, अतः उस की उनकी वाणीके श्रवण करने में अन्तरंग

“यः पूर्वं गृहीतप्रव्रज्यः पश्चाद् विषयभोगासक्तो भवति चेत्तर्हि स मूढः कदापि=शतसहस्रभवान्तेऽपि कर्मबन्धोच्छेदं नाप्नोति, नापि मातापित्रादिसांसारिक-सम्बन्धावसानं पश्यतीति ”

जे पड़ेलां दीक्षा अंगीकार करीने पछी मोड़ना प्रणज उदयथी पांच इन्द्रियोना विषयभोगांमां आसक्त थरु जय छे ते मूढ छे—आण छे, तेना कर्मना बंधनो उच्छेद लाभो लयोमां पणु नथी थतो, तेम न ते मातापितादिश्य संबन्धनो पणु अंत लायी शकतो नथी.

“तमसि” आ पढ गाढ अंधकारनुं वायड सातमी विलडितनुं ओडवचन छे. जे प्रकारे अंधकारमां डोढ माणुअ पोताना हाथ उपर पणु राभेदी वस्तुने देखी शकतो नथी ते प्रकारे मोड़इय लाव—अंधकारमां रहेयो छव पणु आन्माभा रहेलां पोताना डितइय कर्तव्यने जणुी शकतो नथी, ओवा छवने लगवान तीर्थङ्कर प्रभुनी उपदेश वाणीनो पणु लाल थरु शकतो नथी, डारणु डे अनादि डाणना मिथ्यात्वथी तेनुं विवेकज्ञान लुप्त थयेवुं छे, अने प्रणज मोड़ना उदयथी ते अर्हन्तप्रभुनी वाणीनो लाल देवामां असमर्थ जनेव छे, तेथी तेने तेमनी वाणीनुं श्रवणु करवामां अंतरंगथी प्रवृत्ति पणु थती नथी. अथवा डेयो-

ભાવતમસિ વર્તમાનસ્ય વાલસ્ય કથં સમ્યક્ત્વલાભાસમ્ભવઃ ? इति जिज्ञासा-  
यामाह—‘जस्स नत्थि’ इत्यादि ।

મૂલમ્—જસ્સ નત્થિ પુરા પચ્છા મજ્ઞે તસ્સ કુઓસિયા ?! ૬।

છાયા—યરય નાસ્તિ પુરા પશ્ચાત્ મધ્યે તસ્ય કુતઃ સ્યાત્ ॥ મૂ૦ ૬ ॥

ટીકા—યસ્ય=મોહતમસિ વર્તમાનસ્ય જીવસ્ય પુરા=પૂર્વસ્મિન કાલે પશ્ચાત્=  
ભવિષ્યત્કાલે નાસ્તિ=પૂર્વ સમ્યક્ત્વં નાભૂત્, અગ્રેऽપિ નતદ્ ભવિષ્યતિ, તસ્ય મધ્યે  
=મધ્યમવે-વર્તમાનજન્મનિ, કુતઃ સ્યાત્=કથં ભવેત્-ન ભવેદિત્યર્થ । “આદા-  
વન્તે ચ યન્નાસ્તિ વર્તમાનેऽપિ તત્તથા ” इति लोकन्यायस्य सर्वानुभवसिद्धत्वा-  
दिति भावः । अव्यवहारराग्यपेक्षयैतत् ।

સે પ્રવૃત્તિ હી નહીં હોતી । અથવા હેયોપાદેય કે વિવેક કે અયોગ્ય હોને  
સે એસે મનુષ્ય કો સમ્યક્ત્વ કા લાભ અસમ્ભવ હૈ, યહ બી “ આજ્ઞાયાઃ  
લાભો નાસ્તિ ” इस वाक्य का अर्थ होता है, क्योंकि—‘आज्ञा’ का द्वितीय  
अर्थ बोधि-समक्ति है उसका लाभ ऐसे मनुष्य को होता नहीं ॥ મૂ૦ ૬ ॥

ભાવાન્ધકાર મેં રહા હુઆ વાલ જીવ સમ્યક્ત્વ કે લાભ સે વંચિત  
રહતા હૈ । इसीकी पुष्टि सूत्रकार करते हैं—‘जस्स नत्थि पुरा’ इत्यादि ।

મોહરૂપી અન્ધકાર મેં રહનેવાલા અજ્ઞાની જીવ પૂર્વ જન્મમેં ઓર  
આગામી જન્મમેં સમક્ષિત કે લાભ સે વંચિત રહતા હૈ તો મધ્ય અર્થાત્  
વર્તમાન જન્મ મેં વહ સમક્ષિત કા લાભ કર લેગા યહ કૈસે સમ્ભવ હો  
સકતા હૈ ? અર્થાત્ નહીં હો સકતા । “આદાવન્તે ચ યન્નાસ્તિ વર્તમા-  
નેऽપિ તત્તથા ” जिसकी सत्ता आदि और अन्तमें नहीं है उसकी सत्ता  
वर्तमानमें भी नहीं होती है । यह एक सामान्य सा नियम है ।

પાદેયના વિવેકને અયોગ્ય હોવાથી આવા મનુષ્યને સમ્યક્ત્વનો લાભ અસંભવ  
છે આ પણ “ આજ્ઞાયાઃ લાભો નાસ્તિ ” આ વાક્યનો અર્થ થાય છે, કેમ કે  
‘આજ્ઞા’નો બીજો અર્થ બોધિ એટલે સમક્ષિત છે, તેનો લાભ આવા મનુષ્યને  
થતો નથી. ॥ સૂ૦ ૫ ॥

લાવ-અંધકારમાં રહેલાં બાળ જીવ સમ્યક્ત્વના લાભથી વંચિત રહે છે.  
આની પુષ્ટિ સૂત્રકાર કરે છે—‘જસ્સ નત્થિ પુરા’ ઇત્યાદિ.

મોહરૂપી અંધકારમાં રહેનાર અજ્ઞાની જીવ પૂર્વ જન્મમાં અને આવતા  
જન્મમાં સમક્ષિતના લાભથી વંચિત રહે છે, તો પછી મધ્ય અર્થાત્ વર્તમાન જન્મમાં  
તે સમક્ષિતનો લાભ કરી લેશે, તેનો સંભવ કેવી રીતે હોય ? અર્થાત્ સંભવ  
હોતો નથી. “આદાવન્તે ચ યન્નાસ્તિ વર્તમાનેऽપિ તત્તથા ”—જેની સત્તા આદિ અને  
અંતમાં નથી તેની સત્તા વર્તમાનમાં પણ નથી હોતી, એ એક સામાન્ય નિયમ છે.

યદ્વા-યસ્ત્વતીતં સુખં ન સ્મરતિ, નાપિ ભવિષ્યત્કાલિકં વાઙ્મતિ, તસ્ય વર્ત-  
માનમુખેઽપિ રાગો નૈવ સ્યાદિત્યાદ-‘જસ્સ નત્થિ’ ઇત્યાદિ । યસ્ય ભોગવિપાકં  
જાનતઃ, પુરા=પૂર્વ-પૂર્વશુક્તમુગ્ધાનુસ્મરણં નાસ્તિ, પથ્વાત્=પથ્વાદ્વાવી-આગામિ-  
ભોગામિલાપો નાસ્તિ, તસ્ય મધ્યે=વર્તમાનકાલે કુતઃ ભોગેચ્છા સ્યાત્ । મોહનીય-  
કર્મોપશમાત્તસ્ય ભોગેચ્છા નૈવ ભવેદિતિ ભાવઃ ॥ મૃ૦ ૬ ॥

પ્રશ્ન—જિન્હોં ને પૂર્વ મેં સમકિત પ્રાપ્ત નહીં કિયા હૈ ઓર  
ભવિષ્ય મેં જો નહીં પ્રાપ્ત કરેંગે, એસે હી જીવ તો વર્તમાનમેં સમ-  
કિત કી પ્રાપ્તિ કિયા કરતે હૈ । યદિ “ આદાવન્તેઽપિ યન્નાસ્તિ વર્તમા-  
નેઽપિ તત્તથા ” યદ્ અટલ નિયમ માન લિયા જાવેગા તો ફિર કિસીં મી  
જીવકો સમકિત કા લાભ નહીં હો સકેગા ?

ઉત્તર—યદ્ કથન અવ્યવહાર રાગિમેં રહેનેવાલે જીવોં કી અપેક્ષા  
સે હી સમઘનાં ચાહિયે । વ્યવહાર રાગિમેં રહે હુણ જીવોંકી અપેક્ષાસે નહીં ।

અથવા ઇસ સૂત્રકા વ્યાખ્યાન ઇસ પ્રકારસે મી હોતા હૈ—

ભોગોં કે વિપાક કો મહા કષ્ટપ્રદ્ જાન કર જો પૂર્વમેં ભોગે હુણ પાંચ  
ઇન્દ્રિયોંકે વિષયસુખ કા સ્મરણ તક નહીં કરતા હૈ ઓર ઇસ સુખ કી  
ભવિષ્યત્કાલિક પ્રાપ્તિ કી વાઙ્મતિ સે સર્વથા દૂર હૈ, એસે વ્યક્તિ કો વર્ત-  
માનકાલ મેં પ્રાપ્ત વદ્ સુખ ભોગેચ્છારૂપ રાગ કા કારણ કૈસે હો સકતા  
હૈ ? અર્થાત્ નહીં હો સકતા ।

પ્રશ્ન—જેઓએ પૂર્વમાં સમકિત પ્રાપ્ત નથી કર્યું અને આવતા કાળમાં પણ  
જેઓ સમકિત પ્રાપ્ત કરશે નહિ, આ પ્રકારના જ છવો વર્તમાનમાં સમકિતની પ્રાપ્તિ  
કરે છે. જે “ આદાવન્તેઽપિ યન્નામિ વર્તમાનેઽપિ તત્તથા ” આ અટલ નિયમ માન-  
વામાં આવે તો પછી કોઈ પણ છવને સમકિતનો લાભ થઈ શકે નહિ ?

ઉત્તર—આ કથન અવ્યવહાર-રાગિમાં રહેનાર છવોની અપેક્ષાથી જ  
સમજવું જોઈએ, વ્યવહાર-રાગિમાં રહેલાં છવોની અપેક્ષાએ નહિ.

અથવા આ સૂત્રનું વ્યાખ્યાન આ પ્રકારે પણ થાય છે—ભોગોના વિષયને મહા  
કષ્ટપ્રદ બાણીને જે પૂર્વમાં ભોગવેલાં પાંચ ઇન્દ્રિયોના વિષયશુભનું સ્મરણ સુદ્ધાંત  
કરતો નથી, અને તે શુભની ભવિષ્યમાં પણ પ્રાપ્તિની વાછાથી સર્વથા દૂર છે,  
એવા છવને વર્તમાનકાળમાં પ્રાપ્ત તે શુભ ભોગેચ્છારૂપ રાગનું કારણ કેવી રીતે  
હોઈ શકે ? અર્થાત્ નથી થતું.

યસ્ય કાલત્રયેઽપિ ભોગેચ્છા નાસ્તિ, સ કિંભૂતઃ સ્યાદિત્યાહ—‘સે હુ’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્—સે હુ પન્નાણમંતે બુદ્ધે આરંભોવરણ । સમ્મમેયંતિ પાસહ । જેણ વંધં વહં ઘોરં પરિયાવં ચ દારુણં ॥ સૂ૦ ૭ ॥

છાયા—સ હુ પ્રજ્ઞાનવાન્ બુદ્ધઃ આરમ્ભોપરતઃ । સમ્યગેતદિતિ પશ્યત । યેન વન્ધં વંધં ઘોરં પરિતાપં ચ દારુણમ્ ॥ સૂ૦ ૭ ॥

ટીકા—હુ=યતઃ—ભોગાભિલાષરહિતઃ, તસ્માત્ સ પ્રજ્ઞાનવાન્=જીવાજીવાદિ-પદાર્થાનાં સમ્યગ્જ્ઞાતા, અત એવ બુદ્ધઃ=તત્ત્વજ્ઞઃ, આરમ્ભોપરતઃ=આરમ્ભઃ=સાવધ-વ્યાપારસ્તસ્માદુપરતો=નિવૃત્તઃ । એતદ્=આરમ્ભોપરમણં, સમ્યક્=સમ્યક્ત્વમસ્તિ । સમ્યક્ત્વે સતિ દિ આરમ્ભનિવૃત્તિરુપજાયતે, તસ્માત્ સમ્યક્ત્વકાર્યતયાઽઽરમ્ભોપ-

વાત મી ટીક હૈ; જિસકે મોહનીય કર્મ કા ઉપશમ હો ચુકા હૈ ઉસ વ્યક્તિ કે લિયે ભોગેચ્છા-વિષયસુખોં કો ભોગને કી લાલસા-હો હી કૈસે સકતી હૈ? ભોગેચ્છા યહ મોહનીય કર્મ કા હી એક કાર્ય હૈ, અતઃ જવ મોહનીય કર્મ હી ઉપશમ અવસ્થામેં હૈ તવ ભોગેચ્છારૂપ કાર્ય કા આવિર્ભાવ હો મી કૈસે સકતા હૈ ॥ સૂ૦ ૬ ॥

જિસકે ત્રિકાલ મેં મી ભોગેચ્છા નહીં હૈ ઉસકી પ્રશંસા કરતે હુણ સૂત્રકાર કહતે હૈ—‘સે હુ’ ઇત્યાદિ ।

ભોગોં કો ભોગને કી અભિલાષા સે રિક્ત હોને કે કારણ વહ સંયમી જીવાજીવાદિક નવ તત્ત્વોં કે વાસ્તવિક સ્વરૂપ કા જ્ઞાતા બન કર તત્ત્વજ્ઞ હોતા હુઆ આરમ્ભ-સાવધવ્યાપારરૂપ પ્રવૃત્તિ-સે પરે હો જાતા હૈ, યહી સમ્યક્ત્વ હૈ । યદ્યપિ આરમ્ભનિવૃત્તિ, સમકિત કા કાર્ય હૈ; કયોં

વાત પણ ઠીક છે, જેને મોહનીય કર્મનો ઉપશમ થયેલ છે તે વ્યક્તિને માટે ભોગેચ્છા-વિષયસુખોને ભોગવવાની લાલસા જ કેવી રીતે થઈ શકે?, ભોગેચ્છા તે મોહનીય કર્મનું જ એક કાર્ય છે, માટે જ્યારે મોહનીય કર્મ જ ઉપશમ અવસ્થામાં છે ત્યારે ભોગેચ્છારૂપ કાર્યનો આવિર્ભાવ કેવી રીતે થઈ શકે? અર્થાત્—થઈ શકતો નથી. ॥ સૂ૦ ૬ ॥

જેને ત્રણ કાળમાં પણ ભોગેચ્છા નથી તેની પ્રશંસા કરતાં સૂત્રકાર કહે કે—‘સે હુ’ ઇત્યાદિ.

ભોગોને ભોગવવાની અભિલાષાથી રિક્ત હોવાના કારણે જીવાજીવાદિક નવ તત્ત્વોના વાસ્તવિક સ્વરૂપના જ્ઞાતા તે સંયમી તત્ત્વજ્ઞ બનીને આરંભ-સાવધ વ્યાપારરૂપ પ્રવૃત્તિથી દૂર થઈ જાય છે, એ જ સમ્યક્ત્વ છે, જે કે આરંભની

રમણમપિ સમ્યક્ત્વશબ્દવ્યપદેશ્યમિતિ ભાવઃ । ઇતિ=એવં પશ્યત=યૂયં જાનીત । યતઃ=યેન=આરમ્ભોપરમણરૂપેણ કારણેન ધોરં=ધોરદુઃસ્વજનકં કર્મબન્ધં, વધં, દારુણં=દુઃસહં પરિતાપં=શારીરં માનસં ચ દુઃસ્વં નાપ્નોતીત્યર્થઃ, તસ્માત્ સકલસાવધવ્યાપારેભ્યો નિવર્તિતવ્યમિતિ ભાવઃ । યદ્વા-યેન=આરમ્ભેણ સાવધાનુષ્ઠાનેન ધોરં વન્ધં વધં દારુણં પરિતાપં ચ પ્રાપ્નોતિ તસ્માદારમ્ભાદુપરતો ભવેદિત્યર્થઃ ॥ સૂ. ૭ ॥

કિ સમકિત કે હોને પર હી આરમ્ભનિવૃત્તિ હોતી હૈ, તો બી કારણ મેં કાર્ય કે ઉપચાર સે હી આરમ્ભનિવૃત્તિ કો સમકિત કહા ગયા હૈ, એસા મમઝ્ઞના ચાહિયે ।

જીવ ઇસ સાવધ વ્યાપાર કે પરિત્યાગ સે હી કર્મબન્ધ, વધ ઓર ઓર દુઃસહ શારીરિક એવં માનસિક કષ્ટોં સે સદા વચતા હૈ, ઇસ લિયે આત્મહિતૈષી કા કર્તવ્ય હૈ કિ વહ ઇસ સાવધવ્યાપારરૂપ ક્રિયા સે સદા દૂર રહે ।

વિશેષાર્થ—યહ નિશ્ચિત સિદ્ધાન્ત હૈ કિ સાવધ વ્યાપાર સે જીવોં કે પરિણામોં મેં દુર્વૃત્તિ સદા જાગૃત રહતી હૈ । ડસસે જીવ તરહ-તરહ કે સાધનોં કે જુટાને મેં હી અપને જીવન કો ચિતા દેતા હૈ । એસા ક્યોં હોતા હૈ? જવ હમ ઇસકા મૂઢ્ઢમ નિરીક્ષણ કરતે હૈં તો હમેં ઇસ કી તહ કા પતા અચ્છી તરહ સે લગ જાતા હૈ કિ વહ યહ વિષયભોગેચ્છા હી હૈ ।

ઇસકે પંદમેં ફસા હુઆ જીવ જ્ઞાતા એવં તત્ત્વજ્ઞ બનને કા ઢોંગ હી કરતા હૈ । ડસકે પાસ મેં નિજ કે હિત કે લિયે કુછ બી નહીં હોતા ।

નિવૃત્તિ સમકિતનું કાર્ય છે, કારણ કે સમકિતના થવાથી જ આરંભનિવૃત્તિ થાય છે, તો પણ કારણમા કાર્યના ઉપચારથી આરંભનિવૃત્તિને જ સમકિત કહેવામાં આવેલ છે, એમ સમજવું જોઈએ.

જીવ આ સાવધ-વ્યાપારના પરિત્યાગથી કર્મબંધ, વધ અને દુઃસહ શારીરિક માનસિક કષ્ટોથી સદા બચે છે, માટે આત્મહિતૈષીનું કર્તવ્ય છે કે તે સદા આ સાવધ-વ્યાપારથી દૂર રહે.

વિશેષાર્થ—એ નિશ્ચિત સિદ્ધાન્ત છે કે સાવધ વ્યાપારથી જીવોના પરિણામોમા સદા દુર્વૃત્તિ જાગૃત રહે છે, તે થકી જીવ તરહ-તરહના સાધનોને એકત્રિત કરવામાં જ પોતાના જીવનને વ્યતીત કરી દે છે. એમ કેમ બને છે? ત્યારે એમો તેનું સૂઢ્ઢમ નિરીક્ષણ કરીએ છીએ ત્યારે એમોને ચોકસપણે તેનું સમાધાન મળી જાય છે કે તે આ વિષય ભોગોજ છે.

એની પકડમા ફસેલાં જીવ જ્ઞાતા અને તત્ત્વજ્ઞ બનવાના ઢોંગ જ કરે છે. તેની પાસે પોતાના હિતને માટે કાંઈ પણ હોતું નથી, પોતાના વિષય કપાયની

અપને વિષયકષાય કી પુષ્ટિ જૈસે મી હો, ઉસકે લિયે વહ વિહિત અ-વિહિત સય તરહ કે ઉપાયોં કો કામ મેં લાતા હૈ । ડપર સે હી વહ સાધુ-વેષધારી હૈ, મીતર સે વહ અપને સચ્ચે હિતકે સાધનોં કા નાશ કરતા હૈ । સંસાર મેં ધર્મકા પતન મી ઇસી કી ઓટ લેકર હુએ હૈં ઓર હો રહે હૈં તથા આગે મી હોંગે ।

યહ વડી વલવની વ્યાધિ હૈ । ઇસકી ચિકિત્સા સદ્ગુરુ હી કર સકતે હૈં, અતઃ ઉનકા કથન હૈ કિ સર્વ પ્રથમ આત્મહિતૈષી જીવ ઇસકી ચિ-કિત્સા કરાને કે લિયે અપને મેં યોગ્યતા લાવે । યહ યોગ્યતા ઇક હી ભવમેં જીવ કો પ્રાપ્ત નહીં હો સકની । જો મી વર્તમાન ભવમેં યોગ્ય હુએ હૈં વે સય પૂર્વકે આરાધક જીવ થે, અતઃ ઇસ વ્યાધિ કી ચિકિત્સા કરાને કી યોગ્યતા પ્રાપ્ત કરને કી જીવમેં કટિબદ્ધતા હોની ચાહિયે । યહ કટિબદ્ધતા હી સમકિત હૈ, ચાહે યહ સ્વભાવ સે હો યા પરકે ઉપદેશ સે ।

યહ તો નિશ્ચિત હૈ કિ ઇમ પ્રકાર કી યોગ્યતા સે સંપન્ન આત્મા ભોગોં મેં લાલસાવાલા નહીં હોતા । ડસકી પ્રવૃત્તિ વહાં પર તપે હુએ લોહે પર પાંચ રખને જૈસી હી હોતી હૈ, અતઃ ધીરે ર અપની ઉન્નતિ કરતા હુઆ વિષય-ભોગેચ્છા સે સદા કે લિયે દૂર હો જાતા હૈ ઓર સાવચ વ્યાપારોં કો અનેક

પુષ્ટિ માટે તે વિહિત અવિહિત ળધા પ્રકારના ઉપાયો કરે છે ઉપરથી જ તે સાધુવેષધારી છે પણ અતરથી તે પોતાના સાચા હિતના સાધનોનો નાશ જ કરે છે. સંસારમાં ધર્મનું પતન પણ આવા જીવોના નિમિત્તે થયું છે, થઈ રહેલું છે અને આગળ પણ થશે.

આ મોટી ળળવાન વ્યાધિ છે. એની ચિકિત્સા સદ્ગુરુ જ કરી શકે છે. માટે તેમનું કથન છે—સર્વ પ્રથમ આત્મહિતૈષી જીવ તેની ચિકિત્સા કરાવવા માટે પોતાનામાં યોગ્યતા લાવે. યોગ્યતા એક જ ભવમાં જીવને પ્રાપ્ત થતી નથી. જે વર્તમાન ભવમાં યોગ્ય થયેલ છે તે ળધા પૂર્વના આરાધક જીવ હતા, માટે આ વ્યાધિની ચિકિત્સા કરાવવાની યોગ્યતા પ્રાપ્ત કરવા માટે જીવમાં કટિબદ્ધતા હોવી જોઈએ. આ કટિબદ્ધતા જ સમકિત છે, ભલે તે સ્વભાવથી હોય અગર પારકાના ઉપદેશથી હોય.

આ નિશ્ચિત છે કે આવી યોગ્યતાથી સંપન્ન આત્મા ભોગોમાં લાલસા રાખનાર નથી થતા તેની પ્રવૃત્તિ ત્યાં તપેલા લોઢા ઉપર પગ રાખવા જેવી થાય છે, માટે તે ધીરે ધીરે પોતાની યુક્તિ—પ્રયુક્તિથી વિષય ભોગેચ્છાથી સદાને માટે દૂર



કિં કૃત્વા સાવચ્ચવ્યાપારં પરિત્યજેદિતિ જિજ્ઞાસાયમાહ-‘પલિચ્છિદિય’ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્—પલિચ્છિદિય બાહિરંગં ચ સોયં, નિકમ્મદંસી ઇહ મચ્ચિણ્ણિં ॥ સૂ૦ ૮ ॥

છાયા—પ્રતિચ્છિદ્ય બાહ્યકં ચ સ્ત્રોતઃ નિષ્કર્મદર્શીં ઇહ મર્ત્યેષુ ॥ મૃ૦ ૮ ॥

ટીકા—વાહ્યકં=વહિર્ભવં હિરણ્યરજતમાતાપિત્રાદિસમ્બન્ધરૂપં, યદ્વા—પ્રાણા-  
તિપાતાદિકં સ્ત્રોતઃ=આસ્રવં કર્મબન્ધકારણં, ચ-શબ્દાદ્ રાગદ્વેષાત્મકં વિષયાભિલાષ-  
રૂપં વા અન્તરં સ્ત્રોતો વા પ્રતિચ્છિદ્ય=પ્રતિરુદ્ધ્ય, ઇહ=અસ્મિન્ લોકે, મર્ત્યેષુ=મનુષ્યેષુ  
મધ્યે નિષ્કર્મદર્શીં=કર્મણો નિષ્કાન્તઃ નિષ્કર્મા=મોક્ષઃ, તં દ્રષ્ટું શીલમસ્યેતિ નિ-  
ષ્કર્મદર્શીં=મોક્ષાભિલાષી સન્ સાવચ્ચવ્યાપારં પરિત્યજેદિત્યર્થઃ । યદ્વા—ઇહ=અસ્મિન્  
લોકે મર્ત્યેષુ=મનુષ્યેષુ વાહ્યકં સ્ત્રોતઃ પ્રતિચ્છિદ્ય નિષ્કર્મદર્શીં ભવતિ, મોક્ષ  
પ્રાપ્નોતીત્યર્થઃ ॥ મૃ૦ ૮ ॥

પ્રકાર કે ઘોર વધ, બંધન ઔર દારુણ પરિતાપ કા કારણ સમજી કર ઉનસે  
સર્વથા વિરક્ત હી રહના હૈ ॥ સૂ૦ ૭ ॥

इमी विषयकी पुष्टि करते हुए सूत्रकार कहते हैं-‘पलिच्छिदिय’इत्यादि

माता-पिता आदिक सचित्त, सुवर्ण-रजतादिक अचित्त परिग्रहरूप  
अथवा हिंसादिक पापरूप बहिरङ्ग स्रोतका एवं रागद्वेष अथवा विषया-  
भिलाषरूप अन्तरंग स्रोत का निरोध कर इस लोक के अन्दर मनुष्योंमें  
वसनेवाला निष्कर्मदर्शी--मोक्षाभिलाषी जीव सावच्य व्यापार का  
परित्याग करे ।

શાસ્ત્રકારોંને પરિગ્રહ દો પ્રકાર કા બનલાયા હૈ । (૧) બાહ્ય પરિગ્રહ  
ઔર (૨) અન્તરઙ્ગ પરિગ્રહ । ધનધાન્યાદિક ઔર માતાપિતાદિક બાહ્ય પરિ-  
ગ્રહ હૈ, વિષયાભિલાષાદિક તથા દ્વેષાદિક અન્તરઙ્ગ પરિગ્રહ હૈ । ‘પરિગ્રહ’

થઈ જાય છે, અને સાવચ્ચ વ્યાપારોને અનેક પ્રકારના ઘોર બધ, બંધન અને  
દારુણ-પરિતાપનું કારણ સમજીને તેનાંથી સર્વથા વિરક્તજ રહે છે. ॥ સૂ૦ ૭ ॥

આ વિષયની પુષ્ટિ કરતા સૂત્રકાર કહે છે—‘પલિચ્છિદિય’ ઇત્યાદિ.

માતા-પિતા-આદિક સચિત્ત, સુવર્ણ રજતાદિક અચિત્ત પરિગ્રહરૂપ અથવા  
હિંસાદિક-પાપરૂપ બહિરંગ સ્ત્રોત (માર્ગ) નો તેમજ રાગ દ્વેષ અથવા  
વિષયાભિલાષરૂપ અંતરંગ સ્ત્રોતનો નિરોધ કરી આ લોકની અદર મનુષ્યોમાં  
વસવાવાળો નિષ્કર્મદર્શી-મોક્ષાભિલાષી જીવ સાવચ્ચ વ્યાપારનો પરિત્યાગ કરે.

શાસ્ત્રકારોએ પરિગ્રહ બે પ્રકારનો બતાવેલ છે. (૧) બાહ્ય પરિગ્રહ અને  
(૨) અંતરંગ પરિગ્રહ. ધન-ધાન્યાદિક અને માતા-પિતાદિક બાહ્ય પરિગ્રહ છે, અને  
વિષયાભિલાષાદિક, તથા રાગ-દ્વેષાદિક અંતરંગ પરિગ્રહ છે. પરિગ્રહ શબ્દનો

शब्द का अर्थ यही है कि जिससे जीव कर्मों का ग्रहण करे। अर्थात् ममत्वभावसे ग्रहण करने को परिग्रह कहते हैं। मिथ्यात्व, अविरति, प्रमाद, कषाय और योग, ये सब अन्तरङ्ग-परिग्रह हैं। इन्हींसे जीव नवीन २ कर्मों का बन्ध किया करता है।

जिस प्रकार नौकामें पानी आने का कारण छिद्र होता है, उसी प्रकार आत्मामें नवीन २ कर्मों के आनेके लिये परिग्रह छिद्र के स्थानापन्न माना गया है। जैसे-मिथ्यादर्शनजन्य कर्मों का बंध (१) प्रथम गुणस्थान तक; अविरतिजन्य कर्मों का बन्ध (४) चतुर्थ गुणस्थान तक, प्रमादजन्य कर्मों का बन्ध (६) षष्ठ गुणस्थान तक, कषायजन्य कर्मों का बन्ध (१०) दशवें गुणस्थान तक, और योगजन्य कर्मों का बन्ध सयोगकेवलीनामक (१३) तेरहवें गुणस्थान तक जीवोंके होता है। स्रोत शब्द का अर्थ प्रवाह भी है। जिस प्रकार जलाशयों में प्रवाह के द्वारा पानी आता है उसी प्रकार अन्तरङ्ग और बहिरङ्ग परिग्रहरूप प्रवाहद्वारा आत्मामें नवीन २ कर्मों का बंध हुआ करता है, अतः संयमी जीव बाह्य परिग्रह से सर्वथा विरक्त हो जाता है। अन्तरङ्ग परिग्रह से भी वह अपने पदके अनुसार विरक्त ही रहता है। इसीलिये सूत्रकार कहते हैं कि जिस संयमी मुनिका लक्ष एक मोक्ष प्राप्ति करने का ही है वह मनुष्यलोकमें रहता हुआ भी सावद्य

अर्थ એજ છે કે જેનાથી જીવ કર્મોને ગ્રહણ કરે, અર્થાત્ મમત્વ-ભાવથી ગ્રહણ કરવું તેને પરિગ્રહ કહે છે. મિથ્યાત્વ, અવિરતિ, પ્રમાદ, કષાય અને યોગ, એ બધા અંતરંગ-પરિગ્રહ છે, એનાથી જ જીવ નવા નવા કર્મોનો બંધ કરે છે.

જેમ નૌકામાં પાણી આવવાનું કારણ છિદ્ર છે તેમ આત્મામાં નવા નવા કર્મોને આવવાને માટે પરિગ્રહ છિદ્ર છે. મિથ્યાદર્શનજન્ય કર્મોનો બંધ, પ્રથમ ગુણસ્થાન સુધી, અવિરતિજન્ય કર્મોનો બંધ ચોથા ગુણસ્થાન સુધી, પ્રમાદજન્ય કર્મોનો બંધ છઠ્ઠા ગુણસ્થાન સુધી, કષાયજન્ય કર્મોનો બંધ દશમા ગુણસ્થાન સુધી અને યોગજન્ય કર્મોનો બંધ સયોગકેવળીનામક તેરમા ગુણસ્થાન સુધી જીવોને થાય છે. સ્રોત શબ્દનો અર્થ પ્રવાહ પણ છે, જેમ જળાશયોમાં પ્રવાહ-દ્વારા પાણી આવે છે તેમ આ અંતરંગ અને બહિરંગ પરિગ્રહરૂપ પ્રવાહદ્વારા આત્મામાં નવા નવા કર્મોનો બંધ થયા કરે છે, માટે સંયમી જીવ બાહ્ય-પરિગ્રહથી સર્વથા વિરક્ત થઈ જાય છે. અંતરંગ પરિગ્રહથી પણ તે પોતાના પદના અનુસાર વિરક્ત જ છે. આ માટે જ સૂત્રકારનું કથન છે કે જે સંયમી મુનિનું લક્ષ્ય એક મોક્ષપ્રાપ્તિ કરવાનું જ છે તે મનુષ્ય લોકમાં રહેવા છતાં પણ સાવધ

નનુ કર્મોપાદાનરૂપં સ્રોતઃ કિં કૃત્વા પ્રતિચ્છેદ્યમિતિ જિજ્ઞાસાયમાહ--  
'કમ્મુણો' ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્—કમ્મુણો સફલત્તં દટ્ઠૂણં તઓ નિજ્જાઈ વેયવી ॥ સૂ. ૦ ૧ ॥

છાયા—કર્મણઃ સફલત્વં દટ્ઠા તતો નિર્યાતિ વેદવિત્ ॥ મૂ. ૦ ૧ ॥

ટીકા—મિથ્યાત્વાવિરતિપ્રમાદકપાયયોગૈઃ ક્રિયતે ઇતિ કર્મ=જ્ઞાનાવરણીયાદિ-  
કમ્, તસ્ય, સફલત્વં=જ્ઞાનાવરણાદિસ્વસ્થફલજનનાવશ્યમ્ભાવં, દટ્ઠા વેદવિત્—વેદ્યતે  
તત્ત્વાન્યનેતિ વેદઃ=આર્હતાગમઃ, તં વેત્તીતિ વેદવિત્—સર્વજ્ઞોપદેશજન્યસમ્યગ્જ્ઞાન-  
વાનિત્યર્થઃ, તતઃ=કર્મણઃ કર્મવન્ધકરણાત્ નિર્યાતિ=દૂરીભવતિ, કર્મવન્ધનનિવન્ધન-  
સકલસાવધવ્યાપારં પરિવર્જયતીત્યર્થઃ ॥ મૂ. ૦ ૧ ॥

વ્યાપારોં સે સદા વિરક્ત રહે । જિસસે જીવોં કો થોડે સે મી કષ્ટાદિક  
કા અનુભવ હો એસી કોઈ મી ક્રિયા વહ ન કરે । સાવધક્રિયા કરને-  
વાલે મનુષ્યોં કે સમ્પર્ક મેં રહતે હુણ મી અપને કો ઉસ વ્યાપાર સે બચા  
કર રાખના યહી તો સંયમી મુનિકી વિશેષતા હૈ ।

નિષ્કર્મદર્શી—ઈસ શબ્દ કા અર્થ મોક્ષાભિલાષી હૈ, ક્યોં કિ કર્મોં  
કે સમ્બન્ધ સે રહિત જો સ્થાન હૈ વહ નિષ્કર્મ હૈ, ઉસ સ્થાન કો દેખને  
કા જિસ કા સ્વભાવ હૈ એસા જીવ નિષ્કર્મદર્શી કહલાતા હૈ । સૂત્રમેં  
“ચ” શબ્દ અન્તરજ્ઞ પરિગ્રહ કા બોધક હૈ ॥ સૂ. ૦ ૮ ॥

સંયમી મુનિ કયા સમજી કર કર્મોં કે આને મેં કારણરૂપ ઇસ સ્રોત  
કો બન્દ કરે ? ઇસ પ્રકાર કી જિજ્ઞાસા કા સમાધાન કરતે હુણ સૂત્રકાર  
કહતે હૈ—‘કમ્મુણો’ ઇત્યાદિ ।

કર્મોં કો અપને ૨ ફલ કા દેનેવાલા જાનકર વહ જ્ઞાની—સંયમી મુનિ  
ઉન કર્મોં સે ઔર ઉનકે કારણોં સે દૂર હી રહતા હૈ ।

વ્યાપારોથી સદા વિરક્ત રહે. જેનાથી જીવોને થોડો પણ કષ્ટાદિકનો અનુભવ થાય  
તેવું કોઈ કાર્ય તેઓ ન કરે. સાવધ—વ્યાપાર કરવાવાળા મનુષ્યોનાં સંપર્કમાં રહેવા છતાં  
પણ પોતાની જાતને તેવા વ્યાપારથી દૂર રાખવું, એ જ સંયમી મુનિની વિશેષતા છે.

‘નિષ્કર્મદર્શી’ આ શબ્દનો અર્થ મોક્ષાભિલાષી છે, કારણ કે કર્મોના સંબંધથી  
રહિત જે સ્થાન છે તે નિષ્કર્મ છે, તે સ્થાનને દેખવાનો જેનો સ્વભાવ છે તેવો જીવ  
નિષ્કર્મદર્શી કહેવાય છે. સૂત્રમાં “ચ” શબ્દ અંતરંગ પરિગ્રહનો બોધક છે ॥ સૂ. ૦ ૮ ॥

શું સમજીને સંયમી મુનિ કર્મોને આવવાના કારણરૂપ આ સ્રોતને બંધ કરે ?  
આ પ્રકારની જિજ્ઞાસાનું સમાધાન કરતાં સૂત્રકાર કહે છે.—‘કમ્મુણો’ ઇત્યાદિ.

કર્મોને પોતપોતાના ફળને દેવાવાળા જાણીને તે સંયમી મુનિ તે કર્મોથી  
અને તેના કારણોથી દૂર જ રહે છે.

ममैव नायमाशयः किन्तु सर्वेषामर्हतामिति दर्शयितुं भगवान् प्राह—‘जे खलु भो’ इत्यादि ।

यद्वा—सम्यक्त्वमुक्तं, निरवद्यं तपश्चारित्रमपि, इदानीं तत्फलमाह—‘जे खलु भो’ इत्यादि ।

मूलम्—जे खलु भो ! वीरा समिया सहिया सयाजया संघ-  
डदंसिणो आओवरया अहातहा लोयं उवेहमाणा पाईणं पडीणं  
दाहिणं उईणं इय सच्चंसि परिविचिट्टिसु ॥ सू० १० ॥

छाया-ये खलु भो ! वीराः समिताः सहिताः सदायताः संघटदर्शिनः, आत्मोपरताः  
यथातथा लोकमुपेक्षमाणाः प्राचीनं प्रतीचीनं दक्षिणम्, इति सत्ये परिव्यस्थुः ॥ १० ॥

मिथ्यादर्शन, अविरति, प्रमाद, कषाय और योगों के द्वारा जो किये जाते हैं वे कर्म हैं । ये ज्ञानावरणीयादिक के भेद से आठ प्रकारके हैं । आत्मा के साथ इनका सम्बन्ध अनादिकाल से हो रहा है । कोई भी कर्म जब तक अपना फल नहीं देता तब तक वह आत्मा से नष्ट नहीं होता; यह नियम है, अतः वह वेदवित्=सम्यग्ज्ञानी पुरुष कर्मोंसे और उन कर्मों के कारण मिथ्यादर्शनादिकोंसे, तथा मिथ्यादर्शनादिके कारण कषायों से सदा दूर ही रहता है । अर्थात् कर्मबन्ध के कारणभूत समस्त सावध्य व्यापार का वह त्याग कर देता है ॥ सू० ९ ॥

इस कथन में सब तीर्थङ्करों की सम्मति प्रदर्शित करते हैं—‘जे खलु भो’ इत्यादि । अथवा समकित को कहा और निर्दोष तप चारित्र को भी कहा; अब उसका फल कहते हैं—‘जे खलु भो’ इत्यादि ।

मिथ्यादर्शन, अविरति, प्रमाद, कषाय અને યોગદ્વારા જે કરવામાં આવે છે તે કર્મ છે. તે જ્ઞાનાવરણીયાદિકના ભેદથી આઠ પ્રકારના છે. આત્માની સાથે તેનો સંબંધ અનાદિ કાળથી થઈ રહ્યો છે. કોઈ પણ કર્મ જ્યાં સુધી પોતાનું ફળ નથી આપતું ત્યાં સુધી તે આત્માથી નષ્ટ થતું નથી; એ નિયમ છે. તેથી તે વેદ-વિત્=સમ્યગ્જ્ઞાની પુરુષ કર્મોથી અને તે કર્મોના કારણ મિથ્યા-દર્શનાદિકો અને મિથ્યાદર્શનાદિકોના કારણ કષાયોથી સદા દૂરજ રહે છે. અર્થાત્ કર્મબંધના કારણભૂત સમસ્ત સાવધ્યવ્યાપારનો તે સદા ત્યાગ કરી દે છે. ॥ સૂ० ૯ ॥

આ કથનમાં બધા તીર્થંકરોની સંમતિ પ્રદર્શિત કરે છે—‘જે खलु भो’ ઇત્યાદિ. અથવા સમકિત કહ્યું, નિર્દોષ તપ ચારિત્ર પણ કહ્યું; હવે તેનું ફળ કહે છે—‘જે खलु भो’ ઇત્યાદિ.

ટીકા—‘મો’ ઇતિ શિષ્યામન્ત્રણાર્થઃ । સ વક્ષ્યમાણવિષયે શિષ્યસ્ય પુનઃ પુનરવધાનાર્થમામન્ત્રણં ઘોતયતિ । મોઃ શિષ્ય ! યે કેચન વીરાઃ=કર્મવિદારણાર્થમુત્સાહવન્તઃ, સમિતાઃ=સમિતિયુક્તાઃ, સહિતાઃ=સ્વહિતાર્થમુદ્યુક્તાઃ સમ્યગ્જ્ઞાનાદિ-યુક્તા વા, સદાયતાઃ=સર્વદા સંયમારાધનસાવધાનાઃ, સંઘટદર્શિનઃ=હેયોપાદેયસ્ય નિરન્તરદર્શિનઃ, યદ્વા-અવ્યાવાધાનન્દસ્વરૂપમોક્ષાભિલાષિણઃ, આત્મોપરતાઃ—

પાંચ સમિતિયોં મેં લવલીન, આત્મહિત કી પ્રાપ્તિ મેં ઉદ્યમી અથવા સમ્યગ્જ્ઞાનાદિક ગુણોં સે યુક્ત, સર્વદા સંયમ કી આરાધના કરનેમેં સાવધાન, હેયોપાદેય કે વિવેક સે યુક્ત અથવા અવ્યાવાધ-આનન્દ-સ્વરૂપ મોક્ષકે અભિલાષી, કષાયવિશિષ્ટઆત્માસે સદા પરે રહનેવાલે ઔર યથાવસ્થિતકર્મલોક કી અથવા શબ્દાદિવિષયોં કી સદા ઉપેક્ષા કરને વાલે, કર્મોં કો વિદારણ કરનેમેં ઉત્સાહશાલી જો કોઈ ભવ્ય વીર પૂર્વ, પશ્ચિમ, ઉત્તર ઔર દક્ષિણ દિશા મેં હુયે હૈં વે સબ સત્ય-મોક્ષસ્થાનમેં સ્થિત હો ચુકે હૈં ।

સૂત્રકાર ઇસ સૂત્ર મેં નિર્દોષ તપ-ચારિત્ર કી આરાધના કા ફલ પ્રકટ કરતે હુએ શિષ્યોં સે કહ રહે હૈં કિ જિન ભવ્યવીરોં ને પાંચ સમિતિયોં કા નિર્દોષ રીતિસે પાલન કિયા હૈ, આત્મહિત કી પ્રાપ્તિ મેં જિન્હોંને કુછ બી નહીં બાકી રહ્યા, નિર્દોષ સંયમ કી આરાધના કરનેમેં હી જિન્હોં ને અપને જીવન કો ચિતાયા, હેયોપાદેય કે સુન્દર વિવેક સે જિન્હોંને મોહ-મમત્વ પર વિજય પ્રાપ્ત કી, જિન્હોંને કષાય કે ઉદય કો

પાંચ સમિતિઓમાં રાચવાવાળાં, આત્મહિતની પ્રાપ્તિમાં ઉદ્યમી, અથવા સમ્યગ્જ્ઞાનાદિક ગુણોથી યુક્ત, સર્વદા સંયમની આરાધના કરવામાં સાવધાન, હેયોપાદેયના વિવેકથી યુક્ત, અથવા અવ્યાવાધ-આનન્દસ્વરૂપ મોક્ષના અભિલાષી, કષાયવિશિષ્ટ આત્માથી સદા દૂર રહેવાવાળાં, અને યથાવસ્થિત કર્મલોકની અથવા શબ્દાદિવિષયોની સદા ઉપેક્ષા કરવાવાળાં કર્મોનું વિદારણ કરવામાં ઉત્સાહશાળી જે ભવ્ય વીરો, પૂર્વ, પશ્ચિમ, ઉત્તર અને દક્ષિણ દિશાઓમાં થયા છે તે બધા સત્ય-મોક્ષસ્થાનમાં સ્થિત થઈ ચૂકેલ છે.

સૂત્રકાર આ સૂત્રમાં નિર્દોષ તપ-ચારિત્રની આરાધનાનું કૃણ પ્રગટ કરીને શિષ્યોને કહે છે કે જે ભવ્ય વીરોએ પાંચ સમિતિઓનું નિર્દોષ રીતિથી પાલન કર્યું છે, આત્મહિતની પ્રાપ્તિમાં જેમણે કાંઈ પણ ખાટી ન રાખ્યું, નિર્દોષ સંયમની આરાધના કરવામાં જે જેમણે પોતાના જીવનને વીતાવ્યા, હેયોપાદેયના સુન્દર વિવેકથી જેઓએ મોહ મમત્વ ઉપર વિજય પ્રાપ્ત કર્યો, જેઓએ કષાયના

आत्मनः=कपायात्मन उपरताः=निवृत्ताः यथातथा=यथावस्थितं, लोकं=कर्मलोकं, शब्दादिविषयलोकं वा, उपेक्षमाणाः=दृष्ट्याऽपश्यन्त आसन्, ते प्राच्यादिदिक्ष्ववस्थिताः, सत्ये=सत्यसुखजनकत्वात् सत्यो=मोक्षमार्गः, तत्र, परिव्यस्थुः=स्थितवन्तः, उदमुपलक्षणम्—तेनानागतवर्तमानयोरपि क्रियापदे संयोजनीये, यथा— ये वीराः सन्ति ते वर्तमानकाले पञ्चदशकर्मभूमिषु संख्येयाम्निष्ठन्ति, ये च भविष्यन्ति, ते चानागतकालेऽनन्ताः स्थास्यन्तीति ॥ सू० १० ॥

निष्फल क्रिया और इस कर्ममय लोक की अथवा शब्दादिक पांचइन्द्रियों के विषयों की तरफ थोड़ा सा भी ध्यान नहीं दिया, उन भव्यवीरों ने—चाहे वे किसी भी दिशा में क्यों न रहें हों—नियम से मोक्ष को अपने हाथ में कर लिया है। सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान और सम्यक्चारित्र की एकता के बिना मोक्ष की प्राप्ति नहीं हो सकती, यह जैनसिद्धान्त का अटल नियम है। पांचसमिति वगैरह के पालन में अपने को विसर्जित कर देना यह बात सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान और सम्यक्चारित्र की आराधना से ही आत्माको उपलब्ध होती है। सूत्र में “वीर” शब्द इसी बात की पुष्टि करता है। बाह्य जगत में शत्रुओं पर विजय प्राप्त करनेवाले लाखों क्या करोड़ों भी मनुष्य मिल सकते हैं, परन्तु जो अपने आत्मशत्रुओं—कर्मों पर विजय प्राप्त करने की कोशिश में हैं वे लाखों में क्या करोड़ों में भी एक दो मिलेंगे। पांच समितियों में लवलीन रहना, आत्महित की प्राप्ति में सदा उद्यम करते रहना, सर्वदा संयम की आराधना में जरा भी प्रमादशील न बनना, हेयोपादेय के विवेक में थोड़ी सी

ઉદ્યને નિષ્ફળ બનાવ્યો અને આ કર્મમય લોકની અથવા શબ્દાદિક પાંચ ઇન્દ્રિયોના વિષયોની તરફ થોડું પણ ધ્યાન નથી આપ્યું તેવા ભવ્ય વીરોએ ભલે તેઓ કોઈ પણ દિશામાં હોય તો પણ નિયમથી મોક્ષને પ્રાપ્ત કરેલ છે. સમ્યગ્દર્શન સમ્યગ્જ્ઞાન અને સમ્યક્ચારિત્રની એકતા વિના મોક્ષની પ્રાપ્તિ થતી નથી, એ જૈન-સિદ્ધાંતનો અટલ નિયમ છે. પાંચ સમિતિ વિગેરેના પાલનમાં પોતાને વિસર્જીત કરી દેવું, એ વાત સમ્યગ્દર્શન, સમ્યગ્જ્ઞાન અને સમ્યક્ચારિત્રની આરાધનાથી જ આત્માને ઉપલબ્ધ થાય છે. સૂત્રમાં જે “વીર” શબ્દ છે તે આ વાતની જ પુષ્ટિ કરે છે. બાહ્ય જગતમાં શત્રુઓ પર વિજય કરનારાઓ લાખો તો શું પણ કરોડો મનુષ્યો મળી રહેશે, પરંતુ પોતાના આત્મશત્રુઓ—કર્મ પર વિજય પ્રાપ્ત કરવાની કોશિશમાં હોય તેવા લાખો બંદકે કરોડોમાં પણ એક-બે મળશે. પાંચ સમિતિઓમાં રચ્યા રહેવું, આત્મહિતની પ્રાપ્તિમાં સદા ઉદ્યમ કરતા રહેવું, સર્વદા સંયમની આરાધનામાં જરા પણ પ્રમાદશીલ ન બનવું, હેયોપાદેયના



भी भूल न आने देना, कषायों से सदा सावधान रहना और शब्दादिक विषयों में सदा उपेक्षाभाव रखना, ये सब बातें—क्रियाएँ कर्मशत्रुओं पर विजय पाने में सैन्य का काम देती हैं। मोक्षाभिलाषी आत्मा सेनापति है, कर्मों की मूल-उत्तर-प्रकृतिरूप सेना शत्रुसैन्य है, उस पर विजय प्राप्त करने में इस योद्धा की ये पूर्वोक्त क्रियाएँ एक अक्षौहिणी सेना जैसी हैं, अतः यह आत्मा नियमसे कर्मसेना का पराभव कर अपने स्वभाव से ही मोक्ष का पूर्ण भोक्ता बन जाता है। इसमें जरा भी सन्देह नहीं।

सूत्र में “भो” शब्द शिष्यों के संबोधन के लिये आया है। वह भगवान् के कहे गये वचनों में शिष्यों का पुनः पुनः ध्यान आकर्षित करने के लिये कहा गया है। मूल में ‘परिविचिद्विसु’ यह भूतकालिक क्रियापद है। यह वर्तमान और भविष्यत्कालिक क्रियापद का भी उपलक्षण है। इसका अभिप्राय यह है कि भूतकाल में जितने भी वीर हुए हैं उन सबने तो मोक्ष का मार्ग प्राप्त कर ही लिया है, वर्तमान में भी जो पांच भरतक्षेत्र, पांच ऐरवत क्षेत्र और पांच महाविदेह क्षेत्र में संख्यात वीर हैं वे और अनागत कालमें जो अनंत वीर होंगे वे सब मोक्षके भोक्ता बनेंगे।

कर्मों के विदारण करने में उत्साहसम्पन्न को ‘वीर,’ पांच समितियों

વિવેકમાં જરા પણ ભૂલ ન આવવા દેવી, કષાયોથી સદા સાવધાન રહેવું, આ બધી વાતો—ક્રિયાઓ—કર્મશત્રુઓ ઉપર વિજય મેળવવામાં સૈન્યનું કામ કરે છે. મોક્ષાભિલાષી આત્મા સેનાપતિ છે. કર્મોની મૂળ—ઉત્તરપ્રકૃતિરૂપ સેના શત્રુસૈન્ય છે, તેના ઉપર વિજય પ્રાપ્ત કરવામાં આ યોદ્ધાની તે પૂર્વોક્ત ક્રિયાઓ એક અક્ષૌહિણી સેના જેવી છે, માટે તે આત્મા નિયમથી કર્મસેનાનો પરાભવ કરીને પોતાના સ્વભાવથી જ મોક્ષનો પૂર્ણ ભોક્તા બની જાય છે, તેમાં જરા પણ સંદેહ નથી.

સૂત્રમાં “ભો” શબ્દ શિષ્યોના સંબોધનને માટે આવેલ છે, તે લગવાને કહેલા વચનોમાં શિષ્યોનું વારંવાર ધ્યાન આકર્ષિત કરવાને માટે કહેવામાં આવેલ છે. મૂળમાં ‘પરિવિચિદ્વિસુ’ આ ભૂતકાલિક ક્રિયાપદ છે. આ વર્તમાન અને ભવિષ્યકાલિક ક્રિયાપદનું પણ ઉપલક્ષણ છે, આનો અભિપ્રાય એ છે કે—ભૂતકાળમાં જેટલા વીરો થયેલા છે તે બધાએ મોક્ષનો માર્ગ પ્રાપ્ત કરી જ લીધેલ છે. વર્તમાનમાં પણ જે પાંચ ભરતક્ષેત્ર, પાંચ ઐરવત ક્ષેત્ર અને પાંચ મહાવિદેહ ક્ષેત્રમાં સંખ્યાત વીરો છે, તેઓ અને આવતા કાળમાં જે અનંત વીરો થશે તેઓ બધા મોક્ષના ભોક્તા બનશે.

કર્મોનું વિદારણ કરવામાં ઉત્સાહસમ્પન્નને ‘વીર,’ પાંચ સમિતિઓનું પાલન

तेषां सत्यावस्थायिनां ज्ञानमाह—‘साहिस्सामो’ इत्यादि ।

मूलम्—साहिस्सामो नाणं वीराणं समियाणं सहियाणं सया-  
जयाणं संघटदंसीणं आओवरयाणं अहातहा लोयमुवेहमाणानं,  
किमात्थि उवाही? पासगस्सन विज्जइ, नत्थि-त्ति वेमि ॥ सू० ११ ॥

छाया—साधयिष्यामो ज्ञानं वीराणां समितानां सहितानां सदायतानां संघ-  
टदर्शिनान् आत्मोपरतानां यथातथा लोकमुपेक्षमाणानां, किमस्ति उपाधिः पश्य-  
कस्य? न विद्यते नास्ति, इति ब्रवीमि ॥ सू० ११ ॥

टीका—तेषां वीराणां समितानां सहितानां सदायतानां संघटदर्शिनान् आ-  
त्मोपरतानां यथातथा लोकमुपेक्षमाणानां ज्ञानम्=अभिप्रायं, साधयिष्यामः=कथ-  
के पालन करनेवाले को ‘समित,’ आत्मकल्याण में उद्यमशाली अथवा  
ज्ञानादिक गुणों से युक्त को ‘सहित,’ सर्वदा संयम की आराधना में  
सावधान को ‘सदायत,’ हेयोपादेय के विवेक से युक्त अथवा अव्याबाध  
आनन्दस्वरूप मोक्ष की अभिलाषावाले को ‘संघटदर्शी’ और कषायों  
से उपरत-निवृत्त जीवों को ‘आत्मोपरत’ कहते हैं ॥ सू० १० ॥

मोक्षमार्ग में रहनेवाले उन वीर-आत्माओं के ज्ञान के विषय में  
सूत्रकार कहते हैं—‘साहिस्सामो नाणं’ इत्यादि ।

हम वीर, समित, सहित, सदायत, संघटदर्शी, आत्मोपरत, यथा-  
वस्थित लोक की उपेक्षा करनेवाले उन मोक्षमार्ग के पथिकों के ज्ञान के  
विषय में आगे कथन करेंगे । अभी तो इतना ही कहते हैं कि उन  
वीरादिविशेषणविशिष्ट आत्माओं के कर्मजनित कोई भी उपाधिनहीं है ।

करवावाणाने ‘समित,’ आत्मकल्याणमां उद्यमशाली अथवा ज्ञानादिक गुणोत्थी  
युक्तने ‘सहित,’ सर्वदा संयमनी आराधनामां सावधानने ‘सदायत,’ हेयोपादेयना  
विवेकथी युक्त अथवा अव्याबाधआनन्दस्वरूप मोक्षनी अभिलाषावाणाने ‘संघ-  
टदर्शी’ अने उपायेथी उपरत-निवृत्त एवने ‘आत्मोपरत’ कहे छे ॥ सू० १० ॥

मोक्षमार्गमां रहवावाणा ते वीर-आत्माओना ज्ञानना विषयमा सूत्रकार  
कहे छे.—“साहिस्सामो नाणं” इत्यादि.

अमे वीर, समित, सहित, सदायत, संघटदर्शी, आत्मोपरत अने यथा-  
वस्थित लोकनी उपेक्षा करवावाणां ते मोक्षना पथिकेना ज्ञानना विषयमा आगण  
कहीशुं. हमणां तो आट्ठु कहीअे छीअे के ते वीरादिविशेषणविशिष्ट आत्मा-  
ओने कर्मजनित (कर्मथी-थनारी) कोट्ठयणु उपाधि नथी.

વિપ્યામઃ । વીરાદિવિશેષણગદ્વા અનન્તરપૂર્વસૂત્રે વ્યાખ્યાતાઃ । શિષ્યઃ પૃચ્છતિ-  
કિમસ્તિ ઉપાધિરિતિ । કિં તેષાં મહાપુરુષાણામુપાધિરસ્તિ ?, ઉત્તરવાક્યમાહ-  
‘પઙ્ગકસ્ય’ इत्यादि । पङ्गकस्य=सम्यग्दर्शनादिकं मोक्षमार्गं पङ्गयतीति पङ्गयः,  
સ એવ પઙ્ગક, તસ્ય કર્મજનિતોપાધિર્ન વિદ્યતે નાસ્તિ, इति ब्रवीमि=मया यथा  
भगवद्वाक्यं श्रुतं तथा कथयामीत्यर्थः ॥ सू० ११ ॥

चतुर्थीव्ययनस्य चतुर्थोद्देशः समाप्तः ॥ ४-४ ॥

भावार्थ—जब तक जीव अपने शुद्धस्वरूप-निर्विकार आनन्द-स्वरूप  
सुक्तिको प्राप्त नहीं कर लेता है तब तक वह कर्मों से निर्लिप्त नहीं हो  
सकता है । ऐसी अवस्था में जब तक सांसारिक दशा है अथवा संसार  
में रहना है तब तक कर्मों के चक्र में प्रत्येक प्राणी फँसा हुआ ही है ।  
जो कर्मों का कर्ता है वह उसके फल का भी भोक्ता माना जाता है ।  
अपि यह नियम अटल है परन्तु ज्ञानी जीव उसके अपवादस्वरूप हैं,  
क्यों कि चारित्रमोहनीय के उदयसे जब तक चारित्र का अभाव उनकी  
आत्मा में नहीं हुआ है तब तक दर्शनमोहनीय कर्म के उदय से उत्पन्न  
होनेवाला कर्मबन्ध उनको नहीं होता है । जिनने अंश में परपदार्थों से  
निवृत्ति है उनने अंशों में आत्मा में शुद्धि का सद्भाव भी है, अर्थात्  
दर्शनमोहनीय कर्म के उपशम, क्षय और क्षयोपशमसे जिननी भी  
आत्मा से अतत्त्वश्रद्धानपरिणति का अंत होगा उनकी ही आत्मजागृति-  
रूप शुद्धपरिणति का विकास वहां पर होगा ।

ભાવાર્થ—જ્યાં સુધી જીવ પોતાના શુદ્ધસ્વરૂપ-નિર્વિકાર આનંદ-સ્વરૂપ  
સુક્તિને પ્રાપ્ત નથી કરી લેતો, ત્યાં સુધી તે કર્મોથી નિર્લિપ્ત થતો નથી. આવી  
અવસ્થામાં જ્યાં સુધી સાંસારિક દશા છે, અથવા સંસારમાં રહેવાનું છે ત્યાં  
સુધી કર્મોના ચક્રમાં પ્રત્યેક પ્રાણી ફસાયેલાં જ છે. જે કર્મોનો કર્તા છે તે  
તેના ફળનો પણ ભોક્તા મનાય છે. જે કે આ નિયમ અટલ છે છતાં પણ જ્ઞાની જીવ  
તેના અપવાદસ્વરૂપ છે, કેમ કે ચારિત્રમોહનીયના ઉદયથી જ્યાં સુધી ચારિત્રનો  
અભાવ તેના આત્મામાં નથી થયો ત્યાં સુધી દર્શન-મોહનીય કર્મના ઉદયથી  
ઉત્પન્ન થનાર કર્મબંધ તેને થતું નથી. જેટલા અંશમાં પરપદાર્થોની નિવૃત્તિ છે  
તેટલા અંશોમાં આત્મામાં શુદ્ધિનો સદ્ભાવ પણ છે, અર્થાત્ દર્શન-મોહનીય  
કર્મના ઉપશમ, ક્ષય, અને ક્ષયોપશમથી આત્મામાં જેટલી પણ અતત્ત્વશ્રદ્ધાના  
પરિણુતિનો અંત થશે તેટલી જ આત્મજાગૃતિરૂપ શુદ્ધ પરિણુતિનો વિકાસ ત્યાં થશે.

સમ્યક્ત્વકરયા, યુક્ત્યા, સમ્યક્ત્વં તત્કલ્પાનિ ચ ।

વિદૂષ્યાનાર્યવચનં, ચતુર્થેઽધ્યયનેઽવ્રવીત્ ॥ ૧ ॥ ઇતિ ।

॥ ઇતિશ્રી-વિશ્વવિખ્યાત-જગદ્ગુરુ-પ્રસિદ્ધવાચક-પશ્ચદશભાષાકલિતલલિત-  
કલાપાળાપક-પ્રવિશુદ્ધગદ્યપદ્યનૈકગ્રન્થનિર્માપક-વાદિમાનમર્દક-શાહુ-  
છત્રપતિ-કોલ્હાપુરરાજગદ્ય-“ જૈનશાસ્ત્રાચાર્ય ”-પદ્મધૂપિત-  
કોલ્હાપુરરાજગુરુ-વાલ્મીકીચારિ-જૈનાચાર્ય-જૈનધર્મદિવાકર  
પૂજ્ય-શ્રી ઘાસીલાલ-વ્રતિવિરચિતાયામ્ આચારાઙ્ગમૂત્ર-  
સ્યાઽઽચારચિન્તામણિટીકાયાં સમ્યક્ત્વાખ્યં ચતુર્થ-  
અધ્યયનં સમ્પૂર્ણમ્ ॥ ૪ ॥

સમકિત કે પ્રાપ્ત હોતે હી આત્મા મેં આત્મસ્વરૂપ કા જ્ઞાન હોને સે  
આંશિક રૂપ મેં સમ્યગ્જ્ઞાન ઓર સ્વાનુભવ મેં રમણરૂપ આંશિક ચારિત્ર  
મી સમકિતી કો ઉત્પન્ન હો જાના હૈ, અતઃ યદાં પર સૂત્રકાર મોક્ષમાર્ગ  
કે પથિકોં કો કર્મજન્ય ઉપાધિકા અભાવ વતલાતે હૈં, ક્યોં કિ અજ્ઞાની  
જીવોં કો હી કર્મજન્ય ઉપાધિ હુઆ કરતી હૈ, જ્ઞાની જીવોં કે નહોં ।

હસ પ્રકરણ કી સમાપ્તિ કરતે હુએ શ્રી સુધર્માસ્વામી કહતે હૈં કિ  
હે જમ્બુ ! જિસ પ્રકાર સે મૈને યહ ભગવાન કે સમીપ સુના હૈ ઉસી  
પ્રકાર મૈં કહતા હૂં ॥ સૂ. ૧૧ ॥

ચૌથે અધ્યયનકા ચૌથા ઉદ્દેશ સમાપ્ત ॥ ૪-૪ ॥

ચૌથે અધ્યયન મેં જો વિષય કહે ગયે હૈં ડનકા સંક્ષિપ્ત વર્ણન શ્લોક  
દ્વારા કરતે હૈં—‘ સમ્યક્ત્વકરયા ’ ઇત્યાદિ ।

સમકિત પ્રાપ્ત થતાં જ આત્મામાં આત્મસ્વરૂપનું જ્ઞાન થવાથી આંશિક રૂપમાં  
સમ્યગ્જ્ઞાન અને સ્વાનુભવમાં રમણરૂપ આંશિક ચારિત્ર પણ સમકિતીને ઉત્પન્ન  
થાય છે, માટે આ ઠેકાણે સૂત્રકાર મોક્ષમાર્ગના પથિકોને કર્મજન્ય ઉપાધિનો અભાવ  
બતાવે છે, કેમકે અજ્ઞાની જીવોને જ કર્મજન્ય ઉપાધિ થાય છે, જ્ઞાની જીવોને નહિ.

આ પ્રકરણની સમાપ્તિ કરતાં શ્રી સુધર્માસ્વામી કહે છે કે હે જમ્બુ !  
જે પ્રકારે મેં ભગવાનની સમીપ આ સાંભળ્યું છે તે પ્રકારે હું કહું છું. ॥સૂ. ૧૧॥

ચૌથા અધ્યયનનો ચૌથો ઉદ્દેશ સમાપ્ત ॥ ૪-૪ ॥

ચૌથા અધ્યયનમાં જે વિષય કહેવાયા છે તેનું સંક્ષિપ્ત વર્ણન શ્લોકદ્વારા  
કરે છે—‘ સમ્યક્ત્વકરયા ’ ઇત્યાદિ.

सम्यक्त्व को पुष्ट करनेवाली युक्ति से सम्यक्त्व का वर्णन तथा अनार्यों के वचनों का निराकरण करके सम्यक्त्वका फल इस चौथे अध्ययन में कहा गया है ॥ १ ॥

यह आचाराङ्गसूत्रके सम्यक्त्व नामके चौथे अध्ययनकी आचार-  
चिन्तामणि-टीकाका हिन्दीभाषानुवाद सम्पूर्ण ॥ ४ ॥

सम्यक्त्वने पुष्ट करवावाणी युक्तिथी सम्यक्त्वतुं वर्णन, तथा अनार्योंना  
वचनोतुं निराकरण करीने सम्यक्त्वतुं इण आ ओथा अध्ययनमां कह्युं छे, ॥ १ ॥

आ आचाराङ्गसूत्रना सम्यक्त्वनामना ओथा अध्ययननी आचार-  
चिन्तामणि-टीकाने गुणशती अनुवाद संपूर्ण ॥ ४ ॥



[ ૧ ]

શ્રી અખિલ ભારત શ્વેતામ્બર સ્થાનકવાસી

જૈન શાસ્ત્રોદ્ધાર સમિતિ

ગરેડીઆ કુવા રોડ - શ્રીન લોજ પાસે

રાજકોટ



સમિતિની શરૂઆત તા. ૧૮-૧૦-૪૪ થી  
તા. ૩૧-૧-૫૭ સુધીમાં દાનવીર મહાશયે  
તરફથી મળેલી રકમોની નામાવલી.



( રૂ. ૨૫૦ થી ઓછી રકમો આ યાદીમાં સામેલ કરેલ નથી. )





આદ્ય મુરખખીશ્રી-૪

( ઓછામાં ઓછી રૂ. ૫૦૦૦ ની રકમ આપનાર )

૧૦૦૦૦	શેઠ શાંતિલાલ મંગળદાસભાઈ, પ્રમુખ સાહેબ	અમદાવાદ
૬૦૦૦	શેઠ હરખચંદ કાલીદાસભાઈ	ભાણુવડ
	( હા. શેઠ લાલચંદભાઈ, જેયંદભાઈ, નગીનદાસભાઈ, વૃજલાલભાઈ તથા વલ્લભદાસભાઈ )	
૫૨૫૧	કેઠારી જેયંદભાઈ અજરામર હા. હરગોવિંદભાઈ જેયંદ	રાજકોટ
૫૦૦૧	શેઠ ધારશીભાઈ જીવનભાઈ	સોલાપુર

મુરખખીશ્રીઓ-૨૦

( ઓછામાં ઓછી રૂ. ૧૦૦૦ ની રકમ આપનાર )

૩૬૦૫	વકીલ જીવરાજ વર્ધમાન હા. કેઠારી કહાનદાસભાઈ તથા વેણીલાલભાઈ	જેતપુર
૩૬૦૪	દોશી પ્રભુદાસ મુળજીભાઈ	રાજકોટ
૩૨૮૬૧૧૧૧	મહેતા શુભાખચંદ પાતાચંદ	"
૩૧૦૧	સંઘવી પીતામ્બરદાસ શુભાખચંદ	જામનગર
૨૫૦૦	શેઠ શામજીભાઈ વેલજી વીરાણી	રાજકોટ
૨૦૦૦	નામદાર ઠાકોર સાહેબ લખધીરસીંહજી બહાદુર	મોરબી
૨૦૦૦	શેઠ લહેરચંદ કુંવરજી હા. શેઠ ન્યાલચંદભાઈ લહેરચંદ	સીધપુર
૨૦૦૦	શાહુ છગનદાસ હેમચંદ વસા હા. મોહનલાલભાઈ તથા મોતીલાલભાઈ	મુંબઈ
૧૬૬૩	શ્રી સ્થાનકવાસી જૈન સંઘ	મોરબી
૧૦૦૧	શેઠ આત્મારામ માણેકલાલ	અમદાવાદ
૧૦૦૧	શેઠ માણેકલાલ ભાણુજીભાઈ	પોરબંદર
૧૦૦૦	શેઠ સોમચંદ તુલસીદાસ	રતલામ
૧૦૦૦	કેઠારી છત્રીલદાસ હરખચંદ	મુંબઈ
૧૦૦૦	કેઠારી રંગીલદાસ હરખચંદ	શીહોર
૧૦૦૨	બગડીઆ જગજીવનદાસ રતનશી	દામનગર
૧૦૦૧	શ્રીમાત ચંદ્રસિંહજી મહેતા ( રેલ્વે મેનેજર સાહેબ ) કલકત્તા	
૧૦૦૧	મહેતા પોપટલાલ માવજીભાઈ	જામજેધપુર
૧૦૦૧	મહેતા મોમચંદ નેણશીભાઈ ( કરાંચીવાળા )	મોરબી
૧૦૦૧	શાહ હરીલાલ અનુપચંદ	ખંભાત
૧૦૦૨	દોશી કપુરચંદ અમરશી હા. દલપતરામ કપુરચંદ દોશી	જામ જોધપુર

## સહાયક મેમ્બરો-૨૧

( ઓછામાં ઓછી રૂ. ૫૦૦ ની રકમ આપનાર )

૭૫૦	શ્રી સ્થાનકવાસી જૈન સંઘ હા. શેઠ ઝુઝાભાઈ વેલસીભાઈ	વઢવાણ શહેર
૭૫૦	મોદી કેશવલાલ હરચંદ	સાબરમતી
૭૦૦	શેઠ નરોત્તમદાસ ઓઘડભાઈ	જોરાવરનગર
૫૦૧	શેઠ શીવલાલ ડમરભાઈ	લીંબડી
૫૦૦	કામદાર તારાચંદ પોપટલાલ ધોરાજીવાળા	રાજકોટ
૫૦૦	શ્રી સ્થાનકવાસી જૈન સંઘ	થાનગઢ
૫૦૦	શેઠ તારાચંદજી પુખરાજજી	ઔરંગાબાદ
૫૦૦	શ્રી સ્થાનકવાસી જૈન સંઘ	ઔરંગાબાદ
	૧૫૦ શેઠ શેષમલજી જીવરાજજી	
	૧૨૫ „ અનરાજજી લાલચંદજી	
	૧૨૫ „ ધુકડચંદજી રૂપચંદજી	
	૧૦૦ „ દગડુમલજી ચાંદમલજી	
	૫૦૦	
૫૦૦	મહેતા મોહનલાલ કપુરચંદ	રાજકોટ
૫૦૦	શેઠ ગોવીંદજી પોપટભાઈ	રાજકોટ
૫૦૦	મહેતા મુળચંદ રાઘવજી હા. મગનલાલભાઈ તથા હર્શલજીભાઈ	ધ્રાંશ
૫૦૦	શેઠ હરખચંદ પરસોત્તમ હા ભાઈ ઈન્દુકુમાર	ચોરવાડ
૫૦૧	શેઠ ખીમજી બાવાભાઈ હા. તેમના પુત્રો કુલચંદભાઈ નાગરદાસભાઈ, શુભાખચંદભાઈ તથા જમનાદાસભાઈ	મુંબઈ
૫૦૧	શેઠ મણીલાલ મોહનલાલ ડગલી હા. શેઠ મુલજીભાઈ મણીલાલ મુંબઈ	
૫૦૧	શેઠ ઈશ્વરલાલ પુરૂષોત્તમદાસ	અમદાવાદ
૫૦૧	શેઠ ચંદુલાલ છગનલાલ	અમદાવાદ
૫૦૧	સ્વ ઇંતીલાલભાઈના સ્મરણાર્થે હ. શેઠ બાલચંદ સાકરચંદ	મુંબઈ
૫૦૦	અ. સૌ. બેન મણીગૌરી મગનલાલ તે મહેતા સોમચંદ તુલસીદાસનાં ધર્મપત્નિ	રતલામ
૫૦૧	સ્વ પીતાશ્રી નંદાજીના સ્મરણાર્થે હ. વેણીચંદ શાંતીલાલ (બાબુઆવાળા)	મેઘનગર

૭૫૧	શાહ રંગજીભાઈ મોહનલાલ	અમદાવાદ
૫૦૧	કામદાર રતીલાલ ફુલ્લજી જેતપુરવાળા	મુંબઈ

### પ્રથમ વર્ગના મેમ્બરો-૧૮૫

(ઑછામાં ઑછી રકમ રૂ. ૨૫૦ આપનાર)

૪૦૨	શ્રી સ્થાનકવાસી જૈન સંઘ	ધ્રાક્ષા
૪૦૦	ધી વાડીલાલ ડાઇંગ એન્ડ પ્રિન્ટીંગ વર્ક્સ	રાજકોટ
૩૫૩	શેઠ રતનશી હીરજીભાઈ હા. ગોરધનદાસભાઈ	જામજેઘપુર
૩૦૧	શેઠ જેયંદભાઈ માણેકચંદ	ભાણુવડ
૨૫૧	સંઘવી માણેકચંદ માધવજી	ભાણુવડ
૨૫૧	શેઠ લાલજીભાઈ માણેકચંદ (લાલપુરવાળા)	ભાણુવડ
૨૫૧	શેઠ રામજી ઝીણાભાઈ	ભાણુવડ
૨૫૧	પંચમીયા ભવાનભાઈ કાળાભાઈ	વડીઆ
૨૫૧	શ્રી સ્થાનકવાસી જૈન સંઘ	વાંઠાનેર
૨૫૧	શેઠ રતીલાલ ન્યાલચંદ	રાજકોટ
૨૫૦	બાબુ પરશુરામ છગનલાલ શેઠ (ઉદેપુરવાળા)	રાજકોટ
૨૫૧	શેઠ મગનલાલ છગનલાલ વિશ્રામ (ધ્રાક્ષાવાળા)	રાજકોટ
૨૫૧	શેઠ જેઠાલાલ ગોરધનદાસ	ઉપલેટા
૨૫૧	સ્વ. બહેન સંતોષ કચરા હા. ઓતમચંદભાઈ, છોટાલાલભાઈ તથા અમૃતલાલભાઈ વાલજી (કલ્યાણવાળા)	ઉપલેટા
૨૫૧	શેઠ ખુશાલચંદભાઈ કાનજીભાઈ હા. શેઠ પ્રતાપભાઈ	ઉપલેટા
૪૭૭	શ્રી સ્થાનકવાસી જૈન સંઘ	ખાખીજાળીયા
૨૫૧	શેઠ છોટાલાલ કેશવજી	જામનગર
૨૫૧	શાહ લક્ષ્મીચંદ કપુરચંદ	જેતલસર જંકશન
૨૫૧	શાહ ચતુરદાસ ઠાકરશીભાઈ	જામનગર
૨૫૧	ખંડેરીયા કાન્તીલાલ ત્રંબકલાલ (સ્ટેશન માસ્તર)	સુરેન્દ્રનગર
૨૫૧	શાહ કેશવલાલ જેયંદ	વેરાવલ
૨૫૧	શાહ ખીમચંદ સોભાગચંદ વસનજી	વેરાવલ
૨૫૧	સ્વ. બાબડા વચ્છરાજ તુલસીદાસનાં ધર્મપત્ની કમળભાઈ તરફથી હા. માણેકચંદભાઈ તથા કપુરચંદભાઈ	ગોંડલ
૨૫૧	શેઠ છગનલાલ નાગજીભાઈ	મુંબઈ
૨૫૧	ઘેલાણી ત્રીકમજી લાધાભાઈ	જુનારદેવ

૨૫૧	શેઠ ગીરધરલાલ કરમચંદ	અમદાવાદ
૨૫૧	શેઠ છોટાલાલ વખતચંદ	અમદાવાદ
૨૫૧	ગોસલિયા હરિલાલ લાલચંદ	અમદાવાદ
૨૫૧	શેઠ પ્રેમચંદ માણેકચંદ	અમદાવાદ
૨૫૧	શેઠ માણેકલાલ ભગવાનદાસ	ખંભાત
૨૫૧	શ્રી સ્થાનકવાસી જૈન સંઘ હા. શેઠ મોહનલાલ ઇચ્છારામ	ખંભાત
૨૫૧	શેઠ રમણીકલાલ એ. કપાસી	આણંદ
૨૫૧	ખડેન સુરીખડેન (લક્ષ્મીબેન)	
	હા મહેતા હરીલાલ પીતામ્બરદાસ	પાલણપુર
૨૫૦	શેઠ વાડીલાલ નેમચંદ વકીલ	વીરમગામ
૨૫૧	શાહ વીઠલદાસ મોહી માસ્તર	વીરમગામ
૨૫૧	શાહ નાગરદાસ માણેકચંદ	વીરમગામ
૨૫૧	શાહ મણીલાલ જીવણલાલ	વીરમગામ
૨૫૧	શાહ નાગરદાસ વાધજીભાઈ	અમલનેર
૨૫૧	શ્રી સ્થાનકવાસી જૈન સંઘ	અમલનેર
૨૫૧	શેઠ મનુભાઈ મુળચંદ (ઈન્જીનીયર સાહેબ)	રાજકોટ
૨૫૧	શેઠ શાંતિલાલ પ્રેમચંદ	
	[ તેમનાં ધર્મપત્નીના વરસીતપ પ્રસંગે ખુશાલીના ]	રાજકોટ
૨૫૦	શ્રી સ્થાનકવાસી જૈન સંઘ હા. ચંપાલાલજી મારવે	ડોંડાઈચા
૨૫૧	શેઠ મોતીલાલજી રણજીતલાલજી હીગડ	ઉદેપુર
૨૫૦	શેઠ બાદરમલજી સુરજમલજી બેન્કર્સ	ચાદગીરી
૨૫૦	શેઠ ગોપાલજી મીઠાભાઈ	હાટીના માળીયા
૨૫૧	ઉદાણી ન્યાલચંદ હાકેમચંદ [ વકીલ ]	રાજકોટ
૨૫૧	શેઠ પ્રભારામ વીઠલજી	રાજકોટ
૨૫૧	શેઠ મેઘરાજજી દેવીચંદજી મહેતા	મદ્રાસ
૨૫૧	પટેલ ગોવીંદલાલ ભગવાનજી	કોલકી
૩૦૨	પટેલ ખીમજી જેઠાભાઈ વાઘાણી	કોલકી
૨૫૧	શેઠ હકીમચંદ દીપચંદ ગોંડલવાળા [ સ્ટેશન માસ્તર ભક્તિનગર ]	રાજકોટ
૨૫૧	શેઠ વસનજી નારણજી	ભમખંભાળીયા
૨૫૧	શ્રી સ્થાનકવાસી જૈન સંઘ	ભમખંભાળીયા
૨૫૧	શેઠ કીશનલાલ પૃથ્વીરાજ	ખીચન (પાલી)
૨૫૧	શેઠ પદમસી ભીમજી ફેફરીયા	ભાણુવડ

૨૫૧	અ. સૌ. બહેન બચીબહેન બાબુભાઈ	ધોરાજી
૨૫૧	શેઠ નેમચંદ સવજીભાઈ મોદી	લાલપુર
૨૫૦	શ્રી સ્થા. જૈન સંઘ હા. પ્રમુખ શેઠ પ્રેમચંદ ભગવાનલાલ	નંદુરબાર
૨૫૧	શેઠ અમૃતલાલ હીરજીભાઈ જસાપરવાળા હા. નરભોરામભાઈ	જેતપુર
૨૫૧	દોશી છોટાલાલ વનેચંદ	જેતપુર
૨૫૧	કામદાર લીલાધર જીવરાજના સ્મરણાર્થે તેમનાં ધર્મપત્ની બાઈ જબકબહેન તરફથી હા. ભાઈ શાંતિલાલ	જેતલસર
૨૮૭	શ્રી સ્થાનકવાસી જૈન સંઘ	જામજોધપુર
૨૫૧	સ્વ. બહેન વિજયાગૌરી રાયચંદ હા. શેઠ રાયચંદ પાનાચંદ	ધોરાજી
૨૫૦	ગાંધી પોપટલાલ જેચંદભાઈ	ધોરાજી
૨૫૧	શ્રી સ્થાનકવાસી જૈન સંઘ હા. પ્રમુખ રાયચંદ વૃજલાલ અજમેરા	વીંછીયા
૨૫૧	શેઠ મુળચંદ પોપટલાલ હા. મણીલાલભાઈ તથા જેસીંગલાલભાઈ	લાલપુર
૨૫૧	શેઠ મણીલાલ મીઠાભાઈ હા. હરિલાલભાઈ હાટીના માળીયાવાળા	જુનાગઢ
૨૫૧	સ્વ. વસાણી હરગોવીંદદાસ છગનલાલના સ્મરણાર્થે તેમનાં ધર્મપત્ની બાઈ છબલબેન તરફથી	ખોટાદ
૨૫૧	શ્રી સ્થાનકવાસી જૈન સંઘ	ચુડા (ઝાલાવાડ)
૨૫૧	શેઠ મગનલાલજી બાગરેયા	ઉદેપુર
૨૫૧	શેઠ ચાંપશીભાઈ સુખલાલ	સુરેન્દ્રનગર
૨૫૧	શ્રી સ્થાનકવાસી જૈન સંઘ	ખોટાદ
૨૫૧	સ્વ. પૂજ્ય માતૃશ્રી સમરતમાઈના સ્મરણાર્થે હા. ડોકટર સાહેબ નરોત્તમદાસ ચુનીલાલ કાપડીયા	રાણપુર
૨૫૧	સ્વ. તુરખીયા લહેરચંદ માણેકચંદ સુદામઠાવાળાના સ્મરણાર્થે તેમનાં ધર્મપત્ની જીવતીબાઈ તરફથી હા. જયંતીલાલ લહેરચંદ	ડભાસ
૨૫૧	શ્રી સ્થા. જૈન મોટા સંઘ	ધ્રાંગધ્રા
૨૫૧	શાહ દીલીપકુંવર સવાઈલાલ હા. શેઠ સવાઈલાલ ત્રંબકલાલ	વઢવાણ શહેર
૨૫૧	શેઠ છોટુભાઈ હરગોવીંદદાસ કટોરીવાળા	સુંબઈ
૨૫૧	રા. રા. નાથાલાલ ડી. મહેતા	મોંમ્બાસા
૨૫૧	સંઘવી પ્રાણુલાલ લવજીભાઈ	જામખંભાળીયા

૨૫૧	બાવીશી મણીલાલ ચત્રભુજના સ્મરણાર્થે તેમનાં ધર્મપત્ની બાઈ મણીબેન તરફથી હા. ભાઈ રસીકલાલ, અનીલકાંત તથા વિનોદરાય	આસનસોલ
૨૫૦	શેઠ માણેકલાલ અમુલખરાય મહેતા	ઘાટકોપર
૨૫૧	ભાવસાર જોડીદાસ ગણેશભાઈ	ધંધુકા
૨૫૧	શાહ પોપટલાલ ધનજીભાઈ	ધંધુકા
૨૫૧	સ્વ. ગુલાબચંદભાઈના સ્મરણાર્થે હા. વોરા પોપટલાલ નાનચંદ	ધંધુકા
૨૫૧	શેઠ ચત્રભુજ વાઘજીભાઈ વસાણી	ધંધુકા
૨૫૧	સ્વ. મોહનલાલ નરસીદાસના સ્મરણાર્થે તેમનાં ધર્મપત્ની સુરજબેન મોરારજી તરફથી	બરવાળા
૨૫૧	શ્રી સ્થાનકવાસી જૈન સઘ	પાણીશણા (લીંબડી)
૨૫૧	સંઘાણી મુળશંકર હરજીવનભાઈના સ્મરણાર્થે હા. તેમના પુત્રો જયંતિલાલભાઈ તથા રમણીકલાલભાઈ	ઉપલેટા
૨૫૧	શાહ મગનલાલ ગોકળદાસ હા. રતીલાલ મગનલાલ	વઢવાણ શહેર
૨૫૧	સંઘવી મુળચંદ બેચરભાઈ હા. જીવનલાલ ગફલદાસ	વઢવાણ શહેર
૨૫૧	બહેન સુર્યબાળા નૌતમલાલ જસાણી [ વરસીતપનાં પારણાંની ખુશાલીમાં ]	રાજકોટ
૨૫૧	શાહ રાયચંદ ઠાકરશીના સ્મરણાર્થે હા. ભાઈ શાંતીલાલ રાયચંદ	લખતર
૨૫૧	ભાવસાર હરજીવનદાસ પ્રભુદાસના સ્મરણાર્થે હા. ભાઈ ત્રીભોવનદાસ હરજીવનદાસ	લખતર
૨૫૧	શાહ તલકશી હીરાચંદના સ્મરણાર્થે હા. ભાઈ અમૃતલાલ તલકશી	લખતર
૨૫૧	શાહ ચુનીલાલ માણેકચંદ	લખતર
૨૫૧	શેઠ વૃજલાલ સુખલાલ	વઢવાણ શહેર
૨૫૧	શેઠ કાંતિલાલ નાગરદાસ	વઢવાણ શહેર
૨૫૧	વોરા ચત્રભુજ મગનલાલ	વઢવાણ શહેર
૨૫૧	સંઘવી શીવલાલ હીમજીભાઈ	વઢવાણ શહેર
૨૫૧	શાહ દેવશીભાઈ દેવકરણુ	વઢવાણ શહેર



- ૨૫૧ શાહ બદવજી ઓઘડભાઈ સદાદવાળાના સ્મરણાર્થે  
હા. ભાઈ શાંતીલાલ બદવજી લખતર
- ૨૫૧ ભાવસાર ચુનીલાલ પ્રેમચંદભાઈ સુરેન્દ્રનગર
- ૨૫૧ શ્રી વધમાન સ્વેતામ્બર સ્થા. શ્રાવક સંઘ
- હા. શેઠ કેસરીમલજી અનોપચંદજી ગુગળીયા મલાડ (મુંબઈ)
- ૨૫૧ દોશી ઠાકરશી ગુલાબચંદના સ્મરણાર્થે તેમનાં  
ધર્મપત્ની સમરતબેન વૃજલાલ તરફથી
- હા. ભાઈ જયંતિલાલ ઠાકરશી લખતર
- ૩૦૦ શાહ અમુલખ ઉદ્દે બચુભાઈ નાગરદાસનાં ધર્મપત્ની  
અ. સૌ. બેન લીલાવંતીના વરસી તપનાં પારણાની
- ખુશાલીમાં હા. ભાઈ કાંતીલાલ નાગરદાસ વીરમગામ
- ૨૫૧ કામદાર કેશવલાલ હીમતરામ પ્રોફેસરસાહેબ (ગોંડલવાળા) વડોદરા
- ૨૫૧ શેઠ હુંગરશી હંસરાજ વીસરીયા મુંબઈ
- ૨૫૧ શેઠ ધનરાજ મુળચંદ મુથા લોનાવાલા (પુના)
- ૨૫૧ મહેતા નાનાલાલ છગનલાલનાં ધર્મપત્ની  
સ્વ. ચંચળબેન તથા પુરીબેનના સ્મરણાર્થે
- હા. ભાઈ મનહરલાલ નાનાલાલ મુ. વણી (વીરમગામ)
- ૨૫૧ દોશી ચુનીલાલ કુલચંદ મોરળીવાળા મુ. શાલબની (બંગાળ)
- ૩૦૧ શાહ હીરાચંદ છગનલાલ હા. શાહ ચીમનલાલ હીરાચંદ સાણંદ
- ૨૫૧ શેઠ મોહનલાલ જેઠાભાઈના સ્મરણાર્થે
- હા. શેઠ આત્મારામ મોહનલાલ કલોલ
- ૨૫૧ શાહ રમણીકલાલ કાળીદાસ તથા અ. સૈ. કાંતાબેન  
રમણીકલાલ (ધાંગધાવાળા) મુંબઈ
- ૨૫૧ ડોક્ટર મયાચંદ મગનલાલ હા. ડો. રતનચંદ મયાચંદ કલોલ
- ૨૫૧ સ્વ. શાહ નાથાલાલ ઉમેદચંદના સ્મરણાર્થે
- હા. શાહ રતીલાલ નાથાલાલ કલોલ
- ૨૫૧ શ્રી સ્થા. ઠરીયાપુરી જૈન સંઘ હા. ભાવસાર  
દામોદરદાસ ઇશ્વરભાઈ કડી
- ૨૫૧ શાહ મણીલાલ તલકચંદના સ્મરણાર્થે
- હા. મારફતીયા ચંદુલાલ મણીલાલ કલોલ
- ૨૫૧ અ. સૈ. ચંપાબેન હા. શેઠ જીવરાજ લાલચંદ દોશી સાણંદ
- ૨૫૧ પટેલ મહાસુખલાલ ડોસાભાઈ સાણંદ

૨૫૧	શાહ શાકરચંદ કાનજીભાઈ	સાણુંદ
૨૫૧	શાહ હીંમતલાલ હરજીવનદાસ	મુંબઈ
૨૫૧	શાહ જીતેન્દ્રકુમાર વાડીલાલ માણેકચંદ (રાજ સીતાપુરવાળા)	સાબરમતી
૨૫૧	અ. સૌ. સમરતળેન પ્રેમચંદ % પ્રેમચંદ માણેકચંદ (રાજ સીતાપુરવાળા)	સાબરમતી
૨૫૧	શા. કાંતીલાલ ત્રીલોચનદાસ	અમદાવાદ
૨૫૧	સ્વ. શેઠ ઉજ્જમશી નાનચંદના સ્મરણાર્થે તેમના પુત્રો તરફથી હા. શેઠ ચુનીલાલ નાનચંદ	વીરમગામ
૨૫૧	સ્વ. શાહ મણીલાલ લક્ષ્મીચંદના સ્મરણાર્થે તેમના પુત્રો તરફથી હા. ખીમચંદભાઈ	વીરમગામ
૨૫૧	સ્વ. શેઠ હરીલાલ પ્રભુદાસના સ્મરણાર્થે હા. શેઠ અનુભાઈ હરીલાલ	વીરમગામ
૨૫૧	સંઘવી જયંદભાઈ નારાણદાસ	વીરમગામ
૨૫૧	સ્વ. શાહ વેલશીભાઈ સાકરચંદના સ્મરણાર્થે હા. ચીમનલાલ વેલશી કત્રાજવાળા	વીરમગામ
૨૫૧	શાહ પોચાલાલ પીતામ્બરદાસ	અમદાવાદ
૨૫૧	પારેખ મણીલાલ ટોકરશી લાતીવાળા તરફથી મોટીબેનના સ્મરણાર્થે	વીરમગામ
૨૫૧	શાહ નારાણદાસ નાનજીભાઈના સુપુત્ર વાડીભાઈનાં ધર્મપત્ની અ. સૌ. નારંગીબેનના વરસીતપ નિમીત્તે હા. શાંતીભાઈ	વીરમગામ
૨૫૧	શાહ પોપટલાલ મોહનલાલ	અમદાવાદ
૨૫૦	શેઠ પ્રેમચંદ સાકરચંદ	અમદાવાદ
૩૫૧	લાલા પુરણચંદજી જૈન (સેન્ટ્રલબેંકવાલા)	દીલ્લી
૨૫૧	સ્વ. છખીલદાસ ગોકળદાસના સ્મરણાર્થે તેમનાં ધર્મ- પત્નિ કમળાબેન તરફથી હા. મંજુલા કુમારી	વીરમગામ
૨૫૧	શાહ રતીલાલ વાડીલાલ	અમદાવાદ
૨૫૧	શેઠ લાલભાઈ મંગળદાસ	”
૨૫૧	અ. સૌ. કમળાબેન તે કામદાર ગોરધનદાસ મગનલાલનાં ધર્મપત્નિ (વઢવાણવાળા)	રંજુન
૨૫૧	વોરા ડોસાભાઈ લાલચંદ સ્થા. જૈન સંઘ હા. વોરા નાનચંદ શીવલાલ	વઢવાણ શહેર

- ૨૫૨ વોરા ધનજીભાઈ લાલચંદ સ્થા. જૈન સંઘ હા.  
વોરા પાનાચંદ ગોખરદાસ વઢવાણ શહેર
- ૨૫૧ સ્વ. અમૃતલાલ વર્ધમાનના સ્મરણાર્થે હા. કહાનજીભાઈ અમદાવાદ  
અમૃતલાલ દોશી
- ૨૫૧ શ્રી વીરમગામ સ્થા. જૈન શ્રાવિકા સંઘ વીરમગામ
- ૨૫૧ સ્વ. ત્રિલોવનદાસ દેવચંદ તથા સ્વ. અ. સૌ. ચંચળ-  
ખેનના સ્મરણાર્થે હા. ડોકટર હિંમતલાલ સુખલાલ ”
- ૨૫૧ શાહ મુલચંદ કાનજીભાઈ તરફથી હા. શાહ નાગરદાસ  
ઝોઘડભાઈ ”
- ૨૫૧ શેઠ મોહનલાલ પીતાંબરદાસ હા. ભાઈ કેશવલાલ તથા  
મનસુખલાલભાઈ ”
- ૨૫૧ શાહ રતનશી મોણશીની કું. મુંબઈ
- ૨૫૧ ભાવસાર ભોગીલાલ જમનાદાસ અમદાવાદ
- ૨૫૧ શાહ શીવજી માણેકભાઈ ભેરાગા કચ્છ
- ૨૫૧ શાહ હુણજી ગુલામચંદ (સંજેલી) પંચમહાલ
- ૨૫૨ શ્રી સ્થા. જૈન સંઘ હા. શાહ પ્રેમચંદ દલીચંદ (સંજેલી) ”
- ૨૫૨ શાહ કુંવરજી ગુલામચંદ (લીમડી) ”
- ૨૫૧ શાહ પાનાચંદ સંઘજીભાઈ હા. ત્રંબકલાલ રતીલાલ મુંબઈ
- ૩૦૧ શાહ અમુલખભાઈ મુળજી હા. પ્રકાશચંદ અમુલખ હારીજ
- ૩૦૧ સ્વ. ખેત ચંદ્રકાતાના સ્મરણાર્થે હા. અમુલખ મુળજીભાઈ ”
- ૨૫૧ સ્વ. પદ્મશી સુરચંદના સ્મરણાર્થે હા. શીવલાલ પદ્મશી મેસાણા
- ૨૫૧ શાહ ગોકળદાસ શામજી ઉદાણી એડન કેમ્પ
- ૨૫૧ ખાટવીયા ગીરધરલાલ પ્રભાણંદ હા. અમીચંદ  
ગીરધરલાલ ખાખીનળીયા
- ૨૫૧ શ્રીમતિ અ. સૌ. ખેત ચંદ્રાવતી તે શ્રીમાન ખડોતલાલજી  
નાહરનાં ધર્મપતિ હા. શેઠ રણજીત લાલજી હીંગડ ઉદેપુર
- ૨૫૧ સ્વ. શેઠ વીરચંદભાઈ જેમીંગ લખતરવાળાના સ્મરણાર્થે  
હા. કેશવલાલ વીરચંદ શેઠ મુંબઈ
- ૨૫૧= છાજેડ ઘાસીરામ ગુલામચંદ (લીમડી) પંચમહાલ
- ૨૫૧ મહેતા પ્રભુદાસ મુળજીભાઈ ધોરાજી
- ૩૦૧ શ્રીમતી હીરાખેન નથુભાઈના વરસીતપ નીમીતે  
હા. નથુભાઈ નાનચંદ શાહ વીરમગામ
- ૨૫૧ સ્વ. મણિયાર પરસોતમ સુંદરજીના સ્મરણાર્થે  
હા. સાકરચંદ પરસોતમ ”

૨૫૧	શેઠ મણીલાલ શીવલાલ	વીરમગામ
૨૫૧	શાહ ત્રીલોવનદાસ ભગવાનજી પાનેલીવાળા	ભામલોધપુર
૨૫૧	શાહ નટવરલાલ ચંદુલાલ	અમદાવાદ
૩૦૧	શાહ ત્રીલોવનદાસ છગનલાલ	ગોધરા
૨૫૧	શાહ નરસીદાસ ત્રીલોવનદાસ	અમદાવાદ
૩૦૧	ખીપીનચંદ્ર તથા ઉમાકાંત ચુનીલાલ ગોપાણી	રાણપુર
	હા. ગોપાણી ચુનીલાલ માણેકચંદ	
૨૫૧	શ્રી શાહપુર દરીયાપુરી આઠકોટી સ્થા. જૈન ઉપાશ્રય હા.	
	વહીવટ કરનાર શેઠ ઈશ્વરદાસ પુરષોત્તમદાસ	અમદાવાદ
૨૫૧	શ્રી છીપાપોળ દરીયાપુરી આઠકોટી સ્થા. જૈન સંઘ	
	હા. શેઠ ચંદુલાલ અમૃતલાલ	"
૨૭૭	શ્રી સ્થાનકવાસી છકોટી જૈન સંઘ	
	હા મહેતા ચુનીલાલ વેલજી	માંડવી (કચ્છ)
૨૫૧	વકીલ મણીલાલ કેશવલાલ મહેતા	વડોદરા
૨૫૧	વોરા મણીલાલ પોપટલાલ	અમદાવાદ
૨૫૧	શાહ ચીનુભાઈ બાલાભાઈ C/o શાહ બાલાભાઈ મહાસુખરામ ,,	
૨૫૧	શા. ભાઈલાલ ઊજ્જમશી	અમદાવાદ
૨૫૧	સ્વ. કેશવલાલ મુળજીભાઈનાં ધર્મપત્ની, સ્વ. અમૃતભાઈના	
	સ્મરણાર્થે હા ભાઈલાલ કેશવલાલ થાનગઢવાળા	શુરેન્દ્રનગર
૨૫૧	પુરીબેન ચીમનલાલ કલ્યાણજી સંઘવી લીમડીવાળાના	
	સ્મરણાર્થે હા. વાડીલાલ મોહનલાલ કોઠારી	સાણંદ
૨૫૧	પારેખ નેમચંદ મોતીચંદ મુળીવાળાના સ્મરણાર્થે	
	હા. ભીખાલાલ નેમચંદ	સાણંદ
૨૫૧	સંઘવી નારણદાસ ધરમશીના સ્મરણાર્થે	
	હા જયંતીલાલ નારણદાસ	સાણંદ
૨૫૧	શા. પ્રવિણચંદ્ર નરસીદાસ સાણંદવાળા	બોડેલી (ગુજરાત)
૨૫૧	મહેતા અમૃતલાલ જેઠાલાલ સીવીલ ઈન્જીનીયર સાહેબ	લાખેરી
		(રાજસ્થાન)
૨૫૧	ડા. કુ. સરસ્વતી ખડેન શેઠ	અમદાવાદ
૨૫૧	શ્રી સૌરાષ્ટ્ર સ્થા. જૈન સંઘ	અમદાવાદ

પૂજ્ય આચાર્યશ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજનાં  
બનાવેલાં સૂત્રો.

કાશ્મીર.....થી.....કન્યાકુમારી

તેમજ

કરાંચી.....થી..... કલકત્તા

સુધી

દરેક સ્થળે હોંશથી વંચાય છે.

કારણ કે

આવી રીતે શાસ્ત્રો તૈયાર કરવાનું અનોખું કાર્ય  
હજી સુધી કોઈ કરી શક્યું નથી.

\*

\*

\*

શ્રી સ્થાનકવાસી જૈન સમાજ

ઉપરાંત

શ્રી દેરાવાસી સંપ્રદાયના મહાન આચાર્યશ્રી રામવિજયસૂરીજી  
તથા અન્ય મુનિવરોએ

તેમજ

તેરાપંથી મહાસલા કલકત્તાવાળાએ આ સૂત્રો અપનાવ્યાં છે.

\*

\*

\*

દેશ-પરદેશના મેમ્બરો સૂત્રો વાંચી જૈન ધર્મના શ્રુતજ્ઞાનનો અણમોલો  
લાભ લઈ રહ્યા છે.

હસણાંજ લાંડનની ઈન્ડિઆ ઓફીસ લાયબ્રેરીએ આ સૂત્રો મંગાવ્યા છે.

\*

\*

\*

આપ રૂપીઆ ૨૫૧-૦-૦ મોકલી મેમ્બર તરીકે નામ નોંધાવી હપ્તે હપ્તે  
લગલગ રૂપીઆ પાંચસો સુધીની કિંમતનાં શાસ્ત્રો વિના મૂલ્યે મેળવી શકો છો.

વધુ વિગત માટે લખો :

ઠે. ગ્રીન હોલ પાસે,  
ગરેડીઆકુવા રોડ  
રાજકોટ.

મંત્રિ  
શ્રી અખિલ ભારત જ્વે. સ્થા. જૈન  
શાસ્ત્રોદ્ધાર સમિતિ.

## આપ આ સમિતિના કાર્યમાં કઈ રીતે મદદગાર થઈ શકો ?

- રૂા. ૫૦૦૦] ઓછામાં ઓછા આપીને સંસ્થાના આદ્ય મુરબ્બીશ્રી તરીકે મુખ્યારક નામ લખાવી શકો છો, આપનો ફોટો તથા આપનું જીવનચરિત્ર શાસ્ત્રમાં છાપવામાં આવે છે.
- રૂા. ૩૦૦૦] ઓછામાં ઓછા આપીને આપના વડીલના સ્મરણાર્થે એક શાસ્ત્ર આપના નામથી છપાવી શકો છો સમીતિને એક શાસ્ત્ર છપાવવામાં લગભગ રૂા. ૬૦૦૦) થી રૂા. ૮૦૦૦) ખર્ચ થાય છે. તે છતાં ત્રણ હજારમાં આપને નામે શાસ્ત્ર બહાર પાડવામાં આવશે.
- રૂા. ૨૫૫] ઓછામાં ઓછા આપીને લાઈફ મેમ્બર તરીકે આપનું નામ દાખલ કરાવી શકો છો આપને ૩૨ સૂત્રો તથા તેના તમામ ભાગો મફત મળી શકે છે. ( રૂા. ૫૦૦ ની કીંમતનાં શાસ્ત્રો હફતે હફતે આપને મળી શકે છે.)

સ્થાનકવાસી સમાજમાં આ એક જ સંસ્થા શાસ્ત્રો આર ભાષામાં પ્રગટ કરીને સર્વ ઉપયોગી વાંચન રજુ કરે છે આપને જ્યારે કોઈ શાસ્ત્રની જરૂર હોય ત્યારે તેમજ કોઈ સાધુ મુનીરાજને વહોરાવવાની ઈચ્છા હોય ત્યારે શાસ્ત્ર બીજેથી નહિ મંગાવતાં આ સમિતિ પાસેથી મંગાવી લેવા વિનંતી છે.

### એક અપીલ

દીક્ષા પ્રસંગે

વરસીતપ અને બીજી તપશ્ચર્યાઓનાં પારણા પ્રસંગે

મહાવીર જયંતી, પર્યુષણ, તથા દીવાળી જેવા તહેવાર પ્રસંગે

લગ્નપ્રસંગ તથા પુત્ર જન્મની ખુશાલીમાં.

વડીલોના સ્મરણાર્થે તેમની તીથી પ્રસંગે તેમજ બીજા સર અવસરે બનતી મદદ આ સંસ્થાને મોકલવા ખાસ નોંધ રાખશો.



પુજ્ય મહાત્મા તથા મહાસતિજીને

## નમ્ર પ્રાર્થના

પૂજ્ય આચાર્યશ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજશ્રી રાત દીવસના અથાગ પરીશ્રમ સાથે એક કંતાનના કકડા પર બેસીને સમાજના ભવિષ્યના વારસદાર માટે આગમ સંશોધન કરી અણુમોલો વારસો તૈયાર કરી રહ્યા છે, તે કાર્યમાં અનેક મહાત્માઓ પ્રશંસા બતાવીને સક્રીય સહકાર આપી રહ્યા છે. આપને અમારી નમ્ર વિનંતી છે કે આના મહદ્ કાર્યમાં ઉપદેશ દ્વારા મહદ્માર થઈ શકે તેટલી સમાજને આપની જરૂર છે માટે વગર વીલંબે સારા જૈન સમાજના ઉત્કર્ષ કાર્યમાં આપનો ફાળો નોંધાવો.

